११८

Rs-30/-

शब्द संख्या १०२५०

आयुर्वेदीयविश्वकोष

(Ayurvediya Vishwa-Kosha)

प्रतिलिपि

प्रथम खण्ड

(Volum I)

'अ' से "अज्ञातयक्ष्मा" तक

(From-'a' to 'ajnyatayakshma)

श्री कुष्ठचिकित्साश्रम

समस्त आयुर्वेदीय औषधियों को
बहुत बड़े परिमाण में बना
कर स्वल्प मूल्य में देने
को संसार प्रसिद्ध
है।

❀ ॐ ❀

आयुर्वेदीयानुसंधान--ग्रन्थमाला का द्वितीय पुष्प

आयुर्वेदीय विश्व—कोष

An Encyclopædical Ayurvedic Dictinary

(with full details of Ayurvedic, Unani and Allopathic terms.)

अर्थात्

आयुर्वेद के प्रत्येक अङ्ग प्रत्यङ्ग सम्बन्धी विषय यथा—निघण्टु, निदान, रोग-विज्ञान, विकृति-विज्ञान, चिकित्सा-विज्ञान, रसायनविज्ञान, भौतिकविज्ञान, कीटाणुविज्ञान, इत्यादि प्रायः सभी विषय के शब्दों एवं उनकी अन्य भाषा (देशी, विदेशी, स्थानीय एवं साधारण बोलचाल) के पर्यायों का विस्तृत व्याख्या सहित अपूर्व संग्रह। व्याख्या में प्राचीन व अर्वाचीन मतों का चिकित्सा प्रणाली-ग्रंथ के अनुसार तुलनात्मक एवं गवेषणापूर्ण विवेचन किया गया है। इसमें २००० से अधिक वनस्पतियों, समग्र खनिज एवं चिकित्सा कार्य में आने वाले प्रायः सभी आवश्यक प्राणिवर्ग की तथा रासायनिक औषधों के आज तक के शोधों का सार्वांगीन सुन्दर, सुबोध एवम् प्रामाणिक वर्णन है। संक्षेप में आयुर्वेद (यूनानी तथा डाक्टरी) सम्बन्धी कोई भी विषय ऐसा नहीं चाहे वह प्राचीन हो या नवीन जिसका इसमें समावेश न हुआ हो।

लेखक तथा संकलन-कर्त्ताः—

श्री बाबू रामजीत सिंह जी वैद्य
श्री बाबू दलजीत सिंह जी वैद्य
रामपुरी, चुनार (यू० पी०)

प्रकाशकः—

श्री पं० विश्वेश्वरदयालु जी वैद्यराज
सम्पादक—"अनुभूत योगमाला"
बरांजोकपुर इटावा (यू० पी०)

संशोधित तथा परिवर्द्धित

[तृतीय संस्करण, ५०० प्रति]

All rights reserved by the writers

(सम्वत् २०२२ वि० तथा सन् १९६५ ई०)

30/-

प्रथम संस्करण (First Edition) सन् १९३१ ई०
द्वितीय संस्करण (Secoud Edition) फरवरी सन् १९३४ ई०
तृतीय संस्करण (Therd Editiou) सितम्बर सन् १९३५ ई०

श्री पं० विश्वेश्वरदयालु जी के प्रबन्ध से श्री हरिहर प्रेस, बरालोकपुर—हटावा में मुद्रित।

प्रस्तावना

(महामहोपाध्याय कविराज श्री गणनाथसेन शर्मा, सरस्वती, विद्यासागर, एम० ए० एल० एम० एस० लिखित)

संसार परिवर्तन शील है। आज इसका रूप कुछ है, पहिले कुछ था, कल कुछ होजायगा' इतिहास ऐसा बतलाता है। बल जो शासक था आज वही शासनाधीन है, जो पद दलित था वह सिर पर स्थित है। पूज्य आज हेय समझा जाता है और तिरस्कृत आज आदृत हो रहा है। वही सुजला-सुफला-शस्य-श्यामला पुण्यमयी भारत भूमि है, वही भेषज-पीयूष-वर्षिणी अन्नपूर्णा स्थली है; वही अष्टवर्ग-सोमलतादि-द्रवविनी हिमाद्रिमाला है किन्तु आज हमारे भाग्यदोष से उसी को लोग नीरसा कहते हैं। प्राचीन इतिहास की ओर जब दृष्टि उठाते हैं तो पता चलता है कि मानव-जाति मात्र के कल्याणार्थ इस भारत में सम्पूर्ण जगत्को क्या नहीं प्रदान किया है। अविद्य को विद्या, असंस्कृत को संस्कृत, अश्रुत को श्रुति विस्मृति को स्मृति एवं मोहान्ध को दिव्य ज्ञान दृष्टि इसने अपने उदार करों से निःसंकोच वितरण किया है। इतना ही नहीं वरन् इसने संसार का वह उपकार किया है कि जिसके अभाव होने पर सब समस्त साधन काल के गाल में विलीन हो गये होते। धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष, सभी का आधार जीवन है जीवन का अवलम्बन शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य है। अतः एवं समस्त इहलौकिक एवं पारलौकिक सुखों के साधनभूत 'आयुर्वेद' का पुण्योपदेश कर इस मातृहारी ने मनुष्य जाति का जो कल्याण किया है वह अनातीत है। हन्त! वही भारत— विश्व-शिरोमणि-भारत-आज पर मुखापेक्षी है; भास्कर का प्रखर प्रकाश खोकर दीपकों की मलिन ज्योति का अपेक्षित है।

परन्तु नहीं। दिन के बाद रात और रात के बाद दिन होना अवश्यम्भावी है। कालचक्र का परिभ्रमण करता हुआ, सहस्रों वर्ष पश्चात् महानिशा के अंक से निकल कर 'आयुर्वेद का सूर्य, पुनः प्राचीमें अपनी संजीवनी किरणें प्रक्षिप्त करते दृष्टिगोचर हो रहा है। उसके स्वागत के लिए कितनी मञ्जरियां कलित हो गईं कितने ही कुसुम विकसित हो गये। इन्हीं में से एक नव प्रसून "आयुर्वेदीयविश्व-कोष' रूप में आज मेरे हाथों में आया है। इसके दलों की मनोहरता, इसके पराग के सौरभ का परिचय आप लोगों की सेवा में उपस्थित करने का भार मुझे सौंपा गया है।

यद्यपि आयुर्वेदीय कोष लिखने का प्रयत्न सर्वथा नवीन नहीं है; तथापि इसमें कुछ विलक्षणता अवश्य है इसके बहुत पूर्व; आयुर्वेद के द्रव्यगुणांश के अर्थ परिचायक कोष, 'राजनिघण्टु' मदनपाल निघण्टु, आदि प्राचीन एवं शालिग्राम—'निघण्टु' आदि नवीन ग्रन्थ उपस्थित थे, जिनसे आज दिन भी वैद्य समाज बहुत लाभ उठा रहाहै, किन्तु इनका क्षेत्र एक प्रकारसे परिमितहै और इन्हें हम एक सर्वव्यापक आयुर्वेदीयविश्वकोष के रूप में व्यवहृत नहीं कर सकते। आयुर्वेद का कलेवर आज कितना विशाल है एवं इसके प्रकाश में आज अपना क्षेत्र कितना विस्तृत दिखलाई पड़ रहा है यह वैद्य समाज के प्रत्यक्ष ही है। अतः हम कह सकते हैं कि हमारे सन्देह मात्र को दूर करने के लिए अभी पर्याप्त सामग्री नहीं प्राप्त हुई है। हमें एक ऐसे आयुर्वेदीयविश्व-कोष की आवश्यकता है, जो सर्वथा हमारी शंकाओं का समाधान, हमारी जिज्ञासाओं को संतोषजनक उत्तर देने एवं सन्दिग्ध स्थलों पर पथप्रदर्शन करने में समर्थ हो। हमारी इसी मांग की पूर्ती करने के लिए 'कविराज श्री उमेशचन्द विद्यारत्न' महोदय ने सन् १८९४ ई० में, विशाल "वैद्यक-शब्द सिंधु कोष', को प्रकाशित किया था इसमें संदेह नहीं कि वैद्य समुदाय ने उससे बहुत लाभ उठाया है, तथापि जैसा कि हम पहिले कह चुके हैं, हमारी वर्तमान आवश्यकताओं को सम्यक्तया पूरी करने की पूर्ण क्षमता उसमें भी नहीं है। इसी उद्देश्य को लक्ष्य करके आज एक और नवीन 'आयुर्वेदीयविश्व-कोष,, हमारे सम्मुख उपस्थित हुआ है, हम हृदय से इसका स्वागत करते हैं।

आयुर्वेदीय जगत के धुरन्धर—विद्वानों एवं अनेक शास्त्र-पारङ्गत पण्डितों की भी यथावसर जिसकी सहायता लेनी पड़े, विविध क्रिया-कुशल वैद्यों की भी आवश्यकता पड़ने पर जिसका आश्रय लेना पड़े, तथा अनेक अकुशल एवं स्वल्पमति वैद्य और छात्र समुदाय को भी जिसके भण्डार से अपने को पूर्ण बनाने के लिए ज्ञान याचना करनी पड़े[ऐसे आयुर्वेदीय विश्व-कोष को कितना सारगर्भित, कितना महान् एवं सर्वाङ्गपूर्ण होने की आवश्यकता है, इसकी कल्पना प्रायः सभी सहृदय वैद्य कर सकते हैं। ऐसा अनुभव है कि योरोप में जब कभी ऐसे महान् कार्य उपस्थित होते हैं, उस समय उस देश के अनेक सर्वोत्तम विद्वान् जो कि अपने अपने विषयों के विशेषज्ञ होते हैं, परस्पर सहयोग द्वारा, वर्षों तक दृढ़ परिश्रम एवं प्रचुर धन व्यय करके, उसे सर्वांगपूर्ण बनाने की यथाशक्ति चेष्टा करते हैं। इतना ही नहीं, वरन् नवीन नवीन खोज और सुधार पर विशेष ध्यान रखते हुए, उसमें आवश्यक परिवर्तन और सुधार करने के लिए जीवन भर सतर्क रहते हैं और सुधार करते जाते हैं। वास्तव में यह कार्य कितना उत्तरदायित्व-पूर्ण, दुःसाध्य एवं दुरूह है, इसे विज्ञ जन स्वयं समझ सकते हैं। इस विषय में लेखकों को कितनी गम्भीर गवेषणा एवं पाण्डित्य की आवश्यकता होती है, कितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, कितनी बाधाओं का अतिक्रमण करना होता है, इसका अनुमान एक ग्रन्थकारही कर सकता है। दुर्भाग्यवश, भारत वर्ष के विद्वानोंने इस प्रकारकी सामूहिक सहयोगिता पर अभी तक ध्यान नहीं दिया है फलतः ऊँचे उत्साही लेखकों को एकमात्र अपने परिश्रम एवं अध्यवसाय पर निर्भर रहना पड़ता है। एतद्तिरिक्त, भारत वर्ष में, प्रेस के लिए प्रतिलिपि करना, मुद्रण एवं संशोधनादि की कठिनाइयों के साथ ही आर्थिक क्लिष्टता भी प्रायः रहती ही है। अतः इन सब परिस्थितियों के होते हुए भी इस महान 'आयुर्वेदीय विश्व-कोष, कर्ता ग्रन्थकारद्वय का उत्साह एवं साहस सराहनीय है।

एक आयुर्वेदीय कोष के प्रस्तुत करने में जो सबसे बड़ी एवं विचारणीय बाधा है—वह है पारिभाषिक शब्दों का अर्थ— निर्णय। कितने ही शब्द ऐसे हैं जिनके अर्थ सन्दिग्ध होते हैं और संस्कृत भाषा में नानार्थक शब्द भी अनेक हैं। यह बाधा, आयुर्वेद की प्रायः सभी शाखाओं में किसी न किसी रूप में वर्तमान है, और खेद के साथ लिखना पड़ता है कि इस विषय के एक सर्वमान्य निर्णय पर वैद्य समाज आज तक भी नहीं पहुँच सका। इसमें भी विशेषतः शरीर विषयक एवं नानार्थ प्रकाशक भेषजों की परिभाषा पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है।

यहाँ शरीर शास्त्र सम्बन्धी जो कार्य, प्रत्यक्ष शारीरम् द्वारा प्रतिपादन हुआ है उससे वैद्य समुदाय भली भाँति परिचित है, किन्तु भेषज निर्णय का काम अब भी बहुत पीछे है। उदाहरणार्थ अष्टवर्ग की औषधियों को ही ले लीजिये यद्यपि इनके विनिश्चय के लिए काफी प्रयत्न हुये हैं तथापि कोई सर्वमान्य विश्वसनीय निर्णय अभी तक सुप्रसिद्ध नहीं है शङ्खपुष्पी एवं तगर आदि जैसी सामान्य औषधियों के परिचय में भी बहुत मत भेद हैं क्यों कि देश देश में भिन्न भिन्न प्रकार की चीजें एक ही नाम से प्रसिद्ध हैं। अतः इन सब समस्याओं के समाधान करने के लिए सच्ची लगन के साथ गवेषणा (Research) करने की नितान्त आवश्यकता है आयुर्वेद की सेवा में तन मन धन अर्पण करके ही इसका पुनरुत्थान करना है। इसी कार्य की पूर्ति पर आयुर्वेदीय विश्व-कोष की सर्वाङ्गपूर्णता निर्भर करती है। अतः इस ओर लेखक महाशयों का ध्यान आकृष्ट करता हूं कि वे इस कोष को विशेष उपयोगी बनाने के लिए विविध विषयों के विशेषज्ञों एवम् विद्वानों से तत्तद्विषयक गवेषणा सिद्धपरामर्श सदैव लेते रहें ताकि समय समय पर इसमें आवश्यक परिवर्तन एवम् परिष्कारादि हो सकें।

आयुर्वेद, तिब्बी एवम् एलोपैथी आदि प्रायः सभी वर्तमान प्रचलित चिकित्सा-पद्धतियों से सम्बन्ध रखने वाले विषयों का इस ग्रन्थ में सामावेश किया है जिसज इसका कलेवर अति विशाल हो गया है। इन विषयों की कहाँ तक और किस मात्रा में इस ग्रन्थ में सन्निविष्ट करने की आवश्यकता थी इसे विद्वान पाठक स्वयं विचार लें।

एक बात की आवश्यकता हमें और प्रतीत होती है। वह यह कि इस ग्रंथकी रचना में जिन जिन अन्यान्य ग्रंथों से सहायता मिली है, उनके लेखकों एवम् प्रकाशकों के प्रति—चाहे वह स्वदेशीय हों या विदेशीय, प्राचीन हों वा अर्वाचीन—उनके नाम समेत धन्यवाद प्रकाश करना अनिवार्य कर्तव्य है।

अन्ततः इस योग्य लेखकों के बहुवर्षों के प्रभूत-परिश्रम, अदम्य उत्साह एवम् आयुर्वेद की सेवाकी प्रशंसा करते हुए ईश्वर से यह प्रार्थना करते हैं कि इस महाकोष द्वारा आयुर्वेद के भन्डार का एक बड़ा अंश पूर्ण हो तथा वैद्य, छात्र-समुदाय एवम् रुजार्त-जनता का इससे कल्याण साधन हो। इति

कल्पतरु-प्रासाद, कलकत्ता।
पोष, कृष्ण चतुर्दशी, सम्वत् १९९० वि०

विद्वज्जनों का विधेय—
श्री गणनाथ सेन शर्म्मा

प्रकाशक की विज्ञप्ति

स कालचक्र का कुप्रभाव आज तक किसी ने भी नहीं पाया न कोई यह जान ही न सका कि कल क्या होगा। जो आज या इस क्षण में हैं न मालूम उसका इस क्षण के बाद क्या होगा। समय के अनुसार संसार में अनेकानेक परिवर्तन हो चुके, हो रहे है, और आगे भी होंगे। इसी चक्र के अनुसार प्रत्येक वस्तु का नाश और विकाश होता आया है। आज उसी कालचक्र से प्रेरित हुआ मै आपके समक्ष आ रहा हुँ। कोई कुछ भी नहीं कर सकता। समय ही सर्व कुछ करा लेता है। इसी लिये कहा भी है—

तुलसी जस भवितव्यता तैसो मिले सहाय। आप न आवे ताहि पै ताहि तहाँ ले जाय॥

इसी के अनुसार यह कार्य भी हुआ है। जिस कोष के लिये आज कई वर्ष से आयुर्वेदिक-वायु-मंडल अपनी गुञ्जार से समस्त संसार को गुञ्जायमान कर रहा था, उसी वायु-मंडल की प्रेरणा से हमारे मित्र (बाबू रामजीतसिंह व बाबू दलजीतसिंह) की प्रेरणा हुई और वे उससे प्रेरित होकर इस कमी की पूर्ति के लिये तल्लीन होगए और जनता की इच्छा के अनुसार इस आयुर्वेदीय-कोष को रच डाला: और मेरे समक्ष, जो ऐसे ही कोष के प्रकाशन के लिये सदैव प्रयत्नशील था, उपस्थित किया। इस कोष को जो देखा तो जनता के अनुरूप ही पाया। फिर क्या था। समय की प्रेरणा से उन्मत्त होकर, अपनी शक्ति का विचार किये विना नमालूम किस आन्तरिक इच्छाशक्ति के बल इस अपार भार को अपने निर्बल कन्धों पर लेकर उद्वहन करने को तैयार होगया। उसी के फल स्वरूप उसका यह पहिला भाग जनता के समक्ष उपस्थित कर रहा हूँ। अब आप देखें कि इस कोष में सम्पूर्ण ज्ञातव्य विषय हैं वा नही? जहां तक अपना विचार था और समयकी प्रेरणा जैसी थी, कि विना परिश्रम किए ही थोड़ा पढ़ा लिखा या एक, भाषाका विद्वान भी सभी आयुर्वेदीय संसार की बातें जो पृथक् पृथक् पैथियों (यथा-एलोपैथी डॉक्टरी यूनानी, आयुर्वेदीय) में भरी पड़ी हैं, जान जाए और जिनमें हमारे वैद्य दूसरी पैथी के मर्मज्ञ के सामने शिर नीचा कर जाते थे, वह दूर हो ज.य। वह इस कोष से दूर होगई या नहीं? विद्वान जन लिखने की दया करें।

इस बृहत्काय कोष के प्रकाशित करने के विषय में हमारे कुछ भ्रातृगणों के प्रश्न होंगे कि आयुर्वेद-शास्त्र में कई निघण्टु इस समय भी वर्तमान थे, फिर इस नवीन बृहत्काय कोष के निर्माण करने की क्या आवश्यकता थी? इसके उत्तर में ही प्रकाशक का निवेदन है कि अवश्य कई निघण्टु हैं, परन्तु आप लोगों ने कभी भी उनकी तुलना नहीं की। यदि आप तुलना कर लेते तो उपर्युक्त बात कदापि न कहते। कुछ समयसे हमारे यहाँ वैद्य-समाज में प्रमाद आगया है और उन्होंने—

"हेतुलिंगौषध ज्ञानं स्वस्थातुर परायणम्।
त्रिसूत्रं शाश्वतं पुण्यमायुर्वेद मनु शुश्रमः॥

इन सूत्रों को ही भुला दिया और रोग निश्चय तथा उसमें दोष कल्पना और उस अवस्था के लिए औषध विवेचन करना ही छोड़ दिया। सिर्फ रोग का नाम और उसके लिये उस रोग की चिकित्सा में वर्णित कोई सी भी औषध बता कर दे देना ही वैद्यक व्यवसाय समझ लिया था। यह धारणा बढ़ते २ यहाँ तक बढ़ी कि जिसका अन्त अब तक भी नही हुआ। इसी प्रभावमें लिखे हुए चिकित्सा-ग्रंथ तथा निघण्टु (जो केवल मात्र पाण्डित्य प्रकाश के लिये ही रचे गये थे) ग्रंथों पर किसी ने ध्यान नही दिया। यह दशा जब इधर भारत वर्ष में हो रही थी तब यूनानी लोग "हेतुलिंगोषधज्ञानम्" इस सूत्र पर विचार करते हुए रोगविज्ञान और औषध-विज्ञान को पूर्ण करने में अधिक परिश्रम करने लग गए। उसका प्रतिफल यह हुआ कि आयुर्वेदीय

मालिक श्री कुष्ट चिकित्सालय—

चिकित्सक पं० बिश्वेश्वर दयालु वैद्यराज

बरालोकपुर इटावा यू० पी०

सादर समर्पणम्

जगज्जननि जगदम्बे

किन शब्दों से तुम्हारी पूजा करें! किन शब्दों से तुम्हें धन्यवाद दें। मातः! तुमने इस अपने अकिंचन पुत्र को किस चाव से इतना अपनाया है कि जो इच्छा स्वप्न में भी इसने की तुमने वही पूर्ति कर इसे सुखी किया। इसी के उपलक्ष में यह तुच्छ भेंट तुम्हारे चरणों में समर्पित है। इसे अपनाने की दया करना और ऐसी ही कृपा करना कि जिससे यह आयुर्वेद का उद्धार करता हुआ अपना नाम अमर करने में समर्थ हो।

समर्पक:—

तुम्हारा स्नेही पुत्र विश्वेश्वर

समर्पणम्

आयुर्वेदमार्तण्ड श्री १०८ स्वामी लक्ष्मीरामाचार्य जी प्रधानाध्यापक सं० विद्या . य जयपुर

अयि गुरुवर्य्य !

आपकी दया से जो कुछ ज्ञान प्राप्त कर आयुर्वेद के लिये जो कुछ प्रगति हुई है उसका श्रेय आपको ही है । अतः यह कोष आपकी इच्छानुरूप ही संकलित किया हुआ प्रकाशित कर, चरणोंमें समर्पित करने का साहस कियाहै, कृपया स्वीकारकर लीजिये ।

विश्वेश्वरः

चिकित्सा को अपने चमत्कारों से बहुत कुछ दबा डाला। इसके बाद एलोपैथी का सितारा चमका। इन्होंने यूनानियों से भी अधिक गवेषणा की ओर आयुर्वेदीय चिकित्सा को बिलकुल ही दबादाला। इस समय जब कुछ वैद्यों ने अपनी अवनति पर विचार करना प्रारम्भ किया तो उनको अपने रोग विज्ञान (निदान) पर और निघण्टु (औषधि विज्ञान) पर नजर डालनी पड़ी कारण इनके बिना चिकित्सक एक पग भी आगे नहीं बढ़ सकता। अस्तु तुलनात्मक विवेचन करने पर आंखें खुली और ज्ञात हुआ कि हम तो प्रथम ही अपना मार्ग रुद्ध कर चुके हैं तब होश आया कि हमें अपनी कमी कैसे पूर्ण करनी चाहिये। क्या २ कमी और क्या २ अनर्थ हमारे निघण्टुओं में है दिग्दर्शनार्थ हम भी नीचे देते हैं। यथा—

"रास्नास्तुत्रिविधा प्रोक्ता मूलं पत्र तृणं तथा,,

इस प्रकार रास्ना तीन तरह की बता कर ऐसा भ्रम में डाला गया है कि कभी भी यह जटिल समस्या तय न हो। इसी तरह कंकुष्ट, रसक आदि पर भी विवाद है। अब देखिये प्रायः नित्यप्रति कार्य में आने वाली वस्तुओं के विषय में।

धान्यकं तुवरं स्निग्धमवृष्यं मूत्रलं लघु।
तिक्त कटूष्ण वीर्यं च दीपनं पाचन स्मृतम्॥ भाव०॥

धनिया स्निग्ध, अवृष्य, मूत्रल, हलका तिक्त, कटु, उष्णवीर्य वाला, दीपन और पाचन है। परन्तु

धान्यक मधुर शीतं कषायं पित्त नाशनम्। राजनि०।

राजनिघण्टुकार धनिये को मीठा शीतल, कषैला पित्तनाशक मानते हैं। भावप्रकाशकार धनिए को पित्तकारक विशेष मानते हैं। और राजनिघण्टुकार ठंडा। अब क्या ठीक है? वैद्य किसके मत को स्वीकार कर दे और कैसे सफलता प्राप्त करे? जब तक यह दृढ़ निश्चय हम लोग बैठकर नहीं कर लेते तब तक हम सफलता से सैंकड़ों कोस दूर है। एक विद्वान् वैद्य भी जिसने बड़ी खोज से रोग निश्चय किया हो उसमें दोष विवेचन करके उसकी अंशांश कल्पना भी कर लेने में वह सफल हो गया हो तो भी यह औषधि निश्चय में या तो भ्रम में पड़ जायगा कि किसका मत माने। यदि उसने एक के मत को स्वीकार करके भी औषधि दे दी तो वह असफल हुआ और रोग बढ़कर प्राण नाशक बन गया। इसमें किसका दोष है वैद्य का या वैद्यक साहित्य का। अभी तो आप यही कहेंगे कि वैद्यक का तो ऐसी भारभूत साहित्य से ही क्या लाभ? मेरी तो धारणा हो गई है कि जल्द से जल्द ऐसे साहित्य को नष्ट भ्रष्ट कर देने में ही भलाई है, वर्ना वैद्यों को बहुत क्षति का सामना करना पड़ेगा। यूनानी वाले धनिये के विषय में लिखते हैं—धनियाँ फरहत लाती है, दिल व दिमाग को कुव्वत देती है, दिमाग पर अबखरे चढ़ने को रोकती है, खफ्कान व वसवास (वहम) को मुफीद, मेदे को कुव्वत देती है, दस्तों को बन्द करती है जारियान मनी को लाभ देती है, नींद लाती है, ताजी धनियां रद्दी माद्दे को पकाती है और सफ़रा को तस्कीन करती है। इसकी कुल्ली मुंह के जोश और गले के दर्द को नफा करती है। अक्सर दिमागी बीमारियों को नफा करती है। मात्रा ६ मा० से १ तोला तक। गैर सभी अर्थात् विष नहीं है। कहिए यूनानियों की तस्खीस से क्या विशेष लाभ आपको नहीं हो सकता। इसी प्रकार एलोपैथी का वर्णन करके फिर अपना मत निश्चय कर दिया जाय तो क्या चिकित्सकों को सुलभता नहीं हो जायगी। इस कोष में जहां तक था सभी साहित्यों को लेकर भर दिया और उसका तुलनात्मक विवेचन कर अपना मत प्रकटकर विषय को साफ कर देने में कोई कसर ही नहीं उठा रक्खी और निघण्टु को 'निघण्टुना विना वैद्यो वाणी व्याकरणं विना, इस कहावत के अनुसार ही इसको ऐसा बनवाया गया कि प्रत्येक वैद्य का कार्य इसके बिना यथेष्ट सिद्ध न हो सके। विशेष विशेषताएं इस कोष के लेखकने स्वयं अपनी भूमिकामें लिख दी हैं, जिनका बताना हमारे लिए केवल मात्र पुनरुक्ति करना ही होगा अतः हम उसपर मौनावलम्बन करके आगे चलते हैं। आपको यदि अभिप्रेत हो तो लेखक के दो शब्दों को पढ़ने की उदारता कीजिए।

यही नहीं कि सिर्फ धनिये पर ही ऐसा लिखा है नहीं नहीं प्रायः सभी वनस्पतियों पर ही यही झगड़ा डाला गया है। इसके दो ही कारण हमारी अल्प मति में आते हैं १—पद्य रचना है, पद्य रचना करते समय पद्य को पूरा

करने के लिए मनमाने शब्दों को रख देना और ग्रंथ पूरा करके नाम कमाना ही है। क्योंकि 'निरंकुशा कवयः' कविनिरंकुश होते हैं। यह बात अन्य विषय के कवियों के लिये लागू भी हो सकती है, परन्तु आयुर्वेद जैसे जुम्मेदारी के साहित्य पर यह निरंकुशता आज कितना बुरा प्रभाव डालती हुई हमारे अधःपतनका कारण हुई है यह किसी भी सहृदय से छिपा नहीं है।

प्रत्येक आयुर्वेदीय साहित्य पर विद्वानों की सम्मति का अंकुश होना चाहिए और यह साहित्य तभी प्रकाश पा सकता है। जब उसका निरीक्षण विद्वानों द्वारा होकर आज्ञा प्राप्त करली जाय। मनगढंत आयुर्वेदीय साहित्य से आयुर्वेद का नाश होना संभव है। और भी देखिए—

पलाण्डुः कफकृन्नाति पित्तलः। भाव०। पलाण्डुः कफ पित्त हरः लघुः। राज० नि०।
तगरद्वयमुष्णं स्यात्। भाव०। तगरंशीतल तिक्तम्॥ रा० नि०॥
त्वक् शुक्रला। भा०। त्वच शुक्रशमनम्। रा० रा०।

कितना अनर्थकारी विरोध है। यही विरोध देख हमने इस ग्रन्थ के प्रकाशन का भार अपने निर्बल कंधों पर लिया है। आशा है हमारे वैद्य बन्धु हमें इसमें मदद देंगे और जहाँ जहाँ हमारा स्खलन हुआ हो अपनी बुद्धि के द्वारा सूचित करें ताकि संशोधित हो सके और भावी संतानों के हित साधन में यह एक हो सके। मात्रा, किस वनस्पति का कौन सा भाग प्रयुक्त किया जाना चाहिये, यदि दी हुई औषध अवगुण करती मालूम हो तो उसका दर्पघ्न कौन सी औषध को देकर शीघ्र ही होने वाली हानि से रोगी को बचा लिया जाय।

इसके सिवाय आयुर्वेद में केवल ४०० के करीब और यूनानी ग्रन्थों में ६०० के करीब वनस्पतियों का वर्णन मिलता है और एलोपैथी में करीब २००० औषधियों का स्फुट वर्णन मिलता है और करीब २०००० औषधियों के चित्र लिए जा चुके हैं। आपको इस कोष में अब तक की संसार भर की खोजों का संग्रह मिलेगा जिसे देख आप गद गद् हो जावेंगे।

इस कोष में क्या है? संक्षेपतः इसमें प्रायः सभी विषयों का समावेश किया गया है। इस कोष को पास रखने पर आपको अंग्रेजी (एलोपैथी, यूनानी, आयुर्वेदीय, रोग-निदान उनकी चिकित्सा, प्रसिद्ध २ योग, शारीरिक शास्त्र, रसायन शास्त्र, वनस्पतिक शास्त्र का पूर्ण विवेचन अकारादि क्रम से मिलेगा। अर्थात् जो जो वर्णन आज तक की प्रकाशित पुस्तकों में इतस्ततः था उनका संग्रह एक स्थान पर इस प्रकार से दिया हुआ है कि देखने वाला उस विषय का तत्क्षण विज्ञ हो जाता है अर्थात् उस विषय का अंत ही निकाल बैठता है। इससे आगे उसके लिये कुछ भी ज्ञातव्य शेष नहीं रहता। तीनों पैथियों के शब्दों को और प्रत्येक प्रांतके शब्दों को जो चिकित्सा शास्त्रसे सम्बन्ध रखते हैं वे अकारादि क्रमसे इस प्रकार संग्रह किया है कि, आपको किसी रोग व वनस्पति, पार्थिव, जान्तव औषधि का नाम मालूम हो तुरन्त उसका नाम निकाल वर्णन पढ़ तृप्ति प्राप्त कर लेनी पड़ेगी। इतना सब कुछ करने पर भी शाब्दिक महान् सागर को हम पार न कर सके हो यह सम्भव है, इसलिए प्रत्येक प्रांतीय भाषाविज्ञों से प्रार्थना है कि इस कोष में जो भी शब्द आपको न मिले उसकी सूचना हमें अवश्य दें ताकि हम उसे अगले संस्करणों में स्थान दे इस कोष को पूर्ण सफल बनाने में समर्थ हो सकें। जो कुछ भी अत्युक्ति, जो कुछ भी कमी, जो कुछ भी सुधार और आपको इसमें कराना या लिखना हो उसकी सूचना से सूचित करना और अपने अपने इष्ट मित्रों को इस कोष के देखने की सलाह देना ताकि इसका प्रचार बढ़े और शीघ्र ही इसके सम्पूर्ण भाग आपको देखने को मिल सकें। यदि आप लोगों ने इसके प्रचार में उत्साह से भाग न लिया तो यह अपनी धीमी धीमी चाल से न जाने कितने वर्षों में सम्पूर्ण निकल सके और आपको इस कोष से जैसा लाभ मिलना चाहिये न मिल सके। कारण बिना कोष के सम्पूर्ण हुये सम्पूर्ण कामनाएँ पूर्ण होनी असम्भव ही है। आशा है कि सभी वैद्य बन्धु इससे प्रसन्न हो सहाय देंगे।

वैद्यों की उन्नति का इच्छुक:—

प्रकाशक:—चिकित्सक पं० विश्वेश्वरदयालु जी वैद्य, ज; सम्पादक—'अनुभूत योगमाला'

तृतीय संस्करण

आज ३१ वर्ष के बाद हम पुनः नवीन संस्करण करके आपकी इच्छाओं की पूर्ति करने को (जो इसके द्वितीय संस्करण के समाप्त हो जाने पर मांग पर मांग आ रही थी और छपे हुये द्वितीय तृतीय भाग भी लोगों ने खरीदना बन्द कर दिये थे इसको चिंता न कर) इस दुर्धर्ष समय में जबकि प्रत्येक वस्तु अपने अठ गुने मूल्य में असाधारण उद्योग पर भी मिलना कठिन हो रही हो हमने समस्त शक्तियों को केन्द्रित कर आपकी जिज्ञासा पूर्ति के लिये कदम उठा आने को एक बड़े भीषण आवर्त में डाल दिया था परन्तु ईश्वर कृपा से हमारा संकल्प साकार हुआ और आपकी इच्छा पूर्ति हुई यह जानकर हमें बहुत ही प्रसन्नता है आशा है आप लोग शीघ्रातिशीघ्र इसको मंगवाकर हमारा श्रम एवं व्यय सार्थक करें और अपनी बहुमुखी इच्छाओं की पूर्ति करलें अभी तीनों भाग तयार हैं देर करने पर पुनः अन्य दूसरे तीसरे भाग की जो बहुत थोड़े परिमाण में छपी है उनके लिये भी इस प्रथम भाग की तरह बाट जोहनी पड़ेगी, अतः शीघ्रता करें संभव है द्वितीय तृतीय भाग समाप्त होने पर पुनः हम मुद्रण भी न कर सकें।

आपका प्रकाशक:—

बरालोकपुर—इटावा
सम्वत् २०२२

पं० विश्वेश्वरदयालु जी वैद्यराज
सम्पादक—'अनुभूत योगमाला'

लेखक के दो शब्द !

जगत में जितना भी कार्य होता है, उसका कोई न कोई कारण अवश्य होता है। बिना कारण के किसी भी कार्य का होना असभव है, पुनः वह मानव बुद्धि द्वारा अवगत हो सके अथवा नहीं। यह एक अटल सिद्धांत है।

जो बात सर्व साधारणके लिए कोई मूल्य नहीं रखती वही बात उस महा पुरुष के लिए जिसके द्वारा कोई महान् कार्य सम्पादित होने वाला होता है, अत्यन्त महत्व रखती है। परिपक्व सेव सदैव ही पृथ्वी तल पर टपका करते हैं। परन्तु सामान्य मानव हृदय पर उसका क्या प्रभाव पड़ता है ? पर नहीं इसी एक बात ने सर आइज़क न्यूटन को गम्भीर चिन्ता में डाल दिया और उनके अन्वेषक हृदय तल से गुरुत्व अथवा आकर्षण शक्ति ऐसे महान् उपयोगी सिद्धाँत का आविर्भाव हुआ और आज भी बड़े बड़े वैज्ञानिक उस साधु पुरुष के यश के गीत गाते हैं।

आज से लगभग २० वर्ष की बात है कि हमें एक जैसा योग बनाना था जिसमें "कालावाला,, शब्द प्रयुक्त हुआ था। समझ में नहीं आया "काला बाला,, है क्या बला है ? और योग का बनाना जरूरी था। अस्तु हमने उसकी तलाश में संस्कृत तथा हिंदी आदि कई भाषा के प्रायः सभी कोषों को निचोड़ डाला और काशी के तत्कालीन प्रायः सभी आयुर्वेद शास्त्रियो एवं बड़े बड़े औषध विक्रेताओं से पूछ तछ की। पर सफलता न मिली। और सफलता मिले भी तो क्यों ? उक्त शब्द महाराष्ट्री भाषा का था (हिंदीमें सुगन्ध बाला एवं उशीर दोनों के लिए प्रयुक्त होता है)।

अन्ततः विवश होकर उस औषध के बिना ही, शेष औषधियों के द्वारा योग प्रस्तुत कर उसका प्रयोग कराया गया और उससे सफलता भी मिली पर हमें संतोष न हुआ। हमने अपने मन में इस बात की दृढ़ प्रतिज्ञा करली। कि हम एक ऐसे आयुर्वेदीय शब्द कोष का निर्माण करेंगे जिसमें औषधियों के प्रायः सभी भाषा के नाम अकारादि क्रम से दिये गये हों। उसी समय से हमने शब्दों का संकलन प्रारम्भ कर दिया। वर्षों विंध्य एवं हिमवर्ती पर्वत शिखरो एवं सघन भयावह वनों की हवा खाई, जंगली मनुष्यो यथा कोल भील आदिकों से मिला, विभिन्न प्रान्तों के लोगों से बात चीत की और इस प्रकार क्रियात्मक रूप से औषधियों की खोज एवं शास्त्रीय वर्णनों से तुलना कर निश्चत निर्णय प्रतिपादनार्थ यथेष्ट मसाला एकत्रित करने में संलग्न हो गया। उस समय केवल इतना ही विचार था।

पर उस विचार एवं यत्न का जो विकसित रूप आज आपके सम्मुख है, उस समय इसका स्वप्नाभास भी न था। परन्तु जिस प्रकार एक नन्हा सा बीज मिट्टी, जल तथा वायु के संपर्क से अंकुरित होकर इतने विशाल वृक्ष का रूप धारण करता है, उसी प्रकार यह छोटा सा विचार उपर्युक्त वायुमंडल एवं सहायता द्वारा परिपोषित होकर ऐसे महान कार्य रूप में परिणत हुआ है। "कालावाला" का न मिलना कोई असाधारण बात न थी, परन्तु इसी एक विचार से इस कोष की रचना का सूत्रपात होता है। तभी से अध्यवसाय एवं कठिन परिश्रम के साथ अपना अध्ययन जारी रहा। बीच बीच में विचार विनिमय एवं प्रत्येक विषय के अनुसंधान-पूर्वक अनुशीलन तथा क्रियात्मक प्रयोग जन्य अनुभव द्वारा विचार दृढ़ एवं विकसित होते गए। जिसके परिणाम स्वरूप आज यह दीर्घ काय ग्रन्थरत्न का एक छोटा अश (प्रथम खण्ड) आपके सम्मुख है। इसकी प्रस्तावना उत्कृष्ट विद्वान, वैद्य शिरोमणि, वैद्यों के आचार्य एवं प्रत्यक्ष शरीर जो अनेक आयुर्वेदीय कालजों एवं विद्यापीठ के पाठ्य-क्रममें है और शरीर ग्रंथोंमें संस्कृतमें अपने विषय का एक अनुपम प्रामाणिक ग्रंथ रत्न है, और जिससे शरीर विषयक शब्दोके लिये हमको भी काफी सहायता मिली है के रचयिता महा महोपाध्याय कविराज

आयुर्वेदीय विश्व-कोषकारद्वयः—

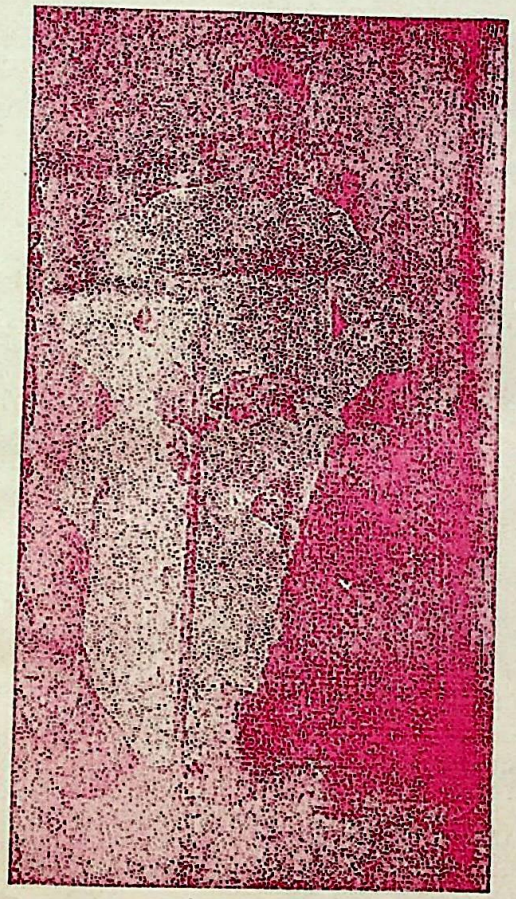

बाबू रामजीत सिंह जी वैद्य बाबू दलजीत सिंह जी वैद्य

(रायपुरी, चुनार यू० पी०)

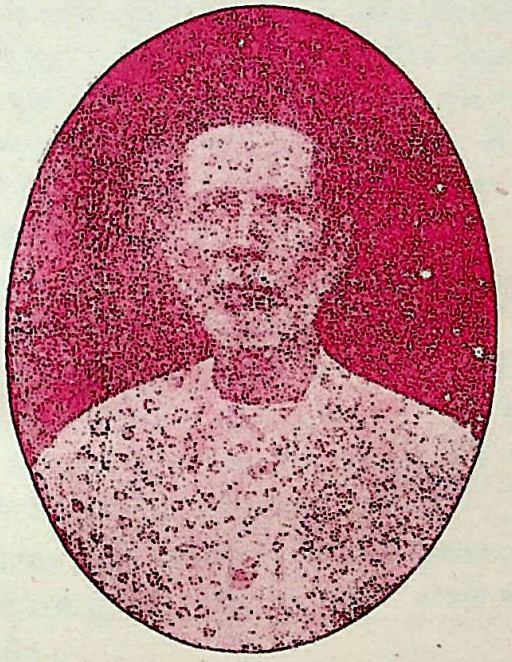

डाक्टर मुहम्मदशफ़ी (चुनार)

बगै़र दरख्ताँ सब्ज़ दर नज़रे होशियार।
हर बर्क़े दफ्तरेस्त मअ्रफ़ते किर्दगार॥

(सादी)

सुख़न के तलबगार हैं अक्लमन्द, सुख़न से है नाम निकोयाँ बलंद।
सुख़न की करें क़द्र मर्दाने कार, सुख़न नाम उनका रखे बरक़रार॥

(जॉन शेक्सपीयर)

श्री गणनाथ सेन शर्मा, सरस्वती, विद्यासागर, एम० ए० एल० एम० एस० ने लिखी है। आपकी प्रस्तावना होते हुये यद्यपि हमको कुछ भी लिखने की आवश्यकता न थी, तो भी पाठकों की विशेष जानकारी के लिए हमें यहाँ कुछ लिखना उचित जान पड़ा। अतः इस कोष में आये हुए विषयों का आंशिक परिचय निम्न पंक्तियों के अवलोकन से हो सकेगा।

१—इस कोष में रसायन, भौतिक-विज्ञान, जन्तु-शास्त्र तथा वनस्पति-शास्त्र, शरीर-शास्त्र, द्रव्यगुण-शास्त्र, शवच्छेद, शरीर कार्य-विज्ञान, वा इन्द्रिय व्यापार शास्त्र औषध-निर्माण, प्रसूतिशास्त्र, स्त्रीरोग, बालरोग, व्यवहारायुर्वेद एवं अगद-तन्त्र, रोग विज्ञान, चिकित्सा तथा विकृति विज्ञान, जीवाणु शास्त्र, शल्य शास्त्र इत्यादि आयुर्वेद विषयक प्रायः सभी आवश्यक संस्कृत, हिन्दी, अरबी, फारसी, उर्दू तथा हिंदी में प्रचलित अंगरेजीके शब्द और प्राणिज, वानस्पतिक; रासायनिक तथा खनिज द्रव्यों के देशी विदेशी एवं स्थानिक व प्रांतीय आदि लगभग सवा सौ भाषा के पर्याय व्युत्पत्ति एवं व्याख्या सहित अकारादि क्रम से आये हैं। क्रमागत प्रत्येक शब्द का उच्चारण रोमन से तथा उसका निश्चत अंगरेजी वा लेटिन पर्याय अंगरेजी लिपि में दिया गया है. जिसमें केवल अंगरेजी भाषा भाषी पाठक भी इससे लाभ उठा सकें। पुनः उक्त शब्द के जितने भी अर्थ होते हैं, उनको नम्बरवार साफ साफ लिख दिया गया है। और उस शब्द को जिसके सामने उसकी विस्तृत व्याख्या करनी है, बड़े अक्षरों में रक्खा गया है और व्याख्या को जाने वाले शब्द के भीतर उसके समग्र भाषा के पर्यायों को भी एकत्रित कर दिया गया है।

२—औषधों के प्रायः सभी भाषा के पर्याय अकारादि क्रममें सब अपने मुख्य नाम एवं अंगरेजी वा लेटिन पर्याय के साथ आए हैं, किन्तु उनका विस्तृत विवेचन मुख्य नाम के सामने हुआ है। मुख्य नाम से हमारा अभिप्राय (१) औषध के उस नाम से है जिससे प्रायः वह सभी स्थानों में विख्यात है अथवा उसका शास्त्रीय नाम, (२) जिससे उसे पर्वतीय वा अरण्यवासी लोग जानते हैं और (३) वह जिससे किसी स्थान विशेष के मनुष्य परिचत हैं। मुख्य संज्ञाओं की चुनाव में उत्तरोत्तर नाम अप्रधान माने गए हैं अर्थात् शास्त्रीय व व्यापक संज्ञाओं से अरण्य वा पर्वतीय पुनः स्थानिक संज्ञाएँ अप्रधान मानी गई हैं।

यह तो हुई भारतीय औषधों की बात। इसके अतिरिक्त वे औषध जो एतद्देशीय लोगों को अज्ञात हैं और उनका ज्ञान एवं प्रचार विदेशियों द्वारा हुआ है, उनका तथा विदेशी औषधों का वर्णन उन्हीं उन्हीं की प्रधान संज्ञाओं के सामने किया गया है।

औषध वर्णन में प्रत्येक मुख्य नाम के सामने सर्व प्रथम उसके प्रायः सभी भाषा के पर्यायों को एकत्रित कर दिया गया है। पर्यायों के देने में उनके ठीक होने का विशेष ध्यान रक्खा गया है। विस्तृत अध्ययन, अनुशीलन एवं अनुसंधान के पश्चात् ही कोई पर्याय निश्चत किया गया है। इस सम्बन्ध में अत्यन्त खोज-पूर्ण एवं सदेह परिहारक टिप्पणियां भी दी गईहैं। इतने विस्तृत पर्यायों की सूची भी शायद ही किसी ग्रन्थमें उपलब्ध हो।

पुनः यदि वह औषधि वानस्पतिक वा प्राणिज है तो उसका प्राकृतिक वर्ग दिया गया है। यदि वह औषध ब्रिटिश फार्माकोपिआ वा निघण्टु में आफिशल या नाट आफिशल है तो उसे लिख दिया गया है एवं उसके रासायनिक होने की दशा में उसका रासायनिक सूत्र दिया गया है। इसके पश्चात् प्रत्येक औषध का उत्पत्ति स्थान व उद्भव स्थान दिया गया है फिर संज्ञा निर्णायक टिप्पणी के अन्तर्गत उसके विभिन्न भाषा के पर्यायों पर आलोचनात्मक विचार प्रगट किये गये एवं संदिग्ध औषधों के निश्चीकरण का काफी प्रयत्न तथा मिथ्या विचारों का खण्डन किया गया है। मुख्य मुख्य संज्ञाओं की व्युत्पत्ति दी गई है और तद्विषयक विलक्षण बातों एवम् उनके भेदों का स्पष्टीकरण किया गया है। पुनः इतिहास शीर्षक के अन्तर्गत गवेषणापूर्ण नोट लिखे गये हैं, जिसके द्वारा प्राचीन अर्वाचीन वैद्यों के पारस्परिक शंकाओं का निवारण होता है।

फिर प्रत्येक औषध का वानस्पतिक व रासायनिक वर्णन दिया गया है जो हिन्दी में एक बिल्कुल नवीन विषय है। पुनः रासायनिक संगठन (विश्लेषण), प्रयोगांश, परीक्षा' मिश्रण, विलेयता, संयोग विरुद्ध, शक्ति गुरुत्व, प्रकृति' प्रतिनिधि, हानिकारक, और दर्पघ्न इत्यादि का आवश्यकतानुसार यथास्थान वर्णन किया गया है।

पुनः विषोपविष एवम् खनिज की आयुर्वेदीय तथा यूनानीमतानुसार शुद्धि एवम् खनिज व धातुओं के भस्मीकरण के परीक्षित एवम् शास्त्रीय नियमों का वर्णन किया गया है। फिर औषध निर्माण तथा मात्रा दी गई है।

औषध-निर्माण में प्रथम अमिश्रित फिर मिश्रित आयुर्वेदीय यूनानी औषध तथा डाक्टरी के ऑफिसल योग (जिसमें प्रत्येक औषध की निर्माण-विधि है) दिये हैं तत्पश्चात् नांट ऑफिशल योग जिसमें उक्त औषधि से बनाई हुई यूरोप अमरीका की लाभप्रद प्रायः पेटेन्ट औषधि का उनके संक्षिप्त इतिहास लक्षण एवं गुणधर्म तथा प्रयोग का वर्णन है, दिया गया है। तदन्तर गुण धर्म तथा प्रयोग शीर्षक के अन्तर्गत सम्पूर्ण आयुर्वेदीय मत से धन्वन्तरीय निघण्टु से लेकर आज पर्यन्त के आयुर्वेदीय चिकित्सा शास्त्रों में जहाँ जहाँ उक्त औषध का प्रयोग हुआ है, उसको यथा क्रम सप्रमाण एकत्र संकलित कर दिया गया है, पुनः उस पर अपना वक्तव्य लिखकर बाद में यूनानी मत से प्रायः उनके सभी प्रमाणिक ग्रन्थों से उक्त औषध विषयक गुण धर्म तथा प्रयोग को सरल हिन्दी में अनूदित कर प्रमाण सहित संगृहीत कर दिया गया है। किसी किसी औषध के पञ्चांग के प्रयोग का विशद विवेचन किया गया है। और यदि उनके किसी अंग से किसी धातोपधातु वा रत्नोपरत्न की भस्म प्रस्तुत होती है तो उसके भस्मीकरण की विधि मात्रा, अनुपान एवम् गुण-प्रयोग आदि भी दिये गये हैं। फिर डाक्टरी मतानुसार उक्त औषध का विस्तृत आवयविक बाह्यान्तर प्रभाव तथा प्रयोग अर्थात् उक्त औषध का कितनी मात्रा में किस किस शरीरावयव पर क्या क्या प्रभाव होता है, विस्तार के साथ वर्णन किया गया है। औषध के गुणधर्म वर्णन के पश्चात् योग-निर्माण विधि विषयक एवम् किसी किसी औषध के सम्बन्ध में आवश्यक आदेश दिए गये हैं। सैन्द्रियक विषोपविष द्वारा विषाक्तता के लक्षण एवं तत्शामक उपायों तथा अगद का विशद वर्णन किया गया है। अन्त में उक्त औषध के दो चार परीक्षित योग लिख दिये गये हैं।

इस प्रकार इसमें आज तक की ज्ञात अज्ञात एवम् स्वानुसंधानित देशी विदेशी लगभग २५०० वनस्पति प्रायः सभी खनिज एवम् रासायनिक तथा चिकित्सा कार्य में आने वाली प्रायः सभी प्राणिवर्ग की औषधों का विशद वर्णन और लगभग एक सहस्र औषधियों का संक्षिप्त वर्णन है इस विचार से यह केवल शब्द कोष ही नहीं अपितु ऐक प्रमाणिक एवं अभूत पूर्व निघण्टु भी है। वर्णन इस प्रकार है कि इससे आयुर्वेद विद्यार्थी, पंडित, हकीम तथा डाक्टर एवम् सर्व साधारण जनता भली प्रकार लाभान्वित हो सकती है संक्षेप में इसको रखते हुये फिर अन्य किसी भी निघण्टु की आवश्यकता ही नहीं रहती।

वनस्पतियों के स्वयं लिए हुये छाया चित्र भी तय्यार किए जा रहे हैं और हम इसी क्रम से इस ग्रन्थ के अन्तिम खन्ड में प्रकाशित किये जायंगे जितनी औषधियों का वर्णन इस ग्रन्थ में आया है प्राय उन सभी के छाया चित्र उक्त खन्ड में होंगे।

इसमें प्रायः औषधि के नामकरण हेतु, उनके पर्यायवाची शब्दों के एकीकरण, उनके ऐतिहासिक अनुसंधान तथा स्वरूप परिचय विषयक मत वैभिन्नताके निराकरण एवम् सन्दिग्ध औषधों के निश्चीकरणके सम्बन्ध में जो हमने गवेषणात्मक एवं अनुसंधान पूर्ण नोट लिखे हैं उनके अवलोकन करने से हमारे विस्तृत अध्ययन एवं कठिनश्रम तथा अध्यवसाय का आंशिक निर्दशन हो सकेगा। (इतना होते हुये भी किसी विषय में यदि किसी महानुभाव का हमारे साथ मत भेद हो तो हमें सूचित करने की अवश्य दया करें जिसमें उस पर हम लोग पुनः विचार कर अपना अन्तिम मत स्थिर कर सकें। इस प्रकार गवेषणा-सिद्ध परामर्श एवम्

सहयोगिता द्वारा भेषज निर्णय में एक सर्वमान्य विश्वासनीय निर्णय सम्पादित हो सकेगा जिससे आयुर्वेद के पुनरुद्धार में काफी सहायता मिलेगी और वैद्यों एवम् आयुर्वेदीय शास्त्रों के पारस्परिक विरोध सर्वथा के लिए मिट जाएँगे। प्रत्येक प्रांत के वैद्य बन्धुओं से हमारी कर बद्ध सविनय प्रार्थना है कि वे इस विषय में हमारी निष्कपट एवम् द्वेष शून्य भाव से सहायता करें। इसके लिए हम उनके सदैव आभारी रहेंगे। उन विषयों के नाम से ही इसमें स्थान दिया जायगा।) इसके अतिरिक्त इसमें समग्र आयुर्वेदीय तथा आस्युपयोगी यूनानी योगों का वर्णन है और ब्रिटिश फार्माकोपिया (अंग्रेजी सम्मत—योगशास्त्र), ब्रिटिश फार्माकोपिया के परिशिष्ट भाग तथा एक्स्ट्रा फार्माकोपिया को समस्त मिश्रित अभिश्रित औषधों के विस्तृत वर्णन के सिवा इसमें भारत, यूरोप तथा अमरीका के समस्त प्रशस्त एवम् उपयोगी पेटेण्ट औषधों का भी वर्णन है।

३—आयुर्वेद में आए हुए सभी रोगों का यूनानी तथा एलोपैथिक रोगों से मिलान कर उनके ठीक अरबी फारसी तथा अंग्रेजी प्रभृति के पर्याय दिए गए हैं। पुनः इसमें प्रणाली त्रय के अनुसार निदान, पूर्वरूप, रूप, उनका अन्य व्याधियों से तुलना एवं भेद, साध्यासाध्यता, शास्त्रीय एवं अनुभूत चिकित्सा, मिश्रित व अभिश्रित औषध, पथ्यापथ्य इत्यादि चिकित्सा विषयक सभी ज्ञातव्य आवश्यक बातों का प्रामाणिक विशद वर्णन हैं।

इसके अतिरिक्त जिन व्याधियों का वर्णन आयुर्वेद में नहीं है अथवा सूत्र रूप में है, उसका भी सविस्तार वर्णन किया गया है अर्थात् आयुर्वेद में न आये हुए और यूनानी तथा डाक्टरी ग्रन्थों में वर्णित प्रायः सभी आवश्यक रोगों का वर्णन पाठकों के लाभार्थ कर दिया गया है। अस्तु इसके रहते हुये किसी भी यूनानी एवं डाक्टरी चिकित्सा ग्रन्थ की आवश्यकता ही नहीं रह जाती और इस विचार से इसे रोग विज्ञान एवम् चिकित्सा शास्त्र कहना यथार्थ होगा।

इसमें सहस्रों आयुर्वेदीय युनानी तथा डाक्टरी के हर विषय के पारिभाषिक शब्द और समान व्याधियों के पारस्परिक भेदों (लक्षण भेद, अवस्था भेद, स्थान भेद, नाम भेद, दोष भेद, एवम् समय भेद आदि) की भी व्याख्या की गई है।

उपर्युक्त व्याधि भेद के अतिरिक्त कतिपय रोग के सम्बन्ध में यदि अमुक विद्वानों में मत भेद है तो उसका भी विवेचन किया है। इसी प्रकार जिस व्याधि वा परिभाषा के सम्बन्ध में प्राचीन, अर्वाचीन, चिकित्सकों में मत भेद है उसको भी स्पष्ट कर दिया गया है।

अखिल रोगों के आयुर्वेदीय, यूनानी तथा डाक्टरी संज्ञाओं एवम् आयुर्वेद विषयक शेष अन्य परिभाषाओं और कतिपय प्रणाली त्रय के सिद्धांतों का ऐक्य स्थापित करना अत्यावश्यक एवं अत्यन्त कठिन कार्य है। जो व्यक्ति चिकित्सा शास्त्र का अभिज्ञ है वह इसकी उपयोगिता एवं साथ ही कठिनाइयोंका अनुमान कर सकता है। हम चिरकाल एवं वर्षों के कठिन उद्योग एवं अध्यवसाययुक्त अध्ययन व अनुशीलन तथा अनुसंधान के पश्चात् इस कार्य को सुचारू रूप से सम्पादित कर पाये हैं। अस्तु कई सहस्र आयुर्वेदीय युनानी तथा डाक्टरी परिभाषाओं का परस्पर यथार्थ ऐक्य स्थापित हो गया है। सर्व प्रथम तो विभिन्न व्याधि विषयक संज्ञाओं का ही ऐक्य स्थापन करना दुःसाध्य है। किन्तु हमने प्रत्येक रोग के विभिन्न भेदोपभेद का भी एक्य स्थापित कर दिया है।

४—कतिपय नव्य डाक्टरी या अमरीकीय औषधि एवं परिभाषा के लिये जो नवीन आयुर्वेदीय अरबी फारसी, तथा उर्दू संज्ञाएँ स्थिर की गई हैं, वे सब फिलोलांजी (शब्द रचना) के नियमों पर अवलम्बित हैं। अस्तु प्रत्येक नवीन संज्ञा की रचना करते हुये मूल संज्ञा का विशेष ध्यान रखा गया हैं जो समग्र साहित्यिक भाषाओं में प्रचलित है।

जिस प्रकार डाक्टरी में किसी-किसी ओषधि–सत्व का नाम उस-उस ओषधि के मूल नाम के सम्बन्ध से रक्खा गया है, उसी प्रकार ओषधि–सत्वों के आयुर्वेदीय तथा तिब्बी संज्ञा–निर्माण में भी उसी खूबी को ध्यान में रखकर किया गया है।

५–विरोधी सिद्धान्त—इस ग्रन्थ में प्राचीन चिकित्सा–शास्त्र अर्थात् आयुर्वेदीय तथा यूनानी और अर्वाचीन चिकित्सा–शास्त्र अर्थात् डाक्टरी के लगभग समग्र विरोधी सिद्धान्तों पर तर्कयुक्त वैज्ञानिक एवं न्यायसंगत मत प्रदान किया गया है और उनको अत्यन्त अनुसंधान पूर्वक एवम् विस्तार से लिखा गया है। आशा है इससे वैद्य, हकीम तथा डाक्टरों के पारस्परिक विरोध का बहुतांश में निराकरण होगा और वे परस्पर एक दूसरे की प्रतिष्ठा और प्रेम भाजन बनेंगे। हमने उन समस्त विरोधी सिद्धान्तों को, यथाशक्य अत्यन्त गवेषणा के साथ लिखा है।

६–इतिहास—इसमें ब्रह्मा एवं धन्वन्तरि भगवान से लेकर आज पर्यन्त प्रायः सभी प्रमुख आयुर्वेदीय, चीनी, बाबिली, मिश्री, युनानी, अरबी और यूरोपीय चिकित्सकों की खोजपूर्ण जीवनी लिखी है।

७–विभिन्न भाषाओं का कंटेलॉग—भिन्न-भिन्न भाषा के शब्दों को नागरी लिपि द्वारा शुद्ध रूप में प्रगट करने के लिये एक बृहत् कैटलॉग तैयार किया गया था, किन्तु टाइप के अभाव के कारण उसे यथेष्ट रूप में प्रकाशित न किया जा सका। उसका एक छोटा सा अंश जिसमें तीन भाषा के टाइपों का संक्षिप्त परिचय है, "वर्ण बोधिनी तालिका" नाम से इस पुस्तक के साथ लगाया गया है।

उपर्युक्त संक्षिप्त परिचय मात्र का अवलोकन कर पाठकों को वर्तमान ग्रन्थ की विशालता का अनुभव तो अवश्य ही हो गया होगा। अब प्रश्न होता है कि इतने भावों से परिपूर्ण ऐसे विशद ग्रन्थ का "आयुर्वेदीय विश्व कोष" जैसा लघु नाम क्यों रक्खा गया?

उत्तर में केवल इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि आयुर्वेद शब्द का जो संकुचित अर्थ आज कल प्रायः लोग लेते हैं उतने संकुचित अर्थों में उक्त शब्द का प्रयोग किया जाना हमें अभीष्ट नहीं। हम तो इसे उसी व्यापक अर्थ में प्रयुक्त करना उचित समझते हैं, जिसमें हमारे ऋषि पुरुषों एवं आयुर्वेदिक पंडितों ने आज से कई सहस्र वर्ष पूर्व किया है। अस्तु, सुश्रुत महाराज इसकी निरुक्ति इस प्रकार लिखते हैं:—

आयुरस्मिन् विद्यते, अनेन वा आयुर्विन्दतीत्यायुर्वेद इति।

अथवा (सु० सू० १ अ०)

आयुर्हिता हितं व्याधेः निदानं शमनं तथा।
विद्यते यत्र विद्वद्भिः स आयुर्वेद उच्यते॥

अथवा

हिताहित सुखं दुःखमायुस्तस्य हिता हितम्।
मानञ्च तच्च यत्रोक्तमायुर्वेदः स उच्यते॥ च० सू०

अब आप ही बतलाएँ कि आयु संरक्षणार्थ एवं स्वास्थ्य सम्पादनार्थ कौन सा ऐसा विषय है–फिर चाहे वह आयुर्वेदीय, यूनानी तथा डाक्टरी ही क्यों न हो—जिसका समावेश आयुर्वेद शब्द के अन्तरगत नहीं होता। आयुः संरक्षण एवं प्रकृत साम्य सम्पादन के प्रायः सभी व्यापक प्राकृतिक नियमों का समावेश आयुर्वेद के अन्तरगत हो सकता है। इसी बात को ध्यान में रख कर इसके अंगरेजी नाम (An Encyclo pædical Ayurvedic-dictionary) की कल्पना हुई है।

अब पाठकों को यह भली प्रकार ज्ञात हो गया होगा कि यह कितना भाव गर्भित शब्द है। यही कारण है कि अनेक अन्य बड़े आडम्बरपूर्ण शब्दों के होते हुये भी इसी को क्यों पसन्द किया?

इतनी विशेषताओं के होते हुये भी इसमें प्रकाशन सम्बन्धी एवं अन्य बहुशः त्रुटियां भी रह गई हैं, जो हमको स्वयं असह्य हो रही है, परन्तु वर्तमान परिस्थिति में उनका निवारण करना हमारी शक्तिसे बाहर था। अस्तु उनके लिये हम सहृदय एवम् विज्ञ पाठको से क्षमा प्रार्थी हैं और आशा है कि वे हमें उनसे सूचित करने की विशेष दया करेंगे, जिसमें आगामी संस्करण एवम् खण्ड में उन्हें सुधार दिया जाए।

अन्त में हम पं० विश्वेश्वरदयालु जी वैद्यराज सम्पादक अनुभूत योगमाला के सदैव कृतज्ञ हैं और हृदय से धन्यवाद देते हैं जिन्होने इस महान् कार्य में हमारे हाथ बटाने में अदम्य उत्साह एवं लोक सेवा का परिचय दिया है। यह आप ही ऐसे देश सेवी एवम् महत्वाकांक्षी वीर पुरुष का काम है, जिन्होंने लाभा-लाभ वा सफलता असफलता का अंश मात्र भी विचार न करते हुये निर्भय होकर अपने को कार्यक्षेत्र में डाल दिया। अतः परमपिता परमात्मा से हम आपको दीर्घायु एवम् सफलता प्रदान करने के लिये हृदय से प्रार्थना करते हैं।

इसके पश्चात् हम अपने गुरुवर कविकुल भूषण पूज्यपाद श्री पं० महादेव मिश्र (चुनार) को हार्दिक धन्यवाद देते हैं जिनके अनुग्रह से यह कोष सफलता प्राप्त कर सका।

अपने स्नेही मित्र डाक्टर मुहम्मदशफ़ी से इस कोष के सकलन में हमको काफी सहायता मिली है और समय समय पर उचित परामर्श देकर एवं उत्साह वर्द्धन कर इस महान कार्य के पूर्ण करने में आपने जो मेरी सहायता की है उसके लिये हम आपके हृदय से कृतज्ञ हैं।

और भी जिन जिन ग्रन्थ एवम् लेखों से तथा और भी किसी से किसी प्रकार की हमको कुछ भी सहायता मिली हो, उनके लिये हम उन उनके लेखक महोदयों के हृदय से कृतज्ञ हैं।

आयुर्वेदोद्यानुसंधान–भवन रायपुरी, चुनार
माघ शुक्ल वसन्तपञ्चमी सम्वत् १९९० वि०

बाबू रामजीतसिंह जी वैद्य,
बाबू दलजीतसिंह जी वैद्य

आयुर्वेदीय-कोष के सम्बन्ध में कुछ प्रमुख विद्वानों की सम्मतियां।

श्रीश्री गौरकृष्ण शरणम्

श्री मन्माध्वसम्प्रदायाचार्य, दार्शनिकसार्वभौम, साहित्य दर्शनाचार्य, तर्करत्न न्यायरत्न गोस्वामि दामोदर शास्त्री,

अष्टाङ्गान्नेडभाजां सनियमकलितादभ्रवस्तुप्रभाव,
प्रोद्बोधानेकचेष्टाप्रवणितहृदयाभिज्ञ शारीरिकाणाम्।
योग्यव्युत्पत्तिचुञ्चुर्गगनशरदल व्योमभूमानजुष्टै,
रायुर्वेदीयकोषः प्रमदमकृत नोऽकारमूवस्थशब्दैः॥

अर्थ—अपने अपने गुणों के साथ बहुत सी ओषधियों के प्रभावों को बतलाने में यथोचित यत्न करने वाले पण्डित और वैद्यकशास्त्र के अष्टाङ्गों का विशेष परिशीलन करनेवाले वैद्यों की योग्यता को प्रकाशित करने वाले दश हजार ढाई सौ अकारादि शब्दों से युक्त आयुर्वेदीय-कोष ने हमको हर्षान्वित किया।

इह किलेटावाप्रान्तस्थवरालोकपुरतः प्रकाशितायुर्वेदीयकोष प्रथमखण्डमकारादिकाज्ञातयत्नमान्त साद्धंशतद्वयाधिक दशसहस्रशब्दाढ्यमवलोकय जिज्ञास्वामयाविजनतासन्तोषालह नामतोऽवधाय विनिर्णीय चागदङ्कार चयसश्रीचौनताम परेषामप्यत्र कर्मीणतां विनिश्चिन्वन् प्रसासद्यमान मानसोऽसीदपरिपूर्णतामनन्तरायां जगदीश्वरमभ्यर्थयमानो विरमति मुधाविस्तरादितिशम्।

चैत्र शुक्ल तृतीयायां, १९९० वैक्रमाब्दे, काश्याम्।

अर्थ—वर्तमान समय में इटावा जिले के प्रसिद्ध वरालोकपुर से प्रकाशित आयुर्वेदीय कोष के अकारादि अज्ञातयत्नमान्त दश हजार ढाई सौ शब्दों से सुशोभित प्रथम खण्ड को देखकर और यह समझ कर कि इससे जिज्ञासु रोगियों को सतोष होगा, वैद्य समूह को सहायता मिलेगी, एवं औरों के प्रति इसकी उपयोगिता का निश्चय करता हुआ और प्रसन्न मन से जगदीश्वर के निकट उक्त कोष की निर्विघ्न पूर्णता की प्रार्थना करता हुआ वृथा विस्तार से विरत होता हूँ।

श्री चरकाचार्य काशी हिन्दू विश्वविद्यालयायुर्वेद कालेजाध्यक्ष श्री धर्मदास कविराजः। नूनमिटावाप्रान्तीय वरालोकपुर पत्तनीय श्री विश्वेश्वर दयालु शर्ममुद्रापितः श्री मद्दलजीतसिंह रामजीतसिंहाभ्यान्विनिर्मित सस्कृताद्यनेक भाषासमलङ्कृतः कोषश्चिकित्सक जनानाम्परमोपकार-कोवरीवर्तिमन्येयंसम्प्रतिनिरुपमस्संवृत्त इति प्रमाणयति।

पौष शुक्ल १, गुरौ सं० १९९०।

व्याकरण साहित्यशास्त्री आयुर्वेदाचार्य भिषगाचार्यभिषग्शिरोमणि विद्यावारिधि श्री सत्यनारायण शास्त्री महोदयस्य सम्मतिः—

कौवेर कोषइव सर्व गिरोद्गृतोयो—
ऽयंत्रस्तसीति भिषजामुपकारकोवै ॥
श्री रामजीत दत्तजीतपदाभिधाभ्याम् ।
सश्वन्मुदा विरचितो ह्युपमा विहीनः ॥ १ ॥
यश्चामरप्रभृति कोषकृतस्समग्रान् ।
सद्भावजुष्ट मदनादिकुनीनजस्रम् ॥
भासास्वकेन परिभाव्यचचा च कास्ति ।
साऽयंसदा विजयताद्भवतांसुकोषः ॥ २ ॥
वरालोकपुरस्थेन, विश्वेश्वरदयालुना ।
मुद्रापितान्वयं कोषो, भिषजामुपकारकः ॥ ३ ॥
इति प्रमाणी कुरुते, सत्यनारायणाभिधः ।
वाराणस्यामगस्तस्य, पत्तनीयश्चिकित्सकः ॥ ४ ॥

पौष शु० १२ गुरौ श्री सं० १९९० ।

Bhim Ghandra Chatterjee,

B. A. B. L., B. Sc, M. I. E. M., I. E. (India)

PATIALA PROFESSOR

&

Haed of the department of Electrical engineering.

ENGINEERING COLLEGE

Benares Hindu University

I have gone through some part of Ayurveda-kosha vol-I-by Badu Ramjit Singh ji Vaidya and Babu Daljit Singh ji Vaidya It seems to be a very laudable undertaking at this opprtune moment The compilors must have taken great pains for collecting the materials It will be very useful for the hindi speaking public I wish the compilors would be more intensive rather than extensive and serve the cause of our country

Dated Benares the 14 th Jan 1934

Gopinath Kaviraj

principal

GOVERNMENT SANSKRIT COLLEGE,

Benares

I have glanced through the pages of the so called "Ayurbedic kosha,, (Vol. I) Dictionary of words used in Ayurvecic, Unani and Allopathic systems of medicine, compiled by Vaidyas Ramjita singh and Daljita singh From what I have seen of the work it has impressed me as a very valuable and useful production of an encyclopædic character and there is no doubt that the Hindi literature, in fact the general medical literature of India, has been enriched by this publication The compilors have drawn upon original and standard works, so far as the Ayurvedic section is concerned, and it is hoped that if they keep tham selves uptodate in case of the subsequent vnlumes and have an eye on accuracy and thoroughness they wili be rendering a grat service to the cause of medical literature and profession in india The work in volves a tremendous amount of labour and is well worthy of generous patronage from ahe public, 17 / 1 / 1934

प्रत्येक वैद्यों के देखने योग्य पुस्तकें

(१) सिद्धौषधि प्रकाश—सिर की चोटी से लेकर पैर की ऐंड़ी तक के सम्पूर्ण रोगों के अनुभव सिद्ध प्रयोग। मू० २)

(२) मधुमेह डायाबर्टीज—मधुमेह रोग का सम्पूर्ण विवेचन तथा चिकित्सा वर्णित है। मू० १)

(३) स्त्रीरोगचिकित्सा—स्त्री सम्बन्धी समस्त रोगों का खुलासा निदान तथा चिकित्सा। मू० १)

(४) प्लीहा—प्लीहा नाश करने को अचूक एवम् सुगम उपाय लिखे गये हैं। मू० =)

(५) राजयक्ष्मा—ग्वालियर वैद्यसम्मेलन द्वारास्वर्ण पदक प्राप्त, सम्पादक-अनुभूत योगमाला द्वारा लिखितअपने ढंग की अनोखी पुस्तक है। मू० ॥)

(६) दमा (श्वास)—दमा, दम से जाने वाली कहावत को इस पुस्तक ने जड़ से नष्ट कर दिया है। मू० ।=)

(७) अर्श (बवासीर)—सब प्रकार की बवासीर और मस्से दूर करने के उपाय लिखे हैं। मू० १)

(८) हरिधारितग्रन्थरत्न—समस्त रोगों के सुलभ योग भाषाटीका सहित हैं। मू० =)

(९) वैद्यक शब्द कोष—अकारादि क्रम से संस्कृत दवाइयों के नाम सरल हिंदी भाषा में वर्णित हैं। मू० ।)

(१०) व्रणोपचारपद्धति—समस्त शरीर के व्रणों एवम् घाव, दाद, खाज, आदि २ पर सुन्दर २ अचूक प्रयोग। मू० ॥)

(११) सिद्धप्रयोग प्रथम भाग—'माला' द्वारा जो गत चार वर्षों से प्रयोग सिद्ध ज्ञात हुये हैं, उन्हीं की श्लोक बद्ध भाषा टीका है। मू० १)

(१२) सिद्धप्रयोग (द्वितीय भाग)—इसमें माला १९२७ ई० के परीक्षा किये गये योगों का वर्णन श्लोक बद्ध भाषा टीका में लिखे गए हैं। मू० ॥)

(१३) हल्दी—हल्दी पर शास्त्र में एवं अनुभव में आये प्रयोगों का संग्रह। मू० १)

(१४) पेटेन्ट औषधें और भारतवर्ष (प्रथम भाग)—इसमें पेटेन्ट वालों की दवाइयोंके नुस्खों की पोल खोली गई है। मू० ॥)

(१५) पेटेन्ट औषधें और भारतवर्ष (द्वितीय भाग)—इसमें प्रथम भाग की शेष तथा अन्य सब पेटेन्ट दवाइयों के योग वर्णित हैं। मू० १)

(१६) भारतीय रसायनशास्त्र—सोना चांदी बनाने की सरल विधियां वर्णित हैं। भाषा टीका युक्त मू० १)

(१७) अण्डवृद्धि—प्राचीन तथा अर्वाचीन स्वानुभूत योग हैं। मू० ।=)

(१८) स्नान चिकित्सा—समस्त रोगों की स्नानों द्वारा चिकित्सायें वर्णित है। मू० ॥)

(१९) विन्ध्यमाहात्म्य—विन्ध्यवासिनी देवी का सम्पूर्ण इतिहास। मू० ३)

(२०) चिकित्सक व्यवहार विज्ञान—विषय नाम से ही प्रगट है। चिकित्सकों के देखने योग्य है ॥)

(२१) औषध विज्ञान—आयुर्वेद विद्यार्थियों एवं नवीन वैद्यों के लिये उत्तम पुस्तक। मू० १)

(२२) औषधि गुणधर्म विवेचन (प्रथम भाग) पुस्तक का विषय नाम से ही स्पष्ट है। मू० १)

(२३) औषधि गुणधर्म विवेचन (द्वितीय भाग) औषधियों का अंगप्रत्यंग पर क्याप्रभावहोता है१)

(२४) दीर्घ जीवन—गृहस्थियों के काम की अनोखी पुस्तक है। मू० १)

(२५) सर्प विष विज्ञान—समस्त सर्पों की पहिचान एवं चिकित्सा है। मू० १)

(२६) कोकसार—८४ आसनों सहित है, इसकी शानी का अन्य कोई कोकसार नहीं निकला। मू० १)

(२७) यकृत और प्लीहा के रोग—हर एक मतानुसार निदान तथा सद्यः फलप्रद चिकित्सा वर्णित है। मू० ॥) मात्र

मिलने का पता—

दी अनुभूत योगमाला आफिस, बरालोकपुर—इटावा (यू० पी०)

वर्ण क्रम

इस कोष में समस्त भाषा के शब्द देवनागरी वर्णमाला के क्रमानुसार रखे गए हैं। अरबी, फ़ारसी आदि अन्य भाषाओं के एक ही वर्ण के समानोच्चारण वाले कई कई वर्ण यथा हिन्दी के केवल एक "ज" के स्थान में फ़ारसी के जीम, ज़ाल, ज़े, ज़े, ज़ाद और ज़ो इत्यादि अनेक "ज" के लिए क्रम में कोई भेद स्थिर नहीं किया गया है, वरन् "ज" मान कर ही उन्हें हिन्दी वर्णक्रम में स्थान दिया गया है। शेष अन्य समस्त वर्णों के लिए भी इसी भाँति समझ लेना चाहिए। चूँकि देवनागरी वर्णमाला अन्य किसी भी भाषा की वर्णमाला की अपेक्षा अधिक पूर्ण एवं स्वाभाविक है और उसमें इतनी पर्याप्त ध्वनियों का समावेश है, कि अन्य किसी भी भाषा की ध्वनि को हिन्दी वर्णों द्वारा प्रकट करने में कोई अड़चन उपस्थित नहीं होती। अन्य भाषा में जो विशेष ध्वनियाँ आई है वे या तो एक ही ध्वनि के भेदोपभेद मात्र हैं अथवा इतनी आवश्यक नहीं और उनका समावेश अपनी मूल ध्वनि में हो सकता है। अतः देवनागरी वर्णक्रम में कोई परिवर्तन करना हमें उचित न जान पड़ा! हाँ / जो एक एक वर्ण के स्थान में कई कई वर्ण आए हैं उन्हें अथवा उनके किसी विशेष उच्चारण को स्पष्ट करने के लिए कुछ चिह्न मान लिए गए हैं, जिसके लिए वर्ण (लिपि तथा उच्चारण) निर्णायक सूची अवलोकन करिए। वर्णक्रम निम्न है—

अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ॠ	ऌ	ॡ	ए	ऐ
				ओ	औ	अं	अः				
क	ख	ग	घ	ङ।	च	छ	ज	झ	ञ।		
ट	ठ	ड	ढ	ण।	त	थ	द	ध	न।		
प	फ	ब	भ	म।	य	र	ल	व	श		
				ष	स	ह	क्ष	त्र	ज्ञ		

संकेत-सूची

अ०	अध्याय
अ०	अरबी भाषा
अक० आ०	अक्सीर आजुम
अक० कु०	अक्सीरी कुरताजात
अगु० तैल	अगुर्वादि तैल
अग्निमां०	अग्निमांद्य
अ० च०, अरो०	आरोचक
अ० ची०	अपची
अज०	अजमेर
अजी०	अजीर्ण
अ० टी० नी०	अमरटीका नीलकंठ
अ० टी० भ०	अमरटीका भरत
अ० टी० भा०	अमरटीका भानुदत्त
अ० टी० म०	अमरटीका मथुरेश
अ० टी० र०	अमरटीका रमानाथ
अ० टी० रा०	अमरटीका रायमुकुट
अ० टी० रामा०	अमरटीका रामाश्रम
अ० टी० सा०	अमरटीका सारसुन्दरी
अ० टी० सुभूति० स्वा०	,, सुभूति स्वामी
अ० टी० क्षी० स्वा० (–मी)	,, क्षीर स्वामी
अण्ड०	अण्डमन
अथ०, अथर्व०	अथर्ववेद (अथर्वण)
अ० दर	असुन्दर
अनु०	अनुकरण शब्द
अनु० (–पा०)	अनुपान
अने०	अनेकार्थनाम माला
अने० व०	अनेकार्थ वर्ग
अनं० र०	अनंग रस
अन्द०	अन्दलुसी (Spanish)
अन्नद्र० (व०) शू०	अन्नद्रवशूल
अप०	अपभ्रंश
अप० (–स्मा०)	अपस्मार
अ० पि०	अम्लपित्त
अफ़ू०	अफ़ग़ानी
अभि० (–न्या०) ज्व०	अभिन्यास ज्वर
अभि० निघ०	अभिनव निघण्टु (भाग १ वा २)
अम०	अमरकोष
अमृ० सा०	अमृतसागर
अरुण० अरु० द०	अरुणदत्त
अर्क० (रावण,)	अर्क प्रकाश (रावणकृत)
अर्क० चि०	अर्क प्रकाश चिकित्सा
अर्कादि०	अर्कादिवर्ग
अर्द्ध मा०	अर्द्धमागधी
अर्द्धा० भे० (अर्द्धां०)	अर्द्धांभेद
अल०	अलसक
अल्पा०	अल्पार्थक प्रयोग
अल्फ़ा० अ०	अल्फ़ाज़ ए अदवियह
अ० वृ०	अन्नवृद्धि
अव०	अवध
अव्य०	अव्यय
अ० श०	अष्टांगशरीरम्
अश्म० (–रा०)	अश्मरी
अष्टां० सं०	अष्टांग संग्रह
अ० हृ०	अष्टांग हृदय
अ० (–अति,–ती) सा०	अतीसार
अत्रि०	अत्रि संहिता
आ०	आत्मीय
आङ्ले० सं० इं० डि०	आङ्ले संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरी
आ० प्र०	आयुर्वेद प्रकाश
आम० वा०, आ० वा०	आमवात
आमा०तीसा०	आमातीसार
आ० व०, आम्र० व०	आम्रवर्ग
आरो० वि०	आरोग्यविधान
आ० वि०	आयुर्वेदविज्ञान
आसा०	आसामी
आ० सू०	आपस्तम्ब सूत्र
इं० (न्द्रिय)	इन्द्रिय स्थान
इं०	इंग्लिश (आंग्ल, अंग्रेजी)

इ० इ०	इस्तारुल् इतिब्बा
इख्ति० बा०	इख्तियारात् बादीअ़
इट०	इटेली (रूमी) भाषा
इब०	इबरानी भाषा
इला० अ०	इलाजुल्अमराज़
इ० हि०	इसरार हिकमत
इं० डू० इं०	इण्डिजनस ड्रग्स ऑफ इण्डिया (आर० एन० चोपरा एम०, ए०, एम०, डी० कृत्)
इं० वर्ना०	इण्डियन वर्नाक्युलर
इं० बाजा० (भा० बा०)	इण्डियन बाजार (भारतीय बाजार)
इं० व्यापा० शा० / इं० व्या०	इंद्रिय व्यापार शास्त्र सम्बन्धी
इ० जे० प्रां०	इण्डियन मेडिसिनिल प्लांट्स (कर्नल बी० डी० वसु० कृत
इं० मे० मे०	इण्यिन मेटरिया मेडिका (डा० के० एम० नदकारिणी कृत्)
इं० हैं० गा०	इण्डियन हैंड बुक गार्डेनिङ्ग
उ०	उत्तरखन्ड, उत्तरतन्त्रम्, उदरम्
उद्वि०	उद्विया
उणा०	उणादि
उत्	उत्कल
उ० दं०	उपदंश
उदय०	उदयपुर
उद० चन्द्र०=	उदयचन्द दत्त मेटीरिया मेडिका
उदा०, उ० व०	उदावर्त
उदाह०	उदाहरण
उन्मा०	उन्माद
उप०	उपसर्ग
उ० प० भा० (सू०)	उत्तरी पश्चिमी भारत (सूबा) (N. W. P.)
उभ०	उभयलिंग
उ० वर्मा०	उत्तरी वर्मा
उर० (उ०)	उर्दू
उ० रस० व०	उपरसवर्ग
उ० स्तं०	उरुस्तम्भ
ए० व०	एक वचन
एकार्थ०	एकार्थ वर्ग
ए० को०	एकाक्षर कोष
एन्स (हि०) मे० मे०	एन्सलीज (सर हिटलर) मेटीरिया मेडिका
एवादि०	एवादि वर्ग
ओ० रो०	ओष्ठ रोग
औ० सं०	औषधि संग्रह (डा० वामन गणेश) देशाई कृत मरहठी ग्रंथ)
औ० वि०	औषधि विज्ञान (डा० गर्ग कृत)
अं०	अँग्रेजी भाषा
क०	कर्णाट कर्णाटक
कच्छ०	कच्छी
कछ०	कछार
कटिवा०	कटिवात
कण्ठ० मु० रो०	कण्ठगत मुख रोग
कना०	कनाड़ी
कमा० (कु०-)	क (कु) माऊँ
कर०	करनाटकी
करा० का०	क़राबादीन क़ादरी
करा० शि०	क़राबादीन शिफाई
करा० सि०	क़राबादीन सिकन्दरी
कर्ण० रोग	कर्ण रोग
कल्प०	कल्प स्थान
क० व०	कर्पूर वर्ग
कां०	काण्ड
काङ्काय० गु०	कङ्कायन गुटी
काठिया०	काठिया वाद
का० पुराण	कालिका पुराण
काम०	कामला
का० र०	काम रत्नम्
काश०	काश्मीरी
काश० रु०की०	काशफुरुंमूज कीमिया
का० सू०	काम सूत्र (वत्सायन)
किता० की०	किताबुल् कीमिया
कों०	कोंकणी
क्रि०	क्रिया
क्रि० अ०	क्रिया अकर्मक
क्रि० प्र०	क्रिया प्रयोग
क्रि० वि०	क्रिया विशेषण

क्रि स०	क्रिया सकर्मक
क्लो०	क्लीव (नपुंसक) लिङ्ग
कु० (कुम्भ) का०	का०कुम्भ कामला
कु० टी०, कुसमा०	कुसुमावली टीका
कु० नफ़ी०	कुल्लियात नफ़ीसी
कुमा० तं०	कुमार तन्त्र
कुश्ता० र०	कुश्ताजात रहीमी
कुर्ग० (कु०)	कुर्ग
कुश्ता० फी०	कुश्ताजात फीरोजी
कौ० अ०	कौटिल्य अर्थ शास्त्र
कौ० भृ०	कौमारभृत्य
कों०	कोंकण देश की भाषा (कोंकड़ी)
क्व०	क्वचित अर्थात् इसका प्रयोग बहुत कम देखने में आता है।
ख०	खसिया
खुला० न०	खुलासतुन्नफाइस
खं०	खन्द
ग० गं०	गलगड
ग०	गण
गढ़०	गढ़वाल
गज० वै०	गज वैद्यक
ग० नि०	गद निग्रह
ग० मा०	गण्ड माला
गा०	गारो
गि० लु०	गियासुल्लुगात (हिन्दुस्तान फारसी; अरबी लोगत)
गु०	गुटी (दी)
गुदभ्रं०	गुदभ्रंश
गुर्ज्ज०, गु० (गुज०)	गुर्जरी, गुजरात
गु० व०	गुडूच्यादि वर्ग
गो०	गोआ
गोंड	गोंडल, गोंडाली
गंगा० परि०	गंगाधर परिभाषा
ग्र०	ग्रह
ग्रह०	ग्रहणी
ग्री० (यु०)	ग्रीक (यूनानी)
घो० मे० मे०	घोषेज मेटीरिया मेडिका
च०	चनाब
चक्र० (च०) द०	चक्रदत्त (चिकित्सा)
	चक्रपाणि दत्त द्रव्य गुण
च० (सं०)	चक्रपाणिदत्त कृत संग्रह
चन्द० तै०	चन्दनादि तैल
च० वि०	चरक विमान स्थान
च० सं०	चरक संहिता
चातु० ज्व०	चातुर्थक ज्वर
चाँ०	चाँदा
चि०	चिकित्सा स्थान
चि० क०	चिकित्सा कलिका
चि० क्र० क० (वल्ली)	चिकित्सा क्रम कल्पवल्ली
चिट०	चिटगांव
चि० सा०	चिकित्सासार:
चीनी	चीनी
चू०	चूर्ण
छे० शा०	छेदनशास्त्र
छो०	छोटा
छो० ना०	छोटा नागपुर
ज़ख़ी०ख़ा०	ज़ख़ीरहे ख़ानिज़मशाही
जटा०	जटाधर
जन्तु शा०	जन्तु शास्त्र
जय० द०	जयदत्त
जर०	जरमनी
जय०	जयपुर
जा०	जावा
जं०	जंगली
ज्यो०	ज्योतिष
ज्व०	ज्वर
ज्वरारि०	ज्वरारिमार
झेल०	झेलम
ट्रां इं०	ट्रांस इण्डस
टी०	टीका
ड०	डल्हण
डल्ल०	डल्हन मिश्र
डि० मे० ए	डिक्शनरी आंफ मेडिसिन रिचार्ड क्वैन एस डी०, एफ० आर० एस० कृत।
हिं०	हिंगलज भाषा

डे०	डेकन
डा० डु०	डाक्टरङ्गरी
त० न०	तर्जुमा नफ़ीसी फ़ने सङ्गनी इल्मुल् अद्वियह्
तश० क०	तशरीह कबीर
ता० (तामि०)	तामिल
तालु० मु० रो०	तालुगत मुखरोग
ता० श०	ताबीफ़ शरीफ़ी
ति० अ०	तिब्बे अक्बरी
ति० की०	तिब्बे कीमियाई
तिब्ब०	तिब्बतं
ति० फा०	तिब्बत फार्माकोपिया (१ व २ भा०)
तिर०	तिरहुत
तु०	तुलु
तुर०	तुरकी भाषा
तृ०	तृष्णा
ते० (तेल०)	तेलङ्ग, तेलगु
तै०	तैल
॥० तो०	अर्द्ध तोला
तो०	तोला (तोलक)
तोड़०	तोड़रानन्द
तो० मो०	तोह फ़तुल मोमोन
त्रि०	त्रिलिंग
त्रिका०	त्रिकाण्ड शेष
त्रिश०	त्रिशती
था० डि०	थाना डिस्ट्रिक्ट
द०	दखिनी
द० ब०	दखिनी बर्मा
द० भा०	दखिनी भारत
दन्त० रो०	दन्तरोग
द० मु० रो०	दन्तगत मुख रोग
द० व०	दधिवर्ग
दश०	दशक
दा० हिं०	दाक्षिणात्य हिंदी
दु० व०	दुग्धवर्ग
दुर्गा० मे० मे०	दुर्गादासकर बङ्गीय मेटीरिया मेडिका
दे०	देखो
देश०	देशज
द्रव्याभि०	द्रव्याभिधान
द्राविं०	द्राविणी
द्वि० (–रूप०)	द्विरूपकोष
ध०	धन्वन्तरि
ध० नि०	धन्वन्तरि निघण्टु
धर०	धरणिः
धा० (–न्य०) व०	धान्यवर्ग
धा० वि० प्र०	धातुविद्या प्रकाश
ध्व० भं०	ध्वजभंग
न० ज०	नरपति जयचर्या
नाना०	नानार्थ
ना० व्र०	नाड़ी व्रण
ना० मु०	नासिरुल मुआलजीन
ना० रो०	नासारोग
ना० वि०	नाड़ी विज्ञान
ना० सं०	नावनीतक संहिता
नि०	निदान स्थान
निदा०	निदान
नि० र०	निघण्टु रत्नाकर
ने० दृ० रो०	नेत्र दृष्टिगत रोग
ने० रो०	नेत्ररोग
ने० व० रो०	नेत्र वर्त्मगत रोग
ने० शु० रो०	नेत्र शुक्रगत रोग
ने० सन्धि० रो०	नेत्र सन्धिगत रोग
नैपा०	नैपाल
न्या० वै०	न्याय वैद्यक
पं०	पञ्जाब (बी) भाषा, (गुरुमुखी)
प०	पल, परिच्छेद
पट०	पटना
प० नि० नो०	पर्याय–निर्णायक नोट
प० प०	पथ्यापथ्य
प० प्र०	परिभाषा प्रदीप
प० म०	परमत
पर्या०	पर्याय
पहा०	पहाड़ी
पस्तु, पश्तु	अफगानी भाषा

पा०	पाली भाषा
पा० अजी०	पानाजीर्ण
पा० व०	पाकावली
पि० ज्व०	पित्तज्वर
पि० व०	पिप्पल्यादिवर्ग
पी० बी० एम०	प्रैक्टिशनर्स वेडमीकम्
पु०	पुलिङ्ग
पुर्त्त०	पुर्तगाली भाषा
पु० व०	पुष्पवर्ग
पु० हिं०	पुरानी हिंदी
पू०	पूर्व खण्ड, पूर्व भाग
पू० भा०	पूर्वीय भारत
पू० त०	पूर्वीय तराई
पू० हिं०	पूर्वी हिंदी
पो० बं०	पोरबन्दर
प्र०	प्रत्येक, प्रयोग, प्रसारिणी
प्रत्य०	प्रत्यय
प्रमे० (ह्यः)	प्रमेह
प्रयोगरत्न०	प्रयोगरत्नाकर
प्रयोगा०	प्रयोगामृत
प्र० शा०	प्रत्यक्ष शारीरम् (म० म० क० गणनाथ सेन विरचित)
प्रसू० तं०	प्रसूति तन्त्र
प्रसू० शा०	प्रसूति शास्त्र
प्रह०	प्रहर
प्रा०	प्राकृत भाषा
प्लेन	प्लेन
फ० व०	फलवर्ग
फ़ा०	फ़ारसी भाषा
फा० इं०	फार्माकोग्राफिया इंडिका (डा० वि० डाइमाक विरचित) १, २, ३, भा०
फ़ार्मा०	फ़ार्मा० हिंदी अँगरेजी कोष
फ़ि०	फ़िरंगी
फ्रे० (फ्रा० या फ़ा०)	फ्रेञ्च (फ़रासीसी भाषा)
ब० (बहु) व०	बहुवचन
ब० व० (बर०)	बरमा (बरमी) भाषा
बम्ब०	बम्बई
बरब०	बरबरी
ब० ज०	बह्रुल् जवाहिर (अरबी वैद्यक कोष)
बं० से० सं०	बंगसेन संहिता
ब० फ०	वन्ध्या कल्पद्रुम
बं०, बङ्ग	बँगला भाषा या बंगाल (—ली)
बु० खं०	बुंदेलखण्ड की बोली
बु० मु०	बुस्तानुल् मुफर्दात्
बु० क्रा०	बुर्हाने क़ातेअ
बृ० सं०	बृहत्संहिता (बराह मिहिर संहिता)
बृ० यो० त०	बृहद्योग तरङ्गिणी
बेरा०, बे०	बेरार, बेलूची
बोखा०	बोखारा
बुन्देल०	बुन्देलखण्ड
ब्रिटि० फा० (बी० पी०)	ब्रिटिश फार्माकोपिया
व्या० क०	व्यङ्ग़ कबीर (१, २, ३ भाग)
भग०	भगन्दर
भ० द्विरूप—को०	भरत द्विरूपकोष
भ० रभस०	भरतकृत रभस
भल्ला० गु०	भल्लातक गुड़
भा०	भाग, भारत, भावप्रकाश
भा० पू०	भावप्रकाश पूर्व भाग
भा० प्र०	भावप्रकाश
भा० भै० र०	भारत भैषज्य रत्नावली
भा० म०	भावप्रकाश मध्य भाग
भा० र० शा०	भारतीय रसायन शास्त्र (डा० वामन गणेश देशाईकृत मरहठी ग्रंथ)
भू० उन्माद	भूतोन्माद
भूटा०	भूटानी
भूरि० प्र०	भूरिप्रयोग
भे० सं०	भेल संहिता
भैष० (भै० र०)	भैषज्य रत्नावली
भौ० वि०	भौतिक विज्ञान सम्बन्धी
म०, मह०	महाराष्ट्र, मोडी (मरहठी)
म० अ०	मख़्ज़नुल् अद्वियह् (हकीम मीरमुहम्मद हुसेन विरचित)
म० अक०	मख़्ज़नुल् अद्वियह्
म० अ० डॉ०	मख़्ज़नुल् अद्वियह् डॉक्टरी
म० खं०	मध्य खण्ड

म० ज०	मख़ज़नुल् जवाहर या तिब्बी व डाक्टरी लुग़ात
मद०	मदरास
मदन० निघ०	मदनपाल निघण्टु
मधु०	मधुमती टीका
मधुमे० (म० मे०)	मधुमेह
मनी०	मनीपूर
म० प्र०	मध्यप्रदेश
म० मु०	मरज़्ज़नुल् मुफ़र्दात
मय०	मयसूर
मरा०	मराठी
मल०	मलयाली
मला०	(मलायम भाषा) मलाबीज
मसु०	मसूरिका
मह०	महराठी
महा० बा०	महाबालेश्वर
मा०	माधा
मा० अक्०	मादनुल् अक्सीर
मा० नि०	माधव निदान
मान० श० र०	मानव शरीर रहस्य (१ व २ भाग)
माला०	मालाबार
मि०	मिश्री भाषा
मि० श०	मिफ्ताहुल् ख़ज़ाइन दर बयान अक्सीर व रसायन (हकीम करीमबख़्शकृत)
मिश्र०	मिश्रकाध्याय
मुग०	मुगली
मु०	मुर
मु० अ०	मुहीत अअ़ज़म
मु० रो०	मुखरोग
मुक्ते०	मुक्तेश्वर
मुनाफा० क०	मुनाफा कबीर
मुन्त० अ०	मुन्तख़बुल अद्वियह्
मुन्त० खो०	मुन्तख़बुन्न लोगात
मुफ० ति०	मुफर्दात् दर आलम तिब्ब
मुफ० मो०	मुफर्दात् मोमीन
मुफ० सिकं०	मुफर्दात् सिकन्दरी
मुहा०	मुहाविरे
मू० कृ०	मूत्रकृच्छ्र
मू० घा०	मूत्राघात
मू० र०	मूत्ररक्त
मे०	मेची
मे० मे०	मेडीसिना मेडिका (डॉ मोहीदीन शरीफ कृत)
मेदि०	मेदिनी
मेमो०	मेमोरैण्डम शोइंग प्राइसेज़ एण्ड अदर पार्टीकुलर्स ऑफ इण्डियन ऐकोनोमिक्स।
मेवा०	मेवाड़
यम०	यमनी (पू०)
यु० यू०	यूनानी भाषा
योग० र०, यो०	योग रत्नाकर
यो० चि०	योगचिन्तामणि
यो० तरं०	योगतरंगिणी
यो० र०	योगरत्नाकर
यौ०	यौगिक तथा दो वा अधिक शब्दों के पद
यो० (नि०) व्या० रो०	योनि व्यापत्
र०	रक्तिका
र० आ०	रसार्णव
रक्तति०	रक्तातिसार
र० खं०	रसायन खण्डम्
र० चं०	रस चण्डांशु
र० चिं०	रसेन्द्र चिन्तामणिः (दुण्ढुकनाथ विरचितः)
र० त०	रसतरंगिणी
रत्ना०	रत्नावली
र० पि०	रक्तपित्त
र० प्र० सु०	रसप्रकाश सुधाकर
र० मं०, रस० मं०	रसमञ्जरी
र० मा०	रत्नमाला
र० मा० सं० (–ग्रह)	रत्नमाला संग्रह
र० र०	रसरत्नाकर
र० (स०) र० स०	रसरत्न समुच्चय
र० (रसा०) शा०	रसायनशास्त्र Chemistry
रस० कौ०	(रसकौमुदी
रस० प्र०	( ) रसप्रदीप
रस० रत्न०	रसरत्नाकर
रस० चि०	रसचिन्तामणि

र० रसा०	रसायनसारः
रसायना०	रसायनाधिकार
र० रसा० सं०	रसेन्द्रसार संग्रह
र० सु०	रसराजसुन्दरः
रसे० चिन्ता०	रसेन्द्र चिन्तामणि
र० यो० सा०	रसयोगसागर (श्रीहरिप्रपन्नजीकृत)
रसें० चिं० रसेन्द्र चिं०	रसेन्द्रचिन्तामणि
र० सं०	रसेन्द्रसार संग्रह (गोपालकृष्णा विरचितः)
र० सं० क०	रससंकेत कलिका
र० सा०	रससार
र० हृ०	रसहृदयतन्त्रम्
रा०	रावी
राज०	राजवल्लभ
राजपु०	राजपुताना
राज० य०	राजयक्ष्मा
रा० तरं०	राजतरंगिणी
रा० निघ०	राजनिघण्टु
रा० मा०	राजमार्तण्डः (श्रीभोजमहाराज विरचितः)
रिचार्ड०	रिचार्डसन्स फ़ारसी अरबी अंग्रेजी कोष
रिसा० र० इ०	रिसाला रफ़ीकुल् इतिब्बा
रिसा० हि०	रिसाला हिकमत
रुमू० इ०	रुमू जुलू इतिब्बा
रु०	रूमी
रूसी०	रूसी
रो०	रोग
लिण्ड०	लिण्डलेज़ (डॉ एफ) 'वेजिटिव्ल किङ्गडम्'
लु० कि०	लुगात किशोरी (फारसी कोष)
लु० अ०	लुग़ातुल् अद्वियह्
लु० क०	लुग़ाते कबीर
ले० लेटि०	लेटिन (Latin) भाषा
लेद०	लेदक
लेप०	लेपचा
व०	वर्ग
बटा० व०	बटादि वर्ग
वन० द०	वनौषधि दर्पण (राजवैद्य श्री बिरजाचरण गुप्त काव्यतीर्थ कविभूषण कृत बंगला पुस्तक ।)
वग० वम्ब०	वम्बई
वर्ना०	वर्नाक्युलर
व० बि०	वनस्पति-विज्ञान (Botany)
वा०	वाग्भट्ट
वाजी० क०	वाजीकरण
वा० ज्व०	वातज्वर
वा० पि० ज्व०	वात पित्त ज्वर
वा० र० (रक्त०)	वातरक्त
वा० व्या०	वातव्याधि
वि०	विशेष (विशेषण)
वि० वि०	विकृतिविज्ञान (व्याधिमूल-विज्ञान)
वि० विमा०	विमान स्थान
वि० विश्व०	विश्व प्रकाश कोष
विज० र० विर०	विजय रक्षित (व्याख्या मधुकोष)
वि० ज्वर०	विषमज्वर
विदग्धाजी०	विदग्धाजीर्ण
विद्र०	विद्रधि
विल	विलम्बिका
विल० डा० (डी)	विलियम डाइमांक (डीमक)
विष० तं०	विष तन्त्र
विज्ञा० प्र०	विज्ञान प्रवेशिका
विसू०	विसूचिका
वृ० चि०	वृद्धि चिकित्सा
वृ० मा०	वृन्दमाधवः (वृन्दनिर्मितः)
वृ० र० रा० सुं०	बृहत् रसराज सुन्दर
वृह० सु०	वृहत्सुश्रुतम्
वृ० नि० र०	बृहनिघण्टु रत्नाकर '७-८ भाग'
वै० क०	वैद्यकल्पद्रुमः (रघुनाथप्रसाद् संगृहीतः)
वै० चन्द्रिका	वैद्यक चन्द्रिका
वै० जी०	वैद्यजीवनम् (लोलिम्बराज संगृहीतम्)
वै० निघ०	वैद्यक निघण्टु
वै० मृ०	वैद्यामृतम् (मोरेश्वर विरचितम्)
वै० र०	वैद्यरहस्यम् (विद्यापति संगृहीतम्)
वै० बि०	वैद्यविनोद
वै० श०	वैद्यक-शब्द सिन्धु
वै० स०	वैद्यक संग्रह

व्यव० आ०	व्यवहार आयुर्वेद
व्या०	व्याकरण
वं० से०	वंगसेनः (वंगसेन सगृहीनः)
व्य०	अव्यय
व्याक०	व्याकरण
व्र० [ण] शो०	व्रण शोधन
श०	शराव
॥० श०	अर्द्ध शराव
श० च०	शब्द चन्द्रिका
श० चि०	शब्द चिन्तामणि
शब्द कल्प०	शब्द कल्पद्रुम
श० मा०	शब्द माला
श० र०	शब्द रत्नावली
श० शा०	शल्य शास्त्रीय
श० अ०	शरह् असबाब
श० त० वि०	शरीर तत्व विज्ञान
शा०	शरीर स्थान
शा० ध० (शार्ङ्ग०)	शार्ङ्गधर
शा० नि० भू०	शालिग्राम निघण्टु भूषण
शा० व०	शाकवर्ग
शा० ब्र०	शारीर ब्रण
शा० स०	शार्ङ्गधर संहिता (शार्ङ्गधर रचिता)
शि० रो०	शिरोरोग
शि० वि०	शिरोविरेचनम्
शी० पि०	शीतपित्त
शु०	शुद्ध
शू० दो०	शूकदोष
शे०	शेष
श्लो०	श्लीपद
श्लो०	श्लोक
स०	सकर्मक
सत०	सतजज
स० फा० इं०	सप्लिमेण्ट टु दी फार्माकोपिया ऑफ इंडिया (डा० मोहीदीन शरीफ कृत)
स० ब्र०	सद्यो व्रण
सं०	संस्कृत
संग्र०	संग्रह
सं० ग्रहणी	संग्रह ग्रहणी
संता०	संताल
संयो० क्रि०	(संयोजक अव्यय,) संयोज्य क्रिया
स० (सन्निपा०)	सन्निपात
सन्या० ज्व० चि०	सन्यास ज्वर चिकित्सा
सं० प्रां०	संयुक्त प्रान्त
सर्व मु० रो०	सर्वगत मुखरोग
सर्व०	सर्वनाम
सा०	साधारण सन्निपातिक
सा० कौ०	सारकौमुदी
सा० सु०	सार सुन्दरी
सि०	सिलोन (लंका)
सिक्क०	सिक्किम
सिउ०	सिउनी
सि० भे० म०	सिद्धभेषज मखिमाला (श्री कृष्णराम गुम्फिता)
सिम०	सिमला
सिलह०	सिलहट
सि० यो०	सिद्ध योग
सिं०	सिंध
सिंगा०	सिंगाली
सिं० भू०	सिंह भूमि
सिरि०	सिरिया (शमी)
सि० स्था०	सिद्ध स्थान
सु० व०	सुन्दर वन
सु०	सुश्रुत
सु० टी० ड०	सुश्रुत टीका डल्हण
सु० नि०	सुश्रुत निदान स्थान
सु० मि०	सुश्रुतमिश्रकाध्याय
सु०	सुरयानी (सीरिया या शामी)
सु० सं०	सुश्रुत संहिता (महर्षि सुश्रुत विरचिता)
सू०	सूत्रस्थान
सूति०	सूतिका
सूर्य्यसि०	सूर्य्य सिद्धांत
स्त०	स्तवक
स्त्रि०	स्त्रियों द्वारा प्रयुक्त
स्त्री०	स्त्रीलिंग

स्था०	स्थान
स्पे०	स्पेनी भाषा
स्व० भे० (द)	स्वरभेद
ह०	हजारो
हजा०	हजाजी
हला०	हलायुध
हली०	हलीमक
ह० ब०	हरीतकी वर्ग
ह० श० र०	हमारे शरीर की रचना १, २ भाग (डा० त्रिलोकीनाथ वर्मा कृत)
हा०	हारीत
हा० अत्रि०	हारीतोत्तरे अत्रि
हारा०	हारावलि (वली)
हा० सं०	हारीत संहिता
हिमा०	हिमालय
हिं०	हिन्दी भाषा
हि० बा०	हिन्दू बाजार
हिं० श० सा०	हिंन्दी-शब्दसागर
हि० श्वा०	हिक्का श्वास
हरीत० निघं०	हरीतक्यादि निघण्टु
हु० क़ा०	हुम्मियात कानून
हृद्रो०	हृद्रोग
हे० च०	हेमचन्द्र
हेम०	हेमाद्रिः (संस्कृत टीका)
ह्वि० मे० मे०	सर विलियम् हिटला मेटीरिया मेडिका
क्षार०	क्षारपाणि
wil	H. H wilson

Explanation of the Initials and Names Attached to the Botanical names and Synonymes

ACH or ACHAR—E. Acharius, author of Lichenographia Universalis.

ADANS—M. Adansou, author of Histoire naturella du senegal, etc.

AIT or AITON—W., author of Hortus Kewensis, &c.

BALFOUR—Dr J. H., author of the Class Book of Botany, &c.

BENTH—M. Bentham, author of Labis torum genera et species and Schorophularineæ Indicæ, &c.

BERk—Berkeley, a Botanist or Naturalist

BL. or BLUM—C. L. Blume, author of Flora Javanensis, Etc

BR. or R. BR—R. Brown, author of many Botanical works

BURM—N. L. Burmann, author of a Flora Indica

CAV—A. J. Cavanilles, author of Icones et descriptiones planta rum Etc

CHOIS or CHOISY—A. D. Choisy, a Swiss Botanist who elaborated several of the Natural Orders for De Candolle's Prodromus

COLEBR—H. T. Colebrooke, au thor of several Memoirs in the Linnean Society's Transactions, Etc

COLLADON—Author of Histoi re des Cassiæ

CORR—J. Correa de serra, auth or of some botanical papers

DALz—N. A. Dalzel one of the authors of Bombay Flora

D. C.—A. P. De Candolle, auth or of numerous botanical works

DEC.—De Candolle, Fil (Son of De Candolle)

DELILE—A. R., author of Floræ de Ægyptiaceæ Illustratis, Etc

DESV—N. A. Desvanx, autho of some botanical papers and ed tor of the 'Journal de Boeanique'

DON—D., author of the Prod romus Floræ Nepalensis, Etc

DUCH—A. P. Duchesne; auth or of Histoire Naturelle des Frai siers, Etc

DUNAL—M. F., author of Mon ographie de la famille des anon cees; Etc

ENDL—S. Endlicher, author o Genera plantarum secundum or dines naturales dispositæ, Etc

FABR—P. G. Fabricus, autho of Enumeratio Methodica Planta rum Horti Medici Helmstadiensi &c

FALC or FALCONER—Dr. H. author of some botanical papers

FORSk—P. Forskaol, author o Flora Ægyptico-Arabica, Etc

FORST—Forster author of Flora, Etc

GŒRTN—J. Gœrtner, author of 'De Fructebus et Seminibus.,

G. DON—Editor of a new Edition of Miller,s Gardner,s Dictionary.

GREVILLE—Dr. Greville.

GRIS—G. Grisley, author of Viridarium lusitanicum, Etc.

HAM—Dr. F. Hamiiton (formerly Buchanan); author of 'Journey to Mysore, and some botanical papers.

HAW—A. H. Haworth, author of Synopsis Plantarum Succulentarum

H. B. etk.—Humbolat, Bonpland, and Kunth, authors of Novage noraet species, Etc

HERBERT—H. W. Herbert, author of 'Herbert's Amarillideæ, Etc

H. et T.—Drs. J. D. Hooker and T. Thompson, author of a Flora Indica, Etc.

HEYN. or HEYNE—B. Heyne' a Botanist or Naturalist

HOOK. or HOOKER—Dr. W. J. Hooker, anthor of Botanical Miscellany, and of his (Hoo ker,s) Journal of Botany

JACK—Dr. W, author of some papers on Penang plants, Etc

JUSS—Bernard de Jussieu, author of *G*enera plantarum, Etc

KOEN, KON. or KON—J. G. Kœnig, a Danish Botanist

KTH or KUNTH—A. Prussian Botanist

LABILL—J. J.— Labillardiere, author of Icones Plantarum Syriæ rariorum decades

LAM—J. B. Lamarck,editor of the botanical portion of Encyelo pedia Methodic

LEHM—J. G. C. Lehman' author of Plantæe familia aseripoliarum nuciferae, Etc

LESCH—Leschenault de la Tour, a Director of the botanical gardan at Pondicherry

LINDL. or LINDLEY—Dr. J., author of the 'Vegetable King do-m' 'Etc

LINK—H. F., author of Philosophiae botaniçae novae prodromus, Etc

LINN—Carl von Linnaeus,the founder of Botanical Science

MATON—Dr. W. A. Maton

MEISN. or MEISSNER—Leon Fred Meissner, author of some botanical papers

MIERS—J. Miers, author of a work

MIQ or MIQUEL—F. A. W., a Botanist

MILL—P. Millers, author of ine Gardeur's Dictinary

MOEN—C. Mœnch, author of a few botanical works

MULL. or MULL—Otto Fred Muller, author of some botanical works

NEES—G. G. Nees von Esenbeck, author of several batanical warks

OLIVER.—G. A., author of a botanical work.

PAVON—J., author of a botanical work

PELL.—Pelletier, author of some botanical papers

PERS.—C. H. Persoon, author ef Synopsis plantraum seu enchridium botanicum, Etc.

PLANCH.—A. Botanist

POHL—J. J. author of ,Brazilian plants, Etc.

RETZ.—A. J. Retzius, author of Fasciculus Observationum Botanicarum, Etc.

RISSO—A., author of Histoire naturelle des Oranger

RŒM or Rom. et schult—J. J. Rœmer, and J. A. Schultes, authors ot Linnœi systema vegetavilium, Etc.

ROSC. or Roscœ—W. Roscœ,author of 'Monandrian plants of the Order Scitamineæ'

ORTH—A. W., author of Novæ Plantarum, ond several other works.

ROTT—Dr. Rottler; an Indian Botanist.

ROXB—Dr. W. Roxburgh, aut. hor of Flora Ihdica. and Plants of the Coromandel Coast, Etc.

ROY. or ROYLE—Dr. J. F. Royle author of the Illustrations of the Botany of the Himalyan Mountains, and of a work on the fibrous Plants of India

SALISB—R. A. salisbury, author of the Prodromus Londinernsis Etc.

SAV OR SAVI—C. author of several botanical works,

SCHOTT—H author of a few botanical works

SCHRAD—H. A. Schrader, author of many botanical works.

SVH. OR SCHULT—C F. Schultz author of Prodromus Floræ stadgardiensis, Etc

SEB—A. Seba author of a book

SER—N.C. Seringe. whobas elaborated several difficult Tribes in De Candolle.s Prodromus.

SM. OR SMITH.—Sir J. E. Smith author of several botanical works

SPR. OR SPRENGEL—K. Sprengel. author of systema Vegetabilium, and many other botanical works

STOCKS—author of some botanical papers in Hooker,s Journal of Botany

STOK—J. Stokes, author of Botanical Materia Medica

SWT—R. Sweet, a Botanist

SWZ or SWARTZ—O. Swartz author of Prodromus Descriptionum Vegetabilium Indicæ Orientalis, Etc

THUNB—C. P. Thunberg, author of Flora Japonica and many other works

TOURN—J. P. Tournefornt, author of Elements de Botanique Etc

VAHL—M., author of Symbolæ botanicæ, Etc

VENT or VENTN—E. P. Ventenat, author of Principes de Botanique, Etc

VILL or VILLARS—D., author of Histoire des Plantes du Dauphine, Etc

W. et A—Dr. R. Wright and Mr G. A. Walker Arnott, authors of the Prodromus Floræ Peninsulæ Indiæ Orientalis

WALL—Dr. N. wallich, author of plantæ Asiaticae rariores, and Tentamen Florae Nepalensis Illustratae

WEDD—Weddell, author of Histoire naturelle des quinquinas

W. ELLIOT—Sir, author of Flora Andhrica

WIGHT—Dr. R., author of Icones Plantarum Indiae Orientalis Illustrations of Indian Botany, and Contributions to Indian Botany, Etc

WILLD—C. L. Wildenow, author of Species Plantarum, and several other works.

भारत के समस्त ग्रन्थों में सर्व श्रेष्ठ निदान ग्रन्थ

सरलरोग विज्ञान

चिकित्सा का प्रधान अङ्ग निदान ही है। यदि आप वैद्य हैं या वैद्य बनना चाहते हैं तो हमारे यहाँ से प्रकाशित निदान का सर्वोत्कृष्ट अमूल्य ग्रन्थ पढ़कर आयुर्वेदीय संसार में उत्तम चिकित्सक बन देश की सेवा कर सकने में समर्थ होंगे और ख्याति व पुण्य के भागी बनेंगे। इस ग्रन्थ में आयुर्वेदीय, यूनानी, एलोपैथी तीनों के निदानों का सग्रह कर शरीर के किस स्थान पर कौन-कौन सा रोग होता है, वहाँ कितने रोग होते हैं। इस प्रकार का संग्रह शिर से लेकर पैर तक के अवयवों पर दिखाया है। यह जानने से ही आपको रोग का स्थान मालूम हो जायगा उस स्थान पर होने वाले रोगों का नाम और लक्षण सभी आपके सामने रहेंगे फिर निदान में कभी गलती न होगी। बिना इस ग्रन्थ के आप कभी सच्चा रोग निदान नहीं कर सकते न किसी रोग होने की गारण्टी दे सकेंगे। जब रोग ही निश्चित नहीं फिर चिकित्सा कैसे सफल होगी। इतना होने पर भी ४८० पृष्ठ के पोथे का दाम ५), यह दूसरा संस्करण अभी प्रकाशित है।

दी अनुभूत योगमाला आफिस,

बरालोकपुर—इटावा (यू० पी०)

श्री धन्वन्तरये नमः

आयुर्वेदीय विश्व कोष

अ

अ–संस्कृत और हिंदी वर्णमाला का पहिला अक्षर। इसका उच्चारण कंठ से होता है इससे यह कंठ्य वर्ण कहलाता है। व्यञ्जनों का उच्चारण इस अक्षर की सहायता के बिना अलग नहीं हो सकता इसी से वर्णमाला में क, ख, ग आदि वर्ण अकार संयुक्त लिखे और बोले जाते हैं।

अअयून–अ० मेथी, मेथिका (Trigonella Fœnum=Græceum, *Linn*)

अअर–रु० मुर, बोल। (Myrrh.)

अअल्यूतस–यु० अभ्रक, भोडर (Mica.)

अआकुल–अ० जवासा' यवास, हिंगुआ (Alhagi Maurorum, *Desc.*)

अआडइवोत्ती–ता० चिटको हिं०। बन ओकरा –बं०। (Triumfetta Rhomboidea, *Jacq.*) इं० मे० मे०। मेमो०।

अआनी–ते० ता०. मह०. कना० हाथी हस्ति। (Elephant.)

अआरगीस–रसौंत, दारुहल्दी, चित्रा–हिं०। दारुहरिद्रा सं०। अंबरबारीस–अ०। (Berberis Aristata, *D. C.*)

अआस–अ०
अआसिल बर्री–अ०
} (Myrtus Communis, *Linn.*) विलायती मेंहदी –हिं० फा० इं०।

अअ़क़ब–अ० गोरख़र (एक जंगली जानवर जो गदहे को तरह होता है।)

अअ़ज़फ़–अ० दुबला, कृश, क्षीण। एमेशियेटेड (Emaciated)–इं०।

अअ़ज़ाअ़–अ० (Organs.) (ब० व०) उज़्व (ए० व०) बदन के टुकड़े या हिस्से, अवयव, इन्द्रियाँ–हिं०। वे गाढ़ी और स्थूल वस्तुएँ जो प्रथम खिल्तों (दोषों) के योग से बनती हैं।

अअ़ज़ाअ़ असलियह–अ० अअ़ज़ाअ़ मुन्बियह। असली अअ़ज़ाअ़ अर्थात् शुक्र द्वारा उत्पन्न अवयव, यथा–अस्थि, नाड़ी, रग प्रभृति।

अअ़ज़ाअ़ आलयह–अ० अअ़ज़ाअ़ मुरक्कबह. वे अवयव जो कुछ साधारण अवयवों (धातुओं) के परस्पर योग से बने हों, संयुक्त अवयव।

अअ़ज़ाअ़ इस्तहियाइय्यह–अ० अन्दाम निहानी, अअ़ज़ाअ़ तनासुल ज़ाहिरी (प्रधानतः स्त्री के), स्त्री जननेन्द्रियाँ (बाह्य)–हिं०। (Pudendum.)

अअ़ज़ाअ़ कैलूसियह–अ० आलातकैलूसियह।

अअ़ज़ाअ़ ख़ादिमह–अ० सेवा करने वाले अवयव वे अवयव जो किसी अन्य अवयव की सेवा करें, यथा–आमाशय जो यकृत की सेवा करता है अर्थात् भोजन से शुद्ध आहार-रस (कैलूस) तैयार करके यकृत् की ओर भेजता है, अथवा शिराएँ जो यकृत से आहार तथा प्राकृतिक शक्ति को लेजाकर अवयवों में वितरित करता हैं।

अअज़ाअ़ ख़ादिमहुर्रईसह–अ० उत्तमांगों की सेवा करने वाले अवयव, यथा–धमनी जो यकृत् की सेविका है, और नाड़ी जो मस्तिष्क की सेवा करती हैं अर्थात् एक अवयव की प्रधान शक्तियों को अन्य की ओर पहुँचाती है।

अअ़ज़ाअ़ गिज़ा–अ० आहारेन्द्रियाँ, आहार सम्बन्धी अवयव, अथवा आहार को ग्रहण करने

वाले अवयव, यथा—आमाशय, अंत्र और यकृत आदि।

अअज़ाअ ग़ैर रईसह—अ० वे अवयव जो न स्वयं किसी की सेवा करते हैं और न कोई उनकी सेवा करता है।

नोट—किसी किसी हकीमका यह विचार है कि शरीर में कुछ ऐसे अवयव भी हैं जिनमें जीवन और पोषण की स्वाभाविक शक्ति विद्यमान है और उत्तमाङ्गों से उनमें कोई शक्ति नहीं आती, यथा—अस्थियाँ। किन्तु स्वतन्त्र हकीमों का यह पंथ नहीं और वास्तविक बात भी यही है। शरीर में कोई एक अवयव भी ऐसा नहीं जो अन्योन्याश्रय न हो, अथवा जिसमें स्वामी सेवक भाव विद्यमान न हो।

अअज़ाअ तनफ़्फ़ुस—अ० आज़ात तनफ़्फ़ुस। श्वासोच्छ्वासेन्द्रियाँ हिं०। (Respiratory Organs)

अअज़ाअ तनासुल—अ० आज़ात तनासुल, जननेन्द्रियाँ—हिं०। (Reproductive Organs)

अअज़ाअ तबई़यह—अ० प्राकृतिक शक्ति सम्बन्धी अवयव, यथा—जननेन्द्रिय वा आहारेन्द्रिय।

अअज़ाअ तर्फ़ियह—अ० शाख वयव, वे अवयव जो शाखाओं में स्थित हैं, यथा—हस्तपाद आदि।

अअज़ाअ दमवियह—अ० रक्त से उत्पन्न होने वाले अवयव, रक्तजन्य अवयव, यथा—मांस वा वसा।

अअज़ाअ नफ़ज़—अ० शारीरिक मल को निकालने वाले अवयव, मल प्रवर्तक अवयव, यथा—अन्त्र, वृक्क, वस्ति, लिंग, गर्भाशय की ग्रीवा, और गुदा प्रभृति। एक्सक्रीटरी आर्गेन्ज (Excretory Organs)-इं०।

अअज़ाअ वसीतह—अ० अअ़ज़ाअ मुफ़रिदह।

अअज़ाअ बौल—अ० आज़ात बौल, मूत्रेन्द्रियाँ, मूत्र संस्थान—हिं०। (Urinary system)

अअज़ाअ मरऊसह—अ० उत्तमांगों से लाभ उठाने वाले अवयव।

अअज़ाअ मुत्शाबिहतुल अज्ज़ा—अ० अअज़ाअ मुफ़रिदह।

अअज़ाअ मुन्बियह—अ० अअज़ाअ असूलियह।

अअज़ाअ मुफ़रिदह—अ० मुफरिद अअज़ाअ, अअ़ज़ाअ बसीतह, अअ़ज़ाअ मुशाबिहतुल अअ़ज़ाअ, वह अवयव जो स्वयं अथवा उसका कोई भाग नाम और वास्तविकता में अभेद हो, अर्थात् यदि उज़्व मुफ़रिद (मौलिक धातु) का कोई भाग लेकर कहा जाय कि इसका क्या नाम और परिभाषा है तो उत्तर में वही नाम और परिभाषा बतलाई जाय जो वास्तविक अवयव के लिये कही जाती है, उदाहरणतया—अस्थि के एक सूक्ष्म भाग को भी अस्थि कहेंगे, एवं मांस के सूक्ष्म भाग को मांस।

मुफ़रिद अअ़ज़ाअ (मौलिक धातुओं) की संख्य १० है, यथा-अस्थि, उपास्थि या कुर्ची (Cartilage), नाड़ी, मांस—पेशी, धमनी, शिरा, कला, झिल्ली, संधि—बन्धन (बंधनी, स्नायु, रज्जु) और कण्डरा ये वीर्य से उत्पन्न होते हैं, इसलिये इनको अअ़ज़ाअ मुन्वियह (शौक्रावयव) कहते हैं। इनमे से दसवीं धातु लह्म (मांस, गोश्त) है। शह्म (वसा) तथा समीन (मेद) की गणना भी इसी में होती है। ये तीनों शोणित से बनते हैं। रोम तथा नख की गणना वस्तुतः शारीरिक मलों में होती है। किंतु किसी किसी ने इनकी गणना भी अअ़ज़ाअ मुफ़रिदह में की है।

टिप्पणी—अअ़ज़ाअ मुफरिदह की रचना को अरबी में नस्ज (ए० ब०) और नसाइज (ब० व०) तथा आयुर्वेद में तन्तु (धातु) और अंगरेजी में टिश्शु (Tissue) कहते हैं। सभी भांति के तन्तु विशेष प्रकारकी सेलों (कोषो घटकों, कीसों) के परस्पर मिलाप द्वारा बनते हैं। अस्तु-अस्थि, मांस, का रस तथा नाड़ियों की रचना मुख्य मुख्य भांति की सेलों के पारस्परिक मिलाप द्वारा होती है। इसका विस्तृत वर्णन तन्तु (धातु) शास्त्र (Histology) में होगा।

अअ़ज़ाअ मुरक्कबह—अ० अअ़ज़ाअ आलियह, मुरक्कब अअ़ज़ाअ। संयुक्तावयव, वे अवयव जो चन्द मुफ़रिद शरीर तन्तु (धातु) के पारस्परिक मेल

से बनते हैं। उदाहरणतः-हस्त अस्थियों, रगों, नाड़ियों और मांस पेशियों तथा त्वचा के मिलाप द्वारा बनता है। इस भांति के अवयव का यदि कोई भाग लियाजाय तो वह अपनी परिभाषा तथा नाम में सम्पूर्ण से भिन्न होगा यथा हाथ की अस्थि अथवा मांस हस्त नहीं कहलाएगा।

अअजाअ मुहिम्मह-अ० अअज़ाअ शरीफ़ह।

अअज़ाअ रईसह-अ० उत्तमाङ्ग। एक्सट्रा Extra -इ०। जीवनाधारभूत अवयव, अर्थात् वे अवयव जिनपर जीवन अवलम्बित हों। वे चार है, यथा-(१) हृदय (२) मस्तिष्क, (३) यकृत और (४) मुष्क (पुरुषाण्ड) जिग और शुक्राशय। इनमें से प्रथम तीन मनुष्य जीवन के लिए अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि यह क्रमशः प्राणशक्ति (कुव्वते हयात, कुव्वते हैवानी) चेतनाशक्ति (कुव्वते नफसानी) और प्राकृतिक शक्ति (कुव्वते तब्ई) अर्थात् शारीरिक पोषणात्मक अवयवों को प्रदान करते हैं। इनमें अन्तिम के जननेन्द्रिय सम्बन्धी अवयव स्वजाति रक्षा के लिए परम आवश्यक हैं।

अअज़ाअ शरीफ़ह-अ० शरीफ अअज़ाअ अअज़ाअ मुहिम्मह, अइम अअज़ाअ वे अवयव जो अपने कर्म की महत्ता के अनुसार उत्तमाङ्गों की सामीप्य कक्षा का अधिकार रखते हैं। इनकी गणना उन (उत्तमांगों) के पीछे होती है, यथा-फुस्फुस आमाशय और अन्त्र इत्यादि।

अअज़ाअ सद्रिय्यह ज़ाहिरह-अ० वक्षोबाह्य। वक्ष के ऊपर के अवयव, यथा-बाह्य मांसपेसियाँ और स्तन प्रभृति।

अअज़ाअ सद्रिय्यह बातिनह-अ० वक्षान्तस्थ अवयव, वक्ष के भीतर के अवयव, यथा-हृदय और फुस्फुस आदि थोरैकिक् विसरी- (Thoracic Viscree)-इ०।

अअज़ाअसौत-अ० आवाजके अअज़ाअ, शब्देन्द्रियाँ शब्दोत्पादक यन्त्र, यथा-स्वरयन्त्र टेंटुआ (श्वास पथ) और फुस्फुस इत्यादि। आर्गंज़ आफ, वाइस (Organs of Voice)-इ०।

अअज़ाअ हज़म-अ० पाचक यन्त्र, पाकावयव, यथा-आमाशय, यकृत, मासारीकर इत्यादि। डाइजेस्टिव आर्गंज़ (Digestive Organs) -इ०।

अअज़ाअ हरकत-अ० आजात हर्कत।

अअज़ाअ हिस्स-अ० आजात हिस्स।

अअज़ाअ हैवानिय्यह-अ० जीवन शक्ति सम्बन्धी अवयव, प्राणिशक्ति से सम्बन्ध रखने वाले अवयव यथ-हृदय वा धमनी प्रभृति।

अअनब-अ० जिसकी नासिका बड़ी और लम्बी हो, दीर्घनासा।

अअनरा-अ० छींगा, छाँगुर, छः अंगुलियों वाला, छंगा।

अअनाक-अ० (ब० व०), उ (अ) नक़ (ए० व०) ग्रीवा, गर्दन-हिं०। सर्विक्स, Cervix नेक्स Neeks-इं०।

अअफ़ज-अ० Corpulent मोटा, मेदयुक्त, मेदार्वी, स्थूल, वह शक्ति जिसको तोंद निकली हो।

अअफ़र-अ० सफेद, मैला सुफेद, धूसर श्वेत। (Brownish white)

अअफ़ाज-अ० (Intestines, Entrails) आंत्र-हिं०।

अअमश-अ० जिसके नेत्र से जल स्राव होता हो।

अअमा-अ० (Blind) नाबीना फ़ार०। अंध, अंधा, नेत्रहीन-हिं०। अअमायान (ब० व०) और अमा (स्त्री० हिं०)।

अअमाले बिल्यद्-अ० (Operation) हस्तक्रिया, शस्त्र-हिं०। दस्तकारी-फ़ा०। छेदनविद्या व्यवच्छेद शास्त्र। साहब कामिल के कथनानुसार इसके तीन भेद हैं-(१) रग एवं (२) मांस को काट छांट, जोड़-रफ़ूकरण, नश्तर देना, पृथक करना (काटना छाँटना) दागना और टाँके लगाना इत्यादि और (३) अस्थि को यथा स्थान बिठाना, टूटी अस्थि का जोड़ना, और स्थान च्युत अस्थि की सन्धि को बिठाना, इत्यादि।

अअमिदतुल मिन्खरीन-अ० (Nasal Septum) नासामध्य पटल, दोनों नकुओं के मध्य का पर्दा-हिं०।

अअयाअ–अ० (१) कूदना, शकावट। (६) हाथ पैर टूटना, शरीर का थक जाना।

अअयून–अ० प्रसरित चक्षु, वह मनुष्य जिसके नेत्र की पुतलियाँ फैल गई हों।

अअरज–अ० (Lamy) लङ्गड़ा, लुञ्ज–हिं०।

अअराज–अ० (व० व०) (Symptoms) अर्ज़ (ए० व०), रोग के लक्षण।

अअराजे नफ़्सानियह–अ० इन्फ़िआलाते नफ़्सानियह। अन्तःक्षोभ मनोविकार: आत्मा में होने वाली बुराए–हिं०। ये छः हैं यथा–(१) शोक, (२) क्रोध (३) भय (४) आनन्द, (५) लज्जा और (६) चिन्ता।

अअशा–अ० (Nyctalopa) शबकोर–फा० नक्तांध वह मनुष्यजिसको रतौंधी का रोग हो।

अअ साब–अ० (Nerves) (व० व०) असब (ए० व०) नाड़ियां वात या बोधतन्तु (देखो–नाड़ी)–हिं०।

अअ साब उज्जिअयह–अ० (Sacral Nerves)। सक्थि नाड़ी निम्न (त्रिक) नाड़ी, अअसाब सुईन। ये वात तन्तु सुषुम्नाकाण्ड से निकलकर नितम्बास्थि से बाहर आते हैं। ये संख्या में ५ जोड़े होते हैं इनकी शाखाएँ उरु, टांग, वा पाँव की मांस पेशियों तथा त्वचा में चेष्टा व संज्ञा बहाती हैं।

अअ साबे ग़ुनुकियह–अ० (Cervical Nerves)। अअसाबे गर्दनी–फा० ग्रैव नाड़ियां–हिं०।

अअ साबे क़ तनियह–अ० अअसाबे कमर–फा० कटि नाड़ियां–हिं०। (Lumbar Nerves)

अअ साबे जह रियह–अ० (Dorsal Nerves) अअ साबे पुश्त–फा०। पृष्ठ नाड़ियां–हिं०।

अअसाबे दिमाग़ियह–अ० मस्तिष्क नाड़ियां–हिं० (Cranial Nerves)।

अअ साबे नुख़ाइ यह–अ० सौषुम्न नाड़ियां–हिं० (Spinal Nerves)

अअसाबे मुरक्कबह–अ० मिश्र नाड़ियां–हिं०। मिक्स्ड नर्व्ज़ (Mixed Nerves)–इं०।

अअसाबे शिर्किय्यह–अ० अअसाबे हमूदी। पिंगल नाड़ियां–हिं०। (Sympathetic Nerves

अ अं साबे हर्कत्–अ० हर्कती अ अ साब। चालक नाड़ियां, चेष्टावहा नाड़ियां, गति सम्बन्धी नाड़ियां–हिं०। (Motor Nerves)

अ अ साबे हास्सह–अ० विशेष चेतना सम्बन्धी नाड़ियां–हिं०। (Special Senses Nerves)

अ अ साबे हिस्स–अ० हिस्स के पुट्ठे–उ०। सांवेदनिक नाड़ियां चेतना सम्बन्धी नाड़ियां बोध अथवा ज्ञान तन्तु–हिं०। (Sensory Nerves)

अइग्रिमोईन–फ्रा० शज़्र तुल् बराग़ीस–अ० (Agrimonia Eupatorium, *Linn.*) फा० इं० १ भाग।

अइता–गों० आवतनी, मरोड़ फली–हिं०। (Helecteres Isora *Linn.*)

अइदा–अ०। होरादोंखी–हिं०। दम्मुल्–अख़्वैन अ०, हिं० वाजा० Draggons' blood (Dracœna cinnabari, *Balf*) फा० इं० ३ भाग।

अइँवा–उ० प० सू० हरथू-चल्ला। अजहार–आसा० Lagerstrœmia Flos Reginæ, *Botz.*

अइन–मह०– } आसन वृक्ष, साज़, सदरी
अइनी–कना० } –हिं०। पियासाल–ब० (Terminalia Tometosa *Bedd.*) इ० मे० मे० मेमो०।

अइर–हिं० (Farsetia ægptiaca, *Turr*) फ़रोदबूटी।

अइरन–बम्ब० अरनी, उरिन, पिरुम–हिं० (Clerodendron Phlomoides *Linn*) इ० मे० मे०।

अइरन मूल–बम्ब० अरनी, अग्निमन्थ (Premna Integrifoila, *Linn*) इ० मे० मे०।

अईरसा–अ० पुष्करमूल, पद्मपुष्कर–सं०। ईरसा–हिं० Orris root (Iris Florentina)

अईल–अव० हिं० सातला। सीकी (के) काई –३०। कोचे–ब०। (Acacia Concinna, *D. C*) इं० मे० प्लां०। फा० इं० १ भा०।

अउजा–वर० Custard apple (Anona squamosa. *Linn*)। शरीफा, सीताफल, आत–हिं०।

अउनी–फ्रां० रासन, जज़बील शामी, कुस्ते–शामी। Elecampane (Inula Helenium *Linn*) फा० इं० २ भाग।

अउसरक–पं० छड़ीला–हिं० (See Chhirila) शैलेय, शिलापुष्प–सं०। डश्नह्–अ०

अऊ–बरव० १–अण्डा। (Ovum)। २–गर्भ (Embroyo)

अऊ } –वर० (ए० व०) कन्द–हिं०।
ऊ } (Bulb or Tuber) स० फा० इं०।

अऊमियाआ } –वर (ब० व०) कन्द–हिन्दी
उमियाआ } (Bulbs Tubers)। स० फा० इं०।

अऋतुमती–सं० स्त्री० (Unmenstruating woman अरुष्पार्तवा, रजोरोधा, अनार्त्तवमती, अनृतुमती।

अएगर वल्ली–ता० धारकरेला हिं०। (Momordica Dioica, *Roxb*) इं० मे० मे०

अएडकुल रीतिचेट्टु–ते० छातिम, सप्तपर्ण, छतिवन–हिं०। (Alstonia Scholaris, *R. Br.*) इं० मे० मे०।

अएडु–ता० कना० (Sheep) भेंड़ मेष–हिं०। इं० मे०मे०।

अएण्डु–ता० चक्रमर्द, चकवड़ पमाड़, हिं०। (Cassia Tora, *Linn*) इं० मे० मे०।

अएरिलम्पाल–मल० सप्तपर्ण (Alstonia Scholaris, *R. Br*) इं० मे० मे०।

अएलि–लप्पालई–ता० (Alstonia Scholaris, *R. Br*) छतिवन, छातिम, सप्तपर्ण

अक़ अक़–अ० महूका पक्षी, यह एक प्रसिद्ध पक्षी है अस्कह कालन्नह–फा०।

अकच:–सं० त्रि०
अकच–हिं० वि०
केश शून्य बाल रहित–हिं०। बाल्ड (Bald) –इं०। जारमाथा नेड़ा–बं०।

अकच्छ हिं० वि० [स० अ=रहित + कच्छ वा कक्ष= धोती, परिधान] (१) नग्न। नंगा। (२) व्यभिचारी। पर स्त्रीगामी।

अकज–ज झूरर और बकोल अज़रूत का नाम।

अकटा–हिं० पुं०, कङ्कर, ग्रेवल (Gravel) इं०।

अकड़–हिं० संज्ञा स्त्री० [अ=अच्छी तरह+कड्डू= कड़ा होना] [क्रि० अकड़ना] ऐंठ। तनाव। मरोड़। बल।

अकड़ तकड़–हिं० संज्ञा पु० ऐंठन।

अकड़ना–हिं० क्रि० अ० [अ=अच्छी तरह+कड्डू =कड़ापन] [संज्ञा अकड़, अकड़ाव] सूखकर सिकुड़ना और कड़ा होना। खरा होना। ऐंठना। (२) ठहरना, स्तब्ध होना, सुन्न होना। (३) तनना।

अकड़ वाई–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० कड्डू–कड़ापन + वायु हिं० वाई=हवा] ऐंठन! कुड़ल। शरीर की नसों का पीड़ा के सहित एक बारगी खिंचना।

अकड़ा–हिं० संज्ञा पु० [सं० कड्डू=कड़ापन] चौपायों का एक छूत का रोग। जब चौपाए तराई की धरती में बहुत दिनों तक चर कर सहसा किसी जोरदार धरती की घास पा जाते हैं तब यह बीमारी उन्हें हो जाती है।

अकड़ाव–हिं० संज्ञा पुं० [हिं० अकड़] ऐंठन खिचाव,

अकतना अकतनस } –यू० ज़अरूर–वृक्ष (Zaarur)
अकतना अफलस }

अकतनार अनाका } –यू (१) शुकाई (Shukai)
अकतना लूकी } (२) बादावर्द (Volutarella Divaricata, *Benth*)

अकतमाअ–अ० शराब या अंगूर का पानी।

अकतमारून–यु० सूरिञ्जान Hermodactylus (Hermodactyl)

अकतालूनी–यु० बादावर्द (Volutarella Divaricata, *Binth*)

अकती–यु०खुमान कबीर।

अकतीसूम–यु० जंगली मूली, अरण्य मूलक (The Wild Radish)

अक्त–सं० मालिस।

अकती–ता०, मल०, अगस्त्य, अगस्तिया–हिं०। (Agati Grandiflora, *Desr*) इं० मे० मे०।

अकतुल मलिक–वन्य०. (Trigonella Uncata, *Boiss*) इक्लीलुल् मलिक –अ०। नख, नाखूना–हिं०।

अकदन–हिं० क्रि० वि०। दे० कदन।

अकदह–मिश्र० ज़रिश्क की लकड़ी, दारूहल्दी–हिं० दारुहरिद्रा। (Berberis Asiatica, *D. C.* 'woodof')

अकदूनियां–यु० जौहरी, जवइन, किरमाला, अफसन्तीनुल् बहर, दरमनह (Worm seed)

अकन–हिं० आक, मदार; अर्कोंद (Calotropis Gigantea or Procera, *R. Br*) स० फां० इं०।

अकन–अ० गंदह बग़ल–फा। कक्ष–शुद्धि, कक्ष-दुर्गन्ध हिं०। वह व्यक्ति जिसके कक्ष से दुर्गंध आती हो।

अकनक–अ० सुज्ञान कड़ुआ (Hermodactylus 'bitter')

अकनना–हिं० क्रि० सं० [सं० आकर्णन=सुनना। चुपचाप सुनना, आहट लेना, सुनना, कर्णगोचर करना।

अकनादि–बं० पाठा, अम्बष्ठा (Cissampelos Pereira, *Linn.*)

अक्नूस–यु० नासपाती (Pyrus Communis, *Linn.*)

अकन्दा–हिं० मदार, आक (Calotropis Gigantea *R. Br.*)

अक्फ़–अ० शिल्जुल् जिल्द मिस्मार, ऐनुस्समकह, क़र्न। कदर–सं०। अट्टन, ठेंठ, यह एक प्रकार का चर्म रोग है जिसमें साधारणतः पाँव के अँगूठे की संधि अथवा छँगुली की संधि की त्वचा कड़ी और स्थूल हो जाती है और जूता पहनने चलते समय व्यथा होती है। कार्न (Corn) क्लेवस (Clavus)–इं०।

अक़ब–अ० पै, तांत, नस जिससे धनुष का चिल्ला बनाते हैं।

अकबर–अ० मोम भेद। (Akind of bees wax)

अकबरी–हिं० संज्ञा० स्त्री० [अ० (१) एक फलकी मिठाई, तीखुर और उबाली अरुई को घी के साथ फेंट कर उसकी टिकिया बनाते हैं और घी में तल कर चाशनी में पागते हैं।

अकबरी अशरफ़ी–हिं० संज्ञा० स्त्री० [अ०] सोने का एक पुराना सिक्का जिसका मूल्य पहले १५ था पर अब १४५) हो गया है।

अकबरूस–यु रूमी और हिन्दी भेद से यह वृक्ष दो प्रकार का होता है। इनमें से रूमी को अकबरूस अर्थात् गौंद कहरुवा का वृक्ष कहते हैं।

अकम–अ० वन्ध्या अर्थात् बाँझ होना, गर्भ स्थिर न होना। (Sterile)

अक़माउर्रुम्मान–अ० अनार की छाल या अनार वृक्ष की कली जिसमें फल लगता है। (Pomegranatebark or bud)

अक़माउर्रुम्मानुल्हिन्दी–अ० नागकेशर–हिं०। (Mesua Ferrea, *Linn*)

अक़याक़ैलून–रू० चिरायता (Chirata)

अक़यान–अ० शुद्ध स्वर्ण प्योर गोल्ड (Pure gold)–इ०।

अक़यास–यु० इन्दरसां (खा) रून।

अक़यूस–यु० (१) अमरूत (Guava) (२) नासपाती (Pyrus communis; *Linn.*)

अकर–हिं० वि० [सं०] बिना हाथ का, हस्त रहित।

अकर–अ० तिलछट, तेल–किट्ट रसोव, दुर्द, गाद, गदलापन, तेल आदि की गाद। सेडिमेन्ट (Sediment)–इं०।

अक़रक़रतून–यु० गिले अक़रीतस, एक प्रकार की मिट्टी है।

अकरकरभः–सं० पु० । अकरकरा (See-Akara kara) ।

अकरकरभादि चूर्ण–हिं० संज्ञा पु० अकरकरा, सोंठ, कंकोल, केशर, पीपर, जायफल, लौंग तथा श्वेत चन्दन इन्हें कर्ष कर्ष भर लें, चूर्णकर कपड़छान करें, पश्चात् अहिफेन शुद्ध १ पल, मिश्री (सिता) सर्व तुल्य मिला चूर्ण कर रखलें । मात्रा—१ रत्ती शहद के साथ रात्रि को कामी पुरुष चाटें तो वीर्य स्तम्भन हो । शा० स० म० खं० अ० ६ श्लो० ४५ ।

अक़रक़रहा–अ० (Pyrethri Radix) अकरकरा–हिं० ।

अकरकरा–हिं० संज्ञा पु० [सं० आकरकरभः] अकलकरा, अक्कोलखर, अकलकोरा–द० । आकारकरभः, अ (–आ) कल्लकः, अकल्करः, अक्कोलर, तीक्ष्णमूलः और तीक्ष्णकीलकः प्रभृति एवं इसके अनेक अन्य कल्पित संस्कृत नाम हैं । अकोरकोरा, आकरकरा, रोशुनिया–बं० । आ (–अ) क़रक़हा, ऊदुलक़र्ह–अ० । अकल्करा, आक़रक़र्हा हस्पानी आक़रक़रह–फ़ा० । पाइरीथाई रैडिक्स, (Pyrethri Radix) एनासाइक्लस पाइरीथम, (Anacyclus Pyrethrum, *D. C*) पाइरीथम रैडिक्स (Pyrethrum Radix) –ले० । पेलिटरी आफ स्पेन और पेलिटरी रूट, (Pellitory of Spain or Pellitory root)–इं० । सैलिवरी डी एस्पेग्नी (Salivaire d' Espagne)–फ्रां० । अक्किरकारम ता० । अक्किकरुका, अक्किलाकारम्–मल० । अकार कारम्, आकलकर्र, मराठी-तीगे, मराटी मोग्गा-ते० अक्कला करे–कना० । अक्कलकरा-मह० । अकरकरा गु० । कुकैजआ या कुकया-बर० । पौकरमूल, आक करहा-प० । अकर्का-अस्व० ।

मिश्र वर्ग

(*N. O. Compositæ*)

उत्पत्तिस्थान—भारतीय उद्यान, बङ्गदेश, अरब, उत्तरी अफ़रीका, अल्जीरिया और जीवाण्ट ।

नोट—अकरकरा के उपर्युक्त समस्त पर्याय अकरकरा वृक्ष (Anacyclus Pyrethrum, *D. C.*) की जड़ के हैं जो वास्तव में बाबूना का एक भेद है, जिसे स्पेनीय बाबूना (Spanish Chamomile or Anthemis Pyrethrum) कहते हैं बाबूना नाम की मिश्रवर्ग (Compositeæ order) की निम्न चार औषधियाँ जिनका तिब्बी ग्रंथों में वर्णन आया है परस्पर बहुत कुछ समानता रखती है, इसी कारण इनके ठीक निश्चीकरण में बहुधा भ्रम हो जाया करता है । वे निम्न हैं, यथा—(१) बाबूनज रूमी या तुफ़ाही (Anthemis Nobilis), (२) बाबूनः बदबू (Anthemis Cotula), (३) बाबूना गावचश्म या उक़हवान (Matricaria Parthenium) और (४) स्पेनीय बाबूना या आक़रक़रहा (Anthemis Pyrethrum) । इन सबके लिये एन्थेमिस अथवा कैमोमाइल अर्थात् बाबूना शब्द का ही प्रयोग होता है (देखो बाबूना अथवा उसके अन्य भेद) । इनके अतिरिक्त अकरकरा नाम की इसी वर्ग की दो और औषधियाँ हैं, अर्थात् (१) बोजीदान या मधुर अकरकरा और (२) अकलकर (Spilanthus Oleraceæ) या पिप्पलक–मह० बनमुगली–कना० । अकरकरासे समानता रखती हुई ये बिलकुल भिन्न औषधि है । अस्तु, इनका वर्णन यथास्थान सविस्तर किया जायगा । यहां पर बाबूना के भेदों में से एक भेद केवल अकरकरा का ही वर्णन होगा ।

नाम विवरण–पाइरीथ्रम पाइराम (Pyros) से जिसका अर्थ अग्नि है, व्युत्पन्न यूनानी शब्द है । चूंकि अकरकरा प्रदाहकारक होता है, इस कारण इसका उक्त नाम पड़ा । आकरकर्हा अकर और तक़रीह (क्षतकारक) से व्युत्पन्न अरबी शब्द है और चूंकि यह गुण इसमें विद्यमान हैं अस्तु, इसको उक्त नाम से अभिधानित किया गया है । इसके ऊदलकर्ह नाम पड़ने का भी यही उपर्युक्त कारण है । अन्य भाषाओं में भी इसी बात को ध्यान में रखकर नामों की कल्पना हुई है ।

इतिहास—अकरकरा का वर्णन किसी भी प्राचीन आयुर्वेदीय ग्रन्थ यथा—चरक, सुश्रुत,

वाग्भट्ट, धन्वन्तरीय व राजनिघण्टु और राजबल्लभ प्रभृति में नहीं मिलता। हाँ! पश्चात् कालीन लेखकों यथा—भावप्रकाश और शार्ङ्गधर प्रभृति ने अपनी पुस्तकों में इसका वर्णन किया है। (देखो शार्ङ्ग० अकारकरभादि चूर्ण ६ अ०, भा०, म०, १ भ० ज्वरघ्नी वटी और वै० निघ०)। इससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि भारतीयों को इसका ज्ञान इस्लामी हकीमों से हुआ, जिन्होंने स्वयं अपना ज्ञान यूनान वालों से प्राप्त किया। यूनानी हकीम दीसकूरीदूस (Dioscorides) ने पाइरीथ्रोना नाम से, जिससे पाइरीथ्रम शब्द व्युत्पन्न है (और जिसको मुहीत अअजम में फ़ारियून लिखा है)। उक्त औषधि का वर्णन किया है। किन्तु, मख़्ज़नुल् अद्वियह के लेखक हकीम मुहम्मद हुसेन के कथनानुसार इसको अरबी में ऊदुल्क़र्ह जब्ली कहते हैं और यह सीरिया में बहुतायत से पैदा होता है यथा अकरकरा के बहुशः गुणधर्म रखता है। प्रमाणार्थ वे हकीम अन्ताकी का बचन उद्धृत कर कहते हैं कि—अकरकरा दो प्रकार का होता है, प्रथम सीरियन (शामी) जिसका वर्णन दीस कूरी दूस ने किया है और द्वितीय पाश्चात्य जो अफरीका पाश्चात्य देशों में उत्पन्न होता है। उक्त वनस्पति की आकृति, पत्र शाखा और पुष्प श्वेतपुष्पीय बाबूना कबीर के समान होते हैं। पर उसके (अकरकरा के) पुष्प पीत वर्ण के होते हैं। इसी की जड़ को अकरकरा और फारसी में पर्वतीय तर्ख़ून कहते हैं। हकीम अन्ताकी का उक्त वर्णन बिलकुल सत्य है। क्यों कि पश्चिमी अकरकरा वास्तव में स्पेनीय बाबूनाकी जड़ है जिसका वानस्पतिक नाम (Anthemis Pyrethrum) अर्थात् आग्नेय बाबूना या स्पेनिश केमोमायल (Spanish Chamo, mile) अर्थात् स्पेनीय बाबूना है। और इसी की जड़ हमारा उपर्युक्त अकरकरा है जिसका वर्णन हो रहा है। कोई २ बच को ही अकरकरा कहते हैं परन्तु अकरकरा और बच वस्तुतः दो भिन्न २ वस्तुएँ हैं।

वानस्पतिक वर्णन—यह अरब और भारतवर्ष की प्रसिद्ध बूटी है (यह बंगाल और मिस्र में उत्पन्न होती है)। इसके छोटे छोटे चुप चतुर्थ की पहली वर्षा होते ही पर्वती भूमि में उत्पन्न ते हैं। इसकी शाखाऐं पत्र और पुष्प सफेद बा के सदृश होते हैं परन्तु डण्ठल पोली होती गुजरात और महाराष्ट्र देश में इसकी डण्डी अचार और साग बनाते हैं। इसमें सोवा सदृश बीज आते हैं। डाली रोंगटे और पृथ्वी पर फैली हुई होती है तथा एक में से निकल कर कई हो जाती है। उस डाल ऊपर गोल गुच्छेदार छत्री आकार का किन्तु बा से विपरीत पीले रंग का फूल होता है। ब खड़ी खड़ी और पुष्प-पटल (Petals सुफेद होते हैं। इसकी जड़ औषधि कार्य आती है। ये सीधे सीधे टुकड़े जिन पर रेशा नहीं लगा होता ३–४ इञ्च अर्थात् १ बालि लम्बे और आधे से पौन इंच मोटे बेलनाकार गो होते हैं। ऊपर के किनारे पर प्रायः वे रंग रोमों एक चोटी सी होती है। बाह्य भाग धूसर वर्ण तथा झुर्रीदार होता है इसको जहाँ से तोड़ें व से टूट जाता है। गंध-विशेष प्रकार का। स्वा इस जड़ के खाने से गरमी मालूम होती चरपरी लगती और जिह्वा जलने लगती है इसकी मुख्य परीक्षा है इसके चबाने से मुँ लालास्राव होने लगता है और सम्पूर्ण मुख कंठ में चुनचुनाहट और कांटे से चुभते मालूम ते हैं। इसकी जड़ भारी (वज़न दार) और तो ने पर भीतर से सफेद होती है। इसमें भी कीड़े लग जाया करते हैं। परीक्षा—अकरक अरण्य (जंगली)—काशनी की जड़ के सदृश ता है किन्तु यह (काशनी) तिक्त एवं काले की होती है।

रसायनिक संगठन—१—इसमेंएक स्फटिक अल्कलाइड (चारीयसत्व) आकरकर्मीन (Pyr thrine) २-एक रेजन (राल) और ३- स्थायी (Fixed oils) तथा ऊड़नशील तै होते हैं।

प्रभाव—सशक्त लालानिस्सारक, प्रदाहजनक और कामोद्दीपक।

औषधि-निर्माण—योगिकचूर्ण बटिकाए और कल्क।

(१) अकरकरा ४ भाग, इन्द्रायन २ भाग नौंसादर ३ भाग, कृष्णजीरक २ भाग, कुटकी ४ भाग, और कालीमिर्च ४ भाग, इन सबकों मिला कर चूर्ण प्रस्तुत करें। अस्पमार में इसकों नस्य रूप से व्यवहार में लाएँ।

(२) अकरकरा ४ भाग, जायफल ३ भाग, लौंग २ भाग, दालचीनी ३ भाग, पिप्पली मूल, केशर २ भाग, अफीम १ भाग, भंग ३ भाग, मुलेठी ४ भाग, मदार मूल त्वक ५ भाग, वायविडंग ३ भाग, और शहद ५ भाग सबकों चूर्ण कर वटिका प्रस्तुत करें। मात्रा—आधी से २॥ रत्ती।

गुण—बच्चों के चिड़चिड़ापन, अनिद्रा सवेदन दंतोद्भेद, अतीसार उदरशूल, तथा वमन के लिये गुण दायक है।

ऑफिशल प्रिपेयरेशञ्ज (ए० मे० मे०)—टिङ्कचूरा पाइरीथ्राई (Tinctura Pyrethri) —ले०। टिङ्कचर ऑफ पायरीथ्रम (Tincture of Pyrethrum)—इं०। अकरकरासव-हिं०।

निर्माण बिधी—पायरीथ्रम की जड़ का ४० न० का चूर्ण ४ आउन्स अलकुहॉल (७० प्रति०) आवश्यकतानुसार। चूर्ण को ३ फ्लूइड आउन्स अल्कुहॉल में तर करके पर्कोलेशन द्वारा एक पाइन्ट टिक्चर तैयार कर लें।

प्रयोग—लालास्राव हेतु इसका स्थानिक उपयोग होता है। यह दांत के दर्द, गठिया, अस्पमार पक्षाघात, कफवात, तोंतलापन और ज्वर, तथा अनेक अन्य रोगों में लाभ पहुँचाता है मात्रा—३॥ मा०। अहित—फुफ्फुस को। दर्प नाशक—कतीरा और मुनक्का।

गुण धर्म और उपयोग

आयुर्वेद की दृष्टि से—अकरकरा उष्ण वीर्य कटुक तथा बलकारक है, तथा प्रतिश्याय शोथ एवं वात का नाश करता है। वृ० नि० र०।

वैद्यकीय व्यवहार

भाव प्रकाश—फिरंग रोग में—विशुद्ध-पारद आधा तोला, खदिरचूर्ण आधा तोला, अकरकरा चूर्ण १ तोला, मधु १॥ तोला एकत्र मर्दन कर वटिका प्रस्तुत करें। इस में से प्रातःकाल १-१ वटी जल के साथ सेवन करने से फिरंग रोग (Syphilis) नष्ट होता है।

यूनानी एवं नव्यमत—अकरकरा को चबाने से प्रथम दाह प्रतीत होता है। तत्पश्चात शीघ्र झुनझुनाहट एवं सनसनाहट का ज्ञान होता तथा अधिक मात्रा में लाला की उत्पत्ति होती है क्योंकि मौखिकी धमनी बांधतन्तु तथा लाला-ग्रंथि पर इसका उत्तेजक प्रभाव होता है परन्तु थोड़ी देर पश्चात नाड़ियां शिथिल हो जाती हैं। अस्तु यह एक सशक्त लालानिस्सारक (पावर्फुल स्यालेगांग) तथा किञ्चित् अवसन्नताजनक (अनस्थेटिक) है। उक्त प्रभावों के कारण इसको दन्तपीड़ा कव्वा लटकने (रीलैक्सड यूवुला) और कण्ठशोथ (सोरथ्रोट) में मंजन गण्डूष प्रभृति रूप से व्यवहार में लाते हैं। दन्तपीड़ा में अकरकरा को विकृत दाँत के नीचे रखने तथा चबाने अथवा इसका टिंकचर आयोडीन दोनों समभाग सम्मिलित कर इसमें जरा सी रूई तर करके पीड़ा युक्त दन्त में रखने से वेदना शमन होती है। २ आउंस (१ छ०) जल में एक ड्राम (३॥ मा०) इसका टिंकचर मिला कर इसका गंडूष करते हैं। डाक्टर राय इसको योषापस्मार (ग्लोबस हिस्टैरिकस) में गुणदायी बताते हैं (ए० मे० मे०)

यूनानी ग्रन्थकार—इसे तीसरी कक्षा के अन्त में और चतुर्थ कक्षा तक रुक्ष मानते हैं। परन्तु कोई २ तीसरी और चतुर्थ कक्षा में शीतल मानते हैं।

देह में जो सुद्दा (रुधिर आदि की गांठ) पड़ जाता है उसको खोलता मस्तक को दुष्ट मल से शुद्ध करता यथा मस्तक के अवयव तथा कफ

आदि को निस्संदेह चमक (जिला) देता है। अर्दित (लकवा) पक्षाघात, कफवात, पीड़ा के साथ गर्दन का जकड़ जाना, जोड़ों का ढीला होना तोतलापन, छाती, दांत, और सन्धि वेदना, गृध्रसी, जलंधर, पसीना, और ज्वर को दूर करता शीतल प्रकृति वाले की इंद्रीं की शक्ति कों तथा स्तनों में दूध को बढाता, खुल कर पेशाब लाने को व स्त्रियों के आर्त्तव को पतला तथा गाढा लेप करने से लाभ पहुंचाता है। मस्तक रोग, सन्धि के रोग, वाततन्तु (पट्ठे) के मुख के और छाती केरोग में अकरकरा को जैतून जैल में पीस कर मर्दनकरने से लाभ होता है। और कुबड़ापन, सुन्नवात, या ढीलेपन को, अवयवों के पुराने रोगों को भी पूर्वोक्त उपयोग गुणदायक होता है।

यदि अकरकरा के क्वाथ को गरम गरम मस्तक पर लेप और तालू पर मर्दन करें तो मस्तक को गरम कर नज़ले को नष्ट करता है। यदि इसे यस्तगीं या कसैली वस्तु के साथ चटाऐं तो यह मृगी रोग, जो दूषित रोगों से प्रकट हुआ है, नष्ट होता है। शहत के साथ अकरकरा चूर्ण को चाटने से मृगी, अंधकार आना और पक्षाघात प्रभृति रोग नष्ट होते हैं।

अकरकरे के कपड़छन किये हुये बारीक चूर्ण को सूंघने से नाक रुकना अर्थात् श्वांसावरोध दूर होता हैं यदि इसको सिरके में भिगो दांत के नीचे रक्खें तो दन्तशूल नष्ट होता है। चबाने या जिन्हा पर बुरकाने से जीभ की आर्द्रता दूर हो कर तुतलाना मिटता है।

इसके क्वाथ को मुख में रखने से हिलते दांत मजबूत होते हैं। उक्त क्वाथ में सिरका मिलाकर गडूष करने से गले का फोड़ा, काग का लटक आना तथा जीभ लटकने (जो कफ के कारण हो) को लाभ पहुँचाता है।

पीसकर मर्दन करने से पसीना लाता है। केवल अकरकरा या अकरकरा और फाकानियां दोनों को गले में डोरे से बांधकर लटकावें तो बच्चे की मृगी दूर होता है यदि इकरंगे काले कुत्ते के बाल और अकरकरा दोनों को बालक के बांध दे। तो इंद्रियों में चेतन्यता हो तथा आमाशय रोग और ज्वर नष्ट हों।

अकरकरा के लऊक (अवलेह) में शहद मिला के पीने से देह की कांति बढती है छाती का दर्द कफ की पुरानी खांसी एवं सरदी रोग दूर होते हैं। यह आमाशय से आंव निकालता है। एवं शीतल प्रकृति वाले की मैथु शक्ति बढाता है।

यदि आधा दिरम (१॥। मा०) घोट कर ति तो बलपूर्वक कफ को जुलाब द्वारा निकालता ज्वर आने से प्रथम अकरकरा को जैतून के में पीस सम्पूर्ण शरीर में मालिस करें तो ज्व सरदी का लगना दूर होता है और पसीना ला एव देह के जोड़ (संधियों) की बीमारी दू करता है। अकरकरा के तेल को इंद्रीपर मलने इंद्री दृढ तथा कामशक्ति प्रबल होती है और मै में विशेष आनन्द आता है। बिधिपूर्वक शहद घोल तिला (पतला लेप) करने से स्त्री को ग जल्दी स्खलित करता है। यदि बाकला के के साथ घोट पोटली में रख इन्द्री और अण कोषों में बांधे तो गुण करता है, अर्थात् जिस फोतों को बहुत सर्दी लगती हो उसे लाभ पहुं ता है।

सबसे अद्भुत बात इसमें यह है कि इस नौसादर के साथ बारीक पीस तालु और मुख खूब लगाए अर्थात् रगडे तो आग से मुंह कदा नहीं जलता। अकरकरा को सिरके के साथ औट तो खमीर के सदृश हो जायगा। इसे कीं खाए हुए दांतों के ऊपर रखने से सब कीड़े मक के गिर पड़ेंगे

एक औंकिया शुष्क अकरकरा को कूटे आध सेर जल में औंटाए जब एक औंकिया र रहे तब उतार शीतल कर हाथों से मलकर छा ले फिर दो औंकिया जैतून के तेल के साथ हुई देग में मिलाकर काम में लायें।

गुण—इस रोगन के पीने से पसीना नि कर सर्दी का ज्वर नष्ट होता है। यह सर्दी वातजन्यमात्र रोगों को नष्ट करता एवं मैथुनशक्ति बढाता है।

अकरकरा का सऊत नाक में टपकाने से मस्तक पीड़ा आधा शीशी तथा मृगी नष्ट होती है एवं यह शीतज्ञ व मस्तक को बलिष्ट करने में उत्तम है।

जिगर के रोगों में अकरकरा की प्रतिनिधी पीपल और शहत है और आमाशय के रोगों में रासना और अगर। यदि समय पर ये दोनों प्राप्त न हों तो उनके स्थान में सोंठ इससे आधी काली मिरच लेनी चाहिए। गंण्डूष में पहाड़ी पोदीना डेढ गुना, हलक की पीड़ा में इलायची लेनी चाहिए। एवं अकरकरा के उसारे से निर्मित तैल लेना चाहिये।

वामक व विरेचक औंषधि पीने से पहिले यदि अकरकरा खा लें तो फिर कड़वे, चरपरे, कषैले रस का कुछ भी ज्ञान न होगा। अतएव जिसको क्वाथ आदि पीने से घृणा होती है हकीम लोग उसको प्रथम अकरकरा चबाने को देते हैं। जब वह चबाकर थूक देता है तो ऊपर से फिर जो क्वाथ पिलाना हो पिलाते हैं।

अकरकरादिचूर्ण–हिं०अकल्लकादिचूर्ण–अमृतप्रभा चूर्ण—अकरकरा, सेंधानमक, चित्रक आमला अजवाइन, हड़ इन्हें समान भाग लें और सोंठ २ भाग लेकर बारीक पीस कपड़ छान करें। पुनः विजौरे के रस की भावना देकर रक्खें।

गुण—मन्दाग्नि, अरुचि' खासी, श्वास' गले के रोग. सरेकमा, पीनस, मृगी उन्माद तथा सन्निपात को नष्ट करता है अभि० नि० भा० १।

अकरकराहा–हिं० } –अकरकरा
अकरकरो–गु० } (Pyrethri Radix)

अकरकेशियम *wall*–ले० हज्जल, किलपत्तर। इसका प्रयोग औंषध हेतु अथवा मवेशियों के चारे के लिये होता है।

प्रयोगांश—शाखा और पत्र मेमो० फा० इ० १ भाग।

अकरकांटा–हिं० वं० ढेरा अंकोल(Alangium Decapetalum, *lam*) इं० मे० मे०।

अकरखना–हिं० क्रि० स० [सं० आकर्षण] (१) खींचना, तानना। (२) चढना।

अकरपिक्टम–ले० अकरकेशियम (Acer Caesium (मेमो०। फा० इं० १ भाग। देखो –किलपत्तर।

अकरफ्स–अजमोद, अकरफ्स प्रसिद्ध है। (Apium involucratum)

अकरब–अ० (Scorpion) वृश्चिक, बिच्छू–हिं०। कज दुम–फा०।

अकरब–अ० जंगली सरसों का एक भेद है जिसका बीज श्वेत और लम्बा होता है।

अक़रब–हिं० संज्ञा पु० [अ०] जिस घोड़े के मुंह पर सफेद रोयें हों और उन सफेद रोओंके बीच २ में दूसरे रंग के भी रोंये हों उसे अकरब कहते हैं यह एबी समझा जाता है।

अकरब बह्‌री–अ० सिंगी (–घी) मछली। यह एक प्रकार की रक्त आभायुक्त खाकी रंग की वृश्चिक सदृश छोटी मछली है। (Saccho-Branchus)

अक्‌रबुलमाअ्–अ० कर्क, कर्कट, केकड़ा–हिं०। सर्तान–अ०। (Garb)

अ्‌करयान–इस्कूलूकन्दयून। (Asplenium-Falcatum, *Willd.*)

अकर बिल्लोसम (acer villosum, *wall*) –ले० केरंड़ेरा–सिम०। यह चारे के काम में आता है। प्रयोगांश–पत्र मे० मो०।

अ्‌करश–अ० सील भेद।

अक़रस–सी–यु० दवक एक फल है जो चने के दाने के बराबर होता है। किन्तु गोल नहीं होता।

अकरा–सं० स्त्री० आमला का वृक्ष–हिं० (Phyllanthus Emblica *linn*)–ले०। श० च०। महँगा, बहुमूल्य।

अकराकरभः–सं० पु० अकरकरा (Pyrethrum Radix) शार्ङ्ग० अकारादिचूर्ण ६ अ०। भा०।

अकरामातीकान–यु० जरूर, अर्थात् वे शुष्क औषधियां जो पीसकर व्रण प्रभृति पर छिड़की जाती हैं। अवचूर्णन–सं०।

अकराम्भकः–सं० पु० अकरकरा (Pyrethrum Radix)

अकरास (aKarasa)–हिं० संज्ञा पुं० [हिं०

अकड़] (१) अंगड़ाई, देह टूटना । संज्ञा पु० [सं० अकर] आलस्य, सुस्ती, कार्यशिथिलता ।

अकरास सेपोटा-ले० चिकु-मह० । चिकलीचिक्कु-कवथ-सम्ब० । फल-सपोट-हिं० बं० । शिमैं एलुप्पै ता० शिमइप्प-ते० । कुम्पोले-कना० । चकचो कोटी कजहार द० । सैपोडिल्ला प्लम Sapodilla plum.) बुलीट्री (Bully-tree) इं० । सैपोटिल्लीर (Sapotillier) फ्रां । शिमई हल्लु पाई म० ।

मधुक वर्ग

(*N. O. Sapolaceae*)

उत्पत्ति स्थान—पश्चिमी द्वीप तथा भारत वर्ष के अनेक भागों में इसको लगाते हैं ।

इतिहास व प्रयोग आदि—पश्चिमी किनारों तथा बंगाल में फल के लिये इसके वृक्ष लगाये जाते हैं और फल बाजारोंमें विक्रय हेतु लाये जाते हैं । भारतवर्ष के अन्य प्रान्तों में यह कम होता है पश्चिमी द्वीप एवं अमरीका में इसकी छाल बल्य तथा उत्तेजक प्रभाव के लिये प्रयोग में लाई जाती है । इसका बीज तीन रत्ती की मात्रा (अधिक परिमाण में यह विषैला प्रभाव उत्पन्न करता है) में मूत्रल है । भारतीयों में इसके फल की बहुत प्रसिद्धि है । उनका कथन है कि यदि इसके फल को पिघले हुवे मक्खन में रात्रिभर भिगो रक्खा जाय और प्रातः काल सेवन किया जाय तो यह पित्त एवं ज्वर सम्बन्धी आक्रमणों से सुरक्षित रखता है । (डाइमाक)

वानस्पतिक वर्णन—इसकी त्वचा रक्तवर्ण की होती है । ऊपरी भाग धूसर वर्ण का होता है ।

स्वाद—तिक्त और अत्यन्त कषैला ।

फल—बाहर से खरदरा और अंडाकार भीतर से पीताभायुक्त श्वेत, नर्म और गूदादार-और पकने पर इसका स्वाद सेव के समान होता है ।

बीज—काले रंग के चमकीले अंडाकार और लम्बे होते हैं ।

रसायनिक संगठन—(१) दो रेज़िन (Resins) जिनमें से एक ईथर में घुल जाता है, (२) कषायीन (Tannin) ११·८ प्रतिशत, और (३) एक क्षारीय सत्व सैपोटीन(Sapotine) जो ईथर, मद्यसार और सम्मोहिनी (Chloroform) में घुल जाता है, तथा एमोनिया द्वारा अपने लवणों से भिन्न होकर तलस्थायी हो जाता है । इं० मे० प्रां०, फा० इ० २ भा० ।

अकरा सुल्मलिक—अ० एक हिन्दी बूटी का नाम है कोई-कोई मैनफल को कहते हैं ।

अकरी—हिं० (१) Dunal (seedsof) अँकरी (२) एक असगंध की जाति का पौधा वा झाड़ी जो पंजाब, सिन्ध और अफगानिस्तान आदि देशों में होती है । पुनीर के बीज—हिं० । कञ्ची—पं० । आलिश-यु० । Witharia (Puneeria) Coagulans इं० मे० मे० । फा० इं० १ भा० । सं० फा० इं० ।

अकरीतस-मातस—यु० गुलेऊल्लीकुल कुद्स ।

अकरुज्जैत-अ० तेल या जैतून तैल का तलछट । सेडिमेण्ट (Sediment)-इं० ।

अकरुट-बं० अखरोट Walnut (Juglans regia, *Linn*)

अकरुल्बहर—अ० मोंथा के सदृश एक जड़ है जिसको लैफुलबहर भी कहते हैं ।

अकरूस—यु० अकसूस, मवेज़ाज अस्ली के नाम से प्रसिद्ध है ।

अकरोट-द० } अखरोट Juglans regia
अकरोट्ट-ता० } *Linn* (walnut)

अकरोफस—यु० हौज रूमी ।

अकरोः—संज्ञा पु० अखरोट (Juglans regia *Linn*)

अकरोहक—फा० अञ्जरुत (Astragalus Salcocolla, *Dymock*) फा० इं० ।

अकरौट-हिं० } अखरोट, अक्षोट Walnut
अकरौटु-ते० } (Juglans regia,
अकरौड-मह० } *Linn*)
अकरौडु-कना० }

अकर्करः- } सं० पु० अकरकरा (Pyre-
अकल्करः- } thrum Radix)

गुणधर्म-उष्णवीर्य, बलकारक और कटु तथा प्रतिश्याय शोथ और वात नाशक है । वै० नि०

अकर्ण–सं० त्रि० (१) Devoid of ears, deaf बहिरा, बूचा, बधिर हिं०। हे० च०। (२) कान रहित (Destitute of karna)। (३) साँप, सर्प (Snake, Aserpent)।

अकर्त्तनः–सं० त्रि० (Dwarfish) वामन। वै० श० सिं०। बाँओन-बं०।

अकर्षण–हिं० संज्ञा पु० दे० आकर्षण।

अकलकरः–सं० पु० उकरा, पोकरमूल (Spilanthus Oleraceæ)। इं० मे० मे०। फा० इं०।

अकलकरा } –फा० अकरकरा (Pyrethrum Radix) सं० फा०
अक़लक़रा } इं०।

अकल–हिं० वि० [सं०] (१) अवयव रहित। जिसके अवयव न हों। (२) जिसके खंड न हों। अखंड। सर्वांङ्गपूर्ण। (Not in parts, without parts) (३) [सं० अ=नहीं हिं० कल=चैन] विकल। व्याकुल। बेचैन।

अकलवर–हिं० संज्ञा पुं० दे० अकलबीर।

अकलबीर–हिं० संज्ञा पुं० [सं०] करवीर भांग की तरह का एक पौधा जो हिमालय पर काश्मीर से लेकर नैपाल तक होता है। इसकी जड़ रेशम पर पीला रंग चढ़ाने के काम में आती है। (Datisca cannabina, *Linn*) देखो—अकलबार।

अकलबर्की–द० सर्वजया, कामाची–सं०। सबजया–हिं०। देवकली–मह०। कृष्णताम्र–ते०। कण्डा मण्ड–ता०, (Canna Indica, C. orientalis) इं० मे० मे०।

अकलबार–हिं० (१) सबजया–बं०। सर्बजया, कामाची–सं०। तेहर्ज–काश०। (Common Indian Shot) इं० हैं० गा०। इं० मे०मे० फा० इं० ३ भा०।

अकलबार– } –हिं० वैर–बङ्ग, भङ्गजल (फा०इं०)
अकलबेर– } –बङ्ग बंग (इं० मे० मे०)–पं०। बगतज़ेल–तेहर्ज–काश०। डेटिस्का केन्नाबीना (Datisca Cannabina, *Linn*)–ले०।

अकलबार जाति
(*N. O. Datiscea*)

उत्पत्ति-स्थान—हिमालय (कश्मीर से नैपाल पर्यन्त) और सिन्ध।

वानस्पतिक विवरण–प्रकाण्ड–२-६ फी०, कठोर, शाखी, निम्नपत्र–१ फु०, पक्षाकार।

लघुपत्र (पत्रक)-७-११ संख्या में, ६ इं० लम्बा १॥ इं० चौड़ा, पत्रमूल (डंठल)–युक्त, उर्ध्व (पत्र) अत्यन्त सूक्ष्म तथा कम कटे हुए, पुष्पपत्र (पंखड़ी) सामान्य (अमिश्रित) ३ इं० लम्बा तथा १। इं० चौड़ा, पुष्पडण्डी में प्रायः पतली वंधनियां होती है।

पराग-कोष–लम्बा अधिक बड़ा, तन्तु बहुत सूक्ष्म।

नारितन्तु–चौथाई इं०, डोडा (छीमी) चौथाई इं० लम्बा तथा इससे कम चौड़ा, एक कोणीय सिरे पर खुला हुआ, बीज बहुसंख्यक धारीदार होते है तथा आधार पर एक जालीनुमा आच्छादन लगा रहता है। फलो० ब्रि० इं०।

प्रयोगांश—क्षुप, मूल, और त्वचा।

रसायनिक संगठन (या संयोगी तत्व)

पत्र तथा मूल में एक प्रकार का ग्लूकोसाइड अकलबारीन (Datiscin) क २१ उ २२ ऊ १२, एक राल (Resin) तथा एक भांति, का कटु सत्व पाया जाता है। अकलबारीन (Datiscin) वर्णहीन रेशमवत् सूची अथवा छिलके रूप में पाया जाता हैं। यह शीतल जल में कम तथा उष्ण जल एवं ईथर में अंशतः विलेय होता है। स्वे (Neutral) और स्वाद में कटु होते हैं। ये १८०, शतांश के ताप पर पिघल जाते हैं।

औषध निर्माण—पौधे का शीतकषाय (१० भाग में १ भाग) मात्रा–आधे से १ आउंस (१। तो० से २॥ तो०), चूर्ण मात्रा ५ से १५ ग्रेन (२॥ रत्ती से ७॥ रत्ती)।

प्रभाव व उपयोग—अकलबार कटु तथा सारक है और कभी कभी ज्वर, गण्डमाला तथा आमाशयिक रोगों में उपयोग किया जाता है।

खगान (Khagan) में इसकी जड़ को कुचल कर शामक रूप से शिर में लगाते हैं। मदन (Madden) के कथनानुसार कर्नूल (Kurnool) में बज्रबङ्ग नाम से उक्त औषध को व्यवहार में लाते हैं (स्टयुवर्ट)

यह पौधा १ से १५ ग्रेन (२॥ से ७। रत्ती) की मात्रा से विषम ज्वरों में उपयोग किया जा सकता है। (डाइमाक)

आमवात (गठिया) में औषध रूप से इसका अवसादक प्रभाव होता है। क्वाशिया (Quassia) के समान इसकी छाल में एक तिक्त सत्व होता है। (वैट)

पौधे का शीतकषाय कंठमाला, छर्दि सहित विषमज्वर तथा कंठ व वायु प्रणालियों की श्लैष्मिक कलाओं के प्रदाह में व्यवहार किया जाता है। इं० मे० मे०।

वायु प्रणालीस्थ प्रदाह में श्लेष्मनिस्सारक रूप में और दंत रोग में इसका स्थानिक प्रयोग किया जाता है। (चन्दन प्रदर्शिनी १८६२)

अकलाकरी- } **अक्लाकरी-** } -कना० अकरकरा-हिं०। (Pyrethrum Radix) फा० इं०। सं० फा० इं०।

अकलंक-हिं० वि० [सं०] [संज्ञा अकलंकता वि० अकलंकित] दोष रहित, निर्दोष, बे दाग।

अकलंकता-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] निर्दोषता, सफाई, कलंकहीनता।

अकलंकित-हिं० वि० [सं०] निष्कलंक, निर्दोष, बे दाग, साफ, शुद्ध।

अकल्क-हिं० वि० (Free fromsediment, pure) मलरहित, स्वच्छ।

अकल्का-हिं० स्त्री० (Moon light) ज्योत्स्ना, चाँदनी।

अकल्पन-हिं० सचाहट, प्रकृत, सत्य, यथार्थ, वास्तविक, रीअल् (Real)-इं०।

अकल्मष-हिं० वि० [सं०] निर्विकार निर्दोष, पाप रहित, बे ऐब।

अकल्यः-सं० त्रि० रुग्ण, रोगी। डिज़ीज़्ड (Diseased), इल (Ill)-इं०।

अकल्याण-हिं० वि० [सं०] अमंगल, अशुभ, अहित।

अकल्लः-सं० पु० अकरकरा (Pyrethrum Radix) अ० टी० वा०। वै० निघ० २ भा० वा० व्या०।

अकल्लकः-सं० पु० अकरकरा (Pyrethrum Radix)

अकवारः-हिं० पु० कुक्षि कोख, गोद, वक्षस (Bosom)-इं०।

अकश-अ० बालों का उलझना, गुथजाना, घूंघरवाले केश। कर्ल्ड हेयर (Curled hair)-इं०।

अकसा-हिं० पु० अकरा।

अकसीर-हिं० संज्ञा स्त्री० [अ०] देखो—अक्सीर।

अक़ा-अ० ज्वर के कारण मुख का स्वाद बदल जाना, रोग से अन्न जल का बुरा लगना।

अकारकरभः-सं० पु० अकरकरा (Pyrethrum Radix, *Linn*)

अकाकरा-हिं० करैला, काकरा (Momordica Charantia, *Linn*)

अक़ाक़ा-मि० एक मिश्र देशीय वृक्ष के फल हैं।

अक़ाकालिस-यु० चाकसू (शू) Cassia absus फा० इं० १ भा०।

अक़ाक़िया-अ० यह यूनानी शब्द अकाकिया (Akakia) से अरबी बनाया गया है। युनानी भाषा में अकाकिया कीकर को कहते हैं, किन्तु प्रमाणिक एवं विश्वस्त अरबी तथा फ़ारसी तिब्बी ग्रंथों के मतानुसार यह एक सत्व है जो क़र्ज़ (यह मिश्र के एक कण्टकयुक्त वृक्ष का फल है, जो कीकर का एक भेद है, कीकर की फलियों से जो सत्व बनाया जाता है उससे भी ये ही प्रभाव प्रगट होते हैं।) के रस से तैयार किया जाता है। निर्माण-विधि—इसके फल और पत्तों को कूट कर रस निचोड़ लें। पुनः इसको छानकर मन्दाग्नि पर यहाँ तक पकाए कि यह गाढ़ा होजाए।

विवरण—यह भारी दृढ़ तथा प्रियगंधयुक्त होता है। इसके छोटे टुकड़े प्रकाश के सामने देखने से हरित बोतल के रंग के मालूम होते हैं, किन्तु

कोई २ कुछ ललाई लिये हुये होते हैं ! इसके बड़े बड़े टुकड़े काले वर्ण के दीख पड़ते हैं । स्वाद—मधुर, कसेला और लुआबदार होता है । शीतल जल में डालने से यह लुआब रूप में परिणित हो जाता है और इसमें पीताभायुक्त धूसरवर्ण अथवा भूरापन लिये हुये हरे रंग के पदार्थ तैरते हुए प्रतीत होते हैं । छानने के पश्चात् लुआब का रंग बबूल गोंद के समान होता है ।

प्रकृति—३ कक्षामें (अशुद्ध) ठण्डी और रूक्षहै।

हानिकर्त्ता—रोध उत्पादक है ।

दर्पनाशक—रीगन बादाम । प्रतिनिधि—चन्दन और रसौत । मात्रा—३॥ मा० ।

अकाकिया गुणधर्म—यूनानीग्रन्थकारों के मत से अकाकिया बालों को काला करता है । क्योंकि यह बालों की तरी को दूर करता है । सर्दी के फटे हुए हस्तपाद (विपादिका) के लिये गुणदायक है, क्योंकि अपनी संकोचनीय शक्ति के कारण वह अवयवों से विच्छिन्न भागों को संकुचित एवं एकत्रित करता है, अङयव को बलवान बनाता और इसे फटने से रोकता हैं । दाखस (अंगुलवेडा) के लिये लाभदायक है, क्योंकि इसमें ठण्डक पैदा करता है तथा मादेको लोटाता है । इसी कारण अन्य शोथो को भी लाभप्रद हैं । मुंह के क्षतों को दूर करता है क्योंकि उन रतूबतों को शुष्क कर देता हैं जो क्षतको पूरित नहीं होने देती । अपनी शुष्कता के कारण संधियों की शिथिलता को लाभप्रद है दृष्टि को बल देता और उसे सूक्ष्म एवं तीव्र बनाता है क्योंकि वहनेत्र की सान्द्र रतूबतों को जो रूहकोगलीज करने वाली है, अभिशोषित कर लेता है । आंव आने में लाभ व शान्ति प्रदान करता है, क्योंकि यह आंत की ओर मलो के बहाव को रोकता है । और नाखूना (नेत्रस्थ रक्त विन्दु) की औषधों में डाला जाता है, क्योंकि यह दृष्टि को शक्ति प्रदान करता है, और इसकी चिकित्सा में तो उष्ण तीक्ष्ण एवं भक्षक (अक्काल) औषधियां उपयोग में आती है उनकी पीड़ा से नेत्र को सुरक्षित रखता है । पान, अनुलेपन तथा बस्ति (हुकना) रूप से प्रयुक्त करने से यह कब्ज पैदा करता है प्रवाहिका रक्तातीसार और रक्त स्राव को गुण करता है । निकली हुई कांच (गुदभ्रंश) को असली दशा पर लौटाता एवं उसकी शिथिलता को दूर करता है. क्योंकि इसमें संकोचक शक्ति तथा रूक्षता विद्यमान होती है । उक्त अभिप्राय हेतु इसको खिलाते है अथवा इसे लेप रूप से उपयोग में लाते है । (नफी०)

अकाकिया या अकाकिया के प्रभाव तथा प्रयोग—कफ निस्सारक, वक्षःस्थलस्थ वेदना शामक, संकोचक, रक्तस्थापक, मृदुताजनक और बल कारक । अन्न पृणालीस्थ कलाओं तथा जननेन्द्रिय वा मूत्र सम्बन्धी अवयवोंपर इसका सर्वोत्तम प्रभाव होता है । इसी कारण अतिसार, प्रवाहिका सूजाक (पूयमेह) नासूर और पुरातन वस्तिप्रदाह प्रभृति विकारों में यह अत्यन्त लाभदायक सिद्ध होता है । यद्यपि अफीम तथा इसके कुछ यौगिकों की अपेक्षा यह कम प्रभावजनक होता है, तथापि उस अवस्था में, जब कि यह अकेला उपयोग में लाया जाय, समस्त वानस्पतिक तथा खनिज संकोचक औषधों से अधिकतर प्रभावकारक प्रमाणित होता है । जलोदर के साथ जब अतिसार एवं प्रवाहिका हो तो अफीम और इसके यौगिक प्रायः हानिकर होते हैं, क्योंकि जिस मात्रा में ये अतीसार प्रभृति को रोकते है उसी अनुपात में ये जलोदर को वृद्धि करते हैं । इसी कारण "अकाकिवा" आंत्र रोगों में अफीम तथा इसके अन्य यौगिकों की अपेक्षा श्रेष्ठतर तथा लाभदायी औषध है ।

अक़ाक़िया मग़सूल (धोया हुँआ)—इसकी विधि इस प्रकार है—अकाकिया को पानी में घरल करके ऊपर का पानी निथार कर टपका लें, और इसी प्रकार तब तक करते रहें जब तक कि पानी स्वच्छ न दिखाई देने लगे तथा इसका रंग बदलना बन्द न हो जाय । पश्चात् उसकी टिकियां बना लें । उपयोग में लाने से पूर्व इसके धो लेने से यह और उत्तम हो जाता है । स०

फा० इ० । इं० मे० प्लां० । फा० इं० २ भा० । त० न० ।
देखो–बर्ब्बुरः ।

अकाकिया–फि०, इं०, अ०, हिं० बाजा० अकाकिया कर्ज का गाढ़ा किया हुआ स्वरस (उ़सारह्) कीकर का रस, रङ्ग ।

अक़ाकीर–अ० (व० व०) अक़्क़ार (ए० ब०) जड़ी बूटियां ओषधि । हर्ब (Herb)–इं०

अकाचा–स० स्त्री० पपोटन पुनीर (एक भारतीय-बूटी है) काकनज Withania(Puneeria) coagulans, *Dunal*–ले० ।

अक़ाम–अ० अकीम । वन्ध्या स्त्री वा पुरुष । स्टेराइल (Sterile)–इं० ।

अकाम–सं० त्रि० (Free from desire) । हिं० वि० बिना कामना का । कामना रहित । इच्छाविहीन । अथ० सू० २, ७, कां० ६ ।

अकामा–हिं० वि० स्त्री० [सं०] (स्त्री०) जिसमें काम का प्रादुर्भाव न हुआ हो । यौवनावस्था के पूर्व की ।
संज्ञा स्त्री० काम चेष्टा रहित स्त्री ।

अकामी–हिं० वि० [सं० अकामिन्] [स्त्री० अकामिनी] जो कामी न हो । जितेन्द्रिय ।

अकाय–हिं० वि० [सं०] (१) (Without body incorporeal) बिना शरीर वाला, देह रहित, कायाशून्य । (२) अशरीरी । शरीर न धारण करने वाला, जन्म न लेने वाला । (३) रूप रहित, निराकार ।

अकार–हिं० संज्ञा पु० अक्षर अ । दे० आकार ।

अक़ार–अ० शराब, मद्य । वाइन (Wine)–इं० ।

अक़ार अर्तनीसा–सुर० आजरबुआ, चबक, अश्नान, –फा० । Cyclamen Persicum, *Miller*

अक़ार आदम–अ० मैदा लकड़ी–हिं० । मगास मग़ासे-हिं०–अ० । किल्ज़–फा० । Tetrantha Roxburghii, *Nees* (Wood of–) मुशैप्पीयेट्टि, मैदा लक्टि, पिशिन पट्टइ–ता० । नरमामिडि मेदा–ते० । कुकुर चिता–बं० । स० फा० इं० ।

अकारक मिलाव–हिं० संज्ञा पु० [सं० अकारक मिलाव] एसा रसायनिक मिश्रण वा मि जिसमें मिली हुई वस्तुओं के पृथक् गुण और वे अलग की जा सकें ।

अकार कोहान–(१) अकरकरा (Pyret Radix)
(२) ऊदे सलीब, फ़ावानिया–फा०, ऊदे सालष- हिं० । Pœonia officin *Linn*, P. Corallina, *Linn* (M variety)

अकार काँटा–हिं० पु० ढेरा, अंकोल (Alangi Decapetalum, *Linn*)–ले० ।

अकारतलून–रू० फारस देश में होनेवाले इक वृक्ष का बीज है । इस वृक्ष का पुष्प अत्यन्त तथा नीलगूं एवं सुन्दर होता है । स्वाद–

अकारवा–करोया, जीरा भेद । (A kind cumin seed)

अकार सौसीनाई–सुर० ईरसा–हिं० । पुष्क पद्मपुष्कर–सं० । Orris root (Florentina)

अकारा-रः–हिं० अपामार्ग, क्षिरचिटा (Achy thes aspera, *Linn*) फा० इं० ।

अक़ाराअरुन–सिर० अस्राश, एक बारीक चू जो कभी कभी आंत्र द्वारा और कभी खुन्स जड़ से बनाया जाता है ।

अकारीकून–ज़ंगली जैतून का बीज (wild Olive–oil seed)

अकारुन–रू० बज–अ० । बच-हिं० । Acoruscalamus *linn*.

अकाल–हिं० संज्ञा पु० [सं०] (वि० अकलि (१) दुर्भिक्ष, दुष्काल, महँगी, कहत (Fa ne) । (२) । असमय अनुपयुक्त अनवसर, अनियमित समय ; वे ठीक सम कुसमय । ठीक समय से पहिले वा पीछे समय प्रिमेचर (Premature) । अन्टाइमूली (Untimely) (३) घाटा, कमी, न्यूनतां !

अकालह्–अ० अक्लान हिक्कह । खारिश–फा० । कण्डू, खाज, खुजली, खुजाहट, –हिं० प्रुराइटिस (Pruritis)-इं० ।

अकालकु(कू)ष्माण्डः–सं० पुं० (ApumpKin Producted out of season) असमयमें होने वाला कुष्माण्ड, ऋतु के अतिरिक्त होनेवाला कुम्हड़ा ।

अकालकुसुम–हिं० संज्ञा, पु० [सं० अकालकुसुमं] (१) वे समय फूलने वाला, वेसमय का फूल । विना समय या ऋतु में फूला हुआ फूल। (Aflower blossoming out ofseason) (२) वेसमय की चीज ।

नोट—यह दुर्भिक्ष या उपद्रव-सूचक समझा जाता है ।

अकालजम्–स०, त्रि० (Unseasonable Premature produced out of season) अकाल उत्पन्न अकाल जात, वे समय उत्पन्न हुआ यथा—

"अकालजन्तु विरसं न धान्यं गुणवतंस्मृतम् ।"

अर्थात् वे समय उत्पन्न हुआ धान्य स्वाद रहित और गुणहीन होता है । राज० ।

अकालजलदः–स० पु० वेसमय का बादल

अकालपुष्पम्–सं० क्ली० अकाल कुसुम, वे मौसम का फूल (A flower blossomingout of Season.)

अकाल भोजनम्–स० क्ली० असमय भोजन अर्थात् भोजन के समय से पहिले अथवा समय बिताकर भोजन करना ।

गुण—इससे शरीर असमर्थ हो जाता है और इस कारण शिर दर्द, विसूचिका, अलसक और विलम्बिका आदि रोग उत्पन्न होते हैं । और रोगों की वृद्धि होने पर मृत्यु भी हो जाती है जैसे—

अप्राप्तकालेभुञ्जानो ह्यसमर्थतनुनरः ।
तांस्तान्व्याधीन वाप्नोति मरणञ्चाधिगच्छति॥

भा० पू० १ भा० १५१ श्लो० ।

अकालमृत्यु–हिं० सज्ञा स्त्री० [सं०] असामयिक मृत्यु। ठीक समय से पहले की मृत्यु । अनायास मृत्यु । थोड़ी अवस्था का मरना अपक्व मृत्यु, कुसमय (असमय) में मृत्यु (सस्कृत में मृत्यु पुलिङ्ग है) । अन्टायमलीड्यँथ (Untimely death)

अकालमेघोदयः–सं० पु० १—(An unseasonablerise or gathering of clouds) अकालजलदोदय, असमय में बादल होना (mist or fog) कुहिरा अवश्याय ।

अकालवृष्टिः–सं० हिं० स्त्री० असमय की वर्षा (Untimely rain)

अकालवेला–हिं० संज्ञा पु० (Unseasonable or improper time) असमय ।

अकालशयनम्–सं० क्ली० असमय का सोना, वेसमय की निद्रा ।

गुण—अकाल शयन से कफ कुपित होता है और प्रतिश्याय, पीनस, क्षय, सूजन, शिरोरोग, तथा अग्निमांद्य प्रभृति रोग होते हैं । वा० सू० अ० ८ । हा० अत्रिः १ स्थान २३ अ० ।

अकालिक–हिं० वि० [स०] असामयिक । बिना समय का । वे मौके का ।

अक़ालीम–अ० (ब० व०), इक्लीम (ए० ब०) देश, भाग, स्थान–हिं० । कण्ट्री(Country) इं० ।

अकाव–हिं० संज्ञा पु० [स० अर्क] Calotropis gigantea R. Br. आक, मदार ।

अकाशदेवी–द० एक पौधा विशेष ।

अकाश (स) पवन–द० अकाशवेल, अमरवेल–हिं० कसूस फा० (Cuscuta Reflexa, Roxb.) इ० मे० मे० ।

अकाशबवर–री–हिं० अकाशवेल (Cuscuta Reflexa, *Roxb*)

अकासबल्ली–स० स्त्री० अकाशवेल (Cuscuta Reflexa, *Roxb*)

अकाश (–स) वे[illegible] हिं० सज्ञा पु० [स० आकाश वेलि] अकाशबँवरी अमरवेल, अकाशवेलि, अंबरवेलि, आकासबौर –हिं० । अकाशवल्ली, खवल्ला, अमरवल्ली–स० । अकाशवेल, अ[illegible]लता अल्गुसी, [illegible], अल्गुसीलता–व० । अफ्नीमून हिन्दी०यु० अ० । कसू से हिन्दी–फा०, । कक्स्युटा रिफ्लेक्सा (Cusuta

Reflexa, *Roxb*) केस्सिथा फिलिफोर्मिस (Cassytha Filiformis *Linn*)-ते० । डोडर (Doder)-इं० । कोतान, इन्द्रिरावल्ली, नान्दे ता० । इन्द्र जाल, पाचीतिगे, पञ्चतिगा-ते०, तेल० । अकाश वल्ली-मल० । वेल्लुबल्लि, नेलमुदबल्लि, शविगेवल्लि अमरबल्लि-कना०, कर्ना० । अमरवेल अन्तरवेल, सोनवेल, अलरोहल्ला-मह० । अमरवेल-गु० । कोतन-द० । अलगड्डे-सन्ता० । नंदमुदवली- का० । अन्तरवेल-को० । शियून तु० ।

लतावर्ग-

(*N. O. Convolvulaceae*)

उत्पत्ति स्थान-प्रायः समस्त भारतवर्ष ।

वानस्पतिक विवरण-अकाशवेल सर्वथा एक पराश्रयी लता है जो डोरे सी कीकर, बेर, अडुसे इत्यादि वृक्षों पर जाल की तरह फैली हुई होती है । इसका तना गहरे हरित वर्ण का होता है जिस पर लम्बाई के रुख पीली पीली धारियां पड़ी होती है । अकुर से पतली जड़ निकल कर भूमि में प्रविष्ट होजाती है और तना शीघ्र शीघ्र बढ़ने लगता है । इससे चोषक सूत्र (SucKers) निकल कर निकटस्थ वृक्ष की डालियों में निज आहार हेतु मार्ग बनाते है और उक्त वृक्ष से आहार सम्बन्धी आवश्यक तत्व; जैसे-जल तथा लवण जो वृक्ष में विद्यमान होता है, प्राप्त करते हैं । इस प्रकार की व्यवस्था होजाने पर जड़ सूख जाती है और पुनः लता का भूमि से कोई भी सम्बन्ध नहीं रह जाता । ऐसे भी इसके टुकड़े करके वृक्षों पर डाल देने से यह उस पर बढ़ने लगता है । यदि अंकुर को कोई उपयुक्त आधार न मिले तो भी वह सूख जाता है । सूक्ष्म परतों के अतिरिक्त इसमें पत्ते नहीं होते और नहीं इनसे उनको कोई लाभ होता है । तने को काट कर देखने पर बाहर मजबूत नालीदार रेशे और मध्य में मृदु गूदा दीख पड़ता है । पुष्प श्वेत रंग के आते है, पुष्पबाह्यावरण (Sepals) को हटाने पर भीतर से मटर के आकार के गोलाकार बीज निकलते हैं । वर्षाकाल में इसकी बेल उगती है तथा एक ही वृक्ष पर प्रतिवर्ष पुनः नवीन होती है, इसी कारण इसको "अमरवेल" (Immortal) कहते हैं । यह वृक्षों के ऊपर होती है और इसका भूमि से कोई सम्बन्ध नहीं रहता इस कारण इसको आकाशवेल आदि नाम से पुकारते हैं । इसका लेटिन नाम कस्क्युटा (Cuscuta) कसूस से जो अफ्तीमून (अकाश वेल बिज्ञायती) का अर्बी पर्याय है, व्युत्पन्न है । देखो-अफ्तीमून । उपयुक्त दोनोंलेखित पर्यायों में से प्रथम अर्थात् कस्क्युटा कॉन्वॉल्व्युलेसीई वर्ग का तथा द्वितीय अर्थात् कैस्सिथालेसीई (Lauraceae) वर्ग का पौधा है । छोटे छोटे भेदों के कारण इसकी बहुत सी जातियां होगई हैं । अस्तु. इनमें से किसी के डठल पीले और किसी के लाल होते है, किसी के फल बड़े और किसी के छोटे होते हैं । इसी प्रकार और अनेक भेद प्रभेद की बातें है । यूनानी हकीम जिस औषध को काम में लाते हैं वह अफ्तीमून नाम से फारस प्रभृति देशों से भारत वर्ष में आती है ।

प्रयोगांश- सम्पूर्ण पौधा, बीज (तुख्मेकसूस) और तना ।

रसायनिक संगठन-क्वरसेटीन (Quercetin) राल और एक प्रकार का क्षारीय सत्व कसूसीन या अनरीन (Cuscutine) जो कुछ २ तिक्त एवं ईथर और क्लोरोफार्म में विलेय होता है ।

गुणधर्म तथा उपयोग-

आकाशवेल-ग्राही तिक्त, पिच्छिल, नेत्ररोग नाशक, अग्निवर्द्धक, हृद्य और पित्त तथा कफ को नाश करने वाली है । भा० पू० १ भा० । मद० व० १ ।

मधुर, मृदु पित्त नाशक, शुक्रवर्द्धक और रसायन एवं वयस्य है । रा० नि० व० ३ ।

यूनानी हकीम आकाशवेल को उष्ण व रूक्ष मानते है । हानिकर्त्ता-मूर्च्छाजनक, तृष्णा जनक और वात ग्रस्ततानाशक है ।

प्रभाव-आकासवेल के जोगुण वैद्यक ग्रन्थों में वर्णित है अफ्तीमून के प्रायः वेही गुण यूनानी ग्रन्थों में पाये जाते है । यही क्यों, प्रसिद्ध

युनानी निघण्टु मख़ज़नुल् अद्बियह् के लेखक मीर मुहम्मदहुसेन ने तो इसके गुण अफ्तीमून के सदृश ही वर्णन किए है। अतः सर्व सम्मत से इसके मुख्य मुख्य गुणधर्म निम्न प्रकार है परिवर्तक, पित्त, कफ, तथा आमनाशक अशोधन मस्तिष्कविकार, यथा-उन्माद मूर्च्छा आदि को लाभदायक, रक्तशोधक, हृदय को हितकारी, शुक्रवर्द्धक, नेत्र रोगनाशक, अग्निकारक, पिच्छिल, ग्राही, बलकारक, रसायन और दिव्यौषध है। इसका बाह्य प्रयोग (पुल्टिस रूप में) स्थानीय वेदना शामक तथा कण्डुघ्न है।

स्वाद-मधुर, कड़वा, कषैला और चरपरा

औषधनिर्माण-शीतकषाय क्वाथ, चूर्ण और पुलटिस। मात्रा-४ रत्ती से १॥ तोला तक।

दर्पनाशक-सेब, कतीरा, बादामरोगन।

प्रतिनिधि-काली निशोथ या बिसफायज।

अकाशवेल द्वारा भस्म प्रस्तुत करना-हरी अकाशवेल का पानी १० तो० निकाल कर चाँदी के पत्र १ तो० डालकर खरल में घोटें। शुष्क होने पर टिकिया बना कर छोटे शराबों में बंद करके पांच सेर उपलों की आंच दें। शीतल होने पर श्यामाभायुक्त भस्म निकाल लें। मात्रा-एक चावल से १ रत्ती तक, उपयुक्त अनुपान के साथ सेवन करें।

अकास-हिं० पुं० संज्ञा दे० आकाश।

अकासकृत-हिं० संज्ञा पु० [सं० आकाशकृत] बिजली। अनेक०।

अकासनीम-हिं० संज्ञा पु० [सं० आकाशनिम्ब] एक पेड़ जिसकी पत्तियां बहुत सुन्दर होती है।

अकासबेल विलायती-हिं० अकाशवेल भेद। अफ्तीमून-अ०। (Cuscuta Reflexa, *Roxb*)

अकासमुखी-सं० सन्ध्याराग, कृष्णकली, गुल-अब्बास-फा० (Four o, clock flower) (Mirabilisjalappa, *linn*) इं० मे० मे०।

अकाहुली-हिं० स्त्री० अंधाहुली, अंधपुष्पी (Trichodesma Indicum)-ले०।

अक्रित-अ० उस पनीर को कहते है जो दही के पानी टपकाने के पश्चात् शेष रहता है। उसमें लवण मिलाकर शुष्क कर लेते है।

अक्रितन-यु० या, यम० मुद्ग, मूंग-हिं० (Phaseolus Mungo, *linn*)

अकित मकित-अ०, सिर० करञ्जुवा, करञ्जो, कटकरञ्ज-हिं०। कुबेराक्षिफलम्-सं०। खायहै इब्लीस फा०। Coesalpinia (guilandina) (bondu cella, *linn*) (Nut of Bonduc-nut) स० फा० इं०। फा० इं०।

अक्रिब-अ० (१) पार्ष्णि, एड़ी-हिं०। पाश्नह-फा०। (Calcis, Heel) (२) संधिबंध, स्नायु रज्जु-हिं०। रिबात्-अ०। (Ligament)

अकिलबहार-हिं० संज्ञा पु० [अ० अकीकुल बह] बैजयन्ती का पौधा व दाना।

अकिल्बिष-हिं० वि० [सं०] (१) पवित्र (२) निर्मल, शुद्ध।-संज्ञा पु० शुद्धप्राणी, पापशून्य मनुष्य।

अक़ीक़-हिं० संज्ञा पु० } अगेट (Agate)
अक़ीक-अ० } -इं० यह एक प्रकार का खनिज पत्थर है जो कई प्रकार का होता है इनमें यमनी, पीताभायुक्त, रक्त वर्णीय, इसके पश्चात् पीत पुनः श्वेत वर्णीय, सर्वोत्तम होता है। किसी २ हकीम के विचार में यकृत के रंग का अर्थात् लोहित वर्णवाला सर्वोत्तम होता है। यह बम्बई बांदा और खंभात से आता है। इसकी कई किस्में यमन और बगदाद से भी आती हैं

गुणधर्म-अक़ीक़ हृद्य है और मूर्छा, शोक रक्तस्राव' प्लीहा और यकृत के सुर्दो तथा अश्मरी को नष्ट करने वाला है। इसे नेत्र में लगाने से ज्योति की वृद्धि होती है। इसकी भस्म-उपयुक्त रोगों के अतिरिक्त उत्तमाङ्गों को बलप्रद, कामोद्दीपक और शुक्र को गाढ़ा करने वाली है। ज्वरों में इसका उपयोग लाभदायी सिद्ध होता है। पुरातन सूजाक तथा व्रणों को पूरित करता है।

अक़ीक़ भस्म बनाने की विधि—

(१) अकीक १ तो०, कमलगट्टा ऽ॥ कमलगट्टा को कूटकर एक टाट पर आधा बिछा दें और अकीक की समूची डली उसपर रखकर शेष आधा ऊपर बिछा दें। टाट का गुलूला सा बनाकर १० सेर उपलों की आंच दें। एक आंच में भस्म होगी अन्यथा ... तीन आंच और दें उचित तो यह है कि अकीक की गुलाबार्क में १०-१५ बार बुझाव दे लें जिससे वह टुकड़े २ हो जांय। इसे गुलाबार्क या वेदमुश्क में खरल करके टिकियां बन कर आग दें। अत्युत्तम भस्म प्रस्तुत होगी। मात्रा—१ से २ रत्ती तक।

गुण—हृद्रोग विशेष कर मूर्छा तथा पुरातन शुष्क कास में अत्यन्त लाभ पहुँचाता है। रुधिर को बन्द करता है। उचित अनुपान के साथ सेवन करें।

(२) रीठा की छाल १छटांक १ तो० अकीक श्याम एक बर्तन में उक्त छाल अकीक के टुकड़ों के नीचे ऊपर देकर बन्द कर कपड़ मिट्टी करके एक मन उपलों की आंच दें और यदि फूला न हो तो एक आंच और दें।

गुण—आमाशय को बलप्रद कामोद्दीपक हृद्य व मस्तिष्क को बलप्रद (हृद्य व मेध्य) क्षुधा वर्धक और पूयमेह को लाभ कारी है।

(३) शुद्ध उत्तम रंगरहित अकीक को अर्क वेदमुश्क और केवड़ा में इतना बुझाएँ कि टुकड़े २ हो जांय फिर उसी अर्क केवड़ा और वेदमुश्क से दो पहर खरल करके टिकियां बना लें और गुलाब के कल्क में लपेट कर शराब सम्पुट कर २०-२५ सेर उपलों की आँच दें। एक वा दो आंचों में फूल हो जायगा। मात्रा—१ रत्ती तक।

गुण—उत्तमांगों को बल प्रदान करने में विशेष कर मूर्च्छा के लिये उत्तम है।

नोट—चूंकि यह एक अत्यन्त कठोर पत्थर है अस्तु इसके भस्मीकरण में ऐसा प्रयत्न करें कि जिसमें यह बिलकुल आटे की तरह बारीक पिस जाय और इसमें करकराहट अवशेष न रहे। उक्त अभिप्राय हेतु इसको बूटियों के जल में देर तक खरल कर तीक्ष्णाग्नि देते रहें।

अक़ीक़ह—अ० नवजात शिशु के शिर के बाल।

अक़ीक़ल्बहार—अ० जपापुष्प, जयन्ती (Sesbani ac leata, *Pers*)

अक़ीख़—अ० रोदे, आंत्र, तांत (Intestines

अक़ीदुल् अनब—अ० मद्य भेद—हिं० । मैफख्तज— (A Kind of wine)

अकीदून—रू० सुम, खुर । हूफ (Cloven, hoof) इं० ।

अक़ीम्—अ० वन्ध्या बांझ चाहे पुरुष हो अथवा स्त्री स्टेराइल (Sterile)—इं० ।

नोट—बांझ पुरुष वह है जिसके वीर्य गर्भोत्पादक शक्ति न हो और वन्ध्या स्त्री वह जिसमें गर्भ न ठहरे। अकीम शब्द यद्यपि पुं वा स्त्रीलिङ्ग दोनों के लिये प्रयोग में लाया जा है तथापि कभी स्त्री लिंग के लिये अकीमह श को उपयोग में लाते हैं।

अकीमह—अ० बन्ध्या स्त्री स्टेरायलवूमन (Steri woman) —इं० ।

अकीमूज़—अ०

अकीमूस

यह शब्द एकिमोसिस (Echymosis) व्युत्पन्न है जिससे वे चिन्ह अभिप्रेत हैं जो प्रभृति के कारण अधः त्वचा में रक्त के जमने रक्त अथवा नीलवर्ण के पड़ जाते हैं जैसे—नेत्र लाल बिन्दु।

अकीर—अ०—तिक्ततम, अत्यन्त कटु (कडुआ दी मोस्ट बिटर The most bitter)—

अकीरैन्थसहोली लीह्व्ड—इं० हरकुच, कांटा—वं

अ (ए) कीरैन्थीस आइलिसिफोलिया (chyranthes Ilicifolia) ले० हर कार्टा, हरकत।

अ (ए) कीरैन्थीस आल्टर्निफोलिया (achy nthes alternifolia)—ले० अजाश गगाटी, (तिय:), उतरन—हिं० । इं० हैं, गा

अ (ए) कीरैन्थीस आल्टनिर्नेट लीह्व्ड— गगाटी, उतरन —हि० इं० हैं० गा० ।

अ (ए) कीरैन्थीस आंव्टयुजीफोलिया ach ranthes obtusifolia *Lamb*

(The prickly chaffflower) अपामार्ग—हिं० । इं० मे० प्लां० ।

अ (ए) कीरैन्थीस इण्डिका achyran thes-Indica; *Roxb*—ले० अपामार्ग हिं० । इं० मे० प्लां० ।

अ (ए) कीरैन्थीसएस्परा achyranthes-aspera. *Linn*—ले० अपामार्ग, लटजीरा—हिं० । सं० फा० इं० । इं० मे० मे० । इ० मे० प्लां० । मेमा० । इं० हैं० गा० । फा० इं० २ भा० ।

अ(ए)कीरैन्थीस क्लाइमिंग-(achyranthes climbing)—इं० । (A Scandens *Raxb*) इं० हैं० गा० ।

अ (ए) कीरैन्थीस ट्रिएण्ड्रा (achyranthes, triandra *Roxb*-ले० सांची शालञ्झड़ । इं० हैं० गा० ।

अ (ए) कीरैन्थीस थ्री स्टेमेंड achyranthes, three stamened, *Roxb*—ईं० सांची शालञ्झड़ । इं० हैं० गा० ।

अ (ए) कीरैन्थीस रफ—इं० अपामार्ग, अघरा (—री) हलीम, महूत । इं० हैं० गा० ।

अ (ए) कीरैन्थीस लैनेटा achyranthes lanata. *Roxb*—ले० चाया । इं० हैं० गा० ।

अ (ए) कीरैन्थीस लेपेरिया—ले० रक्तापामार्ग, लाल ओंगा ।

अ (ए) कीरैन्थीसवली—इं० चाया हैं० गा० ।

अ (ए) कीरैन्थीस स्पिकेटा achyranthes Spicata, *Burm*—ले० अपामार्ग The Prickly chaff flower—इं० । इं० मे० प्लां० ।

अकीरैन्थस होली लीह्वड—इं० हरकुच कांटा—बं० । अकीला—गौंरह ।

अकीलिया कस्पिड़ेटा achillea cuspidata *D. C.*—ले० वरञ्जासिफ—कुछ हिं० बाजा । रोज मरी—बम्ब० इ० मे० प्लां० ।

अकीलिया टर्मिका—ले० कुन्दस—यु० । जुन्दबेदुस्तर (Castoreum)

अकीलिया मास्केटा—ले० यह अल्प पार्वतीय पौधा है जिसमें कस्तूरीवत् गन्ध होती है । इसमें उग्र स्वेदजनक तथा आरोग्यकारक प्रभाव होता है । फा० इं० २ भा० ।

अकीलिया मिलीफालिअम्—ले० वरिञ्जासिफ, बूये-मादरान—फा० । मोमर्द्द-चोपन्दिया—काश० । बरबर—मि० । स्प्रेंगुवर्ट महोदय के कथनानुसार यह बाज़ार में बिकने वाला एक पौधा है । इसके पुष्प और पत्र औषध कार्य में आते हैं । इं० मे० प्लां० । फा० इ० २ भा० । मेमो० ।

अकीलिया सैन्टोलीना—ले० । वारिञ्जासिफ—फा० । फा० इं० २ भा० ।

अकीलीइक एसिड—इं० वरिञ्जासिफ या विष का तेजाब (Aconitic acid) फा० इं० २ भा० ।

अकीलीईन—इं० यह अकीलिया मास्केटा द्वारा निर्मित एक क्षारीय सत्व है । फा० इं० २ भा० ।

अकीलीन—इं० रक्ताभायुक्त धूसर वर्ण का सत्व जो बरञ्जासिफ द्वारा प्राप्त होता है । फा० इं० २ भा० ।

अक़ीलीस—यु० फरञ्जमिश्क, रामतुलसी, अम्बल, (Ocimum gratissimum *Linn*) ले० ।

अक़ीसून—यु० एक अप्रसिद्ध कण्टकमय बूटी है जो वदावर्द के सदृश होती है, और इन्दलुस (Spain) में उत्पन्न होती है ।

अकुजीमडु—ते० थूहर, सेंहुड़, (Euphorbia Nerifoiia, *Linn.*) इ० मे० मे० ।

अकुप्—फा० मुख के भीतर, मुख की नाली (œsophagus)

अकुप्यम्—स० क्लो० स्वर्ण, सोना gold (Aurum) हला० ।

अक़ु (—क़ू) माली—अ० माउल् अस्ल । शहदजल, शहद का पानी या अन्य पदार्थ जिसमें शहद को हल करके जोश नहीं दिया जाता । हनीवाटर (Honey water)—इं० ।

अकुरु—सिंगा० गुड़०—हिं० । कन्द—फा० । गुड़—द० । जैगरी (Jeggery of sugar cane) इं० । स० फा० इ० ।

अकुरु अरक–सिंगा० गुड़ की शराब–हिं० । गुड़ की दारू, गुड़ की शराब–द० । (Liquor of Jaggery) स० फा० इं० ।

अकुलः–सं० त्रि० (१) निरस्थि द्रव्य, बीजशून्य । च० चि० १ अ० । (२) लम्बे कर्णहीन मध्यम अश्व । यथा—"लम्बकर्णोऽजटश्चैव अकुलः परिकीर्तितः ।" जय० ६ अ० । (३) कुल रहित, परिवार विहीन, जिसके कुल में कोई न हो । (४) बुरे कुल का, अकुलीन, नीच कुल का ।

अकुलाना–हिं० क्रि० अ० [सं० आकुलन] (१) व्याकुल होना, व्यग्र होना । (२) विह्वल होना मग्न होना, लीन होना, आवेग में आना ।

अकुलिनी–हिं० वि० स्त्री० [सं० अकुलीना] जो कुलवती न हो, कुलटा व्यभिचारिणी ।

अकुलीन–हिं० वि० [सं०] बुरे कुल का, नीच कुल का, तुच्छ वंश में उत्पन्न, कमीना, क्षुद्र ।

अकुल्लबलसाँ–अ० रोगने बलसाँ–फा० । बलसा का तेल–हिं०, द० । Balsamum, var of (Blasam of Necca or Balm of Gilead) ले० ।

अकुल्लोयलासमूँ–अ० दोहनुल् बलसाँ, रोगने बलसाँ–फा० । बलसाँ का तेल–हिं०, द० । (Balsamum)

नोट—यद्यपि उपर्युक्त शब्द वस्तुतः बालसम आफ मक्का (Balsam of Mecca) के पर्याय हैं, पर वे भारतीय आइल आफ कोपैबा (Oil of Copaiba India) के लिये भी प्रयुक्त होते हैं । स० फा० इं० ।

अकुशलं–सं० क्लो० / अकुशल–हिं० संज्ञा पु० } अशुभ, अहित, बुराई, (EVil or misfortune) वि० (not clever or skilful) जो दक्ष न हो, अनिपुण, अनाड़ी ।

अकूटः–सं० पु० फलवृक्ष विशेष, आगई रत्ना० ।

अकूनीतून–यु० (१) अतीस, अतिविषा (Aconitum Hoterophyllum, *Wall*) । (२) बत्सनाभ (Aconitum Napellus, *Linn*) । (३) बत्सनाभ वर्ग ।

अकूनैतस–यु० खानकुत्रनमिर–अ० । विष, मीठा जहर, बत्सनाभ (aconitum Napellus, *Linn.*)

अकूनोस्यून–यु० रईयुलअबल । एक बूटी है जिसके लक्षण में मतभेद है ।

अकूपारः–हिं० संज्ञा पु० / अकूपारः–सं० पु० } (१) कच्छप, कछुआ (A tortoisein general) त्रि० का० । (२) बड़ा कछुआ । वह कच्छप जो पृथ्वी के नीचे माना जाता है । (३) पत्थर वा चट्टान । (४) समुद्र (The sea) (५) सूर्य (The sun)

अकूमार्शून–यु० जंगली सौंफ (Wild anise)

अकूरून–ब्रज, बंच (Acorus calamus, *Linn.*)

अकूल–अ० (१) बुद्धिमान मनुष्य (*Idem*) (२) संकोचक औषध (astringent Medicine)

अकूसालियून–यु० करफ्स नब्ती जो कि बागी से बड़ा होता है ।

अकृच्छ्र–हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) क्लेश का अभाव (Absence of difficulty) (२) आसानी, सुगमता, असकोच । वि० (१) (Freefrom difficulty) क्लेश शून्य । जिसे किसी प्रकार का संकोच व कष्ट न हो । (२) आसान, सुगम ।

अकृत–हिं० वि० [सं०] (१) (Not done or prepared) (२) स्वयंभू, (३) प्राकृतिक (४) मन्द, कर्महीन (One who had done no work) संज्ञा पु० (१) कारण, (२) मोक्ष, (३) स्वभाव, प्रकृति ।

अकृतकाल–हिं० वि० [सं०] जिसके लिये कोई काल नियत न हो । जिसके लिये कोई समय न बाँधा गया हो । वेमियाद ।

अकृताख्ययूषः–सं० पु० लवण, स्नेह, कटु आदि पदार्थ वर्जित यूष, यह लघु होता है । वै० निघ० ।

अकृताथ–हिं० वि० [सं०] अपटु, अकुशल, कार्य में अदक्ष ।

अकृत्रिम–हिं० वि० [सं०] वे बनावटी, आप से उत्पन्न, प्राकृतिक, स्वाभाविक, प्रकृतिसिद्ध, नैसर्गिक ।

(२) असली, सच्चा. वास्तविक, यथार्थ (३) हार्दिक, आन्तरिक ।

अकृथित क्षीरम्–सं० क्ली० कच्चा दुग्ध । यह कफ कुपित करता है और भारी होता है । वै० निघ० ।

अकृदुद्वाह–हिं० वि० (Unmarried) अविवाहित ।

अकृष्टपच्य
अकृष्टरोही } –हिं० वि० [सं०] [स्त्री० अकृष्टपच्या, अकृष्टरोहिन्] जो विना जोते पैदा हो, जंगली (Growing exuberant or wild)

अकेन्थस इलिसिफोलिआ, अस–ले० हरकूच काँटा –हिं० बं० । हरिकषा-सं० । मोरेक्षा–गों० । मारण्डो–मह० । पैना स्कुल्लीभा–मल० । (Holly, ly leaved acanthus) इ० मे० मे० । १ इं० हैं० गा०, फा० इं० ३ भा० ।

अकेन्थस होल्ली लीव्ड–इं० हरकूच काँटा–हिं०, बं० इं० मे० मे०, इं० हैं० गा०, फा० इं० ३ भा० ।

अकेन्थेसीई–ले० अडूसावर्ग, अरूसे के वर्ग की औषधियाँ । The adusa order (acanthad's)

अकेम्पे पेपिलोसा–ले० इसकी जड़ औषधि कार्य में आती है । मेमो० ।

अकेलिफा इन्डिका–ले०
अकेलिफा इण्डियन–इं० } कुप्पी, श्वेतवसन्त ।

अकेलूचाँग गुल–ते० कुड़ा, कुटज, कोरैया (Holarrhena antidysenterica *Wall*)।

अकेशा–सं० स्त्री० जयन्ती, रवासन, जैत–हिं० । Sesbania ægyptiaca, *Pers*)

अकेशिया–इं० फलीवर्ग (Leguminasæ) के माईमोसी (Mimosæ) उस वर्ग की औषधियां जिनसे [समगेअरबी प्राप्त होता है । समगे अरबी 'बबूल का गोंद' (Gum arabic)

नोट—प्राचीन अंग्रेजी में इसका उच्चारण अकाकिया था, किन्तु अर्वाचीन अंगरेजी में अकेशिया है ।

अकेशिया—अरेबिया–ले० बबूल (र), कीकर–हिं० (Babool tree) । मे० प्रां० । स० फा० इं० । देखो—बब्बुरः ।

अकेशियाइन्टसिया–ले०, अर्हई, अदई की बेल सत० । कर्तार–कुमा० । कोंदूजनुम–सन्ता० । कुन्दुरू–कोल० हर्राी–ने० । पायरिक, उग्राम्रिक लेप० । कोरिन्टा, कोरेण्डम्–ते० । चिल्दारी–मह० माइमोसा इन्टसिया (Mimosa Intsia *Linn Roxb*)–ले० ।

अकेशिया बब्बुर वर्ग
(*N. O. Legvminasoe*)

उत्पत्तिस्थान—हिमालय के उष्ण प्रदेश, पूर्वी और पश्चिमी प्रायद्वीप । गुणधर्म—सन्तालों की स्त्रियां अनियमित ऋतु (Deranged courses) में इसके पुष्प को उपयोग में लाती हैं । इं० मे० प्रां० । इसकी छाल तथा पत्र रंग के काम में आते हैं । मेमो० ।

अकेशियाकान्सिन्ना–D.C.ले०सातला,अईल,रस्सौल हिं०, अव० । शातला, सप्तला, चर्मकषा–सं० ।

फली या छीमी के नाम—(Thepods) सीकी(के)काई–द० । शीका, शीकाकाई–ता० । शीकाय, चीकाय, गोगु–ते० । चीनिक्–काय मल० । शंगे काय–कना० । कोचै, वनरीठा–बं० शीका, तेलसेज़ा–मह० । केन्मोन-सी, केन्मोन पेडाङ, केज़ोन-ति–बर० । अ० रुयुगेटा(Acacia Rugata)–ले० । स० फा० इं० । इं० मे० प्रां० ।

अकेशिया कार्टेक्स–ले० बब्बूर त्वक्, बबूल की छाल हिं० । (acacia bark) । इ० मे० प्रां० । बी० पी० । देखो—बब्बुर ।

अकेशिया केकोउ–फ्रां० खैर वृक्ष, खदिर वृक्ष, कत्था का पेड़–हिं० (Acacia Catechu, *Willd*) फा० इं० १ भा० ।

अकेशिया कैटेशू-श्यू–ले० । खदिर वृक्ष, खैर का पेड़, खैर. कत्था खैर, खैर, बबूल–हिं० । (Catechu

tree, Cutch) इं० मे० प्लां० । फा० इं० १ भा० । स० फा० इं० ।

अकेशिया गम– } इं० समगे अरबी, बबूल
अकेशिया गम्माई- } ले० का गोंद, बबुर निर्यास (gum acacia) इं० मे० मे० । बी० पी० देखो बबुर: ।

अकेशिया जैकीमाण्टियाइ–ले० कीकर, बबुल, बमुल, बब्बिल पं० । हज–अफा । रतवौंली–गु० मे० मो० । देखो—बब्बुर: ।

अकेशिया डी अरबी–फ्रां० बबूल, बब्बूर । (acacia arabica, *Willd*) फा० इं० १ भा ।

अकेशिया डीकरेन्स–ले० इसकी छाल रंग के काम आती है । मेमो० ।

अकेशिया नाइलेटिका–ले० क़रज़ वृक्ष । फा० इं० १ भा० ।

अकेशिया पाइएनेन्था–ले० आरि विसबूल । इं० मे० प्लां० ।

अकेशिया पालीअकेन्था–ले० खदिर वृक्ष (Catechu tree) इ० मे० मे० ।

अकेशिया पिनेटा–ले० आरि, विसबूल–हिं० । (Mimosa Pennata) इं० मे० प्लां० ।

अकेशिया फार्नेशियाना–ले० (अ) इरिमेद, दुर्गन्ध खैर, गूहकीकर (Farnesiana Mimosa, *Linn*) ले० इं० मे० प्लां० ।

अकेशिया फेरुगीनिया–ले० खैर–नेपा०, अनसण्ड, अनचन्द्र और बुनि ते० शीमै–वेलवेल, वेलवीलम ता० ।

नोट—तेलगुनाम "बुनि" तामिल "वन्नि" के साथ मिलाकर प्रायः भ्रमकारक बना दिया जाता है, जो वस्तुतः सभी (Prosopis spicigera) का नाम है । देखो बब्बुर: । स० फा० इं० ।

अकेशियाबार्क–इं० बबूल की छाल, बबुर त्वक् (acacia cortex) देखो—बब्बुर ।

अकेशिया माडेस्टा–ले० पलोस–अफ० । फुलही पं० मेमो० । काएटोसरियो–गु० ।

उत्पत्तिस्थान—पश्चिमी और मध्य हिमालय मूल ।

प्रयोगांश—गोंद । देखो–बबुर ।

अकेशिया मालिस्–ले० लाकी (acacia soft) इं० हैं० गा० ।

अकेशिया ल्युकोटा–ले० लातज़ा–हिं० । acacia concinna; *D C.* इ० मे० मे० ।

अकेशिया लेन्टिक्युलेरिस–ले० खिन- बर्मा० कुमा० मेमो० ।

अकेशिया लेट्रोनम्–ले० मेप हिं० । पाकीतुम्म-ते० मेमो० ।

अकेशिया ल्युकोफ्लीआ- ले० रीवाँ, सुफेद कीकर हिं० । श्वेत बब्बूर वृक्ष सं० । उज्जो कीकर पं० की कीकर, शराब की कीकर -द० । सफेद बाबूल ब० । वेल-वेल, वेल-वेलम्–ता० । तेल्ल–तुम्म ते० । वेल-वेलम्–मला० । बिलि जालि मरा –कना० । हैबुरु, पाँडर, पाँडरियो बाबलिचेमा –मह० । सफेद बाबल–गु० । नल्लौनकियिड अफियु, तनोङ्–बर० । अरिङ्–राज० ।

उत्पत्तिस्थान—पञ्जाब के मैदान मध्य तथा दक्षिण भारत और राजपूताना ।

प्रयोगांश—त्वचा । देखो—"बबुर" ।

अकेशियावेरा–ले० क़रज़ वृक्ष । फा० इं० १ भा० शौकुल्मक्कह्, शौकुल्–एअराबियह्, शौकुल मिश्रियह्–अ० ।

नोट—अन्तिम तीन नाम मिश्र तथा अरब में पाये जाने वाले बबूर वृक्ष के कुछ अन्य भेदों के लिये भी प्रयोग में लाये जाते हैं । फा० इं० १ भा० । स० फा० इं० ।

अकेशियावैलीक्याना–ले० कत्था का पेड़, खदिर वृक्ष । इ० मे० मे० ।

अकेशिया समा–ले० स (श) मी, छोकरा । सं० –,वं० । (Prosopis Spicigera White Mimosa) फा० इं० ३ भा० ।

अकेसिया सॉफ्ट–इं० लाकी । इं० हैं० गा० ।

अकेशियासेनेगल–acacia senegal, *willd* ले०, खोर–सिंध । कुस्ता–राजपु० ।

उत्पत्ति स्थान–यह एक कंटकमय छोडम वृक्ष है जो सिंध और अजमेर में उत्पन्न होता है।

नोट—यह अफ्रीका के सेनेगल प्रांत में होने वाला 'बब्बुर' ही हैं।

प्रयोगांश–निर्यास।

अकेशिया सण्ड्रा–acaciasundra *D. C.* –ले०नला सड्रा- ते०। इसका गोंद काम में आता है। मेमो०।

अकेशिया स्टेनोकार्पस–ले० बबूर भेद। इसके पत्र द्वारा एक नथा स्पर्शज्ञता जनक क्षारीय सत्व प्राप्त होता है, जिसका स्टेनोकार्पीन (Stenocarpine) कहते हैं। इसके दो प्रतिशत के घोल में से दो बूंद नेत्रों में टपकाने से यह उक्त भाग को पूर्णतः अवसन्न कर देता है। इसका उपयोग करने से ५ मिनट पश्चात् बिना कष्ट अनुभव किए नेत्र कनीनिका में सूची चुभाई जा सकतीहै तथा उसे खुरचा एवं बल दिया जासकता है। १० से १५ मिनट अनन्तर कनीनिका विस्तार उपस्थित होता है, और करीब-करीब ३२ घंटेतक स्थिर रहताहै। इससे नेत्रपिण्ड का तनाव कम होता है। अस्तु, हरित मोतियाबिन्द में लाभ दायक होता हैं। इसी भांति त्वचा के किसी भाग को स्थानिक रूप से अवसन्न किया जा सकता है। पी० बी० एम०।

अकेशिया स्पेसीओजा–acacia speciosa, *Willd*–ले० सिरिस का पेड़-हिं०। शिरीषः सं०। शिरिस का झाड़ द०। (albizzia lebbecK) इं० मे०मे०।

अकोटः–सं० पु०–सुपारी-गुवाकः पूग (गी०)-सं० (areca catechu)।

अकोटा–कना० कोसम। गौसम्-पं० हिं०। (Schleichera Trijuga *Willd*) ले०। इं० मे० प्लां०।

अकोडः–सं०। अख़रोट (Juglans regia)।

अक्रोड गन्धः–सं० हींग, हिंगुः रामठम् (assafoetida)।

अकोढ़ई–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अक्रूर] सरल, मुलायम वह भूमि जो सींचने से बहुत जल्द भरजाय। वह भूमि जिसमें पानी ठहरा रहता हो।

अक्रोंद–हिं० मदार आक (Calotropisgigantea, *R. Br.*) मदार सं० फा० इं०।

अकोरकपरायुः–स० पु० (chorion Leave)

अकोरा–यु० चांदी रजत (Silver) (Argentum)–ले०।

अकोरिया–उ० प० सू०, भलियून।

अकोरीटीन–इं० वचीन, वचसत्व कोलीन (Choline)-इं०। यह मधु सदृश तरल ग्लुकोसाइड (Glucoside) है जो अत्यन्त तिक्त और सुगन्धित होता है तथा मद्यसार (alcohol) क्लोरोफार्म और ईथर में घुल जाता है, और शर्करा तथा उड़नशील तेल के रूप में पृथक् हो जाता है। इं० मे० मे०।

अकोरीन–इं० यह एक उड़नशील तेल है जो वच में वर्तमान होता है। देखो–वच। इं० मे० मे०।

अकोल–द० हिं० काला अकोला, ढेरा भेद (alangium hexapetalum, *Lam*) सं० फा० इं०। देखो-अंकोल।

अकोला–हिं० संज्ञा पु० (सं० अंकोल) ढेरा का पेड़-हिं०। अंकोल, ढेरा (alangium Decapetalum, *Lam*)-सं० फा० इं०

अकोबिद–हिं० संज्ञा पु० (सं० अग्र) ऊख के शिर पर की पत्ती, अगोला, अगौला, गेंड़ा।

अकौआ–हिं० (१) संज्ञा पु० (सं० अर्क) मदार, आक (Calotropisgigantea *R. Br.*) (२) कौआ, लालरी, घंटी, (Uvula)

अकौल,-ला–हिं० ढेरा, अंकोल (alangium Decapetalum, *Lam*)

अकौस–अ० कुबड़ा, कुब्ज, जिसका पृष्ठ बाहर निकल आया हो। हञ्चबैक्ड (hunch backed) इं०।

अकं–सं० क्ली० संज्ञा दुख (Pain)

अक्अबः–अ० (व० व०), कअब (ए० व०) गुल्फ, टखने-हिं०। वह स्थान जहां पर पैर सामने को और पीछे को मुड़ सकता है (ankles)

अक्अम्–अ० सपाट (चिपटी) नासिका वाला। (Flat-nosed)

अक्अस–अ० उन्नतोदर वक्षीय अर्थात् वह जिसका वक्षःस्थल बाहर को निकला हो और पृष्ठ भीतर को दबा हो।

नोट—अह्दब और अक्अस का भेद अहदब में देखो!

अ(इ)क्आद्–अ० लुञ्जापन, लंगड़ापन, अथवा अवयवों का ऐसा बिकार जो बैठने को बाध्य करे (lameness)

अक्ऊमा–अ० अकमा एक प्रकार का चक्षुरोग। विशेष कर यह कठिनतापूर्वक अच्छा होता है। यह पपड़ी के समान होता तथा झिल्ली को खा जाता और नेत्र को विनष्ट कर देता है।

अक्क़ह्–फा० अक्अक (महूका पक्षी)

अक्क़त्–अ० वह उष्ण रात्रि जिसमें वायु सर्वथा बन्द हो।

नोट—ग़म्म, स्जाअ, सफरह और इहतिराम इनमें से अक्कह वायु के रुकने और उष्णताधिक्य को कहते हैं। ग़म्म का अर्थ कठिन गर्मी है और सफरत तथा इहतिराम इसके पर्याय हैं। रम्जाअ ऐसी कठिन उष्णता एवं उत्ताप को कहते हैं जिससे कंकरी आदि भी जल उठें।

अक्लकरा–मह०
अक्लाकरे–कना०
अक्लाकरी–कना०
} हिं० । अकरकरा (Pyrethri Radix) फा० इ० स० फा० इं०।

अक्का–हिं० संज्ञा, स्त्री० [सं०] (Amother) माता, मां।

नोट—सम्बोधन में इस शब्द का रूप "अक्क" होता है।

अक्कार–अ० (ए० ब०) अकाकीर (ब० ब०) औषधियाँ जड़ी बूटी–हिं०। हर्ब (Herb) इ०। स० फा० इं०।

अक्कारकारम्–ते०, ता० अकरकरा–हिं० (Pyrethri Radix) स० फा० इं०।

अक्काल–अ० इसका शाब्दिक अर्थ भक्षक अर्थात् खाजाने वाला है किन्तु आयुर्वेद की परिभाषा में उस औषधि को कहते हैं जो अपने तीक्ष्ण एवं भक्षक गुण की अधिकता के कारण अवयवों के सार अंशों को नष्ट करदे। वह औषधि जो क्षत कारक एवं गलाने वाले गुण के कारण मांस को खा जाय और उसके सार भाग को क्षीण करदे, यथा चूना और हड़ताल। करोसिव (Corrosive), एरकैरोटिक (Escharotic)–इं०

अक्किकरुका–मला०
अक्किराकारम्–ता०
अक्किराकारम्–मला०
} अकरकरा–हिं०। (Pyrethri Radix) स० फा० इ०। फा० इं०।

अक्की–कना० चावल (Rice) स० फा० इं०।

अक्कीसारायि–कना० चावल की दारु–द०। तण्डुल मद्य, चावल की शराब–हिं०। अरिशशाराय–ता०। विय्यमु साराय–ते०। अरिचारायम–मला० लाइकार आफ राइस (Liquor of Rice) इ०। स० फा० इ०।

अक्ज़म–अ० (१) कोताहबीनी (२) जिसकी नासिका छोटी हो।

अक्ज़ाज–अ० कठिन शीत लगना कम्पन, कांपना

अक़्ज़ार–अ० (ब० ब०) क़ज़र (ए० ब०) कसाफत निजासत, गंदगी–फा०। मैलापन अशुद्धि–हिं०। फिल्थ्ज़ (Filths)–इं०।

अक़्तअ–अ० जिसकी अंगुलियां हथेली की ओर फिरी हुई हों।

अक़्तअ–अ० छेदित हस्त, कटा हुआ हाथ विशे० हाथ।

अ–इ क़् त् अ रार–अ० हांफना हांफना (To pant, To be out ofbreath.)

अक़्त–हिं० वि० स० (Smeared, Anointed) व्याप्त। संयुक्त। सफल। युक्त। रंगा हुआ लिप्त। भरा हुआ।

नोट—यह प्रत्यक्ष रूप से शब्दों के पीछे जोड़ा जाता है; जैसे–विषाक्त, रक्ताक्त।

अक़्तद्–अ० उच्च कन्धावाला, ऊँचे कंधेवाला मनुष्य

अक़्तन–अ० कूजपुश्त–फा० कुबड़ा, कुब्जा हम्प बैक (Hump-backed)–इ०।

अक़तम–अ० रक्तवर्ण श्यामतायुक्त, श्याभामा युक्त रक्तवर्णीय कारुरा (मूत्र) ब्राउनिश रेड (Brownish red)–इं०।

अक्ता–स० स्त्री० (night) रात्रि।

अकतात–अ० घुंघराले (लहराये, मुड़े) बालों वाला पुरुष। कर्ल हेयर्ड (Curlhaired)-इं०।

अकताद। [ब० व०] कतिद [ए० व०] अ० स्कन्ध तथा मध्य स्थल पृष्ठ की दूरी (Shoulder)।

अकताफ-अ० (ब० व०) कतिफ़ (ए० व०) स्कन्ध कंधे। शोल्डर्स (Shoulders)-इं०।

अक्तार–अ० (ब० व०) कुत्र् (ए० व०) शारीरिक दूरियाँ व्यास, चौड़ाई, अधकट। डायमीटर्स (Diameters)-इं०।

अक़्तार ख़ार्जिय्यह अ० शरीरकी बाह्य दूरियां, अतंर External Diameters)

अक़्तारदाखिलिय्यह् अ० शरीर की आभ्यन्तरिक दूरियां (अन्तर फांसले) (Internal Diameters.)

अक़तारस लासह अ० शरीर की दूरीत्रय, घनमाप अर्थात् लम्बाई चौड़ाई व गहराई।

अक़्तियूस यू० अकतीक़स अ०। यह युनानी भाषाका शब्द है जिसका अर्थ सत्य व स्थिर होता है किंतु तिब्ब की परिभाषा में तपेदिक (राजयक्ष्मा, क्षय) को कहते हैं। हेक्टिक फीवर (Hectic-Fever) इं०।

अ (अ) क्द अ० (ए० व०), गिंस्ह लगाना, गांठ देना बाँधना ग्रंथि देना हिं०। तरल पदार्थों का सान्द्र (गाढ़ा) हो जाना बँध जाना घनीभूत होना। अक़द (ब० व०)।

अकदह अ० लुक़नते-जुबान जुबान की लुक़नत फा० हकलाना, तुतलाना, शुद्ध शब्द का न निकलना स्टेमरिंग (Stammering,) बलब्युटीज़ (Balb uties)–इं०

अक्दह्–अ० (१) बीखे जुबान–फा०। जिह्वामूल जुबान की जड़–हिं०। (२) हृदय मूल अथवा हृदयाधार, (३) मध्य हृदय।

अक़दीदूस अ० देखो अगदीदूस।

अक्न अ० चीन, शिकन फा०। झुर्रीपड़ना सिकुड़न वली जो मेदाबी होने के कारण उदर पर पड़जाय। वलिः—सं०। रिङ्किल (wrinKle) इं०

अक़्नफ अ० लघुकर्ण बाला छोटे २ कान वाला हिं०। (Small eared)।

अकनह् अ० सूरिञ्जान (Herm odactylus)। फा० इं०।

अक्नह सबूरलब्निय्यह् दुहनिय्यह् और हब्बुस्सवां अ०। यौवन पिडिका कील, मुहांसे जो जवानी के आरंभ में मुख मंडल [illegible]। रोजमैलते हैं। एक्नो (acne)–इं० [illegible] इं०।

नोट—जो युवा स्त्री पुरुष मध्य मार्ग का अवलम्बन न कर स्वास्थ्य सम्बन्धी नियमों का उल्लंघन करते हैं उसको सामान्यतः यह विकार हो जाया करता है।

अक्नार–अ० सुराही में मुंह लगाकर पानी पीना अथवा मद्यपान करना।

अक़फअ–अ० जिसके पांव की अगुलियां फिरी हुई हों।

अक्फस–अ० जिसका पैर टेढ़ा हो और वह अपने पैर की छोटी अगुली पर सहारा देकर चले।

अकफह–अ० श्याम काला–हिं०। ब्लैक (BlacK) इं०।

अक्बद–अ० यकृय रोगी वह रोगी जिसकायकृत बढ़ा हुआ हो बढ़े हुये यकृत वाला। एनलार्जड लिवर (Enlarged liver) इं०।

अक्बस–अ० जिसके शिर का आगा निकला हुआ और ललाट धसा हुआ हो।

अकबाद अ० (ब० व०) कबिद (ए० ब०)यकृत, जिगर, कलेजा (Liver)।

अकबीस–अ० रसूलिया, जिसका शिश्नाग्र (मणिमुण्ड) खतना से पहले त्वचा से बाहर निकलता हो।

अक्मअ अ० जिसके नेत्र से जलस्राव हो।

अकमस अ० लो कठिनता पूर्वक देख सके

अक्मह अ० कोरमादरजाद फा०। जन्मांध सहजांध हि०। बॉर्न ब्लाइण्ड (Born Blind) इं०।

अक्माक फा० वमन, छर्दि, मतली। वॉमिटिङ्ग (vomiting)नांशिआ (Nausea) इं०।

अकमाल अ० (व० व०) क़म्ल (ए० व०) जुओं (ढीलों) के अण्डे बच्चे अर्थात लीख। निट (Nit) The egg of a louse -इं०।

अक्मावस अ० एक दैनिक ज्वर एक दिन का ज्वर। हुम्मायूम अ०। तप एक रोजह् फ़ा०। फेब्रिक्युला (Febricul.)इं०।

अक्याघास हिंसा पभ्र अगिया। (lemon grassiness)स० फां० इं०।

अक्याघास का अकमा-हिं०। देवजग्धक तैल सं० अग्याघास तैल व० (lemongrass oil) इं०। स० फां० इ०।

अक्र.अ-अ० कल्ल, गंजा केशहीन जिसके शिर के बाल गिर गये हों चँदला। वाल्ड (bald) इ०।

अक्न अ० पैवस्तह् अबु फा०। जिसकी दोनों भौंये मिली हों।

अक्र.फ़. अ० अत्यंत रक्तवर्ण गम्भीर रक्तवर्ण हिं०। डार्क रेड (darK red) इं०

अक्रबी-फा० दरुनज अक्रबी (Doronicum Pardalianches *linn*) फा० इं० २ भा०।

अक्रम-हिं० व० [सं०] सं० पुं० क्रम रहित,व्यतिक्रम विपर्य्यय, (Irregularity Confused) इं०।

अक्राअ-अ० (व० व०) क्रु (क़) र्अ् (ए० व०) रजःकाल, आर्तवकाल मासिकधर्म का समय (Period of the menses)

अक्रानीकी-यु० (१) शुकाई-बाजा०(२)बादाबर्द (ShuKai) फाँ० इं० ६ भा०।

अक्रान्ता-स० पु० कटेरी, भटकटाई, वृहतीं, वृहतीक्षुप-सं०। व्याकुड-व० डोरली पाण्डरीं, वनभण्टी-म०, क०। अक्रान्ति-उतू० व्राकुरु चेट्टु-ते० र० म०। गुणधर्म उष्ण वीर्य पाचन, संग्राही। चक्र० द०। राज०। यह उष्ण वीर्य, रस में कटु तिक्त, लघु, वात नाशक, ज्वरनाशक, अरोचक व कास नाशक तथा श्वास और हृदयरोग नाशक है। रा० नि० व० ४।

अक्राबाजीन-अ० करावादीन कितावे अदविनह मुरक्कबह-फा०। योग संबन्धी ग्रन्थ, योग शास्त्र-हि० यह ग्रन्थ जिसमें यौगिक औषध एवं उनके योग लिखे हों, फार्माकोपिया (Phormacopœea) डिस्पेन्सेटरी (Despensatory) इं०।

अक्रावादीन-अ० अक्राबाजीन।

अक्रास-अ० (व० व०), कुर्स (ए० व०), टिकिया हि०। टेब्लोइड्स् (Tabloids) इ०।

अक्रीय-हि० वि० [सं०] (१) क्रिया रहित (Inactive, dull) (२) चेष्टा रहित। निश्चेष्ट। जड़। व्यापार रहित। जो कर्म्म करने से रहित हो। स्तब्ध।

अक्रूर-हि० वि० [सं०] जो क्रूर न हो, सरल, दयालु सुशील, कोमल, मृदु, (notcruel).

अक्राध-सं० हि० वि० क्रोध रहित (Free from anger)

अक्रोसाइन-इ०। अरञ्जक (Notcolouring) इ०। फाँ० इ० १ भा०।

अक्ल-अ० व्याधिमूल-विज्ञान की परिभाषा में उस औषध को कहते हैं जो द्यवयवों के मांस या त्वचा को खाजाए अर्थात् उसे नष्ट करदे। करोंडि (Corrode)-इ०।

अक्ल़-अ० (ए० व०) अक (व० व०), खिर्द दानाई-फा०। बुद्धि, समझ-बूझ, सूझ, मनीषा धी धिषण, विवेक शक्ति-हि०। इण्टेलिजेन्स (Intelligene)-इ०। प्रकृति में यह वह शक्ति अथवा अपार्थिव तत्व है, जिससे बुरे भले में विवेक किया जाता है।

अक्लफ-अ० उन्नावीरंग; श्यामाभायुक्त रक्तवर्ण-हि० ब्राउनिश् रेड (Brownishred)-इ०।

अक्ल़फ-अ०, वह व्यक्ति जिसका खतना न हुआ हो अनसर्कमसाइज्ड (uncircumcised)-इ०

अक्लब-अ० जिसके ओष्ट उलटे हुए हों।

अक्ल-व-शुर्व-अ० खुर्द व नोश-फा०। भक्ष्य एवं पेय अर्थात् खाने पीने के पदार्थ-हि० edible and drinkable)-इ०।

अक्लह-अ० कलह (अर्थात् जिसके दाँत मैले हों) का रोगी।

अक्लह-अ० एक बार खाना।

अक्लाअ्-अ० अवस्था (उमर) की अपूर्णता तथा अंत तक न पहुचना।

अक्लावोतस-यु० अज़्रह्-फा० उटङ्गन-हि०।

नोट—अज़्रह, उटङ्गन और कजनह् प्रभृति शब्द भूल से 'केवांच' के लिये प्रयुक्त होते हैं वस्तुतः केवाँच से ये सर्वथा भिन्न है (Blepharmis edulis *Pers*)।

अक्लाशोनस-यु० झाऊ-हि०। फरास, फरना-मरलेई प०। (Tamarix Gallica, *Linn*)

अक्लिका-स० स्त्री०

नील, नीलीवृक्ष The Indigoplant, (Indigofera tinctoria)। नीलीचेट्-झाड़-मह०। नीली०-क०। नल्लचेट्टु गेरिट पेट्ट नीलिचेट्टु-ते०। नीली महानीली भेद से यह दो प्रकार की होती है। गुण—यह उष्ण वीर्य, रस में तिक्त और कटु तथा केशवर्द्धक, कफ, कास और आमनाशक, लघु तथा वात, विष विकार, उदररोग, गुल्म (वायुगोला) कृमि और ज्वर नाशक है। रा० नि० व० ४। रेचक, मोह, भ्रम, आमवात तथा उदावर्त को नाश करने वाली है। भा० प्र० १ भा०। मद० १ व०।

अक्लिन्तवर्त्म-हि० पु०
अक्लिन्नवर्त्म-स० पु०
} नेत्रवर्त्मज रोग विशेष।

जिसमें धोए हुए अथवा विना धोए हुए पलक परस्पर वारम्वार चिपक जांय और धोए पक के पीप से न चिपके उसे "अक्लिन्न वर्त्म" नामक रोग कहते है। इसीको वाग्भट्टजी 'पिल्लाख्य' नाम से पुकारते है। मा० नि०।

अक्लिष्ट-हि० वि० [सं०] (१) विना क्लेश का। कष्ट रहित (disease-less) (२) सुगम सहज। साधारण। सरल सीधा। (Easy)।

अक्लीका-स० स्त्री० नीलका पेड़, नीली वृक्ष (The IndigoPlant)।

अक्लीतक्स-
अक्लीतून-
} रु० अरण्य प्याज़ स० (Scilla indica, *Roxb*)।

अक्लीमिया-पु० कलेमिया, कदेमिया अ०। धातुओं का मैल जो उनके पिघलाने के बाद ऊपर नीचे झाग और तिलछट के समान उत्पन्न हो जाता हैं। कैले मीन (Calamine)-इ०।

अक्लीलुल्जबल-अ० यह एक बूटी है जो स्पेन तथा मिश्र देश में उत्पन्न होती है। (रोस्मैरिस् (Rosmaris) ले०। रोजमैरी (Rose Mary) इ०। सं० फा० इ०।

अक्लीलुल्मलिकअ० बन मेथी, बन मेथिका-स० (Trifolium Indicum, Melgiotu-spauviflora) नाखूना-देखो इक्लीलुल्मलिक।

अकथित क्षीरम्-स० बिना पकाया हुआ दूध।

गुण—गुरु और कफ कारक हैं। वै० निघ०

अकन-हि० आक, आख, मदार, अर्क (Calotropis gigantea *R. br*)

अकम-अ० वक्ष का अधोभाग।

अका-हि० आक, मदार, अर्क Calotropis gigantea, *R. Br*)

अक्का-ले० जल। देखो एक्का।

अक्काअ्-अ० (ब० व०) कुअ (ए० व०) पहुंचे अर्थात् कलाई की हड्डियां (Ristbones)

अकात-अ० (ब० व०) कुव्वत (ए० व०) भक्ष्य पदार्थ, गिजायें, अशियह (Edible)-इ०।

अकिलीजियावल्गैरियस्-यह एक रैन्युन्क्युलेसी है (Ranuncula ceæ) वर्ग की एक औषधि है।

अकिलेरियाअगेलोका-ले० अगर, अगुरु, ऊद। अगर-अ० ægle wood इं० मे० ठ०। मे० म०।

अकिलेरिया-ओवेटा-ले० अग (ægle wood) इ०।

अकिलेरिया मलाकेन्सिस-ले० अगर ægle wood-इं०।

अकेजान–रु० मटर भेद। इसे कोई २ रईयुल हमाम को कहते हैं।

अक्शात्र–अ० (व० ब०) (ए० ब०) क़िश्व (१) सन्निपात, जहरे. विष (Deadly poison). घातक। विष (२) जङ्ग, मुरचा, कीट, (Rust)।

अक्शी–अ०सा० करकोट–बं०। अग्गई-अव०।

अक्शूरीयून–यु० एक प्रसिद्ध औषध है।

अक्शूस–अ० कसूस। अकाशवेल (Cuscuta reflexa)–ले०।

अक्स–हिं० संज्ञा पु० [अ० अक्स] (१) प्रतिबिम्ब, छाया, परछाई। (२) चित्र तसवीर।

अक्सअ–अ० वह व्यक्ति जिसके मसूड़े फूले हों।

अक्सम–अ० मेदवी मनुष्य, वह व्यक्ति जिसका मेद (तोंद) बढ़ा हो। कोर्प्युलेण्ट (Corpulent) फैटी (Fatty)–इं०।

अक्सह–अपाहिज, लोथ, जो अपने स्थान से हिल न सके। क्रिप्ल (Cripple)–इं०।

अक्साव–अ० (व० ब०) क़ुस्व (ए० व०), अंतड़ियां, आंत्र–हिं०। (Intestines)

अक्सियह–फा० जौ की शराब, यवमद्य। (Barley wine)

अक्सिया–फा० सुफेद माजरियून। अपराजिता श्वेत (Clitoria ternatea, *Linn* White)

अक्सियानूस–यु० जुन्दबेदस्तर जुन्द–अ० (Castoreum)–ले०।

अक्सीर–हिं० छड़ीला (Nardostachys Jatamansi, *D. C.*)–ले०।

अक्सीर–अ० (१) वह रस वा भस्म जो धातु को सोना व चांदी बना दे। रसायन, कीमिया, पारस पत्थर, पारसमणि (Philosopher'sstone) (२) वह औषधि जो प्रत्येक रोग को नष्ट करे। वह औषधि जिसके खाने से कभी मनुष्य बीमार न हो। वि० अव्यर्थ। अत्यन्त गुणकारी। अत्यन्त लाभकारी।

अक्सीर बवासीर–हिं० पु० बूटी बवासीर एक बू है जो पृथ्वी से मिली हुई होती है। चैत मास प्रायः होती है।

गुण—रक्तस्थापक, अतिसार नाशक, हाफि यु० मार्च १९२८

अक्सीरी–फा० माहिर, कीमिया दाँ, कीमियो कीमियागर। रासायनक। रसायनशास्त्री (Alchemist)

अक्सीरी आक–हिं० पु० प्रसिद्ध पौधा विशेष।

अक्सीरी बूटी–हिं० स्त्री० यह एक रसायनी बूटी जो लगभग १ फुट ऊंची होती है। टहनी तथ पत्र घने, पत्र-जाल-पत्रवत् परन्तु उससे अर्धभाग गम्भीर, हरित वर्ण के होते हैं। इससे लौह तार हो जाता है। हामि० यु० जून १९३२ ई०।

अक्सुनाफि(फ)न–अ० हकीमी माप भेद, यह ६ तो ११ माशे २ रत्ती अथवा ६ तोले ९ माशे बराबर होता है।

अक्सूफ़ैलस–यु० सहंस कोई नाम की एक बूटी है।

अक्सूमानस–यु० रतनजोत (Alkanet)–इं०।

अक्सूमाली–यु० सिकंजबीन–अ० हिं०, द० सिकञ्जबी फा० (Oxymel)

अक्सूस–अ० अकासवेल का बीज। तुख्मे कसू फा० Cuscuta Reflexa (Seeds-of)

अक्हल–अ० श्याहचश्म, सरमगीं, आँखवाला। (२) छेदनशास्त्र की परिभाषामें रगे हफ्तअन्दाम को कहते हैं। वह रग कुहनी के मध्य में भीतरकी ओर स्थित है। और कीफाल व बासलीक के मिलाप तथा संयोग द्वारा पैदा होती है। चूंकि इसमें कीफाल (Cephalicvein) और बासलीक दोनों से शोणित आता है इस कारण इसके फसद (रक्तमोक्षण) से सम्पूर्ण शरीर का रक्त निकलता है। मीडियन कफ़ैलिक (median cephalic)–इं०।

अक्हाल–अ० (व० ब०) कहल (ए० व०) सुर्मा, अंजन, नेत्र में लगाने की शुष्क औषध। कालिरियम्ज (Collyriums)–इं०।

अख–हिं० संज्ञा पु० बाग, बगीचा। (Garden) इं०।

अखगरिया–हिं० संज्ञा पु० [फा०] वह घोड़ा जिसके मलते समय उसके बदन से चिनगारी निकलती हो। ऐसा घोड़ा एबी समझा जाता है।

अखट्टः–सं० पु० चिरौंजी–हिं०। (पियाल वृक्ष), पीलिया, इसके बीज को पीयाल बीज या चार दाना कहते हैं। चारोली–भा०। रा० नि० व० ११। भा० आम्रादिव०। (buchanania lati-folia, *Roxb*)

अखनी–हिं० संज्ञा स्त्री० [अ० अखनी] (Meat juice) देखो अखनी।

अखनी–अ० मांस रस। मांस का रसा। शोरवा।

अखन्न–अ० गुन्ना, गुनगुना, भुनभुना, मुनमुना, मिन मिना, नाक के बल से बोलने वाला, नकनका।

अखर–सं० पु० कर्पास, कपास, बाड़ो (Gossypium Indicum)–ले०।

अखरसाज–फा० एक वृक्ष है जो उष्ण देशों में एवं शुष्क स्थानों में उगता है। मनुष्य के कद के बराबर अथवा कुछ अधिक ऊंचा एवं खुरदुरा और अखोर के समान नर्म और खोखला होता है।

अखरा–हिं० वि० [सं० अ=नहीं+हिं० खरा] जो खरा वा सच्चा न हो। झूठा बनावटी, कृत्रिम। संज्ञा पु० सं० (अखर) भूसी मिला हुआ जौ का आटा जिसको गरीब लोग खाते हैं।

अखरोट–हिं० संज्ञा पुं० ब०, अक्रोट, आक्रोट–बं० हिं०, द०। अक्षोट, पीलु, शैलभवः और कर्पराजः अक्षोटः, अक्षोटकः, आखेट., पर्व्वतपीलुः, कन्दराजः आक्षोढ (ख), आस्फोटकः, (शा० र०) गिरिज पीलुः, अक्षोडकः,–सं० जौज, जौजुलखनिफ–अ० गिर्दगाँ, चारमग्ज, चहार मग्ज, गौज, फा०। कासलीस, फादस्याह–यु०। कौज-तु०। जुग्लेअ Juglans regia जु० रेजिया (J. regia, *Linn*)–ले०। वालनट (Walnut) इं०। वालनस बाम (Wallnussbaum)–जं०। नोयर कल्टिव Noyer Cultive फ्रां०। अक्रोट्टु–ता०। अक्रोटु–ते०। अक्रोडु, अक्षोट कना० कर्ना०। अक्रोड़–म०। अखरोट, अखोड गु०। सिस्–क्या–सिया तिक्या–जि० वर०। अक्षोड़–कों०। उव्वकाई–द्रावि०। तगशिङ्ग भूटि०। कव्सिंग–आ०। कोवल–लेप०। आक, अखोर, अखोट, अखरोट–उ० प० प्रा०। अखोर, खरोट, कुमा०। अखोर, क्रोट- दून–काश० अखगोट. दून चारमग्ज, थनथान, खोर, कादा-रग, अखोरी, क्रोट कबोटङ्ग, स्टार्ग, उग्ज, वग्ज, थानक छाल–डिराडासा–पं०। उग्ज, वग्ज–अफ्०।

अक्षोट वर्ग
(Juglandacae)

उत्पत्ति स्थान—हिमालय (शीतोष्ण) पर मूहान से लेकर अफगानिस्तान तथा काशमीर तक होता है। खसिया की पहाडियों तथा और और स्थानों में भी यह लगाया जाता है। ईसका एक भेद और है [Aleurites Moluccana' *willd*] बंगाल और दक्षिणी भारत में बहुतायत से होता है। पीलू [Mustardtree of scripture] भी कोंकन देश में उत्पन्न अखरोट जाति का एक प्रकार का वृक्ष है। इनके लिये खन २ नामों के अन्तरगत देखिये। श्वेत श्याम भेद से अक्षोट २ प्रकार का और होता है।

वानस्पतिक वर्णन—यह शाखी वृक्ष है जो पर्वतों में उत्पन्न होता है। उसके वृक्ष बड़े २ बहुत ऊचे होते हैं। इनकी उचाई लगभग ४० से ६० फी० होती है। पत्ते ४ से ८ इंच लम्बे अंडाकार नुकीले और बराबर था तीन तीन क़ंगूरे युक्त एक डन्ठल के दोनों ओर विषमवर्ती लगे होते हैं। छूने में सख्त और मोटे मालूम होते हैं। पुष्प सफेद रंग के छोटे २ शाख के शिरे पर गुच्छे मे कई कई आते हैं। एक ही गुच्छे में स्त्री पुरुष दोनों प्रकार के पुष्प होते हैं। इनमें पुरुष (androecium) की संख्या अत्यधिक होती है। फल दो कोष युक्त मैनफल या बहेड़े के समान अण्डाकार होते हैं। उनके ऊपर ३ छिलके होते हैं। इनमें प्रथम हरा मोटा (पकने पर जैतूनी रंग का हो जाता है) स्वाद में कषैला और कडुवाई लिये होता है। यह फल कचैपन में नरम परन्तु सूखकर कठोर होजाते हैं। द्वितीय छिलका पहिले छिलके के नीचे कठोर होता है फिर इसके २ टुकड़े आपस ने मिले और सिरा उनका

निकला हुआ तथा तीसरे छिलके के भीतर से टेढ़ा मेढ़ा गूदा वा मोटी गिरी निकलती है। मींगी के ऊपर बहुत बारीक छिलका होता है। मींगी अण्डाकार सफेद कुछ चिपटी और चिकनाई लिये पिस्ते और चिलगोजे की मींगी के समान होती है। इन सबके ४ भाग होते हैं। दो दो भाग आपस में मिले इनके बीच में बहुत बारीक परदा होता है फल का बृहत्तम व्यास लगभग २॥ इंच होता है। इसकी लकड़ी बहुत ही अच्छी मजबूत और भूरे रंग की होती है और उस पर बहुत सुन्दर धारियां पड़ी होती हैं।

अखोट तैल–गुण—अखरोट के गूदे में से तेल भी बहुत निकलता है। मूलक तेलवत्। कृमिनाशन हेतु मुख्यतः कद्दूदाना (Tapeworm) को मारने के लिये भृदुभेदन और पित्तनिःस्सारण हेतु इसके तेल का आभ्यन्तरिक और दृष्टि मान्द्य हेतु बाह्य प्रयोग किया जाता है।

नोट—उपयुक्त समस्तपर्याय इसी के मींगी अथवा फलके हैं। लेटिन नाम जुग्लेज़ रेजिया (juglans regia) इसके वृक्ष के लिये आया है।

प्रयोगांश—फलत्वक, त्वचा, बीज (मींगी) फल और खोपरी (Nut)

प्रभाव वा उपयोग–गुण—मधुर बलकारक स्निग्ध, उष्ण, वातपित्तनाशक, रक्तविकारहर, शीतल तथा कफ प्रकोपक है। रा० नि० व० ११ मधुर बल्य, गुरु, उष्ण, विरेचक और वातनाशक मद० व० उ०।

परिवर्तक, और संकोचक इसका क्वाथ (१२ में १) कण्ठ-माला, श्वेतप्रदर प्रभृति के लिये लाभ जनक है। बीज इसमें तेल, एल्युमीन या जुग्लैंडिक एसिड और राल होती है।

अपक्वफल; कृमिघ्न। पक्वफल या मींगी–"अक्षोटः कोऽपि वाताद् सदृशः कफ पित्त कृत्" भा० प्र० फ० व०। स्वादिष्ठ, भक्ष्य, पुष्टिकर औरकामोद्दीपक। फलत्वक् कृमिघ्न, उपदंश नाशक, वृक्षत्वक् संकोचक, कृमिघ्न और दुग्ध नाशक (Lactifure) तथा व्रणशोधक। इ० मे० मे०। इ० मे० प्लां०।

इसकी लकड़ी मेज, कुरसी, बंदूक के कुन्दे, संदू आदि बनाने के काम में आती है। इसकी छा रंगने और दबा के काम में भी आती है। इसे और पत्तियों को गाय बैल खाते हैं।

अखरोट जंगली–हि० संज्ञा पु० (१) जायफ (Nut-meg) अरण्याक्षोट। जंग अखरोठ।

अखरोस–पु० (१) एक बूटी है, जो फ्रांस त सर्द दरियाई देशों में उत्पन्न होती हैं (२ जंगली गेहूँ।

अखरौट–ब० अखरोट, अक्षोट Walnut-t Juglans-regia')।

अखर्व–हि० वि [सं]। बड़ा। लम्बा। (Not warfish)।

अखर्यूस–पु० पहाड़ी गन्दना।

अखलः–स० पु० उत्तम वैद्य।

अखलत -हि० संज्ञा पु० [अक्षत] चावल (Ric

अखा–हि० संज्ञा पु० देखो-आखा।

अखाड़ा का भेद–द० अपामार्ग भेद।

अखात–हि० संज्ञा पु० बिना खुदाया हुआ स्वभा जलाशय ताल, झील खाड़ी (A natur lake)।

अखातम्–स० क्ली०
अखातः– सं० पु० } देवखात–हि०।

देवखाद-ब०। हेच० का० ४। पुष्करणी। अ (A natural lake)।

अखाद्य–हि० वि० [सं०] अभक्ष्य. खानेके अयो (uneatable)-इं०।

अखाव मियाअ–अर० छाल, त्वक। Bar इं०। सं० फा० इं०।

अखाव–अर, (पु० व०) छाल, त्वक (Bar इं०। सं० फा० इं०।

अखियारी–प० अरण्य गुलाब, बन गुलाब (wi rose)-इं०।

अखिल-हि० वि० [सं०] (१) सम्पूर्ण, समग्र, पूरा विलकुल, सब (whole) (२) अखण्ड सर्वांग पूर्ण ।

अखिलिका-सं० पु० करेली छोटी, क्षुद्रकारवेल्ली, उच्छे-बं० Akind of gourd (Momordica charantia, *Linn*)

अखीतहे जौइन्यह्-अ० ख्यालाते चश्म-फा० चक्षु-रोग विशेष जिसमें नेत्र के सामने चिनगारियाँ अथवा तारे दृष्टिगोचर होते हैं । मस्सी वोलिटेरन्डीज (Musce volitantes) इं० ।

अखीफ़-अ० जिसका एक नेत्र श्याम और दूसरा हरित या नील वर्ण युक्त हो ।

अखीरूस-यु० जङ्गली गेहूं के अतिरिक्त एक बूटी है जो जल के समीप उगती है ।

अखील-अ० अस्थिर, क्षण क्षण में रंग बदलने वाला (१) गिरगिट केमीलिअन (Chameleon) इ० । (२) एक रूमी कपड़ा है जो घंटा घटा पश्चात् रंग बदलता है । (३) एक प्रकार का पक्षी है, जिसके पैरों के बिभिन्न प्रकार के रंग होते हैं ।

अखीलस-यु० एक काविज (संकोचक) और शुष्क बूटी है (Anastringent and dry herb) ।

अखी-(खै) लूस यु० नानखाह, अजबाइन । (Carumptychotis, *D. C.*) अ० अन्तःस्थ चक्षुकोण-शोथ नेत्र के भीतरी कोये का शोथ । आब्सट्रक्शन आफ दी पंक्टा (Obstruct ion of the puncta)-इं० ।

अखुविष-स० पु० विन्दाल, घगरवेल, देवदाली-हि० (Laffa Echinata, *Roxb*) फा० इं० २ भा० ।

अखेटिकः-सं० पु० (१) वृक्ष पेड़ । (A tree in general) (२) शिकारी कुत्ता ।

अखेररी-प० कण्टींच, आखी, ढेरा ।

अखोट-को० अखरोट (Walnut) (Juglans regia) ।

अखोड-गु० अखरोट Walnut (Juglans regia) ।

अखोर-काश । अखरोट Walnut (Juglans regia) ।

अखोर-मोरनु-कना० सिहोर, सहोर-हि०, बम्ब० । शाखोटकः-स० । (Streblus Asper, *Linn*) इ० मे० मे० ।

अखोरी-प० कण्टींचा आखी, ढेरा-प० । -हि० संज्ञा पु० अकोला । अंङ्कोल ।

अखोला-अ ङ्कोल ।

अखोह-हि० संज्ञा पु० (सं० क्षोभ=असमानता) ऊंची नीची भूमि । ऊभड खाबड़ पृथ्वी । असम भूमि ।

अखंड-हि० वि० [सं० वि०] अखंडनीय अखंडित, (Unbrokenwhole, entire) (१) अटूट । जिसके टुकड़े न हों । अविच्छिन्न । सम्पूर्ण समग्र । समूचा । पूरा । (uninterruptedly) (२) लगातार । जिसका क्रम या सिलसिला न टूटे । जो बीच में न रुके । (३) बेरोक । निर्विघ्न ।

अखंडनीय-हि० वि० [सं०] (१) जिसके टुकड़े ने हो सके जिसका खंडन न हो सके । जो काटा न जा सके ।

अखंडल-हि० वि० [सं० अखंड]

अखंडित हिं० वि० [स०] (uubroKen) जिसके टुकड़े न हुये हों । अविच्छिन्न । विभाग रहित (२) सम्पूर्ण । समूचा । परिपूर्ण । पूरा । (३) निर्विघ्न । बाधा रहित । जिसमें कोई रुकावट न हो । (४) लगातार ।

अखंडित-ऋतु-हिं० वि० (Fruitful) जो ऋतु पर फल फूल दे ।

अख़्-अ० खंकार, खांसी, का शब्द, वेदनाशक खांसने का शब्द कफ (Cough) इं० ।

अख़्गोर-फा० अमरूद भेद (wildpear) । इं० हैं० गा० ।

अख़ज़-अ० गिरफ्त फा० । लेना, थामना, पकड़ना आशोब चश्म (आंख आना) गिरफ्तार होना

अख़ज़अ-अ० संकुचित ग्रैव लघुग्रैव बौना, ठिगना -हिं० । ड्वार्फ (Dwarf) पिग्मी (Pigmy)-इं० ।

अख्जर–अ० फा० । हरा हरी हिं० द० । हरित सं० हरित सं० । हरा सबुज–बं० । ग्रीन (Green) -इं० इतिब्बा (हकीम लोगों) ने इसकी ४ कक्षायें स्थिर की हैं यथा —(१) फुस्तकी यापिस्ती अर्थात् पीताभयुक्त हरितवर्ण (२) नील जी अर्थात् नीलगूँ नीलवर्ण (३) जञ्जारीया ज़ंगारी या मटियाला सब्जीमायल अर्थात् हरिता भयुक्त मटियाला और (४) गन्दने के सदृश हरित वर्ण ।

अख्जर–अ० कनखियों से देखने वाला ।

अखजुलबर्द–अ० शीत लगना, शीतल वायु लगना, वायु लगना, प्रतिश्याय । कोल्ड (Cold) केच कोल्ड (Catchcold)-इं० ।

अखजुल शम्स–अ० सिकनह् शम्सियह , लू लगन आतपाघात–हिं० । सन स्ट्रोक (Sunstroke) इन्शोलेशन (Insolation)– इं० ।

अख्ताबर–हिं० संज्ञा पुं० [फा०]
आख्ता–वह घोड़ा जिसे जन्म से अंडकोष की कौड़ी न हो । ऐसा घोड़ा ऐबी समझा जाता है ।

अख्नस–चपटी सपाट नाकवाला (Snab-nosed)

अखनियूस–यु० पालक (Spinacea oleracea *linn*) वा अख्नैमूस ।

अख्नैनूस–यु० एक अप्रसिद्ध बूटी है जो तर स्थानों तथा नहरों के किनारे पर उगती है ।

अख़नैमूस—फा० पालक

अख्फश–अ० खफ्श अर्थात् धुन्धा (दिवसांध) रोगी (Dayblind)

अख्फाक–फा० चान्दरेल इश्कपेचा (लताविशेष)

अख्बसान–अ० (१) मलमूत्र अर्थात् गूहमूत्र से संकेत है । (२) मुखदुर्गन्धि, एक्सक्रीमेण्टस् (Excrements) इं० ।

अख्म–अ० ललाट और भौं (भ्रू) की शिकन (बलखान) (Frown) ।

अख्माद–अ० ताप बुझाना, गर्मी मारना, आग की लौ दबाना, कमजोर करना ताप शमन करना ।

अख्रब–अ० बीरान मुकाम-उ० । निर्जन स्थान, उजाड़ -हिं० । तिब्ब की परिभाषा में कर्णफटा को कहते हैं अर्थात् यह व्यक्ति जिसका कान फटा हो ।

अख्रम–अ० जाइजाइदहे अख्रमियह नक्टा । छेदन शास्त्र की परिभाषा में नक्टा उभार, स्कन्धास्थि का वह उभार जो कन्धे की ऊंचाई बनाता है, अंसकूट । एक्रामिआंन प्राँसेंस् (Acromion Process)-इं० ।

अख्रस–अ० मूक, गुङ्ग, गूगा, । डम्ब (Dumb) –इं० ।

अख्रास–यु० नाशपाती, अमृतफल (Pyrus Communis, *Linn.*)

अख्रीज हब्बुल अस्फर–अ० कुसुम्भः, कुसुम (मभ) (Carthamus Tinctorius, *Linn*)

अख्रीत–अ० जंगली गंदना ।

अख्रीतूस–यु० जंगली करनब, करमकल्ला, गोभी भे (wild cabbage) ।

अख्लह–एक कटकयुक्त बूटी है जो बालिश्त के बराबर होती है । पुष्प नीले एवं श्वेत और पत्ते कठोर होते है ।

अख्लात–अ० (ब० व०) खिल्त (ए० ब०) यूनानी वैद्यक के मतानुसार खिल्त (दोष) चार हैं, यथा—सौदा (वात) सफरा (पित्त) बलगम (कफ, श्लेष्मा) और खून (रक्त) शारीरिक–द्रव (तरी) अर्थात् शरीर की वह चारों रतूबतें (तरी, स्निग्धता) जो भोजन के प्रथम परिवर्तन द्वारा उत्पन्न होती है । ह्यूम (Humoars) इं० ।

अख्लीलुल् मलिक-पं० अपभ्र० इकलीलुल्मलिक ताज बादशाही ।

अख्शम–अ० खश्म रोगी घ्राणज्ञ रोगी वह रोगी जिसकी घ्राणशक्ति नाश हो गई हो अर्थात् वस्तुओं के गन्ध को न मालूम कर सके । अनॉस्मैटिक (Anosmatic)-इं० ।

अख्स–अ० गोबर गू । डङ्ग (Dung) फीसे (Fœces) इं० ।

अख्समुलऐन–अ० पलकों के किनारों के मिलने का स्थान ।

अख्सीनह–जगली राई (Brassica Juncea *Willd*) ।

अग–हिं० संज्ञा पुं० [सं० अङ्ग] मूढ़ अनजान

अग, शरीर,–हिं० सं० पुं० [सं० अङ्गारी] ऊख के सिरे पर का पतला भाग जिसमें गाँठें बहुत पास २ होती है, और रस फीका होता है। अगौरा। अगौरी। वि० [सं० अज] मूढ़, अनजान, अनाड़ी। वि० सं० (१) न चलने वाला अचर। स्थावर। (२) टेढ़ा चलने वाला।

अगंड–हिं० सं० पु० (स०) धड़ से जिसके हाथ पैर कट गए हों।

अगः–स० पुं० (१) पहाड़, पर्वत हिं० (Mountain) (२) एक वृक्ष। (३) पत्थल (४) सर्प (५) सूर्य। पहाड़ आग्नेय व सौम्य गुण भेद से दो प्रकार के होते हैं। इनमें विन्ध्य पर्व्वत आग्नेय गुण युक्त और हिमालय सौम्य गुण युक्त हैं। आग्नेय गुण विशिष्ट पहाड़ों में होने वाली औषधियां अग्नि गुण विशिष्ट होती है, और सोमगुण विशिष्ट पर्व्वतों मेंहोने वाली औषधियां सोमगुण विशिष्ट होती है। भा० प्र०।

अगई–हिं० सज्ञा० पुं० (१) चलता की जाति का एक पेड़ जो अवध, बंगाल, मध्यदेश और मद्रास में बहुतायत से होता है। इसकी लकड़ी भीतर सफेदी लिये हुये लाल होती है जहाजों और मकानों में लगती है। इसका कोयला भी बहुत अच्छा होता है। इसके पत्ते दो दो फुट लम्बे होते हैं और पत्तल का काम भी देते हैं। इसकी कली और कच्चे फलों की तरकारी बनती है।

अगज-हिं० संज्ञा पु० पर्व्वत से उत्पन्न होने वाला। शिलाजीत।

अगजः–सं० प० (१) आर्द्र धनियां, नैपाली धनियां तुम्बुरु–हिं०। तुम्बुरु, आर्द्र धान्यकम्–सं०। कांचधनम्–बं०। Execariaagallocha (२) बन्दकः–स० बन्दा, बाँदा-हिं०। बांदड़ा। वरगाछा-बं० A parasiteplant(Epidendrum Tessellatum)।

अगजन–पं० झवानी बूटी। मे० मो०।

अगजम्–सं० क्लीं० शिलाजतु, शिलाजीत (Bitumen) र० मा०।

अगट–हिं० सज्ञा पुं० [देश] चिक वा मांस बेचने वाले की दूकान।

अगड़धत्ता–हिं० पुं० (१) द्रोण पुष्पी, गूमा। (२) हिं० वि० [अग्रोद्धत, बढ़ा चढ़ा] लम्बा तड़ंगा। ऊंचा (श्रेष्ठ) बढ़ा चढ़ा

अगड़ा–हिं० सज्ञा पु० (देश) ज्वार बाजरे आदि अनाजों की बाल जिसमें से दाना झाड़ लिया गया हो। खुखड़ी, अखरा।

अगण–हिं० वि० जिसकी गिनती न हो।

अगति–हिं० सज्ञा स्त्री० [सं०] (१) गति का उलटा (२) स्थिर व अचल पदार्थ।

अगतिक्–हिं० वि० [सं०] निराश्रय जिसकी कहीं गति वा पैठ न हो।

अगती–हिं० संज्ञा स्त्री० (१) चक्रमर्दक, चकौड़। दद्रुघ्न। दाद मर्दन। Cassia tora (२) अगस्तिया, अगस्त (Agati Grandiflora)।

अगत्ति–ता० गु०, मज्ञा० हिं० अगस्तिया, अगस्त्य वृक्ष Agati Grandiflora

अगतीहून–स० पुं० एक दवा है जो मय जड़ और पत्तों के ज्वर में दी जाती है। मु० आ०

अगथिया–हिं०
अगथियो–गु० } अगस्तिया, अगस्त का पेड़, अगस्त्य वृक्ष।

अगद–हिं० सज्ञा पुं०
अगदः–सं० पु० } (१) रोग रहित। Healthy (२) औषध। (Medicine) रा० नि० व० २०।

अगदम्–सं० क्ली० (१) आरोग्य, स्वस्थ, निरोग (Healthy) रा० नि० व० २०। वा० उ० ३५ अ० (२) प्रति-विष, विषघ्न औषध–हिं०। फ़ादे ज़हर–फा०। तिर्याक–अ०। Antidote इ०।

अगदङ्करः–
अगदङ्कारः– } –सं० पु० वैद्य, चिकित्सक (A physician)। रा० नि० व० २०।

अगदतन्त्र–
अगदतन्त्रम्– } स० क्लो० विष चिकित्सा विषयक तन्त्र, निखिल स्थावर व जंगम विष चिकित्सा विष

तन्त्र, (शास्त्र) । इल्मुस्सम्मियात् इल्मुस्सुमूम -अ० । टोक्सिकोलोजी (Toxicology) इं० यह शल्य आदि अष्टविध तन्त्रान्तर्गत वैद्यक का एक अंग विशेष है । जिसमें सर्प विच्छू आदि के विष से पीड़ित मनुष्य की चिकित्सा का विधान हो सु० सू० १ अ० ।

वह शास्त्र जिसमें विषों के वर्गीकरण, उनके मनुष्य शरीरावयवों पर होने वाले प्रभाव एवं लक्षण तथा उपचार और चिकित्सा व अगद प्रभृति का पूर्ण विवेचन किया जाय ।

अगदनस्यम्–स० क्लो० सर्पदष्ट प्रभृति विषयक नस्य विशेष, विष के नस्य (Sternutatory used in snake poisoning) सु० कल्प० ।

अगदाञ्जनम्–सं० क्ली० विष द्वारा मूर्च्छित हुए प्रभृति का अञ्जन, विषघ्न अञ्जन (Collyrium used as antidote to poison) सु० कल्प० ।

अगदेश्वरः–स० पुं० योग शुद्ध गन्धक १ भाग, पारद १ भा०, मैनशिल १ भा०, वर्क चांदी १ भाग, हरताल १ भाग, शुद्ध अभ्रक भस्म गंधक का चौथाई भाग, चूर्णकर इसमें हंसराज, घीकुँवार और नीबू के रस की सौ भावना दें फिर आतशी शीशी में रख बालुका यन्त्र द्वारा ३२ पहर की आंच दें ।

मात्रा—चना प्रमाण ।

गुण—यह उचित अनुपान से प्रत्येक रोगों को नष्ट करता है । र० यो० सा० ।

अगन–अ० मिनमिना वह व्यक्ति जो नकिया कर बात करे ।

अगन–हिं० संज्ञा स्त्री० (१) दे० अग्नि । (२) दे० अगण ।

अगनचश्मानोका–हिं० पु० आतशी शीशी, सूर्यकान्त मणि, अग्नि-गर्भ (The sun-stone) इं० ।

अगनशः–यम०, हजा०, नौसादर, नूसार । (Ammonii chloridum)

अगन्ना–उ० प० सू० धामन । मे० मो० ।

अगनाद–बं० वन लिक्किका, आकनादि सं० बं० । Stephania Hernandifolia । फा० इं० १ भा० ।

अगनी–हिं० संज्ञा स्त्री० दे० अग्नि । संज्ञा स्त्री० [स० अग्र] घोड़े के माथे पर की भौंरी वा घूमे हुये बाल ।

अगनीन–इ० जलीय ऊर्ण वसा (Adeps lanæ hydrosus; इं० मे० मे० ।

अगनीयूस–सिरि० किर्मिज दाना, मसूर के बराबर रक्त वर्ण का एक कीट है (Cochineal) देखो कोचनील ।

अगनीस–यु० निर्गुण्डी, सम्भालू हिं० । (Vitex negundo, *Linn*)

अगनू–
अगनेऊ–
अगनेत– } हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० आग्नेय, अग्नि कोण । आग्नेय दिशा ।

अगन्धखर्पर पपटी–स० स्त्री० योग—शुद्ध पारा १२ मासे, लौहभस्म १२ मासे दोनों की कज्जली करें पुनः थोड़े से घी में मन्दी आग पर पिघला कर विधिवत् गोबर के ऊपर केले के पत्र रख उस पर पिघली हुई कज्जली को डालकर ऊपर से दूसरे केले के पत्र से दाब दें । फिर भारंगी, सोंठ, अगस्तिया, त्रिफला, जयन्ती, निर्गुण्डी, त्रिकुटा, वासा, कुमारी इनके रस की ७-७ भावना देकर एक लघुपुट दें ।

गुण—उचित अनुपानों से समस्त रोगों को नष्ट करती है । पान, तुलसी के रस तथा गो मूत्र के साथ सेवन करने से श्वास और खाँसी का नाश होता है ।

मात्रा—१ रत्ती से २ रत्ती ।

अगन्धिकम्–सं० क्ली० संचल लवण–बं० । sochal salt भा० मध्य० । देखो सौवर्चलम् ।

अगम–हिं० वि० [स० अगम्य] (१) अथाह । (२) अलभ्य ।

अगमकी–हिं० स्त्री० बिलारी । म्युकिया स्कैब्रेला (Mukia scabrella, *Arn*), ब्रायोनिया स्कैब्रेला (Bryonia Scabrella *Linn*)–ले० । अहिल्यकम्, घण्टाली,–सं०

चिराती, बेल्लारी- सिं० । चिराती--मह० । ग्वाल ककड़ी--उ० प० सू० । मोसुमुस्की, मुसु मुसुक्काइ ता० । पुटेन -पुदिङ्ग, पोट्टी बुद्मु, नूघोस कुलतरू बु.म--ते० । मुक्कपिरी, मुक्कल-पीरम् मल० । ब्रिस्टली ब्रायोनी (Bristly Bryony) इं० ।

कुष्माण्ड वर्ग

(N. O. Cucurbitaceæ)

उत्पत्ति स्थान—समग्र भारतवर्ष ।

वानस्पतिक विवरण—पौधा लोमश, खुरदरा, (विषम तलीय), आधारकतन्तु (tendril) सामान्य, पत्र हृदाकार, खण्डयुक्त या कोणयुक्त पुष्प-लघ्वक्ष युक्त, जिसमें असख्य नरपुष्प होते हैं और पुष्प गुच्छाकार होता है । नारि पुष्प १ से ४, लघु, घण्टाकार और पीत वर्ण का बीज (Berry) वर्त्तुलाकार, पक्वावस्था में गम्भीर रक्त वर्ण का जिस पर लम्बाई की रुख श्वेत धारियां पड़ी रहती हैं, चिक्कना (समतल) अथवा कतिपय प्रहृष्ट रोमों से व्याप्त होता है । फल एवं पौधा स्वाद में कटु होते हैं । फल अक्टूबर से दिसम्बर मास तक परिपक्व होते हैं ।

इतिहास व गुणधर्म आदि—डाइमोंक एन्सली के वर्णनानुसार इसका दाक्षिणात्य सस्कृत नाम अहिल्यकम् है जो स्पष्टतया अहिलेखन का अपभ्रंश है । इसके फल पर सर्पाकार श्वेत धारियां पड़ी रहती हैं इस कारण इसका उक्त नाम भी उचित ही है ।

इसका तथा शिवलिङ्गी (Bryonia Lac, iniosa) का दूसरा सस्कृत नाम दो प्रयोग में आता हुआ देख पड़ता है । वह घण्टाली है जिसका अर्थ "सूत्र में एक पंक्ति में पिरोई हुई घण्टियां" हैं जैसा कि नर्तक कुमारी गण नृत्य काल में पहनती हैं । यह नाम भी उपर्युक्त सादृश्यता के कारण ही रखा गया है ।

यह पौधा साधारण भेदक एवं आमाशय बलप्रद है । इसका शीत कषाय अर्द्ध प्याली की मात्रा दिन में दो बार दिया जाता है । यह अब उन्हीं आशयों के लिये व्यवहार में आती है तथा यह उन मिश्रणों में जो बालकों को दी जाती है, प्रविष्ट होती है । एन्सली ।

यह मूत्रल है—र्‌हीडी ।

बीज का क्वाथ तीव्र स्वेदक है । इसकी जड़ द्वारा निर्मित क्वाथ आध्मान में हितकर है तथा जड़ को दंत से चर्वण करने से यह दतशूल को लाभ पहुँचाती है । वैट ।

कोमल अंकुर एवं तिक्त पत्र सामान्य सारक प्रभाव करते हैं और डाक्टर पीटर (Watts' dictionary) शिरोऽर्ति या शिर चकराने और पित्त विकार में प्रयोग करने की शिफारिश करते हैं ।

यह दवा कुछ मिश्रित योगों का एक अवयव है जो कफयुक्त (मुख्य लक्षण) पुरातन रोगों में व्यवहृत है । सम्भवतः इसके श्लेष्म निस्सारक प्रभाव के कारण ही ऐसा किया जाता है । इं० मे० मे० ।

अगमन—हिं० क्रि० वि० [सं० अग्रवान] आगे । पहिले । प्रथम । आगे से, पहिले से ।

अगमनीया—हिं० वि० स्त्री० [सं०] न गमन करने योग्य (स्त्री०), जिस (स्त्री) के साथ सम्भोग करने का निषेध हो ।

अगम्य—हिं० वि० [स०] (Unapproachable) न पहुँचने योग्य ।

अगम्या—हि० वि० स्त्री० [सं०] न गमन करने योग्य (स्त्री) मैथुन के अयोग्य स्त्री ।

संज्ञा स्त्री० न गमन करने योग्य स्त्री । वह स्त्री जिसके साथ सम्भोग करना निषिद्ध है । जैसे—गुरुपत्नी, राजपत्नी, इत्यादि । (A woman not deserving to be approached for cohabitation)

अगम्यागमन—हि० संज्ञा पुं० [सं०] अगम्या स्त्री से सहवास । उस स्त्री के साथ मैथुन जिसके साथ सम्भोग का निषेध हो । जैसे—गुरुपत्नी, राजपत्नी, मित्रपत्नी, माता, बहिन इत्यादि ।

अगम्यागामी—हि० संज्ञा पु० [सं० अगम्यागामिन] (Practisingillicit intercourse)

अगम्या स्त्री से सम्भोग करने वाला।

अगया
अगयाघास } –हि० (१) रोहिषतृण, गन्धतृण, भूतृण Andropogon Schoeranthus *Linn* फा० इं० ३ भा०। इं० मे० मे०। देखो अगिया। (१) जल धनियाँ, देवकाँडर हिं०। स्वरूप-हरा। स्वाद–कड़ुआ और तीखा। पहिचान–प्रसिद्ध बूटी है। रासायनी लोग इसको ढूढ़ने में बहुत रहते हैं। प्रकृति—तीसरी कक्षा में गरम और दूसरी कक्षा में रूक्ष है। हानिकर्ता—त्वचा को और खुजली उत्पन्न करती है। दर्पनाशक मुर्दासंग और गाय का घी। मात्रा—२ रत्ती। गुणकर्म-प्रयोग—(१) यदि इसके स्वरस में चालीस दिन गन्धक भिगोकर धूप में रक्खे फिर उस गन्धक को २ रत्ती पान में रखकर खाएँ तो अत्यन्त क्षुधा लगती है, (२) अति कामोद्दीपन कर्ता, (३) यदि वंग को इसके स्वरस में भस्म करें तो श्वास कास को अत्यन्त गुण करती है और किसी प्रकार का अवगुण नहीं करती (निर्विषैल) वु० मु०।

अगर–हि० संज्ञा पु० काली अगर, अगर स्त। अगरु अगुरु, वंशिक, राजार्हम्, लोह, कृमिजं, क्रिमिजं, जोङ्गकं, [अ०], आनार्य्यजं, [हे०], बंशकं, [हा०], लघु, पिच्छिलं [के०], भृङ्गजं, कृष्ण, लोहाख्य अर्थात् लोहे के सम्पूर्ण नाम [र०] रातकं, वर्णप्रसादनं, अनार्यकं, असारं, अग्निकाष्ठं, क्रिमिजग्धं और काष्ठकं, लोह, प्रवर योगजं, पातकम्, क्रिमिजम् सं०। अगरु, अगुरचन्दन, आगु–बं०। ऊद, ऊदुलबखु, ऊदे ग़र्क़ी, अगरे हिन्दी–अ०, फा०। एक्विलेरिया एगेलोका Aquilaria agallocha, *Roxb*) ए० मलाकेन्सिस (A. Malacc ensis, *Lamb*) ए० ओ वेटा (A O vata)–ले०। एलोवुड Aloewood, ईगलवुड Eagle wood–इं०। वायस डी कैलम्बक (Boisde Calambac)–फ्रां०। अगर, अगलीचन्दन ता०। हल्गुहचेट्टु–ते०। कृष्णागरु, अगरु–ता० ते०, कना०। कृष्णागरु शिशवाचे झाड़–म०। अगरू–गु०। अक्यन–बर०। आकिल-मलाय०। हागलगन्ध-तु०। चिन-हि-अंगचीन। गय क्यागहरू–मल०। सासी–आसा०।

थाईमलेसीई वर्ग
(N. O. thymelaceæ)

उत्पत्ति स्थान—आसाम, पूर्वी हिमालय पश्चिमीमलय पर्वत, खसिया पर्वत, भूटानसिक्किम टिपेरा पहाड़ी, मर्तबान पहाड़ी, पूर्वी बंगाल और दक्षिण प्रायद्वीप, मलक्का और मलाया द्वीप।

नोट—आसाम प्रदेश प्राचीनकाल से अगुरु वृक्ष की जन्मभूमि होने के लिये विख्यात है। रघु दिग्विजय वर्णन काल में कालिदास लिखते हैं—

चकम्पे तीर्णलौहित्ये तस्मिन् प्राग् ज्योतिषेश्वरः
तद्गजालानतां प्राप्तैः सह कालागुरु द्रुमैः
(रघु०, ४र्थ सर्ग

इतिहास–अगर का सुगन्धि तथा औषध तुल्य उपयोग आज का नहीं वरन् अत्यन्त प्राचीन है। इसकी प्राचीनता का पता तो केवल एक इसी बात से लग सकता है कि इसका वर्णन सभी प्राचीन आयुर्वेदीय ग्रंथों–सुश्रुत, चरक आदि में आया है। इतना ही नहीं प्रत्युत लोबान और तेजपात प्रभृति के साथ अह्लोट तथा अह्लीम नाम से इसका जिकर यहूदी धर्म ग्रंथों में भी पाया जाता है। (साम ४५ ८, कहा० ७ १३ डीसकूरीदूस (Dioscorides) के कथनानुसार यह भारतवर्ष एवं अरब से यूरूप में लाया गया। ईटियस (ætius) से पश्चात्कालीन लेखकों ने एलोवुड (Aloe wood) नाम से इस औषध का उल्लेख किया है, और इसी नाम से यह अब तक युरूप में प्रसिद्ध है। अगर का संस्कृत नाम अनार्य्यज या अनार्य्यक है। अस्तु विलियम डाइमाक महोदय का निश्चय है कि भारतीयों से प्रथम कदाचित पूर्वी एशिया के मूल निवासियों को इसके उपयोग का ज्ञान हुआ। प्राचीन समयमें खुश्की के रास्ते यह मध्य एशिया और फारस में लाया गया और वहां से अरब और यूरूप में पहुंचा। राजनिघण्टुकार ने कृष्णा

गुरु (काला अगर), काष्टागुरु (पीली अगर) दाह काष्ठम् दाहाग (गु) रू (गुर्जर देश प्रसिद्ध अगरु विशेष) तथा स्वाद्वगुरु (मङ्गल्यागुरु, मधुर रसागुरु, कदार देश प्रसिद्ध अगर) नाम से इसे पांच प्रकार का लिखा है। निघण्टुकार के मत से मङ्गल्यागरु श्रेष्ठ है। विस्तृत विवरण के लिये उन उन नामों के अन्तर्गत देखिए।

भावप्रकाशकार—इसके चार प्रकार के भेदों को स्वीकार नहीं करते। ऐसा विदित होता है कि अरब यात्रियों ने इसके व्यापार एवं उत्पत्ति स्थान के सम्बन्ध में काफी समाचार संग्रह किए हैं।

याहन्ना बिन-सेरापियन—ने हिन्दी, मंडली सिन्फी और कमारी नाम से इसके चार भेदों का वर्णन किया है। दसवीं शताब्दी में इब्नसीना इसके सम्बन्ध में निम्न विवरण देते हैं—मंडली हिन्दी या (पहाड़ी) समंदूरी, कमारी, सन्फी और काकुली, किस्मूरी ये दोनों मृदुल मधुर होती हैं। इनमें से सबसे खराब प्रकार हलाई कम्ताई, मन्ताई, लबथी या रत्ताथी है। मंडली सर्वोत्तम है. इसके बाद समंदूरी धूसरवर्ण युक्त, वसामय एवं तैलीय भारी श्वेत धारियों से रहित और धीरे धीरे जलने वाली होती है। कोई-कोई भूरी से काली अगर को उत्तम ख्याल करते और सब से अधिकतर काली, श्वेत धारी रहित वसामय तैलीय और धीरे धीरे जलने वाली 'कमारी' होती है। संक्षेप में सर्वोत्तम अगर वह है जो काली, भारी, जल में डूबने वाली, चूर्ण करने पर रेशा रहित हो, तथा जो जल में न डूबे वह अच्छी नहीं। अरब यात्री भी अगर को लगभग उन्हीं नामों से पुकारते हैं।

और मुहम्मद हुसेन—[१७७०] लिखते है—"ऊद जिसे हिन्दीमें अगर कहते हैं, वह एक लकड़ी है जो कि सिलहट के निकट जन्तिया की पहाड़ियों में उत्पन्न होती है। ये वृक्ष बंगाल से दक्षिणस्थ टापुओं में भी जो कि विषुवत् रेखा के उत्तर में स्थित है, पाये जाते है। इसके वृक्ष बहुत ऊंचे होते हैं। और प्रकाण्ड एवं शाखाए वक्र होती हैं और काष्ठ मृदु होता है। इसकी लकड़ी से घड़ी ख्याले तथा अन्य वर्तन बनाते थे। यह सड़ता गलता भी है और इस दशा में विकृत भाग सुगंधयुक्त द्रव्य से व्याप्त हो जाता है। अतः उक्त परिवर्तन लाने के लिये इसे नम पृथ्वी गर्त में गाड़ देते हैं। अगर के जिस भाग में उक्त परिवर्तन आ जाता है यह तेलयुक्त भारी एवं काला हो जाता है। पुनः इसे काटकर पृथक् कर जल में डाल देते है। इसमें जो जलमें डूब जाता हैं उसे ग़र्की (डूबने वाला) जो आंशिक जल मग्न होता है उसे नीम ग़र्की (आधा डूबने वाला) या समालहे आला और जो तैरता रहता है उसे समालह कहते है। इनमें से अन्तिम सर्व सामान्य होता है। ग़र्की काला होता है तथा अन्य काले और हलके धूसर वर्ण के होते है।

औषध कार्य के लिये ऊदे ग़र्की, जो सिलहट से प्राप्त होता है, सर्वोत्तम होता है। इसे तिक्त सुगंधमय तैलीय तथा किञ्चित् कषैला होना चाहिये, इससे भिन्न निम्न कोटि के ख्याल किये जाते हैं। चूंकि ऊद की लकड़ी को कुचल कर जल में भिगोकर अथवा इसे बादाम के साथ मिलाकर पुनः कुचल दबाकर इसका तेल निकाल लेते है, इस लिये योगों में प्रायः ऊते खाम (कच्चा ऊद) ही लिया जाता है। और क्योंकि "चूरा अगर" नाम से अगर के टुकड़े भारतीय व्यापारिक द्रव्य है, अस्तु इसमें चन्दन, तगर अथवा एक सुगन्धित काष्ठ के टुकड़े मिला दिये जाते हैं।

रांग्ज़वर्ग तथा अन्य बनस्पति शास्त्रियों ने सिलहट में अक्विलेरिया (aquilaria) अर्थात् अगर की परीक्षा की और हाल ही में यह निश्चय किया कि यह मर्गुई आर्चिपलेगो द्वीपों में उत्पन्न होने वाले एक वृक्ष की लकड़ी है। गैम्बल (Gamvle) के कथनानुसार इसका बर्मी नाम 'अक्यायु" है और यह टेनासरम तथा मर्गुई आर्चिपलेगो में उत्पन्न होता है।

अगर (aloe wood) धूप देने के लिये अथवा सुगन्ध हेतु समस्त पूर्वीय देशों में

अगम्या स्त्री से सम्भोग करने वाला।

अगया
अगयाघास } –हि० (१) रोहिषतृण, गन्धतृण, भूतृण Andropogon Schoeranthus *Linn* फा० इं० ३ भा०। इं० मे० मे०। देखो अगिया। (१) जल धनियाँ, देवकाँडर हिं०। स्वरूप-हरा। स्वाद–कड़ुआ और तीखा। पहिचान–प्रसिद्ध बूटी है। रासायनी लोग इसको ढूंढने में बहुत रहते हैं। प्रकृति—तीसरी कक्षा में गरम और दूसरी कक्षा में रूक्ष है। हानिकर्ता—त्वचा को और खुजली उत्पन्न करती है। दर्पनाशक मुर्दासंग और गाय का घी। मात्रा—२ रत्ती। गुणकर्म-प्रयोग—(१) यदि इसके स्वरस में चालीस दिन गन्धक भिगोकर धूप में रक्खे फिर उस गन्धक को २ रत्ती पान में रखकर खाएँ तो अत्यन्त सुरा लगती है, (२) अति कामोद्दीपन कर्ता, (३) यदि वंग को इसके स्वरस में भस्म करें तो श्वास कास को अत्यन्त गुण करती है और किसी प्रकार का अवगुण नहीं करती (निर्विषैल) बु० मु०।

अगर–हि० संज्ञा पु० काली अगर, अगर स्त। अगरु अगुरु, वंशिक, राजार्हम्, लोह, कृमिजं, क्रिमिजं, जोङ्गकं, [अ०], आनार्य्यजं, [हे०], वंशकं, [हा०], लघु, पिच्छिलं [के०], भृङ्गजं, कृष्ण, लोहाख्य अर्थात् लोहे के सम्पूर्ण नाम [र०] रातकं, वर्णप्रसादनं, अनार्यक, असारं, अग्निकाष्ठं, क्रिमिजग्धं और काष्ठकं, लोह, प्रवर योगजं, पातकम्, क्रिमिजम् सं०। अगरु, अगुरचन्दन, आग्रु–बं०। ऊद, ऊदुलबखूर, ऊदे ग़र्क़ी, अगरे हिन्दी–अ०, फा०। एक्विलेरिया एगेलोका Aquilaria agallocha, *Roxb*) ए० मलाकेन्सिस (A. Malacc ensis, *Lamb*) ए० ओ वेटा (A O vata)–ले०। एलोवुड Aloewood, ईगलवुड Eagle wood–इं०। वायस डी कैलम्बक (Boisde Calambac)–फ्रां०। अगर, अगलीचन्दन ता०। हल्गुहचेट्टु–ते०। कृष्णागरु, अगरु–ता० ते०, कना०। कृष्णागरु शिशवाचे झाड–म०। अगरू–गु०। अक्यन–बर०। आकिल-मलाय०। हागलगन्ध-तु०। चिन-हि-अंगचीन। गह क्यागहरू–मल०। सासी–आसा०।

थाईमलेसीई वर्ग
(N. O. thymelaceæ)

उत्पत्ति स्थान—आसाम, पूर्वी हिमालय पश्चिमीमलय पर्वत, खसिया पर्वत, भूटानसिक्किम टिपेरा पहाड़ी, मर्तबान पहाड़ी, पूर्वी बंगाल प्रांत दक्षिण प्रायद्वीप, मलक्का और मलाया द्वीप।

नोट—आसाम प्रदेश प्राचीनकाल से अगुरु वृक्ष की जन्मभूमि होने के लिये विख्यात है। रघु दिग्विजय वर्णन काल में कालिदास लिखते हैं—

चकम्पे तीर्णलौहित्ये तस्मिन् प्राग् ज्योतिषेश्वरः
तद्गजालानतां प्राप्तैः सह कालागुरु द्रुमैः।
(रघु०, ४र्थ सर्ग

इतिहास–अगर का सुगन्धि तथा औषध तुल्य उपयोग आज का नहीं वरन् अत्यन्त प्राचीन है। इसकी प्राचीनता का पता तो केवल एक इसी बात से लग सकता है कि इसका वर्णन सभी प्राचीन आयुर्वेदीय ग्रंथों–सुश्रुत, चरक आदि में आया है। इतना ही नहीं प्रत्युत लोबान और तेजपात प्रभृति के साथ अहलोट तथा अगलीम नाम से इसका जिकर यहूदी धर्म ग्रंथों में भी पाया जाता है। (साम ४५ ८, कहा० ७ १४ डीसकूरीदूस (Dioscorides) के कथनानुसार यह भारतवर्ष एवं अरब से यूरूप में लाया गया। ईटियस (Ætius) से पश्चात्कालीन लेखकों ने एलोवुड (Aloe wood) नाम से इस औषध का उल्लेख किया है, और इसी नाम से यह अब तक युरूप में प्रसिद्ध है। अगर का संस्कृत नाम अनार्य्यजं या अनार्य्यक है। अस्तु विलियम डाइमाक महोदय का निश्चय है कि भारतीयों से प्रथम कदाचित पूर्वी एशिया के मूल निवासियों को इसके उपयोग का ज्ञान हुआ। प्राचीन समयमें खुश्की के रास्ते यह मध्य एशिया और फारस में लाया गया और वहां से अरब और यूरूप में पहुंचा। राजनिघण्टुकार ने कृष्णा

गुरु (काला अगर), काष्टागुरु (पीली अगर) दाह काष्ठम् दाहाग (गु) रू (गुर्जर देश प्रसिद्ध अगरु विशेष) तथा स्वादुगुरु (मङ्गल्यागुरु, मधुर रसागुरु, कदार देश प्रसिद्ध अगर) नाम से इसे पांच प्रकार का लिखा है। निघण्टुकार के मत से मङ्गल्यागरु श्रेष्ठ है। विस्तृत विवरण के लिये उन उन नामों के अन्तर्गत देखिए।

भावप्रकाशकार—इसके चार प्रकार के भेदों को स्वीकार नहीं करते। ऐसा विदित होता है कि अरब यात्रियों ने इसके व्यापार एवं उत्पत्ति स्थान के सम्बन्ध में काफी समाचार संग्रह किए हैं।

याहन्ना बिन-सेरापियन—ने हिन्दी, मंडली सिन्फी और कमारी नाम से इसके चार भेदों का वर्णन किया है। दसवीं शताब्दी में इब्नसीना इसके सम्बन्ध में निम्न विवरण देते हैं—मंडली हिन्दी या (पहाड़ी) समंदूरी, कमारी, सन्फी और काकुली, किस्मूरी ये दोनों मृदुल मधुर होती हैं। इनमें से सबसे खराब प्रकार हलाई कम्ताई, मन्ताई, लबथी या रब्तथी है। मंडली सर्वोत्तम है, इसके बाद समंदूरी धूसरवर्ण युक्त, वसामय एवं तैलीय भारी श्वेत धारियों से रहित और धीरे धीरे जलने वाली होती है। कोई-कोई भूरी से काली अगर को उत्तम ख्याल करते और सब से अधिकतर काली, श्वेत धारी रहित वसामय तैलीय और धीरे धीरे जलने वाली 'कमारी' होती है। संक्षेप में सर्वोत्तम अगर वह है जो काली, भारी, जल में डूबने वाली, चूर्ण करने पर रेशा रहित हो, तथा जो जल में न डूबे वह अच्छी नहीं। अरब यात्री भी अगर को लगभग उन्हीं नामों से पुकारते हैं।

और मुहम्मद हुसेन—[१७७०] लिखते हैं—"ऊद जिसे हिन्दीमें अगर कहते हैं, वह एक लकड़ी है जो कि सिलहट के निकट जन्तिया की पहाड़ियों में उत्पन्न होती है। ये वृक्ष बंगाल से दक्षिणस्थ टापुओं में भी जो कि विषुवत् रेखा के उत्तर में स्थित है, पाये जाते हैं। इसके वृक्ष बहुत ऊंचे होते हैं। और प्रकाण्ड एवं शाखाएं वक्र होती हैं और काष्ठ मृदु होता है। इसकी लकड़ी से घड़ी प्याले तथा अन्य वर्तन बनाते थे। यह सड़ता गलता भी है और इस दशा में विकृत भाग सुगंधयुक्त द्रव्य से व्याप्त हो जाता है। अतः उक्त परिवर्तन लाने के लिये इसे नम पृथ्वी गर्त में गाड़ देते हैं। अगर के जिस भाग में उक्त परिवर्तन आ जाता है यह तेलयुक्त भारी एवं काला हो जाता है। पुनः इसे काटकर पृथक् कर जल में डाल देते है। इसमें जो जलमें डूब जाता हैं उसे ग़र्की (डूबने वाला) जो आंशिक जल मग्न होता है उसे नीम ग़र्की (आधा डूबने वाला) या समालहे आला और जो तैरता रहता है उसे समालह कहते है। इनमें से अन्तिम सर्व सामान्य होता है। ग़र्की काला होता है तथा अन्य काले और हलके धूसर वर्ण के होते है।

औषध कार्य के लिये ऊदे ग़र्की, जो सिलहट से प्राप्त होता है, सर्वोत्तम होता है। इसे तिक्त सुगन्धमय तैलीय तथा किञ्चित् कषैला होना चाहिये, इससे भिन्न निम्न कोटि के ख्याल किये जाते हैं। चूंकि ऊद की लकड़ी को कुचल कर जल में भिगोकर अथवा इसे बादाम के साथ मिलाकर पुनः कुचल दबाकर इसका तेल निकाल लेते है, इस लिये योगों में प्रायः ऊते खाम (कच्चा ऊद) ही लिया जाता है। और क्योंकि "चूरा अगर" नाम से अगर के टुकड़े भारतीय व्यापारिक द्रव्य है, अस्तु इसमें चन्दन, तगर अथवा एक सुगन्धित काष्ठ के टुकड़े मिला दिये जाते हैं।

राक्सबर्ग तथा अन्य बनस्पति शास्त्रियों ने सिलहट में अक्वियलेरिया (aquilaria) अर्थात् अगर की परीक्षा की और हाल ही में यह निश्चय किया कि यह मर्गुई आर्चिपलेगो द्वीपों में उत्पन्न होने वाले एक वृक्ष की लकड़ी है। गैम्बल (Gamble) के कथनानुसार इसका बर्मी नाम 'अक्यायु" है और यह टेनासरम तथा मर्गुई आर्चिपलेगो में उत्पन्न होता है।

अगर (aloe wood) धूप देने के लिये अथवा सुगन्ध हेतु समस्त पूर्वीय देशों में

व्यवहृत है और पूर्वकाल में वह यूरुप में उन्हीं व्याधियों के लिये व्यवहार में आता था जिसके लिये आज भी यह भारतवर्ष में प्रयुक्त होता है। एक पेड़ जिसकी लकड़ी सुगन्धित होती है, इसकी ऊंचाई ६० से १०० फुट और घेरा १ से ८ फुट तक होता है। जब यह बीस वर्ष का होता है तब इसकी लकड़ी अगर के लिये काटी जाती है। पर कोई कोई कहते है कि ५० या ६० वर्ष के पहिले इसकी लकड़ी नहीं पकती। पहिले तो इसकी लकड़ी बहुत साधारण पीले रंग की और गंध रहित होती है पर कुछ दिनों में धड़ और शाखाओं में जगह जगह एक प्रकार का रस आ जाता है जिसके कारण उन स्थानों की लकड़ियां भारी होजाती है इन स्थानोंसे लकड़ियां काट दी जाती है और अगर के नाम से विकती है यह रस जितना अधिक होता है उतनी ही लकड़ी उत्तम और भारी होती है। पर ऊपर से देखने से यह नहीं जाना जा सकता कि किस पेड़ में अच्छी लकड़ी निकलेगी। बिना सारा पेड़ काटे इसका पता नहीं लग सकता। एक अच्छे पेड़ में ३००) तक का अगर निकल सकता है। पेड़ का हलका भाग, जिसमें यह रस वा गोंद कम होता हैं, धूप कहलाता हैं और सस्ता अर्थात् १) २) रुपए सेर विकता है। पर असली काली लकड़ी जो गोंद अधिक होने के कारण भारी होती है गरकी कहलाती है और १६) या २०) सेर की विकती है। यह पानी में डूब जाती है। लकड़ी का बुरादा धूप, दशांग आदि में पड़ता है। बम्बई में जलाने के लिये इसकी अगर बत्ती बहुत बनती है। सिलहट में अगर का इत्र बहुत बनता है। चोवा नामक सुगंध इसी से बनता है।

वानस्पतिक वर्णन—अगर के बेडौल टुकड़े होते हैं जो उनमें राल के परिमाणनुसार धूसर या गहरे धूसर वर्ण आदि विभिन्न रंगों के होते हैं। हलके तथा गहरे दोनों रंगों के टुकड़े लम्बाई की रुख गहरे रंग के नसों से चित्रित होते हैं, ये जल में डालने से जलमग्न हो जाते हैं। इसे चबाने से ये दांतों में चिपट जाते हैं। तथा मृदु प्रतीत होते हैं। स्वाद—तिक्त तथा सुगंध युक्त। जलाने से इ में से ग्राह्य गंध आती है।

प्रयोगांश—काष्ठ।

रसायनिक संगठन—एक उड़न शील जो ईथर में बिलेय होता है- दूसरा राल जो सार (अलकोहाल) में घुलनशील तथा ईथर अन घुल होता है।

औषधि निर्माण—क्वाथ (१० में १ मात्रा— ४ से १२ ड्राम। चूर्ण तथा कल्क औ औषधियों से युक्त पाक आदि मात्रा—१० से रत्ती। तैल—३० से ६० बूंद।

गुणधर्म तथा उपयोग

आयुर्वेदीय मतानुसार—अगर शीत, प्रशा और कासघ्न हैं। च०।

अगर वात-कफहर, वर्णप्रसादक (देह का सुधारने वाला) खुजली नाशक और कुष्ठनाश है। अगर की लकड़ी को जल में औटाकर पानी को पीने से ज्वर में लगने वाली तृषा नष्ट होती है और यह मृगी एवं उन्माद आदि रोग में परमोपयोगी है। सु०।

अगर तिक्त, उष्ण, चरपरा लेप करने से रूप उत्पन्न करने वाला त्वचा को हितकर- तीक्ष्ण कारक और हलका है। तथा व्रण कफवात व मुख रोग एवं चक्षु और कर्ण रोग नाश क वाला है। रा० नि० व० १२। वा० चि० ४ अ जो अगर काले रंग का होताहै उसे कृष्णागुरुकहते यह अधिक गुण वाला और लोहे के सदृश पा में डूब जाता है। अगर से बनाये हुये तैल में काले अगर के ही सदृश ही गुण हैं। भा० व० व०। अगर गन्ध-गरम तिक्त कटु स्निग्ध मंग दायक रुचिकारी धूप के योग्य पित्त जनक ती है तथा वात कफ कर्ण रोग और कोढ़ का न करता है। लेप में और लगाने में श्रेष्ठ है। रा० नि०।

वक्तव्य

इस देश में अति प्राचीनकाल से अनुलेपन औषध रूप से अगर व्यवहार में आ रहा है। च चरक सूत्र स्थान ३४ अ० में शिरोलेपना एवं अ

हर प्रलेप में अगरु का उल्लेख दिखाई पड़ता है।

चरकोक्त शीत ऋतुचर्या में अगर के अनुलेपन का उपदेश किया गया है सुश्रुत में व्रणधूपन द्रव्यों के मध्य अगर का पाठ दिया है। (सु० ६ अ०)। अगर का तेल पीत वर्ण का एवं अगर के समान गंध वाला होता है। भावप्रकाश कार लिखते हैं। अगर के तेल का गुण कृष्णागुरु अर्थात् काले अगर के समान है- यथा:—

"अगुरु प्रभवः स्नेहःकृष्णागुरुसमोमतः।"

उत्तम अगर की लकड़ी को जल से घिस कर शरीर में लगाने से उसका वर्ण उज्ज्वल हो जाता है इसी लिये इसका एक नाम "वर्ण प्रसादन" है।

यूनानी मत के अनुसार—प्रकृति दूसरी कक्षा में गरम और तीसरी कक्षा में रूक्ष है। किसी २ के मतानुसार २ कक्षा में गरम व रुक्ष है। हानिकर्त्ता—उष्ण प्रकृति को इसका पीना और धूनी देना। दर्पघ्न—गुलाब, कपूर सिकंजबीन प्रतिनिधि—दालचीनी, लौंग केशर चन्दन, वालछड़ रूमी मस्तगी।

गुण धर्म प्रयोग—(१) हलकी अपनी सुसन्धित एवं प्रकृतोष्मा से प्राण वायु को बलप्रद होने के कारण आमाशय यकृत हृदय तथा इंद्रियों को बल देता है और इसीकारण मस्तिष्क के लिये अत्यन्त लाभदायक है, (२) अपनी सूक्ष्मता एवम् ऊष्मा से रोधोद्घाटक है, (३) इसका चबाना मुख को सुगंधि प्रदान करता हैं। (४) वायु लयकारक है। त० नफी० (५) हृदय को प्रसन्न करता है। (६) वात तन्तुओं को बलप्रद (७) पक्वाशय और आंत्र को बलप्रद, (८) गर्भाशय की शीतता, को लाभ कर्त्ता, (९) आजप्रद और हृदय की व्याकुलता का नाशक है।

अगर के सम्बन्धमें नव्यमत—सुगंध हेतु चूर्ण रूप में तथा उत्तेजक पित्त निस्सारक एवम् रोधोद्घाटक प्रभाव के लिये इसका आभ्यन्तरिक उपयोग होता है।

अनेक नाड़ी बलदायक वायुनिःसारक तथा उत्तेजक औषधियों का यह एक अवयव है। निक्रस (Gout) तथा संधिवात में एवं यमन निग्रह हेतु भी इसका उपयोग होता है। अस्र चिकित्सा सम्बन्धी व्रण एवं क्षतों की वेदना शमनार्थ इसको अंगमर्द प्रशमन धूनी रूप से उपयोग में लाते है। बालकों की खांसी में अगर तथा ईश्वरी (Indian birth wort) के कल्क को ब्राण्डी के साथ वक्षःस्थल पर लगाते है। शिरःशूल में इसे शिर में लगाते है। धूप बत्तियों के बनाने में भी यह प्रयुक्त होता है इसे अगर की बत्ती कहते हैं।

जवारस ऊद में भी यह पड़ता हैं (अस्तु, देखो-जवारस) इसकी मात्रा १० से ३० रत्ती तक है गुण—शुक्र सम्बन्धी निर्बलता, शिर में चक्कर आना तथा श्वेतप्रदर में यह नाड़ी को बल दायक औषध है। इं० मे० मे०।

अगर—फा० सुरीन, चूतड़—उ० । नितम्ब-हिं० । (Hip)

अगर अगर—ज़ङ्गा० (१) चीनी घास—भा० वा० बम्ब० दरिया की घास, पाची मोस—द० । समुदपु-पाची, समुद्रपु-पाची-ते० । अगर-अगर सिं० । सीलोन मोस (Ceylon moss) एडिबूल मांस (Edible moss), सी वीड्स (Seaweeds)—इं० । ग्रेसिलेरिया लाडकेनाइडीज़ (Gracilaria lichenoides *Grev*) कडल् पाचि-ता० । कियाबू वाएड्—वर० । ग्रेसिलेरिस कानफर्वाईडीज (Gracilaria sconfervoides, *Grev*)—ले० ।

शैवाल जाति

(Algee or sea weed)

उत्पत्ति स्थान—लंका का स्थिर समुद्री भाग तथा हिंद महासागर।

वानस्पतिक वर्णन -अगर अगर श्वेताभायुक्त या पीताभायुक्त श्वेत शाखी तन्तुमय जलीय पौधा है जो कई इञ्च लम्बा (अश्वकेशकृत वेगनी) होता है। आधार पर बृहत्तन्तु कुक्कुट पक्ष से अधिक

मोटे नही होते, लघु तन्तु सीने के सूत्र के लग भग मोटे होते है। नगी आंखों से वे तन्तु करीब करीब वेत्रनाकार प्रतीत होते हैं। परन्तु सूक्ष्म दर्शकयत्र से देखने पर वे लहरदार या झुर्री युक्त दीख पड़ते है। शाखक्रम कभी कभी युग्म (Dichotomous) होता है। और कभी अयुग्म। शुष्कावस्था में सूक्ष्म वृत्ताकार कोष (Coccidia) अत्यक्ष रहते है किन्तु आर्द्र होने पर स्पष्ट रूप से तत्क्षण दीख पड़ते हैं। वे करीब २ खाखस बीजाकार वा अर्द्धवृत्ताकार होते है और उनमें सूक्ष्म आयताकार (रत्नाकार) गंभीर रक्तवर्णीय दानों (spore) का एक समूह होता है अगर अगर (Ceylon moss) कार्टिलेजीय पदार्थ है। स्वाद-निर्बल लवणयुक्त शैवालीय होता है।

रसायनिक संगठन-वेजिटेबुल जेली (वनस्पतीय सरेश) ४० से ८० प्रतिशत, अल्ब्युमेन नेलिन (Iodine) निशास्ता (True starch) लिग्निअस पदार्थ (Ligneous matter) लुआब, लवण, यथा सोडियम सल्फेट (Sodium sulphate) तथा सैंधव हलिद (Sodium chloride) चूनाफुरेत (Calcium phosphate) चूनागन्धेत (Calcium sulphate) मोम, लौह तथा शैलिका।

इतिहास तथा उपयोग—अगर-अगर (Ceylon moss) दक्षिण भारततथा लंका में प्राचीन काल से पोषण मृदुताजनक, स्निग्धता कारक तथा परिवर्त्तक रूप से और मुख्यतः वक्ष रोगों में उपयोग में लाया जाता है। पुतगम और कालपेण्टर के मध्यस्थित महाफील वा प्रशान्त जल में यह अधिकता के साथ उत्पन्न होता है। प्रधानतः दक्षिणी पश्चिमी मानसून काल में जलस्थ फोम के कारण जब वह पृथक् हो जाता है तो देशी लोग इसे एकत्रित कर लेते है। तदनन्तर उसको (सिवार को) चटाइयों पर बिछा कर दो तीन दिवस पर्यन्त धूप में शुष्क करते हैं। पुनः ताजे जल से कई बार धोकर धूप में खुला रखते है जिससे वह श्वेत हो जाता है।

बंगाल फार्माकोपिया (पृष्ठ २७६) में इ उपयोग का निम्न क्रम वर्णित है :—

क्वाथ— शुष्क अगर-अगर चूर्ण २ ड्राम, ज क्वार्ट० इनको २० मिनट तक उबालकर मल से छान लें। इसमें अर्द्ध आउंस के अनुपात विचूर्णित शैवाल की मात्रा अधिक करने से (१०० भाग जल तथा शुष्क शैवाल चूर्ण १ इं० मे० मे०)—शीतल होने पर छना घोल दृढ़ सरेश में परिणत हो जाता है और इसको दालचीनी वा निम्बूफल त्वक या (पत्र) शर्करा तथा किञ्चित् मद्य द्वारा स्वा बना दिया जाता है तो वह रोगी बालकों रोगानन्तर होने वाली निर्बलता के लिये एवं हलका (पोषक) पथ्य हो जाता है।(माँक) अगर-अगर का शुष्क पौधा औषध से व्यवहार में आता है। इसमें वेजिटेबुल तथा स्पतोय सरेश अधिक परिमाण में वर्तमान हैं। इसका क्वाथ (४० में १) मृदुताजनक स्नेहकारक रूप से वक्ष रोगों, प्रवाहिका अतिसार में लाभ दायक होता है। इसके निर्मित सरेश (Jelly) श्वेतप्रदर, तथा मूत्रपथस्थ क्षोभ में व्यवहृत होता है नैलिका (Iodine) होती है अस्तु यह (Goitre) तथा कंठमाला आदि में प्रद होता है। यह सिरेशम माही (Isin ss) का उत्तम प्रतिनिधि है। इं० मे० मे० हिन्दू जनता इसे अगर अगर (Japan isinglass) की अपेक्षा अधिक करती है क्योंकि उसको इसके प्राणिज निर्मित होने का सन्देह है, जो सर्वथा भ्र एवं अज्ञानता पूर्ण है। डाइमॉक)

(२) अगर-अगर—जापानीज आइसिन् (Japanese Isinglass) जे (Gelosin)-इं० जेलाडियम् क (Gelidium Corneum, *Lam* कार्टिलेजीनियम् (G-Cartilagi *Caill*)—ले०। माउसी डी चाइना (usse de chine)—फ्रां०। थेओ (T जापा०। याङ्ग-ट्सै, चा०। चीनी ब्रास-मा

शैवाल जाति
(*N. C.* Algoe)
नोट ऑफिशल (Not official)

उत्पत्ति स्थान—हिन्द महासागर।

विवरण—अगर अगर ऊपरोक्त दोनों प्रकार के सिवारों से निर्मित झिल्लीमय फीता की शकल का शुष्क सरेश है। सम्भवतः यह स्फीरोकाक्कस कॉम्प्रेसस (SPhoerococcus com Pressus' *Ag*) तथा ग्लोइऑपल्टिस टिनेक्स (gloio Peltis tenax, *Ag*) से भी प्रस्तुत किया जाता है।

हैन्बरी—इसके विषय में निम्न वर्णन उद्धृत करते है :—जापानीज़ आइसिन् ग्लास के अशुद्ध नाम से अभी हाल में ही जापान से इङ्गलैण्ड में एक वस्तु भेजी गई है जो दबा हुई, असम न चतुर्भुजीय छड़ होती और प्रत्यक्ष रूप से लहरदार, पीताभायुक्त श्वेत एवं अर्द्धस्वच्छ झिल्लियों की बनी होती है। ये छड़ ११ इंच लम्बे तथा १ से १॥ इंच चौड़े, अंशयों से पूर्ण अत्यन्त हलके (प्रत्येक लग भग ३ ड्राम) अधिक लचीले परतु सरलता पूर्वक टूट जानेवाले तथा स्वाद एवं गंध रहित होते हैं शीतल जलसे स्पर्श होने पर इनका द्रव्यमान बढ़ जाता है तथा वे चतुष्कोणी स्पञ्जवत् हो जाते हैं और उनको भुजायें नतोदर तथा चौड़ाई में १॥ इंच होती हैं यद्यपि जल में यह किसी परिणाम में अविलेय होता है तथापि कुछ काल पर्यन्त उबालने पर इसका अधिक भाग लय हो जाता है और घोल जब कि अभी यह जल मिश्रित (या पतला) है शीतल होने पर सरेश में परिणत हो जाता है। चीन देशीय यूरुप निवासी इसे वास्तविक सिरेशम माही (Isinglass) की प्रतिनिधि स्वरूप व्यवहार में लाते हैं जो कि बहुशःउससे भी गुण दायक है यह बहुत जल में मिलकर भी इसे सरेस में परिवर्तित कर देता है। उसका यह गुण एम० पेयन (M. payen) द्वारा अभिहित जेलोज नामक पदार्थ के कारण है जो जापानीय शैवाल में विशेष रूप से पाया जाता है। यह सिरेशम माही की अपेक्षा अधिक उत्ताप पर पिघलता है। यह अपने से १०० गुने जल में भी बुझ कर शीतल होने पर सरेस में परिणत हो जाता है।

(४) एक ही वजन में इससे सिरेशम माही से १० गुना अधिक सरेस तैयार होता है आहार हेतु चेओ सरेस (अगर अगर) प्राणिज सरेस से अधिक प्रिय नहीं होता, क्योंकि वह (चेओ)मुख में अनघुल होता है। और उसमें नत्रजन भी अभावहोता है। उसमें सर्वोपरि गुण यहहै कि वह अति न्यून परिवर्तनशील होता है अस्तु उपयोग हेतु प्रस्तुत स्वादिष्ट एवं मधुरीकृत सी वीड जेली (समुद्र शैवाल सरेस) नाम से कभी कभी सिंगापूर से आया हुआ सरेस बिना विकृत हुये उसी रूप में वर्षों रखा रह सकता है।

अधुना विशेषतया उष्ण जल वायु में जीवाणु-शास्त्रान्वेषणार्थ व जीवाणु उत्पादन वर्द्धन हेतु यह अधिकउपयोगमें लाया जाता है। (रुाइमांक)

रसायनिक संघटन—उक्त सिवार से प्राप्त सरेस में जेलोज (gelose) जो सरेशी सत्व है प्राप्त होता है। इसमें कोई नत्रजन वायव्य नहीं होता तथा शर्करा पदार्थ (mannite)निर्यास्ता तथा अलब्युमेन वर्तमान होते हैं।

प्रभाव तथा उपयोग—उन छिद्र आदिकों को जिनसे कभी आन्त्र वृषण में उतर आती है संकुचित (छोटा) करने के विचार से अगर अगर के कीट रहित घोल का तत्स्थानीय तन्तुओं में अन्तः क्षेप करते हैं मृदुभेदक रूप से इसका प्रायः सफलता पूर्ण उपयोग किया गया है। अगर अगर द्वारा निर्मित रिग्यूलीन (Regulin) नामक एक शुष्क एवं स्वाद रहित औषध जिसमें २० प्रतिशत कैस्करा सत्व (Extract of cascara) होता है प्रचार पा चुकी है। १ से ३ ड्राम की मात्रा में पुरातन मलावरोध में यह मृदु भेदक प्रभाव करता तथा मल परिमाण की वृद्धि करता है। कुचले हुये आलू व उबाले हुये फलों के साथ मिलाकर इसका उपयोग करना चाहिये, अगर २ के शुष्क वारीक पत्र चाय की चम्मचभर की मात्रा में कैस्कराके बिना मरोड़ एवं

रेचन के उत्तम परिणाम उत्पन्न करते हैं। अगर के प्रभाव का आन्त्राय पृष्ठों तक ही निर्मित रखने की दृष्टि से इसके साथ बहुत सी अन्य औषधियां जैसे फिनोल थेलीन (Phenol-Phatha-lein)रूबर्ब (रेबन्द) टैनीन (कषायीन) कैटेच्यू (कत्था) तथा कैलम्बा इत्यादि सम्मिलित करदी गई हैं। ह्विट० मे० भे०।

यह पोषक तथा स्नेहकारक है और सीलोन मांस (चीनी घास नं० १) के समान व्यवहार में आता है। यह उत्तम आहार है इं० मे० मे०।

अगरई–हिं० वि० [सं० अगरु] श्यामता लिये हुये सुनहला संदली रंग का अगर।

अगरता–बर० छोटी मांई का वृक्ष (फराशवृक्ष) Tumarix Gallica, *Linn.*

अगर तेलियह्–हिं० ऊद गर्की अर्थात् पानी में डूब जाने वाली अगर, या जो अगर तेलीय एवं श्याम वर्ण की तथा ऊपरोक्त गुण वाली तथा डूब जाने वाली हो (Aquilaria Malaccensis' *laMk*)

अगरधत्ता–सं० प्रां०
अगरधाक } गूमा,

द्रोणपुष्पी (Leucas Cephalotes *Spreng*) फा० इं० ३ मा०।

अगरबत्ती–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अगरुवर्तिका] सुगन्ध के निमित्त जलाने की पतली सींक वा बत्ती जिसमें अगर तथा कुछ सुगन्धित वस्तु पीस कर लपेटते हैं। इसका व्यवहार मद्रास बम्बई में बहुत होता है।

अगर लयूस–यू० इन्द्रायन का फल-हिं० (Citrulluscolocynthis Schrad.Fruit-of-Colocynth.)।

अगरस–यू० वृक्ष विशेष, इसके गोंदको कहरुवा कहते हैं। (Succinum Amber [tree-of-]।

अगरसत–हिं० पु० अगर (aquilariaagallocha'*Roxb*)

अगरसार–हिं० सं० पु० देखो–अगर।

अगरसोगिनह्–बर० ब० गाफिस के नाम से प्रसिद्ध है। एक घास है।

अगरस्तस–यू० ख़ेद गयाह। एक गांठदारवृक्ष अथवा घास।

अगरा-री–सं० स्त्री० A Kind of grass D. otar एक प्रकार की घास, देवदाली। देयातारा –बं०। अ० टी० भ०। (२) पीतदेवदाली भा०, रा० नि० ब० ३।

अगरिया–यू० मिट्टीका नाम है। A Kind of clay)

अगरियून–यू० (१) गर्जरम्, गाजर Daucus carota, *Linn.* (car-rot) (२) देवदाली बिन्दाल (LuffaEchinata; *Roxb*)

अगरी–सं० स्त्री० देवत द वृक्ष, देवदाली (Deodar) वै० श०। अपामार्ग–हिं० द०। (Achyranthes Aspera, *Linn*) इं० मे० मे०।

अगरु–सं० क्ली०
अगरू–हिं० सं० पु० } अगर लकड़ी, ऊद, काली अगर, अगुर चन्दन, कृष्णागुरु–हिं० अगराइ चन्दन–बं०। Aloewood (Agallochum, the black variety वा० उ० २७ अ०। देखो अगर।

अगरू गंध काष्ठ–सं० क्ली० रक्त चन्दन। Pterocarpus santalinus, *Linn* (wood of-Redsandal wood) सं० फा० इं०

अगरूगौलीसतू–यु० बोल –हिं० फा० बं० द० गंधरस, बोलम्–सं०। मुर–अ० Mirrh (Balsamodendron Mirrh)

अगरूस–यू० खरहा, खरगोश। हेयर (Hare) रैबिट (Rabbit) इं०।

अगरूसार:–सं० पु० काली अगर, कृष्णागुरु, काल अगुरु–बं०। Aloe wood (the black variety) देखो—अगर।

अगरेतुर्की–फा० यच–हिं० वज वज–अ० acorus calamus, *Linn* (Root of-sweet flag)

नोट—बहुधा समस्त वनौषधियों में बच (Sweet flag) को पुष्करमूल (orris root) के साथ मिलाकर भ्रमकारक बना दिया गया है अतिरिक्त इसके अंग्रेजी कोषों में रिचार्डसन (Richardson) शेक्सपीअर (Shakespear) और फार्बीज (Forbes) प्रभृति कोषों में प्रमादवश लिज (Gallangal) के लिये प्रयोग किया गया है। अतीस प्रकरणान्तर्गत फारसी नाम "वजे तुर्की" के सम्बन्ध के नोट को देखिए। सं० फा० इं०।

नोट—हाजिजेनुल अत्तार (१३६८) इसे ऊदुल जून कहते हैं और इसका फारसी नाम बलजून बताते हैं।

अगल—ता०। चिकरस्सी—बं०। बीगापोमा—आसा०। मे० मो०।

अगलगोलीस—यू० एक वृक्ष है जिससे उशक नामक गोंद निकलता है।

अगलहिया—हिं० संज्ञा स्त्री० [देश०] एक चिड़िया (चञ्चुका)

अगला—हिं० वि० [सं० अग्र] [स्त्री० अगली] (१) आगे का। अग्र भाग का। सामने का। अगाड़ी का। पिछला शब्द का उलटा। (२) पूर्ववर्ती। पहिले का। प्रथम। (३) आगामी। आनेवाला। भविष्य। (४) अपर। दूसरा। एक के बाद का।

अगलाकोष्ट—हिं० पु० (Anterior chamber) अग्रकोष्ट।

अगलागल—हिं० कचैटा, किंगली।

अगलानअसी—तु० जुन्दबेदस्तर, गंधमार्जार (Castoreum)

अगलाय—ता० चिकरस्सी—बं०। बीगा पोमा—आसा० मे० मो०।

अगलीकन—यू० मैफ़लतज (दोआब के नाम से प्रसिद्ध है)

अगलीक़श—यू० दोसर (एक बूटी है जिसके पत्ते गेहूं के पत्तों के सदृश होते हैं और उसके फल पर दो तीन पर्दे होते हैं और उस पर बाल के समान रोंआ होता है।)

अगलीकी—यू० (१) मूली का तेल (२) मैफ़लतज।

अगलीतूस—यू० फाशरा, शिवलिंगी—हिं० (Bryonia Alba)

अगवन्न—सं० अरनी (Premna Integrifolia, *Linn*)

अगवर—तु० खोस, प्यूसो, पीयूष, (The milk of a cow during the first seven days after calving)

अगवोसी—इं० यह एक प्रकार की निष्क्रिय शर्करा है जो राकसपत्ता (Agave americana, *Linn*) नामक वृक्ष के डंठल के रस से पृथक की जाती है। इं० मे० मे०।

अगशि—कना० अगस्त वृक्ष, अगस्तिया (Agati grandiflora, *Desv*) फा० इ० १ भा०।

अगसतामरेरय—ता० जलकुम्भी—हिं०। कुम्भिका० सं०। (Pistia Stratiotes, *Linn*) इं० मे० मे०। फा० इं० १ भा०।

अगसाक़—अ० (Black crow) कुज्ञाग स्याह (खेत का कौआ)

अगसीगिदा—कना० चकबँड़—हिं० चक्रमर्द, दद्रुघ्न सं०। दादमर्दन—बं०। Ringworm shrub (Cassia alata *Linn*) इ० मे० मे०

अगसेयमरनु—का० अगस्त, अगस्तिया (Agati grandiflora, *Desv*)

अगस्त—हिं० पु०
अगस्तिः—सं० पु० } अगस्तिया—Sesbania Grandiflora, *Pers*)

अगस्तिकुसुमः—सं० पु०
अगस्तिद्रुः—मः— } अगस्तिया Agati grandi flora, *Desv*)

अगस्तिपत्र नस्य—सं० पु० अगस्ति (अगस्तिया) के पत्तों के रस की नस्य लेने से चौथिया ज्वर का नाश होता है। (वृ० नि० र०)

अगस्तिया—हिं० पु० अगथिया, अगस्त, वस्न, वासना हथिया, हतिया, हदया—हिं०। पर्याय—अथागस्त्योवंगसेनामुनिपुष्पोमुनिद्रुमः। अगस्त्यः, बंगसेनः, मुनिपुष्पः, मुनिद्रुमः, शिववल्ली, पाद्म-

पतः, एकाष्ठीलः, वृक्षः, वसु, वसुकः, वसूद्दृट्ः, वसूकः, बकपुष्पः, शिवप्रियः, शिवमल्ली, काकनामा, काकशीर्ष, स्थूलपुष्पः, सुपूरकः, रक्तपुष्पः. मुनितरुः, अगस्तिः वङ्गसेनः, शीघ्रपुष्पः, व्रणारिः, व्रणापहः, दीर्घकलकः, वक्रपुष्पः, सुरप्रियः, शिवापोडः, सुव्रतः शिवाङ्गः, शिवेष्टः, शिवाह्लादः, शम्भवः, क्रमपूरकः, रविसन्निभः, शुक्रपुष्पः, कनली, खाध्वन्सो ओर पवित्र-स । वक्रपुष्पः वक (ओं) बकफुलेर-गाछ बास्कोना फुलेरगाछ ब० । अगस्त-अ० फा०, उ० । सिस्बेनियां ग्रांडिफ्लोरा (Sesbania Grandiflora, *Pers*) अगेटि ग्रांडिफ्लोरा agatGrandiflora, *Desv*)-इस्कीनामेनी ग्रा० (æschynomene, *Gr. Linn.*)-ले० । लार्ज फ्लावर्डएगेटी Large flowered agati इं० । अकत्ति. अगता, अगात्ति, अर्गति-ता० । आनिसे, अविसि, लक्ष्मयविषे—चेट्टु-ते० । अकत्ति मल० । अगशी (सी)-कना० । हदगा, अगस्ता मह० । अगथियो-गु० । अगसेयमनु-का० । अगासेल-बाव० । बगफल-सुन्द० ब० । कतुरमुरुङ्गा-सिंहली ।

लीग्यूमिनोसी (शिम्बी वा वव्वुर वर्ग)
(N. O. Leguminosœ)

उत्पत्ति स्थान—दक्षिणी तथा पश्चिमी भारत वर्ष । गंगा की घाटी और बंगदेश ।

वानस्पतिक वर्णन—अगस्तिए का वृक्ष समस्त भारतवर्ष में विशेषकर पुष्पोद्यानोंमें अधिक होता है । इसकी अवस्था बहुत थोड़ी होती है । यह थोड़े वर्षों में ही लगभग ३० फीट की ऊँचाई तक पहुँच कर पुनः मृतप्राय हो जाता है ।

काण्ड—सरल ६-९ हाथ दीर्घ, शाखा घन सन्निविष्ट नहीं । फाँक-फाँक होती हैं ।

पत्ते—बबूल के समान किन्तु इससे बड़े दीर्घ वृन्त के जोड़े-जोड़े दोनों ओर २१-२१ अथवा इससे न्यूनाधिक संख्या में लगे होते हैं । वे १, १॥ इंच लम्बे ओर अण्डाकार, स्वाद में कुछ अम्ल और कसैले होते हैं ।

पुष्प—बड़ा, शुभ्र वा रक्तवर्ण का एवं कोरकावस्था में चन्द्रकला के समान वक्र होता है। श्रीहर्ष कवि ने यथार्थ कहा है—

मुनिद्रुमः कोरकितः सितद्युतिः ।
बनेह मुनामन्यत सिंहिका सुतः ॥
तमिस्र पक्ष कटिकूट भक्षितः ।
कलाकलापं किल वैधवं वमन् ॥
(नैषधचरित)

वाह्यकोष—(Calyx) घंटाकार, द्विओष्ठीय और हरितवर्ण का होता है । पुष्प—तितली स्वरूप, श्वेत या रक्तवर्णीय (आयुर्वेद में नीव वा श्याम दो अधिक लिखे हैं) १॥-२ इञ्च लम्बा वक्र तथा गूदादार होता है ।

पुष्पाभ्यन्तरकोष—(Corolla) में विषमाकृति की चार पंखड़ियां (दल) होती हैं, जिनमें से ऊर्ध्व ध्वजा (Standard) और दोनों बगल में १-१ पक्ष (wing) तथा नीचे तारणी (keel) होती है । तारणी (keel) के भीतर परागकेशर (१०) तथा रति वा गर्भ केशर (१) ढके होते हैं । प्रत्येक गुच्छे में दो या चार पुष्प कक्षस्थ डंठल में लगे होते हैं । इसका स्वाद—लुआबी तथा तिक्त होता है ।

फली—जटकनदार १--१॥ फीट के लगभग लम्बी कुछ चिपटी तथा बीजों के मध्य में दबी होती है । प्रत्येक फली में लगभग ४०--४१ बीज होते हैं ।

वृक्ष त्वचा—लम्बाई के रुख चिड़चिड़ाई और बाहर से देखने में धूसर वर्ण की प्रतीत होती है । शुष्क काष्ठ मोटाई में ताजे काष्ठ के बराबर होता है । ताजी दशा में दरारों के मध्य असंख्य सूक्ष्म अश्रुवत् ताम्रवर्ण के निर्यास दीख पड़ते हैं, किन्तु वायु में खुले रहने से ये पुनः शीघ्र श्यामवर्ण के हो जाते हैं । नवीन त्वचा का बाह्यतल रक्तवर्ण का और इसी प्रकार के नर्म गोंद से लदा रहता है ।

इतिहास तथा नाम विवरण—अगस्त्य मुनि के नाम पर इस वृक्ष के नाम अगस्ति और अगस्त्य प्रभृति रखे गये हैं । कहते हैं जब अगस्त्य मुनि का उदय होता है तब ही अगस्तिया

के फूल खिलते हैं। इसका औषधीय उपयोग आज का नहीं वरन् अति प्राचीन है।

प्रयोगांश—त्वचा, पत्र, पुष्प, मूल, शिम्बि और निर्यास।

रसायनिक संगठन—त्वचा में कषायीन (Tannin) और निर्यास होता है।

औषधि निर्माण—त्वक् क्वाथ—(२० भाग में १ भाग). मात्रा—१। तोला से २॥ तोला। मूल (स्वरस) २॥ मा० से ५॥ मा०। इसकी जड़ की लुगदी और पत्र का पुलटिस स्थानीय रूप से उपयोग में लाया जाता है। शर्बत की मात्रा २ मा०। हानिकर्त्ता—उदर में वायु उत्पन्न करता है। दर्पनाशक—सोंठ और मिर्च।

गुण धर्म (प्रभाव) तथा प्रयोग—आयुर्वेदिक मतानुसार—अगस्तिया पित्त कफ नाशक गर्मी को शांत करने वाला, शीतल, योनि शूल तृष्णा, कोढ़ तथा शोथ नाशक है। बक अर्थात् अगस्त अत्यन्त शीतल, तिक्त, मधुर और मदगंध युक्त (कहीं कहीं "मधु गंधक" पाठ आया है जिससे अभिप्राय 'मधु गंध युक्त है) तथा पित्त-दाह, कफ श्वास एवं श्रम नाशक और दीपन है रा० नि० व० १०।

सफेद, पीले, नीले और लोहित पुष्प भेद से अगस्तिया चार प्रकार का होता है। यह मधुर, शीतल, त्रिदोष, श्रम, कास और भूतबाधा का नाश करने वाला है। रा० नि०।

अगथिया—शीतल, रुक्ष, वातकारक, कड़वा है, और पित्त कफ चातुर्थिक ज्वर (चौथिया) तथा प्रतिश्याय को नष्ट करता है।

अगस्त पुष्प के गुण—अगस्तिया पुष्प शीतल (मधुर) है, तथा त्रिदोष, श्रम, वलास, कास, विवर्णता, भूतबाधा और बल को नष्ट करता है। रा० नि० व० १०।

अगस्तिया के फूल—शीतल, चातुर्थिक ज्वर निवारक, रतौंधे को दूर करने वाले, कड़ुवे कसैले पचने में चरपरे रूक्ष और वातकारक है तथा पीनसरोग कफ एवं पित्तको दूर करते है।

भा० पू० १ भा० शा० ४०। वृ० नि० र०।

अगस्ति के पत्ते के गुण—अगस्तिया के पत्ते चरपरे, कड़वे, भारी, मधुर, किञ्चित् गरम और स्वच्छ है तथा कृमि, कफ, कण्डू (खुजली) विष और रक्त पित्त को हरते हैं। वै० निघ०।

अगस्तिया की फली के गुण—अगस्तिया की फली सारक (कुछेक दस्तावर) बुद्धिदायक रुचिकारक, हलके, पचने में मधुर, कड़वी, स्मरण शक्ति वर्धक है तथा त्रिदोष शूल, कफ, पांडुरोग, विष, शोष, कहीं कहीं शोफ पाठ है) और गुल्म को दूर करती है। इसकी पकाई हुई भाँजी रुक्ष एवं पित्त कारक है।

अगस्तिया के वैद्यकीय व्यवहार—

सुश्रुत—अगस्तिया अधिक शीतल एवं उष्ण नहीं है और नक्तांध रोगी के लिये हितकारक है। सू० ४६ पु० व०।

वाग्भट्ट—नक्तांध्यमें अगस्तिया के पत्र—अगस्तिया के पत्र को शिल पर पीस कर इसको गौ घृत में पकाकर घृत सिद्ध करे इस घी को नक्तांध रोगी को पिलाए। (उ० १३ अ०)

पाक करने की विधि—गो घृत १ सेर, अगस्तिया के पत्ते शिल पर पिसे हुये ऽ। एक पाव, इसे मंद अग्नि पर यहां तक पकाए कि रस शेष न रहे। पुनः कपड़े से छानकर रक्खें।

वक्तव्य

चरक के पुष्पवर्ग में इसका उल्लेख नहीं है। धन्वन्तरीय निघंटुकार ने अगस्तिया का गुण वर्णन नहीं किया। राजवल्लभ में अगस्तिया के फूल का गुण वर्णित है। पत्र तथा शिम्बी फली का गुण नहीं लिखा है।

भाव प्रकाशकार—के मत से अगस्तिया का पत्र प्रतिश्याय अर्थात् तरुण प्रतिश्याय (सर्दी) निवारक है।

बृहन्निघण्टुकार के मत—से अगस्तिया की शिम्बी (फली) 'सरा' अर्थात् रेचक है।

चक्रदत्त चातुर्थिक ज्वर में अगस्तिया के पत्र—जब दो दिन के अन्तर से ज्वर आए तब अगस्तिया के पत्र का नस्य दें। (ज्वर चि०) ज्वर आने के दिन ज्वर से पूर्व नस्य लें यह।

प्लीहा यकृद्विवर्जित चातुर्थिक ज्वर में प्रयोज्य हैं। भावप्रकाश वातरक्त में अगस्तिया का फूल—अगस्तिया के फूल को चूर्ण कर इसको भैंस के दूध मे मिला कर उसको दधि जमाए। उस दधि से निकाले हुये नवनीत से वातरक्तज य शरीरस्थ स्फोट (कांटे) अच्छे होते हैं। (म० खं० २ य० भा०)

हारीत—(१) अपस्मार पर अगस्तिया के पत्र—अगस्तिया पत्र बहुत मरिच थोड़ी इनको गोमूत्र में भली प्रकार वारीक पीस कर अपस्मार रोगी को नस्य कराएँ। (चि० १६ अ०)

(२) बालापस्मार—में अगस्तिया के पत्ते के रस के साथ मरिच योजित कर नस्य देने से लाभ होता है। उक्त रस में रुई का फाहा भिगो-कर उसे बालक के नासारन्ध्र के पास स्थापित करना अच्छा है। (चि० ४३)

अगस्त के सम्बन्ध में यूनानी व डाक्टरी मत—यूनानी ग्रन्थकार—अगस्तिया को दूसरी कक्षा में शीतल और रूक्ष मानते हैं। फारसी द्रव्य-गुण शास्त्र के प्रसिद्ध लेखक मीर मुहम्मद हुसेन लिखते हैं कि सरेकमाँ अथवा मस्तक दुखता हो तो इसके पत्तों का रस निकाल नाक में ३ बूंद टपकाएँ तो छींक आकर नासिका द्वारा जलस्राव होकर मस्तक का भारीपन दूर हो जाएगा।

बम्बई के निवासी इसके पत्ते और पुष्प के निचोड़े हुये रस को प्रतिश्याय एवं मस्तकशूल में नस्य रूप से उपयोग करते हैं। इससे नासिका द्वारा अत्यन्त जलस्राव होता है तथा शिर की वेदना एवं भारीपन सर्वथा दूर होता है। वि० डाइमाक।

फूल का साग करके खाते हैं। छाल पाचन शक्ति बढ़ाने में दी जाती है। पत्तों को गरम जलमें भिगोकर उस जल को पीने से जुल्लाब लगता है। आँख में जाला पड़ गया हो तो अगस्तिया के फूल का रस आँख में डालने से फायदा होता है। म० ग्र०।

यह उष्ण तथा पित्त हारक है। इसका पुष्प पित्तनाशक घ्राणशक्ति को बलप्रद और नक्की अर्थात् रतौंधे को दूर करता है।

अगस्तिया का मूल कफ निस्सारक, कृ कषाय, तिक्त, बलकारक, पत्र तथा पुष्प के की नस्य देने से पीनस, प्रतिश्याय और शि वेदना कम होती है। मूल रस मधु के साथ त कफ रोग में प्रयोजनीय है। अगस्तिया ध धतूरा की जड़ समान भाग लेकर पीसकर वेद युक्त शोथ स्थल पर प्रलेप करें। (मे० मे० आर० एन० खेरी कृत २ या खंड २२१ इं०पृ० लाल फूल वाले अगस्तिए की जड़ को जल साथ पीसकर बनाई हुई लुगदी कर संधिवात उपयोग होता है। १ से २ तो० तक की इस जड़का रस प्रतिश्याय में मधु के साथ उपयोग लाने से श्लेष्मा निस्सारक प्रभाव करता है। भाग अगस्तिए की जड़ तथा इतनी ही धतूरे जड़ इन दोनों से तैयार की हुई लुगदी को वेद युक्त शोथ में बर्तते है। इसके पत्ते को मृदुभेद बतलाते है। वि० डाइमांक।

चेचक की प्रथमावस्था तथा अन्य स्फोटकी ज्वरों में इसकी त्वचा के शीत कषाय का लाभ दायक उपयोग होता हैं। टी० एन० मुकर्जी डाक्टर बोनेबिया (Dr. Bonavia) कथनानुसार इसकी छाल अत्यन्त सकोचक है और वे इसको बलकारक रूप से उपयोग लाने की शिफारश करते हैं।

डॉक्टर रम्फिअस (Dr. Rumphius) के वर्णनानुसार इसके पत्ते की पुलटिश चोट लगने अथवा कुचल जाने के लिए एक प्रसिद्ध औषधि हैं।

सहज कास अथवा बच्चों की सर्दी में दो बूंद अगस्त के पत्ते के रस को ८ या १० बूंद शहद में मिलाकर इसे अंगुली के शिरे पर लगा शिशु के ब्रह्मरंध्र पर दाई लोग चतुरता पूर्वक लगाती है। (इं० मे० मे०)।

इसके पुष्प को निचोड़ कर निकाले हुए रस को चक्षुओं में डालने से दृष्टिमांद्य अथवा धुंध को लाभ होता है। (डा० मुर्रे)।

अगस्त की ताजी छाल को कूटकर इसका रस निचोड़ कपड़े की बर्तिका इसमें तर कर योनि में रखने से श्वेत प्रदर तथा योनि कण्डु का नाश होता है। (लेखक)

अगस्ति रस–सं० पु० देखो–अगस्त्यरसः।

अगस्ति सूतराजः–सं० पु० पारा, तांबा, जमालगोटा लोहा, मैनशिल, हल्दी और गंधक इन्हें तुल्यभाग ले कज्जली प्रस्तुत करें पुनः त्रिकुटा, चित्रक, भांगरा, अदरख, निम्बू, सम्हालू, अमलतास और मूली इनके रसों से पृथक् २ भावना दें, गुड़ के साथ सेवन करने से सर्व प्रकार का उदर रोग दूर होता है। मात्रा–१ से ३ रत्ती।

र० ल० र० चि० मो० सं०) उदराधिकार

अगस्त्यः–हिं० सं० पु०
अगस्त्य– सं० पु०
अगस्त्याजय–
} अगस्तिया (Sesbania grandiflora' *Pers*) त्रिका०।

(२) एक ऋषि का नाम जिनके पिता मित्रवरुण थे। इनको मैत्रा वरुणि और्वशेय, कुंभ संभव, घटोद्भव और कुम्भज भी कहते हैं। विन्ध्यकूट, समुद्र चुलुक और पीतादि इनके अन्य नाम है। कहीं कहीं पुराणों में इन्हें पुलस्त्य का पुत्र भी लिखा है।

अगस्त्यतामरय–बा० जलकुम्भी–हिं०। कुम्भिका –सं० (Pistiastratiotes' *linn*)

अगस्त्य मोदकः–सं० पु० अर्शाधिकार में वर्णित योग विशेष–हरड़ ३ पल, त्रिकुटा ३ पल, तेजपत्र आधापल, गुड़ आधापल से मोदक प्रस्तुत करे। इसे सेवन करने से शोथ, अर्श, ग्रहणीदोष, उदावर्त तथा कास का नाश होता है।

वंग० सं० अर्श० यो० श्लो० ४७

अगस्त्यरसः–सं० पु० उदर रोगघ्न रस विशेष–पारा, गंधक, जयपाल बीज, लौह, शिलाजतु, ताम्रभस्म हल्दी समभाग लेकर त्रिफला, भांगरा, अदरख, नीम की छाल, सम्भालू- स्वर्णवल्ली के एकत्र क्वाथ में एक बार मर्दनकर रक्खें। मात्रा–१ रत्ती प्रमाण गुड़, हरड़ कबीला के साथ देने से उदर रोग को नाश होता है।

(र० सा० सं० र० से० चि०)

अगस्त्यरसायनम्–त्रिफला, त्रिकुटा, त्रिगन्ध, (दालचीनी, इलाइची, तेजपात,) निशोथ, वायविडंग, चव्य, चित्रक, धत्तूर बीज, विष्णुकान्ता, सुगन्धबाला, चोरक, लवंग, नागकेशर, कुलिञ्जन, सफेद मुसली, काकड़ासिंगी, भांग और अशन वृक्षकी छाल प्रत्येक १–१ तो० ले चूर्ण कर इसमें ८ तो० अभ्रक भस्म मिलाए पुनः शुद्ध शिलाजीत ८ तो० और १०० वर्ष का पुराना मण्डूर सबके बराबर मिलाये, सतावर का रस १ सेर, गोमूत्र आधा सेर बकरी का दूध १ सेर और १॥ सेर शक्कर मिलाकर पाक विधि से पकावे। जब यह गुड़ पाक की तरह सिद्ध हो जाय तो चिकने पात्र में रखले मात्रा–१-४ मासे।

गुण––संग्रहणी, शूल, सूजन, गुदभ्रंश प्रमेह विषमज्वर, जीर्णज्वर, क्षय, श्वास, हिचकी, भगन्दर हृदयशूल, पार्श्वशूल, पक्षिशूल' अरुचि अम्लपित्त पांडुरोग, कामला, आनाह, उदररोग और बवासीर को यह रसायन नष्ट करता है। इस परम मेध्य बातातपिक नाम वाले रसायन का अगस्त्य ऋषि ने बताया है यह बुढ़ढ़े को कामशक्ति देता है। स्त्रियों को पुष्टि देता है। और वृद्धास्त्रियों को भी गर्भधारण कराता और प्रदर को दूरकरता है। ना० वि०

अगस्त्यवटी
अगस्तिवटी
} सं० स्त्री०

वच १० पल

कुचिला १० पल दोनों को तुसों के काढ़े में पका कर चूर्ण करें तथा इसमें त्रिकुटा सज्जीखार, जवाखार, अजयाइन, अजमोद, खुरासानी अजवाइन, बिड़ंग, हींग, सैन्धव, विड, सौचर नमक प्रत्येक का चूर्ण ३ पल मिलाकर नीबू के रस में घोट कर बेर प्रमाण गोलियां बनाऐ।

गुण––शूल मदाग्नि, गुल्म, कृमि तिल्ली आमवात को नष्ट करती है। वृ० नि० र० शूल० चि०

अगस्त्यसूतराज रसः–सं० पु० पारा, गंधक सिंगरफ प्रत्येक १–१ तो० धत्तूर का बीज २ तो० अफीम २ तो० इनका चूर्णकर भांगरे के रस की भावना दें। मात्रा–१ र० से १॥ र० पर्यन्त। अनुपान सोंठ मिर्च पीपर और शहद के साथ देने से वमन शूल, कफ बातविकार, मन्दाग्नि तथा घोर निद्रा

को तथा घृत और मिर्च के चूर्ण के साथ प्रवाहिका तथा छः प्रकार के अतिसार में जीरा और जायफल के चूर्ण के साथ देने से इनका नाश करता है।

अगस्त्यहर्र-हिं० संज्ञा पु०
अगस्त्य हरीतकी
अगस्त्यावलेह-सं० पु०

स० स्त्री० (१) यह कास में हित है। निर्माण क्रमः—दशमूल, कोंच, शंखपुष्पी, कचूर, बरियारा गजपीपल, चिर्चिटा, पीपलामूल, चित्रक, भारंगी, पुष्करमूल ये सब ८-८ तो० ले और जव [यव] ३२६ तो० हड़, १०० अदद इन्हें १२७० तो० जल में पकाए जब सीज जायँ तो उस क्वाथ को वस्त्र से छान के जौ हर्रों में ४०० तो० गुड़ और १६ तो० गोघृत मिला पकायें। और तेल पीपल का चूर्ण भी १६-१६ तो० मिलायें जब सिद्ध हो जाये तो इसमें १६ तो० शहद मिलाकर यत्न से रक्खें। दो २ हड़ रसायन विधि से खाने से वली व पलित पाँचों [illegible] क्षय, श्वास हिचकी विषम ज्वर, अर्श [illegible] हृदयरोग, अरुचि और पीनस को नाश करता यह अगस्त्यमुनि का रचा हुआ रसायन है। वृग० च० द० सं० कास० अ० या० ते० वा० भ० चि० अ० ३।

(२) बड़ी हड़ १०० अजवाइन १ आढक द[illegible] पल, चित्रक, पीपलामूल चिर्चिरा कचूर केवांच, शंखपुष्पी भारंगी, गजपीपर, [illegible]यारा पुष्करमूल प्रत्येक २-२ पल ५ आढक जल में पकाय छान ले तिस में १०० हरड़ तेल, घृत आठ पल गुड़, १ तु० देकर पकायें जब ठंडा हो जाय तो इसमें शहद पीपल का चूर्ण १-१ कुड़व डालें इस तरह इस सिद्ध अवलेह के सग २ हरड़ नित्य खायें तो क्षय, कास, स्वास, ज्वर हिचकी अर्श पीनस अरुचि और सग्रहणी का नास हो यह अगस्त्यमुनि की कही हरीत की प्रत्येक रोगों का नाश करती है। अ० सं० म० ख० अ० २।

(३) दशमूल, गजपीपल, कोंच के बीज भारंगी कचूर पुष्करमूल सोंठ पाढ, गिलोय पीपला मूल, शखाहूली, रास्ना, चित्रक अपामार्ग, बला, जवासा ये प्रत्येक २-२ पल लें। तथा यव (जौ) १ आढक लें बड़ी हर्रे १०० लें प्रथम १ द्रोण (१६ सेर) अथवा एक आ (४ सेर) जल लेके उसमें हर्रों को औटाएं चौथा हिस्सा जल शेष रह जाय तो उतारें फि तु० (५ सेर) गुड़ लेकर जल में औटाकर शहद, घृत, ४-४ पल डालें और पीपल का ४ पल डालें फिर पूर्वोक्त हरड़ डालें इस प्र पाककर शीतल कर उसमें ४ पल शहद और तो सुन्दर हरीत को पाक तैयार होता है। रसायन है। नित्य २ हरड़ों को कल्क युक्त खाए राजयक्ष्म, संग्रहणी, सूजन मंदाग्नि स्वरभेद श्वास शिरोरोग, हृदयराग हिचकी और विषम को नष्ट करता है। और बुद्धि बल तथा उत्त गति को बढ़ाता है। यह हरीत की पाक स श्रेष्ठ है। यो० चि० सु० सं० उ० तं० श्लो०

अगस्थिओ-ग्रो० अगस्तिया अगस्त (Sesban Grandiflora *Pers.*) फा० इं० १

अगहन-हिं० संज्ञा पु० [सं० अग्रहायण,] अगहनिया अगहन] मार्गशीर्ष मगसिर।

अगहनियां-हिं० वि० [सं० अग्रहायण] अगहन होने वाला धान।

अगहनी-हिं० वि० [सं० अग्रहायणी अगहन तैयार होने वाला संज्ञा स्त्री० वह फसल अगहन में काटी जाती है जैसे जड़हन धान इत्यादि।

अगाडा-हिं० संज्ञा पु० [हिं० अगाढ] अपाम (Achyranthes Aspera *linn*) कछार तरी।

अगात्ति-ता० अगस्तिया, अगस्त्य (Sesban Grandiflora)

अगाथियोस-सिर० इसका शाब्दिक अर्थ अग पवित्र है, पर शामी हकीमगण इसे मदार के प्रयोग करते थे। इसी का अपभ्रंश हजाि अरबी शब्द है।

अगाधम्-सं० क्ली० (१) जल (Water, aq हे० च० ४ का० (२) छिद्र, स्रोत (a hole a perforation)

अगाध त्वक्-सं० पु० (Dermis)

अगाधाधार तिरश्चीना–सं० स्त्री० (Transversus parinœi profundus)

अगानी–उ० प० सू०, त्रिधारा, बेत्तिरः, गुग्गुल मे० म०।

अगार–हि० संज्ञा पु० [सं० अगार घर निवास स्थान। धाम, गृह (२) ढेर। क्रि० वि० अगाड़ी, प्रथम।

अगारह–नीबू वृक्ष। (Common lemon tree)

अगारधूमः–सं० त्रि० अङ्ग धूम, (Soot) भुज्ञ वं० ३८ वा० उ० अ०।

अगारधूमाद्यतैलम्–घरका धुवांसा (घरऊ) १ भा० हल्दी २ भा०, सुराकिट्ट ३भा०, इन्हें डालकर तैल पाक करें, यह खुजली शोथ को दूर करता, तथा कण्डूदंश के व्रण का शोधन व रोपण कर उसे नष्ट करता है। भै० र०। चक्र द०। भा० प्र०।

अगा(गे)रिक–अगारीकून, गारीकून अ०। साँपकी छत्री, खुम्बी, कुकुरमुत्ता–हि०। Boletos (Fungus) Agniarius यह एक पराश्रयी (Parasitic) पौधा हैं, जिसमें रक्तस्थापक गुण विद्यमान है। इं० हैं० गा०।

अगा (गे) रिक आफ ओक–इं० ओक नामक इं० वृक्ष से उत्पन्न गारीकून।

अगा (गे) रिक एसिड–इं० खुम्बीन, छत्री सत्व (Agaricin Sr. *Stnuart*) देखो अगारिकस ऐल्बस।

अगा (गे) रिक आक आरसर्जन्स–

अगा (गे) रिक फ्लाई–इं० अगारिकस अमेनिटा।

अगा (गे) रिकस् अमेनिटा–ले० फ्लाई अगारिक (Flyagaric) इं०। अमेनिटा मस्केरिया (Amanita muscaria) अगारिकस मस्केरिया (Agaricus muscaria) फ्लाई अगारिक (Fly agaric) इं०। मात्तीय छत्राकुर–हि०। गारिकून जुबाब, गारिकून मगस–ति० (Not official)

अगा (गे) रिकस् एल्बस–ले०। पालिपोरस आफिसि नेलिस (Polyporus officinalis, *Fries*) ह्वाइट अगारिक (White agaric), पर्जिङ्ग अगारिक (Purging agaric), लार्च अगारिक (Larch agaric)–इं०। अगारिक ब्लैञ्च (Agaric blanch), पालिपोरी ड्युमलेज़ो (Polypore dumeleze)–फ्रा०। ग़ारिकून–इब्रि० बा०। छत्रिका, गोमय छत्रिका, दिलीर, शिलीन्ध्रक, वसारोह, गोजास, उध्वंग (हा०), उच्छिलीन्ध्रम्, शि(लि)लीन्ध्रः, (कः) भूच्छत्राक, संस्वेदजशाकं, भूमिच्छत्रं भूछत्रं, पृथ्वीकन्दं, कवचं, भूमेच्छत्रं, भूमिस्फोटः, धरांकुर भूसुता, छत्र, छत्राक, स्वेदज–सं०। पाताल फोड़, भूई फोड़, कोड़क छाता, पोयालछातु, छातकुड़, छाता, भूई छाति, खुम्बा–[illegible] कुकुरमुत्ता, सांप की छत्री, छत्रांकुर [illegible]–हि०। अलम्बो भूँई फोड–मह०। [illegible]–प०। जगली बलगर काश०। अगारीकून–यू०। कामिल–कों०। कुत्त मीद डाँनींवली–गु०। गारीकून अवैज़, ग़ारीकून तिब्बी–अ०। ग़ारीकून सफेद, ग़ारीकून मुस्हल, ग़ारीकून सनोबर, माह्शमाँ फा०।

(नाट आफ़िशल Not official)

छत्रिका वर्ग

(N. O. Polyporaceæ "Fungi Mushroom")

उत्पत्ति स्थान—दक्षिण तथा मध्य यूरुप, साइबेरिया, एशिया माइनर, पञ्जाब, संयुक्त प्रान्त प्राचीन (सनोबर वृक्ष)।

नामविवरण—युनानी हकीम दीसकूरीदूस (Dioscorides) के मतानुसार जिसने सर्व प्रथम उक्त औषध का वर्णन किया है इसका युनानी नाम अगारीकून (Agarikon) अगारिया से, जो सर्माशिया में एक देश है, व्युत्पन्न शब्द है। चूंकि उक्त औषध उस प्रदेश में अधिकता के साथ उत्पन्न होती है, अस्तु वह उस नाम से अभिहित हुई।

औषधविनिश्चय—गारीकून (छत्रिका) के विषय में प्राचीन तथा अर्वाचीन चिकित्सकों में बहुत कुछ मतभेद है। अस्तु, किसी के मत से यह किसी प्राचीन वा सड़ेहुये वृक्ष यथा अञ्जीरव गूलर

की सड़ी गली हुई जड़ है जो उसके खोखलों में से निकलती है, तथा किसी किसी के कथनानुसार यह गोर वृक्ष की जड़ है, इत्यादि—परन्तु किसी ने उदाहरण स्वरूप हकीम मुहम्मद बिन अहमद ने इसका यथार्थ वर्णन किया है। कि ग़ारीकून छत्रिका के प्रकार की एक बूटी है और इब्नमासूया ने जो लिखा है कि ग़ारीकून नर व मादा होता है तथा विभिन्न वर्ण का (श्वेत, पीत, रक्त तथा श्याम) होता है यह भी सत्य है। अस्तु, श्वेत छत्रिका जो युरूप के कतिपय प्रदेशों में औषध तुल्य व्यवहृत होती है वास्तव में मादा ग़ारीकून ही है।

नोट—मशरूम (Mushroom) जिसको संस्कृत में छत्रिका या वर्षाजा, अरबी में फ़ितर, फारसीमें समारोग और हिन्दी उर्दू में खुम्बी कहते हैं, सैकड़ों प्रकार के होते हैं। इनमें से कोई खाद्य कार्य में आते है और कोई औषध में तथा कोई कोई अत्यन्त विषैले होते हैं मुख्यतः वे जो कृष्ण वर्ण के होते हैं। अस्तु मक्षिक छत्रिका (Fly agaric) इसी अन्तिम प्रकार में से है। यह चमकीले वर्ण की खुम्बी है जिसमें मस्करीन (घातकीन) नामक पदार्थ वर्तमान होता है। इससे धर्म ग्रन्थियों में अन्त होने वाली नाड़ियां (बोध तन्तु) वातग्रस्त हो जाती हैं।

छत्रिकाएँ बहुधा भूमि पर उत्पन्न होती हैं। अस्तु, वर्षाऋतु में ये इतनी अधिकता के साथ उत्पन्न होती हैं कि इनके उत्पत्याधिक्य का उदाहरण दिया जाता है। परन्तु किसी किसी प्रकार की छत्रिकाएँ प्राचीन वृक्ष की जड़ प्रभृति पर उत्पन्न होती हैं। अस्तु, श्वेत छत्रिका (ग़ारीकून तिब्बी) भी उसी प्रकार की छत्रिकाओं में से है। आज से अर्द्ध शताब्दि पूर्व युरूप में तीन प्रकार की छत्रिकाएँ (ग़ारीकून) व्यवहार में आती थीं, जैसे—(१) श्वेत छत्रिका, (२) मक्षिक छत्रिका तथा (३) शाल्य छत्रिका। परन्तु अधुना इनमें से केवल प्रथम प्रकार की छत्रिका ही युरूप के किसी किसी प्रदेश में प्रयोग की जाती है।

इतिहास—छत्रिका का औषधीय उपयो अति प्राचीन है। हकीम दीसकूरीदूस (Dio coride) ने इसके नर-मादा दो भेदों का क किया है। इनमें से नर बिलकुल सीधा लपेट गोल होता है और इसके भीतर पृष्ठ पर परत होते, परन्तु यह एक समान होता है। मादा अन्तः रचना कंघी के समान परतदार होत और यही सर्वोत्तम है। स्वाद में दोनों स अर्थात आरम्भ में मधुर तथा पश्चात् को होते है।

इनके अतिरिक्त प्लाइनी, प्रीरा आदि युर इब्नसीना आदि मुसलमान तथा राजनिघ भावप्रकाश आदि आयुर्वेदिक चिकित्सा ग्रंथ ने अपने अपने तौर पर इसके उपयोग का वर्णन किया है।

वानस्पतिक विविरण—यह वृक्षों तथा पर उत्पन्न होने वाला एक पराश्रयी छोटा पौ जो वर्षा ऋतु में अधिकता से उत्पन्न होत इसका गर्भान्वित भाग बाहर वायु में होत यह सीधा ऊपर को बढ़ता है। इसके ऊपर छत्रिकाकार एक टोपी लगी रहती है से इसमें स्पञ्जवत् कोठरियां होती हैं इस दुग्धवत् तथा तीव्र व अग्राह्य स्वाद में कषैला और किञ्चित् लावण्ययुक्त होता है बायु में खुला रखने पर यह धूसर वर्ण जाता है।

रसायनिक संघठन—इसमें राल, पदार्थ, निर्यास, वानस्पतिक अलब्यूमेन तथ आदि होतेहैं। इसका बास्तविक प्रभावात्म आगारिक एसिड या फजिक एसिड या एसिड (छत्रिकाम्ल) है। इसमें स्फुर पोटास, चून, एमोनिया और गन्धक प्रभृति हैं। अगारीसीन निर्यास में ६७ प्रतिशत काम्ल (Agaric acid) तथा ३ अगारिकोल (Agaricol)होता है। एसिड (छत्रिकाम्ल) के अति सूक्ष्म श्वेत रवे होते हैं जो मद्यसार क्लोरोफार्म तथा (शीतल जल में न्यून परन्तु उष्ण जल में

सरलतापूर्वक) विलेय होते हैं। जल में उबालने पर यह सरेशी घोल बनाता है।

औषधि-निर्माण तथा मात्रा—(१) छत्रिका तरल सत्व *Flext.* (३ में १) मात्रा:—३ से २० बुन्द या अधिक, (२) एक्सटैक्टम् अगारी साई (छत्रिका सत्व)मात्रा:—२० से ६० बूंद (३) टिंक्चर (१० में १) मात्रा:—३० से ६० बूंद (४) छत्रिका चूर्ण (agrr icus Powder) मात्रा:— ५-३० ग्रेन (२॥—१५ रत्ती) अगारी सीन (शिलीन्ध्रीन)।

मात्रा:—$\frac{१}{४}$ से $१\frac{१}{२}$ ग्रेन ($\frac{१}{१२}$ से $\frac{१}{६}$ से १ ग्रेन)

नोट—छत्रिका चूर्ण को किसी मुरब्बा में मिलाकर देते हैं। तथा इसके सत्व (अगारीसीन को डोवर्स पाउडर के साथ वटिका रूप में बर्तते हैं

कार्य—बलवान, रेचक, रक्तस्थापक, सङ्कोचक, वामक, स्तन्यनाशक।

छत्रिका (गारीक्न) के गुणधर्म—

आयुर्वेदमतानुसार—

शीतल, कसैला, मधुर, पिच्छिल, भारी तथा छर्दि अतिसार, ज्वर, कफ, रोग, कारक पाक में भारी रूक्ष तथा रेणुज गोष्ठज शुचिस्थानज वा काष्ठज श्वेत, छत्रिका (गारीकून सफेद) दोषों को करने वाली एवं निन्दित है राज०।

सांप की छत्री शीतल, बलकारक भारी भेदक मधुर, त्रिदोषजनक, वीर्य वर्द्धक, और कफकारक है। यह कृष्ण रक्त और पांडु फेद से तीन प्रकार की होती है। कालेरंग की-मधुर, गरम और भारी है। श्वेत—पाक में भारी और लाल अल्प दोष जनक है। नि० र०।

सर्वप्रकार के संस्वेदज शाक शीतल, दोषजनक पिच्छिल, भारी, तथा वमन अतिसार, ज्वर और कफ रोगों को उत्पन्न करते हैं। सफेद शुभ्रस्थान में उत्पन्न होने वाले तथा काष्ठ बांस और गायों के स्थानों में उत्पन्न होने वाले अत्यन्त दोषकारक नहीं है। और शेष सर्व त्यागने योग्य है। भा० प्र० १ ख० ब तिब्बी ख० शा० ब०।

यूनानी ग्रन्थों के मतानुसार:—

यह संकोचक, उष्ण तथा विरेचक है और इसे ज्वर पाण्डु, वृक्कशोथ, गर्भाशयकि रोध, यक्ष्मा, अजीर्ण रक्तक्षरण, संधिशूल मे देते हैं।

यह विषघ्न है। दीसकूरीदूस नर छत्रिका अधिक दृढ़ एवं तिक्त है। तथा यह शिरशूल को भी उत्पन्न करती है। (प्लाइनी) इब्नसीना गारीकून या छत्रिका (agaric) के विषघ्न गुण के लाभदायकत्व पर बहुत जोर देते हैं यह तथा अन्य मुसलमान चिकित्सकों ने छत्रिका के गुण धर्म वर्णन में यूनानी ग्रन्थकारों का बहुत कुछ अनुसरण किया है। उनके विचारानुसार यह सम्पूर्ण आशयिकावरोधों को नष्ट करती तथा विकृत दोषों को निकालती है यक्ष्मा में छत्रिका का उपयोग नवीन नहीं प्रत्युत अति प्रचीन है। इसे बालों की चलनीमें छान कर व्यवहार में लाएँ, क्योंकि इसमें नखवत् जोवस्तु होती है वह विषैली होती है। (डाइमॉक)

प्रकृति—प्रथम कक्षा में उष्ण तथा द्वितीय कक्षा में रूक्ष है। जब इसको चखा जाता है तो आरंभ में मधुर पुनः फीका प्रतीतहोता है तदन्तर इसमें तिक्तता पुनः तीक्ष्णता एवं किञ्चित् कषैलापन प्रतीत होता है। फीकापन जल के कारण और तिक्तता जले हुये पार्थिवांश के कारण होती है

चरपरापन—(हिराफत) आग्नेयांश के कारण और संकोच (कषाय कब्ज) पार्थिवांश के कारण होता है। चूंकि यह हलकी होती है, अस्तु इसमें वायव्यका अधिकता के साथ होना आवश्यक है। इसी कारण इसकी उष्णता कम और रूक्षता अधिक होती हैं।

हानिकर्ता—व्याकुलता और गलेमें रोधउत्पन्न करती है।

दर्पनाशक—जुन्दबेदस्तर, ताजा दुग्ध, वमन, कराना।

प्रतिनिधि—निशोथ, इन्द्रायण, कागूद शुण्ठी वसफायज।

गुण कर्म प्रयोग—अपनी उष्णता के कारण यह लय कर्ता और सान्द्र (गाढ़े) दोषों की

छेदक एवं उनको रेचन करने वाली है क्योंकिदोष त्रय (बलगम सफरा सौदा) को छेदन करती एवं उनको स्वच्छ करती है और कटुता तथा छेदकत्व के अतिरिक्त तारल्य (लताफत) उत्पन्न करती है। अपनी ऊष्णता के कारण सम्पूर्ण अवरोधों को उद्घाटित करती तथा मवाद में तारल्योत्पादन करती है। पार्थिवांश के कारण संकोचक है। अपने विशेष गुण (खासियत) से वात वाताम्विक मलों को शुद्ध करती है इस कार्य में रोगोद्घाटक छेदक निर्मल कारणी एवं लयकारिणी शक्ति इसकी खासियत की सहायता करती है। यह सम्पूर्ण संधिशोथों गृध्रसी, अपस्मार, श्वास तथा रोधयुक्त रक्ताल्पता (यर्कान सुद्दी) में लाभप्रदान करती है ये समग्र लाभ इसकी तारल्यजनक (तरल्लुफ) कारणी तथा रोधोद्घाटिनी शक्ति के कारण होते हैं। सिकंजबीन के साथ यह प्लीहा शोथ के लिये हित है क्योंकि सिकंजबीन इसकी छेदक व रोधोद्घाटक शक्ति को बढ़ा देता है। इसकी पूरी मात्रा ७ मा० है।

वह अपनी रोगोद्घाटक तथा तारल्यकारी शक्ति के कारण मूत्र एवं आर्तव का प्रवर्तन करती है। त० नफी०।

विशेष प्रभाव—श्लेष्मा तथा वायु को रेचक मूत्र तथा आर्तव प्रवर्त्तक और रोधोद्घाटक है। कफज शिरशूल तथा अर्धशीशी को लाभप्रद विशेष कर हरीत की तथा मस्तगी के साथ फालानिया के साथ अपस्मार को लाभदायक है। इस का गंडूष शोथ लयकर्ता तथा रक्त निष्ठीवन को हित और खुस्सूस (सत्व मुलहठी के साथ उरोव्यथा की नाशक तथा श्वांस काठिन्य को हित है। रेवन्दचीनी के साथ आमाशय तथा यकृद्रोगों को गुणदायक तथा पांडु वा प्लीहा को हित वृक्क बस्त्यश्मरी निस्सारक यथा जलोदर को गुणप्रद है इसका प्रस्तर शोथ लय कर्ता है। मद्य के साथ इसे उपयोग करने से सर्प विषघ्न है। बु० मु०

वायु शोथ और गुल्म लयकर्ता, नाड़ी हृदय और मस्तिष्क को बलवान करता प्रायः विष का दर्पनाशक है। कफ ज्वर को लाभ करता है। इस का पान करना उचित नहीं है (निर्विषैला है परन्तु इसमें एक वस्तु नख के समान होती है। वह विष और घातक है)

डाक्टरीमतानुसार

छत्रिका चूर्ण १५ ग्रेन (७॥ रत्ती) की मात्रा में या अगारीसीन या आगारिक एसिड छत्रिका सत्व छत्रिकाम्ल यह श्वेत स्फटिकवत् चूर्ण है।

$\frac{1}{5}$ ग्रेन को मात्र में यक्ष्मा रोगियों के रात्रि स्वेद को रोकने में अपना निश्चित प्रभाव रखता है पहिले यह विरेचक रूप से उपयोग में आता था। अधिक मात्रा में यह जलवत् मल प्रवर्त्तन करता है थोड़ी मात्रा में अतिसार तथा प्रवाहिकाको रोकता है तथा रक्त निष्ठीवन में गुण दायक होता है यह वायु प्रणालियों तथा स्तन विषयकस्रावों (secrations)को (अर्थात्) कास तथा स्तन्य स्राव को) कम करता है।

साधारणस्वेदस्र में $\frac{1}{6}$ ग्रेन की मात्रा का एक ही वार उपयोग पर्याप्त होता है परन्तु धर्माधिक्य में उतनी ही मात्रा में करने से ५ घंटा पश्चात् स्वेदावरोध अथवा उसे बढ़ा बढ़ा कर वारम्बार उपयोग होता है। पर इच्छित प्रभाव हेतु इसके उपयोग की सर्वोत्तम विधि यह है कि इसे (इसके मृदुभेदक प्रभाव को रोकने के लिये) १ ग्रेन (अर्द्ध रत्ती) डोवर्स पाउडर के साथ वटिका रूप में प्रयोग किया जाय।

ओक अगारिक या अर्जन्स अगारिक जिसको अमेडो (Amadou) या फङ्गस इग्निएरियस् (Fungus agniarius) भी कहते हैं ओक अगारिक, नाइटर तथा अल्केली का एक मिश्रण है जो स्थानिक रक्त स्थापक रूप से उपयोग में आता है। ह्विट० मे० मे०।

बिस्फोट जन्य ज्वरों में विस्फोटकोत्पति विवर्द्धन हेतु इसे अधिक मात्रा में मधु के साथ वर्तते हैं। जलौका रक्तचरण में यह रक्तस्थापक प्रभाव करता है। इ० मे० मे०।

थोड़ी मात्रा में यह संकोचक और बड़ी मात्रा में वामक तथा विरेचक प्रभाव करता है। पी० वी० एम०।

अगद तन्त्र

Fungi (or muscarin)

विषैले छत्राकुर (Poisonou-s Fungi) में सम्भवतः दो विभिन्न विषैली वस्तुए वर्तमान होती है, यथा मस्केरीन (Muscarin) जिसका प्रभाव बिलाडोना तथा धुस्तुर के सर्वथा विपरीत होता है, और द्वितीय जिसका प्रभाव धत्तूरीन (Atropine) और डेच्यूरिया (धत्तूरीन या धुस्तुर सत्व) के समान होता है।

अगद—वामक (जिंक सल्फेट १५ ग्रेन वा अधिक जल के साथ) वा स्टमक पम्प का व्यवहार करना चाहिये। तदनन्तर अहिफेन सत्वों लिखित टैनिक एसिड के साथ काफी फाएट देना चाहिये। कनीनिका विस्तार काल तक वारम्बार एट्रोपीन $\frac{1}{40}$ ग्रेन का 'त्वगन्तः क्षेप' करना अथवा डिजिटेलिस् या मार्फीन (अहिफेन सत्व) देना चाहिये। स्वतन्त्र उत्तेजना, राई के प्रस्तर तथा घर्षण की आवश्यकता होती है।

इस प्रकार का गारीकून फिरंग के वनों में उत्पन्न होता है। यदि इसको दुग्ध में उबाल दिया जाय तो वह मक्खियों के लिये घातक होता है। इसको संयोगात्मक विधि से भी प्रस्तुत किया जा सकता है। प्रभाव में यह बहुत कुछ पाइलोकार्पीन (Pilocarpine) के समान होता है। अस्तु इससे अत्यन्त लालास्राव, स्वेदस्राव तथा अश्रुस्राव होता है, तथा इससे बलपूर्ण एवं वेदना पूर्ण मूत्रश्राव और कभी कभी उत्क्लेश (मतली) तथा अतिसार उत्पन्न हो जाते हैं। इसका घोल (१० ०/०) जब चक्षु में डाला जाता है तो इससे नेत्र कनीनिका विस्तृत हो जाती हैं और इसका अन्तः प्रयोग करने से निगलन से) वह संकुचित होती है।

स्थानिक कनीनिका विस्तारक तथा श्वेदघ्न प्रभाव के मस्करीन धत्तूरीन Atropine के प्रत्येक प्रभाव की निर्णित प्रतिद्वंदी (Antagonist) है। अस्तु धत्तूरीन (Atropine) छत्रिका (Fungi) द्वारा विषाक्त दशाओं की प्रतिविष है। एक समय जब पाठशाला के बहु संख्यक बालक (Fungi)के खाने से विषाक्त हुए उस अवसर पर लेखक धत्तूरीन (Atropine) के त्वगन्तः क्षेप द्वारा कतिपय प्राणियों की जीवन रक्षा करने में अपने को सन्तुष्ट कर सका। ह्विट० मे० मे०।

माक्षीय छत्राकुरागद

Muscarin or Poisonous mush rooms [illegible]इ (Fungi) द्वारा विषाक्तोपचारवत् यत्न करें (देखो अगारिकस एल्बस) यथा स्टमक पम्प अथवा वामक औषध उपयोगानन्तर एट्रोपीन (धत्तूरीन) का त्वगन्तः रूप से व्यौहार करें।

इस प्रकार के विषैले गारिकून में से एक प्रभावात्मक सत्व निकलताहै जिसे मस्करीन Muscarine (घातकी) कहते हैं। इस प्रकार के गारीकून को कहीं कहीं अफीम तथा भंग के सदृश उपयोग में लाते हैं।

अगा (गे) रिकस् आफिसिनेलिस—ले० गारीकून।

अगा (गे) रिकस् आस्ट्रीएटस्—ले० फणस आलोम्बे, फनसाम्बा, पनसलम्बे—मह०, कों० Agaric of the oaK Touchwood Oyster mushroom

उत्पत्ति स्थान—फणस (कटहल) वृक्ष।

प्रयोगांश—छत्रिका।

रसायनिक संगठन—राल, ऐन्द्रिकाम्ल तथा सरेश।

प्रभाव तथा उपयोग—संकोचक। मुखपाक (Apthæ) में मसूढ़ों पर इसका प्रस्तर लगाया जाता है। यह लालास्राबकी अधिकता को रोकती है। प्रवाहिका तथा अतिसार में इसका अन्तः प्रयोग होताहै और मुखपाक से पीड़ित बालकों के मुख में इसे लगाते हैं। इं० मे० मे०।

अगा(गे)रिकस् कैम्पेस्ट्रिस—ले० शिलीन्ध्रः छत्रक सं० खम्बूर बम्ब०, मोचा—चम्बा० खुम्बह् खाम्बूर, छत्री अफ०, बाजा०। मांस खेल—काश०। खुम्बह समारोग (Stewart) बाजा०।

हरार (बिपैला) रूप । प्रयोगांश—छत्रिका (Mushroom) आहार तथा औषध कार्य में आती है । मे० मो० ।

अगा (गे) रिकस् चिरगोंरम्-ले० ग़ारीकून बलूतीं ।

अगारिकस् मस्केरिया-फ्लाइ अगारिक Fly agaric-इं० ।

अगा(गे)रिकस शिरर्जिअन्-ले० शल्य छत्राकुर (Surgeon's agarics) ग़ारीकून जर्राही ग़ारीकून बलूती, अस्सौफान-अ० । फा० इं० ३ भा० ।

इस प्रकार का ग़ारीकून, फिरंग के बनों से प्राचीन बलूत वृक्ष के तनों पर पाया जाता है । प्राचीन समय में इसे विशेष विधि द्वारा शुद्ध कर क्षतों में रक्तस्राव को रोकने के लिये उपयोग करते थे परन्तु अधुना इसका प्रयोग सर्वथा अव्यवहारिक हो गया है ।

अगा (गे) रिकसपामेलस-ले० पनसलम्बे—मह० कों० । agaric of the oak, Touch-wood, Oyster mushroom । इं० मे० मे० ।

अगारिकस मस्करिया-ले० अगारिकस अमेनिटा ।

अगारिक ह्वाइट आर पर्जिङ्ग-इं० अगारिकस एल्बस ।

अगारीकून-यु० / अगारीकून-अ० } ग़ारीकून-अ० । खुम्बी साँप की छत्री; कुकुरमुत्ता-हिं० Purging Agraics Largegaric, Boletia (Agaricus Albus)

नोट—बोसीदह (सड़ी गली) जड़ के सदृश एक वस्तु है । जो किसी वृक्ष की जड़ों के भीतर से निकलती है यह वास्तव में एक प्रकार की खुम्बी होती है । देखो—अगारिकस् एल्बस् ।

अगा (गे) रीसीन-इं० यह ग़ारीकून (agaricus) का एक प्रभावात्मक सत्व है । वह शक्तिमान स्वेदघ्न औषध है जो यक्ष्मा रोगों के रात्रि स्वेद स्राव को रोकता है ।

मात्रा—$\frac{1}{6}$ ग्रेन । इसके मृदु भेदकी प्रभाव को रोकने के लिये "डोवर्स पाउडर" के साथ मिला कर उपयोग में लाते हैं । इं० मे० मे० । देखो—अगारिकस् ऐल्बस् ।

अगारूस अमरसी-यु० आस विस्तानो, असबार्ग उ० । आल, आछी-हिं० । Morinda citrifolia, *Linn* । देखो—आच्छुकः ।

अगालूजी-यु० अगर-हिं० । aloewood (Aquillaria agallocha)

अगाव-हि० संज्ञा पु० [स० अग्र] ऊँख के ऊपर का पतला और नीरस भाग जिसमें गाँठें बहुत पासपास होती है । अगौरा । अघोरी । अँगोरी ।

अगास-हिं० संज्ञा पु० [सं० अग्र] प्रा० अग्ग-हिं० आस (प्रत्य०) द्वार के आगे का चबूतरा । संज्ञा पु० [सं० आकाश] आकाश ।

अगास्त-मह० अगस्त, अगस्तिया-हि० Sesbania Grandiflora, (*Pers*) फा० इ० । भा० ।

अगि-ले० लाल मिर्च से बनी हुई चटनी । फा० इं० २ भा० ।

अगिकेसु,-सी-यर० बड़ी अरंडी का तेल वृहदैरण्डतैल Oleum ricini obtained from the seeds of large seededcastor oil plant) स० फा० इ० ।

अगिन, ना-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अग्नि] [क्रि० अगियाना] (१) आग । (२) गौरैया वा बया के आकार की एक छोटी चिड़िया जिसका रंग मटमैला होता है । इसकी बोली बहुत प्यारी होती है । लोग इसे कपड़े से ढके हुये पिंजड़े में रखते है । यह हर जगह पाई जाती है । (Abird,a sort of lark) (३) एक प्रकार की घास जिसमें नीबू की सी मीठी महक रहती है । इसका तेल बनता है । अगिया घास । नीली चाय यज्ञ कुश ।

संज्ञा स्त्री० [स० अंगारिका] ईख के ऊपर का पतला नीरस भाग । अगोरी ।

अगिन घास-अगिया घास रोहिष । भूतृण (Andropogon Schœnanthus, *Linn.*)

अगिन बाव-हिं० पु०. (१) अश्व (the farey in horse) रोग विशेष (२) मनुष्य में, फोड़ा फुन्सी गिकलने की बीमारी (An cruptive disease in men)।

अगिनबूटी-द० वम्ब० दाद मारी, जंगली मेंहदी-हिं० (Ammrnia baccifera; *Linn*-) इं० मे० मे०।

अगिनालीगडी-चन्दा फलागिनी इरिनपली-हि०। (Manisurisgranularis, *Linn*) इ० मे० मे०।

अगियां-हिं० सज्ञा० स्त्री० [सं० अग्नि प्रा० अग्गि] (१) एक प्रकारकी घास जिसमें नीबू की सी सुगंध निकलती है और जिससे तेल बनता है। यह दवाओं में भी पड़ती है। अगिवा घास। रोहिष तृण। नीली चाय। यज्ञ कुश। (Andropogon Schœnanthus, *Linn*)।

(२) एक खर वा घास जिसमें पीले फूल लगते हैं और जो खेतों में उत्पन्न होकर कोदों और ज्वार के पौधों को जला देती है। इसी नाम का एक और पौधा है जो धान के खेतों में उत्पन्न होता है। देखो अगया।

(३) एक दृढ़ ६ से १० फुट लम्बा पौधा जो हिमालय आसाम ब्रह्मा में मिलता है। इसके पत्ते और डठंलों में जहरीले रोऐं होते हैं जिनके शरीर में धँसने से पीड़ा होती है। इसी से इसे चौपाये नहीं छूते। नैपाल आदि देशों में पहाड़ी लोग इसकी छाल से रेसे निकाल कर भंगरा नामक मोटा कपड़ा बनाते हैं।

(४) जल धनियां।

(५) पक्षी विशेष। A bird (alauda aggiya)।

(६) घोड़ों और बैलों का एक रोग।

(७) एक रोग जिसमें पैर में पीले पीले छाले पड़ जाते हैं।

अगिया वैताल-हि० संज्ञा पुं० (सं० अग्नि, प्रा० अग्गि+वैताल) (Ignis fatuus, Will-o'-thewisp) दलदल में या तराई में इधर उधर घूमते, हुये फास्फरस (स्फुर) के अंश को दूर से जलते हुऐ लुक के समान जान पड़ते हैं। ये कभी कभी कबरिस्तानों में भी अंधेरी रातमें दिखाई देते है। सहावा।

अगियाना-हिं० क्रि० अ० [सं० अग्नि] जल उठना गरमाना। जलन का दाह युक्त होना।

अगिर:-सं० पु० चित्रक का पेड़ (Plumbago Zlanicum, *Linn*) जटा०।

अगिरेटम्-अक्वेटिकम्-ले० बड़ी किस्ती। इं० है० गा०।

अगिरेटम-कानिजाइडीज-देखो अगिरेटम्-कार्डिफोलियम्।

अगिरेटम्-कार्डिफोलियम्-ले० उचण्टी-बं०। ओसदी-बम्ब०। सहदेवी भेद। फा० इ० १ भा०। इ० मे० प्रा०। पश्चिमी भारत में होने वाली एक बनौषधि है। गुण-कृमि नाशक है। इसमें एक प्रकार का उड़नशील तेल पाया जाता है।

अगिला-हिं० वि० दे० अगला।

अगिहाना-हिं० संज्ञा० पुं० [सं० अग्निधान] आग रखने का स्थान। जहां आग जलाई जाती हो।

अगीकर-ते०। धार करेला-हिं०। किरार पं० Momordica dioica, *Roxb*

अगीरस-यु० एक प्रकार का वृक्ष है जिसका कोंद कहरुवा के नाम से प्रसिद्ध है। Succnum (treeof)

अगीरातून-यु० पटेर-हि० एक प्रकार की बूटी है जो प्रायः मोथे की शकल की होती है। इसे गुजेना भी कहते हैं। यह जलाशयों में होती है। जिससे बोरिया इत्यादि बुने जाते हैं।

अगीरिया-यु० पृथ्वी भूमि धरणी. जमीन (The Earth)

अगुण-हिं० वि० [सं०] (Destituteof attributes) गुण रहित, निर्गुण, धर्म वा व्यापार शून्य, रज, तम आदि गुण रहित। संज्ञा पु० अवगुण, दोष।

अगुरु-सं० क्लीं० अगर (See-Agara) वा० चि० ४ अ०।

अगुरुः-सं० पुं० (१) अगुरु वृक्ष, अगर-हिं०। Aloe wood (Agallocha) यथा—"अगुरुः श्री वासकं कुंकुमम्" वा० सू० १५ अ० एलादि-वर्ग। (२) कपिल वर्ण शीसम, सीसम, सीसों-हिं०। कपिल शिंशपा-सं० Dalbergia latifolia भा० पू० १ भा० वटादि वर्ग। (३) सीसम सीसों शिंशपा वृक्ष-हिं०। शिंशु-गाछ-बं०। (Dilbergia sissoo, *Roxb*) (४)-हिं० वि० हलका (Light) (५) जिसके गुरु ((Teacher) न हो।

अगुरु गन्धम्-सं० क्ली० हिंगु, हींग हिं०। हिङ्-ब० (Assafœtida)

अगुरुसारः-सं० पु० कृष्णागुरु वृक्ष, काली अगर हिं०। काला अगर-बं०। aloewood (theblack variety) (२) लौह Iron (Ferrum रत्ना०, एकार्थः)

अगुरुसारा-सं० स्त्री० शिंशपा वृक्ष। सीसों सीसम-हिं०। Dalbergia Sissoo, *Roxb*) भा०।

अगुरु शिंशपा-सं० स्त्री० शीशम (व) सीसो-हिं०। Dalbergia sissoo, *Roxb*) अ० टी० स्वामी। शिंशपा स०। शिंशु-ब०।

अगुर्वादिधूप-सं० क्रा० अगर, कपूर, लोबान, नखी, तगर, सुगन्धवाला, चन्दन और राल इनके धूप से दाह शान्त होती है। वृ० नि० २०।

अगूढ़-हिं० वि० [सं०] जो छिपा न हो। स्पष्ट। प्रगट।

अगूढ़ गन्धम्-सं० क्ली०

अगूढ़ गन्धा-हिं० संज्ञा स्त्री० (हींग) गाँधी हिंगु-हिं०। Ferula assa fœtida रा० नि० व० ६। (२) पलांडु Alliumcepa, *Linn*) (३) मृगनाभि (Musk) लशुन, लहसुन (Allium Sativum, *Linn*)।

अगूढ़ः-सं० पु० श्वेतैरण्ड (सफेद) एरण्ड या अरण्ड-हिं०। श्वेत भेरेन्दा-बं०। The castor-oil plant (Ricinuscommunis) वै० निघ०।

अगृद्धिः-सं० स्त्री० अभिलाषा, इच्छा (wish, desire) । दा० चि० अ० ७

अगेथ-संज्ञा। अगेथ- अगेथुथू- } -हिं० पुं० अरनी, का पेड़, अग्निमन्थ (Premna Integrifolia, *Linn*)

अगेट-ले०, (१) आर्तगल, नील झिण्टी-सं०। कट करैया-हिं०। Barleria coerulea (२) इ० अफ्रीक एक मूल्यवान पत्थर विशेष।

अगेटि ग्राण्डिफ्लोरा-ले० अगस्तिया, अगस्त (Greatflowered agati) फा० इं० इं० मे० मे०।

अगेनोस्मा कैर्योफाइल्लेटा-ले० इसके पत्र ओषधि कार्य में आते हैं। मेमा०। देखो मालती।

अगेनोस्मा कैलसिना-ले० मालती-हिं०, बं०, सिं०, गंधोमालती-बं०। इसके पत्र औषधि कार्य में आते हैं। मेमो०।

अगेरिक-इं० अगेरिकस-ले० } अगारीकून अगारिकस

अगेरिकव्लैन्क-फ्रा० गारीकून। देखो अगारिक एल्बस।

अगेला-हिं० संज्ञा पु० [सं० अग्र] हलका अन्न जो औसाते समय भूसे के साथ आगे जा पड़ता है, और जिसे हलवाहे आदि ले जाते हैं।

अगेविअमेरिकेना-ले० राक्षसपत्ता, बड़ा कँवार, कंटला बांस केवड़ा, (मेमो०, इं० मे० प्लां०) जंगली कँवार, हाथी सेंगाड़ (स० फा० इं०) हाथी चिंघाड़-हिं० रावकस पत्ता द०। आनैक कटड़ाजै (स० फा० इं० इ० मे० प्लां०) पिथकड़ बुन्थ ता० (मे० मो० इ० मे० प्लां०) राक्षसि मटटलु-ते०। पनम् कटड़ाज-मला०। भुत्ताले बुडुकट्टले नारु-कना०। जगली या विलायती अननाश (स) विलाति पात, कोयन मुर्गा, (आनारस अपभ्रंश)-ब०। जंगली कौमारी गु०। जंगली कुँवार पारकन्द-ब्रम्ब० विलायती

कैटलू पं० । अमेरिकन एलो (American-aloe) कैरटा इं० ।

नोट—(१) हैदराबाद के किसी २ जिले में अगेवि अमेरिकेना के लिये केतकी शब्द प्रयोग में लाया जाता है किन्तु यही नाम भारतवर्ष के अन्य भागों में केवड़ा अर्थात् केतकी (Pandanus-odoratissimus*willd*-) के लिये व्यहित होता है ।

किसी २ ग्रन्थमें उपरोक्त पौधेके लिये वर्मीपर्याय कोयाञ्जि निश्चित किया जाता है । किंतु ये नाम बड़े क़ार विषमण्डल अर्थात् सुखदर्शन (Crinum-Asiaticum *linn*) के हैं । अमेरिलिडीई अर्थात् (सुखदर्शन वर्ग) (N. O. amar-vllideoe)

उत्पत्तिस्थान—इस पौधे का मूल निवास स्थान अमेरिका है, पर अब यह भारतवर्ष के अधिक भागों में आ बसा है ।

प्रयोगांश—मूल, पत्र, और निर्यास तन्तु पुष्प, डण्डी तथा मध्य, आहार औषध तथा डोर हेतु ।

रसायनिक संघटन—इसके डठंल के रस में एक शर्करा जनक ऐलकोहल (मद्यसार होता है जिससे एक संधानित मादक पेय पदार्थ प्राप्त होताहै जिस को मेक्सिको ((Mexico) में पल्की (Pulque) कहते हैं अगेवोसी (Agavose) एक निष्क्रिय शर्करा है ।

प्रभाव—मूल मूत्रल और उपदंशघ्न है रस मृदुभेदनीय मूत्रल रजःप्रवर्तक और स्कर्वी नाशक (Antiscordutic) है ।

औषधि निर्माण—क्वाथ पत्र स्वरस मूली का रस एवं निर्यास ।

प्रयोग—इसका मूल सारसापारिला के साथ क्वाथ रूप से उपदंश रोग में प्रयुक्त होता है । लिण्डले

अमेरिकन डाक्टर—इसके पत्तेसे निचोड़े हुये रसको शोथघ्न और परिवर्तक प्रभाव के लिये विशेषकर उपदंश रोग में उपयोग करते हैं ।

इसका रस कोष्ठ मृदुकर मूत्र विरेचनीय और रजः प्रवर्तक २ फ्लुइड आउंस की मात्रा में स्कर्वी नाशक है । (यु० एस० डिस्पेन्सरी)

जरनल शरीदन (Genl-Sheridan) का वर्णन है कि उन्होने अपने आदमियों पर जो स्कर्वी से व्यथित थे इसका उपयोग किया और इसे बहुत लाभ दायक पाया । (इयर बुफकार्मे० १८-७५, २३२)

तर और गूदादार पत्तों का पुल्टिस रूप से उपयोग अत्यन्त गुणदायी है ! इसका ताजा रस कुचले हुये स्थान पर लगाया जाता है ।

पत्तों तथा प्रकाण्ड के निम्न भाग से निकलता हुआ निर्यास मैक्सिको में दांत के दर्द केजिये बर्त्ता जाता है । इसके पत्ते का गूदा मलमल के तह में रख आंख आने में चक्षुओं पर बांधा जाता है । और शर्करा के साथ दिन में २ बार सूजाक में प्रयुक्त होता है । (एच० एस० पो० किन्सले मद्रास)

देशी लोग इसे पुरातन सूजाक में बर्तते है । (सर्ज० मेज० आई० एम० बोरह० बाला० शोर०) ।

अगेविप्रेनीफोलिया–ले० ।

अगेवि कैण्ट्यला–ले० विलायती अनन्नास । इं० हैं० गा० ।

अगेविविपेरा–ले० कंटल –सं० । कठालई ता० । पेठाकलबंठ ते० । मे० मो० इसके रेशे काम में आते हैं ।

अगेरिक ऑफ दी ओक इं०–खुम्बी गारीकून बलूती अगारिकस ऑष्ट्रि एटस Agaricus ostreatos gacr इं० मे० मे० ।

अगेरिसीन–इ० अगारिसीन ।

अगेह–हिं० वि० [सं०] गृह रहित । जिसके घर द्वार न हो । बे ठिकाने का ।

अगैरा–हिं० संज्ञा पु० [सं० अग्र] नई फसल की पहली आँटी जो प्रायः जमीदार को भेंट की जाती है ।

अगोचर–हिं वि० [स०] जिसका अनुभव इंद्रियों को न हो । बोधागम्य इंद्रियातीत अप्रत्यक्ष । अप्रगट अव्यक्त । (Imperceptible by-the senses Not obious)

अगोर–पु० प्यूसी खीश–हिं०। पीयूष सं० दुग्ध देने वाले पशुओं यथा गो भैंस प्रभृति के ब्याने केप्रथम दिवस से लेकर चार छः रोज बाद तक का दुग्ध जो अग्नि पर रखने से थक्का थक्का जम जाता है। फटा।

अगोही–हिं० संज्ञा पु० [सं० अग्र] वह बैल जिसके सींग आगे को ओर निकले हों।

अगौड़ी–हिं० सं० पु० [सं० अग्र] ईख के ऊपर का पतला भाग अगाव।

अगौका–सं०पु०(१)(A fadulous animal-witheight. legs) शरभ (२) पक्षी (A Bird (३) सिंह मे०।

अगौरा–हिं० सज्ञा पु० [सं० अग्र+हिं० ओर] ऊख ऊपर का पतला नीरस भाग जिसमें गाँठें नजदीक नजदीक होती हैं।

अगौली–हिं० सं० स्त्री० [देश०] ईख की एक छोटी और कड़ी जाति है।

अगंड–हिं सज्ञा पु० [सं०] धड़ से जिसका हाथ पैर कट गया हो।

अगई अव० कर्कौट–बं०द० अगई।

अग्जव–अ० (ए० ब०) उगाजिब (ब० ब०)। लिंग और जांघ या रान के मध्य की दूरी बक्षण जघासी निम्न कच्छ। ग्रोइन (Groin) इं०।

अग्जल–अ० तपेनौबत फा० नौबती बुखार बारी का बुखार–उ० पर्याय ज्वर पारी का ज्वर–हिं०। Intermitenot fever.

अग्जिय्यह–अ० (ब० ब०) गिजा (ए० ब०)। अश्याय खुर्दनी–फा० भक्ष्य पदार्थ भोज्य पदार्थ खाद्य आहार खाने की वस्तु हिं०। डाइटस (Diets)–इं०।

अग्तम–अ० वह व्यक्ति जो शुद्ध बात न कर सके।

अग्तश–अ० अजहर रोजकोर, फा० दिवसांध, दिन अंधा दिनौंधी का रोगी वह व्यक्ति जो दिन में भली भांति न देख सके हेमरीलोप (पिया) Homeralape-pia इं०।

अग्दीदूस–अ० खुन्यह फौकानी एपांड–हिं०। (Epididymus)

अग्नायी–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] The wife of Agni and goddess of fire अग्नि की स्त्री स्वाहा। त्रेतायुग।

अग्नाशयः–सं० अग्न्याशयः (Pancreas)।

अग्नाशयद्रव–हिं० पु० अग्नाशय रस (Pancreatic juice)

अग्नाशय प्रदाह–हिं० क्लोम ग्रन्थि प्रदाह, अग्न्याशय प्रदाह, अग्नाशय का शोथ, (Pancreatitis) इल्तिहाव बन्कर्यास, वर्म वन्कर्यास–अ०। सोजिश लब्लबह, लबलबह की सूजन–उ०।

अग्नाशय रस–हिं० पुं० क्लोम रस। अग्नि रस। (Pancreatic juice)

अग्नाशयिक प्रणाली–हिं० स्त्री० (Pancreatic duct) क्लोम ग्रन्थिस्थ प्रणाली। मजरीयुल् वान्करासू–अ०। वान्करास या लबलबह की नाली–उ०। इस नाली द्वारा अग्नाशय रस द्वादशांगुलांत्र में गिरता है।

अग्नाशयिक क्षय–हिं० पुं० (Pancreatic Phthisis) अग्न्याशय जन्य क्षय रोग। सिल्ल इन्करासी–अ०। लबलबह की सिल–उ०। इस प्रकार का क्षय अग्नाशय के विकृत होकर संकुचित होजाने से उत्पन्न होता है। इसमें रोगी दिन दिन निर्बल होता जाता है।

अग्निः–सं० पुं० } The fire
अग्नि–हिं० संज्ञा स्त्री० } of The Stomach digestive faculty जठराग्नि, पाचनशक्ति। यहमन्द, तीक्ष्ण विषम और समभेद से चार प्रकार की होती है। यथा मनुष्य के कफ की अधिकता से मन्दाग्नि, पित्त की अधिकता से तीक्ष्णाग्नि, वात की अधिकता से विषमाग्नि तथा तीनों दोषों की समता से समाग्नि होती है। विषमाग्नि वातज रोगों को, तीक्ष्णाग्नि पित्तज रोगो को और मन्दाग्नि कफज रोगों को उत्पन्न करती है। लक्षण—समाग्नि वाले का किया हुआ यथोचित भोजन सम्यग् रूप से पच जाता है। मन्दाग्नि वाले मनुष्य का किया हुआ थोड़ा सा भी भोजन अच्छे प्रकार नहीं पचता और विषमाग्नि-वाले मनुष्य का किया हुआ

भोजन कभी भली प्रकार पचता और कभी नहीं पचता, तथा जिस मनुष्य को अत्यन्त किया हुआ भोजन भी सुख पूर्वक पच जाय उसको तीक्ष्ण अग्नि कहते हैं। इन चारों प्रकार की अग्नियों में समाग्नि उत्तम है। मा० नि० अग्नि० मा० (२) पाचक, रञ्जक प्रभृति पञ्चपित्त [देखो– पित्त] (३) तेज पदार्थ विशेष, तेजका गोचर रूप' उष्णता, आग–हिं०। फायर (Fire)–इ० नार यरह, आतश–अ०, फा०। आगुनि-बं०। यह पृथ्वी, जल, वायु आकाश आदि पंच भूतों का पंच तत्वों में से एक है। इसके संस्कृत पर्याय– वैश्वानर, वह्नि, बोतिहोत्र धनञ्जय- कृतीयोनि ज्वलन, जातवेदस्, तनूनपात् तनूनपा, वर्हि, शुष्मा, कृष्णवर्त्मा, शोचिष्केश, उपर्बुध, आश्रयाश, बृहद्भानु, कृशानु, पावक, अनल, रोहिताश्व, वायुसखा, शिखावान्, शिखी, आशु-शुशुक्षणि, हिरण्यरेता, हुतभुक्, हव्यभुक्, दहन, हव्यवाहन सप्तार्चि,दमुना, शुक्र चित्रभानु, विभावस सुचिरप्पितो (अटी) वृषाकपि, जुहूवान् कपिल, पिंगल, अरणि, अगिर,पाचन, विश्वपूषा, छाग-वाहन, कृष्णार्चि०, भास्कर, जुहवार, उदर्चि, वसु, सुष्म, द्विमराति, तमोनुत्, सुशिख, सप्तजिह्व, अप परिक, सर्व्वदेवमुख (ज)।

अग्नितप के गुण—वात, कफ, स्तब्धता, शीत तथा कम्प नाशक, आमाशयकर और रक्त पित्त को कुपित करने वाला है। राज० भा०। आग्नेय द्रव्य—आग्नेय द्रव्य रूक्ष, तीक्ष्ण, उष्ण, विशद (सूक्ष्म स्रोतों में जाने वाले) और रूप गुण बहुल होते हैं। ये दाह, कान्ति, वर्ण और पाक कारक होते हैं। वा० सं० अ० ६।

(४) द्रव्यों का तीसरा रूपजिसे वायवीय अर्थात् गेसियस (Gaseous) कहते है इसे बाष्पीय (भापकासा) कहते है। यह हमारा प्राचीन तेजसू तत्व है। हवा, पानी की भाप इत्यादि इसके उदाहरण है। किसी पदार्थ को जब बहुत गर्मी दी जाती है तो वह अंत में इस रूप को धारण करता है। तेजस द्रव्यों में कुछ तो दृश्य है अर्थात् देख पड़ते हैं और कुछ अदृश्य, इनमें दो विशेष गुण है, एक तो अपना इसका कोई आकार नहीं होता, जैसे बर्तन में भर दीजिये उसी आकार का हो जायगा। गीले, चौखटे, तिकोने आकार के धारण करने में इसे कोई कठिनाई नहीं होती। दूसरी बात जो इसमें पाई जाती है वह यह है कि इसका कोई अपना परिमाण नहीं होता। एक इत्र की शीशी लीजिये अभी उसमें गंध के परिमाणु बाष्प रूप से है, किंतु उनका परिमाण उतना ही है जितनी कि शीशी में खाली जगह है। यदि आप शीशी की डाट खोल दीजिये तो अभी गंध सारी कोठरी में फैल जायगी। अर्थात् अब वही परमाणु बढ़कर कोठरी के बराबर हो गया। अतः वायवीय द्रव्य वे है जो अपना स्वयं कोई परिमाण या आकार नहीं रखते प्रत्युत जिस पात्र में रक्खे जाते है उसी के आकार और परिमाण को ग्रहण कर लेते है। भौ० वि०।

(५) चित्रक वा चीता (Plumbagoze ylanica' *linn*) सिया० ग्रहणी चि०। बिल्वादि घृत। वा० सू० १५ अ० आरग्वध व०। (६) अग्निजार वृक्ष (agnijara) रा० नि० ब० २३। (७) पोतबालक। (८)केशर Saffron, (Crocussativus *linn*) (९) पित्त (Bile), (१०) अन्न (११) निम्बुक वा नीबू (Citrus medica (*Cold*) रा० नि० व० २१। (१२) स्वर्ण, सुवर्ण (Aurum) रा० नि० व० १३। (१३) भल्लातक, भिलावाँ (Sem. ecar pus anacardium, *linn*) रा० नि० व० ११। (१४) रक्त चित्रक, लालचीता (Plumbago Rosea *linn*) रा० नि० व० ६। च० द० ग्रहणी चि०। कपित्थाष्टक।

अग्नि–(१५) वैद्यक के मत से अग्नि तीन प्रकार की मानी गई है–यथा–(क) भौम, जो तृण काष्ठ आदि के जलने से उत्पन्न होती है। (ख) दिव्य–जो आकाश में बिजली से उत्पन्न होती है, (ग) उदर, व जठर, जो पित्त रूप से नाभि के ऊपर हृदय के नीचे रहकर भोजन भस्म करती है। इसी प्रकार कर्मकांड में अग्नि छः

प्रकार की मानी गई है । गार्हपत्य आहवनीय, दक्षिणाग्नि, सभ्याग्नि, आवसथ्य, औपासनाग्नि इनमें पहिली तीन प्रधान है। (१६) वेद के तीन प्रधान देवताओं (अग्नि, वायु सूर्य) में से एक ।

अग्नि आर–नैपा० अथार, यज्ञ छाल । मे० मो० ।

अग्निउ–कुमा० वसौंटा, वक्राच । मे० मो० ।

अग्निउम्–हिं० पु० वसौटा, वक्राच । अग्निरुहा, मांसरोहिणी–सं० ।

अग्निक–हिं० सज्ञा पुं० } (१) इन्द्र गोप, बीर
अग्निकः–सं० पु० } बहूटी, अषाढ़े पोका–
वं० an insect of a birght scarlet colour(mutellao cciden tais) सु० सि० अ० । हे० च० ४ का० । (२) चित्रक वृक्ष (Plumbago zeylanica*linn*) वा० चि० ७अ० । (३) भिलावां, भल्लातक वृक्ष (Semecarpus anacardium *linn*) भा० प्र० १ भा० ह० ब०

अग्निकर चूर्ण–हिं० पुं० शर्करा, अनार दाना, हड़ सोंचर नोन, कुड़े की छाल, इनका चूर्ण अग्नि संदीपक और अतिसार नाशक है । व्यास० यो० सं० ।

अग्निकरो रसः–सं० पु० शिंगरफ को काले बैंगन के रस से ३ बार भावित करे । पुनः वन भांटा, चित्रक, पीपल की छाल, अमली और केले की जड़ इनके रसों अथवा क्वाथों की क्रम से भावना दें फिर उसमें मेषनाद (चौलाई खारदार) आक थूहर, चिर्चिटा और ढांक इनके क्षार, सज्जी, यव-क्षार, सेंधानमक इन्हें सिंगरफ के बराबर मिलाएँ, फिर सर्वतुल्य काली मिर्च तथा मिर्चों से आधी लवंग मिलाकर नीबू के रस से खूब भावना दें। इसे अदरख या पान के रस के अनुपान आवश्यकतानुसार वर्तना चाहिये ।

मात्रा—१–३ मा० पर्यन्त । गुण—यह जठराग्नि को प्रदीप्त करता है ।

अग्निकर्णी–सं० स्त्री० (A tree) वृक्ष विशेष । वै० निघ० १ भा० अभिन्यास ज्वर चि० ।

अग्नि-कर्म–सं० क्ली०, हिं० संज्ञा पु० ग्रन्थ्यादि रोगों में अग्नि में लाल किये हुए शलाका आदि किए जाने वाले दाह क्रिया को 'अग्निकर्म' कहते हैं । क्षार से दाहकार्य श्रेष्ट है गुण के विचार से कि क्रिया के विचार से । काल—इसके लिए शरद और ग्रीष्म ऋतु को छोड़कर अन्य समस्त ऋतु श्रेष्ठ है । इसके लिये पात्र अर्थात् योग्य रोगी दुर्बल, बालक, वृद्ध और डरपोंक प्रभृति के अतिरिक्त अन्य समस्त । सु० सू० १२ अ०, वा० सि० १५ अ० ।

अग्निका–सं० स्त्री० (Gossypium Indicu कपास, कपीस ।

अग्नि-काश–हिं० (oxygen) ऊष्मजन, ओ जन ।

अग्नि काष्ट–हिं० संज्ञः पु० } (१) अगर, अग
अग्नि काष्टम्–सं० क्ली० }
(agalochum) "अग्निकाष्ठ करीरेस्यात रा० नि० व० २३ । (२) शमी काष्ठ acaci suma रा० नि० व० १२ । करील ।

अग्नि कीट–हिं० संज्ञा पु० [सं०] समंदर नाम क कीड़ा जिसका निवास अग्नि में माना जाता है।

अग्नि कीलः–सं० पु० अग्निशिखा । अग्नि ज्वाल बं० (gloriosa superba) लांगली, कलि हारी ।

अग्नि कुक्कुट–हिं० संज्ञा पु० }
अग्निकुक्कुटः–सं० पु० }
जलदाग्नि, तृणोल्का, विद्युत । ज्वलन्त-नूड़ी-बं० (Lightning) जलता हुआ तृण वा पुवाल का पूला, लुक, लुकारी ।

अग्नि-कुण्ड-रसः–सं० पु० गंधक, पारद ४–४ मा० ताम्रभस्म २ मा०, मिला कज्जली कर ४ तह भृङ्ग मल या खादी में बांध अमलतास और भांगरे के क्वाथ में डालकर १ दिन और एक रात रहने दें दूसरे दिन निकालकर १ अहोरात्र खिरनी के दूध में डालकर रक्खें । पुनः सम्पुट में बांध लघुपुट दे पकाएँ जिससे कि पारद उड़ न जाय । पश्चात उपर्युक्त द्रव्यों की पुट दें । इस प्रकार ५ पुट दें। पुनः उसके समान शुद्ध जमालगोटा मिला मर्दन कर २ या ३ रत्ती प्रमाण की गोली बनाएँ । गुण—जल के साथ सेवन करने से रेचन होता

आध्मान, शूल, उदरामय और मलेरिया ज्वर का नाश होता है। र० यो० सा०।

अग्निकुमार-मोदकः—खस, नेत्रवाला, नागरमोथा, दालचीनी, तमालपत्र, नागकेशर, जीरा सफेद, स्याह जीरा, काकड़ासिंगी, कायफल, पुष्करमूल, कचूर, सोंठ, मिर्च, पीपल, बेलगिरी, धनियां, जायफल, लौंग, कपूर, कांतलौहभस्म, शिलाजतु, वंशलोचन, छोटी हलायची बीज, जटामांसी, रास्ना, तगर, चित्रक, लाजवन्ती, गुलशकरी, अभ्रकभस्म, बंगभस्म, मुरामांसी इन्हें समान भाग लें, इन्हीं के समान मेंथी तथा इस चूर्ण से आधी शुद्ध पिसी भंग लें, इसमें शहद तथा मिश्री उचित मात्रा में मिलाकर मोदक प्रस्तुत करें। मात्रा १ तो०।

अनुपान—जल, बकरी का दूध।

यह सेवन से उग्र संग्रहणी, कास, श्वास, आमवात, मन्दाग्नि, जीर्णज्वर, विषम ज्वर, विबन्ध, अफरा, शूल, यकृत, प्लीहा, १८ प्रकार का कुष्ठ, उदावर्त, गुल्म तथा उदर रोग को नाश करे। भै० र० ग्रहण्याधिकार।

अग्निकुमार रसः—सं० पु० पारद, गंधक, वच्छनाग, त्रिकुटा, सुहागा भुना, लौह भस्म, अजवाइन, अहिफेन, प्रत्येक समान भाग सर्व तुल्य अभ्रक भस्म लें। पुनः चित्रक के रस में १ प्रहर मर्दन कर चना प्रमाण गोलियां बनाएँ।

गुण—अजीर्ण, संग्रहणी, जठराग्नि की मन्दता पक्वातिसार को दूर करता और बाजीकरण करता है। र० सं०।

(२) मिर्च, बच, कूट नागरमोंथा इन्हें समान भाग लें, इनके तुल्य मीठा बिष लें, उत्तम चूर्ण कर अदरख के रस से खरल कर १-१ रत्ती की गोलियां बनाएँ। मात्रा—१ रत्ती।

अनुपान—आमज्वर में शहद, सोंठ से कफ, ज्वर में संभालू के रस में, प्रतिश्याय और पीनस में अदरख के रस में, अग्निमांद्य में लवंग से, शोथ (सूजन) में दशमूल क्वाथ के साथ, संग्रहणी में सोंठ से, अतिसार में मोंथा से, आमातिसार में सोंठ से, धनियां के क्वाथ से, शहद, अदरख के साथ, पक्वातिसार में पीपर, अदरख के रस के साथ, सन्निपात ज्वर में कटेरी के रस के साथ श्वास, खांसी में तैल और गुड़ के साथ, यह चित्त स्वस्थ कारक आम दोष नाशक और जठराग्नि को बढ़ाने वाला प्रसिद्ध अग्निकुमार नामक रस है। भै० र० ज्वराधिकारः।

(३) पारा, गंधक, सुहागा ये समभाग लें, मीठा बिष ३ भा०, कौड़ी भस्म २ भा०, शंख भस्म २ भा०, मिर्च ८ भा०, पारा गंधक की कज्जली कर सब औषधियों को चूर्णकर मिलाएँ पुनः पके जम्भीरी रस से अच्छी तरह मर्दन कर दो-दो रत्ती प्रमाण की गोलियां प्रस्तुत करें। इसके सेवन से विशूचिका (हैजा) अजीर्ण और वात रोग का नाश होता है। इसमें किसी किसी आचार्यों के मत से १ भाग बच का भी मिलाना चाहिये। रस० रा० सु०। भै० र० अग्निमा० अधि०। यो० त० अजी० अ०।

नोट—इस नाम के भिन्न २ योग अनेक पुस्तकों में वर्णित हैं।

अग्नि-कुमार-लौह—हिं० पु० प्लीहाधिकार में वर्णित रस। योग इस प्रकार है:—

यथा—तूतिया, हींग, सुहागा, सैंधव, धनियां जीरा, अजवाइन, सोंठ मिर्च, लौंग, इलायची, विडंग प्रत्येक १-१ तोला इन सबों के समान लौह तथा पारद ४ तो० व गंधक ४ तो०।

निर्माणविधि—सर्व प्रथम पारद व गंधक की कज्जली कर पश्चात् शेष औषधियों को मिलाकर भली भांति घोटें पुनः इसको शीशी प्रभृति में सुरक्षित रखें। मात्रा—आवश्यकतानुसार।

अनुपान—घृत और मधु। वृ० र० रा० सु० ३३४ योग।

अग्निकेतुः—सं० पु० (Smoke) धूम।

अग्निकोण—हि० संज्ञा पु० [सं०] (The south east corner) पूर्व और दक्षिण का कोना, अग्निदिक्।

अग्निक्रिया—हि० संज्ञा स्त्री० [सं०] (Funeral ceremonies) शव का अग्निदाह। मुर्दा जलाना।

अग्निगर्भः–सं० पु० दादमारी इं० मे० मे० (Ammannia Baccifera, *Linn*)

अग्निगर्भ–हिं० संज्ञा पु०
अग्निगर्भः–सं० पु० } (१) अग्निजार वृक्ष (A plant used in medicine of stimulant properties) रा० नि० व० ६। (२) आतिशी शीशा, सूर्य कान्त मणि (The sun stone) (३) शमी वृक्ष। Acacia suma

अग्नि-गर्भ-पर्वत–हिं० संज्ञा पु० [सं०] ज्वालामुखी पहाड़ (Volcano)

अग्नि गर्भा–सं० स्त्री० (१) शमी वृक्ष (Acacia suma)

गुण—तिक्त, कटु, कषाय, शीत, वीर्य, लघु, रेचनी, कफ, कास, श्वास, कुष्ठ, अर्श, तथा कृमि नाशक है। भा० पू० १ भा० (२) महा ज्यो. तिष्मती लता सं० बड़ी माल कागुनी–हिं०। बड़ा लता फटकी–बं०। (Cardisspermum Halicacabum, *Linn*) रा० नि०। करीब।

अग्नि गर्भा वटी–सं० स्त्री० र० र०, र० चं० उदर विकारे। शुद्ध पारा ४ तो० शुद्ध गन्धक ८ तो०, लोह, सुहागा वच कूट, हींग त्रिकुटा, और हल्दी, ये सब पारे से अर्ध प्रमाण में ले, सबका चूर्ण कर पश्चात मानकन्द, जिमीकन्द, व्याघ्रनखी (हिं०–बघ–नहा, म०–वाघांटी) और त्रिफला के रस अथवा क्वाथ से अलग अलग भावित करे। फिर ६–६ रत्ती की गोलियां प्रस्तुत करें।

गुण—प्लीहा, गुल्म, उदर रोग शूल यकृत, अष्ठीला, कामला, हलीमक, पांडु, कृमिरोग, और कुष्ट को नष्ट करती है।

अग्निगर्भो रसः–(१ म)–सं० पं० शुद्ध पारा, ताम्र, लौह, अभ्रक, सीसा, वंग प्रत्येक की भस्म. बच्छनाग, सोनामाखी शुद्ध, मुर्दासंगशुद्ध, सुहागा भुना, शिलाजीत, मैनसिल शुद्ध, कमीला और गंधक शुद्ध प्रत्येक तुल्यभाग और सर्वतुल्य श्वेत आक की जड़ की छाल लेकर धीकुंवार, चित्रक, त्रिफला, अम्लबेत, कचूर, ब्राह्मी, और अम्लो रस (जिसका रस न मिले उसके स्थान मेंउस क्वाथ) से सात वार अलग अलग भावित क पुनः भिलावे के क्वाथ से २६, गोभी के रस ६, त्रिकटु के क्वाथ से १०, जिमीकंदक्वाथ मे २ और ताड़ी से ३ भावना दे तो यह सिद्ध होता मात्रा १ माशा।

अनुपान–तुलसी, पीपल और शहद, हड़ और शहद काला नमक और चित्रक, त्रिकुटा, जिमीकं चित्रक अजवाइन, गुड़ पीपल, ताड़ी और सताव का चूर्ण अथवा आवले का चूर्ण और शहद अथवा घी और त्रिकुटा है। यह सभी प्रकार अर्श, मन्दाग्नि, प्रमेह कान और नेत्र पीड़ा शूल गुल्म उदररोग, अंधेरी, दमा, उदावर्त, कृमिरोग पीनस, पेट फूलना, तूनी, प्रात्यष्ठीला, प्रतूनी शोथ और पांडु रोग को नष्ट करता हैं। इसे सेवन करने वालों को वैगन, तेल, शाक, स्त्री स दिन का सोना और घोड़े की सवारी मना है। रसावतारे—अर्श० अधि० (२) ज्वरधिकार रसावतारे।

अग्नि घृतम्–सं० क्ली० पीपल, पीपलामूल, चित्रक गजपिप्पली, हींग, अजमोद, चव्य, पञ्च लवण जवाखार, सज्जीखार, हाऊबेर, प्रत्येक ८ ८ तो० अदरख का रस ६४ तो०, घृत ६४ तो०, दही, कांजी, शुक्त घृत के बराबर लें, पुनः विधिवत पकाये।

गुण—अर्श, गुल्म, उदर, ग्रन्थि, अर्बुद, अपची, खांसी, कफ, भेद, वायुरोग, संग्रहणी, शोथ, भगन्दर, बस्तिगत रोग और कुक्षिगत रोग में हितकर है। च० द०। वंग० से० सं० अजीर्ण अ०। अर्श अ०।

अग्नि चक्र–हिं० संज्ञा० पु० [सं०] योग में शरीर के भीतर माने हुये छः चक्रों में से एक। इसका स्थान भौहो का मध्य रंग बिजली का सा और देवता परमात्मा माने गए है: इस चक्र में जिस कमल की भावना की गई है उसके दलों (पखुड़ियों) की संख्या दो और उनके अक्षर ह और क्ष है।

अग्नि चारः-सं० पु० एक औषधि है, जो पश्चिमी समुद्र के किनारे होती है । (Phaseolus gallus) ।

अग्नि चूड़ः-सं० पु० (Acock) ताम्र चूड़ पक्षी । कोमड़ा-द० हिं० । कुक्कुट, मुर्ग-हिं० । कूकड़ा-बं० । ग्राम्य व वन्य भेद से ये दो प्रकार के होते है । इनमें (१) ग्राम्य बृंहण, वृष्य बल्य गुरु, शुक्र, एवं कफ कर्ता, स्निग्ध, उष्ण वीर्य और रस में कषैला होता है । (२) आरण्य (जंगली) स्निग्ध, बृंहण, श्लेष्मा कारक तथा गुरु हैं और वात, पित्त, क्षत वमन तथा विषम ज्वर नाशक है । भा० । हृद्य, श्लेष्मा नाशक तथा लघु है । रा० नि० व० ११ । रुक्ष, स्वाद, (मधुर) कषैला और शीतल है । राज०

अग्निज-हिं० संज्ञा पु० } A Plant
अग्निजः-सं० पु० } used in medicine ofstimulant Properties.

(१) समुद्र फल का पेड़, अग्निजार वृक्ष । (२) (semecarpus anacardium' *linn*) भिलावां भल्लातक (३) (Gold) सोना सुवर्ण (Aurum) पांस धातु (Muscle) वै० श० ।

अग्नि जननी-सं० स्त्री० हिं० वि० (१) अग्नि से उत्पन्न । (२) अग्नि को उत्पन्न करने वाला (३) अग्नि संदीपक । पाचक ।

अग्नि जननी वटी-सं० स्त्री० पारद, गंधक, सौंठ, सुहागा, वच्छनाग, काली मिर्च, समान भाग लें । पुनः बड़हल के रस में मर्दन कर चना प्रमाण गोलियां बनाऐं ।

गुण—यह अग्नि प्रदीपक है भै० र० अग्नि मा० अ० ।

अग्नि जातः-सं० अग्नि जार वृक्ष । (Seeagnijara.) रा० नि० व० ६ ।

अग्नि जार-हिं० संज्ञा पु० }
अग्नि जारः-सं० पु० }
(APlant used in medicine of stimulant Properties) पश्चिमी समुद्र में उक्त नाम की प्रसिद्ध सागर सम्भूत औषधि विशेष समुद्र फल का पेड़ इसके पर्याय निम्न हैं:—अग्नि निर्य्यासः अग्निगर्भः, अग्निज, बड़वाग्निमलः जरायु, अर्णवोद्भवः, अग्निजातः और सिंधुफलं । लक्षण—यह चार प्रकार के वर्ण वाले होते हैं । इनमें लोहित वर्ण का श्रेष्ठ होता है । जैसे—जाराभो दहनस्पर्शी पिच्छिलः सागरोद्भवः । जरायस्तच्चतुर्वर्णः तेषु श्रेष्ठः स लोहितः ॥

गुण—कटु, रस- युक्त उष्ण वीर्य लघुपाकी तथा कफ, वायु, सन्निपात, शूल रोग नाशक और पित्त कारक है । यथा—स्यादग्नि जारः कटु उष्ण गुदामय वात कफामयघ्नः । पित्त प्रदः सोऽधिक बीर्य सन्निपातशूलाति शीतामय नाशकश्च ॥ रा० नि० व० ६ । (umber) अम्बर अश्हब ।

अग्नि जाल-सं० पु० अग्निजारः समुद्र फल का वृक्ष ।

अग्निजिह्व-हिं० संज्ञा पु० [सं०] देवता, अमर ।

अग्नि जिह्वा -हिं० संज्ञा स्त्री० }
अग्नि जिह्विका-सं० स्त्री० }
(Gloriosa Superba, *linn*) लांगली वृक्ष । रत्ना० । कलिहारी-हिं० । कलावी-म० ईष लांगुलिया बं० ।

गुण—दस्तावर, तिक्त, कड़वी, चरपरी, कषैली, तीक्ष्ण, उष्ण, हलकी, पित्तकारक और खारी, गर्भ को गिराने वाली है । कुष्ट, शोफ, (सूजन) अर्श (बवासीर) व्रण, शूल, श्लेष्म तथा कृमि को नष्ट करने वाली कफ' वात, नाशक, और अन्तः शल्य निस्सारक है । भा० पू० १ भ० गु० ब० (A tongue or flame of fire) आग की लपट ।

अग्नि ज्वाला-सं० स्त्री० (१) गजपीपल-हिं० । गज पिपुल बं० । पॉथोस आफिसिनैलिस (Pothos off icinalis)-ले० विद्वान् लोग चव्य के फल को ही गजपीपल कहते हैं । यथा चविकायाः फलम् प्राज्ञैः कथिता गजपिप्पली । भा० पू० १ भ० ।

गुण—गजपीपल चरपरी वात कफ नाशक अग्नि को दीपन करने वाली और गरम है । और अतिसार, श्वांस, कंठ के रोग और कृमि रोग को

नष्ट करने वाली है। (२) लांगली वृक्ष (Gloriosa Superba (३) अग्निजार (Agnijara) (४) जलपिप्पली हिं०। कांचड़ा बं० जलपिप्पली म०। (५) धात की वृक्ष रा० नि० व० २३। (६) आग की लौ (Flame) (७) आंवले का पेड़ आमला। (Phyllantha Emblica) (८) अग्निबाड़ा। (Agnibada)

अग्नि झाल–हिं० संज्ञा पु० [सं०] अग्निज्वाला जरायु। सफेद। चित्रक (whitleadwort) -इं०।

(२) जलपिप्पली का पेड़

अग्नि तप्त–हिं० वि० आग पर गरम किया हुआ।

अग्नि तुण्डावटी–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं] अग्नितुण्डो वटीः—

अग्नि तुण्डी वटी–सं० स्त्री० शुद्ध पारद, वच्छनाग, गंधक, अजमोद, त्रिफला, सज्जीखार, जवाखार, चित्रक, सैंधा नमक, जीरा, काला नमक, वायविडंग, समुद्रलवण, त्रिकुटा, प्रत्येक समान भाग, सबके समान कुचला ले चूर्ण करे। पुनः जम्भीरी नीबू के रस में घोटकर मिर्च प्रमाण गोलियां बनाएँ।

मात्रा—१–३ गोली। रसेन्द्र कल्पद्रुम में इसकी मात्रा ६ रत्ती लिखी है। परन्तु जब कुचले के स्थान में बकायन के बीज लिये जाएँ तो इसकी मात्रा दो गोली काफी होती है।

गुण—इसके सेवन से सम्पूर्ण अजीर्ण और मन्दाग्नि दूर होती है। भै० र०। र० यो० सा०

अग्नि-तुण्डी रसः–सं० पु० पारद शुद्ध, गंधक शुद्ध, विष शुद्ध अजमोदा (यमानी) त्रिफला, सज्जी, सोडा, जवाखार, चित्रक, जीरा, सेंधा लवण, काला लवण, (सौवर्चल) वायविडंग, समुद्र लवण, त्रिकुटा इन्हें समान भाग लें। सर्व तुल्य विषमुष्टी (कुचिला) लें, चूर्णकर जम्भीरी के रस में घोट मिर्च प्रमाण गोलियां बनाएँ।

गुण—इसके सेवन से मन्दाग्नि दूर होती है शार्ङ्ग० सं० मध्य खं० अ० १२।

अग्निद–हिं० वि० अग्नि दीपन। (Tonic Stomachic)

अग्नि-दग्ध–हिं० वि० आग से जला हुआ।

अग्नि-दमनकः–सं० पु० | Medicinal plant
अग्नि-दमनी–सं० स्त्री० | stimulant and stomachic considered as asma species of Cantacarica. क्षुद्र कं वृक्ष विशेष। गणिकारी हिं०। गणिरी–बं० दुरालभा भेद–हिं०, बं०। धमासा भेदअगिदम म०। वै० निघ०। कोई कोई शोला को कहते इसके पर्याय निम्न हैं—

यथा–वह्निदमनी, बहूकंटका, बल्लि कंटकारि गुच्छफला, क्षुद्रफला, क्षुद्रकंटकारी, क्षुद्रदुःस्पर्श क्षुद्रकंटकारिका, मर्त्येन्द्रमाता, दमनी। गुण–कटु, उष्ण, रूक्ष, रुचिकारक, अग्निदीपक है रा० नि० व० ४। बात गुल्म तथा कफनाश और प्लीहाविकार नष्ट करती है। वै० निघ०।

अग्नि-दाह–हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) आग जलने का कार्य। भस्म करना, ज़लाना। (२ शवदाह, मुर्दा जलाना (Funeral ceremonies)

अग्नि-दीपक–हिं० वि० [सं०] जठराग्नि को उ जित करने वाला, पाचन शक्ति को बढ़ाने वाला अग्निवर्धक, दीपक (Stomachic)

अग्नि-दीपन–हिं० वि० अग्निदीपक।

अग्निदीपन–हिं० संज्ञा पु० [सं०] [वि० अग्नि दीपक] (१) अग्निवर्द्धन, जठराग्नि की वृद्धि पाचन शक्ति की बढ़ती। (२) अग्निवर्द्ध औषध, पाचन शक्ति को बढ़ाने वाली दवा, व दवा जिसके खाने से भूख लगे।

अग्नि-दीपनः–सं० पुं० (१) वरुणवृक्ष, बरना–हिं० बरुण गाछ–बं०। (Crataeva religiosa *Fart*) भा० पू० १ भा०। (२) अग्निवर्द्ध (Stomachic, Tonic)

अग्निदीपन रसः–सं० पुं० पारद, मीठा तेलिया लवंग, गंधक प्रत्येक १ भाग, मरिच २ भाग जायफल आधा भाग, सबको महीन करके अदरख के रस की भावना देकर रक्खें। मात्रा—१ मा०

गुण—इसे अदरख के रस के साथ सेवन करने से शीघ्र ही अग्नि प्रदीप्त होती है। र० प्र० सु० अ० ८।

अग्नि-दीपनी. नीय-सं० त्रि० दीपन अग्निवर्द्धक, अग्नि वृद्धि करी-हिं०। (A medicine which stimulates the digestive fire or increases the appetite, Stomachic)

अग्नि-दीपनी वटी—सं० स्त्री० गन्धक काली मिर्च सोंठ सेंधा नमक जवाखार समभाग ले मर्दन कर चने प्रमाण गोली बनाएँ। मात्रा—१ गोली।

गुण—यह जठराग्नि को प्रदीप्त करती है।

अग्नि-दीप्ता—सं० स्त्री० महाज्योतिष्मती लता माल कांगनी, ज्योतिष्मती—हिं०। लताफटकी-बं०। थोर माल कांगनी—म०। (Celastrus paniculata. *Willd*) रा० नि० व० २ भा० पू० १ भा०।

अग्निदीप्ति-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] Improved digestion. good appetite) क्षुधा वृद्धि. पाचन शक्ति का बढ़ जाना।

अग्नि-धमनः-सं० पु० Melia azadirachta, *Linn*) कटु निम्ब-हिं०, म०। कटु निम, घोड़ा निम-बं०। देखो महानिम्ब बकाइन।

अग्नि-निर्यासः-सं० पु० अग्निजार वृक्ष। रा० नि० व० ६। Seeagni jara

अग्नि-पत्री-सं० स्त्री० अग्निवती. अगिया प्रसिद्ध हिं० (Andropogon Schœranthus. *Linn*)

अग्नि-पर्णी-सं० स्त्री० वानरी, कौंच, केवाच। (Mucuna pruriens; *D. C.*)

अग्नि-परिताप-हिं० पु० आग की जलन (Scorching heat of fire)

अग्नि-परीक्षा-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] सोना चाँदी आदि धातुओं की आग में तपाकर परख।

अग्नि पा (मा) ली-सं० स्त्री० (The white lead-wort) चित्रक, सुफेद चीता-हिं०। चिते-ब०। मद० २ व०।

अग्नि प्रदीपकानि-सं० क्ली० सोंठ अथवा गुड़ के साथ भक्षण की हुई अथवा सेंधानमक के सग भक्षण की हुई हरीतकी निरन्तर अग्नि को प्रकाशित करती है।

सेंधा नमक, हर्र, पीपल, चित्रक इनका चूर्ण बनाय उष्ण जल के साथ खाने से नष्टाग्नि उत्तेजित होती है तथा नवीन अन्न मांस, घृत भक्षण किया हुआ शीघ्र भस्म हो जाता है।

सेंधा लवण, हींग, हर्र, बहेड़ा, आँवला अजवाइन, सोंठ, मिर्च, पीपल इन्हें बराबर ले और सबके बराबर गुड़ मिला गोलियां बनाएँ, इसके सेवन से मन्दाग्नि वाला तृप्त होताहै और अधिक भोजन करता है।

वायविडंग, भिलावाँ, चित्रक, गिलोय, सोंठ बराबर ले इनके समान गुड़ और घृत मिला गोलियां बनाएँ इसके सेवन से मन्दाग्नि दूर होती है। गुड़ के साथ सोंठ अथवा पीपल, या हर्र अथवा अनार को आम रोग में, अजीर्ण में, गुदा के रोगों में, मल के विबन्ध में नित्य प्रति सेवन करें।

भोजन के प्रथम नमक और अदरख का खाना हृदय को हितकारक तथा दीपन है। चक्र० द० अग्नि० मा० अ०।

अग्निप्रदीरसः-सं० पु० पारद, गंधक, सीसा, वच्छनाग प्रत्येक १-१ तोला कज्जलीकर आतशी शीशी में रख बालुका यन्त्र द्वारा ८ प्रहर की अग्नि से पकाएँ। इसमें २ तोला त्रिकुटा मिलाकर बारीक पीस ईख के रस से मर्दन कर १-१ रत्ती प्रमाण की गोलियां बनाएँ।

गुण—इसके सेवन से मन्दाग्नि, क्षय, सन्निपात और वात रोग दूर होते हैं। र० प्र० सु० अग्नि मा० अ० र० प्र० सु० अ० ८।

अग्नि प्रभा वटी—सं० स्त्री० सेंधा नमक, नौसादर, जवाखार, बिडनमक, सिन्दूर, प्रत्येक समान भाग ले। पुनः पटोल की जड़ के रस से भावना देकर उड़द प्रमाण गोलियां बनाएँ। इसे तालमखाने के पञ्चांग के क्वाथ से दें तो घोर यकृत, दारुणप्लीहा बालप्लीहा, मन्दाग्नि और गुल्म का नाश होता है र० यो० सा०।

अग्नि प्रस्तर-हिं० संज्ञा पु०
अग्नि प्रस्तरः-सं० पुं०

(Fire-Stone, a glint) अग्नि उत्पन्न करने वाला पत्थर। वह पत्थर जिससे आग निकले अग्निजनक पाषाण, चकमकपत्थर।

अग्नि-फला–सं० स्त्री० (Celastrus paniculata, *Willd*) महा ज्योतिष्मतीलता, ज्योतिष्मती लता, मालकांगनी–हिं०। बड़लता फटकी–ब०। थोर मालकांगनी–म०। रा० नि० व० ३।

अग्नि-वात–हिं० संज्ञा पु० [सं०अग्नि+वायु] घोड़ों और दूसरे चौपायों का एक रोग, जिसमें उनके शरीर पर छोटे छोटे आबले निकलते हैं और फूटकर फैलते हैं। यह रोग अधिकतर घोड़ों को होता है। (२) मनुष्यों का चर्मरोग जिसमें शरीर पर बड़े बड़े लाल चकत्ते वा ददोरे निकल आते हैं और साथ ही कभी कभी ज्वर भी आ जाता है। पित्ती। ददरा। जुड़पित्ती।

अग्निवाहुः–सं० पुं० (Smoke) धूम।

अग्निभ–सं० क्ली०
अग्निभः–सं० पुं० } (Gold) सुवर्ण, सोना। (aurum) रा० नि० व० १३।

अग्निभा–सं० स्त्री० celastrus paniculata मालकांगनी।

अग्नि-भु–सं० क्ली० Gold, (Aurum) सुवर्ण सोना। रा० नि० व० १३। (२) जल, water (Aqua)

अग्नि-मणि–हिं० संज्ञा पु०
अग्नि-मणिः–सं० पु० } The sunstone, a glint सूर्यकान्तमणि। आतिशी शीशा फा० एक बहुमूल्य पत्थर। (२) सूर्य-मुखी शीशा।

अग्नि मथनः–सं० पु० (Premna Integrifolia, *Linn*) अरनी हिं०। अग्निमन्थ, गणकारिका सं०। गणिरी वा धारगन्त–बं०। रा० नि० वा० ६।

अग्नि-मन्थ–हिं० संज्ञा पु०
अग्नि मन्थः–सं० पु० } (१) (Premna Integrifolia) अरनी–हरनी, अगेथ, टेकार (२) अग्निबधू पूर्व देश में—उ०। सु० सू० ३६ अ०। (३) संशोधन। वा० उ० २० अ०. (४) शाल, सर्ज वृक्ष। (५) अरणी नामक मन्त्र जिससे यज्ञ के लिये आग निकाली जाती है।

अग्नि-मन्थादि-क्वार तैल–सं० पु० अरणी, सोना, पाठा, ढाक, तिलनाल, बला, केला और अमलतास इनके क्वाथों के पानी से सिद्ध किया हुआ तैल उदर रोग और वातज हृद्रोगों का नाश करता है।

अग्नि-मयः–सं० पु० सुफेद बिधारा, श्वेत वृद्धदारक, श्वेत बिचताड़क–बं०। श्वेत बरधारा–म०। वै० नि०। श्वेत बृद्धा। See-Vidhara

अग्निमा–(Anona squamosa) सीताफल, शरीफा। फा० इं०।

अग्निमात–ते० चित्रक, चीता (Plumbago Rosea, *Linn*) फा० इ० भा० २।

अग्नि-मांद्य–हिं० संज्ञा पु०
अग्नि-मांद्यम्–सं० क्ली० } (Indigestion) अजीर्ण, मन्दाग्नि। (Anorexia) जठराग्नि की कमी। पाचनशक्ति की कमी। भूख न लगने का रोग।

अग्निमारुति–हि० संज्ञा पु० [सं०] अगस्त्य मुनि का एक नाम।

अग्नि-मुखम्–सं० क्ली० (१) (Safflower carthamus Tinctorius) कुसुम्भपुष्प कड़ का फूल, (२) Saffron (Crocus) कुंकुम, केशर।

अग्नि मुख–हिं० संज्ञा पु०
अग्नि-मुखः–सं० पु० } (Plumbago Zeylanica, *Linn*) (१) चित्रक, चीता चितगाछ–बं०। (२) भिलावा, भल्लातक। भेलागाछ–बं०। (Semecarpus anacardium, *Linn*)

अग्नि-मुखः–सं०पु० पारा, गंधक, अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म अमलवेत, सिंगिया, त्रिफला प्रत्येक समान भाग लें। सबको कूट, पीस, धतूरा, पान, कटेरी, अरनी कमल, नेत्रवाला, अडूसा, कुचिला, थूहर और बिजौरा नीबू के रस की पृथक २ भावना दें। तथा सबके बराबर अदरख के रस की भावना दें।

मात्रा—३ रत्ती।

गुण—इसके सेवन से प्रबल शूल दूर होता है वृ० र० रा० सु० । शूल चि० ।

अग्निमुख चूर्ण-सं० पु० हींग १ मा०, वच २ मा०, पीपल ३ मा०, अदरख ४ मा० अजवाइन ५ मा० हड़ ६ मा०, चित्रक ७ मा०, कूट ८ मा० इन सबका चूर्ण कर सेवन करने से उदावर्त, अजीर्ण, प्लीहा, उदर व्याधि, अर्गों का टूटना, विषभक्षण विकार, बवासीर, कफ और गुल्म दूर होता है। इसे वातव्याधि में गर्म्मजल मद्य, दही, दही के पानी इसमें किसी एक के साथ दें।

वं० से० सं० यो० त० अजी० अ०

(२) जवाखार, सज्जी, चित्रक, पञ्चलवण, इलायची, पत्रज, भारंगी, भुनी हींग, पुष्करमूल, कचूर, निशोथ, नागरमोंथा, इन्द्रयव, डांसरा (तन्तरीक) अमलवेत, जीरा, आवला, अजवाइन, हड़ की छाल, पीपर, तिलक्षार, संहिजनक्षार, पलाशक्षार, सार इन सब भाग ले मदीन पीस कपड़छानकर रस बिजौरे की आठ २ पुट दें। सिद्ध कर प्रति दिन २ टक जल के साथ लें तो भूख लगे, तथा अजीर्ण, गोला, उदरव्याधि, अण्डवृद्धि और वातरक्त दूर होता है। अमृ० सा०

अग्निमुखचूर्णम् (बृहत्)-सं० पु० सज्जीखार, यवक्षार, चित्रक, पाठा, करञ्ज, पांचों नमक, छोटी इलायची, तमालपत्र, भारङ्गी, वायविडङ्ग, हींग, पुष्करमूल, सोंठ, दारुहल्दी, निसोथ, नागरमोंथा, बच, इन्द्रजौ, कोकम, जीरा, आमला, गजपीपल, कलौंजी, अमलवेत, अम्ली, अजदाइन, देवदारु, हड़, अतीस, काली निसोथ, हाऊबेर, अमलतास, तिज, मोखा, सहिजन, तालमखाना और पलाश इनके क्षार गोमूत्र में तपाकर बुझाया हुआ मंडूर प्रत्येक तुल्य भाग लेकर बारीक चूर्ण करलें। पुनः तीन तोला तक बिजौरे का रस, सिरका, और अदरख रस की भावना दें।

मात्रा—१–३ मा० तक।

गुण—इसके सेवन से अजीर्ण, सम्पूर्ण गुल्म, प्लीहा, बवासीर, उदररोग, आन्त्रवृद्धि, अष्ठीला, वातरक्त और मन्दाग्नि दूर होती है।

र० यो० सा०

अग्नि-मुख-ताम्रम्-सं० क्ली० । पारा १ तो०, गन्धक १ तो० मिलाकर कज्जली बनाएँ, पुनः अर्जुन वृक्ष की छाल के रस अथवा क्वाथ से घोटकर २ तो० ताम्र के पत्र पर लेप कर पके हुये गूलर के पत्ते लपेटकर कच्चे सूत से लपेट के मिट्टी के बर्तन में पांचों नमक और चूने के बीच में क्रम से रखकर अन्धमूषा में रखकर भाथो से धोंकें जब सिद्ध होजाय तो निकाल कर रक्खें। मात्रा—१ रत्ती से प्रारम्भ करें और रोजाना १ रत्ती बढ़ाकर १ १ मा० तक पहुँचाएँ। यह रस अम्लपित्त, क्षय शूल और दारुण पंक्ति शूल को नष्ट करता है। सात रात्रि तक इसका प्रयोग करने से शरीर निर्मल हो जाता है।

अम्लपित्ताधिकारे—र० र०, र० च०।

अग्नि-मुख-मण्डूरम्-सं० क्ली० । लोह किट्ट ४८ तो० लेकर अठगुने गोमूत्र में पकाएँ पुनः चित्रक, चव्य, सोंठ, पीपर, पीपरामूल, देवदारु, नागरमोंथा, त्रिकुटा, त्रिफला, वायविडंग इनका चूर्ण १ पल लेकर उक्त मण्डूर में मिलाकर उपयोग करने से असाध्य शोथ तथा पुराने पाण्डु रोग का नाश होता है।

भैष० र० शोथाधिकारे।

अग्नि-मुख-रसः-सं० पु० । पारा, गन्धक, विष, सम भाग लें, इसे अदरख के रस से खरल करें। पुनः पीपलक्षार, अम्लीक्षार, अपामार्गक्षार, सज्जीखार, जवाखार, सुहागा, जायफल, लौंग, त्रिकुटा ये समान भाग लें, शंखभस्म, लवणत्रय, हींग और जीरा २–२ भाग लें सबको चूर्ण कर नीबू के रस से खरल कर एक-एक रत्ती प्रमाण गोलियां बनाएं इसके सेवन से अजीर्ण शूल, विसूचिका, हिचकी, गोला, मोह, नष्ट होता तथा तत्काल पाचन दीपन होता है।

यो० त० रसेन्द्र सं०।

अग्नि मुख लवणम्-सं० क्ली० । चित्रक त्रिफला, जमालगोटामूल, निशोथ, पुष्करमूल, इन्हें समान भाग लें और सर्वतुल्य सेंधालवण लेकर चूर्ण बना थूहर के काण्ड में भर कर साधारण कपरौटी कर सुखाएं पश्चात् अग्नि दे सुन्दर पाक करें। पुनः चूर्ण कर उष्ण जल से सेवन करने से

अग्नि को दीप्त करता तथा यकृत, तिल्ली उदर रोग, आनाह, गुल्म, बवासीर, पसली के शूल को दूर करता है।

भैष० र० अग्नि मान्द्याधिकारे बं० से० सं०।

अग्नि मुख लौहम्-स० पु०। निशोथ, चित्रक, निर्गुण्डी, थूहर, मुण्डी भृ आमला प्रत्येक ८-८ पल लें एक द्रोण (१६ से०) जल में पकाऐ जब चतुर्थांश रहे तो इसमें वायविडंग १२ तो० त्रिकुटा, ६ तो० त्रिफला २० तो० शिलाजतु ४ तो० मैनशिल व सोनामाखी से मरा हुआ रुक्म लौह भस्म का चूर्ण ४८ तो० घृत, शक्कर, मिश्री प्रत्येक ९६-९६ तो० इन्हें मिलाकर यह लौह प्रस्तुत करें पुनः उचित प्रमाण से इसे सेवन करने से अर्श, पाण्डु, शोथ, कुष्ठ, प्लीहा उदरान्त्र, असमय केशों का श्वेत होना आमवात गुदारोग इन्हें सहज ही नाश करता है। इसके सिवाय मन्दाग्नि को दूर करते हुये समस्त रोगोंको उचित विधान से वर्त्तने से दूर करता है। इसके सेवन करने वालों को ककार वाले पदार्थ वर्जित हैं। मात्रा—१-४ मा०। भैष० र० अर्शोधिकारे। वृ० रस० रा० सु० वं० से० सं०।

अग्निमुखा-सं० स्त्री० The marking Nut-tree (Semecarpusanacardium, *linn*) भल्लातकी, भिलावाँ (अ)। भेला-बं० (२) लाङ्गलिका (वि०)-सं०। कलिहारी -हिं० ईशलाङ्गलीया -बं०। (Gloriosa Superba' *linn*)

अग्निमुखी-सं० स्त्री० भल्लातकी भिलावाँ भेला-बं०। (Semecarpusanacardium' *linn*) मे० खचतुष्क। रत्ना०। च० सू० अ० ४ भेदनीय। (२) लांगलिका। ईशलांगलीया बं० मे० खचतुष्क। भा० पू० २ भा० अने० बं०। (३) कञ्चट-सं०। जलचौलाई-हिं० कलहारी। हिं० (Gloriosa superba, *linn*) काँ-चड़ा-बं० रा० नि० व० ४ भा० पू० ह० व०। गुडूची, गुरुच, गिलोय (Tinosporacord ifolia, *Miers*)

अग्नि मुखो रसः-सं० पु० पारा गन्धक, वच्छनाग तुल्य भाग लें चूर्ण कर अदरख के रसकी भावना दें पुनः पीपल (वृक्ष) इमली और चिरचिरा इनके क्षार यवक्षार, सज्जी, और सुहागा, जायफल, लवंग, त्रिकुटा' त्रिफला, ये सब समान भाग और शंख भस्म, पांचों नमक, हींग, जीरा, प्रत्येक पारे से द्विगुण डालकर अम्ल योग से खूब घोटकर २ र० प्रमाण की गोलियां प्रस्तुत करें।

गुण—पाचन, दीपन, अजीर्ण, शूल, हैजा, हिचकी, गुल्म, और उदर रोग को नष्ट करता है। रसेन्द्रसंहिता में इसे अग्निमुख रस कहा है।

र० यो० सा०।

अग्नियूम-हिं० बकायन कच्चा बसोटा। प्रेम्नोलटिफोलिया ('remna Latifolia' *Roxb*)-ले० अग्निऊ, कुमा०। वन खार गियान पं०।

निर्गुण्डी वर्ग

(*N. O.* verdenaceae

उत्पत्ति स्थान—उत्तरी भारतवर्ष, कमायू से भूटान तक और खसिया पर्वत तथा सामान्यतः वंग प्रदेश के मैदान।

प्रयोग—उपयुक्त पौधे के वक्कल का दुग्ध सूजन पर लगाया जाता है। और पशुओं के उदर शूल में इसका रसप्रयुक्त होताहै। (ऐटकिन्सन) पञ्जाब देश में इसका रस औषधितुल्य प्रयोग में लाया जाता है। स्ट्युवर्ट। इं० मे० प्रां०

अग्निरचस् / अग्निरजः / अग्निरजा / अग्निरज्जु } सं० पु० (१) बीरबहूटी, इन्द्रवधू, इन्द्र गोप कीट-हिं०। आ-षाढ़े पोका-बं०। हे० चं० ४। An insect of bright scarlet colour (Mutella occidentalis.)। (२) सुवर्ण gold (Aurum)

अग्नि रसः (प्रथमः) र० र० यक्ष्माधिकारे। हीरा भस्म २मा० सुवर्ण भस्म ३मा० पारद भस्म ६ मा० इन्हें ग्रहण कर दिन भर गोखरू के रस में भावना दें। शाम को उसका चूर्ण कर लें मात्रा १-रत्ती। अनुपान थूहर की जड़ और जम्भीरी का रस। जिस राजयक्ष्मा के साथ ज्वर भी हो उसमें इसका प्रयोग करना उचित है। इस नाम के चार योग इन ग्रन्थों में आगे हैं। जैसे-(२)

र० का० र० क० ल० र० र० स० नि० र० र० को० कासाधि कारे।

अग्नि रसः–सं० पु० मिर्च मोथा, वच, कूट समान भाग लें सर्व तुल्य विष लें पुनः अदरख के रस से मर्दन कर मूंग प्रमाण की गोलियां बनाऐ। यह हर प्रकार के अजीर्ण को नष्ट करता है।

भै० र० अजी० अधि०।

अग्नि रस–सं० पु० (१) (Pancreatic juice) क्लोम रस अग्नाशय रस। असीरूल इन्किरास –अ० (२) अग्निमान्द्याधिका रोक्त रस विशेष।

अग्निरूहा–स० स्त्री० मांसरोहिणी। theIndian red wood tree (Soymida Febrifuga*juss*) रा० नि० व० १२।

अग्नि रोहिणी–सं० स्त्री० हिं० संज्ञा स्त्री (Soymida Febrifuga *juss*) (१) मांस रोहिणी–स० हिं० बं०। वा० उ० ३१ अ०। (२) Plague उक्त नाम का क्षुद्र रोग विशेष। यह त्रिदोष जन्य होता है लक्षण—पित्ताधिक बातादि दोषों के कारण बगल में ज्वर पैदा करने वाली मांस को विदीर्ण करने वाली अग्नि के समान तीक्ष्ण जो फुसियां हो जाती हैं उन्हें अग्नि रोहिणी कहते हैं। ये ५ व ७ या १५ दिन में रोगी का प्राण नष्ट कर देती है। वा० उ० ३२ अ०।

अग्नि लौह–सं० पु० निशोथ, चित्रक, निर्गुण्डी, सेहुंड़. मुण्डी, भृ आमला, प्रत्येक ८ ८ पल १ द्रोण [१६ सेर] पानी में पकाए। पुनः विडंग ३पल, त्रिकुटा ३ कर्ष, त्रिफला ५ पल, शिलाजीत १ पल, रुक्म लौह चूर्ण १२ पल, दिव्यौषधि १२ पल, श्रुवावृक्ष छाल १२ पल, लें इनका उत्तम चूर्ण घृत २४ पल, मधु २४ पल, शर्करा २४ पल, मिलाकर विधिवत् पकाए जब सिद्ध हो शीतल हो जायँ तो उतार कर रख ले। गुण—अर्श मात्र को नष्ट करता है।

नोटः—दिव्योषधि–स्वर्ण माक्षिक, मैनसिल। रुक्म लौह–वज्र पाण्डु लौह। वै० श० सि०।

अग्निवक्त्रः–सं० पु० (Semecarpus anacardium*linn*) भल्लातक वृक्ष भिलावा का पेड़–हिं० भेला गाछ–बं० ले० मद० १ व०(२) चित्रक चीता चुप –हिं०। चिते गाछ बं० (Plumbago zeylanica, *linn.*)

अग्निवण्डा–सं० स्त्री० अग्निज्वाला (एक गरम दवा) See-agni jvala।

अग्निबती–सं० स्त्री०(AndropogonSchœranthus, *linn*) अगिया घास एक प्रसिद्ध

अग्निबधू–स० अग्निमन्थ अरनी (Premna Integrifolia *linn*)

अग्निवर्द्धकनः–सं० त्रि० (Stomachic tonic अग्नि उद्दीपक मरिच प्रभृति आग्नेय द्रव्यमात्र अग्निवृद्धि कर। देखो दीपक [न] राज०।

अग्निबर्द्धन–अग्नि उद्दीपक।

अग्निबलबृद्धिः–सं० स्त्री० जठराग्निवृद्धिः। च० द० अर्श० चि०।

अग्निवल्लभ–हिं० संज्ञा पु० (१) शालवृक्ष, साखू का पेड़। (Shorea Robusta, *Gærtu*) (२) शाल से निकली हुई गोंद। Shorea Robusta, The gum of–)। मद० व० ३। Seesarjah राल, धूप, सर्ज, योनिशाल विशेष। धूना–बं०। रेजिन (Resin) इं०। हे० च०। रा० नि० व०। ६, १२

अग्निबल्लभः–सं० पु० दे० अग्नि वल्लभ।

अग्निवल्ली–सं० स्त्री० (Acreeper, turning or climbing plant) लता विशेष। र० सा० सं० अभिन्यास ज्वर० स्वच्छन्दनायक रस।

अग्निबासः–सं० अग्नि का स्थान।

अग्निवाहः, हुः–सं० पु० धूम। स्मोक (Smoke) इं०। हे० च० ४ का०। (२) a goat अज, बकरा।

अग्निविकारः–सं० पु० पुनः उक्त नाम के रोग का एक भेद। यह चार प्रकार का होता है। शार्ङ्ग० पू० ७ अ०। देखो अग्निः।

अग्निविवर्द्धनः–सं० त्रि० यमोनी, अजवाइन, Carum copticum, *Benth*)

अग्निवर्द्धक–हिं० (१) दीपन (stomachic)

(२) यमानी (अजवाईन) प्रभृति (Carum copticum, *Benth*)

अग्निविसर्पः-सं० पु० अग्निविसर्प, विसर्पभेद (Pain from a boil)

अग्निबीजम्-सं० क्ली० स्वर्ण, सुवर्ण, gold (Aurum) त्रिका०।

अग्निबीजः-सं० पु० अग्निमन्थ, अरनी (Premna Integrifolia, *Linn*)

अग्निवीर्य्यम्-सं० क्ली० स्वर्ण, सुवर्ण। gold (aurum) रा० नि० व० ३।

अग्निवीसर्पः-सं० पु० (Pain from a boil) द्वंद्वज विसर्पों का एक भेद है। देखो विसर्पः। Erysipelas

अग्नि विसर्प के लक्षण—वात, पित्त विसर्प में ज्वर, वमन, मूर्च्छा, अतिसार, तृषा, भ्रम, अस्थि-भेद, अग्निमांद्य, तमक श्वांस और अरुचि ये सब लक्षण होते हैं। इसमें सम्पूर्ण शरीर जलते हुये अंगारों की भांति प्रतीत होता है। शरीर के जिस जिस अवयव में विसर्प फैलता है वहीं ही अंग बुझे हुये अंगार के समान काला, नीला अथवा लांल हो जाताहै। अग्निसे जले हुये स्थान की तरह वह फुन्सियों से व्याप्त हो जाता है और शीघ्रगामी होने के कारण हृदय प्रभृति मर्मस्थानों पर शीघ्र ही आक्रमण करता है। इसमें वायु अत्यन्त प्रबल होकर शरीर में पीड़ा, संज्ञानाश, निद्रानाश, श्वास और हिचकी उत्पन्न करता है। विसर्प रोगी की ऐसी दशा हो जाती है कि वेदना से ग्रस्त होने के कारण भूमि शय्या या आसन पर कहीं इधर उधर लेटने से सुख प्राप्त नहीं होता और देह मन और श्रमजनित, वेदना से ऐसा दुखित हो जाता है कि दुष्प्रबोध अर्थात् चिरस्थायी निद्रा में लीन हो जाता है। इन लक्षणों से युक्त विसर्प को अग्नि विसर्प कहते है। वा० नि० १३ अ०।

चिकित्सा—अग्निविसर्प में सौ बार धुला हुआ घी वा केवल घृतमन्ड अथवा मुलहठी का शीतल क्वाथ कमल का जल, दूध वा ईख का रस, इनका परिसेक करें और महातिक्तघृत को पान लेपन और परिसेक के काम में लाएँ। वा० चि० अ०।

अग्निवृद्धिः-सं० स्त्री० अग्निदीप्ति, क्षुधावृद्धि (Increase of digestive fire or appetite, Improveddigestion, Good appetite)

अग्निवृद्धिकर-सं० पु० अग्निवर्द्धक (Stomachic)

अग्निवेण्डुपाकु-ते० दादमारी, चँकवड़, चक्र (Cassia tora, *Linn*)

अग्निवेन्द्र पाकु-हिं० (Ammania Baccifera, *Linn*) अग्निगर्भ सं०। दादमरी फा० इ० ३ भा०, इ० मे० मे०।

अग्निवेश-हिं० संज्ञा पु० [सं०] आयुर्वेद आचार्य एक प्राचीन ऋषि का नाम जो अग्नि पुत्र कहे जाते हैं।

अग्निशिख-हिं० संज्ञा, पु०
अग्निशिखम्-सं० क्ली० } Gold (aurum)

(१) स्वर्ण, सुवर्ण, सोना। रा० नि० व० १३। (२) कुसुम्भ पुष्प-सं०। कुसुम वा बर्रे का कुसुम फूल-बं०। safflower (Carthamus tinctorius, *Linn*) (३) कुंकुम केशर। Saffron (Crocus Sativus, *Linn*) भा० पू० २ भा०। मद० व० ३। (४) अग्नि (५) (An arrow) बाण, तीर।

अग्निशिखा-सं० स्त्री० हिं० संज्ञा स्त्री० (१) अग्निशिखा औषधि-सं०। करि (लि) हारी-हिं० (Gloriosa superba, *Linn*) रा० पू० १ भा० गु० व०। कलियारी व करिहारी नामक पौधा जिसकी जड़ में विष होता है। (२) अग्नि की ज्वाला, आग की लपट।

अग्निशिखः-सं० पु० (१) कुंकुम, केशर (Crocus sativus, *Linn*) (Shreds of saffron) रा० नि० व० १२। लांगलि वृक्ष-सं०। कलिहारी-हिं०। विष लांगलि गाछ-बं०। (Gloriosa superb

Linn) । रत्ना० । (३) कुसुम्भ वृक्ष–सं० । (Safflower Crathamus Tinctorius, *Linn*) श० र० । (४) पूति करञ्ज सं० । कट करञ्ज–हिं० । नाटा–बं० । (Cæsalpinia Bonducella, *Fleming*) (५) सूरणः (न)–सं० । जमीकन्द–हिं० । ओल गाछ बं० । (Amorphophallus campanulatus, *Blume*) प० मु० ।

अग्निशिष–ते० नाट का वच्छनाग, कलिहारी, लांगली (Gloriosa Superba, *Linn*) इं० मे० मे० ।

अग्निशिषा–सं० स्त्री० (१) (Amaranthus spinosus *Willd*) तण्डुलीय, चौलाई । (२) (Gloriosa superba) कलिहारी (३) चित्रक (Plumbago zeylanica)

अग्निशुद्धि–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] (१) अग्नि से पवित्र करने की क्रिया । आग छुआ कर किसी वस्तु को शुद्ध करना । (२) अग्नि परीक्षा ।

अग्निशेखरम्–सं० क्ली० (Saffron Crocus Sativus. *Linn*) कुंकुम, केशर । रा० नि० ब० १२ । कुसुम्भ पुष्प, Safflower (Carthamus tinctorius, *linn*) (३) लांगली वृक्ष–सं० । कलिहारी–हिं० । (Gloriosa Superba, *linn*) (४) विशल्या नामक शाक भेद ।

अग्निष्टुत्–हिं० संज्ञा पु० [सं०] एक प्रकार का यज्ञ जो एक दिन में पूरा होता है । यह अग्निष्टोम यज्ञ का ही संक्षेप है ।

अग्निष्टोमः–सं० पु० (The moon plant) सोमलता, सोमः सु० चि० २६ अ० । (२) स्वर्ग की कामना से किया जाने वाला एक यज्ञ विशेष ।

अग्निष्ठः–सं० पु० तांबा, तंडुल आदि अथवा कोई भी शाक आदि भूजने का लोह पात्र ।

अग्निष्वात्ता–हिं० संज्ञा पु० [सं०] अग्नि–विद्युत आदि विद्याओं का जानने वाला ।

अग्निसखा–हिं० संज्ञा पु० [सं०] वायु, हवा ।

अग्निसंस्कारः–सं०, पु० (१) अग्निदाह कर्म (Funeralceremonies) मृतक के शव को भस्म करने के लिये उस पर आगी रखने की क्रिया ।

(१) आग का व्यवहार । तपाना । जलाना । (३) शुद्धि के लिये अग्नि स्पर्श कराने का विधान ।

अग्निसंस्पर्श–सं० स्त्री० पर्पटी नामक सुगन्ध द्रव्य, पद्मावती, यह उत्तर में प्रसिद्ध है । भा० पु० पू० १ भा० क० व० । पापड़ी(–री) पनरी [–डी) हिं० ।

अग्निसंदीपनः–सं० त्रि० अग्निवर्द्धक, क्षुधावर्द्धक, (Increasingappetite)

अग्निसंदीपनोरसः–सं० पु० । पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ मिर्च, पञ्चलवण, जवाखार, सज्जीखार, सोहागा, सफेद जीरा, स्याहजीरा, अजवाइन, बच, सोफ, हींग, चित्रक की छाल, जायफल, कूट, जावित्री, दारचीनी, तेजपात, छोटी इलायची, अम्लीखार, अपामार्ग खार, विष, पारा, गन्धक, लौह भस्म, अभ्रक भस्म, वंग भस्म, लौह, हड़ ये प्रत्येक एक २ भाग, अम्लवेत २ भाग, शंख भस्म ४ भाग सबका चूर्ण कर पञ्चकोल, चित्रक, अपामार्ग के क्वाथ की भावना दें, इसी तरह खट्टी नोनिया के रस की ३–३, तथा नीबू के रस की २१ इक्कीस भावना देकर बेर तुल्य गोलियां बनाएँ, सायंकाल व प्रातःकाल इसके सेवन से तथा दोषानुसार अनुपान से यह रस मंदाग्नि को प्रज्वलित करता तथा अजीर्ण, अम्लपित्त शूल, और गुल्म को नष्ट करता है ।

(२) शुद्ध पारा और गन्धक बराबर लेकर कज्जली कर के गाढ़े वस्त्र में उसको बांध दें । पुनः १ घड़े में नीचे बालू भर कर उस पोटली को इसमें रख दें और ऊपर से घड़े को बालू से भर दें । उसके ऊपर से दो दिन तक तृणाग्नि जलाए अथवा उसको गजपुट में १ दिन तक पकाए । सिद्ध होने पर इसकी मात्रा २ रत्ती देने से जठराग्नि अत्यन्त प्रदीप्त होती है । बृ० रस० रा० सु० अजीर्ण० चि० भैष० ।

अग्नि सन्निभावटी–स० स्त्री० टो० र० रा० शि०, र० (मा०) ना० वि०, अजीर्णाधिकारे।
४० तोले कुचले के बीज और तुषाम्ल (हरे जौ दल कर उनकी जो कांजी बनाई जाती है उसको तुषाम्बु या तुषाम्ल कहते हैं) में उतनी ही हरड़े उबाले हुये, बिडंग, हींग, त्रिकुटा,, त्रिदीप्य (अजवाइन, अजमोद खुरासानी अजवाइन) पारा गंधक, ये सब ४ तो० मिला कर घोट कर बारीक कज्जली के माफिक चूर्ण बनाए और सब चीजें कुचले और हड़ वाले कल्क में मिला के जंगली बेर की गुठली के सदृश गोलियां बनाए। गुण—कफ स्राव, मन्दाग्नि, तन्द्रा, स्वरभेद, अफारा, शूल, उदर रोग, खांसी, हिचकी, वमन और कृमिरोग को नष्ट करती है इसे अगस्त हरीत और पाराशर जी ने कहा है।

अग्निसम्भवः–सं० पु० (Wild Saffron) जंगली कुसुम, अरंड कुसुम वृक्ष। वन कुसुम–बं०। रा० नि० व० ४। (१) अग्निजार वृक्ष (Agnijara) रा० नि० ब० ६।

अग्निसहायः–
अग्निसखः– } सं० पु० (१) (Wild pigeon) जंगली कबूतर क्योंकिउसके मांससे जठराग्नि तीव्र होती है। वन्यपारावतः–सं०। घुगु–बं०। होगलापक्षी म०। रा० नि० व० १६ (२) वायु, हवा (air, wind)। (३) smoke धूम।

अग्निसात्–हिं० वि० [सं०] आग में जलाया हुआ, भस्म किया हुआ।

अग्निसादः–सं० पु० (Indigestion) अग्निमांद्य, अपच अजीर्णता, कफ द्वारा जठराग्नि का निस्तेज होना, मन्दाग्नि, सा० को ज्व० चि०।

अग्निसाध्य–सं० त्रि० अग्नि दाहसाध्य, अग्नि से जलने से जो ठीक हों। च० द० अर्श० चि०।

अग्निसारम्–सं० क्ली० रसाञ्जन, रसवत(A sort of collyrium) रा० नि० व० १३।

अग्निसारा–सं० स्त्री० (१) (Thefruitless branches) फल शून्य शाखा, फल रहित डालियाँ। रा० नि० व० २। (२) मञ्जरी वौ मुकुल (ablossom)

अग्निसुन्दर रस–सं० पु० अजीर्णधिकार मे वर्णि रस, यथा—सुहागा १ भाग, मरिच २ भाग इ चूर्ण मे अदरक के रस की भावना दें। अनु लवंग। प्रयोगा०।

अग्निसूनुरसेन्द्रः–सं० पु०। पीली कौड़ी भस्म मा० शख भस्म २ मा० शुद्ध पारद १ मा० शु गंधक १ मा० काली मिर्च ३ मा० सब को ए कर नीबू के रस से खरल करें। मात्रा—१ इसके सेवन से मदाग्नि शीघ्र दूर होती है।
नोट—किसी के मत में कौड़ी और शंख भस्में २–२ मा० मिलानी चाहिये।

अनुपान–घृत मिश्री के साथ क्षीणता में, पीपर घृत साथ संग्रहणी में, तक्र के साथ खाने से संग्र ज्वर, अरुचि, शूल, गुल्म, पांडु, उदररोग, ववा शोष, प्रमेह दूर होते हैं।
वृ० रस० रा० सु० संग्रहण्याधिकारे।

अग्निसेवन–हिं० सं० पु०
अग्निसेवनम्–सं० क्ली० }
अग्निसेवा, अग्नि प्रयोग, आग तापना। गुण–शीत, वात, स्तम्भ, कफ, कम्पन प्रभृति नाश करने वाला और रक्त पित्तकर्त्ता तथा ओंस अभिष्यन्द का पाचक है। मद० १३ व

अग्निस्थापनीय–अग्निवर्द्धक दीपन (stomach

अग्निहानिः–सं० पु० the Indigestion l of appetite अग्निमान्द्य अजीर्णता, मन्दाग्नि। वा० नि० १३ अ०।

अग्निहोत्र–सं० पु० (१) Ghee clar ied butter) घृत,घी (२) (Fi अग्नि, मे०। (३) एक यज्ञ वेदोक्त मंत्रों से में आहुत देने की क्रिया। यह दो प्रकार की गई है—(१) नित्य और (२) नैमित्ति काम्य।

अग्नीका–सं० स्त्री० कर्पास. कपास(Gossypi indicum)

अग्न्या–सं० स्त्री० (१) तीतर चिड़िया, तित्त a nartridge (Perdix Franc

us) (२) (a cow) गाय, गो, हला० ।

अग्न्याशयः–हिं० पु०

अग्नाशय–सं० पु० अग्नाशय जठराग्निका स्थान पैङ्क्रियस (Pancreas) इं० । क्लोमग्रन्थि हिं० । वन्कर्यास, वन्करास; इन्क्रिरास, वान्करास, उनुक्कुत्तिहाल लवज्जवह्य अ० । नूर मिअदह फा० यह एक ग्रन्थि है । जो पतली लम्बी चिपटी और श्वान जिह्वोपम होती है । यह नाभि से ३-४ इंच ऊपर आमाशय के पीछे कटि के पहले दूसरे कशेरुका के सामने आड़ी पड़ी रहती है इस का बायाँ तंग सिरा प्लीहा से मिला हुवा रहता है इसकी लम्बाई ६ इंच से ८ इं० चोड़ाई १॥ इंच तथा मोटाई १ या १। इंच के लगभग और भार १ छ०से ३ छटांक तक होता है । इस ग्रन्थिमें एक प्रणाली होती है । जो इसके वाम पार्श्व से आरंभ होकर दक्षिण सिरे की ओर आकर पुनः पित्त प्रणाली से मिलकर द्वादशांगुलांत्र में जा खुलती है । इसके द्वारा बने हुये पाचक रस को अग्न्याशय रस वा क्लोम रस(Pancreaticjuice) कहते हैं । इस रस का प्रधान कार्य यह है कि यह आहारस्थ वसा (fats) अंडे की सुफेदी के सदृश पदार्थ (albumen) और सरेसीय पदार्थ को पाचन योग्य बनाता है

अगूवर-अ० अग्शर । गुब्बार आलूद, ग़र्दआलूद गुब्बारी खाकी रंग मटियाला–उ० । धूलिपूर्ण धूसरवर्ण) मटमैला–हिं० । डर्टी (Dirty) इं० (२) चक्षु वा सर्प के लिये एक यौगिक औषध है ।

अगूमस–अ० । चेपड़ो उ० जिसके नेत्र में ग़मूस अर्थात् चेपड़ (कीचड़) आती हो ।

अग्यारी–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अग्नि प्रा० अग्नि+सं० कार्य्य] अग्नि में धूप गुड़ आदि सुगन्ध द्रव्य देने की क्रिया, धूप देना (१) अग्निकुण्ड ।

अग्र–हिं० सं० पु०
अग्रम्–सं० क्लो० } (१) पल परिमाण यथा–'परिमाणेपलस्य च' । एक पल ८ तोला के बराबर होता है । मे० रद्विकम् । (२) वृत्त आदि का अग्र भाग । (३) हिं० क्रि० वि० पहिले, आगे, आदि आगा, सिरा, नोंक, अगला हिस्सा (The fore part of a thing, adjanterior prior first) मुकद्दम, कुदामी–अ० । हिं० वि० अगला प्रथम । श्रेष्ठ । उत्तम । प्रधान । अथ० सू० ७ । ३ । का० ८

अग्र-काण्ड–सं० पु० (The fore part of the stem) काण्डाग्र, तने का अग्र भाग ।

अग्र-कास्थि–सं० स्त्री० (Frontal bone) ललाटास्थि, ललाट की हड्डी ।

अग्र-कुम्भः–सं० पु० (Forntal ominence)

अग्र-कोटरम्–सं० क्ली० (Frontal air sinus)

अग्र-कोटिः–सं० पु० (Ophryon)

अग्र-कोणः–सं० पु० (Anterior forenix) योनि का अगला कोण ।

अग्र-खण्ड–हिं० पु० उरोस्थि के तीनों टुकड़ों में से तीसरा नीचे का पतला टुकड़ा जो कोड़ो देश में दबानेसे स्पर्श किया जा सकता है। (Xiphoid process)–इं० ।

अग्र गामी–हिं० संज्ञा पु० [सं०] अगुआ, आगे चलने वाला, अग्रसर, नेता (Preceding, going before)

अग्र-गायी–हिं० संज्ञा पु० [सं०] अगुआ, अग्रसर ।

अग्र-गोदम्–सं० क्ली० (Fore-brain) अग्र मस्तिष्क, भेजे का अगला हिस्सा ।

अग्र-चर्वण–हिं० पु०
अग्रचर्वणकः–सं० पु० } (Premolar teeth) सामने के दांत जिससे चबाया जाता है ।

अग्रजः–सं० पु० (१) काक विशेष वायस, कौआ (a crow) (२) भास पक्षी, कौवे के समान एक पक्षी है । (३) जो भाई पहले जन्मा हो । बड़ा भाई । श्रेष्ठ भ्राता । अनुज का उलटा ।

अग्र-जन्मा–हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) बड़ा भाई (२) ब्रह्मा ।

अग्र-जङ्घा–सं० स्त्री० जघाग्रभाग, टाँग का अगला हिस्सा । (The fore part of the leg)

अग्र जिह्वा–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] The tip of the tongue जिह्वा का अगला भाग ।

अग्रणी–हिं० वि० [सं०] अगुआ, श्रेष्ठ।
संज्ञा पु० प्रधान पुरुष। मुखिया। अगुआ। (The head)

अग्र-धान्यम्–सं० क्ली० धान्य विशेष, ज्वार, बाजरा।

अग्र नाड़ी-मस्तक–हिं० पु० ललाट की नाड़ी।

अग्र-पर्णी–सं० स्त्री० (१) शूक शिम्बी, कौंच, किवांच–हिं०। आलाकुशी-बं०। (Mucuna pruriens) a plant cowhage–अ० मु०। देखो—आत्मगुप्ता, अजलोमा (र०)

अग्र-पर्विका–सं० स्त्री०। (Anterior phalanx) पोर्वाग्र, अगला पोर्वा।

अग्र-पाणिः–सं० पु० The fore part of the hand हस्ताग्र, हाथ का अग्र भाग।

अग्र-पादः–सं० पु० (The fore part of the foot. toes) अंगुलियाँ।

अग्र-पुष्पः–सं० पु० Calamus rotang, *Linn*) (Common cane) बेत–हिं० वेतप वृक्ष सं०। वेत गाछ–ब०। प० म०।

अग्र-बाहुः–सं० पु० (Fore arm) कोहनी के नीचे अथवा कोहनी से कलाई तक का भाग, अग्रबाहु या प्रकोष्ठ कहलाता है। अग्रबाहु कोहनी के स्थान पर बाहु के ऊपर मुड़ जाती है। साइद, मिअुसम्, कलाई-अ०।

अग्र-बाहुमूलगा-पेशी–हिं० संज्ञा स्त्री० (Pronator radii teres) कोहनी से नीचे की पेशी।

अग्र-बीज–हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) वह वृक्ष जिसको डाल काटकर लगाने से लग जाए। पेड़ जिसकी कलम लगे।
(२) कलम।

अग्र-भाग–हिं० संज्ञा पु० अगला हिस्सा। पहिला हिस्सा। आगे का भाग (The preceding part) (२) सिरा। नोक। छोर। (Tip, point)

अग्र-भूमि–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] घर की छत। पाटन।

अग्र मस्तिष्क–सं० पु० (Fore-brain) भेजे का अगला भाग।

अग्र-मांसम्–सं० क्ली० (Flesh in the heart) हृदय के भीतर होने वाला मांस वृद्धि रूप रोग विशेष। सु० शा० हृदय, बुक्का। (The heart)

अग्रया–सं० स्त्री० (The three myrobalans त्रिफला।

अग्रयून–फा० खारिश, खुजली, कण्डु, खाज–हिं०। प्रुराइगो (Prurigo) प्रुराइटीज (Pruritis) देखो—कण्डूः।

अग्र-ललित्रिका–सं० स्त्री० (Frontal lobe) ललाट-खण्ड।

अग्र-लोड्यः–सं० पु० (Marselia dentata) चेचुना, चिञ्चोटक–चुप–हिं०। चैचको, चिञ्चोः मुल–बं०।
गुण—यह पाक में गुरु, शीतल तथा अग्नि कारक है। राज०।

अग्र लोहिता–सं० स्त्री० चिल्ली शाक, चेलारी–हिं० रा० नि० व० ७।

अग्रवक्त्र–हिं० संज्ञा पु० [सं०] सुश्रुत में वर्णि चीर फाड़ का एक यन्त्र।

अग्र-वर्त्ती–हिं० वि० [सं०] आगे रहने वाला अगुआ।

अग्र-बीजः–सं० पु० A viviparous plan as the gemphrœna globosa,el बीजाग्र वृक्ष मात्र यथा कुण्टादि। हे० च० देखो—अग्रबीज।

अग्रवेहिः–सं० स्त्री० प्रसाधिका, नीवार। र० मा०

अग्रशृंग–हिं० पु० (Anterior horn) का अगला शृंग।

अग्रशोची–हिं० संज्ञा पु० [सं०] आगे से वि करने वाला, दूरदर्शी, दूरंदेश।

अग्रसन्ध्या–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] प्रभात, काल।

अग्रसर–हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) आगे वाला व्यक्ति, अग्रगामी पुरुष। अगुआ। (आरम्भ करने वाला। पहिले पहिल करने व व्यक्ति। (३) मुखिया प्रधान व्यक्ति। वि०

जो आगे जाए, अगुआ। (२) जो प्रारम्भ करे। (३) प्रधान, मुख्य।

अग्रह–हिं० संज्ञा पु० [सं०] गार्हस्थ्य को न धारण करने वाला पुरुष। वानप्रस्थ।

अग्रहस्तः–सं० पु० (The fore part of the hand) हाथ का अगला भाग।

अग्रहण– हिं० पु०
अग्रहायण–सं० पु०
अग्रहायणः–सं० पु०
अग्रहायनः–सं० पु०
} वर्ष का पहिला महिना। मार्गशीर्ष मास अर्थात् अगहन का महिना। प्राचीन वैदिक क्रमानुसार वर्षका आरम्भ अगहन से माना जाता था यह प्रथा अब तक गुजराज आदि देशों में है। पर उत्तरी भारत में वर्ष का आरम्भ चैत्र मास से लेने के कारण यह महीना नवाँ पड़ता है।

अग्रांश–हिं० संज्ञा पु० [सं० अग्रांश] आगे का भाग।

अग्राशन–हिं० संज्ञा पु० [सं०] भोजन का वह अंश जो देवता के लिये पहिले निकाल दिया जाता है। यह अग्राशन पशुओं और सन्यासियों को दिया जाता है।

अग्रास–अ० सुहूरुज़ुल्अम्आ। अंत्रांतरीय श्लेष्मा-हिं० (Mucus) इं०।

अग्राह्य–हिं० वि० [सं०] ग्रहण करने के अयोग्य, न धारण करने योग्य। अप्रिय। अग्रहणीय। तुच्छ निस्सार। (Unagreeable) (२) न लेने लायक (३) त्याज्य। छोड़ने लायक।

अग्रिम–हिं० वि० [सं०] (१) आगे जाने वाला। आगामी। (२) प्रधान। श्रेष्ठ। उत्तम्। संज्ञा पु० बड़ा भाई।

अग्रिमा–सं० स्त्री० लवली वृक्ष, हर फरी०हिं०। लोणागाछ-ब०। श० च०।

अग्रिमोनियम्–(–या) युपेटोरियम् ले० शज़्रतुल राशीस, गाफिस–अ०। (Agrimony) फा० इं० भा०।

अग्रिमोनी–इं० गाफिस–अ०। (See-Ghafis)

अग्रु–सं० स्त्री०
अग्रः–सं० स्त्री०
} अंगुली, अंगुश्त–फा०। फिङ्गर (Finger)–इं०। आंगुल बं०। (Bone of finger, ortoa)

अग्रेटम् एक्वेटिकम्–ले० बड़ी किश्ती इं० है० गा०।

अग्रेटम् वाटर–इं० बड़ी किश्ती। इं० है० गा०।

अग्रेदिधिषु–हिं० संज्ञा पु० [सं०] ऐसी स्त्री से विवाह करने वाला पुरुष जो पहिले किसी और को ब्याही रही हो।
संज्ञा स्त्री० वह कन्या जिसका विवाह उसकी बड़ी बहिन के पहले हो जाय।

अग्रेष्टो–रु० अपक्व द्राक्षारस, कच्चे दाख का स्वरस (Juice of unripe grapes) फा० इं० १ भा०। देखो–अंगूर।

अग्रोपाइरम्–ले० श्वेतदुर्वा ग्रन्थि, सफेद दूब। (Couch grass, (Triticum)

अग्रोपाइरम् रिपेंस–ले० सफेद दूब। श्वेतदुर्वा (Couch grass)

अग्रोस्टिस् एल्बा–ले० सफेद दूब। श्वेत दूर्वा। (Cynodonalba)

अग्रोस्टिस् डाइएण्ड्रा–ले० वेनाजोनी–वं० Diandrous bent grass) इं० है० गा०।

अग्रोस्टिस् लिनीएरिस्–ले० जनेवा, दूर्वाभेद (Thread like bontgrass) इं० है० गा०।

अग्रोस्टिस्साइनास्युरि आँइडीस्–ले० दूब, हरी दूब।

अग्र्य–हिं० वि० [सं०] (Best, foremost) प्रधान। श्रेष्ठ। संज्ञा पु० बड़ा भाई।

अग्लफ–अ० बेखतना, खतना न किया हुआ, जिसका खतना न हुआ हो। अनसर्कमसाइज़्ड (Uncircumcised)–इं०।

अग्लुकूमा–अ० तुज़्लुलूमाउल्, अखजर, खजरतुलऐन सब्ज़ मोतिया, नेत्र में हरित जल उतर आना, हरित मोतिया। यह सबसे बुरे प्रकार का मोतिया बिन्द है जिसमें नेत्र पिंड कठिन हो जाता है और दृष्टि शक्ति नष्ट हो जाती है। यदि आरम्भ में इसकी चिकित्सा न की जाय तो यह असाध्य होता है और कदह, (Couching) के अयोग्य

होता हैं। ग्लोकूमा (Glaucoma)-इं०। अग्लकूमा इसी का अरबीकृत है।

अग्लेयाएडयूलिस-ले०। लतेमहवा-नेपा०। सिनकदंग-लेप०। गुमी ग़ारों की पहाड़ी तथा सिलहट में बोलते हैं इसका फल खाने के काम में आता है। मे० मो०।

अग्लेयाकुमायूं-ले० गिरथन, गिदड़ड़ाक, कानकप०।

अग्लेयापॉलिस्टेकिया-ले०।

अग्लेया पालिट्रेकीन-इं० बन्दूरपाला-बं० इं० है० गा०।

अग्लेयाराँन्जवर्ग्याना-ले० प्रियंगु।

अग्शर-अ० अग्वर।

अग्शियह्-अ० (व० व०) गिशाअ (ए० व०) कलाएँ, झिल्लियाँ, परदे-हि०। मेम्ब्रेन्स (Membranes)-इं०। देखो गिशाअ् (कला)।

अग्शियह् जनीन-अ० भ्रूणावरण (Fœtal membranes)

अग्शियह् जुलालियह्-अ० अग्शियह् बलगमियह् (Mucousmembranes)

अग्शियह् नुखाईयह्-अ० सौषुम्नावरण (Spinal membranes)

अग्शियह् बलगमिय्यह्-अ० अग्शियह् जुलालियह्. बलगमी झिल्लियां, लुआबी झिल्लियां-उ०। श्लेष्मधर कला, स्नैहिक कला, एक पतली चमकदार झिल्ली जिसकी सेलें एक चिकनाईदारतरल (स्नेह) बनाती है जिससे सधिया चिकनी और मुलायम रहती है। इससे उनकी गति में सरलता होती है। साइनोवियल मेम्ब्रेन्स (Synovial membranes)-इ०।

अग्शियह् माइयह्-अ० आबी झिल्लियां-उ०। जलीयावरण। देखो- गिशाअ् माई। सीरम मेम्ब्रेन्स (Serousmembranes)-इ०।

अग्शियह् मुखातियह्-अ०बलग़मी झिल्लियाँ, लुआबदार झिल्लियां-उ०। श्लेष्मिक कलाएं हिं०। म्युकस मेम्ब्रेन्स(Mucous membranes) इं० देखो—गिशअ् मुखाती।

अग्शियतुद्दिमाग-अ० सहायाया-अ०। परदाहाय दिमाग-फा० दिमाग की झिल्लियां, दिमाग के परदे-उ०। मस्तिष्कीय कलाएं, मस्तिष्कावरण-हिं०। मेनिन्जीज (Meninges)-इं०।

नोट—(१) यह दो झिल्लियां है जो मस्तिष्क पर लिपटी हुई है। इनमें प्रथम अंतरावरण, जो एक पतली झिल्ली है मस्तिष्क के चारों ओर लिपटी है, को उम्मरकीक (Piameter) कहते हैं, और दूसरी बाह्यावरण, जो स्थूल होती और अस्थियों से चिपकी रहती है, उम्मगलीज (Durameter) कहलाती हैं।

(२) यह उपर्युक्त वर्णन यूनानी हकीमों का है, परन्तु अर्वाचीन छेदनशास्त्र विदों के अन्वेषण के अनुसार उपर्युक्त दो झिल्लियों के अतिरिक्त एक झिल्ली और मालूम हुई है जो उक्त दोनों के मध्य में स्थित हैं जिसे हिंन्दी में मध्यावरण और अरबी में अङ्कबूती तथा अगरेजी में अरकनॉइड (Arch anoid) कहते हैं। विशेष विवरण यथा स्थान देखिए।

अग्शियतुन्नुखाअ्-अ० अग्शियह् नुखाइयह्। परदाहाय नुखाअ्, हराम मग्ज के ग़िलाफ-उ०। सोषुम्नावरण-हिं०। मस्तिष्क के सदृश सुषुम्ना पर भी तीन झिल्लियां है। इनके नाम वही है जो मस्तिष्क की झिल्लियों के हैं (Spinal membranes)।

अग्शियतुल् जनीन-अ० अग्शियह् जनीन, जनीन, के परदे, जनीनपर को तीन झिल्लियाँ -उ०। गर्भ कला, भ्रूणावरण हिं०। फीटल मेम्ब्रन्स (Foetal membrenes) डेसिडस (Decidus) इं०।

ये तीन कलाएं हैं। जो जरायुस्थ भ्रूण के चारों ओर लिपटी रहती है। इनमें से प्रथम को हिंदी में भ्रूण बाह्यावरण, अरबी में अनूफस आर कोरिया (Chorion) और द्वितीय को क्रमशः भ्रूणान्तरावरण मशीमह तथा एमनिआन (Amnion.) और तृतीय को क्रमशः भ्रूण मध्यावरण लफाइफी और ऐलनटाइस (Allntois) कहते हैं।

अग़सान-अ० (ब० व०) गुस्न (ए० व०) शाखाएं टहनियां। ब्राञ्चेज (Branches) इं०।

अघ-संज्ञा पु० [सं०] (१) दुख। (२) व्यसन।

अघनम्-सं० क्ली० दधि, दही, हिं० दई-ब०। (कर्ड (Curd) इं०। हला०।

अघम्-सं० क्ली० (Distress) कष्ट। अथ० सू० ६, २६, का० ८

अघडोडे-ते० अड्सा अरुस हि० (Adhatoda-vasica *Nees*)

अघर्म-हिं० वि० (not hotcold) शीतल।

अघविषः-सं० पुं० सर्प सांप (A serpent A snake)।

अघाटः-सं० पुं० अपामार्ग (Achyranthes aspera *Linn*) रा०।

अघाडा-ड़ा-हिं० अपामार्ग कांचवाली (Achyranthes aspera *Linn*)

अघेरन-हिं० सं० पु० [देश] जौ का मोटा आटा।

अघोड़ी-डो-गु० मार्ग।

अघोर-सं० पु० रस शास्त्र के पूर्व आचार्य शिव।

अघोरनृसिंह-(हो) रसः-सं० पु० सन्निपातिक ज्वर में प्रयुक्त होने वाला रस। देखो घोरनृसिंह रसः।

ताम्र भस्म १ मा० लौह भस्म २ मा० बङ्ग भस्म ३ मा० अभ्रक भस्म ४ मा० तथा स्वर्ण, माक्षिक भस्म १ मा० पारद १ मा० गन्धक १ मा० शु० मैनशिल १ मा० सु० विष २ मा० त्रिकुटा २ मा० अथवा समस्त वस्तु समान भाग ले और विष सबसे द्विगुण ले इन्हें चूर्ण कर मछली भैसा और मोर के पित्त तथा चित्रक के रस में पृथक २ एक २ पहर घोटे पुनः सरसों बरा बर गोलियां बनाए धूप में सुखा कर रक्खे इसको ठण्डे जल के साथ खाने से तेरह प्रकारके सन्निपात विसूचिका अतिसार त्रिदोष जन्य खांसी त्रिदोष ज्वर इत्यादि दूर होते हैं। इस पर दही और शीतल जल का पथ्य देना योग्य है।

अघोर-मंत्रः-सं० पु० ॐ आघोरेभ्यश्च घोरेभ्यो घोर तरेभ्यश्च। सर्वतः सर्वसर्वेभ्यो नमोऽस्तु रुद्र रूपेभ्यः॥ इस मंत्र से रस क्रिया की सिद्धि होती है। भै० र०

अघोराख्यो रसः-सं० पु० शुद्ध पारा शु० गंधक शु० वच्छनाग शु० हरताल शु० शंखिया सोहागा तांबा (भस्म) और शुद्ध नीलाथोथा इन्हें समान भाग लें खरल में बारीक घोट रक्खें। मात्रा-१ र०। गुण यह सम्पूर्ण सन्निपातों को दूर करता है

अघोरेश गुटिका-सं० स्त्री० मुण्ड लौह (बीड़ लोंह की कड़ाही में ऊपर और नीचे धान की भूसी रख कर बीच में पारा रक्खें फिर जामुन के रस उस कड़ाही को पूर्ण कर १ रात रहने दें। प्रातःकाल जामुन रस अलग करके दिन में कड़ाही को सुखा कर फिर सायंकाल पूर्वोक्त विधि से पारे को रख दें। फिर इसी तरह ३ रात तक उक्त नियम से पारेमें भावना दें। फिर समान भाग वंग मिलाकर कज्जली बनाए फिर इसका १ गोला बनाकर धत्तूर के फल के भीतर रख पुटपाक करें इसी तरह ७ पुटपाक करें फिर उस गोले पर धतूर के गाढ़े रस का लेप चढ़ाकर भंग के लुगदी में बन्द करके भंग के रस में दोला यंत्र में पकाएँ।

इसी तरह अफीम का लेप चढ़ाकर पोस्ता के पानी में दोलायन्त्र में पकाएँ, फिर तीसरी बार मद्य में पकाएँ तो यह गुटिका सिद्ध होती है। इसे केले के फल, गुड़ अथवा किसी मीठी वस्तु के भीतर रख कर मुंह में रक्खें, जब तक यह मुँह के अन्दर रहेगी वीर्य स्खलित न होगा। इसके प्रभाव से १०० स्त्रियों से भोग किया जा सकता है। र० यो० सा०।

अघोष-हिं० वि० [सं०] (१) शब्द रहित, नीरव (२) अल्पध्वनियुक्त।

अघ्ना-सं० स्त्री० गाय, गऊ गो, गरु-बं०।

अघ्न्या-सं० स्त्री० गवि, गाय। (Cow)-इं०। गाभी-बं०।

अघ्रान-हिं० संज्ञा पु० [सं० आघ्राण] आघ्राण करना। गंध ग्रहण। महंक लेने की क्रिया। सूंघने का कार्य।

अघ्राननी-हि० क्रि० स० [सं० आघ्राणे] आघ्राण करना। महंक लेना सूंघना।

अघ्रेय-हिं० वि० [सं०] न सूंघने योग्य ।

अङ्क-हिं० पु०
अङ्कः-सं०पु० } (१) (Limb of the body) शरीरावयव, अंग । कोल-बं० । रा० नि० व० १८ वा० चि० ७ अ० । (२) चिह्न, निशान, छाप आँक, रेखा (Mark, Spot, a line) (३) Sin पाप । Pain दुःख । मे० कद्विकम् ।

(४) number आँकड़ा, अदद, संकेत, संख्या का चिह्न, जैसे—१, २, ३, ४, ५ आदि । (५) शरीर, देह, अंग ।

अङ्कडास-ते० (Leea styphylea) (L. Sambucina, *Willd* Staphylea Indica) कुकुर जिह्वा, कुकुर जिह्वा । इं० मे० मे० ।

अङ्कड़ी-हिं० स्त्री० संज्ञा [सं० अंकुर=अखुआ, टेढ़ी नोंक] (१) कँटिया, हुक । (२) वेल, लता ।

अङ्कतिः-सं० पु० (१) (wind) वायु । त्रि० (२) Fire अग्नि । विशेष ।

अङ्कनः-सं० पु० अंकोल, अंकोटवृक्ष, ढेरा । आङ्कोड गाछ-बं० । (Alangium decapetalum, *Lum*) वै० श० ।

अङ्कनम्-सं० क्ली० (Mark) चिह्न ।

अङ्कना-हिं० लिखना, छापना, मोलभाव करना, चिह्न करना ।

अङ्कपादम्-सं० क्ली० (१) पदचिन्ह पैर का निशान (Footprint.) । (२) छागैणाद्यवयव विशेष । वा० सू० १६ अ० ।

अङ्कपाली
अङ्कपालिः } सं० स्त्री० (१) (Midwife anurse) धाय, धात, दाई, । (२) वेदिकाख्य गन्ध द्रव्य विशेष तथा-धात्री वेदिकयोरपि । मेलचतुष्कं । (३) Embracing' anembrace आलिङ्गन मे० ।

अङ्कपालिका
अङ्कपालिः } हिं० स्त्री० संज्ञा [सं०] Midwife धात्री । देखो-अङ्कपाली

अङ्कब-अ० (A kind of fish) मछली भे० एक प्रकार की मछली है ।

अंकबूत्-अ० (A spider) मकड़ी ऊर्णनाभि । शेर मगस फा० ।

अंकबूतिय्यह्-अ० मकड़ी के जाले का सा परदा । नेत्र का चतुर्थ पटल । देखो तबकहे अङ्कबूतिय्यह ।

अंकमाल-हिं० पु० संज्ञा [सं०] आलिंगन, भेंट, परिरंभण, गले लगना ।

अंकमालिका-हिं० स्त्री संज्ञा [सं०]
(१) छोटा हार छोटी माला ।
(२) आलिंगन भेंट ।

अङ्करा-हिं० पु० संज्ञा [सं० अंकुर] (१) एक खर वा कुधान्य जो गेहूं के पौधोंके बीच जमता है । इसे काटकर बैलों को खिलाते हैं । और इसका साग भी खाते हैं ।

इसका दाना व बीज काला, चिपटा, छोटी मूंग के बराबर होता है । और प्राय गेहूं के साथ मिल जाता है । इसे गरीब लोग खाते भी हैं । खेसारी इसी का एक रूपान्तर है । अँकरा ।

अङ्करास-हिं० स्त्री० संज्ञा । देखो अङ्करास । अंकराश

अङ्करी-हिं० स्त्री० संज्ञा [अंकरा का अल्पार्थक प्रयोग] A kind of vetch (Vicia sativa) अंकरी रवाड़ी राड़ी ।

अङ्कलिगे-कना० अंकोल ढेरा (Alangium decapetalum, *lam*) फ० इं० २ भा०

अङ्कलेख्य-
अङ्कलोडय } सं० पु० चित्तोड़ (चिलोटक) वृक्ष हिं० चेंचकोमूज-बं (Marsileadentala) बं० श० । देखो अग्रलोडय ।

अङ्कश-सं० पु० क्रोडस्थ बालक । कोलेर छेले-बं०

अङ्का-ङ्कि-सं० स्त्री० मृदङ्ग विशेष । शब्द । रा० ।

अंकना-हिं० परखना जंचवाना दाम कुतवाना (To cause to value to examine' a cloth'to approve of)

अङ्कारकतैलम्
अङ्करातैलम् } सं० क्ली० । देखो—अङ्गार तैलम्

अंकाव–हिं० पु० निरख, दर, माल, का ठहराव (Valuation)

अंकित–चिन्ह किया हुआ' मुद्रित चिन्हित (Marked examinedvalued' Paged)

अंकुडु–ते० कुड़ा कुटज, कुरैया Holarrhena anti-dysenterica' R. Br.) स० फा० इ० ।

अंकुडु कर्र–ते० गम्भीर मझा० (Uncaria gambier *Roxb* wood of) स० फा० इं० ।

अंकुडु कोडिश–ते० काडिश--वित्तुल । मीठा इन्द्रयव इन्द्रजौ, । *Wrightia tinctoria R.Br.* (seed of) । स० फा० इ० ।

अंकुडु-चेट्ट–ते० ए० व० | कुड़ावृक्ष, कुटजवृक्ष,
अंकुडुचेटल–ते० व० ब० | कुरैया । स० फा०
अंकुडुमानु–ते० ए० व० | इ० । Holarrh
अंकुडुमानुल–ते० ब० व० | ena anti dysenterica *R.* BR (Tree of)

अंकुडु वित्तु–ते० ए० व०

अंकुडु वित्तनमुलु–ते० व० व० ।

अंकुडु वित्तुलु–ते० कडुआ इन्द्रजौ इन्द्रयव तिक्त हिं० Holarrhena anti dysenterica R.BR.seeds of स० फा० इं० ।

अंकुरः–सं० पु०
अंकुरम्–सं क्ली० } (A plantleta, seed bud)

अंकुर, अँखुआ, अँगुसा, गाभ, नबोद्भिद प्ररोह फुनगी, दा० उ० ३६ अ० । पोंक बं० । संस्कृत पर्या० अभिनवोद्भिद् (अ, मे०) उद्भिद प्ररोहः अंकुरः (रा) रोहः ('हे) । (२)A shoot orsprout- a germ a' blade डाभ, कल्ला, कनखा, कोंपल आंख, । (३)मुकुल, कली (Bud) । (४) (sharp) नोक । swelling अर्बुद शोथ । (५) villi (अंकुर (अपरा के) (६) Blood रुधिर, रक्त, खून (७) hair रोआँ, लोम, (८) water (Aqua) जल, पानी । मांस के बहुत छोटे जाल दाने जो घाव भरते समय उत्पन्न होते हैं । मांस के छोटे दाने । अंगूर । भराव । (९)फल Fruit सर्वत्र मे० रत्निकं । (१०) Tumour

अंकुरआना–उगना, जमना, रुह (germinate, sprout)

अंकुरकः–सं० पु० पक्षिवास स्थान, घोंसला खोंना (a nest) वै० शा० ।

अङ्कुर मात्रकम्–सं० क्ली० (rudimentar y)

अंकुरना
अंकुराना } हिं० क्रि० अ० [सं० अंकुर] (Germinate sprout उगना, जमना, रुह,)

अंकुर-विशिष्ट आवरण

अंकुरित–हिं० वि० अंकुर सहित फुनगी वाला (Having sprouts) अँखुराया हुआ उगा हुआ । जमा हुआ । निकला हुआ । जिसमें अंकुर हो गया हो (२) उत्पन्न उगा हुआ (arisen)

अंकुरित यौवना–हिं० वि० [सं०] वह स्त्री जिसके यौवनावस्था के कुच आदि चिन्ह निकल आये हों उभड़ती हुई युवती स्त्री जिसकी उभड़ती जवानी हो ।

अंकुरी–हिं० स्त्री० संज्ञा [हिं० अंकुर+ई] चने को भिगोई हुई घुघनी ।

अंकुल
अङ्कुले } हिं० पु० संज्ञा [सं० अंकोल] alangium decapetalum' *lam* [अकोल ढेरा ।

अङ्कुशः–सं० पु० (१) Hamular process । प्र० शा० ह० शा० र० १ भाग । (२) ऋषि सं० । डाङश बं० हला० श० स० अंकुश अंकुश A hook on goad आंकड़ी आंकड़ी लोहे का एक छोटा शस्त्र वा टेढ़ा कांटा जिससे हाथी चलाया जाता है । गजवार्ग ।

अङ्कुश कास्थि–सं० स्त्री० (Hamate)

अङ्कुश दन्ता–हिं० वि० [सं० अंकुश दन्त] हाथी

का एक भेद इसका एक दात सीधा और दूसरा पृथ्वी की ओर झुका रहता है। यह और हाथियों से बलवान और क्रोधी होता है तथा झुण्ड में नहीं रहता। इसे गुण्डा भी कहते हैं

अङ्कुशदुर्धर-हिं० पु० सज्ञा [सं०] मतवाला हाथी मत्तहाथी।

अङ्कुशिन-सं० त्रि० (Having a hook or goad)

अङ्कुश्त-फा० कोयला।

अङ्कुसा आंफिसिनेलिस-ले०गाब जुवान

अङ्कुसाटिंकटोरिया-ले० एक पौधा है जिसका तेल औषधि कार्य में आता है। मे०म०।

अङ्कुर-कुं-सं०,पु० अंकुर a sprouta germin हे० च० का०।

अकूलंग-ना० अश्वगंध असगंध (withania somnifera *Dunal*)

अंकूलिया } गु०ढेरा वृक्ष।
अंकूली }

अंकूषः-सं पु० अङ्कुश।

अंकेरिया गैम्बियर-ले० खदिर कत्था वृक्ष खैर वृक्ष चोनी कत्था Gambier,इ० मे० मे०

अंकेरियागैम्बीर- (wood of) अकुडुकर्र ते०

अंकोएड } सं० ढेरा, अंकोल
अंकोएल } गम्मीरी मल। स० फा० इं०। (Alangium decapetalumइं० मे० मे०

अंकोटः-ठः-स० पु० अंकोल अंकोटक वृक्ष ढेरा(alangium decapetalum *Linn* रा० मा० (सु० नि० अ० ३६) भा० पू० १ भा० गु० ब०।

अंकोटकः-सं० पु० ढेरा अंकोल आंकोड़गाछ धला आंकोंड़ वं० alangium Decapetal, um) भा० रा० व० ६ मद० व० १ क० च० द० अन्त्र चि०।

अंकोटगुटिका-सं० स्त्री० ढेरे की जड़ ४ तो० पाठा की जड़ ४ तो० दारुहल्दी ४ तो० इन्हें चूर्ण कर चावल के जल से घोटकर १-१ तो० की गोलि बनाकर छाया में शुष्क कर रक्खे। इसे चावल धोवन से उपयोग करें तो वात पित्त कफ द्वन्द्वज सन्निपात तथा प्रत्येक प्रकार के अति को दूर करता है।

अङ्कोट वटकः-स० पु० दारु हल्दी, ढेरे की पाठा की जड़ (निर्विषी मूल), कुड़ा की सेमल का गोंद (मोचरस), धातकी (धोपु लोध, अनार का छिलका, प्रत्येक १-१ तो० इन्हें चावलों के पानी में पीस कल्क कर शह साथ बड़े बनाएँ पुनः इसे प्रभात में सेवन क हर प्रकार के अतिसार दूर हों।

चक्र० द० अतिसार चि०, वंग० से० अतिसार चि०।

अङ्कोढ़-हिं० ढेरा, अङ्कोल (Alangium De petalum, *Lam*

अङ्कोरना-अकोरना, घूस लेना, भूंजना।

अङ्कोल-हिं० पु० } अङ्कोला, अंकुल, काला अं
अङ्कोलः-स० पु० }

टेरा. ढेरा, थैल, अंकूल-हि० द०। संस्कृत "अङ्कोटो दीर्घकीलः स्यादङ्कोलश्च निकोचकः अकोटः, दीघकीलः, अङ्कोलः, निकोचकः, (निकोटकः, (भ०), अङ्कोटकः, (भा०, रा० व० ६) अङ्कोलकः, बोधः. नेदिष्टः, दीर्घकी (ज) अङ्कोठः, रामठः (र) कटोरः, रेची, पत्रः, गुप्तस्नेहः, पीतसारः, मदनः, गूढ़ब पीतः, ताम्रफलः, गुणाढ्यकः, कोलकः, लम्ब गन्धपुष्पः, रोचनः, विशालतैल गर्भः, ब घलन्तः, कठोरः, वामकः और लम्बकर्णकः, पर्णः। आँकोण, धलआँकोण, धलाकुरा, आं गाछ, अकरकाठा. बाघांकुर, वाघअङ्कराः- एलेन्जियम डेकापेटेलम् Alangium de petalum, *Lam*) एले० लेमार्किआ Lamarckii, *Thwa*iles एले०टोमे A. Tomentosum-ले० सेज लीव्ड ञ्जियम Sage-leaved alangium अज़िञ्जिमरम्, अलङ्गी-ता०। ऊडुग, (ऊ चेट्टु, अङ्कोलम् चेट्टु उडीके-ते०। अयङ्

अजिजि--मरम्, चेम्मरम्, अङ्कोलम्--मल० । अंकोले, कोरोटा, अनीसरूलीमरा--कना० । अङ्कोल, अगोड,-सिं० तो शौ०--विड्या, तो शौंविड्वर० । अङ्कोलवृक्ष, अंकुड--म० । अङ्कोल्या, अंक्र--गु० । डेज्ञा--सन्ता० । अङ्कोड--कोल० । अंकुजा--डोलूंक उडि० । रुक अंगुला-सिंहली ।

कॉर्नसीई या अङ्कोट वर्ग

N. O. Cornaceæ

उत्पत्ति स्थान—इसका पेड़ हिमालय की घाटी से गंगा तक, सयुक्त प्रान्त, दक्षिण अवध व बिहार, बंगाल प्रभृति प्रान्तों के बड़े और छोटे जंगलों में पहाड़ी जमीन पर बहुतायत से पैदा होता है । राजपूताने में भी पाया जाता है । उष्ण कटिबन्ध में स्थित दक्षिण भारतवर्ष और वर्मा के वनों और कभी-कभी बगीचों में पाया जाता है । माघ से चैत तक अर्थात् आरम्भिक ग्रीष्मकाल में यह पेड़ फूलता फलता है । पुष्पितावस्था में वृक्ष पत्र शून्य रहता है । बैसाख से सावन तक फल लगते और पकते रहते हैं ।

इतिहास—चूंकि यह भारतीय पैदावार है इस लिए इसका वर्णन सभी प्राचीन आयुर्वेदीय ग्रंथों में पाया जाता है । यूनानी चिकित्सा ग्रन्थों में लेखकों में पीछे के लोगों ने अपनी पुस्तकों में इसका वर्णन किया है ।

वानस्पतिक वर्णन—यह एक जंगली वृक्ष है जो बनों में तथा शुष्क व उच्च भूमि पर अधिकतया उत्पन्न होता है । ऊंचाई भिन्न-भिन्न साधारणतः लघु, आरम्भ में कंटक रहित, पुराने अथवा युवा वृक्ष के प्रकाण्ड से निकलती हुई आरम्भिक शाखाएँ भी काँटा रहित होती हैं । उद्भिद विद्यानुसार अङ्कोट कंटक को कटक नहीं कहते किन्तु तद्युक्त शाखाओं को तीक्ष्णाग्र शाखा कहते हैं । पत्र—एकान्तरीय अर्थात् विषमवर्ती, अण्डाकार वर्धीनुमा अथवा तग अण्डाकार ३--५ इञ्च लम्बा और १--१॥ इञ्च चौड़ा, चिकना, डंठल युक्त होता है । डंठल—लघु अत्यन्त सूक्ष्म रोम युक्त, लगभग चौथाई इञ्च लम्बा होता है । पुष्प—मध्यवर्ती, सूक्ष्म, सुगन्धयुक्त, पीताभायुक्त श्वेत साधारणतः कक्षीय, वृन्त युक्त । पुष्पवृन्त—लघु सामान्य । पुष्प-वाह्य-कोष—(Calyx) ऊर्ध्वगामेय, दंष्ट्राकार, लघु, स्थायी । पुष्पाभ्यन्तरकोष (Corolla) बहुदलीय, पुष्पदल—अर्थात् पंखड़ियां ६ से १०, अंडाकार, न्यूनाधिक उलटी हुई । परागकेशर—पुष्पदल से द्विगुण । पराग तन्तु का निम्न भाग ओमश । पराग कोष—अण्डाकार । गर्भकेशर—सामान्यतः परागतन्तु से अधिक लम्बा होता है । फल—लगभग छोटे रीठा अथवा जंगली बेर के बराबर, गोलाकार, चिकना, झुका हुआ, अपक्व दशा मे नीलाहट लिये और कड़वा तथा पकने पर रक्तवर्ण युक्त (इस पर स्याही झलकती है) जिसके शिरे पर पुष्प बाह्य कोष लगा होता है, एक बीजयुक्त सूक्ष्मतः ग्राह्य तथा मधुर स्वाद युक्त, गदराहट की हालत में स्वादम्ल होता है । बीज—गोलाकार ऊपर नीचे कुछ चपटा, कठोर और धूसर वर्ण मय होता है । इसकी जड़ बजनी, लकड़ी मजबूत हलकी पीलापन लिये हुये, बीच का हिस्सा बादामी रंग का होता है । जिससे सुगन्धि आती है परीक्षा—इसे तथा छाल को परक्लोराइड आफ आयर्न घोल का स्पर्श कराने से ये मटमैले हरित वर्ण में परिवर्तित हो जाते हैं, इसकी छाल आध इञ्च तक मोटी, खाकी रंग की जिसके ऊपर छोटे२ कांटे से मालूम होते हैं । स्वाद—तिक्त और गन्ध अधिकतर मतली कारक (उत्क्लेश जनक) होती है ।

नोट—देशी वैद्य तथा औषध बिक्रेता सफेद तथा काले नाम से इसके दो भेद बतलाते है । इनमें श्वेत प्रकार वही है जिसका ऊपर वर्णन किया गया है, परन्तु डाक्टर मोदनशरीफ महोदय के कथनानुसार काला उसका भेद नहीं, जैसा कि सर्व साधारण का विचार है, वरन् यह उसी की एक निकटस्थ जाति अर्थात् एलेञ्जियम हेक्सापेटेलम Alangium Hexapetalum of Lanlarck है । वे इसे अङ्कोल का काला भेद इस कारण बतलाते हैं कि यह उससे रंग रूप में बहुत कुछ समानता रखता है ।

उसके फूल का रंग बैंगनी और छाल गम्भीर धूसर वर्ण की होती है। इसकी छाल परिवर्तक तथा विषघ्न प्रभाव में किसी-किसी स्थान में उत्तम ख्याल की जाती है और इसमें कभी-कभी वान्ति कारक गुण होने का निश्चय किया जाता है। देखो—काला अकोला।

प्रयोगांश—मूल, मूलत्वचा, बीज, फल, पत्र, पुष्प और तैल।

रसायनिक संगठन—इसकी जड़ में एक अत्यन्त तिक्त, रवा रहित अङ्कोटीन या एलेञ्जीन (Alangin) नामक क्षारीय सत्व वर्तमान होता है जो हलाहल (Alcohol), ईथर क्लोरोफार्म और एसेटिक ईथर में तो विलेय होता है परन्तु जल में अविलेय।

गुणधर्म व प्रयोग-आयुर्वेदिक मतानुसार अङ्कोल चरपरा, तीक्ष्ण, स्निग्ध, उष्ण, कषैला हलका तथा रेचक है और कृमि, शूल, आम, सूजन, श्लेष्मा (कहीं-कहीं ग्रह' पाठ है) और विष नाशक है। भा० मद० व० १।

विसर्प, कफ, पित्त, रक्त, मूसा तथा सर्पविष को दूर करता है। भा०

ढेरा—कषैला, कड़ुवा, पारे को शुद्ध करनेवाला हलका, चरपरा, किञ्चित सर (दस्तावर), स्निग्ध तीक्ष्ण, गरम और रूक्ष है। (नि० रा०)

विसर्प, कफ, पित्त, रुधिर, विकार, तथा सांप चूहे के विष को दूर करता है।

अंकोल का फल—शीतल, स्वादिष्ट, कफ नाशक, पुष्टिकारक, भारी, बलकारक, रेचक है और वात, पित्त, दाह, क्षय और रुधिर विकार को नाश करता है। मद० व० १ भा०। विष, लूता (मकड़ा) आदि दोष नाशक और वात, कफ नाशक तथा शुद्धि करने वाला है। रा० नि० व० ६। च० द० अ० सा० चि०।

अंकोल का रस—वान्ति जनक है तथा विष विकार, कफ, वात शूल, कृमि, सूजन, ग्रहपीड़ा, आमपित्त, रुधिर विकार, विसर्प, कुत्ते का विष, मूसे का विष, बिलाव का विष, कटिशूल, अतिसार और पिशाच पीड़ा को दूर करने वाला है। (वृ० नि० र०)

अंकोल के बीज—शीतल धातुवर्द्धक स्वादि मन्दाग्नि, कारक, भारी, रस और पाक में मधु बलकारक, कफ कारी, सारक, स्निग्ध, वृष (वीर्य वर्द्धक) तथा दाह, वात, पित्त, ज्व रक्त विकार, कफ, पित्त और विसर्प को नाश करने वाले है। नि० रा०)

अंकोल का अर्क—मूल, आम, सूजन, अश्म और विष को नष्ट करता है।

अंकोट तेल—इसको पूर्व वैद्य एवं महर्षि ने वात कफ नाशक और मालिश करने से वा रोग नाश करने वाला कहा है (वै० निघ०)

अङ्कोल के वैद्यकीय प्रयोग—(१) दन्त काष्ट गत-विष में अङ्कोटमूल-दन्तकाष्ट विषयु होने पर जिह्वा एवं दांत पर मैल जम जाता है और ओष्ट सूज जाता है। इसके प्रतीकारार्थ अङ्कोट की जड़ की छाल का चूर्ण प्रस्तुत कर शहद के साथ शोथ स्थल पर धीरे धीरे रगड़ें या प्रले करे। (कल्प० १ अ०]

(२) बिषैले अञ्जन से नेत्रों में अन्धत उत्पन्न होने पर अङ्कोल के फूलों का अञ्जन नेत्रों लगाने से अन्धता दूर होती है।

(कल्प० १ अ० सुश्रु०)

अङ्कोल की जड़ की छाल बकरी के मूत्र पीस कर पीने व लेप करने से चूहे का विष न होता है। (वा० उ० ३८ अ०) इसकी जड़ की छाल गो दुग्ध के साथ पीस कर पीने से कुत्ते का विष दूर होता है।

(भाव० म० खं० ४ भा०)

(१) अङ्कोट की जड़ की छाल का क्वा प्रस्तुत कर, इसका घन सत्व तैयार कर गौ घृ के साथ सेवन करे। इसके सेवन से पूर्व रोगी शरीर को तिल तेल मर्दित कर स्वेदित करलें, वा गरदोष नाशक है। (विष चि०)

नोट—उपविष सेवन जन्य उपद्रव को गरदो कहते हैं।

इसकी मूल त्वचा का चूर्ण १ तो० चावलों के साथ पीस कर सेवन करने से अतिसार और संग्रहणी में लाभ होता है।

(च० द० अतिसा० चि०)

नोट—यह मात्रा अधुना प्रयोजनीय नहीं।

वक्तव्य

चरक में अङ्कोट के फल का गुण इस प्रकार लिखा है—'श्लेष्मलं गुरु विष्टंभि चाङ्कोटफलमग्नि-जित्' (सु० २१ अ०)। चरकोक्त विष चिकित्सा के अमृत घृत कल्क "पाठाङ्कोटाश्वगन्धार्ध" पाठ में अङ्कोट का व्यवहार दिखाई देता है। इससे भिन्न और समस्त विष चिकित्सा में अङ्कोट शब्द नहीं आया है। सुश्रुत में कल्प स्थान के छठे अध्याय में चूहे तथा कुक्कुर आदि के विष की चिकित्सा लिखी है। सुश्रुत के श्वविष चिकित्सा में अङ्कोट व्यवहृत नहीं हुआ है, किन्तु मूषिकविष चिकित्सा में चूहा काटे हुये रोगी को वमन कराने के लिये अङ्कोट का प्रयोग किया गया हैं—"छर्दनं जालिनी क्वाथैः शुक्लाख्याङ्कोट योरपि" क० ६ अ० अङ्कोट का एक नाम वामक है। चरक के विमान स्थान के ८ वें अध्याय एवं सुश्रुत के सूत्र स्थान के ३६ में अध्याय में विरेचक तथा वामक द्रव्यों की तालिका है। उस तालिका में अङ्कोट का नाम नहीं है। चरक और सुश्रुतोक्त कुष्ठ, अतिसार एवं ग्रहणी की चिकित्सा में अङ्कोट का नामोल्लेख नहीं है। सुश्रुत के अश्मरी चिकित्साध्याय में अङ्कोट के फल का उल्लेख है। "पिचुकाङ्कोलकतक शाकैन्दीवरजैः फलैः। चूर्णितैः सगुडं तोयं शर्करानाशनं पिबेत्" (चि० १ अ०) निघटुकार अङ्कोट के फलको "गुप्तस्नेह" बोलते हैं।

चरक के सूत्रस्थान के १३ वें अध्याय एवं सुश्रुत चिकित्सा स्थान के ३१ वें अध्याय में उक्त स्थावर स्नेह योनि फलों में अङ्कोटका उल्लेख नहीं है। निघंटुकार अङ्कोट का एक नाम "रेकी" लिखते हैं, किन्तु डल्हण अङ्कोट को "संग्राही', कहते हैं। चक्रदत्त व वंगसेन दोनों ने ही अतिसार की चिकित्सा में अङ्कोट को संग्राही रूप से व्यवहार किया है। वास्तव में अङ्कोट रेची है या संग्राही इसकी परीक्षा करनी आवश्यक है।

अंकोल के सम्बन्ध में यूनानी मत—

प्रकृति—यूनानी ग्रन्थकार इसे पहिली कक्षा में (किसी-किसी के मत से दूसरी कक्षा में) गरम तर मानते हैं।

हानिकर्त्ता—श्लेष्मा अधिक उत्पन्न करता हैं।

दर्पघ्न—काली मिर्च और शीतल व रूक्ष वस्तुए

प्रतिनिधि—कि ा किसी रोग में कुकरौंधा है

मात्रा—४ या ६ मा० तक। विशेष प्रभाव—विषघ्न व शोथघ्न कर्ता, हृदय को बलप्रद, करता, कफ और वायु के विकारों को हरण करता, उदर की पीड़ा, का हरण कृमिघ्न और इसकी जड़ के छाल के चूर्ण १ मा० काली मिर्च के साथ बवासीर को बहुत गुण कारक है।

इसके अत्यधिक उपयोग से आमाशय निर्बल हो जाता है, और शिर में झनझनाहट के साथ मोटा दर्द शुरू हो जाया करता है। गुदा स्थान में जलन मालूम होती है। नेत्र पीले पड़ जाते हैं निद्रा कम आती है। एवं मस्तिष्क कार्य करने की इच्छा अधिक बढ़ जाती है। ऐसी अवस्था होने पर शंखपुष्पी चूर्ण ४ मा० दुग्ध पावभर में उबालकर ठन्डा करके स्वाद के अनुसार मिश्री मिला कर पिलाने से तत्काल समस्त बिकार नष्ट होते है। जड़ उष्ण और चरपरी होती है। फल ठंडा पौष्टिक शरीर को मोटा करने वाला होता है। यह आहार कार्य में आता है। किन्तु अधिक खाने से गरमी मालूम होती है।

अकोल के विविध अंगों के अनेक उत्तम उपयोग:—

अंकोल की जड़ तथा छाल—देशी चिकित्सा में इसकी झड़ की छाल रेचक तथा कृमिघ्न प्रभाव के लिये उपयोग में आती है। बम्बई में संधिवात की पीड़ा को शमन करने के लिये इसके पत्तियों का पुलटिस व्यहार में आता है।

(डाक्टर सखाराम अर्जुन)

मिश्र मोहीदीन शरीफ के वर्णनानुसार उक्त

औषधि कुछ एक गुप्त योगों का, जो वीर्य रोग त्वचारोग तथा कुष्ट रोग की चिकित्सा में अर्काट तथा वैगलौर प्रभृति स्थानों में अत्यधिक प्रचार पा चुके हैं, एक प्रधान अवयव है । और वह स्वानुभव का वर्णन करते हुये कहते हैं कि मैंने उक्त छाल को कुष्ट रोगियों को प्रयोग कराया और अनेक दशाओं में मैंने इसे २॥ र० की इतनी कम मात्रा में भी वामक प्रभाव युक्त पाया। अधिक मात्रा में (अर्थात् २५ र०) में उपयोग में लाने पर यह योग्य और वेजरर (अड़ानिकर) वामक तथा थोड़ी मात्रा में उत्क्लेश कारक और उत्स्वेदन औषधि सिद्ध हुआ इससे भी न्यून मात्रा में यह भारत वर्ष की सर्वोत्तम परिवर्त्तक बलप्रद ओषधियों में से है।

इसकी त्वचा अत्यत तिक्त है अतः त्वचा रोगों में इसकी प्रसिद्ध बिना आधार के नहीं। यदि इसको पर्याप्त काल तक लगातार उपयोग में लाया जाय तो मदार की अपेक्षा उन पर इसका प्रभाव अधिक होता है।

वे पुनः वर्णन करते हैं कि यह इपिकेकाना (Ipecacuanha) की एक उत्तम प्रतिनिधि है और प्रवाहिका के अतिरिक्त उन सम्स्त रोगों में लाभदायक सिद्ध होता है जिनमें कि इपिकेकाना व्यवहृत है।

ज्वरघ्न तथा स्वेद जनक होने के कारण ज्वर नष्ट करने में यह उपयोगी पायागया है।

उत्क्लेश कारक मूत्र जनक और ज्वरघ्न प्रभाव हेतु इसकी जड़ की छाल को मात्रा ३ से ५ रत्ती तक परिवर्तक रूपसे १ से २॥र. है। यह कुष्ट एवं उपदंश में प्रयुक्त होती है देशी लोग इसे विशेषतः विंपैलेजानवरों केकाटनेमें विषघ्न खयाल करते हैं।

औषधि निर्माण अङ्कोल चूर्ण जड़ की छाल साया में सुखाकर चूर्णकर बारीक छान लें और बोतल में सुरक्षित रक्खें मात्रा वमन हेतु २५ र० (५० ग्रेन)। (मो० श०)

इसकी जड़ की छाल चावल के पानीमें घोटकर थोड़ी से शहद के साथ अतिसार में बरती जाती है आमातिसार और रक्तातिसार में मूल त्वचा का चूर्ण ५ र० दिन में २–३ बार बाद सेवन करना चाहिये।

वह नित्य ज्वरों में भी उपयोगी है ज्वर की अवस्था में २॥ से ५ र० देने से स्वेद आकर ज्वर वेग कम हो जाता है तथा तृषा, दाह आदि ज्वर के उपद्रव शमन होते हैं।

इसकी जड़ का शीत कषाय तथा क्वाथ को के साथ श्वान विष नाशक है। यह उदरशूल, कृमि प्रदाह और सर्पदंश (२॥ मा० छिलके का चूर्ण) प्रभृति विषों को शमन करने वाला है। इसकी मूल त्वचा द्वारा निर्मित तेल का संधिवात में बाह्योपयोग होता है। कम मात्रा में यह रसायनिक गुणों को करता है।

मसूड़े और ओष्ठ सूजने पर मधु के साथ प्रलेप करने अथवा इसके काढ़े से कुल्ली करने से लाभ होता है एवं मसूड़ों से खून बहना बन्द होता है। यह विसूचिका नाशक है तथा कूकर खांसी की प्रथमावस्था में प्रयोग करने से लाभ करता है।

जलोदर में जड़ के चूर्ण की १॥ से ३ मा० की मात्रा देने से दस्त होकर रोग दूर होता है। अजीर्ण नष्ट होता है।

दर्द और शोथ पर जड़ को पीसकर लेप करने से फायदा होता है।

जड़ के छिलके का चूर्ण सेवन करने से दस्त होकर पेट के कीड़े दूर हो जाते हैं।

छिलके का चूर्ण १ मा०, काली मिर्च का चूर्ण १ मा० दोनों को मिलाकर सेवन करने से बवासीर में लाभ होता है। इसके छिलके को पीस कर लेप करने से त्वचा के रोग दूर होते हैं।

जड़ के छिलके का चूर्ण, जायफल, जावित्री, लौंग समभाग के चूर्ण को ५ मा० की मात्रा में उपयोग कराने से कोढ़ का बढ़ना रुक जाता है।

जड़ के छिलके के चूर्ण को अडूसे के काढ़े के साथ सेवन करने से राजयक्ष्मा के लिये गुणदायी है।

यदि छिलका और बीज सम भाग लेकर कूट पीस कर गोली चना प्रमाण बनाकर एक मा० से दो मा० तक सेवन कराएँ तो वमन व रेचन सरलता पूर्वक लाता है और आमाशय की सूजन तथा बदन के नीचे के भागों के दर्द और जलोदर में बहुत मुफीद है।

अन्तर्छाल का चूर्ण बनाकर शहद के साथ खाकर ऊपर से मिश्री मिला हुआ दुग्ध पान करने से प्रमेह दूर हो जाता है और कटिशूल, शिरशूल एवं शारीरिक पीड़ा दूर होती है तथा पौष्टिक है।

अंकोल की जड़ १ तो०, कूट ३ मा०, पीपल ३ मा०, बहेड़ा ६ मा०, मिलाकर इसका काढ़ा बनाएँ, इसे ठण्डा होने पर मिश्री मिलाकर पिलाने से इन्फ्ल्युएञ्जा [संक्रामक प्रतिश्याय] में अधिक लाभ होता है।

प्रत्येक भांति के विष में जड़ का काढ़ा बनाकर खूब पिलाना चाहिये। इससे कै और दस्त होकर विष दूर हो जायगा।

इसकी ताजी छाल १ मा० से ४ मा० तक गोदुग्ध में पीसकर पिलाने से बिना कष्ट के वमन और रेचन होते हैं तथा बच्चों की मृगी (अपस्मार) को बहुत फायदा पहुँचाता है।

अङ्कोल मूल द्वारा भस्म निर्माण विधि—

अङ्कोल वृक्ष की छाल लाकर सुखा लें पुनः उसी वृक्ष की मोटी जड़ पृथ्वी के भीतर से खोद लाएँ और उसमें गढ़ा बनाएँ। तत्पश्चात् उक्त गढ़े में थोड़ी छाल रखकर उसमें कलई पत्र लपेटा हुआ शुद्ध ताम्र चूर्ण [या ताम्र का पैसा] रक्खें और ऊपर से उक्त छाल भरदें। अब इसे कपरौटी कर सुखालें और गजपुट की अग्नि मात्र दें। शीतल होने पर निकालें। कागज के रंग की श्वेत भस्म प्रस्तुत होगी। मात्रा—१-२ चावल यथोचित अनुपान के साथ उपयोग में लाएँ।

गुण—सम्पूर्ण शारीरिक व्याधियों के लिये अक्सीर है। (कु० फी०)

अङ्कोल के पत्ते

चोट लगने से यदि दर्द होता हो तो अंकोल के पत्ते लाकर उसको जल में उबाल कर उसकी भाप उस जगह देना, पुनः उक्त पत्तों को गरम २ बांध देने से फौरन दर्द दूर हो जायगा।

(डा० सखाराम अर्जुन)

अतिसार के रोगी को पत्तों का ६ मा० रस दूध के साथ मिलाकर पिलाना चाहिये। इससे प्रथम दस्त होकर कोष्ठ शुद्धि होती है फिर वे एकदम बन्द हो जाते हैं।

अङ्कोल के पत्ते पीसकर पुल्टिस बांधने से गठिया का दर्द दूर हो जाता है।

पत्तों को पीस कर टिकिया बना लें और सरसों के तेल के साथ कड़ाही में डालकर आग पर रख जला लें। जब जल जाय तो थोड़ी स्याह मिर्च का चूर्ण डाल कर मरहम तयार करें। इसको उपयोग में लाने से प्रत्येक भांति के व्रण, खुजली खरवा प्रभृति अच्छे हो जाते हैं।

पत्तों को जलाकर उसकी राख १ तो० लें। फिर इसमें काली मिर्च २५ नग, तूतिया भुनी ३ मा०, हरताल १ मा० मिलाकर खूब खरल करें। बाद को तिल का तेल जिसमें मोम मिलाया गया हो इसमें खरल करके मरहम तयार कर लें। इसके लगाने से बवासीर के मस्से सूखकर निकल जाते हैं।

अण्डवृद्धि—अङ्कोल पत्र उबाल कर बांधने से जल निकलता है।

अङ्कोल की लकड़ी—नासूर में इसकी लकड़ी की राख भरनी चाहिये। इससे नासूर अच्छा हो जाता है।

इसकी लकड़ी का चूर्ण बनाकर इसे पिया—रांगा, कागजी नीबू के बीज तथा दरियाई नारियल आदि उपर्युक्त औषधियों के साथ मिलाकर विशूचिका रोगी को खिलाने से लाभ होता है।

अङ्कोल की लकड़ी का फर्श बनाकर यदि इस पर सोया जाय तो कोई कीड़ा मकोड़ा पास न आएगा।

अङ्कोल पुष्प—इसके पुष्प मधुर, शीतल, कफनाशक, वीर्यवर्धक, बलकारक, दस्तावर एवं वात, पित्त, दाह, रुधिर विकारों को दूर करते हैं।

अङ्कोल के फल—इसका फल शारीरिक दाह राजयक्ष्मा और रक्त पित्त को लाभ पहुँचाता है। शारीरिक दाह में फलों को पीस कर लेप करने से लाभ होता हैं। रक्तपित्त में फल को मिश्री के साथ पीसकर पीने से मुँह आदि द्वारा रक्तस्राव बन्द हो जाता है।

अतिसार में इसके फल के गूदे को शहद में मिलाकर चावल के धोवन के साथ उपयोग में लाने से लाभ होता है।

फलों के गूदे और तिलों के क्वाथ को शहद में मिलाकर देने से सूजाक दूर होता है।

वर्षा ऋतु में जो फुन्सियां बगल के नीचे तथा गले में प्रायः हो जाया करती हैं, जिनसे अक्सर रोगी मर जाते हैं, आरम्भ की में सवेरे के समय यदि इसका एक फल खिलाया जाय और एक फल का पानी निकाल कर गिल्टियों पर मल दिया जाय तो दर्द को तुरन्त लाभ होगा और रोगी बच जाएगा।

अङ्कोल तैल निकालने की विधि—एक प्याले के मुंह को कपड़े से बांध दें और अङ्कोल के बीज की गिरी को कूट कर इस पर बिछा दें और एक टुकड़ा अभ्रक का इस पर रख कर कोयलों की आग करें, इसकी गरमी से तैल टपक कर प्याले में आएगा इसी को व्यवहार में ले।

यदि किसी धारदार शस्त्र से क्षत हो जाय तो अङ्कोल तैल में रुई भिगोकर पट्टी बांध दें तो बढ़ता हुआ रक्त भी रुक जाता है और घाव भी शीघ्र सूख जाता है।

अंकोल तैल १ पाव, मोम एक छटांक अग्नि पर जलाकर रख दो, २ मा० भुनी तूतिया मिला दो, और ठण्डा होने पर भली प्रकार मिलाकर किसी वर्तन में रख दो। यह मलहम दाह, खुजली, भगन्दर, नासूर, क्षत, फोड़ा, फुन्सी प्रभृति समस्त त्वचा सम्बन्धी रोगों को नष्ट करता है।

५ बूंद तैल मिश्री में मिलाकर विशूचिका रोगी को उपयोग कराने से उसे लाभ होता है।

५ से १५ बूंद तक तैल उष्ण दुग्ध में मिला कर मिश्री डालकर प्रति दिन पीना शरीर को बलवान बनाता है। और प्रमेह, निर्बलता और में चक्कर आना तथा आंखों में अंधेरा आना आदि को दूर करता है!

३॥ मा० तैल उष्ण जल से पीना खूब दस्त लाता है और पेट के दर्द व बदहजमी को दूर करता है।

सिर में दर्द हो और किसी तरह अच्छा न होता हो तो उक्त तेल को २० बूंद की मात्रा में बकरी के दूध में थोड़ा सा शहद डालकर पिलाना लाभदायी है। इससे मस्तिष्क पुष्ट होता है।

इसके तैल को तिल के तेल में मिलाकर लगाना बालों को बढ़ाता है और सिर के जुएं को दूर करता है।

गरम पानी में तेल डाल कर कुल्ली करना मसूड़ों की सूजन, दर्द, खून बहने को आराम करता है।

चेचक के दाग पर गेंहूं के आंटे में हल्दी और अङ्कोल का तेल मिलाकर पानी से गीला करके उबटना रंग को ठीक करता है और इसे सुन्दर करता है।

नोट—प्रायः निघण्टुकार अङ्कोल को रेचक मानते हैं पर कई प्राचीन इसे संग्राही कहते हैं। चरक सुश्रुत ने विषघ्न माना है पर संग्राही वा विरेची गुण का उल्लेख देखने में नहीं आया।

अङ्कोलकः—सं० पु० अङ्कोल (Alangium Decapetalum'*lam*) र० सा०-सं०

अङ्कोल कल्कः—सं० पु० ढेरे की जड़ चावल के धोवन में पीस शहद डालकर पीने से अतिसार और विष के विकार दूर होते हैं।

भा० म० ख० २ अति० चि० शार्ङ्ग० सं० म० ख० अ०

अङ्कोलतैलम्—सं० क्ली० अङ्कोल बीज तैल Alangium decapetalum' *lim* oil वै० निघ०।

अङ्कोल फल सङ्काशः–सं० पुं०, फल विशेष। संसार में पिस्ता नाम से प्रसिद्ध है। वै० श०।

अङ्कोल बद्धबटी–सं० स्त्री० यो० म० शुद्ध पारे को श्वेत अंकोल के रस में तीन दिन तक भावित करे, फिर पारे के समान भाग गन्धक मिलाए और खरल में बारीक कजली बनालें। फिर अङ्कोल ही के रस को मिला कर गोला बनालें, फिर तत्काल मारे हुये बकरे के मांस का पिंड जैसा बना कर गोले को उसके भीतर रक्खें। फिर लाल चित्रक के रस और ताल मूली की जड़ का रस इनमें उसको डूबाकर फिर बाहर से चारों तरफ बकरे का मांस लपेट दे फिर अग्नि के समान गरम तेल में उसको डाल कर भूनलें। और जब वह मांस पिंड भून कर सिंदूर का सा रंग धारण करले तो निकाल कर रखलें।

मात्रा—१ रत्ती शहद और घी के साथ खाए।

गुण—इसके सेवन से मनुष्य वीर्यवान हो जाता है। नपुंसकता जाती रहती है। इस पर कषैला पदार्थ सेवन करना निषेध है।

अङ्कोलम्–मल० ढेरा, अंकोल (Alangium decapetalum' *lum*) इं० मे० मे०।

अङ्कोलमनचर–अज्ञात।

अङ्कोलम् चेट्टू–ते० अकोला, अङ्कोल, ढेरा [Alangium deca petalam) सं० फा० इं०।

अङ्कोलमु–ते०, ढेरा, अङ्कोल, A decapetalum *lam*) इं० मे० मे०।

अङ्कोला–म०, अङ्कोली–क०, अङ्कोले–फ०, अङ्कोल्य–गु०, अङ्कोलुम्–ता० | ढेरा, अङ्कोल, अङ्कोला (Alangium decaptalum *lam* सं० फा० इं०।

अङ्कोलः–सं० पुं० (Cedrus deodara) देवदारु। रा० नि० व० २३। वा० उ० ३८ अ०।

अङ्कोलकः–सं० पु० (Alangium Deca petalum *lam*) अङ्कोल मद व० १।

अङ्कोलसारः–सं० पु० मालव प्रसिद्ध स्थावर विष भेद (A kind of poison) हे० च० ४ का०। अफीम, संखिया, प्रभृति। औ० श०।

अङ्कोहर–हिं० संज्ञा पु० ढेरा, अङ्कोल (Alangium decapetalum' *lam*)

अङ्कुरा-विरइ–ता० पुनीर के बीज। तुख्मे काकनजे-हिन्दीं फा०। (Withania puneeria Coagulans, *Dunal*) सं० फा० इं०।

अङ्गम्–सं० क्लो० Myrrh (१) (Balsamodendron Myrrh) बोल। सुगन्ध बोल–बं०। रा० नि० व० ६। (२) शरीर, बदन, देह, तन, गात्र, जिस्म, (The body)। [३] शरीरावयव, अवयव (Anorgan, a limb or member of the body) उज्व–अ०। रा० नि० व० १८।

शरीर के छोटे छोटे भागों को अंग कहते है, जैसे—हाथ, पांव, जंघा, हृदय, अन्त्र, चक्षु–इत्यादि। कुछ अङ्ग पोले होते है और कुछ थैली के समान, जैसे–मूत्राशय, शुक्राशय, आमाशय और गर्भाशय। कुछ अङ्ग नली के सदृश होते है, जैसे–रक्त की नलियां, शुक्रकी नलियां, पाचक रसों की नलियां, और मूत्र की नलियां। (३) उपसर्जनभूत। हे० च० नानार्थ पुं० (४) Earth भूमि। (५) भाग, हिस्सा (A part or portion)। (६) A constituentpart

अङ्गकं–सं० क्लो० १ (Bady) शरीर २—अगर (Aloe wood)। ३– A limb शरीरावयव।

अङ्गकर–ते० धारकरेला, किरार। (Momordica dioica, *Roxb*) फा० इं०, २ भा०।

अङ्गगौरवम्–सं० क्लो० (Heaviness of the body) शरीर का भारीपन, शरीरका गुरुत्व। गाभार–बं०। बा० नि० १३ अ०।

अङ्गग्रहः–सं० पु०, गठिया, अङ्गवेदना। बा० नि० १६ अ०। शरीर का दर्द, शारीरिक व्यथा, शरीर की पीड़ा, अकड़वाई, बात रोग, देह का जकड़ना

यह रोग जिससे देह में पीड़ा हो Spasm, (Bodily pain)

अङ्गग्लानिः–सं० क्ली० देह की जड़ता, देह जाड्य, शरीर का जड़ हो जाना । (Langour)। वा० चि० २२ अ० ।

अङ्गघातः–सं० पु० देह में चोट का लगना; अङ्गाघात (Bobily pain) वै० श० ।

अङ्गचयः–सं० पु० पेरीनियम् (Perineum)। इं० गुदा और वृषण का मध्य भाग, मूलाधार । इजान–अ० । वै० नि० ।

अङ्गचेष्टा–सं० स्त्री० अङ्गचालन, शरीर को गतिदेना । वा० नि० १५ अ० ।

अङ्गजम्–सं० क्ली० १—ब्लड (Blood) रक्त–२ फीसिज (fœces) मल । मे० जत्रिकं ।

अङ्गजः–सं० पु०, १–हेयर (Hair) केश । २–डिजीज (A disease) रोग । ३–बाल, रोम, मांस । (Muscle) मसल धातु । ४–इन्टोक्सिकेशन Intoxication इं० मद । वि० ५–देखो अङ्ग । ६–(A son, Love cupid, intoxicating passion काम।

अङ्गज्वरः–सं० पु० क्षयरोग, राजयक्ष्मा, यक्ष्मा, (Consumption)

अङ्गज्वरम्–सं० क्ली० शरीर के भागों में लगा हुआ ज्वर। अथ० सू० ३०, ८ का० ५ । शरीर के अंगों में संताप उत्पन्न करने वाला । अथ० सू० ८, ५, का० ६ ।

अङ्गणं–सं० क्ली० आंगन, सहन, चौक, अजिर, घर के बीच का खुला हुआ भाग । अँगना, (ई) अङ्गन भूमि (१ yard) वै० श० ।

अङ्गतिः–सं० पु०, (Air, wind-) वायु । २–(Fire) अग्नि (श०) ३–ब्रह्मा ४–विष्णु ।

अङ्गतापः–सं० पु०, शरीरोष्मा शरीरोष्णता देह की गरमी (Body heat) वै० श० ।

अङ्गदं–सं० क्ली० बाजूबंद (Anarmlet)

अङ्गदरम्–सं० क्ली० (Bilious pain) पित्त, जन्य पीड़ा, पैत्तिक व्यथा । वै० श० ।

अङ्गदान–फा० अङ्गदान, हिंगु वृक्ष, हींग का पेड़ (Ferula Foetida'R'a jel) हिं० पु० संज्ञा [सं०] तनुदान, तनसमर्पण । सुरति ।रति नोट—यह स्त्री के लिये प्रयुक्त होता है । क्रि० प्र० रति करना । सम्भोग करना ।

अङ्गदाहः—सं० पु० (Burning of the body) गात्रदाह देहकी ज्वाला । वै० श० ।

अङ्गद्वार–हिं० पु० संज्ञा [सं०] शरीर के मुख नासिका आदि दस छेद ।

अङ्गधारी–हिं० पु० संज्ञा [सं०] शरीरी । प्राणी । शरीर धारण करने वाला ।

अङ्गन–हिं० पु० सज्ञा [सं० अङ्गण] A yard (१) आंगन । सहन । चौक पं० । (२) चखा, कुसा उ० प० सू० । मेमो० अगेनोस्मा केर्योफ्. इल्लेटा aganosma Caryophyllata ले० दखुरी अंगु फ्रैक्सिनस फ्लोरिबण्डा Fraxinus Floribunda *wall*वनरिस अफ० सूम, सुन्न, शुन पं० । कञ्जु तुहसी नैपा० ।

जैतूनवर्ग

(*N.* O. Olcaceæ)

उत्पतिस्थान—शीतोष्ण और अधः आल्पीय हिमालय काश्मीर से भूटान पर्य्यन्त तथा खसिया पर्वत ।

उपयोग— इसके प्रकाण्ड (तने) को काटने से इस में से एक भांति का ठोस मधुर, स्राव (शीरखिस्त) प्राप्त होता है । जो समस्त शीरखिस्त (*Offic*inal manna) का प्रतिनिधी है ।

इसे इसके मधुर एवं किञ्चित कोष्ठ मृदुकारी प्रभाव हेतु उपयोग में लाते हैं (बैट०)

अङ्गना–सं० स्त्री० १–(a woman or female in general a wife) नारि, स्त्री पत्नी- कामनी । मे० नत्रिकं । २–(Prunus mahaleb' *linn*) प्रियंगु भा० । ३–हि० (A yard) आंगन, अङ्गना ।

अङ्गनाप्रियः–सं० पु० १ (Saraca Indica *linn*)अशोक वृक्ष रा० मा० २ द्रुमोत्पल, कङ्केलि कार । औलट कम्बल बम्ब० बं० । Davil's Cotton(Abroma Augutsta *lin*. इं० मे० मे० । प० मु० ।

अङ्गनाप्रिया–सं० स्त्री० प्रियंगु, फूल प्रियंगु,

प्रियंगु, नारिवलभा, (prunus mahal eb *linn*) भा० पू० १ भा० क० व०

अङ्गनेर–राज पु० खाजा–हिं० ।

अङ्गन्यास–हिं० संज्ञा पु० मंत्रोंद्वारा अङ्गों का स्पर्श ।

अङ्गपाक–हिं० पु० } पित्त जन्य रोग पके फोड़े
अङ्गपाकता–सं० स्त्री० } के सदृश शरीर में वेदना होना । वै० श० ।

अङ्गपालिः–सं० स्त्री० (Anembrace) गोद आलिंगन ।

अङ्गपीड़ा–सं० स्त्री० (Bodily pain वायु जन्य रोग शरीर व्यथा, गात्र वेदना ।

अङ्गपूजितः–सं० पु० अश्वतर, अश्वखरज. खच्चर, घोड़ा । डंकी (Donkey mule) इं० मद० व० १२ ।

अङ्गप्रसारणम्–सं० क्ली० कायविस्तार, शरीर का प्रस्तार, शिथिलता । वा० नि० ४ अ० ।

अङ्गबली–सं० स्त्री० त्रिवलि जठरावयव विशेष ।

अङ्गबार–फा० अङ्गवार(Polygonum bisto rta *linn*)

अङ्गबीं–फा० शहद मधु । honey (Mel) स० फा० इं० ।

अङ्गबीने खुश्क- फा० खुश्कअङ्गबीं एक प्रकार का शहद है । जो अत्यंत शुष्क होता है । गन्ध तीव्र होती है ।

अङ्गभङ्ग–सं० पु० (Yawning) १-अगड़ाई, हड़फूटन, शरीर भङ्ग वा० उ० २ अ० सू० ४ अ० २-- (perineum) गुदा और वृषण अथवा भग के मध्य का भाग मूलाधार । ३-(Adise ase) रोग । ४ (Nervous disease) वायुरोग । ५-- (Palsy or paralysis of limbs) पक्षाघात ।

अङ्गभूः–सं० पु० (A son)पुत्र । (२)Cupid काम ।

अङ्गभेदः–सं० पुं० (Nervous pain) वायुरोग वायुजन्य गात्रभङ्ग, शरीर में होने वाली पीड़ा । अथ० सू० ३० अ० ८-४०५ ।

अङ्गमर्दः–सं० पु० (१) गात्रवेदना, देह की पीड़ा, अंगड़ाई वा० सू० ४ अ० ।

अङ्गमर्दकः–सं० पु० (Rheumatism) अंग मर्दित, अंगमर्ष हड्डियों का फूटना, हड्डियों में दर्द हड़फूटन रोग । (२) संवाहक अंगमलने वाला हाथ पैर दवानेवाला नौकर । सेवक(One wh osham poos,his masters body)

अङ्गमर्दनम्–सं० क्ली० गात्रफोटन, शरीर का फुटना भेदना व्यथा ।

अङ्गमर्द प्रशमनम्–सं० क्ली० वेदना शमन(शामक) वेदना हर, व्यथा (व्यथ रुक भेद) प्रशमन हिं० मुखद्दिरूलअलम (ए० व०) मुखद्दिरातेअलम (ब० व०) मुसकिनुल् अलम् (ए० ब०) मुसकिन्नाते अलम् (बहु० व०) मुफक्किदातुल इह सास अ० । दाफादर्द फा० । एनोडाइन्स (Anodynes) एनलगे (जे) सिक्स (Ana Igesics) इ० ।

उक्त प्रकार की औषधियां नाड़ी अथवा वात केन्द्रस्थ उत्तेजना एवं क्षोभ को दबाकर या धीमा करके वेदना शामक प्रभाव करती है । ऐसी औषधियां सम्वेदना को मस्तिष्क तक पहुँचने से रोकती है अस्तु वे संज्ञा को या तो उसके उद्भव स्थान पर अथवा वाहन पथ में या उस स्थान पर जहां कि वे मस्तिष्क पर प्रभाव डालती हैं । अव रुद्ध कर देती हैं ।

उक्त प्रकार की औषधियों की सूची निम्न है— यथा— (१)डाक्टरी औषधियां—ओपिअम (अफीम) मार्फीन (अफीमसत्व) बेलाडोना धत्तुरीन या धत्तूरीन (ऐट्रोपीन) ब्यूटिल क्लोरल कोनाइन (शौकरान) हायोसायमस (अजवाइन खुरासानी) स्ट्रेमोनियम (धतूरा) केन्नाबिस इण्डिका (भंग) जेल्सीमियम (पीली चमेली की जड़) क्लोरल जेनरल (अनस्थेटिक) (व्यापक अवसन्नता जनक औषधियां) फीनेजून, फेनेसीटीन, एसेटऐनिलाइड (ऐण्टिफेब्रीन) रोगन कायापुटी, लौंग तेल, इकोनाइटीन (विष सत्व विषीन) क्लोरोफार्म) सम्मोहनी) कोनाइन (सत्व शौकरान) केफीन (कहाला सत्व) कैम्फर (कर्पूर) स्पिरिटस ईथरिस (Spiritus Et heris)

(२) आयुर्वेदीय औषधियां

शालपर्णी, बृहती, कण्टकारी, एरण्डमूल, काकोली रक्तचन्दन, उसीर (खश) बड़ीइलायची, मुलेठी, चाकुल ।

(३) आयुर्वेदीय व यूनानी औषधियां

अगरु, दारुहरिद्रा (रसौत) रक्तसेमल, पुन्नाग वृक्ष (सुल्तान चम्पा सुर्पन) एरक (नागर मोथा) साल (साखू) पोहकरमूल (कुष्ट) अशोक, नीलोफर (नीलोत्पल) कमल, पदम, धाराकदम्ब (हल्दी) कायफल यष्ठिमधु (मुलेठी) मेथी कैथ, हल्दी. देवदार, तून, बड़ी इलायची इ० मे० मे० । शेष यूनानी औषधियों तथा परिभाषाओं के लिये देखो—मुखदिर और मुसक्किन ।

नोट—उपयुक्त औषधियों में से अफीम का प्रभाव प्रत्यक्ष एवं स्पष्ट होता है । यह समवेदना को उपरोल्लिखित सम्पूर्ण स्थलों पर अवरुद्ध कर व्यथा को नष्ट कर देती है । बेलाडोना संज्ञावहा वातनाड़ियों के क्षोभ को दबाकर उक्त प्रभाव करता है तथा जेलसीमियम क्लोरल हाईड्रेट और ब्युट्रल क्लोरल प्रभृति मस्तिष्क सम्बन्धी केन्द्रों की उत्तेजना को कम करके ऐसा प्रभाव उत्पन्न करते हैं ।

अङ्गमर्द प्रशमन औषधों का उपयोग—जब वेदनाधिक्य के कारण व्यग्रता एव अनिद्रा जन्य कष्ट हो तो ऐसी दशा में डाइरेक्ट जेनरल एनोडाइन्स (प्रत्यक्ष व्यापक वेदना शामक) को उपयोग मे लाना चाहिये ।

अस्तु, अफीम अथवा उसके सत्व मार्फीन (Morphine) का येन-केन-प्रकारेण प्रयोग अत्यन्त लाभदायी सिद्ध होता है । विशेषतः मार्फीन के त्वकस्थ सूचि प्रवेश (अन्तः क्षेप) करने से वेदना तत्काल शान्त हो जाती है ।

युरिनस कालिक अर्थात् वृक्क वेदना में बेलाडोना को बड़ी मात्रा में उपयोग में लाने से बहुत लाभ होता है । किन्तु जब यह अभीष्ट हो कि वेदना तत्क्षण शान्त हो जाय तो उक्त अवस्था में (General anœsthetic) व्यापक अवसादक औषध उपयोग में लाना चाहिए । यथा प्रसवकाल व यकृत वेदना तथा वृक्क वेदना प्रभृति में फेनेजन जेलसीमियम और ब्यूटिल क्लोरल प्रभृति वात वेदनाओं में अधिक लाभदायी होते हैं ।

अङ्गमेजयत्वम्-सं० क्ली० अङ्गकम्पन, देहकम्प, शरीर का काँपना, (Shivering)

अङ्गरक्तः-सं० पु० (Monkey face tree) कम्पिल्ल, कमीला । कमला गुँदि-बं० । अम० ।

अङ्गरक्षिणी-सं० स्त्री० अङ्गत्राण । साँजोया-बं० । वै० श० ।

अङ्गरा-यु० Hibiscus Rosasinensis, *Linn.* (Flowers of-) गुड़हल, जपा-पुष्प-सं० । उड़उल-हिं० ।

अङ्गरागः-सं० पु० अङ्गलेपन द्रव्य, यथा—कुंकुमादि अनुलेपन द्रव्य, लेप, गात्र रञ्जन द्रव्य । (Scented cosmetic application of perfumed unguents to the body, Fragrant unguent, Liniment) मालिश-अ० ।

(२) (Act. of anointing) अनुलेपन करना ।

अङ्गराए-हिन्दी-अ०, बा० फ़ा० अडउल, गुड़हल, जवा, जासून-हिं० । जासून, गुड़ेल, कुड़ल-द० । जपा-पुष्पम्-सं० । Hibiscus rosa-sinensis, *Linn.* (Flowers of)-सं० फा० इं० ।

अङ्गरापान-हिं० ताम्बूल भेद (A sort of Betel)

अङ्गरुहम्-सं० क्ली० (Hair) रोम, बाल, लोम ।

अङ्गरुहा-सं० स्त्री० (Hair) लोम, केश ।

अङ्गलाघवम्-सं० क्ली० (Lightness of the body) काय लघुत्व, शरीर का हल्कापन । वा० उ० १६ अ० ।

अङ्गलीह-हिं० पु० सुम्बुलखताई, बालछड़ भेद (Garden angelica) इं० हैं० गा० ।

अङ्गलेपः-सं० पु० चन्दनादि द्रव्य, अनुलेपन, (Liniment)

अङ्गलेपन–सं० पु० (१) उबटन (A paste for scouring the skin) (२) The hair wash फा० इं० २ भा०।

अङ्गलोड्यः–सं० पु० (१) आर्द्रक, आदी–हिं०। आदी–बं०। Ginger (Amomum Zinziber) (२) Marsilea Dentata–चिञ्चोटक तृण।

अङ्गवः–सं० पु० (Dryfruit) शुष्क फल, सूखा हुआ फल। श० च०।

अङ्गवल्लोत्था–सं० स्त्री० (White Ajowan fruit) श्वेत यमानी, सुफेदअजवाइन। जोयान बं०। वै० श०।

अङ्गविकल–हिं० वि० (Maimed, paralysed) विकलांग (Fainting) मूर्च्छा।

अङ्गबिकारः–सं० पु० (A bodily defect) शारीरिक दोष।

अङ्गविकृतिः–सं० पु० (१) अपस्मार रोग, मृगी वा मिरगी रोग, मूर्च्छारोग (apoplexy, an apoplectic fit) रा० नि० व० २० (२) Change of bodily appearance, collapse गात्र-संकोच।

अङ्गविभ्रशः–सं० पु० काय शैथिल्यरूप-वायुज रोग। भा०।

अङ्गविक्षेपः–सं० पु० अङ्गहार, अङ्गचालन, अङ्ग (हाथ पांव) फेंकना, (Spasm)। वा० उ० २ अ० (२) Gestiulation हाव भाव।

अङ्गशूलम्–सं० क्ली० (Bodily pain) गात्रतोद, गात्रशूल, शारीरिक बेदना। वै० श०।

अङ्गशोथः–सं० पु० (Swelling of the body) कायशोथ, शरीर को सूजन।

अङ्गशोषणम्–सं० क्ली० अंग की शुष्कता (रूक्षता), शरीर का सूखना। वा० उ० ३ अ०।

अङ्गशोषः–सं० पु० वायुज रोग बिशेष, गात्रक्षीणता, देह का सूखना, क्षय (Consumption)

अङ्गस–सं० पु० पक्षी (A bird)

अङ्गसङ्गम–सं० क्ली० रतिसंयोग, सभोग, मैथुन, स्त्रीप्रसंग (Coition, Copulation)

अङ्गसदनम्–सं० क्ली० (Depression) शरीरावसाद, अंग की शिथिलता, अवसन्नता, जड़ता, वा० नि० १२ अ०।

अङ्गसादः–सं० पु० (Depression) अवसाद, अवसन्नता। हारा०।

अङ्गसुन्दरः–सं० पु० (१) (Cassia Tora) चक्रमर्द, बह्वृच वृक्ष। चकवड़–हिं०। दादमर्दन बं०। अम० (२) (Aloe wood) अगर।

अङ्गसुप्तिः–सं० क्ली० (anæsthesia) स्पर्शाज्ञता शरीर का स्वाप, अंग का सुन्न अथवा जड़ हो जाना, अवसन्नता। सात्रेर असाड़ता–बं०।

अङ्गसेनः–सं० पु० अगस्तिद्रुम, अगस्तिया। बाकस गाछ–बं०। रत्ना० (agti grandiflora, *Desv*)

अङ्गसंहतिः–सं० स्त्री० (१) Compactness symmetry शरीर का गठाव।
(२) Body शरीर (३) Strength of the body शरीर बल।

अङ्गस्तूराछाल–हिं०
अङ्गस्तूरा त्वक्–हिं०
अङ्गस्तूरा वार्क–इ० } कस्पेरीई कार्टेक्स (Cuspariæ cortex)–ले०।

कश्र अङ्गस्तूरा, पोस्त अंगस्तूरा–ति०। कस्पेरिया वार्क (Cusparia bark)–इं०।

रयूटेसीई अर्थात् नागरंग वर्ग
(N. O. Rutaceæ)
(आफ़ीशल—official)

उत्पत्ति स्थान—दक्षिणी अमेरिका के उष्ण प्रदेश।

लक्षण—उपर्युक्त औषधि कस्पेरिया फेब्रिफ्यूजा (Cusparia Febrifuga) वृक्ष की सूखी हुई छाल है जो औषधि तुल्य प्रयोग में आती है ये सपाट, वक्राकार या एक दूसरे पर लिपटे हुए टुकड़े हैं जो ६ इञ्च या इससे अधिक लम्बे, १ इञ्च चौड़े $\frac{१}{१२}$ इञ्च मोटे होते हैं। त्वचा का बाह्यतल चिह्नयुक्त एवं पीताभायुक्त धूसरवर्ण का होता है, यह ऊपरी त्वचा सरलता पूर्वक भिन्न की

जासक्तीहै और इसके अन्तःतल से श्याम धूसरवर्ण की रेजिन (राल) जैसी तह निकल आती है। भीतरी तल सूक्ष्म धूसर वर्ण का होता हैं। यह छाल बहुधा परतदार और कठोर होती है और इसको जहां से तोड़ें वहीं से टूट जाती है। टूटा हुआ तल रालयुक्त दृष्टिगोचर होता है। गन्ध—अप्रिय। स्वाद—तिक्त या उष्ण।

परीक्षा—कुचिला वृक्ष की छाल स्वरूप आकृति में इस उपर्युक्त छाल के समान होती है इस कारण इसमें प्रायः उसका मिश्रण किया जाता है। इसकी एक साधारण परीक्षा यह है कि कुचिला वृक्ष की छाल के भीतरी तलपर शोराम्ल (Nitric acid) के लगाने से उसमें ब्रूसीन होने के कारण रक्तवर्ण उत्पन्न हो जाता है। जिससे इसकी ठीक परीक्षा हो सकती है

रसायनिक सङ्गठन—इसमें ये निम्न चार अल्कलाइड्स [क्षारीय सत्व] होते है। यथा—(१) एक तिक्त सत्व कस्पेरीन, (२) गैलेतीन (३) गैलेपीडीन, (४) कसपेरीडीन और एक सुगन्धित तेल।

संयोगविरुद्ध (असम्मिलन) खनिजाम्ल और धातु लवण।

प्रभाव—सुगन्धित एवं तिक्त बलप्रद और ज्वरघ्न। अधिक परिमाण में उपयोग में लाने से यह आमाशय एवं आंतों में प्रदाह उत्पन्न करता है। यूरुप में इसको कैलम्बा के सदृश क्षुधावर्द्धन हेतु अजीर्ण तथा निर्बलता में बरतते है। परन्तु इसमें ज्वरघ्न प्रभाव होने के कारण अमेरिका में इसे विषम ज्वर और प्रवाहिका में उपयोग में लाते हैं।

ऑफिशल योग—(१) इन्फ्यूजम् कस्पेरी [Infusum Cuspariæ] इन्फ्यूजन ऑफ कस्पेरिया [Infusion of Cusparia]—डॉ० ना०। अंगस्तूरा फांट—हिं०। खिसांदहे अंगस्तूरा तो० ना०।

निर्माण विधि—कस्पेरिया वार्क का चूर्ण एक औंस, खौलता हुआ परिस्रुत जल एक पाईट, १५ मिनट तक भिगोकर छान लें।

मात्रा—१ से २ फ्लुइड औंस (२८,४ ५६,८ क्यु० से)

(२) लाइकार कस्पेरी कन्सेण्ट्रेटस (Liquor CusparіæConcentratus)—लै० कन्सेण्ट्रेटेड सोल्युशन ऑफ कस्पेरिया Concentrated Solution of Cuspar इं०। अंगस्तूरा घन द्रव—हिं० साइल अंगस्त गलीजु—ति० ना०।

निर्माण-विधि—कस्पेरिया वार्क का ४० का चूर्ण १० औंस, अल्कोहॉल (२००/०) फ्लुइड औंस या आवश्यकतानुसार। कस्पे को ५ फ्लुइड औंस अल्कोहाल से तर का पर्कोलेटर में जमा दे और तीन दिन तक रख दें। पुनः अवशिष्ट अल्कुहाल को बराबर भागों में विभाजित कर के १२-१२ के अन्तर से एक एक भाग अल्कुहाल डाल इसे पर्कोलेट कर लें, यहा तक कि एक द्रव प्राप्त हो जाए।

मात्रा—आधे से १ फ्लुइड ड्राम (१,८ ३,३६ क्यु० से०)

परीक्षित-प्रयोग

(१) टिङ्कचूरा कस्पेरीई आधा फ्लू० ड्रा टिङ्कचूरा कैप्सिसाई ५ बूंद (मिनिम), सो याई वाहकार्व १५ ग्रेन, इन्फ्लूजम रोहाई औंस पर्यन्त ऐसी एक एक मात्रा औषध दि में ३ वार दें। गुण—एटानिक डिस्पेप्सि (आमाशयिक निर्बलता जन्य अजीर्ण में ल जनक है। (२) टिङ्कचुरा आरन्शियाई मिनिम, स्पिरिट एमोनिया ऐरोमैटिक १५ मिनि सिरुप सजिञ्जि वेरिंस ३० मिनिम, इन्फ्यु कस्पेरीई १ औंस पर्यन्त, ऐसी १-१ मा औषधि दिन में तीन वार दें। ब (टानिक) है।

अङ्गहर्षः—सं० पु० (Horripilation) रोमां रोमहर्ष, रोंगटे खड़े होना। वा० नि० ३ अ०।

अङ्गहारः—स० पुं० अंगचालन, अंग विक्षे (spasm)। (२) gesticulatio adance नृत्य।

अंगहीनः-सं० वि० (Having some defective limb) अंगरहित, विकलांग, जैसे काणादि (काना प्रभृति) । (२) crippled लुंग ।

अङ्गाकर-ते० धारकरेला, किरार, (Momordica Dioica *Roxb*) फा० इं० २ भा० ।

अङ्गारः-सं० पुं० १-(Firebrand or embers) अंगार, अंगरा, निर्धूम अग्निपिंड विना धुऐ की आग) आग का दहकता हुआ कोयला, जलता हुआ टुकड़ा यथा—"वृंहतः काष्ठसम्भूतोऽङ्गारः ।" वा० सू० ६ अ० अरुणः । २-अंगारपूर्ण पात्र, वह बर्तन जिसमें अंगार रखा हुआ हो । ३ (Yellow amaranth) कुरुण्टक वृक्ष । झांटी विशेष पीली कटसरैया, पीतवर्ण, अम्लान वृक्ष । रत्ना० । ४- (Musk melon)-इं० है० गा० । ५-चिनगारी । ६- CharCoal, (whether heated or not)

अङ्गारं-सं० क्ली० (Red colour) रक्तवर्ण ।

अङ्गारकः-सं० पु० १-कोयला । (A spark, emburs) अंगारा, अंगार । २-कुरुण्टक, कटसरैया का पेड़, पियावांसा-हिं० । झांटी जाति-बं० । (Yellow or white amaranth) मे० कचतुष्क । ३-(wedelia calen Dulacea, *Less*) भृङ्गराज, भांगरा, भँगरा, भंगरैया । रा० नि० बा० ४ । भा० पू० १ भा० गु० व० । ४-(Barleriaprionitis, *Linn*) कटसरैया (पात) । ५-कोयला (Charcoal)

अङ्गारक तैलम्-, अङ्गारतैल- } स० क्ली० कुठारा (बोबई तुलसी) ४०० तो० भर लेकर १०२४ तोले पानी में पकाए, जब चतुर्थांश शेष रहे तो इसमें ६४ तो० तिल तैल डाल कर पकाए, तथा इसमें कुठारा, अपामार्ग, प्रोस्टिका नामक मछली, पंचादिव मत्स्य इनका कल्क बनाकर उक्त तेल में डाल कर सिद्ध करें तो यह तेल घावों को शीघ्र शोधन कर अंकुर लाता हैं और इसकी मालिश से नाड़ियां सबल होती है । चक० द० व्रण० शो० चि० ।

(२) मरोड़फली, लाख, हल्दी, मजीठ, इन्द्रायन बड़ी कटेली, सेंधानमक, कूठ, रास्ना, जटमांसी, शतावर, इनका कल्क बनाए, २५६ तो० आरनाल नामक कांजी और ६४ तो० तिल तैल मिला तैल सिद्ध करें । इसकी मालिश से हर प्रकार के ज्वर नष्ट होते हैं ।

चक्र० द० }
भैष० र० }
वं० से० सं० } ज्वर० चि०

नोटः—द्राक्षामुर्व्वा हरिद्रे द्वे मंजिष्ठा चेन्द्रवारुणी, बृहती सैधवं कुष्टं रास्नामांसी शतावरी यो० त० । अर्थात् इसमें दाख और दोनों हल्दी ली है ।

अङ्गारक मणिः-सं० पु० प्रवाल, मूंगा-हिं० । कोरल (Coral) इ० । र० नि० व० १३ ।

अङ्गारकर्कटी-सं० स्त्री० (Balls or thick cakes of bread baked on coal) अंगार की रोटी अर्थात् लिट्टी, वाटी-हिं० । रोटिका सं० । रुटी-बं० ।

प्रस्तुतविधि—गेहूं अथवा चना प्रभृति के आटे को जल के साथ मर्दन कर कठोर कर लें । पश्चात उसमें से थोड़ा २ लेकर चपटी २ अथवा गोल वटी के आकार की वाटी बनाऐ, पुनः उन्हें धूम्र रहित अग्नि पर शनैः शनैः पकाऐ । बस यही अंगार कर्कटी है । गुण—यह बृंहणी, शुक्रल, लघु, दीपनी, कफ कारक, बलकारक तथा पीनस श्वास और कास को जीतने वाली है । बैद्य० नि० भा० ।

अङ्गारकित-हिं० वि० (Charred, roasted) भ्रष्ट, भुना हुआ, अंगार पर पकाया हुआ ।

अङ्गार की वटी-हिं० }
अङ्गारकी लिट्टी-हिं० }

देखो—अङ्गार ककेटी ।

अङ्गारहू-उ० सांसर्गिक कृमि । देखो अंथ्राक्स (Anthrax)-इं० ।

अङ्गारह् का टका-उ० सांसर्गिक कृमिघ्न सीरम। देखो-एण्टि अन्थ्राक्स सीरम स्कबांस (Anti Anthrax Serum Scla vos)इं०।

अंगार कृष्टका-सं० स्त्री० हितावली। हिंगोट, हिं०। (Ingua)

अंगार धानिका-सं० स्त्री० (A portable fire-pan, Brazier) अंगेठी, अंगार धारण पात्र, अंगार (आग) रखने का बरतन, बोरसी-हिं०। साँजाल बं०। आतिश-दान-फा०।

अङ्गार धूपः-सं० पु० (Incense, aromatic vapour) अंगार पर किसी औषधि को डालने से जो धूम्र निकलता है उसे अङ्गारधूप कहते हैं। वा० चि० ८ अ०।

अङ्गार परिपाचितम्-सं० क्लो० (१) शूलादि पक्व-मांस, लौह शलाका आदि पर पकाया हुआ मांस (Roasted food) (२) त्रि० अंगार पक्व, अंगरा पर पकाया हुआ।

अङ्गारपर्णी-सं० स्त्री०, (Clerodendron Serratum, *Spreng*) भार्गी, भारङ्गी। वामण हाटी-बं०। र० सा० सं०।

अङ्गार (क) पुष्पः-सं० पु० Balanites Roxburghii, *Planch.* जीवपुत्रद्रुम। जियापोता-हिं०। इंगुदी-बं०। (Ingua) श० र० हिंगुआ, गोंदी। इंगुदी वृक्ष जिसके फल अंगार के समान लाल होते हैं, हिंगोट का पेड़।

अङ्गारपात्री-सं० स्त्री० (A portable fire pan) बोरसी।

अङ्गारपूरिका-सं० स्त्री० (Bread) रोटक, रोटी। रूटी-बं०।

अङ्गारमञ्जरी-
अङ्गारमञ्जी- } सं० स्त्री० करञ्ज विशेष (a species of Bouduc or Bonducella) श० र०। महा करञ्ज-हिं०। डहर करञ्ज-ब०। रा० नि० व० ६ अ०।

अङ्गारमणिः-सं० पु० (Coral) प्रवाल, मूंगा।

अङ्गारवर्णी-सं० स्त्री० (Clerodendron Seratum, *Spreng*) भार्गी, भारंगी। वामण हाटी-बं०।

अङ्गारबल्लरी-सं० स्त्री० करञ्ज विशेष (Ovieda verticulata) भाषा में नाटा करञ्ज कहते हैं।

अङ्गारबल्ली-सं० स्त्री० (१) (Cæsalpinia Bonducella, *Roxb*) महाकरंज, बड़ा करंज। (२) (Clerodendron serratum, *Spreng*) भार्गी। वा० सू० १२ अ० सुरसादि। (३) (Ocimum album, *Linn*) सुरसादि तुलसी। भा० पू० १ भा०। (४) (abrus precatorius, *Linn*) गुञ्जा लता, घुंघची की बेल। चिरमिटी की बेल हिं०। बं०। भा० पू० अने० व०। (५) करंज। करञ्जवल्ली। (६) रक्त गुञ्जा (लाल घुंघची)। भ० पू० १ भा० गु० ब०।

अङ्गारवृक्षः-सं० पु० (१) (Balanites Roxburghii, *Planch*) इंगुदीवृक्ष। हिंगोट हिं०। भा० पू० १ भा० वटा० रत्ना०। (२) पूतिकरंज।

अङ्गारवेणुः-सं० पु० (Bambusaarundinacea, *Retz* The red variety) रक्तवर्ण वंश विशेष, लालबाँस।

अङ्गारशकटी-सं० स्त्री० (A portable fire pan) चुल्लि, चुल्ली, चूल्हा (ल्ही)-हिं०। उनुन-बं०।

अङ्गारा-सं० स्त्री० (Ingua) हितावली। इंगुदी वृक्ष, हिंगोट। प० मु०। जियापुता-बं०।

अङ्गारिका-सं० स्त्री० (१) इक्षुकाण्ड, ईख का तना (The stalk of the sugar-cane) (२) (Butea frondose, *Roxb*) किंशुककोरक, पलाश की कली मे० कचतुष्क (३) The bud of the tree किंशुक कली। (४) चूल्हा (A portable fire-pan)

अङ्गारिणी-सं० स्त्री० (A small fire-pan) छोटी कड़ाही, अंगारि। (२) अंगेठी, बोरसी

(२) अंगेठी, बोरसी, आतिशदान (३)(A-creeper in general) लता।

अङ्गारित–सं० त्रि० (Roasted'half-burnt) भूना, अधभुना, । आ० सं० इं० डि०।

अङ्गारितम्–सं० क्ली० (Theearly bud of B uteafrondosa) पलाश (किंशुक) की आरंभकालिक कलियाँ किंशुक-कोरक पलाश कलिकोद्गम् हारा० ।

अङ्गारिता–सं० स्त्री० १--(A creeper in general) लतामात्र, अंगारधानी, चुल्लि, चूल्हा मे० तचतुष्क। ३--० (A bud in general) कली।

अङ्गारी–सं० स्त्री०(A portablefire pan) छोटी कड़ाही। आ० सं० इं० डि०।

अङ्गारीय–सं० त्रि० कोयला बनाने में प्रयुक्त होना (To be used in preparing coal)

अङ्गार्कित–सं० (Fried) भूना हुआ। आ० स० इं० डि०।

अङ्गिका–सं० क्ली० कञ्चुक सर्प का काँचुल (The skin of a serpent slough)

अङ्गिरः–सं० पु० (Partridge) तित्तर पक्षी तीतर ।

अङ्गिरसी:–सं० त्रि० (१) अंग या शरीर में रस उत्पन्न करने वाली औषधि। (२) शरीर शास्त्र वेत्ता। (अथ० सू० ७, १७ का० ८)।

अङ्गुएण्टम्–ले० (ए० व०) अंग्वेण्टा Unguenta (व० व०) आँइण्टमेण्ट Olntment (ए० व०) आँइण्टमेण्टस Ointments(व० व०) इं० । मलहम अनुलेप--हि० । मर्हम (ए० व०) मराहम (ब० ब०) अ०, फा०।

अंग्वेण्टम् अर्थात् मलहम एक या अनेक औषधों को किसी प्रकार की वसा या तैल प्रभृति में मिलाकर निर्मित किया हुँआ एक अर्ध तरल या मृदु यौगिक है, जो केवल बाह्यरूप से उपयोग में लाया जाता है। मलहम प्रस्तुती करण में निम्नांकित बसामय तेलीय पदार्थ बेसिस (मुख्य अवयव) रूप से अकेले अथवा एक दो मिलाकर उपयोग में आते हैं । यथा—(१) बिशुद्ध भेड़ की वसा (२) शूकर वसा (३) शूकर की लोवान युक्त वसा (४) ह्वेलमत्स्य के शिर की वसा (५) मेष उण्णंवसा (६) मोम (७) जैतून तैल (८) बादाम तेल और(९) पैराफीन। सूचना उष्ण देशों में जहां ऊष्माधिक्य के कारण मलहम अत्यंत मृदु हो जाती है। वहां पर साधारण बेसिस के स्थान में इण्डयोर्ड लार्ड (दबाकर कठोर की हुई) शूकर वसा बिशुद्ध भेड़ की वसा और श्वेत वा पीत मोम उपयोग में ला सकते हैं।

अङ्गुएण्टम् आयोडाई–ले० आयोडीनानुलेपन, नैलिक प्रलेप (Iodine ointment) संयोगी अवयव आयोडीन (नैलिका) पोंटाशियम (पांशु जम्) आयोड इड (नैलिद) मधुरीन, (ग्लीसरीन) लार्ड (शूकरवसा) । शक्ति ४ ०/०। देखो—आयोडम। ब्रि० फा०।

अङ्गुएण्टम् आयोडो-पैराफीनी–ले० नैलपैराफीन प्रलेप। देखो—आयोडोफार्म।

अङ्गुएण्टम् आयोडोफार्मीई–ले० आयोडोफार्म प्रलेप (Iodoformointment संयोगी अवयव–आयोडोफार्म तथा शूकर वसा (लार्ड या पैराफीन आँइण्मेण्ट) शक्ति १० ०/० देखो आयोडोफार्म बी० पी०।

अङ्गुएण्टम् आयोडोफॉर्माईकम एट्रोपीना–ले० धतूरीन व आयोडाफार्म प्रलेप। देखो आयोडोफार्म।

अङ्गुएण्टम् आँलियो रेजाइनी केप्सिसाई–ले० रक्त मिर्च प्रलेप।

अङ्गुएण्टम् इक्थिआँल–ले० इक्थिआँल प्रलेप।

अङ्गुएण्टम् इकोनाइटीनी–ले० विषीन वा बत्सनाभीनानु लेपन (aconite ointment) संयोगी अवयव एकोनाइटीन (बत्सनाभीन), शूकर वसा (लार्ड) आँलीइक एसिड। शक्ति–२ ०/० देखो-बत्सनाभ। बी० पी०।

अङ्गुएण्टम्एकीरोजी–ले० गुलाब जलानुलेपन (Rose water ointment) संयोगी अवयव गुलाब जल (रोज वाटर) ह्वाइट बीज-वैक्स (श्वेत मधूच्छिष्ट), बोरैक्स (टङ्कण),

आमण्ड ऑइल (बादाम तेल) तथा गुलाब तेल (ऑइल ऑफरोज) शक्ति-२००/० (१६ में ७ रोज वाटर) देखो-एक्वा रोजी ।

अङ्गुएण्टम् एमोलिएन्स-ले० अङ्गुवेण्टम् एक्वा रोजी (गुलाबार्क प्रलेप । देखो गुलाब वा एक्वा रोजी ।

अङ्गुएण्टम् एलिमाई-ले० एलोमाई प्रलेप । देखो-अरण्य बातादि (न० ३)

अङ्गुएण्टम् एसिडाई कार्बोलिसाई-ले० कार्बोलिकाम्ल प्रलेप । (Carbolic ointment) संयोगी अवयव-फेनोल, ह्वाइट पैराफीन ऑइण्टमेण्ट । शक्ति ३०/० । देखो-एसिडम् कार्बोलिकम् ।

अङ्गुएण्टम् एसिडाई वोरिसाई-ले०, टङ्कणाम्ल प्रलेप (Boric ointment) । संयोगी अवयव वोरिक एसिड (टंकणाम्ल), ह्वाइट पैराफोन आइण्टमेण्ट । शक्ति-१० ०$\frac{1}{2}$० । देखो एसिडम् बोरिकम् : वी० पी० ।

अङ्गुएण्टम् एसिडाई सैलिसिलिसाई-ले० सैलिसिलिकाम्ल प्रलेप (Salicylic Acid ointment) संयोगी अवयव-सैलिसिलिक एसिड, ह्वाइट पैराफीन आइण्टमेण्ट । शक्ति २०/० । देखो-एसिडम् सैलिसिलिकम् । वी० पी० ।

अङ्गुएण्टम् ऐट्रोपीनी-ले० धतूरीन प्रलेप (Atropine ointment) संयोगी अवयव-ऐट्रोपीन (धतूरीन) ऑलीइक एसिड, लार्ड (सूकर वसा) । शक्ति-२०/० । देखो विलाडोना । वी० पी० ।

अङ्गुएण्टम् एट्रोपीनी कम एसिडो वोरिको-ले० धत्तूरीन व टंकणाम्ल प्रलेप । संयोगी अवयव-ऐट्रोपीन, वोरिक एसिड तथा साफ्ट पैराफीन । देखो-विलाडोना ।

अङ्गुएण्टम् एट्रोपीनोंकम कोकीनी-ले० धत्तूरीन व कोकीन प्रलेप । संयोगी अवयव-ऐट्रोपीन, कोकीन तथा साफ्टपैराफीन देखो-विलाडोना ।

अङ्गुएण्टम् ऐट्रोपीनो डाइल्यूटम्-ले० जल मिश्रित (हलका किया हुआ) धत्तूरीन प्रलेप संयोगी अवयव-ऐट्रोपीन तथा पीत मृदु पेराफीन देखो-बिलाडोना ।

अङ्गुएण्टम् ऐण्टिमोनियाई टार्टरेटी-ले० टार्टरेटीय अञ्जन प्रलेप, वामकनमक प्रलेप (ointment of tartarated antimony) । संयोगी अवयव-टार्टरेटेड ऐण्टिमनी सिम्पूल आइण्टमेण्ट । देखो-अञ्जन ।

अङ्गुएण्टम् ओपियाई-ले० अहिफेनानुलेपन, अफीम प्रलेप (opium Ointment) । संयोगी अवयव-एक्सट्रैक्ट आंफ ओपिअम् (अहिफेन सत्व) स्पर्मेसेटाई आंइण्टमेण्ट । देखो-पोस्तान्तर्गत अफीम ।

अङ्गुएण्टम् कॉक्युलाई-ले० काकमारी प्रलेप (Kakmari ointment) । संयोगी अवयव काकमारी बीज, प्रोपेयर्ड लार्ड । देखो काकमारी ।

अङ्गुएण्टम् केओलीनी-ले० केओलीन (चीन मृत्तिका) प्रलेप । सयोगी अवयव-वैज़ेलीन, हार्ड पैराफ़ीन, केओलीन । देखो-केओलीनम् ।

अङ्गुएण्टम् कैन्थेरीडाइनाई-ले० तेलनी मक्खी प्रलेप (Cantheridies ointment) संयोगी अवयव-कैन्थेरीडीन, बेञ्जोएटेड लार्ड, क्लोरोफार्म । शक्ति-०.०३३०/० वी० पी० । देखो-कैन्थेरिस ।

अङ्गुएण्टम् कैप्सिसाई-ले० कुमिरच (रक्तमिरचा) प्रलेप । (Capsicum ointment, chilly paint) । संयोगी अवयव-कैप्सिकम् फ्रूट (रक्त मिरच), हार्ड एण्ड साफ्ट पैराफीन (कठिन व मृदु पैराफीन) और लार्ड (शूकर वसा) । शक्ति ३१ ०/० । देखो-रक्त मिरच वी० पी० ।

अङ्गुएण्टम् कोकीनी-ले० कोकीन प्रलेप (cocain ointment) संयोगी अवयव-कोकीन ऑलीइक एसिड तथा लार्ड । शक्ति-५ ०/० । देखो-कोका । वी० पी० ।

अङ्गुएण्टम् कोनियाई–ले० शूकरान लेप। (conium ointment) संयोगी अवयव—जूस आफ कोनाइम् (शूकरान स्वरस) हाइड्स वूल फैट। शक्ति १ में २। देखो—कोनाइम्। वी० पी०।

अङ्गुएण्टम् क्युप्राई आलिएटिस–ले० ताम्र आलिएट प्रलेप। संयोगी अवयव—कापर आलि, एट साफ्ट पैराफीन। देखो—ताम्र।

अङ्गुएण्टम् क्राइसारो बाईनीई–ले० क्राईसारोबीन प्रलेप (Chrysarobin ointment) संयोगी अवयव—क्राइसारोबीन और साफ्ट पैराफीन (या वेञ्जोएटेड लार्ड)। शक्ति—४ 0/0। देखो—अरारोबा। बी० पी०।

अङ्गुएण्टम् क्रियोजूटाई–ले० क्रियोजूट प्रलेप (Creosote ointment) संयोगी अवयव—क्रियोजूट हार्ड, एण्ड साफ्ट (ह्वाइट) पैराफीन। शक्ति—१० 0|0। देखो—क्रियोजूट। वी० पी०।

अङ्गुएण्टम् गाइनोकार्डीई–ले० चालमूगरा प्रलेप। (Ointmetn of chaulmogra oil) संयोगी अवयव—चालमूगरा तैल, हार्ड और साफ्ट पैराफीन। देखो—चालमूगरा। शक्ति—१० 0|0। वी० पी०।

अङ्गुएण्टम् गाली–ले० माई (माजू) प्रलेप (gall ointment) संयोगी अवयव—गाल्ज़ (माई) तथा वेञ्जोएटेड लार्ड। शक्ति—२० 0|0। देखो—माई। वी० पी०।

अङ्गुएण्टम् गाली कम् ओपियो–ले० माई व अहिफेन प्रलेप (Gall and opuim ointment) संयोगी अवयव—गाल आइण्टमेण्ट तथा ओपिअम् (अफीम)। शक्ति—७॥ 0|0। देखो—माई। वी० पी०।

अङ्गुएण्टम् चालमूग्री–ले० अङ्गुएण्टम् गाइनोकार्डीई। चालमुगरा प्रलेप। वी० पी०।

अङ्गुएण्टम् ग्लीसराइनाई प्लम्बाई सबएसिटेटिस–ले० मधुर सीसक सबएसीटेट प्रलेप (glycerin of lead Subacetate ointment) संयोगी अवयव—सबएसीटेट, ह्वाइट पैराफीन आइण्टमेण्ट। देखो—सीसक।

अङ्गुएण्टम् जिन्साई–ले० यशद प्रलेप (Zino ointment)। संयोगी अवयव—जिंक आक्साइड (यशद भस्म) वेञ्जोएटेड लार्ड। शक्ति—१५ 0|0। देखो—यशदम्। वी० पी०

अङ्गुएण्टम् जिन्साई आलिएटिस–ले० यशद ऑलिएट प्रलेप (zinc oleate ointment) सयोगी अवयव जिङ्क आलिएट जिंक सल्फेट, हार्डसोप, जल, ह्वाइट, साफ्ट, पैराफीन शक्ति १० ०|०। बी० पी० देखो—यशद।

अङ्गुएण्टम् जिन्साई कम एसिडो सैलिसिलिको–ले० यशद व सैलिसिलिकाम्ल प्रलेप। संयोगी अवयव सैलिसलिक एसिड, जिंक आयटमेण्ट, सांफ्ट पैराफीन। देखो—यशदम्।

अङ्गुएण्टम् डायाकिलाई–ले० हेब्रा प्रलेप (Hebrasointment) संयोगी अवयव लेड-प्लास्टर, आयल आफ लेवेण्डर। देखो—शीसकम

अङ्गुएण्टम् थायमोल–ले० थाइमोल (बनपुदीना) प्रलेप। संयोगी अवयव बैजैलीन व थायमोल। देखो—थाइमोल, पुदीना।

अङ्गुएण्टम् नेफ्थोलिस–ले० नैफथोल (कर्पूरकोल टार) प्रलेप (Kaposis ointment) संयोगी अवयव—बीटा नेफ्थोल तथा लार्ड। देखो नेफ्थोल।

अङ्गुएण्टम् नैफ्थोलाई कम्पोजिटस–ले० मिश्र नैफ्थोल प्रलेप। संयोगी अवयव नैफ्थोल लार्ड प्रोम, सोप प्रीपेयर्ड, चोक। देखो—नैफ्थोल

अङ्गु एण्टम् पाइलोकार्पीनी–ले० पाइलोकार्पीनी प्रलेप संयोगी अवयव पाइलोकार्पीनी बैजेलीनलेनो देखो—पाइलोकार्पीनी नाइट्रास

अङ्गुएण्टम् पाइसिस लिक्विडी–ले० चुड़ैल तेल प्रलेप (Tar ointment) संयोगी अवयव टार, लार्ड पीत, मधुच्छिष्ट (एलोबीज बैक्स) शक्ति ७० ०|० वी० पी० देखो—पिक्स लिक्विडा (या देवदारु)

अङ्गुएटम् पाइसिस मोली–ले० मृदुकान्तरान

(चुदैल तेल प्रलेप । संयोगी अवयव टार बेञ्ज-वैक्स आमण्ड आयल (वातादि तेल) देखो—पिक्स लिक्विडा (या देवदारु)

अङ्गुएण्टम् पैराफाइनी–ले० पैराफीनी प्रलेप (Paraffin ointment) संयोगी अवयव हार्ड और सांफ्ट पैराफीन श्वेत या श्वेत व पीत मधुच्छिष्ट (ह्वायट या ह्वाइट एण्ड एलो वीज वैक्स) शक्ति ६७ ०।० । बी० पी० । देखो—पैराफीनम् ।

अङ्गुएण्टम् पोटेंसियाई आयोडाइडाइ–ले०पांशु नैलिद प्रलेप (Potassium Iodide ointment)संयोगी अवयव पोटाशियम आयोडाइड पोटाशियम कार्बोनेट जल और वैञ्जोयटेड लार्ड । शक्ति १० ०।० बी० पी० देखो—पोटेशियम ।

अङ्गुएण्टम् पोटेशी सल्फ्युरेटी–ले० पांशु गन्धेत् प्रलेप । संयोगी अवयव व सल्फ्यूरेटेड पोटास, हार्ड पैराफीन, साफ्ट पैराफीन । देखो—गंधकम (या पोटासा सल्फ्युरेटा)

अङ्गुएण्टम् प्लम्बाई आयोडाइडाई– ले० सीस-नैलिद प्रलेप (Iodidof leadointment) संयोगी अवयव लेड आयोडायड (सीस नैलिद) और वैञ्जोएटेड लार्ड शक्ति १० ०।० बी० पी० । देखो—सीसकम

अङ्गुएण्टम् प्लम्बाई कार्बोनेटिस–ले० सीस-कज्जलेत् प्रलेप (Lead-carbonate ointment) संयोगी अवयव–लेड कार्बोनेट (सीसाभस्म) और पैराफीन । शक्ति १० ०।० देखो—सीसकम् ।

अङ्गुएण्टम् प्लम्बाई सबएसीटैटिस–ले० सीससव एसीटेट प्रलेप । (Lead subacetate ointment) संयोगी अवयव स्ट्रांग लाइकर (तीक्ष्ण) बूल फैट (ऊर्णवसा) हार्ड या साफ्ट पैराफीन । शक्ति १२ ०।० बी० पी० देखो सीसकम

अङ्गुएण्टम् बिज्म्युथाई–ले० स्वर्णमाक्षिक प्रलेप (Bismuth ointment) । संयोगी अवयव विस्मथ सबनाइट्रेट लार्ड । देखो—बिज्मथम् ।

अङ्गुएण्टम् विज्म्युथाई आक्साइडम्–ले० स्वर्ण माक्षिक भस्म प्रलेप । संयोगी अवयव विज्मथ आक्ससायड, आलीइक एसिड श्वेत मधूच्छिष्ट मोम (सांफ्ट) पैराफीन देखो—विज्म्यथम ।

अङ्गुएण्टम् विलाडौना–ले० बिलाडोना प्रलेप (Belladouna ointment) संयोगी अवयव लिक्विडएक्सट्रैक्ट आफविलाडोना (बिलाडोना तरल सत्व वाष्पीभूत) वेञ्जोएटेड लार्ड और बूल फैट (ऊर्णवसा) शक्ति ०·६० ०।० अलकलायड (क्षारीय सत्व)बी० पी० । देखो—बिलाडौना ।

अङ्गुएण्टम् वेञ्जोईनी–ले० लोबानानुलेपन कुन्दुरु प्रलेप संयोगी अवयव वेञ्जोईन एडेप्स (शूकवसा) देखो—कुन्दुरु या वेञ्जोईनम् ।

अङ्गुएण्टम् बोरेसिस–ले० टङ्कण प्रलेप । (Boric ointment) संयोगी अवयव बोरेक्स (टङ्कण) स्पर्मेसीटी आइण्टमेण्ट (मत्स्य वसा प्रलेप) देखो—टङ्कण ।

अङ्गुएण्टम् माइरोबेलेनाई–ले० हरीत की प्रलेप (Ointment ofmyrobalan)संयोगी अवयव हरीतकी चूर्ण तथा वेञ्जोयेटेड लार्ड देखो—हरीतकी । बी० पी० ।

अङ्गुएण्टम् माइरोबेलेनाई कम ओपिओ–ले० हरीतकी व अहिफेन प्रलेप (ointment of myrobalan withopium) संयोगी अवयव हरीतकी प्रलेप तथा अहिफेन । देखो—हरीतकी । बी० पी० ।

अङ्गुएण्टम् माइलेब्रिडिस स्निग्धमाक्षी प्रलेप (Mylabrids ointment) देखो—कैन्थरिस ।

अङ्गुएण्टम् मेटेलोरम–ले० खनिज प्रलेप संयोगी अवयव मक्युरिक नाइट्रेट आइण्टमेण्ट । लेड एसीटेड आइण्टमेण्ट और जिङ्क आइण्टमेण्ट देखो •—पारद ।

अङ्गुएण्टम् मेन्थोलाई–ले० मेन्थोलप्रलेप (Mentholointment)संयोगी अवयव मेन्थोल २॥ बालसम आफ पेरू ५ तथा लेनोलिनाई १० पी० वी० एम० । देखो—मेन्थोल ।

अङ्गुएन्टम् युकेलिप्टाई–ले० युकेलिपटस प्रलेप (Eucalyptus ointment) संयोगी अवयव आइज आफ युकेलिपटस हार्ड पैराफीन साफ्ट (ह्वाइट) पैराफीन । शक्ति १० ०/० । देखो—युकेलिप्टाइ । वी० पी० ।

अङ्गुएन्टम् रेजाइनी–ले० राल प्रलेप (Resin ointment) संयोगी अवयव—रेजिन (राल) एलो बीजवैक्स (पीत मधूच्छिष्ट) अलिव आइल (जैतून तेल) तथा लार्ड वसा ।

शक्ति—२६०/० ($३\frac{३}{४}$ में १ । वी० पी० ।

देखो—राल ।

अङ्गुएन्टम्लेनी को–ले० संयोगी अवयव—लार्ड बूल फैट तथा पैराफीन आइण्टमेण्ट । शक्ति—४० ०/० । बी० पी० ।

अङ्गुएन्टम् वेरेट्राइनी–ले० अमरीका छिक्किका सत्व प्रलेप (Varetrni ointment) संयोगी अवयव वेरेट्रीन आलीइक एसिड तथा लार्ड । शक्ति—४५ में १ । देखो—बेरेट्रीना ।

अङ्गुएण्टम् सल्फ्युरिस–ले० गन्धकानुलेपन (Sulphur ointment) संयोगी अवयव सबलाइम्ड सल्फर (ऊर्ध्वपातित गन्धक) तथा बेञ्जोएटेड लार्ड । शक्ति—१० 0/0 वी० पी० । देखो—गन्धकम् ।

अङ्गुएण्टम् सल्फ्युरिस आयोडाइडाई–ले० गंधक नैलिद प्रलेप (Sulphur iodide ointment) संयोगी अवयव—सल्फर आयोडाइड, ग्लेसरीन तथा बेञ्जोएटेड लार्ड । शक्ति—२५ में १ । देखो—गन्धकम् ।

अङ्गुएण्टम् सल्फ्युरिस एट रिसोर्सीना–ले० गंधक व रिसोर्सीन प्रलेप । संयोगी अवयव—प्रेसिपिटेटेड सल्फर रिसार्सीन, साफ्ट पैराफीन पीत । वी० पी० सी० । देखो—गंधकम् ।

अङ्गुएण्टम् सल्फ्युरिस कम्पोंजिटम्–ले० मिश्र गंधक प्रलेप, बिल्किन्सन प्रलेप (wilkinson's ointment) संयोगी अवयव—साफ्ट सोप, सब्लाइम्ड सल्फर (ऊर्ध्वपातित गंधक) । प्रेसिपिटेटेड चाक, टार, लार्ड (शूकर वसा) बी० पी० सी० देखो—गंधकम् ।

अङ्गुएण्टम् सल्फ्युरिस कम ह्राइड्रार्जिरो–ले० गंधक व पारद प्रलेप । संयोगी अवयव—सब्लाइम्ड सल्फर (ऊर्ध्वपातित गंधक) मर्क्युरिक–सल्फाइड (पारद गन्धिद), एमोनिएटेड मर्करी आलिव आइल (जैतून तैल,) लार्ड (शूकरवसा) देखो—गंधकम् ।

अङ्गुएण्टम् सल्फ्युरिस हाइपोक्लोराइटिस–ले० संयोगी अवयव—सब्लाइम्ड सल्फर (ऊर्ध्वपातित गंधक), एसेन्शल आइल आफ आमण्डज (स्थिर वातादि तैल), प्रिपेयर्ड लार्ड, सल्फर क्लोराइड (गंधक हरिद) । देखो—गंधकम् ।

अङ्गुएण्टम् सिटेसिआई–ले० ह्वेलमस्त्य शिरो वसा प्रलेप (Spermacætæ ointment) संयोगी अवयव—स्पर्मेसेटाई, ह्वाइट बीज वैक्स (श्वेत मधूच्छिष्ट) लिक्विड पेराफीन । शक्ति—२० 0/0 । देखो—वी० पी० ।

अङ्गुएण्टम् सैलोल कम कोकीन–ले० सैलोल कोकीन प्रलेप । संयोगी अवयव—सैलोल कोकीन हाइड्रोक्लोराइड पेट्रोलियम् साइट्रेट । देखो—सैलोल ।

अङ्गुएण्टम् स्टैफिसैग्रिई–ले० अरण्यद्राक्षा वा स्टैफिसैग्री प्रलेप (Staphisagrie ointment) संयोगी अवयव—स्टेवी सैक्रो सीड्स यलो बीजवेक्स (पीत मधूच्छिष्ट) तथा बेञ्जोएटेड लार्ड । शक्ति—२० 0/0 । वी० पी० । देखो स्टैफीसैग्री ।

अङ्गुएण्टम् हाइड्रार्जिराई–ले० पारद प्रलेप (Mercury ointment) संयोगी अवयव— मर्क्युरी (पारद) बेञ्जोएटेड लार्ड । प्रिपेयर्ड स्वेट (शुद्ध मेष वसा) । शक्ति—३० 0/0 । वी० पी० देखो—पारद ।

अङ्गुएण्टम् हाइड्रार्जिराइ आयोडाईडाई रुब्राई–ले० संयोगी अवयव—रेड आयोडाइड । बेञ्जोएटेड लार्ड । शक्ति—४ 0/0 । बी० पी० । देखो पारद ।

अङ्गुएण्टम् हाइड्रार्जिराई आंक्साईडाई फ्लेवाई–ले० पीत पारद भस्म प्रलेप (yellow mercuric oxide ointment) संयोगी अवयव एलो मर्क्युरिक आक्साइड (पीत पारदभस्म) साफ्ट पैराफीन (एलो) शक्ति—२ 0/0 । वी० पी० । देखो—पारद ।

अंगुएण्टम् हाइड्रार्जिराई आक्साईडाई रुब्राई–ले० रक्त पारद प्रलेप। (redmercuric oxide ointment) संयोगी अवयव—रेड मर्क्युरिक आक्साइड (रक्त पारद भस्म) पैराफीन आइण्टमेण्ट (पीत) शक्ति—१० 0|0 वी० पी० । देखो—पारद ।

अंगुएण्टम् हाइड्रार्जिराई एमोनिएटी–ले० पारदैमोनो प्रलेप (ammoniated mercury ointment) सयोगी अवयव—एमोनिएटेड मर्करी, वेक्षोएटेड लार्ड । शक्ति—५ 0|0 । वी० पी० । देखो—पारद ।

अंगुएण्टम् हाइड्रार्जिराई आलिएटी–ले० मर्क्युरिक आलिएट आइण्टमेण्ट (mercuric oleate ointment) संयोगी अवयव—मर्क्युरिक आलिएट, वेक्षोएटेड लार्ड । शक्ति—२५ 0|0 । बी० पी० । देखो—पारद ।

अंगुएण्टम् हाइड्रार्जिराई कम्पोजिटम्–ले० मिश्र पारद प्रलेप (Compound mercury ointment) संयोगी अवयव—मर्करी आइण्टमेण्ट, आलिव्ह आइल (जैतून तैल) एलो बीजवैक्स (पीत मधूच्छिष्ट) कर्पूर । शक्ति—१२ 0|0 । वी० पी० । देखो—पारद ।

अंगुएण्टम् हाइड्रार्जिराई डाइल्युटम्–ले० जल मिश्रित पारद प्रलेप (Ung. hydrg mitiusor blue unctio) संयोगी अवयव—मर्करी आइण्टमेण्ट (पारद प्रलेप) तथा लार्ड (शूकर वसा) पारद देखो—पारद ।

अङ्गुएण्टम् हाइड्रार्जिराई नाइट्रेटिस–ले० नागरंग प्रलेप पारद नाइट्रेट प्रलेप, (mercuric nitrate ointment, citrion ointment) संयोगी अवयव—मर्करी (पारद) नाइट्रिक एसिड (शोरकाम्ल), लार्ड (शू वसा) तथा आलिव आइल (जैतून तैल शक्ति—१३ 0|0 । पारद । वी० पी० । देखो पारद ।

अङ्गुएण्टम् हाइड्रार्जिराई नाइट्रेटिस डाइल्युटम् ले० जल मिश्रित शोरक पारद प्रलेप । (Dilu ted mercuric nitrate ointmen संयोगी अवयव—मर्क्युरिक नाइट्रेट आइण्टमे साफ्ट पैराफीन (पीत) शक्ति—२० 0|0 उक्त प्रलेप । वी० पी० । देखो—पारद ।

अङ्गुएण्टम् हाइड्रार्जिराई मीटिअस–ले० अं एण्टम् हाइड्रार्जिराइ डाल्युटम् देखो—पारद ।

अङ्गुएण्टम् हाइड्रार्जिराई सवक्लोराइडाई–ले० ह कपूर प्रलेप (Mercurous chlorid ointment, calomel ointment संयोगी अवयव—मर्क्युरस क्लोराइड तथा वेड एटेड लार्ड । शक्ति—२० 0|0 । वी० पी० देखो—पारद ।

अङ्गुएन्टम् हेमेमेलिडिस–ले० हेमेनेलिस प्रले (Hamamelis ointment) संयो अवयव—लिक्विड एक्सट्रैक्ट आफ हेमा मेलेलि साफ्ट पैराफीन तथा वूलफैट (ऊर्णवसा) शक्ति—१० 0|0 । वी० पी० । देखो—हैमेमेलिडिस (हैमेमेलिस वर्जिएना)

अङ्ग–उ० प० सू० २–Fraxinusfloribunda *Wall* अङ्गन । मे० मो० ।

अङ्गः–सं० पु० १–(A hand) हाथ आ० सं० इं० डि० ।

अङ्गणः–सं० पु० (Solanum melongena *Linn*) वार्ताकी, वैंगन, भांटा । वेगुन–बं० । श० र० ।

अङ्गुरिः–सं० स्त्री० (Afinger) अंगुली, हाथ पैर की अंगुली । अ० टी० । देखो—अंगुलि ।

अंगुरीयः–सं० पुं० अंगुरीयक । आङ्गु-टि बं० अंगूठी ।

अंगुरु–सि० (Carbon) लकड़ीका कोयला (Charcoal) इं० मे० मे० । सं० फा० इं०

अङ्गुलः-सं० पु० (१) Afinger अंगुली। (२) Thumb अंगूठा। (३) A finger's brendth (nalso), equal to 8 barleycorns। लम्बाई की एक नाप। देखो—अंगुल।

अंगुलः-
अंगुलिः- } सं० पु० स्त्री० १-(finger) अंगुली अंगुरी, करपाद शाखा। अंगुस्तफा। पांचों अंगुलियों के नाम क्रमशः इस प्रकार है। यथा-अंगुष्ठ, प्रदेशिनी, मध्यमा, अनामिका, कनिष्ठा, रा० नि० व० १८। आङ्गुल-वं० (२) गजकर्णिका वृक्ष। (३) हातिशुंड़े वं० करिशुंडाग्र भाग, हाथी सुण्डी Heliotropium Indicum, *Linn*) हे० च० (४) वृद्धांगुष्ठ, अंगूठा (Great-tae) (५) लम्बाई का एक नाप। अङ्गुल The measure

अंगुलिकंटकः-सं० पु० नख A finger nail (Helix ashera)

अंगुलिका-सं० स्त्री० दे० अंगुली।

अङ्गुलितोरणं-सं० क्ली० ललाट में चन्दन प्रभृति द्वारा अङ्कित अर्द्ध चन्द्राकार चिह्न विशेष, तिलक विशेष। देखो अंङ्गुलितोरण।

अङ्गुलित्रं-सं० हाथ की पांच अंगुलियां जिनके नाम ये है:—अंगुष्ठ, तर्जनी, मध्यमा, अनामिका कनिष्ठा।

अङ्गुलित्राणकम्-सं० क्ली० अङ्गुलित्राणक यन्त्र, उक्त नाम का यन्त्र विशेष। अङ्गुस्ताना अङ्गुष्टाना। बा० सू० २५ अ० (A finger-protector)

अङ्गुलिनलकम्-सं० क्ली० (Phalange) अङ्गुल्यस्थि।

अंङ्गुलिपञ्चकम्-सं० क्ली० (The five fingers) कराङ्गुलि पञ्चक-हाथ की पांच उंगलियां जिनके नाम ये हैं—अङ्गुष्टिका, तर्जनी मध्यमा, अनामिका और कनिष्ठिका,।

अङ्गुलिपर्व्व-सं० क्ली० अङ्गुल्यस्थि, पर्व, पोर्व, पोर, अंगुलिग्रन्थि। अंगुलियों की पोर, उंगली की गांठ वा जोड़ (Phalanx, phalanxes) फैलेञ्जी Phalange (ए० व०) फैलेञ्जी Phalanges (व० व०) इं०।

वृजुमह् (ए० व०), बराजिम् (व० व०)। सुलामा (ए० व०)। सलामय्यात् (व० व०) अ०।

अङ्गुष्ट में दो और शेष अङ्गुलियों में तीन तीन पर्व अर्थात् अस्थियां होती है। पहिली पङ्क्ति के पोर्वे सबसे लम्बे और मोटे होते हैं। दूसरी पंङ्क्ति के इनसे छोटे और तीसरी पङ्क्ति के सबसे छोटे होते हैं। अङ्गुष्ट में केवल दो ही पंङ्क्तियां है, अङ्गुष्टका दूसरा पोर्वा शेष अङ्गुलियों के तीसरे पोर्वे के सदृश होता है। तीसरे पोर्वे पर नख लगे रहते हैं, इन तीसरे पोर्वों की शक्ल घोड़े के खुर जैसी होती है। अङ्गुष्ठ के पोर्वे शेष अङ्गुलियों के पोर्वे से मोटे होते है।

अङ्गुलिसारणी पेशी-हिं० स्त्री० (Extensor of the finger उंगलियां फैलाने वाली पेशी।

अङ्गुलिफला-सं० स्त्री० A sort of pulse (Paseolus radiatus) श्वेतनिष्पावः, सफेद सेम। श्वेत शिम्-वं०। रा० नि०।

अङ्गुलिमानम्-सं० क्ली० अङ्गुलि से योजन पर्यन्तमान यथा। ८ यव=१ अङ्गुल। २४ अङ्गुल=१ हाथ। ४ हाथ=१ दंड। २००० दंड =१ क्रोश। ४ क्रोश=१ योजन।

अङ्गुलिमुखम्-सं० क्ली० (The Forepart of thefinger) अंगुल्यग्रभाग, अंगुली का आगे का हिस्सा।

अङ्गुलिमूलसन्धि-सं० स्त्री० करभास्थि तथा अंगुल्यस्थि को मिलाने वाली सन्धि। मेटाकार्पो फेलेञ्जिअल् या मेटाटार्सो फेलेञ्जिअल् जाइण्ट (Metacarpo phalangeal or metatarso phalangeal joints)-इं०। नफ्सिलुल असूलुल् असाबीअ-अ०।

[illegible]मो[illegible]नम्- } सं० क्ली० ([illegible]pping or
अंगु[illegible] स्फोटनम्- }
[illegible]cki[illegible]g of the fi[illegible]ger. अगुलि तोड़ने [illegible]द अगुलि मर्दनज शब्द अर्थात् जो शब्द अं[illegible] मर्दन द्वारा उत्पन्न हो। त्रिका०।

अंगुलियाथूहर-हिं० पु० छीमियां सेंहुड़।

अंगु[illegible]पीपर-हिं० पु० बड़ी पं[illegible]।

अंगुलिस[illegible]ोचनी पेशियाँ-हिं० [illegible]गली सिकोड़ने वाले पट्ठे।

अंगुलिसंकोचनीपेशी-हिं० [illegible]xor of finger) उंगलियों [illegible]ने वाली पेशी।

अंगुलिसन्धि-सं० स्त्री० अगुलियों की सन्धि या जोड़। डिजिटल आर्टीक्युलेशन (Digital articulation)-इं०। मफ्सिलुल् असाबीअ-अ०।

अंगुलिसम्भूतः-सं० पु० nail (Helix ashera) नख। रा० नि० ब० १८।

अगुलिसंज्ञा-सं० स्त्री० यवागू (Yabagu) अंगुलि-सन्धि।

अङ्गुलित्राणक यन्त्रम्-सं० क्ली० यह हाथी दांत या काष्ठ का बनाया जाता है। इसका प्रमाण ४ अंगुल होता है, यह अर्श यन्त्र के सदृश गौ के स्तन के आकार वाला छिद्रों से युक्त होता है, इससे मुख सहज में खुल जाता है। इस यन्त्र से अंगुलियों की रक्षा दाँतों से होती जाती है। इसी से इसका नाम अंगुली त्राण यन्त्र है। वा० सू० अ०। देखो—अंगुलित्राणकम्।

अङ्गुली-सं० स्त्री० (१) गजकर्णिका। (gajakarnika) मे० लत्रिकं (२) (A finger) अंगुली, अंगुलियों की अस्थियाँ। अंगुली माप।

अङ्गुलीय-सं० अंगूठी।

अङ्गुलिप्रसारिणी-सं० स्त्री० अंगुली को फैलानेवाली पेशी। अजलह वासितुल असावीअ-अ०। एक्सटेन्सर डिजिटोरम् कम्म्युनिस (Extensor Digitorum communis)-इं०।

अङ्गुलीया धमनी-सं० स्त्री० शिरियान असाबियह, अंगुली की पोषण करनेवाली धमनी (Digit[illegible] artery)

अङ्गुल्याकुञ्चनी-सं० स्त्री० अंगुली को सिकोड़नेवा[illegible] पेशी। अजलह तअरीजुल् असाबीअ-अ० फ्लेक्सर डिजिटोरम् सब्लिमिस (Flex[illegible] Digitorum sublimis)-इं०।

अङ्गुल्युदर्या-सं० स्त्री० अंगुल्याधरापेशी। प्रापर बूलर डिजिटल (Proper vol[illegible] digital)-इं०।

अङ्गुल्यस्थि-सं० क्ली० } अंगुलीपर्व, पोर्व।
अङ्गुल्यस्थीनि-सं० स्त्री० }
(Pha[illegible]nx) (व० व०)

अङ्गुल्यास्थि[illegible]-हिं० स्त्री० व० व० पंहुचेकी हड्डियां (Bone fingers)

अङ्गुश्त-फा० १-(A finger) अङ्गुली अङ्गु[illegible] हिं०। २-एक माप जो लगभग ६ इंच के वरा[illegible] होता है ३-(The thum'b) अङ्गुष्ठ

अङ्गुश्त-कोचक-फा० कनिष्ठा-सं०। कानीअङ्गु[illegible] छोटी अंगुली, छंगुली, हिं०। लिटल फिं[illegible] (Littlefinger) इं०।

अङ्गुश्त गन्दह्-फा० (Assafœtida) [illegible] हिं० अंगोजह फा०। हिल्तीत-अ०। हिंगुः, [illegible]ठम्-सं०। हिंग बं०। मो० श०।

अङ्गुश्त दराज़-फा० बृहदांगुलि, मध्यमा, बीच[illegible] अगुली, लम्बी अंगुली हिं०। मिडिल फिं[illegible] (Middle finger) इं०

अङ्गुश्त दुश्नाम-अंगुश्त शहादत-फा०। तर्ज[illegible] प्रदेशिनी, अंगूठे के पास वाली अगुली। [illegible] फिंगर (Fore finger) इं०।

अङ्गुश्त नर-फा० (The thumb) अङ्गुष्ठ

अङ्गुश्त वर्ग-शा० छुछून्दर, चूहाभेद। (Mol[illegible] musk rat (Sorex cærulescens

अङ्गुश्त बुजुर्ग-अङ्गुश्त नर फा०, अङ्गुष्ठः, अँ[illegible] हिं०। थम्ब (Thumb) इं०।

अङ्गुश्त मियानह-फा० (Middile finger) मध्यमा, बिचली अंगुली।

अङ्गुश्तरी–हिं० सं० स्त्री० [भा०] अंगूठी। मुदरी मुद्रिका।

अङ्गुश्त हल्क़ह्–फा० अनामिका, अंगूठी की अंगुली छंगुली (कनिष्ठा) के पास की अंगुली हिं० रिंग फिंगर (Ring finger) इं०।

अङ्गुषः–सं० पु० (१) नकुल, नेवला। Mongoose (Vivera mungo)। २–(An arrow) बाण, तीर।

अङ्गुष्ठः–सं० पु० वृद्धांगुलि, अंगुष्ठांगुलि अँगूठा (The thumb or great toe)। अंगुश्त बुज़ुर्ग़–फा० पांचों अङ्गुलियों में से सबसे मोटी अंगुली। बुड़ो आङ्गुल बं०। रा० नि० व० १८। ३।

अङ्गुष्ठ अन्तर नायनी–सं० स्त्री० अंगुष्ठ को अन्दर की ओर लेआने वाली पेशी। एड्डक्टर पॉलिसिस (Adductor pollicis) इं० अजलह् मुकर्रिबह् अस् बइयह अ०।

अङ्गुष्ठ पृष्ठ्या–सं० स्त्री० एरिऐरिया डार्सेलिस हैल्युसिस(Ariaria darsalis Hallucis) इं०

अङ्गुष्ठ प्रताननी पेशी–हिं० स्त्री० (Extensor Primi enter nodii Pollicis) अंगूठा खींचने वाली पेशी।

अङ्गुष्ठ प्रत्याकुञ्चनी–सं० क्ली० अंगुष्ठ सम्मुख कारिणी पेशी। ओपोनिअस पांलिसिस (Opponeus Pollicis)–इं०

अङ्गुष्ठ प्रसारणी दीर्घा–सं० स्त्री० अंगुष्ठ कोफैंलाने वाली दीर्घ पेशी। एक्सटेन्सर पांलिसिसलांगस (Extensor Pollicis longus)–इं० अजलह वासितह असाविअयह कबीरह-अ०।

अङ्गुष्ठ प्रसारणी ह्रस्वा–सं० स्त्री० अंगुष्ठ को फैलाने वाली ह्रस्वा (छोटी) पेशी। एक्सटेन्सर पांलिसिस ब्रेविस (Extensor pollicis brevis)इं० अजलह वांसितह असवइयह् सगीरह अ०

अङ्गुष्ठ बहिर्नायनी–सं० स्त्री० अंगुष्ठ को बाहर (शरीर की मध्य रेखा से दूर) ले जाने वाली पेशी ऐब्डक्टर पांलिसिस(Abductor pollicis) इं०। अजलह् मुबइ इ्दह असबइयह्–अ०।

अङ्गुष्ठ बहिर्नायनी दीर्घा–सं० स्त्री० अंगुष्ठ को बाहर अर्थात् शरीर की मध्य रेखा से दूर ले जाने वाली दीर्घ पेशी। एब्डक्टर पॉलिसिस लाङ्गस (Abductor policis longus) इं० अजलह् मुबइ इदह असबइ्यह तबील अ०।

अङ्गुष्ठ बहिर्नायनी ह्रस्वा–सं० स्त्री० अंगुष्ठ को बाहर (शरीर की मध्य रेखा से दूर) ले जाने वाली ह्रस्व पेशी। ऐब्डक्टर पॉलिसिस ब्रेविस (Abductor pollicis brevis) इं० अजलह् मुबइ् इदहे अङ्गुश्त सगीरह–अ०।

अङ्गुष्ठ संङ्कोचनी–सं० स्त्री० अंगुष्ठ को सिकोड़ने वाली (मोड़ने या झुकाने वाली) पेशी। फ्लेक्सर पांलिसिस(Flexor pollicis) इं०

अङ्गुष्ठ सङ्कोचनी दीर्घा–सं० स्त्री० अंगुष्ठ को मोड़ने वाली दीर्घ पेशी। फ्लेक्सर पालिसिस लाँङ्गस (Flexor pollicis longus) इं०।

अङ्गुष्ठ सङ्कोचनी लम्बी–हिं० स्त्री० (Flexor-longus pollicis) लम्बी अंगूठा सिकोड़ने वाली पेशी।

अङ्गुष्ठ सङ्कोचनी ह्रस्वा–सं० स्त्री० अंगुष्ठ को मोड़ने वाली ह्रस्व पेशी। फ्लेक्सर पांलिसिस ब्रेविस (Flexor pollicis brevis) –इं०।

अङ्गुष्ठा कर्षणी–सं० स्त्री० अंगुष्ठ अन्तरनायनी। एड्डक्टर पालिसिस (Adductor pollicis)–इं०। अजलह् मुकर्रिबह् अंगुश्त अ०

अङ्गुष्ठाना–सं० स्त्री० (१) अंगुष्ठ। (२) अंगुलित्राणक, अगुश्ताना।

अङ्गुष्ठावर्त्तनी पेशी–हिं० स्त्री० (Abductor pollicis) अंगूठे को लपेटने वाली पेशी।

अङ्गुष्ठयः–सं० पु० (The thumb-nail) अँगूठा का नाखून।

अङ्गू–उ० प० सू० आंगन। (Fraxiuus floribunda *wall.*) मे० मो०।

अङ्गूर–हिं० सं० पु० फा० द०। (१) दाक, दाख,

हिं० । अंगूर डाक--द० संस्कृत पर्याय कृष्णा, चारुफला (ज) रसा (शब्दर०)मृद्वीका, गोस्तनी स्वाद्वी, मधुरसा, (अ) यक्ष्मघ्नी (शब्दमा०) प्रियाला, तापसप्रिया, गुच्छफला, रसाला, अमृत फला स्वादुफला, हारहूरा, द्राक्षा' फलोत्तमा, और सुफला, स० । द्राक्ष्या, अंगुर बं० । इनब अनब अ० । ओजम--तुर० । वायटिस वाइनिफेरा Vitis vinifera *Linn.*(Fruits of grapes)--ले० । ग्रेप वाइन Grape-vine,ग्रेप Grape' वाइन Vine (tree-of) इं० । विग्नी कल्टिवी Vigne Cultivee--फ्रां० । एडलीवीनरीवी Edle weinrebi' रोजीनेन Rosinen जर० । दिराच पजम, कोडि मुन्दिरिप् पज़म दिराच परम (मो० श०) कोडि मड्डि ता० । द्राक्ष पंडु, गोस्तिनिपण्डु द्राक्षा--ते० मुन्निरिङ्डुप् पजम, मुन्तिरि--परम पचमुन्तिरिङडप् पजम् (मो० श०) मल० । द्राक्षी हण्णु (मा० श०)द्राक्षे कना० । द्राक्ष, द्राक्षे मह० । द्राख (मो० श०) द्राक्ष,द्राख, मुद्रक गु० । मुद्र पलम् मुद्रका (मो०श०) सिं० सवींसी सन्या सी या तबीत बर० । द्राक्षा कों० ।

सूर्यताप या कृत्रिम ताप द्वारा शुष्क किये पक्व अंगूर--मुनक्का सूखे अंगूर(काली दाख)हिं० मुनक्का, द० । गोस्तनी, कपिलद्राक्षा, मृद्वीका' कपिलफला' अमृतरसा, दीर्घफला, मधुबल्ली, मधुफला, मधूलि, हरिता, हारहूरा, सुफला, मृद्वी हिमोत्तरा पथिका, हैमवती, शतवीर्या तथा काश्मीरी (-रिका) सं० । मोनक्क, मनेका, सस्का द्राक्ष्या, व० । जवीब, मवेज, मुनक्का--अ० । अंगूरे खुश्क--फा० । यूवी Uvæ, यूवी पैसी Uvæ passæ ले० । रेजिन्स Raisins इं० फां० । रोजिनेन, Rosinen--जर० । Monaqqa मोनक्का हिं० द०, फा०, । उलन्दंदिराचप्-प ज़म्, उलन्दंद्राच-परम्--ता० । दीपद्राक्ष-पण्डु, सन्न--द्राक्ष-पंडु, एंडु, द्राक्ष पंडु-ते० । मुन्तिरिङ्डप्-पज़म्, उणङ्डिय --मुन्तिरिङ्डप्-पज़म् (-परम्)--मल० । दीप द्राक्षि-कना० । वेल्लिचे-मुद्र-पलम्, वेल्लिच-मुद्रका-सिं० । सवीं- सी, सव्यासी या तवी-बि --बर० । बीज रहित लघु द्राक्षा--किशमिश, वेदाना--हिं०, द०, फा० । काकली द्राक्षा, जाम्बुका, फलोत्तमा, लघुद्राक्षा, क्षुद्र द्राक्षा, निर्बीजा, सुवृत्ता, रुचिकारिणी, (रसाधिक्य, लघुद्राक्षा)--सं० । किसमिस--बं०, गु०, म० । किसमिस- द्राक--गु० । सुल्तानस Sultanas रेजिन्स Raisins--इं० । किशमिश, अंगुर द्राख (मा० श०)--फा० । चिकुद्राक्षे-कना० । किसमिस पंडु--ते० ।

नोट--पके सूखे हुये लाल अंगूर मुनक्का और छोटे एवं बीज रहित जो किसमि तथा बड़े और काले बर्ण वाले को गोस्तनं (काला दाख) कहते हैं । काले अंगूरोंकी काली दाखें और भूरे अंगूरों की भूरी दाखें होती हैं चरक में केवल मृद्वीका और सुश्रुत में केवल द्राक्षा के गुण का निर्देश किया गया है । पर्व तथा करोदी नाम से इसके और दो अन्य भे है । भाव० ।

एम्पेलिडीई अर्थात् द्राक्षावर्ग

N. O. Ampelideœ

उत्पत्ति स्थान--यह उत्तरी पश्चिमी हिमाल (या भारतवर्ष) अर्थात् पंजाब, कश्मी काबुल, बलूचिस्तान, अफगानिस्तान, कन्द तथा फारस और यूरूप प्रभृति प्रदेशों में ब लगाया जाता है । हिमालय के पश्चिमी भा में यह आप से आप भी होता है । और दे जगह भी लगाया जाता है । संयुक्त प्रदेश कमाऊ, कनोवर और देहरादून तथा बम्बई के अहमदनगर और औरगाबाद, पूना नासिक आदि स्थानों में भी इसकी उ होती है । बंगाल में पानी अधिक बरसने कारण इसकी बेल वैसी नहीं बढ़ सकती । केवल तिरहुत और दानापुर में थोड़ी ब टट्टियां है ।

इतिहास--द्राक्षा और मृद्वीका नाम से इ का वर्णन सुश्रुत और चरक आदि सभी प्र आयुर्वेदीय ग्रन्थों में मिलता है । यही

यूनानी तथा अरबी ग्रन्थों की है । इसकी कृषि एवं उपयोग का ज्ञान उन्हें बहुत प्राचीन काल से रहा है, और निज ग्रन्थों में अपने अपने दृष्टि कोण के अनुसार इसके उपयोग एवं गुणधर्म के सम्बन्ध में उन्होंने काफी प्रकाश डाला है। जैसा कि आगे के वर्णन से विदित होगा । इसके द्वारा प्रस्तुत हुये मद्य के मादक प्रभाव से वे भली भांति परिचित थे । अस्तु आर्यों का सोम तथा यूनानी पुराणों का आरम्भिक मद्य निःसन्देह स्वर्गीय अमृत थे ।

भारतवर्ष में इसकी खेती कम होती थी । फल प्रायः बाहर ही से मँगाए जाते थे । मुसलमान बादशाहों के समय में अंगूर की ओर अधिक ध्यान दिया गया । आज कल हिन्दुस्तान में सबसे अधिक अंगूर काश्मीर में होते है । वहां ये क्वार महीने में पकते हैं । वहां इनकी शराब बनती है और सिरका भी पड़ता है । महाराष्ट्र देश में जो अंगूर लगाए जाते हैं उनके कई भेद, जैसे–आबी, फकीरी, हबशी, गोल कली और साहेबी इत्यादि ।

अफगानिस्तान, बिलूचिस्तान और सिंध में अंगूर बहुत अधिक और कई प्रकार के होते है, जैसे–हेटा, किशमिशी, कलमक, हुसैनी इत्यादि किशमिशी में बीज नही होता । कंधारवाले हेटा अंगूर को चूना और सज्जीखार के साथ गरम पानी में डुबाकर आबजोश और किशमिशी को धूप में सुखा कर 'कसमिस बनाते है'।

वानस्पतिकवर्णन—अंगूर की बेलें काठ की टट्टियों पर चलती है । इसके पत्र हाथ की आकृति के कुम्हड़े या नेनुए की पत्तियों से मिलते जुलते होते है, मानों हथेली में पांच अंगुलियां लगादी गई हों । फल गुच्छों में लगते है । अंगूर पुष्प में दो कोषीय डिम्बाशय होता है और प्रति डिम्बाशय में दो–दो डिम्ब होते हैं ये डंठल युक्त, स्थूल, गूदादार, गोल या अण्डाकार (झड़बेरी के सदृश) फल रूप में विकास पाते है । कोष भिन्न हो जाता है तथा उनमें से कुछ बीज साधारणतया नष्ट हो जाते हैं । चूंकि फल डंठल से और डण्ठल शाखा से नहीं जुड़े रहते, इस कारण परिपक्वावस्था में वे झड़ते नहीं, किंतु उक्त पौदे में ही लगे रहते हैं (पर यह शर्त है कि सूर्यताप काफी हो) और धीरे धीरे सूख जाते हैं । उक्त शुष्क फल को सूर्यताप द्वारा पका हुआ किसमिस कहते हैं । फल इसके छोटे बड़े, गोल और लम्बे कई आकार के होते हैं । कोई नीम के फल की तरह लम्बे और कई मकोय की तरह गोल होते हैं ।

रासायनिक संगठन—फल के गूदेमें अंगूरी शकर (द्राक्षौज) तथा क्रीम ऑफ टार्टार (Cream of tartar) वर्तमान होता है । इसमें निर्यास तथा सेव की तेजाब भी विद्यमान होती है । बीज में एक प्रकार का स्थायी तेल होता है । (ग्रेएट) । बीज तथा फलत्वक् में ५–६ प्रतिशत कषायाम्ल (टैनिक एसिड) पाया जाता है । फार्माको० । डां० जे० कोनिक तथा सीक्रैज्ञ के विचार से काली दाख में जल २३ · १८ अल्ब्युमिनस पदार्थ २ · ७१, वसा ० · ६६, द्राक्षौज (ग्रेप शूगर) ५५-६२, अन्य अनत्रजनीय पदार्थ १४-१२, काष्ठोज १ · ६४, तथा भस्म १ · ३६ प्रतिशत विद्यमान होती है । शुष्क-द्रव्य में उन्होंने नत्रजम ० · ५६ और शर्करा ७२-४३ प्रतिशत पाया । डॉक्टर इ०मैक और के० पोर्टेली के परीक्षणानुसार किशमिश में जल २० · ४, द्राक्षशर्करा ३०-२ लिव्युलोज ३६-४ पेक्टिन १-८६, फ्री एसिडस १-७६, सेव की तेजाब ० · ३८, अगोंल ३-२८, अनघुल पदार्थ ५-० तथा भस्म २-०३ होती है । डॉक्टर एम. सी. न्युयार के परीक्षानुसार अंगूर पत्र में इमली की तेजाब (टार्टरिक एसिड) बाइटार्ट्रेट ऑफ पोटाश, क्वर्सेटीन, क्वर्सिट्रीन, कषायिन, श्वेतसार, सेव की तेजाब, निर्यास, इनोसीट, अस्फटिकवत शर्करा, ओक्जेलेट आफ लाइम तथा एमोनिया और फास्फेट व सल्फेट आफ लाइम विद्यमान होते है ।

प्रयोगांश—फल (पक्व या अपक्व), कुछ शुष्क फल [किशमिश मोनक्का प्रभृति) तथा पत्र ।

मात्रा–शर्बत, आधे से एक फ्लूइड आउन्स (२४ घण्टे में ४–६ बार)। किसमिश या मुनक्का १। तो० से २॥ तो० तक (दिन रात में ३–४ बार)।

औषधि-निर्माण—द्राक्षा सुरा (Vinum) द्राक्षारिष्ट, द्राक्षासव, द्राक्षाचुक्र या अंगूरी सिर्का (viuegar of grapes) प्रभृति।

प्रतिनिधि—यूरोपीय औषध इमली और नीबू की तेजाब (अङ्गूर के लिए) आलूबुखारा और शीरखिश्त (किशमिश के लिये) मो० श० गम्भारी फल। सि० यो० ज्व० चि० पिप्पल्यादि, वा० सू० १५ अ० परूषकादि, च० द० वा० ज्व० चि– पिप्पल्यादि वा० ज्व० चि० द्राक्षादि।

द्राक्षा के गुणधर्म व उपयोग

आयुर्वेद की दृष्टि से:—

पका अंगूर–दस्तावर, शीतल, नेत्रों को हितकारी, पुष्टिकारक, भारी, पाक तथा रसमें मधुर, स्वर को उत्तम करने वाला, कफैला, मल तथा मूत्र को प्रवृत्ति करने वाला, कोठे में वायु-कारक वृष्य (वीर्य को बढ़ाने वाला), कफ तथा रुचि को उत्पन्न करता है और तृषा, ज्वर, श्वास, कास, वातरक्त, कामला मूत्रकृच्छ्र, रक्तपित्त मोह, दाह, शोष तथा मदात्यय रोग को नष्ट करता है। गोस्तनी (गाय के स्तन के सदृश) अर्थात् कालीदाख वीर्यवर्द्धक (वृष्य) भारी और कफ तथा पित्त को नष्ट करने वाली है। कच्चा अंगूर हीन गुण वाला तथा भारी है। खट्टा अंगूर रक्तपित्त को करने वाला है। बीज रहित अथवा छोटे बीजों वाली (किशमिश) गोस्तनी दाख के सदृश गुणों वाली है। पर्वत में उत्पन्न हुई (पर्व्वतीय) दाख हलकी, अम्ल और कफ तथा रक्तपित्त को करने वाली है करमर्दिका (करौंदे के सदृश) दाख में भी पर्वतोत्पन्न दाख के सदृश गुण हैं।

भा० द्राक्षा व०

दाख मधुर, खट्टी, कफैली है और किसी क्षार के साथ पित्त, वात और कफ का नाश करती है, उत्तम है तथा रुधिर रोग, दाह, शोष, मूर्च्छा, ज्वर, श्वास (श्वसन) और खाँसी को दूर करती है। जो दाख विपाक में कषैली व अम्ल (कषायाम्ल) होती है वह कफ में हित है।

अत्रि० १७ अ०

दाख मधुर, स्निग्ध, वीर्यवर्द्धक, शीतल, मलभेदक, बलकारक एवं वृष्य है तथा क्षतक्षीण वात और रक्तपित्त का नाश करती है।

रा० नि०

दाख मधुर, शीतल, खट्टी, पित्तनिवारक, दाहनाशक, मूत्रदोषहारक, रुचिकारक, वृष्य और तृप्तिकारक है।

रा० नि०

कच्ची दाख कटु, उष्ण, विशद, रक्तपित्तकारक है। मध्यम अवस्था की दाख खट्टी, रुचिकारक और अग्निवर्द्धक है। पक्की दाख, मधुर, खट्टी, तृषानाशक और रक्तपित्तनाशक है। पक कर सूख गई हुई दाख श्रमनाशक तृप्तिकारक और पुष्टि-जनक है।

दाख धातुवर्द्धक, शोषनाशक, प्यास को हरने वाली, वात को दूर करने वाली, वमन रोग-नाशक, पचने में अम्ल, सुरस, मधुर, शीत वीर्य, ज्वर और कफ को हरने वाली, मूत्र और मल को शोधने वाली है।

गोस्तनी दाख शीतल, हृदय को हितकारी, वीर्यवर्द्धक, वातानुलोमक, स्निग्ध और हर्षजनक है तथा श्रम, दाह, मूर्च्छा, श्वास, खाँसी, रक्त-पित्त, ज्वर, रुधिर विकार, तृषा, वात और हृदय की व्यथा को हरने वाली है।

किशमिश मधुर, शीतल, वीर्यवर्द्धक, रुचिप्रद, खट्टा, रसाल है तथा श्वास, खाँसी, ज्वर, हृदय की पीड़ा, रक्तपित्त, क्षतक्षय, स्वरभेद, तृषा, वात, पित्त और मुख के कड़वेपन को दूर करता है।

द्राक्षा—रस में मधुर, स्निग्ध, शीतल, हृद्य और स्वर्य है तथा रक्तपित्त, ज्वर, श्वास, तृषा और दाह का नाश करने वाली है। मुद्दीका मधुर, स्निग्ध, शीतल, वृष्य और अनुलोमक

तथा रक्त, वात, श्वास, कास, भ्रम, तृष्णा और ज्वर का नाश करने वाली है।

धन्व० नि०

गोस्तनी—मधुर, शीतल, हृद्य और मदहर्षिणी है तथा दाह, मूर्च्छा, ज्वर, श्वास, तृषा और हृल्लास को नाश करने वाली है तथा शीतल और मनुष्यों को प्रिय है।

द्राक्षा के विशेष गुण—

द्राक्षा—'बालफल' कटु, उष्ण, विपदोपजनक और रक्तपित्त को करने वाली है। 'मध्य' और रसान्तर को प्राप्त अम्लरस युक्त रुचिकारक और अग्निजनक है। 'पक्व' और मधुर तथा अम्लरस सहित तृष्णा और रक्तपित्त को दूर करने वाली है "पक्व" अत्यन्त सूखी हुई श्रमजनित पीड़ा को शमन करने वाली, संतर्पण और पुष्टिदायक शीतल तथा पित्त और रक्त के दोषों को शमन करती है। एवं मधुर, स्निग्धपाकी और अत्यन्त रुचिकारक है। चक्षुष्य श्वास, कास, श्रम तथा वमन को शमन करने वाली, सूजन, तृष्णा और ज्वर का नाश करने वाली है एवं आध्मान, दाह तथा श्रम आदि को हरण करती और परम तर्पण है। द्राक्षा क्षीण वीर्य वाले को भी मदनकला केलि मे दक्ष बनाती है। रा० नि०

तृष्णा, दाह, ज्वर, श्वास, रक्तपित्त, क्षत वा क्षय, वात, पित्त, उदावर्त, स्वरभेद, मदात्यय, मुख का कड़वापन, मुखशोष और कास को दूर करती है। मृद्वीका, बृंहण, वृष्य, मधुर, स्निग्ध और शीतल है। चरक फ० व०

द्राक्षा—दस्तावर, स्वर्य, मधुर, स्निग्ध और शीतल तथा रक्तपित्त, ज्वर, श्वास, तृष्णा, दाह और क्षय का नाश करने वाली है। सुश्रुत

द्राक्षा के वैद्यकीय व्यवहार

सुश्रुत—मूत्रावरोधज उदावर्त अर्थात् मूत्रवेग के धारण से उदावर्त रोग होने पर द्राक्षा का क्वाथ प्रस्तुत कर पिलाना चाहिये।

(उ० ५५ अ०)

वाग्भट्ट—

(१) मदात्यय रोग में होने वाली पिपासा में वात, पित्त की अधिकता वाले मदात्ययी को शीतल किया हुआ द्राक्षा का क्वाथ पिलाना चाहिये। ओषध के पच जाने पर बकरे के मांस से बनाए हुये यूष के साथ मधुराम्ल वस्तु का भोजन करने का आदेश कर देना चाहिये।

(चि० ७ अ०)

(२) मूत्रकृच्छ्र में द्राक्षा को बासी जल के साथ पीसकर जल के साथ सेवन करने से मूत्रकृच्छ्र प्रशमित होता है। (चि० ११ अ०)

चक्रदत्त—

दश वर्ष का पुराना घी ऽ१ सेर, द्राक्षा कल्क ऽ१ सेर एवं जल ।ऽ६ सेर इनका मृदु अग्नि से यथा विधि पाक करें। यह घृत रक्त पित्त, कामला, गुल्म, पाण्डु रोग, ज्वर, प्रमेह, और उदर रोगों को नष्ट करता है।

(रक्तपित्त चि०)

यूनानी ग्रन्थकार अंगूर को—दूसरी कक्षा में गरम तर मानते हैं। कक्षा प्रथम कक्षा में ठंडा और दूसरी कक्षा में रूक्ष है। हानिकर्त्ता—स्निग्ध आमाशय और प्लीहा को तथा वायुजनक है। दर्पघ्न—सोंफ और गुलकन्द। प्रतिनिधि—किसी-किसी गुण में अञ्जीर व मवेज मुनक्का।

गुण, कर्म, प्रयोग—यह अत्याहार है, क्यों कि इससे शुद्ध रुधिर उत्पन्न होता है जो अपनी मधुरता के कारण हृदय को अत्यन्त प्रिय है। अतिरिक्त इसके अपनी तारल्यता के कारण यह शीघ्र शोषित हो जाता है और इसी कारण वल्य है। पूर्णतया पका हुआ अंगूर उत्तम होता है। क्यों कि यह अत्यन्त मधुर होता है तथा इसमें अपक्व द्रव बहुत कम होता है। लटका कर रखा हुआ अंगूर इससे उत्तम होता है, क्यों कि इस दशा में वायु का, जो अवशिष्ट द्रव को क्षयकरता है, चारों ओर से आधिपत्य रहता है। इसके विपरीत जो किसी स्थान में रखे हुये हों विशेषतः जब अत्यधिक तह पर तह रक्खे हुए हों तब वे इससे कनिष्ठतर होते हैं। इसी प्रकार बिलम्ब का तोड़ा हुआ अंगूर भी उत्तम होता है, क्यों कि रस जो अंगूर के आहार में व्यय होता है उसकी ओर शीघ्र-शीघ्र पहुँचता है। इसका कारण यह

है कि अंगूर का वृक्ष अपनी उत्तम शक्ति के कारण जल शोषण में अधिक शक्तिशाली है। इसके अतिरिक्त इसका वृक्ष पूर्णरूप से सीधा खड़ा हुआ नहीं होता। इस कारण जल भी इसकी ओर सरलतापूर्वक शोषित होता है। इसके सिवा यह अत्यन्त पिलपिला होता है, और इससे आहार नलिकाएँ अत्यन्त विस्तृत होती हैं। और चूंकि अंगूर की ओर आहार प्रवेश तीव्र गति से होता है, इस लिये वह अपक्व रहता है तथा उक्त अवस्था में शेष होता है, जिससे वायु एवं उदराध्मान उद्भूत होते हैं। किन्तु तोड़ने के पश्चात् जब कुछ समय तक रखा रहता है तब इसके अवशिष्ट रतूबतों का प्रायः भाग लय हो जाता है। अंगूर बस्ति को हानिकर्त्ता है. क्यों कि यह शिथिलता, तीक्ष्णता और शोषण उत्पन्न करता है। शैथिल्यजनन का कारण यह है कि उक्त रतूबत के कारण वस्ति अधिक स्नेहयुक्त हो जाती है, क्योंकि इसकी ओर अंगूर की रतूबत अधिकता के साथ प्रवेशित होती है। और क्योंकि इसकी रतूबत मात्रा में अधिक आशुकारी तथा मूत्रजनक होती है। तीक्ष्णता का कारण इसका माधुर्याधिक्य है। (नफी०)

अंगूर शीघ्रपाकी, पक्वाशय की थैली में शीघ्र उतरने वाला और अत्याहार है, उत्तम रुधिर उत्पन्न करता और शरीर को बृंहण करता है। यह रक्तशोधक बातजमल को हरणकर्त्ता, स्वच्छ करता, मल को पक्व करता है। यदि इसको खिरनी के साथ पक्व करके शोथ पर लगाएँ तो वह शोथ को शीघ्र ही लय करे। यह छिद्रोद्घाटक है और मन को प्रसन्न करता है।

अंगूर के छिलका और बीज शीतल तथा रुक्ष हैं। गुठली वायुकारक, विबन्धकारी, मूत्र एवं वीर्य स्तम्भ कारी है। अपक्व अंगूर शीतल तथा संकोचक है। इसके बीज तथा त्वचा को नहीं खाना चाहिये। इसकी लकड़ी की राख वस्तिस्थ अश्मरीध्वंसक, शीतल, अण्डशोथ तथा अर्श नाशक है। अन्तिम दो रोगों में इसका बाह्य तथा आभ्यन्तर उपयोग होता है।

मुनक्का-स्वरूप—काला और लाल। स्वाद मधुर। प्रकृति-१ कच्चा में गरम और तर।

हानिकर्त्ता—उष्ण प्रकृति वालों को पी रुधिर, वृक्क को स्वच्छताप्रद है। दर्पनाशक सिकञ्जबीन, खशखाश और अम्लफल स्वाद प्रतिनिधि-किशमिश तथा इसका अन्य भे आवजोश! मात्रा:—१० दाने से २० दाने तक गुण, कर्म, प्रयोग०विशेष कर यह अन्याहार वृंहण, आमवर्धक तथा हृद्य हैं। पित्त की तीक्ष्णता और उष्णता को शमनकर्ता, कफशोथ दोषों को पक्व और समपक्व करता, प्रकृति को मृदुकर्ता, वायु को लयकर्ता, आमाशय और अन्त्रियों को स्वच्छकर्ता, शरीर को वृहत्कर्ता यकृत और शीत प्रकृति वालों के ओज व बलप्रद तथा फुफ्फुस प्रान्त के अनुकूल है। पशुओं की चरबी के साथ इसका लेप शोथ को लय करता है। यह भुना हुआ गरमागरम खांसी को गुणकारक है।

मुनक्का रेचक औषधियों का सहायक एवं बस्ति व वृक्क के रोगों को लाभप्रद है। गावजुबान तथा ताजे छुहारे के साथ मूर्च्छा को लाभप्रद और लोबान के साथ बिस्मृति तथा सिरके के साथ पांडु को लाभप्रद है। कालीमिर्च के साथ मूत्रकृच्छ्र तथा बृक्काश्मरी एवं वस्त्यश्मरी को लाभप्रद है। इसका क्वाथ प्रकृति को मृदुकर्ता तथा शीत कषाय सिरके के साथ प्लीहा शोथ को लय करता है।

मुनक्का के बीज-प्रकृति—१ कच्चा में ठंडी और २-कच्चा में रूक्ष। हानिकर्ता-वृक्क को।

दर्पनाशक-उन्नाब व अमलतास। स्वाद-फीका, दुःस्वाद।

गुण,कर्म, प्रयोग—धातुबद्धक, आध्मानकर्ता स्निग्ध-आमाशय तथा आंत्र को बलप्रद तथा स्निग्धता शोषणकर्ता है। किसी किसी ने स्तम्भक भी लिखा है।

किमिमिश

स्वाद—मधुर और चाशनीयुक्त। प्रकृति-गरम और तर तथा बीज ठंड और रूक्ष है। हानिकर्ता

वृक्क एवं उष्ण प्रकृति को । दर्पनाशक—सिकंजबीन व खसखास तथा उन्नाब । प्रतिनिधि-मवेज मुनक्का उचित मात्रा में । गुण, कर्म, प्रयोग-इसका विशिष्ट गुण यकृत, हृदय तथा मस्तिष्क को-बलप्रदान करना और कामशक्ति को बढ़ाना है, यह कठोरता को मृदुकर्ता, कफ प्रकृति को मृदु करता, रोध उद्घाटन तथा आमाशय को स्वच्छ करता है । यह कठोरता को मृदुकर्ता, कफ प्रकृति को कोमल करता, श्वास को लाभप्रद, ओजको बलवान करता, शरीर को बृंहण करता, रेचक होते हुए भी मस्तिष्क को लाभप्रद है । मूर्च्छा-नाशक, बस्ति तथा वृक्करोग को लाभप्रद, अंगूरी सिरके के साथ प्लीहाशोथजयकारक तथा हृदय व वात तंतुओं को बलप्रद और अत्याहार, एवं विस्मृति रोग नाशक भी है।

अंगूर क्षार—इसके पञ्चांग से निकला हुआ क्षार अश्मरीभेदक है । मात्रा–२–४ रत्ती ।

अंगूर आदि के गुणधर्म व प्रयोग डाक्टरों के मतानुसार।

डांक्टर मोहीदीन शरीफ–स्वलिखित मेटेरियां मेडिका में स्वानुभव को निम्न प्रकार से पेश करते हैं । यथा—

प्रभाव—अंगूर, उत्तापशमक, मूत्रजनक, तथा ज्वरनाशक है । किशमिश (अधिक मात्रा में) स्निग्धताकारक श्लेष्मनिस्सारक तथा उदरमृदुकर्ता (*Lixative*) है । (थोड़ी मात्रा में) संकोचक है।

प्रयोग—अंगूर का शर्बत अतिग्राह्य तथा शीतजनक पेया है और अनेक ज्वरों में ज्वर सम्बन्धी लक्षणों तथा तृषा को शमन करने में अत्यन्त लाभदायक सिद्ध होता है । उक्त डांक्टर महोदय कहते है कि मैंने मूत्रदाह, मूत्राबरोध तथा मूत्रकृच्छ्र, और पैत्तिकाजीर्ण की कतिपय दशाओं मे इसका उपयोग किया और इसे लाभप्रद पाया वह अन्य औषधियों के लिये विशेषतः उनकेलिए जो अजीर्ण, प्रवाहिका, अतिसार तथा जलोदर प्रभृति विकारों में व्यवहृत होती है, सर्वोत्तम एवं अतिग्राह्य अनुपान है।

शर्बत निर्माण विधि—पक्व द्राक्षा स्वरस १ सेर, जल १॥ सेर, शुद्ध स्वच्छ शर्करा २ सेर सर्व प्रथम शर्करा को जल में डाल कर अग्नि पर रख कर घोलें पुनः अंगूर स्वरस मिलाएं । तत्पश्चात् सम्पूर्ण द्रव को मधुर अग्नि द्वारा यहां तक पकाए कि वह $\frac{2}{3}$ रह जाए । मात्रा– आधा से १ फ्लुइड आउंस (२४ घन्टे में ५–६ वार)।

डाइमॉक-अपक्व अंगूर स्वरस को अरबी में हसरम, फारसी में गूरह, अंग्रेजी में वरजूस (Verjuice) तथा रूमी में अग्रेस्टो (agresto) कहते हैं । यह इटली में अब तक कंठरोगों में व्यवहृत होता है । वसंत ऋतु में अंगूर की शाखाओं को काटने से उनमें से अधिकता के साथ रस निकलता है । यह त्वचा रोगों में व्यवहृत होता हैं । अब भी यूरुप में चक्षु प्रदाह के लिए यह एक प्रसिद्ध औषध है।

इसका पत्ता संकोचक है, तथा अतिसार में उपयोग किया जाता हैं ।

आर० एन० खोरी—औषधार्थ प्रयोग करने से पूर्व अंगूर के बीज एवं छिलका दूर कर देने चाहिये । मुनक्का श्रमहर, स्निग्ध, शीत तथा मृदुरेचक है । इसको प्रायः औषध को मधुर करने के लिए प्रयोग में लाते हैं । यह ज्वर की पिपासा, प्रदाहमूलक पीड़ा एवं कोष्टबद्ध रोग में सेवनीय है । पत्र–कषैला है और अतिसार रोग में व्यवहृत होता है ।

काष्ट की भस्म—अश्मरी रोग के पूर्वरूप में एवं भावीरोगोत्पादनानुकूल अवस्था में शरीर में यूरिक एसिड सञ्चय हेतु अनागतव्याधि प्रतिषेधक रूप से अर्थात् भावी व्याधि उत्पन्न न हो इस लिए इसका उपयोग करते है । एतद्देशीय लोग कोष्टवृद्धि रोगे एवं अर्श में इसका प्रलेप करते हैं ।

कपिलद्राक्षा—(भूरीदाख) साधारणतः रेचक मिश्रणों में उपादान रूप से व्यवहृत होती है ।

किशमिश–विविध खंडमोदकादि में व्यवहृत होता है ।

(मे० मे० इ० २ य भा० १३७ पृ०)

मुकर्जी-किशमिश शीतल तथा मृदुभेदक ख्याल किया जाता है और खांसी, प्रतिश्याय तथा पांडुरोग में व्यवहृत होता है।

हिं० संज्ञा पु० [सं० अंकुर] (२) मांस के छोटे छोटे लाल दाने जो घाव भरते समय दिखाई पड़ते हैं। (३) अंकुर, अंखुआ।

अङ्गूर का मड़वा-हिं० संज्ञा पु० अंगूर की बेल को चढ़ने और फैलने के लिये बांस की धज्जियों का बना हुआ मण्डप।

अङ्गूर की टट्टी-हिं० संज्ञा स्त्री० अंगूर का मड़वा।

अङ्गूर की शर्करा-हिं० संज्ञा स्त्री० द्राक्षोज, द्राक्षा खंड, दाख की शर्करा Grape sugar (Dextrose, glucose)

अङ्गूर शेफा-हिं० संज्ञा पु० [फा०] (Dulcamara)एक जड़ी जो हिमालय पर शिमलेसे लेकर काश्मीर तक होती है। इसे संग अंगूरसूची, जवराज तथा गिरबूटी भी कहते है। इसकी जड़े और पत्तियां दमे और वायु के दर्द को दूर करती है। देखो-अंगूरे शिफा।

अङ्गूरी-हिं० वि० [फा० अंगूर+ई] १ अंगूर से बना हुआ। (२) अंगूरी रंग का।

संज्ञा पु० कपड़ा रंगने का हलका हरा रंग जो नील और टेसू के फूल को मिलाकर बनाया जाता है।

अङ्गूरी शकर-हिं० संज्ञा पु० द्राक्षौज, द्राक्षखंड, अंगूर की शर्करा (Dextrose)

अङ्गूरी शराब-हिं०, द० द्राक्षासव, मद्य। खम्र, शराब०अ०। मै, बादह, मुल-फा०। शाडबाम-ता० द्राक्षसारायि, द्राक्ष रसम्-ते०। मुन्तिरिङ्-डम पजप-चारायम-मल०। द्राख्-नु-दारु-गु०। मूदिर-का-अरकु, मूदिरक-पान-सिं०। वाइनम Vinum (Fermented juice of grapes Wine or Port wine) ले०। स०-फा० इ०।

अङ्गूरी सिर्का-हिं०, द० अंगूरेर सिर्का-बं०। ख़ल्लुल् ख़मर, ख़ल्लुल् अनब-अ०। सिर्के अंगूरी-फा० दिराच-काडी-ता०। द्राक्ष-पुल्लजिल्लु-ते०। मुन्ति रिङ्ड काटि-मल०। द्राक्षा-काडी-कना०। दाख्नुस्किों-गु०। विनेगर आफ ग्रेप्स (Vinegar of grapes or wine vinegar) इं०। स० फा० इं०।

अङ्गूरेकाबुली-फा० किशमिश, काबुली किशमिश Raisin (Uvæ, Uvæ passæ)

अङ्गूरेकौली-
अङ्गूरेखिरस- } फा० रीछदाख। यूवी अ फोलिया (Uvæ ursi folia)-ले०। मे० मे०।

अङ्गूरे खुश्क-फा० मुनक्का, सूखे अंगूर, किशमि Raisina (Uvæ, Uvæ passæ)

अङ्गूरेर सिर्का-बं० अंगूरी सिर्का (Vinegar of grapes) स० फा० इं०।

अङ्गूरे रूवाह-फा० मको, काला मको, ऊदा म हिं०। (Solanum Nigrum, *Bl* *Linn*) स० फा० इं०।

अङ्गूरेरूवाहेसुर्ख-फा० मको, रक्त (लाल) ब०, हिं०। (Solanum Rubru *Mill*)

अङ्गूरे रूवाहे सियाह-फा० काला मको-हिं० (Solanum nigrum, *Bl.* *Linn*)

अङ्गूरे शिगाल-फा० मको Bitter swe (Dulcamara)

अङ्गूरे शिफ़ा-फा० (Dulcamara) म हिं०।

अङ्गूरेसग-फा० (Jacquins nightsha इं० हैं० गा०।

अङ्गूषः-सं० पु० (Anichneumon) चारपाया जानवर।

अङ्गेज-अफ० अफगानी भाषा में इसका नाम आलम है। यह एक घास है जो गीलान पहाड़ों में उगता है। नर व मादा भेद से प्रकार का होता है।

अङ्गेज अवरतस-फ्रां० अज़फारुत्तीब, नख(Hel ashera)

अङ्गोकर-ते० (Momordica dioic *Roxb*) धारकरेला-हिं०। फा० इं० भा०

अङ्गोजह्–फा० (Assafœtida) हींग हिं० । हिंगु, रामठम्-सं० ।

अङ्गोजहे इलरी–फा० (Assafœtida) हींग हिङ्गु-हिं० ।

अङ्गोद्वर्तन–सं० अंगलेपन, लेप । The hair-wash (Liniment) फा० इं० २ भा० ।

अङ्गोरम्-कोंपल, नवपल्लव (Bud)

अङ्गोल–सिं० अङ्गोव (Alangium decapetalum'*lam*) सं० फा० इं० ।

अङ्गौन–बर० (ए० व०) मुकुल,कली (Bud)

अङ्गौन मियाआ–बर० (ब० व०) कलियां (Buds)

अङ्ग्वेण्टा–ले० (व० व०) अङ्गुएण्टम् (ए० व०)

अङ्घालजी-सं० स्त्री० अन्ध्रालजी रोग (Andhralaji)

अङ्घि, अंघ्रि } सं० पु० (The Root of a tree) द्रुम, मूल, वृक्ष की जड़ । रा० नि० व० २ । अम० । २–(Foot) पाद चरण,पांव । (Lower limb) रा० नि० व० १८ ।

अङ्घि ग्रन्थिकम्–सं० क्लो० पिप्पलीमूल (piper-root)

अङ्घि जिह्विक:-सं० पु० दमनक वृक्ष (Artemisia indica' *Willd*)

अङ्घि नामक:,-नामन्-सं० पु० १–(Artemisiaindica) दमनक वृक्ष । २ (The Root of a tree) वृक्ष मूल, जड़ । रा० नि० व० २ । अम० ।

अङ्घिप:-सं० पु० (A tree) अङ्घिप, पेड़, दरख्त, वृक्ष । रा० नि० व० २ हला० ।

अङ्घिपर्णिका, अङ्घिपर्णी } –सं० स्त्री० (Doodialagopodioides) पृश्नपर्णी । चाकुलिया वं० । भा० पू० १ भा० गु० व० ।

अङ्घिवला–सं० स्त्री० पृश्नपर्णी (Hemionites cordifolia)

अङ्घिवल्लि: का, अङ्घिवल्ली } –सं० स्त्री० (Uraria Lagopoides' *De.*) पृश्नपर्णी । चाकुलिया वं० । अ० टी० र० ।

अङ्घिष:–सं० पु० उक्त नाम का तालु रोग । देखो अध्रुष: (Adhrushah)

अङ्घिसन्धि:, अङ्घिस्कन्ध:, अङ्घ्रय: } –सं० पु० गुल्फ,पादगुल्फ,गट्टा–हिं० हे० च० । The ankle (Malleolus) पायेर गोड़ालि वं० ।

अचण्ड–सं० सुसुम ।

अचता–नैपा० लाल कोईपुरा–सिलहट । मे० मो० ।

अचर–हिं० वि० [सं०] (Immovable) न चलने वाला । जड़ । स्थावर । संज्ञा पु० न चलने वाला पदार्थ । जड़ पदार्थ । स्थावर द्रव्य ।

अचरणा-सं० स्त्री० वह योनि जो मैथुन के समय पुरुष से प्रथम स्खलित हो जाती है ।

अचल–हि० वि० (Immovable) स्थिर । हि० पु० ल:—सं० पु० (१) A mountain पर्वत । (२) A boltorpin शंकु । संज्ञा पु० न चलने वाला ।

अचलकीला-सं० स्त्री० (Earth) पृथ्वी ।

अचल त्विट् (ष) –सं० पु० कोकिल, कोयल (A cuckoo)

अचल सन्धि–सं० हिं० स्त्री० अचेष्ट सन्धि, स्थिर संधि वे सन्धियां जिनमें गति असभव है । जैसे दोनों पार्श्वकास्थियों के बीच की सन्धि । इम्बू वेवल जांइण्ट Immovable joint सिनाथ्रोसिस Synarthrosis इं० ।

मफ़्सिल् सा़बित, मफ़्सिलुमुवस्सा़क़ अ० ।

नोट—(१) अधोहन्वस्थि और शंखास्थि की सन्धि को छोड़कर कूर्पर की शेष सन्धियां स्थिर ही हैं ।

(२) अचल संधियां, सन्धियां तीन प्रकार की होती हैं:— ।

१—दर्ज वाला जोड़ (मफ्सिल् मदरूज,) (मफ्सिल् तदरीजी) जैसे कपाल की अस्थियां। (२) कोलनुमा, गढा हुआ जोड़ (मफ्सिल् मरकूज, , मफ्सिल् मिस्मारी) जैसे दंत और हनु की सन्धि। ३—नलिकाकार सन्धि (मफसिल शक्की, मफ्सिल् मीजाबी) जैसे जतूकास्थि और नासावंशास्थि की सन्धि । इनके अंगरेजी नाम क्रमशः इस प्रकार हैं (१) स्युचर (Suture) (२) कन्फ्रोसिस (Comphosis) (३)स्के ण्डिलेसिस Sc hendylesis)

अचला } सं० स्त्री० पृथ्वी (Theearth)
अचला कीला }

अचलीज-हिं० संज्ञा पु० इटिया मैक्रोफाइला Itea macrophylla.

अचलेश्वरः-सं० पु० एक योग जिससे वृद्धता नष्ट होती है। पाराभस्म, शुद्धगंधक, त्रिफला और गुग्गुल इन सबको समान भाग लेकर बारीक चूर्ण करके एरण्ड के तेल के साथ रोज चाटें। इस प्रकार ६ महीने सेवन करने से वृद्धता दूर होती है, और आयु की वृद्धि होती है। इसके सेवन करने वाले को बकरे के अंडकोष की कीमा को गाय के दूध में उबाल कर मिश्री मिलाकर खाना उचित है। र० यो० सा०।

अचक्षु-हिं० वि०
अचक्षुस्-सं० त्रि० } बिना आँख का। अंधा। नेत्र रहित। (Eyeless, blind)

अचापल,-ल्य-सं० त्रि० (Steady) स्थिर, अचंचल।

अचापलं,-ल्यं-सं० क्ली० (Steadiness) स्थिरता।

अचार-हिं० संज्ञा पु० (१) खटाई भेद। (२) चाल चलन, आचार, व्यवहार। (३) चिरौंजी का पेड़। प्रियाल वृक्ष (Buchanania latifolia, *Roxb*)

अचार वोण्डी-म० पोकरमूल, उकरा-हिं०। अकलकर-सं०। वन मुग्गली-कना०। Paracress (Spilanthes Oleracea, Jacq)

अचारी-हिं० वि० [सं०] अचार करने वाला आचरण शील।

अचिकित्स्य-हिं० वि०
अचिकित्स्यः-सं० त्रि० } बे उपाय। बे इलाज। ला दवा। जिसकी दवा न हो सके। चिकित्सा के अयोग्य। असाध्य (Incursble)

अचिक्कुरः-सं० पु० कपाल रोग, खालित्य, इन्द्रलुप्त (Alopecia Baldness)

अचिक्कन-हिं० वि० [सं०] खुरखुरा, खरदरा, (Rough, unpolished)

अचित्-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) Devoid of understanding अचेतन। जड़ प्रकृति "चित्" का उलटा। (२) Material प्राकृतिक।

अचिन्त-हिं० वि० [सं०] चिन्ता रहित, निश्चिन्त, बे फिक्र।

अचिन्ता-हिं० संज्ञा स्त्री० बे फिकरी, निश्चिन्तता (Absence of thought)

अचिन्त्य-हिं० वि० [सं०] (१) बोधागम्य, अज्ञेय, कल्पनातीत। (२) अतुल। (३) आशा से अधिक।

अचिन्त्यजः-सं० पुं० पारद। पारा (Mercury) रा० नि० ब० १३।

अचिन्त्यशक्तिरसः-सं० पु० पारा, गन्धक प्रत्येक २ मा०। भांगरा, केशराज (काला भांगरा) सम्भालू, ब्रह्मी, पत्रसुन्दर (गूमा), सफेद अपराजिता की जड़, शालिञ्चशाक और काल मारिष इनको ४-४ मा० ले उपर्युक्त सभी औषधियों के रस में बारीक पीसें, फिर सोनामाखी १ मा०, कालीमिर्च १ मा० मिलाकर नैपाली थूहर के डण्डे से खरल कर मूंग प्रमाण गोलियां बना साया में शुष्क कर रखें। इस प्रयोग को सन्निपात में बरतें। देखो—भै० र० सन्निपाताधिकारः।

अचिन्त्यात्मा-सं० पु० [सं०] परमात्मा (The Supreme Soul)

अचिरं-, अचिर- सं०, हिं० क्रि० वि० (Soon, quickly) शीघ्र, तुरन्त जल्दी।

अचिरद्युति-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] बिजली। क्षणप्रभा। विद्युत। (Lightning)

अचिर-पल्लवः-सं० पु० (Alstonia scholaris, *R. Br.*) सप्तपर्ण वृक्ष। छातिम। छतीऊन। छतिवन। सतवन।

अचिर प्रभा-, अचिरभास्-, अचिररोचिस्- सं० स्त्री० (हिं० संज्ञा स्त्री०) बिजली। चपला। विद्युत। (The lightning)

अचिरात्-हिं० क्रि० वि० [सं०] शीघ्र। तुरन्त। जल्दी।

अचिराभा-, अचिरांशु- सं० स्त्री० विद्युत। बिजली। (Lightning)

अवीता-हिं० वि० स्त्री० [सं०] अनिच्छित। अचिंतित। (Unwished)

अचुका-सं० स्त्री० आच्छुक। आल। आछी (Morinda citrifolia, *Linn*)

अचुवागन्दी-ता० असगन्ध। अश्वगन्ध। (Withania Somnifera, *Dunal*)

अचूक-हिं० वि० [सं०] अच्युत। जो न चूके। जो अवश्य फल दिखाए। अवश्य निर्दिष्ट कार्य करने वाला। भ्रम रहित। पक्का। जरूर। (Sure, unfailing)

अचेत-हिं० वि० [सं०] अज्ञान। मूर्च्छित। सुन्न होना। चेतना रहित। संज्ञा शून्य। बेहोश। (Out of mind or senses)

अचेतन-हिं० संज्ञा पु०, अचेतनः-सं० त्रि० (Inanimate object) जड़द्रव्य। अचैतन्य पदार्थ। हिं० वि० [सं०] Insensible, senseless बेहोश। संज्ञा हीन। मूर्छित चेतना रहित। आत्मविहीन।

अचेलः-सं० पु० वस्त्रहीन। नंगा। नग्न (Naked, clothless)

अचेल परिसह-हिं० संज्ञा पु० [सं० अचैलपरिसह] आगम में कहे हुए वस्त्रादि धारण करने और उनके फटे एवं पुराने होने पर भी चित्त में ग्लानि न लाने का नियम।

अचेष्ट सन्धि-सं० त्रि० अचल सन्धि (Synarthrosis)

अचेष्टा-संज्ञा स्त्री० अटल। स्थिर। (Immovable)

अचैतन्य-हिं० संज्ञा पु०, अचैतन्यः-सं० त्रि० निश्चेतता। चेतना का अभाव। अज्ञान। हिं० वि० [सं०] आत्माविहीन। अज्ञानता, जड़, चेतना रहित।

अचैन-हिं० संज्ञा पु० [सं० अ=नहीं+शयन=सोना] आराम न करना। बिकलता। दुःख। कष्ट। (Uncomfortable)

अचेगिडा-कना० दुद्धि, रक्तबिन्दुच्छदा (Euphorbia pilulifera, *Linn*)

अच्छ-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) (A crystal) स्फटिक (२) (A bear) रीछ, भालू। भल्लूक, भल्ल। (३) स्वच्छ जल। हिं० वि०। (clear, pellucid transparent) स्वच्छ।-संज्ञा पु० [सं० अक्ष] (१) आँख, नेत्र। (२) रुद्राक्ष।

अच्छः-सं० पु० (१) गुन्द्र। (२) रीछ, भल्लूक। (३) स्फटिक। मे० छद्विकं। (४) पटेरे।

अच्छकीकसम्-सं० क्ली० सूत्रविहीन कारटिलेज (Hyaline cartilage)

अच्छटा-सं० स्त्री० भुइँ आमला, भूम्यामलकी। (Phyllanthus niruri, *Linn*)

अच्छत-हिं० संज्ञा पु० [सं० अक्षत] बिना टूटा हुआ चावल। (Whole rice) वि० अखंडित।

अच्छ-भल्लः, ल्लूकः-सं० पु० (१) सोनापाठा। (Oroxylum indicum, *Vent*)

देखो—भल्लुकः। रा० नि० व० १९। रत्ना०। (२) (A beara) भालू, रीछ।

अच्छर्दिका–सं० स्त्री० (Vomiting, an emetic) वमन। छर्दि। उकाई। वमी। वान्ति। रा० नि० व० २०।

अच्छलः–सं० पु० तिल की लुगदी। तिलकल्क (Paste of sesamum indicum)

अच्छा–हिं० वि० [सं० अच्छ=स्वच्छ, निर्मल] [स्त्री० अच्छी] मनोहर। सुन्दर।

अच्छा बिच्छा–हिं० वि० [हिं० अच्छा] (१) दुरुस्त। खासा। चुना हुआ। (२) नीरोग। भला, चंगा।

अच्छिन्न–हिं० वि० [सं०] छिद्र रहित। जो कटा न हो। अखंडित।

अच्छिन्न पत्रः–सं० पु० (१) शाखोट वृक्ष, सिहोर (Streblus asper, *Linn*)। (२) युक्तपत्र वृक्ष मात्र।

अच्छुकः–सं० पु० उक्त नाम का रक्तवर्ण पुष्प वृक्ष। तिनिश वृक्ष। आजु। आजु फुलेर गाछ–बं०। (Lagerstrœmia flos=reginœ *Retz*) ५० मु०।

अच्छोदन–हिं० संज्ञा पु० शिकार। आखेट। अहेर। (The chase, honting)।

अच्छोदन्–सं० त्रि० (Having clear water)

अच्युत–हिं० वि० [सं०] (१) स्थिर, अटल, दृढ़, नित्य, अविनाशी। (२) जो गिरा न हो। (३) जो न चूके, जो त्रुटि न करे, जो विचलित न हो।

अच्युता–सं० स्त्री०, नैपा० लाल कोईपुरा-सिलहट।

अच्युतावासः–
अच्युतवासः– } सं० पु० (Ficus religiosa, *Linn*) अश्वत्थ वृक्ष, पीपल वृक्ष। रा० नि० व० ११। (२) उदुम्बरवृक्ष, गूलर का पेड़। The sacredfig tree (Ficus glomerata, *Roxb*)

अछवानी–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० यवनिका > यमानी] काडल (Caudle)–इं०। अर्क बाती, प्रसूता स्त्रियों की औषध। अजवायन सोंठ तथा मेवों को पीस कर घृत में पका हुआ मसाला जो प्रसूता स्त्रियों को खिलाया जाता है।

अछाम–हिं० वि० [सं० अक्षाम] (१) जो पतला न हो। मोटा। बड़ा। भारी। (२) जो कृश या दुबला न हो। हृष्ट पुष्ट। मोटा ताजा। बलवान्।

अछिद्र–हिं० वि० छिद्र रहित (Impervious)

अछी–हिं० संज्ञा स्त्री० [देश०] आल का पेड़ (Morinda citrifolia, *Linn*)

अछूता–हिं० वि० [सं० अ=नहीं+छुप्त=छुआ हुआ] अनछुआ, नवीन, पवित्र। [स्त्री० अछूती]

अछेद्–हिं० वि० [सं० अच्छेद्य] जिसका छेदन न हो सके। जो कट न सके। अछेद्य। अखंड्य। संज्ञा पु० अभेद, अभिन्नता।

अछेद्य–हिं० वि० [सं०] जिसका छेदन न हो सके, जो कट न सके, अभेद्य।

अछेह–हिं० वि० [सं० अछेद्य] बहुत अधिक। अनंत। अत्यन्त। (२) अखंड्य। निरन्तर।

अछोप–हिं० वि० [सं० अ+क्षुप] आच्छादन रहित। नंगा। नीच। तुच्छ।

अछोभ–हिं० वि० [सं० अक्षोभ] (१) क्षोभ रहित, उद्वेग शून्य, चंचलता रहित, स्थिर, गम्भीर, शांत।

अछोह–हिं० संज्ञा पु० [सं० अक्षोभ, प्रा० अच्छोह] क्षोभ का अभाव, शांति, स्थिरता।

अज–हिं० वि० [सं०]
अजः–सं० त्रि० } (Unborn) जिसका जन्म न हो। अजन्मा।

संज्ञा पु० (१) Cupid कामदेव। (२) Moon चन्द्रमा। (३) A ram, goat बकरा। (४) A sort of corn or grain अनाज।

अजअर–अ० कम बालों वाला। जिसके बाल कम हों।

अजक–अ० फलदार खजूर का वृक्ष। Fruitful date tree (Phenixsylvestris)

अजक् अजक इब्न जैद–अ० खजूर भेद। (A kind of date)

अजक इब्न ताब–अ० खजूर भेद। (A kind of date)

अजकम्–सं० क्लो० साखू, साल। The sal tree (Shorea robusta, *Gœrtn*) इं० मे० मे०।

अजकर्णः–
अजकर्णकः–
अजकर्णक–
–सं० पु० हिं० संज्ञा पु० बकरा के कर्ण के समान पत्र वाला शाल वृक्ष विशेष, असन र० मा०। बालसर्ज। रत्ना०। इसका प्रसिद्ध नाम पीतशाल है। (Indian kino tree) आसन, विजयसार, साल का पेड़–हिं०। आसना, पियासाल–बं०।

गुण—कटु, तिक्त, कषाय, उष्णवीर्य, कफ, पाण्डु, कर्णरोग, प्रमेह, कुष्ठ, विष बिकार तथा व्रण-नाशक है। भा० पु० १ भा० वटा० ब०। (Sal tree) सर्ज वृक्ष, साखू। रा० नि० व० ६। महा सर्ज तरु, शाल का एक भेद है। महा साल वृक्ष। सु० सू० अ० ३८। ५ गण: ड।

अजकर्णशाल–हिं० संज्ञा पु० Thesal tree (Shorea robusta *Gœrtn*) साल, साखू।

अजका–सं० स्त्री० १–(Scrofulous disease of the goat) अजागलस्तन (बकरे का गलगण्डरोग। देखो–गलस्तन। २–छाग पुरीष, लेंड़ी (Goat's dung)। ३—((A young she-goat)। ४—जो शुक्र कुछ तांबे के से रंग का, पिच्छिल, रक्तस्रावी, कुछ तांबे के से रंग की फुन्सियों से युक्त, अत्यन्त वेदना सहित बकरी को मैथुनों के सदृश ऊंचा और कृष्ण वर्ण का होता है, उसे अजका कहते हैं। यह रक्त से उत्पन्न होता है। और असाध्य भी है। वा० उ० १० अ०। (५) शुक्ल तुलसी (Ocimum album, *Linn*) इं० मे० मे०।

अजकाजात–हिं० संज्ञा पु०
अजकाजातम्–सं० क्ली०
} आँख में होने वाली लाल फूली जो पुतली को ढक लेती है। टेंटड़ वा ढेढड़। नाखूना। चक्षु तारा में होने वाला रोग विशेष काले भाग में बकरी की सूखी लेंड़ी के समान पीड़ायुक्त लाल तथा गाढ़े आँसुओं को बहाने वाली शुक्र (फूली) की वृद्धि होती है उसको अजकाजात नामक शुक्र जानना चाहिए। यह तृतीय त्वचा में प्राप्त होती है, इससे इसमें मेदा की वृद्धि होती है। मा० नि०। नेत्ररोगाधिकार। रोग० निदा०। टेरीजियम् Pterygium–इं०। नाखुनह्, नाखूनह्–फा० ज़ुफरह्, ज़फरह्–अ०।

अजकूह–अ० बामनी। बमनी। (A red tailed lizard)

अजकेशी–सं० स्त्री० नीलीवृक्ष, नील (Indigofera tinctoria, *Linn*) वै० निघ०।

अजखींस–अ० बछड़ा (A calf)

अजग–स० राई, सरसों, सर्षप। (Sinapis dichotoma)

अजगर–हिं० संज्ञा पु० [स०] A largeserpent, the boa constrictor बकरी निगलने वाला साँप, बहुत मोटी जाति का साँप जो अपने शरीर के भारीपन के कारण फुरती से इधर-उधर डोल नहीं सकता और बकरी तथा हिरन ऐसे बड़े पशुओं को निगल जाता है। ओर सर्पों के समान इसमें विष नहीं होता। यह जन्तु अपनी स्थूलता और निरुद्यमता के लिये प्रसिद्ध है

अजगरः–स० पु०
अजगर–हिं० संज्ञा पु०
} सर्प विशेष, बहुत मोटा साँप। A large serpent (Boa constrictor) who is said to swallow goats। मद० १२। १०६। बिलेशय (अर्थात् बिल में रहने वाला) मृग बिशेष।

पर्य्या—शंयुः, बाहनः, (अ०)। यह अर्श (बवासीर) में हितकारी हैं। सु० सू० ४६ अ०।

अजगल–दे० अजागल।

अजगलिका–हिं० संज्ञा स्त्री०
अजगल्लिका–सं० स्त्री०
अजगल्ली–सं० स्त्री०
} बर्बरी वृक्ष, वनतुलसी। बाबुई तुलसी–बं०। (Ocimum album, *Linn*) भा० पू० १ भा० पु०। क्षुद्ररोगान्तर्गत बालरोग विशेष। यह कफ, वात जन्य होता है। वा० उ० ३१ अ०। बालकों के चिकनी, शरीर के समान वर्ण की, गठीली, पीड़ा रहित, मूंग के दाने के बराबर छोटी पिडिका (फुन्सी) जो कफ और वात के प्रकोप से शरीर पर निकलती है। उसको अजगल्लिका कहते हैं। मा० नि० क्षुद्ररो०।

अजगव–हिं० सं० पु० दे०–अजकव:

अजकव:–बं० सं० पु० क्ली० शिव ना धनुष (The bow of Shiva)

अजगुत–हिं० वि० अद्भुत, अचरज।

अजगुर–हिं० सं० पु० एक बूटी है। जौं एक से १॥ बालिश्त ऊंची होती है। इसमें तुलसी सदृश पत्र एवं मंजरी लगती है। स्वाद अत्यन्त तिक्त।

गुण—विषमज्वर में इसके पचाङ्ग का येन केन प्रकारेण उपयोग लाभदायक होता है।

अजगंधा–हिं० सं० स्त्री० [सं०] अजमोदा (Apium involucratum' *Roxb*)

अजगन्धा
अजगन्धिका
} सं० स्त्री० हिं० संज्ञा स्त्री० (१) वनयमानी, जंगली अजवाइन, क्षेत्रयमानी (Seseli Indicum'll. & A.) अम० रत्ना०। (२) पर्य्या—वस्तगंधा खरपुष्पा, अविगंधिका, उग्रगंधा, ब्रह्मगर्भा, ब्राह्मी पूतिमयूरिका सं०। रामतुलसी हिं०। (Ocimumgratissimum' *linn*) गुण—कटु, तीक्ष्ण, रूक्ष, हृद्य, अग्निवर्द्धनी, दृष्टिह्रासकारणी, लघु, शुक्र, वात एवं कफनाशनी है। मद० व० १। (३) (Ocimum album' *linn*) वन तुलसी का पौधा, ममरी, बर्बरी, बबई हिं०। तिलोणि। मद० रानतुलसी, तिलवक म०। रा० नि० व० ४। गुण प्रभाव लघु, रूक्ष, हृद्य वात, एवं कफ नाशक। मद० ब० १। वयमानी। च० द० वि० ज्व०। 'नीलनोभव गन्धाह्व ,,। नीलपुनर्नवा, फोफान्दी वनयमानी। च० सू० ४ अ०। च० सू० २ शिरो० वि०। वा० चि० १५ अ० उ० २२ अ०।

अजगंधनी–सं० स्त्री० हिं० संज्ञा स्त्री० मेढासिंगी। मेषशृंगी (Helicteris isora' *Linn*) गाड़ल शिङे बं०। र० मा०। (२) काकड़ासिंगी (Rhus succedanea' *Linn*)

अजघोषः–सं० पु० सन्निपात ज्वर भेद। लक्षण—शरीर में बकरेके समान गन्ध आये कन्धों में पीड़ा हो गले का छिद्र रुक जाय और नेत्र लाल हो जांय ये सब लक्षण जिस ज्वर वाले को हों उस को "अजघोष सन्निपात से पीड़ित जानना भा० म० १ भा०।

अजज्र–अ० फजूह, चतुर्थ कोष्ट (Fourth ventricle)

अजजीव:
अजजीविक:
} सं० पु० (A goatherd) गड़ेरिया।

अजटा–सं० स्त्री० भूँई आमला, भूम्यामलकी (Flacourtia Cataphracta *Roxb*)। रसे० चि० अर्शः अग्निमुख लौह।

अजड़–हिं० वि० [सं०] जो जड़ न हो। चेतन। (Not stupid) संज्ञा पु० चेतन। चेतन पदार्थ।

अजड़ा–सं० स्त्री० भूम्यामलकी, भुँई आमला (Phyllanthus niruri *Linn*) (२) कोंच, केवांच, कपिकच्छु हिं०। आलाकूशी, शुश्रा, शुम्बा बं० Corpopogon pruriens। भा० पू० गु० व०। (३) लालमिर्च कुमरिच हिं० लङ्का मरिच, बं०। Capsicum annuum *Linn*) अत्रि०।

अजड़ा फलम्–सं० क्ली० शुकशिम्बीफल, कोंच केवाँच हिं० Corpopogou pruriens (Pod of--) च० चि० २ अ० वृष्य क्षीर।

अजथ्या-सं० स्त्री०हिं० संज्ञा स्त्री० पीलीजूही, स्वर्ण यूथिका ,पीले रंग की जूही का पेड़ और फूल। A plant (Yellow jasmin) (२) पीली चमेली, जर्द चमेली (Jelsimium) (३) छाग समूह (Flock of goats) वै० श०।

अजद-अ० (A crow) कौआ। काग (२) मवेज (मुनक्का)। (३) तुख्म (बीज) अंगूर (४) मुनक्का सदृश खजूर का एक भेद (A kind of date)

अजदग्धी-सं० स्त्री० बड़ी रास्ना।

अजदण्डी-सं० स्त्री० ब्रह्मदण्डी (Echinops echinatus' *D. C.*) इं० मे० मे०। फा० इं० २ भा०।

अजदर्द-बर० हिन्दूकूकी। विषखपरा।

अजदहा-फा० अजगर बड़ा मोटा और भारी सांप (poa costrictor)

अजदहा-हिं० सं० पु० [फा०] अजगर।

अजदाद-एक प्रकार का कपूर जो गदला और नीला, मैला होता है।(A kind of camphor)

अजदू-फा० निर्यास, गोंद (Gum)

अजदूब-बर० अज्ञात।

अजदूय-बरब० कायफल। अजूरी। (Myricana-gi' *Thunb*)

अजदूये ताजा-फा० (Gumacacia) बबूर गोंद।

अजन-हिं० वि० [सं०] जन्म रहित। अजन्मा। अनादि। वि० [सं०] निर्जन शुनसान।

अजनस-अ० मोटा बलवान ऊंट(Fat camel)

अजनह-अ० गालों का उभार। जल का दर्या व गंध बदल जाना।

अजनाब-अ० जनब का बहु व० अर्थ पुच्छ (दुम) है। टेल (Tail) इं०।

अजनाबुलखील-अ० लिह यितुत्तीस। यह एकपौधा है। जो बिदेशों में उत्पन्न होता है इसके लक्षण में मतभेद हैं।

अजनामकम्-सं० क्ली० मक्षिक (Ferri Sulpuratum) हे० च०।

अजनुलफील-अ० राकस गडु द०। (Bryonia epigæa *Rovl.*) इसकी जड़का मरहम गठिया को दूर करता है। इं० हैं० गा०।

अजन्ता-हिं० संज्ञा स्त्री० कुम्बी-पं०।

अजन्तुजग्धः-सं० त्रि० अकीट भक्षित। च० द० अ० सा० चि० कुटज पुट पाक।

अजन्म-, अजन्मा- } हिं० वि० [सं०] (Unborn unhegotten) जन्मरहित।

अजप-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) A shepherd बकरी भेड़ पालने वाला। गँड़ेरिया। (२) A butcher कसाई।

अजपत्री-सं० स्त्री० रीज़ा।

अजपा-हिं० संज्ञा पु० [सं०] A shepherd बकरियों का पालक। गँड़ेरिया।

अजपादः-सं० पु० पञ्जोरी। Anisochilus carnosus (Thick leaved lavender) इं० मे० मे०।

अजपालः-सं० पु० (A butcher) कसाई।

अजपा वरुणः-सं० पु० अश्मरीघ्न, पाशुघ्न, बरुण। Cratævantrvala or C. religiosa *Forsk* (Three leaved caper) इं० मे० मे०।

अजप्रिया-सं० स्त्री० बदरी या बेर वृक्ष (Zizyphus jujuba *Lamk.*) भा० पू० १ भा० फ० व०।

अजफ-अ० खूस खजूर नारियल आदि वृक्षों के पत्तों को कहते हैं। जिसके पत्ते लम्बे व बारीक हों।

अजफ-अ० (Thinness) हजाल। लागरी। दुबलापन। दौर्बल्य। कार्श्य।

अजफारुज्जन-अ० कर्नपात। एक बूटी है जिसमें फूल और पत्ते नहीं होते। वर्ण—श्यामाभायुक्त धूसर। यह बूटी नख से चुनी हुई वस्तु के सदृश होती है।

अजफारुत्तीव-अ० नख-हिं०। नाखून परियाँ, नाखून

देव, नाखून ख़िरस, नाखून सदफ-फा० । सीपी के किस्म का एक कठोर वस्तु है जो समुद्र तट के निकट पाई जाती है । यह नख सदृश गोलाकार एवं सुगंधियुक्त होती है और सुगंधियों में प्रयुक्त होती है ।

ख्याल किया जाता है कि यह भी घोंघे सीपी आदि के सदृश किसी समुद्री जीव का कोष है ।

अज़फ़त्-वामनी, वभनी । (A red tailed lizard)

अजब-अ० (१) कालादाना, हब्बुल्नील । तुख्मे-नील-फा० । फार्बिटिज-निल Pharbitis nil *Choisy* (seeds of-kaladana) (२) आश्चर्यजनक बात, अनोखी बात, अनोखापन-हिं० ।

अज़ब-अ० (१) मीठा पानी, मीठी वस्तु । (२) एक वृक्ष का नाम । (३) एक वस्तु जो बच्चा उत्पन्न होने के पश्चात् जरायु से निकलती है ।

अजब-अ० स्त्री रहित पुरुष अथवा पुरुष रहित स्त्री

अजवभ्रु-सं० वह वृक्ष जिस पर बकरियां चराई जाती हैं । जैसे—वरगद, बेर, पीपर आदि । अथ० ।

अज़वह्-अ० बेवा, रांड़, वह स्त्री जिसका पति मर गया हो । विडो Widow-इं० ।

अज़बह्-अ० (१) छोटी माई, माई खुर्द, छोटे झाऊ का फल । (Tamarix orientalis, *Valh*) (२) मीठा पानी । (३) काई । (Moss) फा० इं० ।

अज़बर-फा० छोटी माई का वृक्ष । (Tamarix orientalis; tree of-)

अजवला-सं० स्त्री० कृष्ण तुलसी (Ocimum sanctum, *Linn*) वै० श० ।

अजबू-सं० सुगन्धवाला (Pavonia odorata, *Willd*)

अज़बूतह्-अ० यरबूअ मादह, घूँस मादा, चुहिया, मूस (Rat, mouse)

अजभक्त-हिं० संज्ञा पु०

अजभक्तः-सं० पु० १—(Acacia arabica, *Linn*) बबुरी वृक्ष, ववूल का भेद जिसे बकरियां अधिक चाव से खाती हैं । बबूल बावर-बं० । रा० नि० व० ४ ।

अजभक्ता-सं० स्त्री० छोटा धमासा । क्षुद्र दुरालभा (Nut of) रा० नि० व० ४ ।

अजम-अ० १—(Fruitstone) फलों की गुठली । २—(Young-one of camel) ऊँट का बच्चा ।

अज़म-अ० पुश्त पञ्जह । कब्जा ।

अज़म-हड, हरीतकी (Terminalia chebula, *Retz*)

अजमह्-अ० खजूर का वृक्ष जो बीज से निकलता है । खजूर का गाभा (Shoot of Date tree)

अजमद-सं० यवानिका, अग्निवर्द्धन, दीप्यक । अजवाइन-हिं० । (Ptychotis Ajowan *D. C.*) । वोमम (सीड्स) Omum (seeds), बिशप्स वीड (Bishop's weed)-इं० । इं० मे० मे० ।

अजमलः-सं० पु० (Common wheat) गोधूम । गेहूं । गम्-बं० । प० मु० ।

अजमसी-अ० (A kind of small date) छोटा खजूर भेद ।

अजमा-गु० अजवाइन, Carum (Ptychotis (Ajowan, D. C.)

अजमाय-अ० (१) क्वाड्रुपेड (Quadruped) इं० । चारपाए, चतुष्पदजीव । (२) सतरान्

अजमारः-सं० पु० (A butcher) कसाई ।

अजमालूस-सिर० अजवाइन खुरासानी (Hyoscyamus nigrum, *Linn*)

अजमांसम्-सं० क्ली० (Goat's flesh) बकरे का मांस । देखो—छागमांसम् । वा० सू० ६ अ० ।

अजमूत्-बरब० रीठा, अरिष्टक, अरीठा । Soap nut tree (Sapindus trifoliatus *Linn*)

अजमेई-द्रा० इं० चाय । Tea plant (Gardenia theifera)

अजमो–गु० (१) अजमोदा (APium involucartum) (२) अजवाइन (carum-Ptychotis Roxburghianum *Benth*)

अजमोदः-सं० पु० अजमोद–हिं० संज्ञा पु० } Carum Ajowan *D. C.*) दीप्यक । वा० सू० ३५ अ० वत्सकादि० व० । देखो—अजमोदा (Apium involucratum.)

अजमोदा–दिका Carum–सं० हिं० स्त्री० बोड़ी अजमोद, आजूमूद, आजुमूदा, अज्मदू । आज्-मूदह, आजुमूदह,-अज्वान-द० ।, संस्कृत पर्याय–अजमोदा, खराश्वा, मयूर, दीप्यक, ब्रह्मकुशा, कारवी, समस्तका, खाङ्गा, वस्तमोंदा, मर्कटी, मोदा, गंधदला, हस्ती, गंधपत्रिका, मायूरी, शिखिमोदा, मोदाख्या, वह्निदीपिका, ब्रह्मकोशी, विशाली, हृद्यगंधा, उग्रगंधिका, मोदिनी, फलमुख्या, मयूरका, दीप्यका, वह्नी, लौमकर्कटी, रोमककेट, यबान, कृमिरोगजित, दीप्यवल्ली मर्कटी, कराङ्गा, ककंटा, लोचमस्तका, यवानिका, मेध्यदा, विंशत्या, हस्तिकाबरी, हय-गंधा, उग्रगंधा, बनयमानी, हस्तिकारवी । रांधनी, आजमूद, बनयमानी, चन्, वन्योवान–बं० । करफ्से-सखरी,करफ्सुलू-जिबली,करफ्सुल्भक्दूनी, वज्रुल-करपस-अ० । करफ्से कोही, करफ्से मक-दूनी, करफ्से-हिन्दी, तुख्मे-करफ्स फा० । वित्रा-सालियून, (फित् रासालियून-अ० कृ०)–यू० केरम (टाइकोटिस्) राक्सवर्ग्यानम् Carum (Ptychotis) Rxburghianum. *Benth'* एपिअम इन्वाल्युक्रेटम् Apium Involucratum' *Roxb* (Friut of) एपिअम पेट्रोसेलिनम Apium petroselinum पेट्रोसेलिनम Petroselinum' ए० ग्रेवियोलेन्स A. Graveolens' *Linn* पिम्पिनेला इन्वाल्युक्रेटा Pimpinella involucrata लिग्युस्टिकम् अज्वान Ligusticum ajWaena.-ले० । सेलेरी (सीड) Celery (seed), वाइल्ड सेलेरी (wild celery) पार्स्ले (Parsley) इं० । सेलेरी Celeri–फ्रां० । अशम-तागम्, अशम्ता ओमम्-तां० । अजमोदं-वोमम्, अशु-मदागवोमम्, आजमोदा, बामम्–ते० । आजमो-दार्वोमा अजमोदा–कना० । अजमोदा-मह०, कर्णा० । अजमोदा-बोवा-मह० । बोडी अजमो, वौडी-अजमोदा, अजमो-गु० । अजमुद,बोडी-अजमोदा–व०, पं० । अजवान के पत्ते, बुडी-अजिवाइए–कच्छ । भूतघांट–पं० ।

अम्बेलिफेरी अर्थात् छत्रो वर्ग

(*N. O. Umbelliferae*)

उत्पत्तिस्थान–उत्तरी पश्चिमी हिमवती पर्वत मूल, पञ्जाव की वाह्य पहाड़ी पश्चिमी भारवर्ष और फ्रांस ।

इतिहास—अजमोदा का वर्णन लगभग सभी प्राचीन एवं अर्वाचीन आयुर्वेदीय ग्रन्थों में पाया जाता है अरव के लोगों ने इसका ज्ञान सम्भवतः यूनानियों से प्राप्त किया । हकीम दीसकरीदूस (Dioscorides) ने पांच प्रकार के करफ्स का वर्णन किया है । थीओफ्रैस्टस (Theo Phrastus) ने सीलिनान (करफ्स) नाम से इसका वर्णन किया है । मीरमुहम्मदहुसेन लिखते है कि करफ्स (अजमोदा) को अङ्गरेजी में सेलरी (Celery) तथा यूनानी में ऊदसा-लियून कहते हैं । वह इसके तीन अन्य भेदों का भी वर्णन करते हैं । जिनमें (१) सखरी जिसको यूनानी में फितरसालियून, (२) नवती जिसको यूनानी में अकूसालियून और (३) तरी जिसको यूनानी में शमरीनियून कहते हैं । वास्तव में ये क्या है ? इसका निश्चय करना अति दुःसाध्य है । वम्बई में 'फितरासालियून' नाम से जो औषधि विकती है यह पहाड़ी सोंफ है जिसको हिन्दी में कोमल कहते हैं । परन्तु वह बीज जो ईरान से वम्बई में आकर करंफ्स नाम से विकता है उसको वहां 'बड़ा अजमोद' कहते हैं ।

वानस्पतिक विवरण—अजमोदा अजवाइन ही का एक भेद है । इसके उप अजवाइन के ही

समान होते हैं। इनकी शाखाओं पर बड़े २ छत्ते से लगते हैं। उन पर श्वेत रंग के पुष्प आते हैं और जब ये छत्ते पक और फूट जाते हैं तब उनमें से जो दाने उत्पन्न होते हैं वे छत्तों से अलग होते हैं। उनको अजमोद कहते हैं। करफ्स या बड़ी अजमोदा जो फारस से बम्बईमें आता है वह एक अति सूक्ष्म फल होता है। यह गोलाकार और चिकना होता है स्वाद-प्रथम सौंफ के समान पुनः कड़ुआ। गंध सौंफ के समान किन्तु उससे निर्बल

प्रयोगांश—बीज तथा मूल।

रासायनिक संगठन—(१) गंधक (२) एक उड़नशील तैल, (३) अल्ब्युमीन (४) लुआब तथा (५) लवण। इसमें से एक प्रकार का कर्पूर निकलता है जिसेएपिओल (Apiol) कहते हैं।

औषध निर्माण—चूर्ण, क्वाथ, परिश्रुत औषधीय जल, (अर्क) आदि।

अजमोद के गुणधर्म तथा प्रयोग।

आयुर्वेद की दृष्टिसे—अजमोद शूल प्रशमन और दीपन है। (च०) वातकफनाशक, अरुचि नाशक, दीपन, गुल्मशूलनाशक और आमपाचक है। सु०।

अजमोद, चरपरा, गरम, सूखा, कफवातनाशक और रुचिकारक है। तथा शूल, अफरा, अरोचक और उदर रोग का नाश करने वाला है। (रा० नि० व० ६)

अजमोद चरपरा, तीक्ष्ण, अग्निदीपक, कफ, तथा वात को नष्ट करनेवाला, गरम, दाहकारक हृदय को प्रिय वीर्यवर्द्धक, बलकारक (कहीं कहीं 'बद्धमला' अर्थात् विबंधकारी पाठ है)और हलका है तथा नेत्ररोग, कफ, (कहीं कहीं कृमि पाठ है) वमन, हिचकी, तथा वस्तिशूल नष्ट करने वाला है। मद० व० २, भा० पू० १ भा० ह० व० सि० यो० अग्निमांद्य चि०।

अजमोद रुचिकारक, दीपन, चरपरा रूखा, गरम, विदाही, हृदय को प्रिय, वीर्यवर्द्धक, बलकारक, हलका कड़वा, मल स्तम्भक, ग्राही और पाचन है तथा अफरा, शूल, कफ, वात, अरोचक, उदर के रोग, कृमि, वमन नेत्र रोग, वस्ति दन्तरोग, गुल्म और बीर्य के बिकार को दूर है। (नि० र०)

अजमोदार्क के गुण

अजमोद का अर्क वात, कफनाशक और शोधक है।

यूनानी ग्रन्थकारों की दृष्टि से अजमोद

गुण-धर्म व प्रयोग।

स्वरूप—काला। स्वाद-तीखा और

प्रकृति—१ कक्षा में उष्ण और २ कक्षा रूक्ष है।

हानिकर्ता—गर्भवतीतथा दुग्ध पिलाने स्त्रियों और उष्ण प्रकृति व मृगी के रोगियों

दर्पनाशक—अनीसून और मस्तगी।

प्रतिनिधि—खुरासानी अजवाइन।

मात्रा—६ मा० से ६ मा० तक।

गुणकर्म व प्रयोग—समस्त श्लेष्मज शीतजन्य रोगों के लिये विशेषकर लाभदायक

यह तीक्ष्ण तथा कड़वा है, इसलिये उ मुकत्तअ (काटने छाटने वाला) और तीव्र उद्घाटक है। यह आध्मान लयकर्त्ता। रोध घाटक और स्वेदजनक है। तथा श्लेष्मा वायुजन्य वेदनाशामक है। मुख की गंध अत्यंत सुगन्धि युक्त बनाता है। क्योंकि मसूड़ों तालु' कब्बे तथा आमाशय की दुर्गन्ध एव सड़ी गली रतूबतों को लयकर्त्ता तथा छाँटता है। अपस्मार के लिये हानिकारक है अपस्मार रोगियों के दोषों को कुपित करता क्योंकि आमाशय को गर्म करता है और उ वाष्पोद्भूत करनेवाला उत्ताप उत्पन्न कर देत जिससे तीव्र धूम्रमय वाष्प उत्थित होता है समय यह मस्तिष्क तक पहुँचता है उस घनीभूत होकर वायुबन जाता है। इसी से स्मार पैदा होता है। इसके अतिरिक्त यह शि और मलों को भी चढ़ाताहै किसी २ के मतानु मल नलिकाओं को खोलने के कारण यह शय, शिर तथा जरायु की ओर तीव्र रतूबतों को शोषण करता है। इस हेतु

को हानि करता तथा कास को लाभ पहुँचाता है। यकृत, प्लीहा, वृक्क तथा वस्ति के लिये लाभदायक है, जलोदर और मूत्रावरोध को दूर करता है। अश्मरी को टुकड़े टुकड़े कर डालता है, क्योंकि इसमें तक्तीअ (मवाद के छांटने) रोध उद्घाटक तथा रेचक शक्ति पाई जाती है। रजः प्रवर्त्तक होने के कारण गर्भवती को हानिकर्ता है और इसी कारण तीव्र मवाद एवं तीव्र रतूबतों से गर्भाशय को पूरित कर देता है। जिस समय यह भ्रूण के आहार में सम्मिलित हो जाता है उस समय उसके शरीर में खराब फुन्सियां तथा दुष्टव्रण उत्पन्न हो जाते है चाहे ये जन्म के बाद ही क्यों न प्रगट हों। अपनी रोध उद्घाटनी शक्ति के कारण यह गरम मवाद को शुक्राशय की ओर गति देता है, अस्तु यह कामोद्दीपनकर्ता है जिससे कामेच्छा को उत्तेजना मिलती है। (नफा)

अजमोद श्वास, रुक्कास और आन्तरिक अवयव के शीत को गुण करता, यकृत और प्लीहा के रोध को खन्डन करती, अत्यन्त मूत्रप्रर्वतक क्षुधा और ओज को चालन करता है, इसकी जड़ सम्पूर्ण कफज रोगों को लाभ करती तथा अहार को पचाती और जलोदर को गुण करती है यह प्रभाव में अपने बीज से बलवान हैं। जौ के आटे के साथ इसका लेप शोथ को लय करता है तथा पार्श्वशूल और वान्तिनाशक है।

डाक्टरी एवं अन्य मत

अजमोद के पत्तों को कुचल कर स्तन में लगाने से दुग्ध स्राव अवरुद्ध हो जाता है। (तुकिन) यह जख्मी नेत्रों में पुल्टिस रूप से उपयोग में आता है। अजमोद की जड़ का वृक्क पर लाभदायक प्रभाव होता है। इं० मे० मे०

अजमोद बदहजमी और दस्त की बीमारी में अत्यन्त उपयोगी है। तथा खराब स्वाद वाली दवा अजमोद के पानी के साथ देने से उल्टी आने की सी शंका नहीं होती। ये सब दवायें पेट में शूल होने की सी शंका होने को बंद करती हैं। यह अत्यधिक लाला स्रावक है। इससे पाचक रस अधिक उत्पन्न होते हैं, उदरशूल नष्ट होता है तथा पाचन शक्ति बढ़ती है। गले के भीतर की सूजन पर भी अजमोद को अन्य ग्राही पदार्थों के साथ मिलाकर उपयोग करना हित है। (डा० वीडी)

अजमोद तेल अर्थात् एपिओल (Apiol)

नाट आफिशल (Not official)

लक्षण—यह एक पीतवर्ण का तैलीय द्रव है जिससे विशेष प्रकार की गन्ध आती है।

स्वाद—तीक्ष्ण एवं अग्राह्य।

घुलनशीलता—यह जल में तो नहीं घुलता किन्तु हलाहल (Alcohol) और ईथर में सरलतापूर्वक घुल जाता है।

मात्रा—३ से ५ मिनिम (बूंद)

उपयोग-विधि—इसको साधारणतः कैप्स्यूलज में डालकर देते हैं।

नोट—स्फटिकवत् एपिओल (कर्पूर अजमोदा), इसको भी उक्त तेल के स्थान में उपयोग करते हैं।

प्रभाव व प्रयोग—एपिओल को रजःप्रवर्त्तक तथा मूत्रजनक रूप से रजःरोध तथा बाधक वेदना और वृक्क आदि रोगों में (२-३ बूंद की मात्रा में कैप्सूलज या शर्करा के साथ) बर्तते हैं। कहते हैं कि विषम (मलेरिया) ज्वरों में भी यह लाभदायक होता है, पर डाक्टर डाइमाक महोदय के अनुसार इसकी परीक्षा करने पर निम्न इन्द्रियव्यापारिक क्रियाएँ संपादित होती हैं। यथा—शिरोवेदना, मदकारी वाद को बारम्बार खाने की इच्छा, पाचन बिकार, क्षुधा का नष्ट हो जाना और ज्वर आदि। सूक्ष्म मात्रा में एपिओल आपस्मारिक मूर्च्छा के लिये गुणदायक बतलाया जाता है। इं० मे० मे०।

नोट—यूनानी हकीम भी क़िंतरासालियून को मूत्रविरेचक, रजःप्रवर्तक तथा वृक्क, वस्ति एवं गर्भाशय के लिये लाभदायी जानते हैं तथा उसे उन्हीं गुणों के लिये उपयोग में लाते है।

योग निर्माण—(१) क्विनीन सल्फेट १ ग्रे०

एपिओल $\frac{1}{3}$ ग्रेन ($\frac{1}{6}$ रत्ती) पर्मैगनेट आफ पोटास $\frac{1}{8}$ रत्ती ($\frac{1}{16}$ ग्रेन) इनको मिला कर बटिका प्रस्तुत करें। यह १ मात्रा है।

गुण—ज्वर सहित रजःरोध तथा मलेरिया ज्वर में लाभ होता है। इं० मे० मे०।

(२) एक्सट्रैक्टम अर्गोटी आधी रत्ती (१ ग्रेन), एपिओल ३ मि नेम (बूंद)

उपयोग-विधि—इन दोनों औषधों को एक खाली कैपसूल में डालकर खिलादें और ऐसा एक एक कैपसूल दिन में ३ बार दें।

गुण—रजः रोध तथा बाधक वेदना में लाभदायक है।

अजमोदाख्या–सं० स्त्री० (१) वनयमानी, बन अजवाइन। क्षेत्रयमानी, खेतपापड़ा। रत्ना०, बृहत् लवंगादि चूर्ण। (२) यमानी, अजवाइन, Carum (Ptychotis) Ajowan, *D. C.*। रा० नि०।

अजमोदादि गुटिका–सं० स्त्री० अजमोद, मिर्च पीपल, चित्रक, वायविडंग, देवदारु, सोआ के बीज, सेंधा लवण, पीपलामूल इन्हें ६ पल और सोंठ १० पल, विधारा १० पल दन्ती (जमालगोटा की जड़) ५ पल इनका चूर्ण कर चूर्ण के बराबर गुड़ मिला गोलियां बनायें।

मात्रा—२–६ मा०। इसे गर्म जल से उपयोग करने से समस्त वात रोग दूर होते हैं।

(योगचिन्तामणि)

अजमोदादि चूर्ण—सं० पु० अजमोद, वायविडंग, सेंधा नोंन, देवदारु, चित्रक, पीपरामूल, सोंफ, पीपर, मिर्च, इन्हें कप कर्ष भर लें। हड़ ५ कर्ष विधारा १० कर्ष, सोंठ १० कर्ष इन्हें चूर्ण कर गुड़ पुराना मिश्रित कर उष्ण जल से खानेसे शोथ आमवात, सन्धिपीड़ा (गठिया) गृध्रसी, कटिपीड़ा, पीठ, जांघ की पीड़ा, तूणी, प्रतितूणी, वायु, विश्वाची, कफ रोग तथा वायु के रोग दूर होते हैं शार्ङ्ग० सं० मध्य० खं० अ० ६। यो० चि० म०।

अजमोदाद्य वटकः–सं० पु० अजमोदादि गुटिका

(१) अजमोद १ सेर, हड़, बहेड़ा, आमला सोंठ मुलतानी, बिदारीकन्द, धनियां, मोंथा, मो रस, गजपीपल, लौंग, जायफल, पीपर, चि अनारदाना, भारंगी, कमलगट्टा, मिर्च, जीरा, कुटकी, अजवाइन, पीपरामूल, बायविडंग, बच, कायफल, पित्तपापड़ा, वि दन्ती की जड़, कुरदानासार इन्हें १-१ तोला चूर्ण व कपड़छान कर इसमें २० सेर का गुड़ एक सेर मिलाकर पाक विधि से एक तोला प्रमाण गोलियां बनाएं। इसे उष्ण उपयोग करने से पेट का भारीपन, कब्ज उदर विकार दूर होते हैं।

(२) अजमोद, त्रिफला, बिदारीकन्द, धनियां, मोचरस, मोंथा, गजपीपल, लौंग, फल, पीपल, विजया मुलतानी, अनारदाना, जीरा, चित्रक, भारंगी, कमलगट्टा, कोंच मुलहठी, शिलाजतु, काकड़ासिंगी, केशर, केशर, पुष्करमूल, शतावर, इन्हें ६-६ मा० पुनः चूर्ण कर कपड़छान करें। पश्चात् ४ गौदुग्ध में औटायें जब एक सेर शेष रहे मिश्री की चाशनी कर, उक्त चूर्ण मिला प्रमाण गोलियां बनाएँ। इसके सेवन से वृद्धि होकर बल बढ़ता है। (अमृ० सा०)

(३) अजमोद १२ भाग, चित्रक ११ हड़ १० भाग, कूट ९ भाग, पीपर ८ भाग, ७ भाग, सोंठ ६ भाग, जीरा ५ भाग, सेंध ४ भाग, वायविडंग ३ भाग, बच २ भाग, १ भाग। इन्हें चूर्ण कर चूर्ण से द्विगुण गुड़ मिलाकर ७॥ टं० प्रमाण गोलियां इसके सेवन से अनेक प्रकार के वात प्रकार के हर्ष रोग, १८ प्रकार के गुल्म, के प्रमेह दूर होते हैं। तथा यह हृद रोग, कुष्ट, वायु, गुल्म, गलग्रह, श्वास, पांडु, अग्निमांद्य, अरुचि, इत्यादि करती है।

(४) अजमोद, मिर्च, पीपर, वायविडं दारु, चित्रक, शतावरी, सेंधालवण,

इन्हें चार चार तोला लें। सोंठ ४० तो०, विधारा ४० तोला, हड़ २० तोला इन सबका बारीक चूर्ण बनाएँ और सर्व तुल्य पुराना गुड़ मिलाकर १ तोला प्रमाण गोलियां बनाएँ। इसको उष्ण जल से सेवन करने से आमवात, विश्वाची तृणी प्रतितूणी, हृद्रोग, गृध्रसी, कटि, बस्ति, गुदा-स्फुटन, शोथ, सन्धिपीड़ा इत्यादि रोग दूर होते हैं चक्र० द० उरुस्तम्भ० चि०। वं० से० सं०। भै० र०।

अजमोदिका–सं० स्त्री० अजमोदा (Ajamoda)

अजम्भः–सं० पु० (१) भेक (कृष्णाभ्र, मेंढक) श० र०। See-bheka (२) बे दांत का बच्चा। दन्त रहित। बिना दांत का।

अजय–हिं० वि० [सं०] (Not victorious, unsuccessful Subdued) जयरहित, अकृतार्थ। हिं० संज्ञा पु० पराजय, हार।

अजयपाल–हिं० संज्ञा पु० [सं०] जमालगोटा। (Croton tiglium, *Linn*)

अजया–सं० स्त्री० (Cannabis Indica, *Linn*) विजया, भंग, भांग, भाषा में इसको सिद्धि कहते हैं। रा० नि० (२) हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अजा] बकरी (Ashegoat)

अजर–सं० त्रि० हिं० वि० [सं०] (१) (Not Subject to old age or decay, ever young) जरा रहित, जो बूढ़ा न हो। (२) [सं० अ=नही+जृ=पचना] जो न पचे, न हजम हो।

अजरकम्–सं० क्लो० अग्निमांद्य, अजीर्ण (Indigestion) सि० यो० कास० चि० वृन्दः। च० द० पांडु चि० योगराज।

अजरद–समुद्रफेन की एक किस्म है। (A kind of cuttle-fish)

अजरन–घोरहे अरमनी।

अजरफ़त–, अजफ़त– } बामनी, वमनी। (A red tailed lizard)

अजरब–अ० छोटा अजदहा (अजगर) Boa constrictor (Small)

अजरम्–सं० क्लो० स्वर्ण Gold (Aurum) रा० नि० व० १३। त्रि० जरारहित। डिवाइड आफ ओल्ड एज (Devoid of old age) –इं०।

अजरह–अ० पायखाना (Latrine)

अजरह–अ० वृक्ष प्रभृति की गिरहें। वृक्ष ग्रन्थि (Node)

अजरा–सं० स्त्री० (१) (A lizard) गृहगोधिका सं०। छिपकी, छिपकली–हिं०। टिकटिकि–बं०। (२) जीर्णफल्गुलता। (३) (Gmelina asiatica, *linn*) वृद्धदारक, विधारा। रा० नि० व० ७। (४) (Aloe indica, *Rog*) गृहकन्या घृतकुमारी, घीकुआर। रा० नि० व० ५। (५) (Corpopogon pruriens) आत्मगुप्ता, कवाँच, कौंच–हिं०। आलाकुशी बं०। भा० पू० १ भा० गु० व०। यु० अर्तकान (हलके पीतवर्ण के संगरेजे होते हैं।)

अजराक–छोटे आलूबुखारा की एक किस्म है। A sort of small variety of Pruans communis

अजरार–नौशादर नुसा(द)र। (Amonii chloridum)

अजरासुल् अजौज–अ० (Tribulus terrestris; *linn*) गोखरू, गोक्षुर (क)।

अजरासुल्कल्ब–अ० खंगाली जो बसफाइज के नाम से प्रसिद्ध है। (Polypodium vulgare *linn*)

अजराशौ–तु० खाक्शो–फा०। खूबकलाँ–हिं०। (Sisymbrium Iris, *linn*)

अजरियून–अ० सूरजमुखी (सूर्य) The Sunflower (Helianthus annuus, *linn*)

अजरूफ–अ० एक कीड़ा अथवा चिउँटी जिसके पैर लम्बे होते हैं।

अजरूम–अ० जल का एक पक्षी है।

अजल–अ० काल, अन्त, अवस्था, मृत्यु, (ए० व०) आजाल (ब० व०)। डेथ (Death) मार्टिफिकेशन (Mortification) इं०

अजल–अ० १–बछड़ा, गाय, का बच्चा, बछवा-हिं०। गो साल्ह्-फा०। (A calf) २–काली मिट्टी (Black clay)

अजल–अ० पृथक करना, भिन्न करना मैथुन में पृथक वीर्यपात करना।

अजलम–अ० नील वृक्ष नीली (Indigofera-Tinctoria 'Linn)

अजलम्बनम्–सं० क्ली० यामुन स्रोतोऽञ्जन, सुर्मा (काला) Antimony। श० च०। देखो अञ्जनम्।

अजलह्–अ० अजलह् मछली–उ०। मांस पेशी, मांस, पेशी। हिं० इसका बहु वचन अजलात है मस्सल (Muscle) (ए० व०) मस्सलज् (Mucles) (ब० व०) इं०।

अजलह अखम इय्यह मुकद्दमह्–अ० मध्यग्रीवा के कशेरुका पार्श्वों से प्रथम पर्शुका तक एकमांस पेशी है स्केलेनस एण्टाइकस (Scalenus-anticus) इं०।

अजलह अरीजह बत्निय्यह–अ० अन्तः-उदरच्छदा पेशी हिं०। ट्रान्सवर्सेलिस एब्डोमिनिस (Transversalis abdominis)-इं०

अजलह आसिरह्–अ० संकोचनी पेशी हिं०। स्फिङ्क्टर (Sphincter) फ्लेक्सर (Fl, exor)–इं०।

अजलह आसिरतुल इस्त–अ० मलद्वार संकोचनी पेशी हिं०। स्फिङ्क्टर एनाई (Sphin cter-ani) इं०।

अजलह आसिरतुल बौल–अ० मूत्रमार्ग संकोचनी पेशी हिं०। कम्प्रेसर युरैथी (Compressor Urethræ) इं०।

अजलहआसिरतुल् मह विल–अ० योनि संकोचनी पेशी हिं० स्फिङ्क्टर वेजायनी (Sphincter vaginæ) इं०।

अजलह इजानिय्यह मुस्तअरिजह–अ० सेवनीस्थल की चौड़ी पेशी जो पेडू के अवयवों को सहारा देती है। ट्रैंसवर्सस पेरिनियाई (Transversus perinæi) इं०।

अजलह इल्वियह् कबीरह–अ० नैतम्बिका महती पेशी-हिं०। ग्लूटिअस मैग्नस (Gluteus magnus) इं०

अजलह् उस्उसियह–अ० पुच्छिका हिं०। कॉक्सीजीअस (Coccygeous) इं०

अजलह् काबह्–अ० हस्त को औंधा या पट करने वाली पेशी। प्रोनेटर मस्सल (Pronator-muscel) इं०

अजलह काविजह्–अ० अजलह उक्लह। संकोचनी पेशी हिं०। (Sphincter)

अजलह जह्रिय्यह अरीजह–अ० पृष्ठच्छदा पेशी वह पेशी जो कटि एवं कुल्हे से लेकर बाजू तक फैली हुई है। लैटिस्सिमस डार्साई (Latissimus dorsi) इं०।

अजलह् जातेरुलासि यतुर्ऊस–अ० त्रिशिरस्का पेशी हिं०। ट्राइसेप्स (Triceps) इं०

अजलह् जातुर्रासैन–अ० द्विशिरस्का पेशी हिं०। बाइसेप्स (Biceps) इं०।

अजलह् तह्तुल्कतफ़िय्यह्–अ० अधः स्कंधिका-पेशी-हिं०। सब्स्केप्युलेरिस (Subscapularis) इं०।

अजलह् तह्तुल् तर्कुवह्–अ० अधः अक्षिका पेशी-हिं०। सबक्लेविअस (Subclaveus) इं०।

अजलह् दालियह्–अ० अंशाच्छादनी पेशी-हिं०। डेल्टाइड (Deltoid)-इं०।

अजलह् वातिहह्–अ० करोत्तानती पेशी-हिं०। सुपाइनेटर (Supinator)–इं०।

अजलह् वासितह्–अ० अजलह् शादह्। प्रसारणी पेशी–हिं०। एक्सटेन्सर (Extensor) –इं०।

अजलह् मुकत्तिबह्–अ० संकोचनी (झुर्री डालने वाली) पेशी–हिं०। करूगेटर (Corrugator)–इं०।

अजलह् मुकर्रिबह्–अ० अन्तरनायनी, अन्तर-वाहिनी–हिं०। एड्डक्टर (Adductor) –इं०।

अजलह् मुवह्इद्ह्–अ० वहिर्नायनी पेशी–हिं०। एब्डक्टर (Abductor)–इं०।

अजलह् मुबब्बिकह्–अ०मुखप्रसारणी, कपोलच्छदा पेशी जो मुख को फैलाती है। बक्सिनेटर (Buccinator)–इं०।

अजलह् मुसन्निनह् कबीरह्–अ० दंष्ट्राकार ऊर्ध्वपार्श्वकीयबृहती, बृहत् दन्दानादार पेशी जो ऊपरी आठ पेशियों के सामने से आरम्भ होकर स्कन्धास्थि के पिछले किनारे तक जाती है। सरेटस मैगनस (Serratus Magnus)–इं०।

अजलह् राफिअतुल् इस्त–अ० गुदोत्थापिकापेशी–हिं०। लीवेटर एनाइ (Levator ani)–इं०।

अजलह् राफिअतुल जन्फ–अ० ऊपरी पलक को ऊपर उठानेवाली पेशी। लीवेटर पैल्पब्रेलिस (Levator Palpebralis), लीवर (Lever)–इं०।

अजलह् सद्रिय्यह् कबीरह्–अ० उरच्छादनी बृहती पेशी–हिं०। पैक्टोरेलिस मेजर (Pectoralis major)–इं०।

अजलह् सद्रिय्यह् सगीरह्–अ० उरःछादनी लघवी पेशी–हिं०। पेक्टोरैलिस माइनर(Pectoralis Minor)–इं०।

अजलह् सद्गिय्यह्–अ० शांखिकी पेशी–हिं०। टेम्पोरैलिस (Temporalis)–इं०।

अजलह् सुलबिय्यह् कबीरह्–अ० कटीलम्बिनी बृहती पेशी–हिं०। सोअस मैग्नस (Psoas Magnus)–इं०।

अजलह् हरकफिय्यह्–अ० श्रोणि पर्विणी पेशी–हिं० इलायकस (Iliacus)–इं०।

अजलोमा-मी–स० पु०, हिं० संज्ञा स्त्री० (१) कौंच, केवांच की बेल, शूकशिम्बी, आत्मगुप्ता। आत्माकुशी–बं०। Cowach (Corpopogon pruriens) र० मा०। (२) महौषधि। देखो—औषधि।

अजल्ल–अ० (ए० व०), जुल्ल (ब० व०), अंगुली का भीतरी अर्थात् हथेली की ओर वाला भाग।

अजवला–म० वनतुलसी-स०। रामतुलसी–बं०। द०। वनजड़ी–हिं०। शूबीबेजिल (Shrubby Basil)–इं०। (Ocimum Gratissimum, *Linn*) इं० मे० मे०।

अजबल्ला–म०
आजबल्ल–सं० } रामतुलसी (Ocimum Gratissimum, *Linn*) फा० इं०।

अजवल्ली–सं० स्त्री० (Helicteris isora, *Linn*.) मेढ़ासिंगी, मेषशृङ्गी। मेढ़ाशिंडे–बं०।

अज्ञवा–तु० (Aloes) एलुवा, कुमारीसारोद्भवा, मुसम्बर।

अजवाइन–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] यवानिका, अजवाइन, (अ) जवान, (अ) जमान, जवाइन–हिं०। अजवान–द०। संस्कृत पर्याय–अजमोदा (–दिका) ब्रह्मदर्भा, क्षेत्र यमानिका, भूतिकः यवनिका, यवनी, यमानीदीप्यः, दीप्या, दीपका, दीप्यका, दीपनी, दीपनीयः, यवजः, यवसाह्वः, यवसाह्वया, यवाग्रजः, उग्रगन्धा, वातारिः, भूकदम्बकः, शूलहन्त्री, उग्रा, तीव्रगंधा, कारवी, भूमिकाः, अग्निगन्धा, अग्निवर्धनी, यवान, हृद्या, ब्रह्मदर्भाह्वयः, यवाह्व। अजोवान, जोवान, योयान, यमानी, अजवाइन, अजवान–बं०। केरम कॉप्टिकम् (Carum copticum, *Benth*) लिग्युस्टिआज्म अजवान (Ligustiasm-ajowan' *Roxb*) केरम (टाइकोटिस) अजोवान Caraum (Ptychotis) Ajowan, *D. C.* (Fruitof-Ajwan fruit) अम्मी कॉप्टिकम (Ammi copticum) ले० किंगज क्युमिन King's cumin' लोवेज Lovaga' विशप्सवीड Bishep's weed, ओमम् Omum (seeds)–इं०। अम्मी डी इण्डी Ammi de l'Inde–फ्रा०। इण्डिस्कीज फाल्टीनोर Indisches faltenohr जर०। नानख़ाह्, कमूने–मलूकी, जिन्यान अ०, फा०,। ओमम, अमन-ता०। ओमसु (–मी) वाममु, वामु-ते०। अयमोदकम, होमम-मल०। बोम, ओमु, ओएड्, ओम, उंडु–कना०

वोबसादा, वोबाअजमा, उंवा–मह० । ओडी अज्वान,, अजमो, जवाइन–गु० । अस्समोदगम, अस्समोद, ओमम–सिं० । समूहूम-वं० । ओमा–तु० । अम्मी, बासलीकून कमूनी (मलुकी] –यु० । चोहरा–कछ० । ओण्डु, ओम्–करना० । ओम–माला० । अजवाइन–पं० जाविन्द–काश० वोवा–बम्ब० । वोवो–को० । लाबिञ्जु ल मिसी मला० ।

अम्बेलिफेरी अर्थात् छत्री वर्ग—
N, O. Umbllifercæ

उत्पत्तिस्थान—एक पौधा जो सारे भारतवर्ष में विशेषकर बंगाल में लगाया जाता है। यह पौधा अफरीका, दकन तथा पंजाब, मिश्र और ईरान (फारस) अफगानिस्तान आदि देशों में भी होता है ।

नाम विवरण तथा इतिहास-यूनानी हकीम डीयोसकोराइडीज (Dioscorides) ने अम्मी (अखोलूस) नामक जिस अफरीकीय औषधि का वर्णन किया है वास्तव में वह यही दवा है। अस्तु हकीम जालीनूस अम्मो और कमूने मलूकी या किंगज क्युमिन (King's cumin) को एक ही दवा मानते है। फारस में भी एक इसी प्रकार का वीज जिन्यान तथा नानखाह के नाम से वहुत प्राचीन काल से प्रयोग में आता था । नानखाह (नान=रोटी+खाह= चाहने वाला) का अर्थ 'रोटी का चाहने वाला' है। चूंकि यह क्षुधावर्धक है इसलिए इसका उक्त नाम पड़ा। प्राचीन काल में ईरानी लोग जिन्यान को वास्तव में जो नान्खाह ही था, तन्दूरी रोटियों पर लगाया करते थे । इब्नसीना ने नानखाह नाम से इसका वर्णन किया है। प्लाइनो अम्मी और किंगज क्युमिन (कमूने मलूकी) को एक ख्याल करते हैं। हाजी जैनुल्-अत्तार डायोसकोराइडीस द्वारा वर्णित अम्मी को नान्ख़ाह बतलाते है तथा इसके औषधीय गुणधर्म के सम्बन्ध में उन्ही चिकित्सकों की सम्मतियों को उद्धृत करते है। वे और भी बतलाते हैं कि उक्त औषधि शोधक रूप से प्रसिद्ध है और दुष्ट व्रणों को अच्छा करने तथा उनसे दुर्गन्धि युक्त स्रावों को रोकने के लिये उपयोग में आती है।

तुहफ्तुल् मोमनीन के लेखक तथा अन्य इसलामी चिकित्सक डायोसकोराइडीज के अम्मी या वैसिलिकाँन क्युमिनांन (Bas ilikon kuminon) तथा फारसीयों के नान्खाह व जिन्यान को अजवायन ही मानते और इसका अरवी नाम कमूनुल्मलूकी (King's cumin) बतलाते है। पश्चात् कालीन यूरूपीय लेखको का यह टिकोटिस अजोवान (Ptychotis ajowan) है।

प्राचीन आयुर्वेदीय ग्रंथकारों ने इसी प्रकार के एक औषधि का यवानी तथा यवानिका नाम से वर्णन किया है, जिससे इसका विदेशी होना साफ सिद्ध होता है। उनके वर्णनानुसार यह अजमोदा के भेदों में से एक है।

वानस्पतिक विवरण—अजवायन छुप जाति की वनस्पति के बीज है। ये छुप लगभग चार फीट ऊंचे होते हैं। पत्ते छोटे २ हालों के पत्तो के समान एवं कटीले होते हैं और इनकी डालियों पर छत्ते से आते हैं जिनपर सफेद फूल लगते है। जब वे छत्ते एक हो जाते हैं तब उनमें अजवाइन उत्पन्न होती है। उनको कूटने से छोटे २ दाने से निकलते हैं, इन्ही को अजवाइन कहते है। अजवाइन (फल) रूपाकृति में अजमोद के समान तथा धूसर वर्ण की होती है, जिनमें एक तेल नलिका होती है। संधिस्थल में जो तेल नलिकाये होती है। गंध हासा अर्थात् जंगली पुदीना के सदृश होती है।

भारतीय कृषक प्रायः धनिए के साथ इसे खेतों में वोते है। बोने का समय अक्टूबर से नवम्बर तक (कार्तिक, अगहन) और काटने का समय फर्वरी है। इसके लिए खेत खाददार होना चाहिए।

नोट—आयुर्वेद में यमानी, वनयमानी, पारसीक तथा खोरासानी आदि नामों से अजवायन को चार प्रकार का वतलाया गया हैं। इनमें से

प्रथम दो में कोई भेद नहीं (दूसरी केवल जंगली है) और अंतिम की दो अजवायन खुरासानी ही के पर्याय हैं, किंतु यह अजवायन से सर्वथा भिन्न वर्ग की औषधियां है। इनका वर्णन यथा-स्थान किया जाएगा।

प्रयोगांश फल, पत्र।

रासायनिक संगठन–स्टेनहाउस (१८५५) महाशय के मतानुसार अजबाइन के फल में एक प्रकार का ग्राह्य सुगंधियुक्त उड़नशील तैल (५–६ प्रतिशत) होता हैं जिसका विशिष्ट गुरुत्व ०,८९६ है। परिश्रुत जल के ऊपरी धरा-तल पर एक प्रकार का स्फटिकवत् द्रव्य (Stearoptin) इकट्ठा होता है। उसे अजबा-इन का फूल या सत कहते हैं। स्टाक (stock) महाशय ने सर्व प्रथम इसका बयान किया तथा स्टेनहाउस (Stenhouse) और हेन्स (Haines) ने परीक्षा करके इसको थाइमोल (Thymol) से, जो जंगली पुदीना (Thymus vulgaris) से प्राप्त होता है, समानता दिखलाई। देखो–थाइमोल। इसमें क्युमीन (Cumene) टर्पीन (Terpene) तथा थाइमीन (Thymene) भी पाएं जाते हैं।

औषध निर्माण—अजवायन गुटिका (शार्ङ्ग०), चूर्ण, क्वाथ, अर्क, (अमूम का पानी) और तैल।

अजवायन के गुणधर्म व प्रयोग।

आयुर्वेदीय मत के अनुसार—अजवायन लेखन (देहस्थ धातु तथा मलों को शोषण करने वाली), पाचक, रुचिकारक, तीक्ष्ण, गरम चर-परी, हलकी, अग्नि को दीपन करने वाली, कड़वी और पित्तकारक है तथा वीर्य, शूल, वात, कफ, उदर, आनाह, गुल्म, प्लीहा तथा कृमि को नष्ट करने वाली है। (भा० पू० १ भा०)

इसके शाक के गुण–अजवायन का शाक आग्नेय, रुचिकारक, वात-कफ-नाशक, चरपरा, कड़वा, गरम,, पित्तकारक, हलका तथा शूल कारक है। (भा० पू० शा० व०)

अजवायन चरपरी, कड़वी और गरम है तथा वात की बवासीर, कफ, शूल, आध्मान, कृमि और वमन को दूर करने वाली तथा परम दीपन है। (रा० नि० व० ६)

अजवायन कोढ़ और शूल को नष्ट करने वाली है, हृदय को हितकारक, पित्तवर्द्धक तथा अग्नि-वर्द्धक है।

अजवायन चरपरी, कड़वी, रुचिकारी, गरम, अग्निदीपक, पाचक, पित्तजनक, तीक्ष्ण, हल्की हृदय को हितकारी, सारक और वीर्यजनक है तथा वादी की बवासीर, कफ, शूल, अफरा वमन, कृमि, शुक्रदोष, उदररोग, आनाह, हृदय-रोग, प्लीहा गुल्म द्वंद्वज रोग और आमवात का नाश करती है। (रा० नि०)

अर्क अजवाइन–अजबाइन का अर्क हिं० द०। अजोआन Ajowan' एक्वा टायकोटिस Agua Ptychotis–ले०। ओमम् वाटर Omum water इं०। ओमत्ति नीर ता०। ओमद्रावकम् ते०।

अजवायन के अर्क के गुण—अजवाइन का अर्क पाचक रुचिकारक, दीपन तथा शुक्रनाशक एवं शूलनाशक है।

युनानी मतानुसार अजवाइन के गुणधर्म व प्रयोग

स्वरूप—अनीसू के समान कालापन लिये हुये भूरी। स्वाद कड़ुवास लिये तीखीऔर तीक्ष्ण गन्धयुक्त है। प्रकृति ३ कक्षा में गरम और रूक्ष हानिकर्ता उष्ण प्रकृति को शिर पीड़ाप्रद और स्तनों के दुग्ध की ह्रासकर्ता। दर्पनाशक–उन्नाव धनियाँ, खाड़, तथास्निग्ध व शीतल द्रव्य। प्रतिनिधि—कलौंजी और काला जीरा। मात्रा—६ मा० से १ तोला तक।

गुण कर्म प्रयोग—अजवाइन विशेषकर सम-स्त अवयवों की वेदना को शमन करने वाली शोथों के लय करने वाली तथा कामोद्दीपक है।

यह आर्द्रता शोषक कोष्ट, मृदुकारी वायु लय कर्ता तथा अगदशक्ति से संयुक्त होती हैं,

अजवाइन को शर्बत लकवा, कम्पनवायु तथा शैथिल्य को लाभदायक है । इसके क्वाथ द्वारा आंख धोने से नेत्र स्वच्छ होते हैं। इसे कान में डालने से बधिरता को लाभ होता है यह वक्षः स्थवेदना तथा रतूबतों को नष्ट करने के लिये उत्तम है। और रोधउद्घाटक, कोष्ठ मृदुकारक' यकृत एवं प्लीहा की कठोरता को लयकर्त्ता,हिचकी वमन, मतली, दुर्गन्धियुक्त डकार, बदहजमी उदर में शब्द होना, मूत्रावरोध, तथा अश्मरी प्रभृति के लिये गुणदायक है। कामोद्दीपक है तथा यकृत, आमाशय, वृक्क तथा वस्ति को उष्णता प्रदान करती एवं शक्ति देती है यह मूत्र आर्तव, दुग्ध तथा स्वेद की प्रवर्तक है।

जलोदर के लिये गुणदायक है। और हर प्रकार के केचुआ को निकालती है।

लेमू (नींबू) के रस में यदि इसे सातवार डुबोकर शुष्क कर लें तो यह नपुन्सकता के लिये अत्यंत गुण दायक हो। इसका शर्बत श्लैष्मिक ज्वरों में विशेषकर चातुर्थिक ज्वर केलिये अत्यंत लाभदायक है तथा जहरों को नष्ट करने में अगद है। अण्डशोथ के लिये इसका लेप उत्तम है। शहद के साथ मिलाकर उपयोग में लाने से यह सम्पूर्ण आवयविक वेदना तथा शोथ के लिये लाभदायक है । म० अ० । (निर्विषैले परन्तु अधिक मात्रा में विषैल है।)

एलोपैथिक मेटीरिया मेडिका तथा अजवाइन

यमानी तैल—अजोवान ऑलियम् (Ajowan Oleum)-ले० अजोवान ऑइल (Ajowan oil) टिकोटिस आयल(Ptychotis oil) इं० । रोगने नान्खाह- फा० अजवाय (इ) न का तैल हिं० उ० । यवानीर तैल-बं० ।

ऑफिशल (Official)

लक्षण—यह एक वर्णरहित तथा उड़नशील तैल जो अजवाइन के फल द्वारा परिश्रुत करके प्रस्तुत किया जाता हैइसका स्वाद तथा गध अजवाइन के समान होती है इसका आपेक्षिक गुरुत्व ९१७ से ९३० तक होती है। ३२० फारे हायट पर इसे शीतल करने से इसमें से प्रतिशत थाइमोल पायो जाता है।

नोट—थायमोल को भारत वर्ष में अजवाय का फूल और पंजाब में अजवाइन का सत कहे हैं और मध्य भारत के किसी २ स्थान में इसे बनाते हैं।

पहाड़ी पुदीना जिसे अरबीमें हाशा और सल तथा यूनानी में थाइमस (Thymus) कहते और प्राचीन अरबों ने जिसका उदाहरण सॉफ किया है । वस्तुतः उसके जौहर या सत को अंग्रेजी में थाइमोल (Thymol) कहते हैं परन्तु उपरोक्त वर्णनानुसार यह जौहर अजवाइ आदि से भी प्राप्त होता है। देखो थाइमोल

प्रभाव—वायुनिस्सारक (Carminati तथा कृमिघ्न (Anthelmintic)

मात्रा—आधा से ३ मिनिम (३ से सें० भि० प्रा०)

यमानी तैल के प्रभाव तथा प्रयोग—थाइ मोल तथा अन्य आंफिसल तैलों के तदृश ३ बूं की मात्रा में यह प्रबल वायुनिसारकहै। थाइमो के समान द्वादशांगुलीयांत्रस्थ (द्वादशांगुल नाम अंत्र में पाये जाने वाले) केचुओं पर यह सह कृमिघ्न प्रभाव करता है। परन्तु उक्त अभिप्रा हेतु एक फ्लुइड ड्रामसे अधिक मात्रा की आव कताहोतीहै। जो थाइमोलके तरलरूपमें आत्मसा हो जाने के कारण सम्भवतः विषैला होगा आ न्तरिक रूप से अजवाइन का अर्क उदरा (Flatulence) तथा उदरशूल में ल दायक है।

अजवाइन के गुण धर्म के सम्बन्ध

डाक्टरी एवं अन्य मत

अजवाइन के बीज तथा उड़नशील तैल उ ध्मान उदरशूल' अतिसार विशूचिका योपापस्म और आंत्राक्षेप में लाभदायक हैं। इससे उ एवं आह्लाद को वृद्धि होती है और आंत्रविका साथ होने वाली उदासीनता तथा निर्बलता होती है। उक्त तैल को १ से ३ बूंद की

में किञ्चित शर्करा पर डालकर अथवा गोंद के लुआब और जल के साथ इसका इमशलन बना कर उपयोग में लाना चाहिये। वात व आमवात सम्बन्धी वेदनाओं को दूर करने के लिये इसका वाह्य प्रयोग होता है। विशूचिका की प्रथमावस्था बमन व रेचन को रोकने तथा शरीर को उत्तेजित करने के लिये यमानी तैल एवं इसके बीजों द्वारा परिश्रुत जल (अजवान के अर्क) को १ से २ आंउस (२॥ तो० से एक छटाक तक) की मात्रा में उपयोग करना गुणदायक होता है। अतिसार में एक आंउस (२॥ तो०) अजवाइन का अर्क तथा उतने ही चूने के पानी में ५ बूंद अहिफेनासव (Tincture of opium मिश्रित कर व्यवहार करना उत्तम है तथा २॥तो० अर्क अजवाइन और उतने ही चिरायते के शीत कषाय में एक ग्रेन (आधी रत्ती) लोहगंधेत् [सल्फेट आंफ आयर्न] मिश्रित कर दिन में २ बार व्यवहार करना उत्तम व्यापक बलदायक औषधि है।

इसे अन्य सुगन्धित औषधियों यथा यूकेलिप्टस पेपरमिण्ट तथा गालथेरिया आदि के साथ मिलाने से यह लाभजनक वायुनिस्सारक औषधि हो जाती है [यमानी तैल या अजवाइन का फूल इन दोनों का सोडा के साथ देने से अम्लपित्त अजीर्ण तथा उदराध्मान में लाभ होता है।

अजवाइन का बीज, काली मिर्च, सोंठ प्रत्येक आधा ड्राम और इलायची १ ड्राम इन सबको चूर्णकर १ ड्राम की मात्रा में उदरशूल में दिन में २ बार व्यवहार करने के लिये यह बढ़िया वायुनिस्सारक दवा है।

चक्रदत्त—अजवाइन, सेंधानमक, सोंचल लवण, यवक्षार, हींग तथा हर्रा इनको सम भाग लें चूर्ण करें। मात्रा—१ र० से १० र० मद्य के साथ। गुण—अँतड़ियों की वेदना व शूल को दूर करता है।

अजवाइन के बीजों को मुह में दबाकर निगल जांय और ऊपर से उष्ण जलपान करें। इससे आमाशय शूल, कास तथा अजीर्ण नष्ट होते हैं।

अजवाइन का तेल प्रस्तुत करने के लिये सेर भर दुचली हुई अजवाइन में १५ सेर पानी में डाल के मद्य संधान की विधि से १० सेर पानी काढ़ना चाहिये। (मि० लिंसडेल)

पैत्तिम वमन एवं शीत लगना प्रभृति में अजवायन के बीज तथा गुड़ मिलाकर भक्षण किया जाता है।

जुकाम आधाशीशी तथा उन्माद इत्यादि में इसके बीज के चूर्ण को वारीक कपड़े में बांधकर थोड़ी २ देर में सुघांना चाहिये अथवा इक्क चूर्ण का सिगरेट बना पिलाना चाहिये।

उदरशूल निवारण हेतु इसके बीजों का उपनाह (पुलटिस) या प्रस्तर उपयोग में आता है। इसके बीजो को गरम कर दमा में सीने को तथा विशूचिका, मूर्च्छा व वेहोशी में हाथ पांव को शुष्क सेक करते हैं।

अजवायन के बीज, पिप्पली, अडुसा पत्र और पोस्ते के डोंडे इनका काथ कर आधे से १ आउंस की मात्रा में आभ्यन्तर रूप से वर्तते हैं।

श्लेष्मा के शुष्क हो जाने या चिपचिपा हो जाने के कारण जब कफस्राव कठिन हो जाता है, उस समय इसके बीजों के चूर्ण में मक्खन मिलाकर खिलाने से लाभ होता है।

वनयमानी भी उत्तम है और अनेक कृमिनाशक योगों का एक मुख्य अवयव है।

शिथिल—कठत्त में इसका बीज संकोचक औषधियों के साथ उपयोग में आता है। औषधियों विशेष कर एरण्ड तैल के अग्राह्य स्वाद को छिपाने के लिये एवं उनको वामक प्रवृति व ऐंठन युक्त वेदना को रोकने के लिए इसका उपयोग किया जाता है।

आभ्यासिक मादकता तता पागलपत में यह लाभदायक है।

अपने चरपरे तथापि मनोहर स्वाद और आमाशयिक उत्ताप विवर्द्धन के कारण मादक द्रव पान की इच्छा से व्यथित व्यक्तियों को इसे

व्यवहार में लाने की आधुनिक काल में बहुत शिफारिश की जाती है। यद्यपि इससे नशा नहीं पैदा होती, तो भी निर्बलता दूर करने के लिये यह सामान्य उत्तेजक औषधों की एक उत्तम प्रतिनिधि है-(बुड)। आपका कथन है कि यह बहुत से बुद्धिमान व्यक्तियों को मद्यपान के अभ्यास की किङ्करता से मुक्ति दिलाने के लिए उत्तम कारण सिद्ध हुई है।

अजवांयन (बीज लगने से प्रथम) के पौधे के कोमल पत्ते कृमिघ्न प्रभाव हेतु व्यवहार में आते है। कृमि में इसके पत्र का स्वरस दिया जाता है।

विषैले कीटाणुओं के काटने पर दंश स्थान पर इसके पत्तों को कुचल कर लगाते हैं।

अजवायन के पत्ते का स्वरस, इस्पन्द (हेना) और मालकांगनी इनको समान भाग लेकर इससे तिगुना मीठा तेल मिलाकर पकाऐ। तैयार होने पर उतार ले और नासिका कर्ण रोगों में इसका व्यवहार करें। (इलाजु० गु०)

अजवायन का फूल- } हिं० संज्ञा पु० थाइमोल
अजवाइन-का सत- }
(Flowers of AjowanCamphor)
देखो-थाइमोल व अजबायन। फा० इं०। इं० मे० मे०। स०। फा० इं०।

अजवाइन के,बू का पत्ता-द० सीता की पञ्जीरी।

अजवाइ (य) न खुरासाना-हिं० संज्ञा स्त्री० [स० यवानिका : खुरासानी अजवा (मा) यन खुरासानी अजूबान- द०। मदकारिणी, तुरुष्का, तिव्रा, यवानी, यावनी, मादक, मदकारक, दीप्य, श्याम, कुवेराख्य, पारसीक यवा (मा) नी, खोरासानी यमानी-स०। खुरासानी योयान,खुरासानी अजोवान-वं०। हाइयों साइमस नाइग्रम् (Hyoscyamus Nigrum, *Linn.* (Seeds of) हाइयों साइमस (Hoyscyamus) हा० रेटिक्युलेरिस (H·Reticularis) हा० रेटिक्युलेटिस (H.Reticulatus, *Linn*)—ले०। हेनवेन (सीड्स) Henbene (Seeds) इं०। जस्क्वीएमिन्वायर Jusquiame.noire) फ्रां० अफियू Afipum-जर०। खुरासानि-योमम्-ता० खुरासानि-वामम्, खुरिञ्जिवामम्। खुरासानी-यमनी, खुरसान बामो-ते०, तै०। खुरासानि वोमा, खुरासानि-वादक्कि-कना०। किरमानि ओंबा, खोरासाणी-नि-ओवा सुरवंदीचें-फूल-म० खुरासानि-आजमी, खुरासानि अजनान, खुरासा अज़मा, करमाणीछहारी-गु०। वजरभंग, इस्किरा काश०। काटफिट-मू०। वज्रुल्वञ्ज, वञ्ज, सी रान, खदाउर्रजाल-अ०। बंक, बंग, बंगदीवा फा० अजमालस-सिरि०। वातंवात-तु० अफीकू अफियून-यु०। अक्तफीत, इस्कीरास वरब कीर्धक-देल्मी०।

सोलेनेसीई अर्थात् धुस्तु (तू) रबा धत्तूर वर्ग
(*N. O. Solanaceæ*)

उत्पत्ति-स्थान—उत्तरी भारतवर्ष, (काश्मी गढ़वाल) पश्चिमी हिमालय के शीतोष्ण प्र समस्त हिमवंती पर्वत-श्रेणियों में ८००० ११००० फीट की ऊंचाई पर यह वन की उपजता है। वलुचिस्तान, (ईरान) खुरास मिश्र, एसिया कूचक और साइवेरिया के अति सहारनपुर के सरकारी वनस्पत्योद्यान में भी जाता है। यूरुप, (पुर्तगाल और यूनान नारवे और फिनलैण्ड तक) अमेरिका आदि

नाम विवरण—इसका लेटिन नाम ह साइमस यूनानी हओंस कुआमोस (Huo uamos) से लातानीकृत शब्द है जो योगिक है (हुआँस=शूक+कुआमाँस=बा लोबिया)। अस्तु उक्त शब्द का अर्थ लोबिया हुआ। चूंकि इसके पत्ते लोबिया सदृश होते है एवं इसे सूअर बहुत रुचि खाता है इसलिए यूनानिआं ने इसका यह रक्खा।

नोट—मखज़नुलअद्विया तथा मुहीत में जो इसका यूनानी नाम अफीकून लि वह शुद्ध अफ्यून है। कोई-कोई प्राचीन इ हकीम इसका यूनानियों का अफ्यून करते रहे। अस्तु, इसीके वर्णन में लिखा

कभी इसके पत्तों तथा शाखाओं का उसारह, अफीम की प्रतिनिधि स्वरूप उपयोग में आता है। अफ्यून यूनानी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ निद्राजनक है।

इतिहास—यद्यपि उक्त बूटी हिमालय पर्वत तथा उत्तरी भारतवर्ष व इसके अन्य भागों में भी अधिकता से उत्पन्न होती है, तथापि सम्भवतः प्राचीन आयुर्वेदिक चिकित्सकोंको इसका ज्ञान न था। पारसीक तथा खोरासानी यमानी आदि नाम इसका बिदेशी होना सिद्ध करते हैं।

आज ही नहीं प्राचीन काल से ही भारत में व्यापारिक आयात निर्यात हो रहा है। विदेशों की उत्तम चीजों का अपनाना और अपनी चीजें विदेश में भेजना भारतीय अपना ध्येय बनाते रहे हैं। इसी प्रकार बहुत सी औषधियां जिनको हमारे पूर्वाचार्यों ने रोगियों पर लाभदायक पाया उनको मँगाते थे। खुरासानी अजवायन भी उन्हीं औषधियों में से एक है।

प्राचीन यूनानी चिकित्सकों ने तीनों प्रकार के वञ्ज (पारसीक यमानी) का वर्णन किया है। परन्तु उनमें श्वेत प्रकार को ही औषध तुल्य उपयोग में लाते थे। डायोसकोराइडास (Dioscorides) ने भी इसकी प्रसंशा की है, एवं वह इसीके उपयोग करने की सिफारश करते है। इस सम्बन्ध में इस्लामी चिकित्सक भी अबतक उन्हीं के अनुयायी है।

लेटिन लेखक डायोसकोरइडस को अल्तर्कम् (Altercum) तथा हर्बासिम्फोनिएका (Herba Symphoniaca) बोलते हैं प्लाइनो के कथनानुसार अल्तर्कम् अरबी शब्द है सम्भवतः यह अतिर्याक का अपभ्रंश है जो मूल में फारसी शब्द है और जिसका अर्थ विषघ्न है। मुसलमान लेखक इसे वञ्ज कहते है जो फारसी वग का आरबीय अपभ्रंश है। इनके कथनानुसार यह यूनानियों का अफियून, सिरियन लोगों का अजमालूस, मूर लोगों का कत्फील या इस्कीरास है। ने पुनः कहते हैंकि देल्मी भाषा में इसे कीर्चक कहते हैं।

टिप्पणी—वज्रुल् वञ्ज अबैज (तुख्मवञ्ज सफेद) जो खुरासान से भारतवर्ष में अधिक आता हैं, भारतीय चिकित्सकों ने अजवायन के समान समझ उसका नाम खुरासानी या पारसीक यमानी रख दिया जो अब उर्दू भाषा एवं तिब में अजवायन खुरासानी के नाम से प्रसिद्ध हैं। परन्तु इस बात को भली भांति स्मरण रखना चाहिये कि वज्रुल् वञ्ज (अजवायन खोरासानी) और नान्खाह (अजवायन) गुण धर्म के विचार से सर्वथा दो भिन्न औषधियाँ है। अस्तु, पारसीक यमानी को कदापि यमानी (अजवायन) का भेद न ख्याल करना चाहिए।

वानस्पतिक विवरण—खुरासानी या किरमानी अजवायन वास्तव में अजवायन के वर्ग की ओषधि नहीं। अपितु, यह बादञ्जान अर्थात् सोलेनेसाई वर्ग की ओषधि है जिसमें बिलाडोना व धत्तूर आदि विषैली दवाए सम्मिलित हैं। इसका क्षुप अजवायन के क्षुप से ऊँचाई मे कुछ बड़ा होता है। पत्ते कटे हुये कंगूरेदार करीब करीब गुलदाऊदी के समान होते हैं। पुष्प श्वेत अनार की कलियों के समान, परन्तु पङ्खड़ियों के कंगूरे व मध्य व मूल भाग सुर्खीमायल होते हैं। जिनके पकने पर मूल भाग में छत्ता सा लगता है जिसमें अजवायन खुरासानी के बीज लगते हैं, ये अजवायन के बीज से दूने बड़े एवं वृक्काकार (जिनका पार्श्व भाग दवा हुआ होता है।) तथा धूसर वर्ण के होते हैं। बाह्य त्वचा भली प्रकार चिपकी हुई होती है। अल्ब्युमीन तैलीय होता है। वृक्ष गर्भ इस प्रकार (9) वक्र होता है, जिसका पुच्छ अंकुर बनता है।

स्वाद—तैलीय, तिक्त एवं चरपरा होता है।

भेद—मख़्ज़न के लेखक मीर मुहम्मदहुसेन वञ्ज के नाम से उक्त ओषधि का वर्णन करते हैं। वे इसके तीन भेद यथा—श्वेत, श्याम तथा रक्त का जिकर करते हैं (किसी ने पीत पुष्प वाले का वर्णन किया है) और इनमें श्वेत प्रकार को उत्तम ख्याल करते हैं। प्राचीन ग्रन्थों में यही अर्थात् श्वेत प्रकार (Hyoscyamus Albus,

Linn) आफिशल थी। मुफ़र्दात नासरी में इसके बीज को बज़्रुल् बज़ अवैज (श्वेत पारसीक यमानी बीज) लिखा है। प्लाइनी (Pliny) ने उक्त पौधे अर्थात् हा० रेटिक्युलेटस के चार भेदों का बर्णन किया है। उनमें से प्रथम (H. reticulatus) काले बीज वाली जिसमें नीले रंग के पुष्प आते हैं, तथा जिसका तना काँटेदार होता है और जो गलेशिया में उत्पन्न होती है, द्वितीय या साधारण प्रकार हायोसाइमस नाइगर (श्यामपारसीक यमानी), तृतीय भेद जिसका बीज मूली के सदृश होता है अर्थात् हायोसाइमस ओरियस (H. aureus, *Linn*) और चतुर्थ हा० एल्बस (H. albus अर्थात् श्वेत बीजयुक्त है जो समस्त चिकित्सकों द्वारा स्वीकृत है। उनके कथनानुसार इन सभों में चक्कर तथा पागलपन पैदा करने का गुण है। पारसीक यमानी बीज जो खोरासान से लाया जाता है वह उक्त चारों में से प्रथम का ही बीज है। यह क्वेटा में बहुतायत से होती है। इसके अतिरिक्त इसका एक और भेद है जिसका कोही भंग (H muticus, *Linn*., or H. Insanus *Stocks*) कहते हैं यह अत्यन्त विषैला होता है। देखो—कोही भंग।

प्रयोगांश—वैद्यगण बहुधा इसके बीजों को व्यवहार में लाते हैं और तिब्बी हकीम भी प्रायः उन्हीं का अनुकरण करते हैं। प्राचीन यूनानी लोग तो इसके पत्तों, शाखों तथा मूल व बीज अर्थात् पञ्चांग को व्यवहार में लाते थे। परन्तु मध्यकालीन यूरुप में इसके बीज, मूल अधिक उपयोग में आते रहे। आजकल यूरुप व अमेरिका में अधिकतर इसके पत्ते और जड़ न्यूनतर व्यवहृत हैं। प्राचीन यूनानी बहस्तामी चिकित्सक तो श्वेत पुष्पीय बज़ को औषधि रूप से उपयोग करना उत्तम ख्याल करते थे। यद्यपि बज़ स्याह के उसारह का भी उन्होंने जिकर किया है पर अधुना यूरुप में पारसीक यमानी श्याम औषध रूप से व्यवहृत है। अस्तु, डाक्टर लोग इसकी (शुष्क या नवीन) पत्तियों से तरह तरह के योग निर्माण करते हैं। वे पत्तियों को मय शाखा व फूल साव धानी से संग्रह करते हैं। यह उस समय किया जाता है जब खुरासानी अजवायन का पेड़ फलने फूलने लगता है तथा अपनी पाकावस्था में दिखाई देने लगता है।

रासायनिक संगठन—हेनवेन (पारसीक यवानी) में एक हायोसायमीन (Hyoscyamine) नामक तत्व जिसकी रासायनिक रचना धतूरीन (एट्रोपीन) के समान होती है पाया जाता है यह विभिन्न प्रकार के हायोसायमस (बज़) के बीज तथा पत्रस्वरस में हायोसीन या विकृताकार हायोसायमीन के साथ पाया जाता है इसके सूचिकाकार या त्रिपार्श्वाकार रवे होते हैं और यह धतूरीन की अपेक्षा जल एवं डायलूट अलकुहाल में अधिकतर लयशील होता है। यह धतूरीन के समान नेत्र कनानिका विस्तारक है।

हायोसायमीन अनेक सोलेनेसीई पौधों यथा धतूर बिलाडोना और सम्भवतः इसके कुछ अन्य भेदों में धतूरीन के साथ मिला हुआ पाया जाता है। हायोसायमीन उन्हीं द्रव्यों में विश्लेषित किया जा सकता है जिनमें एट्रोपीन वियोजित होता है, यथा—ट्रोपीन और ट्रापिक एसिड।

हायोसीन (स्कोपोलेमीन) या विकृताकार हायोसायमीन अपने कनीनिका प्रसारक तथा अन्य गुणों में निकट की समानता रखते हैं। जल में उबालने से यह ट्रापिक एसिड तथा स्यूडो-ट्रोपीन में वियोजित हो जाते हैं। (वैट्स डि० आफ केमिस्ट्री, द्वि० संस्क० ११, ७४४)।

उनके अतिरिक्त पत्ते में हायोस्क्रोपीन (Hyoscripin), कोलीन (Cholin), फैटी आइल, लुआब, अल्ब्युमीन-(अंडे की सुफेदी) और पांशुनत्रेट (पोटेसियम नाइट्रेट) २ प्रतिशत तक होते हैं।

बीज में एक स्थिर या वसामय तैल २६ प्रतिशत, एक एम्पाइर युमैटिक तैल (Empyreumatic oil) जो विनाशक परिश्रुति विधि द्वारा प्राप्त होता है, और वार्नीक (Warneke) के मतानुसार ४·२१ प्रतिशत भस्म वर्तमान होती है।

प्रभाव—बीज-मादक, निद्राजनक (मदकारी), वेदना नाशक, पाचक, संकोचक तथा कृमिघ्न है। पत्र तथा हायोसाइमीन-अवसादक, वेदना-शामक, आक्षेप निवारक, उत्तेजक और नेत्र कनीनिका प्रसारक है। इनका उन्मत्तकारी प्रभाव बिलाडोना की अपेक्षा मृदुतर तथा निद्राजनक अधिकतर एवं अधिक विश्वसनीय व शीघ्र और अफीम सत्व (फार्मिया) व क्लोरल से उत्तम होता है।

औषध निर्माण—पत्र चूर्ण, मात्रा-२॥ से ५ र० (५ से १० ग्रेन), ताजा स्वरस (दबाकर निकला हुआ एवं सुरक्षित रक्खा हुआ), मात्रा—आधा से एक ड्राम, शुष्क पौधे द्वारा निर्मित टिंचर। मात्रा—चौथाई से १ ड्राम, ताजे पौधे का एक्सट्रैक्ट (सत्व), मात्रा—आधी से १॥ रत्ती (१ से ३ ग्रेन)। इनके द्वारा प्रस्तुत प्रस्तर (प्लास्टर) एवम् तैल का वाह्य उपयोग होता है। अत्यधिक मात्रा में यह मदकारी विष है तथा इससे उन्मत्तता, मूर्च्छा एवम् मृत्यु उपस्थित होती है। और इसकी क्रिया अति शीघ्र होती है।

सत्व निर्माण-विधि—खुरासानी अजवायन का पौधा जब फूलने फलने लगे, तब मय पत्तियों के उसकी छोटी छोटी शाखाओं को लेकर पानी से भली भाँति धोकर स्वरस निकाल लें शुद्धता आदि का विशेष ध्यान रखना आवश्यक है। स्वरस को छान कर अग्नि पर पकाएँ, जब खौलने लगे और खौलते हुए १० मिनट हो जाएँ तथा स्वरस के ऊपर मैल के झाग से, जैसे कि खाँड़ की चासनी करते समय प्रायः हुआ करते हैं, उठने लगें, तब स्वरस को उतार कर छान लें और निथारने के लिये स्वरस को चीनी के प्यालों में भर कर १२ घटे रक्खा रहने दें। तदनन्तर सावधानी से निथार कर फिल्टर करलें अर्थात् (फिल्टर पेपर) में छान लें और फिर पकाएँ। जब गाढ़ा हो जाय अर्थात् अवलेह समान गोली बनाने लायक हो जाय तो उतार लें। मात्रा—१-३ या ४-४ रत्ती।

पारसीकयवानी तरल सत्व—पूर्वोक्त विधि से स्वरस को फिल्टर करके १० प्रतिशत के हिसाब से हलकी (रेक्टीफाइड स्पिरिट) मिला कर सद्यः निर्गत स्वरस का गर्म पानी मिलाकर वजन पूरा कर शीशी में भरकर उपयोग करें। मात्रा—३० बूंद से ६० बूंद तक २॥-२॥ तोला जल में मिलाकर सेवन कराएँ।

पारसीकयमानी के गुण धर्म व प्रयोग

आयुर्वेदिक मतानुसार

खुरासानी अजवायन के गुण अजवायन के समान ही हैं, परन्तु विशेष करके यह पाचक, रुचिकारक, ग्राहक मादक तथा भारी है। (भा०)

पारसीक यवानी, तिक्त, गर्म, कटु, तीखी, अग्निदीपन करने वाली, वृष्य तथा हल्की होती है। त्रिदोष (सन्निपात), अजीर्ण, उदरज, कृमि रोग, हृद्, आमशूल, (पेचिस की ऐंठन) तथा कफ रोग आदि को नष्ट करती है, वै० निघ०।

खुरासानी अजवायन चरपरी, रूखी, पाचक, ग्राही, गरम, नशा करनेवाली, भारी, वातकारक और कफनाशक है। शेष गुण अजवायन के समान हैं। वै० निघ०।

यह बुद्धि और नेत्र को मन्द करती है, कानों में भारीपन, कंठग्रह, चित्त के चलायमान होने, तथा रुधिर खाब और सर्व प्रकार की पीड़ा को नष्ट करती है। विशेषकर पाचन, ग्राही, मादक और भारी है। अमि० १ भा०।

खुरासानी अजबायन का अर्क—यह मलरोधक, पाचक और मदकारक है।

यूनानी मतानुसार अजबाइन खुरासानी के गुण धर्म व प्रयोग।

स्वाद—तीखी और कडुवी। प्रकृति (श्वेत) २ कक्षा में ठंडी और रूक्ष, (काली) ३ कक्षा में ठन्डी और रूक्ष है। हानिकर्त्ता—(सफद) चक्कर, कंठमाला एवम् उन्मादकारी है, (काली जाति की) घातक है। दर्पनाशक—शहद या अनीसूँ समभाग या न्यूनाधिक, किसी किसी ने अफीम और पोस्त लिखा है। प्रतिनिधि अफीम, अज-

बायन देशी, और खशखाश स्याह । मात्रा-(श्वेत) २ मासे से ३ तक, (सुर्ख) २ से २॥ मासा तक । आधुनिक मात्रा—आधा माशा से १ मा० तक ।

गुण, कर्म, प्रयोग-मीरमुहम्मद हुसेन इसके ताजे पत्ते के स्वरस के सूर्यताबी सत्व निर्माण का वर्णन करते है और कहते है कि इसके पत्तों को कूटकर आटे के साथ कल्क प्रस्तुत कर इसकी छोटी छोटी वाटियाँ बनाकर सुखा लें । इससे कुछ काल पर्यन्त इसमें औषधीय गुणधर्म विद्यमान रहेगा ।

यह सब नज़लाओं को लाभ कर्ता, स्निग्धता युक्त स्राव (आँख की ओर) को हरण कर्ता, सम्पूर्ण प्रकार की कर्ण पीड़ा को शान्तिप्रद, अवयवों में शैथिल्योत्पादन कर्ता, निद्राप्रद, अवयवों के रक्त विशेषतः आर्तव इत्यादिक रुद्धक व वर्द्धक है । कफज कास को गुण कर्ता, खखार में रुधिर आनेको नाशक तथा अधिक रूक्षताकर्ता है । प्रत्येक भांति की वेदनाशमनार्थ इसका वाह्य उपयोग होता है । अस्तु, तिल तेल में अकेले इसे अथवा अन्य औषधियों के साथ पकाकर सन्धिवात, गृध्रसी या कटि वेदना (अर्कुन्निसा) तथा निक्रिस (Gout) प्रभृति में इसकी मालिश की जाती है । उक्त तेल के अर्धोष्ण कर्ण में टपकाने से कर्ण पीड़ा नष्ट होती है । अग्नि पर डालकर धूनी देने से अथवा इसके क्वाथ द्वारा कुल्ली करने से दांतों का दर्द दूर होता है । मुखदिर अर्थात् अवसन्नताजनक व निद्राप्रद होने के कारण यह उन्माद, पागलपन तथा अनिद्रा रोग में प्रयुक्त है । अफीम व अजवायन खुरासानी दोनों को समभाग लेकर माष समान वटिका निर्मित कर उपयोग करने से बहुत नींद आती है और इसका लेप पुरातन यकृत् वेदना, जरायुस्थ व्रण तथा वंक्षण वेदना को बहुत लाभ पहुंचाता है । वस्ति-शोथ, प्रोस्टेट ग्रंथि प्रदाह, वस्त्यश्मरी में वेदनाशमनार्थ तथा हृदय विकार-जन्य दमा और खांसी, विशेषकर काली खांसी में इसे वर्तते है । नफी० २ भा०, बु० मु०, म० अ० ।

अजवायन खोरासानी के सम्बन्ध में डाक्टरी तथा अन्य मत ।

प्रदाहिक शोथों की वेदनाशमनार्थ इसके स्वरस तथा यव के आटे द्वारा प्रस्तुत प्रस्तर (पुल्टिस) व्यवहार में आता है । इसके बीजों को मद्य अर्थात् ब्रांडी में पीसकर इसकी पुलटिस का संधिशोथ, शोथ युक्त छातियों एवं अण्ड में उपयोग करते है । अर्ध ड्राम के लगभग इसके बीज तथा १ ड्राम खशखास को जल एवं शहद के साथ पीसकर खांसी तथा संधिवात आदि में वेदनाशमनार्थ वर्तते है । जरायुस्थ वेदना में इसकी वर्ति व्यवहृत है । इसके बीजों का स्वरस अथवा तीक्ष्ण हिम चक्षुपीड़ा हरणार्थ नेत्रों में डाला जाता है । घोड़ों के दुग्ध में इसके बीजों को पीसकर कल्क प्रस्तुत कर पुनः जंगली सांड़ के चमड़े में बांध कर स्त्रियां गर्भ निरोध हेतु इसे पहनती है । इसके बीजों के चूर्ण तथा राल दोनों को मिश्रित कर वेदना नाशन हेतु खोलले दोतों में भरते हैं ।

मालकांगनी, वच, अजवायन खुरासानी के बीज, कुलञ्जन और पीपल इनको समभाग लेकर जल के साथ पीसकर कल्क प्रस्तुत करें । पुनः इसमें शहद मिलाकर स्वरयंत्र प्रदाह में ३॥। माशा की मात्रा में दिन में दो वार व्यवहार में लाए । (इलाजुल्गुर्वी)

खोरासानी अजवायन और सेधानमक को खाली मेदा बहुत सवेरे सेवन करने से एकिलोस्टोमा (Ankylostoma) नामक कृमि में लाभ होता है । (डा० राँय)

एलोपैथिक मेटीरिया मेडिका और हायोसाइमस (पारसीक यमानी)

पारसीक यमानी पत्र

हायोसाइमाइ फोलिया (Hyoscyami Folia)—ले० । हायोसाइमस लीभज (Hyoscyamus Leaves), हेनबेन लीभ्ज (Henbane, Leaves)—इं० । औराकुल्वज, औराकुरसीकरान—अ० । वर्ग इक्क—फा० ।

सोलेनेसीई अर्थात्धुस्तुर वर्ग
(*N. O. Solanaceœ*)

ओफिशल (Offic ial)

उत्पत्तिस्थान—ब्रिटेन ।

वानस्पतिकनाम व प्रयोगांश—इसका वानस्पतिक नाम हायोसाइमस नाइगर (Hyoscyamus, Niger) अर्थात् काली खुरासानी अजवायन है । इसके नवीन पत्र व पुष्प को शाखा सहित अथवा केवल पत्र तथा पुष्प को तोड़कर शुष्क करके औषध कार्य में वर्तते है ।

लक्षण—पत्ती की लम्बाई विभिन्न होती है । वे दस इञ्च तक लम्बी और कई अंशों में विभाजित होती है । इनका रूप अंडाकार और किसी कदर त्रिकोणाकार होता है । इसके किनारे अनियमित रूप से दंष्ट्राकार होते हैं । वर्ण सूक्ष्म हरा तथा निम्न भाग एवं शाखा विशेष कर रोम युक्त होती है । नवीन पत्तों एवं शाखाओं की गंध तीव्र व बुरी होती है । स्वाद—कड़वा तथा किञ्चित् चरपरा ।

समानता—बिलाडोना और धतूरे के पत्ते इन पत्तों से मिलते जुलते होते हैं । किन्तु वे रोमरहित होते हैं ।

रासायनिकसंगठन-इसमें. (१) हायोसायमीन और (२) हायोसीन वे दो प्रभावकारी अल्कलाइड्ज अर्थात् क्षारीय सत्व तथा एक विषैला तेल होता है ।

असम्मिलन (संयोग विरुद्ध)—लाइकर पुटासी, लेड एसीटेट, सिल्वर नाइट्रेट और वानस्पतिक एसिड्स ।

प्रभाव—निद्राजनक (Narcotic), वेदनाशामक (Anodyne) और अवसादक (Sebative).

ओंफिशल योग
(Officialpreparations)

(१) ऐक्सट्रैक्टम हायोसाइमाई (Extractum hyoscy ami)-ले० । एक्सट्रैक्ट ऑफ हेनबेन या हायोसाइमस (Extract of Henbane orHyoscyamus)-इं० । पारसीक यमानी सत्व, खुरासानी अजवायन का सत-हिं० । खुलासहे बज़, रुब्ब बङ्क-फा०, अ० ।

निर्माण विधि-हायोसाइमस नाइगर (काली खुरासानी अजवायन) के नवीन पत्तों, फूलों तथा कोयलों को कुचल कर दबाने से जो स्वरस प्राप्त हो उसे क्रमशः १३० फारनहाइट का ताप दें तथा काँलीकी फिल्टर द्वारा छानकर रंगीन अंश भिन्न करलें, पुनः छने हुए रस को २००० फारनहाइट की ताप दे और उसे छानने के पश्चात् शीरा के समान गाढ़ा कर लें, पुनः उस रंगीन पृथक किये हुए द्रव्य को बालों की चलनी में छानकर इसमें सम्मिलित कर दें, और लगभग १४०० के ताप पर इतना शुष्क करे कि वह मृदु अवलेह के सदृश हो जाय ।

मात्रा—२ से ८ ग्रेन अर्थात् १ से ४ रत्ती (१२ से ५० सें० ग्रा०)

(२) पिल्युला कालोसिन्थिडिस एट-हायोसाइमाई (Pilula colocynthidiset Hyoscyami) ले० । पिल आंफ कालोसिन्थ एण्ड हायोसाईमस (Pill ofcolocynth and Hyoscyamus) इं० । इन्द्रायन या पारसीक यमानी बटिका हिं० हब्ब हन्जल व बज़ (बङ्क) अ०, फा० ।

निर्माण विधि—कम्पाउण्ड पिलआफ कालोसिंथ २ आउंस (१ छ०) एक्सट्रैक्ट आफ हायोसाइमस १ आउंस दोनों को मिला लें ।

मात्रा—४ से ८ ग्रेन अर्थात् २ से ४ रत्ती (२६ से ५२ ग्राम)

सक्कस हायोसाइमाई (Succus Hyoscyami) ले० । जूस आफ हायोसाइमस (Juice of Hyoscyamus) इं० पारसीक यमानी स्वरस -हि० । असीरबज़, अफशुर्दहे बङ्क अ० फा०, ।

निर्माण बिधि—नवीन पत्रों, पुष्पों तथा शाखाओं को कुचलने से जो रस प्राप्त हो उसके

प्रति तीन भाग (आयतन के विचार से) में १ भाग हली (६० प्रतिशत) सम्मिलित करें और एक सप्ताह तक पड़ा रहने दें, पुनः फिल्टर करलें

मात्रा—आधा से एक फ्लु० ड्रा० (१.८ से ३.६ क्यु० सें०)।

(४) टिंकचूरा हायोसाइमाई-ले० । टिङ्क्चर आंफ हायोसाइमस (Tincture ofHyoscyamus) इ० पारसीक यमान्यासव हिं० । सुबगह बज्र, तअफीन बङ्क फा० अ० ।

निर्माणविधि—हायोसाइमस के पत्तों और पुष्प युक्त शाखाओं का २० नं० का चूर्ण २ आउंस हली (Alcohol) ४५ ०|० यथोचित चूर्ण को २ फ्लुइड आउंस हलाहल से तर करके पर्कोलेशन (टपकना) द्वारा १ पाइण्ट टिंकचर तैयार कर लें ।

मात्रा—आधा से १ फ्लुइड ड्राम (२ से ४ मिलीग्राम)

नोंट आँफिशल योग

(Not official Preparations)

(१) क्लोरोफार्मम हायोसाइमाइ-पारसीक यवानी मूल (Hyoscyamus root) चूर्ण किया हुआ ३० भाग, क्लोरोफार्म २० भाग । यह क्लोरोफार्म एकोनाइटीनी के समान प्रस्तुत किया जाता है ।

(२) टिंकचूरा हायोसाइमाइ रेडिसिस (Tinctura HyoscyamiRadicis) चूर्णित पारसीक, यमानी मूल पांच भाग हली (६० प्रतिशत) ४० भाग में एक सप्ताह तक भिगोकर पर्कोलेट कर लें ,

मात्रा—२० से ६० मिनिम (बूंद)

हायोसाइमस के गुणधर्म व प्रयोग

पारसीकयमानीपत्र अर्थात् हायोसाइमाइ फोलिया (Hyoscyami Folia)

प्रभाव—हायोसाइमीन (पारसीक यमानी का स्फटिकाकार सत्व) जो हायोसाइमस अर्थात् खुरासानी अजवाइन का प्रभावात्मक सत्व है, अपनी रचना में धतूरीन (एट्रोपीन) के समान होता है । अस्तु स्थायी चार (फिक्स्ड अलकेलीज) की उपस्थिति में सामान्य उत्ताप पर वह धतूरीन (एट्रोपीन) में परिणत हो जाता है । इसलिये यद्यपि पारसीक यमानी के बहुशः गुणधर्म स्वभावतः बिलाडोना और स्ट्रोमोनियम् (धुस्तूर धत्तूर) के गुणधर्म के समान होने चाहिये (देखें बिलाडोना) तथापि उनके प्रभाव में निम्नलिखित पारस्परिक भेद प्रभेद पाये जाते हैं:-

(१) बिलाडोना की अपेक्षा हायोसाइमस से उन्मत्तता तो कम उत्पन्न होती है । किन्तु मस्तिष्क पर इसका अवसादक (Sedative) तथा निद्राजनक (soporific) प्रभाव शीघ्रतर एवं बलवत्तर होता है । (२) सुषुम्ना काण्ड पर भी इसका अवसादक प्रभाव अधिक स्पष्ट होता है (३) यह आंत्र के कृमिवत् आकुञ्चन को तीव्र करता तथा प्रवाहिका या मरोड़ा में अपेक्षाकृत बहुत कम करता है । (४) बिलाडोना के सदृश यह हृदय पर सवलोत्तेजक प्रभाव नहीं करता, अपितु हृदय पर हायोसीन का अत्यन्त निर्बल प्रभाव पड़ता है । (५) मूत्रेन्द्रिय विशेषतः वस्ति पर बिलाडोना की अपेक्षा इसका अधिकतर अवसादक प्रभाव पड़ता है ।क्योंकि वस्तिस्थ श्लैष्मिक कला की नाड़ियों के अन्तिम भाग पर अवसादक तथा निर्बलताजनक प्रभाव करके यह उसके मांस तन्तुओं की ऐंठन को दूर करता है । (६) हायोसीन से इण्ट्राऑक्युलर टेन्शन (नेत्रपिंड का तनाव) कम हो जाता है । अस्तु, हायोसाइमस का यह प्रभाव उतना नहीं होता जितना की बिलाडोना का ।

उपयोग—हायोसायमस का उपयोग आक्षेप विकार की अवस्थाओं के अतिरिक्त जिनमें बिलाडोना व्यवहृत, निम्नांकित दशाओं में भी होता है

(१) विविधि रोगों की तीव्र पीड़ा में मस्तिष्कोत्तेजना को कम करके नींद लाने के लिये यथा उन्माद (मेनिया) अनिद्रा या निद्रानाश (इन्सामिनिया) स्त्रियों की हिस्ट्रीया (योषापस्मार के दौरे में) जच्चा की उन्मत्तावस्था में तथा वात वेदनाओं में इसे देना चाहिये । उन्मत्त शराबी को भी नींद लाने के लिये दे सकते हैं ।

अतः खुरासानी अजवाइन के तरल सत्व को १-१ घण्टे के अन्तर से ३०-३० बूंद दवा और २॥-२॥ तो० पानी एकत्र कर पिलाते रहें जब नींद आ जाय तब बन्द कर दें। इस प्रकार ५-६ मात्रा सेवन कराने से ही रोगी सो जाता है।

नींद के लिये हायोसायमीन (खुरासानी अजमायन का सत्व) १ ग्रेन (आधी रत्ती) को साफ गरम जल ३ मा० ६ र० में मिलाकर हायपोडर्मिक सिरिञ्ज में भरकर १ से ४ बूंद तक त्वचा के नीचे पहुचाएँ इसी को हायपोडर्मिक इन्जेक्शन हायोसाइमीन कहते हैं।

(२) रेचक ओषधियां जो मरोड़ पैदा करने वाली हैं उनके उक्त गुण को कम करने के लिये तथा पेचिश की ऐंठन को दूर करने के लिये इसे व्यवहार में लाते हैं।

(३) मूत्रपथ सम्बन्धी चीस चबक अर्थात् वृक्क, वस्ति तथा मूत्र प्रणाली के रोगों तथा—वस्ति प्रदाह प्रोस्टेट ग्रन्थि प्रदाह तथा अश्मरी प्रभृति में वस्तिस्थ आक्षेप निवारण हेतु इसका प्रभावकारी सत्व, हायोसायमीन, मृदु, मूत्रविरेचनीय है, और शरीर से विसर्जित होते समय प्रदाह युक्त झिल्लियोंमें अंत होने वाली वातसंतुओं पर अवसादक प्रभाव करताहै अस्तु जबअनावश्यक रूप से थोड़ा २ मूत्र निकालने के लिये वस्ति में वार बार ऐंठन होती है। तब विशेष रूप से इस का उपयोग होता है। उक्त दशा में इसे क्षारों के साथ संयुक्त कर सेवन करना गुणदायक होता है ऐसी दशा में इसको साधारणतः अन्य युरिनरी सिडेटिभ्ज (मूत्रावसादक) या मूत्रल औषधियों यथा ब्युक्यु या युवा अर्साई अथवा बेञ्जोइक एसिड प्रभृति तथा एल्केलीज (क्षारों) के साथ मिलाकर सेवन कराते हैं।

(४) ब्रांकाइटिज (कास या श्वांस नलिका प्रदाह) में खांसी को कम करने के लिये (५) व्रण शोथ की चीस चबक को दूर करने के लिये इसका पुल्टिस व्यवहार में आता है। (६) पुतली फैलाने के उद्देश्य से आंखों में डालने के लिये। (७) यह बिलाडोना के समान उन्माद मुखशोथ, नेत्रकनीनिका विस्तार तथा निद्राउत्पन्न करता है सूक्ष्म मात्रा में यह अवसादक और हृदय बलदायक है। अधिक मात्रा उत्तेजक एवं अत्यधिक मात्रा निर्बलताजनक है। अस्तु हृदय सम्बन्धी दमा तथा हृदयकपाट सम्बन्धी बिकार एवं तज्जन्य हृदयोत्तेजना में इसका उपयोग किया जाता है।

बच्चों में इसकी बड़ी मात्रा के सहन कीक्षमता होती है। किन्तु वृद्ध एवं निर्बल व्यक्तियों में इस की छोटी मात्रा का भी गहरा प्रभाव होता है एक चाय के चमचा भर इसका रस सर्वोत्तम ओषध है परन्तु यह ऑफिशल नहीं।

हायोसीन (Hyoscine)

यह हायोसाइमस का एक क्षारीय सत्व (Alkaloid) है जो उसके द्वितीय क्षार रहित सत्व हायोसायमीन में भी पाया जाता है। यह एक उड़नशील तैलीय द्रव होता है जो अपने प्रभाव में हायोसायमीन से पाँच गुणा अधिक प्रभावशाली होता है। यह स्वयं औषध रूप से व्यवहार में नहीं आता। इसके हाइड्रोक्लोरेट, हाइड्रोब्रोमेट तथा हाइड्रोब्रोमेट आदि लवणों में से अंतिम का लवण ही अधिक उपयोग में आता है।

हायोसीन हाइड्रोब्रोमाइडम् (Hyoscinæ hydro bromidum)—ले०। हायोसीन हाइड्रोब्रोमाइड (Hyoscine hydrobromide) स्कोपोलेमीन हाइड्रोब्रोमाइड (Scopolamine Hydrobromide) हाइड्रोब्रोमेट ऑफ हायोसीन (hydrobromate ofhyoscine)—इ०। पारसीक यमानी सत्व—हिं०। जौहर बज्र, जौहर सीकरान—ति०।

रासायनिक संकेत

$(C_{17}H_{21}NO_4, HBr, 3, H_2O)$

ओफिशल (Official)

उत्पत्ति—यह हायोसाइमस (पारसीक यमानी) के पत्तों तथा विविध भांति के स्कोपोला

के वृक्षों एवं सोलेनेसीई पौधों में पाए जाने वाले एक एल्कलाइड (क्षारीय सत्व) का हाइड्रोब्रोमाइड है ।

लक्षण—इसके वर्ण रहित रवे होते है। जो वायु में स्थिर तथा स्वाद में तिक्त और जल में अत्यन्त लयशील होते है। एक भाग यह, ४ भाग जल में घुल जाता है ।

प्रभाव—निद्राजनक (hypnotic)

मात्रा— $\frac{1}{200}$ से $\frac{1}{100}$ ग्रेन (३ से ६ मि० ग्राम) मुख या त्वगस्थ अन्तःक्षेप द्वारा ।

नांट आफिशल योग
(Not official preparations)

(१) इञ्जेक्शिओ हायोसीनी हाइपोडर्मिका (Injectio hyoscinæ hy podermica)—शक्ति १००० मिनिम परिश्रुत जल में १ ग्रेन (आधी रत्ती)। मात्रा—५ से १० मिनिम (बूंद)

(२) हाइपोडर्मिक लेमीली(Hypodermic lamele) हरएक लेमीली में $\frac{1}{200}$ ग्रेन । हायोसीनी हाइड्रोब्रोमाइड होता है ।

(३) गटी हायोसीना (Guttæhyoscinæ) एक आउंस परिश्रुत जल में २ ग्रेन हायोसीन हाइड्रोब्रोमाइड होता है ।

(४) ओपथैमिक डिस्क्स (Ophthalmic Discs)—प्रत्येक डिस्क में $\frac{1}{500}$ से $\frac{1}{200}$ ग्रेन हायोसीन हाइड्रोब्रोमाइड होता है ।

हायोसीनी हाइड्रोब्रोमाइड के प्रभाव तथा प्रयोग

यह अधिक विषैला है और प्रभाव में धतूरीन (ऐट्रोपीन) से जिससे रसायनवाद के अनुसार यह इतना निकट का सम्बन्ध रखता है, किसी किसी बात में भिन्न होता है। यह ससक्त अवसादक तथा निद्राजनक है और इसमें धतूरीन (ऐट्रोपीन) के समान हृदयोत्तेजक प्रभाव नहीं पाया जाता, एवं इससे मस्तिष्क के वल्कलस्थ गत्युत्पादक सेल निर्बल हो जाते है। इसे $\frac{1}{120}$ ग्रेन की मात्रा में उपयोग करने से ऊँघ, सुस्तधता तथा प्रकट रूप से स्वाभाविक निद्रा शीघ्र आजाती है और जागने पर रोगी को भला चङ्गा मालूम करता है। कुछ समय लिए कन्ठ में केवल कुछ सुष्कता शेष रह जा है। पागलपन (मेनिया) तथा अनेक प्रका मानसिक विकारों के लिये यह सर्वोत्तम नि जनक औषध है। उक्त औषध को त्वचा के अन्तःक्षेप करने से सर्वोत्तम प्रभाव होता परन्तु किसी किसी रोगी में इसके प्र के ग्रहण की क्षमता अधिक होती है, अस्तु, $\frac{1}{200}$ ग्रेन से अधिक की मात्रा से आरम्भ करना ही उत्तम है। इससे तीक्ष्ण उन्माद, कि धस्तुरीन (Atropine) द्वारा वि रोगी में देखा जाता है, विरला ही उत्पन्न हो है। ए ट्रोपीन के समान यह तत्काल व बलपू नेत्र-कनीनिका को प्रसरित कर देता है इसका यह प्रभाव एट्रोपीन से ४-५ गु अधिक होता है। इससे इन्ट्राओक्युलर टेन (नेत्र पिण्ड का तनाव) स्पष्टरूप से व बढ़ता ।

डाक्टर कौस-(Crauss) के व नुसार इसके उपयोग करने के पश्चात् उन्म बिद्युताघात के समान तत्क्षण स्थिरता को प्र होती है और रोगी की व्यग्रता शीघ्र शान्ति निद्रा में परिवर्तित हो जाती है। परन्तु यह न पक बातग्रस्तता रूपी स्थिरता धीरे धीरे होती मद्योन्माद (डेलीरियम ट्रीमेन्स), प्रसूति न्माद (प्योर्पेरल मेनिया) एवं विविध के अनिद्रा विकारों में यह गुण दायक सिद्ध है। उस अनिद्रा रोग में जिसमें पागलपन छिपा हुआ मादा हो, यह सर्वोत्कृष्ट निद्रा औषध प्रमाणित हुआ है डाक्टर ब्रूस(Bru के अनुभव के अनुसार यह वृक्क रोगों में प्रभाव करता है। हृच्छूल (अञ्जाइना पेक्टो में इसका उपयोग कर सकते हैं ।

दमा, वीर्यस्राव तथा राजयक्ष्मा रोगों में स्वेदस्राव को रोकने के लिये और अफीम सत्व (morphia) तथा कोकोन के अभ्यासियों की चिकित्सा में यह उपयोगी सिद्ध हुआ है।

जर्म्मनी के प्रसिद्ध डाक्टर श्नीडरलीन (Schneiderlein) जेनरल अनस्थेसिया (व्यापकावसन्नता) उत्पन्न करने के लिये स्कोपोलेमीन तथा मोर्फीन को मिलाकर प्रयोग करना लाभदायक ख्याल करते हैं। अस्तु वे ओपरेशन की पूर्व संध्या को लगभग $\frac{1}{100}$ से $\frac{1}{200}$ ग्रेन स्कोपोलेमीन तथा चौथाई ग्रेन मार्फीनको परस्पर संयुक्त कर इसका त्वचा के भीतर अन्तःक्षेप करते हैं। आवश्यकतानुसार ओपरेशन की सुबह को इसे अधिक मात्रा में दोहराया जाता है। इससे रोगी को गम्भीर निद्रा आ जाती है और वह ओपरेशन के पश्चात् कई घन्टों तक सोता रहता है। इस प्रकार वह दुःख व वेदना काल निद्रा में व्यतीत हो जाता है। शिशुजनक काल में इससे 'गोधूली-निद्रा' उत्पन्न होगी। (ए० मे० मे०)

निद्राजनक रूप से ज्वर सहित तंत्रोन्माद सम्बन्धी रोगियों में यह गुणदायक पाया गया है। इससे किसी प्रकार की हानि की सम्भावना नहीं। वृक्कविकार में जहां अफीमसत्व (मॉर्फिया) सर्वथा वर्जनीय है और जब सम्पूर्ण अवसादक औषधियां निष्फल सिद्ध होती है उस समय इसका उपयोग निर्भयतापूर्वक किया जाता है।

हायोसीन के हाइड्रोब्रोमेट, हाइड्रोक्लोरेट तथा हाइड्रिओडेट शुक्रमेह में लाभदायक पाए गए। (प्रै० बी० एम०)

हायोसाइमीन (Hyoscyamine)

यह रचना में धत्तूरीन (ऐट्रोपीन) के समान होता है तथा हायोसीन व हायोसिनिक एसिड में विश्लेषित किया जा सकता है। यह स्फटिकवत् एवं चिकुताकार दोनों रूपों में पाया जाता है। इसके सूक्ष्म श्वेत रवे होते है या यह श्यामधूमर वर्ण का सत्व सदृश पदार्थ होता है।

हायोसायमीनी सल्फास
Hyoscyaminæ sulphas

पर्याय—हायोसायमीन सल्फेट (Hyoscyamine Sulphate)-इं०।

रासायनिक संकेत $(C_{17}H_{23}NO_3)_2, H_2SO_4, 2H_2O$.

ऑफिशल (official)

यह पारसीक यमानी पत्र तथा अन्य सोलेनेसीई पौधों में पाये जाने वाले एक ऐलकलाइड (क्षारीय सत्व) का गन्धेत् (सल्फेट) है।

लक्षण—यह एक पीत या पीत श्वेतवर्ण का स्फटिकवत् व गन्धरहित चूर्ण है जो वायु में से नमी को अभिशोषित करता है।

स्वाद—तिक्त एवं चरपरा।

नोट—इसको वायु विशेषकर तर वायु से सुरक्षित गहरे अम्बरी रङ्ग के मजबूत डाट वाले बोतलों में रखना चाहिए।

लयशी लता—यह २ भाग, एक भाग जल मे और १ भाग ४॥ भाग हली (९० प्रतिशत) में और अत्यन्त ख़फ़ीफ़ क्लोरोफार्म और ईथर में घुल जाता है।

प्रभाव—व्यासावसादक (General sedative) और निर्बल निद्राजनक (Weak hypnotic)। सामुद्र रोगों (Sea sickness) में लाभदायी है।

मात्रा—$\frac{1}{200}$ से $\frac{1}{100}$ ग्रेन (·३ से ·६ मि० ग्रा०) मुख से या त्वगस्थ अन्तःक्षेप द्वारा।

नाट आफिशल योग
(Not official preparations)

(१) हायोसायमीनी हाइड्रोब्रोमाइडम् (Hyoscyaminæ hydrobromidum) इसके छोटे छोटे श्वेत दानेदार रवे होते हैं, जो ३ भाग १ भाग जल में लय हो जाते हैं।

मात्रा—$\frac{1}{200}$ से $\frac{1}{100}$ ग्रेन।

(२) इञ्जेक्शिओ हायोसायमीनी हाइपोडर्मिका (Injectio hyoscyaminæ hypodermica) हायोसायमीन सल्फेट १ ग्रेन (आधी रत्ती), परिश्रुत जल २ ड्राम। मात्रा—१ से २ बूंद।

(३) हाईपोडर्मिक लेमेल्ज (Hypodermic lamels) प्रत्येक लेमीली में $\frac{१}{१००}$ से $\frac{१}{५००}$ ग्रेन उक्त औषधि होती है।

(४) आफ्थैल्मिक डिस्कस (Ophthalmic discs) प्रत्येक डिस्क में $\frac{१}{५००}$ ग्रेन दवा होतीहै

(५) हायोसायमीनी ग्रेन्यूल्ज (Hyoscyaminæ granules) प्रत्येक में $\frac{१}{१००}$ ग्रेन।

यह सी-सिक्नेस (सामुद्र रोग) में लाभदायक है।

हायोसायमीनी सल्फास के गुणधर्म व प्रयोग

प्रभाव—हायोसायमीन या हायोसायमस का द्वितीय क्षारीय सत्व नेत्रकनीनिका प्रसारक है, और थोड़ी मात्रा में यह नाड़ी की गति को मंद करता है तथा धामनिक तनाव की वृद्धि करता एवं शारीरोष्मा की कमी को रोकता है और भूल चूक (Hallucination) व विभ्रम पैदा करता है। अधिक मात्रा में यह तत्क्षण नाड़ी स्पन्दन को कम कर देता है तथा प्राकट्य वातग्रस्तता या चालन की अशक्तता तथा निद्रा उत्पन्न करता है।

उपयोग—हायोसीन की अपेक्षा हायोसायमीन प्रभाव में धत्तूरीन (Atropine) से अधिक समानता रखता है। अधिकांश रोगियों में यह बिना पूर्व विभ्रम के निद्रा उत्पन्न करता है। हायोसायमीन (Hyoscyamine) एट्रोपीन के समान ही, किन्तु उससे अधिक नेत्रकनीनिका प्रसारक है। इसमें एट्रोपीन से विभ्रमकारी प्रभाव कम तथा निद्राजनक प्रभाव अधिक है। इसमें अधिक विश्वसनीय तथा शीघ्र मदकारी (नारकोटिक) गुण है। और यह सत्व अफीम (मार्फीया) तथा क्लोरल हाइड्रेट से पूर्ण तथा कम वर्जनीय है। यह वातमंडलावसादक है।

डा० रिङ्गर (Ringer) के कथनानुसार जिन्होंने सम्भवतः अशुद्ध लवण का नवीनोन्माद में उपयोग किया इसके प्रभाव का एट्रोपीन से तुलना करने पर कोई भेद नहीं ज्ञात हुआ। यह बलवान नेत्रकनीनिका प्रसारक है तथा नेत्र रोग में इसका उपयोग होता है। परन्तु एट्रोपीन की अपेक्षा यह विशेष लाभदायी नहीं है।

डा० ए० आर० कुश्नी (Cushny) के वर्णनानुसार विशुद्ध हायोसायमीन शुद्ध एट्रोपीन की अपेक्षा नेत्रकनीनिका प्रसारण तथा लालास्राव प्रतिबंधन में द्विगुण शक्तिशाली है। किश्ती पर सवार होने से प्रथम यदि इसे कुछ दिवस तक $\frac{१}{१००}$ ग्रेन की मात्रा में उपयोग करें तथा इसे कुछ समय तक प्रति घंटा २—२ घंटा पर दोहराते रहें तो यह सामुद्र रोग (Sea sickness) को रोकने के लिये सर्वोत्कृष्ट औषध है। यह कनीनिकाप्रसारक रूप से भी व्यवहार में आता है फालिज (अर्द्धाङ्गवात या पक्षाघात) सहित कम्पन में कपकपी को रोकने तथा पारदीय पक्षाघात के लिये औषध रूप से उपयोग में आता है। परन्तु उक्त प्रयोजन के लिये यह हायोसीन से निम्न कोटि का है।

अनिद्रा (इन्साग्निया), पागलपन (मेनिया) मद्योन्माद (डिलेरियम ट्रीमेन्स), सार्द्धांग कम्पन (पैरालिसिस ऐजिटेम्स), दमा (एज्मा), वातवेदना (न्युरेल्जिया) तथा कम्पन (कोरिया) में इसका उपयोग किया गया, किन्तु यह हायोसीन की अपेक्षा कम उपयोगी प्रतीत हुआ। (एलो० मे० मे० ह्विटला)

मानसिक विकार—नव्योन्माद, असीम व्यग्रता, भ्रम, शंका, सोत्तेज्य, स्मृति, भ्रंश तथा

अवयवस्थितता, अपस्मारोन्माद तथा पुरातन विस्मृति रोग में इसका व्यवहार होता है पागलपन एवं तत्सम्बन्धी दशाओं में बिना किसी कुप्रभाव के क्लोरल की अपेक्षा निश्चित निद्रा उत्पन्न करता है। तीव्रोन्माद में इसके उपयोग की उत्तम विधि त्वगन्तर अन्तःक्षेप है।

वात विकार—सार्द्धांग कम्पन में यह वह काम करता है जो किसी और औषध ने कभी नहीं किया अर्थात अचेतना उत्पन्न किये बिना ही यह अंगचालन को चार घंटे तक रोक देता है। जब सम्पूर्ण औषधियाँ असफल हो जाती हैं उस समय यह वायु कम्पन को ठीक करता है एवं उसी प्रकार यह पारदीय कम्पन, वृद्धावस्था अथवा निर्बलता जन्य कम्पन, रैशा (कोरिया) तथा योषापस्मारीय आक्षेप को शमन करता है। युवा या बाल दोनो के तशन्नुज (आक्षेप) की अवस्था में यह वेदना तथा प्रदाह को शमन करता है। बातवेदना में इसका उपयोग किया गया और सम्भवतः ज्ञान तन्तुओं की उत्तेजना कम होकर वेदना शान्त हो गई।

आक्षेप शमन—यह आक्षेपशामक है और इस लिये आक्षैप युक्त कास, श्वास, हिकफ (हिचकी) आदि में इसका लाभदायी उपयोग होता है।

मूत्रविकार—यह मूत्र बिरेचक हैं तथा वृक्क गबिन्यु (युरेटर) तथा वस्तिस्थ वेदना एवम् खराश को शमन करता है।

निद्राजनक—यह सार्वांगिक वेदनाशामक तथा निद्राजनक औषध है और जब अफीम का उपयोग अनुचित होता है उस समय इसे देने से नींद आ जाती है इससे विवन्ध नहीं पैदा होता

औषध-निर्माण तथा मात्रा—हायोसायमीन (स्फटिकवत्) $\frac{१}{२००}$ से $\frac{१}{४०}$ ग्रेन हायोसायमीन (विकृताकार) $\frac{१}{१६}$ से $\frac{१}{८}$ ग्रेन नवीनोन्माद में $\frac{१}{४}$ से १ ग्रेन की मात्रा में भली प्रकार हलका कर (Diluted) तथा चतुरता पूर्वक उपयोग करना चाहिये। क्यों कि कुछ रोगियों में इसके बरदाश्त की शक्ति नहीं होती।

हायोसायमीनी सल्फ $\frac{१}{१२०}$ से $\frac{१}{४०}$ ग्रेन।

त्वगन्तरीय सामान्य मात्रा—$\frac{१}{७५}$ या $\frac{१}{८०}$ ग्रेन, अधिक से अधिक $\frac{१}{१०}$ और कम से कम $\frac{१}{१२०}$ (प्रै० वी० एम०)

परीक्षित योग

(१) एक्सट्रैक्टम् हायोसायमाई ३ ग्रेन, पल्विस कैम्फोरी २ ग्रेन दोनों की एक गोली बना कर रात्रि में सोते समय दें। कार्डी (सुजाक सम्बन्धी शिश्नोत्तेजना) में लाभदायक है।

(२) एक्सट्रैक्टम् हायोसायमाई २ ग्रेन, जिन्साई वेलेरीएनेट्स २ ग्रेन, एक गोली बनाएँ और एसी १–१ गाली दिन में २ बार दें। नर्व सिडेटिव (वातावसादक) है।

(३) हायोसीनी हायड्रोब्रोमाइड १/१०० ग्रेन, पल्विस सैक्रिलैक्टस (मिल्क शूगर) २ ग्रेन। गोली बनाकर सोते समय दें। पैरेलिसिस एजिटेन्स (पक्षाघातीय कम्पन) में गुणदायक है।

(४) सोडियाइ ब्रोमाइडाई १५ ग्रेन, सक्काई हायोसायमाई आधा ड्राम, सीरूपाई पेपेवरस १ ड्राम, एक्वा डिस्टिलेटा १ आउंस तक, ऐसी एक मात्रा औषध रात्रि में सोते समय दें। अनिद्रा (इन्साम्निया) में लाभदायक है।

(५) टिङ्क्चूरा हायोसाइमाई ३० मिनिम, सोडियाई बेञ्जोएट्स १० ग्रेन, एलिक्सर सक्किराइनी ५ मिनिम, एन्फ्युजम् ब्युक्यू १ आउंस तक। ऐसी एक एक मात्रा प्रति चार चार घंटा पश्चात् दें। वस्तिप्रदाह (सिस्टाइटिस) और वृक्क प्रदाह (पाइलाइटिस) में फलदायक है।

अजवाइन मुंदब्बर—ति० शुद्ध अजवाइन। विधि—अजवाइन को तीन दिन रात इतने सिर्का में तर रखे कि वह अजवाइन से चार अंगुल ऊपर रहे। फिर उसे सिर्का से बाहर निकालकर शुष्क करलें। जीरा को भी इसी प्रकार शुद्ध करते हैं। प्योरिफाइड अजोबान PurifiedAjowan—इं०।

अजवाण–जय०
अजबान–हिं०, द०, गु० } अजवाइन Carum Ajowan, *D. C.*)

अजवान का अर्क–द० अर्क अजवान–हिं० ओमम् वाटर (Omum water)–इं०।

अजवान का पत्ता–द० पत्तीरी का पत्ता, पत्तीरी का पात, सीता की पत्तीरी–हिं०। ऐनीसाकिलस कार्नोसस (Anisochilus Carnosus, *Wall.*)–ले०। थिक लीव्ड लेवेण्डर (Thick-leaved lavender)–इं०। इं० मे० मे०। फा० इं०।

अजवान का फूल–द० हिं० अजवाइन का सत। स्टियरप्टिन (Stearoptin), फ्लावर्स आफ अजवान कैम्फर (Flowers of ajowan camphor)–इं० देखो—अजवाइन।

नोट—यह अंगरेजी थाइमोल (सतपुदीना) के समान होता है।

प्रभाव—व्यासोंत्तेजक, आमाशय बल्य, वायु-निःसारक, आक्षेपशामक, शोधनीय। यह पुरातन स्रावों, यथा—कास में अधिक श्लेष्मास्राव को रोकता है।

प्रयोग—अजवाइन का तेल और सत अजवाइन को सोंडा के साथ मिलाकर देने से आमाशयिस्थ अम्लरोग, अजीर्ण तथा आध्मान दूर होते हैं। इं० मे० मे०। देखो—अजवाइन तथा थाइमोल।

अजवायण–जय०
अजवायन–हिं० संज्ञा स्त्री० } [सं० यवानिका] अजवाइन (Carum Ajowan' *D. C*)

अजवायनगुटिका–सं०स्त्री० अजवाइन, जीरा, धनियां मिर्च, विष्णुकान्ता, अजमोद मँगरैल प्रत्येक ४ शा० हींग भुनी, ६ शा० तथा सज्जीखार, जवाखार, पञ्चलवण, निशोथ, प्रत्येक ८ शा० और जमालगोटा, कचूर, पुष्कर मूल, बावडिंग, अनारदाना, बड़ी हड़, चित्रक, अम्लवेद, और सोंठ प्रत्येक १६ शा० लें, पुनः बिजौरे (नीबू) के रस में मर्दन कर चने समान गोलियां बनांऐ सेवनविधि यथा गुण—घृत, दूध, मधु नीबू के रस और उष्णजल के साथ देने से गुल्म का नाश होता है। मद्य से वात गुल्म। गो दूध से पैत्तिक गुल्म, गोमूत्र से कफज गुल्म, दशमूल क्वाथ से त्रिदोषज गुल्मरक्त स्त्री का रक्त गुल्म यथा ऊंटनी के दूध के साथ देने से हृदय रोग संग्रहणी शूल कृमि रोग, और अर्श का नाश होता है। शार्ङ्ग० सं० मध्य० ख० अ० ७।

अजशृङ्गीङ्गिका–सं० स्त्री० } –हिं० संज्ञा स्त्री०, पु०
अजशृङ्गी–सं० स्त्री० } वृक्ष जो भारतवर्ष में प्रायः समुद्र के किनारे होता है। इसकी छाल संकोचक है और ग्रहणी आदि रोगों में दी जाती है। इसका लेप घाव और नासूर को भी भरता है। मेढ़ासि (शि) गी, मेषशृङ्गी। ऐस्क्लीपिआस गेमिनेटा (Asclepias Geminata' *Roxb*)–ले०। भा० पू० १ भा० गु० व० ३७। रा० नि० व० ६। सु० सू० ३८ अ०, रा०, मद० व० १। (२) ककटशृङ्गी, काकड़ासिङ्गी। (इसका वृक्ष पुत्रजीव वृक्ष के समान होता है) (Rhus succedanea Acuminata)–ले०। सु० सू० ३७ अ०। (अ), भा० ४ भा० रेवतीग्रह–चि०। मेषशृङ्गी वा कर्कटशृङ्गी। सु० सू० ३८ अ०। वल्लीपञ्चके। वा० चि० ८ अ०। "अजशृङ्गी जटाकल्कम्।" भा० पू० २ भा० अने० ब०।

अजश्री–सं० स्त्री० फिटकिरी, फटिकारिका, फटिकारी, स्फटिकारि। मा० नि०। Alum (Alumen)

अजस–अ० अज्ञात।

अजखर–अ० रोहिषतृण। इज़्ख़िर (Andropogon schoeranthes)

अजह्–अ० हरिण, मृग। ग़ज़ालह्, आहू–फा०। (A deer or antelope)

अजहल–अ० नर कबूतर, कपोत, पारावत। (A pigeon)

अजह्.ह्.–अ० मादा लोमड़ी। फॉक्स (A fox)

अजहा-सं० स्त्री० कौंच, केवाँच, शुकशिम्बी। आला-कुशी-बं०। (Carpopogon pruriens) अ० टी०।

अज़हार-अ० (ब० व०), ज़हर (ए० व०), कलियाँ, कलिकाएँ-हिं०, द०। ग़ुञ्चहा-फा०। बड्स (Buds)-इं०। देखो—कली (लि)

अजहारुर्रेह-
अजहारुल्फसह- } फा० अनामून (Puls atilla)

अजहून-अ० ऊँट (A camel) सं० फा० इं०।

अजक्षीरम्-सं० क्ली० छागीदुग्ध, अजादुग्ध, बकरी का दूध। वा० उ० १६ अ०। (Goat's milk)

अजक्षीरनाशः-सं० पु० शाखोटवृक्ष, सहोरा (सि), रुसा, सिओड़-हिं०। शेओड़ा-गाछ-बं०। (Streblus asper, *Linn*) रा० नि० व० ६।

अजा-सं० स्त्री०, हिं० संज्ञा स्त्री० (१) (A she goat छागी, बकरी। (२) उक्त नाम की महौषधि विशेष। इसका स्वरूप अजा (बकरी) के स्तन जैसी आकार वाली, दूध युक्त, छुप (पौधे) के रूप की शंख, कुन्द तथा चन्द्रमा जैसी उज्वल और पांडुर रंगवाली महौषधि है। सु० चि० ३० अ०। देखो—ओषधिः। (२) प्रकृति या माया। सां० द०।-हिं० वि० जिसका जन्म न हुआ हो। जो उत्पन्न न की गई हो। जन्म रहित।

अजा-अ० सीपी का एक भेद है। (A Kind of common oyster shell)

अजाकर्ण-सं० मदी (एक बड़ा हिन्दी वृक्ष है)। (A huge indigenous tree)

अजागरः-सं० पु० (१) भाँगरा, भँगरैया, भृङ्गराज वृक्ष। भीमराज-बं०। एकलिप्टा ऐल्बा (Eclipta alba, *Hassk*) श० र० (२) महासर्प, दर्वीकर सर्प (फणदार या गेहुँअन साँप) (The cobra)

अजागरी-सं० वि० Name of a plant एक पौधा है।

अजागलस्तनः-सं० पु० (The fleshy protuberance or nipple hanging down from the neck of goats) लरी।

अजाघृतम्-सं० क्ली० छागीघृत, बकरी का घी।

गुण—बकरी का घी चक्षु के लिये हितकारी, दीपन, बलवर्द्धक, वृष्य, पाक में कटु, कास, श्वास और क्षय को नष्ट करता है एवं कफ, अर्श (बवासीर) तथा राजयक्ष्मा के लिये परम हित है। वै० निघ०।

अजाज-अ० (१) Dust गुब्बार, धूल: Smoke धूम्र। (२) (A fat camel) बहुत मोटा ऊँट।

अजाज्ञ-अ० बड़ा ऊँट (A huge camel)

अजाजिकः,-का-सं० पु० पीला जीरा, पीतजीरक। (Yellow cumin seed) रा० नि० व० ६।

अजाजी,-जिः-सं० स्त्री०, हिं० संज्ञा स्त्री० (१) जीरा सफेद और काला जीरा। जीरकस्थूलजीरक-सं०। Cumin seed (Cuminum Cyminum) रा० नि० व० ६। च० द० संग्रहणी चि० बृहच्चुक्र। (२) Ficus oppositifolia काकोदुम्बरिका अजीर। जीरा, सफेद जीरा। भा० पू० १ भ० ह० व०। च० द० संग्रहणी चि० आयासकाञ्जिक। र० सा० सं० माणिक्य रस। (३) (Nigella sativaor Indica) कृष्णजीरक, कालाजीरा। सि० यो० दिवारात्रि ज्वर वृन्द०। "गुड़ संयुक्त जीरा विषम ज्वर नाशक है।"

अजाजीवः
अजापालकः } सं० पु० (A goat-herd) गड़ेरिया, भेड़ बकरी पालने वाला।

अजाद्यादि चूर्णम्-सं० स्त्री० जीराश्वेत ८ तो० जवाखार ४ तो०, नागरमोथा ८ तो०, अहिफेन शु० ४ तो०, मंदारमूल १६ तो० ले चूर्ण कर सेवन करने से उग्र संग्रहणी, ज्वरातिसार, रक्ता-

तिसार, निरक्षातिसार तथा घोर बिसूचिका दूर होती है। भैष० र० ग्रहण्याधिकारे।

अजात-हिं० वि० [सं०] (Unboru) जो पैदा न हुआ हो। अनुत्पन्न। अन्म रहित, अजन्मा।

अजातक्रम्-सं० क्ली० छागी तक्र बकरी का तक्र। गुण—बकरी का तक्र लघु, स्निग्ध तथा दाह, गुल्म, और अर्शनाशक है एवं त्रिदोष, शोथ (सूजन) ग्रहणी और पांडुरोग में परम हितकारी है वै० निघ०।

अजात ककुत्,-द्-सं० पु० (A young bull whose hump is notyet fully developed) वह युवा सांड़ जिसका डील पूर्ण विकास को प्राप्त न हुआ हो।

अजातान्-सं० क्ली० वह स्थान जहां केश न उगे। अथ०। सू० १३६। २। का० ६।

अजाद-अ० पस्तकामत-फा०। बौना ठिंगना छोटे कद का.हिं०। पिग्मी Pigmy-इं०।

अजात दन्तः-सं० त्रि० छः मास व्यतीत होनेपर भी जिस बालक के दन्त न उगे अर्थात् दन्तभेद न हो उसे ,अजातदन्त कहते हैं।

अजादनी-स० क्ली० क्षुद्र दुरालभा। छोटासा धमासा जवासा। (A small species of prlckly night-shade) रा० नि० व० ४।

अजादुग्धम्-सं० क्ली० छागी (-ग) दुग्ध. बकरी का दुग्ध (Goat,s milk) वै० श०।

अजान-हिं० वि० (१) अज्ञान, मूर्ख निर्बोध(Ignorant'simple,innocent)। (२) अजाअन। एक पेड़ जिसके नीचे जाने से लोग समझते हैं। कि बुद्धि भ्रष्ट हो जातीहै यह पीपल के बराबर ऊंचा होता है और इसके पत्ते महुये केसे होते हैं इसमें लम्बे २ मार लगते हैं।

अजानयाः- सं० पु०
अजानेयः- सं० पु० } उत्तम अश्व कुलीन घाटक अच्छी जाति का घोड़ा। (A horse of good breed) जयदत्त।

अजानस-हजानस जुअलान। गोबरौंदा, गुबरौंता, गोबरीला (एक प्रकार का कीड़ा जो गोबर में पैदा होता है) A beetle found in dung hill or old cowdung (Scarabeus or ster conarius copris)

अजान्त्री-सं० स्त्री० (१) नील बुन्हा। नील बौंना, छागल बेंटे बं० A pot-herbconv. olvulus argenteus.) रत्ना० पर्याय—नीलबुन्हा, नीलपुष्पी (नील अपराजिता) अतिलोमशा नलिनी, छगलान्त्री, अन्तः कोटरपुष्पी (२) वस्तान्त्री, वृद्धदारकः (रा)। गुण—रस में कटु कासनाशक वीर्य वर्द्धक तथा गर्भजनक है रा० नि० व० ३। (२) (Gmelina A. siatica or Roura santaloides) वृद्धदारक, विधारा। रा० नि० व० ३।

अजानिः-सं० पु० (without a wife'a w. idower) रंडुआ।

अजानिकः-सं० पु० (A goatherd) गड़ेरिया भेड़ बकरी पालने वाला।

अजापक्वम्-सं० क्ली० पक्वघृत विशेष।

अजापञ्चकम्-सं० क्ली० यक्ष्मा रोग में प्रयुक्त होने वाला घृत। निर्माण विधि—छागीघृत ४ श० छागविष्ठारस ४श०, छागीदुग्ध ४ श० छागीदधि ४ श० छाग मूत्र ४ श० इनको एकत्रित कर उस में ८ पल यवक्षार डालकर यथा विधि पाचन करें बस इसी को "अजापञ्चक,, कहते हैं। च० द्० यक्ष्मा-चि० भैष।

अजापञ्चक घृतम्-सं० क्ली० छाग पुरीष रस छाग मुत्र, छाग दुग्ध, छागदधि, इनमें घृत सिद्ध कर सेवन करने से राज्ययक्ष्मा, श्वांस, तथा खांसी दूर होती है।

अजापयः-सं० क्ली० (Goat milk) छाग दुग्ध बकरी का दूध। वा० उ० १३ अ०।

अजापाद्-स० पञ्जारी, सिटकी इन्दुपर्णी उत्पलमेद सं०। ऐनिसाकिलस कार्नोसस (Anisochilus carnosus) ले०। इ० मे० मे० देखो सीता की पञ्जीरी।

अजाप्रिया-स० स्त्री० झाड़बेरी-पं०। बदरी वृक्ष बेर हिं०। बालक प्रिया, भू-कर्कटक, सूक्ष्म फल सं० मझ बेर, झाड़ी-यू० पी०। जिजिफस नुम्मुलेरिया (Zizyphus nummularia) बि०

माइक्रोफाइला (Z. Microphylla)--ले० भा० फ० व०।

अजाफ-अ० इन्द्रायन का फल। हंजल फा० (Citrullus colocynthis' *Schrad.*)

अजाम-अ० बड़ा चमगादड़, चामचिड़िया, चमगीदड़ चमगुदड़ी (A bat)

अजामांसम्-सं० क्ली० (Goatflesh) छाग मांस बकरे का मांस गुण—लघु स्निग्ध किंचित् शीतल रुचिकारक मधुर पुष्टिकारक बलकारकतथा वातपित्त नाशक है वै० निघ०।

अजामूत्रम्-सं० क्ली० (Shegoat's urine) छागी मूत्र बकरी का मूत्र गुण—रस में कटु उष्ण वीर्य रूक्ष नाड़ी विषघ्न एवं प्लीहोदर कफ श्वास गुल्म तथा शोथ (सूजन) नाशक और लघु है। रा० नि० व० १५। व० उ० २४ अ०।

अजामेदः-सं० क्ली० (Goat,sfat) छागवसा बकरे की चर्बी। वा० चि० ३ अ०।

अजायन-
अजान- } हिं० सं० पु० नीम के बराबर होने वाले एक भारतीय वृक्ष का नाम है। इसके पत्ते आम के पत्तों के समान किंतु इससे बारीक और लम्बे होते हैं इसमें फलियां लगती हैं जो अंगुली के बराबर मोटी और आध गज तक लम्बी होती हैं। इसकी छाल रक्त शोधक है।

अजायह्-अ० सारा (छिपकली के किस्म का एक जानवर है) A kind of lizard

अजार-हिं० संज्ञा पु० [फा० आजार] रोग। बीमारी। (A disease)

अजार-अ० अजवह् माई खुर्द,(छोटी या बड़ी माई) झाऊ (Tamarix Gollica *Linn*)

अजारम्-अ० मजबूत सूई अथवा पुरुष शिश्न। (Strong needle or human p, enis)

अजारह-अ० खजूरभेद। (A kind ofDate)

अजाराकी-अ० कुचिला। नक्स वांमिका (Nux vomica). वामिट नट (Vomit-nut) -पं०। मु० अ०। म० अ०।

अजाराकी सिरिया-इं० कुचिला (Nux vomica) फा० इ०।

अजालत-अ० पिस्सू (केक) -हिं०। एफ्ली (A flea)-इं०।

अजालहेबकारत-अ० कुमारिच्छद को नष्ट करना। रप्चर आंफ दी हाइमीन (Rupture of the hymen)-इं०।

अजावयः-सं० पु० वह ओषधियाँ जिन्हें बकरियां खाती है। अथ०। सू० ७। १५। का० ८।

अजाविकं-सं० क्ली० (Small cattle) क्षुद्र पशु।

अजाविट्-सं० क्ली० छाग विष्टा, बकरे की लेंडी Goat's Fæes (excrements) वा० उ० १० अ०।

अजावी सीड्स-इं० अजवाइन। फा० इं० २ भा०।

अजाशृङ्गी-सं० स्त्री० मेढ़ सिंगी, मेषशृंगी (Asclepias geminata'*Roxb*)।

अजाश्वम्-सं० क्ली० (Goats and horses) बकरे और घोड़े।

अजाहन-अ० साही-हिं०। खारपुश्त-फा०। पांक्युपाईन (A Porcupine), हेज हॉग (hedge hog)-इं०।

अजाह्-सं० क्ली० (Carpopogon pruriens) केवांच, आत्मगुप्ता। आलाकुशी-ब०। अ० टी० भ०। देखो-अजहा।

अजाह्-अ० कण्टकयुक्त बड़ा वृक्ष, जैसे-बेरी अथवा बबूर वृक्ष(Any spinous tree)

अजाक्षी-सं० स्त्री० अंजीर A fig (Ficus oppositifolia'*Roxb*) रा० नि० व० ११।

अजाक्षीरम्-सं० क्ली० छागी दुग्ध, बकरी का दूध (Shegoatmilk) वै० श०।

अजिका-सं० स्त्री० (१) रामतुलसी, वन तुलसी (ocimum gratissimum *Linn*) इं० मे० मे०। (२) (A young she-goat) जवान बकरी।

अजिज-अ० विवश होना, निर्बलता, अशक्तता हिं०। डेबिलिटी (Debility)-इं०।

अजित–हिं० वि० [सं०] अपराजित । जो जीता न गया हो ।

अजित तैलम्–सं० क्ली० मुलेठी का कल्क ४ तो०, आमले का रस ६४ तो०, गो दुग्ध ६४ तो०, तिल तेल मिलाकर तेल सिद्ध करें । गुण—इसके सेवन करने से दृष्टि विमल होती है । भैष० र० नेत्र० रो० चि० । वङ्ग० से० सं० नेत्र० रोग० चि० ।

अजित प्रसारणी तैलम्–सं० क्ली० शरत्काल के सुपक्व प्रसारणी मूल ४०० तो०, दशमूल, वरि. याग (बला), अश्वगंध, शतावर, पियावांसा, गोखरू, रास्ना, कौंचबीज, गुरुच, पुनर्नवा प्रत्येक पृथक २,४०० तो० । कुलथी, बदरीमूल, यव प्रत्येक २५६ तो० कूटकर छः द्रोण (६६ सेर) जलमें क्वाथ करें, जब १ द्रोण शेष रहे तब उसमें तिल तैल ४ सेर, मांसरस ४ सेर, दही ४ सेर, गोदुग्ध १६ सेर, शुक्र ४ सेर, दही का पानी ४ सेर, मूली का रस, ४ सेर, कांजी ४ सेर, तथा रास्ना, सोंफ, अगर, देवदारु, मजीठ मुलहठी, महुआ पुष्प (मधुक पुष्प), नख, नेत्रवाला, बालछड़, बच, सेंधानोन, चित्रक, जवाखार, सरल दारुहरुदी, वायविडंग, भिलावाँ, पुष्करमूल, कूट, पीपलामूल, चव्य, मेदा, महामेदा; जीवक, ऋषभक, काकोली, क्षीर काकोली, मिर्च, दालचीनी, इलायची, काकड़ासिंगी, कचूर, नखी, गजपीपल, स्पृक्का, मैनफल, सोंठ, केशर, चन्दन, तेजपात, गोखरू, अदरख, कंकोल, ऋद्धि वृद्धि, हल्दी, कमल, अजवायन, जीरा, अजमोद, नागरमोंथा, सिंघाड़ा, तज पीपर, इन्हें २–२ तोला लेकर कूट वारीक चूर्ण कर उक्त तेल में मिलाकर पकाएँ सेवन विधि तथा गुण—इसके सेवन से पंगुरोग वाले, बिसर्प, स्नायु सकोच खज, शिरा, संकोच, गात्र भग्नता, गति की नष्टता, मन्यास्तम्भ, भुजा, कंठस्तम्भ, एकांगवात, सर्वांगवात, लकवा, सोजा, खुजली, हनुग्रह, महावात तथा जिनके अंग जर्जरित हो गये हो, कटि, कपाल, जानुस्थित वायु, संधियों का मारजाना, शिरास्तब्ध, स्नायु, अस्थि, सन्धि, उरु, इनमें स्थित वायु. शूल, शिरोशूल, गात्रशूल, एकांग तथा सर्वांग वात, स्त्रियों का योनिशूल, जो वातरक्त के प्रकोप से हुआ हो, पुरुषों का शुक्रक्षय, मेढ्रशूल, क्लिन्नता, इन्द्रीक्षीणता, गूंगापन, स्मृतिविभ्रम, तुतलाना, निरुद्ध वाणी, स्त्रियों की सन्तान होनेका आर्तव, शुक्र का दूषित हो जाना, इन समस्त विकारों को दूर करते हुये मनुष्य को स्मृति प्रदान होता है ।

इसके सिवाय, आध्मान, प्रत्याध्मान अधिक प्रकार का आना, बम्मा, कर्णनाद, क्षत, वातोन्माद, अपस्मृति, शाखावात, गृध्रसी, अनेक प्रकार के वातरोग, मिश्रित बात, कफ के रोग इसके अभ्यंग, पान और नस्य से दूर होते हैं तथा जिनके अंग सिकुड़ गए हो उन्हें प्रसारित करता है । उर्ध्वगत समस्त बात रोगों को यह अजितप्रसारणी नामक तेल शीघ्र दूर करता है । वं० से० सं० बात व्या० चि० ।

अजितागदः–सं० क्ली० वायविडंग, पाठा, (निर्गुण्डी हरिद्रारे), आमला, हड़, बहेड़ा, अजमोद, हींग, सोंठ, मिर्च, पीपल, चित्रक, लवणों का सूक्ष्म बारीक चूर्ण कर शहद मिला कर गाय के सींग में भर कर १५ दिन तक बन्द रक्खें । प्रयोग—इसके सेवन से स्थावर तथा जंगम विष दूर होते है । भै० र० विषाधिकारे ।

अजितात्मन्–
अजितेन्द्रिय– } सं० पु० (One who has not subdued his mind or his senses) वह मनुष्य जिसकी आत्मा पर इंद्रियाँ वश में न हों ।

अजिन–अ० जिस मनुष्य के कण द्वारा सर्वदा जल स्राव होता हो ।

अजिनम्–सं० क्ली०
अजिन– हिं० सं० पु० } (१) मृगचर्म, मृग छाला । (The hairy skin of an antelope) अम० । (२) चर्म्म, छाल । (३) ब्रह्मचारी आदि के धारण

के लिए कृष्णमृग और व्याघ्र आदिका चर्म। अथ०। सू० ६८। ३ का०।

अजिनपत्रा-सं० स्त्री० (A bat) चमगादड़-हिं०। जतु (तू) का, चर्मचटका (टी)-सं०। वादुड़ा, चामूचिकी-बं०। रा० नि० व० १९।

अजिन पत्रिका-सं० स्त्री० (१) (A bat) चर्म्मचट, चमगादड़-हिं०। हे० च० f (२) (Anowl) पेचक उलूक पक्षी, उल्लु।

अजिनपत्री-सं० स्त्री० (A bat) जतु (-तू-) का, चमगादड़, चामचिड़िया-हिं०। चामूचिकी-बं० रा० नि० व० १९।

अजिन योनिः-सं० पु०
अजिन योनि- हिं० संज्ञा पु०
} हरिण, मृग (A deer an Antelope) प० मु।

अजिन्नह्-अ० (ए० ब०), जनीन (ब० ब०) गर्भ, भ्रूण जरायुस्थ शिशु वह शिशु जो माता की उदर में हो। फीटस Fœtus, एम्ब्रयो Embryo-इं०।

नोट—अंगरेजी में ३ मास से न्यूनावस्था वाले भ्रूण को एम्ब्रयों और इससे अधिक वाले को फीटस कहते हैं।

अजिष्टिशी इण्डिगोफ फ्लेञ्ज-जर० श्वेतनील, नीलिनी-सं०। नील बं०। (Indigofera Argenta) इ० मे० मे०।

अजिव-अ० वह जल जिस पर काई जमी हो।

अजिरः-सं० पु० क्ली०
अजिर-हिं० संज्ञा० पु०
} (१) मण्डूक, मेंढक, दर्दुर। A frog (Rana tigrina) (२) Wind, *Air* वात। (३) Anyobject of sense विषय (इन्द्रिय)। (४) The body तन, शरीर। (५) Acourt-yard आंगन, सहन। सर्वत्र मे० रत्निक।

अजिरत-अ० (ए० ब०). अजिरात (ब० ब०) मल, विट्, गूह, पाखाना (मनुष्य का)। Fœces; Excrement

अजिरत-अ० मूलाधार, गुदा और वृषण के मध्य की रेखा (चुरट), वह रेखा जो वृषणों के निम्न भाग से लेकर गुदा तक है, सेवनी, सीवन। इसका उच्चारण इ. ज़ूरित और सट्टी है। पेरीनिअम् Perineum, रैफी Rhaphe --इं०।

अजिह्म-सं० त्रि० (Straight) सरल, सीधा।

अजिह्मगः-सं० पु० (Anarrow) तीर, बाण।

अजिह्वः-
अजिह्मः-
} सं० पु० मण्डूक, मेंढक, भेक। Afrog (Rana tigrina) त्रिका०।

अजी-अ० सूखे छिल्के जिनको पकाकर खाते हैं!

अजीगर्त्तः-सं० पु० (A serpent) सर्प, साँप।

अजीज-अ० क्लीव, नपुन्सक, नामर्द, जो मैथुन न कर सके (Impotant)

अजीज-अ० देग के उबलने की आवाज। बादल गरजने की आवाज, मेघशब्द। वर्तमान वैद्यकीय परिभाषा में हाँप कर श्वास लेने तथा खर्राटे का शब्द। (Snoring)

अजीजी-अ० यौगिक सुर्मा (Compound antimony)

अजीडेरक कामून-फ्रें० बकायन, महानिम्ब (Melia azedarach) इं० मे० मे०।

अजीडेरक मीलिया-ले० बकायन। (Common bead tree) इं० मे० मे०।

अजीतह-अ० रोग विशेष जिसमें मैथुन काल में वीर्यपात समय मल निस्सरित हो जाता है।

अजीन-अ० खमीर, खमीरी, आटा। गुँधा हुआ आटा। डो (Dough)--इं०।

अजीमा-अ० कृ० तहब्बुज, वर्म रिख्व--अ०। शिथिल सूजन, ढीली सूजन--हिं०। अडीमा (œdema) --इं०।

अजीमाटेट्राकैन्था-ले० कुण्डली--सं०। करट-गूरकामाई हिं०। त्रिकण्ट जटी-बं०। अजीमा टेट्राकेन्था--ले०। इं० मे० मे०। फा० इं० २ भा०।

अजीमा टेट्राकैन्था-ले० कुण्डली-सं०। करटागूरकमाई--हिं०। त्रिकण्ट-जति-बं०। सुक्र-पात-

द० । सुज़ैली--ता० । तेल्लउपी--ते० । मेमो० । इं० मे० मे० । फा० इं० २ भा० ।

अजीर–
अजीरन– } अ० कन्तूरियून (Dianthus anatolicus, *Boiss*)

अजीरन–हिं० संज्ञा पु० दे०—अजीर्ण ।

अजोरु–कों० हत्ता जुड़ी--हिं० । सूर्यावर्त, श्रीहस्तिनी -स० । हीलिओट्रोपिअम् इण्डिकम् (Heliotropium indcum), ही कोर्डिफोलिअम् (H. cordifolium)--ले० । हीलिओ ट्राप (Helio-trope)- इं० । इं० मे० मे० ।

अजीर्ण–सं० त्रि०, हिं० वि० (Undigested) अपक्व ।

अजीर्णम्--सं० क्ली०
अजीर्ण–हिं० संज्ञा पु०
अजीर्णिः-सं० स्त्री० } (१) अपाक रोग विशेष, अपच, अध्यसव, बदहजमी— हिं० । जुअ्फ हज़्म, फसादुल् हज़्म, सूअ्हज़्म- अ० । ह ज़्म का ज़ईफ या कमजोर होना, हाज़्मा की कमजोरी, खाना अच्छी तरह हजम न होना, बदहजमी, ख़राबिये हज़्म--उ० । इण्डाइजस्चन (Indigestion), डिस्पेप्सिया (Dyspepsia)--इं० ।

अजीर्ण की निरुक्ति—जिस रोग में अन्न पचे नहीं, अपितु जल जाय उसको अजीर्ण कहते हैं । भा० म० खं० १ भा० अ० अ० मा० ।

प्रायः पेट में पित्त के बिगड़ने से यह रोग होता है जिससे भोजन नहीं पचता और वमन दस्त और शूल आदि उपद्रव होते हैं । आयुर्वेद में इसके ६ भेद बतलाए हैं:—

१—आमाजीर्ण जिसमें खाया हुआ अन्न कच्चा गिरे ।

२—विदग्धाजीर्ण जिसमें अन्न जल जाता है ।

३—विष्टब्धाजीर्ण जिसमें अन्न के गोटे वा कंडे बँध कर पेट में पीड़ा उत्पन्न करते हैं ।

४—रसशेषाजीर्ण जिसमें अन्न पतला पानी की तरह होकर गिरता है ।

५—दिनपाकी अजीर्ण जिसमें खाया हुआ अन्न दिन भर पेट में बना रहता है और भूख लगती है ।

६—प्रकृत्याजीर्ण वा सामान्याजीर्ण सदैव स्वाभाविक रहे ।

डाक्टरी में इसके दो भेद मानते हैं:—

(१) उग्रअजीर्ण (Acute dyspepsia)
(२) पुरातनाजीर्ण (Chronic dyspepsia)

पुरातनाजीर्ण के पुनः तीन भेद होते हैं:—

(१) आमाशयविकार जन्य अजीर्ण (Atonic dyspepsia), क्षोभजन्याजीर्ण (Irritative dyspepsia) और वाताजीर्ण (Nervous dyspepsia)

अजीर्ण निदान

ईर्षा (पराए धनधान्यादि को देखकर जलना डरना, क्रोध करना इन कारणों से व्याप्त लोभ, शोक, दीनता इन कारणों से पीड़ित दूसरों के शुभ कामों को बुरा समझने मनुष्यों का किया हुआ भोजन भली भांति पचता है । ये अजीर्ण के मानसिक कारण हैं ।

शारीरिक कारण ये हैं—

अत्यन्त जल पीने से, विषम (असमान न्यूनाधिक) भोजन करने से, मल-मूत्रादि वेग रोकने से, दिन में सोने से, रात्रि में जागने इन कारणों से, भोजन के समय यदि प्रकृति अनुकूल, लघु तथा शीतल पदार्थ सेवन करें भी अन्न भली प्रकार नहीं पचे उसको अजी कहते हैं ।

जो लोभी मनुष्य जिह्वा के वश होकर पशु सम्मान वेपरमाण भोजन करते हैं उनको सब रो का कारण अजीर्ण रोग शीघ्र उत्पन्न होता है । माधवः ।

अजीर्ण के लक्षण

(१) आमाजीर्ण—यह कफ के प्रकोप होता है । इसमें देह का भारीपन, जी मचलाना कपोल व नेत्र गोलक में सूजन, मीठा, खट्टा ही रस खाया गया हो उसी की डकार आना प्रभृति लक्षण होते हैं ।

(२) विदग्धाजीर्ण—यह पित्त के प्रकोप से होता है। इसमें भ्रांति, तृष्णा, बेहोशी, अनेक प्रकार की पित्तज पीड़ा, धूएँ के साथ खट्टी डकार आए, पसीना आए तथा दाह हो, ये लक्षण होते हैं।

(३) विष्टब्धाजीर्ण—यह वायु के प्रकोप से होता है। इसमें रोगी को शूल, पेट फूलना नाना प्रकार की वातज पीड़ा, मल तथा अधोवायु का न निकलना, पेट का जकड़ना, इन्द्रियों में मोह और शरीर में पीड़ा, ये सब लक्षण होते हैं।

(४) रसशेषाजीर्ण—इसमें अन्न में अरुचि हृदय में जड़ता और देह में भारीपन होता है। माधवः। बा० नि० १२ अ०।

नोट—दिनपाकी तथा प्रकृत्याजीर्ण के लक्षण अजीर्ण के भेदों के अन्तर्गत वर्णित हैं।

अजीर्ण के उपद्रव—

अजीर्ण रोगी के बेहोशी, प्रलाप, वमन, मुख से पानी का आना, देह शिथिल होना, भ्रान्ति होना, ये सब उपद्रव होते हैं। अत्यन्त बढ़ा हुआ अजीर्ण मनुष्य को मार भी डालता है।

नोट—अग्नि मन्द होने से ही अजीर्ण और ग्रहणी पैदा होती है अर्थात् अधिक समय तक अग्निमान्द्य और अजीर्ण रोग रहने से पीछे इसी की गणना ग्रहणी में होने लगती है।

उपरोक्त आम, विष्टब्ध तथा विदग्धाजीर्ण से विसूची (हैंजा), अलसक और बिलम्बिका रोग की भी उत्पत्ति होती है। मा० नि० चि० क्रिया मन्दाग्निवत्।

अजीर्णकण्टकरसः—सं०पु० अजीर्णनाशकयोग विशेष शुद्ध पारा, बच्छनाग, गन्धक प्रत्येक तुल्यांस, सबके समान काली मिर्च लें फिर कंटकारी के रस अथवा क्वाथ से भावना देते हुये २१ बार महीनकरें मात्रा—२ रत्ती। गुण—यह सभी प्रकार के अजीर्णों को नष्ट करता है। यो० र०, चि०, सा०, वै० क० र० सं० भै० सा० र० सि० र० स० सं०, र० क० ल० र० चि०, र० ख० र० मं०, र० र०, नि० र० चि० र० र० सु० वै० चि०, भै० र० र० (मा०) र० को० र० क० यो० वै० वि० र० का० रसायन० सं० ना० वि० चि० क० र० क० मा० प्र०, अजीर्णाधिकारे० व० रा० (अग्निकुमारः)।

अजीर्णकण्टक वटी—स० स्त्री० शुद्ध पारा, बच्छनाग, गन्धक प्रत्येक समान भाग सबके बराबर सुहागा भूना—सबको मिश्रितकर २१ बार नीबू के रस की भावना दें। फिर चने प्रमाण गोलियां बनाए। गुण—यह अजीर्ण तथा अलसक आदि को दूर करती है। यो० म०।

अजीर्णकण्ट कोरसः—सं० पु० सुहागा भूना, पीपल बच्छनाग, सिंगरफ प्रत्येक समान भाग लें, और काली मिर्च सोहागे से द्विगुण लें पुनः नीबू केरस से घोट कर मटर प्रमाण गोलियां बनाए गुण—यह रस अजीर्ण की शान्ति, जठराग्नि की वृद्धि करता और कफ के रोगों का नाश करता है मात्रा १-२ गोली। यो० म०, भा० प्र०, र० क० ल० रसायन० सं० वै० र०, अजीर्णाधिकारे। नि० र० र० रा० सु०, निघण्टु रत्नाकरे, रसराजसुन्दरे चास्य वृद्धोधकेति नाम।

अजीर्णकालानलोरसः—सं० पु० शुद्ध पारा गंधक, प्रत्येक ८ तो० लोहा, तांबा, हरताल, बच्छनाग तूतिया, वंग, लवङ्ग, सुहागा दन्तीमूल और निशोथ का चूर्ण प्रत्येक ४ तो०, अजमोद अजवाइन सज्जी, जवाखार, और पांचों नमक प्रत्येक २ तो० इनका चूर्ण करके २० बार अदरख के रस की और पीपल, पीपला मूल चव्य, चित्रक तथा सोंठ के क्वाथ की १० और गिलोयके रस की १० भावना दें पुनः सबके आधा भाग काली मिर्च मिला मर्दन कर चना प्रमाण गोलियां बनाये। गुण—यह प्रत्येक अजीर्ण के बिकार को शीघ्र दूर करता है। र० सु० ब० रा०, अजीर्णाधिकारे।

अजीर्ण गजाङ्कुशः—सं० पु० शुद्ध पारा, गंधक, बिडंग, अजमोद, बच्छनाग सूरन पुनर्नवा पांचों नमक, पञ्चकोल अम्लबेत, तीनों क्षार अम्ली, हस्तिकर्णी (एरंड की जड़ की छाल) कालीमिर्च और हींग प्रत्येक समान भागलें इसमें समुद्र लोनको भूनकर मिलाएँ। सबका बारीक चूर्ण करके चित्रक पाठा

और शरपुङ्ख के रस अथवा क्वाथ से पृथक २ भावना दें। मात्रा—आधा तो०। अनुपान अदरख का रस है। गुण—यह अजीर्ण के विकारों को शीघ्र दूर करता है। र० क० यो०।

अजीर्णजरणः—सं० पु० कर्चूर। See Karchura। वै० श०।

अजीर्णनाशनः—सं० क्ली० पारे को भोजपत्र में बांध काँजी में लवण डालके तीन रात्रितक स्वेदन करें तो यह पारद सुवर्ण आदि धातुओं के अजीर्ण को दूर करे। जबतक अजीर्ण दूर न हो जाय तब तक पाराग्रहण का अधिकारी नहीं है। योगतरंगिणी० पारद० विधान०।

अजीर्णबलकालानलोरसः—सं० पु० शुद्ध पारा २ पल, शुद्धगंधक २ पल लौह भस्म, हरिताल, विष, नीला थोथा, बङ्ग भस्म, लौंग सोहागा, दन्ती की जड़, निशोथ इन्हें पृथक २ एक एक पललें। अजमोद अजवाइन, जवाखार, सज्जीखार पञ्चलवण प्रत्येक चार चार तो० इन्हें एकत्र कूट पीस कपड़ छान कर अदरख के रस की २१—२१ भावना दें। इसी तरह पञ्चकोल, तथा गुरुच की १०-१० भावना दें। पुनः इसके अर्द्ध भाग काली मिर्च का चूर्ण मिलाए सबको खरलकर चने प्रमाण की गोलियां बनाए जब सूख जाय शीशी में बन्द कर रक्खें। गुण—इसके सेवन से पुरातन अजीर्ण आमवात, पाण्डु, प्लीहा प्रमेह, विष्टम्भ, प्रसूत, संग्रहणी, खांसी श्वांस, पीनस, क्षय, अम्लपित्त, शूल, भगन्दर, अर्श, आठ प्रकार के उदर रोग यकृत, रोग तथा मन्दाग्नि को दूर करते हुये खाये हुये अन्न को प्रहर मात्र में भस्म करता है। यह गहनानन्द सिद्ध का कहा हुआ रस है। वृ० रस० रा० सु० अजीर्ण० चि०।

अजीर्णहरमहोदधि वटी—सं० स्त्री० शुद्ध जमालगोटा बीज चित्रक, सोंठ, लौंग गन्धक, पारा, सोहागा, मिर्च विधारा, विष इन्हें समभाग लें चूर्ण कर दन्ती के रस की १५ भावना दें। इसी तरह नीबू के रस की तीन, चीते के रस की तीन, तथा अदरख के रस की सात भावना देकर शुष्क कर जब गोलियां बनाने योग्य हो जाय तब प्रमाण गोलियाँ बनाए।

गुण—इसके सेवन से शूल, अजीर्ण, खाँसी, अरुचि, पांण्डु उदर, रोग आम रोग का गुड़गुड़ाहट हलीमक, मन्दाग्नि, तथा सब का नाश होता है। वृ० रस० रा० सु० अजीर्ण चि०।

अजीर्णहर रस—सं० पु० इस नाम के तीन योग हैं (१) रसेन्द्र सं०। (२) यो० र०, अजीर्णाधिकारे। सज्जीखार, जवाखार, सुहागा, पारा, लवणत्रय (काला, सेंधा और विड़ नमक) पीपल, गंधक, सोंठ, काली मिर्च प्रत्यक ४ तो० वत्सनाग, १ तो० मिलाकर बारीक चूर्ण कर लें। फिर आक के दूध से ७ दिन तक भावना देते रहें फिर गजपुट में उसे इस प्रकार पकाँए कि उसका धूआं (वाष्प) बाहर बिलकुल न निकले ठंढा होने पर निकालें। फिर उसमें लवङ्ग कालीमिर्च फिटकरी प्रत्येक ४ तो० मिलाकर बारीक चूर्ण कर और शीशीमें रखलें मात्रा—२ र० सायंकाल खाने से खाया हुआ क्षण भर में पच जाता है। इसका सेवन करने वाला भोजन करने के एक पहर बाद पुनः भोजन करने की इच्छा करता है। यह मांस को भी जीर्ण कर देता है।

अजीर्णारिरसः—सं० पु० शुद्ध पारा, गंधक प्रत्येक ४ तो० हड़ ८ तो० सोंठ पीपल मिर्च सेंधानमक प्रत्येक १२ तो० भांग १६ तो० सब को मिलाकर चूर्ण करे फिर नीबू के रस से घोटें। इसी तरह धूप में सुखा सुखा सात भावना दें मात्रा—१-१ मा० गुण—शूल, प्लीहा, उदरशूल, अजीर्ण और गुल्म रोग को नष्ट करता है। र० क० ल०, रसेन्द्र सं० चि० क० टी० अजीर्णाधिकारे।

अजीर्णी—सं० त्रि० हिं० अजीर्ण रोगी मन्दाग्नि वाला (Indigestveperson' *Dyspeptic.*) वै० श०।

अजीलह् यत् स—गिरगिट। हर्बह-फा०। (Alligard' a chameleon)

अजीव—हिं० सं० पु० [संज्ञा] (Lifeless) अचेतन जीव तत्व से भिन्न। जड़ पदार्थ विना प्राण का मृत।

अजीवनिः–सं० स्त्री० मृत्यु। (Death'Non-existens)

अजीविजः–सं० पु० अनैद्रिक (Inorganic.)

अजुगा केर्मी-पायटिस–ले० कमाफीतूप -यु० कुक-रौंधा हिं०।

अजुगाडिस्टाइका–ले० गोबरा।

अजुगा ब्रैक्टीओसा–(*Wall*)-ले० कौड़ी बूटी फे०। कर्कू,नीलकण्ठी सत०खुरवनरीटा०इं०इसके बाजारू नाम निम्न प्रकार है, यथा—जनेआदम मुकुन्द बावरी, नीलकण्ठी।

नोट—मि० वैडेन पोवेल "अजुगा रेपटन्स" (एक यूरोपीय भेद) को बर्नाक्युलर में जने-आदम नाम से अभिधानित करते हैं, पर मि० स्ट्युवर्ट (Stewart) सैल्विआ ऐनलेटा (Salvia anlata) को उक्त नाम प्रदान करते हैं। मेमो०। इं० मे० प्लां।

अजुज–अ० (ए० व०) अअ्जाज (ब० व०) सुरीन, चूतड़–उ०। नितम्ब, चूतड़–हिं०। अर्वाचीन वैद्यकीय परिभाषा में यह शब्द नित-बास्थि (अज़्मुल्अजुज) के लिए प्रयोग में लाया जाता है। बटक्स (Buttocks), नेट्स (Nates) और सेक्रम (Sacrum) इ०।

अजुटा-सं० भुँई-आमला, भूम्यामलकी,(phyllanthus niruri)

अ(इ)जुद–अ० भुजा, बाजू, डण्ड, कुहनी और स्कन्ध का मध्य। आर्म Arm–इ०।

अजुमोद बोमम्–ते० अजमोद। सं० फा० इं०। Carum (Ptychotis) Roxburghianum, *Benth*

अजुलीनी–अज्ञात।

अजू(जौ)ज–अ० (१) सराब, (२) खोमड़ी, (३) शेर, (४) गाय, (५) भेड़िया, (६) चर्ख, (७) बिच्छू, (८) घोड़ा, (९) कुत्ता, (१०) ऊँटनी, (११) हथिनी, (१२) एक वृक्ष का नाम है, (१३) मिश्क और (१४) एक प्रकार का खाना भी है। (१५) पीरजाल फा०। बुड्ढी स्त्री, बुढ़िया–हिं०।

अजूजा–हिं० संज्ञा पु० [देश०] बिज्जू की तरह का एक जानवर जो मुर्दा खाता है।

अजत–अ० यह यूनानी शब्द अजूट का अरबीकृत शब्द है (जिसका अर्थ प्राण-नाशक है)। यह नाइट्रोजन का पर्याय है। नाइट्रोजन (नत्रजन) एक सूक्ष्म वायव्य है जो वायु में ७७ प्रतिशत पायी जाती है। नाइट्रोजन Nitrogen–इं०।

अजूम–अ० ऊँट का बच्चा।

अजूरा–बरब० अज्ञात।

अजूल–अ० बछड़ा। गोंसालह्–फा०।

अजूह्–अ० खर्जूर भेद। यह मदीना मुनव्विर में होता है। (A kind of bate)

अजेयः–सं० पु०
अजेय } अर्जुन वृक्ष। (Terminalia arjuna, *W. & A.*) वै० निघ०। वि० न जीते जाने योग्य। जिसे कोई न जीत सके।

अजेयघृतम्–मुलहठी, तगर, कूट, देवदारु, पित्तपापड़ा केशर, एलुआ, नागकेशर, कमल, मिश्री, वाय-विडंग, श्वेत चन्दन, तेजपत्र, प्रियंगू, रोहिषतृण, हल्दी, दारुहल्दी, छोटी कटेली, बड़ी कटेली, शारिवाँ, शालपर्णी, बला, इनके कल्कों से सिद्ध घृत प्रत्येक विषों को दूर करता है। बंग० से० सं० विष० चि०।

अजेरोन–(Artemisia sibarsiana, *Wall*) माज़रोना। फा० इं० २ भा०।

अजैडिरीडी इण्डी–फ्रें० नीम। The neem tree। इं० मे० मे०।

अजैडिरैक्टा इण्डिका–ले० नीम–हिं०, द०, पं० बं०। रावीप्रिय, व्रणशोधकरी–सं०। मीलिआ। अजैडिरैक्टा (Melia azadirachta) ले०। दी नीम (The neem), मार्गोसाट्री (Margosatree), इण्डियन लिलैक (Indian lilac)–इं०।

अजैडर्क–सं० क्ली० (Goats and rams) बकरे और भेड़ें। इं० मे० मे०। स० फा० इं०।

अजैपाल–हिं० संज्ञा पु० जमालगोटा (Croton seeds)

अजैरू-नैपा० बण्डा-म०, सं०, सी० पी०।

अजोमूत-
अजोमे- } गोआ० प्लेस्मोमम् मार्गोर्टिफोर्म (Plesmomum margortiform, *Schott*), एरममार्गोर्टिफोर्म (Arum margortifrom, *Roxb*) फा० इं०। इ० मे० मे०। (डाइमाक)

मदनमस्त या सूरण वर्ग
(N. O. Arodeae or Araceae)

उत्पत्ति स्थान—बंगाल (राकज०), सिरामयूर (बेन्थ०), अस्नोरा "गोआदेशस्थ" (डाइ०), हिन्दुस्तान।

उपयोग—गोआ में देशी लोग इसके बीज को कुचल कर दन्त रोग में वर्तते हैं। थोड़ा मात्रा में इसे रुई में रखकर खोखले दांतों में भर देते हैं इससे नाड्यस्थ क्षोभ तत्काल शमन हो जाता है। इसी अवसादक गुण के कारण चोट लगने अथवा कुचल जाने प्रभृति में इसका बाह्य उपयोग होता है। (डाइमाक)

नोट—देखो सूरन अर्थात् एरम सिल्वेटिकम् (Arum sylvaticum, *Roxb*) या सिनैथेरिअस सिल्वैटिका (Synantherias sylvatica *Schot*)

अजोबान-अ० अजवाइन। Carum (Ptychotis) Ajowan, *D. C.*

अजोवान आइल-इ०
अजोवान आलियम-जे० } अजवाइन का तेल। देखो—अजवाइन।

अजौफ-अ० (बहु० व०), जौफ (ए० व०) शाब्दिक अर्थ जौफदार या खोखली वस्तु; किन्तु छेदनशास्त्र की परिभाषा में उस बड़ी नलीदार शिरा को कहते हैं जो यकृत के उन्नतोदर भाग से निकल कर अजौफ साइद वा नाजिल दो भागों में विभाजित होती है। महाशिरा-हिं०। (Vena cava)

नोट—साहब कुस्तासुलइतिब्बा अजौफ को उदर तथा योनि के लिये भी प्रयोग में लाते हैं।

अजौफ अअला-अ० देखो—अजौफ साइद। (Superior venacava)

अजौफ तहतानी-अ० देखो—अजौफ नाजिल। (Inferior vena cava)

अजौफ नाजिल-अ० अजौफ तहतानी। अधोगा महाशिरा। प्राचीन छेदनशास्त्र की परिभाषा में उपरोल्लिखित शिरा का वह भाग जो यकृत से निम्नावयवों की ओर जाकर शाखाओं में विभाजित होता है। इन्फीरिअर वेना केवा (Inferior vena cava)-इं०।

अजौफ फौकानी-अ० देखो—अजौफ साइद। (Superior vena cava)

अजौफ साइद-अजौफ फौकानी, अजौफ अअला और अजौफ तालअ-अ०। ऊर्ध्व(-गा)महाशिरा हिं० प्राचीन छेदनशास्त्र की परिभाषा में उपरोल्लिखित शिरा का वह भाग जो यकृत से ऊपर हृदय की ओर तथा उससे ऊपर जाकर असंख्य शाखाओं में विभाजित होता है। सुपीरिअर वेना केवा (Superrior vena cava) इं०।

टिप्पणी—प्राचीन हकीम लोग चूंकि शिराओं का उद्गम यकृत से मानते थे। अस्तु वे शिरा के उस भाग को जो यकृत के उन्नतोदर भाग से निकल कर वक्षउदरमध्यस्थ पेशी को छेदन कर ऊपर हृदय की ओर जाता है ऊर्ध्वगामहाशिरा अर्थात् "अजौफ साइद या अजौफ फौकानी" कहते हैं। इसके प्रतिकूल शिरा के उस भाग को जो यकृत से निम्न भाग की ओर उदर में पृष्ठशेरुका के समानान्तर पेडू तक जाता है अधोगा महाशिरा अर्थात् "अजौफ नाजिल या अजौफ तहतानी" कहते हैं। परन्तु अर्वाचीन योरोपीय डाक्टर गण चूंकि शरीरस्थ समस्त शिराओं का अन्त हृदय के दाहिने ग्राहक कोष्ठ में मानते हैं। अतः उनके वर्णनानुसार उपर्युक्त दोनों शिराओं यथा—"अजौफ साइद और अजौफ नाजिल" का समावेश निम्न महाशिरा (Inferior vena cava) ही में होता है। शिरा सम्बन्धी अर्वाचीन डाक्टरी मत तथा प्राचीन वैद्यक मत के लिये देखिये "शिरा"।

अजंभ-सं० त्रि०, हिं० वि० (Toothless) दन्तहीन।

अजंभः-सं० पु० (A frog) मण्डूक, मेंढक। (२) The sun सूर्य। (३) Tothless state (of a child) वह बालक जिसके अभी दाँत न निकले हों।

अजः-सं० पु० (१) छाग, बकरा (A he-goat) भा० । पू० । (२) स्वर्णमाक्षिक (Ferri sulphuretum) सोनामक्खी । हे० च० । (३) उक्त नाम की औषधि विशेष, अजशृङ्गी (Asclepias geminata'*Roxb.*) च० चि० १ अ० ।

अज़आफ-अ० (१) (Double) दूना करना, बढ़ा देना। (२) (Weaken) निर्बल करना, अशक्त करना।

अज़ग़ास अह् लाम-अ० वैकल्य कारक स्वप्न। असत्य वा मिथ्या स्वप्न। कन्फ्युजिङ्ग ड्रीम (Confusing dream)-इ०।

अज़ज़-अ० दंशन दाँत से काटना। अज़्ज, रज्ज, कदम, नक्र कस्द, लस्अ, नह्श और नक़ूज प्रभृति के अर्थ भेद विवरण प्रत्येक पशु के काटने को अज़्ज़ और प्रत्येक विष धर जीवों के काटने को रज्ज और कद्म, पक्षियों के काटने को नक्र, वृश्चिक के टङ्क मारने को कस्ब और सपदंशन को लस्अ, नह्श और नक़ूज कहते हैं।

अज़्ज़म-अ० (ब० ब०), जज़म (ए० व०) जुज़ामी, कोढ़ी-उ०। कुष्ठ रोगी, कुष्ठी, जिसकी अंगुलियों के पोर्वे झड़ गए हों। लेप्रस (Leprous)-इं०।

अज़्ज़म-अ० अज़्दअ्। नक्टा, जिसकी नासिका कटी हो। नोजक्लिप्ट (Nose clipt)-इं०।

अज़्ज़ा-अ० (ब० व०), जुज़ (ए० ब०) ह्स्स, हिस्से, टुकड़े-उ०। भाग, अंश टुकड़ा-हिं०। पार्ट्स (Parts)-इं०। (२) अद्वियह्। औषधियाँ। ड्रग्ज़ (Drugs)-इं०।

अज़्ज़ाअ् अव्वलिय्यह्-अ० अर्कान। तत्व-हिं०। (Elements)

अज़्ज़ाइयह्-अ० अज़्ज़ाख़ानह्। दवाखानह्-उ०। औषधालय-हिं०। डिस्पेन्सरी Dispensary इं०।

अज़्ज़ाज़-अ० अज़्ज़ाज़ी; सैरली। दवासाज, अत्तार-उ०। औषध-निर्माता, औषध-विक्रेता-हिं०। अपोथेकरी Apothecary, केमिस्ट Chemist, ड्रगिस्ट Druggist-इं०।

अज़्दतफल् वरगन्दी-अ० बर्गुण्डी पिच (Burgundipitch)-इं०।

अज़्ज़ाएसगीरह्-अ० अवयवों के सूक्ष्मातिसूक्ष्म, अंश अंशु-हिं०। मॉलिक्युल्ज़ (Molecules)-इं०।

अज़्ज़ेमा-अ० अज़्जेमा से अरबी कृत शब्द हैं। नॉर फारसी, आतशक, जलनदार फुन्सियाँ-उ०। एकजेमा (Eczema) इं०।

अज़्ज़ैवकुल् की मूलियाई-अ० धूसर चूर्ण खाकी सफूफ। ग्रेपाउडर (Grey powder)-इं०।

अज़्झटाः-सं० स्त्री० (Phyilanthns niruri-'*Linn.*) भुँई आमला, भूम्यामलकी, आम्बरा भा० पू० १ भा० गु० व०।

अज़्झल-सं० क्ली० १, (A shield) ढाल। २ (A live coal) हड्डी का कोयला।

अज़्झलः-सं० पु० कोकिल, कोईल-हिं०। The black or indian cuckoo (Cuculus),

अज़्द-अ० भुजा, बाहु। सहायक, सहायता करना (Helper)

अज़्दअ्-अ० नक्टा बूचा, वह व्यक्ति जिसकी नासिका कटी हुई हो। नोजक्लिप्ट (Nose clipt) इं०।

अज़्दरान्-अ० शंखस्थल पर दो रगें हैं जो कर्ण और बाह्य चक्षुकोणके मध्य स्थित हैं।

अज़्दार-अ० (ब० व०) जद्र (ए० ब०) दाग, धब्बे, चिह्न। स्कार्ज (Scars)-इं०।

अज़्दिलाम-अ० नासिका को मूलसे काट डालना।

अज़्दिवाजिलनब्ज-अ० नब्ज मितरकी नाड़ी में एक ही बार दो गतियों (धमक, थपक) की

प्रतीति होनी। डाइकॉटिज़्म (Dicrotism) –इं०।

अज्दिवाजिल्वस–अ० एक वस्तु का दो दिखाई देना डिप्लोपिया (Diplopia) –इं०।

अज्दिवाजिलहदब–अ० पलक के रोमों का दोहरा अर्थात् दो पंक्तियों में होना। नेत्र में रोमाधिक्य (परबाल) का हो जाना।

अज्न–अ० सधातिन करना, खमीर करना, सौंदना, सानना, गूँधना–हिं०। निर्बलता के कारण पृथ्वी पर हाथ टेक कर उठना। फर्मेण्ट (Ferment), लॉवेन (leaven) इं०।

अज्नास–अ० (ब० ब०) जिन्स (ए० व०) जाति–हिं०। Genuses देखो—जिन्स।

अज्निहह्–अ० (ब० व०) जनाह (ए० व०) शाब्दिक अर्थ पंख, पक्ष, पक्षियों के पंख। छेदन शास्त्र की परिभाषा में पृष्ठ के मुहरों के उस उभार या प्रवर्द्धन को कहते हैं जो उनके दोनों बगलों पर स्थित होते हैं और जिन पर पशुकाओं के शिर जुड़ते हैं। पार्श्वात्यकूट, पश्चिम प्रवर्धन–हिं०। लेटरल प्रोसेस (Lateral process)–इं०।

अज्निहह् सगीर्–अ० अज्निहह् कबीरह, बतदी, अस्फ़ानी। अनुकास्थि, तितली स्वरूपास्थि–हिं०। स्फ़ीनॉइड (Sphenoid)–इं०।

अज्फ–अ० व्रण पूरित होना, घाव भर जाना, क्षत का अंगूर ले आना। ग्रेन्युलेशन (Granulation) –इं०।

अज्फ़र–अ० साधारणतः उग्रगंध चाहे बुरी हो या अच्छी। विशेषण या सम्बन्ध द्वारा इसमें भेद किया जाता है अर्थात् इस शब्द का सम्बन्ध यदि किसी अच्छे या सुगन्धित द्रव्य से हो तो इससे कोई उग्र सुगन्धित द्रव्य अभिप्रेत होता है, यथा–मुश्क अज्फ़र अर्थात् उग्र सुगंधि युक्त कस्तूरी और यदि बुरे और दुर्गन्धि युक्त वस्तु से हो तो उससे अभिप्राय तीव्र दुर्गन्धि होती है।

अज्फान–(ब० व०), जफ्न (ए० ब०) –अ० पपोटे, पलक। आइ लिड्ज़ (Eyelids) –इं०।

अज़्फ़ार–अ० (ब० व०), जुफ़्र (ए० व०) नख चाहे मनुष्य का हो या पशु का। नेल्स (Nails)–इं०।

अज्ब–अ० हुद्बतुल्; चर्क। कुकुन्दर पिण्ड, नितंबास्थि का वह भाग जो बैठने में पृथ्वी पर लगता है। इस्कियल ट्युबरॉसिटी (Ischial tuverosity)–इं०।

अज्बत्–अ० खेवड़ा बाँया हाथ, वाम (बाएँ) हस्त से खाने पीने और काम काज करने वाला।

अज्बह्–अ० (ए० व०) अजब (ब० व०), अजबात। जिह्वाग्र, जिह्वा की नोक वा तीव्रता।

अज्बूतह्–अ० घूंस मादा, मूस (A sherat)

अज्वाद–अ० झाग निकालना।

अज्म–अ० एक ही प्रकार का भोजन करते करते उकता जाना। इतना अधिक भोजन करना कि करीब अजीर्ण के हो। सनक और अज्म के भेद को "सनक" में देखो।

अज्म–अ० निराहार रहना, उपवास करना–हिं०। फास्ट (Fast)–इं०।

अज्म–अ० (ए० व०), इज़ाम् (ब० व०)। उस्तख़ां–फा०। अस्थि, हड्डी–हिं०। बोन Bone, ओसिस Osis (ए० व०), Bones बोन्ज, ऑसा Ossa (ब० ब०)–इं०।

नोट—यह मूल धातुओं अर्थात् अवयवों में से एक कठोर व श्वेत अवयव है जो अपनी कठोरता के कारण दोहरी नहीं हो सकती। यूनानी वैद्यक के अनुसार यह वीर्य से उत्पन्न होती और शरीर का आधार बनती है। (आयुर्वेद में अस्थि की उत्पत्ति मेद धातु से मानी है नकि वीर्य से) विस्तार हेतु देखिये–इज़ाम।

अज्म अरीज–अ०। चौड़ी अस्थि, कुकन्दरास्थि, नितंबास्थि, त्रिकास्थि, चूतड़ की हड्डी। सैक्रम (Sacrum)–इं०। देखो—त्रिकास्थि।

अज्म अस्फ़ली–अ० अज्म बतदी (स्फ़ीनॉइड) का वह पतला परत जिससे आरम्भावस्था में नेत्र के दोनों रन्ध्र बन्द रहते हैं। झर्झरास्थि चूषा

एथमॉइडल क्रेस्ट(Ethmoidal crest)इं०।

अजमअस्फजी अअला–अ० ऊर्ध्वशुक्तिका, ऊर्ध्वसीपाकृति। सुपीरिअर कोञ्चा (Superior concha) सुपरिअर टर्विनेटेड बोन (Superior Turbinated bone) इं०।

अज्म अस्फजी अस्फल–अ० अज्म मशाशी अस्फल, अज्मुस्सदफ़ह् अजम-मुल्तवी। उस्तखां सदफी, सीपनुमा हड्डी फा०। अधःसीपाकृति, अधःशुक्तिका-हिं०। इन्फीरिअर कोञ्चा (Inferior concha) इन्फीरिअर टर्विनेटेड बोन (Inferior Turbinated bone) इं०

अजम् अस्फजी मुतवस्सित–अ० मध्य सीपाकृति, मध्यशुक्तिका हिं०। मिडिल कोञ्चा (middle concha) मिडिल टर्विनेटेड बोन(Middle Turbinated bone) इं०।

अज्मकमह दुवह–अ० (Occipital bone) अल्मुवख्खरी अज़्ममुवख्खर रास। उस्तखाने कफ़ा-फ०। गुद्दी की हड्डी, शिर की पिछली हड्डी पश्चात् कपालास्थि हिं०।

अज्म काइ दतुद्दिमाग–अ०मस्तिष्क तलास्थि, जतूकास्थि हिं०। देखो अज्म वतदी (Sphenoidbone)।

अज्म कासिमुल अन्फ–अ० उस्त खाँ परदहे बीनी फा०। नासाफलकास्थि हिं० वोमर (Vomer) आंस वोमर (os vomer) इं०।

अज्म कुर्सेनी–अलवली अ०। वर्तुलक मटराकार गोलाकार हिं०। पिसीफार्म(Pisiform) इं०

अज्म खञ्जरी–अ० ग़ज़रूफ़ खञ्जरी ग़ज़रूफ़ सैफी उस्तखां खञ्जरी फा०। ख़ञ्जरनुमा हड्डी उ०। वक्रास्थि, दात्रवत्, फणधर हिं०। अन्सिफॉर्म (Unciform) हैमेट बोन (Hamate bone) इ०।

अज्म नर्दी–अ० अन्नर्दी। नर्दनुमा हड्डी उ०। घनास्थि हिं०। क्युबॉइड (Cuboid) इं०।

अज्मशाशी–अ० अज़्म अस्फजी। झर्झरास्थि चूणा हिं०। एथमॉइडल क्रेस्ट (Ethmoidal crest) इं० देखो—इज़ाम मशाशियह् तथा अज़्म अस्फजी अस्फल इत्यादि।

अज्म मुइन्नी–अल्मुरद्दअउल् मुन्हरिफ अ०। विषमकोण चतुर्भुजास्थि हिं०। यह उक्त स्वरूप की अस्थि पहुँचे की सधि की दूसरी पंक्ति की अस्थि और सधि की बाह्य ओर स्थिति है। ट्रेपीज़िअम (Trapezium) इं०।

अज्म मुक्दम रास–अ० ललाटास्थि हिं० फ्रांण्टल बोन (Frontal bone) इं०। देखो अज्मुल् जब्हह्।

अज्म मुवख्खर रास–अ०पश्चात् कपालम्, पश्चात् कपालास्थि, गुद्दी कीहड्डी हिं०। ऑक्सीपीटल बोन (Occipital bone)–इं० देखो—अज़्म कमह दुवह।

अज्म मुवख्खरी–अ० पश्चात् कपालास्थि, गुद्दी की हड्डी हिं०। अक्सीपीटल बोन (Occipital bone) इं०। देखो—अज़्म कमह् दुवह।

अज्म रिकावी–अ० अरिकाव। रकाबास्थि हिं० स्टेपस (Stapes) इं०

अज्म ला-इस्म लह–अ० उस्तखां। वेनाम, वेनाम, हड्डी फा०। अ (वे) नामास्थि हिं०। ऑस इन्नोमिनेटम् (Osinnominatum) इं०।

नोट—उक्त अस्थि में यह तीन भाग होते हैं अर्थात् (१) अजमुल्खासरह (२) अजमुलवरिक, (३) अजमुल आनह जिनको यथा स्थान देखिये।

अज्म लामी–अ० अज्मुल्लसान। उस्तखाने जुबान फा० जुबान हड्डी यह हड्डी युनानी अक्षर लाम की सी होती है। और कंठाग्र जिह्वामूल में स्थिति है कण्टिकास्थि हिं०।

आंस हायड (Os hyoid) इं०

अज्म वतदी–अ० अज्मुल वतद। उस्तखाने काहदतुद्दिमाग फा० करोटि तलास्थि। जतूकास्थि हिं० स्फीनॉइड बोन (Sphenoid bone) इं०

अज्म शबियहवित्मइयनी–अ० अलशबियह बिल मुन्हरिफ़। ट्रेपीज़ॉइड (Trapezoid) इं०

अज्मसिन्दानी–अ० अस्सिन्दान। नेहाई, कर्णान्तरस्थ शूर्मिकास्थि हिं० इङ्कस (Incus) इं०

अज्मह–अ० नैजार, नेस्तां फा० दलदल फसाद हिं० मार्श (Marsh) इं०

अज्मा–अ० मापभेद। यह सात औकियह या उनतीस तो० ८ मा० २ रत्ती २६ तो० ८ मा० २ र० के बराबर होता है। A measurement equal to 29 tolas'Smashas & 2ratis.

अज्माअ–अ० बहीमह चोपायह उ०। वह स्त्री जो शुद्ध बात न कर सके गूँगी या हकली स्त्री हिं०

अजमान–अ० (अजम का द्विवचन) दो अस्थियां, किसी स्थानकी दो अस्थिया शवछेद शास्त्र की परिभाषा में यह शब्द ऐसे स्थान पर बोला जाता है जहां एक समान दो अस्थियां पाई जाती है उदाहरणार्थ अजमाउल्अन्फ अर्थात् नासिका की दो अस्थियां और अजमाउल्हनक अर्थात् तालू की दो अस्थियां इत्यादि।

अज्मिदह्-अ० (व० व०) जमाद (ए० व०) लेप अनुलेप हिं० पेस्ट Paste इं०

अज्मुज्जौ रका–अ० अजजौरकी। नौकाकृति हिं० स्केफाइड (Scaphoid) इं०।

अज्मुज्जौज–अज मुस्सुदग अ० उस्तखाँ विनागोश फा० शखास्थि हिं०. टेम्पोरल बोन (Temporal bone) इं० देखो—अजमुस्सुदग)

अजम त्तर्कुवह–अत्तर्कुवह अ० उस्तखा चम्बरहें गर्दन फा०। अत्तकास्थि हँसली की हड्डी। यह संख्यामें दो होतीं हैं जो वक्ष के ऊपर ग्रीवामूल में स्थिति हैं। क्लैविकल (Clavicle) इ०।

अज मुदम्अ–अ० अजमुलमाक, अजम जु फरी। उस्तखां गोशहे चश्म, उस्तखाने मारक फा० अश्रुबस्थि, आंसू की हड्डी जो अन्तरीय चक्षुकोण में नख के बराबर होती है। लैक्रिमल (Lacrimal) इ०

अज मुर्जफह्–अ० अजमुर्कवह्। उस्तखाने जानू फा० पाली, जानुस्थि हिं० पैटेला (Patella) इं०।

अजमुलअकब–अल् अकब अ० उस्तखाने पाश्नह फा० पार्ष्ण्यस्थि, पार्ष्णि, एड़ी कूर्च्च हिं०। कैलकेनियम (Calcaneum) आस कैल्सिस (Os calcis) हील (Heel) इं०

अजमुलअजुज–अ० अजमुल अज्ब, अजमुल अरीज अलअजुज। उस्तखाने सुरीन फा०। त्रिकास्थि हिं० सैक्रम (Sacrum) इं०

अजमुलअन्फ–अ० उस्तखाने-बीनी फा० नासास्थि हिं० नेजलबोन (Nasal Bone)-इं०।

अज्मुल अजुद–अ० उस्तखाने बाजू-फा० प्रगण्डास्थि, बाहु-हिं०। आर्म (Arm), ह्युमरस (Humerus)-इं०।

अज्मुल आनह–अ० भगास्थि, पेड़ू की हड्डी हिं० ओस प्युबिस (Os pubis)-इं०।

अज्मुल उसउस–अ० अलउस्उस्। उस्तखानेदुम फा०। दुम्चो की हड्डी-उ०। गुदास्थि, पुच्छास्थि, चञ्चवस्थि-हिं०। क्राकूसिक्स (Coccyx) इं०।

अज्मुल कअब–अ० अलकुअ्बुई। उस्तखाने बुजुर्ग फा०। टखने की हड्डी-हिं०। अष्ट्रागेलस (Astragalus) इं०।

अज्मुल क़तिफ़–अ० अल्लौह। उस्तखाने शाने फा०। स्कन्धास्थि, असुफलक-हिं०। स्केपुला (Scapula)-इं०।

अज्मुल कमह दुव्वह–अलमुवख्खरी, अजममुवख्खरास-अ०। उस्तख़ाने क़फ़ा-फा०। पश्चात् कपालास्थि, पश्चात् कपालम्-हिं०। आक्सीपीटल बोन (Occipital bone)-इं०।

अज्मुल क़सस्-अ० उस्तख़ाने सीनह-फा०। वक्षोऽस्थि, उरोऽस्थि, उरः फलकम्-हिं०। स्टर्नम (Sternum)-इं०।

अज्मुल क़िहफ़-अ० अजमुलयाफ़ोख़, अलजिदारी। उस्तख़ाने कासहे सर-फा०। पार्श्वकास्थि, पार्श्वक कपालम्-हिं०। पेराइटल बोन (Parietal-bone)-इं०।

अज्मुल जन्ब–अ० शंखास्थि-हि०। देखो—अज्मुस्सुदग़। (Temporal bone)

अफ़मुल जव्हह–अ० अलजव्ही, अजममुकद्दम रास उस्तख़ाने पेशानी-फा०। ललाटास्थि-हिं०। फ्रोण्टल बोन (Frontal bone)-इं०।

अज्मुल फ़खिज़–अ० अज्मफख़ज़। उस्तखाने रान फा०। उर्वस्थि-हिं०। फीमर (Femur)-इं०।

अजमुल फ़ाइक़-अ० देखो—अजम लामी। कठिकास्थि-हिं०। (Oshyoid)

अजमुल मशाशियुल अस्फल-अ० अलकरीनुल अस्फल, अजम अस्फली अस्फल। सीपीनुमा हड्डी-उ०। अधः शुक्तिका, अधः सीपाकृति-हिं०। इन्फीरिअर टर्विनेटेड बोन (Inferior Turbinated bone)-इं०।

अजमुल माक़-अ० उस्तख़ ने गोशहे चश्म-फा०। देखो—अजमुद्दमअ। अश्रूवस्थि-हिं०। (Lacrimal)

अजमुल मितरक़ी-अलमितरक़ह। मुद्गरास्थि-हिं० मालिअस (Malleus) इं०।

अजमुल मिसफ़ात-अ० अजम मशाशी। छलनीनुमा हड्डी-उ०। झर्झरास्थि, बहुछिद्रास्थि-हिं०। इथ्माइड बोन (Ethmoid bone)-इ०।

अजमुल याफ़ख़-अ० तालवस्थि, पार्श्वकास्थि-हि०। देखो—अजमुल क़िहफ़। (Parietal bone)

अजमुल बजनह-अ० उस्तख़ाने रुख़्सार-फा०। कपोलास्थि-हिं०। (Cheek bone)

अजमुल वतीरह-अ० अजम क़ासिमुल अन्फ, अलमेकअह, नासाफलकास्थि, नासावंश हिं०। ओस वूमर (Os vomer), वूमर (Vomer) इं०।

अजमुल वरिक-अ० उस्तखाने निशिस्तगाह-फा०। कुकुन्दरास्थि-हिं०। ओस इस्कियम (Os ischium) इस्कियल बोन (Ischial bone) इं०।

अजमुल हजवह-अ० सर उस्तख़ाने निशिस्तगाह फा० कुकुन्दरपिण्ड-हिं०। इस्कियल ट्युवरॉसिटी (Ischial tuberosity)-इं०।

अजमुलहज्री-अ० उस्तखाने सङ्गी-फा०। अश्मास्थि अश्मकूट-हिं०। पेट्रोसल बोन (Petrosal bone), पेट्रस प्रोसेस (Petrous process)-इं०।

अजमुल हनक-अ० उस्तखाने काम-फा०। तालवस्थि हिं०। पैलेट बोन (Polate bone) इं०।

अजमुलहर्कफह-अ० अजमुल खासिरह। उस्तखाने तिह्यगाह-फा०। जघनास्थि, नितम्बास्थि-हिं०। ईलिअम् (Ilium), ईलिअक बोन (Iliac bone), आस काक्सी (Os coxæ)-इं०।

अजमुश्शसी-अ० अल्कज़ावी, असिसनारी। फणधर वक्रास्थि, दात्रवत्-हिं०। अन्सिफार्म (Unciform), हैमेटबोन (Hamate bone) इं०।

अजमुस्लदफह-अ० अधः शुक्तिका-हिं०। देखो—अजमअस्फली अस्फल (Inferior turbinated bone)

अजमुस्सफीनी-अ० अल्हरमी। कलाई की नौकाकृति अस्थि। क्युनिआईफार्म (Cuneiform) इं०।

अजमुस्सफीनियुल्इन्सी-अ० अलअस्सफीनियुलअव्वल। अन्तः त्रिपार्श्विक-हिं०। इण्टर्नल क्युनिआईफार्म (Internal cuneiform) इं०।

अजमुस्सफीनिय्युल्वस्ती-अलअस्फीनियुल्सानी-अ० मध्यत्रिपार्श्विक-हि०। मिड्ल क्युनिआईफार्म (Middle cuneiform)-इं०।

अज़मुस्सफीनिय्युल्बहशी-अ० अलअसफीनियुलसालस। बहिः त्रिपार्श्विक-हिं०। एक्सटर्नल क्युनिआईफार्म (External cunei Form)-इं०।

अजमुस्सबक-अ० अरन पर जो घोड़े व गदहे के खुरों से ऊपर होते हैं।

अजमुस्सिनारी-अ० देखो—अजमुश्शसी। वक्रास्थि हिं०। (Unci Form)

अजमुस्सुद्ग-अ० अस्सुद्गो, अजमुलजन्ब। उस्तखाने-बिना-गोश-फा०। शंखास्थि-हिं०। (Temporalbone)

अजमेकबीर-अ० पहुँचे (कलाई) की बड़ी हड्डी। आँस मेग्नम् (Os magnum)-इं०।

अजय-अ० अजय्यत। दुःख, क्लेश-हिं०। इञ्जुरी (Injnry)-इं०।

अज्जक-अ० जुर्कम, जरका (स्त्री०)। बिलाव जैसी चक्षुओं वाली-हिं०। गुर्बह चश्म-फा०।

अज्मद–अ० जिसके सिर पर बाल न हो, गंजा, चंदला, खालित्थी-हिं०। वैल्ड (Bald)-इं०।

अज्मव–अ० जर्व अर्थात् तर खाज (कण्डु) का रोगी। स्केबी (Scaby) इं०।

अज्मम–अ० वीख जकर-फा०। शिश्नमूल-हिं०। रूट आफ दी पेनिस (Root of the Penis)-इं०।

अज्मा–अ० विक्र, दोशीजह, कुँवारी लड़की-उ०। कुमारी, कुँवारी, अक्षतयोनि, अविवाहित-हिं०। वर्जिन (Virgin), मेडन (Maiden)-इं०।

अज्मार लहमिय्यह–अ० जख्म के अंगूर-उ०। ग्रेन्यूलेशन (Granulation)-इं०। व्रणांकुर।

अज्मास–अ० (व० ब०), जिर्स (ए० ब०) हन्वास्थि-हिं०। मोलर्ज (Molars)-इं०।

अज्मास खुमासियह–अ० पञ्च उभार युक्त सिरे की दाढ़ें।

अज्मास रुबाइयह–अ० चार उभार युक्त सिरे की दाढ़ें।

अजरास सुनाइयह–अ० द्वि उभार युक्त सिरे की दाढ़ें।

अजरास सुलासियह–अ० तीन उभार युक्त सिरे की दाढ़ें।
अर्थात् वे जिनके बाह्य सिरे पर जरा जरा सी तीन उभारे होती है

अज्रासुल्हुल्म–अ० अक्कल दन्त, बुद्धि दन्त–हिं० अक्कल दाढ़ें अर्थात् अंतिम की चार दाढ़े जो युवावस्था (वालिगावस्था) पश्चात् से पचीस वर्ष तक के काल में निकलती हैं।

अज्ल्–अ० (ए० ब०), आजाल (व० व०) मुद्दत, उम्र, मौत,- उ०। काल, अवस्था, मृत्यु–हिं०। डेथ (Death) मार्टिफिकेशन (Mortification) इं०।

अज्ल अत्वल–अ० लम्बी मौत, वह मृत्यु जो सबसे बड़ी अवस्था अर्थात् १२० वर्ष की अवस्था में आये।

अज्ल आर्जी–अ० अज्ल इख्तरामी। अस्वाभाविक मृत्यु, अप्राकृतिक मृत्यु, अचानक मृत्यु–हिं०। सडन डेथ (Suddendeath) इं०।

अज्ल इख्तरामी–अ० देखो—अज्ल आर्जी। अचानक मृत्यु, आकस्मिक मृत्यु–हिं०। (Sudden death)

अज्लज्–अ० जिसके शिर के दोनों वगल के बाल गिर गए हो।

अज्लतवीई–अ० तब्ई मौत, बुढ़ापे की मौत अर्थात् प्राकृतिक या स्वाभाविक मृत्यु अर्थात् वृद्धावस्था के कारण होने वाली मृत्यु। नेचरल डेथ (Natural death)–इं०।

अज्लाअ्–अ० (व० ब०), जिल्अ (ए० ब०) पसलियाँ–उ०। पशुकाएँ–हिं०। रिब्ज (Ribs)–इं०।

अज्लाअ् हकीकिय्यह्–अ० अज्लाअ् खालसह अज्लाअ् सादिक्ह्, अज्लाउस्सदर, अज्लाअ् मकसूमह सच्ची पसलियाँ–हिं०। ट्रू रिब्ज (True ribs) स्टर्नल रिब्ज (Sternl Ribs)–इं०।

अज्लाउल् खुल्फ–अ– अज्लाउज्जोर. अज्लाअ् काजिब। झूठी पसलियां, आजाद पसलियाँ–उ०। फाल्स रिब्ज (False Ribs), फ्लोटिंग रिब्ज (Floatiug Ribs) ऐब्डोमिनल रिब्ज (Abdominal Ribs) और वर्टिब्रोकोण्ड्रल रिब्ज (Vertebrochondral Ribs)–इं०।

अज्लात–अ० (व० व०) अजलह (ए० व०) देखो अजलह्।

अज्वाफ–अ० (व० ब०) जोफ (ए० व०) कोख, पोल–उ०। नालियां कोष्ठ–हिं०। बेलीज (Bellies) इं०।

अज्वाज–अ० (व० व०), जौज (ए० व०) जोड़े, नाड़ियों के जोड़े युगल, युग्म–हिं०।

अज्सम–अ० जसीम, बदीन, समीन, मोटा, चाक–उ०। स्थूल, मेदाबी, बृंहित–हिं०। कार्पुलेण्ट (Corpulent) इं०।

अज्साद–अ० (व० व०), जस्द या जसद (ए० व०) १—बदन–उ०। शरीर, वस्तु-हिं०। बाडीज (Bodies) इं०। २—धातु (Metals)

अज्सामतुवामिय्यह् अर्वअह्–अ० अजसाम का अह। चार जुड़े हुए छोटे छोटे उभार जो

मस्तिष्क में पाए जाते हैं। कोर्पोरा क्वाड्रिजेमिना (Corpora Quadrigemina) इं०।

अज्सामद्सिमह्–अ० वसा वा तैलीय पदार्थ, यथा–तैल, वसा, (चर्बी) वा मलहम प्रभृति। फैट्स (Fats) ऑइली सब्सटैन्सेज (Oily substances)–इं०।

अज्साम मुजल्लअह्–अ० अज्साम मुखत्तह्। रेखांकित प्रवर्द्धन धारीदार उभार–हिं०। कोर्पस स्ट्राइटम (Corpus striatum)–इं०।

अज्साम शअरिय्यह्–अ० लोमश या रोमयुक्त सेलें। सिलिएटेड सेल्ज (Ciliated cells)–इं०।

अज्हान–अ० (व० व०), जिहन (ए० व०) बुद्धि, समझ, स्मरणशक्ति।

अञ्जिञ्जी–ता०
अञ्जिञ्जीमरम्–ता०
पेड़, अङ्कोल (Alangium Dcapetalum, *Lam*)

अञ्जकम्–सं० क्ली० नेत्र, चक्षु, आँख। ऐन–अ०। चश्म–फा०। आई (Eye)–इं०। रा० नि० व० १८।

अञ्जञ्जक–अञ्जकक। Pyrus communis (Seed of) फा० इं० १ भा०।

अञ्जित–हिं० वि० (Bent, curved) झुका हुआ, तिर्छा, टेढ़ा।

अञ्जुसा–यु० रू० अञ्जुसा। दम्मुल् अख्वैन, खून खराबा, विजयसार निर्यास, फा० इं० २ भा०।

अञ्जू–नैपा०, हिमा०, प्रसिद्ध। कलहेर, कलहिसरा (री)–गढ़० हिं०। फ्यु० फ्लावर्ड रैस्पबेरी (Fewflowered raspberry)–इं०। रुबस पासीफ्लोरस (Rubus pauciflorus), रु० वैलिकियाई (R. wallichii) मे०। इं० मे० मे०। इं० हैं० गा०।

गुलाब वर्ग

(*N. O. Rosaceœ*)

उत्पत्ति स्थान—नैपाल, हिमवती-पर्वतश्रेणी तथा उत्तरी पश्चिमी भारत। ब्रिटेन में यह जंगली पौधों की तरह बहुतायत से होता है।

वानस्पतिक विवरण—यह एक झाड़ी है। जिसका तना सीधा होता है और जिसमें असंख्य सूक्ष्म मृदु कंटक लगे होते हैं। पत्र गुलाब के समान और कोंपल बादामी रंग के मखमली, जो देखने में अत्यन्त मनोहर प्रतीत होते हैं। पुष्प अत्यन्त सूक्ष्म श्वेत और गुच्छे में आते हैं। फल गोल और रक्त, पीत एवं श्वेत वर्ण के तथा रस से परिपूर्ण होते हैं। फल का ऊपरी धरातल सूक्ष्म मृदु गोलाकार दानों से युक्त होता है। फूल गुच्छों में अथवा अकेले होते हैं। रस मधुराम्ल और सुस्वादु होता है। बीज अत्यन्त सूक्ष्म और गोल होते हैं, चैत में यह पुष्पित होता है तथा आषाढ़ श्रावण में इसमें पक्व फल प्राप्त होते हैं। पीले फल वाले को गढ़वाल में पांडा कहते हैं।

रासायनिक संगठन—एक उड़नशील तेल, शर्करा पैक्टिन (Pectin) नीबू और सेव के तेजाब (Citric and malicacids) खनिज तथा रक्षक पदार्थ, कुछ खनिज लवण और जल।

गुणधर्म—यह ज्वर ताप शामक है, ताजे होने पर यह केसरी (Strawberry) के अतिरिक्त किसी भी अन्य फल को अपेक्षा तृष्णा शमन हेतु श्रेष्टतर है। इसको अकेले खाने से आमाशय में अम्लीय संधानोद्भूत होने की आशंका नहीं रहती इसका अचार अथवा मुरब्बा सर्वोत्तम पदार्थ है। अंचू के पत्तों का शीत कषाय तीव्र आंत्रशैथिल्य, प्रवाहिका, विसूचिका, शिशुव्याधि तथा उत्ताप व्यथा और आमाशय द्वारा रक्तस्राव में उत्तम औषध है। इं० मे० मे०।

अञ्ज–अ० बकरी–हिं०। (Shegoat)

अञ्जअ–अ० जिसके ललाट के दोनों बगल से रोम जाते रहे हों।

अञ्जकक–
अञ्जुकक–
फा० कुर्तुम हिन्दी। ये जंगली अमरूद के बीज हैं जिनका छिलका श्वेताभवर्ण का होता है। ये बिहीदाना से किसी भांति बड़े और

उसके सदृश त्रिकोणाकार होते हैं। इनके भीतर से श्वेत गूदा निकलता है)। फा० इं० १ भा० Anjukak, Pyrus communis (Seeds of)

अञ्जद–अ० मुनक्का के बीज (तुख्म मवेज) अथवा फलों के दाने।

अञ्जदान–अ० कृ० यह अंगदान से अरबी बनाया हुआ शब्द है जिसका अर्थ अंग का दाना अर्थात् बीज है। इस वृक्ष के गोंद को हींग कहते हैं। इसी कारण हींग का फारसी नाम अङ्गज़द अर्थात् अङ्ग का गोंद है। इसके मूल (बीखअजदान) को अरबी में मजरूस और ऊदुद्दर्क़ह् कहते हैं। इसका बीज किसी किसी के विचार से काशम है।

नोट—अञ्जदान का वृक्ष काशम वृक्ष के समान होता है तथा यह खुरासान, आर्मीनिया और भारतवर्ष के पर्वतों मे उत्पन्न होता है।

फेर्‌युला फीटीडा (Ferula Fœtida-,Ragel)-ले०। दी गम रेजिन (The gum resin)-इं०। फा० इं० २ भा०। देखो-हींग या हिंङ्गुः।

अञ्जदान रूमी–अ० कृ० सीसालियूस (भापङ्गी) कोई कोई काशम को कहते हैं (See Sisaliyus)

अञ्जदान विलायती–अ० कृ० अङ्गदान फा०। हिङ्गु, हींग का वृक्ष। (Ferula Fœtida' *Regel*)

अञ्जदान स्याह–अ० कमात। हींग वृक्ष, हिंङ्गु फेर्‌युला फेटिडा (Ferula fœtida'*Regel*) ले०।

अञ्जन–हिं० स० पु० (१) वह औषधि जो-आंख में डाली जाती है। (२) स्त्रीताञ्जन सौवीर सं०। अञ्जन, सुर्माका पत्थर हिं०। ऐण्टिमनी सल्फाइड (Antimony Sulphide) ले०। क्रिमीज मिनरल (Kermes mine ral') ब्लैक ऐण्टिमनी (Black antimony) इं०। इं० मे० मे० देखो अञ्जनम् (३) धोधु धेरा (गोण्डा)। मेमो०। (४) वर्ना० अञ्जन, याल्की, कुर्प, लोखण्डी म०। काशमरम् ता०। अल्लिचेड्डु ते० सुर्मा कना०। बरीक सेरुकाय सिं०। अञ्जनी स० मेमीसीलोनएडड्युली (Memecylon Edule,*Rox* ले०। आयर्नवुड ट्री (Iron wood tree) इं०। मेमीसीलोन कमेस्टिब्ल (Memecylon Comestible) फ्रें०। फा० इं० देखो अञ्जनी। (५) कहुआ' अर्जुन, अर्जुना हिं०। अर्जुना-बं०। हञ्जल उड़ि०। अर्जुना मं०। वेल्लमरड वेल्लमट्टी ता०। मद्दी विल्लोमट्टी मै०। एरमद्दी, टेलामडु-तै० तौक्यान ब०। टर्मिनेलिया अर्जुना (Trminalia Arjuna' Bedd) ले०। मेमो० प० चरबा, कुसाउ प० प्रा० मेमो०। पं० पेनिसेटम् सिंकोआंइडिस।

अञ्जन–देखो अञ्जन (सुर्मा) अथ०। सू० ६।३। का० ४।

अञ्जन–सं० पु० (A lizarb) गृहगोधिका, छिपकली हिं०। टिकटिकी बं०। वै० श०। देखो ज्येष्ठी।

अञ्जनक–हिं० पु० अञ्जनम्, सुर्मा (Antimony)

अञ्जनक कल्लु–ता० सुर्मा हिं०। (Antimony sulphide) देखो अञ्जनम् स० फा० इं०।

अञ्जन कर्म्म–सं० क्ली० (१) नेत्र प्रसादन (Anointing ormaking clear) सुर्मा काजल, अंजन हिं० देखो अञ्जन विधि।

अञ्जनका पत्थर–द० सुर्मा हिं०। अञ्जनम् सं० ऐण्टिमोनिआई सल्फ्युरेटम (Antimonii sulphuretum ले०। सल्फ्युरेट आफ ऐण्टिमनी sulphuret of Antimony इं० स० फा० इं०।

अञ्जनकेशिका–सं० स्त्री०
अञ्जन केशी– ,,

(१) हनु-हट्टविलासिनी, नखी, नख,-सं० नाखून देव, छोटे नख को कहते हैं-हिं० नाखून पर्य्यां फा०। अज फारुत्तीव अ०। Helix ashera हेलिक्स आशरा ले०। शेल Shell इं० (२) नलिका नामक गंध द्रव्य। यह उत्तरी देशों में प्रसिद्ध है ए वेजीटेबिल पर्फ्यूम A ve

getable perfume इं० भा० पू० १ भ० क० व० । देखो नख ।

अञ्जन गुटिका–सं० स्त्री० (१) सोंठ, मिर्च पीपर करजफल, हल्दी, किंजोरे की जड़, इनकी गोली बना छाया में शुष्क कर नेत्रांजन करने से विशूचिका (हैजा) दूर होती है।

(२) महुआ पुष्प, श्वेत अपराजिता, अपामार्ग मूल और त्रिकुटा इनकी गोली बना नेत्रांजन करने से विशूचिका दूर होती है।

(भेष० र० अग्निमां० चि०)

(३) मैनसिल, देवदारु, हल्दी, दारुहल्दी, आमला, हड़, बहेड़ा, सोंठ, मिर्च, पीपल, लाख, लहसुन, मजीठ. सेंधालवण, इलायची; सोनामाखी, सावर लोध, लौहचूर्ण, ताम्रचूर्ण कालानुसारिवा, मुर्गकेअंडे का छिलका, इन्हें समानभाग लेकर स्त्री केदूधमें घोंटकर गोली बनायें। इसका अंजन खाज, तिमिर, शुक्लार्म तथा नेत्र की रक्त रेखा को दूर करता है।

(४) कांसें के पात्रके रगड़ने से उत्पन्न स्याही मुलैठी, सेंधा लवण, तगर, एरंड की जड़ इन्हें बराबर लें तथा इनमें से द्विगुण बड़ी कटेली मिलाये इसको बकरी के दूध में पीसकर ताम्र पात्र पर लेप करें। इसी तरह ७ बार बकरी के दूध में पीस २ कर उक्त पात्र पर लेप करें और छाया में शुष्क कर बटी बनाये। यह अंजन नेत्र रोग को दूर करता है।

(सु० सं० अध्या० १२ नेत्र० रो० चि०)

(५) गेरू १ मा०, सेंधा लवण २ मा० पीपर ३ मा० तगर ४ मा० इस प्रकार ले इनसे द्विगुण जल से खरल करें पुनः गोली बनाकर नेत्रांजन करने से नेत्र रोग दूर होता है।

(भैष० र० नेत्र० रो० चि०)

अञ्जन गुडिका–सं० स्त्री० विसूचिका में प्रयुज्य औषधि विशेष यथा महुआ के पुष्प का रस, चिर्चिटाबीज, अपराजिता मूल, हरिद्रा और त्रिकटु इनका अञ्जन करना। (च० द० अग्निमांद्य चि०)

अञ्जन ताडनाद्युपाय–सं० पु० शुद्ध मनुष्य के आचार के नष्ट होजाने पर तीक्ष्णनस्य तीक्ष्णअञ्जन, ताडन तथामन बुद्धि, स्मृति इनका संवेदन, ये हित है। उन्माद से विस्मृत हो जाने पर तर्जन दुखःदेना, सांत्वना हर्ष, आनन्द, भय दिखलाना, विस्मय (आश्चर्यान्वित) मन को प्रकृति में स्थिर करें काम, शोक, भय, क्रोध, आनन्द, ईर्षा तथा लोभ से उत्पन्न उन्माद में परस्पर प्रति द्वन्द्व क्रिया से शांत करें वांछित द्रव्य के नष्ट होने से उत्पन्न उन्मादमें तत्तुल्य द्रव्य प्राप्ति शांति तथा अश्वासन से उसकी शांति करे।

(चक्र० द० उन्माद चि०)

अञ्जनत्रयम्–त्रित्रयम्–सं० क्ली० कालाञ्जन, स्रोतांजन और रसांजन। रा० नि० व० २२" यथा—

"कालांजन समायुक्तं स्रोतांजन रसांजने"।

अञ्जन दृष्टि प्रसादनी शलाका–सं० स्त्री० शुद्ध लोहे को बारम्बार तपाकर हड़, बहेड़े, आंवला, के रस में, घी में, गो मूत्र में, शहद में, तथा बकरी के दूध में बुझाये, पश्चात् उक्त लोहे की सलाई बनाकर नेत्रों में फेरे तो नेत्र सम्बन्धी समस्त रोग नष्ट हों।

(भा० प्र० ख० ने० रो० चि०)

अञ्जन नामिका–सं० स्त्री० (Stye) नेत्रपक्ष्म में होनेवाले नेत्र रोग का एक भेद। यह रोग रक्त से उत्पन्न होता है। यह वर्त्मन्थियों (नेत्रपक्ष्मों) के मध्य में अथवा किनारे की तरफ खुजली, दाह और वेदना से युक्त, ताम्र वर्ण की, कठोर, मूंग प्रमाण की फुन्सियां होती हैं। इन्हें अजन रोग अथवा अजननामिका कहते हैं। वा० उ० ८ अ० जो फुन्सी दाह, सुई चुभाने की सी पीड़ा वाली लाल, कोमल छोटी और मन्द पीड़ा वाली नेत्र के कोये में उत्पन्न होती है उसको अजना (अंजनहारी) या अंजननामिका कहते हैं। यह रक्त से उत्पन्न होती है। मा० नि०।

अञ्जन पत्री–सं० स्त्री० (१) भग के पत्ते Cannabis Indica, *Linn.* (Leaves of-), (२) गांजा।

अञ्जन भैरवः–सं० पु० पारा, लोहभस्म, पीपर, गन्धक इन्हें एक एक भाग लें, जमालगोटा के बीज ३ भाग, इन्हें जम्भीरी के रस से अच्छी

तरङ्ग पीस नेत्राञ्जन करने से सन्निपातज्वर दूर होता है। भै० र०।

अञ्जन माई—ज्ञा० सुर्मा। ऐण्टिमोनिआई सल्फ्युरेटम् (Antimonii Sulphuretum)—ज्ञे० देखो—अञ्जनम्।

अञ्जन मूलक—स० अठारह प्रकार के मक्षियों में से एक। यह नीला और काला मिश्रित वर्ण का होता है। कौटि० अर्थ०।

अञ्जनम्—सं० क्ली०
अञ्जन—हिं० संज्ञा पु० } (१) (anointing smearing with, mixing) लगाना।

(२) Colyrium or black pigment used topaint the eyelashes अञ्जन, कज्जल, काजल। हे० च० सि० यो० कामला चि०, रक्तपित्त चि०।

अञ्जन—इलद', गेरू, आमले का चूर्ण इन्हें त्रिफला पुष्पी (गूमा) के रस में मिलाकर अञ्जन करने से कामला दूर होता है। यो० त० पाण्डु० चि०।

सिरिस बीज, पीपल, काली मिर्च, सेंधानमक, मैनसिल, लहसुन, बच इन्हें गोमूत्र में पीस कर अञ्जन करने से सन्निपात रोगी चैतन्य होता है। यो० त० उन्मा० चि० भै० र० उन्मा० चि०।

करञ्ज की मींगी, सोंठ, मिर्च, पीपर, बेल की जड़, हल्दी, दारुहल्दी, तुलसी की मंजरी इनको गोमूत्र में पीसकर अञ्जन करने से विषाक्त रोगी जी उठता है। यो० त० विष० चि०।

जमालगोटे का बीज शुद्ध ४० मासे, सोंठ, मिर्च, पीपर चार चार मासे इन्हें गव्यमारो के रस में घोट अञ्जन करने से सन्निपात दूर होता है। राज० स० म० ख० १२ अ० शलाका २१।

पीपर, मिर्च, सेंधालवण, शहद, गाय का पित्त, इनका अञ्जन बना कर नेत्र में आँजने से प्रत्येक भूत दोषों से उत्पन्न उन्माद और महोन्माद का नाश होता है। भै० र० उन्माद० चि०।

त्रिकुटा, हींग, सेंधालवण, बच, कुटकी, सिरस के बीज, करंज के बीज, सफेद सरसों इनकी वत्ती बना कर नेत्राञ्जन करने से अपस्मार, चातुर्थिक ज्वर, और उन्माद दूर होता है। भै० र० उन्माद० चि०।

तगर, मिर्च, जटामांसी, शिलारस, इन्हें समान भाग ले, सबतुल्य मेनशिल, पत्रक ½ भाग (तगरादि से चौगुने) तथा सबसे द्विगुण शुद्ध सुर्मा, और उतनी ही मुलहठी लेकर बारीक पीस अञ्जन बनायें। सु० स० उ० अ० १२।

हल्दी, दारुहल्दी, मुलेठी, दाख, देवदारु इन्हें समान भाग ले बकरी के दूध से अञ्जन करने से अभिष्यन्द दूर होता है। भै० र०।

(३) Acosmetic ointment काँजी अञ्जनक प्रलेप, वर्ण्यलेपन।

(४) Ink रोशनाई।

(५) Night रात्रि, रात।

(६) Fire अग्नि, आग।

(७) सौवीरांजन। भा०। सु० चि० १ अ०।

(८) रसाञ्जन। च० द० अ० सा० चि० त्रिफलादि। रक्त पित्त-चि०। च० ३ अ० अक्षि० हपट्के। स्तम्भन योगेच। भा० बाल चि०।

(९) सौवीरांजन वा० सू० १५ अ० अञ्जनादि। सु० सू० ३८ अ०। देखो—अञ्जनविधि।

(१०) सुर्मा धातु विशेष। यह आभा प्रभा युक्त एक श्वेत धातुतत्व है। यह कठोर होता तथा तोड़ने से टूट जाता है, और सरलतापूर्वक चूर्ण किया जा सकता है। इसका रासायनिक सङ्केत अञ्जन (Sb.) तथा परमाणुभार १२० है और आपेक्षिक गुरुत्व ६,०७ है। यह ६१०° शतांश की उत्ताप पर गल जाता और चमकीले रक्ततप्त पर वाष्पीभूत हो जाता है।

सामान्य तापक्रम पर वायु तथा आर्द्रता का अञ्जन पर कुछ भी प्रभाव नहीं होता। वायु के उत्ताप पहुंचाने, पर यह हरिताभायुक्त नीलाग्नि के लौ में जलने लगता है।

प्रकृति में अंजन स्वतन्त्र या शुद्ध रूप में नहीं मिलता, अपितु गन्धक के साथ मिला हुआ स्रोताञ्जन या सुर्मा रूप में पाया जाता है। यह प्रायः सोमलिका, निकलम् और रजतम् धातु के साथ मिला हुआ यौगिक रूप में भी पाया जाता है। विशेष रासायनिक विधि द्वारा इसे अन्य धातुओं से भिन्न कर लेते हैं।

इसके पर्याय-अञ्जनम् (अञ्जनक)—सं० हिं०। इस्मद, हज्रुल् कोह्ल, अन्नीमूनुल् मादनो—अ०। अन्तीमून, सगेसुर्मह्—फा०। ऐण्टिमोनियम् (Antimonium), स्टीबिअम् (Stibium)—ले०। ऐण्टिमनी (Antimony)—इ०

नाम विवरण—एण्टिमोनियम् योगिक शब्द है (एण्टि=विपरीत + मोनाक्स = उपदेष्टा, सन्यासी) जिसका अर्थ सन्यासी या साधु के विपरीत अर्थात् नष्ट करने वाला है। कहा जाता है कि सन् १७९० ई० में वालण्टेन नामी एक रसायनिक ने, जिसने कि सर्व प्रथम उक्त शुद्ध धातु के असली गुण-धर्म का वर्णन किया, इसके औषधीय गुणधर्म दर्याफ़्त करने के लिये इसे कुछ सन्यासियों को खिलाया। फलतः वे सब के सब इस विष द्वारा मरणासन्न हो गये। इसी कारण इसका नाम एण्टिमोनियम पड़ गया।

इतिहास—उपर्युक्त वर्णानानुसार स्रोताञ्जन अर्थात् सुर्मा रूप से यह औषध प्राचीन वैदिक काल से, यूनानी व रूमी चिकित्सकों को मालूम थी। अस्तु, हकीम दीस्क्रीदूस (Dioscorides) यूनानीने स्टीमी नाम से तथा हकीम बलीनास रूमी ने स्टीवियम् नाम से इसका वर्णन किया है। इन दोनों ने इसको शोधक (एवेक्वेण्ट) अर्थात् वामक तथा रेचक लिखा है और अबतक प्रायः चिकित्सक इनके अनुयायी हैं। परन्तु हकीम बुकरात व हकीम जालीनूस ने इसमें संग्राही तथा मुकत्ता (काटने छाँटने वाले) गुण की विद्यमानता का भी वर्णन किया पर उन्होंने इसका वाह्यरूप से ही उपयोग किया था।

प्राचीन चिकित्सक इस धातु को प्रकृति में पाया जाने वाला योगिक सुर्मा रूप से उपयोग में लाते थे। उनका यह विचार था कि सुर्मा (अंजन गन्धिद) गन्धक और पारद का यौगिक है और किसी किसी का यह विचार था कि यह गन्धक और सीसा का यौगिक है। इससे स्पष्ट है कि उनको अंजनम् धातु के मौलिक रूप का ज्ञान न था। शेखुर्रईस ने इसे मृत सीसा का जौहर लिखा है। जिसका कारण आगे वर्णित होगा।

प्रायः प्राचीन भारतीय आयुर्वेदिक चिकित्सा एवं रसशास्त्रों में सभी जगह सुर्मा के विविध प्रयोगों का वर्णन आया है। वे इसके गुण धर्म एवं वाह्य व आभ्यन्तर उपयोग से भली भांति परिचित थे। इतना ही नहीं, अपितु, संसार के सब से प्राचीनतम ग्रन्थ वेद (अथ०) में तो इसका पर्याप्त वर्णन उपलब्ध होता है।

नोट—शुद्ध अञ्जनम् धातु (Antimony) औषध रूप से व्यवहार में नहीं आता, किन्तु इसके निम्न लिखित प्रकृति में पाये जाने वाले या रसायनशालामें बनने वाले यौगिक ही औषध रूप से उपयोग में आते हैं।

आयुर्वेद शास्त्र में अञ्जनम् धातु (Antimony) अर्थात् इसके यौगिकों के अतिरिक्त अञ्जन शब्द उन समस्त अर्थों के लिये व्यवहार में आता है जिनका आँजने से सम्बन्ध है। फिर चाहे वे खनिज या वानस्पतिक द्रव्य हों, अथवा प्राणिज। कहा भी है :—

अञ्जनं क्रियते येन तद्द्रव्यं चाञ्जनं स्मृतम्।

अर्थात् जिस द्रव्य से अजन किया जाय वह अञ्जन कहलाता है। अस्तु, जहां इसके भेदों का वर्णन होता है। वहां से भी वह बात स्पष्ट होती है। यथा—

सौवीरमञ्जनं प्रोक्तं रसाञ्जन मतः परम्
स्रोतोऽञ्जनं तदन्यच्च पुष्पाञ्जनक मेव च॥
नीलाञ्जनञ्चेति॥ (रस० दर्प०, वा०)

अर्थात्—सौवीरांजन, रसांजन, स्रोतांजन, पुष्पांजन और नीलांजन प्रभृति पंचविध अंजनों

में से रसांजन किसी किसी के मत से पीले चन्दन का गोंद है अथवा पीले चन्दन के काढ़े से बनता है और पीत होता हैं। यथा—

पीत चन्दन निर्यास रसांजनमितीरितम्।
तत्क्वाथज़ं वा भवति पीताभं वक्त्र रोगनुत्॥

और किसी किसी के मत से दारुहल्दी के काढ़े को बकरी के दूध में मिलाकर औटाकर गाढ़ा कर लें। यही रसांजन अर्थात् रसवत् है यथा—

दार्वी क्वाथ समं क्षीरं पादं पक्वा यदा घनम्।
तदा रसांजनाख्यं तन्नेत्रयोः परमं हितम्॥
(भा०)

और किसी किसी के विचारानुसार यह कृष्ण-पाषाणाकृति का एक द्रव्य या नीलांजन है। इसे अंग्रेजी में गैलेना (Galena) या सल्फेट आफ लेड (Sulpeate of Lead) कहते है। यह गन्धक और सीसा का एक यौगिक है। और भी कहा है:—

सौवीरं जाम्बलं तुत्थं मयूरं श्रीकरं तथा।
दर्विका मेघनीलञ्च अञ्जनानि भवन्ति षट्॥
(कालिकापुराण)

अर्थात् सौवीर, जाम्बल, मयूरतुत्थ (तूतिया भेद) श्रीकर, दर्विका (काजल) और मेघनील (नीलांजन) ये छः प्रकार के अञ्जन कालिका पुराण के रचयिता ने लिखे हैं। इनमें तुत्थ तथा कज्जल अंजनम् (Antimony) से सर्वथा भिन्न वस्तु हैं। इन सब बातों से साफ विदित होता है कि अंजन से उनका अभिप्राय उन समस्त वस्तुओं से था जो नेत्र चिकित्सा में व्यवहृत होती थीं। इनके विभिन्न भेदों का पूर्ण विवेचन यथाक्रम किया जायगा। यहां पर जो कुछ वर्णन होगा वह अंजन, (सुरमा) अथवा इसके यौगिकों का ही होगा।

स्रोताऽञ्जन अर्थात् सुरमा

सौवीर, कपोतांजन यामुन, नदीज, पीतसारि, वारिभव, स्रोतोनदीभवं, स्रोतोभवं, सौवीरसारं, (का—) कपोतसार, वल्मीकशीर्षम्। र० मा० सु० चि०। १७ अ०। बाल्मीकं, जयामल, स्रोतजं सौवीरसार, कपोतांजनम्—स०। सुरमा, सुरमे का पत्थर, अंजन—हिं०। अंजन, अंजन का पत्थर, अंजन—द०। सुर्मा, शुर्मा, जलांजन, काल सुर्मा—बं०। इस्मद कुहल—अ०। सुर्मह, संगेसुर्मह, सुर्मह, सुर्महे अस्फहानी—फा०। ऐण्टिमोनिकम् सल्फ्युरेटम् (Antimonii Sulphuretum), एण्टिमोनियम् सल्फ्युरेटम् (Antimonium Sulphuratum)—ले०। ऐण्टिमनी सल्फाइड (Antimony Sulphide) सल्फ्युरेट आर टर्सल्फ्युरेट आफ ऐण्टिमनी (Sulphuret or Tersulphuret of Antimony), ब्लैक ऐ० (Black Antimony) किर्मिज मिनरल Kermis mineral—इं०। अञ्जनक—कल्लु, अंजनम्—ता०। अजन-रायि, नीलांजनम्, कज्जलम्—ते०। अंजनक—कल्ल—मल०। अञ्जेना—कना० सुर्मो सुर्मो-नु-फत्रो, कुहल—अंजन—गु० शुर्म-खियिअ, सुर्मे-खियो, तयलकयो—बर्मी० सुर्मा—मह०, कों०। काला सुर्मा—मह०।

रासायनिक संकेत

$(अन्ज_2\ गं_3)$ $(Sb_2\ S_3)$

(आफिशल)

काला सुर्मा जो प्राकृतिक रूप में खानों से निकलता है उसे पिघलाकर शुद्ध कर लेते हैं।

नोट—आयुर्वेदिक शुद्धि का वर्णन [illegible] होगा।

उद्भवस्थान—चीन, जापान, (ब्रह्मदेश) बर्मा, थोड़ी मात्रा में मायसूर में भी पाया जाता है, विजयानगरम तथा पञ्जाब (झेलम के स्थानों से खानों से निकलता हैं। चीन में सब से अधिक मिलता है।

लक्षण—किञ्चित् धूसर श्यामवर्ण का दानेदार चूर्ण होता है यह भंगुर द्रव्य है।

घुलनशीलता—यह जल में अनघुल होता किन्तु कास्टिक सोडा के सोल्युशन (या सोडा घोल) और गरम हाइड्रोक्लोरिक एसिड (लवणाम्ल) में घुल जाता है तथा [illegible] वायव्य उत्पन्न करता है।

परीक्षा—कोइले पर सोडियम कार्बनित सहित दग्ध करने से श्वेत चूर्ण सा प्राप्त होता है अञ्जनम् धातु के कण प्राप्त नहीं होते।

मात्रा—आधी से १ रत्ती (१ से २ ग्रेन)

मिश्रण—सोमलिका तथा अन्य गन्धिद।

प्रभाव - स्वेद परिवर्तक और वामक।

नोट—स्रोताञ्जन जैसा कि वर्णन हुआ अञ्जनम् धातु तत्व (Antimony) तथा गधिका (Sulphur) अधातु तत्व का एक यौगिक है। परन्तु, भारतवर्ष तथा पञ्जाब में जो कंधारी सुर्मा अधिकता के साथ बिकता है, वह वस्तुतः गंधक और सीसा का एक यौगिक है जिसको अंग्रेजी में गैलेना (Galena) या सल्फ्युरेट आफ लेड (Sulphuret of Lead) कहते हैं। यह कृष्ण वर्ण युक्त एक गुरु कठोर पदार्थ है। यही कृष्णञ्जन कालासुरमा है। यह सीसक और गन्धक को मूषा में उष्ण करनेसे भी प्राप्त हो सकता है। यही सीसक की कृष्ण भस्म है। कदाचित इसी भांति के सुरमा के लक्षण को जनाब शेखुर्रईस बूअली सीना ने मालूम करके इसमद अर्थात सुरमा को मृत सीसा का जौहर लिखा है।

सुरमी—यह भी काले सुरमें का एक भेद है जिसमें गंधक जस्ता (यशद) के साथ मिला हुआ होता है। यह अधिक कठोर होता है।

सुरमहे अस्फहानी—सम्भव है शुद्ध होता हो। परन्तु डाक्टर पावल महाशय अपनी पुस्तक "एकानामिकल प्राडक्टस आफ पंजाब,, के पृष्ठ ११ पर लिखते हैं कि सुरमहे अस्फहानी के नमूने की परीक्षा करने पर इसमें लौह का मिश्रण पाया गया। वह पेशावर के निकटस्थ बाजौर नामक स्थान के खनिज सुर्मा को शुद्ध सुरमा बतलाते हैं और पर्वतीय सुरमा तथा पंजाब के किसी किसी अन्य स्थान के सुरमा को अशुद्ध बतलाते हैं।

सफेद सुरमा—वास्तव में खटिक धातु का एक योग विशेष अर्थात् कार्बोनेट आफ लाइम (संगमरमर) है। आयुर्वेद के अनुसार इसको सौवीरांजन कहते हैं। इसको लोग भूल से सुरमा समझ कर उपयोग में लाते हैं, किन्तु यह बिलकुल सुरमा नहीं। तोड़ने पर भीतर से यह सुरमा के सदृश चमकदार होता है। अस्तु, इसी सादृश्य के कारण यह सुरमा ख़याल किया जाता है।

अञ्जन शुद्धि

(१) सब अञ्जनों की शुद्धि भांगरे के स्वरस में खरल करने से होती है।

(२) सूर्यावर्त्त (काला भाँगरा अथवा हुल-हुल) के रस में खरल करने से अञ्जन शुद्ध होता है।

(३) सब अञ्जनों का चूर्ण कर एक दिन जंभीरी के रस में भावना देकर धूप में सुखा लेने से उनकी शुद्धि होती है तथा वे समस्त कार्यों में योजनीय हो जाते हैं।

(४) गोबर के रस, गोमूत्र, घृत, शहद तथा वसा इनकी बहुत बार भावना देने से सुरमा शुद्ध होता है।

(५) स्रोताञ्जन और सौवीराञ्जन को त्रिफला के काढ़े वा भाँगरे के रस में औटाने से शुद्धि होती है।

(६) नीलाञ्जन के चूर्ण को १ दिन जंभीरी के रस में खरल कर धूप में सुखा दें तो यह शुद्ध और समस्त रोगों में प्रयुज्य हो जाता है। इसी प्रकार गेरू, कसीस, सुहागा, कौड़ी, मैनसिल एवं मुरदासंग की शुद्धि होती है।

(७) सर्व प्रथम केले के तने में गढ़ा बनाएँ। पुनः अञ्जन का एक टुकड़ा उसमें रखकर ऊपर से वही केले का छिलका भरदें और इसे २१ दिन तक इसी प्रकार रहने दें। इसके बाद निकाल कर इसी प्रकार नीम के वृक्ष में उतने ही दिन तक रक्खे। इससे अंजन की विशेष शुद्धि होती है। नेत्र के लिये तो यह अमृत समान गुणदायी है।

सलायह् सुरमह्

(१) रक्त सुरमा १ तो०, काली हैड जो बहुत छोटी हों ४ तो० पृथक पृथक बारीक करके मिलाएँ और एक दिन तक खूब रगड़ कर रखदें।

गुण—अर्श भेद और नासूर के लिये परीक्षित है।

मात्रा—१ रत्ती से ४ रत्ती तक सवेरे, शाम को किञ्चित् गुड़ के साथ मिलाकर खिलाएँ। इसके पश्चात् रोज सुबह को गोघृत और पानी पिलाएँ। ४० दिन तक लगातार सेवन करते रहें।

पथ्य—दो प्याज या चौलाई का साग और घी चुपड़ी हुई गेहूँ की रोटी खिलानी चाहिये। इससे मस्से गिर जाएँगे।

(मखज़न)

(२) रक्त सुर्मा ५ तोला को निम्नलिखित औषधियों के रस में खरल करें। यथा—त्रिफला की छाल, माजू, माईं, कथा, रसवत, गूगल प्रत्येक ५ तोला, काली हड़ बहुत छोटी ६ तो०, कूट कर मूली के चार सेर पानी में एक दिन रात तर करके एक दो जोश देकर साफ करलें और सुर्मा को इससे खरल करके चने के बराबर गोली बनाऐ।

गुण—अर्श तथा असाध्य नासूर के लिये रामबाण है। १ गोली से ४ गोली तक ४० दिन मक्खन में खाते रहें। और उन औषधियों को जो रस निकालने के पश्चात् बच रहें; बारीक करके ज़ंगली बेर के बराबर वटिका बनाये और सुबह शाम १–२ गोलियाँ खाते रहें। ३ सप्ताह में ही रोग को जड़–मूल से नष्ट कर देगा।

(मनह०)

(३) काला सुरमा, जलाए हुए नील के बीज, प्रत्येक १ तो०, फ़िटकरी (भुनी हुई) अनविध मोती प्रत्येक १ मा०, यशद भस्म २ मा०, चांदी के वर्क ५ इनको ५ दिन मेंहदी और गुलाब के रस में खरल करके रख दे।

गुण—उक्त औषध अंजन रूप से नेत्र रोगों विशेष कर मोतियाबिंद की आरम्भिक अवस्था, ज़ाला और रक्तविन्दु के लिये परीक्षित है।

(मनह्)

(४) सुहागा शुद्ध, मोसादर, समुद्र झाग, कलमी शोरा, संगबसरी, फिटकरी का लावा, पलाश की जड़ की गुद्दी, राई की गिरी, प्रत्येक अर्ध तोला और काला सुरमा १० तोला खरल में नींबू का रस डालकर ३ घन्टे भली भांति घोटकर मिलाए। शीशी में रखने पूर्व इसे साया में सुखा कर खूब बारीक कर

गुण—इसको अञ्जन रूप से उपयोग में से यह गत दृष्टिशक्ति, आँख आने, नेत्ररक्तता, खराश और नेत्र द्वारा जलस्राव के लिये अत्यन्त लाभप्रद है। संक्षेप में अनेक नेत्र रोगों की अचूक औषध है।

(पं० जे० एल० दुबे० जी)

(५) सुरमा श्वेत को ताजो इन्द्रायण अष्ट प्रहर डालकर रख दें। पुनः उक्त शुद्ध को कुक्कुटाण्डत्वक् भस्म तथा मोती को भी की भस्म प्रत्येक १–१ तो० के साथ मिला एक दो दिन खरल करके रख दें।

गुण—यह सुरमा पढ़वाल के लिए एक मसीही के समान और सदैव का परीक्षित है।

(मनह्)

(६) शुरमहे अस्फहानी २ तो०, मोती मा०, प्रवाल ४॥ मा० शादनह् आदसी मक्ख (धोवा हुआ) ४ मा० पृथक पृथक बार करके मिला लें और गुलाब में हल करके सर सरी ६ मा० बढ़ाऐ तथा बारीक करके रख लें।

गुण—यह सुरमा दृष्टि की निर्बलता जाले को लाभदायक और आँख आने में जल स्राव होता है उसका शोषणकर्त्ता है।

(शरीफ)

(७) काला सुरमा, यशद भस्म प्रत्ये २० मा०, समुद्र झाग, जङ्गार, केशर, प्रत्येक तो०, सफेदा और अफीम प्रत्येक ३ मा० बार करलें।

गुण—दृष्टि की निर्बलता अर्थात् दृष्टि के लिए सर्वोत्तम औषध है। इसे चक्षुओं लगाया करें।

(इ० सद०)

(८) सफेद सुरमें को अग्नि में तपा कर सात बार हरड़, बहेड़े के तथा आमले त्रिफला के रस में डालकर बुझाएँ, फिर

कर सात वार स्त्री के दूध में बुझाऐं। पुनः उक्त सुरमें का चूर्ण करके नित्य नेत्रों में आंजे तो नेत्रों को हितकारी होता है और नेत्र सम्बन्धी सम्पूर्ण बिकारों का निःसन्देह नाश होता है।

भा०।

सुरमे की भस्म—

(१) तबकदार श्वेत सुरमें को १० दिवस पेठा के रस में खरल करके टिकिया बना लें और एक पेठा में डालकर भली भांति कपरौटी करें।

गुण—ज्वर की उन्मत्तावस्था में इसे १ रत्ती की मात्रा में अर्क सौफ तथा अर्क केवड़ा के साथ तीन वार खिलाने से लाभ होता है।

तपेमुह्रिकासफ़रावी (आंत्रिक ज्वर)—

मूत्रदाह, यकृदोष्मा, नवीन सूजाक के लिये उपर्युक्त शर्तों के साथ व्यवहार में लाने से लाभ होता है। चक्षुओं में लगाने से दृष्टिवर्द्धक और नेत्र स्वच्छताकारक है।

(कुं० रही)

(२) श्वेत सुर्मा को हरे लम्बे कद्दू की गर्दन में रखकर कपरौटी करे और बहुत सी अग्नि दें, भस्म होगी। इसमें सम भाग नीला बंशलोचन मिला कर अर्क वेदमुश्क व केवड़ा में १ सप्ताह खरल करके रख दे।

गुण—मुख नासिका तथा शिश्न प्रभृति से रक्तस्राव होना और शुक्रप्रमेह, रजःस्राव तथा सम्पूर्ण ऊष्मा सम्बन्धी रोगों के लिये लाभदायी है। राजयक्ष्मा के लिए सुर्मा की भस्म १ तो०, चांदी का वर्क, अनविध मोती प्रत्येक ३ मा० स्वर्ण वर्क (पत्र) १ माशा, केशर ४ रत्ती; सबको अर्क वेदमुश्क में खरल करके २ रत्ती की मात्रा सवेरे व शाम खिलाऐ। परीक्षित है।

(मनह)

(३) काले सुरमे की भस्म—भिलावें की स्याही, भांगरा, स्वारपाठे का लुआब प्रत्येक आध पाव कूटकर नुरजा (कल्क) बनाऐं। शुष्क होने पर इसमें १ तोला सुरमे की डली डाल कर बंद करे और सकोरे में बंद कर गिलेहिकमत (कपरौटी) कर सुखा कर २५ सेर कण्डे की अग्नि दें। भस्म प्रस्तुत होगी।

मात्रा—१ से २ रत्ती तक मक्खन में। ऊपर से दुग्ध दें। गुण—पुरातन सुजाक तथा शुक्रमेह में लाभप्रद हैं। सम्पूर्ण त्वग् रोगों, नासिका तथा मुख द्वारा रक्तस्राव स्त्रियों में अनियमित एवं अधिक रक्तस्राव और अर्श में मुफीद एवं प्रभावकारी है।

(कुश्ता० फ़ो०)

(४) सुरमा श्वेत, सङ्गजराहत समान भाग, सुरमा को एक दिन दही के जल में और एक रोज घृतकुमारी में खरल करके टिकियां बनाऐ और अग्नि दें। संगजराहत को मदार के दूध में घोंटकर अग्नि दें। पश्चात् दोनों को मिला लें।

गुण—पुरातन सुजाक और नवीनक्षत प्रभृति के लिये परीक्षित है। मात्रा—२ रत्ती तक मक्खन में।

(इस०सद०)

ब्रिटिश फार्माकोपिया द्वारा स्वीकृत (ऑफिशल) अञ्जन के यौगिक

(१) अञ्जनोद्भिद अर्थात् ऐण्टिमोनियाई ऑक्साइडम् (Antimonii Oxidum) ऐण्टिमोनिअस ऑक्साइड (Antimonius Oxido)—इं०। किर्मिजुल्मअ्दनी, किर्मिस मअ्दनी—फा०। ऑक्सीदुल् अन्तीमून—अ०। रासायनिक संकेत (Sb_2O_3)

निर्माण विधि—ऐण्टिमोनियस क्लोराइड घोल को जल में मिलाने से ऑक्सी क्लोराइड ऑफ ऐण्टिमनी घनीभूत होकर अधःक्षेपित हो जाता है। इसे पृथक् करके कार्बोनेट ऑफ सोडियम के साथ मिश्रित करने से ऐण्टिमोनियस ऑक्साइड प्राप्त होता है।

लक्षण—किञ्चित् धूसर श्वेत रंग का चूर्ण।

घुलनशीलता—जल में तो यह बिलकुल नहीं घुलता, किन्तु लवणाम्ल (हाइड्रोक्लोरिक एसिड) में सरलतापूर्वक घुल जाता है।

मिश्रण—अञ्जन के अन्य ऊष्मिद (ऑक्साइडम्)।

प्रभाव—स्वेदक और वामक।

मात्रा—१ से २ ग्रेन (६ से १२ सेंटीग्राम), १ वर्ष के बालक को $\frac{1}{6}$ से $\frac{1}{4}$ ग्रेन तक। यह ऐण्टिमनोनियम् टार्टरेटम के बनाने में काम आता है और यह उसका एक यौगिक भी है।

ऑफिशल योग
(Official preparations),

पल्विस ऐण्टिमोनिएलिस (Pulvis Antimonialis)—ले०। ऐण्टिमोनियल पाउडर (Antimonial Powder), जेम्सेज पाउडर (James,s Powder)—इं०। अञ्जन चूर्ण, जेम्स का चूर्ण—हिं०। मस्हूक या सफूफ अन्तीमून, सफूफ जेम्स ति०।

निर्माण विधि—ऐण्टिमोनियस आक्साइड (अञ्जनोद्भिद) १ आउंस, कैल्सियम फास्फेट (चूनफुरेत) २ आउंस, दोनों को परस्पर संयोजित करलें।

मात्रा—३ से ६ ग्रेन अर्थात् १॥ से ६ रत्ती (२ से ४ डेकाग्रम), १ वर्ष के शिशु को चौथाई से आधा ग्रेन।

प्रभाव—टार्टार एमेटिक के समान, किन्तु उससे निर्बल। मृदुस्वेदक प्रभाव के कारण यह ५ ग्रेन (२॥ रत्ती) की मात्रा में ज्वरावस्था में उपयोग में आता है। (ए० मे० मो०)

अलकुजहाल (मद्यसार) तथा डोवर्स पाउडर के समान यह यक्ष्मा के रात्रि स्वेदस्राव को रोकता है।

ऐण्टिमोनियम् टार्टरेटम्
(Antimonium Tartaratum)

टार्टरेटेड ऐण्टिमनी (Tartarated Antimony) टार्टार इमेटिक (Tartar Emetic) पोटास्सियो टार्टरेट आफ ऐण्टिमनी (Potassio Tartarate of Antimony)-,इं०। टार्टाराञ्जन, वामक लवण, पांशु टार्टार जन वामक टार्टार हिं०।

रासायनिक संकेत
($K\,Sb\,OC_4\,H_4\,H_4\,O_6$)$2\,H_2O$

निर्माण विधि—ऐण्टिमोनियस आक्साइड और एसिड पोटेशियम टार्टरेट को कुछ जल के साथ परस्पर मिश्रित कर इसकी लेई सी बना और इसे २४ घन्टे तक पड़ा रहने दें जिससे दो का पारस्परिक संयोग हो जाय। पुनः आंच पर जल को जला डालें शीतल होनेपर इसके रवे प्र जांयगे।

लक्षण—वर्ण रहित, स्वच्छ रवे जो त्रिकोणाकार होते हैं स्वाद कुछ २ कसैला तथा मधुर।

घुलनशीलता—यह एक भाग १७ भा शीतल जल में और १ भाग ३ भाग उबलते हु जल मे घुल जाता है घोल को प्रति क्रिया अम्ल होती है।

मिश्रण—एसिड टार्टरेट आफ पोटेशियम।

असम्मिलन (संयोग विरुद्ध)—क्षार द्रव्य सीसा के लवण, माजूफल (गैलिक एसिड) और कषायाम्ल (टैनिक एसिड) तथा अन्य सङ्कोचक द्रव्य।

प्रभाव—स्वेदक, श्लेष्मानिःसारक, हृदयावसादक तथा वामक।

मात्रा—स्वेदन हेतु $\frac{1}{25}$ से $\frac{1}{8}$ ग्रेन (२५ से ८ मि० ग्राम) श्लेष्मानिःसरण हेतु $\frac{1}{8}$ से चौथाई ग्रेन वमन हेतु आधा से १ ग्रेन (३ से ६ सी ग्राम) एक साल के बालक के लिये चौथाई ग्रे इन विभिन्न मात्राओं को ध्यान पूर्वक स्मर रखें।

योगनिर्माण विधि—इसको घोल रूपमें इसका मद्य उपयोग में लाना चाहिये यदि इसे वटिका रूप में देना हो तो इसे दुग्ध की शर्क (मिल्क शूगर) के साथ भली प्रकार मिश्रित और द्राक्षा के शीरा (ग्ल्युक्रोज) द्वारा वटि प्रस्तुत कर उपयोग में लांए।

ऑफिशल योग
(Offcial Preparations)

अञ्जनासव अजनीय मद्य—हिं०। वाइनम ऐण्टिमोनियली (Vinum Antimoniale) ऐण्टिमोनियल वाइन (Antimonial wine) डा० ना०।

निर्माण विधि—टार्टरेटेड ऐण्टिमनी २० ग्रे० (४० ग्रेन) खौलता हुआ परिश्रुत जल (डिस्टिल्ड वाटर) १ फ्ल्युइड आउन्स और शेरी वाइन १६ फ्ल्युइड आउन्स। टार्टरेटेड ऐण्टिमनी को पहिले खौलते हुये परिश्रुत जल में डालकर घोल ले पुनः इसे शीतल कर शेरी मद्य में मिश्रित कर लें।

शक्ति—इसके एक फ्लुइड आउन्स में ३ ग्रेन अर्थात् एक ग्रेन ऐण्टिमोनियम् टार्टरेटम् होता है मात्रा—स्वेदक रूप से १० से ३० बुंद (मिनिम) और वामक रूप से २ से ४ फ्लुइड ड्राम। एक वर्षीय बालक के लिये श्लेष्मानिःसारक रूप से ३ बूंद और वामक रूप से १५ बूंद (मिनिम)तक

नोट—इनके अतिरिक्त ऐण्टिमोनियम् नाइग्रम प्योरी फिकेटम (शुद्ध स्रोतोंजन) और ऐण्टिमनी सल्फाइड (काला सुर्मा) दो और अंजन के यौगिक ब्रिटिश फार्माकोपिया में ऑफिशल हैं। इसका वर्णन प्रथम स्रोतोंजन में कर दिया गया है अतः वहाँ देखिये।

नांट आफिशल योग
(Not official Preparations)

अङ्गुएण्टम ऐण्टिमोनियाई टार्टरेटी Unguentum Antimonii Tartratæ—ले०। आइण्टमेंट आफ टार्टरेटेड ऐण्टिमनी Ointment of Tartrated antimony) इं०। मरहम वामक टार्टार (लवण) टार्टाराञ्जनानुलेपन —हि। मरहम तर्तीरुमुकई. मरहमनमक है ति०।

निर्माण विधि—टार्टरेटेम ऐण्टीमनी का वारीक चूर्ण १ भाग सिम्पल आइण्टमेण्ट (सादा-मरहम) ४ भाग भली भांति मिश्रित करलें। (ब्रिटिश फार्माकोपिया के परिशिष्टांकस्थ योगानुसार)

अञ्जन के विभिन्न योगिकों के विस्तृत गुण धर्म व प्रयोग

(१) आयुर्वेदिकमतानुसार—

अंजन सम्पूर्ण चक्षुदोषनाशक, आयुष्यदीर्घ करता' सर्व रोगनाशक, ज्ञान प्रकाशक' शान्ति दायक, प्लीहा रोगनाशक, स्त्रियों से प्राप्त होने वाले तपेदिक, अङ्गभेद, यक्ष्मा आदि रोग नाशक हैं। त्रिककुत नामक पर्वत से उत्पन्न अजन सर्वश्रेष्ठ है। अथ०। सू०। ४४। ६। का०। १६।

स्रोतोंऽजन काला सुर्मा और सौवीर श्वेत सुरमा को कहते हैं। जो बर्बी के शिखर सदृश होता है वह स्रोतोऽञ्जन कहलाता है सफेद सुरमा भी स्रोतोंऽजन के सदृश होता है किन्तु कुछ पीले रंग का होता है भा०।

काला सुरमा शीतल' कटु, कषैला, कृमिघ्न, रसायन रस योग्य और स्तन्यवृद्धिकारकहै।(रा० नि० व० १३)

स्रोतांऽज न (काला सुरमा) मधुर नेत्रों को हितकारी, कषैला' लेखन, ग्राही तथा शीतल है और कफ, पित्त, वमन' विष श्वित्र (सफेद कोढ़) क्षय तथा रक्तविकार को नष्ट करता है यह सदा बुद्धिमानों को सेवनीय है जो स्रोतोंऽजन में गुण हैं वे सौवीर में भी हैं ऐसा विद्वानों ने कहा है। किन्तु दोनों अंजनों में स्रोतोंऽजन ही श्रेष्ठहै भा०

सफेद सुर्मा नेत्रों को परम हितकारी है। अतः एव इसे नित्य लगाना चाहिये इसको लगाने से नेत्र मनोहर और सूक्ष्म वस्तु के देखने वाले होते हैं सिन्धु नामक पर्वत में उत्पन्न हुआ काला सुरमा (शुद्ध किया हुआ न होने पर भी) उत्तम होता है इसको लगाने से यह नेत्रों की खुजली मैल, तथा दाह को नष्ट करता है और क्लेद (नेत्रों से पानी का बहना) तथा पीडा को दूर करता है नेत्र स्वरूपवान होते हैं और वात तथा वायु और धूप को सहन करने में समर्थ होते हैं काला सुरमा लगाने से नेत्रों में रोग नहीं होते इस कारण इस को भी लगाना चाहिये, रात में जागा हुआ, थका हुआ, वमन करने वाला, जो भोजन कर चुका, हो ज्वर रोगी और जिसने शिर से स्नान किया हो उनको सुरमा नहीं लगाना चाहिये। (भा० प्र० ख० १)

(२) यूनानी मतानुसार—

स्वरूप—श्याम श्वेत तथा रक्त वर्ण।

स्वाद—वेस्वाद।

प्रकृति—प्रथम कक्षा में शीतल और द्वितीय

कक्षा में रूक्ष (किसी किसी के विचार से २ कक्षा में ठंडा और रूक्ष) हानिकर्ता वक्षस्थलस्थ अवयवों को । दर्पनाशक—कतीरा तथा शर्करा ।

प्रतिनिधि—अनार ।

गुण कर्म व प्रयोग—सुरमा पारद तथा गंधक दो वस्तुओं का यौगिक है जिनमें गंधक प्रधान है इसी कारण यह विबन्धकारी या बद्धक व रूक्षता प्रद है रूक्षता की अधिकता के कारण यह व्रणपूरक है तथा उनके बढ़े हुए मांस को नष्ट कर देताहै अपनी कब्ज तथा रूक्षता एवं नेत्र की ओर मलों को रोकने के कारण दृष्टि को बलप्रद तथा नेत्र स्वस्थता का रक्षक है उस नकसीर को बन्द करता है जो मस्तिष्क के परदों से फूटा करती है नेत्र की सरदी गरमी और चींचड़ों का हरणकर्ता है इसका हुमूल (वर्ती) जरायु द्वारा रक्तस्राव होने को रोकता है (नफी०) इसकी पिचुक्रिया अर्थात् भिगोया हुआ कपड़ा रखना गुदभ्रंश (काँच निकलने) को गुण करता है । और गर्भाशय की कठोरता को मृदु करता है । सुरमा शुक्रमेह और आर्तव का रुद्धक है तथा रक्तस्राव (मुख द्वारा रक्तस्राव) पुरातन सूजाक, व्रण, अर्श तथा नासूरों (नाड़ीव्रण) को लाभप्रद है और क्षय रोग को दूर करता है एवं अन्य भांति के ज्वरों के लिये गुणदायी है ।

(३) डाक्टरी मतानुसार अञ्जन के

बाह्य प्रभाव

अञ्जन के यौगिकों का त्वचा पर सशक्त उग्रतासाधक वा क्षोभक (इरिटेण्ट) प्रभाव होता है । अस्तु, टाटरेटेड ऐण्टिमनी को मलहम रूप मे त्वचा पर लगाने से शीतला सदृश दाने उत्पन्न हो जाते हैं, जिनसे क्षत होकर सर्वदा के लिये चिह्न रह जाते हैं ।

आभ्यन्तरिक प्रभाव

आमाशय तथा आंत्र—अञ्जन के यौगिकों के आभ्यन्तरिक उपयोग से भी वैसा ही उग्रता साधक (क्षोभक) प्रभाव होताहै जैसा कि उसके बाह्य उपयोग से । अस्तु, यदि टाटरेटेड ऐण्टिमनी की अधिक मात्रा में खाया जाय अथवा अधि समय तक औषध रूप से उपयोग में लाया ज तो मुख, कन्ठ, अन्नप्रणाली, आमाशय और ह पर इसका वैसा ही उग्रतासाधक प्रभाव होता जैसा कि त्वचा पर ।

इसे सूक्ष्म मात्रामें व्यवहार करने से आमा में ऊष्मा एवं वेदना का भान होता है किञ्चित मात्रा में देने से क्षुधा प्रायः नष्ट हो है, जी मचलाता है और आमाशय व की श्लेष्मिक कला से अधिक द्रवस्राव होता इससे भी अधिक मात्रा अर्थात् २ या ३ ग्रे मात्रा में देने से वह वामक प्रभाव करता है इसका यह (वामक) प्रभाव आमाशय इसके प्रत्यक्ष (सरल) वामक (डायरेक्ट एमेटि प्रभाव का प्रतिफल स्वरूप होता है। कि तत्काल अभिशोषित होकर मास्तिष्कीय केन्द्र पर भी यह किसी भाँति अप्रत्यक्ष (अ वामक (इण्डायरेक्ट-एमेटिक) प्रभाव करता यदि इसको त्वकस्थ अन्तःक्षेप द्वारा रक्त में प्र किया जाय तो भी इससे वमन आने लगत जिसका कारण यह होता है कि कुछ तो इ प्रभाव वमन केन्द्र पर होता है और कुछ प्रकार कि यह शोणित में अभिशोषित कि किसी भाँति आंत्र तथा आमाशय में खारिज है जिससे कुछ समय तक वमन आता रहता और यदि इसको बहुत से पानी में घोल कर जाय तो वमन तो कम आता है, किन्तु अधिक आते हैं । अत्यधिक मात्रा त्रिपैली मात्रा में इसे देने से आमाशय आंत्र में खराश होकर विशूचिका के समान उत्पन्न हो जाते हैं और उदर में मरोड़ होने आने लगते हैं । अति सूक्ष्म मात्रा में यदि मुख द्वारा आमाशय में प्रवेशित किया जाय यह बड़ी मात्रा में शिरा में अन्तः क्षेप द्वारा चाए जाने की अपेक्षा शीघ्र प्रभाव करता इससे यह सिद्ध होता है कि वमन वामक केन्द्र की अपेक्षा इसका स्थानीय ही मुख्य है ।

हृदय तथा शोणित परिचालन—अञ्जन के विलेय गुण युक्त लवण शीघ्र रक्त में शोषित हो जाते हैं। परन्तु, ये रक्तवारि (प्लाज्मा) की अल्ब्युमिन में मिश्रित नहीं होते।

उपयोग के आरम्भ से चाहे इसको सूक्ष्म ($\frac{1}{4}$ ग्रेनसे १/२) मात्रा में ही दिया जाय तो भी यह हृदय का शक्ति तथा गति दोनो का कम कर देता है। परन्तु मतली को उत्तेजना मिलती है उसको गति रुक रुक कर (कै) होने लगती है। इसे अधिक मात्रा में व्यवहार करने से हृदय अत्यन्त निर्बल हो जाता है। और द्वितीय यह कि वैसोमोटर सिस्टम के किसी स्थल पर निर्बलताजनक प्रभाव पड़ने से धामनिक मांस पेशियां शिथिल हो जाती है। इस कारण अन्जन (ऐण्टीमनी) रक्तभ्रमण तथा हृदयको सशक्त निर्बलकारी या हृदयावसादक औषध है। (अंजन का उक्त निर्बलकारी प्रभाव बहुतांश में विष अर्थात् सींगिया के समान ही होता है।)

फुफ्फुस तथा श्वासोच्छ्वास—अजन के प्रभाव से प्रथम तो श्वासोच्छ्वास में सूक्ष्म सी उत्तेजना होती है. तत्पश्चात् यह अत्यन्त शिथिल हो जाता है। अस्तु, श्वासकाल घट जाता है और श्वास छोड़ने का समय बढ़ जाता है। अन्ततः श्वासोच्छ्वास का मध्य काल बहुत बढ़ जाता है और उसकी गति अनियमित हो जाती है। अंजन वायुप्रणाली को श्लैष्मिक कला के मार्ग से विसर्जित होता है। इस हेतु यह शोफजन श्लेष्मानिस्सारक (एण्टिफ्लोजिस्टिक एक्सपेक्टोरेण्ट) प्रभाव करता है।

शारीरोष्मा—स्वस्थ दशा में अंजन की थोड़ी मात्रा से शारीरिक ताप पर कुछ भी प्रभाव नहीं होता है। किन्तु, ज्वरावस्था में उपयोग करने अथवा बड़ी मात्रा में देने से शारीरिक ताप कम हो जाता है। जिसका कारण अधिकतर तो (१) हृदय का निर्बल हो जाना तथा शोणित के दबाव (रक्त भार) का कम हो जाना है, (२) स्वेद स्राव और (३) तापोत्पादन (थर्मो जेनेसिस) अर्थात् मास्तिष्कीय तापोत्पादक केन्द्र पर इसका किसी भांति निर्बलताजनक प्रभाव पड़ता है. जिससे शरीरोष्मोत्पत्ति न्यून हो जाती है।

यकृत्—टार्टार एमेटिक तथा विशेषकर ऐण्टिमोनियम सल्फ्युरेटम प्रत्यक्षतया पित्तस्राव की वृद्धि करते हैं। अस्तु, ये पित्तनिःसारक (कोलेगांग) हैं। ये यूरिया तथा कज्जलिकाम्ल (कार्बोलिक एसिड) की पैदायश की वृद्धि करते और यकृत् की ग्लाईकोजिनिक (शर्कराजनन) क्रिया को निर्बल करते हैं। यदि इसका अधिक समय तक उपयोग किया जाय तो मद्य तथा स्फुर के समान ये यकृत् की क्रिया को खराब करते और इसमें फैटीडिजेनरेशन (यकृत् का वसा में परिणत हो जाना) उत्पन्न करते हैं।

त्वचा—त्वचा पर अजन का सशक्त स्वेदजनक प्रभाव पड़ता है, जिसका प्रधान कारण रक्तभ्रमण का शिथिल हो जाना है। किसी भांति स्वेदजनक ग्रन्थियों पर इसका दूरस्थ स्थानीय प्रभाव पड़ना भी हेतु होता है। यदि मंडूक की त्वचा पर अंजन को लगाया जाय तो वह उसे मद्य की भांति सरेश जैसा मृदु कर देता है जिसे सरलतापूर्वक खुरचा जा सकता है।

वृक्क—टार्टारएमेटिक गुर्दों में से गुजरते समय सूक्ष्म मूत्रजनक प्रभाव करता है, जिसका बहुत कुछ आधार त्वचा की क्रिया पर होता है। अस्तु, यदि अत्यधिक स्वेदस्राव हो तो मूत्र कम आता है और यदि स्वेदस्राव कम हो तो मूत्रस्राव अधिक होता है।

वात संस्थान—मस्तिष्कतथा विशेषतः सुषुम्ना कांड पर अंजन का अत्यन्त निर्बलकारी प्रभाव पड़ता है। यही कारण है कि इसके उपयोग के पश्चात तबीयत सुस्त हो जाती है और ऊंघ सी प्रतीत होती है तथा काम करने को जी नहीं चलता। प्राणियों पर परीक्षा करने से ज्ञात हुआ है कि अंजन के प्रभावसे परावर्तितक्रिया नष्ट हो जाती है। और सौषुम्नीय चेतना स्थल शिथिल एवं निर्बल हो जाता है।

मांस संस्थान—ऐच्छिक तथा अनैच्छिक दोनों प्रकार की विशेषकर ऐच्छिक मांस पेशियां निर्बल एवं शिथिल हो जाती हैं विशेषतः उस अवस्था में जब कि इसे वामक मात्रा में उपयोग किया जाय। अस्तु, अंजन मांसाक्षेपनिवारक (मस्क्युलर ऐण्टिस्पैज्मोडिक) है।

मेटाबोलिज्म (अपवर्त्तन)—शारीरिक परिवर्तन पर अंजन का प्रभाव बिलकुल मल्ल तथा स्फुर के सदृश ही होता है (अस्तु, उक्त वर्णनों का अवलोकन करें)। अति न्यून मात्रा में देने से यह सूक्ष्म परिवर्तक प्रभाव करता है। किन्तु यदि इसको अधिक समय तक व्यवहार में लाया जाय तो यह धातु या तन्तुवों (टिशूज) के साथ कुछ मांस तक मजबूती से चिपटा रहता है। जिससे आभ्यन्तरिक अवयवों विशेषतः यकृत में फैटीडीजेनरेशन (धातु की वसा में परिणित) हो जाता है।

डाक्टर रिंगर महोदय के कथनानुसार अंजन जीवनमूलीय विष है तथा यह मल्ल; सींगिया और हाइड्रोस्यानिक एसिड के सदृश नत्रजनीय (नाइट्रोजीनस) धातु या तन्तुओं की क्रिया या व्योपार को निर्बल करता है।

विसर्जन—अंजन का लवण मूत्र, पित्त, स्वेद वायु प्रणालीस्थ श्लेष्मा, दुग्ध, तथा विशेषकर मल द्वारा शरीर से विसर्जित होते हैं। इनका कुछ भाग शरीर में अवशेष रह जाता है।

हृदय—औषधीय मात्रा में प्रयुक्त मात्रा के अनुसार इसके प्रभाव में भेद उपस्थित होता है $\frac{1}{6}$ ग्रेन की मात्रा में इसके हृदय पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ने के कारण यह नाड़ी की गति को कुछ धीमा कर देता एवं स्वेदक प्रभाव करता है, जिससे खुल कर स्वेदस्राव होता है। इसका यह प्रभाव सम्भवतः क्युटेनियस मसलज(त्वगीयमांसतन्तु)केप्रसार के कारण होता है। यह वायु प्रणालीस्थ श्लेष्मा स्राव को अधिक करता है। उक्त औषध का यह प्रमुख प्रभाव है जो इसे श्लेष्मानिस्सारक औषधों की श्रेणी में प्रथम स्थान प्रदान करता है।

अञ्जन के प्रयोग

बाह्य प्रयोग

यद्यपि अब से कुछ काल पूर्व एमेटिक को प्रस्तुत मलहम काउण्टर इरिटेण्ट (स्थानिक उग्रता साधक) रूप से फुफ्फुस, मस्तिष्क के सन्धिवात प्रभृति रोगों में व्यवहार किया जाता था, किन्तु इसके लगाने से कठिन वेदना होती एवं इससे सदा के लिये चिह्न पड़ जाते हैं इसलिए आजकल इसका उपयोग सर्वथा त्याज्य है।

आभ्यन्तर प्रयोग

आमाशय तथा आंत्र—विषाक्त प्राणी को बमन कराने के लिये टार्टार एमेटिक का उपयोग उचित नहीं, क्यों कि प्रथम तो इसका प्रभाव विलम्ब से होता है, और द्वितीय इससे अत्यधिक निर्बलता उत्पन्न होती है। किन्तु वाक्षीय आभ्यन्तरिक रोगों, यथा कठिन कास अर्थात् वायुनलिका प्रदाह, स्वरयन्त्र प्रदाह (लेरिञ्जाइटिस) तथा खुनाक (क्रुप) प्रभृति में जहां कि वमन एवं रक्त संचालन की निर्बलता दोनों प्रभावों की आवश्यकता होती है, वहां पर उक्त औषध अत्यन्त गुण प्रदर्शित करती है। विषम ज्वरों में जब क्विनाइन से लाभ नहीं होता तब टार्टार एमेटिक से वमन करा के पुनः क्विनाइन खिलाने से लाभ होता है।

रक्त भ्रमण तथा श्वासोच्छ्वास—शोधन (ऐण्टिफ्लोजिस्टिक) प्रभाव के लिये टार्टार एमेटिक को $\frac{1}{60}$ ग्रेन की मात्रा में सींगिया (एकोनाइट) के समान बहुत कठिन प्राबाहिक रोगों की आरम्भावस्था, यथा-गलग्रह (टॉन्सिलाइटिस) स्वरयन्त्रप्रदाह (लेरिञ्जाइटिस) कठिन कास (वायुप्रणाली प्रदाह) फुफ्फुस प्रदाह (न्युमोनियां), फुफ्फुसावरक कला प्रदाह (प्ल्युरेसी) हृदयावरक प्रदाह (पेरिकार्डाइटिस), उदरच्छदा कला प्रदाह(पेरिटोनाइटिस) और डिम्बाशय प्रदाह (ओवेराइटिस) प्रभृति में उपयोग करते हैं। बच्चों के कठिन कास में

क्रूप (खुनाक) आदि में जब कि इसे अकेले अथवा इपीकाकाना के साथ मिलाकर दिया जाता है तब यह और अधिक लाभ करता है।

नोट—नवीन तीव्र कास के आदि में इसको सामान्यतः व्यवहार में लाते हैं। परन्तु यदि रोगी बलवान अर्थात् रक्त प्रकृति का हो तो इसके प्रयोग से अधिक लाभ होता है। और जब इसके उपयोग से पतला होकर श्लेष्मास्राव आरम्भ हो जाए तब फिर इसका उपयोग स्थगित कर देना चाहिये। डिफ्थीरिया में इसका उपयोग न करना चाहिए।

टार्टार एमेटिक प्रतिश्याय ज्वर के आक्रमण को शीघ्र कम कर देता है। हृदय दौर्बल्यकारी होने के कारण अञ्जन को अब स्वेदक प्रभाव हेतु बहुत कम उपयोग में लाते हैं। पर यदि रोगी सशक्त हो तो कभी कभी इसे उक्त प्रभाव हेतु उपयोग में लाते हैं।

पल्विस ऐण्टिमोनिएलिस एक सूक्ष्म स्वेदजनक (डायफोरेटिक) औषध है, तो भी प्रतिश्याय ज्वर तथा कासीय फुफ्फुस प्रदाह में इसको देने से कभी लाभ होता है। डॉक्टर ग्रेविस महोदय ऐसे ज्वर में जिसमें कठिन उन्माद की अवस्था हो, चौथाई ग्रेन की मात्रा में टार्टार एमेटिक को उतनी ही अफीम के साथ योजित कर एक एक या २-२ घंटा पश्चात् कुछ बार उपयोग करना लाभप्रद बताते हैं।

सर वि० ह्विटला के कथनानुसार मदात्यय (डेलीरियम ट्रीमेन्स) में जब अफीम निद्रा उत्पन्न करने में असफल हो जाता है उस समय उसके साथ $\frac{1}{4}$ से $\frac{1}{2}$ ग्रेन उक्त औषध को मिला कर व्यवहार करने से शीघ्र प्रभाव होता है।

वात संस्थान तथा मांससंस्थान—मेनिंग्या (उन्माद) रोग में पागलपन को दूर करने के लिये तथा हली द्वारा तीव्र विषाक्तता अर्थात् उग्र मदात्यय (एक्यूट अलकुहलिज्म) में निद्रा हेतु टार्टरेटेड एण्टिमनी उपयोग में ला सकते हैं।

व्यापक अवसन्नताजनक औषधों यथा क्लोरोफोर्म आदि के प्रचार पाने से प्रथम टार्टरेटेड ऐण्टिमनी को अन्त्रवृद्धि (हर्निया) रोग तथा संधिनाच्युति (डिस्लोकेशन) में पेशियों को ढीला करने के लिये अधिकता के साथ व्यवहार में लाते थे, किन्तु क्लोरोफार्म के दर्याफ्त के बाद उक्त अभिप्राय हेतु अब यह बिलकुल व्यवहार में नहीं आती।

परिवर्तक तथा पित्तनिःसारक रूप से ऐण्टिमनी सल्फ्युरेटम् को प्रायः गठिया रोग (गाउट) और (हेपैटिक फ्लुनेस) में देते हैं। कैलोमेल के साथ पलमर्र वटी रूप से इसे उपदंश रोग में बर्तते हैं।

नोट—डाक्टरी चिकित्सा में काला आजार के लिये तो केवल एक टार्टर एमेटिक ही एक ऐसी औषध सिद्ध हुई है जो कि उक्त रोग को समूल नष्ट कर सकती है।

पूर्ण विवेचन के लिये देखो—काला आजार। श्लीपद रोग में सोडियम् एण्टिमनी टार्ट का अन्तःक्षेप कराना गुणदायी है। आवश्यकतानुसार १, २ या ३ सप्ताह के अन्तर सेवें।

टार्टरेटेड ऐण्टिमनी अब बहुत कम उपयोग में आती है। चूंकि यह घुलनशील एवं स्वाद रहित औषध है, अतएव इसको घोल रूप में व्यवहार करना उत्तम है। इसको सदा अतिन्यून मात्रा ($\frac{1}{60}$ से $\frac{1}{40}$ ग्रेन) से आरम्भ करना चाहिये, क्योंकि यह देखी गयी है कि इसको $\frac{1}{40}$ ग्रेन की मात्रा में बारम्बार देने से वमन आने लगता है।

इसको रेचक प्रभाव के लिये कदापि उपयोग में न लाना चाहिये। इसके उक्त प्रभाव को रोकने के लिये प्रायः इसको अफीम के साथ मिलाकर दिया करते हैं। जब इसको नैलिद (आयोडाइड्ज) या इपिकेकाना के साथ मिलाकर दिया जाता है तब वायु प्रणालीस्थ श्लैष्मिक कला पर इसका अति तीव्र प्रभाव होता है।

एक वर्षीय शिशु को आक्षेपयुक्त खुनाक (Croup) में—

ऐण्टिमनीटार्ट	१ ग्रेन
वाइनाइ इपीकाक	४ ड्रा०
सिरुपाई सिम्प०	१ औंस
एक्वा	३ औंस

इनको मिश्रित कर १५–१५ मिनट पर एक एक चाय के चमचा भर जब तक वमन न हो देते रहे । पश्चात् आवश्यकतानुसार एक दो, या तीन घटे बाद दें । सल्फ्युरेटेड ऐण्टिमनी (काला सुरमा) न्यून मात्रा में टार्टार एमेटिक के सपूर्ण गुणधर्म रखता हैं । यह परिवर्तक होने के कारण उपदंश (सिफिलिस) चिकित्सा में प्रसिद्ध प्राप्त कर चुका है । किन्तु, मार्टिण्डेल्स सॉल्युशन ऑफ ऐण्टिमनी ऑक्साइट (मार्टिण्डेल का अञ्जनोष्मिद घोल) तथा केस्टेलेनीज इण्ट्रावेनस (शिरान्तरीय) या इण्ट्रामस्क्यूलर (मांसान्तरीय) इंजेक्शन आंफ टार्टार एमेटिक के आविष्कार के साथ उसका उपयोग कम हो गया । इसे त्वगन्तर, शिरान्तर या मांसान्तर अन्तःक्षेप द्वारा उपयोग में लाना चाहिये ।

अञ्जन विषतन्त्र (अगद तन्त्रम्)

तीक्ष्ण विष के लक्षण—इसके विष के लक्षण संखिया विष के सदृश ही होते हैं । अस्तु, पौन घटे से एक घंटे के भीतर निम्नोलिखित लक्षण उपस्थित हो जाते हैं । यथा—

कंठ में गरमी तथा दाह प्रतीत होता है । और गला घुटकर गिलन कठिन हो जाता है । जी मचलाता है । बार-बार दस्त बमन आते हैं । वमन किया हुआ द्रव्य कभी हरा या काला और आकाशवत् नीला होता है । उदर में पीड़ा होती है, और पिण्डी की मांस पेशियों आकुंचित हो जाती है । मूत्रावरोध होता है । विषाक्त को कभी उन्माद या शिथिलता भी हो जाती है और अंतिम कक्षा की निर्बलता होती है । नाड़ी संकुचित तीव्र और अनियमित तथा अप्रकट रूप से चलती है त्वचा शीतल तथा पिचपिची हो जाती है । कभी शरीर पर दाने निकल आते हैं

अगद—यदि स्वयं खुलकर वमन न आता तो बामक प्रयोग करें यथा—१५ र० (३० ग्रे सल्फेट आफ जिङ्क को ४ आंउस उष्ण जल साथ घोल कर दें । याएपोमार्फीन $\frac{१}{१५}$ से $\frac{१}{१०}$ ग्रेन का त्वक्स्थ अन्तःक्षेप करें अथवा स्टमक पा या ट्यूब से आमाशय को भली भांति धोयें पु माजू सत्व (टैनिक एसिड) को जो कि इस मुख्य अगद है किसी न किसी रूप से व्यहार जाएँ ।

अस्तु टैनिक एसिड को १५ र० (३० ग्रेन) मात्रा में एक पाव गरम पानी में मिलाकर पिला और यदि आवश्यकता हो तो ऐसी एक एक मात्रा औषध और २–३ बार पिला दें या (२) मा चूर्ण १ तो० पावभर पानी में जोस देकर (३) कीकर की छाल १ छ० अर्द्ध सेर जल क्वथित कर पिला दें या तेज चाय अथवा का पिलादें और जब बमन बन्द होजाय तब पु अण्डों की सफेदी जल वा दुग्ध में फेंट कर केवल दुग्ध ही पिला दें वेदना शमन हेतु अफी सत्व (मारफीन का) त्वक्स्थ अन्तक्षेप निर्बलता हरण हेतु उत्तेजक औषधि उपयोग लाएं या कुचला सत्व (स्ट्रिकनीन) अथ डिजिटेलिस का त्वक्स्थ अन्तक्षेप करें । रान बगल में उष्ण जल की बोतलें लगाए ।

नोट—बटर आंफ ऐण्टिमनी के वे ही हैं जो खनिजाम्लों के इस लिये देखिये—ख जाम्ल (Mineral acids)

अञ्जनयुग्मम्-सं० स्त्री० स्रोताजंन औररसाञ्जन । सू० प्रियंगु आदि देखो अज़ंनम् ।

अञ्जन रस-सं० पु० (१) पारा, इन्हें बराबर ले पीसकर नस्य दें तो सन्निपात दूर हो ।

(२) हींग, फिटकरी इन्हें पीसकर नस्य से सन्निपात ज्वर दूर होता है ।

(र० सा० सं० ज्वर० चि०)

अञ्जन रायि-ते० काला सुरमा हिं० देखो अञ्जन ऐण्टिमोनिआई सल्फ्यूरेटम (Antimon Sulphuretum) ले० ।

अञ्जनवटी-सं० स्त्री० पारा १ टङ्क, गंधक २ टङ्क, मिर्च ६ टङ्क सबको पीसकर कज्जली करें पुनः करेले के रस की २१ भावना देकर मर्दन कर एक रत्ती प्रमाण गोलियां बनांए इसको जल से घिस अञ्जन करने से हर प्रकार के ज्वर दूर होते हैं (किसी किसी जगह केले के पत्र के रस से ३१ पुट देने को कहा है ।)

(वृ० रस० रा० सु० ज्वर चि० ज्वर० चि०)

अञ्जन विधि-सं० पु० (Method of using collyrium) नेत्रप्रसादन भेद. अञ्जन कर्म यथा दोष पकने के पश्चात योग्य अञ्जन आंजना चाहिये जो पदार्थ नेत्रों में आंजा जाता है वह अञ्जन कहलाता है गोली रस और चूर्ण रूप से अञ्जन तीन प्रकार का होता है इनमें चूर्ण से वटी बलवान है और वटी से रस बलवान् है ।

अञ्जन को सलाई अथवा अगुली से आँजना चाहिये । गोली रूप अञ्जन से रसरूप अञ्जन और रसरूप अञ्जन से चूर्णरूप अञ्जन निर्बल है प्रागुक्त प्रत्येक अंजन के स्नेहन रोपण और लेखन आदि तीन भेद होते हैं । चार कड़वे (तीक्ष्ण) भा० प्र० ख० १) और खट्टे और रस वाले अञ्जन को लेखन कहते हैं । (यह अजन नेत्रो में पलकों में नसों, के समूह में, कान में, और कपाल की हड्डी में, रहने वाले दोषों को स्थान से गिराकर मुख से, नाक से, तथा नेत्रों से, निकाल देता है) कषैले तथा कडुए रस वाले और स्नेह युक्त अंजन को रोपण अंजन कहते हैं स्नेह तथा शीतल होने से रोपण अञ्जन वर्ण को उत्तम करता है और दृष्टि के बल को भी बढ़ाता है (भा० प्र० भ० १)

मधुर रस युक्त और स्नेह युक्तअंजन स्नेहन कहलाता है (स्नेहन अंजन दृष्टि के दोष को शुद्ध करने के लिये और दृष्टि को स्निग्ध करने के लिए उपयोगी है । भा० प्र० ख० १ । अंजन तीक्ष्ण (लेखन)हो तो उसकी मटर (एक अंडी के बीज की बराबर) के समान गोली बनानी चाहिये, और मध्यम (दृष्टि का बल बढ़ानेके लिए) अर्थात् तीक्ष्ण न हो, और कोमल भी न हो तो उसकी १ ॥ मटर के बराबर गोली बनानी चाहिये और कोमल (दृष्टि को स्निग्ध करने वाला) हो तो उसकी दो मटर के बराबर गोली बनानी चाहिये, आँख में यदि रसाञ्जन अर्थात् रसरूप अंजन डालना हो तो ३ बायविडंग के बराबर डालना उत्तम है (एक बायविडंग के बराबर (भा० प्र० ख० १), दो बायविडंग के बराबर डालना मध्यम है । और एक बायविडंग के बराबर डालना कनिष्ठ है ! चूर्णरूप अंजन जो स्नेहन हो तो उसकी ४ सलाई आँख में लगानी चाहिये रोपण हो तो उसकी तीन सलाई और जो लेखन हो तो उसकी दो सलाई नेत्रों में लगानी चाहिये आँजने की सलाई दोनों ओर के मुखों से सकुची हुई चिकनी आठ अंगुल लम्बी और उनके दोनों मुख मटर के समान गोल और वह पत्थर अथवा धातु की होनी चाहिये । स्नेहांजन आँजना हो तो सोने अथवा चांदी की, लेखन अंजन आंजना हो तो तॉबे, लोहे, अथवा पत्थर की सलाई होनी चाहिये और रोपण अंजन आँजना हो तो कोमल होने के कारण उसके आंजने के लिये अंगुली ही ठीक है ।

काले भाग के नीचे आँख के कोने तक अंजन आँजे । हेमन्तु ऋतु में और शिशिर ऋतु में मध्याह्न के समय अञ्जन आँजना चाहिये । ग्रीष्म और शरद ऋतु में पूर्वाह्न के समय अथवा अपराह्न के समय अंजन आंजना चाहिये वर्षा ऋतु में बादलों के न होने पर तथा जब बहुत गरमी न हो उस समय अञ्जन आंजना चाहिये और बसन्त ऋतु में सदैव अंजन करना चाहिये अथवा प्रातः और संध्या दोनों समय अञ्जन आंजना उचित है किंतु निरन्तर न आंजे ।

थका हुआ, बहुत रोया हुआ भयभीत,मद्यपान किया हुआ, नवीन ज्वर, वाला, अजीर्ण रोगी और जिसके मल मूत्रादि के वेग का अवरोध हो गया हो उनको अञ्जन नहीं लगाना चाहिये । (भा० म० २) । जिनको अञ्जन आंजने का निशेध किया है उनके अञ्जन आंजे तो नेत्रों में लाली होती है नेत्र सूजे से रहते हैं तिमिर, शूल, तथा दोषों का कोप होता है और निद्रा का नाश होता है (भा० प्र० ख० १ श्लो० ५८)

अञ्जन शलाका–सं० स्त्री० (A stick or pencil for the application of collyrium) सलाई, सुरमा लगाने की सलाई

अञ्जना–सं० स्त्री० मादा हाथी, हथिनी । (A female elephant)

अञ्जनादिः–सं० स्त्री० मैनसिल और पारावत (कबूतर) की बीट का अञ्जन करें तो अपस्मार विशेष कर उन्माद का नाश हो। मुलहठी, हींग, वच, तगर, सिरस बीज, कूट, लहसुन, इन्हें बकरों के मूत्र में पीस नेत्राञ्जन करने तथा नस्य देने से अपस्मार और उन्माद दूर होता है। पुष्य नक्षत्र में कुत्ते का पित्त लेकर अंजन करें तो अपस्मार दूर हों या उसी पित्त में घृत डालकर धूप दें तो अपस्मार (मृगी) दूर हो चक्र० द० अपस्मार चि०।

निर्मली, शंख, तेन्दु' रुपा इन्हें स्त्री के दूध में कांसे के पात्र में घिस अञ्जन करें तो व्रण सहित नेत्र की फूली दूर हो रत्न, शंख दन्त, (हाथीदांत) धातु (रूपा), त्रिफला' छोटी इलायची, कांज के बीज लहसुन इनका अञ्जन फूली के व्रण को दूर करता है तथा अव्रणशुक्र गम्भीर व्रण शुक्र त्वग्गत शुक्र इन्हें भी दूर करता है।

(वं० से० नेत्र० रो० चि०)

अञ्जनादिगणः–सं० पु० सौवीराञ्जन, रसांजन, नागकेशरपुष्प, प्रियंगु, नीलोत्पल, उशीरतृण (खस) नलिन, मधुक और पुन्नाग। सु० सू० ३८ अ०। स्रोतांजन, सौवीरांजन, प्रियंगुजटामासी पद्म उत्पल रसोत, इलायची, मुलहठी प्रभृति द्रव्य विष और अन्तर्दाह तथा पित्त नाशक हैं। वा० सू० १५ अ०। सुर्मा, फूल प्रियंगु जटामांसी, सफेद कमल, नीलकमल, रसांजन, इलायची, मुलहठी, नागकेसर यह गण विष अन्तर्दाह तथा पित्तशामक हैं। वं० सं० द्रव्यगणाधिकारे।

अञ्जनाधिका सं० स्त्री (१) काली कपास का क्षुप। देखो—कालाञ्जनी। (२) अञ्जनी, लेपकारिणी आजनाइ—वं० हारा०। हे०च० ४का। क्षुद्रमूषिका

अञ्जनाम्भः–सं० क्ली० अञ्जनजल, लोशन, चक्षुप्रसाधनार्थ औषधीय द्रव। लिक्विड कॉलीरियम (Liquid collyrium), आई [illegible] (Eye water)—इं०। वै० श०।

अञ्जनिकः–सं० पु० गन्धरास्ना। वै० श०।

अञ्जनिका–सं० स्त्री० देखो— अञ्जनाधिका। [illegible] लु० क०।

अञ्जनी–सं० स्त्री० (१) कटुका (की)–सं० [illegible] हि०। पिक्रोर्रहाइजा कर्रोआ (Picrorrhi[illegible] kurroa)–लें०। (२) काली कपास। [illegible] –कालाञ्जनी। रा० नि० व० ४। (३) –हि[illegible] सं० स्त्री० अञ्जननामिका। अञ्जन, याल्कि, [illegible] लोखण्डी (फा० इं० २ भाग), लिम्ब (इं० [illegible] प्लां०)–मह०। काशमरम (फा० इं २ [illegible] कायमपूबूचेड्डि, केसरी-चेड्डि (इ० मे० प्लां)–[illegible] अल्लि चेड्डु–(चेट्टु) ते०। सुर्प० (फा० इ [illegible] लिम्ब-तालि–कना०। वारी–काह, सेरु [illegible] सिं०। काशवा-मज०। अञ्जन, याल्कि, लोख[illegible] –वम्ब०। कालो कुडो–को०। एमटिङ्कटो[illegible] M. Tinctorium, मेमीसीलोन इं[illegible] (Memecylon Edule, *Roxb*)–[illegible] आयर्न वुड ट्री (Iron wood tree)–[illegible] मे० कमेस्टिब्ल (Memecylon Co[illegible] stible)–फ्रा०।

मेलास्टोमेसीई वर्ग

(*N. O. Melastomaceae*)

उत्पत्तिस्थान—पूर्वी व पश्चिमी प्रायद्वी[illegible] लङ्का।

वानस्पतिक विवरण—अञ्जनी के लघु [illegible] अथवा झाड़ियां होतीं हैं, जो पर्वती भूमि[illegible] उत्पन्न हो जाती है। "फ्लोरा आफ [illegible] इण्डिया-- में इसके द्वादश भेदों का वर्णन [illegible] गया है। यह एक बृहत झाड़ी है जिसमें चम[illegible] हरित वर्ण की पत्रावली और निम्न शाखा[illegible] नीलाभायुक्त बैंगनी रंग के पुष्प गुच्छ लगते [illegible] चौथाई इंच व्यास के फल लगते हैं। इसके [illegible] पर चार पंखडी युक्त पुष्प-वाह्य-कोष (Cal[illegible] लगा होता है। फल खाद्य है। किन्तु कषेला [illegible] है। पत्ते १॥ से३॥ इं० लम्बे १ से १। इं० [illegible] सम्पूर्ण (अखण्ड), दृढ़, चर्मोपम, पत्र-डंडी

अत्यन्त अस्पष्ट पार्श्विक शिरायुक्त होते हैं। ये सूखने पर पीताभायुक्त हरितवर्ण के हो जाते हैं। स्वाद–अम्ल, तिक्त और कसैला।

रसायनिक संगठन—पत्र में क्लोरोफिल (हरिन्मूरि) के अतिरिक्त पीत ग्ल्युकोसाइड, राल (Resin), रञ्जन पदार्थ, निर्यास, श्वेतसार,सेव का तेजाब, बेडौल रेशे (Crude fibre,और शैलिका (Silica) युक्त अनैन्द्रियक द्रव्य विद्यमान होते हैं।

प्रयोगांश—मूल और पत्र।

प्रभाव व प्रयोग—भारतवर्ष और लङ्का में इसके पत्र रंग के लिये प्रयुक्त होते हैं। इसका विशेष प्रभाव रंग को पक्का करना है, इस लिये मंदरास में चटाई बनाने वाले हड़, पतङ्ग और मजीठ के साथ इसे विशेष रूप से उपयोग में लाते हैं। गम्भीर रक्तवर्ण उत्पन्न करने में वे इसे फिटकरी से उत्तम खयाल करते हैं।

अंजनी शीतल और संकोचक है। इसके पत्ते का शीत कषाय (२० भाग में १ भाग) आँख आने में सकोचक लोशन रूप से व्यवहार में आते हैं और सूजाक एवं श्वेत प्रदर में इसका आभ्यन्तरिक उपयोग होता है। इसकी जड़ का क्वाथ (१० में १) १। तो० से ३॥ तो० की मात्रा में अत्यधिक रजःस्राव के लिऐ लाभदायी खयाल किया जाता है, (डू० रो०)।

अञ्जनी की छाल का चूर्ण सुगन्धित द्रव्यों यथा—अजवायन, (काली) मिर्च और जदवार प्रभृति के चूर्ण के साथ मिलाकर इसे कपड़े में बाँध कर मोच आने अथवा कुचल जाने में इसका सेक करें अथवा इसे लेप के काम में लाएँ। (वि० डॉइमाक)।

डाक्टर पीटर के वर्णनानुसार अञ्जनी पत्र बेलगाँव (दकन) में सूजाक के लिये बहुत प्रसिद्ध है। इस हेतु इसको खरल में कुचल कर उबलते हुये जल में डाल इसका इन्फ्यूजन (शीत कषाय) तय्यार करना चाहिये।

अञ्जवार–
अञ्जुवार– अ० किसी २ ग्रन्थ में अंजुबार और अजिबार भी आया है। अङ्गबार होज़र, बन्दक फा०। बु० मु० मिरोमती–स०। इं० मे० मे०। मचूटी, इन्द्राणी, केसरु, कुवर, निसोमली, बीज-बन्द–हिं०। मस्लून, बिलौरी अञ्जबार–पं० द्रोब काश०–इन्द्रारू–सिंध। पालीगोनम् अविक्युलरी Polygonum Aviculare, पा० बिस्टोर्टा P. bistorta, *Linn* पा० विविपरम P. viviparum–ले०। नाटग्रास Knot grass–इं०। फ० इं०। इं० मे० मे०। इं० मे० प्लां०। मेमो० रिनोवी ओइसो Renouee oiseaux–फ्रां०।

पॉलिगोनेशिई (अञ्जबार) वर्ग
(*N. O. Polygonaceae*)

उत्पत्तिस्थान—उत्तरी एशिया और यूरोप। वहीं से यह भारतवर्ष में लाया गया। फा० इं० ३ भा०। पश्चिमी हिमालय; काश्मीर से कुमायूँ तक, रावलपिण्डी और डेकन। इ० मे० प्लां०।

इतिहास—सर्व प्रथम यूनानी ग्रन्थों में अजुवार का वर्णन किया गया है। अस्तु दीसकरीदूस (Dioscorides) और प्लाइनी (Pliny) के जमाने में यह रक्तावरोधक मृदुभेदनीय तथा मूत्रल प्रभाव हेतु उपयोग में आता था। जलनयुक्त आमाशयिक वेदना में उसके पत्र को स्थानीयरूप से प्रयोग में लाते थे और मूत्राशय एवं विसर्प सम्बन्धी व्यथा में इसका लेप करते थे। इसका रस तिजारी और चौथिया प्रभृति ज्वरों मे, ज्वर चढ़ने से थोड़ी देर पहिले विशेषरूप से उपयोग में आता था स्क्रिबोनिअस (Scribonius) का कथन है कि चूँकि यह प्रत्येक स्थान में पाया जाता है इस लिये इसको पालिगोनोस (Polygonos) कहते हैं इब्नसीना तथा अन्य अरबी हकीम इसको असाउर्राई तथा बत्बात नाम से पुकारते हैं। इनके विचार मे अजुवार शीतल एवं रूक्ष है तथा वर्णन क्रम में वे इसके उन्हीं गुणों का उल्लेख करते हैं जिसका वर्णन यूनानियों ने सर्व प्रथम अपने ग्रन्थों में किया। फारसी लेखक

इसको हज़ार बन्दक कहते हैं। आयुर्वेदिक ग्रंथों में इसका कहीं भी वर्णन नहीं मिलता। हाँ। भारतवर्ष में हकीम लोग अब भी इसको उन्हीं रोगों में बर्तते हैं जिनका जिक्र दीसकूरीदूस ने किया है।

वानस्पतिक विवरण—इसका वृक्ष आदमी के क़द के समान होता है। मूल तन्तुमय, लम्बा अत्यन्त कठोर कुछ कुछ काष्ठीय निम्न भाग शाखी एवं सिरा साधारण, श्यामाभा युक्त रक्त एवं विषम होती है। प्रकाण्ड अनेक प्रत्येक दिशा में फैला हुआ साधारणतः दण्डवत पड़ा हुआ (नत) बहुशाखा युक्त, गोल, धारीदार अनेक ग्रन्थियों पर पर्णसयुक्त होता है। पत्र—एकान्तरीय अर्थात् विषमवर्ती, डंठलयुक्त, मुश्किल से एक इंच लम्बा अण्डाकार या बर्छी के आकार का, सम्पूर्ण (अखंड) अधिक कोणीय, एक नस से युक्त, किनारे के सिवा चिकना, विभिन्न चौड़ाई वाला, पदार्थ अधिक चर्मोपम, वर्ण कुछ कुछ धूसर अथवा नीला और डंडल की ओर गावदुमी होता है। पुष्प—श्वेत गम्भीर रक्त तथा हरित वर्ण से चित्रित होता है। बीज—त्रिकोणाकार चमकीले और काले रंग के होते हैं।

प्रयोगांश—जड़ (अधिकतर जड़ की छाल, अथवा जड़के रेशे) उपयोग में आती है। स्वाद फीका। प्रकृति- ३ कक्षा में ठण्डी और रूक्ष है। हानिकर्त्ता-शीत प्रकृति को। दर्पनाशक—सोंठ, शहद। प्रतिनिधि- जरिश्क और गिलेअरमनी। मात्रा—४ से ६ मा० तक।

रासायनिक संगठन—अञ्जुवार सत्व सर्थात् पोलिगोनिक एसिड (Polygonic acid) कषाय सत्व (Tannic acid) माज्वाम्ल (Gallic acid) श्वेतसार और कैल्सियम् आक्जेलेट (Calcium oxalate)

गुण, कर्म, प्रयोग—१ सम्पूर्ण, अवयवोंके रुधिरका रुद्धक, फुफ्फुस और विशेष करके वक्षस्थल के रुधिर का रुद्धक है। (२) पित्त और रुधिर के दाह का शमनकर्त्ता। (३) बवासीर सम्बन्धी रुधिर, प्रवाहिका, वमन और जीर्णातिसार (पुराने दस्त) का बन्धक और नक्सीर का रुद्धक है। (४) इसका चूर्ण क्षतों पर कने से रक्तस्राव रुककर वे भरने लगते हैं (निर्विषैल)

अञ्जुवार श्लेष्मानिस्सारक, मूत्रविरजनीय, वल्य, सङ्कोचनीय और परियायज्वरनिवारक इसकी जड़ का क्वाथ (१० भाग में १ भाग २॥ तो० से ५ तो० की मात्रा में क (Gention) के साथ विषम ज्वर (Malaria) पुरातन अतिसार और अश्मरी में तथा रक्तकेशिका सम्बन्धी कास, कुक्कुर और अन्य फुफ्फुसीय रोगों में भी व्यवहृत होता है। इसका रस भी लाभदायक है। श्वेत तथा व्रणों में इसका क्वाथ पिचकारी द्वारा (धोने में) व्यवहृत होता है तथा मसूड़ों की और कण्ठा लटक आने पर इसकी कुल्ला सर्वोत्तम हैं। इ० मे० मे०।

नासिका प्रभृति से रक्तस्राव को रोकने के अञ्जुवार उपयोग में आता है। वि० ग

इसकी सूखी जड़ का वेदनाशमन हेतु प्रयोग होता है। (स्टुवर्ट)

अञ्जरह—फ़ा०, अ० देखो-अन्जुरह।

अञ्जरा—फ़ा० सिरियारी, सिरवालो-हिं०।

अञ्जरान—अ० आजरबू। लु० क०।

अञ्जरूत—अ० सिर०, अञ्जरूत ! गूजर। —बम्ब०। यह गूजूद (फा०) शब्द का अ है। "मख्जनुल् अद्बियह" के लेखक मुहम्मदहुसैन महाशय के विचार से इसके निम्न प्रकार हैं, यथा-कुहुल फारसी (अञ्जन) कुहुल किर्मानी (किर्मानी अ —अ०। अञ्जदक, कुञ्जुद, अगरधक, —फा०। लाई, लाही-हिं०। ऐस्ट्रागैलस कोला (Astragalus sarcocol Dymock)

लिग्युमिनोसी अर्थात् शिम्बी वर्ग (*N. O. leguminosæ*)

उत्पत्तिस्थान—फारस।

इतिहास—यद्यपि पूर्वी देशों में आज भी अञ्जुरूत अधिकता के साथ उपयोग में आता है, तो भी वर्तमान काल में लोग युरूप में मुश्किल से इसे जानते हैं। दीसकूरीदस (Dioscorides) हमें बतलाता है कि यह एक फारसी वृक्ष का गोंद है जो चूर्ण किये हुये लोबान के सदृश और सुर्खीमायल तथा कुछ कुछ तिक्त स्वाद युक्त होता है। इसमें जख्मों के बन्द करने और चक्षुआवाबरोधक गुण है। यह प्रस्तरो (पलास्टों) का एक अवयव है इसमें गोंदों का मिश्रण करते हैं।

प्लाइनी—(Pliny) उन्हीं गुणों का वर्णन करता है और इतना विशेष बतलाता है कि चित्रकार इसकी बड़ी इज्जत करते हैं। इब्नसीना कहते हैं कि यह बिना खराश के व्रणों को पूर्ति करता एवं अकुर लाता है। प्रस्तर (प्लास्टर) रूप से उपयोग करने पर यह समस्त प्रकार के शोथों को लयकर्ता है।

मसीह इतना विशेष बतलाते हैं कि यह तीक्ष्ण रेचक है और कफ एवं विकृत दोषों को निकालने के लिये उत्तम है। हाजी जैनुल्अत्तार कहते हैं कि इसका फारसी नाम गूज़र है और जिस वृक्ष से यह निकलता है यह शीराज के निकट शबानकारह् की पहाड़ियों में पाया जाता है। उक्त निर्यास का अन्य नाम जबुदानह् है। जब यह पहले निकलता है तब श्वेत होता है, किन्तु वायु में खुले रहने पर लाल होजाता है।

अर्वाचीन लेखकों में, "मख्जनुल् अद्वियह" के लेखक मीर मुहम्मदहुसेन हमें बतलाते हैं कि इस्फहान में अञ्जरूत को कुन्दुर और अगरधक कहते हैं (शेष के लिए देखो-पर्याय सूची)। आपके कथनानुसार यह शाइकह् नामक कांटेदार वृक्ष का गोंद है जो ६ फीट ऊंचा होता है और जिसके पत्र लोबान पत्र सदृश होते हैं। इसका मूल निवास स्थान फारस और तुर्किस्तान है। पुनः वे उक्त औषध का ठीक विवरण देते हैं।

आयुर्वेद ग्रन्थों में—इसका कहीं भी ज़िकर नहीं पाया जाता।

वानस्पतिक विवरण—साकोकोला के न्यूनाधिक सामूहिक एवं अत्यन्त विचूर्णित दाने होते है। यह अपारदर्शक अथवा अर्धस्वच्छ होता है और गम्भीर रक्त से पीताभायुक्त श्वेत अथवा धूसर वर्ण में रूपान्तरित होता रहता है। इसमें मुश्किल से कोई गन्ध पाई जाती है। इसका स्वाद अत्यन्त कडुआ और मधुर होता है। उत्तप्त करने पर यह फूलता है और जलते समय इसमें से जले हुये शर्करा की सी गन्ध आती है। साकोकोला (अञ्जरूत) निर्यास फारसी बन्दरगाह बुशायर से थैलों में बम्बई आता है। इसके अन्य भागों का विवरण निम्न प्रकार है—।

फल—डण्ठल छोटा, पतला, पुष्प-बाह्य-कोष अन्डाकार, घण्टाकार, भूमी संयुक्त, ३/४ इञ्च लम्बा, ५ तंग विभाग युक्त (पञ्च सूक्ष्म खण्ड युक्त) और खुला हुआ होता है। इसके भीतर पुष्पदल (Petals) और एक अण्डाकार, सख्त, तुण्डकार, फली जौ धान के इतनी बड़ी और जिसका बाह्य धरातल एक घने सुफेद वर्ण के रोवों से आवरित होता है। यद्यपि फलों पक जाती हैं तो भी पखड़ियाँ लगी रहती है। उनमें से सबसे ऊपर वाली फणाकार होती और फल्ली के तुण्ड भाग को ढाके रहती है। फली द्विकपाटीय होती है, उभार की सीवन से लगा हुआ एक और धूसरवर्ण का उड़द सदृश बीज होता है, जिसका व्यास $\frac{1}{6}$ इञ्च होता है और जो जल में भिगोने से फूलता और फट जाता है एवं अंजरूत समूह में निकल पड़ता है। कुछ छीमियां पतनीय तथा निर्यासपूर्ण होती है।

प्रकाण्ड—अर्थात् तना—काष्ठीय, जिसमें असंख्य प्रकाश मय गट्ठे होते हैं, कण्टकमय, कांटे ३/४ से १ इञ्च लम्बे जो लघु शाखा रहित रोगटों से आवरित होते हैं। और जिन पर अञ्जरूत की पपड़ी जमी होती हैं।

पत्र—कहते है कि इसके पत्र लोबान पत्र शदृश होते हैं। (सर विलियम डाइमांक)

प्रयोगांश—निर्यास।

रासायनिक संगठन–सार्कोकोलीन ६५·३०, निर्यास ४·६०, सरेशी पदार्थ—३·३०, काष्ठीय द्रव्य प्रभृति २६·८०। सार्कोकोलीन ४० भाग शीतल जल तथा २५ भाग उबलते हुए जल में घुलनीय है। (गिबर्ट)

मात्रा—२। मा० से ४॥ मा० (४ रत्ती से १ मा०)। प्रकृति–दूसरी कक्षा के अन्त में उष्ण और उसी कक्षा के आरम्भ में रूक्ष। हानिकर्त्ता आंत्र को। ५ ग्रिरम पिसा हुआ विशेष कर अभ्रक के साथ विष है। दर्पनाशक–कतीरा, बबूल का गोंद और रोगन बादाम प्रभृति।

प्रतिनिधि–इसके समभाग एलुवा और कुछ अधिक निशास्ता। मुख्य प्रभाव-व्रणद्रवशोषक और नेत्ररोग को लाभ पहुँचाता है।

गुण, कर्म, प्रयोग–यद्यपि इसमेंएक प्रकार की रतूबत भी होती है। जो इसकी खुश्की के साथ दृढ़ता पूर्वक मिली हुई है किन्तु, तो भी खुश्की गालिब रहती है। इसी कारण विना कांतिकारी गुण एवं तीक्ष्णता के यह आर्द्रता शोषकहै और इससे यह व्रणों को पूरित करता है, क्योंकि यह उस राध और उन पीत द्रवों को जो व्रणों को भरने नहीं देते नष्ट कर देता है। अपने रुक्षेश के कारण व्रणों के किनारों को जोड़ देता है।

आंख आने के अन्त में लाभप्रद है क्योंकि विना कांतिकारिणी गुण एवं कष्ट के दोषों को लयकरता है और नेत्र की ओर बहकर आने वाले द्रवों को रोकता है सधियों से गाढ़े दोषों को दस्त द्वारा विसर्जित करता है क्योंकि इसमें एक तिक्त अंश है जिसकी क्रियामेंतस्खीन (खुश्की कारित्व) नुज़ुज (परिपाक), तफ्तीह (स्रोतावरोधन) और तहलील (विलीयन) समावेशित हैं। परंतु किसी किसी के विचारानुसार उसकी यह क्रिया (गाढ़े दोषों को दस्त द्वारा निकालना) केवल इसकी खासियत की वजह से है।

नफी०

अञ्जरूत रेचक और विकृत एवं श्लैष्मिक दोषों को लयकर्त्ता है निशोथ तथा हड़ प्रभृति के साथ मिलाकर उपयोग में लाने से यह सर्वोत्तम प्रभाव करता है। अपस्मार में अरंड तैल के साथ मिला कर भीतरी रूप से और नेत्र द्वारा जलस्राव होने पर इसका स्थानीय उपयोग होता है संधिवात, नाशन और कृमिघ्न प्रभाव हेतु इसका आभ्यन्तरिक प्रयोग होता है।

बृंहण प्रभाव हेतु मिश्रदेशीय स्त्रियां इसे भक्षण करती हैं मात्रा आधा से २ मिस्काल है। अधिक मात्रा में आंत्रीय ग्रंथ्यवरोध के कारण यह घातक सिद्ध होता है अंजन रूप से उपयोग करने के लिये इसे गधो के दूध में रगड़ना चाहिये तत्पश्चात इसको चूल्हे में यहां तक शुष्क करें कि यह हल्का भुन जाय पुनः घोट कर अंजन प्रस्तुत करें। इसका प्लास्टर (प्रलेप) समस्त प्रकार के शोथों को लयकरता है। प्याज के भीतर भर कर अग्नि पर भून कर इसका रस कान में टपकाने से कर्ण वेदना शमन होती है।

(मीर मु० हुसेन)

अञ्जरूत, श्वेत सीसा प्रत्येक २ भाग निशास्ता ६ भाग इनको खूब घोटकर बारीक कर लें। यह उत्तम अंजन प्रस्तुत होगा।

(तिब्बे अकबरी)

मोती, मूंगा जलाया हुआ और मिश्री सम भाग के साथ आंख की सफेदी को लाभदायक है। इसका पीना गर्भ पातक और कृमिघ्न है। तरबूज के पानी में तर किया हुआ शरीर को बृंहण कर्ता है। यह बायु लयकर्ता रोधउद्घाटक और श्लैष्मानिस्सारक है।

अञ्जरूत लेपन औषधियों का एक प्रधान अवयव है पारसी लोग इसके साथ रुई मिलाकर दूषित हुई अथवा मोच आई हुई अस्थियों तथा निर्बल सन्धियों में भी उनको साहारा देने के लिये इसका उपयोग करते हैं। साधारण लेपन योग निम्न है

अञ्जरूत ६ भाग, जदवार १ भाग, एलुवा सकोतरी १६ भाग, फिटकरी ८ भाग, मैदाकरी ४ भाग, गूगल ४ भाग, लोबान ७ भाग, और उसारह रेवन्द १२ भाग, इन समस्त औषधों को

बारीक चूर्णकर पुनः जल मिलाकर सिलवट्टा द्वारा इसकी लुगदी प्रस्तुत कर उपयोग में लाएं। (वि० डाइमॉक)

अञ्जल-खित्मी, खैरू (See-khitmi) लु० क०

अञ्जलिः-सं० पु० (१) प्रसृति द्वय (=१६ तो०) ३२ तो० (प० प्र० १ ख०)। (२) कुड़पः (वः) मान (=३२ तो० ८ वा ४ पल)। रत्ना० नानार्थः। भा० उ० वाजी०। (३) अंजलिपुट, करसम्पुट, अँजुरी। मे० लत्रिकम।

अञ्जलिका-सं० स्त्री० (१) लज्जालुका। (२) क्षुद्र-मूषिका। जटा०।

अञ्जलिकार-औषधि विशेष। कौटि० अर्थ०।

अञ्जलिकारिका-सं० स्त्री० लज्जालुका, लज्जालु, छुईमुई। माइमोसापुडिका (Mimosa Pudica)-ले०। सेन्सिटिव प्लाण्ट (Sensitive Plant) इं०। रा० नि० व० ५। भा० पू० गु० व०। (२) वराहक्रांता, बाराहीकन्द हिं०। लाइकोपोडिअम् इम्ब्रिकेटम् (Lycopodium imbricatum)-ले०।

अञ्जलिनी-सं० स्त्री० लज्जालुका, छुईमुई हिं०। देखो—लज्जालु। वै० श०। दी सेन्सिटिव प्लाण्ट (The sensitive Plant) इं०।

अञ्जलिपुटःपुट-सं० पु० क्ली० (The Cavity-formedby joining the hands together) कर सम्पुट। अंजलि।

अञ्जस सी-सं० त्रि० स्त्री० (Notcrooked-straight) सरल सोधा।

अञ्जस-अ० अशुद्धतर' अत्यन्त अपवित्र (नजिस) बहुत पलीदा। म० ज०।

अञ्जायना पेक्टोरिस-इं० हृच्छूल।

अञ्जिवम्-सं० क्ली० प्रकट कामी। अथ०। सू० ६। ६। का० ८।

अञ्जिष्ठः-ष्ठः-स० पु० (The sun) सूर्य्य।

अञ्जीरः-स० पु०, फा० हिं० संज्ञा पु० बं० द०, अंजीर को० म० गु०। मंजुलं (ल) काकोदुम्बरिकाफलं अंजीर (वृक्ष) सं०। अंजीरी, गुलनार, खबार, बेरू, बेडू, अंजीर इं० मे० प्रां० मेमो०। (काक) डुमुर, अंजीर, बड़पेयारा गाछ, आँजीर बं०। भगवार, काक, कोक फेड्, इंजर, फाग, क्रिमि, फगोरू, फागू फोग, खबारी, फेम्रा, थपुर, जमीर, धूरू, दूधो, दहोलिया, फगूरी, फगारी (मेमो०) पं०। फगूवार-राज०। अंजीर इजर अफगा०। केम्त्री-राज०। धौरा-म० प्र०। पेपरी, अंजीर गु०। फगवार, थपुर, ज० भा० के मैदान। (इं० मे० प्रां०) अंजोर, बम्ब०। शीमइ अत्ति, तेन अत्ति ता०। शीम अत्ति तेने अत्ति अंजूस, मोदी पात्-ते०। शीम अत्ति, मला० वैण्डनैड करना०। शीमे अत्ति कना० रट अत्तिका सिं०। स फानू-सी, तिम्बो थान दि, सिम्बो सफान सी-वर्मा। तीन, वल्स-अ०। सोडियम पॉमिफेरम् (Psidium Pomiforum' *Linn.*)-ले०। काला उम्बर-म०। फिगू (Figue)-फ्रां०। फाइकस केरिका (Ficus carica, *Linn*)-ले०। फिग (Fig)-इं०।

अश्वत्थ वा वटवर्ग (अर्टिकेशिई)
(*N. O. Urticaceæ*)

उत्पत्ति स्थान—इसका मूल निवास स्थान फारस वा एशिया माइनर है। अब यह भारतवर्ष में भी बहुत होता है। अरबिस्तान, अफगानिस्तान तुर्किस्तान और अफ्रीका तथा बिलोचिस्तान और काश्मीर इसके मुख्य स्थान हैं।

वानस्पतिक विवरण—अंजीर गूलर की ही जाति का एक वृक्ष है। इसमें स्थूल, गूदादार, खोखला, नाशपाती की शकल का एक आवरण (Receptacle) होता है जिसकी भीतरी सतह पर सूक्ष्म फल समूह उत्पन्न होता है उक्त आवरण के सिरे पर एक छिद्र होता है वह प्रथम (अपरिपक्वावस्था) में हरा, कठोर और चर्म सदृश होता है। कोई अङ्ग चुभाने पर उसमें से दुग्धस्राव होता है। परिपक्वावस्था में वह मृदु एवं रस पूर्ण हो जाता तथा दुग्धीय रस शर्करा रस में परिणित हो जाता है। छिद्र घिरा हुआ एवं अनेक छिलकों से आवरित होता है। उसके निकट तथा अंजीर के भीतर नरपुष्प स्थित होते हैं, किन्तु प्रायः उनका अभाव होता है अथवा उनका

पूर्ण विकास नहीं हुआ होता। नारिपुष्प आवरण के भीतर कुछ दूरी पर स्थित होते हैं जहाँ वे परस्पर गुथे हुये और डंठलयुक्त होते हैं, इनमें पंच पंखड़ी युक्त पुष्पकोष और द्व्यंशीय खुकल (Stigma) होता है। डिम्बाशय, जो साधारणतः एक कोषीय होता है, परिपक्व होने पर एक सूक्ष्म, शुष्क कठोर गिरी में परिवर्तित हो जाता है जिसे हा बीज खयाल किया जाता है। (फार्माकोग्रफिया)।

इसके लगाने के लिए कुछ चूना मिली हुई मिट्टी चाहिये। लकड़ी इसकी पोली होती है। इसके कलम फागुन में काटकर दूर दूर क्यारियों में लगाये जाते हैं। क्यारियाँ पानी से खूब तर रहनी चाहिये। लगाने के दो ही तीन वर्ष बाद इसका पेड़ फलने लगता है और १४ या १५ वर्ष तक रहता और बराबर फल देता है। यह वर्ष में दो बार फलता है। एक जेठ असाढ़ में और फिर फागुन में। माला में गुथे हुये इसके सुखाए हुए फल अफगानिस्तान आदि से हिन्दुस्तान में बहुत आते हैं। सुखाते समय रंग चढ़ाने और छिलके को नरम करने के लिये या तो गन्धक की धूनी देते हैं अथवा नमक और शोरा मिले हुये गरम पानी में फलों को डुबा देते हैं। भारतवर्ष में पूना के पास खेड़ शिवपुर नामक गांव के अंजीर सबसे अच्छे होते हैं। पर अफगानिस्तान और फारस के अञ्जीर से हिंदुस्तानी अञ्जीर उत्तम होते हैं। यह दो तरह का होता है, एक जो पकने पर लाल होता है, और दूसरा काला।

प्रयोगांश—शुष्क आवरण अर्थात् (अञ्जीर)

लक्षण—यह मृदु होता है इसके भीतर बहुत से कोष एवं बीज होते हैं। दबने से फल चपटे और बेकाबदा हो जाते हैं। वर्ण-पीताभायुक्त धूसर, पर कोई कोई श्वेताभायुक्त रक्त व श्याम।

स्वाद—मधुर।

वर्ण भेद से यह तीन प्रकार का होता है। यथा—

(१) पीत, (२) श्वेत और (३) रक्त। ब्रिटिश फार्माकोपिया के अनुसार स्मरना अञ्जीर दवा के काम में आता है जो पीला होता है।

रासायनिक संगठन—फल—इसमें द्राक्षा शर्करा (Grape sugar) ६२ प्रतिशत निर्यास, वसा और लवण होता है। शुष्क अञ्जीर में शर्करा, वसा, पेक्टीज निर्यास, अल्बुमेन (अण्डे की सुफेदी) और लवण होता है। दुग्ध—में पेप्टोनकारी अभिषव (Peptonising ferment) होता है।

गुण, धर्म, व प्रयोग

आयुर्वेद में इसे शीतल, स्वादु, गुरु, स्निग्ध, वात, क्रिमी, शूल, हृत्पीड़ा कफ और मुख बिरसता नाश करने वाला कहा है। रा० व० ६।

अञ्जीर अत्यन्त शीतल, तत्काल वातनाशक, और पित्त और शिरोरोग में विशेष पथ्य है तथा नाक से रुधिर गिरने को करता है।

अञ्जीर भारी, शीतल, मधुर, वातनाशक रक्तपित्त हारी, रुचिकारी, स्वादु पचने में तथा श्लेष्मा और आमवातकारक है एवं विकार को दूर करता है। वृ० नि० र०।

यूनानी ग्रन्थकार—इसे (ताजा अञ्जीर) १ कच्चा में उष्ण और दूसरी में तर मानते हैं।

हानिकर्त्ता—यकृत आमशय और अधिक से खाना दांतों को दर्पनाशक—बादाम और तिर। प्रतिनिधि—चिलगोजा और दाख।

ताजा अञ्जीर मृदुकर्त्ता, पोषक और शीघ्रप्र है। कच्चा अञ्जीर अत्यन्त जाली (कांतिकारी) है, क्योंकि इसमें दुग्ध बहुत ज्यादा होता है पार्थिवांश की अधिकता के कारण यह सर्द और मायल है। शुष्क अञ्जीर शीतोत्पादक जलांश की न्यूनता के कारण यह १ कक्षा में उष्ण और मृदुस है। इससे पतला खून

होता है जो बाहर की ओर गति करता है। अञ्जीर सम्पूर्ण मेवों से अधिक शरीर का पोषण करता है, क्योंकि पूर्व कथनानुसार जलांशाधिक्य के अतिरिक्त पार्थिवांश की अधिकता भी है। भली प्रकार पका हुआ अञ्जीर तकरीबन् निरापद, होता है क्यों कि इससे वह तीक्ष्ण दुग्ध जो इसमें होता है, नष्ट हो जाता है और इसके पार्थिवांश में समता स्थापित हो जाती है।

अधिक गूदादार अञ्जीर शारीरिक दोषों का अधिक परिपाक करता है। क्योंकि गरम व तर होने के कारण दोष परिपाककारी (मुंजिज़्) है। इसके गूदे में स्नेहोष्मा विशेषकर होती है। इसी कारण अधिक गूदे वाला अञ्जीर अधिक परिपाक करता है।

इसमें अन्तिम कक्षा की कुव्वते तलय्यन दोष मृदुकारी शक्ति है, क्योंकि इसकी उष्मा रतूबतों के बहाने पर अधिकार रखती है। परन्तु शुष्कता उत्पन्न करने पर इसका कोई अधिकार नहीं होता अर्थात् यह शोषक गुण रहित है। यह स्वेदजनक एवं उत्तापशामक है।

अञ्जीर कान्तिदायक है, क्योंकि यह सूक्ष्म शोणित उत्पन्न करता है और उसको बहिर्भाग की ओर गति देता हैं। अपनी रतूबत, उष्मा और सूक्ष्मता के कारण इसका लेप फोड़ों को पकाता है।

अपनी तीक्ष्णता और मधुरता द्वारा आमाशय को उत्तप्त करने के कारण यह उष्ण प्रकृति वालों को तृषान्वित करता है और उस पिपासा को जो खारी श्लेष्मा (बल्गमशोर) के कारण उत्पन्न हुई होती है उसको शमन करता है क्योंकि यह बलगम (श्लेष्मा) को पिघलाता एवं पतला करता और काटता छांटता है।

अञ्जीर पुरानी खांसी को लाभ पहुँचाता हैं, क्योंकि यह खांसी केवल बलगम से उत्पन्न होती है और अञ्जीर बलगम को पिघलाता या नुज़ुज (पका) देता एवं तहलील (लय) करता और दोषों से शुद्ध करता है।

अपनी रोधोद्घाटक तथा कान्तिकारिणी शक्ति के कारण यह मूत्रविरंजनीय है तथा यकृत एवं प्लीहा के रोध का उद्घाटक है।

क्योंकि यह तीक्ष्ण मलों को त्वचा की ओर प्रक्षेपित करता है, अस्तु मूत्र उनसे रहित होता है, जिससे वस्ति में मूत्र सम्बन्धी कोई कष्ट नहीं होता। इससे सम्भव है कि मूत्र चिरकाल तक वस्ति में बिना किसी कष्ट के बन्द रहे।

यह वस्ति और वृक्क प्रत्येक के लिये उपयुक्त है, क्योंकि यह कान्तिप्रदायक है एवं दोनों के मलों को मूत्र द्वारा विसर्जित करता तथा उनको त्वचा की ओर मायल कर देता हैं। निहार मुंह खाने से यह अन्न प्रणाली को खोलने में आश्चर्यजनक लाभ दिखलाता है।

जब इसे अखरोट अथवा बादाम के साथ खाया जाता है तब यह आहार से मिश्रित नहीं होता, जिससे इसकी वैयक्तिक शक्ति टूटने नहीं पाती, क्योंकि उनकी चिकनाई अंजीर के प्रदाह को जो तीक्ष्ण दुग्ध के कारण होता है, तोड़ देती है। अखरोट के साथ इसका खाना अधिक पुष्टिकारक है।

अञ्जीर गलीज (स्थूल) आहार के साथ अत्यन्त रद्दी होता है। क्योंकि यह इसको शरीर के बाह्य भाग की ओर गति देगा। अतः इससे बाह्य चेहरे में रोध एवं अन्य रोग होजायेंगे।

इसका दुग्ध तीक्ष्णता के कारण रेचक है और रक्त एवम् दुग्ध को जमा देता है। क्योंकि इनके द्रवत्व को लय एवम् शुष्क कर देता है। यदि रक्त व दुग्ध जमे हुये हों तो उनको पिघला देता है क्योंकि यह अपनी तीक्ष्णता एवम् उत्ताप से दोनों के घनांश को पिघला देता है।

(नफी०)

यह वायु की लयकर्त्ता, अपस्मार (मिर्गी), पक्षबद्ध और बहुधा कफ के रोगों को लाभकर्त्ता, प्रकृति को मृदुकर्त्ता, क्रम क्रम से रेचनकर्त्ता, रोध, प्लीह, शोथ, बहुमूत्रता और वृक्ककीकृशता को हरण करता है। इसका शर्बत कास को

गुण करता है। शुष्क सर्व कर्मों में हीन है। इसका मुख्य प्रभाव शरीर को स्थूल करना और क़सीरुलिग़जा (जिसका अधिक भाग शरीर का भाग बने, जिससे अधिक रक्त बने) है, विशेषकर उस अवस्था में जब इसे रोंफ के साथ ४० दिवस पर्यन्त सुबह को खाएं।

बादाम और पिस्ते के साथ भक्षण करने से बुद्धिवर्द्धक है। सुदाब के साथ विषघ्न, कुर्तुम बीज (कुसुम्भ) और बोरहे अरमनी के साथ विरेचन और अखरोट के साथ विशेष कर कामोद्दीपक है। इसका लेप खनाजीर को लाभप्रद है। इसका दुग्ध चक्षुओं में लगाना मोतियाबिन्द के लिए लाभदायक है। (बु० मु०, मु० अ०)

अञ्जीर पथ्य सहज में पच जाने वाला और औषध रूप से उपयोग करने पर वृक्कएवं बस्ति संबन्धी अश्मरियों का नाश करने वाला और यकृत तथा प्लीहा के अवरोधों को दूर करने वाला है। यह गठिया एवं अर्श चिकित्सा में व्यवहृत है। मुख व्रण में इसका दूध लगाया जाता है। बच्चों के यकृत् रोग में इसका उपयोग लाभदायक है। शुष्क अञ्जीर, बादाम की गुद्दा, पिस्ता, इलायची छोटी, चिरौंजी, बेदाना, शकर इन सबका समान भाग लेकर चूर्ण बनाएँ और उसमें किञ्चित् केशर मिलाकर पुनः उसे आठ गुंज तक गोघृत में डुबो रखें। मात्रा—२ तो० प्रति सुबह। गुण—अत्यन्त पुष्टकारक एवं कामोद्दीपक है।

२ या ४ ताजे अंजीर और थोड़ा सा शर्करा चूर्ण इन दोनों को मिलाकर रात्रि में ओस में खुला हुआ रक्खें और सवेरे इसे खाएँ। इसी प्रकार पक्षभर करें। गुण—शारीरोष्माशामक, निर्बल मनुष्य जिनके ओष्ठ, जबान और मुख चिड़चिड़ाते हों उनके लिये ताजा अंजीर उत्तम बलवर्द्धक औषध है। इं० मे० मे०।

विष्टब्धता, बस्ति तथा फुफ्फुस व्याधि में पथ्य रूप से इसका विशेष उपयोग होता है। (इं० मे० प्रां०)

डॉक्टरी मत

ब्रिटिश फार्माकोपिया में अंजीर ऑफिशल है।

प्रभाव—मृदुभेदक या कोष्ठमृदुकारी। यह कन्फेक्शियो सेना में पड़ता है। प्रयोग—यह सुस्वादु और पोषक मेवा है। साधारण विबन्ध रोग में इसके कुछ दाने निहार मुँह खाने से कब्ज दूर हो जाता है। किन्तु, इसके बीज आंत्र में किञ्चित् घर्षण करके कुछ मरोड़ उत्पन्न करते हैं।

अञ्जीरी-हिं० संज्ञा स्त्री० खबार, गुलनार, वेदू, वेद, फाइकस पामेटा (Ficus Palmata, *Forsk.*)-ले०। भगवाड़, काक, कोक, हेद, इज़र, फाग, किर्मी, फगोरू, फागू, फोग, खबार, फेग्रा, थपुर, जमीर धूडू, धूडी, दहूलिया-पं०। फगवार-पश्तु०। अंजीर, इंज़र-अफ़०। केवा-राजपु०। धौरा-म० प्र०। मेंपरी-गुज०। अम्बार, थपुर-(ऊर्ध्व भारतीय मैदान)। इं० मे० प्रां०।

वटादि वर्ग

(*N. O. Urticaceæ.*)

उत्पत्ति स्थान-उत्तर पश्चिम भारतवर्ष पूर्वीय सिन्धु नदी से लेकर अवध पर्यन्त, हिमालय पर्वत (३००० फीट की ऊँचाई पर) और आबू पर्वत।

उपयोग—इसके फल में मुख्यतः शर्करा तथा लुआब वर्तमान होते हैं, तदनुसार यह स्नेहजनक एवम् कोष्ठ मृदुकर प्रभाव करते हैं। कोष्ठबद्धता (विबन्ध), फुफ्फुस एवम् बस्ति रोगों में यह मुख्यतर पथ्य वा आहार रूप से व्यवहार में आते हैं। इनका पुल्टिस रूप में भी प्रयोग होता है। (Punjab Products)

अञ्जीरे अहमक़-फा० गुलर, गूलर-हिं०। फाइकस ग्लोमरेटा Ficus glomerata, *Roxb.* (Fruit of)-ले०।

अञ्जीरे आदम-फा० गुलर, गूलर-हिं०। किसी किसी ने अन्य फल का नाम लिखा है जिसको हिन्दी में "कलह" कहते हैं। यह काश्मीर के पर्वतों पर उत्पन्न होता है। हकीम अली गीलानी

के कथनानुसार एक भारतीय वृक्ष का फल है जो इन्द्रायन के समान गोल और रक्त वर्ण का होता है। लु० क०।

अञ्जीरे दश्ती–फा० काकोदुम्बरिका–सं०। कटूमर, कटूम्बरी, कठगूलर, जंगली अञ्जीर–हिं०। देखो–कटुम्बर। Ficus oppositifolia, *Roxb* (Fruitof)–ले०। लु० क०। स० फा० इ०।

अञ्जीरे नैपाल–यज्ञछाल–नैपा०।

अञ्जीरे बग़्दादी–फा० अञ्जीर वृक्ष के बराबर लम्बा एक वृक्ष है जिसके पत्ते चिनार पत्र सदृश और फल अंजीर के समान होते हैं। रुक़्अ यमानी (देखो) का फल। लु० क०।

अञ्जीरे यमन–फा० अंजीरे बग़्दादी। लु० क०।

अञ्जीलक–माज़न्दरानी ख़ुदबाज़ी का पौधा। लु० क०।

अञ्जीश–सिराजुल क़ुतरब। लु० क०।

अञ्जुकक–फा० Pyrus communis, *Linn* ले०। अंजकक, कुतुम हिंदी।

अञ्जुदान–काश० हींग, हिंगु–हिं०। Assafoetida फा० इं०।

अञ्जुबार–अ० मीरोमती–स०। देखो—अंजबार। Polygonum aviculare

अञ्जुबारे रूमी–अ० प्रसिद्ध। यह फ़ारस से भारत वर्ष में लाया जाता है। यह एक वृक्ष की जड़ की छाल है जो मोटी, संकोचक और जलाई लिए धूसर वर्ण की होती है। फा० इं०।

अञ्जुरक–मर्जंजोश। लु० क०।

अञ्जरतुस्सौदाअ–अ० स्याह (काली) उटङ्गन या एक घास है जो नाग शुद्धि तथा उसके हल करने में काम आता है।

अञ्जुरह–फा० क़रीज़, क़रीज़ुल् क़ल्ब, मुजर्बुल्कलाब अ०। कुर्नह–शीराज़। कजीत–तु०। उटंजन उटङ्गन–हिं०। फा० इं० ३ भा०। मु० अ०। म० अ०। अर्टिका पिल्युलिफरा (Urtica pliulifera, *Linn*) एक बूटी के बीज हैं जो अलसी या तालमखाने के सदृश होते हैं। किसी किसी के मत से अजुरह और उटङ्गन भिन्न भिन्न बीजे हैं।

अञ्जुली } –हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] अंजलि। देखो
अञ्जुरी }
अंजली, अँजली।

अञ्जूसा–बु० रतनजोत। Alkanet लु० क०। फा० इं०।

अञ्जूरक–फ़ा० (१) रुतीला–हिं०। मकड़ी का बड़ा भेद। लु० क०। (२) मर्ज़ंजोश।

अञ्जूरू–ते० अजीर (Ficus carica, *Linn*) स० फा० इं०।

अञ्जूसा–यु० रतनजोत। (Alkanet) लु० क०।

अञ्जेना–कना० सुर्मा, अजन। Antimonii Sulphuretum

अञ्जेलिका आर्चैञ्जेलिका–ले०। सुंबुल ख़ताई। बालछड़भेद। इं० हैं० गा०।

अञ्जेलिका गार्डेन–इं० सुंबुल् ख़ताई। बालछड़भेद इं० हैं० गा०।

अञ्जेलिका ग्लोका–ले०। चोरा या चूरा–पं०। मेमो०। यह औषध तथा भोजन के काम में आती है। प्रयोगांश—जड़ या पौधा।

अञ्जेलिका रूट–इं० वीज़ सुंबुल् ख़ताई। अंगली-नह्। बालछड़ मूल।

अञ्जेलिका सीड–इं० तुख़्म सुंबुल् ख़ताई। बाल-छड़ बीज।

अञ्जेलिम्–इं० जोकमारी। जैंगनी। फा० इं०।

अञ्जेलिम् अमरगोसो–इं० अरागोबा (Araroba) फा० इ० १ भा०।

अञ्जेलिम् आवेन्सिस–ले०। जोंकमारी। जैंगनी। फा० इं०।

अञ्जेली बुड–इं० यह एण्टिएरिस हिस्युटा (Antiaris hirsuta) नामक वृक्ष से प्राप्त होता है इसको दक्षिण भारतवर्ष में अंजेली बुड और मालाबार में अय.नी कहते हैं, वहाँ यह अधिकता के साथ होता है। फा० इं० ३ भा०।

अञ्जोह–अ० ऊद, अगर। (Aloe wood) लु० क०।

अञ्जनक कल्ल–मल० सुर्मा । अंजनम् (Antimonii Sulphuretum)–ले० । स० फा० इं० ।

अज्म-जबीब–अ० मुनक्का ।

अज्मोर–वरव० । मकोय Solanum nigrum

अटकुडा–सन्ताल० तिक्त इन्द्रजौ । देखो—इन्द्रजौ-तिक्त । (Wrightia Tomentosa, *Roem & sehult*)–ले० । इं० मे० प्लां० ।

अटक्क–मल० सुपारी-हिं० । Areca Catechu' *Linn.* (Nut of--Betcl nut.)-ले० स० फा० इं० ।

अटक्का-मणि–मल० मुण्डा । (Sphæranthus, airtus *Willd*) स० फा० इं० ।

अटदी–ते० पीतल, पित्तल (Brass) इं मे० मे०

अटभूषण–सं० क्ली० हड़ताल Orpiment(Trisulpauretof Arsenic) लु० क० ।

अटरू–स० अड्सा (Justicia adhatoda)

अटरूष- } स० पु० अड्सा' वासक वृक्ष (Adh-
अटरूषः }
atoda vesica, *Nees*) र० सा० सं० सूतिकारि रस ओर कन्दर्पसार तैल । वा० चि० २ अ० । देखो—वासकः ।

अटरूष- } सं० पु० (१) वासक वृक्ष,
अटरूषकः } अड्सा । र० मा० । च० द०, रक्तपित्त, चि० । (२) आडू । (३) अरलू । (४) महानिम्ब । शा० श० । इं० मे० मे० ।

अटविः– } सं० स्त्री० (A forest, *Wood*)
अटवी– } आरण्य, वन ।

अट(द) वी अत्ति–कना० जंगली गूलर हिं० । Ficus oppositifolia'*Roxb.* (Fruit of.)

अटवीजम्बि (म्बी, म्भी) रः –सं० पु० जंगली निम्बू हि० द० । ऐट्रलेण्टिया मॉनोफायला(Atlantia Monophylla*Corr*), ऐ० फ्लोरिवण्डा (A. floribunda, *Rheede.*)लाइमानियां मानोफरयला (Limonia monophylla, *Linn*) ले० । वाइल्ड लाइम (wild lime)-इं० । मलङ्गनार (इं० मे० मे०)-द० । मतङ्गनार, मखुर, माकड़ [illegible] मह० । अडवी-निम-ते० कटई लुमिच्चई, कठे [illegible] मिच्चम-परम, कट् इलिमिचम् कठ्यालु ता० । [illegible] निम्बे, गिडा कनिम्बे, अडवी निम्ब कना० । [illegible] गुनी उ० ड० । मलनारङ्गा, मले नारकम मल० । मातङ्गनर-द० कों० । चोर निम्बु, ईद-निम्बु [illegible] ओदी निम्बु-गु० ।

नागरङ्ग वर्ग

(*N. O Aurantiaceae*)

उत्पत्ति स्थान—पूर्वीय बङ्गदेश दक्षिण [illegible] लङ्का, सिलहट'खसिया,पर्वतमूल सम्पूर्ण पश्चि[illegible] प्रायद्वीप, कारोमण्डल तथा कोंकनसे दक्षिणा[illegible]

वानस्पतिक वर्णन—अटवी जम्बीर [illegible] विशाल, कण्टकमय, आरोही झाड़ीहै जो पश्चि[illegible] प्रायद्वीप तथा सिलहट की पहाड़ियों पर साम[illegible] रूप से पाई जाती है । इसके पत्र नारङ्गी पत्र[illegible] सुगन्धित होते हैं फल गोलाकार, पीले [illegible] १ इञ्च मोटे (व्यास में) और झिल्लीदार [illegible] द्वारा चार कोषों में विभाजित होते हैं । एक [illegible] साधारणतः पतनशील होता है । मज्जा (गूदा [illegible] नीबूवत्, परन्तु अति न्यून होता है । प्रत्येक [illegible] में $\frac{3}{4}$ इञ्च लम्बा और $\frac{1}{2}$ इञ्च चौड़ा एक [illegible] होता है उसके एक उन्नतोदर (उभरा हुआ [illegible] और दो चिपटे पृष्ठ नारगी के फांक की [illegible] होते हैं । फलत्वक में नागरङ्ग त्वक्वत [illegible] (निर्बल गध एवं असंख्य तैल की ग्रन्थियां [illegible] देहाती लोग इसके बीज को जो ताजा होने [illegible] अत्यन्त सुगन्धियुक्त होता है चूर्णकर इसे [illegible] तेल (तिल तेल) में छोड़कर निचोड़ लेते [illegible] फलतः इससे एक गम्भीर हरितवर्ण का प्रिय [illegible] युक्त तैल प्रस्तुत होता है । इसका त्वचापर [illegible] करने से यह उसे आवश्यक उष्णता प्रदान [illegible] है । बीजों को दबाने से इसमें से किसी प्रकार [illegible] वसामय तैल नहीं प्राप्त होता प्रत्युत वह [illegible] जिसमें बीज दबाये जाते हैं स्थिर तेल द्वारा [illegible] हो जाता है नीलिगिरि पर्वत पर पाये जाने [illegible] कुरुन्थु (ता०) नामक (Limonia al[illegible]

W. and A.) नं.बू से भी इसी प्रकार की एक औषध निर्मित होती है तथा इसके पत्र का क्वाथ कण्डूघ्न है एवं अन्य त्वग्दोषोंका हितप्रद है प्रयोगांश—तैल' मूल, फल, (Berries) और पत्र।

औषध निर्माण—क्वाथ, तेल, व प्रलेप।

प्रभाव तथा प्रयोग-रहीडो (Rheede) का वर्णन है कि पत्र द्वारा निर्मित तैल शिर के लिये हितकर जड़ आक्षेपशामक और फलस्वरस पित्तघ्न हैं। लोरीरो (Loureiro) के मतानुसार इसकी जड़ उष्णताजनक, लयकर्ता और उत्तेजक है।

एन्सली (Ainslie) कहते हैं कि इसके फल (Berries) से एक उत्तम' प्रिय गंधयुक्त तैल निर्मित किया जाता है जिसे दक्षिण भारत में पुरातन आमवात (गठिया) एवं पक्षाघात में एक मूल्यवान् बाह्य औषध स्वीकार किया जाता है कोंकण में इसके पत्ते का स्वरस अर्द्धांग रोग में प्रयुक्त एक मिश्रित प्रस्तर का एक अवयव है। वनौषधि प्रकाश, १, ४०४। डाहमाँक।

इसके फल का उत्तम अचार (Pickle) बनाया जाता है जो ज्वर एवं स्वाद व क्षुधा ह्रास युक्त अन्य रोगों में लाभदायक पथ्य है। इं० मे० मे०।

अटवी जीरकः-सं० पु० जङ्गलीजीरा हिं०।

अटवी मधुकम्-सं० क्ली० जङ्गली महुआ हिं०।

अटवीलता-सं० स्त्री० कुम्भाटवृक्ष, कुम्भाड़या। रत्ना० देखो—कुम्हाड़ा, कोंहड़ा।

अटलरिया-ता० लरबोरन, विहलांङ्गनी, पथरुआ आसा०। पॉलिगेनुम् ग्लैब्रम (Polyganum glabrum) ले०। इं० मे० मे०।

अटलरी-ता० बीख़ अल्लुवार (Polyganum barlatum इं०। मे० मे०।

अटलेण्टिया मॉनोफायला-ले०। माकर लम्बू म० अरची नीम ते०। माखुर ता०। मे० मा०। अटवोजम्बीर जङ्गली नीबू (Wild lime) इं० मे० मे०।

अटलोएटकम्-मल० अड़ूसा (Adhatoda vasika) इं० मे० मे०।

अटाइलोसिया बारबेटा-माँसपर्णी इं० डू० इं०।

अटापू-शोरा (Nitre) लु० क०।

अटिः-सं० पु० शरारिः शरालि शरारिपक्षि (Turdus ginginianus) हला०।

अटिक मामिडि-ते० ठीकरी बूटी ठिकरा का झाड़ द०। गदहपुर्ना पुनर्नवा हिं० बं०। Boerhaavia diffusa, *Linn* ले०। स० फा० इं०

अटि (ति) सीन-इं० अतीस सत्व। देखो अतीस फा० इं०।

अटी-हिं० संज्ञा स्त्री० (सं० अटी) एक चिड़िया जो पानी के किनारे रहती है चाहा।

अटुप्पकरा- मल०। लकड़ीका कोयला। Carbon ले०। Charcoal (wood) इं० स० फा०

अट्ट-सिं० बीज (Seed) स० फा० इं०। मल० जोंक Leech (Hirudo) स० फा० इं०।

अट्ट-हिं० सं० पु०
अट्टः-सं० पु० } (१) पट्टवस्त्र (२) दोतला कोठा घर द्विमंजला मकान, कोठा, हिं० (An apartment on the roof or upperstorey) देखो—चौमम्। वै० श० (३) मल० जोंक। (Leech) इं० मे० मे० हिं०। संज्ञा पु० [सं० हट्ट। बाजार] हाट बाजार हिं० डि०।

अट्टई-त० जोंक। (Hirudo) स० फा० इं०।

अट्टक-सं० पु० कोठा, अटारी। (An upperstorey)

अट्टनम्-स० क्ली० अन्न भेद। त्रिका०।

अट्टम्-सं० क्ली० (१) अन्न। (२) शुष्कान्न मे० कद्विकं। (Food, boiled Rice) आहार, भक्त।

अट्टल-दे० जोंक, अलायुका। Leech (Hirudo) स० फा० इ०। इं० मे० मे०।

अट्टहासम-सं० पु०
अट्टहासक-हिं० संज्ञा० पु० } (१) कुन्द पुष्प वृक्ष, कुन्द का फूल और पेड़

–हिं० । कुन्द फुलेरगाछ-बं० । (Jasminum multiflorum)–ले० । रा० नि० व० १० (२) Very loud laughter कहकहा मार कर हंसना । बहुत जोर से हँसना ।

अट्टालः– सं० पु० (Anapartment on
अट्टालकः– theroof, an upper storey) उपरितलगृह, दोतलाघर, अटारी । वै० श० ।

अट्टालिका–सं० स्त्री० (A palace,lofty mansion) राजोचित गृह, महल । च० श० ।

अट्रफि–इं० सुखंड़ी या कृशता, शोषरोग, कार्श्य ।

अट्रिप्लेक्समोनेटा–ले० सरमक, खुरफा; कोरके, पोई –प० । मे० मो० ।

अट्रिप्लेक्स लेसिनिएटा–ले० कतफ, भतुआ–पं० । मे० मो० ।

अट्रिप्लेक्स होर्टेन्सिस–ले० कतफ़ भतुआ–पं० । मे० ।

अट्रोपा-अक्युमिनेटा–ले० एक प्रकार का बेलाडोना है । इं० ड्रू० इं० ।

अट्रोपा बेल्लाडोना–ले० देखो–बेलाडोना ।

अठखटा–सं० अस्थिसंहार, हड्जोड़ । लु० क० ।

अठगठिया–हिं० संज्ञा स्त्री० एक बूटी है जिसका स्वाद क्षारीय होता है । यह कंकरीली भूमि में अधिक होती है । इसका पकाया हुआ शाक अत्यन्त सुस्वादु होता है । इसमें क्षार अंश की अधिकता के कारण लवण कम डालना चाहिये ।

अठपहला-हिं० वि० [सं० अष्ट पहल, पा० अट्ठ-पटल] आठ कोने वाला । जिसमें आठ पार्श्व हों ।

अठमासा–हिं० संज्ञा पु० [सं० अष्ट प्रा० अट्ठ+सं० मास] वह खेत जो आषाढ़ से माघ तक समय समय पर जोता जाता रहे और जिसमें ईख बोई जाय । अठमांसा ।

अठमासी–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अष्टमाश] आठ मासे का सोने का सिक्का । सावरिन । गिनी ।

अठवाँस–हिं० संज्ञा पु० [सं० अष्टपार्श्व] अठपहली वस्तु । अठ-पहले पत्थर का टुकड़ा । वि० अठ-पहला । अठकोना ।

अठवाँसा–हिं०वि० [सं० अष्टमास, पा० अट्ठमास यह गर्भ जो आठ ही महीने में उत्पन्न होवाय । –संज्ञा पु० (१) सीमन्त संस्कार । (२ वह खेत जो आषाढ़ से माघ तक समय समय जोता जाता रहे और जिसमें ईख बोई जाय ।

अठाना-हिं० क्रि० स० [सं० अट्ट=वध करना] (१) सताना । पीड़ित करना ।

अड–उड़ि० लिरूढ़ा,–हिं० । श्लेष्मांतक-सं० Sebesten plum (Cordia myx

अडकुमणियम–मल० गोरख मुण्डी-हिं० । मुण्डि –बं० । कमाजरिबूस–अ० । (Sphæran hus hirtus) इं० मे० मे० ।

अडण्ड–ते० क वोल–पं० ।

अडद–गु० उर्द, उडद–हिं० । माष-सं० । (Phaseolus roxburghii) इं मे० मे० ।

अडद-वेल–गु० माषपर्णी, मषवन । (Glysi debilis, *Roxb*)

अडद वेल्य–गु० वन उड़द, करियासेम । माषपर्ण

अडदवेल्य काडोगलिया–गु० वन उड़द, वन –हिं० ।

अडन्सोनिया–इं० गोरख इमली ।

अन्डसोनिया डिजिटेटा–ले० गोरख इमली-हिं० बोआबाब या मङ्की-ब्रेड ट्री ऑफ अफरीका B bab or monkeybread tree Africa इं० । मे० मे० । फा० इं० । मो० । स० फा० इं० ।

अन्डसोनीन–इं० गोरख-अम्लीन, गोरख इ सत्व-हिं० । इं० मे० मे० ।

अडपु-कोडी–ता० दोपातीलता-हिं० । चाङ्गे छागल खुरी-बं० । आइपोमिआ बाइ 1pomæa biloba, *Forsk*-ले गोट्स-फूट कोनवालव्युलस Goat's fo Convolvulus इं० । बृद्धदारक, विद सं० । फा० इं० २ भा० । इं० मे० मे० ।

अडबन बुपोरियो-कच्छू० पोरबन्दर० १-(Gram) चणक, चना । १-(Lady's finger) भिण्डी-हिं० ।

अडमरम्-मल० जंगली बादाम-हिं० । (Terminalia catappa, T. myrobalans) The Indian almond । इं० मे० मे० ।

अडमोरिनिका-ते० असल, सरह-अ० । Indica cadaba (Cadaba Indica) इं० मे० मे० ।

अडम्पाकु-ते० अरूष, अड्सा, अडसी, वासक-हिं० । Adhatoda Vasika Malabar nut इं० इं० । मे० मे० ।

अडम्वेदी-ता० बासुक-सं० । Indigofera Enneaphylla ले० । इं० मे० मे० ।

अडर्सा-हि०, द० अरूप, अरूपा, अड्सा, वासक हिं० Adhatoda Vasica, Nees ले० । स० फा० इं० ।

अडल्सा-हिं० द० अरूष, अरूपा, अड्सा वासक हिं० Adhatoda Vasica, Nees ले० । स० फा० इं० ।

अडवाऊ गाजर-गु० जङ्गली गाजर हिं० । (Wild carrot)

अडवाड़-गु० बन उर्दी' वन उड़द हिं० । मासपर्णी सं० । (Grangea Madras patana)

अडवाड़ मगवेल-गु० मुदगपर्णी । वन उर्दी, माष, पर्णी ।

अडवी-ते० कना० वन्य, जंगली हिं० Wild इं० । स० फा० इं० ।

अडवी अत्ति-कना० जङ्गली अञ्जीर हि० । Ficus opposi tifolia, *Roxb* (Fruit-of) ले० । स० फा० इ० ।

अडवी-अलवा-सं० चाकसू । S. M. (Cassia absus, *Linn*)

अडवी-आमूदमु-ते० जंगलीएरण्ड, जंगली रेंड हिं० । Jatropha Curcas ले० । Angular-leaved physic-nut इ० इं० मे० मे० (२) जङ्गली जमाल गोटा हिं०, । गु० । Croton Polyandrum, *Roxb* Syn C. Roxburghii, *Will* ले० स० फा० इं०

अडवी-इप्पे-चेटु-ते० जङ्गली महुआ हिं० द० । Bassia Latifolia *Roxb* ले० । स० फा० इ० ।

अडवी इरुल्ली-कना० जङ्गली प्याज काँदा हिं० बं० । Urginea Indica, kunth syn Scilla Indica, *Roxb* (Bulb of Indian Spuill) ले० । स० फा० इं० । फा० इं० ३ भा० ।

अडवी-ऐलकाय-ते० जंगली इलायची, बड़ी इलायची-हि० । Amomum subulatum, *Roxb*-ले० । स० फा० इं० । इं० मे० मे० ।

अडवी-कछोला-मल० कचूर-हि० । Curcuma Zedoaria, *Rosc*-ले० । Round Zedoary-इं० । इं० मे० मे० ।

अडवी-कन्द-सं० जंगली सूरन, जिमीकन्द-हिं० । S. M.

अडवी-कन्द-गड्डु-ते० सेवाला-बं० । जंगली सूरन -हिं० । Amorphophallus Paniculatus, *Blume*

अडवी-गन्नेरु-ते० गुलचीन-हिं० । Plumeria Acuminata-ले० । इं० मे० मे० ।

अडवी-गोरण्टा-ते० देवदारु-ता० । Erythroxylon monogynum, *Roxb*-ले० । इं० मे० प्रां० ।

अडवी-गोरण्टी-कना० । Errthroxylon monogynum, or E. Indicum; *Roxb*-ले० । नाट का देवदार-द० । अडवी गोरण्डा-ते० । देवदारु-ता० । इं० मे० प्रां० । फा० इं० ।

अडवी-गोरण्डा-ते० नाट का देवदार-द० । Erythroxylon monogynum, *Roxb* ले० । इं० मे० प्रां० ।

अडवी-जा-जी-काय-ते० जंगली जायफल-हिं० । Pyrrhosia, Horsfieldii, *Blume* (Nut of-wildnutmeg)-ले० । स० फा० इं० ।

अडवी-जिलकर-ते० सोमराज-सं०, बं० । बकुची -हिं० । अटवी-जीरक-सं० । Vernonia anthelmintica, *Willd* (Seeds of)-ले० । स० फा० इं० ।

अडवी तेल्ल गड्डु-ते० छोटा जंगली प्याज-हिं०, द० गु० । Scillaindica-ले० । इं० मे० मे० ।

अडवी-नाभी-ते० नाट का वच्छनाग-द० । अग्नि-शिखा-ते० । Aconitum ferox, *Wall* (Root of)-ले० स० फा० इं० ।

अडवीनिस्म-ते० जंगली नीबू-हिं० । अटवी जम्बीरी-सं० । Atalantia monophylla, *Corr*-ले० । Wildlime-इं० । इं० मे० मे० ।

अडवी-नीम-ते० जंगली नीबू-हिं० । Atalantia monophylla, *Wilb Lime*-इं०, फा० इं० ।

अडवी-पसुपु-ते० जंगली हल्दी, बनहरिद्रा-हिं० । Curcuma aromatica, *Salisb*-ले० Wildturmuric-इं० । इ० मे० मे० ।

अडवी-पुच्च-ते० जंगली इन्द्रायन-हिं० । Cucumis trigonus, *Roxb* Syr. Cucuis Pseudocolocynthis; *Royc* (Fruit of-)-ले० । Bitter gourd-इं० । इं० मे० मे० । मो० श० ।

अडवी-पोगाकु-ते० धवल-म० । जंगली तम्बाकू हिं० । Lobelianicotianæfolia, *Heyne*-ले० । Wild tobacco-इं० । फा० इं० २ भा० ।

अडवी-पोटगल-
अडवी-पोटला- } ते० जंगली चिचिण्डा, ज़० चिचोण्डा-हिं०, द० । Trichosanthes cucumerina, *Linn*-ले० । स० फा० इं० ।

अडवी प्रत्ती-ते० वन कपास-आशा०, बं० । रान-भिण्डी-मह० । Hibiscus lampas-ले० इं० मे० मे० ।

अडवी मन्दारमु-ते० कचनार-हिं० । (Bauhi variegata *Linn*)

अडवी मल्ली-ते० मधुमाधवी-सं० । चमेली, क -हिं० । नवमल्लिका-बं० । (Jasmin arborescens *Roxb*)-ले० । इं० मे० ।

अडवी मल्ले-ते० मालती-सं०, हिं० । (Jas num angustifolinm, *Vahl*) इं० मे० मे० ।

अडवी मामडी-ते० आम्रातक-सं० । अम्बाड़ा-हिं० । Hogplum-इं० । (S ndias elliptica)-ले० । इं० मे० मे०

अडवी मुनगा-
अडवी मूनग- } -ते० जङ्गली कासनी-हिं०

ऑर्मोकार्पम् सेन्नॉइडीस (Ormocarpu sennoides, *D. C.*)-ले० । कार ता० । कुडुनुग्गे-कना० ।

शिम्बी या बबूर वर्ग
(*N. O. Leyuminosoe*)

उत्पत्ति स्थान—पश्चिम प्रायद्वीप और ब

वानस्पतिक वर्णन—एक छोटी झा जिसकी शाखाएँ पतली होती हैं। नूतन तथा पुष्पवान भाग एक प्रकार के चिपचिपे से आच्छादित होते हैं। चिपचिपा श्राव पीत वर्ण का होता है। पत्र—पक्षाकार, (या पत्रक) ३ से १७, एकान्तरीय, आयता कोणीय और झिल्लीदार। पुष्प—कक्षीय, डंठल में ३ से ६ और पीत वर्ण के होते फली (छीमी) २ से ५ जुड़ी हुई, पेण्डुलस सन्धि स्थल पर अधिक सिकुड़ी हुई और ने होती है।

उपयोग—इसकी जड़ का क्वाथ ज्वरावस्था बल्य एवं उत्तेजक रूप से व्यवहृत है। इ प्रस्तर (या तैल) पक्षाघात और कटिशूल वरता जाता है। (डाइमाक) फा० इं० १

अडवी मुल्लङ्गी-ते० कुकरौंदा-हिं० । जंगली दोबारी मूली, जङ्गली कासनी-द० । कमा

यु० । (Blumea eriantha, *D. C*) ले० । फा० इं० १ भा० । (Blumea aurita, *D. C.*)-ले० । स० फा० इं० ।

अडवी येलकाय-ते० बड़ी इलायची-हिं०, द० । Amomumsp of (Capsules of) स० फा० इं० ।

अडवी लवङ्ग-पट्टे-कना० जंगली दारचीनी पत्र. तेजपात-हिं० । Cinnamomum Iners, C. Tamala-ले० । इं० मे० मे० ।

अडवी लवङ्गमु-पट्ट-ते० तेजपात-हिं० । Cinnamomum Iners-ले० । मेमो० ।

अडवी वुद्दुलु-ते० मापपर्णी, जंगली उड़द, बनउड़द, हिं० । रान उड़िद-मह० । मापानि-बं० । Toramnus labialis, Spreng wight, Ic. T. 118-ले० । फा० इं० १ भा० ।

अडवी सुदाप-सं० सुदाब, जंगली तितली-हिं० । (Ruta graveolens, *Linn*)

अडसी-महानिम्ब ।

अडस्पुडूस-मल० सोवा; सोया-हिं० । Peucedanum Graveolens-ले० । इं० मे० मे० ।

अड्हुल-हिं० संज्ञा पु० [सं० ओणा+फुल्ल, हिं० ओणहुल] ओड़ (क), देवीफूल, जपा या जवापुष्प, इसका पेड़ ६-७ फुट ऊँचा होताहै और पत्तियाँ हरसिंगार से मिलती जुलती होती हैं । फूल इसका बहुत बड़ा और खूब लाल होता है । इसके फूल में मँहक (गन्ध) नहीं होती । (Hibiscus Rosa=sinensis, *Linn*)

अडासरा-ते० अड़ूसा, बासक, अरूष-हिं० । Adhatoda Vasica Nees-ले० । मेमो० ।

अडिएण्टम् कॉडेटम्-ले० मोरपंखी, मयूरशिषा हिं० मेमो० । अधसारित की जड़ी पं० इ० ड्० इं० ।

अडिएण्टम् कैपिलस वेनेरिस-ले० बिस्फाइज अ० रू० देखो मुबारक कुमा०, हिं० । हंसराज हि० । मेमो० ।

अडिएण्टम् ट्रैपेजिफर्मी-ले० हंसराज । see-Hausaraja

अडिएण्टम् पेडेटम्-ले० हंसराज । see-Hansaraja

अडिएण्टम् फ्लेबेल्ल्युलेटम्-ले० मयूरशिषा हिं० । इसकी जड़ औषध कार्य्य में बरती जाती है । मेमो० ।

अडिएण्टम् ल्युन्युलेटम्-ले० हसराज या राजहंस हिं० काली झाँट (प) व० मुबारक कुमा० । मेमो० ।

अडिएण्टम् वेनस्टम्-ले० हंसराज हिं० । बाजार परसियांवशान फा० । काली झाँट हिं० । मुबारक बम्ब० म० अ० मेमो० ।

अड्डि के-कना० सुपारी हिं० Areca Catchu, *Linn* ले० स० फा० इं० ।

अडिन-ले० अज्ञात ।

अडिना कॉर्डिफोलिआ-ले० धारा कदम्ब सं० । हल्दु, हर्दु कद्मी, करम हिं० । बङ्गला' केलिकदम, पेट पुड़िया बं० । हर्दुआ हर्दु म० प्र० । करम नै० । कुरम्बा; कोम्बासंकु कोल० । कराम सन्ता० । बड़ा कुरम मल० तिक्का भड़ौं० व गों० हर्दु, पस्पु कुर्मी (गो०) होलोंदा उड़ि० । सङ्ग डोग गारो । रोध कलो, कदम आ० । मजाकदम्बे तां० । दाडुङ्ग, वेत्तगँणप, बनदारु, दुडागु, पुस्पुकन्दी पुष्पुकदिमो ते० । अर्सिन्तेग-मैस्० । हेड्डे, येत्तेन-पेत्तेग, अर्सन्तेग, येत्तद, अहुनकना० । हेड् मह० हलधवान गु० । Nauclea cordifolia, वैज्ञा० ना० । इं० मे० प्लां० । फा० इं० २ भा० । थरली, वला, गुआ बम्ब० ।

अडिनेन्थेरा पेवोनीना-इं० रङ्ग कम्बाल बं० इं० ड्रा० इं० ।

अडुई-पं० आड़ू । See-adu

अडुप्पुकरी-ता० लकड़ी का कोयला हिं० । Wood charcoal इं० । इं० मे० मे० । स० फा० इं० ।

अडुरास्पी, अडुल्सा, अडुल्सो } गु० अड्सा, अरुस हि० । Adhatoda vasica' *Linn* ले० इं० मे० मे० ।

अडू-पु० अरु म० । शफतालु फ० ।

अडुसोगए-कों० अडूसा, अरुष हि० । (Adhatoda vasica' *Nees*) ले० । इं० मे० मे०

अडूनाइडीन-इं० अडूनी सत्व । देखो अडूनिस । म० अ० डा० १ भा० ।

अडूनिस-इं० अडूनी, अडूनी बूटी हि० । अडूनिसवर्नेलिस (Adonis vernalis,) ले० ।

वत्सनाभ वा रैनन्क्युलेसीई वर्ग
(*N.O Ranunculaceae*)

नोट—यह बूटी तीन प्रकार की होती है और यूरोप व एशिया के भिन्न २ प्रदेशों में उत्पन्न होती है पर कदाचित यह भारतवर्षमें नहीं होती क्योंकि डाक्टर वाट महाशय और डाक्टर डोमांक महाशय के भारतवर्षीय ओषधि सम्बन्धी विस्तृत ग्रन्थों में इसका कहीं भी उल्लेख नहीं पाया जाता है ।

वानस्पतिक विवरण—यह झाड़ी १० इंच के लगभग ऊंची होती है इसकी पत्तियां चमकीली हरितवर्ण की और बारीक बारीक सूत्रों में विभाजित होती हैं इसके पुष्प सुवर्णमय रक्त वर्ण के होते हैं ।

रासायनिक संगठन—इसमें ग्ल्युकोसाइड की तरह का एक सत्व "अडूनाइडीन,, और एक अन्य सत्व "अडूनैट नाम का होता है । अडूनाइडीन जल और मद्यसार (अल्कुहॉल) में विलेय होता है ।

मात्रा—इसका चूर्ण १-३ रत्ती तक और इसी अनुपात से इसके हिम अथवा टिन्चर या स्वरस को भी प्रयोगमें ला सकते हैं । इसके सत्व अडूनाइडीन की मात्रा $\frac{1}{6}$ से आधा ग्रेन तक है । और इसको वटिका रूप में वर्तते हैं ।

नोट—यूरोप के इटली, रूस व स्पेन प्रभृति देशों में यह औषध आफिशल है ।

प्रभाव—हृदय बलकारक (हृद्य) हृदय रोग के लिये लाभदायक है म० अ० डॉ० १ भा० ।

अडूनिस ईस्टीबैलिस-ले० वत्सनाभ वर्ग की एक ओषधि है । इं० डू० इं० ।

अडूनिस वर्नैलिस-ले० । अडूनिस का वानस्पतिक नाम । देखो—अडूनिस । म० अ० डा० १ भा०

अडूनी-हिं०, उड़ि० अडूनिस इं० । See Adonis

अडूलसा-म० }
अडूसक -हिं० } देखो—अडूसा । Addatoda Vas iCa *Nees* ले० अ० नि० १ भा०

अडूसा-हिं० संज्ञा पु० [सं० अटरूष प्रा० अडरूस] अडलसा (सो) अरूसा (सा) बांसा रूसा, वसोंटा वासा, विसोंटा । हिं० वम्ब० । अदलसा, अडर्सा, अरूसा- बसौंटा अडूसा-द० हिं० ।

संस्कृत पर्याय—

वासको वासिका वासा भिषङ्माता च सिंहिका ।
सिंहहास्यो वाजिदन्ता स्यादाटरूषोऽटरूषकः ॥
आटरूषो वृषस्ताम्र सिंहपर्णश्च सः स्मृतः ॥

भाषा—वासक, वासिका, वासा भिषङ्माता सिंहका, सिंहास्यः, वाजिदन्ता, आटरूषः अटरूषक वृष, ताम्र, सिंहपर्ण ये अडूसे के संस्कृत नाम हैं (रामरूपक मातृसिंही, वैद्यमाता, वृष, कसनोत्पाटन कमलोत्पाटल, सिंही वाजि दन्तकः, आमलकं वाशा अटरूष वास, वाजीबेंद्यसिंही सिंहपर्णी, रसादनीसिंह मुखी, कठोरवी, सितकर्णी, वाजिदन्तीनासा, पंचमुखी सिंहपत्री, मृगेन्द्राणी और सिंहानन ये अडूसे के संस्कृत नाम अन्य ग्रन्थों में पाए जाते हैं)

वाकस, आरूसा, वासक; छोटा वासक, वासन्तीफुलेर गाछ-ब० । हशींशतुश्शुअ लू-अ० । वाँसह, बांस, खाजह्-फा० । ऐडाटोडा वैसिका (Adhatoda vasica Nees), अडेनेथेरा वैसिका (Adenanthera vasica) जस्टीशिया ऐडाटोडा (Justicia adhatoda, *Roxb, Linn*); ओरोकीलम इण्डिकम् (Orocylum Indicum). —ले० । ऐडाटोडा (Adhatoda) मलाबार नट ट्री (Malabar nut tree) -इं० । अडाटोडइं० । अडडडे-ता० । अडुसरम्, अडनूपाकु, पेद्दमानु, अडसरा, अडसर,-ते०, तै० । आडलोटकम्-मल० । आडसोंगे-सं०, आडूसाल, आडूसोंगे-कना० । शोणा, शोडीलमा

-करना० । आड'टोड, पावट्टसिं० । मेसन-विप् वर्मी । बसूटी, तोरवंजा, वाशङ्ग-अरूष, भिक्कार-हिं० । अडूलसा-मह० । अडूलसो, बांस. अडूरसा (-सा), अरडूसी (शी)-गु० । वाइकण्टर-अफ्गा- । आडसोगे-का० । भीकड़-पं० ।

अकेन्थेसीई (आटरूष) वर्ग
(NO. Acanthaceae)

उत्पत्ति स्थान—भारतवर्ष के अधिकतर भाग, पंजाब और आसाम से लेकर लङ्का एवं सिङ्गापुर पर्य्यन्त । राजपूताना, शाहजहांपूर, रनबीरसिंह (जमूँ, कश्मीर) प्रभृति स्थान ।

वानस्पतिक विवरण—यह क्षुप जाति की वनस्पति है, परन्तु किसी किसी स्थान में इसके बहुत बड़े बड़े वृक्ष पाए जाते है । शरद ऋतु में इसमें पुष्प आते हैं । प्रकाण्ड सीधा, त्वचा सम, धूसर वर्णीय, शाखाएं अर्द्ध सरल, त्वचा प्रकांड के सदृश किन्तु समतर: पत्र सम्मुखवर्त्ती, ५ से ६ इंच लम्बे और १॥ इंच चौड़े, नुकीले, जिनके दोनों पृष्ठ चिकनेहोते हैं, पीटिओल (Petiole) अर्थात् पत्रवृन्त सूक्ष्म, पुष्प प्रधानाक्ष लम्ब, शाखा रहित. वलियाँ बाह्य कक्षीय और अकेली, पुष्पदंठन (पुष्पवृन्त) छोटा और बड़े बड़े बन्धनियों (Brackts) से ढका होता है । पुष्प सम्मुखवर्त्ती, बड़े, श्वेत रंग के होते है जिनके भीतरी भाग पर रक्ताभायुक्त लोहित वर्ण के धब्बे होते हैं, पुष्प के दो ओर सिंह-मुखाकृति के होते है जिनकी भीतरी पृष्ठो पर बैंगनी रंगकी धारियाँ पड़ी होती है, बन्धनियाँ तीन, सम्मुखवर्त्ती और एक पुष्पीय, तीनों में से वाह्य बन्धनी (Braekts) बड़ी, अण्डाकार, अस्पष्टतया पञ्चशिरायुक्त और भीतरी दो अत्यन्त छोटी होती हैं । ये सब स्थायी होती है । पुष्प-बाह्य-कोष (Calyx) पाँच समान भागों में विभाजित होता है, पुष्प आभ्यन्तर-कोष (Corolla) विस्तीर्ण ओष्ठीय, लघुनालिकेय, विशाल ग्रैव, ऊर्ध्व, ओष्ठ नौकाकार, जिसका मध्य भाग परिखा युक्त होता है जिसमें रति केशर स्थान पाता है, निम्न ओष्ठ चौड़ा, जिसमें तीन भाग होते हैं, पुरुष केशर तन्तु लम्बा और ऊर्ध्व ओष्ठीय खात के सहारे रहता है और ये संख्या में दो होते हैं ।

प्रयोगांश—पञ्चांग, क्षार । प्रयोगाभिप्राय-औषध रङ्ग, खाद्य ।

रासायनिक-सङ्गठन—एक सुगन्धित उड़नशील सत्व, वसा, राल (Resin) एक तिक्तक्षारीय सत्व जिसे वासीसीन (Vasicine) जिसे संस्कृत में वासीन या वासकीन कह सकते हैं, एक सेन्द्रियक अम्ल (वासाम्ल) ऐडाटोडिक एसिड (Adhatodic Acid), शर्करा, निर्यास, रंजक पदार्थ, और लवण । वासीन का अधिक परिमाण अड़ूसे की मूल त्वचा और पत्र से प्राप्त होता है । वासीन के स्वच्छ श्वेत रवे होते हैं जो अलकुहाल (मद्यसार) में सरलता पूर्वक घुल जाते हैं । ये जल में भी विलेय होते हैं । इनकी प्रतिक्रिया क्षारीय होती है । खनिजाम्लों के साथ यह स्फाटिकवत् लवण बनाताहै ।

अमोनिया भी किसी अंश में विद्यमानहोती है ।

औषधि-निर्माण—शीत कषाय (१० भाग जल में १ भाग), मात्रा—१। तो० से ५ तो०, तरल सत्व, मात्रा २ से ५ रत्ती । पत्र स्वरस, ७॥ मां० से १ तो० ३ मा० । टिङ्कचर (१० में १), मात्रा-२ मा० से ४ मा० । संयुक्त क्वाथ घृत, अवलेह, चूर्ण और वटिका (साधारणमात्रा ३ मा०) । डॉक्टर लोग अड़ूसे को द्रवसत्व, स्वरस और टिङ्कचर रूप से उपयोग में लाते हैं ।

प्रतिनिधि—इसके समान गुणधर्म की यूरोपीय ओषधि सिनेगा (Senega) है ।

स्वाद—फीका और कुछ मीठा । प्रकृति—गरम और रूक्ष तथा फूल १ कक्षा में ठन्डा है ।

हानिकर्त्ता—मैथुन शक्ति को । दर्पघ्न—शहद शुद्ध और काली मिर्च ।

गुणधर्म व प्रयोग—

आयुर्वेदीय मत के अनुसार—

वासा तिक्ता कटु, शीता कासघ्नी रक्तपित्त जित् ।
कामला कफ वैकल्य ज्वर श्वास क्षयापहा ॥
(रा० नि० व० ४)

भाषा—अडूसा तिक्त, कटु, शीतल है, तथा खांसी, रक्तपित्त, कामला, कफ, बिकलता, ज्वर, श्वास और क्षय रोग को नष्ट करता है।

आटरूषः शीतवीर्यो लघुर्हृद्यः कटू स्मृतः।
तिक्तः स्वर्य्यः कासहन्ता कामला रक्तपित्त हा॥
विवर्णता-ज्वर-श्वास-कफ-मेह-क्षयापहः।
कुष्ठारुचि तृषा वान्तिनाशकः परिकीर्त्तितः॥
(वैद्यक)

वासकस्य च पुष्पाणि बङ्गसेनस्य चैवहि।
कटुकानि तिक्तानि कास क्षय हराणिच॥
राज० ३ चिकित्सासार सग्रहकार।

वृषं तु वमि कासघ्नं रक्तपित्त हरं परम्।
(वा० सू० अ० ६)

वासको वात कृत्स्वर्यः कफ पित्तास्र नाशनः
तिक्तस्तुवरको हृद्यो लघुशीतस्तृक्तिहृत्॥
कास श्वास ज्वर छर्दि मेह कुष्ठ क्षयापहः।
(वृ० नि० र०)

भाषा—अडू। शीत वीर्य, लघु, हृदय को हितकारी, तिक्त स्वर के लिये उत्तम, कासघ्न, कामला तथा रक्तपित्त नाशक हैं। विवर्णता, ज्वर, श्वास, कफ, प्रमेह, तथा क्षय, कोढ़, अरुचि प्यास और वमन को नष्ट करता है। वैद्यक। अडूसा और अगस्तिया के फूल तिक्त, पाक में कटु एवं खांसी और क्षय को हरण करने वाले हैं। राज० ३ ब०। अडूसा, वमन, खांसी और रक्तपित्त को दूर करता है। वा० सू० अ० ६। अडूसा वातकारक स्वर के लिये उत्तम, तिक्त, कषैला, हृदय को हितकारी, लघु, शीतल, कफपित्त, रक्तविकार तृषा की पीड़ा को हरण करने वाला तथा श्वास कास, ज्वर, वमन, प्रमेह, और क्षय को नाश करता है। वृ० नि० र०।

युनानी मत के अनुसार अडूसे के गुणधर्म व प्रयोग

भारतीय द्रव्यगुणशास्त्र के फारसी लेखक हिन्दुस्तानी नाम अडूसा वे नाम से उक्त ओषधि का वर्णन करते है। अतः मीरमुहम्मदहुसेन महोदय ने स्वरचित "मखजनुल् अद्वियह्" नामक वृहद् ग्रन्थ में इस पौधे का वर्णन किया है। उनके कथनानुसार अडूसे का फूल यक्ष्मा, रक्तपित्त अर्थात् रक्तोष्मा और प्रमेह मे लाभदायी और पित्तनाशक है। अडूसे की जड़ खांसी, श्वास, ज्वर और प्रमेह, बलगमी और सफरावी (पित्त को) मतली, वमन, पाण्डु, मूत्रदाह, सूजाक और राजयक्ष्मा को नाश करती है। बच्चो को शीत लगने या खांसी से बचने के लिये कभी २ अडूसे के बीज को उनके गले में लटकाते हैं।

अडूसे के विभिन्न अवयवों के परीक्षित प्रयोग-

मूल—अडूसा पत्र और मूल दोनों सोत्तेज्य श्लेष्मानिस्सारक Stimulant expecorant) और आक्षेप शामक (artispasmodec) हैं। इसी लिये अधिकतर इसकी जड़ का सीनीगा (Seoega) के स्थान में पुरातन कास, श्वास में उपयोग करते हैं।

अडूसा की जड़ का क्वाथ बच्चों की कुकर खांसी तथा साधारण ज्वर में लाभ करता है।

अडूसा की जड़ पुरातन खांसी, सफेद दाग, कोढ और सूजाक के लिये लाभदायी है। यदि अडूसा मूल त्वचा को चोबचीनी के क्वाथ में एक सप्ताह तक भिगो, रक्खें. पुनः निकाल शुष्क कर चूर्ण करलें। इसमें से १ माशा प्रति दिवस खाएँ तो पुरातन उपदंश से मुक्ति प्राप्त हो।

इसकी जड़ और मुण्डी बूटी दोनों को पीस छानकर शहद मिलाकर नित्य पीने से कोढ़ से छुटकारा मिलता है।

इसकी मूल—त्वचा को जौकुट कर तथा जल में भिगोकर और उस जल को घूँट घूँट पिलाने से वमन तथा मतली को अवश्य लाभ होता है।

यदि पावभर जड़ का नियमपूर्वक एक बोतल शर्बत बनाकर उचित मात्रा में प्रति दिवस उपयोग किया जाय तो श्वास और पुरातन कास जड़ से उखड़ जाता है।

जड़ द्वारा धातु मारना

इसकी जड़ के छिलके के पानी में एक तोला सुवर्ण को लाल करके सौ बार बुझाएँ। पुनः सत्यानासी के कल्क (लुगदी) में रखकर अग्नि द्वारा भस्म करें।

गुण—इस भस्म को उचित मात्रा में उपयुक्त अनुपान द्वारा सेवन करने से सुद्दत की गर्मी और पुरातन शुक्र प्रमेह नष्ट होता है।

अड़से के पत्र

अड़ूसे के समान रक्तपित्तनाशक कोई अन्य औषधि नहीं है। कहा है—

वृषपत्राणि संपीड्य रसः समधु शर्करः।
अनेनैवशमं याति रक्तपित्तं सुदारुणम्॥

अर्थात् अड़ूसा-पत्र-स्वरस (अथवा क्वाथ) में शर्करा तथा मधु मिलाकर सेवन करने से दारुण रक्तपित्त शान्त होता है।

अड़ूसे के स्वरस का नस्य देने से नाक, कान, नेत्र से रुधिर का बहना बन्द होता है।

अड़ूसे के पत्तों में कीटाणुनाशक (Insecticide) गुण विद्यमान है और इस कारण जब धान या अन्य फसलों पर कीड़े लग जाते हैं तो उनको मारने के लिए इसके पत्तों का उपयोग अत्यन्त लाभदायी खयाल किया जाता है।

(डा० वैट०)

चूंकि इसके पत्तों में किसी कदर अमोनिया भी होती है इस लिए इसके चुरट बनाकर पिलाने से दमा के दौरा में कमी हो जाती है। डा० वैट० महोदय अपने अनुभव के आधार पर इसकी बड़ी प्रशंसा करते हैं। देखो—"डिक्शनरी ऑफ दी एकॉनॉमिक प्रॉडक्ट ऑफ इण्डिया।"

यदि इस वृक्ष के ताजे पत्ते अथवा पुष्प को कूटकर टिकिया बनालें और इसे लाल तथा दुःखती हुई आँखों पर बाँध दें तो तीन चार रात ऐसा करने से बिलकुल आराम हो जाता है। इसके पत्तों के चूर्ण को दाँतों पर मलने से दाँत मजबूत होते हैं और दर्द दूर होता है एवं दाँत के समस्त बिकार नष्ट हो जाते हैं। इसके पत्ते को कूटकर रस निचोड़ लें और उसमें शहद मिला कर चाटें तो खाँसी दूर हो और कण्ठ साफ होकर वाणी की शुद्धी हो।

१ तो० अड़ूसे के पत्ते, ६ मा० मूली के बीज और ६ मा० गाजर के बीज इनका क्वाथ कर कुछ दिन पिलाने से रजःरोध दूर होता है।

अड़ूसे के पत्ते और सफेद चन्दन इनके सम भाग बारीक चूर्ण में से ४ मा० प्रति दिवस खाने से खूनी बवासीर को बहुत लाभ होता है और खून का दौरा बन्द हो जाता है।

यदि किसी अवयव में शोथ हो तो इसके पत्ते के क्वाथ का वाष्प देने से लाभ होता है।

इसके पत्तों को रोगन बाबूना में घोट कर लेप करें तो फुफ्फुस प्रदाह दूर हो। अड़ूसा-पत्र-स्वरस को तिल तैल में मिलाकर पकाएँ जब केवल तैल मात्र रह जाय तब उतार कर ठण्डा होने पर शीशी में रखलें। इस तैल से आक्षेप, वातव्यथा उदरस्थ वायु वेदना और हाथ पाँव की ऐंठन दूर होती है।

इसके पत्ते समभाग खर्बूजा बीज के साथ घोट छान कर पीने से पेशाब खूब खुलकर आने लगता है और मूत्र सम्बन्धी बीमारियों में बहुत कुछ न्यूनता आ जाती है। यदि अड़ूसा पत्र १ तो०, शोरा कलमी ६ मा० और कासनी ६ मा० इनको घोट छान कर पिलाएँ तो मूत्र अधिकता के साथ आता है जिससे कामला रोग दूर हो जाता है। इसके पत्तों के जुलाब को पीने से ज्वर, तृषा और घबराहट प्रभृति दूर होते हैं।

अड़ूसा के पत्तों को पानी से पीसकर आरम्भ ही में यदि इसे फोड़े पर लेप करें तो उसे बिठा देता है और कोई कष्ट भी नहीं होत।

अड़ूसे के पत्ते को कूटकर गोला सा बनालें और उस गोले पर एरण्ड के हरे पत्ते लपेट कर ऊपर से माष (उड़द) के आटे का लेपन कर भूबल में दबादें। जब आटा पक जाय तब उसे हटाकर एरण्ड पत्र को पृथक करके अड़ूसा का रस निकाल कर रखलें। अब उस निकाले हुये रस में से आधसेर वह रस, १ पाव खाँड़ देशी, ४ तो० पीपल का चूर्ण और चार तो० गोघृत मिलाकर पकाएँ। जब चाशनी गाढ़ी हो जाय तब उतार कर उसमें १ पाव शुद्ध शहद मिला कर माजून बनाकर रखलें।

मात्रा—४-४ मा० शाम व सुबह। इसे क्रमशः बढ़ाते जाएँ।

गुण—राजयक्ष्मा, खाँसी, दमा, प्रतिश्याय, अजीर्ण और वक्षस्थलस्थ वेदना को अत्यन्त लाभ प्रद है।

भस्मीकरण

यदि शुद्ध ताम्रपत्र को अडूसे के पत्ते के रस में सौ बार बुझाएँ। पश्चात् राई की गन्दलों को लुगदी में एक मन उपलों की अग्नि दें। इसी प्रकार तीन बार करें, भस्म तैयार होगी।

गुण—इसमें से १ रत्ती उचित रूप में उपयोग करने से सम्पूर्ण वातव्याधि, कफ, खाँसी, दमा, निर्बलता एवम् बुढ़ापा प्रभृति दूर होता है।

अडूसे के पुष्प

अडूसे के पत्र, पुष्प और मूल परन्तु विशेष कर पुष्प में आक्षेप शामक गुण होने का निश्चय किया जाता है और दमा की कई अवस्थाओं तथा विषमज्वरों की तीव्रता के पुनरावर्तन में योजित किए जाते हैं। ये किञ्चित् तिक्त एवं अर्ध सुगन्धियुक्त होते तथा शीत कषाय एवम् अवलेह रूप से उपयोग में आते हैं; अवलेह की मात्रा लगभग चाय के चम्मच भर दिन में दो बार प्रयोग में आत है। (डा० ऐन्सली)

"हिन्दू मेटीरिया मेडिका" के लेखक यू० सी दत्त महोदय के कथनानुसार यह कहावत प्रसिद्ध है कि वह व्यक्ति जो राजयक्ष्मा से पीडित हो उसे उस समय तक उदास न होना चाहिए जब तक वासक वृक्ष यहाँ स्थित है।

यह पुरातन कास, दमा और अन्य फुफ्फुसीय एवं कफ सम्बन्धी रोगों में अत्यन्त लाभदायक है (डा० जेक्सन और दत्त)

इसका पुष्प राजयक्ष्मा नाश करने वाला, पित्तघ्न और रुधिर की उष्णता का शामक है। यदि पुष्प को रात्रि में जल में भिगोदें और सवेरे मल छान कर पान करे तो मूत्र की जलन एव अरुणता दूर हो।

इसके शुष्क किए हुए पुष्पों को कूट छान उससे द्विगुण बङ्गभस्म मिलाकर शीरा खुर्फा और खीरा के साथ व्यवहार में लाने शुक्रप्रमेह नष्ट होता है।

शुष्क पुष्प चूर्ण के साथ इससे चौथाई भाग नौसादर योजित करके २ रत्ती बताशा में रखकर खिलाने से तर खाँसी दूर होती है।

इसके एक पाव पके फूल का एक बोतल अर्क तय्यार करें। चार मा० यह शर्बत ६ मा० शहद केवड़ा और उचित मात्रा में कुएँ का जल मिला कर सवेरे पिलाने से हृदय की धड़कन, रक्त फूलना, घबराहट और पुरातन गर्मी दूर होती है।

अडूसे का फूल १ सेर, इससे द्विगुण शक्कर डाल कर गुलकन्द तयार करें। यह कास, रक्त और यक्ष्मा में लाभप्रद है।

अडूसा पुष्प द्वारा भस्म प्रस्तुत करना

अडूसे के फूल को कूटकर रस निचोड़ें पुनः उस रस में गोदन्ती हड़ताल को खरल कर नियमानुसार अग्नि दें। इसी प्रकार सात बार करें तो गोदन्ती भस्म प्रस्तुत होगी।

गुण—यह जीर्णज्वर के लिए अत्यन्त लाभदायी सिद्ध होगी। खून थूकने में १ मा० कत्था में १ रत्ती यह भस्म रखकर शर्बत अनारदाना के साथ खिलाने से कुछ ही खुराकों में लाभ पहुँचाएगी। पुरातन कास के लिये २-२ रत्ती यह भस्म शर्बत एजाज के साथ खिलाने से रामबाण सिद्ध होगी।

अडूसा द्वारा प्रस्तुत विविध योग

(१) वासक क्वथ, वासा घृत तथा वासावलेह प्रभृति तथा अनेक अन्य योग 'शार्ङ्गधर' एवं "भावप्रकाश" आदि ग्रन्थों में वर्णित हैं। इस कोष में भी वे यथाक्रम आए हैं। अतः वहाँ देखिए।

(२) अडूसा पत्र १ सेर, अडूसा पुष्प १ तो०, जल ४ सेर डालकर रात को भिगो दें

सवेरे १ जोश देकर गोदुग्ध ४ सेर मिलाएँ और भभका (नाड़ीयन्त्र) द्वारा ५ सेर अर्क खींचें। १० तो० यह अर्क शर्बत एजाज ५ तो० में मिलाकर सवेरे और शाम को पिलाएँ और उष्ण वस्तुओं से परहेज कराएँ। राजयक्ष्मा की प्रथम एवं द्वितीय कक्षा में लाभदायी है। दो सप्ताह पश्चात् रोगी के वजन में आश्चर्यजनक वृद्धि दीख पड़ती है तथा शरीर लाल और आभायुक्त हो जाता है। मूत्र की अरुणता जलन और रक्तोष्मा को दूर करने में अनुपमेय सिद्ध होता है।

(३) अड्सा पत्र, अड्से की जड़ की छाल और अड्सा का फूल प्रत्येक २ सेर, २० सेर जल डालकर जोश दें। आधा रह जाने पर मलकर छान लें। उक्त जल में उपर्युक्त तीनों वस्तुएँ १-१ सेर डालकर पुनः जोश दें। आधा रह जाने पर उपर्युक्त नियमानुसार मलकर छानलें और उपर्युक्त वस्तुएँ प्रत्येक आधा सेर डालकर जोश दें। आधा रह जाने पर छानकर बोतलों में भरकर रख दें। दिन में ३ बार २॥ तोला की मात्रा में रोगी को पिलाएँ। स्वाद के लिए शहद १ तो० मिला लिया जाए।

गुण—खाँसी, ज्वर, मुंह द्वारा रक्तस्राव, रक्तवमन, रक्तार्श तथा पाचनशक्ति को लाभ पहुँचाती है।

अड्सा क्षार

अड्सा के पञ्चांग को लेकर जलाएँ और इसकी भस्म द्वारा नियमानुसार क्षार प्रस्तुत करें। यह क्षार २ रत्ती की मात्रा में खाँसी, दमा और नफ़सुद्दम (खून थूकने) के लिए अमृत समान है। १ रत्ती से ३ रत्ती तक पान के साथ उपयोग में लाने से यह प्रत्येक भाँति की खाँसी और दमा को लाभ पहुँचाता है।

अड्सा काला—हिं० अड्सा भेद (Black adhatoda)—इं०।

अड्सा क्वाथ—सं० पु० अड्से के पत्र या मूल १ तो०, जल १६ तो० में क्वाथ करें, जब चतुर्थांश शेष रहे तब उसमें शहद डालकर पीने से रक्त पित्त तथा क्षय का नाश होता है। (यो० त०, सा० सं०)

अड्सा पुटपाक:—सं० पु० अड्से के पुटपाक का रस निचोड़ कर शहद मिला पीने से रक्तपित्त, छर्दि, कास तथा ज्वर का नाश होता है।

(शार्ङ्ग० सं० म० ख० १ अ०)

अड्सा सुफेद—हिं० संज्ञा पु० अड्साभेद। देखो—अड्सा। Waite adhatoda—इं०।

अडेका मञ्जेन—ले० मुण्डी, गोरखमुण्डी—हिं०। देखो—मुण्डी। (Sphæranthus Indicus, *Linn*)—ले० फा० इं० २ भा०।

अडेन एन्थेरा पेवोनीया—ले० लालचन्दन, रक्त चन्दन—हिं०। देखो—रक्त चन्दन। इं० मे० प्लां०। इं० मे० मे०। मे० मो०। (Pterocarpus santalinus *Linn*)—ले०। फा० इं०।

अडेन्सोनिया डिजिटेटा—ले० गोरख इम्ली। मे० मो०।

अडोमा—गोआ० माइम्युसॉप्स कौकी (Mimusops kauki, *Linn*) मा० डाइसेक्टा (M. disecta, Br.) बे०। बुआ-सोव मल०। (मेमो०) क्षीरनी वं०। खीरी घिरुइ (खिरनी के भेद) हिं०। कौकी मह०। क्षीरिका सं०। इं० मे० प्लां०।

क्षीरिका वा मधुक वर्ग
(*N. O. Sopotaceæ*)

उत्पति स्थान—ब्रह्मा तथा मलाका, कभी २ होशियारपुर, मुल्तान, लाहौर और गुजरात बाग़ के निकट अमीनाबाद में लगाया जा चुका है।

उपयोग—इसके बीज का चूर्ण नेत्राभिष्यन्द रोग में व्यवहृत होता है और ज्वरघ्न एवं वल्य रूप से इसका अन्तः प्रयोग भी होता है इसकी जड़ लाहौर में आंफिशल है (स्टयुवर्ट) बीज उष्ण एवं तर ख्याल किया जाता है।

और कुष्ठ पिपासा, उन्माद तथा बहुशः स्राव (Secretion) संबन्धी रोगों के योग में बरता जाता है यह कृमिघ्न भी ख्याल किया जाता है। (वेडेन पावेल)

इसका फल अत्यन्त मधुर एवं प्रिय होता है

वृक्षस्थ दुग्ध कर्ण शोथ तथा नेत्रशोथ (आंख आने) में व्यवहृत है। (डा० इमर्सन)

जड़ एवं त्वक संकोचक यकीन किये जाते हैं। और शिरवतिसार में इसे जल के साथ पीसकर तथा शहत योजित कर प्रयोग में लाते हैं।

इसके पत्र को तिल तेल में उबाल कर विचूर्णित त्वचा में योजित कर व्यहार में लाना बेरी बेरी रोग के लिये उत्तम औषध ख्याल किया जाता है त्वचा सकोचक होता है तथा इसमें से एक प्रकार का निर्यासवत् तरल निकलता है इसके पत्र को पीसकर इसमें हलदी और सोंठ मिला ग्रन्थियों पर प्रस्तर रूप में लगाते हैं (डरी)। इं० मे० प्रां०।

अड्डः-ता०। मालजन-हरद्वा०। (See-Malajan)

अड्डलय-ता० निकुम्भे-सं०। (See-Nikumbha)

अड्डसरम्-ते० अदूसा, वासका-हिं०। (Adhatoda vasica, *Nees*)-ले०। स० फा० इं०।

अड्डुतिन पल्ली-ता० कीड़ामार-हिं०।

अड्डुनम्-सं० क्ली० (Ashield) ढाल।

अड्डगजः-सं० पु० चक्रमर्द। चाकुन्दे-बं०। वै० श० (Cassia tora, *linn*)-ले०। फा० इं० १ भा०।

अड्डङ्गः-सं० पु० गोधूम, गेहूं—Common Wheat-इं०। वै० श०। Triticum vulgare-ले०।

अड्डहुः-सं० पु० लकुच वृक्ष। वड़हल-हिं०। Artocarpus Lakoocha, *Roxb*) ले०। वै० श०।

अड्डल-हिं० जपा पुष्प, ओड्रपुष्प-सं०। देखो—ओड्रः (क्रः)। Shoeflower (Hibicus Rosa-Sinensis, *linn*)

अड्डकेयसरनु-का० सुपारी-हिं०। Areca catechu-ले०। अ० नि० १ भा०।

अड्डहर-हिं० संज्ञा पु० अरहर, रहर, तुवर, आढ़की See arhki

अड्ढैया-हिं० संज्ञा पु० [हिं० अढ़ाई, ढाई] (१) एक तौल जो ढाई २॥ सेर की होती है, पंसेरी का आधा। (2॥ Seers)

अड्डुईका बेल-सतलज, पं० (Acacia Intsia, *Willd*) कोरिण्टा-ते०। कटार-कुमाऊं। मेमो०।

अणि-हिं० संज्ञास्त्री०
अणिः-सं० पु० } (१) The point of a needle नोक, सुनुई। (२) धार, बाढ़, (३) धुरी की कील, (४) सीमा, हद्द, सिवान मेढ़। (५) किनारा, (६) अत्यन्त छोटा।

अणिमरम्-मल० तून वृक्ष। (Cedrela toona, *Roxb*)

अणियाली-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अणि, धार] कनारी-डिं०।

अणी-हिं० संज्ञा स्त्री० देखो—अणि।

अणीय-हि० वि० [सं०] अति सूक्ष्म। बारीक, झीना।

अणुः-सं० पु०
अणु-हिं० संज्ञा पु० } [अणु, ऋग्वी वि० स्त्री०]

(१) जब एक परमाणु दूसरे परमाणु से मिल जाता है तब उस मिले हुए रूप को अणु कहते हैं अणु केवल तत्वों के ही नहीं होते, प्रत्युत यौगिक पदार्थों के सूक्ष्मतम भाग भी अणु कहलाते हैं। माली क्यूल (Molecule)-इं० ज़र्रह, रेज़ह, खुर्दतरीं जुज़्व-उ०। (२) सेल (Cell) (३) सूक्ष्म धान्य। (४) व्रीहि विशेष। मे० णद्विक। (५) चीन धान्य, (६) द्व्यणुक से सूक्ष्म, परमाणु से बड़ा कण। (७) परमाणुओं का संघात या बना हुआ कण। (८) परमाणु (९) सूक्ष्म कण। (१०) रज रजकण। (11) अत्यन्त सूक्ष्म मात्रा।

वि० (१) अति सूक्ष्म, क्षुद्र। (२) अत्यन्त छोटा। (३) जो दिखाई न दे वा कठिनाई से दिखाई पड़े।

अणुक-सं० (संज्ञा) त्रि० अतिलघु (Very small, atomic) (Subtle, toofine) अत्यन्त सूक्ष्म।

अणुकोषः-सं० हिं० पु० जीवकोष वा सेल (Cell) देखो—सेल।

अणुज्योतिः-सं० क्ली० स्तोक दृष्टि, ज्योति अथवा तेज की अल्पता, दृष्टिमांद्य। वा० शा० ५ अ० ६२ श्लो०।

अणुता,-त्व-(१) Minuteness सूक्ष्मता, अणुरूप होना। (२) Atomic Nature परमाणु स्वभाव।

अणु तैलम्-सं० क्ली० शरीर के सूक्ष्मातिसूक्ष्म भागों में प्रवेश करनेवाला तैल। केश में होने वाले रोग के लिए प्रयुक्त होने वाला तैल विशेष। वा० सू० २० अ०।

(१) जिस किसी काष्ट के कोयले की लाठ के नीचे तिल सरसों आदि पदार्थ घानी में पेरकर तैल निकाला जाता है, उस उस लकड़ी के खण्ड खण्ड करके एक बड़ी कड़ाही में जल भर कर अग्नि में पकाएँ। उक्त रीत से पकाने पर उन लकड़ियों से जो तैल का अंश पानी पर आ जांए उसको काछ कर अलग कर लें। उस तेल में वातनाशक औषधों को मिलाकर स्नेह पाक की विधि से पका लें। इसे अणु तेल कहते हैं।

गुण—यह विशेषकर वात रोगों को दूर करता है और भगन्दर में भी इसका प्रयोग होता हैं।

(सु० सं० चि० अ० वं० कल्प०।)

(२) जीवन्ती, नेत्रबाला, देवदारु, नागरमोंथा, दालचीनी, कालाबाला, अनन्तमूल, रक्तचन्दन दारुहल्दी, तज, मुलहठी, कदम्ब, अगरश्रिफला, पौण्डरीक, वेलगिरी, कमल, छोटी कटेरी बड़ी कटेरी, सल्लकी, शालपर्णी- पृष्टपर्णी, वायविडंग, तेजपात, छोटी इलायची, रेणुकाबीज, नागकेसर, पद्मरेणु, इन्हें समान भाग लेकर सौ गुने आंतरिक्ष जलमें क्वाथ करें और ऊपर कथित द्रव्यों के तुल्य तिल तैल लें। जब तैल से दस गुना क्वाथ रह जाय तब उतार कर तैल पाक करे और जब तेल मात्र शेष रहे तब पुनः उस तैल के बराबर क्वाथ मिलाकर पकाए इस प्रकार दस बार पकाएँ। अन्त में जब तैल मात्र शेष रहजाय तो उसमें तैल के बराबर ही बकरी का दूध मिला कर पुनः पकाए। फिर तेल शेष रह जाने पर उतार लें। इसे अणु तेल कहते हैं। यह नस्य द्वारा प्रयोग करने में महा गुणकारी है। चूंकि यह सूक्ष्म छिद्रों में प्रवेश करता है। इसलिये इसे अणु तैल कहते हैं। (वा० भट्ट० अ० २०)

अणुदर्शक-हिं० संज्ञा पु० (Microscope) सूक्ष्मदर्शक।

अणुभा-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] (Lightning बिजली विद्युत। अशनि। तड़ित।

अणुमस्तिष्क- हिं० संज्ञा पु०
अणुमस्तिष्कम्-सं० क्ली०

लघुमस्तिष्क, अनुमस्तिष्क हिं०। मुखीख़, मुवख्ख़र दिमाग़, दमाँग सग़ीर दिमाग़-अ०। सेरीवेलम् Cerebelum इं०।

अणुभौंगी-हिं० स्त्री० नुक्लियह् अ०। न्यूक्लीओलस Nucleolus इ०। सेल (Cell) को बड़े यन्त्र की सहायता से ध्यानपूर्वक देखने पर भौंगी के भीतर जो एक छोटा सा बिन्दु दिखाई देता है उसको अणुभौंगी कहते हैं। ह० श० १० देखो—सेल।

अणुमुष्टि-सं० पु० विषमुष्टि महानिम्ब। रा० नि० व० ४। See-vishamushtih

अणुमुष्टिकाः-सं० स्त्री० डाढ़ी मुष्टिका See Dori

अणुरन्ध्रम्-सं० क्ली० (Foramen vesalii) सूक्ष्मछिद्र।

अणुरेवती-सं० स्त्री० (Croton polyandrum; *Roxb*) दन्ती वृक्ष। प० मु०। रा० नि० व० ६।

अणुवीक्षण-हिं० संज्ञा पुं० अणुदर्शक, सूक्ष्मदर्शक यंत्र। नक़ारह मकबरह अ०। माइक्रोस्कोप Microscope इं० सूक्ष्म वस्तुओं को बड़ा करके दिखाने वाला यंत्र वह यंत्र जिसके द्वारा अत्यंत सूक्ष्म से सूक्ष्म वस्तु भी देखी जा सकतीहै। इसी के द्वारा विज्ञान ने ऐसे अनेक सूक्ष्म कीटाणुओं का पता लगाया है जिनकी विद्यमानता का मनुष्य को स्वप्न में भी ख्याल न था देखो—सूक्ष्मदर्शक

अणुवीक्ष्य-हिं० वि० सूक्ष्मदर्शक यंत्र से दिखाई देने योग्य। मकारह मकबरियह अ०। माइक्रोस्कोपिक Microscopic इं०।

अणुव्रीहि-स० पु०
अणुव्रीहि-हिं० संज्ञा पु०
अणुव्रीही-हिं० संज्ञा पु०
श्यामक, साँवा सांठी, छोटे धान सूक्ष्मधान्य, एक प्रकार का बढ़िया धान जिसका चावल बहुत छोटा होता है और पकाने से बढ़ जाता है। और महगा भी बिकता है। माठीचूर हिं०। रा० नि० व० १६। पर्या० प्रसातिका (र) A sort of Paddy

अण्टगलु-कना० (ब० व०) गोंद लासा हिं०। गम्ज gums, रेजिन्स Resins इं०। स० फा० इं० देखो—निर्यास।

अण्टि-मल० (Nut) गुठली हिं०। स० फा० इं०

अण्टिकल-मल० (ब० व०) अण्टि (ए० व०) गुठलियां हिं०। नटस् Nuts इं०। स० फा० इं०

अण्टिचेट्टु-
अण्टिपण्डु-
-ते० केला, कदली हिं०। म्युसा सेपिएण्टम् (Musa sapientum, *Linn*) स० फा० इं०।

अण्टिमलरी-
अण्टिमन्तारम-
-मल० गुलाबांस हिं०। गुले अब्बास-फा०। (Mirabilis jalapa *Linn*) ले०। स० फा० इं०। देखो गुलेअब्बास।

अण्टिश-ते० चिरचिटा, चिचिड़ा अपामार्ग हिं०। (Achyranthes aspera *Linn*) स० फा० इ०।

अण्टु-कना० (ए० व०) गोंद, लासा हिं०। गम, Gum, रेजिन Resin-इं०। देखो—निर्यास। स० फा० इ०।

अण्ड-हिं० संज्ञा पु०
अण्डः-स० पु०
अण्डम्-स० क्ली०
(१) अंडकोष को टटोलने पर उसके भीतर गुठलीके समान जो दोसख्त चीजें मालूम होती हैं उनको अंड कहते हैं। इसकी लम्बाई १॥ से १ ३/४ इञ्च चौड़ाई १ इञ्च और मोटाई १ इञ्च से कुछ कम होती है। उस का भार एक तोले के लगभग होता है टेस्टिकल Testicle टेस्टिस Testis इं०। आण्ड, मुष्क, पुरुषअण्ड, शुक्रग्रन्थि हिं०। बैजतुलमनी खुशयह मख्सा दोमह अ०। रा० नि० व० १८

(२) अण्डकोष, वृषण हिं०। सफन फोता कीसहे खुश यह अ०। स्क्रोटम् Scrotum इं० हिं० इं० डि०।

(३) डिम्बः (मे०) स्त्री० अण्ड हिं०। बैजबजतुलमनी अ०। ओवम् Ovum इं०। डिम्ब, अण्डा व०। इसके पर्याय—पेशी, कोष (अ) पेशिः, कोषः पेशीकोष, (आ० टी०)। पेशी (के)। गुण—पाक में कटु. मधुर (रस में) रुचिकारक, शुक्रजनक, वात तथा कफनाशक।

(४) गव्यमार्जारीअण्ड। वै० नि० २ भा० वा० व्या० अपिगर्भ तेल। (५) Musk bag कस्तूरिका नाफा, कस्तूरी का नाफा मृगनाभि (६) Semen virile वंर्य, शुक्र सं० वि०। (७) एरण्ड हिं०। पामा क्रीस्टाई palma christi (Ricinus Vulgaris) ले०। (८) अण्ड (An Egg) हिं० इं० डि०। (९) पच आवरण। दे० कोष। (१०) कामदेव। (Cupid)

अण्ड उपांड खात-हिं० संज्ञा पु० (Digital fossa)

अण्डकः-सं० पु० (Scrotum) अण्डकोष। हे० च०।

अण्डकं-सं० क्ली० क्षुद्र-डिम्ब, छोटा अण्डा (An small egg)

अण्डककडी
अण्डककंटी
हिं० संज्ञा स्त्री० अण्डखरबूजा पपेया, पपीता Carica Papaya, *Linn* ((Fruit of)

अण्ड कोटरपुष्पा
अण्डकोटर पुष्पी
-सं० स्त्री० नीलबुहा। देखो अजान्ता। A Potherb (Convolvulus argenteus) रत्ना०।

अण्डकोशः- अण्डकोषः - अण्डकोषकः- } स० पु० (१) कुटमल । वृषण Scrotum Tunica albugiuea testes । रा० नि० व० १८

संस्कृत पर्याय—मुष्क, वृषण, (अ) अंड, पेलं, अण्डकः (हे)। सीमा (ज) फलकोशकः (त्रि)। फल (के) बीजपेषिका (रा) सफन (अस्फान, सिफन—ब० ब०), कीसुल् उन्स यैन, कीसहू खुस्यहू (खुसिया) फोतह् (फोता)—अ०। पोस्त खायह्—फा०। खुस्यों का थैला उ०।

जिनेन्द्रिय के नीचे और पीछे यह चमड़े की दोहरी थैली जिसमें वीर्यवाहिनी नसें और दोनों गुठलियां रहती है। दूध पीकर पलने वाले उन समस्त जीवों को यह कोश या थैली होती है जिनके दोनों अंड या गुठलियां पेडू से बाहर होती है।

(२) फल का छिलका। फल के ऊपर का बोकला।

अण्डखरबूजा—हिं० संज्ञा पु० अण्डखरबूजा, अण्डककड़ी, एरण्डकर्कटी, अण्डपपैया, पपैया, पपैयह विलायतीरेंड़, पपीता, पपैना—अम्बा, पपैयह्। अण्डखरबूजा—पं— पोपाई—द०। एरण्डचिर्भिट वातकुम्भ, मधुकर्कटी, नलिकादलः—स०। पपैया, पौपुयिअआ, पेंपाई, पप्पिया, पेपिया, पपया—बं० अम्बहे—हिन्दी—अ०, फा०। शज्रतुल् बतीख, —अ०। दरख्त खुरपूजह्, दरख्तखर्बुजह्—फा० खुरपूजह् का दरख्त- उ०। पपाय (Papay) पपावपेपा ट्री (Papaw-tree), मेलनट्री, (Melon tree) मेलन मेमेयो (Melnn Memao), कुकुरबिटा पेपा (Cucurbita papa) —इं०। पपाया (Papaya), पपाव (Papaw) केरिका पपाया Carica Papaya *Linn* (Fruit of)-ले०। पपायेरकम्यून Papayer commun फ्रां० मेलोनेनवांम Melonen baum-जर०। पपायि, पप्पायिपज़म, पप्पालि—पज़म, पप्पालिमाम्—ता०। बोप्पायिपण्डु मदन-अनपकाय मधुरनकम्, वपैय--पण्डु --ते०। पप्पाय—पज़म, आपपाय—पज़म, पप्पायम्, कप्पालम्- मल०। बोप्पायि- हण्णु फरङ्गि हण्णु परङ्गी, पेरङ्गी, पेरिञ्जि—पल्लसु। पप्पाङ्गाये—कना०। पोपया, पपाई, पपया—मह०। पपई, पप्या- मह०, कच्छ०, बम्ब०। पप्पो, पपायि, पपिया, पयाई पयाईकाट, पपाऊन, चिब्डा, एरण्डककड़ी झाड़—चिम्डी—गु०। पपोल्का-सिं०। सिम्बों—सि, तिम्बो—सि—बर०। पप्पागाई—तु०। पोप्पाए-फल-कों०। पप्ता, कठचिभ्डो—सिंध०।

झुमकोलता या पर्पाता वर्ग
N. O. Papayoceæ or Passifloraceæ)
नॉट ऑफिशल
(Not offical)

उत्पत्ति स्थान—इसका मूल निवासस्थान अमेरिका है, परन्तु अब यह सम्पूर्ण भारतवर्ष (विशेषकर पश्चिम भारतवर्ष) में तथा पुरानी दुनियां के उष्ण प्रधान प्रदेशों में लगाया जाता है।

नोट—किसी किसी ग्रन्थ में इसका अरबी फारसी नाम अनवहे हिन्दी लिखा है परन्तु प्रामाणिक चिकित्सा ग्रन्थों में यह नाम नहीं मिलता। मुहीत आजममें पपय्यह् तथा मफ़ज़नुलू अद्बियह् में पपीहा आदि नामों से इसका वर्णन किया गया है। शीलानी ने शरह मुफ़्रदातुकानून में बतीख के अन्तर्गत इसका वर्णन किया है। इग्नेशिया अमारा (Ignatia Amara) को भी जो कि कुचिला वर्ग की ओषधि है उसके हस्पानी नाम पपीता से ही अभिहित करते हैं, परन्तु यह विपैली तथा अण्डखरबूजा से सर्वथा भिन्न वस्तु है, अस्तु उसके लिये देखो—पपीता।

वानस्पतिक वर्णन—इसके वृक्ष २० से ३० फीट ऊँचे, आरम्भ में अशाखी (अर्थात् खर्जूर या ताल वत एक ही तनेपर) किन्तु प्राचीन होने पर शाखायुक्त (पृथक पृथक शिरोमय) हो जाते

है। पत्र लम्बे डन्ठल युक्त (१—१ गज लम्बे) एकांतरीय (विषमवर्ती) पक्षाकार, सप्त खंड-युक्त, एरण्डपत्रवत्, किन्तु इससे मृदु एवं लघु होते हैं। खण्ड—आयताकार, न्यूनकोणीय, शिराओं से व्याप्त होता है जिसके सिरे पर पत्तों की छत्रा बनी होती हैं।

मध्य खण्ड—पुनः त्रिखण्डयुक्त होता है। पुष्पाभ्यंन्तरकोष नरपुष्प में नलिकाकार और मादा में पञ्च खण्डयुक्त होते हैं। नरपुष्प कक्षीय किञ्चित् मिश्रित गुच्छों में एवं श्वेत होते हैं। मादा (नारि) पुष्प साधारणतः भिन्न वृक्ष में कक्षान्तरीय, वृहत् एवं गूदादार और पीताभायुक्त होते हैं। फल रसपूर्ण आयताकार, धारीदार, लघु खबूंजा के आकार के परिपक्वावस्था में पीताभायुक्त हरित या सुर्खीमायल वर्ण के और अपक्व दशा में हरे रंग के होते हैं। इनमें बहु-संख्यक गोलाकार धूसर वर्ण के चिपचिपे मरिच-वत् बीज होते हैं इसमें से चुनसरवत् गंध आती है अपरिपक्वावस्था में फल गाढ़े दूध से भरा रहता है। पत्र एवं प्रकांड में भी दुग्ध होता है। इसमें पेपीन (अण्डखरबूजा सत्व) नामक एक प्रभावशाली पाचक सत्व होता है।

नोट—फल के विचार से ये चार प्रकार के होते है :—

१—नर—जिसमें फल नहीं लगते, ये केवल पुष्प आचुकने पर शुष्क हो जाते हैं। शेष तीन फलदार होते हैं। २—इनमें से एक बेज्ञ पपया है। इस प्रकार का फल तने से लगा हुआ नहीं होता, अपितु डण्ठलयुक्त होता है। शेष दो प्रकार (तीन व चार) के फल तने से लगे होते हैं केवल फल के छोटे बड़े होने का भेद होता है।

अंडखरबूजा बम्बई, कर्नाटक और मदरास में अधिकता से होता है।

प्रयोगांश—दुग्धमय रस, बीज तथा फल मज्जा और पत्र दुग्धमय रस द्वारा प्रस्तुत सत्व "पेपीन" आदि।

रासायनिक संगठन—इसके दुग्धमय-रसमें एक प्रकार का अल्ब्युमिनीय पाचक संज्ञानो-त्पादक (अभिषयकारी) पदार्थ होता है, जो दुग्ध को जमा देता है उसको पेपीन(Papain) या पेपयोटीन (Papayotin) कहते है। ताजे फल—में रबरवत् एक पदार्थ, एक मृदु पीत-वर्ण का राल वसा, अल्ब्युमानाइड्स, शर्करा पेक्टीन, निम्बुकाम्ल (Citric Acid) अम्लोकाम्ल (Tartaric Acid), सेव की तेजाब (Malic Acid) और द्राक्षीज (अंगूर की शर्करा) प्रभृति पदार्थ पाये जाते हैं शुष्क फल में अधिक परिमाण में भस्म (८.४ %) होती है जिसमें सोडा, पोटाश और स्फुरि-काम्ल (Phosphoric Acid) पाए जाते हैं। इसके बीजों में एक प्रकार का तेल होता है जिससे अग्राह्य गंध आती है। (स्वाद-अग्राह्य) इसको अण्डखरबूजा तेल या पपैया तैल (Papaya oil or caricin) कहते है। इसके अतिरिक्त इसमें पामिटिक एसिड, कैरिका फैट-एसिड, एक स्फटिकवत् अम्ल जिसको पपीताम्ल (Papayic Acid) कहते हैं और रेजिन रेसिड तथा एक मृदुराल आदि पदार्थ पाए जाते हैं। इसके पत्रमें कार्पीन (Carpaine) नामक एक क्षारीय सत्व होता है जिससे कार्पीन हाइड्रोक्लोराइड (Carpaine hydrochl-oride) बनता है। यह जल मे विलेय होता है और हृदय बलप्रद रूप से डिजिटेलिस के स्थान में $\frac{1}{30}$ से लेकर $\frac{1}{15}$ ग्रेन तक की मात्रा में त्वगन्तःक्षेप रूप से उपयोग किया जाता है। कार्पीन एक विषैला पदार्थ है।

औषधि निर्माण—१—पपीता स्वरस, मात्रा २० से ६० बूंद। २—शुष्क पपीता स्वरस, मात्रा—१ से २ ग्रेन या अधिक। इससे $\frac{1}{6}$ भाग पेपीन (पपीतासत्व) प्राप्त होता है। ३—पपीता सत्व अर्थात् पेपीन या पेपेयोटीन, मात्रा—१ से ८ ग्रेन। ४—फल मज्जा। ५—शर्बत, चटनी आदि। ६—कल्क व पुल्टिस।

सेवनविधि—इसको कीचट में डालकर या मिश्रण (मिक्सचर) वा गुटिका रूप में

तथा एलिक्सिर और ग्लीसरोल की शकल में देते हैं। डिस्पेन्सिंग सिरप से इसकी उत्तम वटिकाएं प्रस्तुत होती हैं।

नॉट ऑफ़िसल योग

(Not oficial preparations)

और पेटेन्ट औषध—

(१) एलिक्सिर पेपीन (Elixir papain) अक्सीर जौहर पपय्यह्।

पेपीन ४ भाग, मद्यसार (अल्कोहल) १५ भाग, परिस्रुत वारि (डिस्टिल्ड वाटर) ४५ भाग, ऐरोमैटिक एलिक्सिर आवश्यकतानुसार या इतना जिससे पूरा सौ हो जाय। (बी० पी० सी०)

मात्रा—आधा से १ ड्राम भोजन के साथ।

(२) ग्लीसराइनम् पेपीन (Glycerinum papain) ग्लीसरीन जौहर पपय्यह् मधुरिनीय पपीतासत्व। पेपीन ८ भाग, हाइड्रोक्लोरिक एसिड डाइलयूट ८ भाग, सिम्पल एलिक्सिर ५ भाग, ग्लीसरीन (मधुरीन) १०० भाग पर्यन्त।

मात्रा—१ ड्राम भोजन के साथ।

(३) ट्रोकिस्काई पेपीन (Trochisci papain) पेपीन की टिकिया—

शक्ति—प्रत्येक टिकिया में आधा ग्रेन पेपीन होता है। टेब्लेट्स पेपीन प्रत्येक में २ ग्रेन पेपीन होता है।

इतिहास तथा गुण-धर्म—ब्राज़ील निवासी इसको प्राचीन काल से जानते थे। अस्तु, अण्डखरबूजा की नर मादा जाति को वहाँ मेमेओ मेको Mamao macho (नर मेमेओ या पपीता) तथा फलान्वित होने वाली स्त्री जाति को मेमेओ फेमिया Mamao famea (मादा पपीता) और अन्तिम को बोई जाने वाली जाति को मेमेओ मेलेओ (फीमेल मेमेओ) कहते थे। परन्तु, उसके वृधिया रस का कृमिघ्न प्रभाव १७ वीं शताब्दी मसीही में ज्ञात हुआ। पश्चिमी भारतीय द्वीपों में इसका मांस पाचक प्रभाव सम्भवतः प्राचीन काल से ज्ञात था। ऐसा प्रतीत होता है कि पुर्तगाल निवासी जब इसको भारतवर्ष में लाए तब उनसे भारतीयों को भी इसके मांसपाचक प्रभाव का ज्ञान हो गया, क्योंकि भारतवर्ष में भी यह बहुत काल से व्यवहार में आ रहा है। अस्तु, मांस को कोमल करने के लिए कच्चे अण्डखरबूजा का रस उस पर मलते हैं अथवा उसको इसके (पपय्या) पत्र में लपेट देते हैं। (पत्र साबूनवत् है—इ० मे० मे०) मख़्ज़नुल् अद्वियह् तथा मुहीत आजम प्रभृति ग्रन्थों में भी पपय्यह् के दुग्ध के इस गुण का वर्णन है कि वह गोश्त को गुज़ार करता (कोमल करता या गला देता) और दुग्ध को जमा देता है।

मख़्ज़नुल् अद्वियह् के लेखक मीर मुहम्मद हुसेन (१७७० ई०) ने पपय्यह् वृक्ष का स्पष्ट वर्णन किया है। वे इसके रस में आर्द्रक को मिश्रित कर मांस के मृदु करने के उपयोग का वर्णन करते हैं उनके वर्णनानुसार यह रक्त-निष्ठीवन श्वास तथा मूत्रप्रणालीस्थ क्षतों की औषध है और अजीर्ण में भी हितकारी है। दद्रु या विचर्चिका (जिसमें अत्यन्त खाज उठती हो एवम् जिससे अधिक स्नेह स्राव होता हो) में इसके दुग्ध को ३–७ बार लगाने से लाभ होता है।

प्रकृति—पक्व–गर्म तर, अपक्व–उष्ण, रूक्ष वृक्ष-त्वक्–उष्ण रूक्ष, किसी किसी के मत से सर्दतर २ कक्षा में।

हानिकर्त्ता—यकृत् को वा शीत प्रकृति और कफ प्रकृति वालों को। दर्पनाशक–सिकञ्जबीन बजूरी (खाँड़, लवण तथा सिर्का प्रभृति)। आहार मध्य में इसका खाना उत्तम है। स्वाद—अपक्व कड़ुआ और पक्व मिठास लिए कुछ बेस्वाद होता है।

प्रतिनिधि—हिन्दी अंजीर।

मात्रा—४ माशे।

गुण, कर्म, प्रयोग—ओष्ठमृदुकर, तृषाहर, प्रवाहिका, अर्श, प्लीहावृद्धि, कण्ठ मुख की कफजा

तथा वृक्कनैर्बल्य और यक्ष्मा को लाभप्रद है। अशुद्ध मलोंको त्वचा, हस्त व पाद द्वारा विसर्जित करता है, वृंहण विस्मृतिहर, रुक्षता, रक्तनिष्ठीवन रक्तस्राव, रक्तार्श, मूत्रप्रणालीस्थ क्षत, हृत् व आमाशय व यकृद् दाहहर, शीघ्रपाकी, कफ तथा रक्तवर्द्धक, कफज व वातज आन्त्रकूजनप्रद है। मु० आ०। इसके परिपक्व फल उपदंश को गुणप्रद है। इसके पके हुये और कच्चे फल का अचार प्लीहा के रोग में गुणकारक है। यह पाचक, क्षुधावर्धक, वायुलयकर्ता, वृक्क व वस्त्य-श्मरी निःसारक और मूत्रल है। मांस विशेषतः कबाबों के मांस को अतिशीघ्र गलाता एवम् उसका दर्पघ्न है। भारतवर्ष में प्रायः यह इसी काम में आता है। म० मु०। ड्रु० मु०।

भारतवर्ष में डॉ० फ्लेमिङ्ग (१८१० ई०) ने इसके दुग्ध के कृमिघ्न रूप से उपयोग की ओर ध्यान दिलाया। इसके कथित गुणधर्म के प्रमाण के लिये वे मि० कार्पेण्टीर कोसिग्नी (Mr. Carpentier Cossigni) के लेखों से एक मनोरञ्जक भाग उद्धृत करते हैं। अभी हाल ही में मि० बॉटन (Mr. Bouton) ने इसका प्रबल प्रमाण पेश किया है, जिससे यह निश्चिततया निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि इसके कृमिघ्न प्रभाव विषयक वर्णन वास्तविक घटना पर स्थापित किये गये है। वे डॉ० लेमारचन्द (Dr. Lemarchand) द्वारा व्यवहृत निम्न सेवन विधि का उल्लेख करते हैं :—

ताजे अंडखरबूजे का दुग्ध और शहद, प्रत्येक चाय की चम्मच भर इनको भली भांति मिश्रित कर उसमें उबलता हुआ जल ३ या ४ चम्मच भर धीरे धीरे योजित करें। और जब यह काफी शीतल हो जाय तो इसे एक घूंट में पी जाय। इसके दो घंटे पश्चात् सिर्का या नीबू के रस मिले हुए परण्ड तैल की १ मात्रा सेवन करें। आवश्यकतानुसार इसको दो दिन तक बराबर सेवन करें। यह पूर्ण वयस्क मात्रा है। ७ से १० वर्ष के भीतर के बालक को इसकी आधी मात्रा देनी चाहिये और तीन वर्ष से भीतर के शिशु को इसकी तिहाई अथवा एक चाय की चम्मच भर देना चाहिये। यदि ऐंठन प्रतीत हो जैसा इससे कभी कभी होता है तो शर्करा योजित एनिमा (वस्ति) करने से यह दूर हो जाता है।

मुख्यतः यह केंचुआनिस्सारक है। कद्दाना (Taenia) पर इसका कम प्रभाव होता है। बीज में भी कृमिघ्न प्रभाव होने का वर्णन किया गया है, परन्तु इसके गुण विषयक प्रभावों से भली भांति यह परिणाम नहीं निकलता।

दक्षिण तथा पश्चिम भारतवर्ष और बङ्गप्रदेश की सभी जाति की स्त्रियों में इसके बीज के आर्त्तवप्रवर्तक गुण में प्रबल विश्वास है। उनकी यहां तक धारणा है कि यदि गर्भवती स्त्री इसे मध्यम मात्रा में भी खाए तो गर्भपात अवश्यम्भावी परिणाम होगा। यही पूर्वाग्रह इसके फल खाने से खिलाफ है तो भी पपीता के प्रकथित आर्तवप्रवर्तक गुणों के प्रमाणभूत घटनाओं की बहुत कमी है। (बीज शसक्र आर्तवप्रवर्तक है। इं० मे० मे० गर्भपात हेतु इसके दूधिया रस का गर्भाशयिकद्वार में पेसरी रूप से स्थानिक उपयोग होता है यह जमे हुये अण्ड्युग्मन का लयकर्ता है

१ आउंस इसके पत्र, ६० ग्रेन (३० रत्ती) अहिफेन तथा ६० ग्रेन (३० रत्ती) सैन्धव लवण इनको रगड़ कर कल्क प्रस्तुत करें। उसके स्थानिक उपयोग से गिनी कृमि (Guinea worm) नष्ट होती है ले० कर० कांक्स

एक चाय की चम्मच भर अंडखरबूजे के दुग्ध तथा उतनी शर्करा को परस्पर मिलाकर इसकी तीन मात्राएं बनाकर दैनिक सेवन करने से प्लीहा एवम् यकृत वृद्धि चिकित्सा में उत्तम परिणाम प्राप्त हुये। एवर्स (इं० मे० गा० फर० १८७२ ई०)।

फल पुरातन अतिसार में गुणदायक होता है इसका अपक्व फल कोष्ठमृदुकारक तथा मूत्रल है इसका ताजा दूधिया रस वैदर्भलेपन (Rubifacient) तथा कृमि हेतु उत्तम

प्रलेप है यह वृश्चिक दंश की निश्चत औषध है। बीज भी इस हेतु उतने ही लाभप्रद हैं। पक्व फूल परिवर्तक है और इसका निरन्तर सेवन आदती मलावरोध को नष्ट करता है यह अजीर्ण तथा रक्तार्श में हित है। उबालने के पश्चात इसमें निम्बु स्वरस तथा शर्करा सम्मिलित करने से इसकी उत्तम चटनी प्रस्तुत होती है। इसका शुष्क किया हुआ एवं लवण योजित फल प्लीहा शोथ तथा यकृद् शोथ को कम करता है। इसके अपक्व फल की कढ़ी प्रस्तुत कर स्तन्य जनन प्रभाव हेतु स्त्रियां सेवन करती हैं। वात वेदनाओं में इसके पत्र को उष्ण जल में डुबोकर अथवा अग्नि पर गरम कर के वेदनास्थल पर बांधते हैं पत्तियों को कुचल कर इसकी पुल्टिस बांधने से कहा जाता है कि श्लैपदिक शोथ कम होता है इस हेतु इसके फल द्वारा निष्कासित प्रगाढ़ दूग्ध का २ से ४ ग्रेन (१ से २ र०) की मात्रा में वटी रूप में आंतरिक उपयोग होता है ई० मे० मे०

अण्डखरबूजा का दूधिया रस और तन्निर्मित सत्व (पेपीन)

दूधिया रस

प्राप्ति व निर्माण—विधि—अपक्व (वा अर्द्धपक्व) फल में लम्बाई की रुख वारम्बार चीरा दें इस प्रकार जब पर्याप्त दुग्ध निकल आए तब उसे एकत्रित कर सैन्डवाथ (बालुकाकुण्ड) पर रख मन्द अग्नि द्वारा शुष्क करें इसप्रकार एक मन्द श्वेत वर्ण का चूर्ण प्राप्त होगा आन्तरिक रूप से प्रयुज्य यह एक उत्तम औषध है पूर्ण वयस्क मनुष्य को इसकी १ या २ ग्रेन की मात्रा शर्करा वा दुग्ध के साथ देनी चाहिये इसी प्रकार की एक औषध "पिङ्कलर्स पेपीन" के नाम से बिकता है स्वाद अप्रिय होने के कारण इसका टिंक्चर उत्तम नहीं हो सकता आवश्यकता होने पर बालकों अथवा स्त्रियों के लिये उसके चूर्ण का शर्बत बनाया जा सकता है। अजीर्ण में यह अत्यन्त गुणदायक है।

लक्षण तथा पेपीन से इसकी तुलना—क्षारीय, अम्लीय, तथा न्यूट्रल (उदासीन) घोलों में विलायक रूप से यह पेप्सीन के समान एक इन्ज़ाइम है यह मांसीय एल्ब्युमेन का प्रबल पाचक एवं वास्तविक पेप्टोज़ का निर्माण करता है और पेप्सीन के समान दुग्ध को जमा देता है पेप्सीन से यह इस बात में भिन्न है कि बिना अम्ल योग के तथा अधिक उत्ताप पर एवं थोड़े काल में यह प्रभाव करता है फायब्रिन तथा अन्य नत्रजनीय पदार्थों का विलायक होने के कारण यह मांस को गलाता है छना हुआ रस पेप्सीन से रासायनतः इस बात में भिन्न है कि उबालने पर यह तलस्थायी (अधःपातित) नहीं होता। मर्क्यूरिक क्लोराइड (पारद हरिद) आयोडीन (नैलिका) एव सम्पूर्ण खनिजाम्लों द्वारा तल स्थायी हो जाता है। इसबात में वह पेप्सीन के समान हैं। कि न्युट्रल एसीटेड आंफ लेड द्वारा वह तलस्थायी हो जाता है तथा कॉपर सल्फेट (ताम्रगन्धेत्) और आयर्न क्लोराइड (लोह हरिद) के साथ तल स्थायी नहीं होता।

पेपीन या पेपेयोटीन

Papain or papayotin

प्राप्ति व लक्षण—यह एक एल्ब्युमीनीय या पाचक खमीर वा अभिसर्व (प्रभावात्मक सत्व) है जो अपक्व अण्डखर्बूजा के दूधियारसको मद्यसार (ऐलकुहॉल) के साथ तलस्थायी करने से प्राप्त होता है यह एक श्वेत वर्ण का विकृताकार (अमूर्त) आर्द्रभूत चूर्ण है जो ७५ ०/० शुद्ध मद्यसार जल एव ग्लीसरीन (मधुरीन) में विलेय होता है इसमें प्राणिज द्रव्यों के पचाने की शक्ति है एक ग्रेन पेपीन २०० ग्रेन ताजे दबाये हुए रक्त फायब्रिन को पचा देगा।

नोट—यद्यपि अण्डखर्बूजा के अपक्व रस से निकालकर शुष्क किये हुये दूधिया रस को अंग्रेजी में पेपेयोटीन कहते हैं तथापि पेपीन और पेपेयोटीन अधुना पर्याय रूप से व्यवहृत होते हैं।

(Papain) को पेपायन (Papine) के साथ मिलाकर भ्रम कारक न बनाना चाहिये। पेपाइन एक द्रव पदार्थ है जिसमें अकीम वर्जनीय

क्षारीयसत्वों से भिन्न उसमें अङ्ग मर्दप्रशमनगुणों की होने की प्रतिज्ञा की जाती है।

इन्द्रियव्यापारिक कार्य या प्रभाव—इसकी प्रभाव विषयिक बातो में सिवा उसक और कोई स्मरणीय बात नहीं कि इसका नत्रजनीय पदार्थो पर प्रबल प्रभाव होता है, और जब पेपेयोटीन को सीधा रक्त में पहुचाया जाता है तब यह प्रबल विषैला परम प्रभाव उत्पन्न करताहै' जिससे हृदय तथा वातकेन्द्र वातग्रस्त हो जातेहैं अन्यथा आंतरिक रूप से औषधिय मात्रा में यह सर्वथा सरा निपद है।

उपयोग—डिफ्थीरिया(खुनाक, कंठरोहिणी) अल्सरेटेड थॉट (कंठक्षति), क्रूप (स्वरघ्नीकास) 'एक्जेमा (कंद) और फिशर आफ दी टङ्ग (जिह्वा की कर्कशता) आदि में इसका स्थानिक उपयोग और अग्निमांद्य, अजीर्ण वृक्कशूल, कद्दूदाना (टीनिया एसियम) आध्मान अतिसार तथा वृक्काश्मरी एव दन्तोद्भेदजन्य संग्रहणी (Lienteric Diarr-hœa) प्रभृति में इसका आन्तरिक उपयोग लाभदायक होता है।

(१) पेपीन तथा पेप्सीन वा पेन्क्रिएटीन (क्लोमीन) के पाचक प्रभाव की तुलनात्मक व्याख्या—

(क) अम्लीय, क्षारीय तथा न्युट्रल घोलों (वा माध्यम) में भी इसका प्रभाव होता है जिससे उस अवस्था में भी इसके प्रभाव करने की आशा को जा सकती है जब कि अस्वस्थता के कारण अथवा कृत्रिम रूप से जैसा औषध काल में होता है, आमाशयिक पदार्थों की प्रतिक्रिया क्षारीय या न्युट्रल (उदासीन) हो जाती है। उक्त दशाओं में पेपीन सत्यतः व्यर्थ प्रमाणित होगा।

(ख) क्षारीय या न्युट्रल घोलो में प्रभाव जनक होने के कारण आहारीय पदार्थों के आमाशय से आंत्र में जिसकी प्रतिक्रिया क्षारीय होती है, आ जाने पर भी इसका प्रभाव होता रहेगा जो पेङ्क्रीएटीन (क्लोमीन) के प्रभाव के तुल्य है सम्पूर्ण आन्त्र पर इसका प्रभाव होता रहेगा।

(ग) इसमें कुछ अङ्गमर्दप्रशमन वा शूलघ्न प्रभाव भी नहीं है।

(घ) पचनीय सान्द्राहार के अनुपात से द्रव्याहार की मात्रा औसत या अत्यधिक होने पर भी यह पेप्सीन की अपेक्षा प्रबलतर प्रभाव प्रदर्शित करता है।

(ङ) Proteolytic प्रभाव के सिवा पेपीन का तैल पर स्पष्ट इमल्शनीकारक प्रभाव होता है।

(च) पेपसीन तथा पेङ्क्रिएटीन (क्लोमीन) की उपस्थिति में पेपीन का प्रभाव बढ़ जाता है। मांस को कोमल करने के लिए पेपीन घोल में डुबा रखने पर वह अधिक काल तक बिना सड़े गले सुरक्षित रहता है जो इसके बिना सम्भव न होगा इससे अनुमान किया जा सकता है कि इसमें ऐण्टिसेप्टिक (पचन निवारक) तथा पाचक प्रभाव भी है (ज) गाढ़े द्रवों में इसका विलक्षण प्रभाव होता है।

आमाशय व आन्त्र विकार—अजीर्णावस्था तथा आमा यर्यान्त्रविकार जन्य दशाओं में मांस पचाने में सहायक होने के लिए फ्रांस देश में पेपयोटीन का उपयोग किया गया बालकों के कफित्य आमाशय व आंत्र विकारों में इसका सफलता पूर्ण प्रयोग किया गया कहा जाता है कि थोड़ी मात्रा में इससे अग्निमांद्य एडम् क्रिं में अति शीघ्र लाभ प्रकट हुआ स्वाभाविक आमाशयिक रस के कम बनने की अवस्था में पेपयोटीन को मुख द्वारा अथवा पोषकवस्ति रूप में प्रयोग करने से विशेष लाभ होता है पेपीन बालकों के पुरातन आमाशयिक प्रतिश्याय अम्लजीर्ण तीव्र' आमाशय शूल, (आमशूल जो भोजन के थोड़ी देर पश्चात् आरम्भ होता है) में विशेष रूप से लाभदायक होता है। "पी० वी० एम०"।

२ से ५ ग्रेन की मात्रा में अजीर्ण, पुरातन आमाशयिक प्रदाह तथा आमाशयिक व्रण

(अल्सर) वा सर्तान या मांसार्बुद (कैन्सर) में शुद्ध पेपीन द्वारा उत्पन्न मूल्यवान प्रभाव से लेखक को अत्यन्त सन्तुष्टि हुई। वे निम्नोल्लिखित पेपीन-मिश्रित योग के विषय में लिखते हैं कि बहुत से आमाशयिक विकारों में इससे उत्तम प्रभावकारी कोई अन्य योग नहीं।

योग—पेपीन ३ ग्रेन, सोडावाईकार्ब ३० ग्रेन मैग कम्पौण्ड (बिचूर्णित मैग्नेशिया कार्ब) २० ग्रेन, विज्न्युथाई कार्ब १० ग्रीन मार्फीई हाइड्रोक्लोर $\frac{1}{18}$ ग्रेन, यह वटी रूप में सोडा के साथ अथवा बिना सोडा के और किसी शक्ति के ग्लीसराइनम् पेपीन रूप में दिया जा सकता है। इसके आमाशयिक प्रभाव में क्रियोजूट से कोई बाधा उपस्थित नहीं होती है। "ह्विट० मे० मे०"।

(क) बालकों का पुरातन आमाशयिक प्रतिश्याय—बालकों के उस पैत्तिक विकार में जिसमें क्षुधा नष्ट हो जाना, आलस्य, चेहरे के रंग का पीला हो जाना, रात्रि में निद्रा का न आना, दिन में शीघ्र क्रोधित होना, प्रायः शिरःशूल का होना, चूना जैसा मूत्र आना इत्यादि लक्षण होते हैं। (जब यह दशा कुछकाल लगातार रहती है तब इससे बालक दुर्बल हो जाता है एवम् विकृतश्लेष्मा आमाशय तथा आंत्र की भीतरी पृष्ठ को अच्छादित करलेती है जिससे आहार रस उचित मात्रा में अभिशोषित नहीं होता।) ऐसी निर्बलता की दशाओं में जो साधारणतः कॉडलिवर आंइल (कोड मत्स्य यकृत्तैल) तथा सिरप फास्फास कम्पाउण्ड आदि औषधें व्यवहार में लाई जाती हैं, उनका सात्मीकरण नहीं होता है। किसी किसी समय कास विकास पाता है जिससे बालक को प्रारम्भिक यक्ष्मा से ग्रस्त कहा जाता है। डा० हर्शल (Dr. Herschell) ने उक्त दशाओं में निम्न योग से बहुत लाभ होते हुए पाया—

योग—पेपीन (फिङ्क्लर) आधा से एक ग्रेन, सैकरम् लैक्टेट १ ग्रेन, सोडा बाईकार्ब इनकी एक गोली बनाए। इसे प्रत्येक खाने के बाद सेवन करना चाहिये। थोड़े जल के साथ १ या दो बूंद टिं० नक्स वोमिका भोजन के ठीक पहिले देने से भी लाभ होता है।

बालकों को जब हरे रंग के दस्त और दूध के वमन होते हैं जैसा कि दन्तोद्भेद काल में प्रायः होता है तब उक्त अवस्था में निम्नोल्लिखित योग लाभदायक सिद्ध होते हैं।

पेपीन १ ग्रेन, पल्व, डोवराई (डोवर्स पाउडर) ४ ग्रेन, सोडा बाईकार्ब १० ग्रेन, इसकी १२ मात्रा बनाकर १-१ मात्रा प्रातः सायं सेवन कराऐं। पपीता स्वरस के किञ्चित् कोष्ठमृदुकर प्रभाव के कारण अतिसार की अवस्था में डा० हशिसन Dr. (Hutchison) पेपीन को उसमें उत्तम खयाल करते हैं।

(ख) अम्लाजीर्ण—(Acid Dyspepsia) इस प्रकार के अजीर्ण में पेपीन अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होता है। चूंकि यह क्षारकी विद्यमानता में भी उतना ही उत्तमतापूर्वक प्रभाव प्रगट करता है, आमाशयस्थ अम्लाधिक्यता को न्युट्रलाइज (उदासीन) करने के लिए पर्याप्त परिणाम में बाइकार्बोनेट ऑफ सोडा देना चाहिये। यह अपने ऐण्टिसेप्टिक (पचननिवारक) प्रभाव द्वारा आध्मानजन्य अस्वभाविक संधान (अभिषव) को रोकता है। उक्त अवस्था में निम्न योग उत्तम प्रमाणित होते है।

१-पेपीन २ ग्रेन, सैकरम् लैक्टेट (दुग्धोज) ५ ग्रेन। इसकी एक मात्रा बनाकर भोजन के एक घंटा पश्चात् निम्न मिश्रण के साथ सेवन करें।

मिश्रण—सोडा बाईकार्ब १५ ग्रेन, ग्लीसरीन, एसिड कार्बोलिक मिक्सचर ८, स्पिरिट एमोनिया ऐरोम्युटिक मिक्सचर २०, जल १ आउंस इसको भोजन करने के एक घंटा पश्चात् सेवन करें। इसको भोजन के साथ सेवन करने से पेपीन की उससे न्यूनतर मात्रा भी वही प्रभाव प्रगट करेगी।

डांक्टर हचिसन—(Dr. Hutchison) अजीर्णावस्था में अण्डखरबूजा के शुष्क रस को अधिक उत्तम ख्याल करते हैं। जैसे—

अण्डखरबूजा का शुष्क रस १२ ग्रेन, पल्व इपीकाक (इपीकेक्वाना चूर्ण) १२ ग्रेन, पल्व रहीआई (रेवन्दचीनी का चूर्ण) ३ ग्रेन, ग्लीसरीन (मधुरीन) आवश्यकतानुसार इसे चाहे चूर्ण रूप में रखें अथवा इसकी १२ बटिकाएँ प्रस्तुत करें।

इसको वे भोजनोपरांत सेवन करने का आदेश करते है। शुष्क पपीता स्वरस को पसन्द करने का कारण यह है कि उसका औपयोगिक प्रभाव किंचित् कोष्ठमृदुकर है और यह अधिकतर संतोषप्रद है। जैसा कि प्रागुक्त मात्रा (प्रत्येक बटी में १ ग्रेन) में सेवन करने से यह अत्यन्त मृदुभेदक प्रभाव करता है। और किसी भी भांति रोगी को विरेक नहीं कराता। उक्त डांक्टर महोदय के वर्णनानुसार पपीता वृक्ष से चतुरता पूर्वक निकाल कर शुष्क किया रस या पपीता दुग्ध पेपीन के सहित अपने सयोगी अवयवों की उपस्थिति में अनेक दशाओं में स्वयं प्रभावात्मक रूप पेपीन की अपेक्षा श्रेष्ठतर प्रमाणित होता है। भोजनोपरान्त होने वाली बेचैनी को वास्तविक उदरशूल में परिणत होजाने पर आपने पपीता को अफीम के साथ निम्न प्रकार योजित किया :—

पपीता स्वरस १२ ग्रेन, अहिफेन चूर्ण ३ ग्रेन ग्लीसरीन आवश्यकतानुसार। इसको चूर्ण रूप में रक्खें अथवा इसकी बटिकाएँ प्रस्तुत करें प्रति भोजनोपरान्त १ बटी सेवन करें।

(३) कण्ठरोहिणी तथा स्वरघ्नीकास—(Diphtheria and Croup)—

उक्त रोगके निवारणार्थ पेपीन का स्थानिक प्रयोग लाभदायक होता है। इस हेतु उसका तीक्ष्ण घोल तैयार करना चाहिये। इसको उक्त स्थल पर लगाना तथा नासिका एवं मुख में ५–५ मिनट के अन्तर से टपकाना चाहिए। इसके उपयोग से डिफ्थीरियाजन्य मिथ्याकला घुलजाती है। उग्र अवस्थाओं में इससे पहिले ही दिन लाभ अनुभव होता है, जिससे ज्वर लुप्तप्राय हो जाता तथा नाड़ी स्वास्थ्यावस्था पर आजाती है। सर्वदा इसका ताजा घोल प्रस्तुत करना चाहिये। अथवा पेपेयोटीन १ भाग, जल ४ भाग, तथा ग्लेसरीन ४ भाग, आवश्यकतानुसार इसे घंटा दो दो घंटा पश्चात् लगाएँ।

(४) वृक्कशूल—(Nepthritic colic) वृक्काश्मरी में १ से ३ ग्रेन पेपीन को बटी रूप में सेवन करने से लाभ प्रतीत होता है। डां० ई० एच० फेन्विक।

(५) कृमिघ्न—(Antheimintic)—केचुआ और कद्दूदाने के लिये भी इसका पेपीन औषधीय उपयोग किया गया. इसके पाचक प्रभाव के कारण इससे कभी कभी लाभ प्रदर्शित हुआ। ब्रिट० मे० मे०।

अण्डखरबूजा के दूधिया रस को शहद के साथ मिलाकर देने से और उसके पश्चात् एक मात्रा एरण्ड तैल का व्यवहार कराने से केचुओं में अत्यन्त लाभ होता है। एक पोडशवर्षीया कन्या जो कद्दूदान (Tænia Solium) के कारण अत्यत पीड़ित थी एवं उसके उदर में तीव्र शूल हो रहा था, उसको डाक्टर हचिसन (Hutchison) ने शुष्क पपीता स्वरस ३ ग्रेन में शूलशमनार्थ ४ ग्रेन डोवर्स पाउडर सम्मिलित कर सेवन कराया। इससे कद्दूदाना टुकड़ा २ होकर मल के साथ निकल आया तथा रोगिणी के समस्त विकार जाते रहे एवम् उसको अत्यन्त लाभ प्रतीत हुआ।

(६) स्तन्यजनक तथा गर्भशातक—आंतरिक रूप से उपयोग करने अथवा स्थानिक रूप से लगाने से यह सशक्त स्तन्यजनक प्रभाव करता है। ब्रिट० मे० मे०। पी० बा० एम०। गर्भवती स्त्री को उपयोग कराने से इसका गर्भशातक प्रभाव होता है।

जिह्वा तथा कंठरोग—श्वीमर (Schimmer) महोदय ने जिह्वा की कर्कशता (जिह्वा

के फटने) में इसके घोल (१० में १) का सफलतापूर्ण उपयोग किया हिट० मे० मे० । जिह्वा की कर्कशता तथा जिह्वा और कंठ की क्षतज अवस्था में वह चाहे वह औपदंशिक हो या अन्य १ औंस ग्लीसरीन में १० से २० ग्रेन पेपीन का घोल बनाकर उसमें वेदना हरणार्थ किञ्चित कोकीन सम्मिलितकर इसको ब्रुशसे लगानेसे अत्यन्त लाभदायक प्रभाव होता है । औपदंशिक तथा क्षतज मुख वा कंठमें मि० इ० एच० फेन्विक उक्त प्रयोग के स्थान में पेपीन $\frac{१}{५}$ ग्रेन तथा कोकीन $\frac{१}{१६}$ ग्रेन इनके द्वारा निर्मित टिकिया के उपयोग की असीम प्रशंसा करते हैं । पेपीन के द्वारा औपदंशीय घव्वे तत्काल लुप्त होते हैं । और कोकीन के प्रभाव से निगलने में वेदना का बोध नहीं होता एवं प्रदाहित श्लैष्मिक कला को शांति मिलती है ।

चिकित्सक लोग जब ऐसे रोगी की परीक्षा करते जाते हैं जिसमें कंठ को श्लैष्मिक कला के संक्रमण का भय होता है तब वे उक्त टिकिया को रक्षक रूप से साथ ले जाते हैं ।

(८) त्वक रोग—पुरातन कंद (Eczema) विशेषतः हस्त पादस्थ, विचर्चिका (Psoriasis) हाथ की हथेली की प्रबाहुल्य अवस्था, कदर या घट्टा (corn), मशक (Wart) तथा त्वक्काठिन्य में उसको प्रथम जल व साबुनसे प्रक्षालित कर दिनमें २ बार निम्नलिखित घोल के लगाने से लाभ होता है जैसे पेपीन १२ ग्रेन, टूक्षण (सुहागा) ५ ग्रेन तथा जल ५ ड्राम यथा विधि घोल प्रस्तुत करें ।

इसके ताजे दुग्ध को दिन में दो तीनवार दद्रु पर लगाने से लाभ होता है ।

(९) कर्ण स्राव—मध्यकर्ण के पुरातन पूयस्राव में पेपीन अभी हाल ही में लाभदायक पाया गया । आधे आउंस पेपीन घोल (५ ०|०) में ५ ग्रेन सोडा बाइकार्ब मिला लेने से यह और उत्तम होता है ।

(१०) प्रैवेयी ग्रन्थि, दुग्ध ग्रन्थि और कक्षीय ग्रन्थि विषयक शोथों प्रभृति के लय करने के लिये पेपीन का स्थानिक उपयोग होता है ।

अण्डगः—सं० पु० Wheat (Triticum sativum, *Linn*) गोधूम गेहूँ । वै० श० ।

अण्डगजः—सं० पु० (Cassia Tora, *Linn*) चँकबड़, चक्रमर्द चुप हिं० । रा० नि० व० ४

अण्डगा धमनियाँ—हिं० संज्ञा स्त्री० (व० ब०) Spermatic Arteries अण्ड कोष को रक्त ले जाने वाली नलियां ।

अण्डजः—सं० पु०
अण्डज—हिं० संज्ञा पु० } (१) अण्डे से उत्पन्न होने वाले जीव, अण्डे जिसकी उत्पत्ति हो, यथा सर्प, मत्स्य, पक्षी और छिपकली प्रभृति ये ४प्रकार के जीवों में एक है । ओवीपेरस बींग Oviparous being इं० । हिं० इ० डि० । (२) मत्स्य (A Fish) । (३) पक्षी (A bird) भा० पू० २ भा० । (४) A snake सर्प, साँप ।

अण्डजा-सं० स्त्री०
अण्डजा-हिं० सं० स्त्री०— } (१) गिरगिट, शरट फ० । शेमेलिअन (A chemeleon) इं० । हि० । (२) सर्प—हिं० । सर्पेंट (A serpent) —इ० । (३) मत्स्य हिं० । फिश (A fish) इं० । (४) पक्षी हिं० । बर्ड (A bird) इं० । मे० जत्रिकं । (५) (Musk) मृगनाभि, कस्तूरिका । वा० हेमा०

अण्डधारक रज्जु—सं० पु० (Spermatic cord) मआलीकुल् खुश् यह, हब्ल मन्वी, हब्लुल् मनी-अ० । अण्डकोष के ऊपर के भाग को टटोलने पर उसमें एक रस्सी या डोरी जैसी चीज मालूम होगी उस डोरी को अण्डधारक रज्जु कहते हैं यह वस्तुतः धमनी शिरा वात तन्तु और शुक्र प्रणाली का एक संघात है जिस पर श्लैष्मिक कला का एक वेष्टन चढ़ा रहता है । इसी से अण्डकोष के भीतर अण्ड लटका रहता है ।

अण्डधारक रज्जु हिं० संज्ञा स्त्री० देखो अण्डधारक रज्जुः ।

अण्डपर्णः—सं० पु० मलाण्ड तरु । See-malan-bah अ्रि०

अण्डपेशी—सं० स्त्री० कोष (Sac, cyst) । (२) (Testicle) मुष्क' अण्ड शुक्रग्रन्थि हे०च ० ।

अण्डप्रदाह—हिं० सं० पु० अंड की सूजन (Orchitis)

अण्ट सोनिया रोहित का—ले० (Amoora rohituka, W' & A) रोहिना' रोहेड़ा रोहितक, तिक्तराज हिं० । देखो—रोहितक ।

अण्डलाल—हिं० संज्ञा पु० अण्डे की सुफेदी, अण्डोदक The white of the egg (Albumen)

अण्डवर्धनं—सं० क्लो० अण्डवृद्धि—हिं० सज्ञा स्त्री० (Swelling of the scrotum) एक रोग जिसमें अण्डकोष वा फ़ोता फूलकर बहुत बढ़ जाता है । फ़ोते का बढ़ना देखो—अन्त्रवृद्धि ।

अण्ड वहा नाली—हिं० सज्ञा स्त्री० (Fallopian tube) रजः कोष (डिम्ब) लाने वाली जो मासिक धर्म के बाद अण्ड (डिम्ब) गर्भाशय को लाती है ।

अण्डवेस्टः—सं० पु० (Scrotum Tunica albuginea testes) अण्डकोष ।

अण्डश्वेतक—हिं० पु० अल्ब्युमेन (Albumen) अण्डलाल । जुलाल अ० ।

अण्ड सत्व—हिं० सज्ञा पु० मुष्कीन, मुष्कसत्व, मुष्क रस, शुक्रीन, शुक्रकीट, सत्व, उपाण्ड सत्व टेस्टिक्यूलर एक्सट्रैक्ट (Testicular extract ,टेस्टिस सक्का (Testes sicca) टेस्टिक्युलीन (Testiculin) आँर्चीडीन (orchidin) स्पर्मीन (Spermin) डिडीमीन (Didymin) इ० । जुत्फीन या जौहर मन्नी खुस्यान या जौहर, खुस्यह् । जौहर खुम्यह् फौकानी अ०, फा० ।

नोट—जैसा कि उपर्युक्त नामों से प्रगट है, यह सम्पूर्ण औषधियां पुरुष के उत्पादक अवयवों द्वारा बनाई जाती हैं ।

रासायनिक लक्षण तथा परीक्षा—पोहल (Poehl) का निर्माण, विभिन्न जीवधारियों विशेषकर सांड (bull) की शुक्रग्रन्थि द्वारा निर्मित रासायनिक पदार्थ का जो ब्राउन सीक्वार्ड के इमल्शन का प्राणिवात्मक तत्व है दो प्रतिशत का कीटरहित घोल है यह रासायनिक संघटन दृष्टि से पायपेराजीन (Piperazine) का सहधर्मी है । शुक्रीन (Spermin) के हायड्रो, क्लोराइड (उज्जहरिद) और फ़ास्फेट (स्फूरेत) भी उपयोग में आ चुके हैं । परन्तु पोहल (Poehl) का दो प्रतिशत का विलेय घोल सम्पूर्ण कार्यों के लिये सर्वश्रेष्ठ है ग्रन्थियों द्वारा निर्मित शुष्क अण्डीय पदार्थ वा सत्व ५-५ ग्रेन (२॥ रत्ती) की टिकियाओं (Tabloids) के रूपमें मुष्कीन (आर्चीडीन टेस्टिक्यूलीन आर्चीटीन) और उपाण्डीन (Didymin) प्रभृति नाम से उपयोग में लाये गये हैं । एक द्रव भी प्राप्य है जो एकप्रकारका ग्लीसरीन एक्सट्रैक्ट है और जिसे १५ से ३० मिनिम् (बुन्द) की मात्रा में मुख अथवा त्वक्स्थ अन्तःक्षेप द्वारा देते हैं ।

शुक्रीनकी मुख्य मुख्य प्रतिक्रियायें—शुक्रीन (Spermin) में स्वयं विशेष शुक्रीय गंध नहीं होती तथापि इसे धात्विक मग्न (Metallic magnesium) के साथ मिलाने पर उससे शुक्रवत् गंध का बोध होता है । मिश्रण को उत्ताप पहुँचाने पर शुक्रीय गंध अमोनिया में परिवर्तित हो जाती है शुक्रीन (spermin) घोल में न तो आयोडाइड आंफ पोटाशियम् (पांशु नैलिद) और न एसीटेड आफ लेड (शीसा भस्म) ही से तलस्थायीत्व उत्पन्न हो सकता है । हाइपोब्रोमाइड आफ सोडियम् शुक्रीन से नत्रजन भिन्न नहीं कर सकता गोल्ड क्लोराइड (स्वर्ण हरिद) और प्लैटिनिक क्लोराइड शुक्रीन के साथ तलस्थायी हो जाते हैं ।

उत्ताप पहुँचाने पर शुष्क शुक्रीन से श्वेत वाष्प उद्भूत होता है।

इतिहास—अण्ड सत्व का उपयोग नया नहीं, प्रत्युत अति प्राचीन है। हाँ, निर्माण क्रम में चाहे भले ही कुछ भेद हो। वाग्भट्ट महोदय स्वलिखित 'अष्टङ्गहृदय संहिता" में सर्व प्रथम हमारा ध्यान इस ओर आकृष्ट करते हैं, यथा—

वस्ताण्ड सिद्ध पयसि भावितान सकृत्तिलान्।
यः खादेत्ससितान् गच्छेत्सस्त्री शतमपूर्ववत्॥
(वा० उ० ४० अ०)

अर्थ—बकरे के अण्ड को दुग्ध में पकाकर उस दुग्ध की काले तिलों में बार बार भावना दें। इन तिलों को जो मनुष्य शर्करा के साथ सेवन करता है उसमें शत स्त्री सम्भोग की शक्ति बढ़ जाती है, और वह प्रथम समागम का सा सुख अनुभव करता है।

पाश्चात्य अमरीकन डाक्टर ब्राउन सीक्वर्ड (Brown Sequard) महोदय का बहुत काल तक यह विश्वास रहा कि वृद्ध मनुष्यों की निर्बलता के मुख्य दो कारण हैं:—(१) आवयविक परिवर्तन का प्राकृतिक क्रम। (२) शुक्र ग्रन्थियों की शक्ति का क्रमिक ह्रास। उन्होंने विचार किया कि यदि वृद्ध मनुष्य के रक्त में शुक्र का निर्भय अन्तःक्षेप किया जा सके तो सम्भवतः विभिन्न शारीरिक एवं मानसिक शक्तियों की वृद्धि प्रत्यक्ष रूप से प्रदर्शित होने लगेगी। उक्त विचार को ध्यान में रखकर आपने सन् १८७५ ई० में जीवधारियों पर अनेकों प्रयोग किए। परिणामतः प्रयोग क्रम के अनपकारकत्व एवं उन जीवधारियों पर होने वाले उत्तम प्रभाव विषयक उनके सन्देह की निवृत्ति हो गई। उस का निश्चय हो जाने पर उन्होंने स्वयं अपने ऊपर प्रयोग करने का निश्चय किया। अस्तु, थोड़े परिमाण में जल, आण्डीय शिरा का रक्त शुक्र, कुक्कुर या गिनी पिग (Guinea pig) के अण्ड को कुचल कर निकाला हुआ ताजा रस इन चार वस्तुओं को एकत्रित कर आपने इसका स्वगन्तः अन्तः क्षेप किया अधिक से अधिक प्रभाव प्राप्त करने के अभिप्राय से आपने अन्तः क्षेप भर में अत्यल्पजल का उपयोग किया प्रागुक्त अन्तिम के तीनों पदार्थों में आपने उनके द्रव्यमान से तिगुने या चौगुने से अधिक परिस्रुत जल का उपयोग नहीं किया, तदनन्तर उनका कुचलकर फिल्टर पेपर (पोतनपत्र) द्वारा छान लिया। प्रत्येक अन्तःक्षेप में उन्होंने १ घन शतांशमीटर छाने हुए द्रव का उपयोग किया। पास्चर्स फिल्टर द्वारा छाने हुए द्रव का १५ मई से ४ जून तक आपने १० अन्तःक्षेप किए, जिनमें से २ बाहु में और शेष समग्र अधो शाखा में।

परिणाम निम्न प्रकार हुए

प्रथम स्वगन्तः अन्तःक्षेप तथा दो और क्रमानुगत अन्तःक्षेपों के पश्चात् आप में एक स्वाभाविक परिवर्तन उपस्थित हुआ और उनमें वह सम्पूर्ण शक्ति जो बहुत वर्षों पहिले थी आगई। विस्तीर्ण प्रयोगशाला विषयक कार्य कठिनता से उन्हें श्रान्त कर सकते थे। वे कई घण्टे तक खड़े होकर प्रयोग कर सकते थे और उन्हें बैठने की कोई आवश्यकता नहीं प्रतीत होती थी।

सक्षेप यह कि उन्होंने इतनी उन्नति की कि वे इतना अधिक लिखने तथा कार्य करने के योग्य हो गए जो आज २० साल से भी अधिक काल तक में कभी न हुए थे, उन्हें मालूम हुआ कि प्रथम अन्तःक्षेप से १० दिवस पूर्व मूत्र-धार की जो औसत लम्बाई थी वह पश्चात् के २० दिवस की मूत्र-धार की लम्बाई से कम से कम चौथाई न्यून थी। अन्य क्रियाओं की अपेक्षा मल विसर्जन क्रिया में उन्होंने अत्यधिक उन्नति की।

इन्द्रिय व्यापारिक क्रिया—उपर्युक्त प्रयोगों से यह बात सिद्ध होती है कि आण्डीय द्रव के अन्तःक्षेप का हृदय एवं रक्त परिभ्रमण पर उत्तेजक प्रभाव होता है, सर्व शरीर की पुष्टि करता, वातकेन्द्रीय क्रिया शक्ति पर आधारीभूत सम्पूर्ण कार्यों का विशेष रूप से सुधार करता, बस्ति पर सुषुम्णाकाण्ड की शक्ति की विशेष

अण्डधारक रज्जु-हिं० संज्ञा स्त्री० देखो अण्डधारक रज्जुः ।

अण्डपर्णः-सं० पु० मलाण्ड तरु । See-malan-bah अफ्रि०

अण्डपेशी-सं० स्त्री० कोष (Sac, cyst) । (२) (Testicle) मुष्क' अण्ड शुक्रग्रन्थि हे०च० ।

अण्डप्रदाह-हिं० सं० पु० अंड की सूजन (Orchitis)

अण्ट सोनिया रोहित का-ले० (Amoora rohituka, W' & A) रोहिना' रोहेड़ा रोहितक, तिक्तराज हिं० । देखो-रोहितक ।

अण्डनाल-हिं० संज्ञा पु० अण्डे की सुफेदी, अण्डोदक The white of the egg (Albumen)

अण्डवर्धनं-सं० क्ली०
अण्डवृद्धि- हिं० संज्ञा स्त्री० } (Swelling of the scrotum) एक रोग जिसमें अंडकोष वा फ़ोता फूलकर बहुत बढ़ जाता है । फ़ोते का बढ़ना देखो—अन्त्रवृद्धि ।

अण्डवहा नाली-हिं० संज्ञा स्त्री० (Fallopian tube) रजः कोष (डिम्ब) लाने वाली जो मासिक धर्म के बाद अण्ड (डिम्ब) गर्भाशय को लाती है ।

अण्डवेस्टः-सं० पु० (Scrotum Tunica albuginea testes) अण्डकोष ।

अण्डश्वेतक-हिं० पु० अल्ब्युमेन (Albumen) अण्डलाल । जुलाल अ० ।

अण्ड सत्व-हिं० संज्ञा पु० मुष्कीन, मुष्कसत्व, मुष्क रस, शुक्रीन, शुक्रकीट, सत्व, उपाण्ड सत्व टेस्टिक्यूलर एक्सट्रैक्ट (Testicular extract ,टेस्टिस सिक्का (Testes sicca) टेस्टिक्युलीन (Testiculin) ऑर्चीडीन (orchidin) स्पर्मीन (Spermin) डिडीमीन (Didymin) इ० । जुत्फीन या जौहर मनी खुस्यान या जौहर, खुस्यह् । जौहर खुम्यह् फौकानी अ०, फा० ।

नोट—जैसा कि उपर्युक्त नामों से प्रगट है, यह सम्पूर्ण औषधियां पुरुष के उत्पादक अवयवों द्वारा बनाई जाती हैं ।

रासायनिक लक्षण तथा परीक्षा—पोहल (Poehl) का निर्माण, विभिन्न जीवधारियों विशेषकर सांड (bull) की शुक्रग्रन्थि द्वारा निर्मित रासायनिक पदार्थ का जो ब्राउन सीक्वार्ड के इमल्शन का प्राभावात्मक तत्व है दो प्रतिशत का कीटरहित घोल है यह रासायनिक संघटन दृष्टि से पायपेराजीन (Piperazine) का सधर्मी है । शुक्रीन (Spermin) के हाइड्रो, क्लोराइड (उज्जहरिद) और फ़ास्फेट (स्फूरेत) भी उपयोग में आ चुके हैं । परन्तु पोहल (Poehl) का दो प्रतिशत का विलेय घोल सम्पूर्ण कार्यों के लिये सर्वश्रेष्ठ है ग्रन्थियों द्वारा निर्मित शुष्क अण्डीय पदार्थ वा सत्व ५-५ ग्रेन (२॥ रत्ती) की टिकियाओं (Tabloids) के रूपमें मुष्कीन (आर्चीडीन टेस्टिक्यूलीन आर्चीटीन) और उपाण्डीन (Didymin) प्रभृति नाम से उपयोग में लाये गये हैं । एक द्रव भी प्राप्य है जो एकप्रकारका ग्लीसरीन एक्सट्रैक्ट है और जिसे १५ से ३० मिनिम् (बुन्द) की मात्रा में मुख अथवा त्वक्स्थ अन्तःक्षेप द्वारा देते हैं ।

शुक्रीनकी मुख्य मुख्य प्रतिक्रियायें—शुक्रीन (Spermin) में स्वयं विशेष शुक्रीय गंध नहीं होती तथापि इसे धात्विक मग्न (Metallic magnesium) के साथ मिलाने पर इससे शुक्रवत् गंध का बोध होता है । मिश्रण को उत्ताप पहुँचाने पर शुक्रीय गंध अमोनिया में परिवर्तित हो जाती है शुक्रीन (spermin) घोल में न तो आयोडाइड आफ पोटाशियम् (पांशु नैलिद) और न एसीटेट आफ लेड (शीसा भस्म) ही से तलस्थायी उत्पन्न हो सकता है । हाइपोब्रोमाइड आफ सोडियम् शुक्रीन से नत्रजन भिन्न नहीं कर सकता गोल्ड क्लोराइड (स्वर्ण हरिद) और प्लैटिनिक क्लोराइड शुक्रीन के साथ तलस्थायी हो जाते हैं ।

उत्ताप पहुँचाने पर शुष्क शुक्रीन से श्वेत वाष्प उद्भूत होता है।

इतिहास—अण्ड सत्व का उपयोग नया नहीं, प्रत्युत अति प्राचीन है। हाँ, निर्माण क्रम में चाहे भले ही कुछ भेद हो। वाग्भट्ट महोदय स्वलिखित 'अष्टङ्गहृदय संहिता" में सर्व प्रथम हमारा ध्यान इस ओर आकृष्ट करते हैं, यथा—

वस्ताण्ड सिद्ध पयसि भावितान सकृत्तिलान्।
यः खादेत्ससितान् गच्छेत्सस्त्री शतमपूर्ववत्॥
(वा० उ० ४० अ०)

अर्थ—बकरे के अण्ड को दुग्ध में पकाकर उस दुग्ध की काले तिलों में बार बार भावना दें। इन तिलों को जो मनुष्य शर्करा के साथ सेवन करता है उसमें शत स्त्री सम्भोग की शक्ति बढ़ जाती है, और वह प्रथम समागम का सा सुख अनुभव करता है।

पाश्चात्य अमरीकन डाक्टर ब्राउन सीक्वर्ड (Brown Sequard) महोदय का बहुत काल तक यह विश्वास रहा कि वृद्ध मनुष्यों की निर्बलता के मुख्य दो कारण हैं:—(१) आवयविक परिवर्तन का प्राकृतिक क्रम। (२) शुक्र ग्रन्थियों की शक्ति का क्रमिक ह्रास। उन्होंने विचार किया कि यदि वृद्ध मनुष्य के रक्त में शुक्र का निर्भय अन्तःक्षेप किया जा सके तो सम्भवतः विभिन्न शारीरिक एवं मानसिक शक्तियों की वृद्धि प्रत्यक्ष रूप से प्रदर्शित होने लगेगी। उक्त विचार को ध्यान में रखकर आपने सन् १८७५ ई० में जीवधारियों पर अनेकों प्रयोग किए। परिणामतः प्रयोग क्रम के अनपकारकत्व एवं उन जीवधारियों पर होने वाले उत्तम प्रभाव विषयक उनके सन्देह की निवृत्ति हो गई। उस का निश्चय हो जाने पर उन्होंने स्वयं अपने ऊपर प्रयोग करने का निश्चय किया। अस्तु, थोड़े परिमाण में जल, आण्डीय शिरा का रक्त शुक्र, कुक्कुर या गिनी पिग (Guinea pig) के अण्ड को कुचल कर निकाला हुआ ताजा रस इन चार वस्तुओं को एकत्रित कर आपने इसका त्वगन्तः अन्तः क्षेप किया अधिक से अधिक प्रभाव प्राप्त करने के अभिप्राय से आपने अन्तः क्षेप भर में अत्यल्पजल का उपयोग किया प्रागुक्त अन्तिम के तीनों पदार्थों में आपने उनके द्रव्यमान से तिगुने या चौगुने से अधिक परिस्रुत जल का उपयोग नहीं किया, तदनन्तर उनका कुचलकर फिल्टर पेपर (पोतनपत्र) द्वारा छान लिया। प्रत्येक अन्तःक्षेप में उन्होंने १ घन शतांशमीटर छाने हुए द्रव का उपयोग किया। पास्चर्स फिल्टर द्वारा छाने हुए द्रव का १५ मई से ४ जून तक आपने १० अन्तःक्षेप किए, जिनमें से २ बाहु में और शेष समग्र अधो शाखा में।

परिणाम निम्न प्रकार हुए

प्रथम त्वगन्तः अन्तःक्षेप तथा दो और क्रमानुगत अन्तःक्षेपों के पश्चात् आप में एक स्वाभाविक परिवर्तन उपस्थित हुआ और उनमें वह सम्पूर्ण शक्ति जो बहुत वर्षों पहिले थी आगई। विस्तीर्ण प्रयोगशाला विषयक कार्य कठिनता से उन्हें श्रान्त कर सकते थे। वे कई घण्टे तक खड़े होकर प्रयोग कर सकते थे और उन्हें बैठने की कोई आवश्यकता नहीं प्रतीत होती थी।

सक्षेप यह कि उन्होंने इतनी उन्नति की कि वे इतना अधिक लिखने तथा कार्य करने के योग्य हो गए जो आज २० साल से भी अधिक काल तक में कभी न हुए थे, उन्हें मालूम हुआ कि प्रथम अन्तःक्षेप से १० दिवस पूर्व मूत्र-धार की जो औसत लम्बाई थी वह पश्चात् के २० दिवस की मूत्र-धार की लम्बाई से कम से कम चौथाई न्यून थी। अन्य क्रियाओं की अपेक्षा मल विसर्जन क्रिया में उन्होंने अत्यधिक उन्नति की।

इन्द्रिय व्यापारिक क्रिया—उपर्युक्त प्रयोगों से यह बात सिद्ध होती है कि आण्डीय द्रव के अन्तःक्षेप का हृदय एवं रक्त परिभ्रमण पर उत्तेजक प्रभाव होता है, सर्व शरीर की पुष्टि करता, वातकेन्द्रीय क्रिया शक्ति पर आधारीभूत सम्पूर्ण कार्यों का विशेष रूप से सुधार करता, बस्ति पर सुषुम्नाकाण्ड की शक्ति को विशेष

वृद्धि करता और आन्त्र पर शैथिल्यजनक प्रभाव उत्पन्न करता है।

औषधीय उपयोग—अण्ड द्वारा स्रावित (Secreted) शुक्र में ऐसे पदार्थ होते हैं जो शोषण क्रिया द्वारा रक्त में प्रवेश होकर वात संस्थान तथा अन्य भागों को शक्ति प्रदान करने में अपना सब से आवश्यक उपयोग रखते हैं। इस पदार्थ (वा पदार्थों) में महान गतिजनक शक्ति है जिसके लिए रक्त मुष्क का ऋणी है। यह बात इस घटने से प्रमाणित होती है कि सार्वांगिक निर्बलता तथा मानसिक वा शारीरिक स्फूर्ति के अभाव ही नपुंसक के स्वभाव कहलाते हैं। और इस बात से भी कि अप्राकृतिक वा हस्तमैथुन द्वारा मनुष्य के शरीर वा मन (विशेष कर शुक्र ग्रन्थियों के अपनी पूर्ण शक्ति प्राप्त करने से पूर्व या अधिक अवस्था के कारण जब शक्ति का ह्रास हो रहा हो उस समय) कितने विकृत हो जाते हैं इसके अतिरिक्त यह भली भांति ज्ञात है कि शुक्रक्षय चाहे वह किसी कारण से उत्पन्न हुआ हो शारीरिक वा मानसिक निर्बलता उत्पन्न करता है। (डॉ० ब्राउन सीक्वार्ड)

अण्ड सत्व के उपर्युक्त इन्द्रिय व्यापारिककार्य एवं गुण से यह सिद्ध है कि यह रोगी की सामान्य दशा को स्पष्ट रूप से सुधारता है। इसके सिवा वात संस्थान पर इसका उत्तेजक और बल्यप्रभाव अन्य सब प्रभावों की अपेक्षा अधिकतर होता है। यह विबन्ध को दूर करता तथा मूत्र विरेचक है। इन अन्तःक्षेपों से सिवा स्थानिक किञ्चित् सूक्ष्म अरुण समयक वेदना के कोई और अप्रिय सहायक सार्वांगिक वा स्थानिक दृश्य उपस्थित नहीं होता। इनसे स्थानिक प्रदाह वा पूय उत्पन्न नहीं होता। पेपर फिल्टर के स्थान में पास्चर्स फिल्टर से उक्त तरल को छानकर व्यवहार में लाने से यह वेदनाएँ एवं अन्य कुप्रभाव भी किसी भाँति कम प्रतीत होते हैं। (डॉ० पॉटोज़्की)

पॉह्ल्स स्टेरिलाइज़्ड सोलूशन का १५ मिनिम (बूंद) की मात्रा में रक्ताल्पता, वातनैर्बल्य, उन्माद (पागलपन), शीघ्रपतन, यक्ष्मा चाल का लड़खड़ाना (Ataxy), विचर्चिका (Psoriasis), बहुमूत्र रोग और बहुसंख्यक रोगों में अन्तःक्षेप करते हैं। दैनिक अन्तःक्षेप के हिसाब से १२ वा १४ दिवस के चिकित्सा क्रम में प्रागुक्त सम्पूर्ण रोगों के लाभ के प्रज्वलित वर्णन प्रकाशित हुए हैं और यह हृच्छूल तथा अन्य हार्दिक वातविकारों (Cardiac neuroses) की मूल्यवान औषध कही गई है। इसका शरीर परिवर्तन क्रम अर्थात् अपवर्तन (Metabolism) पर प्रगट प्रभाव होता है। (ह्विट्ला)

इन्हें कामोद्दीपन रूप से व्यवहार करते हैं तथा वातनैर्बल्य, लड़खड़ानी चाल और एक्स आफ थैल्मिक गाइटर में वर्तते हैं।

अण्डसित—हिं० वि० (Albumaneous) अण्डश्वेतकीय, अडलाल सम्बन्धी।

अण्डसित पदार्थ—हिं० संज्ञा पु० (Albumaneous matter) अण्डश्वेतकीय वस्तु।

अण्डसू—सं० त्रि०, हिं० वि० (Oviparous) अण्डज।

अण्डस्कन्दः—सं० पु० घोड़े के अण्ड में स्कन्द सदृश एक रोग होता है। जयदत्त ५० अ०।

अण्डहस्ती—सं० पु० चँकवड़, चक्रमर्दक्षुप (Cassia Tora, *Linn*) रा० नि० व० ५।

अण्डहानिकर—हिं० वि०, मुज़िर्रात् उन्स्यैन-अ०। अण्ड को हानि पहुँचाने वाले। संज्ञा पु० वे द्रव्य जो अण्ड को हानि पहुँचाएँ। वे निम्न हैं।

इक्लीलुल्—मलिक, बोज़ीदान, तुख्म खयार (खीरा के बीज), अतसी, जावशीर, हुल्बह (मेथी) और फर्फ्यून।

अण्डा—हिं संज्ञा पु० पक्षी आदि के उत्पन्न होने का स्थान। एग (Egg)—इं०। गुण-धर्म आदि के लिए देखो—कुक्कुट।

अण्डाकर्षणम्—सं० क्ली० (Castration) बधिया करना।

अण्डाकार—हिं० संज्ञा पु०
अण्डाकृति—हिं० संज्ञा स्त्री० } वि० [सं०]

(Egg-shaped, oval, Ovoid, elli-

ptical) ऐसा वृत्त जिसका एक अक्ष दूसरे की अपेक्षा लम्बा हो, अण्डा की शकल का, अण्डा की तरह। उस परिधि के आकार का जो अंडे की लम्बाई के चारों ओर खींचने से बने। लम्बाई लिए हुए गोल, अण्डे के आकार का। वैजाबी।

अण्डाकर खात–हिं० संज्ञा पु० (Fossa ovalis) अण्डे की शकल का गढ़ा। हुफ़रह् वैजाबियह्–अ०।

अण्डाकृति–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] अण्डे का आकार, अण्डे की शकल। वि० अंडे के आकार का। अण्डद्रव। अण्डाकार।

अण्डाली–सं० स्त्री० भुई आमला, भूम्यामलकी (Phyllanthus niruri *Linn*)

अण्डालुः–सं० पु० (A fish) मत्स्य, मछली। श० च०।

अण्डिका–सं० स्त्री० चार जौ के बराबर का एक माप विशेष यवचतुष्टय परिमाण। च०।

अण्डिनी–सं० स्त्री० सन्निपातिक योनि रोग विशेष। लक्षण—स्थूल मेढ़ू वाले पुरुष से ग्रहण की हुई तरुणी (छोटी अवस्था वाली स्त्री) की योनि अण्डिनी अर्थात् अण्डाकृति (कहीं कहीं फलिनी पाठ आया है) हो जाती है। सु० चि०। स्त्रियों का एक योनि रोग जिसमें कुछ मांस बढ़कर बाहर निकल आता है। इसे योनिकन्द रोग भी कहते हैं

अण्डी–हिं० संज्ञा स्त्री० (१) रेंडी, एरण्डबीज–हिं० Ricinus communis, *Linn* (Seeds of Castor oil plant)। (२) गंधमार्जारी।

अण्डीका तेल–हिं० संज्ञा पु० एरण्डतैल (Oleum ricini) देखो—एरण्डः।

अण्डीमाल्लेय्य–मल०। सन्ध्या राग–सं०। गुलशब्बो, गुलचेरी–हिं०। रजनी गन्धा–ब०। गुलसबो–पं०, हिं०। पॉलिएन्थस ट्युबरोसा (polyanthus tuberosa, *Linn*) ले०। इं० मे० मे०।

अण्डीरः–सं० पु० पुरुष, युवा मनुष्य (A full-grown man) मे० रत्निकं।

अण्डीरा इनर्मिस–ले०। जिओफ्रोया इनर्मिस (Geoffroya Inermis)। कैबेज ट्री आफ ट्रापिकल अफ्रीका (Cabbage tree of Tropical Africa)–इं०। वर्ग=वण्बूरः, उपवर्ग=पैपिलिओनेसीई *N. O. Leguminosae Sub-Order Papyilionaceae*

उत्पत्ति स्थान—वेष्ट इंडीज़ (विशेषकर जमेइका)।

प्रयोगांश—त्वक्।

औषध-निर्माण—(१) चूर्ण की हुई त्वचा २०–३० ग्रेन (१०–१५ रत्ती) कृमिघ्न रूप से ३०–४० ग्रेन (१५–२० रत्ती) विरेचक रूप से, (२) टिंचर (३० से ६० मिनिम (बूंद)। (३) तरल सत्व १० से ४० मिनिम (बूँद)। (४) घन सत्व ३ ग्रेन (१॥ रत्ती)।

प्रभाव तथा उपयोग—कैबेज वृक्ष त्वक् (Cabbage tree bark) नामक त्वचा में जिसका व्यापारिक नाम कृमित्वक् (Worm bark) भी है, कृमिघ्न, ज्वरघ्न, और मेदनाशक गुण है और निम्बुकाम्ल (Citric Acid) के साथ वह स्थौल्य रोग में अधिक उपयोग की जाती है। अधिक मात्रा में यह वामक, विरेचक और मादक है तथा इसकी इससे भी अधिक मात्रा विषैली है। (पी० वी० एम०)।

अण्डेल–, अण्डैल– —हिं० वि० [अण्डा] जिसके पेट में अंडे हो, अण्डा युक्त, अण्डे वाली। संज्ञा स्त्री० वह मछली जिसके पेट में अंडे हो।

अण्डोदकः–सं० पु० अंडलाल, अंड श्वेतक। The white of an egg (Albumen),

अण्डोत्थापिका प्रतिक्रिया–हिं० संज्ञा स्त्री० (Cremastric reflex) जाँघ के अंतरीय भाग को खुजाने से यह उत्पन्न की जाती है। इससे अंड ऊपर को उठता है।

अण्डोली–हिं० संज्ञा स्त्री० रेंडी, एरण्ड बीज। Ricinus communis, *Linn*) (Seeds of)। देखो—एरण्डः।

अण्डौआ-हिं० संज्ञा पु० अरण्ड, एरण्ड । (Ricinus comm unis, *Linn*)

अण्णाशुप्पू-ता० अनासफल-हिं० । वादियाने खताई फा०, अ० । (1llicium anisatum, *Linn*) स० फा० इं० ।

अण्वस्थि-सं० क्ली० मणि बन्ध आदि में स्थित एक सूक्ष्मास्थि विशेष । सु० शा० ।

अण्वी-सं० स्त्री० अङ्गुज, अङ्गुली, अंगुरी (A Finger)

अतकत-दारचीनी, दालचीनी । Cinnamomum Zey lanicum, *Neez* (Bark of —cinnamon),

अतकुमह्-अ० चिचिंटा, अपामार्ग-हि० । (Achyranthes aspera, *Linn*) स० फा० इं० ।

अतगोकुडो-कों० काला० इन्द्रजौ (Nerium Tomentosum, *Roxb*) इं० मे० मे० ।

अतची-हिं० आल- । आचु, आछू-बं० । (Morinda Tinctoria, *Roxb*)-ले० । फा० इं० २ भा० । देखो आच्छुक ।

अतट-हिं० संज्ञा पु० [सं० अतट:] (Aprecipice, A steep crag) पर्वत का शिखर । चोटी । टीला ।

अतड़ी-हिं० स्त्री० अन्त्र (Intestine)

अतण्डक्स-
अतण्डय- } -ता० अरण्ड, एरण्ड (Cadaba Harrida, *Linn*)

अतदिम्मत्त-सिं० गम्भार, खुमेर-हिं० । (Gmelina Arborea, *linn*)-ले० ।

अतनामोस-यु० बाबूना, बाबूनह्-हिं० । (Matricaria Chamomilla, *linn*)-ले० । लु० क० ।

अतनु-हिं० वि० [सं०] (१) शरीर रहित । विना देह का । (२) मोटा । स्थूल । संज्ञा पुं० अनंग । कामदेव ।

अतन्द्र, द्रित, न, ल-सं० वि० चैतन्य, जाग्रत (Careful, visilant)

अतन्द्रा-सं० स्त्री० काफी, कहवा,-हिं० । coffea Arabica, *linn* —ले० । अन्रि० ।

अतन्द्रिक-हिं० वि० [सं०] (१) आलस्य रहित निरालस्य । चुस्त । चंचल । (२) व्याकुल । विकल । बेचैन ।

अनन्द्रित-हिं० वि० [सं०] आलस्य रहित । निद्रा रहित । निरालस्य । चञ्चल । चपल ।

अनन्द्रिय:-हिं० स० पु० तन्द्राहर सत, कहवा का सत,-हिं० । Caffeina, Caffeine-ले० देखो कहवा, तन्द्राहर सत । म० अ० डा० । भा० ।

अतन्द्री-सं० स्त्री० काफी, अतन्द्रा (Coffea Arabica; *linn*)

अतम्शुमदूफला-सं० स्त्री० केला, कदली (Musa sapientum, *linn*)

अतप्त-हिं० वि० [सं०] जो तपा न हो । ठंडा । (२) जो पका न हो ।

अतक्र-अ० चित्रक, चीता (Plumbago Zeylanica, *linn*)

अतफल-(१) बेदमुश्क-फा० । (calix caprea Linn)-ले० (२) सऊमर अ० । लु० क० ।

अतफाल-फा० (ब० व०) तिफल (ए० व०) Children बच्चे हिं० ।

अतव-अ० मध्यमा तथा तत्रिकटस्थअङ्गुल्य खात । म० ज० ।

अतव-अ० (Cotton) रुई, तूल । लु० क० ।

आवह्-अ० (१) आस्तानह् दह्लीज, चौखट । (२) अधोभुजखात । दोनों खातों को अरबी में अतवान या अतवैन कहते हैं । म० ज० ।

अतभल-अन्तमल (Tylophora asthmatica *W & A*) इं० है० गा० ।

अतमूस-गोरखर (पहाड़ी या जंगली गधा) लु० क० ।

अ (इ)तर-हिं० संज्ञा पु० [अ० इत्र] निर्यास, पुष्पसार, भभके द्वारा खिचा हुआ फूलों की सुगन्धि का सार । स्थिर तैल (Essential oil । देखो—इत्र ।

अतर-हिं० संज्ञा पु० [अ० इत्र] Essential oil पुष्पसार। भभके द्वारा खिचा हुआ फूलों की सुगन्धि का सार। निर्यास। देखो—(इतर) इत्र।

अतरदान-हिं० संज्ञा पु० [फा० इत्रदान] सोने चाँदी या गिलट के फूलदान के आकर का एक पात्र जिसमें इतर से तर किया हुआ रुई का फाहा रक्खा जाता है।

अतरल-हिं० वि० [सं०] गाढ़ा। जो तरल व पतला न हो।

अतरानूस-अ० एक मान है जो ४ तो० ४ मा० के बराबर होता है।

अतरार-अ० जरिश्क (Berberis Asiatica, *D. C*-, Berries of)

अतरुणदारुः-
अतरुणदारः-(कः) } सं० पु० विधारा हिं-।

वृद्धदारक "अतरुण दारुरास्नापुराः। ,, भा० म० १ खं० सन्धिक ज्व० चि०। (Gmelina Asiatica, *Linn*)

अतरुन-बम्ब० लाल तालमखाना। See Talamakhana। मेमो०।

अतर्यह्-अ० (१) रिस्ता, नाता, सम्बन्ध। म० ज०। (२) मैदा की सोय्यान, प्रसिद्ध भोजन है। लु० क०। म० ज०।

अतलव-
अतलव- } वदअश्कॉं, बदक़शाँ। लु० क०

अतलसानी काली-गु० अतीस भेद (Aconitum heterophyllam, wall)।

अतलस्पर्श-
अतलस्पर्शी-
अतलस्पृक-
अतलस्पृशः- } सं० क्ली० जल, पानी water (Aqua) हे० च० ४ का०

हिं० वि० [सं०] अतल को छूने वाला। अत्यन्त गहिरा, अथाह (Bottomless, very deep unfathomable)

अतली-गु० हरिताल, हड़ताल (Yellow orpiment)

अतवश्-गु० अतीस (Aconitumheterophyllum wall इं० मे० मे०।

अतवान-अ० एक घास है (sort of grass)

अतविष-मह० अतीस (Aconitum heterophyllum *Wall*) इं० मे० प्लां०।

अतवि (ब) सनी कली-गु० अतीस। इं० मे० प्लां०। फा० इं०।

अतशान-अ० मश्तुर्राई (एक प्रकार का काँटा है) लु० क०।

अतश-अ० तृष्णा, प्यास लगना, प्यासा होना। थर्स्ट Thirst इं०। म० ज०।

अतश् काजिब-अ० मिथ्या तृष्णा, झूठी प्यास वह प्यास जिसमें जितना जलपान किया जाय उसी भाँति तृष्णा की वृद्धि होती है किन्तु उसको दमन कर यदि संतोष रक्खा जाय तो वह बुझ जाती है तथा मनुष्य शान्ति लाभ करता है। म० ज०।

अतश् मुफरित-
शिद्दतुल अतश् } अ० तृष्णाधिक्य, बहुत प्यास लगना, बड़ी बड़ी प्यास लगना। पालीडिप्सिया Polydipsia इं०। म० ज०।

अतल-हिं० वि० [सं०] (Bottomless) निस्तल, तल रहित, चिकनी जगह पर न ठहरने वाला अर्थात् झट लुढ़क जाने वाला।

अतसरून-यू० सुमाक Rhuscoriaria(Dry seed of Sumacn or sumach)

अतसः-सं० पु० (१) (wind, air) वायु हवा। (२) A garmentmade of the fibre of flax अतसी वस्त्र, अलसी के रेशे का बना हुआ कपड़ा।

अतसिनूने-ते० Linum Usitatissimum Linn- (oil of Linseed oil) स० फा० इं०।

अतसी-सं० (हिं० संज्ञा) स्त्री० एक पौधा और उस का फल बीज। लाइनम् युसिटेटिसिमम् Linum Usitatissimum *Linn* (Seeds of)

लाइनम् (Linum) ले० । कॉमन फ्लैक्स (Common Flax), या फ्लैक्स (Flak) लिनसीड (Linseed) इं० । लिन कल्टिह्व (Lincultive) लिन् युस्वेल (Linusvel) फ्रां० । जेमीनर लीन ऑर फ्लेक्स (Gemeiner Leinu or Flachs) जर० । अलसी के बीज द० । तीसी, अलसी हिं० सस्कृत पर्याय—चणका, उमा, क्षामी, रुद्रपत्री सुवर्च्चला (र०) पिच्छिला, देवी, मदगन्धा, मदोत्कटा, क्षुमा, हैमवती, सुनीला, नीलपुष्पिका और पार्व्वती । तैलफला । बूर्वाचार्य कृत वर्णन अतसी, मशिना, इति लोके प्रसिद्धा, डल्हण (सु० टी० सू० ३६ अ०) । अतसी तिसीति विख्याता, चकपाणि-(सु० टी० सू० ३६ अ०) तीसी मोसिना वं० । कत्तान बज्रुलकत्ता (ता) न अ० कताँ, तुख्मे कतां, बज्रेकतॉ, तुख्मे जागीर, बज्रक-फा० । अलिशि विरै ता० । अतसी, मदन गिञ्जलु, नल्लयगसि चेट्टु, चाणत्तिन्ते वित्त मल० । अलसी कना० । अलशी, जौशी, जवस मह०, कों० गु० । पेसु उड़ि० ।

अतसी तैलम्

ओलियम् लाइनाई (Oleum Lini) ले० । खिनसीड आयल (Linseed oil) इ० । अलसी का तेल तीसी का तेल हिं० । अलसी का तेल द० । मोसिनार तेल, तीसी तैल ब० । दाहनूल् कत्तान, दाहनुलकतॉ, जैतुल कताँ अरबी रोगने जगीर, रोगने-कताँ-फा० । अलिश विरई येरणे—ता० । नदन-गिञ्जलु नूने, अतशि नूने ते० । चेरु चाण-वित्तन्ते-एण्णा मल० । अलशि-ययणे—कना० ।

नोट—यह एक गाढ़े पीले रङ्ग का तेल है। जो अतशि के बीजों से दबाकर निकाला जाता है इसका आपेक्षिक गुरुत्व ९३ से ९४ तक होता है वायु में खुला रहने पर यह रालवत् शुष्क हो जाता है।

अतसीवर्ग

N. O' Linaceæ or lineæ

उत्पत्ति स्थान—इसका मूल निवास स्थान मिश्र देश है, परन्तु अब समग्रभारत वर्ष विशेषतः बङ्ग देश, विहार, उड़िसा एवं संयुक्त प्रांत में तथा रूस हालैण्ड और ब्रिटेन में इसका कृषि की जाती है।

वानस्पतिक वर्णन—अतसी एक फलपाकांत पौधा है। यह पौधा प्रायः दो ढाई फुट ऊँचा होता है। इसमें डालियां बहुत कम होती है, केवल दो वा तीन लम्बी कोमल और सीधी टहनियाँ छोटी छोटी पत्तियों से गुथी हुई निकलती हैं। पत्र विषमवर्ती और सूक्ष्म तथा लम्बे होते हैं। इसमें नीले और बहुत सुन्दर फूल निकलते हैं, जिनके झड़ने पर छोटी घुंडियाँ बंधती हैं। (इन्हीं घुंडियों में बीज रहते हैं) ये घुंडियाँ गोलाकार होती और परदों द्वारा पाँच फलकोषों में विभक्त होती हैं। प्रत्येक कोष में दो बीज होते हैं। बीज चिपटे, प्रलम्बमान, अंडाकार होते हैं जिनका एक सिरा न्यूनकोणीय और किञ्चित वक्र एवं अवकुण्ठित नोंक युक्त होता है। इनका वर्ण बाहर से श्यामाभायुक्त धूसर चमकदार एवं सचिक्कण होता है किन्तु भीतर से गूदा का वर्ण पीताभायुक्त श्वेत होता है नोंक के ठीक नीचे एक सूक्ष्म छिद्र (Hilum) होता है बीज वहित्वक् के भीतर अल्ब्युमीन की एक पतली तह होती है जिसके भीतर बड़े, युग्म बैदल होते हैं। और उनके नोकीले सिरे पर गर्भांकुर होता है विभिन्न देशों के बीज आकार में $\frac{1}{4}$–$\frac{1}{6}$ इ० लम्बे होते हैं। (उष्ण प्रदेशों में होने वाले अपेक्षाकृत) बड़े होते हैं)। यह गंध रहित तैलमय लुआबी स्वादयुक्त होता है। जल में भिगोने से बीज एक पतले, फिसलनदार वर्ण रहित श्लैष्मिकावरण आवृत्त हो जाते हैं। यह शीघ्र न्युट्रल (उदासीन) जेली रूप में घुल जाते हैं और बीज किञ्चित् फूल जाते हैं और उनका पालिश जाता रहता है।

नोट—(१) कलकत्ता आदि स्थानों में धूसर, श्वेत और रक्त आदि तीन प्रकार की अलसी पाई जाती है। इनके अतिरिक्त एक प्रकार की और अलसी होती है, जिनको लैटिन भाषा में लाइनम् कैथार्टिकम् (Linum Cathar-

ticum) अर्थात् विरेचक अतसी कहते हैं। यह युरोप में होती है।

(२) किसी २ ग्रन्थ में अतीस भूल से तीसी के लिए प्रयोग किया गया है। कभी कभी अलसी; अलिसि, अलसी, तिसी, अतसी या तीसी इत्यादि उपर्युक्त संज्ञाएँ अग्निशि, अगशि, अगत्ति, अगती इत्यादि संज्ञाओं के साथ मिला कर भ्रमकारक बना दी जाती है जो वस्तुतः अगस्तिया के पर्याय हैं।

रासायनिक संगठन—बीज की मींगी में स्थिर तैल ३० से ३५ प्रतिशत (यह आंफिशल है) होता है। बीज त्वक् में म्युसिलेज (लुआब) १५ प्रतिशत, प्रोटीड २१ प्रतिशत, एमिग्डलीन, राल, मोम, शर्करा तथा भस्म ३ से ५ प्रतिशत और भस्ममें फास्फेट्स, सल्फेट्स और क्लोराइड्स आफ पोटासियम्, कैल्शियम् और मग्नेसियम् (पांशु नैलि चूर्णनैलिद और मग्न नैलिद) आदि पदार्थ होते हैं। मेटेरिया मेडिका आफ इण्डिया आर० एन० खोरी, खण्ड २, पृ० ११०)

बीज में एक स्थिर तैल होता है जिसमे ३० से ४० प्रतिशत लाइनोलिक, एसिड (Linolic Acid) तथा उपरोल्लिखित पदार्थों के साथ मिला हुआ ग्लीसरील (Glyceryl) होता है। तैल उबलते हुए जल में विलेय होता है।

प्रयोगांश—अतसी बीज, तैल, पत्र और पुष्प एवं तन्तु।

औषध-निर्माण—(बीज) क्वथ तथा शीत कषाय Infusion (३० में १), पाक का मोदक, पुल्टिस, धूम।

(तैल)—इमल्शन, लिनिमेंट और साबुन (मृदु साबुन)।

मात्रा—शीत कषाय (Infusion) २ से ४ फ्लुइड आउंस।

युरूपीय प्रतिनिधि द्रव्य—भारतवर्ष में होने वाली अतसी सर्वथा युरूपीय अलसी के समान होती है। अतः इनमें से प्रत्येक एक दूसरे की उत्तम प्रतिनिधि है।

इतिहास—आयुर्वेद में अतसी का औषधीय उपयोग आज का नहीं, प्रत्युत अति प्राचीन है जैसा कि आगे के वर्णनों से ज्ञात होगा। चरक, सुश्रुत आदि प्राचीनतम ग्रन्थों में इसके उपयोग का पर्याप्त वर्णन आया है। तिसपर भी वि० डिमक महोदय लिखते हैं—

"Linseed, called in sanskrit Atasi appears to have been but little used as a medicine by the Hindus." अर्थात् हिन्दू लोग अतसी का बहुत कम व्यवहार करते थे। यह बात कहाँ तक सत्य है—इसका निर्णय स्वयं पाठकगण ही कर सकते हैं।

इसलामी चिकित्सकों ने इस ओर काफी ध्यान दिया है।

फल्कीजर तथा हेनबरी अपने फार्माकोपिया (पृ० ८६) में पाश्चात्य अतसी चुप के इतिहास का सारोल्लेख करते हैं और २३ वीं तान्दी वी० सी० (मसीह से पूर्व) में इसके उपयोग का पता देते हैं। दीसकूरीदूस और प्लाइनी ने लिनम् नाम से इसका वर्णन किया है। गैलेस्की (१७६७) ने चित्रकारों के उदरशूल (Painter's colic) तथा अन्य आन्त्रीय आक्षेप विकारों में इसके तेल के उपयोग की बड़ी प्रशसा की है।

अतसी के प्रभाव तथा प्रयोग

आयुर्वेद—

अतसी मधुर, बलकारक, कफवातवर्द्धक, कुछ कुछ पित्त की नाश करने वाली और कुष्ट तथा वात को जीतने वाली है। रा० नि० व० १६। धन्व० नि०।

अतसी दृष्टि के लिए हानिकारक, शुक्र को नष्ट करने वाली, स्निग्ध तथा भारी और वातरक्त को जीतने वाली है। मद० ब० १०।

अतसी उष्ण, तिक्त वातघ्नी, पित्त कफ जनित और स्वादुम्ल (मधुराम्ल) है। राजवल्लभः।

अतसी मधुर, तिक्त, स्निग्ध, भारी, पाक में कटु, उष्ण, दृष्टि को हानिकारक, शुक्र तथा

वातनाशक और कफ एवं पित्त को नष्ट करनेवाली है। वृ० नि० र०

अतसी तैल

मधुर पिच्छिल, वातनाशक, मदगन्धि तथा कषाय है और कफ एवं कास को हरण करती है। रा० नि० व० १५।

आग्नेय, स्निग्ध, उष्ण तथा कफ पित्तनाशक पाक में कटु चक्षु को अहितकर, बल्य, वातनाशक तथा गुरु है, मलकारक, रस में मधुर, ग्राही, त्रिदोष एवं हृद्रोग को नष्ट करने वाली और वात प्रशमनार्थ वस्ति, पान, अभ्यंग, नस्य, और कर्ण पूरणरूप से तथा अनुपान रूप से भी प्रयोजनीय है। भा० पू० तैल० व०।

अतसी तैल उष्ण वीर्य और कटु पाकी है। (राजवल्लभः)

अतसीपत्र

तीसी का पत्ता खाँसी तथा कफ वात और श्वास तथा हृद्रोग नाश करने वाला है। वृ० नि० र०।

वैद्यक में अतसी का उपयोग

चरक—(१) फोड़ा पकाने के लिए अलसी का जल में पीसकर उसमें किञ्चित् जव का सत्तू योजित करें और अम्ल दधि के साथ इसका पोड़ा पर प्रलेप करें। इससे फोड़ा पक जाएगा। (चि० १३ अ०)

(२) वात प्रधान व्रण में जो दाह और वेदनान्वित हो तिल और अतसी को भूनकर गोदुग्ध के साथ निर्वापित करें। शीतल होने पर इसको उसी दुग्ध के साथ पीसकर फोड़ा पर प्रलेप करें। (चि० १३ अ०)

(३) पक्व शोथ प्रभेदन हेतु अतसी—

"× × उमाथ गुग्गुलुः × ×।"

अलसी का प्रलेप करने से फोड़ा फट जाता है। (चि० १३ अ०)

सुश्रुत—(१) वाताधिक वातरक्त में वेदना प्रशमनार्थ अलसी को दूध में पीसकर प्रलेप करें। चि० २१ अ०)।

(२) प्रमेह में अतसी तैल प्रमेह रोगी को सेवन कराना चाहिए। जैसे—

'कुसुम्भ सर्षपातसी × × स्नेहाः प्रमेहेषु" (चि० ३१ अ०) मात्रा—आधा से १ तोला।

वक्तव्य

चरक और सुश्रुत में उपनाह स्वेद (जिसे अंगरेजी में पुल्टिस कहते हैं।) के उपादान स्वरूप अतसी व्यवहृत हुँई है—"उमया कुष्ठतैलाभ्यां युक्त्याचोपनाहयेत्" (चरक सू० १४ अ०)

"तिलातसी सर्षप कल्केस्तनु वस्त्रावनद्धैः स्वेदयेत्" (सुश्रुत चि० ३० अ०)

निघण्टु ग्रन्थों में अतसी तैल के गुण इस प्रकार लिखे हैं—अलसी का तेल वात नाशक, मधुर और बलासकारक है।

(धन्वन्तरीय निघण्टु)

नोट—शेष देखो—अतसी तैल।

अतस्यादि क्वाथ—अलसी के फूल, मजीठ वट के अंकुर, कुश आदि पंच तृण। सबके समान भाग लेकर यथाविधि क्वाथ बनाकर पीने और पथ्य में मूंग का यूष (और भात) खाने से रक्तपित्त का नाश होता है। वृ० नि० र०।

यूनानी मतानुसार—

प्रकृति—२ कक्षा में शीतल व रूक्ष। किसी किसी में २ कक्षा में उष्ण और ३ कक्षा में रूक्ष लिखा है। हानिकर्त्ता—दृष्टि शक्ति, पाचन तथा मुख को। दर्पघ्न—धनियां, सिकञ्जबीन और मधु। प्रतिनिधि—मेथी। शर्बत की मात्रा—१०॥मा०।

प्रधान कर्म—कास, वृक एवं वस्त्यश्मरी को लाभ दायक है तथा मूत्रकारक एवं रक्तघ्न जनक है।

गुण, कर्म, प्रयोग—इसका कपड़ा पहिनने उत्ताप को दूर करता तथा स्वेद को शुष्क करता और कंडु एवं कठिन शोथ को लाभप्रद है।

परन्तु, उष्ण प्रकृति वालों को एवं ग्रीष्म ऋतु में पहिनना चाहिए। इसमें जुए कम पड़ती है। इसके पत्र एवं छाल मस्तिष्क के अवरोधों की उद्घाटक और जुकाम को बहाने वाली है। इसकी छाल को जला कर छिड़कना रुधिरस्थापक है तथा क्षतों को भर लाता है। इसके पुष्प हृद्य एवं हृदय बलदायक है। बीज लयकर्त्ता, व्रण को स्वच्छकर्त्ता (जाली) और प्रकृति को मृदु करने वाले (मुलब्यिन तव्अ) है। ठंडे पानी में पीसकर अनुलेप करने से शोथजन्य शिरःशूल एवं मास्तिष्कीय कूपा (दद्रु) तथा शिरो व्रण के लिए उपयोगी है। इसबगोल के साथ सन्धि-शूल को लाभ करते है। इसका लुआब, नेत्र में टपकाने से अभिष्यन्द तथा नेत्र की लालिमा को दूर करता है। इसका लऊक (अवलेह) श्लेष्मज कास को गुणदायक है और तीन दिरम (३॥ मा०) पीना वक्षःस्थल को शुद्ध करता है तथा यकृत शोथ और आन्तरावयवों के शोथ का लयकर्त्ता है। भुनी हुई अलसी सङ्कोचक (काबिज) है और २। मा० दैनिक सेवन करने से आन्त्रवेदना को लाभप्रद है तथा मूत्र, स्वेद, दुग्ध एव आर्तव की प्रवर्तक है। प्रकृति को मृदुकर्ता और वृक्क एव वस्तीस्थ क्षत को लाभप्रद है। १ तो० पानी में कथित कर पीना वृक्काश्मरी के निकालने में शतशोऽनुभूत है। मधु के साथ प्लीहा शोथ के लिये लाभप्रद और काली मरिच और मधु के साथ कामोद्दीपक और शुक्र को गाढ़ा करता है।

नव्य मतानुसार—

एलोपैथिक मेटिरिया मेडिका

ऑफिशल प्रिपेयरेशञ्ज

Offisialpreparations

—लाइनाइ सेमिना—(Lini semina) —ले०। लिनडीस (Linseed)-इं० अतसी बीज, तीसी का बीज। प्रभाव—अरेबिन (Arabin) के समान लुआबी पदार्थ की विद्यमानता के कारण यह स्निग्धता एवं मृदुताजनक है।

लाइनाइ सेमिना कंट्युजा—(Linisemina contusa), लाइनम् कण्टुजम् (linum contusum)—ले०। क्रस्ड लिन्सीड (Crushed linseed)-इं०। कुट्टित (कण्डित) अतसी, कूटी हुई अलसी। अलसी को कूट कर उसका मोटा चूर्ण तैयार करलें। यह ताजा तैयार किया हुआ होना चाहिये। यह कैटाप्लाज्मा लाइनाई (अतसी की पुल्टिस) बनाने में काम आता है।

ऑलियम् लाइनाई—(Oleucm Lini) —ले०। लिन्सीड ऑइल (Linseed oil) —इं०। अतसी तैल।

मृदूताजनक रूप से इसका बहिर प्रयोग होता है।

प्रभाव तथा उपयोग—लाइनम् कंटयुजम् अर्थात् कुट्टित अतसी उत्कारिका (पुल्टिस) रूप में स्थानिक प्रदाहों पर अवांतर आर्द्र उष्मा के उपयोग की सर्वोत्तम माध्यम है। जब अलसी को उष्ण पुल्टिस किसी भाग पर लगाई जाती है तब उष्मा के प्रभाव से क्षुद्र स्रोतम् (Small vessels) अबाध्य रूप से विस्तार को प्राप्त होते हैं और स्वगीय मांस तत्व, लोमकोष तथा ग्रन्थिक नलिकाएँ शिथिल हो जाती हैं। अतएव धातुएँ कोमल हो जाती है और कठोरता की अनुभूति एवं प्रदाहिक तनाव का सर्वदा लोप हो जाता है अथवा उसमें कमी आती है। रुधिर के धरातल की ओर आकृष्ट हो जाने के कारण बोध तन्तुओं के अन्तिम भागों को दबाव की कम अनुभूति होती है। कूल्हे की सन्धि के प्रदाह में उष्ण उत्कारिका के प्रयोग से कभी कभी मांसपेशीय आकुञ्चन शिथिल हो जाता है और स्थानान्तरित जानु वेदना घट जाती है। पुल्टिस को फलालैन पर फैलाना चाहिए और उसे इतना गरम रखना चाहिये जितना मुखपूर्वक सहन हो सके। स्थानिक उत्तेजक प्रभाव के कारण अत्यधिक उष्ण पुल्टिस से प्रायः तनाव एवं वेदना की वृद्धि होगी।

प्रायः यह प्रश्न होता है कि स्थानिक प्रदाह यथा ह्विटलो (नाखून खोरा) में पुल्टिस का

व्यवहार किस समय किया जाना चाहिये ? यदि बहुत पहले पुल्टिस का उपयोग किया जाता है तो फलतः धातु (Tissue) का सावयविक शैथिल्य उपस्थित होता है और तनाव जो जीवन के लिये घातक है दूर होजाता है तथा उसके लय की अधिकतर संभावना होती है । परन्तु, प्रदाह यहां तक विवर्धित हो गया हो कि श्वेताणु तत्व स्रोत के परदे से बाहर आगए हो अथवा पूय एकत्रित होगया हो तो पुल्टिस उसको धरातल तक पहुँचाने में सहायक होती है अतः पुल्टिसें (उष्ण रिकएँ) प्रदाह की समप्रदर्शाओं में उपयोगी होती है । यदि उनका उपयोग बहुत पहले किया जाय तो वे पूय निर्माण को रोक देती है और उन्नत अवस्था में उसके निर्माण में शीघ्रता उपस्थित करती एवं उसे सहसा प्रदान करती है । यदि उनमें पचननिवारक गुण वर्तमान होता तो उनसे प्रत्येक अभिष्ट की सिद्धि होती तैलाक्त रेशम में आवृत्त करने पर यही कमी हम स्पिरिट लोशन या बोरिक लोशन में पाते हैं ।

बर्न्स या स्कैल्ड्स अर्थात् अग्निदग्ध या आग से जले हुए स्थान पर अलसी तेल में सम भाग चूने का पानी मिलाकर, जिसको कैरन औइल (Carron Oil) कहते हैं लगाना उपयोगी होता है । वृद्धान्त्र के अधोभाग में जब अवरोध के कारण मलावरोध हो तब कभी कभी आधा पौंड (१ पाव) अलसी तैल की बस्ति करने से विष्टम्भ दूर होकर एक दो दस्त आ जाते है । वि० हिटला० ।

कूटी हुई अलसी की पुल्टिस को प्रदाहिक रोगों और फोड़े फुन्सियों पर लगाते हैं । इसके लगाने से न केवल वेदना कम हो जाती है, प्रस्युत शोथ भी कम हो जाता है, और यदि सूजन मे पीब पड़ गई हो तो उसके विसर्जन में सहायता मिलती है । गंभीर शोथों जैसे फुप्फुशोथ, फुप्फुसावरण प्रदाह, कास, परिविस्तृतःकला-प्रदाह, सन्धि प्रदाह (Arthrits) इत्यादि रोगों में अलसी को पुल्टिस अत्युत्तम अल्प स्थानिक उष्णतासाधक (काउटर इरिटेंट) है ।

इसके उक्त प्रभाव को किञ्चित् प्रभावशाली बनाने के लिये पुल्टिस के धरातल (सतह) पर विचूर्णित राई छिड़क देते अथवा कैम्फोरेटेड आंइल (कर्पूर मिश्रित तैल) चुपड़ देते हैं या पुल्टिस बनाते समय १६ भाग अलसी में १ भाग राई मिला देते हैं ।

नोट—पुल्टिस बहुत मोटी नहीं होनी चाहिये और लगाते समय उसके निम्न धरातलपर किंचित तैल प्रभृति चुपड़ देना चाहिये जिसमें वह शरीर से चिपक न जाय ।

अलसी की पुल्टिस इस प्रकार बनाई जाती है ४ भाग कटी हुई अलसी को १० भाग खौलते हुये पानी में धीरे धीरे डालकर मिलाते जांए । परन्तु जिस बर्तन में पुल्टिस बनानी हो उसको पहले से गरम कर लेना चाहिये और पुल्टिस को आग के सामने तैयार करना चाहिये ।

अलसी की खली (linSeed meal) से भी पुल्टिस बनाई जाती है ।

अलसी के बीज में एक प्रकार का लुआबदार सत्व होता है जो उबलते हुये पानी में आ जाता है जब आमाशय आन्त्रीय श्लैष्मिक कलाओं से इसका सम्बन्ध होता है तब यह शांतिप्रद स्निग्धता जनक प्रभाव करता है । और क्षोभक तत्वों से उनकी रक्षा करता है इसमें प्रख्यात कफघ्न अर्थात् श्लैष्मिनिस्सारक गुण है जो सम्भवतः आमाशय की ओर जाते समय कण्ठ पर प्रभाव करने पर पूर्णतः आधारित हैं । अधिक मात्रा में इसका फांट(Infusion) वृक्क को मन्दोत्तेजन देकर मूत्रकारक प्रभाव करता है । अतएव बस्तिप्रदाही प्रायः इससे लाभ अनुभव करता है ।

फांट वा अलसी की चाय—(Infusion or linseed tea)-१२० ग्रेन अलसी और ६० ग्रेन मुलेठी, इनके चूर्ण को १० पहुइ आउंस खौलते हुए पानी में २ घंटे भिगोकर शीतल होने पर छान लें ।

मोहीदीन शरीफ—अलसी के बीज स्निग्धतासम्पादक (Demulcent) मृदुताकारक

(Emollient)मूत्रल, और तर्पक (बृंहण वा पोषक) हैं।

मूत्ररोध वा कष्टमूत्र (Dysuria) मूत्र कृच्छ्र, वस्तिप्रदाह, और वृक्कप्रदाह में एवं बहुब: अन्य वस्ति, वृक्क तथा मूत्रप्रणाली सम्बन्धी विकारों में मूत्र की प्रदाहक अनुभूति के विचारार्थ अलसी के बीज का आंतरिकप्रयोग अत्यंत उपयोगी होता है। (मेटिरिया मेडिका आँफ मैडरास)।

आर० एन० खोरी—अलसी स्निग्धता सम्पादक, कफनिस्सारक और मूत्रकारक है अधिक मात्रा में मृदुरेचक है अल्प मात्रा में सेवन करने से वृक्कद्वय अर्थात् मूत्रोत्पादक अवयव की क्रिया वृद्धि होती है पिच्छिल वा स्नेहान्वित रूप से अलसी को कफ कास में प्रयुक्त करते हैं स्निग्ध एवं मूत्रल होने के कारण यह मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी शर्करा, एवम् शूल रोग मे हितकर है।

अलसी के तेल के धूम ग्रहण करने से शिर: स्थित श्लेष्मा तथा अपापस्मार (Hysteria) में लाभ होता है। अलसीके क्वाथ का उसमें तेल की विद्यमानता के कारण, अनुवासनबस्ति रूप से लाभदायक उपयोग किया जा सकता है। इसका तेल मृदुरेचक है अतएव अर्श रोगी के गाढ़ विटकता की दशा में इसका उपयोग होता है।

(मेटीरिया मेडिका आंफ इंडिया २ खं–पृ० १५)

पूयमेह तथा जनन मूत्रावयवस्थ क्षोभ में इसके बीज का आंतरिक प्रयोग होता है पुष्प हृद्य बलदायक माने जाते हैं। (इमर्सन)

यह भारतीय तथा ब्रिटिश फार्माकोपिया में आफिशल है। उत्कारिक अर्थात् पुल्टिस रूप से इसका औषधीय उपयोग होता है। (इं० मे० प्रां०—कर्नल बी० डी० वसुकृत)

१ आउंस पिसे हुये अलसी के बीज को रात्रि भर शीतल जल में भिगोकर रक्खें। प्रातःकाल ही इसे हिला कर ठंडा ही अथवा गरम करके और नींबू का रस मिलाकर प्रयोग करें यक्ष्मा रोगी के लिये यह एक उत्तम पेय है इस प्रकार बोया हुआ ताजा तैल अत्यन्त रोग प्रशामक है। प्रशामक है। भोजन से पूर्व इस अलसी की चाय को १ पाइंट की मात्रा में दिन में तीन बार सेवन कराना चाहिए। अर्श रोग में १ से २ आउंस की मात्रा में इसका तैल प्रातः सायं प्रयोग में आता है। (इ० मे० मे० नदकारणी कृत)

एक आउंस अलसी के बीज को १ पाइंट जल में १०' मिनट तक उबाल कर छानलें। इसे अलसी की चाय कहते हैं। यह अतीसार, प्रवाहिका और मूत्र विकारों के लिए उत्तम पेया है। (इं० डू० इं०—आर० एन० चोपरा कृत)

(२) विरेचक अतसी

लाइनम् कैथार्टिकम् linum Cathartiicum)–ले०। पर्जिङ्ग फ्लैक्स (Purging flax)–इं०। कत्तान मुस्हिल–अ०।

नॉट आफ़िशल
(Not Official)

उत्पत्ति स्थान—युरोप।

वानस्पतिक वर्णन—यह एक वर्षीय पोधा है। कांड सरल, कोमल ६ से ९ इं० तक ऊँचा होता है। पत्र–सम्मुखवर्ती, सम्पूर्ण (अखंड) अण्डाकार, नोकीले, होते हैं। पुष्प लघु, श्वेत रंग के, दल अंडाकार होते हैं।

स्वाद—तिक्त व चरपरा।

रासायनिक संगठन—इसमें लाइनीन (अतसीन) एक न्युट्रल (उदासीन), वर्ण रहित, रवादार अत्यन्त तिक्त सत्व होता है जिसमें विरेचक गुण का अभाव होता है।

मात्रा—६० ग्रेन चूर्णरूप में। यह पौधा विरेचक रूप से व्यवहार में आता है।

अतस्यादि क्वाथः–स० हिं० पु० अलसी के फूल, मजीठ, वड़ के अंकुर, कुश आदि पञ्च तृण। सब को समान भाग लेकर यथा विधि क्वाथ बनाकर पीवें और पथ्य में मूँग का यूष (और भात) खाने से रक्त पित्त का नाश होता है। बृ० नि० र०।

अतसी कुसुम–सं० पु० (१) तीसी का फूल। (२) रेशमी वस्त्र (Silk Cloth)। (३) पांशुशय्या। (४) भंग। (Hemp)

अतसी तैलम्–सं० क्ली० अलसी का तेल, तीसी का तेल–हिं०। linum Usitatissimum; *Linn* (Oil of-linseed oil) रा० नि० व० १५। भा० पू० तैल व०। देखो—अतसी।

अतह–अ० (Unconsciousness) मूर्च्छा, अचेतता, अचेत हो जाना, विसंज्ञता, बेहोश हो जाना। म० ज०।

अता–हिं० पत्थर फोड़ी (Patthara fori) फा० इं० १ भा०। लु० क०।

अताकुत्तीर–अ० शिकारी पक्षी (The birds of prey)

अतान पत्रिका–सं० स्त्री० अरण्ड, एरण्ड। (Ricinus Communis, *Linn*)

अतापी–हिं० वि० [सं०] ताप रहित। दुःख रहित, शान्त।

अतार–
जुतालहशफह } –अ० (१) वृत्त, घेरा, किनारा।
(२) शिश्न-मुण्ड, मणि। कोरोना ग्लैण्डिस (Corona Glandis)–इं०।
(३) चक्षुतारा-मंडल। म० ज०।

अतारद
अतारह } –नब्त० सुम्बुलरूमी। See–sumbul rumi

अतारद०रासा० Mercury (Hydrargyrum) पारा, पारद–हिं०। म० अ० डो० २ भा०।

अतारा–गन्दना–फा०। गोनी–हिं०। See-gandana

अतालीतून–यु० अज्ञात।

अति–हिं० वि० [सं०] बहुत। अधिक। ज्यादा। संज्ञा स्त्री० अधिकता। ज्यादती। सीमा का उल्लंघन।

अति–ता० कचनार (Bauhinia racemosa lm)
–वर्मी० फल। अतिमियआआ (ब० म०) स० फा० इं०।

अति अर्कः–सं० पु० श्वेतमदार, सफेद आक (Calopropis gigantea) Br. देखो–आक।

अतिआ–खसि० पखानभेद, पाषाण भेद। Saxifraga ligu lata' wall–ले०। फा० इं० १ भा०।

अतिकुटः–सं० त्रि० निम्बादि द्रव्य। वै० श०।

अतिकण्ठः,कः–सं० पु० (१) छोटा गोखरू। (२) दुरालभा। मद० व० १।

अतिकन्दः कः–सं० पु० हस्तिकन्द, यह प्रसिद्ध ओल कन्दशाक है। देखो–हस्तिकन्दः। रा० नि० व० ७।

अतिक-मामिडि–ते० पुनर्नवा (Boerhabia biffusa *linn*)।

अतिकर्षणं–सं० क्ली० अत्यन्त कृशीकरण, कृश वा दुर्बल करना। अतिकार्श्यकर, बहुत निर्बलताजनक (कृशताकारक) द्रव्यों या उपायों का सेवन करना।

अतिकायः–स० वि०
अतिकाय– हिं० वि० } १ (Gigantic) दीर्घकाय। बहुत लम्बा चौड़ा। बड़े डील डौल का। स्थूल। "अतिकाय गृहीतायास्तस्याः स्त्वरिष्ठनी भवेत्।" मा० नि०। २–स्थूल शरीर वाला। सु० सं० उ० ३८।

अतिकाल–हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) विलम्ब। देर। कुसमय।

अतिकृच्छ्र–हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) बहुत कष्ट (Anextraordinary hardship) वि० अति कठिन (Very difficult)।

अतिकृत नाशिनी–सं० स्त्री० Mercury (Hydrargyrum) पारा, पारद। अथ० । ६ । ४४ । ३ ।

अतिकृशः-सं० त्रि० अति दुर्बल, बहुत दुबला । वै० श० ।

अतिकेशः(स)रः-सं० पु० कुब्जक पुष्प वृक्ष । कुब्जा-हिं० । कोंकन देशीय पुष्प विशेष । रा० नि० व० १० । भा० पू० प्र० व० । कण्टक सेवती ।

अति कोएवम-ता० अङ्कोल, ढेरा (Alangium decapetalum *Lam*) इं० मे० मे० ।

अतिक्रम-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (Act of overstepping Breach of decorum or duty) नियम या मर्य्यादा का उल्लंघन । विपरीत व्यवहार ।

अतिक्रमण-हिं० संज्ञा पु० [सं०] उलंघन । पार करना । हद के बाहर जाना । बढ़ जाना ।

अतिक्रांत-हिं० वि० [सं०] (१) (Gone beyond) सीमा का उल्लंघन किए हुये । हद के बाहर गया हुआ । बढ़ा हुआ । (२) (Past gone by) बीता हुआ । व्यतीत गया हुआ ।

अतिक्रांता वेक्षणम्-सं० क्ली० जो बात पहिले कही गई । जैसे चिकित्सा स्थान में कहा कि श्लोक स्थान में हम यह बात कह चुके हैं । सु० उ० ६५ अ० श्लोक ३८ । "यत्पूर्वमुक्तं तदति क्रांतावेक्षणम् । यथा चिकित्सितेषु ब्रुयाच्छ्लोकस्थाने यदीरितमिति ।

अति खिरेटी-सं० स्त्री० पीली बूटी । कंघी-हिं० । अतिबला-सं० । (Abutilon Indicum, G. *Don* or A. Asiaticum, G, *Don.*) इं० मे० मे० ।

अतिगण्डः-सं० त्रि० बृ० दृगण्ड । मे० डचतुष्कं ।

अतिगुप्ता-सं० स्त्री० पिठवन-हिं० । (Uraria lagopodes *D. C.*) ले० । इं० मे० मे० देखो- पृश्निपर्णी ।

अतिगुहा-सं० स्त्री० (१) पिठवन-हिं० । पृश्निपर्णी-सं० । (Uraria lagopoides, *D C,*) । रा० मा० । (२) (Hedysarumgangeticum, *Linn*) शालपर्णी मद० व० १ । वा० सू० २६ अ० । "लक्ष्मीं गुहामतिगुहाम् ।"

अतिगो-सं० स्त्री० (An excellent cow) उत्तम गाय ।

अतिगन्धः-सं० पु०
अति गंध- हिं० संज्ञा पु० } (१) भूतृण गन्धतृण-बं० । (See Bhutrinam) रा० नि० व० ८ । (२) गंधराज, मोगरा-वृक्ष, मुद्गर, पुष्प वृक्ष-बं०, हिं०, सं० । A sort of Jasmin (Jasminum zambac ait) रा० नि० व० १० । (३) गन्धक-हिं० । (Sulphur) रा० नि० व० १३ । (४) चम्पक वृक्ष, चम्पा, चम्पा का पेड़ या फूल- हिं० । (Michelia champaca, *Linn*) रा० नि० व० १० । त्रि० (Having an excessive or overpoWering smell) अत्यन्त गन्ध पूर्ण ।

अतिगंधकः-सं० पु० (१) हस्तिकर्ण (पलाश) वृक्ष । (२) चम्पक वृक्ष, चम्पा । रा० नि० व० १० ।

अतिगंधा लुः-सं० स्त्री० पुत्रदात्रीलता, पुत्रदा-सं० । बॉझ खेलसा, लक्ष्मणा-हिं० । रा० नि० व० १० ।

अतिगंधिका-सं० स्त्री० पुत्र दात्रीलता, पुत्रदा-सं० । देखो पुत्रदात्री । रा० नि० व० ४ । (See patradatri)

अतिघूर्णता-सं० स्त्री० अतिनिद्रा, निद्राधिक्य, अत्यन्त निन्द्रा । भा० म० ४ भा० श्लो० २४ मसूरिका । "तृष्णा.दाहोतिपूर्णता" ।

अतिचर-सं० त्रि० (Transient) क्षणिक, अस्थायी ।

अतिचरः-सं० पु० (१) एक प्रकार की पक्षी (A sort of bird) (२) वृक्ष विशेष (a tree) । वै० श० ।

अतिचरणा-सं० (हिं० संज्ञा) स्त्री० (१) अत्यन्त मैथुन करने के कारण जिस योनि में

सूजन हो जाती है उसे अतिचरणा कहते हैं। कफज योनिरोग विशेष, यथा—'सैवातिचरण शाफ सयुक्तातिव्यवायतः"। वा० उ० ३३ अ० देखो—अचरणा। (२) स्त्रियों का एक रोग जिसमें कई बार मैथुन करने पर तृप्ति होती है। (३) वैद्यक मतानुसार वह योनि जो अत्यन्त मैथुन से तृप्त न हो।

अतिचरा-ला-सं० स्त्री० (१) पद्मचारिणी-सं०। गैंदे का फूल, गेंदा। (Tagetes Erecta-*Linn*)। मद० व० ३। अभि० नि० १ भा० (२) स्थल कमल-हिं०। स्थल पद्म, थलपद्म-बं०। Hibiscus mutabilis। मेमो०। गुले अजाइब-फा०। रा० नि० व० ५। भा० पू० १ भा०। देखो-- स्थलपद्म। (३) भूत तृण। (४) Alotus plant कमल। पद्म।

अतिच्छत्रः-सं० पु० (१) लाल तालमखाना--हिं० रक्त काकिलाक्ष--सं०, ब०। प० मु०। र त्ना०। (२) छत्रा, साँप की छतरी, कुकुर-मुत्ता, भूमछत्रा, काटछातु, पोयालछातु-ब०। A mushroom (३) स्थूल तृण विशेष। (४) anise। सौंफ।

अतिच्छत्रकः-सं० पु० (१) भूततृण। प० मु (२) भूतृण, गधराज। रा० नि० व० ८। (३) साधारण तृण। (४) एक वृक्ष जिसके मूल एवं पत्र वच की आकृति के होते हैं तथा जो रस में कटु होता है। रा० नि०। (५) शरवान, छतरिया। शा० ओ० श० सा०।

अतिच्छत्रका, अतिच्छत्रा, अतिच्छत्रिका } सं० स्त्री० (१) सौंफ, जगली सौंफ-हिं०। रा० नि० व० ४ मद० व० २। वा० उ० ६ अ० महापैशा० घृ०। 'अतिछत्रा पलङ्कषा'। सि० यो० उन्माद चि० महाडैगाच घृते। (२) मधुरिका। मोरी-बं०। च० चि० अ० ७। (३) छत्र वृक्ष। वह वृक्ष जिसके मूल व पत्र वच की आकृति के और रस कटु हो। (४) भूत तृण। रा० नि०। (५) अजशृंगी, मेढ़ासिंगी-हिं०। विषाणिका-सं०। वा० सू० २९ अ०। (६) उक्त नाम की महौषध देखो—ओषधिः। (७) (Amushroom) साँप की छत्री। अगारिकस एल्बस।

अतिजव-हिं० वि० [सं०] जो बहुत तेज चले। अत्यन्त वेगगामी।

अतिजागरः-सं० पु०, अतिजागर-हिं० संज्ञा पु० } नील वर्ण का बगुला पक्षी। A kind of heron (Ardea jaculator) देखो—नीलक्रोञ्च। रा० नि० व० १९।

अतिजागरणः-सं० पु०, अतिजागरण-हिं० पु० } अधिक जागना। वा० सू० २ अ०।

अतिजात-वह सन्तान जो पिता के अधिक गुण रखती हो। अथ०। सू० ६। का० ८।

अतिजीवः-सं० पु० अन्य सामान्य जीवों की दशा को अपने ज्ञान बल से पार करना। अथ०। सू० २। कां० ८।

अतिजृम्भः-सं० पु० अति जँभाई का आना, वायु रोग विशेष। वै० निघ०।

अतितपस्विनी-सं० स्त्री० मुण्डी, गोरखमुण्डी (Sphoeranthus Indicus *Linn*) भा० पू० १ भा० गु० व०।

अतितर्पनम्-सं० क्ली० अति तृप्ति, अति तर्पण। वा० सू० ८ अ०।

अतितार्या-सं० स्त्री० पार करने योग्य। अथ०। सू० २।२७। कां० ८।

अतितीव्रा-सं० स्त्री० गांडर दूर्वा-हिं०। गंड दूर्वा सं०। रा० नि० व० ८। (See Ganda durvva)

अतितीक्ष्णः-सं० त्रि० (१) मरिच प्रभृति (Black pepper) पु० (२) सहिंजन, शोभाञ्जन वृक्ष (Moringa pterygosperma, *Gœrtn*)-क्ली० (३) अजमोदा (Apium involucratum)

अतितृप्तिः-सं० पु० पित्तजन्य रोग विशेष (Biliary disease) वै० निघ०।

अतितेजिनी–सं० स्त्री० तेजवल–हिं०, बं०, मह०, गु० । त्रिवर्णी–सं० । मद० व० १ ।

अतिदग्धम्–सं० क्ली० अग्नि दग्ध रोग (Burn) सु० सू० १२ अ० ।

अतिदाहः–सं० पु० अतिसंताप, दाहाधिक्य तापबाहुल्य वै० निघ० ।

अतिदीप्तिः–सं० स्त्री० श्वेत तुलसी–हिं० । श्वेत सुरसा–सं० । श्वेत बाबुई तुलसी–बं० । (Ocimum Basilicum, *Linn*) वै० निघ० ।

अतिदीप्यः,-कः–सं० पु० लाल चीता, रक्त चित्रक (plumbago Rosea, *Linn*) रा० नि० व० ६ ।

अतिदुष्टः–सं० पु० गोखुरू–हिं० । गोक्षुर–सं० । (Zygophylleæ Tribulus terrestris, *Linn*) वै० निघ० ।

अतिदेशः–सं० पु०
अतिदेश–हिं० संज्ञा पु० } (१) प्रकृतस्यानागतेन साधनम् अर्थात् प्रकृत का अनागत (भविष्यत्) से साधन किया जाना 'अतिदेश' कहलाता है । जैसे, अमुक कारण से इसका वायु ऊर्द्धगामी होता है इस लिए इसे उदावर्त होगा । यहाँ वायु का ऊर्द्धगमन प्रकृत है इसका साधन अगाड़ी होने वाले उदावर्त से होना है । सु० उ० ६१ अ० ।

(२) एक स्थान के नियम वा धर्म का दूसरे स्थान पर आरोपण । (३) वह नियम जो अपने निर्दिष्ट विषय के अतिरिक्त और विषयों में भी काम आए ।

अतिनिद्रः–सं० त्रि० (१) (Given to excessive sleep) निद्रालु, वह जिसको अत्यन्त नींद आ रही हो ।

(२) (Without sleep, sleepless) अनिद्रा ।

अतिनिद्रता–सं० स्त्री०
अतिनिद्रा–हिं० संज्ञा स्त्री० } (Excessive sleeping) निद्राधिक्य, नींद की अधिकता, कफवृद्धि जन्य रोग विशेष । सु० सू० १५ अ० ।

अतिनिद्राना(शि)नी गुटिका–सं० स्त्री० काली मिर्च को शहद में घोटकर गोलियाँ बनाएँ । इसे बांदे के लार से घिसकर नेत्रों में लगाने से घोर निद्रा भी दूर हो जाती है । यो० चि० ।

अतिनिद्रा रोग–हिं० संज्ञा पु० वह रोग जिसमें बहुत नींद आती है । (Sleeping sickness)

अतिनेरञ्जि–सिं० बड़ा गोखरू (Pedalium Murex, *Linn*) स० फा० इं० ।

अतिपक्वमांसम्–सं० पु० खर पाक युक्त मांस, अधिक पकाया हुआ सिद्ध मांस पाकाधिक सिद्ध मांस । गुण—अधिक पकाया हुआ मांस विरस (स्वाद रहित). वातकारक और भारी होता है । वै० निघ० ।

अतिपक्वक्षीरम्–सं० पु० अग्नि पर पकाकर अत्यन्त गाढ़ा किया हुआ दुग्ध अतिश्रृत घन दुग्ध । यह अत्यन्त भारी होता है । भवेद्गरीयोऽतिश्रृतम् वा० टी० हेमाद्रौ चारपाणिः ।

अतिपञ्जुम–ता० गूलर–हिं० । उदुम्बर फलम्–सं० । Ficus Glomerata, *Roxb* (Fruit of) स० फा० इ० ।

अतिपञ्चा–सं० स्त्री० (A girl past five) पांच वर्ष से ऊपर की कन्या ।

अतिपत्रः-कः–सं० पु० (१) (The teak tree) सागवन–हिं० । शाकतरु–सं० । सेगुन गाछ–बं० । रा० नि० व० ६, उन्माद–चि०, महापैशाच घृते । (२) हस्तिकन्द नामक महाकन्द । रा० नि० व० ७ ।

अतिपत्रा–सं० स्त्री० (Sinda cordifolia, *Linn*) बलाभेद, खिरेटी, बरियारा, बीजबन्द वेड़ेला–बं० । देखो—बला ।

अतिपरिचम–ता०
अतपर्या–सं० स्त्री० } मालकांगुनी–हिं० । कदुम्भी सं० । (Celastrus paniculatus, *Willd*) । इं० मे० मे० । फा० इं० १ भा०

अतिपातितम्–सं० क्ली० (Fracture) अस्थिभंग, कांडभग्न, अस्थि का बीच से टूट जाना, जिससे अस्थि पूर्णतः पृथक् हो जाती है । सु० नि० १५ अ० ।

अतिपिच्छः-सं० पु० श्वेत रक्त लु (Dioscorea sativa, *linn*) वै० नि०।

अतिपिच्छला-सं० स्त्री० कुमारी, घृतकुमारी, घीकुवार-हिं०। (Aloe Barbadensis) वै० निघ०।

अतिपिञ्जरः / अतिपीड़कः -सं० पु० (Foul ulcer) दुष्ट व्रण, दूषित क्षत। च०।

अतिपित्ता-सं० स्त्री० लजालू लजालु छुईमुई (Sensitive plant)

अतिप्रगे-(Very early in the morning) प्रातःकाल।

अतिप्रभंजनवात-हिं० संज्ञा पु० [सं०] अत्यन्त प्रचन्ड और तीव्र वायु जिसकी गति एक घन्टे में ४० वा ५० कोस होती है।

अतिप्रवाहण-सं० त्रि० (Togrunt) किनछिना काँखना। सु० नि० १३ अ०।

अतिप्रस्रुतम्-सं० क्ली० अधिक रक्तमोक्षण, अधिक रक्त स्रावण। सु० शा० ८ अ० श्लो० १७।

अतिप्रौढ़ा-सं० स्त्री० (A grown-up girl) विवाह योग कन्या।

अतिवरषण-हिं० संज्ञा पु० [सं० अतिवर्षण] मेघमाला। घटा। -हिं०।

अतिवल-हिं० वि० [सं०] (Very strong or powerful) प्रबल, प्रचंड, बली।

अतिवला-सं० स्त्री० (१) (Abutilon Indicum *G. Don*) एक ओषधि, कघी, कघही, ककही, ककहिमा-हिं०। देखो-कंघी या वला। रा० नि० व० ४। मद० व० १। भा० पू० १ भ० गु० व०। सु० सू० ३६ संशमने। च० सू० ४ अ०। सु० सू० कृमिचि०। चि० क्र० क० वल्ली खोरोगचि०। वा० उ० ४० अ० (२) श्वेत बाट्यालक। (३) गोरक्षतण्डूला विष्णुनारायण तैले। शतावरीयो-सा० कौ०। चि० क्र० क० वल्ली केतक्यादि तैले।

अतिवलिका- / अतिवली- -सं० स्त्री० बाट्यालक। वरियारा -हिं०। (Sida cordifolia, *Linn*) रा० नि० व० ४।

अतिवाला-सं० स्त्री० (A cow two years old) दो वर्ष की गऊ।

अतिभक्ता-सं० स्त्री० गुलाब (The rose)।

अतिभ (भा) रः-सं० पु० (Excessive burden) भारी बोझ।

अतिभारगः-सं० पु० अश्वतर। खच्चर, अश्वभेद-हिं० (Donkey, mule) वै० श०।

अतिभीः-सं० स्त्री० क्षतप्रभा, विद्युत, बिजली (Lightning, flash of Indra,s thud-erbolt)

अतिभोजनम्-सं० क्ली० अधिकमात्रा में भोजन करना अधिक भोजन, अत्याहार। गुण-इससे आलस्य भारीपन, पेट की वेदनासहित गुडगुडाहट तथा शरीर के शिथिल होजाने प्रभृतिकी अधिकता होती है। सु० सू० ४६ अ० कृताकृत०।

अतिमङ्गल्यः-सं० पु० विल्व वृक्ष। बेल का पेड़-हिं०। (ægle or cratœva marmelos, *Corr*)-ले० रा० नि० व० ११।

अतिमञ्जुला-सं० स्त्री० सेवती गुलाब-हिं०। कण्टक सेवतीवृक्षः-सं०। गोलाप रक्त गोलाप-बं० (*Rosa damascena, Mill*) भा० पू० १ भा० पु० व०। मद० व० ३। देखो-सेवती।

अतिमण्डलः-सं० पु० भूधामन वृक्ष। वै० निघ०।

अतिमदुरम-ता०, सिं० मुलेहठी, यष्टिमधु, जेठीमध-हिं०। Glycyrrhizæ (Radix) glabra, *Linn* (liquorice root or liquorice) स० फा० इं०।

अतिमदुरम्-पाल-ता० मुलेठी का सत-हिं०। रुब्बुस्सूस-अ०। Glycyrrhiza. (Extract of-E. of liquorice) स० फा० इं०।

अतिमधुरम्-मल० मुलेठी (Glycyrrhizæ 'Radix' glabra, *linn*) स० फा० इं०

अतिमधुरम्-पालु-ते० मुलेठी का सत-हिं० । Glycyrrhiza (Extract of)। स० फा० इं० ।

अति-मधुरमु-ते० / अतिमधुरा-कना० } मुलेठी (Liquorice root) स० फ० इ० ।

अतिमन्थः.कः-सं० पु० अरनी, अरणी, अग्निमन्थ (Premna serratifolia)

अतिमात्रम्-सं० क्ली० अधिक मात्रा (परिमाण), मात्राधिक्य । मात्रा से ज़ियादा । वा० सु० ८ अ०

अतिमात्र-हिं० वि० [सं०] (Excessive) अतिशय । बहुत । ज़्यादा ।

अतिमानुष-हिं० वि० [सं०](Superhuman) मनुष्य की शक्ति के बाहर का । अमानुषी ।

अतिमित-हिं० वि० [सं०] अपरिमित । अतुल । बे अन्दाज़ । बहुत अधिक । बे ठिकाना । बे हिसाब ।

अतिमुक्तः,-कः-सं० पु० / अतिमुक्त-हिं० सं० पु० / अतिमुक्तका- } स० पु०(१) तिनिशवृक्ष तिनसुना । तिरिच्छ । (Mountain ebony)। अम० । (२) तिन्दुक वृक्ष (See Tindaka) तेंद, गाब-ब०, हिं० ।तत्पर्य्याय पुण्ड्रकः, मल्लिनी, अमरानन्दा, कामुककान्ता-सं० (३) नवमल्लिका भेद । वासन्ती, नेवारी-हिं० । रायबेल-बं० । रायविर-म०, ते० । (J. zambacfloribus multiplicatus) देखो-नवमल्लिका । (४) माधवीलता, कुसरी, कस्तूरमोगरा (Gœrtnera racemosa) प० मु० । अतिमुक्तकमिच्छन्ति वासन्ती माधवीलताम् ।" हला० ५४ । वासन्ती । तिनिश । मे० तचतुष्क । वा० उ० १३ अ० । गाब, तेंद । भा० पू० १ भा० ।

गुण—कसेली, शीतल, मदकर, पित्त, दाह, ज्वर, उन्माद हिक्का, तथा छर्दिनाशक है । रा० नि० व० १० । देखो-तिनिशः । माधवी मधुर, शीतल, लघु, तीनों दोषों को नाश करने वाली है । भा० पू० १ भ० पु० व० । -(कः) हरिमन्थ । हारा० । (५) मरुआ का पौधा ।

अतिमुक्तक तैलम्-सं० क्ली० अतिमुक्त के बीज का तेल, अतिमुक्तक बीज तैल ।

गुण—वातपित्तनाशक, केशवर्द्धक अथवा केश के लिये हित, श्लेष्म कारक, भारी और शीतल है । वा० टी० हेमा० ।

अतिमुक्ता-सं० स्त्री० अतिमुक्तका । रा० नि० व० १० ।

अतिमूत्र-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (Diabetes) वैद्यक में आत्रेय मत के अनुसार छः प्रकार के प्रमेहों में से एक । इसमें अधिक मूत्र उतरता है और रोगी क्षीण होता जाता है । बहुमूत्र ।

अतिमैथुन-हिं० संज्ञा पु० अतिसङ्ग, स्त्री सहवासाधिक्य अधिक स्त्री संग करना ।

अतिमोदा-सं० स्त्री०, हिं० संज्ञा स्त्री० (१) गुचसेयती-हिं० । नवमल्लिका-सं० । सेउति-ब० (Jasminumarboresum, *Roxb*) रा० नि० व० १० ।

(२) गणिकोरी वृक्ष-को० । गणिरि-बं० । रा० नि० व० १० ।

(३) नेवारी का पौधा या फूल ।

अतिमोक्षा-सं० स्त्री० नेवाड़ी पुष्पवृक्ष (Jasminum zambac floribus multiplicatus)

अतियवः-सं० पु० निःसूकयव । काली यव । मद० व० १० । "निशूकोऽतियवः स्मृतः" अर्थात् जौ शूक (सुई) रहित हो उन्हें अतियव कहते हैं । जौ से अतियव में अल्प गुण है । भा० पू० १ भा० धान्य व० ।

अतियुक्तः-सं० त्रि० बारम्बार उपयोग में लायाहुआ स्नेह आदि पञ्चकर्मों का अतियोग अर्थात् अत्यन्त प्रयोग करना । भा० म० ख० १ भा० अ० सा० "स्नेपाहारश्चैतियुक्तैः ।"

अतियोगः-सं० पु० / अतियोग- हिं० संज्ञा पु० } (१) अति प्रयोग,

अतिशयित प्रयोग, अधिक उपयोग में लाना। बा० सू० १७ अ०। (२) अधिक मिलाय। (३) किसी मिश्रत औषधि में द्रव्य ला नियत मात्रा से अधिक मिलाय।

अतिर–अ० सुगधित, सुगधित होना। म० ज०।

अतिरक्त–हिं० पु०
अतिरक्तः–सं० पु०
अतिरक्ता–स० स्त्री०
(१) हिंगुल, सिंगरफ। Cinnabar (Hydrargyri Bis ulphuretum)। (२) ओडहुल, अड़-उलका फूल- हिं०। जवा पुष्प-वृक्ष–सं० (Hibiscus Rosa sinensis, *Linn*) वै० निघ०।

अतिरजःस्राव–हिं० पु० (Menorrhagia) मासिक धर्म का अधिक होना। देखो प्रदर।

अतिरसः–स० पु० पौण्ड्रक-सं०। श० मा०। See pundrakah

अतिरसा–सं० स्त्री० (१) मूर्व्वा–सं०। चूरनहार, मुरहरी,-हिं० (Sansevieria, zeylanica *Willd*) मुर्गी–बं० वै० निघ० २ भा० अप० चि० पलङ्कषा तैले। (२) रारना (Vanda Rox burghii)। मद० व० १। (३) मुलेठी (Liquorice) रा० नि० व० ६। (४) शतावरी हिं०। सतमूली-स०। च० सू० ४।

अतिराष्ट्र–हिं० संज्ञा पु० [सं०] पुराण के अनुसार एक नाग वा सर्प का नाम।

अतिरुक्–सं० स्त्री० (A very beautiful woman) अत्यन्त। सुन्दर स्त्री।

अतिरुच्–सं० पु० (The knee) जान, घुटना।

अतिरुहा–सं० स्त्री० मांसरोहिणी–स०। रोहिणी–हिं०। रा० नि० व० १२। भा० पू० १ भा०। मद० व० १। (See--mansarohini)

अतिरुक्षः–सं० त्रि० अत्यन्त रूक्ष, स्नेह रहित, यथा-कंगु और कोदो प्रभृति। (Very dry)

अतिरेचकः–सं० पु० काकोली काँकला-बं०। (Tizyphus napeca) वै० निघ०।

अतिरोगः–सं० पु० क्षयरोग। क्षयीरोग। राजयक्ष्मा। (Pthisis, consumption) रा० नि० व० २०।

अतिरो(लो)मश–सं० त्रि० (Very hairy shaggy) बहुत रोमयुक्त।

अतिरोमशः–सं० पु० (१) वन बकरी, वन्यछाग (A wild goat)। (२) (A sheep) भेड़, मेष। हारा०। (३) (A large monkey) बड़ा बन्दर (बानर)।

अतिरोमशा–स० स्त्री० वृद्धदारकलता, विधारा, नीलबुह्न। प० मु०। See--Vidhara

अतिरोहण–हिं० संज्ञा पु० [सं०] जीवन व जिन्दगी। (Life)

अतिलंघन–हिं० सज्ञा पु०
अतिलंघनम्–सं० क्ली०
(Excessive fasting) अधिक उपवास अधिक निराहार रहना।

अतिलङ्घनम्–सं० क्ली० वह पुरुष जिसने अतिलंघन (उपवास) किया हो, अत्यन्त उपवास किया हुआ।

अतिलम्बी–सं० स्त्री० सौंफ। Anise (Pimpinella Anisum, *Linn*) भा० पू० १ भा०।

अतिलेशा–सं० स्त्री० ग्रीवा की पहिली कशेरुका कशेरुका (Atlas First cervical vertebra) फड़कह–अ०।

अतिलेशा पृष्ठकीयः–सं० त्रि० (Atlanto occipital)

अतिलेशा पृष्ठकीय-सन्धिः–सं० पु० (Atlanto occipital joint)

अतिलेशाक्षसमीयः–सं० पु० (Atlanto axial ligament)

अतिलोमशः–सं० पु० (१) भेड़। (२) वनबकरी (A wild goat) (३) बन्दर, बानर (A large monkey)

अतिलोहितगध–सं० पु० दौना, दमनक वृक्ष (worm wood)। प० मु०।

अतिवडयम्-त० अतीस Root of (Aconitum Heteroph yllum, *Wall*) स० फा० इं०।

अतिवयस्-सं० क्ली० (Very old, aged) अधिक उम्र वाला, वृद्ध।

अतिवर्त्तुलः-स० पु० मटर, केराय-हिं०। कलाय विशेष-सं०। मटर, वाटुना, कड़ाइ-बं०।(Sida rhombifolia, *Linn*) र० मा०।

अतिवला-स० लघु चोंच, चोंच खुर्द। यह एक बूटी है।

अतिबला-सं० स्त्री० नागबला, गंगेरन, गुलसकरी (Sida Spinosa, *Linn*)

अतिवलाचेट्टु-ता० महाबला, सहदेवी। Seo-Mahabala

अतिविष-गु० अतिवस-ते० अतिविसु-ते० } अतीस। (Aconitum Heterophy llum; *Wall*) सं० फा० इं०।

अतिवासा-ते० अतीस (Aconitum Heterophyllum, *Wall*) लु० क०। बृ० नि० र०।

अतिविकट-सं० त्रि० (Veryfierce) अतिभयावह।

अतिविकटः-स०पु० (A vicious elephant) दुष्ट बिगड़ा हुआ वा पागल हाथी।

अतिविरेचक-हिं० वि० अधिक मात्रा में मल (दस्त) निकालने वाला। (Drastic purgative)

अतिविदाही-सं० त्रि० बड़ी सरसों, राज सर्षप। वै० श०।

अतिविद्ध-स० पु० जाँघ में तीव्र वेदना चलने का रोग। अथ० सू० १८३। १ कां० ६।

अतिविद्ध भेषजी-सं० स्त्री० अत्यन्त पीड़ा को दूर करने वाली औषधि। अथ० सू० १८३। १। कां० ६।

अतिविद्धा-सं० स्त्री० जो नस प्रमाण से अधिक वेधित हो जाय और खून भीतर को प्रविष्ट हो जाय या बहुत अधिक खून निकले वह अतिविद्धा है। सु० शा० ८।

अतिविश्वा-सं० स्त्री० अत्यन्त व्याप्त होने वाली।

अतिविष-मह०, गु० (Aconitum Heterophyllum, *Wall*) अतीस इं० मे० प्लां० फा० इं०। बृ० नि० र०।

अतिविषः,षा-स० स्त्री० अतिविष,-षा-हिं० संज्ञा स्त्री० } अतीस (Aconitum Heterophyllum, *Wall*) रा० नि० व० ६। वा० सू० ३५ अ० वचादि० च० व० ज्व० चि० पिप्पल्यादिघृते। मद० व० १ सा० कौ०।

अतिविषनी-गु० (Aconitum Heterophyllum, *Wall*) अतीस इं० मे० प्लां०।

अतिविषादि क्वाथः-स० पु० अतीस, मोथा, नेत्रवाला, धायपुष्प, कुड़ा की छाल (इन्द्रजौ), अनारदाना, लोध, वरियारा, तुल्य भाग ले यथा विधि क्वाथ प्रस्तुत कर पीने से प्रबल संग्रहणी, ज्वर, अरुचि और मन्दाग्नि का नाश होता है तथा यह धातुबर्द्धक है। बृ० नि० र०।

अतिविशादिचूर्णम्-सं० क्ली० अतीस, त्रिकुटा, सैन्धव यवक्षार, और हींग का क्वाथ या चूर्ण गरम पानी के साथ लेने से आमयुक्त संग्रणी नष्ट होती है अथवा पीपल, सोंठ, पाठा शारिबा दोनों कटेली, चित्रक, इन्द्रयव पांचों नमक, और यवक्षार का चूर्ण बनाकर दही गरम पानी और सुरा आदि के साथ सेवन करने से अग्नि प्रदीप्त होती और कोष्ठगत वायु मिट जाती है। च० सं० चि० अ० १५।

अतिवीजः-सं० पु० बबूर (बबूल) वृक्ष (Acacia Arabica; willd.) वै० निघ०।

अतिवृष्टि-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] पानी का बहुत बरसना जिससेखेती को हानि पहुँचे। अत्यर्थंत वर्षा

अतिबृहत्फलः-सं० पु० पनस। कटल (Artocarpus integrifolia' *Linn*) भा० पू० १ भा०।

अतिबृंहण–सं० त्रि० अत्यधन्त दूध घी तथा मासादि भक्षण द्वारा प्राप्त स्थूलता

अतिबृंहित–हिं० वि० सं० दृढ़। पुष्ट। मजबूत।

अतिव्यथा–सं० स्त्री० अतिवेदना, अतिपीडा, अतिशयित यन्त्रणा।

अतिव्याप्ति–हिं० स्त्री० [सं०] न्याय में एक लक्षण दोष। किसी लक्षण वा कथन के अन्तर्गत लक्ष्य के अतिरिक्त अन्य वस्तु के आ जाने का दोष जहां लक्षण वा किसी लक्ष्य वा किसी के सिवाय अन्य पदार्थों पर भी घट सके वहां अतिव्याप्ति दोष होता है।

अतिव्यात्ताननम्–सं० स्त्री० मुंह फाड़कर, मुंह खोलकर सु० शा० ८ अ श्लो० ८।

अतिव्यायामः–सं० पु० व्यायामधिक्य, अधिक व्यायाम करना अर्थात् कुश्ती व कसरत करना किसी प्रकार के शारीरक श्रक की अधिकता। अधिक व्यायाम पथ्य नहीं है इससे कास ज्वर छर्दि क्लान्ति (थकान) प्यास, क्षय, प्रतमक श्वास तथा रक्तपित्त प्रभृति रोग हो जाते हैं। भा० पू० १ भा०। वा० सू० अ० १।

अतिशष्कुली–सं० स्त्री० तिलकृत रोटिका।

गुण—यह रूक्ष है और श्लेष्म पित्त तथा रक्त को नाश करने वाली भारी, विष्टम्भ (मलावरोध) करने वाली और चक्षु के लिये हितकारी नही है। भा० पू० कृतान्नव०।

अतिशारिवः–सं० स्त्री० बनन्तमूल हिं० बं० अनन्ता सं०। (Hemia esmus indicus', R Br.) र० मा० देखो शारिवा।

अतिशीत–सं० (हिं०) स्त्री० अधिक ठंडा अत्यन्त जाड़ा।

अतिशुपर्णी–सं० स्त्री० बन, मूँग मुद्गपर्णी (Phaseolus trilobus *Ait*)

अतिशूकः–सं० पु० यव स०। जौ, हिं० (Barley) प० मु०।

अतिशूकजः–सं० पु० गेहूँ–हिं० गोधूम–सं०। (Wheat)

अतिश्रृतक्षीरम्–सं० क्ली० अत्यन्त औटाया हुआ दूध यह बहुत भारी होता है वा० सू० ५ अ०।

अतिशोषः–सं० पु० क्षयरोग (Pthisis)। देखो क्षय।

अतिसख्या–सं० क्ली० यष्टिमधुलता, मुलेठी की बेल (Glycyrrhiza glabra) वै० श०।

अतिसजनम्–सं० क्ली० वेध, वेधना, छेदन करना नपंसक।

अतिसान्द्रः–सं० पु० लोबिया बोड़ा हिं०। राजमाष सं०। (A kind of bean) (Dolichos Sinensis)।

अतिसाम्या–सं० स्त्री० मुलेठी की लता, काली गुञ्जा वाली गुञ्जा की बेल। (Abrus precatorius)। वै० श०।

अतिसारः–सं० पु०
अतिसार–हिं० संज्ञा पु० } (१) पर्पटक-सं०। पित्तपाड़ा, पापड़ा–हिं०। (Olden landia corymbosa) (२) स्वनामाख्यात उदरमय रोग। बहुद्रवमल निःसरण रोग। एक रोग जिसमें मल बढ़कर उदराग्नि को मन्द करता हुआ और शरीर के रसों को लेता हुआ बार-बार निकलता है। इसमें आमाशय की भीतरी झिल्लियों में शोथ हो जाने के कारण खाया हुआ पदार्थ नहीं ठहरता और अन्तड़ियों में से दग्ध के रूप में निकल जाता है।

पर्याय—इसहाल–अ०। शिकम रवी, पेचिश रवी–फा०। डायरिया Diarrhœa, डीफ्लक्सियो Defluxio, एल्वी फ्लक्सस Alvi fluxus, कैथार्सिस Carharsis दर्शोदर Purgation–इ०। दस्त, दस्त आना, दस्त लाना, पेट चलना–हिं०, उ०। कोर्स डो वेन्ट्रे Cours de ventre, डीवोयमण्ट Devoyement–फ्रां०। डेर ढर्खफाल Der Durchfall, बाखफ्लस Bauchfluss, दुर्खलाफ Durchlauf–जर०।

परिभाषा—प्रकृति का अतिक्रमण कर गुदा मार्ग द्वारा अत्यन्त प्रवाहित होना अति(ती)सार कहलाता है।

नोट—जिस अवयव के विकार द्वारा यह रोग होता है उसी के नाम से इसे अभिहित करते हैं। जैसे—आमाशयातीसार, आंत्रातिसार तथा यकृदातीसार प्रभृति। इसी भाँति मल में जिस दोष की उल्वणता होती है उसी दोष के नाम से इसे अभिधानित करते हैं। जैसे पित्तज अतिसार, कफज अतिसार तथा वातज अतिसार आदि।

डाक्टरी नोट—जब रोग के कारण दस्त आएँ तब डायरिया और जब विरेचन द्वारा आएँ तब उसे कैथार्सिस तथा पर्गेशन कहते हैं।

कोई कोई डाक्टर इसकी रोगों में गणना न कर केवल इसको उपसर्ग मानते हैं।

निदान

भारी (मात्रा गुरु स्वभाव गुरु) गुण और पाक में भारी, अत्यन्त चिकनी, अत्यन्त रूखी, अत्यन्त गर्म, अत्यन्त पतली, चीजों के खाने से अति स्थूल (अति कठिन), अति शीतल, विरुद्ध (संयोग विरुद्ध, देश विरुद्ध, समय विरुद्ध और मात्रा विरुद्ध), अध्यशन अर्थात् एक भोजन के बिना पचे फिर भोजन करने तथा अजीर्ण और विषम भोजन करने आदि कारणों तथा स्नेह स्वेद वमन विरेचनादि के अति योग, अयोग और मिथ्या योग से, विष भक्षण, भय, शोक दूषित जलपान, अतिशय मद्यपान, स्वभाव तथा ऋतु विपरीत और जल क्रीड़ा करने से, मल मूत्रादि के वेग को रोकने से तथा कृमि दोष आदि कारणों से यह रोग उत्पन्न होता है। सु० उ० ४० अ० मा० नि०।

सम्प्राप्ति

शरीर के दूषित रस, रक्त, जल, स्वेद, मेद और मूत्र आदि सम्पूर्ण जलीय धातु बढ़कर मन्दाग्नि को पैदा कर मल के साथ मिल जाते और वायु द्वारा नीचे की ओर प्रेरित होकर अधिक मात्रा में निःसृत होते हैं, इसी को अतिसार कहते हैं।

वैद्यक के अनुसार इसके ६ भेद हैं

(१) वायुजन्य, (२) पित्तजन्य, (३) कफजन्य, (४) सन्निपातजन्य, (५) शोकजन्य और (६) आमजन्य।

नोट—उपर्युक्त भेदों के अतिरिक्त शार्ङ्गधर में भयजन्य अतिसार भी लिखा है। अस्तु उनके मत से अतिसार सात प्रकार का हुआ। वाग्भट्ट महोदय उक्त छः प्रकार के अतिसारों में आमजन्य की गणना न कर उसके स्थान में भयज अतिसार के वर्णन द्वारा उक्त छः भेदों की गणना की पूर्ति करते हैं। वे पुनः कुल अतिसारों को दो भागों में बांटते हैं। जैसे—(१) साम और (२) निराम तथा एक सरक्त और दूसरा निरक्त

कोई २ आम, पक्व तथा रक्त नामक अतिसारों को अतिसार की अवस्थाएं मानते हैं नकि स्वतन्त्र व्याधियां।

लक्षणों का अनुशीलन करने से भयजन्य और शोकजन्य अतिसारों के लक्षण एक समान पाये जाते हैं। अतएव किसी किसी आचार्य ने इनका पृथक वर्णन नहीं किया और यही प्रशस्त भी जान पड़ता है आम और पक्व अतिसारकी दो अवस्थाएं हैं तथा रक्त पित्तातिसारका परिणाम इसप्रकार कुल अतिसार पांच ही प्रकार के हुये

पाठकों की ज्ञान वृद्धिहेतु अब डाक्टरी मत से अतिसार केभेदों का भय उनके आयुर्वेदिक एवं यूनानी पर्यायों के यहां संक्षिप्त वर्णन कर देना उचित जान पड़ता है डाक्टरी मत से अतीसार के मुख्य २ भेद निम्न हैं।

(१) श्वेतातिसार—सफेद दस्त इसहाल। य ब्यू ज० अ०। डायरिया एल्बा Diarrhœa alba ह्वाइट डायरिया White Diarrhœa इं०।

उष्ण प्रधान देशों में साधारणतः बालकों को इस प्रकार के दस्त आया करते हैं इसके कारण विशेष प्रकार के कीटाणु माने जाते हैं।

(२) हरितातिसार—हरे दस्त। इसहाल अख्जर-अ। ग्रीन डायरिया Green Diarrhœa इं०।

इस प्रकार के दस्त शिशुओं को ग्रीष्म ऋतु वा दन्तोद्भेद काल में आया करते हैं।

(३) शिश्वतिसार वा बालातीसार—बच्चों के दस्त। इन्फैण्टाइल डायरिया Infantile Diarrhœa इं०।

(४) इसहाल वुह्रानी—अ०। क्रिटिकिल डायरिया Critical Diarrhœa इं०।

जब प्रकृति किसी रोग में विकृत दोष को रेचन द्वारा विसर्जित करती है तब उक्त प्रकार के दस्त को इस नाम से अभिहित करते हैं।

(५) श्लेष्मातिसार—कफजन्य अतिसार इसहाल बल्ग़मी अ० म्युकस डायरिया Mucous Diarrhœa इं०।

इस प्रकार के दस्त शरीर में श्लेष्माधिक्य एवं उनके प्रकुपित होने से आया करते हैं और उनमें श्लेष्मा मिली हुई होती हैं।

(६) क्षोभजन्य अतीसार—खराशदार दस्त। इसहाल तहय्युजी-अ० डायरिया क्रैप्युलोसा Diarrhœa Crapulosa' इरिटेटिव डायरिया Irritative Diarrhœa इं०। इस प्रकारके दस्त किसी क्षोभक आहार वा औषध के सेवन द्वारा अंत्र में खराश होने के कारण आया करते हैं।

क्षोभजन्य अतिसार वस्तुतः प्रादाहिक' प्रावा' हिकीय तथा वैशूचिकीय आदि अतिसारों की प्रारम्भिक अवस्था है।

(७) वातातिसार (मास्तिष्कीयातिसार) मस्तिष्क के रोग वा विकार द्वारा उत्पन्न हुआ अतीसार। इसहाल दिमाग़ी—अ०। नर्वस डायरिया Nervous Diarrhœa, कटारल डायरिया Catarrhal Diarrhœa—इं०। यूनानी मतके अनुसार यह अतीसार जो मस्तिष्क से कण्ठ एवं अन्न प्रणाली के रास्ते आमाशय में नज़ूलह् तथा रतूबतों के गिरने से हुआ करता है। इसी कारण उसको इसहाल नज़ली (प्रतिश्यायिक अतिसार) भी कहते हैं।

डॉक्टरी मत से—इस प्रकार का अतिसार प्रायः मनोविकार एवं आन्त्रीय कृमिवत् आकुञ्चन और तदंस्थानीय ग्रंथियो की क्रिया की वृद्धि के कारण हुआ करता है। इस प्रकार के दस्त बहुधा स्त्रियों एवं बालकों को आया करते हैं।

(८) प्रादाहिकातिसार—प्रदाह जनित अतिसार। इसहाल वर्मी—अ०। इन्फ्लामेटरी डायरिया Inflammatory Diarrhœa डायरिया सिरोसा Diarrhœa Serosa' Catarrhal Enteritis इं०। इस प्रकार के दस्त सामान्यतः आंत्रीय श्लैष्मिक कलाके शोथ से और कभी यकृत्प्रदाह के कारण आया करते हैं।

(९) वैशूचिकीयातिसार—

इसहाल मानिद हैजा—अ०। कालरीफॉर्म डायरिया Choleriform Diarrhœa' कॉलरिक डायरिया Choleric Diarrhœa थर्मिक डायरिया Thermic Diarrhœa इं०। उष्ण प्रधान देशों एवं ग्रीष्म ऋतु में आहार विहार आदि दोष के कारण प्रायः इस प्रकारके दस्त आया करते हैं इसमें पित्तातिसार एवं विसूचिका के बहुत से लक्षण मिलते जुलते हैं।

(१०) प्रतिनिधिक अतिसार—

इसहाल इबली—अ०। विकेरियस डायरिया Vicarious Diarrhœa इ०।

वर्षा ऋतु में शीतल वायुके कारण स्वेदावरोध हो जाने से अथवा किसी प्रवृत्त हुये रतूबत के बन्द हो जाने से इस प्रकारके प्रतिनिधिक दस्त आने लगते हैं।

(११) पित्तातीसार—

पित्त के दस्त। इसहाल सफ़रावी—अ०। बिलियरी या बिलियस डायरिया Biliary or Bilious Diarrhœa इं०।

उष्ण प्रधान देश तथा ग्रीष्म ऋतु में आहार आदि दोष के कारण प्रायः इस प्रकार के दस्त आया करते हैं ऐसे दस्तों की आदि में पित्त के वमन भी आते हैं।

(१२) गिर्यातिसार—

पर्वती अतिसार। हिल डायरिया Hill-Diarrhœa इं०

अतिसार का वह भेद जिसमें दस्त विल्कुल सफेद खड़िया मिट्टी और जल के मिश्रण जैसा पतला होता है।

(१३) चिरकारी व पुरातन अतिसार—

पुराने दस्त। इसहाल मुज़मिन—अ०

क्रानिक डायरिया Chronic Diarrhœa

नोट—प्रसंगवश यहां डाक्टरी मतसे सामान्य परिचययुक्त अतिसार के कतिपय भेदों का उल्लेख कर अब आयुर्वेदीय मत से इसके अलग अलग भेदों आदि का पूर्णतया वर्णन होगा। अन्त में इसकी सामान्य चिकित्सा व पथ्य आदि देकर इस वर्णन को समाप्त किया जायगा। इसके पृथक २ भेदोंकी चिकित्सा क्रम उन उन नामोंके सामने दी जायगी। यूनानी वर्णन एवं भेद के लिये देखिये—इस्हाल।

अतिसार के पूर्वरूप

जिस मनुष्य को अतिसार होने वाला होता है उसके हृदय, गुदा और कोष्ट में सुई चुभाने की सी पीड़ा होती है शरीर शिथिल पड़ जाता है मल का विबंध अर्थात् मलावरोध आध्मान और अन्न का अपरिपाक होता है वा० नि० अ० ८।

माधव निदान में नाभि तथा कुक्षि (कोख) में सुई छिदने की सी पीड़ा और अधोवायु का रुक जाना, इतना अधिक लिखा है।

अतिसार के लक्षण

(१) वातातीसार—इसमें जलवत् थोड़ा थोड़ा शब्द (गुड़गुड़ाहट) और शूल से युक्त बधा हुँआ झागदार पतला, छोटे छोटे गांठों से युक्त, बराबर जले हुये गुड़ के समान पिच्छिल (चिकना) कतरने की सी पीड़ा से संयुक्त मल निकलता है इसमें रोगी का मुख सूख जाता है गुदा विदीर्ण हो जाती (गुदभ्रंश) और रोमांच होता है रोगी कुपितसा मालूम होता है वा० नि० अ० ८ माधव निदान में जलाई लिये हुये रूखा मल उतरना, कटि, जांघ और पिंडलियों का जकड़ना ये लक्षण अधिक लिखे हैं।

(२) पित्तातिसार—इसमें दस्त पीले व लाल रंग के होते है गुदा में जलन तथा पाक हो जाता और रोगी प्यास और मूर्छा से पीड़ित होता है मा० नि० वारभट्टमहोदय ने काला हरा हरी दूबके समान रुधिरयुक्त अत्यन्त दुर्गन्धि युक्त दस्त होना दस्तों से रोगी की गुदा में दर्द होना शरीर में दाह और स्वेद होना ये लक्षण अधिक लिखे हैं

(३) कफातिसार—इसमें मल सफेद गाढ़ा चिकना, कफ मिश्रित, आमगन्धियुक्त आता तथा रोमहर्ष होता है। मा० नि०। कफातिसार में गाढ़ा, पिच्छिल तन्तुओ से युक्त, सफेद स्निग्ध मांस और कफ युक्त बारबार भारी (जल में डूब जाने वाला) दुर्गन्धि युक्त, विबद्ध, निरन्तर वेदना युक्त, प्रवाहिका से युक्त थोड़ा-थोड़ा दस्त होता है। इसमें रोगी को निद्रा, आलस्य, अन्न में अरुचि, रोमहर्ष और उत्क्लेश होता है। वस्ति, गुदा और उदर में भारीपन होता है और दस्त होने के पीछे भी एसा मालूम होता रहता है कि दस्त नहीं हुआ है। वा० नि० ८ अ०।

(४) त्रिदोषज वा सान्निपातिकातिसार

शूकर की चरबी के समान व मांस के धोए पानी के सदृश तथा वातादि तीनों दोषों के लक्षण जिसमें हो अर्थात् जो दोषत्रय से उत्पन्न हो उसे सान्निपातिकातिसार कहते हैं। यह कष्टसाध्य होता है। मा० नि०। वा० नि० ८ अ०।

(५) शोकातिसार के लक्षण—

जो प्राणी पुत्र, स्त्री, धन, बांधवादि के नाश होने से अति शोकयुक्त होकर अल्प भोजन करते हैं उनकी वाष्पोष्मा नेत्र, नासिका, कण्ठ आदि का पानी वायु से कोठे में प्राप्त हो अग्नि को मन्द कर रुधिर को दूषित कर देती है जिससे घुंघची के समान लाल रुधिर गुदा के मार्ग होकर बिष्टा मिला हुआ या विष्टा रहित, निर्गंध वा गन्धयुक्त निकलता है। शोक जनित अतिसार प्रायः अति

कठिन होता है। कारण यह शोक शांत हुये बिना केवल औषधोंसे शांत नहीं होता, इस लिए इसे कष्टकाध्य माना गया है। मा० नि०।

नोट—एक भयज अतिसार भी होता है जो भय द्वारा चित्त के क्षोभित होने पर पित्त से संयुक्त वायु मल को पतला कर देता है, तदनन्तर वात पित्त के लक्षणों से युक्त गरम, पतला, प्लवता युक्त जल्दी जल्दी मल निकलता है। इसमें प्रायः शोकातिसार के लक्षण घटित होते हैं। वा० नि० ८ अ०।

(६) आमातिसार—

जब अन्न के न पचने के कारण प्रकुपित हुये दोष (वात, पित्त और कफ) अपने मार्ग को छोड़ कर कोष्ठ रसादि धातु तथा मल को दूषित कर बारबार गुदा मार्ग से अनेक प्रकार के मल बाहर निकालते हैं, तब उसको आमातिसार कहते हैं। इससे रोगी के पेट में अत्यन्त पीड़ा होती है।

(७) रक्तातिसार—

पित्तातीसार रोगी यदि अत्यन्त पित्तकारक द्रव्यों का भोजन करे तो उसको निश्चय रूप से रक्तातीसार रोग हो। रक्तातिसार के वातजादि विशेष लक्षण उपर्युक्त अतीसार के लक्षण के समान होते हैं। अतीसार रोग में अतड़ी आदि में घाव होने से भी मल के साथ रक्त गिरता है।

रोगविनिश्चय—

कुछ व्याधियां ऐसी हैं जो अतीसार से बहुत समानता रखती हैं। अत एव इसके ठीक निश्चीकरण में बहुधा भ्रम हो जाया करता है। वे निम्न हैं—

१-विशूचिका या वैशूचिकातिसार, २-ग्रहणी, ३-प्रवाहिका और ४-मलावरोध जन्य आमाशयस्थ श्लैष्मिक कलाओं का क्षोभ।

यहां पर अतीसार के साथ इनकी तुलनात्मक व्याख्या करदी जाती है जिससे अतीसार एवं उक्त व्याधियों के ठीक निदान करने में सुविधा रहे।

(१) अतीसार के प्रारम्भ में मल संयुक्त किन्तु पश्चात् को मल संयुक्त एवं पतले दस्त आते हैं और उनका रंग आरम्भ से अन्त तक पीला अथवा दोष नुसार विविध वर्ण मय होता है। परन्तु विशूचिका में मल संयुक्त न रहकर केवल सड़े कोहड़े के जल की भाँति पतले दस्त आते हैं।

अतीसार अपने उत्पादक विशेष कारणों से उत्पन्न होता है। पर विशूचिका में स्पष्टतया कोई विशेष कारण लक्षित नहीं होता इसमें वमन और पेशाब बन्द हो जाते हैं और रोगी शीघ्र असीम निर्बलता का अनुभव करता है। अतीसार में प्रायः ऐसा नहीं होता।

मल में पित्त का पाया जाना सदा अतीसार का सूचक है। विशूचिका से वमन बहुत आते हैं और वे एक वर्ण रहित द्रव होते हैं। अतीसार में वमन बहुत कम आते हैं और जब कभी आते भी हैं तो उनमें पित्त अथवा अजीर्ण आहार का कुछ अंश विद्यमान रहता है।

(२) ग्रहणी—आहार के पचने पर व्याधि द्वारा अतिशय साम वा निराम मल निकलना अतीसार कहलाता है। अत्यन्त मल निकलने के कारण इसको अतीसार कहते हैं, यह स्वाभाविक ही शीघ्रकारी है।

परन्तु, ग्रहणी रोग में भुक्त अन्न के अजीर्ण होने पर कभी आम सहित और कभी साम (भुक्त अन्न) मल निकलता है। अन्न के जीर्ण होने पर कभी पक्व मल और निकलता है और कभी कुछ भी नहीं निकलता। कभी विकार हो बार बार बंधा हुआ और कभी ढीला दस्त होता है। यह रोग चिरकारी होता है और मल इकट्ठा हो होकर निकलता है। अतीसार और ग्रहणी में यही अन्तर है। ग्रहणी चिरकारी है और अतीसार अशुकारी है।

(३) प्रवाहिका (Dysentery)

नाना विध द्रव धातु का प्रचुर परिमाण में निकलना अतीसार और केवल कफ का निकलना प्रवाहिका कहलाती है। ज्वरांश, मरोड़, गुदा में

एक अवर्णनीय वेदना की अनुभूति होना, प्रायः अल्प मात्रा में आम व रक्तमिश्रित मल का निकलना प्रवाहिका के सामान्य लक्षण हैं। यद्यपि प्रारम्भिक अवस्था में कभी कभी अतिसारवत प्रचुर मात्रा में जलीय वा मल मिश्रित दस्त आते हैं, पर मरोड़ आदि प्रवाहिका के पूर्वोक्त लक्षण तथा अन्त्र पुट एवं सरलांत्राधः भाग का मृदु स्पर्श रोग के प्रवाहिकीय स्वभाव को प्रगट करते हैं। रोग के पूर्व इतिहास में उग्र प्रवाहिका का अभाव अथवा श्लेष्मा एवं गुदस्थ वेदनानुभूति का न होना और मल के साथ रक्त का कम आना आदि लक्षण अतीसार सूचक हैं।

(४) मलावरोध के कारण बिलकुल अतीसार के समान ही अवस्था उपस्थित हो सकती है—प्रायः पतली श्लेष्मा व मल मिश्रित दस्त आने लगते हैं। परन्तु, अन्वेषण करने पर वे मात्रा में कुछ कम पाए जाते हैं।

अतीसार के पक्व अथवा अपक्व होने के लक्षण अर्थात् (सामत्व वा निरामत्व)

वह मल जो पूर्वोक्त वातादि लक्षणों से युक्त हो तथा जल में डालने से डूब जाय और अति दुर्गन्धित या पिच्छिल (लसदार) हो उसको आम वा अपक्व कहते हैं। साम तथा निराम भेद से अतीसार को दो वर्गों में बांटते हुये वाग्भट्ट महोदय साम अर्थात् आमातीसार के मल को इसी प्रकार का होना बतलाते हैं। वे और भी कहते हैं कि इसमें रोगी के पेट में पीड़ा, गुड़गुड़ शब्द होना, विष्टम्भ वा खट्टा प खाना होना, लार से मुंह भरा रहना एवं मल बबूलार होना आदि लक्षण होते हैं।

इसके विपरीत जब देह हलका हो, मल जल में न डूबे और दुर्गन्धि एवं लुआब रहित हो तब उस मल को पक्व मल कहते हैं। वाग्भट्ट महोदय ने इसे निराम लिखा है और वे लिखते हैं कि निराम के लक्षण साम से विपरीत होते हैं, कफजन्य होने के कारण पक्व होने पर भी यह जल में डूब जाता है। इसे निरामातीसार वा पक्वातीसार कहते है।

अतिसार की असाध्यता

जिस अतीसार रोगी का मल पके जामुन के समान काला, यकृत् पिण्ड के समान कृष्ण-लोहित वर्ण का, साफ तथा घृत, तैल, वसा, मज्जा, बेशवार (पक्व मांस विशेष) के रंग का दूध, दही तथा धुले हुये मांस के जल के समान वर्ण का, चित्र विचित्र रंग का, चिकना, मोर की पूंछ की चन्द्रिका के सदृश वर्ण का, घन (भारी) मुर्दा की सी दुर्गन्धियुक्त, मस्तक की मज्जा के समान गन्धयुक्त (मस्तकस्थित स्नेह तुल्य आभायुक्त), उत्तम गन्ध वा दुर्गन्धियुक्त अत्यधिक मल निकले और जिसको प्यास, दाह, अंधेरा आना, श्वास, हिचकी, पार्श्वशूल, अस्थिशूल, इन्द्रियों में मोह, अनिच्छा, मन में मोह ये लक्षण हों तथा जिसकी गुदा की बलियाँ (आँटे) पक गई हों और जो अनर्थ भाषण करे ऐसे अतीसारी को वैद्य छोड़ दे। अपरंच जो मलद्वार धोने में असमर्थ हो जिसके बल व मांस क्षीण हो गये हों, अत्यन्त अफरा हो सूजन हो, अतिसार के उपद्रवयुक्त जिसकी गुदा पक गई हो और शरीर शीतल हो उसको वैद्य त्याग दे और भी जो मनुष्य श्वास, शूल तथा प्यास से पीड़ित हो, बल मांस हीन हो तथा ज्वर से पीड़ित हो उसका और विशेष कर वृद्ध रोगी का अतीसार नाश कर देता है।

अतिसार निवृत्ति के लक्षण

जिस मनुष्य के मलसे भिन्न मूत्र उतरे अर्थात् दोनों की क्रियाएँ पृथक पृथक हो, मल अलग उतरे और मूत्र अलग, शुद्ध अपानवायु खुले, अग्नि दीप्त और कोठा हलका हो उसको अतीसार से मुक्त जानना चाहिये।

अतीसार की सामान्य चिकित्सा

अतीसारी को सुखपूर्वक शय्या पर लिटाए रखें और उसके शरीर को गरम रखें। रोगारम्भ काल से २४ घन्टे पश्चात् तक उसे किसी प्रकार

का आहार न दें, प्रत्युत उपवास रूप लंघन कराये।

यथा वाग्भट:—

अतीसारोहि भूयिष्ठं भवत्यामाशयान्वय:
हत्वाग्निं वातजेऽप्यस्मात्प्राक् तस्मिन्लंघनं
हितम्। वा० चि० अ० ६।

अर्थात्—अग्नि को मन्द करके अतिसार रोग आमाशय में उत्पन्न होता है। इसलिए वातज अतिसार में भी प्रथम उपवास रूप लंघन देना हित है। अपि शब्द से कफादि जन्य अतिसार में भी लघन हित है। प्राक् शब्द के प्रयोग से यह समझना चाहिये कि उत्तर काल में लघन कराना हित नहीं है।

अपरञ्च यदि रोगी बलवान हो तभी लंघन भी कराना चाहिए। अन्यथा दुर्बलता की दशा मे लघु पथ्य (पाचक तथा अग्निसंदीपक) की व्यवस्था करनी चाहिये।

अन्न के ल क्वथित कर शीतल किया हुआ जल, फाड़े हुए दूध का पानी तथा वच, अतीस, नागरमोथा, पित्तपापड़ा, नेत्रबाला, और सोंठ इनमें से किसी एक के साथ पकाया हुआ पानी १ छ० की मात्रा में ३-३ घटा पश्चात् रोगी को तृषा उत्पन्न होने पर देते रहे। २४ घंटे पश्चात् क्षुधा लगने पर उपयुक्त भोजन काल में उसको अधोष्ण तरल आहार २-२ छ:० की मात्रा में ३-३ घन्टे के अन्तर से दें। हलके अन्न से रोगी को शीघ्र ही अन्न में रुचि बढ़ जाती है और उसकी जठराग्नि प्रदीप्त तथा देह बलिष्ट होता चला जाता है।

अतः पका कर शीतल किया हुआ दूध उत्तम आहार है। उक्त दूध में ३ ग्रेन सोडियम् साइट्रेट प्रति १ छ० दूध में मिलाकर देना उपयोगी होता है। अथवा पावभर दूध में ३० बूंद मधुर चूर्णोदक (मीठा चूने का पानी) मिलाकर देना लाभदायक है। यदि दूध से उदराध्मान हो तो दूध के स्थान में अरारोट या साबू (साबूदाना) पका कर दें। पुनः मूंग के दाल का पानी, दाल भात, शोरवा चावल, खिचड़ी और दूध तथा पाव रोटी प्रभृति भी दे सकते है।

अतिसार रोगी को जल के स्थान में तक्र, पेया, तर्पण, सुरा और मधु यथा सात्म्य अर्थात् प्रकृति के अनुकूल व्यवहार कराएँ। पके केले को जल में भली भांति मल छान कर पुनः किञ्चित् मिश्री मिला कर आहार के स्थान में व्यवहार कराते रहना अत्युपयोगी है। उसके आहार में ग्राही अग्निसंदीपक और पाचक औषधियों का समावेश होना अत्यावश्यक है।

इक्त प्रतीकारों द्वारा जब रोग शमन हो जाय तब रोगी को क्रमशः उसके पूर्व आहार पर ले आएँ। परन्तु अधिक जल वा दुग्ध से परहेज रखें।

मीठे अनार का स्वरस थोड़ी मिश्री मिला कर देना रोगीके बल का रक्षक एवं आमाशय की शोधक वा नाशक है। और किसी वस्तु को न देकर केवल इसको ही देते रहना पर्याप्त है।

उपचार

चिकित्सक को रोगी तथा रोग की दशा को भली प्रकार परीक्षा करने के पश्चात् खूब सोच समझ कर किसी औषध की व्यवस्था करना उचित है। प्रारम्भ में ही किसी संग्राही औषध को देकर तत्क्षण दस्त बन्द कर देना उचित नहीं। यथा—

प्रयोज्यं न तु संग्राहि पूर्वमामातिसारिणि।
वा० चि० ६ अ०।

क्यों कि पहली दशा में धारक औषध द्वारा मल निरोध करने पर पेट फूलना, ग्रहणी, बवासीर और शोथ प्रभृति उत्पन्न हो सकते हैं। परन्तु दस्त हो जाने पर भी यदि दोषों की प्रबलता रहे वा रोगी शिशु, वृद्ध अथवा दुर्बल हो तो पहिले ही से धारक औषध का प्रयोग करना चाहिये।

यदि रोगी शूल आनाह और प्रत्येक से पीड़ित हो तो उसे वमन कराना हित है। और यदि दोष अत्यन्त वृद्धि को प्राप्त हो गये हों तथा विदग्ध अर्थात् पक्वापक्व आहार से मिलकर अति-

सार उत्पन्न करते हों तो उन सब उत्क्लेश जनक अर्थात् अतिसार को उत्पन्न करने में समुद्यत और बिना यत्न ही चलने में प्रवृत्त हुये दोषों में पचनादि किसी औषध का प्रयोग न करके केवल पथ्य अर्थात् हितकारी आहार का ही सेवन कराना उपयोगी है।

पर यदि मलावरोध के कारण थोड़ा-थोड़ा मल निकलने से उदर में अफरा, भारीपन, शूल तथा स्तिमिता उत्पन्न हो अथवा उदर में कोई क्षोभक द्रव्य या अजीर्ण या सड़ा गला आहार हो तो सर्व प्रथम किसी सामान्य मृदुभेदक औषध को देकर पेट को साफ करना चाहिये। फिर दस्तों को रोकने के लिये धारक औषध का व्यवहार करना उचित है।

पक्वातिसार

आम के पके हुये होने की दशा में प्रथम बार मृदुधारक और बाद को बलवान धारक औषध व्यवहार करनी चाहिये।

अत्यन्त निर्बलता की हालत में उत्तेजक औषध यथा सुरा (ब्रांडी) जल में मिलाकर देना लाभदायक होता है।

अब स्वानुभव बहुशः योगों में से यहां कतिपय ऐसे योगों का उल्लेख किया जाता है जो अतीसार की प्रत्येक अवस्था की चिकित्सा में अत्युपयोगी सिद्ध हो चुके हैं और सहस्रों बार परीक्षा की कसौटी पर आ चुके हैं। मात्रा रोगी, रोग तथा अवस्था आदि के अनुसार न्यूनाधिक हो सकती है। इनको कोष्ठ शुद्धि पश्चात् ही देना चाहियें। योग निम्न है:—

(१) अवयव—सफेद राल, अतीस, मोचरस, दालचीनी, छोटी इलायची के बीज, कर्पूर, अजवायन और सफेद जीरा।

निर्माण-विधि—इन सब को सम भाग लेकर चूर्ण करें फिर खट्टे अनार के रस में भली भाँति १२ घंटे तक खरल करके चना प्रमाण गोलियाँ बनाएँ।

अनुपान—जल, अर्क, सोंफ और अर्क पुदीना।

(२) अवयव—बटांकुर, अहिफेन शुद्ध-हींग घी में भुनी हुई, जीरा भुना, शङ्ख भस्म, सुहागा भस्म और पोदीना।

निर्माण-विधि—इन सबका चूर्ण समान भाग लेकर कुड़ा की छाल के रस की सात भावना देकर एक रत्ती प्रमाण की गोलियां प्रस्तुत करें।

सेवन विधि—खट्टे अनार के रस के साथ आवश्यकतानुसार १ या २ वटिका दिन में २–३ बार दें।

(३) अवयव—भङ्ग, छोटी इलायची, सफेद जीरा, जायफल, कर्पूर, अनारदाना तुर्श और कौड़ी की भस्म।

निर्माण-विधि—इनको समान भाग लेकर बारीक चूर्ण कर रखें।

सेवनविधि व मात्रा—३ रत्ती से १ माशा तक उक्त चूर्ण को अर्क पुदीना के साथ सेवन कराएँ।

(४) मेंथी भुनी, जीरा भुना, रूमी मस्तगी, कर्पूर, इन्द्रयव, जामुन की गुठली और आम की गुठली। इन सबको समभाग लेकर बारीक चूर्ण करें और जितना यह चूर्ण हो उतनी ही मात्रा में शुद्ध मांग का चूर्ण मिलाकर कागदार बोतल में सुरक्षित रखें।

मात्रा—बच्चों को आधी रत्ती से १ रत्ती। पूर्ण वयस्क मात्रा—२ रत्ती से १ माशा तक।

अनुपान—अर्क पुदीना और अर्क सोंफ।

शूलयुक्त अतिसार में—

सत अजवायन, सत पोदीना, जौहर नौसादर, जीरा सफेद भुना हुआ और सोंठ प्रत्येक २–२ तो०, छोटी इलायची दाना ६ मा०, शंख भस्म १ तो०, कौड़ी भस्म १ तो० और मूली का क्षार १ तो०। निर्माण विधि—इन सबको पुदीना के रस से बारह पहर घोट कर सुखा लें पुनः चूर्ण कर शीशे के कागदार बोतल में वायु से सुरक्षित रखें। मात्रा—१ रत्ती से ६ रत्ती तक।

अनुपान—शुद्ध जल। गुण—उक्त प्रकार के शूल तथा अन्य सभी प्रकार के उदर शूल की

दशा में इसकी एक मात्रा देते ही तत्काल शूल की शांति होती है।

डॉक्टरी योग—

(१) सोडा वाईकार्ब	१ ग्रेन
स्प्रिरिट अमोनियां ऐरोमेटिक	२० मिनिम (बूंद)
स्प्रिरिट क्लोरोफार्म	५ मिनिम
टिंक्चर कार्ड को०	२० मि०
टिंक्चर केनाबिस इण्डिका	५ मिनिम
एक्का एनिस	१ आउंस

यह एक मात्रा है।

ऐसी ही एक एक मात्रा दिनमें तीन बार देनी चाहिये।

उपयोग—यह अतिसार के लिये सर्वोत्कृष्ट वायुनिःसारक औषध है।

(२) स्प्रिरिट क्लोरोफॉर्म	१ ड्राम
स्प्रिरिट अमोनिया ऐरौमैटिक	१ ड्राम
टिंक्चर ओपियाई	१ ड्राम
,, कैनाबिस इण्डिका	१ ड्राम
,, कार्ड० को०	२ ड्राम
,, कुर्चियाई	१ ड्राम
,, कैटेक्यू	१ ड्राम
रैक्टीफाइड स्प्रिरिट	८ आउस
शुगर प्योर (शुद्ध शर्करा)	६ आउंस

इनको भली प्रकार मिलाकर स्टार्पर्ड (शीशे के कागदार) बोतल में रक्खें।

मात्रा—पूर्ण वयस्क मात्रा १० से ३० बूंद तक बालक को २ से १० बूंद तक (अवस्थानुसार।

अनुपान—इसकी एक मात्रा द्विगुण शुद्ध जल में मिलाकर रोगानुसार दिन में ३ बार अथवा तीव्रता की हालत में २-२' ३-३ घन्टे के अन्तर से दें।

उपयोग—इसे अतिसार की प्रत्येक अवस्था में दे सकते हैं यह उक्त रोग की रामबाण औषध है और शतशोऽनुभूत है।

नोट—अतिसार के अन्य भेदों की चिकित्सा आदि तथा योगों को क्रम में उनके पर्यायों के सामने देखिये।

अतिसार में प्रयुक्त होने वाली ओषधियां (आयुर्वेदीय तथा यूनानी)

अमिश्रित

सुगन्धवाला, लवंग, नीलोत्पल (नीलोफर) उशीर, (खस), लोध, पाठा, वच, चिरायता, धायपुष्प, (धातकी) दाडिम, अर्थात् अनारकी छाल, (रस), पत्र फलत्वक, और (बीज) सप्तला, (चिरकारी व पुरातन), गारीकून, विल्व, सप्तपर्ण, भङ्ग, अण्डखरबूजा, काफी, (मलेक्षफल), दूर्व्वा, जामुन, (जम्बु), सरपुंखा, निरमली, (कतक) हरीतकी अंगूर, लाल मुनक्का, चौलाई, (तण्डूलीय), सीताफल, (शरीफा) सुपारी, समुद्रफल, समुद्रशोष कचनार, पलास-निर्यास, (कमर कस ढांक का गोंद,) पतंग देवदारु, दालचीनी, जावित्री, नागरमोथा, कसेरू, तिन्दुक, गोजिव्हा, आमला, कपित्थ, और भूम्यामलकी, (उग्र या पुरातन) ईसबगोल का छिलका, कुड़ा की छाल, इंद्रजौ, राजन, कानन, एरेण्ड, जख्महियात, (घाव पत्ता) चन्द्र शूर, आम्र, (बीज वा छाल तथा निर्यास) काया कुटी और केला (विसूचिका तथा ग्रीष्म) जायफल नीबू का रस, सन्तरा का रस, मेंहदी, कृष्णजीरक, कमल, कर्पूर दरियाई नारियल, जहर मुहरा खताई अर्क, सौफ, अर्क पुदीना (अर्क नाना) अहिफेन, पत्थर का फूल, करञ्ज, पीतशाल, साल बीज, रुद्राक्ष, अजवाइन माजूफल, और कतक, (दन्तोद्भेदजन्य) रेवन्दचीनी, और चूर्णोदक, (बालातीसार) काकड़ासिंगी, और एरण्ड तैल अतीस; (प्रवलज्वरातीसार) अगस्तिया की जाति के वृक्ष, शाल, रोहिना और स्पञ्ज, (एटोनिक अर्थात् आमाशय नैर्बल्यजन्य) कुचिला, आसन प्रभृति, पिण्डतगर भेद, अर्जुन, बहेड़ा, तिर्याक फारूक, जंगली काली मरिच आदि और शृंगाटक (सिंघाड़ा प्रभृति), (प्रासूतिक) सम्भालू प्रभृति, धातकी (धवपुष्प), मेंथी, अन्तमल (जंगली पिकवन); मूत्र (वृष का), आद्रक और बदरी प्रभृति।

अतिसार में प्रयुक्त डॉक्टरी औषध

अक्सगल, (वृषपित्त) अर्जेन्टाइ नाइट्रास, अर्जेण्टाई क्लोराइडम्, आर्सेनिक (संखिया), आँइल टेरेबिन्थीनी (निशोथ तैल), यूरिका (सुपारी), आलस्टोनिया (सप्तपर्ण) युवी असोंइ (रीछ दाख), इथेप्ट (सुराबीज), इपिकेक्वाना, ईसबगोल, एसिड नाइट्रिक (शोरकाम्ल), इन्फ्युजम लाइनाई (अतसी फांट), एकोरस (वच) एलम (फिटकरी), अकेशिया (कीकर), ओपियम् (अफीम), एसिड सल्फ्युरिक डिल्ल (जलमिश्रितगंधकाम्ल), अकेशिया कैटेचू (खदिर), क्युप्राई अमोनिया स. फास. कलम्बा, कार्बोलिक एसिड (कजलाम्ल), क्लोरोफार्म (संमोहिनी), केम्फर (कपूर), केनाविश इण्डिका (भंग) कैल्सिस कार्बनास, कैल्सिस हाइपोफास्फोरस, कैलाट्रोपिस, काफी, कैप्सिकम् (लाल मिर्च), कैटाप्यु (खदिर), कैसकेरिल्ला, कुर्ची (कुटज त्वक्) क्रियोजोट, क्युप्राई सल्फास (ताम्र गंधिद) कस्पेरिया, कैस्टर आइल (एरण्ड तैल), काइनो (विजयसारनिर्यास), क्यासिया, कोवार्कस, गाव, गैलिक एसिड (मांजवाम्ल), डिंकक्ट ग्रेनेटा, जिन्साइ सल्फास, जिंन्साई आक्साइडम्, टैनिक एसिड (कषायिनाम्ल), नाइट्रो हाइड्रो क्लोरिक एसिड नक्सवामिका (कुचिला) पोटास सल्फ्युरेटा, प्लम्बाई एसिटास, पलास गोद, माइरिष्टिस, मैटिकों, फेरम (लोह) विस्मथम ऐल्बम, बिस्मथाई टैनास, बाबुई तुलसी, बेल, रक्तमोक्षण, रथाटनि, लाइकर फेरि यर नाइट्रिस, लाइकर फेरि पर क्लोराइड, लाइकर हाइड्रार्ज, विरिट्राम विरिडि, सैलिसिलेट, सिमा रियुत्रा, सल्फ्युरिक एसिड, सथमाइडि, सोडियाई क्लोराइडम् (सैधव) सल्फर, (गंधक), सैलोल, हाइड्रार्ज करोसिव सब्लिमेट और हिमेटिक सिल्वाइ ।

(वातातिसार में) अर्जेण्टाई नाइट्रास इपिकाक्वाना, एसिड सल्फ्युरिक डिल, ओपियम् (अहिफेन), कलम्बा, काफी केम्फर (कपूर) कुप्राई सल्फास, कस्पेरिया, करोसिव सब्लिमेट, जिन्साइ आंक्साइडम्, नाइट्रिकएसिड डाइल्युटेड, पेप्सीन, प्लम्बाई एसिटास, माष्ठिक बिस्मथाई कार्ब, टिंकचर केनाबिस इण्डिका, स्युवार्ब, लाइकर हाइड्रार्ज, लाइकर कैल्सिस, लाइकर फेरि पर नाइट्रिस, सैलोल, हाइड्रार्ज कम क्रीटा, हाइड्रार्ज करोसिव सब्लिमेट ।

नोट—अतिसारोक्त योगों का वर्णन क्रमागत इसके भेदों की चिकित्सा लिखते समय किया जाएगा ।

अतिसार नाशक शास्त्रीय योग

नेत्रबाला, अदरख, नागरमोथा, पित्तपापड़ा और खस इन्हें पकाकर वस्त्र से छानकर पिलाऐ, क्षुधा लगने पर नियत समय पर लाजामण्ड दें ।

शालपर्णी, पृष्टपर्णी, बड़ी कटेरी, छोटी कटेरी खिरेटी, गोखरू, पाठा, सोंठ, धनिया इन्हें भोजन के साथ क्वाथ कर देने से अतिसार शांत होता है शालपर्णी, खिरेटी, बेलगिरी, पृष्टपर्णी इनसे सिद्ध की हुई पेया नीबू तथा अनार का रस डाल कर पीने से कफ और पित्तातिसार दूर होता है । आमातिसार से पीड़ित रोगी को प्रथम संग्राही तथा कब्ज करने वाली कोई भी औषध कदापि न दें, क्योंकि ऐसा करने से आदि में ही दोष वध्य हो जाने से शोथ, पांडु, प्लीहवृद्धिवर्द्धन, कुष्ट, गुल्म, उदरशूल, ज्वर, दण्डक, अलसक, आध्मान अर्श, संग्रहणी इत्यादि रोग पैदा हो जाते है । जिनका दोष वृद्धि होकर बल, धातु अधिक क्षीण हो गए हों तथा आम भी जाती हो तो उसे क्रमशः संस्तम्भन कर देना उचित है । जिस रोगी को थोड़ा थोड़ा बँधा हुआ शूल सहित दस्त आते हों ऐसे रोगी को इड़ और पिप्पली की चटनी द्वारा लघु विरेचन देना चाहिये । चक्र द० अति० चि० ।

अतिसारकी-सं० स्त्रि० } –हिं० वि० अतिसार रोगी
अतिसारी

(Dysenteric, afflicted with

dysen tery Catharic) वै० श० ।

अतिसारकुठारः- सं० पु० बड़ी इलायची, वच्छनाग, धतूर के बीज, सुहागा, इन्द्रजौ, जीरा, सोंठ, अहिफेन, नागभस्म, धवपुष्प, अतीस, करञ्ज के बीज प्रत्येक समान भाग चूर्णकर धतूर के पत्र के रस में घोट कर सुखाकर चूर्णकर लें । मात्रा—१-३ रत्ती । अनुपान शहद । यह शिव जी का कहा योग है । वा० ।

अतिसारघ्नः-सं० पु० क्षेत्र पापड़ा, खेतपापड़ा, दवन पापड़ा,—हिं०। क्षेत्रपर्पटक—सं० (Olden landiabiflora. *Roxb*) वै० श० ।

अतिसारघ्नी-सं० स्त्री० अतिसार नाशक औषध, अतीस (Aconitum heterophyllum, *Wall*) वै० निघ० ।

अतिसार दलनोरसः-सं० पु०

(१) पारा, गंधक, वच्छनाग प्रत्येक समान भाग ले चित्रक के क्वाथ के साथ पीसे, फिर इसे कौड़ियों के भीतर भरें । उन कौड़ियों के मुखों को पिसे हुये भिलावों की लुगदी में बन्द करके हांड़ी में रख उसका मुख बन्द कर दें और दस बारह जंगली कंडो में पकाए । इसी तरह तीन पुट देने से सिद्ध होता है । मात्रा—३ रत्ती । गुण—अतिसार, संग्रहणी, शूल और मन्दाग्नि को नष्ट करता है । अनुपान—भांग और जीरा । र० यो० सा० ।

(२) तूतिया, पारा, वच्छनाग, गंधक शंख भस्म, अभ्रकभस्म, अफीम और धतूरबीज प्रत्येक समान भाग लें । फिर भांग के रस और समुद्र-शोष से पृथक पृथक सात सात भावना दें । मात्रा—१ रत्ती । गुण सम्पूर्ण अतिसारों को दूर करता है । रसायन सं० अतिसाराधिकारे ।

अतिसारनृसिंह रसः-सं० पु० शुद्ध अहिफेन, २ तो०, शुद्ध पारद १ तो०, शुद्ध गंधक १ तो०, प्रथम पारद, गंधक की कजली कर पुनः अहिफेन मिश्रित कर भंग के रस से मर्दन करें । इसी तरह धतूर के बीज रस से मर्दन कर १ रत्ती प्रमाण गोलियां बनाऐ । इसे जाबफल के साथ देने से घोर अतिसार दूर होता है । वृ० रसरा० सु० ।

अतिसार भेषजम्-सं० क्ली० (१) लोध्र-हिं० । लोध्र—सं० । (Symplocos racemosa) । (२) तद्रोगनिवारक औषध, अतिसारध्व, अतिसार नाशक औषध । (Antidysenteric) ।

अतिसार भैरवी वटी—सं० स्त्री० जावित्री, लवंग, सोंठ, शीतलचीनी, चन्दन, केशर, पीपल, अकरकरा प्रत्येक समान भाग लें फिर चूर्ण कर पुनः पारा भस्म, अहिफेन जावित्री के बराबर मिला कर १ प्रहर तक खरल कर ३ रत्ती प्रमाण की गोलियाँ बनाऐ । अनुपान चावल का पानी । गुण—यह सम्पूर्ण अतिसारों को नष्ट करती है । र० प्र० सु० अतिसारे ।

अतिसारवारणरसः—सं० पु० अतिसार में प्रयुक्त होने वाला रस । सिंगरफ, पक्व रस कपूर, नागरमोथा, इंद्रयव इनको तुल्य भाग लेकर कच्चे अफीम के पानी की ७ भावना दें । इसको यथायोग्य अनुपान और उचित मात्रानुसार सेवन करने से हर प्रकार के अतिसार नष्ट होते हैं । र० सा० सं० अति० चि० । भैष० ।

अतिसार विदारणम्-सं० पु० जायफल, धतूरबीज, सोंठ, अतीस, वच्छनाग, आम की गुठली, धव पुष्प, अफीम, भांग प्रत्येक समान भाग ले चूर्ण कर गिलोय के स्वरस में घोटकर १ रत्ती प्रमाण की गोलियां बनाएं ।

गुण—इसके सेवन से सम्पूर्ण अतिसार कम मात्र में दूर हो जाते हैं । र० यो० सा० ।

अतिसार सेतुः—सं० पु० सिंगरफ, लवंग, राजमिश्री, ताम्रभस्म, अहिफेन प्रत्येक समभाग लेकर चूर्ण करें । इसे चावल के धोवन से सेवन करने से सभी प्रकार के साध्य असाध्य अतिसार दूर होते हैं । मात्रा—१-२ र० । र० यो० सा० ।

अतिसार हरो रसः-सं० पु० (१) पारा, गंधक, अभ्रक भस्म, हरताल, सुहागा, सिंगरफ और वच्छनाग प्रत्येक को तुल्य भाग लेकर चूर्ण करें । पुनः धत्तूर के पत्र के रस से सात दिन तक अच्छे

तरह से घोटे। फिर रत्ती प्रमाण की गोलियां प्रस्तुत कर रखले।

मात्रा—१ रत्ती भांग के चूर्ण और शहद के साथ खाने से ज्वर और अतिसार नष्ट होते हैं। रस० यो० सा०।

राल, मोचरस अफीम, सीसाकेलिया, अतीस, सोंठ इनको समान भाग लेकर चूर्ण बनाएं। इसको उचित मात्रा के साथ खाने से अतिसार नष्ट होता है। र० प्र० सु० अ० ८।

अतिसारान्तको रसः—सं० पु० स्वर्ण घटित रस सिन्दूर, रसकपूर से निकाला पारा और स्वर्ण भस्म घटित पर्पटी इन सबको बारीक घोंटकर रक्खें। मात्रा—१ र०। गुण—यह मृत्यु जैसे भयानक अतिसार को दूर करता है। रस० यो० सा०।

अतिसारेभ सिंहो रसः—सं० पु० शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, अहिफेन प्रत्येक समान भाग और पारे का चौथाई भाग जायफल, मिलाकर भांग और धतूरे के रस की पृथक पृथक भावना दें।

मात्रा—१ र०। यह अतिसार रूपी हाथी के लिये सिंह है। रस० यो० सा०।

अतिसारस्या—सं० स्त्री० रास्ना (Vanda Roxburghii) वै० निघ०।

अतिसूक्ष्मः—सं० त्रि० अत्यन्त सूक्ष्म, अतिशय सूक्ष्म, बहुत छोटा (very subtle)

अतिसेवनम्—सं० क्ली० किसी वस्तु का अधिक मात्रा में सेवन, अधिक उपयोग में लाना।

अतिसौम्या—सं० स्त्री० यष्टि मधुलता, मुलेठी की बेल (Glycyrrhiza glabra) रा० नि० व० ६।

अतिसौरभः—सं० पु० आम्र वृक्ष, आम का पेड़। (Mangifera Indica) भा० पू० फ० व०

अतिस्कन्धा—सं० स्त्री० रक्त कुलत्थी, लाल कुल्थी—हिं०। रक्त कुलत्थक—सं०। (Dolichos biflorus) वै० नि०।

अतिस्तब्धित—हिं० अत्यन्त रुका हुआ।

अतिस्थूल—हिं० वि० [सं०] बहुत मोटा।

संज्ञा पु० [सं०] मेद रोग का एक भेद जिसमें चरबी के बढ़ने से शरीर अत्यन्त मोटा हो जाता है।

अतिस्थूल वर्त्मा—सं० पु० (Foul ulcer) दुष्ट व्रण विशेष, दूषित क्षत च०।

अतिस्निग्धः—सं० त्रि० अत्यन्त स्निग्ध, बहुत चिकना

लक्षण—मुख द्वारा श्लेष्म प्रस्राव का होना, शिर का भारीपन और इन्द्रियविभ्रम ये अतिस्निग्धता के लक्षण हैं। इसके निवारण हेतु रूक्ष क्रिया ग्रहण करनी चाहिये। वै० नि० नस्य वि०।

अतिस्रवा—सं० स्त्री० मयूरवल्ली। मुग्वा-बं०। वै० निघ०।

अतिस्वेदः—सं० पु० (१) अतिपसीना देना, अति स्वेद स्राव कराना। वा० सू० अ० १७। (२) बहुत पसीना आना।

अतिच्छिन्न संधिः—सं० पु० (Complete dislocation) संधि का सर्वथा भिन्न हो जाना, अत्यन्त संधि च्युति, जिसमें सन्धि और अस्थि दोनों हट जाएँ। इसमें दोनों सन्धियों और अस्थियों में अन्तराय हो जाता है और पीड़ा होती है। सु० नि० १५ अ०। "अतिच्छिन्ने द्वयोः संध्यस्थनो रतिक्रांतता वेदना च"। ८। देखो—भग्नः।

अतीक़—अ० (१) पुरातन, प्राचीन, पुराना—हिं०। देरीनह्, कुह्नह्, पुराना—फा०। (२) पुरातन वसा। (३) छोहारा भेद। (४) जल। (५) सुवर्ण। (६) मद्य। (७) दुग्ध।

अतीत—अ० (१) क्षुधा। (२) आ ेप गुड़गुड़ाहट (कराकर)। गर्गलिङ्ग Gurgling—इं० म० ज०।

अतीन्द्रिय—हिं० वि० [सं०] जो इन्द्रिय ज्ञान के बाहर हो। जिसका अनुभव इंद्रियों द्वारा न हो। अगोचर। अप्रत्यक्ष। अव्यक्त।

अतीस—हिं० संज्ञा पु० [सं०] अतिविषा. अतिबूक, आतइप। एकोनाइटम् हेटरोफाइलम् Aconitum Heterophyllum, *Wall* (Root of—), ए० कार्डेटम् (A. Corda

tum)-ले० । इण्डियन अतीस (Indian Atees)-इं० ।

संस्कृत पर्य्याय—घुणवल्लभा (भा०), शृङ्गिका (शब्दर०), विश्वा, विषा, प्रतिविषा, उपविषा, अरुणा, शृङ्गी, महौषध (अ०) काश्मीरा, श्वेता (र०), प्रविषा (के), श्वेत कन्दा, भृङ्गा, भंगुरा, विरूपा, श्यामकन्दा, विषरूपा, वीरा, मद्री, श्वेतवचा, अमृता, अतिविषा, शुक्लकन्दा, शृङ्गीका, भृङ्गी, मृद्वी, शिशु, भैषज्य, अतिसारघ्नी, घुणप्रिया, शोकापहा, अम्बीका । (विलायती) बज्जे-तुर्की-द० । आतइच-बं० । बज्जे तुर्की फा० । (शामै) अतिवडयम्-ता० । (सीम) अतिवस (चेट्टु), अतिवासः-ते०, तै० अतिविष-मह० । अतिविख (विष) नी-कच्ची, अतिविष, अतिविख, अतिविष-गु० । ओंगे-सफेद, मोहन्देगज सफेद-काश० । आइस-भोटि० । सूखी हरी, चितिजड़ी; पत्रीस, पतीस, वोंगा-प० अतीविषः-क० ।

वत्सनाभ वर्ग
(*N O. Ranunculaceœ*)

उत्पत्ति स्थान—एक पौधा जो हिमालय के किनारे सिन्ध से लेकर कुमाऊँ तक समुद्र-तट से ६,००० से लेकर १५,००० फीट की ऊंचाई पर पाया जाता है ।

नाम विवरण—"श्वेतकन्दा", "भंगुरा", "घुणवल्लभा" आदि परिचय ज्ञापिका संज्ञाएं और "अतिसारघ्नी" और "शिशुभैषज्यम्" प्रभृति गुणप्रकाशिका संज्ञाएँ हैं ।

वानस्पतिक वर्णन—अतीस के क्षुप हिमालय के ऊँचे भागों पर उत्पन्न होते हैं । इसके पत्ते नागदौन पत्र के समान किन्तु चौड़ाई में उससे किंचित् छोटे होते हैं । शाखाएँ चिपटी होती हैं और पत्रवृन्त मूल से पुष्पदण्ड निकलते हैं पुष्पदण्ड (पुष्पदण्ड की व्याख्या के लिये देखो—"आरग्वध") पत्रवृन्त से दीर्घतर होते हैं प्रस्फुटित पुष्प देखने में टोपी की तरह दीख पड़ते हैं । ईषद्दीर्घ कन्द के गात्र से मूल निकलता है । यह मूल अतीस (अतिविषा) नाम से विख्यात है । यह औषधि धूसर और श्वेत भागों में विभक्त होती है । धूसर लहरदार कन्द जो श्वेत की अपेक्षा बड़े और लम्बे होते हैं प्रधान मूल हैं और प्रायः पृथक कर कम मूल्य पर बेचे जाते हैं । तज्जन्य लघु कन्द वाह्य धूसर वर्ण के और शाखकों के सूक्ष्म चिह्नों से व्याप्त होते हैं । ये ३/४ से २ इञ्च लंबे शंक्वाकार या लगभग अण्डाकार, पतले मृदुल वत छोरयुक्त, जो कभी कभी दो वा दो में विभक्त होने की प्रवृत्तियुक्त होते हैं । सिरे पर झिल्लीदार पत्रांकुर होता है । तोड़ने पर भीतर श्वेतसार से सफेद कण दिखाई देते हैं । यह स्वाद में अरिरिक्त और गंधरहित होता है ।

राजनिघण्टुकार के मत से अतीस (अतिविषा) तीन प्रकार का है । जैसे—"त्रिविधातिविषा ज्ञेया शुक्लकृष्णारुणातथा ।" अर्थात् अतीस शुक्ल, कृष्ण तथा अरुण भेद से तीन प्रकार का होता है । तीनों रस, वीर्य और विपाक में समान होते हैं । परन्तु इनमें श्वेत जाति का उत्तम होता है । मदनपाल के मत से यह चार प्रकार का है। जैसे—'श्यामकन्दाचातिविषा सा विज्ञेया चतुर्विधा । रक्ता श्वेता अशंकृष्णा पीतवर्णातथैव च। अर्थात् रक्त, श्वेत, अत्यन्त कृष्ण और पीतवर्ण भेद से यह चार प्रकार का होता है । इनमें यथा पूर्व अर्थात् क्रमशः पीत से कृष्ण और कृष्ण से श्वेत आदि गुण में उत्तम और श्रेष्ठ होता है।

मख्ज़नुल् अद्वियह् में इसके तीन भेदों का वर्णन है अर्थात् अतीस, प्रतिभिका और श्यामकन्द । मुहीतआज़म में केवल इसके दो ही भेद माने हैं । यथा—श्याम और श्वेत ।

रासायनिक संगठन—अतीसीन (Atisine) नामक क्षाररहित एक अत्यन्त तिक्त क्षारीय सत्व (यह निर्विषैला है), वत्सनाभाम्ल (Aconitic acid), कषायीन या कषायिनाम्ल (Tannic acid), पेक्टस सब्स्टैंस (Pectous substance), बहु संख्यक श्वेतसार, वसा तथा आंलीइक, पामिटिक, स्टियरिक, ग्लिसराइड्स, वानस्पतिक लुआब, दुग्ध

शर्करा और (भस्म के मिश्रण) २ प्रतिशत तक होते हैं।

मेटीरिया मेडिका आफ इण्डिया—आर० एन० खोरी भाग २, पृष्ठ ३)।

प्रयोगांश—कन्द ।

औषध-निर्माण—(१) चूर्ण, मात्रा—५ र० से ३॥ मा० तक।

ज्वर प्रतिषेधक रूप से—१ से २ ड्राम (२॥ ड्राम पर्यन्त यह निरापद होता है) .

वल्यरूप से—१० से ३० ग्रेन (५ से १५ रत्ती) इस मात्रा में इसका ज्वरघ्न प्रभाव अत्यन्त निर्बल होता है।

ज्वरघ्न रूप से—४० ग्रेन से १॥ ड्राम तक

कृमिघ्न रूप से—

(२) टिंक्चर—(८ में एक भाग).

मात्रा—१० से ३० बूंद।

(३) कंद का क्वाथ

वे युरूपीय औषध जिनका यह प्रतिनिधि हो सकता है। ज्वर प्रतिषेधकरूप से—सिंकोना के क्षारीय सत्व (क्षारोद) यथा क्वीनीन प्रभृति।

ज्वरघ्न रूप से—पल्विस जेकोवाइ वेरा, पल्विस एण्टिमोनियम् (अंजन चूर्ण), लाइकर एमानियाई एसीटास।

वल्य रूप से—जेंशन ओर कैलम्बा।

इतिहास—अतिविषा नाम से अतीस का ज्ञान आज का नहीं, प्रत्युत अति प्राचीन है। अतः आयुर्वेद के प्राचीन से प्राचीन ग्रंथ यथा—चरक, सुश्रुत तथा वाग्भट्टादि में इसका पर्याप्त वर्णन आया है। यही नहीं बल्कि विभिन्न रोगों पर इसके लाभदायक उपयोग की उन्होंने भूरि भूरि प्रशंसा की है जैसा कि आगे के वर्णनों से विदित होगा।

फिर डिमक महोदय तथा उनके पादानुशरण शील एवं आयुर्वेद शास्त्र से सम्यक् अपरिचित चोपरा महोदय के ये बचन "The earliest notices of Ativisha are to be found in Hindu works on Materia Medica Sarangadhara and Chakradatta" जिसका यह अर्थ होता है कि शार्ङ्गधर तथा चक्रदत्त से पूर्व के आयुर्वेदिक ग्रन्थों में अतिविषा का उल्लेख नहीं है कहां तक सत्य है, इसका पाठक स्वयं निर्णय कर सकते हैं।

आयुर्वेद के अति प्राचीनतम ग्रन्थों में तो इसका उल्लेख है ही जिसके लिये हमें किसी प्रकार के प्रमाण की आवश्यकता नहीं, यह तो सूर्य प्रकाशवत देदीप्यमान एवं स्वय सिद्ध है। हाँ! अरबी तथा फारसी ग्रन्थो में इसका बहुत संक्षिप्त वर्णन आया है और यह स्पष्ट रूप से ज्ञात होता है कि उन्होंने इसके वर्णन में आयुर्वेद कर्त्ताओं का ही अनुकरण किया है।

इन सबके पश्चात् पाश्चात्य लेखकों ने अपने ग्रन्थों में इसका उल्लेख किया।

प्रभाव तथा उपयोग

आयुर्वेदीय मतानुसार

अतीस, दीपन, पाचन, संग्राहक और सर्वदोष नाशक है। च० सू० २५ अ०।

अतीस कटु उष्ण, तिक्त तथा कफ, पित्त और ज्वर नाशक, आमातिसार, कास, विष एवं छर्दिनाशक है। रा० नि० अ० ६ । वा० सू० ३५ अ० वचादि। धन्व० नि०।

अतीस, सर्व दोषनाशक, शाथघ्न (लेपात्) श्लैष्मिक रोगनाशक (१० प्रकार के श्लेष्म रोग का नाशक) और रसायन है। मद० व० १।

अतीस गरम कटु, तिक्त, पाचन और दीपन कर्त्ता है। जीर्णज्वर, अतिसार, आमवात, विष, खाँसी वमन और कृमि रोग को दूर करता हैं। भा०।

अतीस, पाचन, तिक्त, ग्राही और दोषनाशक है। राजवल्लभः।

अतिविषा तथा कटुकी प्रभृति को उष्ण गोमय जल द्वारा शुद्धि होती है। सा० कौ०।

शिशु के कास, ज्वर तथा वमन प्रतीकारार्थ उपयुक्त मात्रा में अतीस का चूर्ण मधु के साथ सेवन कराना चाहिये। बंग० जी० सं० ८१६पृ०।

वैद्यकीय व्यवहार

(१) आमातीसार—

"दद्यात् सातिविषां पेयां सामे साम्लां सनागराम् (च० सू० २ अ०)।"

अतीस १ तोला, सोंठ, १ तो०, इनको ऽ२ जल में सिद्ध करें। जब ऽ। जल शेष रहे तब इसे लवण से छौंक कर इसमें अभीष्ट वस्तु की पेया प्रस्तुत करें। इसमें किंचित् खट्टे अनार का रस योजित कर आमातीसारी को व्यवहार कराएँ

(१) कुटजामय—अंकोट की जड़ की छाल ३ भाग और अतीस १ भाग इसको तंडुलोदक (चावल के धोवन) में पीस कर पान करें। इससे ग्रहणी रोग शमन होता है।

वंग० जी० सं० १२१ पृष्ठ:०।

(३) 'नागराति विषाभया:"।

च० द० ज्वर० चि० पिप्पल्याद्यघृत।

वक्तव्य चरक चिकित्सास्थान २१ अ० एवं सुश्रुत कल्पस्थान २ य अध्याय में स्थावर विष का वर्णन आया है चरकोक्त मूल विष एवं सुश्रुत के मूल विष वा कन्द विष की नामावली में अतिविषा (अतीस) का उल्लेख दीख नहीं पड़ता। उपविष के मध्य इसका पाठ नहीं सुश्रुत और चरक में जहाँ सम्पूर्ण विषों का उल्लेख आया है वहां वे इसके गुणों से सम्पूर्ण अपरिचित हैं। सुश्रुत के प्राचीन टीकाकार डल्हण मिश्र लिखते हैं—

"मूलादि विषानां यत्नपरैरपि ज्ञातुमशक्यत्वात्। तत्र तानि हिमवत् प्रदेशे किरात शवरादिभ्यो ज्ञेयानि।"

क० स्था० २ य० अ० टी०।

मदनपाल वर्ण भेद से इसका गुणांतर स्वीकार करते हैं। परन्तु, राजनिघटुकार ऐसा नहीं करते।

सुश्रुत—अतीसार चिकित्सा में और चक्रदत्त अतिसार, ज्वरातिसार, और ग्रहणी चिकित्सा में भिन्न भिन्न औषध के साथ अतीस का पुनः पुनः प्रयोग दिखाई पड़ता है। चरक और सुश्रुत के केवल जीर्णज्वर की चिकित्सा में अतीस का प्रयोग नहीं आया है। चरक के "कालिंगकं त्वामलकी सारिघातिविषा स्थिरा।" चि० ३ अ०) पाठ में तथा सुश्रुतोक्त "पिप्पल्यतिविषा द्राक्षा।" (उ० २६ अ०) पाठांतर्गत विषम ज्वरहर घृत में अन्यान्य बहुशः वस्तुओं के साथ अतीस व्यवहृत हुआ है। सुश्रुत एवं वाग्भट में केवल ग्रहणी तथा कास चिकित्सा वा रसायनाधिकार में अतीस का व्यवहार नहीं दिखाई देता है।

यूनानीमतानुसार—

प्रकृति—२ कक्षामें उष्ण और १ कक्षामें रूक्ष स्वाद०—किञ्चित् विकठा। हानिकारक—आमाशय के लिये। दाविज हैं। दर्पघ्न—सर्द व तर वस्तुए मात्रा शर्बत—आधा से १ माशा तक। मुख्य प्रभाव—श्लेष्मघ्न और वायुलयकर्त्ता।

गुण, कर्म, प्रयोग—अतीस कामोद्दीपक, क्षुधावर्धक, ज्वर प्रतिषेधक, कफ तथा पित्तजन्य विकारों को नाश करने वाला, अर्श, जलोदर तथा कफ वा पित्तजन्य वमन एवं अतीसार को दूर करता है। वायु को लय करता और श्लैष्मिक रोगों को लाभप्रद है। म० अ०। (निर्विषैल)

नव्यमत—अतीस, तिक्त, पाचक, वृष्य, बल कारक एवं ज्वरप्रतिषेधक हैं और ज्वर तथा उग्र प्राद्राहिक-विकारादि-जन्य रोगावसान की दशा में दौर्बल्य दूर करने के लिये इसका व्यवहार होता है। कास, अजीर्ण और अग्निमांद्य में अतीस का उपयोग किया जाता है। इन सब रोगों के उपसर्ग रूप से हुए अतिसार में इसे सुगन्ध, तिक्त, एवं कषाय द्रव्यों यथा गुरुच करंज और कुटज आदि के साथ एवं ज्वर प्रतिषेधक रूप से मलेरिया ज्वरों (विषम ज्वरों) में इसका प्रयोग किया गया और इससे कुछ सफलता भी हुई, परन्तु क्वीनीन की अपेक्षा यह अत्यन्त निम्न श्रेणीका सिद्ध हुआ विड़ंग के साथ इसको सेवन करने से आंत्रस्थ कृमियां निर्गत होती हैं। (मेटीरिया मेडीका आंफ इंडिया—२ य० खंड ३ पृ०)

मोहोदीन शरीफ

प्रभाव—ज्वर प्रतिषेधक (परियाय ज्वर नाशक) ज्वरघ्न और बल्य । उपयोग-सविराम ज्वर तथा सामान्य स्वल्पविराम वा निरंतर ज्वर, कई तरह के अजीर्ण एवं नैर्बल्य में लाभदायक है ।

श्वेत अथवा साधारण प्रकारका अतीस अत्यंत लाभप्रद परियायनिवारक (Antiperiodic) एवं ज्वरघ्न हैं, किन्तु इसके सर्वोत्तम एवं निश्चित् प्रभाव के लिये इसको पूर्ण ओषधीय मात्रा में उपयोग करना चाहिये जो स्वय मेरे अनुभव के अनुसार १ से २ ड्राम तक है । २॥ ड्राम तक यह सर्वथा निरापद सिद्ध होता है । लघुतर मात्रा (२० से ४० ग्रेन) में यह उत्तम बल्य है । परन्तु, इससे इसका परियायनिवारक प्रभाव अत्यन्त न्यून होता है । मेटिरिया मेडिका ऑफ मैडरास १ म खंड पृ० ४)

आर० एन० चोपरा एम० ए० एम० डी०

पहाड़ी लोग इसके प्रभावशून्य रूप से भली प्रकार जानते हैं एवं इसे शाक रूप से खाने के काम में लाते हैं । देशी औषध में यह मृदु एवं तिक्त बल्य रूप से व्यवहृत है । इस देश में इसको परियायनिवारक, कामोद्दीपक, कषाय एवं बल्य रूप से व्यवहार में लाते हैं ।

(इंडिजिनस ड्रग्स ऑफ इंडिया)

अतीसारः-सं० पु० (हिं० संज्ञा पु०) देखो-अतिसार (Diarrhœa)

अतुकार्णी-सं० स्त्री० जमालगोटा (Crotonpolyandrum, *Roxb*)

देखो दन्ती ।

अतुतिन्जप-मल० गृध्रर्णी, धूम्रपत्र, पत्रबङ्ग-स० । गुधाटी किरमरा-हिं०, गु०, द० व० । Aristolochia bracteata -ले० । Birth-wort worm-killer-इ० । इ० मे० मे०

अतुनेटी-ता० सोल-बं० । æschynomene-Aspera) पौकपान, पौक ग्यु -ब्र० ।

अतुलः-स० पु०
अतुलि-ह० संज्ञा पु० } (१) कफ श्लेष्म (Phlegm) । (२) तिल का वृक्ष, तिली का पेड़-हिं० । तिलः (कः) वृक्ष सं० । (Sesamum orientale) श० च० ।

अतुल्जन-प० वेवङ्ग, कङ्कुम, कोंकुरी, गुगुल, बन्दारू -पं० मर्सिनी अफरिकेना (Myrsine Africana, *Linn*), म० बाइफेरिया ((M. Bifaria, *Wall*)

-ले० । वेवङ्ग, बाइबड़ङ्ग-पं०, काश, हिं० । गुबाइनी-सं० प्रां० । पहाड़ी चा, चूपा-उ० प० सू० ।

विड्ङ्ग वर्ग

(*N. O. Myrsinaceæ*)

उत्पत्ति स्थान—यह एक छोटा चुप है । हिमालय, काश्मीर और साल्टरेञ्ज (लवणश्रेणी) से नैपाल तक ।

प्रभाव तथा उपयोग—इसका फल सशङ्क रेचक तथा विशेषकर कद्दूदाना निःसारक माना जाता है । यह वेवङ्ग नाम से बिकता है और (Samara Ribes) की प्रतिनिधि स्वरूप उपयोग में आता है । स्व्युवर्ट ।

इस चुप से एक प्रकार का निर्यास प्राप्त होता हैं जो कष्टरज की एक उत्तम औषध है (बैलफोर) जलोदर एवं उदरशूल में यह कोष्ट मृदुकारी प्रभाव करता है । इं० मे० मे० ।

इसका लगातार प्रयोग मूत्र को अत्यन्त रञ्जित करता है । इं० मे० प्रां० ।

अतुहिनरश्मि-हिं० संज्ञा पु० [सं०] the Sun सूर्य्य ।

अतूत-अ० तब्तूय (एक पक्षी है) । (A sort of bird) लु० क० ।

अतूत-अज्ञात ।

अतूम-
उत्तास मुअत्तिस- } अ० छुत्कारक औषध, वह औषध जो छींक लाए । इसका (ब० व०) अतसात हैं । इर्रहाइन Irrhine-इं० म० ज० ।

अतूसा-हिं० भोजपत्र । (Betula Bhojapatra) इं० हैं० गा० ।

अतृष्ण–हिं० वि० [सं०] तृष्णारहित। निःस्पृह। कामनाहीन, निर्लोभ।

अतृप्त-हिं० वि० [सं०] संज्ञा अतृप्ति] (१) जो तृप्त वा संतुष्ट न हो, जिसका मन न भरा हो; (२) भूखा।

अतृप्तिः–सं० स्त्री०
अतृप्ति–हिं० संज्ञा स्त्री० } तृप्ति शून्यत्व, अपरितोष, तृप्त न होना। असंतोष, मन न भरने की अवस्था। वै० श०।

अतेइच–बं० अतीस (Aconitum Heteropphyllum) इं० मे० मे०।

अतेज-हि० वि० [सं०] (१) तेजरहित अंधकार युक्त, मन्द, धुंधला।

अतेजाः-सं० स्त्री० (Shade, Shadow) छाया। रा० नि० व० २१।

अतोय उदर–हिं० संज्ञा पु० "सर्वत्वतोयमरुणं मज्ञोफकम् नाति भारिकम्।" वा० नि० अ० १२ श्लोक ११।

लक्षण—जलोदर को छोड़कर सब प्रकार के उदर रोगों में उदर का वर्ण लाल, सूजन रहित और गुरुता रहित होता है। नसों के जाल के समूह से झरोखे की तरह हो जाता है और सदा गुड़गुड़ गुड़गुड़ करता रहता है। वायु नाभि और अंत्र में विष्टब्धता उत्पन्न करके हृदय कटि नाभि, गुदा और वंक्षण में वेदना करता हुआ अपने रूप को दिखाकर नष्ट हो जाता है तथा शब्द करता हुआ बाहर निकलता है। इससे मलबद्धता और मूत्र की अल्पता हो जाती है। इसमें जठराग्नि अत्यन्त मन्द नहीं होती है, भोजन में इच्छा नहीं होती और मुख में विरसता उत्पन्न हो जाती है।

अतृइमह–अ० (ब० ब०) तुआम (ए० ब०) आहार, भोजन, खाना। डाइट्स (Diets) इं० म० ज०।

अत्कः–सं० पु० अङ्ग, अवयव (Anorgan) उणा०।

अत्कुमः–अ० अपामार्ग। (Achyranthes aspera, *Linn*)

अत्डी–ते० पित्तल, पीतल (Brass)।

अत्तः–मल० जलौका, जोंक, जलायुका। (Hirudo medicinalis) इं० मे० मे०।

अत्त–मल०, सिं० सीताफल, आत, शरीफा। Custard apple (Anonasquamosa) –हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अति]अति। अधिकता ज्यादती।

अत्तका–मल० मुण्डी, गोरखमुण्डी, (Sphæranthus Indicus),

अत्तता मामिडी–ते० पुनर्नवा, सांठ, (Boerhaavia diffusa)। इं० मे० मे०।

अत्तन,-ना–सिं० धुस्तुर, श्वेत धतूरा, कनक, धतूरा। (Datura alba *Linn*) (White flowered Dhatura स० फा० इं० । इं० मे० मे०।

अत्तबगुलिंहदी–सिं० पाताल वन तामाल-सं०। अमरीका का जंगली तम्बाकु-हिं०। लोबीलिया Lobelia-ले०। म० अ० डॉ० २ भा०।

अत्तबड़–बं० आसा०, वड़, कगीरी-रव०। (Ficus Elastica)

अतमीमी–अज्ञात।

अत्तर्तीरुज्जाजी–अ० क्० पांशु गंधेत्-सं०। पोटेसियम सल्फेट (Potassium sulphate) इं०। मं० अ० डॉ० २ भा०।

अत्तलु–ते० जमायुका, जलौका, जोंक। (Hirudo medicinalis) इं० मे० मे०।

अत्तार–अ० युनानी दवा बनाने और बेचने वाला औषध विक्रेता, पनसारी। (A druggist) हिं– संज्ञा पु० (२) गंधी, सुगन्धि या इत्र बेचने वाला।

अत्तास–अ० नाक छिकनी–हिं०। छवः (कः) (कृत) स०। Dregea volubilis।

अत्ति–ता०, मल०, कना० गूलर,–हिं०। उदुम्बरफलम्-सं०। Ficus Glomerata, *Roxb* (Fruit of)–ले०। –हिं० संज्ञा पु० [सं०] देखो–अत्त।

अत्तिएर-फ्रां० शरीफा, सीताफल । Custard apple (Anona Squmosa) । इं० मे० मे० ।

अत्तिएवयूर-ता० गूलर की जड़ । फा० इं० ।

अत्तिए वयूर--तन्निए-ता० कूल्पान । गूलर का नीर-हिं० । फा० इं० ।

अत्तिक्कल्लु-ता०
अत्तिकल्लु-ते०
} गुलीर का नीरा । गुलर का नीर-हिं० । Toddy of Ficus Glomerata-ले० । स० फा० इं० ।

अत्तिका-सिं० गूलर-हिं० । उदुम्बर-स० । (Ficus Glomerata, *Roxb*)

अत्तितिप्पिलि-ता०, मल० बड़ी पिप्पली, गजपिप्पली-हिं० । गज-पिप्पली-सं० । Scindapsus (Pothos) Officinalis, *Schott* (Berries of) स० फा० इं० । फा० इं० ।

अत्ति-पज़म्-ता० गूलर-हिं० । उदुम्बर फलम्-सं० Ficus glomerata, *Linn*) (Fruit of-) स० फा० इं० ।

अत्तिपण्डु-ते०
अत्तिमाणुते०
} गूलर-हिं० । (Ficus glomarata, *Roxb*) स० फा० इं० । इं० मे० मे० ।

अत्तिमीर-अलोन-मल० (Ficus excelsa, *Vahl*) इसकी जड़ उपयोग में आती है । मेमो० ।

अत्ति-यालुम्-मल० गूलर-हिं० । (Ficus glomerata, *Roxb*) स० फा० इं० ।

अत्तिरा-सिं० गूलर का नीर (Toddy of Ficus Glomerata) स० फा० इ० ।

अत्तिरिल्ल पाल्-सिं० बालू का साग, बालू की भाजी-द० । (Gisekia Pharnacioides, *Linn*) स० फा० इं० ।

अत्तिर्याक़-अ० विषघ्न, विषहर, प्रतिविष । (Antidote) फा० इं० २ भा० ।

अत्ति-हरणु-कना० गूलर (Ficus glomerata, *Roxb*) स० फा० इं० ।

अत्तीर-फ्रें० सीताफल, शरीफा (Anona squmosa) इं० मे० मे० ।

अत्तुतम्मट्टी-ता० इन्द्रायण (Citrulus colocynthis) इं० मे० मे० ।

अत्तेई-ता० जलायुका, जोंक, जलौका-हिं० । (Hirudo medicinalis) इं० मे० मे० ।

अत्तोर-सिं० दादमर्दन, चक्रबँड़, चक्रमर्द । (Cassia alata *Linn*) स० फा० इं० ।

अत्नः-सं० पु० सूर्य्य (The sun) वै० निघ० ।

अत्नु-हिं० पु० [सं०] The sun सूर्य्य ।

अत्बात्न-यु० एक प्रकार का मद्य जो द्राक्षारस, मधु तथा गरम ओषधियों द्वारा प्रस्तुत किया जाता है । लु० क० ।

अत्बान-अ० (ब० व०), तिब्बून् (ए० व०) घास तृण (Grass) स० फा० इं० ।

अत्बान्-अ० कक्ष, कक्षतल, बगल-हिं० । एग्जिल्ली Axillae-ले० । आर्मपिट्स (Armpits) इं० म० ज० ।

अत्बूत-बर० रीठा, अरिष्ट ।

अत्म-अ० धुना हुआ ऊन । लु० क० ।

अत्मात-बर०
अत्मूत-बर०
} रीठा (Sapindus trifoliatus, *Linn*)

अत्मोरह-बं०
अत्मोरा-बं०
} मरोड़ फली, आवर्तनी (Helicteres Isora) फा० इं० । इं० मे० मे० ।

अत्यः-सं० पु० अश्व, घोड़ा (A horse) वै० श०

अत्यग्निः-सं० पु० (१) क्षुधाधिक्य, भूख की अधिकता । च० द० अग्निमा० चि० । (२) भस्मक रोग विशे० । ऐसे रोगी को अत्यधिक क्षुधा प्रतीत होती है । देखो—भस्मकाग्निः । विज० र० ।

अत्यन्त कुसुमाकरः-सं० पु० कंगुनी वृक्ष, माल-कांगुनी । (Celastrus Paniculata, *Willd*)

अत्यन्तपद्मा–सं० स्त्री० कमलिनी। (Nymphæa edulis, *D. C.*) वै० नि०।

अत्यन्तशोणित:–सं० त्रि० (१) अतिरक्त, रक्ताधिक्य। क्ली० (२) सुवर्णगैरिक। वै० नि०।

अत्यन्त सुकुमार:–सं० पु० (१) कदली वृक्ष (panicumitalicum)। (२) कंगुणी मालकांगुनी (Celastrus Paniculatns *Willd*) रा० नि० व० १६।

अत्यम्बुपानम्–सं० क्ली० अधिक जल पीना, परिमाण से ज्यादा पानी पीना, इससे निम्न दोष हो जाते हैं, यथा—अधिक जल पीने से तथा बिलकुल जल न पीने से अन्न का विपाक नहीं होता। इस लिये मनुष्य को पाचकाग्नि वर्द्धन हेतु थोड़ी थोड़ी देर में जल पीते रहना चाहिये। इति जलपान लक्षण। रा० नि० व० १४।

अत्यम्ल:–स० पु०
अत्यम्ल–हिं० संज्ञा पु० } (१) अम्ली, इमली का पेड़ (Tamarindus Indicus) तेंतुल–ब०। रा० नि० व० ६। (२) मातुलुङ्ग। (३) बन मातुलुङ्ग। (४) आम्रातक (Spondias mangifera)–त्रि० अत्यन्ताम्ल रसयुक्त।

अत्यम्लदधि–सं० क्ली० अत्यन्त खट्टा दही।

लक्षण—जिस दही से दांत हर्षित होजाए, रोमहर्ष हो और कंठ आदि में दाह हो जाए उसे अत्यम्ल दधि कहते हैं।

गुण—यह अग्नि प्रदीदक, रक्तविकार वात तथा पित्त को अत्यन्त उत्पन्न करता और रोग कारक है। वृ० नि० र०।

अत्यम्लपर्णी–सं० स्त्री० (१) लताशूरण, सूरन। बल्लिशूरण लताविशेष। कड़वड़वेलि। हेरगोलि। रा० नि० व० ३। इसके पर्याय निम्न हैं, यथा—तीक्ष्णा, कण्डूरा, वल्लिशूरण:, कण्डवल्ली वयस्था, अरण्यवासिनी। (२) अम्लवेतसी। गुण—अत्यम्लपर्णी रस में अम्ल, तीक्ष्ण, प्लीहा रोग व शूल को नाश करने वाली, वात एवं हृदय के लिये लाभदायी, दीपक, रुचिकारक तथा गुल्म व श्लेश्म रोग को लाभदायी है। मात्रा–३ मा०। रा० नि० व० ३। (३) रामचना वा खटुआ नाम की बेल।

अत्यम्ला–सं० स्त्री० जंगली विजौरा, नीबू, हिं०। मातुलुङ्ग वृक्ष, वनबीजपू:, सं०। रा० नि० व० ११। रत्ना० तिन्तिडी। श० र०।

अत्यय:–सं० पु०
अत्यय–हिं० संज्ञापु० } (१) नाश, ध्वंस, मृत्यु। (२) अतिक्रमण। हद से बाहर जाना। (३) (३) दोष। (४) कृच्छ्र, कष्ट। रत्ना० अने० व० से० यंत्रकं।

अत्यर्क:–सं० पु० श्वेत मदार का वृक्ष–हिं०। शुक्लार्क वृक्ष–सं०। श्वेत आकन्द गाछ–बं०। Calotropis gigantea, *R. Br.* (the white varof—) रा० नि० व० १०। देखो—आक।

अत्याग–हिं० संज्ञा पु० [सं०] ग्रहण, स्वीकार।

अत्यानन्दा–सं० स्त्री० कफ जन्य योनिरोग विशेष। वैद्यक के अनुसार योनियों का एक भेद। वह योनि जो अत्यन्त मैथुन से भी सन्तुष्ट न हो। यह एक रोग है जिससे स्त्रियां वन्ध्या हो जाती हैं इसका दूसरा नाम रतिप्रीता भी है। भा० म० ख० ४ भा०, योनि रोग।

'अत्यानन्दा न सन्तोष ग्राम्यधर्मेण विंदति'

अत्यारक्ता–सं० स्त्री० जपा पुष्पवृक्ष–सं०। अड़उल का पेड़–हिं०। (Hibiscus Rosa-Sinensis)

अत्यार्त्तव:–सं० पु० मात्रा से अधिक रजोस्राव। मेनोरेजिया Menorrhagia–इं०। बं० क०।

अत्याल:–स० पु० रक्तचित्रक वृक्ष, लाल चीता का पेड़। (Plumbago Rosea)। रा०।

अत्युग्रम्–सं० क्ली० हींग–हिं०। हिंगु–सं०। (Assafoetida) मद० व० २।

अत्युग्रगंधा–सं० स्त्री० हिं० संज्ञा स्त्री० १ कृष्ण गोकर्णी (Sansevieria zeylanica) (२) कृष्णापराजिता। Clitorea Ternatea (the black var of—)। (३)

अजमोदा (Apium involucratum) मद० व० २ ।

अत्युदीर्णा-सं० स्त्री० दुष्ट व्यधन विशेष । बहुत तीक्ष्ण, बड़े मुंह के शस्त्र जो बहुत विस्तृत छेद हो जाय उसे "अत्युदीर्णा" कहते हैं । सु० शा० ८ अ० ।

अत्युष्णः-सं० पु० (Veryhot) अति गर्म, अत्यन्त उष्ण । सु० शा० ८ अ० श्लोक ४ ।

अत्यूहः-सं० पु० कालकण्ठ पक्षी । दात्यूह । मे० हत्रिकं । See-Kalakant hah-kah

अत्यूहा-सं० स्त्री० नीलशेफालिका सं० । नीलनिर्गुण्डी हिं० नीलिका । मे० हत्रिक । (Vitex negu ndo)

अत्र-हिं० संज्ञा पु० अस्त्र का अपभ्रंश ।

अत्रकतून-यु० कड़, कुसुमबीज (Carthamus tinctorius *Linn*) फा० इं० ।

अत्रज-फा० निम्बुः । नीबू । (Citron) इं० हैं० गा० ।

अत्रा कुलवत् न-अ० पेट का मोड़ । म० ज० ।

अत्रागलीदूस-यु० शीरह् जैसे—शीरह् नबात शीरह् कन्द । See-Shirah म० ज० ।

अत्राफ-अ० हस्त व पाद । यह तर्फ का बहुवचन है जिसका अर्थ "अंग, या दिशा;, है । इसका शब्दार्थ "किनारे,, है । पर शवच्छेद शास्त्र की परिभाषा ने इससे हस्त व पाद अभिप्रेत हैं । इस को हिन्दी में "शाखा,, कहते हैं । एक्सट्रीमिटीज Extremities इं० । म० ज० ।

अत्राफ उल्या-अ० ऊर्ध्व शाखाएँ दोनों हाथों से अभिप्राय है । स्कन्धों से लेकर अङ्गुलियों पर्यन्त अपर एक्सट्रीमिटीज Upper Extrimeties इं० । म० ज० ।

अत्राफ सुफला-अ० अधः शाखाए निम्न शाखाएँ । लोअर एक्सट्रीमिटीज Lower Extremities इं० ।

अत्रिः-सं० पु० ऋषि विशेष (A Rishi) । सप्तर्षियों में से एक । ये ब्रह्मा के पुत्र माने जाते हैं । इनकी स्त्री अनसूया थी । दत्तात्रेय, दुर्वासा और सोम इनके पुत्र थे इनका नाम दक्ष प्रजापतियों में भी है ।

अत्रिगुण-हिं- वि० [सं०] त्रिगुणातीत । सत्, रज, तम नामक तीनों गुणों से पृथक ।

अत्रिज-हिं० संज्ञा पु० [सं०] अत्रि के पुत्र -(१) चंद्रमा (२) दत्तात्रेय और (३) दुर्वासा ।

अत्रिरजातः-सं० पु० चन्द्र । हे० ।

अ (इ) त्रीफल-अ० कृ० हिन्दी 'त्रिफला से उक्त अरबी शब्द व्युत्पन्न है । त्रिफला से अभिप्रायः हरड़, बहेड़ा और आमला आदि तीन फलों से है अतः जिसमअ्जून उपर्युक्त ओषधित्रय पड़ती हैं उसे '-अ (इ) त्रीफल,' कहते हैं ।

अत्रीफल की तैयारी में यद्यपि उन समस्त बातों को ध्यान में रखना चाहिये जिनका मअ्जून के प्रकरण में वर्णन होगा तो भी इसकी निर्माण विधि में उससे केवल इतना भेद है कि इसमें हरड़ बहेड़ा और आमला को बारीक कूट छानकर बादाम तैल अथवा गोघृत में मलकर चासनी में मिलाते हैं । इससे इसकी शक्ति चिरस्थायी रहती है एवं चासनी मृदु बनी रहती है । म० ज० । व्या० ३ भाग ।

अत्रीलाल-बाजा० ना० राजिले गुराब, राजिले-ताहर अ० । खिलाले-खलील-फा० । फा० इं० भा० २ । देखो—आत्रीलाल ।

अत्रुन-बम्ब० (१) शेरबानी बूटी, खटाइ. किङ्गरू पं० कोंडइ. हिं० । इं० मे० मे० । Flacourtia sepiaria ले० । मे० मो० । (२) सगबानी- अरस्तू Swallow wort Prickly (Asclpiasechinata) । इं० हैं० गा० ।

अत्रुफिया-
अत्रुफिया- } ये शब्द "अट्रोफिया,, से अरबी बनाये गये हैं । आहार न मिलने के कारण शरीर का दुबला हो जाना, क्षय, चीणता, कृशता । अट्रोफी Atrophy-इं० । म० ज० ।

अत्रूश-
अत्रश- } अ० (ए० व०), अतारशह (ब० व०)

बधिर, वधिरता का रोगी, जो ऊंचा सुने। डेफ Deaf इं० । म० ज० ।

अत्रूशाउख्मरम्-ता० शावक, थाणुक-सं० । झाऊ (Tamarix gallica, or Indica *Linn*) इं० मे० प्लां० ।

अत्रेय-हिं० संज्ञा पु० दे० आत्रेय ।

अत्रोगा-फा० नीबू, तुरञ्ज । (Citron) इं० हैं० गा० ।

अ़त्लियह्-अ० (ब० व०) तिलाऽ (ए० व०) मर्दन, मालिश अभ्यङ्ग । म० ज० ।

अत्वस-म० } अत्वीका-द० } अतीस (Aconitum heterophyllum') लु० क० । स० फा० इं० ।

अत्वीन-पं० गिदड़-तम्बाकू, विथुआ । (Heliotropium Europæun) इं० मे० मे०

अत्सी-हिं० स्त्री० [सं० अतसी] तासी हिं० उ० । लाइनम् Linum ले० । म० अ० डाँ० २ भा० ।

अतह़ल-अ० धूसर वर्ण, धूसर वर्ण की चीज । डस्टी Dusty इं० । म० ज० ।

अत्हलक़-अ० रेणुका बीज, (Vitex agnus costus) इं० मे० मे० ।

अत्हानिक़न-यु० उशक अ० फा० इं० वाजा० । (Dorema ammoniacum' *Don*) ले० । फा० इं० २ भा० ।

अत्हा(था)रियून-यु० दुरालभा सं० खारेबुज खारे शुतर फा० । (Alhagi camelorum' *Fisch*) फा० इं० १ भा० ।

अथर्वा-सं० पु० एक ऋषि का नाम । अथर्ववेद के रचयिता ।

अथर्वाणः-स० पु० (१) अहिंसक । (२) विद्वान् । अथर्व० । सू० ३७ । १ । का० ४ ।

अथ नीकून-यु० उशक्क, काँदर फा० अ०, हिं० । कांदल अफ । (Dorema ammoniacum *Don* & Fr) फा० इं० २ भा० ।

अथारियून-यु० दुरालभा स० । खारे शुतुर-फा० । (Alhagi camelorun *Fisch*) फा० इं० १ भा० ।

अथिवला चेट्टु-ता० महाबला स० । सहदेवी हिं०

अदकर-पं० } अदका- } अदरख, आदी-हिं० Fresh root of Green ginger (Zingiber officinalis *Roxb*) फा० इ० । देखो आर्दक ।

अदकुमणियम्-मल० गोरखमुण्डी मुण्डिका । (Sphæranthushirtus) इं० मे० मे०

अदखन-यु० लूता- मकड़ी हिं० । स्पाइडर (Spider) इं० । लु० । क० ।

अदगी-ता० अरहर रहर हिं० (Pigeon Pea; Dal) इं० मे० मे० ।

अदत्ताः-हिं० सं० स्त्री० [सं०] अविवाहिता कन्या (Unmarried girl)

अदनम्-सं० क्ली० } अदन-हिं० संज्ञा पु० } भक्षण खाना । (Toe-at)

अदनागली-हिं० सज्ञा स्त्री० गुलेसुर्ख लाल गुलाब (Damask rose) इं० हैं० गा० ।

अदनातीस-यु० अनार की कली (see-Anara) लु० क० ।

अदनीय-हिं० वि० [सं०] भक्ष्य । खाने योग्य । (Eatable)

अदनूस-यु० पहाड़ी सरो लु० क०

अदन्-अ० औकिया आउन्स (An oz) यह लगभग २॥ अथवा २। तो० के वजन का होता है म० ज० ।

अदन्त-हिं० वि० } अदन्तः-सं० त्रि० } (१) दन्त हीन, दन्त रहित (Toothless) वे दाँत का । जिसे दाँत न हों (२) जिसके दाँत न निकला हो । बहुत थोड़ी अवस्थाका, दुधमुहाँ । (३) जिसने दाँत न तोड़ा हो । (चौपाया)

अदमनिः-सं० स्त्री० अग्नि । (Fire)

अदमसली-आसा० विन्ना-सिलह० । मेमो० ।

दमिली-अ० पुरातन स्थूल वस्तु । लु० क० ।

अदमुत्तहम्मुल्-अ० असहनशीलता, असांवेदनिकता। Intolerance-इं०। म० ज०।

अदमुल्त अजौन्-अ० नई साख़्त का उत्पन्न न होना एप्लैप्सिया Aplapcia-इं०। म० ज०।

अदमूल-अ० मण्डूक, मेढक। Frog (Ranatigrina) लु० क०।

अदम्-अ० अस्ति, ऋण, अभाव, न होना। ऐब्सेन्स Absence-इं०। म० ज०।

अदम्बेदी-ता० भुह-गुलि-मह०। केन्ने गिलु-कन०। (Indigoferaennea Phylla, *Linn*) फा० इं० १ भा०। ऐन्सली के मतानुसार उक्त पौधे का रस परिवर्तक, मूत्रल तथा ऐण्टिस्कोब्युटिक है।

अदम्बु-वल्ली-कना० दोपाती-लता, उतरन की बेल-हिं०। देखो—उतरन। छागल-खुरी-वं०। (Ipomæa Biloba, *Forsk*) फा० इं० २ भा०।

अदरक-अ० आलूवह्। See-aluchah। लु० क०।

अदरक-हिं० संज्ञा पु०
अदरख-हिं०, उ० } [सं० आर्द्रक, फा० अदरक] आर्द्रक। The green ginger (Zingiber officinalis, *Roxb*)।

अदरकी-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० आर्द्रक] सोंठ और गुड़ मिलाकर बनाई हुई टिकिया। सोंठोरा।

अदरख अवलेह-हिं० पु० देखो—आर्द्रक अवलेह। पुराना गुड़ ऽ एक पाव, अदरख का रस ऽ१ एक सेर लेकर गुड़ मिलाकर पतली चाशनी करें, पुनः तज, पत्रज, नागकेशर, छोटी इलायची, लवङ्ग, सोंठ, कालीमिर्च, पीपर इन्हें टके टके भर लेकर महीन कूट कपड़ छान कर उक्त चाशनी में मिला रक्खें। मात्रा-१ माशा से १ तो०। गुण इसके सेवन से श्वास, कास, मन्दाग्नि तथा अरुचि दूर होती है। अभ्र० सा० यक्ष्मा० चि०।

अदरना-सीरि० कुन्दश। लु० क०।

अदरा-हिं० संज्ञा पु० देखो—आर्द्रा।

अदराफस-यु० सूरजमुखी, सूर्य्यमुखी। (Helianthus Annuses)

अदरारा-
अदरारु- } माजरियुनका एक भेद है जिसके पत्ते चौड़े होते है। लु० क०। See-Mazariyun।

अदरूमाली-यु० वह मद्य जो वृष्टिजल तथा शहद से बनता है। (Asort of wine prepared from rain-water & honey। लु० क०।

अदरूलीस-रू० स्वेद, घर्म पसीना। (Perspiration)। लु० क०।

अदर्मून-अ० सूर्य्यमुखी, सूरजमुखी (Haliant. hus annuus *Linn*)

अदर्शक-हिं० संज्ञा पु० पदार्थस्थित गुण विशेष। यह पदार्थ का वह गुण हैं जिससे उनमें से कुछ भी नही दीखता। इसे 'अपारदर्शक वा अस्वच्छ भी" कहते हैं। ओपेक Opaque-इं०। अवैज हकीकी-अ०।

अदर्शन-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) अविद्यमानता। असाक्षात्। (२) लोप विनाश।

अदलः-सं० पु०
अदल-हिं० संज्ञा पु० } (१) समुद्रफल हिं०। हिज्जलवृक्षः-सं०। (Barringtonia acutan gula, *Gartn*) श० च०। (२) घृत। Ghee (Clarified butter)। हिं० वि० [सं०] (१) बिना दल वा पत्ते का। पत्र विहीन (२) पंखड़ी रहित दलशून्य।

अदलसा-द०. हिं० बासा, अडूसा। (Adhatoda vasica)

अदला-सं० स्त्री० घृतकुमारी, घीकुवार (Aloes Barbedensis) रा० नि०।

अदली-हिं० वि० [सं० अदल] (१) बिना पत्ते का (२) पंखड़ी रहित।

अदवी-अ० बकरी का बच्चा (Akid) लु० क०।

अदवीका-यू० भूतांकुश । (An Indian plant)

अदस-अ० मसूर । नश्क-फा० । (Ervum lens, *Linn*)

अदस-अ० मसूर-हिं० । नश्क-फा० । A sort of pulse or lentil (Ervum hirsutum) लु० क० । इं० मे० मे० ।

अदस जबली-अ० श्वेत पुष्पीय वनफ्शा (Viola odorata) लु० क० ।

अदस नबती-अ० (A plant like lentil) मसूर के सदृश एक पौधा है । लु० क० ।

अदसवर्री-अ० जंगली वा वन मसूर । (Wild lentil) लु० क० ।

अदसिय्यह्, अदसह् } अ० (१) मसूरिका । प्लेग के प्रकार का मसूर सदृश एक दाना है जो मनुष्य के शरीर पर निकल आता है और प्रायः घातक होता है । (२) आँख का पथरा जाना । (३) ललाटीय सुर्खवादह् रोग विशेष । (४) अर्वाचीन मिश्री हकीम चक्षु के स्फटिकवत् द्रव को भी अदसिय्यह् (मासूरिकीय) कहते हैं, जो आंग्ल शब्द लेन्स का ठीक पर्याय है । म० ज० ।

अदसूल्माअ्-अ० हसराज अथवा काई भेद । (Adiantum venustum, *Don* or a sort of moss)

अदसुल्मुर-अ० अप्रसिद्ध औषध । (An unimportant drug)

अदहन-हिं० संज्ञा पु० [सं० आदहन=खूब जलाना] खौलता हुआ पानी । आग पर चढ़ा हुआ वह गरम पानी जिसमें दाल चावल आदि पकाते हैं ।

अदह्य-हिं० संज्ञा पु० पदार्थ स्थित गुण विशेष । यह पदार्थ का वह गुण है जिससे वे जल नहीं सकते अर्थात् "अज्वलनशील" पदार्थ । (Incombustible)

अदक्षिण-हिं० वि० [सं०] अकुशल, अनाड़ी ।

अदात-अ० शस्त्र, अस्त्र, कारीगरी, उदवात (व० ब०) म० ज० ।

अदादा-बर० माजरियून भेद । अश्खीश । लु० क० ।

अदानुद्दुब-अ०, अदानुदुब्बअ-अ० } अरण्य तम्बाकू, वन तम्बाकू (Wild Tobacco, Mullein)-इं० Verbascum Thapsus-ले० ।

अदाम-अ० (A kind of Date palm) तरखजूर भेद । यह मदीना में होता है । लु० क० ।

अदामिल-अ० पुरातन स्थूल वस्तु । लु० क० ।

अदार-अ० पृथ्वी पर चलने वाला प्राणी, थलचर (Moving on land, terrestrial) लु० क० ।

अदारिका-स० स्त्री० वृक्ष कमल, वृक्षोत्पल-सं० । उलट कम्बल-बं० । (pete rospermum aserifolium) वै० निघ० ।

अदाहत-हिं० वि० [सं०] न जलाने वाला जिसमें जलाने व भस्म करने का गुण न हो जैसे जल में ।

अदिके-कना० सोंठ, शुंठि । (Dryginger) देखो आर्द्रक ।

अदित-हिं० सज्ञा पु० दे० आदित्य ।

अदितः-स० स्त्री० A cow गवि गाय । के०

अदील-अ० पुरातन स्थूल वस्तु । लु० क० ।

अदुतिन पालई-ता० कड़ामार, गधानी हिं० फ़ा० इं० ३ भा० (Aristolochia bracteata, Retz)

अदुमत्तदा-कना० जंगली पिकवन अन्तमूल हिं० । देखा— अन्तमूल । (Tylophora Asthamatica) फा० इं० २ भा० ।

अदुल-हिं० आंदुल पुवान, पुवेङ्ग । मे० मो० ।

अदूनाः-सं० बिना जले ही सूख जाना । अथर्व० । सू० ३१ । ३ । का० २ ।

अदृक्-सं० त्रि० अन्धा अध । (Blind) वै० श० ।

अदृग्-सं० पु० घृत ghee (Clarified butter) उ० ।

अदृढ़ः-सं० त्रि० (१) अस्थिर । (Restless Unsteady) । (२) क्ली० तृणविशेष । (A kind of grass) वै० निघ० ।

अदृढ़-हिं० वि०:[सं०] (१) जो दृढ़ न हो कमजोर, (२) अस्थिर। चंचल।

अदृश्र-सं० अन्धा, अन्ध। (Blind)

अदृष्ट पुष्पवती-
अदृष्टार्तवा- } सं० स्त्री० (Unmenstruating woman) वह स्त्री जिसे आर्तव न आता हो वह जिसका मासिक धर्म रुक गया हो। नष्ट र्तवा। रज शून्या।

अदृष्टम्-सं० क्ली० जो नेत्र से ओझल हो। अथर्व०। सू०। ३१। का० २।

अदृष्टहा-वह कीट जो आंख से न दीखे अणुवीक्ष्य। अथर्व० सू० २३। ६ का०।

अदृष्टिः-सं० पु०
अदृष्टि-हिं० सज्ञा पु० } (१) अन्धा अन्ध (Blind) (२) शिष्यों के तीन भेदोंमें से एक मध्यम अधिकारी शिष्य।

अदेह-हिं० वि० [सं०] विना शरीर का सज्ञा पु० कामदेव

अदौरी-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० ऋद्ध पा० उर्द हिं० उद०+स० बटी हिं० बरी] केवल उर्दकी सुखाई हुई बरी।

अदंशः-सं० पु० महामूलक। बड़ मूला वं०(Seemahamulakah

अदांत-हिं० वि० [सं० अदन्त] बिना दांत का। जिसे दांत न आये हों। (प्राय पशुओ के सम्बन्ध में)।

अद्अज्-अ० स्याम चक्षु, काले नेत्रवाला। ब्लेक आईड (Black eyed)-इं० म० ज०।

अद्द-अ० (१) गिनना, गणना करना। (Count) (२) उद्धृत करना, तैयार करना (To make ready) म० ज०।

अद्दन्दु स्सीनी-अ० जमालगोटा (Croton seeds) म० अ० ड० २ भा०।

अद्दीजतालुल फर्फीरी-अ० (Digitalis Folia) डिजिटेलिस। म० अ० ड० २ भा०।

अद्दुह् नुन्नअ् नउल् अख़ज़र-अ० रौग़न नअ्-नअ् सब्ज फा०। ताजा हरे पुदीना का उड़नशील तेल (Oleum menthæ viridis) म० अ० ड० २ भा०।

अद्दत-अ० रक्त कृमी सं०। कृमी दाना (Cochineal) म० अ० डा० २ भा० देखो कोचीनील।

अद्दतुरिसब्ग-अ० कृमीदाना। देखो—कीचीनोल (Cochineal) म० अ० डां० २ भा०।

अदनाफ-अ० कृश होना या कृश करना, मृतप्राय होना। म० ज०।

अद्भुत बालक-हिं० सं० पु० विलक्षण बालक। (Monster) कभी कभी जब दो शुक्राणुओं का एक डिम्ब से संयोग हो जाता है तब ऐसे गर्भ से जो बच्चा उत्पन्न होता है उसके दो शरीर होते हैं जो आपस में जुड़े रहते हैं। इनको अद्भुत बालक कहते हैं। यह बालक बहुधा अधिक काल तक नहीं जिबा करते।

अद्भुतसार-सं० पु० खदिरसार, खैरसार। रा० नि० ब० ८ देखो—खदिर।

अद्मह-अ० अधोचर्म, निम्न वा अधः त्यचा कोरियम (Corium), डर्मा (Derma) इं०।

नोट—त्वचा के स्थूल निम्न भाग को 'अद्मह् और पतले ऊर्ध्व परत को 'बश्रह, कहते हैं म० ज०।

अद्मिय्यह्-अ० त्वगान्तर त्वगधः म० ज०।

अद्य-सं० भोजन। (Food) हिं० क्रि० वि०[सं०] अक। अभी। आज।

अद्यतनः-सं० त्रि०
अद्यतन-हिं० वि० } अद्यभव अद्यनीय आज के दिन का। वर्तमान।

अद्यनिः-सं० पु० अग्नि (Fire) उ०।

अद्यम्-सं० क्ली० धान्य। (Oryzasativa) देखो—धान्यम्।

अद्यश्विना-
अद्यश्वीना- } सं० स्त्री० आसन्न प्रलवा गबि, हाल की ब्याई गाय। (Recently born cow)

अद्रकः-सं० पु० महानिम्ब वृक्ष, बकायन (Melia azedaiach *Linn*) वै० निघ०।

अद्रव-हिं० वि० [सं०] जो द्रव वा पतला न हो । गाढ़ा, घना, ठोस ।

अद्रव्य-हिं० संज्ञा पु० [सं०] सत्ताहीन पदार्थ । अवस्तु असत् । शून्य । अभाव ।

अद्राम-अ० दुग्ध दन्त का हिलना, जिससे वह गिर कर उनके स्थान में नवीन दंत उगें म० ज०

अद्रिः-सं० पु० सं० पु० (१) पर्व्वत (Mountain) (२) शैलवृक्ष (Hilly-tree) मे० रद्विकं । (३) परिमाण विशेष (A weight)

अद्रिकर्णी-सं० स्त्री० (१) अपराजिता (Clitorea ternatea *Linn*) (२) श्वेता-पराजिता विष्णुक्रान्ता रा० नि० व० २३ ।

अद्रिका-सं० स्त्री० (१) महानिम्ब (Meliaazedarach) (२) धान्यक धनिया (Coriandrum sativum Linn) भा० पू० १ गु० व० ।

अद्रिकी-कना० सोंठ शुंठि । (Dryginger) देखो—आर्द्रक ।

अद्रिछिद्-हिं० संज्ञा पु० [सं०] वज्र बिजली (Lightning)

अद्रिजः-सं० त्रि० (१) गिरिजात पर्वत से उत्पन्न । क्ली० (२) शिलाजतु, शिलाजीत (Bitumen) रा० मा० रत्ना० (३) तुम्बुरुवृक्ष (Xanthoxylon alatum)-रा० नि० व० ११ । (४) गैरिक See-Gairika)

अद्रिजतु-सं० क्ली० शिलाजतु, शिलाजीत । (Bitumen) हेमा० भा० ।

अद्रिजा-सं० स्त्री० सिंहली पीपल-हिं० । सैंहल पिप्पली चुप-सं० । रा० नि० व० ६ । See-Sainhali

अद्रिभूः-सं० क्ली० आखुकर्णीलता-सं० । मूषाकानी, मूषाकर्णी-हिं० । (Salvinia Cuculata) रा० नि० व० ३ । पार्व्वतीय लता (Hilly crepers)

अद्रिभाषा-सं० स्त्री० वनमाष, वनउड़द, माषपर्णी । (Teramnus labialis)-वै० निघ० ।

अद्रिसानुजा-सं० स्त्री० त्रायमाण । वै० निघ० । See-Traymana

अद्रिसारः-सं० पु०
अद्रिसार-हिं० संज्ञा पु० } (१) लौह, लोहा Iron (Ferrum) । रत्ना० । (२) शिलाजीत (Bitumen)

अद्रेष्कः,-ष्का-सं० पु० स्त्री० वकाइन-हिं० । निम्ब भेद । पहाड़ेनिम्-बं० । भैष० कुष्ठचि० (Melia Azedarach)

अद्रोक-बं० आदी, शृंगवेर । Zingiberofficinalis, *Roxb* (Fresh rootof-Green ginger) । देखो—आर्द्रक ।

अद्रुत-अ० व्रण के खुरण्ट का सूखकर गिर जाना । म० ज० ।

अद्रुत-अ० न्याय, न्याय करना, समान करना, तुल्य दृश्य करना । म० ज० ।

अद्वह्-
तआदयह्- } अ० (१) संक्रमण, छूत लगना, किसी छूतदार रोग का एक दूसरे को लगना । (२) वह छूत अथवा विशेष कीटाणु (रोग सम्बन्धी) विष जिससे उक्त रोग उद्भूत हो । (Contagion Infection) म० ज० ।

अद्वा-अ० अस्ल मिअ्दी । (१) बीमारी की छूत या लाग जो एक से दूसरे को लग जाए । (२) रोग का वह विष या व्याधि बीज अर्थात् छूत की लाग जो रोगाक्रांति प्राणि द्वारा स्वस्थ व्यक्ति को लगकर उसी रोग का प्रादुर्भाव करती है । (३) एक व्यक्ति को व्याधि का अन्य को लग जाना । (४) वह रोग जो एक से अन्य को लग जाय । कण्टेजियन (Contagion), इन्फेक्शन (Infection)-इं० । देखो—संक्रामक रोग वा बकटेरिया ।

अद्वार-अ० (व० ब०), दौरह् (ए० व०) पर्याय, पारी, बारी, रोगों की पारी, वेग, दौरा ।

पैराक्सिज़्म Paroxysm, फिट्ज Fits–इं० म० ज०।

अद्वितीय-हिं० वि० [सं०] प्रधान मुख्य।

अद्वियह्–अ० (व० व०), दवा (ए० व०) औषधें. औषधियाँ। ड्रग्ज Drugs–इं०। म० ज०।

अद्वियह् खुश्क–फा० खुश्क ओषध, सूखी दवा। (Drieddrugs)।

अद्वियह् खुश्बू–फा० (Aromatic drugs) सुगन्धित औषध, सुगन्धित वस्तुएँ जो भोजन में प्रयुक्त होती हैं, यथा—लौंग प्रभृति। मसाला।

अद्वियह् तर–फा० गीली ओषधि (Fresh drugs)

अद्वियह् बसीतह्
अद्वियह् मुफ़रदह्– } अ० साधारण औषधियाँ

अमिश्रित (अकेली) औषधियाँ। सिम्प्ल ड्रग्ज (Simple drugs) इं०।

अद्वियह् मुरक्कबह्–अ० मिश्रित व यौगिक औषधें वह औषधें जो अन्य औषधियों से मिश्रित की गई हों। यथा—पाक, शर्बत, खमीरा प्रभृति। कम्पाउण्ड ड्रग्ज Compound drugs–इं०। म० ज०।

अद्वियह् हारह्–अ० (अबाज़ीर) गरम मसाले को कहते हैं।

अद्हान-अ० (ब० व०), दुह्न (ए० व०)। तैलम्–सं०। तेल–तैल–हिं०। रोंगन–फा०। Oil (Oleum)

अध-अव्य० दे० •–अधः।

वि० [सं० अर्द्ध, प्रा० अद्धा] आधा शब्द का संकुचित रूप। आधा। (Half)

अधकचरा–हिं० वि० [सं० अर्द्ध=आध+हिं०=कच्चा] (१) अपरिपक्व, अधूरा, अपूर्ण। (Unripe, Imperfect) (२) अकुशल, अदक्ष।

वि० [सं० अर्द्ध=आधा+हिं० कचरना] आधा कूटा वा पीसा हुआ, दरदरा, अधपिसा, अधकुटा। अरदावा किया हुआ। (Coarse powder)

अधकच्चा–हिं० वि० (Half-ripe) अधपक्का।

अधकपारी–हिं० स्त्री०
अधकपाली–हिं० स्त्री० } [सं० अर्द्ध=आधा+कपाल=सिर] आधे सिर का दर्द जो सूर्योदय से आरम्भ होकर दोपहर तक बढ़ता जाता है और फिर दोपहर के बाद से घटने लगता है और सूर्यास्त होते ही बन्द हो जाता है। आधासीसी, सूर्यावर्त्त (Hemicrania) अर्द्धभेदक।

अधखिला–हिं० वि० [सं० अर्द्ध+हिं०=खिलाना] [स्त्री० अधखिली] (Half-blown) आधा खिला हुआ। अर्द्ध विकसित।

अधखुला–हिं० वि० पु० [सं० अर्द्ध=आधा=हिं० खुलना] [स्त्री० अ० खुली] (Half-open) आधा खुला हुआ।

अधगति–हिं० संज्ञा स्त्री० देखो—अधोगति।

अधगो–हिं० स० पु० [सं० अधः=नीचे+गो=इन्द्रिय] नीचे की इन्द्रियाँ, शिश्न वा गुदा। (Lower organs, Penis or anus)

अधगोहुआँ–हिं० संज्ञा पु० [सं० अर्द्ध+गोधूम] जौ मिला हुआ गेहूँ।

अधङ्ग–हिं० पु० अर्द्धाङ्गवात, पक्षाघात (Palsy, Hemiplegia)

अधङ्गी–हिं० वि० पक्षाघात रोगी, वह रोगी जिसे पक्षाघात हुआ हो (Affected with hemiplegia)

अधजर–हिं० वि० पु० [सं० अर्द्ध+हिं० जलना] अधजला, अधजरा, अर्द्ध विदग्ध। (Half-burnt)

अधड़ी–हिं० वि० स्त्री० [सं० अधर] (१) न ऊपर न नीचे की, आधार रहित, निराधार। (Suspending, In the middle)

अधपई–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अर्द्ध आधा+पाद=चौथाई] तौलने का एक बांट, एक सेर के आठवें हिस्से की तौल। आधा पाव तौलने का बांट वा मान, दो छटांकी, दसगरी, अधपैया, अधपोवा। (A measurement=4 oz)

अधवर्नी-- } वं० जलनीम (Herpestis
अधविर्नी-- } monnieria, Thime leaved herp estes) इं० हैं० गा० । मे० मो० ।

अधमरा-- } हिं० वि० [सं० अर्द्ध, प्रा० अर्द्ध+
अधमुआ- } हिं० मरा] आधा मरा हुआ, अर्द्धमृत, मृतप्राय, (Half-dead)

अधमाङ्गम्-सं० क्ली० } पाँव, चरण, पैर, पाँव,
अधमांग-हिं० संज्ञा पु० } देखो—चरण । श० च० ।

अधमुख-हिं० संज्ञा पु० [सं० अधोमुख]

अधमः-सं० पु० (१) अम्लवेत, अम्लवेतस । (Rumex vesicarius) (२) पाद (Foot) ।

अधर-हि० संज्ञा पु० [सं०] (१) ओठ ओष्ठ । (Lip Labium) । शफ्त-अ० । लब फा० (२) नीचे का ओठ (Lowerlip) । -संज्ञा पु० [सं० अ=नहीं+धृ=धरना] (१) पाताल (२) बिना आधार का स्थान । अन्तरिक्ष । आकाश । शून्य स्थान ।
वि० नीच, बुरा ।

अधरकण्टकः-स० पु० जवासा, धमासा, दुरालभा (Alhagi maurorum), वै० नि० ।

अधरकण्टिकः-सं० स्त्री० छोटी शतावरी, क्षुद्र शतावरी । (Asparagus racemosus (The small var of) वै० निघ० ।

अधरकण्ठ्या-सं० स्त्री० (Inferior or inferior-Laryngeal Artery) कण्ठाधोगा धमनी ।

अधरकाकलकीया-सं० स्त्री० (InferiorThyroidartery) अधः चुल्लिका धमनी ।

अधरकाण्डसिरा- } सं० स्त्री० (Inferior
अधरकाण्डसिरा- } Vena cava) अधोगा महाशिरा । अजौफ नाजिल, अजौफ तहुतानी-अ० ।

अधरकेदारः-सं० पु० (Cerebellar Fossa) लघु मस्तिष्क खात । हुफ्रह् मख्मखिय्यह् अ० ।

अधर कौक्षेय (यी)-सं० स्त्री० (Hypogastric) कौक्षीया, पेडू सम्बन्धी । खस् ज़ी अ० ।

अधर गल-सङ्कोचनी-स० स्त्री० (Constricter Phary) कण्ठ संकोचनी ।

अधर गुदः-सं० पु० (Anal canal), गुदनलिका ।

अधर ग्रहणी-सं० स्त्री० (Colic valve or Ileo cæcal)

अधर चतुष्पिण्ड-हिं० संज्ञा पु० (Inferior Colliculus)

अधर चतुष्पिण्ड बाहु- हिं० सज्ञा स्त्री० (Inferior brachium),

अधर-चालनीओष्ठ-नाड़ी-हिं० स्त्री० ओठ चलाने वाली नाड़ी ।

अधरज-हिं० संज्ञा पु० [सं० अधर+रज] ओठों की जलाई, ओठों की सुर्खी । (२) ओठों पर धरी, पान या मिस्सी से रंग की लकीर जो ओठों पर दिखाई देती है ।

अधर जंघासन्धिः-सं० स्त्री० (Distal Tibio-fibular),

अधर जानबी-सं० स्त्री० (Inferior genicular),

अधर-तिरश्चीन स्थाबिर विवलः-सं० पु० Inferior-transverse tibiofibular ligament),

अधर दन्त्या-सं० स्त्री० (Inferior alveolar)

अधर दार्शन केन्द्रम्-सं० पु० क्ली० (Lower visual centre),

अधर धमनी-सं० स्त्री० (Inferior labial) अधः ओष्ठीया धमनी ।

अधरधारा-हिं० संज्ञा स्त्री० अधोधारा, निम्न किनार (Inferiorborder)

अधर नामनी-सं० स्त्री० (Quadratus labiinferioris)

अधर नासाशुक्तिका-सं० स्त्री० (Inferior nasalconcha) अधोशुक्तिका ।

अधर पश्चिमसरदा-सं० स्त्री० (Inferior posterior serratus).

अधरपान-हिं० संज्ञा पु० [सं० अधर=ओठ पान=पीना, चूसना] सात प्रकार की बाह्य रतियों में से एक रति । ओठों का चुम्बन ।

अधरपायवी-सं० स्त्री० (Inferior Hæmorrhoidal)

अधरपार्ष्णि नौकीयः-सं० त्रि० (Inferior calcaneo-navicular)

अधरपृष्ठ-कीया बनता-सं० स्त्री० (Obliqus Capitis Inferior)

अधर-पेश्या-सं० स्त्री० (Sural muscular-A.)

अधर-प्रकोण-गो जिह्वकीया-सं० स्त्री० (Inferior Aryepiglottideus)

अधर प्रकोष्ठ सन्धिः-सं० स्त्री० (Distal Radioulnar joint)

अधर प्रास्तर सरित्का-सं० स्त्री० (Inferior Petrosal Sulcus)

अधर प्रास्तरी-सं० स्त्री० (Inferior Patrosal Sinus)

अधर प्रैणिकी-सं० स्त्री० (Inferior Phrenic)

अधरप्रौधी (थी)-सं० स्त्री० (Inferior Gluteal)

अधर बिम्ब-हिं० संज्ञा पु० [सं०] कुन्दरु के पके फल जैसे लाल ओट ।

अधर मस्तिष्कम्-सं० क्ली० (Cerebellum) अणु मस्तिष्क, लघु मस्तिष्क ।

अधर यमला-सं० स्त्री० (Gemellus Inferior) निम्न यमला ।

अधर ललाट सीता-हिं० संज्ञा स्त्री० (Inferior frontalsulcus)

अधर वर्त्मिका-सं० स्त्री० (Inferior Palpibral)

अधर वस्तीया-सं० स्त्री०(Inferior vesical)

अधर व्रणः-सं० पु० ओठ का घाव, ओठ में होने वाला व्रण ।

अधर व्रणका यत्न—घृत, फाणित (गुडभेद) तिल तैल धतूरा, गेरू, राल, लवण, मैनफल इन्हें एकत्र पीस कर लेप करने से ओठ (अधर) का महाव्रण (घाव) तथा ओठों का फटना दूर होता है ।

अधर शाखा क्षेत्र=हिं० संज्ञा स्त्री० (Lower extremity area)

अधरशृङ्ग-हिं० संज्ञा पु० (भगास्थिका)Inferior horn (Cornu)

अधर सायकी-सं० स्त्री० (Inferior Longitudinal)

अधर हानवी-सं० स्त्री० (Mandibular)

अधर हार्दी-सं० स्त्री० (Inferior Cardiac)

अधर क्षुद्रांत्र-हिं० संज्ञा स्त्री० (Ileum). देखो—क्षुद्रान्त्र ।

अधरक्षुद्रासखी-सं० स्त्री० (VenaHemi-azygos)

अधरा-सं० स्त्री० निम्न, निम्न दिशा, नीचे की तरफ, (Downwards) वै० निघ० ।

अधराग्न्याशयीय पौरीतती-सं० स्त्री० (Inferior Pancreatic duodenal artery) अ० शा० ।

अधराच्यम्-सं० क्ली० नीचे भूमि में सरकने वाले कीट अथर्व० । सू० ७ । ३ । का० ४ ।

अधराजिः-सं० स्त्री० (UnstriPed muscle) धारी विहीन मांस पेशी ।

अधराजिह्वा-सं० स्त्री०(Rectus Inferior) अधरासरला ।

अधराञ्चम्-सं० क्ली० नीचे दबाना । अथर्व० । सू० १२७ । ३ । का० ६ ।

अधरातानिक रासनी-सं० स्त्री० (Longitudinalis Linguæ Inferior)

अधरातानिकी-सं० स्त्री० (Inferior Longitudinals)

अधराधर-हिं० पु० [सं० अध+अधर] नीचे का (Lowerlip)

अधरान्तरकौर्परी-सं० स्त्री० (Inferior Ulnar)

अधरान्त्रीय प्लक्षकम्-सं० क्ली० (Inferior-mesenteric Plexus)

अधरान्त्रीया-सं० स्त्री० (Inferior mesenteric)

अधरामहाशिरा-हिं० स्त्री० अधोगामहाशिरा (Inferior-venacava)

अधरावनता-सं० स्त्री० (Obliquus Inferior)

अधरांसधरा-सं० स्त्री० (Lower subscapular) असाधरा अ० श०।

अधराक्षि-कुण्डीय-विशरणम्-सं० क्ली० (Inferior Orbital fissure)

अधरेद्युः-हिं० संज्ञा पु० [सं०] गत दिन के पहिले का दिन। परसों।

अधरोत्तर-हिं० वि० पु० [सं०] (१) ऊँचा नीचा। खड़वीहड़।

अधरोत्तर कौक्षेयी-सं० स्त्री० (Inferior Epigastric)

अधरोंया-हिं० वि० [सं० अर्द्ध=आधा+रोमंथ=जुगाली] आधा जुगाली किया हुआ आधा पागुर किया। आधा चबाया हुआ।

अधरोर्ध्व कौक्षेयी-सं० स्त्री० (Deeper Inferior Epigastric)

अधरोष्ठ्या-सं० स्त्री० (Inferior Labial)

अधरौदूखल-स्रोतः-सं० पु० (Mandibular canal)

अधरौदूखली-सं० स्त्री० (Inferior Alveoler)

अधरौपमस्तिष्क पदकम्-सं० पु० (Inferior-Cerebellar Pedum or Peduncle)

अधरंगा-हिं० संज्ञा पु० [हिं० आधा+रंग] एक प्रकार का फूल।

अधर-सं० पु० (१) ओष्ठ ओठ हिं०। टोट-गं० लेबियम् Labium-ia-ले०। लिप (Lip) इं०। रा० नि० व० १८। क्ली० (२) स्त्री० योनि (Vagina)

अधवा-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अ०+धव-पति जीवित न हो। विधवा। विना पति की स्त्री०। रांड। सधवा का उल्टा।

अधवारी-हिं० संज्ञा स्त्री० [देश०] एक पेड़ का नाम जिसकी लकड़ी मकान और असबाब बनाने के काम आती है।

अधश्चर-हिं० वि० [सं०] जो नीचे नीचे चले।

अधसेरा-हिं० सं० पु० [सं० अर्द्ध=आधा+सेटक=सेर] एक बांट वा तौल जो एक सेर की आधी होती है। दो पाव का मान।

अधस्तल-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) नीचे की कोठरी। (२) नीचे की तह। (Inferior Surface)

अधस्तलकारिणी-सं० हिं० स्त्री० (Pronator teres)

अधातु-हिं० सं० पु० (Non metal) जिसमें धातु के लक्षण न पाये जांय। देखो-धातु।

अधामार्गः } -सं० पु० (१) अपामार्ग
अधामार्गवः }
(Achyranthes aspera) धामार्ग वृक्ष। See-Dhamargavah। अ० टी०

अधावट-हिं० वि० पु० [सं० अर्द्ध=आधा+आवर्त=चक्कर] आधा औंटा हुआ। जो औंटाते गरम करते करते गाढ़ा हो कर नाप में आधा हो गया हो।

अधि-(A Sanskrita Prefix) एक संस्कृत उपसर्ग जो शब्दों के पहिले लगाया जाता है और जिसके ये अर्थ होते हैं-(१) ऊपर। पर। (२) प्रधान। मुख्य। (३) अधिक। ज्यादा (४) संम्बन्ध में। उ० आध्यात्मिक। आधिदैविक। आधिभौतिक।

अधिकण्टकः-सं० पु० घास चुप, दुराजभा विशेष। (Alhagi maurorum) रा० नि० व० ४।

अधिकप्रियम्-सं० क्ली० त्वचा, दारचीनी। Cinnamomumzeylanicum'Nees'(Bark ofcinnamon)। वै० निघ०।

अधिकरणम्-सं० क्ली० जिस अर्थ का अधिकार करके और अर्थों का वर्णन किया जाए उसे अधिकरण कहते हैं जैसे रस अथवा दोष अर्थात् रस का अधिकार करके और बातें कहीं गई या दोष को अधिकार करके या यों कहो कि रस के ग्रहणार्थ रस शब्द कहा गया (कई जगह बिना कहे भी उसका ग्रहण किया जाता है ये सब अधिकरण ही होते हैं)सु० उ० ६५ अ०। यमर्थमधिकृत्योच्यते तदधिकरणम्। यथा—रसं दोषं वा। ६। जहां कोई काम किया जाता है अधिष्ठान। आधार। सु० सू० ४१ अ०। सु० उ० ६५ अ०

अधिकार-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) कार्य्यभार प्रभुत्व। आधिपत्य। प्रधानता। (२) प्रकरण शीर्षक। (३) क्षमता। सामर्थ्य। शक्ति।

अधिकारी-सं० पु० पुरुष। (A man) वै० निघ०।

अधिकारी-हिं० संज्ञा पु० [सं० अधिकारिन्] [स्त्री० अधिकारिणी] (१) योग्यता वा क्षमता रखने वाला। उपयुक्त पात्र। (२) स्वत्वधारी हकदार (३) प्रभु स्वामी।

अधिकृत-हिं० वि० [सं०] (१) अधिकार में आया हुआ। हाथ में आया हुआ उपलब्ध। जिस पर अधिकार किया गया हो संज्ञा पु० अधिकारी अध्यक्ष।

अधिकांग-हिं० संज्ञा पु० [सं०] अधिक अङ्ग। नियत संख्या से विशेष अवयव। वि० जिसे कोई अवयव अधिक हो उ० छांगु'।

अधिक्रम-हिं० संज्ञा पु० [सं०] आरोहण। चढ़ाव चढ़ाई।

अधिजिह्वकः-सं० पु० जिह्वागत रोग विशेष। देखो अधिजिह्वा See-Adhijihvah

अधिजिह्वा-
अधिजिह्विका- } सं० स्त्री० (१) श्लेष्म शोणित जन्य जिह्वा रोग विशेष, इसमें जिह्वा के ऊपर जिह्वाके अन्य भागके समान सूजन होती है। देखो—अधिजिह्वः। सु० नि० अ० १६ (२) घोड़े की जिह्वा के ऊपरी भाग में शोफरूप से होने वाला जिह्वा रोग विशेष। ज० द० २६ अ०।

अधिजिह्वः-सं० पु०
अधिजिह्व-हिं० संज्ञा स्त्री० } ए ट्युमरआन दी टङ्ग (A tumour on the tongue)-इं०।

कण्ठगत मुख रोग। एक बीमारी जिसमें रक्त से मिले हुये कफ के कारण जीभ के ऊपर सूजन हो जाती है। इसको द्विजिह्वा भी कहते हैं। इसके लक्षण निम्न है। यथा—इसमें जिह्वाग्र में कफ से शोथ होता है तथा जिह्वा के प्रबन्ध (मूल) पर रुधिर से मिला हुआ रक्तवर्ण का शोथ हो जाता है। सूजन पक जाने पर यह त्यागने योग्य अर्थात् असाध्य हो जाती है। सु० नि० अ० १६

अधितुण्डी रसः-सं० पु० शुद्ध पारद, शुद्ध विष, शुद्ध गन्धक, अजमोद, त्रिफला, सज्जीखार, जवाखार, चित्रक, जीरा, सेंधा नमक, काला नमक, वायविडंग, गंगलवण और त्रिकुटा प्रत्येक तुल्य भाग लें तथा सर्वतुल्य शुद्ध कुचला चूर्ण कर मिलाएँ, पुनः जम्भीरी के रस से घोटकर मिर्च प्रमाण गोलियां बनाएँ, इसके सेवन से मन्दाग्नि दूर होती है। अमृ० सा०।

अधित्वचः-सं० पु० आवरण भाग। अथर्व०। सू० २१। १ कां० ६।

अधिदन्तः,-कः-सं० पु० दन्तमूल रोग विशेष, गजदन्त। (A tooth growing over another) ज० द० ३ अ०।

अधिदैव-हिं० वि० [सं०] दैविक, दैवयोग से होने वाली, आकस्मिक।

अधिदैवतम्-सं० क्ली०
अधिदैवत-हिं० संज्ञा पु० } (१) पदार्थ सम्बन्धी विज्ञान, विषय वा प्रकरण। (२) अधिदेवता।

आधिदैविक रोग, देवताधिकृत। सु० शा० १ अ० वि० देवता सम्बन्धी।

अधिपतिः—सं० पु० सद्यः प्राणहर मर्मस्थान विशेष। मस्तक के भीतर ऊपर को जहाँ बालों का आवर्त (भँवर) होता है वहाँ शिरा और सन्धि का सन्निपात (मिलाप) है। यह "अधिपति" नामक मर्म स्थान है। यहाँ पर चोट लगने से तत्काल मृत्यु होती है। सु० शा० ६ अ०।

हिं० पु० [स्त्री० अधिपत्नी] सरदार, मालिक, मुखिया, स्वामी, नायक।

अधिपतिरन्ध्रम्-अधिपति विवरम्- } सं० क्ली० (Posterior Fontanelle) पश्चात् विवर। दो मास से कम आयु वाले बालक के शिर में जहां पार्श्वकास्थियों के ऊपर के पिछले कोने पश्चादस्थि से मिलते हैं वहां पर एक गड्ढा रहता है उसको अधिपतिरन्ध्र कहते हैं। वहाँ भी मस्तिष्क की फड़क मालूम होती है।

अधिपर्यङ्कदेशः—सं० पु० (Epithalamus) कौची प्रदेश।

अधिविन्ना—हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अग्यूढ़ा, प्रथम स्त्री, प्रथम विवाह की स्त्री, वह स्त्री जिसके रहते उसका पति दूसरा विवाह करले।

अधिभूतः—सं० पु० जिस इंद्रिय का जो कार्य है वह कार्य ही उस इन्द्रिय का अधिभूत विषय है। परन्तु किसी किसी ने उनके विषय को ही अधिभूत माना है। सु० शा० १ अ०।

अधिभौतिक—हिं० वि० देखो—आधिभौतिक।

अधिमन्थ—हिं० संज्ञा पु०
अधिमन्थः—सं० पु० } (Acute Pains in the balls of the eyes with pain and swelling of one side of the head) अभिष्यन्द (पानी आना) द्वारा उत्पन्न नेत्र रोग विशेष। अभिष्यन्द रोग का एक अंश। यह वातज, पित्तज, कफज और रक्तज भेद से चार प्रकार का होता है। इन सम्पूर्ण रोगों में तीव्र वेदना होती है। यही इनका मुख्य लक्षण है। अभिष्यन्द (चोंक उठना, नेत्रशूल) रोग की उपेक्षा करने से फलतः अधिमन्थ नामक रोग उत्पन्न होता है।

लक्षण—अभिष्यन्द रोगों के बढ़ने पर उपचार और पथ्य नहीं करने वाले मनुष्यों के नेत्रमें पीड़ा करने वाले उतने ही प्रकार के अधिमन्थ रोग उत्पन्न हो जाते हैं। जिस रोग में ऐसी पीड़ा होती हुई प्रतीत हो मानो नेत्र अत्यन्त उखाड़े या पीसे जाते हों और आधा शिर मथा सा जाता हो तो उसे अधिमन्थ जानना चाहिये। अधिमन्थ वातादि दोषों के लक्षण से युक्त चार ही प्रकार का होता है। श्लेष्मिक अधिमन्थ सप्त रात्रि में तथा रक्तज, वातज क्रमशः ५ व ६ रात्रियों में और मिथ्या आचार पैत्तिक तत्काल दृष्टि का नाश कर देता है।

चिकित्सा—सभी प्रकार के अधिमन्थ रोग में सर्वथा ललाटस्थ शिरा का वेधन करे अर्थात् फस्द करें,। इसकी अशान्ति की दशा में मोहों को प्रदाहित करें। सु० उ० ६ अ०।

अधिमुक्तकः—सं० पु० माधवी लता। वै० निघ०। See-madhavilata

अधिमुक्तिका—सं० स्त्री० सीपी, मोती की सीपी—हिं० मुक्तागृहम्, शुक्ति—सं०। Oyster shell (Ostrea Edulis) वै० निघ०।

अधिमांसकः—सं० पु० (Inflammation of the tonsils) कफ जन्य दन्तवेष्टज रोग विशेष। एक रोग जिसमें कफ के विकार से नीचे की दाढ़ में विशेष पीड़ा और सूजन होकर मुँह से लार गिरती है।

लक्षण—यदि हनु (दाढ़) की पिछली तरफ के दन्त (मूल) में घोर पीड़ा युक्त भारी सूजन हो और मुँह से लालास्राव हो तो उसे "अधिमांसक" कहते हैं। यह कफ के प्रकोप से होता है। भा० म० ख० ४ भा० मु० रो० चि०। मा० नि० सु० नि० १६ अ०।

अधिमांसम्—सं० क्ली० पु० नेत्र रोग विशेष। मा० ने० रो०। देखो—नेत्र (अधि) मांसार्म्म।

अधिमांसार्म्म—सं० पु० (Fleshy excres-

nce on the eye, cancer of the eye)। दृष्टि शुक्लगत रोग विशेष। यह "मांस वृद्धि" नाम से प्रसिद्ध है। इसके लक्षण नेत्र के श्वेत भाग में जो फैला हुआ यकृत सदृश अर्थात् ईषत् नील लोहित वर्ण का मोटा मांस दिखाई देता है उसे "अधिमांसार्म्म" कहते हैं। मा० नि०।

अधिरूढ़ा-सं० स्त्री० प्रौढ़ा, दृष्टार्त्तवा, ६० वर्ष से (ऊपर) ५५ वर्ष पर्यन्त की अवस्था वाली स्त्री See-Proudha

अधिरोहण-हिं० सं० पु० [सं०] चढ़ना। सवार होना। ऊपर उठना।

अधिरोहिणी-सं० (हिं० संज्ञा) स्त्री० (Stair case, a ladder) सीढ़ी। निसेनी। जीना बांस का बनाया हुआ चढ़ने का मन। इसके पर्याय,-निःश्रेणी। अ० टी०। निश्रेनिः (अ०).

अधिवास-हिं० संज्ञा पु० [सं०] [वि० अधिवासित] (१) निवास स्थान। रहने की जगह। (२) महासुगन्ध। खुशबू। (३) उबटन।

अधिवासन-हिं० सं० पु० (१) सुगंधित करना। (२) रहना।

अधिवृक-हिं० पु० (Supra renals) उपवृक्क।

अधिवेत्ता-हिं० संज्ञा पु० [सं०] पहिली स्त्री के रहते दूसरा विवाह करना।

अधिवेदन-हिं० संज्ञा पु० [सं०] एक स्त्री के रहते दूसरा विवाह करना।

अधिश्रयणी-सं० स्त्री० चुल्लि। -हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] सीढ़ी। निसेनी। निःश्रेणी। जीना।

अधिश्रवण-हि० संज्ञा पु० [सं०] (१) चूल्हा भोजन पकाने की अँगीठी, तंदूर। भाड़ के लिये अग्नि स्थान। चुल्लि सं०। (Over' A fire-place) (२) आग पर चढ़ाना। आग पर रखना।

अधिष्ठाता-हिं० संज्ञा पु० [सं०] [स्त्री० अधिष्ठात्री] (१) करने वाला। नियंता। प्रधान। (२) किसी कार्य की देखभाल करने वाला। वह जिसके हाथ में किसी कार्य का भार हो।

अधिष्ठान-सं० पु० कलाई। टखने की हड्डियाँ। च० कूर्च। सु०।

अधिष्ठानम्-सं० क्ली० / अधिष्ठान-हिं० संज्ञा पु० (१) वास स्थान (Place)। (२) ग्राम (Village) (३) नगर। शहर। जनपद। (४) स्थिति। पड़ाव' मुकाम, ठहरने की जगह टिकान। रहने का स्थान (५) आधार सहारा।

अधिष्ठानकला-सं० स्त्री० (Basement membrane)

अधिस्कन्द-अपने क्षेत्र में। अथर्व०।

अधिक्षिप्त-हिं० वि० [सं०] फेंका हुआ।

अधिक्षेप-हिं० संज्ञा पु० [सं०] फेंकना।

अधीरः-सं० पु० / अधीर-हिं० वि० पु० (१) अधीर्य धीरता हीन, धैर्य रहित, जिसको धीरज न हो। उद्विग्न, व्यग्र, व्याकुल विह्वल बेचैन घबराया हुआ। (२) अयोग्य वैद्य। वै० निघ०। (३) चंचल, अस्थिर, उतावला, तेज, आतुरा। (४) असंतोषी।

अधो-अव्य० दे० अधः।

अधोओष्ठ-हिं० संज्ञा पु० निम्न ओष्ठ। (Lower-Lip)

अधो ओष्ठीया धमनी-

अधःओष्ठीया धमनी-हिं० संज्ञा स्त्री० (Inferior labial artery) निम्न ओष्ठ की पोषक धमनी।

अधोऽङ्गम्-सं० क्ली० (१) मलद्वारा। गुदा (Anus)। (२) योनि (Vagina)

अधोऽंशुकम्-सं० क्ली० / अधोंशुक-हिं० संज्ञा पु० परिधेयवस्त्र, एक नीचे का वस्त्र। जैसे पायजामा' धोती, इत्यादि अम०। (२) अन्तर।

अधोऽन्वायाम रसनिका-हिं० स्त्री० (Longitudinalis)

अधोऽन्वायाम शिरा कुल्या-हिं० स्त्री० (Inferior sagital sinus)

अधोऽसृपित्तम्–सं० क्ली० अधोगत रक्तपित्त रोग। देखो रक्तपित्तम्।

अधोगतः–सं० पु० अस्थिभंग रोग। (Fracture) वै० निघ०।

अधोगमन–हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) नीचे जाना। (२) पतन।

अधोगामहाशिरा–अधोगामी महाशिरा– सं० स्त्री० निम्न महाशिरा (Inferior vena cava) अजोफ नाजिल अ० दाहिनी ओर बाईं संयुक्ता श्रोणिगा शिराओं के मेल से अधोगा महाशिरा बनती है यह उदर में बृहत धमनी की दाहिनी ओर रहती है। देखो—अधोगामहाशिरा

अधोगामहाशिरा–हिं० संज्ञा स्त्री० नीचे सब शरीर से अशुद्ध रुधिर लाने वाली। नीचे की महाशिरा (Inferiorvena cava)

अधोगा महाशिरा खात–हिं० संज्ञा स्त्री० (Groove for inforior venacava)

अधोगाबृहद्धमनी–संज्ञा स्त्री० (Descending aorta) निम्न महा धमनी।

अधोगामी–हिं० वि० [सं० अधोगामिन्] [स्त्री० अधोगामिनी] नीचे जाने वाली (Descending)

अधोगामी महाधमनी–सं० स्त्री० अधोगाबृहद्धमनी।

अधोगामीबृहद्अन्त्र–हिं० संज्ञा पु० (Descending colon) बृहत् अन्त्र का तीसरा भाग जो प्लीहा से नीचे की ओर जाकर वामपार्श्व से वस्तिगह्वर में पहुँचता है। कोलून नाजिल, कोलून हावित–अ०।

अधोगामीवृहत् धमनी–सं० स्त्री० (Descendingaorta), निम्न महाधमनी।

अधोघण्टा–सं० स्त्री० (Achyranthes aspera) अपामार्ग, चिचड़ा। रत्ना०।

अधोजिह्वा अधोजिह्विका—सं० स्त्री० (Uvula) अलिजिह्वा, उपजिह्वा, तालुमूलस्थ क्षुद्रजिह्वा। हारा० (२) जिह्वाधः शोथरोग, अधोजिह्वा, की सूजन (Uvulitis)। च०।

अधोदेश–हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) नीचे का स्थान। नीचे की जगह। (२) नीचे का भाग।

अधोद्वारम्–सं० क्ली० मलद्वार, चूति, गुदा,-हिं०। इस्त, दुब्र, शरज, मक्अद मबरज, रोदए-मुक़ीम–अ०। एनस anus-इं०। (२) योनि हिं०। मह्बिल, अनुकुर्रहिम् अ०। वेजाइना (Vagina) इं०। हे० च०।

अधोधारा–हिं० संज्ञा स्त्री० निम्नधारा, नीचे का किनारा। (inferior border)

अधोनेत्रच्छद–हिं० संज्ञा पु० (Lower eyelid) निम्न पलक, नीचे की पलक।

अधोपार्श्विक चक्राङ्ग–हिं० संज्ञा पु० (inferior lateral gorus)

अधोपुष्पी–सं० स्त्री० अंधाहुली। देखो–अधः पुष्पी (Adhahpushpi)

अधोपृष्ठ–हिं० पु० भीतरीपृष्ठ (Inferior surface)

अधोभाग–हिं० संज्ञा० पु० (Base) अस्थि की तली का चौड़ा भाग।

अधोभार–(Downward pressure) रोगों के तीन प्रकार के दोषों में से एक। वायु का नीचे को दबाव डालना।

अधोभागहर:–सं० त्रि० नीचे के भाग को शुद्धि करने वाला। विरेचन कर्म में हित कारक। विरेचन। च।

अधोभुवन–हिं० संज्ञा पु० [सं०] पाताल। नीचे का लोक। अधोलोक।

अधोमर्म–सं० क्लीं० (१) गुदा (Anus) (२) गुह्यद्वार (Pudendum)। हे० च०।

अधोमार्ग–हिं० संज्ञा पु० [सं०] गुदा (Anus)

अधोमुख–हिं० वि० [सं०] (१) नीचे का मुख किये हुए। मुँह लटकाए हुए। (२) औंधा। उलटा। मुँह के बल। क्रि० वि० औंधा। उलटा।

अधोमुखा,-खी–सं० स्त्री० गोजिह्वा। गोभी-हिं० रा० नि० व० ४। (Elephantopus scaber)

अधोयन्त्रम्–सं० क्ली० वकयन्त्र । (See-vakayantra)

अधोरेचनः–सं० पु० आरग्वध वृक्ष । अमलतास का पेड़–हिं० । Cassia fistula (Tree of—)

अधोर्द्धे–हिं० क्रि० वि० [सं०] ऊपर नीचे । तले ऊपर ।

अधोललाट चक्राङ्ग–हिं० संज्ञा पु० (Inferior temporal gyrus)

अधोलोमः–स० (हिं०) पु० गुह्य स्थान के ऊर्ध्व भाग के केश को कहते हैं । झाँट, कामाद्रि केश हिं० । (The hair on the groin)

अधोलंब–हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) लंब । (२) साहुल ।

अधो वर्त्ती क्षुद्रांत्रीय धमनी–हिं० स्त्री० (Lower mesenteric artery) छोटी आंतों के नीचे की धमनी ।

अधोवातावरोधोदावर्त्त–हिं० संज्ञा पु० [सं०] रोग विशेष । अधोवायु के वेग को रोकने से उत्पन्न उदावर्त रोग । इस रोग के लक्षण ये हैं–मल-मूत्र का रुक जाना, अफरा चढ़ना, गुदा, मूत्राशय, लिंगेन्द्रिय में पीड़ा तथा बादी से पेट में अन्य रोगों का होना ।

अधोवायुः–सं० पु०
अधोवायु–हिं० संज्ञा पु० } (१) अपानवायु, गुदा की वायु । (२) पाद, गोज़, पर्दन, नीचे की हवा । See-Apanavayu

अधोशाखा–सं० स्त्री० (Lower extremity) निम्न शाखा, धड़ के नीचे की शाखा । इसमें नितम्बास्थि, ऊर्वस्थि, जंघास्थि, अनुजंघा, पाली, कूर्च, प्रपाद तथा अँगुल्यस्थियों का समावेश होता है । प्रत्येक शाखा में ३१ अस्थियाँ हैं, दोनों में ६२ ।

अधोशिरा कुल्या–सं० स्त्री० देखो—शिराकुल्या ।

अधोशुक्तिका–
अधोसीपाकृति– } सं० हिं० स्त्री० (Inferor turtbinate) नासिका की बाहरी दीवार पर की तीन मुड़ी हुई अस्थियों में से नीचे वाली अस्थि । यह तीनों में सब से बड़ी है और एक पृथक अस्थि है । इस अस्थि की शकल सीपी जैसी होती है ।

अधोहनुः–सं० पु० नीचे का जावड़ा । (Lower jaw) देखो—अधो हन्वस्थि ।

अधोहन्वस्थि–हिं० संज्ञा स्त्री० नीचे के जबड़े की अस्थि । इज़्ज़ामुल्-फ़क्कुल् अरफ़ल–अ० । उस्तख्वा नुल्-वारहे-ज़ेरीं–फा० । मैंडिब्ल (Mandible) इन्फीरियर मैक्जिलरी बोन (Inferior maxillary bone)–इं० ।

यह चेहरे की अस्थियों में सब से बड़ी और मजबूत अस्थि है और सब से नीचे के भाग में रहती है ठुड्डी (ठोढ़ी) इससे बनती है । यह अस्थि देशी जूते की नाल की भाँति मुड़ी हुई होती है ।

अधंतरी–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अधः+अन्तरी] मालखंभ की एक कसरत ।

अधः–सं० त्रि० (अव्यय) निम्न, नीचे, तले, (Down, below) । संज्ञा पु० (१) अधोभाग, निम्न भाग, (२) योनि वै० निघ० ।

अधःकर्षणम्–सं० क्ली० नीचे खींचना (Drawing Downwarbs)

अधः काय–हिं० संज्ञा पु० [अधः = नीचे+काय = शरीर] कमर के नीचे के अंग, नाभि के नीचे के अवयव ।

अधः कुन्तलः–सं० पु० अन्तर्लोम ।

अधः कुक्षि देशः–सं० पु० (Hypogastric region) कुक्षिनिम्नभाग । पेड़ू के नीचे का हिस्सा । इक्लीम् ख़स्रानी, किस्म ख़स्रानी–अ० ।

अधः कौक्षेय पुञ्जम्–सं० पु० कुक्ष्यधः भाग स्थित नाड़ी जाल । ज़फ़ीरह्-ख़स्रानिय्यह्–अ० । (Hypogastric Plexus)

अधः पतन–हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) । (Precipitation) अधः क्षेपित वा तल०

स्थायी होना। (२) नीचे गिरना। (३) विनाश, क्षय, पतन। देखो—अधः पातन।

अधः पात–हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) अधः क्षेपित (-प) तलस्थित, नीचे गिरा हुआ। (Precipitate)। (२) नीचे गिरना। देखो—अधः पातन। (३) तलछट, गाद।

अधः पातनम्-सं० क्ली०
अधः पातन-हिं० सज्ञा पु०

अधः पातनम्—इसका शाब्दिक अर्थ नीचे गिराना है। अधःक्षेपण तलस्थिरीकरण। (१) किन्तु, प्राचीन भारतीय रसायनशास्त्र की परिभाषा में इसका अभिप्राय "पारद शोधन के तीन विधानों में से एक" है।

विधि—नवनीत (नैंनुआ) नाम का गंधक और पारद इनको सम भाग लेकर जम्बीरी के रस से मर्दन करें। फिर केवाँच की जड, शोभाञ्जन की जड़, श्वेत अपामार्ग, सर्षप और सेंधा नमक (किसी किसी जगह पारद को त्रिफला क्वाथ, शोभांजन बीज, चित्रक मूल, रक्त सर्षप और सेंधा लवण में मर्दन करने का विधान है।) के समान भाग कल्क को मिश्रित कर यन्त्र के ऊपरी पात्र के भीतर पेंदे में उक्त मिश्रित कल्क के साथ पारद का प्रलेप करदें। यन्त्र के जलपूर्ण निम्न पात्र को पृथ्वी में गढ़ा बना कर उसमें रखें और उसके ऊपर से पारद लिप्त पात्र को औंधा कर रख दें। दोनों पात्रों के मुख को मिलाकर मृदु मृत्तिका द्वारा उसकी सन्धियों को भली प्रकार बन्द करदें। ऊपर के पात्र को उत्ताप देने पर पारद पृथक होकर जल में गिरेगा। यह पारद शुद्ध होगा। पारद शोधन की इस क्रिया को अधःपातन और जिस यन्त्र द्वारा यह क्रिया सम्पन्न होती है उसको आयुर्वेद में मूधरयन्त्र कहते हैं। देखो—पारद।

"नवनीताह्वयं सूतमित्यादि।" र० सा० सं०।

(२) अर्वाचीन रसायनशास्त्र की परिभाषा में इससे अभिप्राय विलयन में से किसी द्रव्य का पात्र तल पर शनैः शनैः बैठना अथवा तलस्थायी होना है।

कुछ द्रव्य ऐसे होते हैं, कि यदि उनके विलयन पृथक् पृथक् शुद्ध जल में बनाए जाएँ, तो वह विलयन सर्वथा स्वच्छ और पारदर्शक होते हैं। पर यदि उनको मिला दिया जाए, तो उनमें कोई ऐसा परस्पर रासायनिक विकार होता है, कि एक अविलेय वस्तु बन जाती है, जो पहले विलयन को कलुषित कर देती है, और पुनः पात्र तल पर शनैः शनैः बैठ जाती है। इस प्रकार २ विलेय द्रव्यों के मेल से एक भिन्न अविलेय वस्तु का बनना और पात्र तल पर शनैः शनैः बैठना अधःपातन (अधः क्षेपण) कहलाता है और जो द्रव्य पात्र तल पर बैठता है, उसे अधः पात (अधः क्षेप) कहते हैं।

पर्य्याय—अधःपातन—

प्रेसिपिटेशन Precipitation इं०। तसींब अ० तहनशीं करना–उ०।

अधःपात—

प्रेसिपिटेट Precipitate-इं०। रूसोब, उकार, इकर अ०। दुर्द, तलछट, तहनशीं-उ०।

अधः पाश्चात्य चक्राङ्ग–हिं० संज्ञा पु० (Postero-infeiror gyrus)

अधः पुटः–स० पु० चारोली वृक्ष। वै० निघ०।

अधः पुष्पी–सं० क्ली० (१) गोजिह्वा क्षुप सं०। गोभी–हिं०। (Hicracinum) रा० नि० व० ४। (२) चोरपुष्पी तृण विशेष। नीले फूल की एक बूटी जिसे अंधाहूली भी कहते हैं।

संस्कृत पर्याय—अवाक्पुष्पी, मङ्गल्या, अमरपुष्पिका। रा०। हिं० स्त्री० अनतमूल नामक ओषधि। चोर काँटकी चोर खड़िका भाँटुइ, उकड़े बटिया, लेङरा-बं०। हेटाहुली गोड़। वै० निघ० सततज्वर, ब्रह्मदण्डी।

अधः प्रस्तरः–सं० पु० तृणासन। वै० निघ०।

अधःशङ्खचक्राङ्ग–हिं० संज्ञा० पु० (Tempero-inferior gyrus)

अधःशयन–हिं० संज्ञा पु० [सं०] पृथ्वी पर सोना।

अधःशल्यः–सं० पु० (१) अपामार्ग क्षुप। (Achyranthesaspora) रा० नि० व० ४। भा० पू० १ भा० (२) श्वेत अपामार्ग।

Achyran thes Indica' *Roxb* (The white variety of-) वै० श०।

अधःशाखः-सं० पु० संसाराश्वत्थ वृक्ष। वै० श०।

अधः शेखरः-सं० पु० श्वेत अपामार्ग Achyranthes aspera (the white varietyof)

अध्यमान-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (Flatulent) रोग विशेष पेट का अफरना। आध्मान। इस रोगमें पेट अधिक फूल जाता है दर्द होता और अधोवायु का छूटना बन्द हो जाता है।

अध्यण्डा-
न्यण्डा- } सं० स्त्री० (१) कपिकच्छु लता। केवाँच, कौंच, वानरी हिं०। आलकुशी बं० (Mucuna pruriens, carpopogon pruriens) ले०। देखो आत्मगुप्ता या केवाँच। (२) भूम्यामलकी भूमि, आमला, भूँई आंवला। (phyllanthus niruri) रत्ना०। (३) कोकिलाक्ष सं० तालमखाना (Hygrophila spinosa) मद० व० १। भा० पू०। प० मु०।

अध्यर्थ-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) डेढ़ (२) वायुजो सबको धारण करनेवाली और बढ़ाने वाली है और सारे संसार में व्याप्त है

अध्यर्बुदम्-
अध्यर्बुद- } रोग विशेष जिस स्थान पर एकबार अर्बुद रोग हुआ हो उसी स्थान पर यदि फिर अर्बुद हो तो उसे अध्यर्बुद कहते हैं।

यथा—सु० नि० ११ अ० "यच्छायतेऽन्यत् खलु पूर्वजातेज्ञेयं तदध्यर्बुदम बुर्बुदज्ञैः"

अध्यशनम्-सं० क्ली०
अध्यशन-हिं० संज्ञा पु० } (१) अजीर्ण पर भोजन करना। यथा वै० निघ० दिनचर्या। अजीर्णे भुज्यते यत्तु तदध्यशनमुच्यते। पहिला भोजन विना पचे अर्थात् अजीर्ण रहते हुये और भोजन कर लेना अध्यशन कहलाता है भा० म० ख० १ भा० अतीसा०। चि० वा० सू० ८ अ०। (२) अजीर्ण। अनपच। (Indigestion)

अध्यक्षः-सं० पु० (१) चीरिका वृक्ष, राजादनी-सं० खिरनी हिं० (Mimusops hexandra) श० र०। (२) महार्कवृक्ष अर्थात् बड़े मदार का पेड़ त्रि० (३) एक मान है जो आधा कर्ष (१ तो०) के बराबर होताहै सि० य० र० पि० वि० एलादिगुटिका वृन्द

हिं० पु० (१) स्वामी। मालिक। (२) नायक। सरदार। मुखिया। प्रधान। अधिकारी अधिष्ठाता।

अध्युषितः-सं० पु० समस्त चक्षु रोग।

त्रि० उपविष्ट। आसीन।

अध्युष्ट-हिं० वि० पु० [सं०] बसा हुआ। आबाद।

अध्यूढ़ा-सं० स्त्री० (Married woman) प्रथम विवाहिता स्त्री। वहस्त्री जिसका पति दूसरा करले। जेष्ठा पत्नी।

अध्रियामणी-हिं० संज्ञा स्त्री० [?] कटार। कटारी। डि।

अध्रुव-हिं० वि० पु० [सं०] (१) चल। चंचल चलायमान। अस्थिर। (२) अनिश्चित। अनित्य।

अध्रुषः-सं० पु० उग्र नाम का तालुगत मुख रोग विशेष। इस रोग में कड़ी सूजन, तालू प्रदेश में अधिक रक्तता वेदना और ज्वर होता एवं रक्त विकार से उत्पन्न होता है। सु० नि० १६ अ०। यह रक्त दोष से उत्पन्न होता है इसमें तालू देश लोहित वर्ण को अति स्थूल सूजन होती है जिससे तीव्र वेदना और ज्वर होता है। मा० नि०।

अध्वगभोज्यः-यः-स० पु० आम्रातक वृक्ष।

अध्वगवृक्षः-सं० पु० (Spondias mangifera) आम्रातक वृक्ष, अम्बाड़ा।

अध्वगक्षमी-सं० पु० (१) (See-Khechara) खेचरः सं० (२) पक्षी स० हिं० (A bird) वै० निघ०।

अध्वगः-सं० पु० (१) (Camel) उष्ट्र सं० ऊंट हिं० (२) (Donkey) अश्वतर सं० खच्चर हिं० (३) बटोही, पथिक, यात्री मुसाफिर।

अध्वजा–सं० पु० स्वर्णुली वृक्ष। See-Svarnuli रा० नि० व० ४।

अध्वनिषेवणम्–सं० क्ली० अध्वचलन, भ्रमण। वै० नि०। See चंक्रमण (Chankramana)

अध्वरा–सं० स्त्री० मेदा। (See-Meda) भा० पू० १ ह० व०।

अध्वशल्यः–सं० पु० अपामार्ग। चिचड़ी। (Achyranthes aspera) रा०।

अध्वशोष–सं० (वि०) पु०
अध्वशोषि–हिं० संज्ञा पु०
} रोग विशेष। रास्ता चलने से उत्पन्न शोष (यक्ष्मा) रोग–नि०।

अध्वसिद्धकः–सं० पु० सिन्धुवार वृक्ष सिन्दुवार See Sindhuvarah रा० नि० व० ४।

अध्वाण्डशाम्रवः–सं० पु० श्योनाक वृक्ष सं० अरुसोनापाठा हिं० (Calosanthes Indica or Oroxylum Indicum. *Syn* Bignonia Indica)। रा० च०।

अध्वान्त–सं० क्ली० सायंकाल (Evening, Eventide)

अध्वः–सं० पु० (१) नेत्र वर्त्म, नेत्र पक्ष्म (Eye-lid (२) पथ, मार्ग, रास्ता,।

अन–हिं० क्रि० वि० [सं० अन्] बिना। बगैर। वि० [सं० अन्य=दूसरा] संज्ञा पु० [सं०] (१) अन्न अनाज। (२) दमुल् अख्वैन-अ० हीरादोखी, खूनखराबा हिं० Dragon's blood (Dracœna Cinnabar-*Bal f. f.*) फा० इं० ३ भा०।

अन अका सोडियम क्लोराइड–ले० कालानमक। (Black Salt) इं०।

अनअसी–मेदा See-Meda

अन इक कट्टू–ता० बड़ा कवाँर। अगेविअमेरिकेना (Agave Americana

अनऋतु–हिं० सं० पु० [सं० अन्+ऋतु] (१) विरुद्ध ऋतु। अनुपयुक्त ऋतु। बे मौसिम। अकाल। असमय। (२) ऋतु-विपर्य्यय। ऋतु के विरुद्ध कार्य।

अ(उ)नक–अ० (ए० व०) अअनाक़ (ब० व०) ग्रीवा। नेक (Neck), सर्विक्स (Cervix) इं०।

अनकव–अ० मत्स्यभेद, एक प्रकार की मछली। (Asort of fish),

अनकर–अ० मर्जञ्जोश। (See Marzanjosh),

अनकली–यु० सलजम।

अनकलीमन–यु० वहार जिसको हिन्दी में पाषा कहते हैं। यह बाबूना गाव का एक छोटा भेद है। लु० क०।

अनकशानकस–यु० मरीदह् या दोक्। गाजर का बीज अथवा करफ्स कोहीका बीज। लु० क०।

अनकिलस–यु० मसूर सदृश एक बूटी है जो उष्ण प्रदेशों में उगती है। लु० क०।

अनकोली–यु० सलजम।

अन कुरिंहम–अ०
मह्बिल–अ०
} (Vagina) योनी

[अनक=ग्रीवा×रहिम=गर्भाशय] का शाब्दिक अर्थ गर्भाशय की ग्रीवा है, तो भी प्राचीन किसी परिभाषा में यह योनि के लिये प्रयुक्त होता था। जरायु के साथ इस नाली (योनि) का सम्बन्ध वैसा ही है जैसा कि सुराही का उसकी ग्रीवा के साथ। इसी लिये प्राचीन यूनानी चिकित्सकों ने इसको अनक रिंहम नाम से अभिहित किया। उक्त नाली के बहिर्द्वार (छिद्र) या दरार के फर्ज और उक्त नाली को मह्बिल या अन्दर निहानी कहते हैं।

अनकुरिंहम और रक्बतुरिंहम का भेद–

उपर्युक्त दोनों शब्दों का अर्थ गर्भाशय की ग्रीवा, है। परन्तु अनकुरिंहम तो योनि के लिये प्रयोग में आता है, पर रक्बतुरिंहम अपने वास्तविक अर्थों में गर्भाशय की ग्रीवा के लिये प्रयुक्त होता है।

आधुनिक मिश्रदेशीय चिकित्सक रक्बतुरिंहम के स्थान में अपने वास्तविक अर्थों में गर्भाशय की ग्रीवा के लिये अनकुरिंहम शब्द का प्रयोग

करते हैं और अनकुरिंहम के स्थान में महूविल शब्द का जो अधिक उपयुक्त एवं यथार्थ है।

नोट—डाक्टरी में अनकुरिंहम या गर्भाशय की ग्रीवा के अर्थ में रक्तबतुरिंहूम को सर्विक्स युटराइ (Cervix Uteri) और म०विल या अन्दाम निहानी अर्थात् योनि के अर्थ में अनकुरिंहम को वेजाइना (Vagina) कहते हैं। देखो-योनि।

अनकूद-फा०, तु० काली तुलसी। नमाम। लु० क०।

अनकूद-अ० खुमी। एक पौधा है। लु० क०।

अनकुन-यु० सदा गुन्नाब। लु० क०।

अनकूस-यु० नाशपाती लु० क०। (Pyrus communis)

अनकंप-हिं० संज्ञा पु० देखो-अकंप।

अनक् कालिक-दुश्चिपत्री।

अनगना-हिं० संज्ञा पु० गर्भ का आठवां महीना।

अनगना-सं० स्त्री० } कपास-हिं०। कार्पासी-
अनगिनका-सं० स्त्री० } सं०। (Gossypinm herbaceum, *Linn*) इं० मे० मे०।

अनघः-सं० पु० } सफेद सरसों-हिं०। गौर
अनघ-हिं० संज्ञा पु० } सर्षप-सं०। (Brassicajuncea) रा० नि० व० १६। हिं० वि० पवित्र, शुद्ध।

अनघुल-हिं० वि० अविलेय (Insoluhble),

अनघ्नः-सं० पु० श्वेत सरसों-हिं०। गौर सर्षप-सं०। (Brassica juncea) वै० निघ०।

अनङ्गम्,-कम्-सं० क्ली० मन। (Mind) श० र०

अनङ्गनेगड़ोरसः-सं० पु० ताम्बा, होरा, मोती, हरताल, वैक्रांत (तुरमली), सूर्यकांत, माणिक्य इनकी भस्म, सोना, चांदी, सोनामाखी और अभ्रक सत्व प्रत्येक समान भाग और सबके बराबर पारा और पारा मिलाकर सबके बराबर गंधक मिश्रित कर कपास के फूलों के रस से तीन भावना देकर सुखा लें। फिर आतशी शीशी में बन्द कर बालुका यंत्र में क्रम से मन्द, मध्य और तीव्र अग्नि से तीन दिन पकाये। फिर शीतल होने पर निकालें और सातवां भाग विष, काली मिर्च, कपूर, वंशलोचन, जावित्री, लवङ्ग और कस्तूरी की भावना दें तो यह सिद्ध होता है। मात्रा=१ रत्ती। गुण-दूध मिश्री के साथ खाने से नपुंसकता दूर होती है। रस० यो० सा०।

अनङ्ग मेखला गुटिका-सं० स्त्री० देखो-परिशिष्ट भाग।

अनङ्गमेखलामोदकः-सं० पु० देखो-परिशिष्ट भाग।

अनङ्ग वर्द्धकोरसः-सं० पु० पारा और धतूर बीज को सम भाग ले, धतूर के बीज को तेल में डाल कर खरल में घोंटे, पुनः गन्धक द्विगुण भाग मिला कर बारीक घोट कर रख लें। इसमें पारे की भस्म (चन्द्रोदय) मिलानी चाहिये। मात्रा-१-३ रत्ती। गुण-इसके सेवन से मनुष्य कामान्ध हो जाता है। रस० यो० सा०।

अनङ्ग सुन्दर रसः-सं० पु० वाजीकरणाधिकारोक्त रस विशेष। यथा-एक पल पारा और एकपल गंधक को तीन दिन लाल कमल के रस की भावना दें। तत्पश्चात् इसको प्रहर भर बालुकायंत्र में पकाएं। पुनः उतार कर एक दिन रक्त अगस्त पुष्प रस तथा श्वेत कमल के रस में भावना दें। र० सा० स०।

अनङ्गसुन्दरो रसः-सं० पु० (१) पारा, २ पल, गंधक २ पल, सुवर्ण भस्म १कर्ष, ताम्रभस्म १ पल, चांदी भस्म ४ निष्क। सबको एक दिन तक पंचामृत अर्थात् गिलोय, गोखरू, मूसली, मुण्डी और सतावरी के रस में घोट कर बेर प्रमाण गोलियां बनाएँ। गुण-यह अत्यन्त पौष्टिक है। रस० सं०।

(२) शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक समान भाग लेकर तीन दिन तक कुमुदिनी के रस से भावना दें। पुनः सम्पुट के भीतर रखकर बालुका यंत्र में पकाये, फिर निकाल कर लाल रंग के अगस्त और सफेद कमल के रस से पृथक् पृथक् भावना देकर रक्खें।

मात्रा—३ रत्ती। इसके सेवन से मनुष्य १०० स्त्रियों से रमण करने की शक्ति प्राप्त कर सकता है। रस० यो० सा०। इस नाम का दूसरा योग र० मं०, रसायन सं० वाजीकरण प्रकरण में लिखा है।

अनङ्गरः-सं० पु० विना अंगुली वाला। अथर्व०। सू० ६। २२। का० ८।

अनचण्डई-ता० मोलक् काय-ते० (Solanum Ferox) इं० मे० मे०।

अनचन्द्र-ते० अनसंद। (Acacia Ferruginea' *D.C.*) ले०। स० फा० इं०।

अनज-अ० बकरी, छागी। (A Shegoat) लु० क०।

अनञ्जली-ता० रानफनस-मह०। वन्य पनस, जंगली कटहल। Artocarpus Hirsuta' *Lam*। फा० इं० ३ भा०।

अनजान-हिं० संज्ञा पु० (१) एक प्रकार की जंगली घास जिसे प्रायः भैंसें ही खाती हैं और जिससे उनके दूध में कुछ नशा आ जाता है। (२) अजान नाम का पेड़।

अनटीपण्डु-ते० केला, कदली। (Musa paradisiaca' *Linn*) फा० इं० ३ भा०।

अनडुजिह्व-सं० स्त्री० गोजिह्वा, गोभी-हिं०। गोजिया शाक-बं० रा० नि० व० ४। (Elephantopus, Scaber)

अनडुह-हिं० संज्ञा पु० [सं०] बैल, वृष। (An ox)

अनडुही-सं० (हिं० संज्ञा) स्त्री० स्त्री गवि, गाय। (A cow) देखो—गाय।

अनड्वान्-सं० पु०, हिं० संज्ञा पु० (A bull an ox) वृष-सं०। बैल साँड़-हिं०। इसके पर्य्याय—बलीवर्द, वृषभ, वृष, अनड्वान्, सौरभेय, गौ, उक्षा और भद्र ये बैल के संस्कृत नाम हैं। भा० पू०। रत्ना०। (२) the Sun सूर्य (उपनि०)।

अनड्वाही-सं० स्त्री० (A cow) स्त्री गवि-सं०। गाय-हिं०। इसके पर्य्याय—सुरभि, सौरभेयी, माहेयी और गौ ये गाय के संस्कृत नाम हैं। हला०।

अनणुः-सं० पु०, क्ली० सूक्ष्म धान्य। सरुधान-बं०। वै० निघ०।

अनत-हिं० वि० [सं०] न झुका हुआ। सीधा।

अनत्रजनीय-हिं० वि० (Non-nitrogenous) नत्रजन विहीन। वे पदार्थ जिनमें नत्रजन नहीं होती। जैसे—वसा (चरबी), शर्करा (शक्कर), श्वेतसार (मांड़),

अनद्यः-सं० पु० गौरसर्षप-सं०। श्वेत सरसों-हिं०। (Brassica juncea) रा०।

अनद्यतन-हिं० वि० [सं०] अद्यतन के पहले या पीछे का।

अननस-म० देखो—अनन्नास।

अननाश-बं० छोटा घी कुवार, छोटी ग्वार-हिं०। (Aloe litoralis) इं० मे० मे०।

अननास-हिं०, मल०, मह०, गु० अनन्नास, अनरस हिं०। (Ananas sativus) इं० मे० मे०।

अनन्तकः-सं० पु० (१) मूलक, मूली, Raphanous sativus) (२) नलतृण-सं०। नरकट-हिं०। Phragmites karka मद० व० १।

अनन्त गुणमण्डूरम्-सं० क्ली० (नवायस मण्डूर) गन्धक, सुहागा, पारा, त्रिकुटा, त्रिफला पृथक् पृथक् समभाग ले और सर्व तुल्य लौह किट्ट गुड़ मिलाएँ। पुनः सब से दूने गोमूत्र में पकाएँ और फिर सर्व तुल्य पुरातन गुड़ मिलाकर घोटें।

मात्रा—८ माशे।

पथ्य—छाँछ और चावल खाना चाहिये।

गुण—इसके सेवन से क्षय और पांडु रोग का नाश होता है, रस० यो० सा०।

अनन्त मूलम्-सं० क्ली० (१) करालाख्य औषध। देखो—कराल। (२) सुगन्धा। (३) वचा भेद। श० चि०। (४) अनन्ता। देखो—गो(सा-)रिवा।

अनन्तमूली-सं० क्ली० (१) दुरालभा (Alhagi Maurorum); (२) रक्तदुरालभा 'Alhagi

maurorum (the red varity of) वै० निघ०।

अनन्त रन्ध्रका–सं० स्त्री० खपर पोलिका। आस्के पिटे-बं०। वै० निघ०।

अनन्तवातः–सं० पु० उक्त नाम का शिरोरोग विशेष लक्षण—जिसमें तीनों दोष कुपित होकर मन्या (गर्दन) की नाड़ी को तीव्र पीड़ा समेत अति पीड़ित कर, चक्षु, भौंह, कनपटी में शीघ्र जाकर विशेष स्थिति करते हैं, और गण्ड स्थल की वगल में कम्प, ठोड़ी की जकड़न और नेत्र रोगों को करते हैं। इन तीनों दोषों से उत्पन्न हुये शिर रोग को 'अनन्तवात" कहते हैं। मा० नि०

अनन्तः–सं० पु० (१) दुरालभा। (Alhagi maurorum) वै० निघ० २ भा०, अनन्तादि चूर्णोक्त, सर्वज्वर प्रकरणोक्त। (२) सिन्धुवार वृक्ष अर्थात् सम्भालू (Vitex negundo) (३) अभ्रक धातु। Talc (Mica) रा० नि० व० १३। (४) आकाश।

अनन्ता–सं० (हि० संज्ञा) स्त्री० (१) उक्त नाम की प्रसिद्ध लता विशेष। अनन्तमूल–हिं०, बं०। सु० मिश्र० अ०। उत्तर में यह सारिवा नाम से प्रसिद्ध है। रा० नि० व० १२। देखो—(शा) सारिवा तथा श्यामलता (Sariva), च० द० पि० ज्वर चि० शिरोलेप। "कालेयचन्दनानन्ता" भा० म० ख० ४ भा० गर्भ-चि०। "अनन्ता शारिवा रास्ना।" भा० म० ख० १ भा० ज्वर शारीवादि। "अनन्ता बालकं मुस्तम्" च० सू० ४ ३१ दश०। (२) दूर्वा दूब। (Cynodon Dactylon) हे० च० ४। (३) स्वर्णक्षीरी भंभाँड़। सत्यानाशी। (Agremone Mexicana) प० मु०। लांगली, करियारी का पौधा, बिषलांगली–बं०। (Gloriosa Superba) प० मु०; भा० पू० १ गु० व०, (५) दुरालभा, जवासा (Alhagi Maurorum), प० मु०, भा० म० ख० ४ भा० मु० रो० चि०। "कल्कैरनन्ता खदिरारिभेद····।" वा० १५ अ०। प्रियङ्ग्वादि–व०। प्रियङ्ग्वादि दूर्वादि-व हेमा तथा अरुण। "दूर्वानन्त निम्बासात्मगुप्ता पद्माद्रजो योजन वल्ल्यनन्ता।" (६) नीलदूर्व्वा, भा० पू० १, रा० नि० व० २३। (७) गोलोमी, श्वेत दूर्वा, रा० नि० व० ८। (८) यवासा, (Alhagi Maurorum) भा० म० ४ भा० काकोल्यादि० व०।

"अनन्तां कुक्कुटी बिम्बीम्।" दुरालभा के अभाव में यवासा ग्रहण करना चाहिये। (९) अग्निमन्थ, अरणी (Premua Serratifolia), (१०) गुडूची, गुरुच, (Tionspora Cordifolia), (११) पीपर।

अनन्तामल–सं० हरताल, (Yellow orpiment)

अनन्तो–बं० उश्बा। हिं० सालसा, कपूरी। Hemidesmus Indicus, *R. Br.* (Country Sarsaparilla) स० फा० इं०।

अनन्तोमूल–बं० उश्बा, देखो—शारिवा (Crountry Sarsaparilla) स० फा० इं०।

अनन्नास–हिं० संज्ञा पु० [ब्रेज़िलियन (अमेरिकन) नानस, पुर्त० अनानास] अनानास। अनन्नस; अनानासं–द०। अनन्नास, पार्वती, कौतुक–संज्ञक सं० अनानाश (स), अनारस, अनानस,–बं०। एनुन्नास–अ०, फा०। अनानास सेटिवस (Ananas Sativus, *mill, Linn*)–ले०। पाइन एप्ल (Pine apple)–इं०। अनानास (Ananas)–फ्रा०, पुर्त०, अमे०। अनाशप् पज़्म्, परङ्गि-थलई-ता०। अनासु-पण्डु, अननास-पण्डु–ते०। कैत-चक्क, परङ्गि-चक्क–मल०। अनानसु-हण्णु, अनासु, परङ्गि-काई–कना०। अन्निनस, अनारस–गु०। अनन्नास, अन्नासु, औनास–मह०। अन्नासि–सिं०। नन्न-सी, नन्ना-सी –वर०।

अनन्नास वर्ग

(*N. O. Bromeliaceæ*)

उत्पत्ति स्थान—समस्त भारतवर्ष, प्रधानतः समग्र पूर्वी देशों में इसकी खेती होती है। अमरीका।

नामविवरण—इसकी बहुशः वर्नाक्युलर संज्ञाएँ अमेरिकन अनासी तथा नानस संज्ञा से व्युत्पन्न हुई है।

इसकी मालाबारी संज्ञा पलक्कि-चक्क का अर्थ युरूपीय फणस (European jack fruit) है।

वानस्पतिक वर्णन—राम बाँस की तरह का एक पौधा जो दो फुट तक ऊँचा होता है। यह पौधा घृतकुमारी के समान द्विबर्षीय होता है किन्तु, इसके पत्र अत्यन्त पतले होते हैं जिनकी रचना कठोर तन्तुओं से हुई होती है। पौधे के मध्य भाग से निकले हुये लघु प्रकांड पर छिलकेदार गावदुमी शकल की बालियां लगती हैं। जिस पर फल उत्पन्न होते हैं।

इनके ऊपर बहुत से छोटे २ कंटकमय पत्र होते हैं जिनको ताज कहते हैं। उन गावदुमी बालियों में बहुसंख्यक क्षुद्र नीले रङ्ग के पुष्प आते हैं। पुष्पाभ्यान्तर कोष त्रिपटज (तीन पंखड़ियों युक्त) एवं पुष्पाग्राह्य कोष त्रिभागयुक्त होता है। पुष्पित होने के बाद ये क्रमशः मोटे और लम्बे होते जाते हैं। और रस से भरे होते हैं। यह अंकुर पिंड नाग रंग पीतवर्ण का एवम् खट्टामीठा स्वाद युक्त होता है।

रासायनिक संघठन—ब्युटिरेट आंफ इथल (Butyrate of ethyl) को ८ वा १० भाग स्प्रिट आंफ वाइन के साथ योजित करने से अनन्नास का एसेंस प्रस्तुत होता है। अनन्नास स्वरस में प्रोटीड-पाचक सन्धान (अभिषव) होता है। तीन फ्लुइड आउंस यह स्वरस १० से १५ ग्रेन घनीभूत ऐल्ब्युमीन को पचा देता है। खार तथा अम्लीय घोलों (विलयन) में इसका समान और न्यूट्रल (उदासीन) द्रवों में सर्वोत्तम प्रभाव होता है स्वरस में एक भाँति का दधिप्रवर्तक संधान (अभिषव) होता है।

भस्म में स्फुरिकाम्ल तथा गंधकाम्ल' चून मग्न शैलिका, लौह और पांशु हरिद एवं सैंधहरिद् आदि होते हैं।

प्रयोगांश—पक्व वा अपक्व फल और पत्र।

औषध-निर्माण—तैल, स्वरस का एसेंस और पत्र का ताजा रस।

इतिहास प्रभाव तथा उपयोग—

अमेरिका के दर्याफ्त होने से पूर्व भारतवर्ष को अनन्नास का ज्ञान न था सर्व प्रथम पुर्त निवासियों को हर्नेंडोज (१५१३) द्वारा इसका ज्ञान हुआ और सन् १५९४ ई० पुर्तगाल निवासी ब्रैजील से इसको भारतवर्ष में लाए। अबुलफ़ज़ल ने आईने अकबरी में इसका उल्लेख किया है। दार शकोह के लेखक ने भी इसका वर्णन किया है।

रहीडी (Rheede) के कथनानुसार आम वार में इसके पत्र को चावल के धोवन में उबाल कर इसमें (Pulvis Baleari) चोकि कर जलोदरी को जल से मुक्ति प्राप्त करने के लिये व्यवहार कराते हैं। अपक्व फल सिरका के साथ गर्भपात कराने तथा उदरस्थ आध्मान को दूर करने के लिए व्यवहार किया जाता है।

मख्जनुल् अद्वियह के लेखक मीर मुहम्मद हुसेन लिखते हैं—अनन्नास दो प्रकार का होता है—(१) साधारण और (२) क्षुद्र जो अत्यंतरूप एवं सुस्वादु होता है। प्रकृति सर्द व तर द्वितीय कक्षा में (किसी किसी के मत से १ कक्षा में उष्ण और २ कक्षा में तर है)। हानिकर्ता सर्द व तर प्रकृति को, स्वर यंत्र तथा श्वासोच्छ्वास सम्बन्धी अवयवों को। दर्पघ्न-खरबूजा तथा आर्द्रक का मुरब्बा (किसी किसी ने शर्करा का सौंठ का मुरब्बा लिखा है)। प्रतिनिधि-कुम्हड़ा या विही प्रभृति। मुख्य कार्य- पित्त (उष्ण) प्रकृति को लाभप्रद है (कफज प्रकृति को नहीं)। शर्बत की मात्रा—२ तो० से ५ तोला तक।

गुण, कर्म, प्रयोग—अनन्नास पित्तकी तीक्ष्णता का शामक और यकृत, उष्ण आमाशय को शक्तिप्रद एवं विलम्ब पाकी है। आहारहृद्य (हृद्य) और हृदय को बल प्रदान करता एवं मूर्च्छा को दूर करता है। उष्ण व रूक्ष प्रकृति वालों के लिये वल्य एवं हृद्य है। इसके अचार मुरब्बा, मिठाई और चटनी आदि पदार्थ बनाए जाते है। इसके मीठे चावल भी पकते है और यह अत्युत्तम आहार है।

इसकी शीतलता को कम करने के लिये

बारीक बारीक परत काट कर प्रथम उसको नमक के पानी से धोकर पुनः स्वच्छ जल से धोना चाहिये फिर उस पर शर्करा एवं गुलाब जल छिड़क कर व्यवहार करना चाहिये। कहते हैं कि किंचित् सोंठ का चूर्ण मिलाने से भी वह उत्तम हो जाता है।

अनन्नास मस्तिष्क एवं आमाशय को बलप्रद और निर्बल तथा शीत प्रकृति को बल प्रदान करता है। म० अ०। तु०।

नोट—मख़्जन में अपक्व फल एवं उसके पत्र के औषधीय उपयोग के सम्बन्ध में कोई वर्णन नहीं आया है।

अनन्नास पत्र का ताजा रस सशक्त कृमिघ्न और शर्करा के साथ विरेचक है पक्व फल का रस स्कर्वीहर (Anti-scorbutic) मूत्रल, स्वेदक, मृदुभेदक और शैत्यकारक है तथा ऐल्ब्युमिनीय पदार्थों के पचाने में सहायता पहुँचाता है अपक्व फल का रस अम्ल रक्तावरोधक सशक्त मूत्रल और कृमिनाशक तथा रज प्रवर्तक है अधिक परिमाण में यह गर्भ पातक है।

हिक्का प्रशमनार्थ इसके पत्तों का ताजा रस शर्करा के साथ व्यवहार में आता है यह विरेचक भी है।

पक्व फल का रस ज्वरजन्य आमाशयिक क्षोभ को शांत करता है। कामला (Jaundice) में भी यह उपयोगी है।

अधिक परिमाण में अपक्व फल का रस गर्भाशयिक आकुञ्चन उत्पन्न करता है अन्तु गर्भवती स्त्रियों को इससे सख्त परहेज करना चाहिये।

अनन्नास का तेल या एसेन्स मिठाई बनाने में उसे सुस्वाद करने के लिये व्यवहृत होता है यह जमेइक मद्य (Jamaica rum) को स्वाद प्रदान करने में भी व्यवहृत होता है अनन्नास जैम बनाने में प्रयुक्त होता है इ० मे० मे०।

इसके पत्र कृमिघ्न और फल गर्भशातक हैं। (इ० ड्रू० इं० पृ० ४६१)

भारतीय मेडिकल अफ़सरों की मुख्य सम्मतियों से, जिसका डिक्सनरी आफ एकॉनामिक प्रॉडक्ट आफ इण्डिया (पृ० २३८) में वर्णन आ चुका है यह प्रगट होता है कि समग्र भारतवर्ष के देहातियों में इसके पत्र एवं अपक्व फल के गर्भशातक प्रभाव में सामान्यतः विश्वास है। फा० इ० ३ भा० पृ० १०६।

अनन्यज—हिं० संज्ञा पुं० [सं०] कामदेव (Cupid)

अनन्यपूर्वा—हिं० स्त्री० [सं०] (१) जो पहले किसी की न रही हो (२) कुमारी, क्वारी, बिन ब्याही (Virgin)।

अनपकाय—ते० कडुई तुम्बी, लौकी (Lagenaria Vulgaris) इं० मे० मे०।

अनपच—हिं० संज्ञा पुं० [सं० अन्=नहीं+पच=पचना अजीर्ण। बदहजमी। (Indigestion)

अनपत्य—हिं० वि० [सं०] [स्त्री० अनपत्या] निःसन्तान। लावल्द।

अ(इ)नब—अ० द्राक्ष फलम् सं०। अंगूर, दाख हिं० Vitis Vinifera' Linn (Fruits of Grapes) स० फा० इं०।

अनब—अ० बैगन भाँटा (Solanum Melongana)

अनबहे हिन्दी—अ० फा० पोपैया, पपीता हिं०। अरंड खर्बूजा स०। देखो अण्डखरबूजा। Carica Papaya' Linn (Fruit of) स० फा० इं०।

अनबा—एक हिन्दी पौधा है जिसका फल गूगल सदृश होता है।

अनबिधा हिं० वि० [सं० अ+बिद्ध] बिनाबेधा हुआ बिना छेद किया हुआ।

अनबुझा चूना—उ० हिं० चूर्णम् सं०। कलीका चून अशांत चूर्ण हिं०। अनस्लैक्ड लाइम् Unslaked-lime-इं०।

अनबुलजन—अ० फाशरा।

अनबु-थालिब—यु० मकाय। (Solanum Dulcamara Linn) फा० इ० २ भा०।

अनबुद्दुब—अ० एक छोटे पौधे का फल है जो बेर के बराबर गोल एवं रक्तवर्ण का होता है और गुच्छों में लगता है। पत्ते अनार के पत्ते के सदृश होते हैं।

अनबुलहियह्–अ० हजार जशान या कबर का फल

अ(इ)नबु,स्स अ्लब–अ० मको (काला वा लाल) (Solanum nigrum, *Bl*, or solanum ,rubrum, *Mill*) स० फा० इं० Nightshade-इं० ।

अ(इ)नबुस्स्अ्लबे-अस्वद–अ० मको, काला मको (Solanum nigrum, *Bl* not, *Linn*) स० फा० इं० ।

अ(इ) नबु स्स-अलवे-अह्मर–अ० मको, लाल मको। (Solanum rubrum, *Mill*) स० फा० इं० ।

अनबुस्सअलवे कबीर–अ० बेलाडोना । सूची पं० पं० प्लां० Great Morel-इं० । म० अ० ड्रॉ० १ भा० ।

अनबुस्स अ्लवे मुखद्दिर–अ० बेलाडोना (Belladona),

अनबुस्स अ्लवे-मुजन्निन–अ० बेलाडोना । डेड्ली नाइटशेड (Deadly nighthade) इं० ।

अनबुस्स अ्लवे-मुनव्विम्–अ० बेलाडोना ।

अनबुस्सअ्लवे-मुहलिक–अ० बेलाडोना । डेड्ली नाइटशेड (Deadly Nightshade) इं० ।

अनबेधा–हिं० वि० दे० अनबिधा ।

अनब्याह–हिं० वि० [सं० अ०=नहीं+हिं० ब्याहा] (Unmarried) बिना ब्याहा । क्वाँरा । अविवाहित ।

अनभिलाष:–सं० पु० अनिच्छा, अरोचक, अन्नविद्वेष अरुचि । (Aversion, dislike want of appetite) रा० नि० व० २० ।

अनम्–अ० गुलनार शकरदारी ।

अनमद–हिं० वि० [सं० अन्+मद्] मद रहित । अहंकार रहित । गर्वशून्य ।

अनमना–हिं० वि० [सं० अन्यमनस्क] [स्त्री० अनमनी] बीमार । अस्वस्थ ।

अनमल–बाकला ।

अनमिल–हिं० वि० [सं० अन=नही+मिल=मिलना] (१) बे मेल । (२) पृथक् । भिन्न अलग । निर्लिप्त ।

अनमिलत–हिं० जो मिलती न हो ।

अनमीलना–हिं० क्रि० स० [सं० उन्मीलन=आँख खोलना] आँख खोलना ।

अनमीव:–सं० पु० अमीव, रोगरहित रोगोत्पादक कीड़ों से रहित । अथर्व० । सू० २६ । १ । का० २ ।

अनमेल–हिं० वि० [सं० अन्+हिं० मेल] बिना मिलावट का । विशुद्ध । खालिश ।

अनयन–हिं० वि० [सं०] नेत्रहीन । दृष्टिहीन । अंधा ।

अनरनिया–यु० विलायती कामनी ।

अनरव–सुमाक । (Sumach),

अनरस–वं० हिं० (१) अनन्नास । Ananas Sativus; *Mill* (Pine apple) । (२) जो रस रसनेन्द्रिय द्वारा स्पष्ट रूप से मालूम नहीं होता उसे अनरस या अनुरस कहते है । देखो—अनुरसः ।

अनरस–हिं० संज्ञा पु० [सं० अन्=नही+रस] (१) रसहीनता । विरसिता । शुष्कता । (२) रूखाई । कोप । मान ।

अनरसा–हिं० वि० [सं० अन्+रस] अनमना । माँदा । बीमार ।–संज्ञा पु० दे० अँदरसा ।

अनराफेनूस–यु० एक बूटी है जिसके पत्ते गन्दना के समान होते है ।

अनरुचि–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अन्+रुचि] (१) अरुचि । घृणा । अनिच्छा । (२) भोजन अच्छा न लगने की बीमारी । मन्दाग्नि ।

अनरूप–हिं० वि० [सं० अन्=बुरा+रूप] (१) कुरूप । बदसूरत । (२) असमान । अतुल्य । असदृश ।

अनजल–काश० आइरिस सेंसन Iris sosan (Irsi Ensata)

अनल:–सं० पु०
अनल–हिं० संज्ञा पु० } (१) चित्रक चुप, चीता (Plumbago zeylanica), रा० नि० व० ६ । भा० पू० १ भा० ह० व० । च० प० संग्रहणी चि० पाठादि चूर्ण । (२) लाल चीता रक्त चित्रक । (Plumbago Rosea) रा०

सा० सं०। (३) भिलावाँ, भल्लातक वृक्ष। (Semecarpus anacardium) रा० नि० व० ११। (४) पित्त। (Bile) रा० नि० व० २१। (५) देव धान्य। मद० व० १०। (६) अग्नि, आग (Fire),

अनलम्-सं० क्ली० भिलावाँ का बीज। semecarpus Anacardium (see-ds of--) "अनल मरिच दूर्व्वा" भैष० कुष्ठ चि०।

अनलचूर्ण-हिं० संज्ञा पु० [सं०] बारूद। दारू।

अनलनामा-सं० पु० चित्रक वृक्ष, चीता। (Plumbago Zeylanica) वै० श०।

अनलपंख-, अनलपक्ष- } हिं० संज्ञा पु० [सं०] एक चिड़िया

इसके विषय में कहा जाता है कि यह सदा आकाश में उड़ा करती है और वहीं अंडा देती है। इसका अंडा पृथ्वी पर गिरने से पहले ही पक कर फूट जाता है और बच्चा अन्डे से निकल कर उड़ता हुआ अपने माँ बाप से जा मिलता है।

अनलप्रभा-सं० स्त्री० ज्योतिष्मती लता। मालकांगुणी (Cardiospermum halicacabum), रा० नि० व० ३।

अनलमुख-हिं० वि० [सं० जिसका मुख अग्नि हो। जो अग्नि द्वारा पदार्थों को ग्रहण करें।-संज्ञा पु० (१) चित्रक, चीता। (Plumbago Zeylanica)। (२) भिलावाँ (Semecarpus Anacardium),

अनलरसः-सं० पु० पारे को तामेकी सफेद भस्म के साथ घोट कर पिट्ठी बनाए। पुनः उस पिट्ठी के बराबर गन्धक मिलाकर घोटें। फिर पाठा, वच, कलिहारी, चित्रक, धत्तूर, थूहर, और आक के रस से पृथक् पृथक् पुट दें तो यह अनल नामक रस सिद्ध हो। मात्रा—३ रत्ती।

गुण—इसे पीपल तथा गुड़ के साथ देने से गुल्म का नाश होता है। र० यो० सा०।

अनलविवर्द्धनी-सं० स्त्री० कर्कटिका-सं० ककड़ी-हिं०। (A kind ofcucumber) वै० श०।

अनलसूतेन्द्रो रसः-सं० पु० शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भाग, इनकी कज्जली करें। फिर विष्णुकान्ता, वच, पाठा, कलिहारी, मालकांगनी अथवा आकाशवेल और सितवी (पीत वेणी) इनके रसों से पृथक् पृथक् एक एक दिन भावना दे। पुनः सबके रसों को मिलाकर १५ दिन तक वारीक घोटे। फिर २ रत्ती प्रमाण की गोलियाँ बनाए।

सेवन विधि तथा गुण—घी, अदरख, या सम्हालू के रस के साथ खाने से घोर गुल्म का नाश होता है। र० यो० सा०।

अनली लिन् (लिः)-सं० पु० वक वृक्ष-सं०। अगस्त वृक्ष, अगस्तिया-हिं०। (Agati grandiflora) त्रिका०।

अनल्गे(जे)सिक-इं० अङ्गमर्दप्रशमनम्, वेदना शामक, पीड़ाहर। (Anodyne)

अनल्गोसिया इं० अवसन्नता, स्पर्शाज्ञता। (Anæsthesia)

अनल्जीन-इं० बेंज़ अनल्जीन Benzanalgen किंवा अनल्जीन। (Quinanalgin) अवसन्नीन-हिं०। मुखद्दिरीन-ति०।

नाट आफिशल

(Not official)

लक्षण—यह एक श्वेत रवादार गंध रहित एवं स्वाद रहित चूर्ण है, जिसका रासायनिक संगठन और गुणधर्म एवं प्रभाव फेनेसीटीन के समान होता है। पर इसमें फेनोल के सिवाय क्विनोलीन का आँकड़ा होता है।

घुलनशीलता—यह जल में नहीं घुलता तथा ईथर में भी करीब करीब नहीं घुलता और शीतल या उष्ण अलकुहाल (मद्यसार) में भी अति न्यून घुलता है। परन्तु क्लोरोफार्म में किसी प्रकार अधिक घुलता है।

प्रभाव—व्यथा शामक (वेदना नाशक)।

मात्रा—७॥ से १५ ग्रेन पर्यन्त (५ से १ ग्राम तक।

अनवगाह-हिं० वि० [सं०] [संज्ञा अनवगाहिता] अथाह, गम्भीर, बहुत गहरा।

अनवगाहिता-हिं० संज्ञा० स्त्री० [सं०] गंभीरता, गहराव।

अनवगाह-हिं० वि० दे० "—अनवगाह"।

अनवच्छिन्न-हिं० वि० [सं०] (१) अखंडित, अटूट। (२) पृथक न किया हुआ, जुड़ा हुआ, संयुक्त।

अनवद्यरागः-सं० पुं० माणिक्य भेद, केशर के रंग का एक प्रकार का मणि विशेष। वैद्यक अर्थ।

अनवम बीजी-अ० मुनक्का। (Dried grapes)

अनवय-हिं० स० पु० [सं० अन्वय] वंश, कुल, खानदान।

अनवस्थानः-सं० पु० वायु. (Air) वै० निघ०।

अनवस्थित चित्तत्वम्-सं० क्ली० (१) वायु रोग। (Nervous disease) वै० निघ०। (२) चित्तावस्थय, अस्थिर मन, चित्त की चञ्चलता (अस्थिरता) (Restlessness)

अनशनम्-सं० क्ली०
अनशन-हिं० संज्ञा पु० } उपवास। (A fast, fasting) मा० नि०। अन्नत्याग, निराहार।

अनसखरी-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अन्=नहीं+हिं० सखरी, निखरी, पकी रसोई, घी में पका हुआ भोजन।

अनस्थटिक-हिं० अवसन्नतोत्पादक, वायुरोगजनक सुन्न करने वाला।

अनस्थेशिया-इं० अवसन्नता।

अनस्थेसीन-इं० इसको अमीन भाग में से १० भाग में से सोचड्स में डालकर देते हैं

अनस्लैकड लाइम-इं० चूना, अनबुझा चूना कली का चूना, असंस्कृत चूर्ण। (Quick lime)

अनहदनाद-हिं० संज्ञा पु० [सं० अनाहतनाद] योग का एक सूक्ष्म नाद।

अनाइड्रस-इं० सरेस (Gluten)

अनतः-सं० त्रि० अन्ध, अन्धा। (Blind)

अनाक्षिसं० क्ली० कुचक्षु, कुत्सित चक्षु।

अनाक-अ० बकरी का बच्चा। (A Kid.)

अनाकर-कुस्तु० अनागालुस। See-Anagalus.

अनाकार्डिअम्-ले० भल्लातक।

अ(ए)नाकार्डिअम् आक्सिडेण्टेली-(Nut of Cashew nut)-ले०। काजू। स० फा० इ०। फा० इ० १ भा०। मेमो०। See-Kaju

अ(ए)नाकार्डिअम् लटिफोलिया-ले० भिलावे, भल्लातक। Marking nut-tree (Semecarpus anacardium)

अ(ए)नाकार्डिएसीई-ले० भल्लातक की अथवा आम्र वर्ग। (Anacards, Terebinths or Sumacs)

अनाकार्डिक एसिड-ले० भल्लातकाम्ल, भिलावे का तेजाब। फा० इ० १ भा०।

अनाकार्डीएर-फ्रें० (१) काजू। Cashew-nut-tree (Anacardium occidentale, *Linn*) फा० इ० १ भा०। (२) भल्लातक, भिलावाँ। The marking nut tree. (Semecarpus Anacardium) इं० मे० मे०।

अनाक्रांत-हिं० वि० [सं०] [स्त्री० अनाक्रान्ता] जो आक्रान्त न हो। अपीड़ित, रक्षित।

अनाक्रांतता-हिं० संज्ञा पु० [सं०] आक्रान्तता का अभाव, रक्षा, अपीड़ा।

अनाक्रान्ता-सं० स्त्री० कण्टकारी, कटेरी, भटकटैया हिं०। सोलेनम्, जेन्थोकार्पम् (Solanum Xantho-carpum)-ले०। रा० मा०।

अनाका सोडि आई क्लोराइडम्-ले० सोचल सोल्ट। Socnalsalt

अनागत-हिं० वि० [सं०] (१) न आया हुआ। अनुपस्थित, अविद्यमान, अप्राप्त। (२) आगे आने वाला। भावी, होनहार।

अनागतातवा-सं० स्त्री० कन्या, अजात रजस्का, अदृष्टरजा, गौरी, नग्निका, कुमारी, बालिका, जो रजोधर्मिणी न हुई हो। (A little girl, a girl nine years old, a virgin) रा० नि० व० १८। अ०।

अनागतावेक्षणम्-सं० क्ली० आगे इसे कहेंगे (या ऐसा कहेंगे) इसे अनागतावेक्षण कहते हैं। सु० उ० अ० ६५।

अनाग़लुस-यु०
अनाग़ालुस-,, } इसे नब्ती भाषा में अनाकिर और फिरङ्गी में अन्कालन कहते हैं। कोई २ इसका यूनानी नाम फजूरियून और अरबी नाम हशीशतुल अलक लिखते हैं। यह एक बूटी है। इसके स्वरूप के सम्बन्ध में बहुत मतभेद है। यह ईराक और श्याम आदि प्रदेशों में उत्पन्न होता है।

अनाग़ालिस-यु०, अ० अनाकिर कुस्तु०। मरिजानह् अ०। जोकमारी, जैंधनी-हिं०। (Anagallis arvensis *Linn*)-ले०। फा० इं० २ भा०।

अनाग़ीलस-यु० मर्जञ्जोश। See-marzanjosha

अनागल्लिस आर्वेन्सिस-ले० जेंधनी, जोखमारी। उ० प० सू० मे० मो०।

अनाग़ोरस-रु० सल्वान्-यु०। ख़र्नूबुल् ख़ञ्जीर-मिश्र०। इसके फल को हब्बुल्कुल्या कहते हैं। गुलेकर्नव के समान एक बूटी है जो श्यामादि देशों में उत्पन्न होती है। किसी किसी के विचारानुसार एक अन्य बूटी है जिसके पत्ते एवं शाखाएँ सँभालू के समान होती हैं। इसका वृक्ष बड़ा हो जाता है।

अनाचारिता-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] निन्दित आचरण, दुराचारिता।

अनाचारी-हिं० वि० [सं० अनाचारिन्] [स्त्री० अनाचारिणी। संज्ञा अनाचारिता] आचारहीन, भ्रष्ट बुरे आचरण का, पतित, दुराचारी।

अनाचारः-सं० पु० (१) असत्कर्म, अनिष्ट कर्म, दुराचार, कुव्यवहार निन्दित आचरण, (Undesired or evil or Improper conduct) वै० नि०। (२) कुरीति, कुप्रथा, कुचाल।

अनाज-हिं० संज्ञा पु० [सं० अन्नाद] अन्न, धान्य, नाज, दाना, गल्ला।

अनाडेण्ड्रम् पेनिक्युलेटम्-ले० योल्वा-अण्ड० टा० मेमो०।

अनातङ्कः-सं० त्रि० अरोगी, नीरोग, रोग रहित, स्वस्थ (Healthy) वै० श०।

अनातपः-सं० पु०
अनातप-हिं० संज्ञा पु० } आतपाभाव, छाया। (Shade) वै० श० धूप का अभाव। वि० (१) आतप रहित। जहां धूप न हो। (२) तर, ठंडा, शीतल।

अनातीतस-यु० करञ्ज। A plant (Galedupa, arborea)

अनातुरः-सं० त्रि०
अनातुर-हिं० वि० } [स्त्री० अनातुरा] अरोगी, निरोग, रोग रहित, स्वस्थ। (Free from sickness or pain, healthy) वै० श०।

अनात्मन्-सं० पु०
अनात्म-हिं० संज्ञा पु० } वि० आत्मा का विरोधी पदार्थ, अचित, पञ्चभूत, वि० आत्मा रहित, जड़।

अनात्मक दुख-हिं० संज्ञा पु० [सं०] सांसारिक आधि व्याधि; भय, बाधा।

अनात्मधर्म-हिं० संज्ञा पु० [सं०] शारीरिक धर्म, देह का धर्म।

अनात्मीकृत-वि० बिना पचा या अपक्व अंश। (Unabsorbed)

अनादिल-अ० (ब० ब०) अन्दलीब (ए० ब०) बुलबुल (एक पक्षी विशेष)। (Nightingale)

अनादील-अ० बुलबुल का गोश्त। (Flesh of Nightingale)

अनाधृषः-निर्बल। अथर्व० सू० २१। ३। कां० ६

अनान-बर० (Fagræa fragrans, *Roxb*) मेमो०।

अनानसु हण्णु-कना० अनन्नास अनानास-हिं०।

अनानास-हिं० अनन्नास। (Pineapple) इ० मो० श०।

अनानास सेटाइवस-ले० अननास । (Pine apple) इं० मो० श० । फा० इं० ३ भा० ।

अनाप्तः-सं० पु०
अनाप्त-हिं० वि० } (१) अविश्वस्त, अविश्वसनीय, अश्रेष्ठ । (२) अकुशल, अनिपुण अनाड़ी ।

अनाफेलिस नीलगिरिएना-ले० यह पौधा तथा इसके अन्य भेद के पौधे नीलगिरि पर्वत पर छत में प्रयुक्त हैं । इसके पत्र ऊर्णवत लोम से आच्छादित रहते हैं और वहां के दिहाती लोग उसे काट-प्लास्टर या देशीय प्रस्तर (Country plaster) कहते हैं ताजे पत्र को कुचल कर चिथड़े के भीतर रखकर वे इसको छत पर बांधते हैं । डाइमांक ।

अनाबस स्कैण्डिअस-ले० कबई मछली । (Climbing perch) इं० मे० मे० ।

अनाबिद्ध-हिं० वि० [स०] (१) अनविधा । अनछेदा, बिना छेद का । (२) चोट न खाया हुआ ।

अनाबेवुर्रियह-अ० उरूकखरनह फुफ्फुस प्रणालियां वायु या श्वास प्रणालियां । ब्रोङ्किओलज Bronchioles--इं० । म० ज० ।

अनाबेसिस मण्टिफ्लोरा-ले० बूइचोटि, मेत्रलाने, गोरलाने। शोरलान, लान, घासमे-बर्ना० । मे० मो० ।

अनामकम्-सं० क्ली० (Pile) अर्श रोग, बवासीर-श० र० ।

अनामक (स्त्री०-मिका)-सं० स्त्री० (१) Innominate बे नाम का । (२) अंगुली विशेष अनामा ।

अनामयम्- सं० क्ली०
अनामय- हिं० संज्ञा पु० } (१) Health रोगाभाव आरोग्य, निरोगता, स्वास्थ्य ,तन्दुरुस्ती रोग हीनता । रा० नि० व० २० । (२) कुशल क्षेम ।

हिं० वि० (१) निरामय रोग रहित । नीरोग चंगा । स्वस्थ । तन्दुरुस्त । (१) निर्दोष । दोष रहित ।

अनामय-सं० त्रि० रोग रहित । अथर्व० । सू० १३ ७ का० ४ ।

अनामयाः-सं० त्रि० (व० व०) रोगरहित । अथर्व० सू० ८ । १५ का० ६ ।

अनामल-अ० (बहु० व०) अनमिलह(ए० व०) अंगुल्याग्र भाग या अंतिम (अग्र) पोरवे ।

अनामा-सं० पु० हिं० संज्ञा स्त्री० अनामिका । श० र० । See: Anamika हिं० वि० स्त्री०(१) बिना नाम की । (२) अप्रसिद्ध ।

अनामिका-सं० स्त्री०, हिं० संज्ञा स्त्री० कनिष्ठा और मध्यमा के बीच की उँगली सबसे छोटी उँगली के बगल की उँगली । अनामा । अंगुश्ते हल्का विन्सर-अ० रिंग फिंगर (Ring finger) इं० । रा० नि० व० १८ । ह० श० र० १ भा० ।

अनामिका धमनी-हिं० संज्ञा पु० (Innominate artery) एक धमनी विशेष ।

अनामिक धमनी परिखा-हिं० संज्ञा स्त्री० (Groove for innominate artery)

अनामिर्टा कोक्युलस-*W&A.* ले० ककामरि-हिं० कना० ते० बं० । काकफल-गु०, सं० । Coccinlusind-icus । फा० इं० १ भा० । देखो—काकफल ।

अनामिर्टीन-इं० काकफलीन, काकफलसत्व । फा० इ० १ भा० देखो—काकफल

अनामिश-हिं० संज्ञा वि० [स०] निरामिष । मांस रहित ।

अनार-हिं० संज्ञा पु० [फा०] एक पेड़ और उसके फल का नाम दाड़िम है ।

प्युनिका ग्रेनेटम् (Punica Granatum Linn) ले० पायेग्रेनेट (PoMegranate) इं० । ग्रेनाडियर कम्मून (Granadier Common) फ्रा० आनार अनार का पेड़ हिं० । अनार का झाड़ द० । संस्कृत-पर्याय—दाड़िम वृक्षः, करकः (अ०) पित्त पुष्प, दाड़िम्बः, पर्ज्जरुट स्वादुफलः, पित्तवीर, फल

शाढवः सुकवल्लभः (त्रि०) मुखवल्लभः, (शब्दमा०) रक्तपुष्पः (र०), दालिमः (अ० टी० भ०) शुकादनः (श०), दाडिमीसारः, कुट्टिमः, फलसाढवः, फलपाढवः रक्तबीजः सुफल दन्तबीजकः मधुबीज, क्रुचफलः, मणिबीजः, कक्कफलः, वृतफलः,सुनीलः नीलपत्रः,नीलपत्रगः लोहित पुष्पक,: रक्तबीजः दन्तबीजः, । दाडिम गाछ, दालिम गाछ-बं० । शजरतुर्रुम्मान-अ० । दरख्तेनार फा० । रुम्मानसरि० । कूत्रीनूस यू० मादलै-चु-चेडि-ता० । दानिम्म-चेट्टु, दाडिमचेट्टु, दालिम्ब-चेट्टु-ते० । मातलम्-चेटि-मल० । दाडिम्बे गिड़ा-कना० । दालिम्ब-झाड़-मह० । दाडम-नु-झाड़ गु० । देलुङ्गडा-सिं० । सले-विङ्, तली-विट वर्मी । दाड़िम्ब-क० । दालिम्ब-उत्० । डालम गज० । दाडसनु-झाड, दालिम, दालिम्ब-उडि० । दालिम असा० । मादल, मीची-उ० प० सू० । दाडू, दाडुनी, दाड़ियून, दानू, दोआब, जामन, दाड़न, अनार-पं० । अनार, नस्गोश, वांगोई-पश्तु० ।

जम्बू वर्ग

(*N. C. Lythraceæ or mxgrtaceæ*)

उत्पत्ति स्थान—दक्षिण युरोप, अफरीका मध्य एशिया (अरब ईरान, अफगानिस्तान, बलूचिस्तान, भारतवर्ष तथा जापान) । पश्चिम हिमालय, और सुलेमान की पहाड़ियों पर यह वृक्ष आप से आप उगता है । यह सम्पूर्ण भारतवर्ष में लगाया जाता है । काबुल कंधार के अनार प्रसिद्ध है । भारतीय अनार वैसे नही होते ।

वानस्पतिक वर्णन—यह पेड़ १५-२० फुट ऊंचा और कुछ छतनार होता हैं । इसके तने की गोलाई ३-४ फुट होती है माघ या फागुन में इसके नए पत्ते लगते हैं । इसके पत्ते टहनियों के आमने सामने लगे रहते हैं । यह कुछ लम्बे नोकदार और सिरे पर गोलाई लिये होते हैं । इनके फूल की पखड़ियाँ रक्तवर्ण की होती हैं और फूल अधिक तर एक एक स्थान पर लगते हैं । इसके फल की मध्य रेखा २ से ३॥ इञ्च लम्बी होती है । इसके फूल हर मोसम में लगते लेकिन चैत, वैशाख में बहुत लगते हैं । अषाढ़ से भादों तक फल पकते हैं ।

रासायनिक संगठन—वृक्ष एवं फलत्वक् में २२ से २५ प्रतिशत कसायीन (Tannin) होता है । वृक्ष मूल त्वक् में २० से २५ प्रतिशत प्युनिको टैनिक एसिड (दाड़िम-कषायिनाम्ल) मैनिट (Mannit), शर्करा, निर्यास, पेक्टीन, भस्म १५ प्रतिशत, एक प्रभावात्मक पैलीटिएरीन या प्युनीसीन (अनारीन) नामक तरल क्षारीय सत्व होता है और तैलीय द्रव आइसो पैलीटिएरीन या आइसोप्युनीसीन (अनारीनवत्) तथा मीथल पैलीटिएरीन व स्युडोपेलीटिएरीन (मिथ्या-अनारीन) नामक दो प्रभाव शून्य क्षारीय सत्व होते हैं । दाड़िम कषायाम्ल (Punicotannic acid) को जब जल मिश्रित गंधकाम्ल (सल्फ्युरिक एसिड) में उबाला जाता है तबवह इलेजिक एसिक (Ellagic acid) और शर्करा में विलेय होता है ।

नोट—जड़ की छाल में यह सत्व अपेक्षाकृत अधिकतर होते हैं, विशेषतः रक्त तथा श्वेतपुष्प वाले अनार में ।

प्रयोगांश—मूल त्वक, वृक्षत्वक्, अपक्वफल पक्वफल, बीज स्वरस, फलत्वक्, पुष्प, कलिकाएँ और पत्र ।

इतिहास—चरक के संग्रहिनिग्रहण एवं श्रमहर वर्ग में दाडिम का पाठ आया है और वहां इसे वमन नाशक एवं हृद्य लिखा है । सुश्रुत में भी अनार का वर्णन आया है । तो भी इसकी जड़ की छाल के उपयोग का वर्णन किसी भी प्राचीन आयुर्वेदीय निघण्टु ग्रन्थ में नही दिखाई देता । भावप्रकाश में इसकी जड़ को कृमिहर लिखा है ।

बुकरात (Hippocrates) ने पोआ-साइड नाम से अनार का वर्णन किया है । दीसकूरीदूस (Dioscorides) ने पराइ-पोआस के नाम से अनार की जड़ की छाल का

वर्णन किया है। इसको वे कृमियों को मारने एवं उनके निकालने के लिये सर्वोत्तम ख्याल करते थे। अस्तु, आज भी इस औषध को उसी गुण के लिये व्यवहार में लाते हैं।

इसलामी हकीम सङ्कोचक होने के कारण इसके पुष्प एवं फल त्वक् को विभिन्न प्रकार से उपयोग में लाने के अतिरिक्त वे इसके मूल त्वक्का जो इसका सर्वाधिक धारण भाग है, कद्दू दाना के लिये अमोघ औषध होने की शिफारिस करते हैं।

अनार का बीज आमाशय बलप्रद और गूदा हृदय एवं आमाशय बलप्रद ख्याल किया जाता है। दीसकूरीदूस (Dioscorides) एवं प्लिनी (Pliny) के ग्रंथों में भी इसी प्रकार के वर्णन मिलते हैं। अतः ऐसा प्रतीत होता है कि अरब लोगों ने अनार के औषधीय गुणधर्म का ज्ञान अपने पूर्वजों से प्राप्त किए।

अनार की जड़ की छाल एवं फल का छिलका ये दोनो फार्माकोपिया ऑफ इंडिया में ऑफिशल है।

अनार (फल)

दाड़िम फलम्, दाड़िमः सं०। अनार, दाड़म, दाम-हिं। प्युनिकाग्रेनेटम् Punica Granatum *Linn* (Fruit ef Pomegranate) ले०। पोमेग्रेनेट Pomegranate -इं०। अनार-द०। ग्रेनेडियर कल्टिव Greandier Cultive-फ्रा०। ग्रेनेट वांम Granatbaum-ज़र०। अनार, डलिम्, दाड़िम, दाड़मी, दाड़िम-वं०। रुम्मान्, राना -अ०। अनार, नार-फ्रा०। रुम्माना-सिरि०। कूतीनूस-यु०। दालिम्ब-तु०। मादलैपू-पजम्, माडले-ता०। दानिम्म पण्डु, दाडिम-पाण्डु, दालिम्ब-पण्डु-ते०। मातलम्-पज़म्-मल०। दालिम्बे-काबि-कना०। दालिम्ब, डालिम्ब -मह०। डारम, दाडम-गु०। देलुड़् या देल्लुघ् -सिं। सले-सि या तली-सी-बर०। दालिम्, दालिम्ब-उड़ि०। दालिम्-आसा०। अनार, दाड़िम-उ० प० सू०। पं० तथा परतु-देखो—अनार वृक्ष। अनार, धालिम, धारिम्ब, दाड़-लिंथ। धौन—काश०। दालिम्ब-कों०। दाडम -मारवाड़ा। मादल-द्राविडी। दालम्बि-कर्ना०।

उत्पत्तिस्थान—अनार।

बनस्पतिक वर्णन—अनार का फल गोलाकार किञ्चित् चपटा, अस्पष्टतः षटपार्श्व, सामान्य नागरंग के आकार का प्रायः वृहत्तर होता है जिसके सिरे पर स्थूल, नलिकाकार, ५-९ दंष्ट्राकार सपलयुक्त पुष्प वाह्य कोष लगा होता है। फल त्वक् सचिक्कण, कठोर एवं चमवत् होता है जो फल के परिपक्व होने पर धूसर पीतवर्ण का प्रायः सूक्ष्म रक्तरञ्जित होता है। फल की लम्बाई की रुख छः झिल्लीदार परदे होते है जो अक्षपर मिलते और फल के ऊर्ध्व एवं वृहत्तर भाग को बराबर कोषों में विभाजित करते हैं। उनके नीचे अव्यवस्थित गायदुमी चौड़ाई की रुख पड़ा हुआ एक परदा होता है जो नीचे के लघुतर आधे भाग की उससे (ऊर्ध्व भाग से) भिन्न करता है। यह ४ या ५ असमान कोषों में विभक्त होता है, प्रत्येक कोष स्थूल, स्पञ्जवत अमरा से सलग्न बहुसंख्यक दानों से पूर्ण होता है जो ऊर्ध्व कोषों में पार्श्वीय किन्तु अधः कोषों में केन्द्रीय प्रतीत होता है। दाने लगभग आध इञ्च लम्बे आयताकार या गाव दुमी, वहु पार्श्व तथा एक पतले पारदर्शक कोष से आवृत्त और अम्ल, मधुर तथा स्वाद्वम्ल रक्त रसमय गूदे आवरित लम्बे कोणाकार बीजयुक्त होते हैं।

नोट—(१) धन्वन्तरीय निघण्टुकार और सुश्रुताचार्य ने रस के विचार से इसे दो प्रकार का लिखा है अर्थात् (१) मधुर और (२) अम्ल। द्विविधं तच्च विज्ञेयं मधुरञ्चाम्लमेव च"। (ध० नि०- सु० ४६ अ०)

परन्तु यूनानी निघण्टुकार तथा भावमिश्र इसे तीन प्रकार का लिखते हैं, यथा—"तत्फलं त्रिविधं स्वादु स्वाद्वम्लं केवलाम्लकम्"। अर्थात्

(क) स्वादु, मधुर-हिं० अनार शीरीं-फा०। रुम्मान हुलुव्व (हलो)-अ०। स्पीट sweet

-इं०। (ख) अम्ल, खट्टा-हिं०। अनार तुर्श-फा०-रुम्मान हामिज=अ०। साबर sour--इं०।

(ग) स्वाद्वम्ल, मधुराम्ल, खटमीठा--हिं०। अनार मैखोश--फा०। रुम्मान मुज्ज--अ०।

(२) खट्टे अनार के वृक्ष में खट्टे ही अनार लगते है और मीठे में मीठे लगते है। अषाढ़ से भादों तक फल पकते हैं, परन्तु देश के हर भाग में ऋतु के अनुसार अलग अलग मौसम में फल पकते हैं। खट्टा अनार गुण में मीठे से बलवानतर होता है। यद्यपि इसकी प्रत्येक चीज अपने गुण में दूसरी चीज के बराबर होती है, तो भी कुछ कमी-वेशी जरूर है, जैसे, गूदा में पत्तों की अपेक्षा अधिक प्रभाव है और इससे अधिकतर प्रभाव निसपाल में हैं। फूल में कलो से कम असर होता है। इसकी जड़ की छाल में सबसे अधिक प्रभाव है।

इसके अतिरिक्त अनार के दो और भेद हैं। यथा—

(१) गुलनार का पेड़ (नर अनार)। Punica Granatum, *Linn* (Male-varety of)। इसका पुष्प जिसको गुलनार कहते हैं, औषध के काम आता है। देखो—गुलनार। इसमें फल नही लगते।

(२) अनार जंगली—यह अनार का जंगली भेद हैं।

प्रयोगांश—दाड़िम (फल) त्वक् दाड़िम्ब के फल का रस।

औषध-निर्माण—(१) दाड़िमाष्टक (च० द०)

(२) रुव्वे अनार—ताजे अनारदाना का पानी लेकर आग पर पकाँए। पाव शेष रहने पर उतार कर शीतल करके रखें।

(३) रुव्वेअनार कन्दी—ताजे अनारदाना के पानी में समान भाग खांड़ मिलाकर आग पर शहद की चाशनी करें। मात्रा-२ तो० से ३ तोला तक।

(४) शर्वत अनार—१सेर मिश्री या खांड़ की चाशनी में १ पाव रुव्वे अनार सादा या आध सेर अनार की कन्दी मिला दें मात्रा ५ से ३ तो० तक।

शर्वत अनार तुर्श—जिस अनार का छिलका पतला और रङ्ग सुर्ख हो, दाने उमदा और मीठे हों उसका छिलका उतार कर दानों से पानी निचोड़ लें। और छानकर १ सेर पानी में सवा पाव मिश्री मिलाकर शर्वत बनाएं आवश्यकतानुसार पानी में मिलाकर पिलाएं। गुण—तृषा शामक होने के सिवा मतली वमन और पित्तोल्वण के लिये अत्यन्त लाभप्रद है।

(६) शर्वत अनार शारीं—अत्युत्तम मीठे अनार लेकर निचोड़ लें। पाव भर उक्त रस में आधसेर श्वेत शर्करा मिलाकर मुलायम आँच पर पकाएं और शर्वत की चाशनी लें। मात्रा—२ तो० से ५ तो० तक

सेवन विधि—आवश्यकतानुसार शीतलजल में मिलाकर सेवन करायँ।

गुण—तृषा शामक एवं हृद्य।

(७) शीतकषाय (नकअ)—५ तोला शुष्क अनारदाना को आध सेर पानी में तीन घंटा तक भिगोए बाद को मल छान लें और काम में लाएँ मात्रा—२ तो० से ५ तो० तक।

फल त्वक मात्रा-१० से ३० ग्रेन (५ से १५ रत्ती)।

अनार के गुण-धर्म तथा प्रयोग

आयुर्वेदीय मतानुसार

अम्ल, कषेला, मधुर, वात नाशक, ग्राही, दीपन, स्निग्ध, उष्ण, तथा हृद्यहै और कफ एवं पित्त का विरोधी नहीं है। खट्टा अनार रुक्ष है। तथा पित्त एवं वात प्रकोपक है। मधुर अनार पित्त नाशक होने से उत्तम है। (च० फ० व० सू० २७ अ०)

अनार के छेला एवं फीका (अनुरस) अति पित्तकारक नहीं है। तथा दीपन रुचिकारक हृद्य एवं मलबिबन्ध कारक है। वह अम्ल तथा मधुर दो प्रकार का होता है। इनमें से मधुर त्रिदोष नाशक और अम्ल वात एवं कफ नाशक है. सुश्रुत सू० ४६ अ०।

अनार स्निग्ध, उष्ण, हृद्य और कफ पित्त विरोधी है। धन्वन्तरीय निघण्टु।

अनार मधुर अम्ल कषेला, वातनाशक, कफनाशक पित्तनाशक, ग्राही, दीपन, लघु, उष्ण, शीतल, श्रमनाशक, तथा रुचिकारक है। और कास का नाश करने वाला है अनार अम्ल मधुर भेद से दो प्रकार का है जिनमें से प्रथम वात कफ नाशक और द्वितीय तापशामक, लघु एव पथ्य है। अन्य ग्रन्थों में इसकों अम्ल कषेला, मधुर वातनाशक, ग्राही और दीपन, लिखा है। रा० नि० व० ११।

अनार का फल तीन प्रकार का होता है मीठा मीठाखट्टा, और केवल खट्टा। इसमें मीठा अनार त्रिदोषहर, प्यास, दाह, ज्वर, हृदयरोग, कठरोग मुख की गन्ध को नष्ट करता तृप्त करता, शुक्रकर तथा हलका कषाय रस ग्राही, स्निग्ध, स्मरणशक्तिवर्धक और बलकारक है। खट्टा और मीठा अनार अग्नि दीप्तिकर, रोचक, किंचित्पित्तजनक, लघु और केवल खट्टा अनार पित्तकारी, और वात कफ नाशक है। भा०।

हृद्य, अम्ल श्वास, रुचि तथा तृष्णा का नाश करने वाला है और कंठशोधक एवं पित्त कफ का बोध कराने वाला है। राज०।

अनार श्रेष्ठ तथा वातादिक रोग नाशक है। अत्रि० १७ अ०।

दाड़िम हृद्य, अम्ल, वातनाशक, दीपन कषाय तथा कफ पित्त विरोधी है। मधुर अनार त्रिदोष नाशक और खट्टा एवं वात व कफ नाशक है। ज्वर नाशक, दीपन, पथ्य, लघुपाकी तथा अग्नि प्रदीपक है। राजवल्लभ०।

अनार के वैद्यकीय व्यवहार

हारीत—मुख द्वारा रक्तस्राव में दाड़िम फल त्वक् चूर्ण को चीनी के साथ चाटने से मुख द्वारा रक्तपात प्रशमित होता है। (चि० ११ अ०)।

चक्रदत्त—अरोचक रोग में अनार के फल का रस विड्-लवण चूर्ण एवं मधु के साथ मुख में धारण करने से असाध्य अरुचि भी प्रशमित होती है। (अरोचक-चि०)

वंगसेन—(१) ज्वरकृत मुख वैरस्य में चीनी के साथ पिसा हुआ अनार दाना किंवा शर्करा मिश्रित अनार का रस, किसमिस तथा अनार के रस से ढीला कर मुख में धारण करने वा गण्डूष करने से ज्वर रोगी के मुखकी विरसता नष्ट होती होती है। ज्वर-चि०)

(२) रक्तातिसार में अनार का रस (दाड़िम बीज स्वरस) कूटा हुआ ताजे कुटज त्वक् ८ तो० को ६४ तो० जल में पकाएँ पाद (१६ तो०) शेष रहने पर उतारकर वस्त्रसे छान लें इसमें १६ तो० अनार का रस मिला कर पुनः पाक करें। जब वह लसिकावत्हो जाए(अर्थात् राबकी चासनी लें) तब उतार कर रखें इस फाड़िताकार वस्तु में से १ तो० लेकर तक्र के साथ सेवन करने से मृत्यूनमुख अतिसार रोगी भी जीवन लाभ करता है।

भावप्रकाश—आमाजीर्ण में दाड़िम फल को भली प्रकार पीसकर पुराने गुड़ के साथ खाने से आमाजीर्ण प्रशमित होता है यह अर्श प्रभृति गुद रोगों एव कोष्ठबद्ध में प्रशस्त है। (अजीर्ण चि०।

यूनानी मतानुसार

प्रकृति मीठा अनार प्रथम कक्षा में सर्द तर है शीतल होने का कारण यहहै कि इसमें अत्यधिक आर्द्रता होती है। और तर स्निग्ध होनेका कारण यह है कि उसमें उष्णता नहीं पैदा होता जो तरी को कम करने का कारण हो सकता है। अन्यथा यह मधुर न रहता प्रत्युत अम्ल हो जाता। किसी किसी के मत से यह शीतोष्ण (सम प्रकृति) है

खट्टा अनार द्वितीय कक्षा में शीतल एवं रुक्ष है। शीतल होने का कारण यह है कि इसकी प्राकृतिकउष्मा उष्णता के कारण लय हो जाती है तथा रुक्ष होनेका कारण यहहै कि इसमें आर्द्रता की कमी होती है खटमिट्ठा अनार प्रथम कक्षा में सर्द व तर है अनार के बीज—प्रथम कक्षा में शीतल एवं रुक्ष हैं।

हानिकर्ता—(मधुर) आमाशय तथा जिगर को (अम्ल) शीत प्रकृति को कुव्वत जाज़िबा

(अभिशोषक शक्ति को, यकृत तथा वाह को। (स्वाद्वम्ल) शीत प्रकृति को (दाड़िमबीज) शीत प्रकृति को दर्प नाशक-(मधुर) खट्टे अनार तथा शीत प्रकृति वालों को सोंठ का मुरब्बा, (दाड़िम बीज) जीरा प्रतिनिधि मीठे अनार की प्रतिनिधि खट्टा अनार, खट्टे अनारका मीठा अनार खटमिट्ठा का कच्चा अंगूर और अनार बीज का सुमाक है मात्रा—अनार बीज की मात्रा ६ मा० से ६ माशे तक।

गुण, कर्म, प्रयोग—अनार अपनी शीतलता एव अम्लता के कारण पित्त का नाश करता है। और अपने कब्ज तथा रुक्षता के कारण इह्शाअ् (कोष्ठों) की ओर मल वहन को रोकता है। विशेष कर इसका शर्बत क्योंकि इसमें तारल्यता कम होती है इसके सम्पूर्ण भेदों में यहां तक कि अम्ल में भी। कब्ज (संकोच) के साथ कांतिकारिणी शक्ति वा व्रण शोधक शक्ति (कुब्बत-जिलाअ्) होती है खट्टे अनार में उष्ण तथा अम्लता के कारण कांतिकारिता (जिलाअ) होती है परंतु मधुर अनार में उक्त गुण होने का कारण यह है कि उसमें सूक्ष्म ऊष्मा होती है जो कि मधुरता के लिये आवश्यक है। कब्ज का कारण यह है कि सम्पूर्ण अनारों की प्रकृति में कब्ज अन्तर्निहित है जैसा कि शालीनूस ने इसकी व्याख्या की है।

इनके दानों को पका कर उसमें मधु मिलाकर प्रलेप करने से कर्ण शूल, दाखिस (अंगुल बेड़ा) कुलाअ (मुँह आना), आमाशयस्थ क्षत और दुष्ट व्रण के लिये उपयोगी है। क्यों कि उसमें कब्ज (संकोच) और कांतिकारिता होती है। शहद के साथ मिश्रित करने से जिलाअ अधिक हो जाता और कब्ज बढ़ जाता है। क्यों कि मधु अपनी उष्णता के कारण संकोचकारिणी एव संग्राहकीय शक्ति को शरीर के गम्भीर भागों में प्रविष्ट करा देता है।

खट्टे अनारमें मीठे अनार की अपेक्षा अधिकतर रेचनी शक्ति है। यद्यपि दोनों रेचक हैं, क्यो कि दोनों में कांतिकारिणी शक्ति (कुब्बत जिलाअ) पाई जाती है, तथापि खट्टे में रेचनी शक्ति के अधिक होने का कारण यह है कि इससे आंतों में कब्ज हो जाता है जो इदरार (प्रवर्तन) पर मुअ-स्यिन होता है। इसके अतिरिक्त इसमें लज़्अ् (क्षोभ) भी है। मीठे अनार में रेचन के कम होने का कारण यह है कि इसकी रतूबत सूक्ष्म उष्मा के साथ होती है जो कोष्ठमृदुकारिणी तथा रेचनी शक्ति से खाली नहीं होती।

खटमिट्ठा अनार आमाशयिक प्रदाह को लाभ करता है। क्यों कि यह उसको सरदी पहुँचाता एवं पित्तोष्मा को शांति प्रदान करता है। क्योंकि खट्टे अनार के समान इसमें क्षोभ एवं तीक्ष्णता नहीं होती और न मीठे अनार के समान इससे आमाशय में उफान पैदा होता है और न पित्त को ओर इसकी प्रवृत्ति ही होती है। अत एव यह वाताशयवों को हानि नहीं पहुँचाता।

खट्टा अनार अपनी स्तम्भनी शक्ति तथा कषाय पन के कारण कंठ एवं वक्ष में कर्कशता उत्पन्न करता है और मीठा अनार इन दोनों अवयवों को कोमल करता है, चूंकि इसमें सूक्ष्म उष्मा के साथ रतूबत होती है। इस हेतु से और अपने स्तम्भन से यह वक्ष को शक्ति प्रदान करता है और अपनी कांतिकारिणी (जिलाअ्) एवं मृदु कारिता के कारण कास को लाभ करता है, अमलसी (अनार बेदाना) जिसकी गुठली मृदु होती है, सर्वश्रेष्ठ है। अमलस वह जंगली है जिसमें कोई वृक्ष न उगा हो।

सब तरह के अनार मूर्च्छा को लाभ करते है। क्यों कि यह रूह तथा हृदय की प्रकृति की समानता सम्पादित करते हैं और इस लिये भी कि ये हृदय को मलों से स्वच्छ करते हैं। नफी०।

मीठा अनार—रुधिर उत्पन कर्त्ता, शुद्ध आहाररस उत्पन्नकर्त्ता, लघु आहार, आध्मान कर्त्ता मलों को स्वच्छ कर्ता, उदर को मृदु करता तथा मूत्र कारक है और यकृत को शांति प्रदान करता, प्यास को शांति करता तथा कामोद्दीपन करता एवं उत्तमांगों को बल प्रदान करता है।

त्वग् युक्त इसका अर्क दस्तों को बन्द करता है सम्पूर्ण कर्मों में विलायती अनार उत्तम है।

अनार फल त्वक् भस्म कास को लाभ पहुँचाती है।

खट्टे अनार—वह प्रदाह, आमाशय की गर्मी एवं यकृतोष्मा को प्रशमन करता है तथा रक्त प्रकोप एवं वाष्प को दूर करता है। ज्वर जन्य अतिसार एवं वमन को लाभप्रद है। यकृत और शुष्क खर्जू को लाभ करता तथा खुमार एवं गर्मी की मूर्च्छा को लाभप्रद है।

खटमिट्ठा अनार—इसके गुण मीठे अनार के समान हैं। वालुक यह उससे अधिकतर प्रभाव शाली है। छिलका सहित इसके फल को कुचल कर निकाले हुये रस में शर्करा मिलाकर पीने से पैत्तिक वमन तथा अतिसार, खुजली और यकृत में लाभ होता है और यह आमाशय को बल प्रदान करता और हिक्का को नष्ट करता है।

अनार का बीज—संकोचक, पाचक तथा क्षुधाजनक है और आमाशय को बल प्रदान करता, पैत्तिक मवाद को आमाशय प्रभृति पर नहीं गिरने देता और पैत्तिक वमन, अतिसार तथा दोनों प्रकार की खुजली को लाभप्रद है।

अनार फल त्वक्

दाड़िम त्वक्, दाड़िम फल वल्कल, अनार के फल का छिलका, नि (ना) सफाल। पोस्त अनार—फ्रा०। क़शूरुर्रुम्मान—अ०। पामेग्रेनेट पील Pomegranate peel, पा० रिंड Pomegranate rind—इं०।

वर्णन—अनार के फल की छाल के विषम, न्यूनाधिक नतोदर टुकड़े होते हैं जिनमें कतिपय दंष्ट्राकार नलिकामय पुष्प वाह्यकोष लगे होते हैं जिसके भीतर अब तक पराग केशर तथा गर्भकेशर आवृत्त होते हैं। यह $\frac{1}{20}$ से $\frac{1}{10}$ इंच मोटा सरलता पूर्वक टूट जाने वाला (टूटते समय जिससे कार्कवत् धीमा शब्द हो) होता है। इसका वाह्य पृष्ठ अधिक खरदरा एवं पीत धूसर वा किञ्चित् रक्तवर्ण का होता है। भीतर से यह न्यूनाधिक धूसर वा पीत वर्ण का; मधुमक्षिका गृहवत् और बीज खातयुक्त होता है, इसमें कोई गन्ध नहीं होती, अपितु यह तीव्र कषाय स्वादयुक्त होता है।

लक्षण—रक्ताभायुक्त पीतवर्ण। स्वाद विकृत। प्रकृति—मीठे की सर्दतर और खट्टे की प्रथम कक्षा में शीतज्ञ तथा रूक्ष। हानिकर्ता शीतप्रकृति को। दर्पघ्न—आर्द्रक। प्रतिनिधि—जरेवंद (गुलाब का केशर)। शर्बत की मात्रा—१ से २ तो०। प्रधान गुण—अर्श के लिये उपयोगी है।

गुण, कर्म प्रयोग—(१) गरमी की सूजन को लाभ करता और मसूढ़ों को शक्ति प्रदान करता

(२) अनार के सूखे छिलकों को पीसकर छिड़कने से कांच का निकलना बन्द हो जाता है।

(३) अनार के फल को पीसकर गोला बना पुटपाक की विधि से पकाकर रस निचोड़ कर मधु मिला पीने से सब तरह के दस्त बन्द होते हैं

(४) अनार के फल का छिलका पुराने अतिसार तथा आमातीसार को मिटाता है।

(५) पांच तोले अनार के छिलकों को सवा सेर दूध में औटा १५ छटांक रख छान दिन भर में ३-४ बार पिलाने से आमातिसार मिटता है।

(६) खट्टे अनार के २ तोले छिलके और दो तोले शहतूत को औटा छान के पिलाने से पेट के कीड़े मरते हैं।

(७) इसके छिलके की योनि में धूनी देने से मरा हुआ बच्चा बाहर निकल आता है।

(८) इसके छिलके को छुहारे के पानी के साथ पीसकर लेप करने से सूजन बिखरती है।

(९) अनार के छिलके और लौंग का काढ़ा पिलाने से पुराना आमातिसार मिटता है। इस काम के लिये अनार के छिलके और इसकी जड़ की ताजी छाल लेनी चाहिये।

नव्यमत

पक्व अनार का रस प्रिय तथा ज्वर जन्य उत्ताप एवं तृष्णा आदि को शमन करने वाला है ज्वर रोगी के सिवा यह हर एक रोगी और नीरोगी को लाभदायक है। मस्तिष्क हृदय और यकृत को अत्यन्त बलवान बनाता एवं शुद्ध रुधिर उत्पन्न करता है। अनार के दाने निकाल कर

मज़बूत और झरझरे कपड़े में से निचोड़ कर केवल उसका रस पिलाएँ।

अत्यन्त मद्यपान जन्य यकृद्दोष में तीन तीन घंटे बाद अनार का रस निकाल कर पिलाते रहें।

कामला रोगी को प्रातः सायं ६–७ तोला अनार का रस और ६ माशे जरिश्क मिलाकर सेवन कराएँ।

वमन एवं उत्क्लेश विकार में खट्टे अनार का रस गुणदायक है।

विसूचिका रोगी के लिए खट्टे अनार का रस एक उत्तम औषध है। रस न प्राप्त होने पर रुब्ब या शर्बत का सेवन कराना चाहिये।

छोटे बच्चों को प्रति दिन प्रातः सायं एक–दो तोले एक समय अनार का पानी पिलाते रहें। ४० दिन तक ऐसा करने से जिस्म की रंगत सुर्ख निकल आती है।

अनार दाने का ताजा रस उदरशूल प्रशामक है।

जिसकी चमड़ी से तुरन्त रुधिर निकल आए ऐसे बच्चों की जुबान का खून बन्द करने के लिये अनार खिलाना चाहिये।

बवासीर वालों को अनार खिलाना हितकारी है।

इसके रस में शक्कर मिलाकर कुछ गर्म कर पिलाने से वमन रुक जाता है।

अनार के रस में जीरा और शर्करा मिलाकर पिलाने से अरुचि मिटती है। अनार के दाने खाने से रुचि बढ़ती है।

खट्टे अनार के रस में कुछ मधु मिलाकर कान में टपकाने से कान का दर्द दूर होता है।

मीठे अनार का रस निकाल बोतल में भर कर धूप में रख दें। जब वह चाशनी जैसा होजाए तब उसका अञ्जन करने से सब तरह की आंखों की खुजली मिटती है और आँखों की रोशनी बढ़ती है।

जिस ज्वर रोगी को प्यास बेचैनी, मतली, वमन एवं रेचन होता हो उसको रुब्ब अनार या शर्बत अनार का उपयोग लाभदायक सिद्ध होता है।

अनार का फूल (दाड़िमपुष्प)

दाड़िमपुष्प-सं०। गुले अनार–फा०। वर्दुरुम्मान-अ०। ग्रेनेटाइ फ्लॉरीस Granati Flores-ले०। पोमेग्रेनेट फ्लावर्स pomegranate Flowers-इं०।

वह अनार जिसमे फल लगते है उसकी कली को अरबी में अक्माउर्रुम्मान या जुबजुर्रुम्मान कहते हैं। पर वह अनार जिसमें फल नहीं लगते उसके फूल को गुलनार कहते हैं।

गुणधर्म तथा उपयोग—"घ्राणात् प्रवृत्ते रुधिरे दाड़िमपुष्परसः—तथा दाड़िमपुष्प तोयम्।" अनार के फूल के रस का नस्य लेने से नासिका द्वारा रक्तस्राव अर्थात् नासार्स व नकसीर को लाभ होता है। च० चि० ५ अ०।

अनार की वह कलियाँ जो निकलते ही हवा के झकोलो से वृक्ष से गिर पड़ती है, क्षतों के लिये हितकर हैं। क्योंकि ये अतिशय सङ्कोचक एवं क्लेदघ्न (मुजफ्फिफ) होती है, विशेष कर जलाई हुई। क्योंकि जलाने से उनका शुष्कारित्व अधिक हो जाता है। नफी०।

खट्टे अनार के शुष्क फूल को बारीक पीसकर अवचूर्णन करने से मसूड़ों से रक्तस्राव का होना रुक जाता है एव यह व्रणपूरक है। म० अ०।

(१) इसके पुष्प में सङ्कोचक गुण है। अनार की कली को चूर्णकर ४ से ५ ग्रेन की मात्रा में देने से कास को लाभ होता है। (२) अनार की अविकसित ताजी कलियों को पीसकर चूर्ण किये हुए क्षुद्र एला बीज, पोस्त बीज तथा मस्तगी में मिश्रित कर शर्बत के साथ इसका अवलेह प्रस्तुत करें। बालको के पुरातन अतिसार एवं प्रवाहिका की चिकित्सा के लिये यह अमोघ औषध है। (Tukiua)

अनार के फूल का रस और दूब का रस इनको समान भाग सेवन करने से अथवा इसके लाल फूलों का रस नाक में टपकाने से या सूँघने से नकसीर बन्द होती है।

अनार के सूखे फूलों को दस्त को बन्द करने-वाले योगों में डालने से इनका गुण बढ़ जाता है।

अनार और गुलाब के सूखे फूल लेकर पीस कर मंजन करने से मसूड़ों का पानी बन्द हो जाता है।

इसकी कलियों का दो ढाई रत्ती चूर्ण खाँसी के लिए बहुत गुणदायक है।

अनार के ताजे फूल ४ तो०, मेथी सब्ज १० तो० इनको बारीक रगड़कर ३ सेर पानी में पकाएँ। जब पककर लेई की तरह गाढ़ा गाढ़ा लुआब सा हो जाय तब शिर के बालों पर लेप करें। इसके दो घटे बाद स्नान करें तो बाल घूँघरवाले और बारीक हो जाते हैं।

अनार की कली जो खिली न हो ताजी लेकर खूब कूटकर निचोड़ कर धूप या पानी की भाप पर शुष्क कर लें। मात्रा—३ माशे से ६ माशे तक।

दाड़िम मूल त्वक्

अनार की जड़ की छाल, अनार की छाल—हिं०। ग्रेनेटाई कोर्टेक्स (Granati Cortex)—ले०। पोमेग्रेनेट बार्क (Pomegranate bark)—इं०। कश्रुर्रुमान अ०। पोस्त अनार-फा०।

नोट—इसको तिब्बी, वैद्यक संज्ञाओं से यहाँ दाड़िम फलत्वक् (जिसे हिन्दी में नस-पाती कहते है) नहीं, समझना चाहिये, प्रत्युत यह दाड़िम वृक्ष के काँड तथा दाड़िम की जड़ की छाले है।

वानस्पतिक वर्णन—इसके छोटे छोटे धनु-साकार अर्थात् मुड़े हुये या नलीदार टुकड़े होते है जिनकी लम्बाई २ से ४ इंच तक और चौड़ाई आध इंच से २ इंच तक होती है। छाल का बाहरी पृष्ठ खुरदरा धूसराभ पीतवर्ण का और भीतरी पृष्ठ सचिक्कण पीतवर्ण का होता है। यह सरलतापूर्वक टूट जाता है। यह गंधरहित तथा स्वाद में कषाय किंचित् तिक्त होता है।

रासायनिक संगठन—इसमें पैलीटिएरिन या प्युनीसोन (अनारीन) नाम का एक क्षारीय सत्व होता है। देखो—अनार वृक्ष के अन्तरगत रासायनिक संगठन।

संयोग-विरुद्ध—ऐल्कलीज (क्षारीयौषधे) मेटैलिक साल्टस (धातुज लवणें), लाइम वाटर (चूने का पानी चूर्णोदक) और जेलेटीन (सरेश)।

प्रभाव—संशोचक तथा आंत्रकृमिहर।

औषध-निर्माण—(१) दाड़िम त्वक् क्वाथ, अनार की छाल का काढ़ा—हिं०। डिकाक्टम ग्रेनेटाई कार्टेक्स ((Decoctum Granati Cortex)—ले०। डिकाक्शन आफ पोमेग्रेनेट बार्क (Decoction of Pomegranate Bark)—इ०। मतबूख कश्रुर्रुमान-अ०। जोशाँदहे पोस्त अनार-फा०।

निर्माण-विधि—पोमेग्रेनेट बार्क (अनार की छाल) का १० नं० का चूर्ण ४ आउंस, परिश्रुत वारि के साथ १० मिनट तक क्वथित छान लें और इसमें छनना और परिश्रुत जल मिलाएँ कि प्रस्तुत क्वाथ पूरा एक पाईट होजाय।

मात्रा—आधा से २ फ्लुइड आउंस (१५ से ६० घनसेन्टीमीटर)।

(२) चूर्ण किया हुआ मूलत्वक् २ से ४ ड्राम कृमिघ्न रूप से

(३) इसी का क्वाथ (२० में १)।

मात्रा—३ से ६ फ्लु० आउंस।

(४) मूल त्वक् का तरल सत्व, मात्रा—चौथाई से २ फ्लु० ड्राम।

प्रभाव तथा उपयोग

आयुर्वेदीय मत से—(चरक रक्तार्श में दाड़िम त्वक्) अनार वृक्ष की छाल के कल्क में सोंठ का चूर्ण मिलाकर पिलाने से अर्श रोगी का रक्तस्राव विनष्ट होता है। (चि० ६ अ०)।

चक्रदत्त—(१) सरक्त अतिसार में दाड़िम त्वक्—कुटज और अनार वृक्ष की छाल इन दोनों का क्वाथ प्रस्तुत कर मधु के साथ सेवन करने से दुर्निवार्य रक्तातिसार में भी शीघ्र विजय प्राप्त

होती है। (अतिसार चि०)। (२) उपदंश में दाड़िम वृक्ष त्वक् (अनार वृक्ष की छाल) के चूर्ण द्वारा उपदंश के क्षत को अवचूर्णन करने से व्रणरोपण होता है। (उपदंश चि०)।

भाव प्रकाश—इसकी जड़ कृमिहर है।

यूनानी एवं नव्यमत—अनार वृक्ष की छाल विशेषतः उसकी जड़ की छाल कद्दूदाना (Tapeworm) के लिये अत्युत्तम कृमिघ्न औषध है। इसको अधिक मात्रा में देने से वमन एवं रेचन आने लगते हैं। इसके उपयोग की सर्वोत्तम विधि निम्न है—

इसकी जड़ की छाल १ तो०, जल २ सेर। इसका क्वाथ करें, जब एक सेर पानी शेष रहे उतार कर छान लें। इसमें से ५ तो० प्रातः काल खाली पेट सेवन करें (बालक को १ से २ फ्लु० ड्रा०) ऐसी ऐसी ४ मात्राएँ प्रति-आध आध घण्टा पश्चात् देने के बाद एक मात्रा एरंड तेल का देकर आँतों को साफ कर दें। इससे कद्दू दाना मर कर निकल जाता है। भ० अ०। डिमक। इ० मे० मे०। आर० एन० चोपरा। पी० बी० एस०।

पुरातन अतिसार एवं प्रवाहिका में अनार की छाल तथा फल त्वक् के स्तम्भक गुण का उपयोग किया जा चुका है। आर० एन चोपरा।

पैलीटिएरीन (*Pelletierine*)

($C_8H_{13}NO$)

(ऑफिसल Official)

लक्षण एवं परीक्षा—यह एक क्षारीय सत्व है जो दाड़िम की छाल द्वारा प्राप्त होता है इसके वर्ण रहित सूचम रवे होते हैं जो खुली वायु में या ऐसी शीशी में जो पूरी भरी न हो बहुत शीघ्र वर्ण युक्त हो जाते हैं। यह जल में विलेय होते हैं। मात्रा—५ से १० ग्रेन।

पैलीटिएरीन सल्फास

Pelletierine Sulphas

प्युनिसीन सल्फेट Punicine Sulphate इ०। अनारीन गंधेत्।

लक्षण एवं परीक्षा—यह एक भूरे रंग का शर्बती द्रव है जो जल में सरलता पूर्वक विलेय होता है। कभी कभी इसकी रवायुक्त डलियां होती हैं। इसको टेपवर्म (कद्दूदाना) को निकालने के लिए ५-८ ग्रेन की मात्रामें देते हैं। अस्तु इसको बासी मुँह खिलाकर उसके २घटा पश्चात् कम्पाउड टिंकचर ऑफ जैलपे की एक पूरी मात्रा पिला देते हैं। (फ्रेंचकोडेक्स)

मात्रा—पूर्ण वयस्क को ५ से ८ ग्रेन तक तेरह वर्ष के नवयुवक को २॥ से ४ ग्रेन तक और दो वर्ष के बच्चे के लिये $\frac{1}{2}$ — $\frac{4}{5}$ ग्रेन तक।

पैलीटिएरीनी टैनास

(*Pilletierinæ Tannas*)

पेलीटिएरीन टैनेट Pelletierine Tannate इ०। अनारीन कषायेत्।

लक्षण एवं परीक्षा—यह एक हलका बिकृताकार पीत वा धूसर वर्ण का चूर्ण है जो अनार Punica granatum (*Myrtaceæ*) की जड़ एवं कांड की छाल द्वारा प्राप्त क्षारीय सत्व का टैनेट मिश्रण होता है प्रभाव—कद्दूदाने (Tapeworm) केलिए कृमिघ्न है। मात्रा २ से ८ ग्रेन (१३ से ५० सेंटीग्राम)।

यह अनार की जड़ एवं कांड की छाल की प्रतिनिधि स्वरूप व्यवहार में आता है। यह छाल द्वारा प्राप्त क्षारीय सत्वों के टैनेट का मिश्रण है यह जल में कम परन्तु ऐलकोहल (९० ०/०) के ८० भाग में १ भाग विलेय होता है।

प्रभाव तथा उपयोग—कद्दूदाना (Tapeworm) पर इसका विशेष मारक प्रभाव होता है पेलीटिएरीन नामक क्षारीय सत्व के विलयन (१०,००० में १) में थोड़ी देर तक डुबो रखने से वह मृतप्राय हो जाता है। इनमें टैनेट अधिक पसंद किया जाता है क्योंकि अल्प विलेय होने के कारण इसका अधिकांश अपरिवर्तित दशा में ही आमाशय से गुजर कर क्षुद्रांत्र में पहुंच जाता है जहां कि इसका कृमि के साथ सम्पर्क होता है इसका शुद्ध क्षारीय सत्व अथवा

विलेय सल्फेट (गवेत्) सम्भवतः आमाशय द्वारा अभिशोषित होकर कतिपय प्रकृति संबन्धी लक्षणों को उत्पन्न करताहै, यथा—सिर चकराना दृष्टिमांद्य, मांसपेशीस्थ, आक्षेप और काय बिस्तार परन्तु टैनेट के सेवन के बाद ये लक्षण बहुत कम दीख पड़ते हैं। इसको उपवास के बाद ८ ग्रेन (४ ग्रा०) की मात्रा में देना चाहिये और उसके एक या दो घंटे पश्चात् मृत कृमि को निकालने के लिये तीव्र रेचन जैसे जैलप (७॥ रत्ती) अथवा एक आउंस (२॥ तो०) एरंड तेल व्यवहार कराएँ (इससे कृमि भी निर्गत हो जाता है। और उदरशूल सिरमें दर्द भी नहीं होता) थोड़ी मात्रा में टिंक्चर (धनुस्तम्भ) और पक्षाघात के कतिपय भेदों में पैलीटिएरीन सल्फेट का त्वगन्तः अन्तःक्षेप किया जा चुका है। (Sir w.-whitla)

नोट—इसके नूतन लवण तो विश्वास के योग्य होते हैं, परन्तु पुरातन होने पर वे खराब हो जाते हैं।

अनार फल त्वक् अथवा मूल त्वक् के क्वाथ से कभी कभी शिथिल कण्ठक्षत आदि रोगों में गण्डूष कराते हैं। इस हेतु इसकी जड़ को छाल के कल्क का कण्ठ में प्रलेप करते हैं। गुदा एवं जरायु सम्बन्धी क्षतों में इसका स्थानिक प्रयोग उपयोगी होता है।

इसकी जड़ की छाल श्वेत प्रदर तथा रक्त-स्राव के लिये अत्यन्त गुण दायक है। इसको आधसेर जौकुट करके ३–४ सेर पानी में धीमी आँच पर पकाएँ जब पाव भर पानी रह जाय तब उतार कर छान लें। इससे स्त्री अपनी योनि धोया करे। और मलमल का कपड़ा तर करके योनि में रखे।

अतीसार में इसकी छाल के क्वाथ में थोड़ी सी अफीम मिलाकर प्रयोग करने से बहुत लाभ होता है।

इसकी छाल के काढ़े में सोंठ और चन्दन का बुरादा छिड़क कर पिलाने से रुधिरयुक्त संग्रहणी मिटती है।

अनार की जड़ को पानी में घिसकर लेप करने से शिर का दर्द दूर होता है।

इसकी छाल का चूर्ण बुरकाने से उपदंश की टांकी मिटती है।

इसकी छाल के काढ़े में तिलों का तेल डाल कर तीन दिन तक पिलाने से पेट के कीड़े बाहर निकल जाते हैं।

आँख आने में अनार का क्वाथ एक-दो बूंद आँख में टपकाएँ। कुकरे में आँख के पपोटों को उलट कर उक्त काढ़े से आँख को धोने से अत्यन्त लाभ होता है। कर्णशूल तथा कान के भीतर की सूजन में अनार के काढ़े को कान में डालना चाहिये।

अनार के पत्ते

हारीत—चलित गर्भ में दाड़िम पत्र, अस्थिरगर्भा अर्थात् जिसका प्रायः गर्भस्राव हो जाता हो उस स्त्री के गर्भस्राव की आशंका के निवारणार्थ गर्भ से पांचवें मास में अनार के पत्र श्वेत चन्दन को दधि और मधु के साथ आलोड़ित कर सेवन कराएँ। (चि० ४६ अ०)

रिसाला अमृत के कतिपय चुने हुये प्रयोग

इन योगों में मीठे अनार के पत्ते लेने चाहिये अनार के ताजे पत्तों को पत्थर पर पीस कर रात को सोते समय हाथ की हथेलियों पर और पांव के तलवों पर लेप करने से यह हाथ और पांव की जलन को दूर करता है।

अनार के १० तोले ताजे पत्तों को ऽ१ पानी में औटाएँ, ऽ॥ पानी शेष रहने पर छान कर दिन में दो तीन बार इसी पानी से गुदा धोने से गुदभ्रंश रोग दूर होता है। गर्भाशय के बाहर निकल आने पर भी इसका प्रयोग गुणदायक होता है।

गर्भाशय के बाहर निकल आने और गुदभ्रंश में अनार के हरे पत्तों को साया में सुखा कर बारीक पीस कपड़ छान कर ६–६ मा० प्रातः साथ ताजे जल से सेवन कराएँ।

अनार के ताजे पत्ते २ तोला, स्याह मिर्च १ मा०, दोनों को ऽ= पानी में पीस और छान प्रातः एवं इसी प्रकार सायंकाल में पिलाने से यह स्त्रियों के प्रदर रोग को दूर करता है।

अनार के दो तोले ताजे पत्तों को आधपाव पानी में रगड़ और छानकर पिलाना और अनार के पत्तों को पीस कर पेडू पर लेप करना गिरते हुये गर्भ को रोकता है।

अनार के पत्तों को साया में सुखा पीस कर कपड़ छान करके ६–६ मा० सुबह गौ की छाछ और शाम को ताजे पानी के साथ खिलाने से पाण्डु रोग दूर हो जाता है।

अनार के पत्तों को पीसकर थोड़ा सरसों का तेल मिलाकर उबटन के तोर पर दिन में एक बार प्रयोग करना खुजली को दूर करता है।

उपर्युक्त विधि के अनुसार सेवन करने अथवा पावभर अनार के पत्तों को पाँच सेर पानी में औटाकर ४ सेर शेष रहने पर इससे नहाने से गर्मियों में पित्ती निकलने को लाभ होता है।

अनार के २ तोले हरे पत्तों को आध पाव पानी में रगड़ और छानकर प्रातः सांय और रोग की अधिकता में दो पहर को भी सेवन करने से सिल (उरःक्षत) को लाभ होता है।

अनार के हरे पत्तोंको आध पाव पानी में पीस और छानकर प्रातःसांय पिलाने तथा अनार के हरे पत्तों को पत्थर पर बारीक पीसकर मस्तक पर लेप करने से नकसीर को लाभ होता है।

अनारके हरे पत्तों को कुचलकर निकाला हुआ रस १० तो०, गो मूत्र ६० तो० तिल तैल १० तो०, तीनों को नरम आग पर पकाएं। जब तेल मात्र शेष रह जाए तब आग पर से उतार कर और छानकर ठंडा होने पर शीशी में डाल रक्खें इसको २–३ बूंद थोड़ा गरम करके प्रातः और सांय कान में डालने से बहरापन, कान का दर्द और कानोंकी खुश्की और साँ साँ शब्द होना बंद होता है।

अनार के पत्तोंको कुचलकर निकाला हुआ रस १ सेर बेल के पत्तों को कुचलकर निकाला हुआ रस १ सेर गाय का घी १ सेर तीनों को नरम आँच पर पकाएं केवल घी मात्र शेष रहने पर छान कर रखें। २–२ तो० यह घी गौ के पाव भर गरम दूध में मिलाकर प्रातः सायं पिलाना बधिरता को दूर करता है दूध में आवश्यकतानुसार मिश्री या खांड मिला लें

अनार के दो तो० ताजे पत्तों को आध सेर पानी में पकाकर आध पाव रहने पर छानकर प्रातः साथ पिलाना और अनार के पत्तों को पानी में पीस टिकिया बनाकर बांधना कंठमाला और गलगंड को दूर करता है। इसी भांति सेंवन करना भगन्दर में भी लाभप्रद है।

छाया में सुखाए हुए अनार के पत्ते २ भाग और नबसादर १ भाग दोनों को बारीक पीस कर कपड़छान करें और ३–३ मा० प्रात सायं ताजे पानी के साथ खिलाएं। यह प्लीहा के लिए गुण दायक है।

अनार के पत्तों को कुचल कर निकाला हुआ रस १ सेर और मिश्री आधसेर का शर्बत तय्यार करें। २–२ तो० यह शर्बत दिन में दो तीन बार चटाना आवाज के भारीपन खांसी, नजला तथा जुकाम (प्रतिश्याय) को दूर करता है।

अनार के पत्तों को छाया में सुखाकर बारीक पीस कर कपड़ छन करें और शहद के साथ जंगली बेर के समान गोलियां बनाकर छाए में सुखाकर रखें। यदि शुद्ध शहद न उपलब्ध हो तो गुड़ के आथ गोलियां बना लें इन गोलियों को मुँह में रखकर चूसने से भी यह आवाज के भारीपन, खांसी, और नजला व जुकाम को दूर करता है।

२ तो० अनार के पत्तों को आध सेर पानी में औटाएं। जब आध पाव जल शेष रहे तब छान कर १ तो० खांड मिलाकर प्रातः सायं सेवन कर इससे आवाज का भारीपन, खाँसी, नजला व जुकाम और दर्द सोना इत्यादि दूर होते हैं।

अनार के पत्तों को छाया में सुखा बारीक पीस कर कपड़छन करें। और ६–६ मा० सुबह गो की

छाछ और शाम को ताजे पानी के साथ खिलाएं इससे पेट के कीड़े दूर होते हैं।

अनार के ताजे पत्तों को कुचलकर रस निकालें और उससे कुल्ले कराएँ। इससे मुख हलक और जबान का पकना मसूड़ों से खून और पीव का आना, जुबान और मुंह के छाले, तथा जख्म दूर होजाते हैं। रस निकालनेके लिए यदि काफी पत्ते न मिल सकें तो पत्तो को दुगने पानी में पीस और छान कर रस निकालें।

अनार के दो तोले पत्तों को १० तो० पानी में रगड़ और छानकर सुबह इसी तरह शाम को पिलाना बवासीर का खून बन्द करता है।

अनार के पत्तो का पीस टिकियां बनाकर जरा गरम करके घी में भूनकर बाँधना बवासीर के मस्सो को जलन दर्द और शोथ को दूर करता है और मस्सों को खुरक करता है।

२ तो० अनार के पत्तों को १० तो० पानी में रगड़ और छानकर सुबह और शाम को पिलाना खून के वमन को रोकता है इसी प्रकार सेवन करने से खून के दस्त भी बन्द हो जाते हैं।

अनार के पत्तों का पानी में पीस कर लेप करने से पित्त का शिर दर्द दूर हो जाता है। वात और कफ के सिर दर्द में अनार के पत्तों को पानी में पीस कर किञ्चितगरम करके लेप करना चाहिये

छाया में शुष्क किये हुये अनार के पत्ते ऽ॥, धनियां शुष्क ऽ॥, इनको बारीक पीस कर कपड़ छान करें गेहूं का आटा ऽ१ तीनों को मिला कर गाय के ऽ१ घी में भून कर ठंडा होने पर ऽ४ खाँड़ मिलाकर रखें। इसमें से १–१ छ० या पाचन शक्ति के अनुसार न्यूनाधिक मात्रा में प्रातः सायं गरम दूध के साथ खिलाना सिरके दर्द तथा सिर चकराने को दूर करता है।

अनार के दो तो० ताजे पत्तों को ऽ= पानी में रगड़ और छान कर प्रातः सायं पिलाना खूनी पेचिस को दूर करता है।

अनार के पत्तों को छाया में सुखा बारीक पीस कर कपड़ छान करें ६ मा० प्रातः गौ की छाछ और सायं उसी छाछ के पनीर के साथ खिलाएं आमला में लाभप्रद है।

अनार के २ तोले हरे पत्तों को आधपाव पानी में रगड़ और छानकर सुबह इसी प्रकार शाम को बच्चे पिलाना पेशाब के रास्ते खून आने में गुण दायक है।

अनार के ताजे पत्तोंको पत्थर पर बारीक पीस कर दिन में २ बार लेप करना दाद और चम्बल को दूर करता है।

अनार के पत्तों को छाया में सुखा बारीक पीस कर कपड़ छानकरके सुबह और शाम ६–६ मा० ताजे पानी के साथ खिलाना दाद चम्बल और खून की खराबी को दूर करता है।

अनार के पत्तों को पानी में पीस कर दिन में २ बार १–१ घन्टे के लिये लेप करना गंज को दूर करता है।

अनार के ताजे पत्तों को कुचलकर निकाला हुआ रस १ सेर अनार से ताजे पत्तो को चटनी ऽ=सरसों का तेल आधसेर तीनों को मिलाकर नरम आँच पर पकाएँ। तेल मात्र शेष रहने पर आग पर से उतार और छानकर ठंडा होने पर शीशी में भरकर इस तेल को दिन में दो बार लगाना गंज और बालझड़ को दूर करता है इस तेल की मालिस करने से चहरे की झाँई और काले धब्बे भी दूर हो जाते हैं।

अनार के पत्रों का छाए में सुखा बारीक पीस कपड़छान करें और १–१ तो० प्रातः सायं पत्तों के साथ खिलाने से आतशक (उपदंश) दूर होता है।

आधपाव अनार के ताजे पत्तों को कुचलकर। सेर पानी में औटाए आधसेर पानी शेष रहने पर छानकर इस पानी से दिन में दो तीन बार आतशक के जख्मों को धोना चाहिये।

अनार के पत्तों को छाए में सुखा बारीक पीस कपड़ छान करें और अनार के पत्तों को कुचलकर निकाले हुये रस में २१ दिन खरल करके शुष्क होने पर कपड़ छान करे। आतशक के जख्मों को शुष्क करने के लिये यह एक अजीब चूर्ण है।

अनार के दो तो० ताजे पत्रांको आधसेर पानी में जोश देकर आधपाव पानी शेष रहने पर छान

कर पाव भर गरम दूध में मिलाकर पिलाने से शारीरिक एवं मानसिक क्लांति प्रशमित होती है। प्रातः एवम् रात्रि को सोते समय इसी भांति सेवन करना अनिद्रा वा स्वल्प निद्रा के लिये लाभदायक है नींद आने के लिये भैंस का दूध सेवन करना अत्युत्तम है।

अनार के हरे पत्ते १ तोले को आध सेर पानी मे पकाकर आधपाव शेष रहने पर छानकर १ तो० गोघृत और १ तो० खाँड मिलाकर सुबह और शाम पिलाने से मृगी दूर हो जाती है।

२ तोले अनार के हरे पत्तों को आधसेर पानी में रगड़ और छानकर सुबहशाम पिलान सूजाक को दूर करता है।

अनार के पत्तों को कुचल कर निकाला हुआ रस एक सेर सत्यानासी कटेरी को कुचल कर निकाला हुआ रस १ सेर, गोमूत्र १ सेर, काले तिलों का तेल २ सेर, अनार के पत्तों का कल्क आधसेर सबको मिलाकर आग पर चढ़ाए। केवल तेल मात्र शेष रहने पर आग पर से उतार और छान कर रक्खें। इस तेल को दिन में दो तीन बार फुलवरी (श्वित्र) के दागों पर लगाना गुणदायक है। इस तेल के लगाने से काले धब्बे झीप, दाद, चंबल, भगंदर और कंठमाला इत्यादि रोग दूर होजाते हैं। इसे कोढ़ के जख्मों पर लगाने से भी लाभ होता है।

इसको दिन में तीन बार लगाने से श्लीपद को लाभ होता है।

अनार के पत्तों को छाए में सुखाकर बारीक पीसकर कपड़छान करें। ६-६ मा० सुबह और शाम ताजे पानी के साथ खिलाने से श्वित्र (सफेद कोढ़) दूर हो जाता है।

अनार के २ तोले हरे पत्तों को आधपाव पानी में रगड़ और छानकर कर सुबह इसी प्रकार शाम के वक्त पिलाने से यह सोम रोग को दूर करता है।

अनार के ६ मासे हरे पत्तों को २ तो० पानी में रगड़ और छानकर २ तो० शर्बत मिलाकर लाभ होने तक एक एक घण्टा बाद पिलाना हैजे के लिये अत्यन्त लाभप्रद है। यह वमन को भी बन्द करता है।

एक तो० अनार के हरे पत्ते और १ मा० काली मिर्च, दोनों को ऽ= पानी में रगड़ और छानकर सुबह और शाम पिलाना, रक्तपित्त को दूर करता है।

अनार के पत्तों को छाया में सुखा बारीक पीसकर कपड़ छान करें और १-१ तो० सुबह और शाम ताजा पानी के साथ खिलाएँ। इससे कोढ़ दूर हो जाता है।

साया में शुष्क कर बारीक पीस कर कपड़ छान किए हुए अनार के पत्ते ६-६ माशा सुबह और शाम ताजा पानी के साथ खिलाना, प्रमेह और कुष्ठ (दाद) को दूर करता है।

साये में शुष्क किए हुए अनार के पत्ते ४ भाग सेंधानमक १ भाग, दोनों को बारीक पीस कर कपड़ छान करें और ४-४ मा० दोनों समय भोजन से पहिले पानी के साथ खिलाएं। यह भूख की कमी एवं बदहजमी को लाभप्रद है।

अनार के पत्ते २ तो० ऽ= पानी में रगड़ और छान कर पिलाना, मूर्च्छा को दूर करता है। यदि रोग, चिरकालीन हो तो सुबह शाम दोनों वक्त पिलाएँ।

अनार के पत्ते १ तो०, गुलाब के ताजे फूल १ तो० (यदि ताजे फूल न मिले तो शुष्क पुष्प ६ मा० ले लें), दोनों को ऽ॥ पानी में औटाएं ऽ= पानी शेष रहने पर छान कर एक तो० गोघृत मिलाकर गरम गरम सुबह और शाम पिलाने से योषापस्मार (Hysteria) दूर हो जाता है। इससे उन्माद का भी लाभ होता है।

अनार के हरे पत्ते १ तो०, गोखरू हरा १ तो० दोनों को ऽ= पानी में रगड़ और छानकर सुबह और शाम पिलाना पेशाब की रुकावट और जलन को दूर करता है।

२ तो० हरे पत्तों को ऽ= पानी में रगड़ और छान कर सुबह और शाम पिलाना लू लगने में लाभ प्रद है।

अनार के पत्तों को छाए में सुखा बारीक कर कपड़ छान करें और एक एक तो० सुबह और शाम ताजा पानी के साथ खिलाने से श्लीपद दूर होता है।

अनार के पत्तों को पानी में पीस कर लेप करना श्लीपद को लाभ प्रद है। इसका प्रलेप कनफेड़ के वरम को दूर करता है।

अनार के २ तो० पत्तों को ऽ॥ पानी में क्वथित कर ऽ= पानी शेष रहने पर छान कर ४ रत्ती सेंधानमक मिला सुबह और शाम पिलाने से भी यह कनफेड़ के वरम को दूर करता है।

अनार के २ तो० हरे पत्तों को ऽ॥ पानी में क्वथित करें जब ऽ। पानी शेष रहे तब छान कर ठंडा होने पर इससे गण्डूष करने से यह खुनाक (Sore throat) को दूर करता है। आतशक में पारद सेवन से मुंह आने पर भी इसका उपयोग लाभदायक होता है।

अनार के २ तो० हरे पत्तों को ऽ॥ पानी में जोश देकर ऽ= रहने पर छानकर ठण्डा करके सुबह इसी तरह शाम के वक्त पिलाने से यह खुनाक (Sore throat) और मुंह आने में मुफीद है।

अनार के पत्तों को छाये में सुखा बारीक पीस और कपड़ छान करके सुबह और शाम दाँतों के हिलने, मसूड़ों से खून या पीव आने और मसूढ़ों के फूलने इत्यादि में लाभ प्रद है।

ऽ८ अनार के पत्तों को ऽ१ पानी में जोश देकर ऽ। पानी शेष रहने पर छान कर इससे जख्मों को धोने से उनसे खून आना बन्द हो जाता है और जख्मों का गन्दापन दूर हो वे शीघ्र भर जाते हैं।

इस प्रकार धोने से और पूर्वोक्त अनार पत्र तथा सत्यानाशी द्वारा प्रस्तुत तैल के लगाने से नासूर भी दूर हो जाता है।

अनार के पत्तों को छाये में सुखाकर बारीक पीस कपड़छान करके ६-६ माशा सुबह शाम ताजे पानी के साथ खिलाना भी नासूर में लाभ करता है।

अनार के पत्तों की पानी में पीसकर दिन में दो वार लेप करना या अनार के पत्तो को पानी में भिगोकर वतौर पोटली आँखों पर फेरना दुखती आँखों को लाभ पहुँचाता है।

अनार की पत्तो को कुचल कर निकाले रस को कपड़े से छान कर दिन में दो वार कम कतरे आँखों में टपकाना आँखों की सुर्खी, वरम, खुजली और गंदापन को दूर करता है।

अनार के १ सेर ताजे पत्तो को ८ सेर पानी में भिगोए। २४ घंटे बाद आग पर पकाएँ जब २ सेर पानी शेष रह जाय छान कर इस पानी को दुबारा आग पर चढ़ाएँ। जब शहद की तरह गाढ़ा हो जाय तब आग पर से उतार कर ठंडा होने पर शीशी में डाल रक्खें। इसे सलाई से सुबह और रात्रि में सोते समय आंखों में लगाना दुखती आंखों को लाभ करता है और आंखों की खुजली, लाली, गंदापन, पलकों की खारिश, पानी जाना और कुकरों को दूर करता है। अधिक काल तक सेवन करते रहने से परवाल भी दूर हो जाते हैं। पत्ती को पानी से भिगोने से पहिले पानी ले अच्छी तरह साफ कर लें जिसमें मिट्टी आदि अलग हो जाय। यथासम्भव इसको काच पात्र में तयार करें।

अनार की हरी पत्ती को कुचलकर निकाला हुआ रस ४०,४० तो०, सुरमा स्याह २ तो०, दोनों को खरल करें। शुष्क होने पर कपड़छान कर रखें। इसको दोनों समय आंखों में लगाना आँखों के उपर्युक्त रोगों को दूर करता है।

अनार के हरे पत्तों को कुचल कर निकाला हुआ रस खरल में डाल कर खरल करें। जब शुष्क हो जाय तब कपड़े में छान कर रखें। प्रातः साय सलाई द्वारा आंखों में लगाना पूर्वोक्त नेत्र रोगों में यह प्रयोग अधिक लाभ प्रद है।

सिंगरफ रूमी १ तो०, अनार के हरे पत्ते २ तो० दोनों को खरल करके ७ टिकियां बना कर छाया में शुष्क करें। ताम्बे के टुकड़े को आग पर गरम करके उस पर एक टिकिया रखकर जलाएँ और आतशक के रोगी को धुंआ

उसके बदन पर एक कपड़ा लपेट कर कपड़े के भीतर वह तामे का गरम टुकड़ा रखदें, जिस पर टिकिया पड़ी हो। जब घुआँ निकलना बन्द हो जाए और बदन पर खूब पसीना आचुके तो तेज हवा से बचाकर रोगी के ऊपर से कपड़ा हटा कर दूसरे कपड़े से पसीना साफ करदे। सात दिन तक यह प्रयोग करने से आतशक दूर हो जाती है।

औषध सेवन काल में गेहूं और चने की रोटी घी के साथ खिलाएँ। अनार के हरे पत्तों को पत्थर पर बारीक पीसकर आग से जली हुई जगह पर दिन में दो तीन बार लेप करना लाभ दायक है।

१० तोला अनार की पत्ती को कुचल कर २० तोला तिलों के तेल में जलाकर काला होने पर आग से उतार लें और छान कर रक्खे। आवश्यकता होने पर इस तेल को सात बार पानी से धोकर मलहम सा तयार करे आग से जली हुई जगह पर लगाने से लाभ होता है।

भिड़, ततैया, मधुमक्खी, मकड़ी और बिच्छू प्रभृति से दंशित स्थान पर अनार के हरे पत्तों को रगड़ कर लेप करना चाहिये।

तेजाब और भिलावे के तेल प्रभृति तेज चीजों से जली हुई जगह पर उपर्युक्त प्रयोग उत्तम है। मकड़ी के विष में दर्द सर बुखार और दाह आदि कई रोग पैदा हो जाते हैं, इन सब में अनार के दो तोले ताजे पत्तों और दो माशे काली मरिच को आध पाव पानी में रगड़ और छान कर सुबह और तकलीफ की अधिकता की दशा में इसी तरह शाम को भी पिलाएँ।

अनार के पत्तों को छाया में सुखाकर बारीक पीसकर कपड़ छान करें। पित्त ज्वर में सुबह व शाम को ताजा पानी के साथ ६-६ माशा खिलाएं बात कफ ज्वर में गर्म पानी के साथ खिलाएं।

टाइफाइड (आन्त्रिक सन्निपात ज्वर) में २ तो० अनार के पत्तो को आध सेर पानी में जोश दें, आध पाव पानी शेष रहने पर छान कर और ४ र० सेंधा नमक मिलाकर सुबह और इसी प्रकार शाम को पिलाया करें।

अनार के पत्तों को छाया में सुखाकर बारीक पीसें और कपड़ छान करके ६-६ मा० सुबह व शाम ताजे पानी के साथ पिलाएं या १ तो० अनार के ताजे पत्र को ऽ= पानी में रगड़ और छान कर सुबह और शाम पिलाने से दिल की धड़कन को लाभ होता है। छाए में सुखाए हुए अनार में दही नीम के पत्र १-१ तोला छोटी इलायची और गेरू १-१ तोला सब को बारीक कपड़ छान कर और ४-४ मा० सुबह और शाम ताजे पानी के साथ सेवन कराने से दिल की धड़कन, धूप या उष्णताधिक्य के कारण शरीर से चिनगारियों के निकलने में बहुत लाभ होता है। इससे प्यास भी कम हो जाती है।

बढ़ी हुई प्यास में अनार के पत्तों को कुचल कर मुंह में रखकर चूंसते रहना या १ तो० अनार के पत्तों को ऽ= पानी में रगड़ और छान कर सुबह शाम पिलाने से बहुत लाभ प्रतीत होता है।

अनार के पत्तो को पीस कर लेप करना स्तनों को दृढ़ करता है।

अनार के पत्तों को कुचल कर निकाला हुआ रस ऽ१, तिल तेल २० तोला दोनों को गरम आँच पर पकाए, तेल मात्र शेष रहने पर उतार कर छान कर रखें। इसकी दिन में दो तीन बार मालिश करने से भी स्त्रियों के कुच कठोर हो जाते हैं, परन्तु शीघ्र नहीं।

अनारके ताजेपत्तों को कुचल कर निकाला हुआ रस ऽ२, गाय का घी ऽ१, अनार के ताजे पत्तों का कल्क ऽ=, तीनों को मिलाकर नरम आग पर पकाये। जब पानी जल कर घी शेष रह जाए तब उतार कर कपड़े से छानकर ठण्डा होने पर मिट्टी के चिकने बर्तन में रख छोड़ें यह घृत मेदाजनक, वीर्य एवं बुद्धि वर्द्धक है। ऽ। उष्ण गो दुग्ध में आवश्यकतानुसार मिश्री मिलाकर उक्त औषध २ तोला सुबह व शाम पिलानी चाहिये।

अनार कली–हिं० स्त्री० दाड़िम कलिका, अनार की कली। Punica Granatum, *Linn* (Buds of pomegranate) देखो—अनार।

अनार का झाड़–द० दाड़िम वृक्ष, अनार का पेड़ Punica Cranatum, *Linn*। सं० फा० इं०। देखो—अनार।

अनार की कली–हिं० संज्ञा स्त्री० दाड़िम कलिका। (Buds of pomegranate) देखो—अनार।

अनार की छाल–हिं० संज्ञा स्त्री० दाड़िम त्वचा स०। क़श्रुर्रुम्मान–अ०। पोस्त अनार–फा०। ग्रेनेटाइ कॉर्टेक्स (Granati cortex) ले०। पामेग्रेनेट बर्क pomegranate bark–इं०। देखो—अनार।

अनार केबा–फा० खसखास, पोस्ता। (poppy seeds)

अनारकोटीन–इं० नारकोटीना Narcotina, नारकोटीन Narcotine। अवसन्नीन–हिं०। मुस्किरीन, मुखद्दीन–अ०।

इसके वर्ण रहित, चमकीले तथा बड़े बड़े रवे होते हैं जो जल में तो अविलेय पर ईथर वा उबलते हुये मद्यसार अथवा अम्लीय (विलायन) में विलेय होते हैं। इसमें सुन्नताकारक गुण न होने के कारण इसे "अनारकोटीन" अर्थात् अनव सन्नीन कहते हैं। यह परियाय निवारक (पुष्टि-पीरिआडिक) है और इस विचार से यह कीनीन के समान है। अस्तु, जूड़ी तापों (एग्यू) में इसे कोनीन के स्थान में वर्तते हैं।

मात्रा—१ से ३ ग्रेन तक।

अनारकोही–फा० पहाड़ी अनार जो अधिक अम्ल होता है।

अनारगुली–फा० गुलनार।

अनारतुर्श–फा० खट्टा अनार (Sour Pomegranate)

अनारदश्ती–फा० जंगली अनार। (Wild Pomegranate)

रुम्मानवर्री, मज़–अ०। तुह्फा महोदय के वचनानुसार हब्बुल् कुलकुल इसी का फल है और महशी तुह्फाने लिखा है कि अनारदश्ती गोरखपुर (संयुक्तप्रान्त) के आस पास बहुतायत से पैदा होता है। इसके तीन चार पत्ते भूमि से उत्पन्न होने के बाद ही पुष्प आ जाते हैं जो सुर्ख अनार के समान होते हैं और पत्ते कासनी के पत्तों के सदृश होते हैं।

अनारदाणा–राज० पु० दाड़िम बीज, अनार का बीज (Seed of pomegranate) देखो—अनार।

अनारदानह –
अनारदाना–हिं० संज्ञा पु० } अनार का बीज।

खट्टे अनार का सुखाया हुआ दाना। हब्बुर्रुम्मान अ०। (Punica Granatum, *Linn* (Seeds of Pomegranate) स० फा० इं०। देखो—अनार। (२) रामदाना।

अनारदानहे-तुश–फा० खट्टा अनारदाना (Seeds of sour pomegranate)

अनारदानहे-दश्ती–फा० हब्बुल् कुल्कुल (खार चिकना)। लु० क०।

अनारदानहे-शीरीं–फा० मीठा अनारदाना।

अनारपुष्प–हिं० पु० अनार का फूल। Punica granatum; *Linn* (Flowers of Pomegranate)

अनारवृक्ष–हिं० पु० अनार का पेड़। (Punica Granatum, *Linn*)

अनार मुश्क–फा० नारमुश्क, नागकेशर। (Mesua ferrea)

अनार मैखोश–फा० खट्टामिट्ठा अनार, स्वादमय दाड़िम (Pomegranate of a mixed taste of sour and sweet) देखो—अनार।

अनार विन्नतीस–रू० फांशरस्तीन। See-Fasharastina

अनार शीरी–फा० मीठा अनार। (Sweet Pomegranate) देखो—अनार

अनारस-पु० अनन्नास । Ananas sativus, *Mill* (Pine apple) रा० फा० इं० ।

अनार हिंदी-फा० श्री फल बिल्व बेल (Aegle marmelos) बेलगिरी इसी का गूदा है ।

अनारिक्ष-सं० आकाश (Sky)

अनारिक्ष जलम्-सं० क्ली० अन्तरीक्ष का वर्षा का जल ।

अनारी-हिं० वि० [हिं० अनार] अनार के रङ्ग का लाल ।

संज्ञा पु० (१) लाल रङ्ग की आँख वाला कबूतर । (२) एक पकवान । यह एक प्रकार का समोसा है जिसके भीतर मीठा या नमकीन पूर भरा जाता है ।

अनारीचह-फा० एक अप्रसिद्ध बूटी है (जूफरा भेद की)

अनाजवः-सं० पु०
अनाजव-हिं० संज्ञा पु० } (१) रोग (Disease) रा० नि० व० २० । (२) सिधाई का अभाव । टेढ़ापन । असरलता ।

अनार्तव-हिं० वि० [सं०] [स्त्री० अनार्तवा] बिना ऋतु का । बेमौसिम । अनवसर संज्ञा पु० स्त्रियों के ऋतु धर्म का अवरोध । रजोधर्म की रुकावट ।

अनार्त्तः-सं० त्रि० अकालज, बेसमय, बिना ऋतु । (Untimely)

अनार्त्तव जलम्-सं० क्ली० जो जल बिना ऋतु अर्थात चौमासे (वर्षाऋतु) के सिवा पौष आदि महीनों में बादलों द्वारा बरसता है उसे अनार्त्तव-जल कहते हैं यह प्राणियों में वातादि तीनों दोषों को कुपित करता है। अनार्त्तवं प्रमुञ्चति वारि वारिधरास्तु यत् । तत्त्रिदोषाय सर्व्वेषां देहिनां परिकीर्त्तितम् ॥ ; भा० पू० वारि० व० । वर्षा ऋतु के सिवाय अन्य ऋतु का जल अथवा वर्षा ऋतु के भी प्रथम वृष्टि का जल । यह जल पीने योग्य नहीं होता । वा० सू० ४ अ० श्लो० ७ ।

अनार्त्तवा-सं० स्त्री० हिं० वि० स्त्री० (Unmenstruating woman) जो ऋतुमती न हो रज: शून्या, वह स्त्री जिसे मासिकधर्म न होता हो यथा-"अनार्तवस्तदापंडो , सु० सं० ३ अ० ३८ 'अनार्त्तवास्तनौ पण्डौ खरस्पर्शौ च मैथुने । ,, मा० नि० ।

अनार्य-हिं० संज्ञा पु० [सं०] [स्त्री० अनार्या । संज्ञा अनार्यत्व, अनार्यता] (१) वह जो आर्य न हो । अश्रेष्ठ । (२) म्लेच्छ ।

अनार्य्यकम्-सं० क्ली० (१) अगर अगुरुकाष्ठ । Aloe wood इं० । हला० । (२) काष्ठागुरु रा० नि० व० १२ भा० पू० १ भा० क० व० । देखो—अगर ।

अनार्य्यजम्-सं० क्ली० अगर अगुरु । Aloe wood इं० रा० नि० ।

अनार्य्यतिक्तः-कः-सं० पु० चिरायता, भूनिम्ब । (Gentiana Cherayta, *Roxb*) अम० ।

अनार्ष-हिं० वि० [सं०] जो ऋषि प्रणीत न हो जो ऋषिकाल का बना हुआ न हो ।

अनालगोलम्-सं० पु० (Ductless gland) प्रणालीविहीन ग्रन्थि ।

अनालीकी-रू० अलरह, उतलजन । Blepharis Edulis *Pers*)

अनाविलः-सं० त्रि०
अनाबिल-हिं० वि० } निर्मल, स्वच्छ, साफ (Clean pure)

अनावृत-हिं० वि० [संज्ञा] [स्त्री० अनावृत्ता] जो ढँका न हो । अनावेष्टित । आवरण रहित । खुला (२) जो घिरा न हो ।

अनावंशः-सं० पु० मर्म्म विशेष । के० । (Amarmma) See-Marmma

अनाशप् पजम-ता० अनन्नास (Pineapple) स० फा० इं० ।

अनाशवादी-ता० गोभी । (Elephantopus scaber) इं० मे० मे० ।

अनाशोबदी-ता० गोभी । (Elephantopus scaber) फा० इं० २ भा० ।

अनासपण्डु-ते० अनन्नास (Pine apple) स० फा० इं०

अनासपुव्वु–ते० अनासफल हिं० । बादियाने खताई अ० फा० Illicium anisatum' *Linn* (Fruit of star anise) ले० । स० फा० इ० ।

अनासफल–हिं० सौंफ । अनसफल–द० । बादियाने बम्ब० । अण्णाशुप-पू ता० । बादियाने खताई अ० । राजियानहे-खताई बादियाने खताई, फा० अनासपुव्वु ते० । ननत पोएन-वर्मी० । Illicium anisatum, Linn (Fruit of Staranise) ले० । स० फा० इं० । मेमो० देखो– सौंफ ।

नोट—उपर्युक्त फलका एक प्रकार के पुष्प के साथ सादृश्यता होने के कारण किसी किसी ग्रन्थ में भ्रमवश इसका नाम "अनासफल,, के स्थान ने अनासफूल लिखा गया है। इसके अतिरिक्त किसी २ फारसी ग्रन्थ में शब्द 'अनास तथा अनानास अभेद रूप से उपयोग में लाये गए हैं। तदनुसार ष्टार एनीसी (अनासफल) का नाम गलतीसे गुले अनानास अर्थात् अनन्नास पुष्प लिखा गया है।

प्रभाव—इसका फल सुगन्धितयुक्त तथा वायु निस्सारक है। परिश्रुत करने पर इसमें से सौंफ (Anise) के सदृश एक प्रकार का तेल प्राप्त होता है इसी कारण यह सौंफ के स्थान में व्यवहृत होता है मद्य को सुस्वादु बनाने के लिये इसे उपयोग में लाते हैं।

अनासफूल–हिं० देखो— अनास फल ।

अनासाइकलस पायरीथ्रम–ले० अकरकरा । (Pellitory) फा० इ० १ भा० । मेमो० ।

अनासिकः–सं० त्रि० नासिकाहीन, नाक रहित बिना नाक का, नकटा । (Noseclipt)

अनासिक–हिं० वि० [सं० अ=नहीं+नासिका] अनासिका ।

अनासिर–अ० (ब० व०) उन् सुर (ए० व०) तत्व । देखो—एलीमेंट्स (Elements) इं० ।

अनासिर अर्बअह्–अ० तत्व चतुष्टय । युनानी लोगों के निकट केवल चार मूल तत्व हैं वे आर्यों के माने हुये पांच तत्वों में से आकाश तत्व को तत्व स्वीकार नहीं करते प्रत्युत वे इसे खला अर्थात् शून्य मानते हैं पर नवीन अनुसंधानों द्वारा यह बात भली भांति सिद्ध हो चुकी है कि आकाश शून्य नहीं प्रत्युत द्रव्यों की एक ऐसी दशा है जिसमें द्रव्य एक रूप होते हैं। इसको अंगेजी में ईथरिक (Etheric) कहते हैं। देखो—तत्व वा आकाश ।

अनासु–कना० अनरस, अनन्नास । (Ananas sativus)

अनासुप्पा–ता० बादियान खताई । सौंफ (Illicium anisatum, *Linn*)

अनासुप्पान–ता० बादियान खताई । सौंफ । (Illicium anisatum, *Linn*) इ० मे० मे० ।

अनास्टेटिका हीरोकंटीना–ले० कफेमरियम, कफे आयशा–फा० । गर्भफूल–हिं०, गु० । फा० इं० १ भा० । देखो—कफेमरियम (Kafemariyam)

अनाह–हिं० संज्ञा पु० देखो—अनाहः ।

अनाहतम्–सं० क्ली० }
अनाहत–संज्ञा पु० } (१) नूतन वस्त्र, नयावस्त्र (New cloth) अं० । (२) शब्द योग में वह शब्द वा नाद जो दोनों हाथों के अंगूठों से दोनों कानों की लवें बन्द करके ध्यान करने से सुनाई देता है। देखो—शब्दयोग । (३) हठ योग के अनुसार शरीर के भीतर के छः चक्रों में से एक। इसका स्थान हृदय रंग लाल पीला मिश्रित और देवता रुद्र माने गये हैं। इसके दलों की संख्या १२ और अक्षर 'क' से 'ठ' तक है ।

वि० (१) जिस पर आघात न हुआ हो। अक्षुब्ध । (२) अगुणित । जिसका गुणन न किया गया हो ।

अनाहत चक्रम्–सं० क्ली० हृदयचक्र, द्वादश-दल कमल । ज़फ़ीरह् क़ल्बिय्यह्–अ० । कार्डिएक प्लेक्सस (Cardiac plexus)–इं० । देखो—हृदयचक्र ।

अनाहत शब्दः-सं० पु० अनाहत चक्र में होने वाला शब्द।

अनाहद वाणी-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अनाहत+वाणी] (१) घट में होने वाली आवाज। (२) आकाश वाणी, देववाणी, गगनगिरा।

अनाह शूलम्-सं० क्ली० दर्द के साथ पेट का फूलना (Flatulent with pain)

अनाहारः-सं० पु० (१) भोजन का अभाव वा त्याग। आहाराभाव (Abstinence, starvation)। हिं० वि० (१) भूखा, निराहार। जिसने कुछ न खाया हो। (२) जिसमें कुछ न खाया जाए।

अनाहारी-हिं० पु० भूखा रहने वाला। भूखा। (Fasting)

अनाहूत-हिं० वि० अनिमन्त्रित, बिना बुलाया हुआ। बिना न्योता दिए।

अनाहः-सं० पु० रोग विशेष, आ(अ)नाह रोग, मलमूत्र रोधक व्याधि, अफरा, पेट फूलना, आध्मान। (Flatulence)

अनिकरा-ता० जिङ्गिनी, अजशृङ्गी, नेत्र शुद्धी-सं०। (Odina wodier) इं० मे० मे०।

अनिकेत-हिं० वि०
अनिकेता-सं० स्त्री० } गृहहीन, बिना घर का, स्थान रहित।

अनिगीर्ण-हिं० वि० [सं०] जो निगला न गया हो

अनिगुण्डुमणि-ता० रक्त कम्बल। (Adenanthera Pavonina)

अनिग्रह-हिं० वि० [सं०] पीड़ा रहित, नीरोग।

अनिच्छः-सं० त्रि० तृष इच्छा न हो। वै० निघ०। (Indifference)

अनिच्छा-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] वि० अनिच्छित अनिच्छुक] (१) इच्छा का अभाव। अरुचि। (२) अप्रवृत्ति।

अनितून-यु०
अनिधूम-यु० } सोआ हिं०। शूक-फा०। डिल (Dill) इं०। फा० इं० २ भा०।

अनिद्र-हिं० वि० [सं०] निद्रा रहित, बिना नींद का। जिसे नींद न आए।

संज्ञा पु० नींद न आने का रोग। प्रजागर।

अनिद्रा-हिं० स्त्री० निद्रानाश, नींद न आना। (Insomnia, sleeplessness)

अनिद्राजनक-निद्राहर, निद्रानाशक- निद्रा न्यूनकर।

अनिद्रान्तक-हिं० वि० निद्राजनक। (Hypnotic)

अनिपीपुल-द० पीपल वृक्ष, अश्वत्थ वृक्ष, (Ficus Religiosa) इं० मे० मे०।

अनिफ-अ० नासिका रोगी। (Nosediseased)

अनिमा-हि० संज्ञा स्त्री० देखो—एनिमा।

अनिमिषः-सं० पु०
अनिमेषः-सं० त्रि० } (१) मत्स्य, मछली। (A fish) त्रिका० मे० पचतुष्क। (२) क्षण रहित, निमेषशून्य।

अनिमिष-हिं० वि० [सं०] निमेष रहित। स्थिर दृष्टि। टकटकी के साथ देखने वाला।

क्रि० वि० [१] बिना पलक गिराए एकटक। (२) निरन्तर।

संज्ञा पु० मछली। (A fish)

अनिमेष-हिं० वि०, क्रि० वि० देखो—अनिमिष।

अनियारा-हिं० वि० [सं० अणि=नोक+हिं०-आर (प्रत्यय)] [स्त्री० अनियारी] नुकीला। कटीला। पैना। धारदार। तीक्ष्ण। तीखा।

अनिरुद्धम्-सं० क्ली०
अनिरुद्ध-हिं० संज्ञा पु० } (१) पशु आदि बाँधने की रज्जु विशेष।

(Rope, string)।—हिं० वि० अनिवारित, जो रोका हुआ न हो, अबाध। (Unobstructed)

अनिरुद्धपथम्-सं० क्ली० आकाश (Sky) रा०।

अनिर्दशा-हिं० वि० स्त्री० [सं०] जिसको बच्चा दिये दस दिन न बीते हों।

नोट—इस शब्द का व्यवहार प्रायः गाय के सम्बन्ध में देखा जाता है। ऐसी गाय का दूध पीना निषिद्ध है।

अनिर्मोल्या-सं० स्त्री० पिण्डिका, पृक्का-सं० । पिंडिङ्ग शाक-ब० । पुरी-हिं० ।Medicago esculenta, *Roxb* । रत्ना० ।

अनिर्वाणः-सं० पु० कफ । (Phlegm) वै० निघ० ।

अनिलः-सं० पु०
अनिल-हिं० संज्ञा पु० } (१) वायु, पवन, हवा (Air or wind) । (२) शेगुन गाछ-ब० । शाकतरु । रा० नि० व० २३ ।

अनिल-सिं० टेफ्रोसिया टिंक्टोरिया (Tephrosia tinctoria, *Pers*)-ले० । इसके पत्र रंग के काम में आते हैं । मेमो० ।

अनिलकपित्थकः-सं० पु० स्थूल आम्रातक । (Spondias mangifera) वै० निघ० ।

अनिलकारकः-सं० पु० कांजी-भेद । वै० निघ० । See--Kanji

अनिलघ्नः-कः-सं० पु० बहेरे का पेड़, विभीतक वृक्ष टर्मिनेलिया बेलेरिक (Terminalia belerica) ले० । रा० नि० व० ११ ।

अनिलज्वरः-सं० पु० वातिक ज्वर, वातज्वर । यह साम और निराम भेद से दो प्रकार का होता है । च० द० । See--Vatajvara

अनिलनियासः-सं० पु० पियालवृक्षः-सं० । नियबेरू चिरौंजी का वृक्ष--हिं० । Buchanania latifolia ले० । विवला--मह० । वै० निघ०

अनिलपर्य्ययः-सं० पु० वायु रोग (Nervous disease)

अनिलभुक्-सं० पु० सर्प, साँप, कीरा । स्नेक (Snake), सर्पेण्ट (Serpent)--इं० । वै० निघ० ।

अनिलरसः-सं० पु० (१) यह रस पांडु रोग में हित है । रस० र० ।

(२) ताम्रभस्म, पारदभस्म, गन्धक, वत्सनाग, प्रत्येक समान भाग लें चूर्णकर चित्रक के क्वाथ से भावना दें और चौथाई पहर तक मन्द अग्नि (लघु पुट) में पकाएँ ।

मात्रा—२ रत्ती ।

गुण—इसके सेवन से शोथ और पांडु दूर होते हैं । रस० यो० सा० ।

अनिलरिपुः-सं० पु० एरंड वृक्ष, अरण्ड वृक्ष, अण्डा (Ricinus communis) वै० निघ० २ भा० सन्धि० ज्व० चि० रास्नादि ।

अनिलसखः-सं० पु० अग्नि, आग ।फायर (Fire) इं० ।

अनिलहरम्-सं० क्ली० कृष्णागुरु, काली अगर। वै० निघ० Eagle wood (Aquilaria agallocha)

अनिला-सं० स्त्री० (१) नदी (River) (२) खटिका, फूल खड़ी, सेत खड़ी । (Chalk) र० मा० ।

अनिलाजीर्णम्-सं० क्ली० वाताजीर्ण । वा० सू० ८ अ० । See-Vatajirna

अनिलाटिका-सं० स्त्री० रक्त पुनर्नवा । See Rakta punarnava

अनिलान्तकः-सं० पु० इंगूदी वृक्ष । इङ्गोट, हिंगुआ (Balanitis roxburghii) रा० नि० व० ८ ।

अनिलामयः-सं० पु० (१) वायुरोग, वात व्याधि (Nervous disease) । (२) अजीर्ण

अनिलारिरसः-सं० पु० (१) पारद १ तो० गंधक २ तो० की कज्जली कर अरंड और निर्गुण्डी के रस से १-१ दिन खरल करके पुनः ताम्र के सम्पुट में रख कपरोटिकर बालुका यन्त्र में जंगली कंडे के चूर्ण की अग्नि दें । जब शीतल हो तब निर्गुण्डी, अरण्ड, चित्रक इनके रसकी भावना दे रक्खें ।

मात्रा—१ रत्ती ।

गुण—सेंधा नमक के साथ या सिर्व, घृत, त्रिकुटा, चित्रक के साथ खाने से वात रोग दूर होता है ।

(२) पारा, मैनसिल हल्दी, शुद्ध जमालगोटे के बीज, त्रिफला त्रिकुटा और चित्रक प्रत्येक समान लें और गन्धक पारे से दूना ले एकत्र चूर्ण करें फिर दन्ती, थूहर, और भांगरा इनके रस दूध और क्वाथ से भावना दें ।

मात्रा—१-२ रत्ती ।

गुण—इसके प्रयोग से रेचन होगा । जब रेचन हो चुके तब हलका पथ्य मठे के साथ दें। कोई ठंडी वस्तु न दें। फिर शरीर में शक्ति आ जाने पर उसी प्रकार उपर्युक्त रस को तब तक दें जब तक कि रोग शांत न होजाय। यह ८० प्रकार के वात व्याधियों को दूर करता है। रसः यो० सा० ।

अनिलाशिन्-सं० पु०
अनिलाशी-हिं० संज्ञा पु०
अनिलाषी:-सं० पु० } सर्प, सांप(Aserpent) । हिं० वि० हवा पीकर रहने वाला । (Aireater)

अनिलासः-सं० पु० कृष्णकान्ता (Clitoreaternatea) देखो अपराजिता ।

अनिलेकायी-कना० हड़,०हरीतकी । Terminalia chebula) इं० मे० मे० ।

अनिलोचित:-सं० पु० नीलमाष, राजमाष, काली उड़द (Doli chos sinensis) वै० निघ० ।

अनिष्ट-हिं० वि० [सं०] जो इष्ट न हो। इच्छा के प्रतिकूल । अनभिलषित । अवांछित । संज्ञा पु० अहित । हानि ।

अनिष्टकर-हिं० वि० [सं०] [स्त्री० अनिष्टकरी] अपकारक, अहितकारी, अनिष्ट करने वाला, हानिकारक, अशुभकारक ।

अनिष्टा,(ष्ठा)-सं० स्त्री० नागबला, गुलसकरी। (Sida spinosa) रा० नि० ।

अनिस-फ्रें० राजियानह्-फा० राजियानज अ० । Aniso (Pimpinella anisum'Linn.) ले० फां० इ० २ भा० ।

अ (आ) निसबाईवेरेल-जर० सौंफ । (Pimpinella anisum) इं० मे० मे० ।

अनिःसारा-सं० स्त्री० कदली वृक्ष, केले का पेड़ (Musa sapientum *Linn*) केला गाछ वं० । रा० नि० व० ११ वै० निघ० ।

अनिसैक्री-फ्रें० सुफेद जीरा, श्वेत जीरक । (Cuminum cyminum) इ० मे० मे० ।

अनिसो किलस कारनोसस्-ले० पञ्जीरी का पात सीता की पंजीरी । हिं० । पंजीरा का पत्ता द० । स० फा० इं० । फ्रां० इं० ३ भा० । मेमो० इं० मे० मे० । इसके पत्र एवं पौधे औषध कार्य में आते हैं ।

अनिसोमेलिस ओवेटा-ले० गोंदुर । मेमो० । (Malabar catmint) इं० । मोगवीर-द० इं० मे० मे० ।

अनिसोमेलीस डायरिटका-ले० मोगवीर इं० मे० मे० ।

अनिसोमेलीस फ्रटिओसा-ले० मोगवीर । इं० मे० मे० ।

अनिसोमेलीस मालावेरिका-ले० भूताङ्कुश सं० मोगवीरे का पत्ता-द० मालाबार कैट मिण्ट (Malabar catmint) इ० । स० फा० इं० गावजुवान-हिं० । मोगविरकु, मभेरी, चीना, रच भेरी ते० । पेमैरुत्ति-ता० । मेमो० ।

अनिक्षुः-सं० पु० इक्षु विशेष (Saccharum spontneus) खागड़ा बं० । रा० मा० । आनाखुः । रत्ना० ।

अनी-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अणि=अग्रभाग, नोक] नोक, सिरा, कोर, (The point or edge of any sharp instrument) वि० तीखा, पैना, नोक ।

अनी-बर० (Red) रक्त, लाल, हिं० । सुर्ख, अ० मर अ० ।

अनीक-अ० (Neck' cervix) ग्रीवा, । धड़ और शिरका मध्यस्थ कशेरुका ।

अनीकरूस-यु० किर्मिज ।

अनीकस-रु० शिगूफा, कली । (Bud)

अनीकस्थः-सं० त्रि० हस्थिशिक्षाविचक्षण, कोचवान् मे०चतुष्कं । (An elephantdriver)

अनीकाही-स० स्त्री० एक वृक्ष है । (A tree)

अनीकिनी-हिं० स्त्री० सेना, भीड़, कटक, सैन्य । (Anarmy'a force)

अनीकिनी-हिं० सं० स्त्री० [सं०] कमलिनी । पद्मिनी । नलिनी ।

अनीची-तु० मोती (pearl)

अनीतरून-रू० गंदना के समान एक बूटी है जो कठोर भूमि पर उगती है A plant like Gandana

अनीदोतूस-यु० माजूनात (Confectiones) देखो—मअ्जून।

अनीनशन्-सं० विनाश कर देते हैं। अथर्व०।

अनीमून-इं० सक़ायिकुन्नुअ् मान, शकीक-अ०। वायुपुष्प-सं०। पल्सटिल्ला (pulsatilla) ले०। फा० इं० १ भा०।

अनीमून आव्ट्यजीलोबा-ले० शकीक-अ०। वायुपुष्प=सं०। रत्तनजोत, पाडर-पं०। फा० इं० १ भा०। इं० मे० प्लां०। मेमो०।

अनीमून डिसकलर-ले० रत्तनजोग, पाडर-पं०। काकरूज-कुमा०। इं० मे० मे०।

अनीमून पल्सेटिल्ला-ले० शकायिकुन्नु अ्मान-अ०। वायुपुष्प-स०। (Pulsatilla)।

अनीमून हार्टेन्सिस्-ले०। विस्तान अफरोज-फा०। महूरा, कल्गा।

अनीमून हेपेटिका-ले० लीवर वर्ट (Liver wort)-इं०।

अनीमोनिक एसिड-इं० तेजावे-शकायिकुन्नु अ्मान अ०। वायुपुष्पाम्ल-स०। फा० इं० १ भा०।

अनीमोनीन-इं० जौहर शकीक -अ०। वायुपुष्प सत्व-सं०। फा० इं० १ भा०।

अनीमोनोल-इं० पीत वायुपुष्प-तैल (Yellow anemone oil)। इं० फा० १ भा०।

अनीली-सं० स्त्री० काशपृण। A species of grass (Saccharum spontaneum) र० मा०। देखो—काश।

अनीलेमाट्युबेरोसा-ले० स्याह मुसली। मेमो०।

अनीलेमा स्कैपीफ्लोरम्-ले० स्याह मुसली। कुरेली-बं० सीसमुलिया-गु०। इं० मे० प्लां०। देखो—मुसली।

अनीसून-
अनीसूँ- } हिं० सज्ञा पु० [यू०] विलायती रन्दनी। सोफ रूमी-उ०। अनीसून (anison) यु०। एनिस फ्रुट (Anise-Fruit), एनिस (Anise), एनिसीड (Ani-seed)-इं०। एनिसाई फ्रुकटस (Anisi Fructus), पिम्पिनेला एनिसम (Pimpinellaanisum Linn) ले०। एनिस (Anis)-फ्रै०। राजियानजुरूमी, राजियान जुश्शामी (बीज) बज्रुराजियान जुरुमी, बज्रुराजियान जुश्शामी, हब्बुल् हलो, कमूनुल् हलो-अ०। बादयान रूमी-फा०। विलायती रंधूनी-बम्ब०।

छत्रक वा शतपुष्पा वर्ग
(*N. O. Umbellijeroe*)

उत्पत्ति स्थान—यह एक वार्षिक पौधा है जिसका मूल उत्पत्तिस्थान मिश्र और लीबांट है, परन्तु, अब यूरूप में विशेषकर रूस और स्पेन, हालैंड, बलगेरिया, फ्रांस, टर्की, साइप्रस तथा अन्य प्रदेशों में इसकी कृषि होती है। फारस और भारतवर्ष में यह सयुक्तप्रांत और पजाब के विभिन्न भागों तथा ओड़ीसा के थोड़े भाग में पाया जाता है। अनीसूँ अब उत्तरी भारतवर्ष में बोया जाता है। यद्यपि अब भारतवर्ष की भूमि इसकी प्रकृति के अनुकूल हो गई है तो भी वह इसका वास्तविक जन्मस्थल नहीं है।

सज्ञा निर्णायक नोट—इंडियन मेडिसिनल प्लांट्स इंडियन मेटीरिया मेडिका और इंडिजिनस ड्रग्स ऑफ इण्डिया इत्यादि ग्रन्थों में से किसी में इसका संस्कृत नाम मधुरिका लिखा है तो किसी में शतपुष्प वा शताह्वा तथा किसी में उभय नामोंका उल्लेख आया है जो सर्वथा भ्रमकारक है। अनीसून उनसे भिन्नऔषधि है। मधुरिका या मिश्रेया अर्थात् सौंफ (बादियान) Fennel (Foeniculum Capillaceum or Vulgare) शतपुष्प अर्थात् सोआ (शिवित्त) Dill (peucedanum Graveolens), बादियाने खताई staranise (Illicium Verum आदि और कतिपय अन्य औषधियों में बहुत कुछ पारस्परिक सादृश्यता के कारण प्रायः ग्रन्थों में सज्ञा निर्णय में भूल किया गया है। इसकी विस्तृत व्याख्या के लिए यथा स्थान देखो। बादियान रूमी इस लिए कहा जाता है कि इसकी शकल बादियान (सौंफ) एवं जीरा के सर्वथा समान होती है।

इतिहास—अनीसून अति प्राचीन ओषधियों में से है। अतएव सावफरिन्तुस (Theophrastus) और दीसकूरीदूस (Dioscorides) आदि यूनानी तथा प्लाइनी (Pliny) प्रभृति रूमी चिकित्सकों ने भी इसका उल्लेख किया है। पर, ऐसा ज्ञात होता है कि प्राचीन हिन्दुओं को इस औषधि का ज्ञान नहीं था, क्योंकि आयुर्वेदीय ग्रन्थ में इसका उल्लेख नहीं पाया जाता है। अनुमान किया जाता है कि मुसलमान आक्रमणकारी इसे फारस से अपने साथ लाए जहाँ से कि अब भी यह बम्बई के बाजारों में लाया जाता है।

वानस्पतिक वर्णन—इसका पौधा लगभग १ गज ऊँचा होता है। शाखाएँ घनाकार पतली होती हैं। पत्र पला-पत्रवत् किंतु छोटे एवं सुगन्धियुक्त होते हैं। प्रत्येक शाखा के सिरे पर श्वेताभ पुष्प होते हैं, जिनके भीतर कोंचासूत्त जीरा के समान छोटे २ बंज होते हैं। अनीसूँ के फल का आकार एक सा नहीं होता। उत्तम भूमि में होने वाला २ से $\frac{1}{10}$ इं० लंबा होता है। सामान्यतः ये $\frac{1}{4}$ इं० लंबे और $\frac{1}{12}$ इं० चौड़े होते हैं। ये किसी प्रकार गोल; अंडाकार; किनारों पर से दबे हुए, लोमश, खाकी या भूरे रंग के और दो भागों में विभक्त होते हैं। इनके संधिस्थल पर एक छोटी सी डंडी होती है। प्रत्येक फल पर दस उभरी हुई रेखाएँ होती हैं। ये सौंफ से छोटे और रंग में उनकी अपेक्षा हरित एवम् श्यामाभायुक्त पीतवर्ण के होते हैं। इनकी गंध अत्यन्त प्रिय होती है। शुष्क बीजों को कूटने और फटकने पर इनके कोष भूसी की तरह पृथक् हो जाते हैं। इनमें सर्वोत्तम प्रकार वह है जो आकार में अपेक्षाकृत वृहत् एवं तीव्र सुगंधिमय हो और जिनके ऊपर से भूसी के समान छिलका न उतरे। क्योंकि इनका प्रभाव अधिकतया इनके कोष में ही है। स्वाद—सुगंधियुक्त अत्यन्त प्रिय एवं मधुर।

परीक्षा—यद्यपि अनीसून के बीज, शतपुष्प (Dill), विलायती जीरा (करावया), सौंफ (Fennel) और बूकरान (Conium) के समान होते हैं। तो भी अपने विशेष वानस्पतिक लक्षणों द्वारा पहिचाने जा सकते हैं।

रासायनिक संगठन—फल में २ से ३ प्रतिशत उड़नशील तैल होता है जिसको अनीसून का तेल कहते हैं। इसमें एनीथोल (अनीसून सत्व) या एनिस कैम्फर (Anise camphor) ८० प्रतिशत, एनिस एल्डीहाइड (Anisealdehyde) तथा मीथिल-केविकोल (Methyl chavicol) होते हैं।

प्रयोगांश—औषध तुल्य इसके बीज (फल) ही अधिकतर व्यवहार में आते हैं।

प्रकृति—तीसरी कक्षा में रूक्ष और जालीनूस के दो भिन्न उदाहरणों के आधार पर इसकी उष्णता दूसरी या तीसरी कक्षा में है। परन्तु, मफ़्रजनुल्अद्वियह् के लेखक के मतानुसार यह दूसरी कक्षा में उष्ण और तीसरी कक्षा में रूक्ष है।

प्रतिनिधि—सौंफ; आमाशय के लिये सौंफ और कामोद्दीपन हेतु तुख्मअजुग्ह्। हानिकर्त्ता—तथा दर्पघ्न—वस्ति को हानिकर है और रुब्बुल्सूस (मुलेठी के सत्) से उसका सुधार होता है। उष्ण प्रकृति वालों में शिरःशूल उत्पन्न करता है और सिकञ्जबीन से वह दूर होता है। मात्रा—१॥ मा० से ३ मा० तक। शर्बत की मात्रा ७ मा० से ३ मा० है।

औषध-निर्माण—यूनानी चिकित्सा में इसके हर प्रकार के मिश्रण, यथा क्वाथ अर्क, तैल, घनसत्व (रुब्ब) मअ्जून, शर्बत, चूर्ण, अनुलेपन, हुमूल (पिचुक्रिया) और धूनी (धूपन) प्रभृति व्यवहार में आती है। इसमें से कतिपय मिश्रण निम्न प्रकार हैं—

(१) अनीसुन का मिश्रित क्वाथ—अनीसून, हुल्बह् (मेथिका), जोविया सुर्ख प्रत्येक १४ मा०, सुदाब १०॥ मा०। निर्माण-विधि—सबको तीनपाव पानी में क्वाथ करें। जब एक

पाव रह जाए तब उतार कर साफ करें। सेवन-विधि—थोड़ा गुड़ मिला कर सेवन करें। गुण—आर्त्तवप्रवर्तक और अवरोध उद्घाटक है।

(२) अर्क अनीसून—२० तो० अनीसून को जौकुट करके १ सेर जल में भिगोदें। चौबीस घंटे पश्चात् यथाविधि अर्क खींचें।

मात्रा व सेवन विधि—२ से ४ तो० तक दिन में दो या तीन बार सेवन करें।

गुण—बालकों के लिये विशेष कर लाभप्रद है। आमाशय, यकृत तथा आन्त्र के वायुजन्य रोगों के लिये अत्यन्त लाभप्रद है।

(३) अनीसून का मिश्रित तेल—अनीसून ५ तो०, अकरकरा १ तो०, शिगूफा इज़्ख़िर १ तो०, दारचीनी १ तो०, ऊद सलीब ६ मा० और कुचिला ३ मा०।

निर्माण विधि—सम्पूर्ण द्रव्यों को १० तो० तिल तेल में जला कर साफ करलें और यथाविधि मालिश करें।

गुण—पक्षाघात, शैथिल्य, अवसन्नता एवं आवयविक विकार के लिए लाभदायक है।

(४) अनीसून का मिश्रितचूर्ण—अनीसून ५ तो०, अजवायन ५ तो०, सोआ २ तो०, काला नमक २ तो०, और नौसादर ४ मा०।

निर्माण-विधि—सब औषधियों को कूट छान कर चूर्ण बनाएँ।

मात्रा व सेवन विधि—इसमें से ३ मा० चूर्ण दिन में दो बार सेवन करें।

गुण—आमाशय, यकृत्, आन्त्र और जरायु के वायुजन्य वेदनाओं में लाभप्रद है। मूत्र लाता एव आर्तव की प्रवृत्ति करता है।

(५) शर्बत अनीसून (मिश्रित) अनीसून ३५ मा०, अफ्सन्तीन १७॥ मा०, तुख्मकरफ्स १०॥ मा०, तज ७ मा०, गुलाब ३५ मा० और बालछड़ २४॥ मा०।

निर्माण विधि—सब को अधकुट करके १ सेर पानी में क्वथित करें। जब आधा रह जाय मल छान कर तीन पाव मिश्री मिलाकर शर्बत की चाशनी करें। शीतल होने पर ७ मा० मस्तगी रूमी बारीक पीस कर ऊपर छिड़क कर सेवन करें।

मात्रा—१॥ तो० से २ तो० तक।

गुण—आमाशय नैर्बल्य में लाभप्रद है। आमाशय आध्मान एवं शूल को दूर करता है। प्लीहा एवं यकृत् के रोध का उद्घाटक है। तथा पेशाब जारी कराता है।

एलोपैथिक चिकित्सा में यह निम्न रूपों में प्रयुक्त होता है।

आफिशल योग

(*Official proparations*)

(१) एनिसाइ फ्रकटस Anisi Fructus)-ले०। एनिस फ्रूट (Anise Fruit) -इं०। अनीसून के बीज।

(२) एक्वाएनिसाई (Aqua anisi) -ले०। एनिस वाटर (Anise water) -इं०। अर्क अनीसून, अर्क बादियान रूमी।

निर्माण विधि—एनिसफ्रूट (अनीसून के बीज) १ पौंड, पानी २ गेलन, अनीसून को कुचलकर और पानी में भिगाकर एक गैलन (८ पाइंट) अर्क खींचें। मात्रा—आधा से १ फ्लुइड आउंस=(१४.२ से ५६.८ सी० सी०) एक वर्ष के बालक को १ से २ ड्राम।

(३) आलियम एनिसाइ (Oleum anisi)-ले०। आइल आफ एनिस (Oil of anisi)-इं०। अनीसून तैल-हिं०। जैत अनीसून-अ०। रोगन अनीसून-फा०।

यह एक उड़नशील तैल है जो एनिस फ्रूट (अनीसून) से अथवा स्टार एनिस (अनीसून नज्मी, बादियान ख़ताई) से प्रस्तुत किया जाता है। (यह दोनों आफिशल हैं)।

लक्षण—यह एक वर्ण रहित वा किञ्चित् पीत वर्ण का तैल है जिसका स्वाद एवम् गंध अनीसून के समान होती है।

आपेक्षिक गुरुत्व ९७७ से ९८३ तक। १००° से १५०° शतांश के ताप पर इसके रवे बन जाते हैं।

रासायनिक संगठन—इसमें (१) ७५ प्रति शत एनीथोल (अनीसून सत्व), (२) एनिसिक एल्डिहाइड और (३) मीथिल केविकोल होता है।

प्रभाव—आक्षेपहर और वायुनिस्सारक।

मात्रा—आधा से ३ बूंद (·०३ से ·२ घन शतांशमीटर)।

यह टिंकचूरा कैम्फोरी कम्पाजिटा, टिंकचूरा ओपियाई एमोनिएटा और निम्नोल्लिखित मिश्रणों में पड़ता है।

(४) स्पिरिटस एनिसाई (Spiritus anisi)-ले०। स्पिरिट आफ एनिस (Spirit of anise)-इं०। रूह अनीसूँ, रूह बादियान रूमी।

निर्माण विधि—ऑइल ऑफ एनिस १ भाग, एलकोहल (९०%) ९ भाग दोनों को मिलालें। यदि निर्मल न हो तो विचूर्णित अभ्रक मिलाकर हिलाने के बाद छान लें।

प्रभाव—आक्षेपहर और वायुनिस्सारक।

मात्रा—५ से २० बूंद=(·३ से १·२ घन शतांशमीटर)। एक वर्ष के बालक को ५ बूंद।

नाट आफ़िशल योग
(Not Official Preparations)

(१) एलिक्सर एनिसाई (Elixir anisi)-ले०। एनिसीड कॉर्डियल (Aniseed Cordial)-इं०। अक्सीर अनीसून, मुफर्रिह अनीसून।

निर्माण विधि—एनिथोल ३५ भाग, आइल आफ फेनेल ·५ भाग, स्प्रिट आफ बिटर आमन्ड १·२५ भाग। एलकोहल (९० प्रतिशत) २१ भाग, सीरप ६२·५ भाग, मैग्नेशियम कार्बोनेट १·५ भाग डिस्टिल्ड वाटर आवश्यकतानुसार या इतना जितने में सारी औषध पूरी १०० भाग हो जाए।

मात्रा—मध्यम मात्रा बालकों के लिये १५ बूंद=(१ घन शतांशमीटर)।

(२) एसेंशिया एनिसाई (Essentia anisi)-ले०। एसेन्स आफ एनिस (Essence of anise)-इं०। रूह अनीसून, रूह बादियान रूमी।

निर्माण विधि—आइल आफ एनिस १ भाग रेक्टिफाइड स्पिरिट ४ भाग, दोनों को मिलालें। (ब्रि० फा० सन् १८८१ ई० के अनुसार)

नोट—उपर्युक्त स्पिरिट्स एनिसाई की अपेक्षा इस एसेन्स की शक्ति लगभग द्विगुण है।

(३) एनिसिक एसिड (Anisic acid) अनीसूनाम्ल, अनीसून की तेजाब। हम्ज़ुल् अनीसून, तेजाब बादियान रूमी।

अनीसून के तैल वा सत्व को आक्साइड (उष्मद) करने से यह अम्ल प्राप्त होता है। इसके चमकदार वर्ण रहित एवं सूचिकाकार, पतले रवे होते हैं।

(४) सोडियम् एनिसेट (Sodium anesate) यह एक रवादार एवं सूक्ष्म सुगन्धिमय चूर्ण होता है जो सोडियम को एनिसिक एसिड में मिलाने से बनता है।

घुलनशीलता—यह एक भाग, ५ भाग जल में और एक भाग, २४ भाग एलकोहल (९० प्रति शत) में विलेय होता है।

नोट—कहते हैं कि एनिसिक ऐसिड (अनीसूनाम्ल) और सोडियम् एनिसेट सैलिसिलिक एसिड के समान पचन निवारक और ज्वरघ्न प्रभाव रखते हैं।

एनीथोल (Anethol)
अर्थात्
अनीसून का सत्व

एनीथोल (Anethol)-ले०। एनिस कैम्फर (Anise Camphor)-इं०। अनीसून सत्व, अनीसून कर्पूर-हिं०। जौहर अनीसून काफूर अनीसून। यह स्टियरोप्टीन अर्थात् बाले टाइल या उड़नशील तैल का सांद्रांस है। यह अनीसून तैल तथा बादियान खताई हर दो तैलों से प्राप्त होता है।

नोट—बालेटाइल आंइल अर्थात् अस्थिर तेल में जो जम जाने वाली वस्तु होती है उसको डाक्टरी परिभाषा में स्टियरोप्टीन कहते हैं जिसका

सामान्य उदाहरण कर्पूर है। अतएव अनीसून सत्व को भी अंगरेजी में एनिसाई कैम्फर अर्थात् अनीसून का कपूर कहते हैं।

लक्षण—एनीथोल की श्वेत रवेदार डलियाँ होती हैं जिनसे अनीसून की तीव्र सुगन्धि आती है। स्वाद—किञ्चिन्मधुर। यह ६८° फारनहाइट के उत्ताप पर पिघल जाता है। द्रव रूप में यह वर्ण रहित होता है और इसमें से सूर्यरश्मि बक्रीभूत होकर गुजरती है।

विलेयता—यह एक भाग लगभग ३ भाग ऐलकोहल (६० प्रतिशत) में विलेय होता है।

मात्रा—१ से २ बूंद=(·०६ से ·१२ घन शतांशमीटर)

अनीसून के प्रभाव तथा उपयोग

यूनानी मतानुसार—(१) यह वृक्क, वस्ति जरायु एवं प्लीहा व यकृत के अवरोधों का उद्घाटक है। क्यों कि यह चरपरा और तेज है और इनका कर्म रोधोद्घाटन है।

(२) अपने संशोधक, विलायक और उत्तापजनक प्रभाव के कारण यह वायुनिस्सारक है, विशेषकर जब यह भुना हुआ हो। क्योंकि भूनने से इसकी आर्द्रता कम हो जाती है एवं इसकी तीक्ष्णता बढ़ जाती है।

(३) मुख तथा हस्त पाद के मंदशोथ के लिये लाभदायक है। क्यों कि यह प्रवर्त्तनकर्ता है और अवरोधउद्घाटन एवं किञ्चित् सकोच द्वारा यकृत को शक्ति प्रदान करता है।

(४) नेत्र में लगाने से पुरातन सबल रोगों को लाभदायक है। क्यों कि यह उसके माद्दा को लय करता है।

(५) शिर: शूल होता हो तथा शिर चकराता हो, ऐसी दशा में इसका नस्य एवं धूपन (धूनी) अत्यन्त गुणदायक है। क्यों कि यह उनके माद्दों को लय करता है।

(६) यदि इसको गुलरोगन में खरल करके कान में डालें तो अन्दर के थोड़े संकोच के कारण ठोकर या चोट के द्वारा उत्पन्न हुये कर्ण क्षत को अच्छा करता है और विलायक शक्ति से कर्णशूल दूर करता है।

(७) रोध उद्घाटन तथा उष्मा बाहुल्य से मूत्र, आर्तव और जरायुस्थ आर्द्रता का रेचक है।

(८) श्लेष्मज तृषा को प्रशमन करता है। क्योंकि यह श्लेष्माओं को पिघलाता एवं लय करता है।

(९) स्तन्यजनक एवं शुक्रवर्द्धक है क्योंकि आहारीय पथों को मुष्क तथा स्तन की ओर उद्घाटित कर देता है।

(१०) विषदोषघ्न है। क्योंकि मूत्र तथा आर्त्तव के प्रवर्त्तन द्वारा स्रोतों को विष से शुद्ध कर देता है।

(११) प्रायः यह उदरीय विष्टंभ उत्पन्न कर देता है। क्योंकि यह रुक्षताजनक एवं प्रवर्तक है और आहार को अवयवों की ओर प्रविष्ट कर देता है। जिससे आँत्र में रुक्षता उत्पन्न हो जाती एवं कब्ज हो जाता है। नफी०

नव्यमत—एलोपैथिक मेटिरिया मेडिका (एनिथम तथा एनिशम) डिल (सोआ, शतपुष्प), एनिस (अनीसून), कोरिएडर (धान्यक), फेन्नेल (सौंफ मधुरिका) और कारवे अर्थात् करावे (Caraway) प्रभाव में समान हैं। ये सशक्त पचननिवारक हैं। अधिक मात्रा में ये सर्वाङ्गीय उत्तेजक हैं तथा विरेचक औषधों के ऐंठन के निवारणार्थ वायुनिस्सारक रूप से और बालकों के उदरशूल एवं आध्मानजन्य पीड़ा जन्य पीड़ा के लिये इनका व्यवहार किया जाता है इस हेतु अनीसून अधिकतर उपयोग में आता है। सम्भवतः इन अन्तिम दशाओं में ये परावर्तित क्रियाद्वारा आक्षेपहर प्रभाव करतेहैं। थोड़ी मात्रा में इससे आमाशयिक रस का और सम्भवतः अग्न्याशयिक रस का भी स्राव बढ़ जाता है। श्वांस द्वारा निःसरित होते समय श्वांसोच्छ्वास सम्बन्धी कलाओं को उत्तेजित कर इन सबका निर्बल कफघ्न (श्लेष्मानिस्सारक) प्रभाव होता है। पूर्ण (वयस्क) मात्रा में इनमें मन्द विष

जनक शक्ति है। किंतु यदि इनको अन्तःक्षेप द्वारा सीधे रुधिराभिशरण में पहुचाया जाए तो इनका सशक्त हृदयावसादक प्रभाव होता है। (सर० वि० हिटला)

डा० के० एम० नदकारणी—फल जिनसे अनीसून के बीज तैयार किये जाते हैं, अजीर्ण रोग की एक विश्वस्त औषध है अनीसून के फल व तेल की सुगन्धि दीपन पाचन और वायु निस्सारक प्रभाव का बड़ा आदर किया जाता है। सब उड़नशील तेलोंके सदृश इसको तेल उत्तेजक एवं कण्ठ्य है। अध्मान जनित उदरशूल तथा शिरःशूल की अवस्था में शिर में इसके तेल का स्थानिक प्रयोग होता है इसके बीज सुपारी के साथ चबाए जाते हैं और इसकी चटनी आहार में काम आती है आन्त्रविकार एवं वायुप्रणालीय प्रतिश्याय में भी विशेषकर बालकों में जबकि उग्रावस्था व्यतीत हो चुकी हो उस समय यह उपयोगी होता है। अनीसून के बीज आधा ड्राम शर्करा तथा हरीतकी प्रत्येक १—१ ड्राम। इनका चूर्ण उत्तम कोष्ठमृदुकर (Laxative) है। अनीसून के बीज और करावया (Caraway) को सम भाग ले भूनकर चाय की चम्मच भर की मात्रा में भोजनोपरांत सेवन करें। यह उत्तम पाचक है। चूर्ण किये हुये बीज की मात्रा १० से ३० ग्रेन (५—१५ र०) है। शीतकषाय एवं परिस्रुत जल (८० में १) की मात्रा १—२ आउंस (आधा से १ छटांक) तेल की मात्रा ४ से २० बूंद शर्करा पर डाल दें। (इं० मे० मे०)

अनु–उप० [सं०] जिस शब्द के पहिले यह उपसर्ग लगता है उसमें इन अर्थों का संयोग होता है। (१) पीछे। जैसे, अनुगामी, अनुकरण। (२) सदृश। जैसे, अनुकाल, अनुकूल, अनुरूप अनुगण। (३) साथ जैसे, अनुकम्पा, अनुग्रह, अनुपान (४) प्रत्येक। जैसे अनुक्षण, अनुदिन, (५) वारम्बार। जैसे—अनुगायन, अनुशासन संज्ञा पु० दे० अणु। इसके विपरीत अनि, आता है।

अनुक:–सं० पु०
अनुक–हिं० संज्ञा पु० } (Cupidinous Lustful) कामुक, कामातुर, कामी' विषयी। अ०।

अनुकदली–सं० पु० कदली विशेष केला लोखण्डी केल मह०। A Plantain tree

अनुकम्पा–हिं० वि० (Tenderness) दया कृपा।

अनुकर्णम–सं० क्ली० कर्ण समीप, कान के पास। वा० शा० ४ अ०।

अनुकर्ष–हिं० संज्ञा पु० [सं०] आकर्षण, खिचाव।

अनुकर्षणम्–सं० क्ली०
अनुकर्षण हिं० संज्ञा पु० } (१) पानपात्र। (a glass, a drinking vessel) द्वारा० (२) अनुकर्म, अनुकर्षण खिचाव।

अनुकल्प:–सं० पु० किसी औषध के अभाव में उक्त औषध के गुण के समान अन्य औषध का ग्रहण प्रतिनिधि या बदल। (an alternative) इं०।

अनुकूट प्रवर्द्धन–हिं० संज्ञा पु० (JugularProcess)

अनुकूल–हिं० वि० सात्म्य, मुआफिक (Favourable)

अनुकूलका–सं० स्त्री० लघुदन्ती क्षुद्रदन्ती, जमाल गोटा भेद वै० निघ०। Croton Tiglium *Linn* (the small var)

अनुकूलन–हिं०
अनुकूलना–हिं० क्रि० स० } (१) (Accomodation) अप्रतिकूल होना मुआफिक होना (२) पक्ष में होना, हितकर होना।

अनुकूलसन्धि–सं० पु० अल्पसन्धि (Amphiarthrosis yielding joint)

अनुकूला–सं० स्त्री० ह्रस्व (लघु) दन्ती वृक्ष, क्षुद्र दन्ती रा० नि० व० ६।

अनुकूलिनी–सं० स्त्री० क्षुद्रदन्ती। Croton Tiglium, *Linn* (A smallvarof)

अनुकंपा-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] [वि० अनुकंपित] सहानुभूति ।

अनुक्त-सं० हिं० वि० जिसका वर्णन न किया गया हो । जो न कहा गया हो । (Not Spoken, not told),

अनुक्त द्रव-हिं० वि० स्निग्ध, जहाँ स्वरसादि पतले पदार्थों का वर्णन न आया हो ।

अनुक्तपरिमाण-सं० त्रि० हिं० वि० जहाँ द्रव्यों का परिमाण (मान) न दिया गया हो ।

अनुक्रम-सं० पु० विधान, कायदा । (method-order),

अनुखाल-हिं० पु० खाई, खाड़ी, नाला । (A creek),

अनुगः-सं० पु०
अनुग-हिं० संज्ञा पु० } परिचारक, सेवक ।
(Anattendaut) रत्ना० । हिं० वि० (following) पश्चाद्गामी, पीछे चलने वाला, अनुगामी, अनुयायी, पैरोकार ।

अनुगत-सं० पु०,-हिं० वि० [संज्ञा अनुगति] (१) पीछे पीछे चलने वाला, आश्रित, अनुगामी, अनुयायी (Dependanton) । (२) अनुकूल । मुआफिक ।-हिं० संज्ञा पु० सेवक, अनुचर ।

अनुगमन-हिं० संज्ञा पु० [सं०] पीछे चलना । अनुसरण । (२) समान आचरण । (३) सहवास । संभोग ।

अनुगामी-हिं० वि० [सं०] [स्त्री० अनुगामिनी] (१) पीछे चलने वाला, पश्चाद्वर्त्ती (Following) (२) समान आचरण करने वाला । (३) सहवास वा सम्भोग करने वाला ।

अनुघात-हिं० संज्ञा पु० [सं०] नाश । संहार ।

अनुचिबुक-हिं० संज्ञा पु० ठोढ़ी या ठुड्डी के नीचे का भाग ।

अनुच्छ्वास-सं० पु० श्वासरोध; सांस बन्द होना, दम बन्द होना दम घुटना । इक्तिनाक-अ० (Asphyxia)

अनुज-हिं० वि० [सं०] जो पीछे उत्पन्न हुआ हो —संज्ञा पु० [स्त्री० अनुजा] (१) छोटा भाई (२) एक पौधा । स्थलपद्म ।

अनुजम्-सं० स्त्री० (Root stock of Nymphæa lotus) प्रपौण्डरीक (कमल नाल) नामक गंध द्रव्य विशेष । पुण्डरिया-व० । रा० नि० व० १२ ।

अनुजस्-सं० पु० पुण्डरिया, कमल नाल । (The root stalk of Nymphæa lotus)

अनुजा-सं० स्त्री० त्रायमाणलता । गोओ।लियालता वं० रा० नि० व० ५ । बत्तादुमुर-वं० । भा० पू० १ भा० गु० व० । (Thaliclrum Fliosam । देखो—त्रायमाणा ।

अनुजात-सं० पु० वह सन्तान जो पिता के गुण रखती हो । अथर्व० । सू० ६ । का०८ ।

अनुजिघ्रम्-सं० गंध लेकर । अथर्व० ।

अनुजंघास्थि-हिं० संज्ञा स्त्री० टांग या जंघा की दोनों लम्बी अस्थियों में से वह जो अंगुष्ठ (शरीर के मध्यरेखा के निकट) की ओर रहती है फिबुला Fibula इं० ।

अनुज्ज्वल मण्डल-(Non-Luminous Zone) ज्वाला के मण्डलों में से वह जो उसके उज्ज्वल मण्डल के सर्वतः बाहर स्थित है। इसमें औषजन के आधिक्य के कारण कज्जल कणों का ज्वलन सम्यक् रीतिसे होता रहता है । एतदर्थ इसमें उज्ज्वलता की न्यूनता होती है, परन्तु ताप सबसे अधिक होता है । देखो-ज्वाला ।

अनुतक्रम्-सं० क्ली० तक्रानुपान । "जग्ध्वा तक्रं पिबेदनु " सि० यो० पाण्डु चि० वृन्दः० ।

अनुतन्त्रो-सं० स्त्री० पिंगला नाड़ी । (Sympathetic nerve)

अनुतन्त्री पद्धतिः-सं० स्त्री० पिंगला नाड़ी मंडल । (Sympatheticsystem)

अनुतप्त-हिं० वि० [सं०] (१) तपा हुआ । गर्म ।

अनुतपः-सं० पु० (१) तृष्णा (Thirst) (२) मद्य पीने का पात्र, सुरापान पात्र । मैथे० मे० षचतुष्क ।

अनुताप-हिं० संज्ञा पु० । [सं०] [वि० अनुतप्त] तपन । दाह । जलन ।

अनुनादिकाण्ड-सं० पु० पिंगल कांड । (Sympathetic trunk)

अनुनादिनीपद्धतिः-सं० स्त्री० पिंगल मंडल । (Sympathetic system),

अनुत्क्लेशः-सं० पु० उत्क्लेशाभाव, वमनावरोध । च० सू० बिसूची० ।

अनुत्थित विद्धा शिराः-सं० स्त्री० ठीक पट्टी न बाँधने के कारण जिसकी शिरा न उठी हुई हो वह वेधित की हुई । इससे रुधिर नहीं निकलता सु० शा० ८ अ० ।

अनुत्रिकास्थि-हिं० स्त्री० पुच्छास्थि, गुदास्थि, चञ्चु अस्थि । उस्उस्, अल्उस्उस् अज्मुलउस् उस् अ० दुमुगजह् उस्तखाने दुम-फा० । दुमची की हड्डी-उ० । त्रिकास्थि के नीचे रहने वाली एक छोटी सी अस्थि है जो वस्तुतः चार छोटी छोटी अस्थियों के जुड़ने से बनी है । इस अस्थि में न कोई छिद्र होता है न कोई नली । इसका स्वरूप कोकिल चञ्चुवत् होता है । इसलिए अंग्रेजी में इसको कोक्सिक्स (Coccyx) कहते हैं ।

अनुदर-हिं० वि० [सं०] [स्त्री० अनुदरा] कृशोदर । दुबला पतला ।

अनुद्धत-हिं० वि० [सं०] जो उद्धत न हो । अनुग्र । सौम्य । शांत ।

अनुद्भूत ताप- हिं० पु० लेटेण्ट हीट ऑफ वेपरइज़ेशन (Latentheat of vapourisation) वह ताप जो किसी तरल द्रव्य को वाष्पीय रूप में परिणत करने में व्यय हो, किन्तु जिसका कोई प्रत्यक्ष फल विदित न हो, उस द्रव्य को वाष्पीय "अनुद्भूत ताप" कहते हैं । उदाहरण—यदि आप एक बर्तन में जल लेकर उसे गर्म करना आरम्भ करें तो जैसा आप जानते हैं, उसका तापक्रम बढ़ने लगेगा और बढ़ते बढ़ते वह १००° से० तक पहुँचेगा । उस समय जल उबलने लगेगा । परन्तु उस समय एक बड़ी विलक्षण बात देखने में आती है जल के तापक्रम का बढ़ना बन्द हो जाता है आप चाहे आँच दुगुनी या तिगुनी कर दें परन्तु तापक्रम वही १००° पर ठहरा रहेगा और जब तक सारा जल भाप में परिणत न हो जायगा वहीं ठहरा रहेगा परन्तु आप जो ताप देते जा रहे है वह कहाँ चला गया ? इसका यही उत्तर हो सकता है कि वह किसी अप्रगट रीति से जल को तरल से भाप बनने में व्यय हो रहा है । इसे अनुद्भूत ताप, कहते हैं । भौ० वि० ।

अनूढ़ाह-हिं० पु० अविवाह, कुमारपन । (Virginity),

अनुधावन-हिं० संज्ञा पु० [सं०] [वि० अनुधावक, अनुधावित, अनुधावी] (१) पीछे चलना, अनुसरण, (२) अनुसन्धान । खोज ।

अनुनाद-हिं० संज्ञा पु० [सं०] [वि० अनुनादित] प्रतिध्वनि, गूँज, गुंजार ।

अनुनादित-हिं० वि० [सं०] प्रतिध्वनित । जिसका अनुनाद या गूँज हुई हो ।

अनुन्मदितः-सं० पु०
अनुन्मदितम्-सं० क्ली० } उन्माद रहित । अथर्व० सू० १११ । २ । का० ६ । अथर्व० । [सू० १११ १ । का० ६ ।

अनुपकार-हिं० संज्ञा पु० [सं० वि० अनुपकारक, अनुपकारी,] अपकार, हानि ।

अनुपकारी-हिं० वि० [सं०] (१) उपकार न करने वाला । अपकार करने वाला हानि करने वाला । (२) फजूल, निकम्मा

अनुपजः-सं० त्रि० अनूप देशमें उत्पन्न हुआ । देखो अनूपवर्ग (Anupavargah) ।

अनुपदीना-सं० स्त्री० उपानह, जूता, खड़ाऊँ, इत्यादि-हला० ।

अनुपल-हिं० पु० सेकेण्ड काल मान विशेष । (A second of time)

अनुपशयः-सं० पु०
अनुपशय-हिं० संज्ञा पु० } (What increases the disease) (१) उपशय के विपरीत, व्याध्यसात्म्य औषधान्नविहार आदि अर्थात् वह औषध, अन्न तथा विहार जो रोगी के रोग के खिलाफ, हानिकारक अथवा असात्म्य

(अर्थात् जो उसके अनुकूल न हो) उसे अनुपशय कहते हैं ।

(२) रोग ज्ञान के पाच विधानों में से एक जिसमें आहार विहार के बुरे फल को देख यह निश्चय किया जाता है कि रोगी को अमुक रोग है । मा० नि० । दे० उपशय ।

अनुपात–हिं० संज्ञा पु० [सं०] (Ratio) सम बराबर का सम्बन्ध, गणित की त्रैराशिक क्रिया तीन दी हुई सख्याओं के द्वारा चौथा को जानना

अनुपानम्–स० क्रा०
अनुपान–हिं० संज्ञा पु० } रा० नि० व २० ।

अनुपान का प्राथमिक अर्थ वह तरल था जो औषध सेवनोपरांत व्यवहार में लाया जाता है । परन्तु बहुत काल से अब यह उस द्रव पदार्थ के अर्थ में प्रयुक्त होने लगा जिसके साथ औषध सेवन की जाती है दूसरे शब्दों में इससे वह द्रव्य अभिप्रेत है जो सेवन कीं गई हुई औषध को पथ प्रदर्शक का काम देता है ,

वह वस्तु जिसके साथ औषध खाई जाय वह वस्तु जो औषध के साथ या ऊपर से खाई जाय । औषधांगपेय विशेष ।

वदरिकह, मुवदरिक अ० । पेशदारु फा० विहिकल Vehicle इं० ।

नोट—यह बात सिद्ध है कि यदि किसी तरल वस्तु के साथ औषध सेवन की जाए तो इसका शीघ्र प्रभाव होगा और वह औषध को शरीर में उसके अभीष्ट प्रदेश तक प्रविष्ठि कराने में सहायक होगी । यही कारण है कि प्रायः सभी औषधें किसी न किसी तरल के साथ सेवन की जाती है वह वस्तु जो अनुपान रूप से व्यवहार में लाई जाय रोग पर उसका भी प्रभाव औषध तुल्य ही होना चाहिये । कतिपय रोगों के प्रशस्त अनुपान निम्न हैं:—

वातरोग—स्निग्ध तथा उष्ण द्रव्य ।

श्लेष्म व्याधि—रूक्ष तथा उष्ण पदार्थ ।

पित्तरोग—स्निग्ध वस्तु ।

स्नेह पान में—उष्ण जल इत्यादि । मद० व० १३ ।

चूर्ण, अवलेह, गुटिका, और कल्कके अनुपान की मात्रा, वात, पित्त तथा कफ, के प्रकोप में क्रमशः ३,२ तथा १ पल है ।

(शार्ङ्ग० म० ख० ६ अ०)

श्लेष्म ज्वर— मधु, पान (पत्र) का रस, आर्द्रक स्वरस और तुलसी के पत्र का रस, वा क्वाथ ।

पित्त ज्वर—पटोल फल स्वरस, वेत्रपत्रक स्वरस वा क्वाथ, गिलोय का स्वरस, निम्बत्वक् क्वाथ वा स्वरस ,

वात ज्वर—शहद, गिलोय का रस, पटवा (लाल पटुआ) तथा चिरायता का शीत कषाय और तुलसी पत्र स्वरस वा क्वाथ ।

विषम-ज्वर—मधु, पीपल (पिप्पली) का चूर्ण शेफालिका (हरसिंगार) के पत्ते का रस विल्वपत्र स्वरस, विल्व (मूल) चूर्ण नागमोंथा, कुटज बीज (इन्द्रयव) पाठा (अम्बष्ठा) मूल, आम्र बीज, दाड़िम्ब (अनार) मूल वा फल त्वक्, धवपुष्प और कुटज (वृक्ष) त्वक् ।

यक्ष्मा कफज श्वास प्रतिश्याय—और तत्सम अन्य रोग—वासक अर्थात् अड़ूसे के पत्ते का रस, तुलसी पत्र स्वरस, पान का रस आर्द्रक स्वरस, अड़ूसे की छाल का क्वाथ, वासुनहारी, मुलेठी, कण्टकारी, कटफल और कुष्ठ इनमें से किसीका क्वाथ, बचाबीजचूर्ण तालीसपत्र, पिप्पली (पीपल) काकड़ासिंगी और वंशलोचन इनमें से किसी एक का चूर्ण ।

वातप्रधान्य श्वास—बहेड़े का क्वाथ अथवा चूर्ण मधु के साथ ।

रक्तातीसार तथा रक्तपित्त—अड़ूसे के पत्तों का रस, अश्वत्थ पत्र स्वरस, दाड़िम्ब (अनार) पत्र स्वरस, और कुलहला पत्र स्वरस' गूलर का फल, कुटज वृक्षकी छाल और दूर्बा का रस बकरी का दूध और मोचरस का चूर्ण ।

शोथरोग—विल्व पत्र स्वरस, श्वेतापामार्ग का क्वाथ अथवा स्वरस शुष्क मूलो का क्वाथ और कालीमिर्च का चूर्ण तथा अर्क मको वा मकी स्वरस ।

पाण्डु वा रक्ताल्पता और स्त्रियोंके हारिद्र रोग—क्षेत्रपर्पटक स्वरस और गिलोय का रस।

विरेचन योगों में—निशोथ का चूर्ण दन्ती की जड़ का चूर्ण, सनाय (सोनामुखी के पत्तों का क्वाथ वा चूर्ण कटुकी का क्वाथ हरीतकी का शीतकषाय उष्ण जल और उष्ण दुग्ध।

मूत्रोद्घाटन अर्थात् मूत्रप्रवर्तक—योगों के अनुपान स्थल पद्म के पत्तो कारस, पाथरकुची के पत्तों का रस, कलमीशोरा का विलयन कबाबचीनी का चूर्ण और गोखरू, कुशमूल कास मूल खस की जड़ तथा इक्षुमूल इनका क्वाथ।

बहुमूत्र (मूत्रातीसार)—गूलरके बीज का चूर्ण, जम्बू के बीज का चूर्ण और मोचरस का चूर्ण, तोरई के भूने हुये फल का रस और कन्दूरी (कुन्दरू) की जड़ का रस।

पूयमेह (सूजाक)—गिलोय का रस, कच्ची हल्दी का रस, आवला का रस, लघु शाल्मीवृक्ष स्वरस, दारुहरिद्रा का चूर्ण, मंजीठ और अश्वगधा का कढ़ा, सफेद चन्दन का कल्क, बबूल के गोंद का हिम कदम्ब की छाल का रस और कसेरू का रस।

श्वेत प्रदर—गिलोय का रस, अशोक की छाल का क्वाथ और रक्त स्थापक औषधें।

रजप्रवर्त्तक योगों के साथ—घृतकुमारी के पत्तों का रस या मुसब्बर (एलुआ) बांस की छाल का शीत कषाय कर्णिकार (उलट कम्बल) के पत्र का रस, कलिहारी (लाङ्गलिका) के पत्र का रस और जवा पुष्प का रस।

अजीर्ण व अग्निमांद्य—अजवाइन, बनयमानी और सौंफ का फाण्ट, पीपल, पीपलामूल कालीमरिच, चव्य, सोंठ और हींग इनका चूर्ण।

आन्त्रीय कृमिनाशकयोगोंके साथ—बाय बिडंग का चूर्ण, अनार की जड़का काढ़ा अनन्नास के पत्तोंका रस तथा खजूर भिण्डी और चम्पा के पत्तियों का रस घेंटू और निर्गुण्डी का रस।

छर्दिघ्न योगों के अनुपान—बड़ी इलायची का चूर्ण वा क्वाथ।

वायु रोग—त्रिफला का हिम शतमूली का रस वरियरा (बला) कांकड़ा मूमिकूष्माण्ड का रस और आमला या त्रिफला का फांट।

शुक्रवर्द्धक तथा वृष्य अनुपान—नवनीत (मक्खन) मांस रस, दुग्ध केवांच के बीज बिदारीकन्द, अश्वगन्ध सेमल के मूसली का रस और अनन्तमूल का रस।

रोगी और रोग दोनों की दशा का भली प्रकार विचार कर अनुपान चुनना चाहिये काथ और फांट की मात्रा १ छ० (२ आउंस) औषधियों के निचोड़े हुए रस की मात्रा १ या २ तो० और चूर्ण की मात्रा १ या आध आना भर लेनी चाहिए। जब चूर्ण अनुपान रूप से व्यवहार में लाए जांय तब उनको मधु में मिला कर बरतें। पित्तोल्बणता की दशा को छोड़ कर शेष सभी दशाओं में शहद को अनुपान रूप से प्रयोग करें।

उपर्युक्त अनुपानों को केवल उस दशामें काम में लाएँ, जब कि आसव वटिका अथवा चूर्ण रूप में बरती जाए। किन्तु जब मोदक, गुग्गुलु और औषधीय पाक प्रभृति का उपयोग किया जाए तब शीतल या उष्ण जल अथवा उष्ण दुग्ध को अनुपान रूप से व्यवहार में लाया जाए। सभी औषधीय घृतों में चवन्नी भर शर्करा योजित कर लगभग एक छटांक अर्धोष्ण दुग्ध के साथ सेवन करें। बहुत से घी बिना शर्करा के भी उपयोग में आते है।

(२) अष्टांग हृदय से अनुपान का संक्षिप्त वर्णन

"विपरीतं यदन्नस्य गुणैः स्याद विरोधि च"।

वा० सू० अ० ६। श्लोक ५१

खाद्य पदार्थों के विपरीत गुण वाले अविकारी द्रव्यों का अनुपान सदा ही हितकारी है।

जैसे रूक्ष का स्निग्ध, स्निग्ध का रूक्ष, गरम का ठंडा, ठंडे का गरम, खट्टे का मीठा, मीठे का खट्टा इत्यादि। परन्तु ऐसा विपरीत सम्बन्ध न होना चाहिये। जैसा दूध और खटाई का होता है।

अनुपान का कर्म—अनुपान से उत्साह, तृप्ति शरीर में अन्न रस का सचार, दृढ़ता, अन्न-संघात, शिथिलता, क्लिन्नता और अन्न का परिपाक होता है।

अनुपान के अयोग्य रोग—जत्रु (ग्रीवा और वक्षःस्थल) के ऊपर वाले अंगों में होने वाले रोगों में अनुपान अहित होता है। जैसे—श्वास, खाँसी, उरःक्षत, पीनस, अत्यन्त गाने वा बोलने के सम्बन्ध में वा स्वरभेद में अनुपान हितकारी नहीं है।

अनुपान के अयोग्य रोगी—जिनका शरीर विसर्पादि रोगों से क्लिन्न हो गया हो अथवा जो नेत्र और क्षत रोगों से पीड़ित हों उन्हें पीने के पदार्थ त्याग देने चाहिये। स्वस्थ और अस्वस्थ सभी लोगों को पान और भोजन के पश्चात् अधिक बोलना, मार्ग चलना, नींद लेना, धूप में जाना, अग्नि तापना, सवारी पर चढ़ना, पानी में तैरना और घोड़े आदि पर चढ़ना इत्यादि प्रत्येक काम त्याग देना चाहिये। वा० सू० अ० ६

अनुपार्श्व सरित्का—सं० स्त्री० (Collateral Fissure)

अनुपालुः—सं० पु० अनुपदेशज आलू पानीयालुक, बन आलू। रा० नि० व० ७। See—Paniyaluh

अनुपुष्पः—सं० पु० (१) शरतृण सं०। सरपत-हिं० Penreed grass (Saccharum sara) श० च०। (२) खड्गतृण। (३) वेतस:। Common cane (Calamus rotong)

अनुप्त—हिं० वि० [सं०] जो बोया न गया हो। बिना बोया हुआ।

अनुप्रस्थ—सं० पु० (Horizontal, transverse) समस्थ, व्यत्यस्थ, आड़ा, चौड़ाई की रुख। मुस्तअरिज़, अरिज़—अ०।

अनुप्रस्थ वृहदन्त्रम्—सं० क्ली०
अनुप्रस्थ वृहत्अन्त्रहिं० संज्ञा स्त्री० } (Transverse colon) वृहद् अन्त्र का समस्थ या आड़ा भाग। वृहद् अन्त्र का वह भाग जो यकृत् तक पहुँच कर बाँई ओर को मोड़ खाता है और नाभि प्रदेश में होता हुआ प्लीहा तक पहुँचता है वृहद् अन्त्र का दूसरा भाग जो व्यत्यस्त या आड़ा (चौड़ाई की रुख) यकृत से प्लीहा की ओर जाता है। कोलून मुस्तअरज़—अ०।

अनुप्राशन—हिं० संज्ञा पु० [सं०] खाना भक्षण।

अनुबन्धः—सं० पु० (१) वात, पित्त और कफ में से जो अप्रधान हो। (२) बन्धन, लगाव। (३) अनुसरण। (४) आरम्भ।

अनुबन्धो—सं० स्त्री० (१) तृष्णा, प्यास (Thirst) (२) हिक्का, हिचकी। (Hiccup) मे०। हिं० वि० [अनुबन्धिन्] [स्त्री० अनुबन्धिनी] (१) लगाव रखने वाला, सम्बन्धी (२) फलस्वरूप, परिणाम स्वरूप।

अनुबोध—हिं० संज्ञा पु० गन्धोद्बोधन।

अनुभासः—सं० पु० काक विशेष। (A kind of crow) वै० निघ०।

अनुभूत—हिं० वि० (Experienced) परीक्षित सिद्ध। तजरबा किया हुआ। आज़मूदा। (२) जिसका अनुभव हुआ हो।

अनुभूत चिकित्सा—हिं० वि० परीक्षित इलाज।

अनुभूतयोग—हिं० वि० परीक्षित योग।

अनुभूत लाक्षादितैल—सं० पु० एक सेर लाख को चार सेर पानी में औटाएँ। जब एक सेर जल शेष रहे तब उतार कर छान लें। पुनः इसमें एक सेर शुद्ध तिल तैल डालें, और चार सेर दही का जल डालें। फिर सौंफ, असगन्ध, हल्दी, देवदारु, रेणुका, कुटकी, मूर्वा, कूट, मुलहठी, मोथा, चन्दन, रास्ना प्रत्येक एक एक तोला लें, इन सब का कल्क करके उक्त तैल में डाल मन्द मन्द अग्नि से पचायें, फिर सिद्ध कर रखें। इसके मर्दन से विषमज्वर, खुजली, देह का दर्द दुर्गन्धि तथा अंगों का स्फोटक इत्यादि दूर होते हैं।

(यो० त० ज्वर० चि०)

अनुभूतिः—सं० स्त्री० त्रिवृता, त्रिवृत्—सं०। निशोथ, निसोथ—हिं०। तेउड़ी—ब०। Ipomoea turpethum। दे० त्रिवृत (ता, ती)।

अनुमतम्-सं० क्ली० जहाँ पराए मत का निषेध नहीं किया जाए (स्वीकार किया जाए) उसे अनुमत कहते हैं, जैसे—किसी ने कहा कि सात रस होते हैं और दूसरे ने इसे मान लिया, यही अनुमत हुआ। सु० उ० ६५ अ०। सम्मत, स्वीकृत, एक मत।

अनुमति-हिं० स्त्री० अनुज्ञा, आज्ञा, सम्मति। (An order, advice).

अनुमस्तिष्कम्-स० क्ली० अणुमस्तिष्कम् (Cerebellum).

अनुमान-हिं० पु० अटकल, विचार, भावना, क़यास, (Inference, guess)

अनुमानी-यु० मद्य और शहद मिला हुआ (Wine and honey mixed)

अनुमाली-यू० एक प्रकार का मद्य जिसको अंगूर को निचोड़ कर बिना पकाए (मद्य) प्रस्तुत करते है।

अनुमेसा-रू० गुले-लाला, वायुपुष्प। शकायिकुल्लअमान-अ०। (Pulsatilla) देखो—पल्साटिल्ला।

अनुयवः-सं० पु० (१) जो यव से न्यून हो उसे "अनुयव" कहते हैं। वा०। (२) निःशूक यव, शूक रहित यव, टूंड रहित जौ। हेमा०। (३) क्षुद्रयव, यह जौ की अपेक्षा गुणहीन होता है। वा० सू० अ० ६। शूक धान्यवर्ग। (A sort of Barley)

अनुयोजनम्-सं० क्ली० (Apposition)

अनुरस-हिं० संज्ञा पु० [सं०] गौण रस। अप्रधान रस। वह स्वाद जो किसी वस्तु में पूर्ण रूप से न हो। बा० सू०।

अनुराधा-हिं० स्त्री० २७ नक्षत्रों में से १७ वाँ नक्षत्र The 17th Nakshatra or lunar mansion, designated by a row of oblations (Stars in Libra)

अनूकहा-सं० स्त्री० नागरमुस्ता-स०। नागरमोथा-हिं०। (Cyperus pertenuis)

अनुरेवती-सं० स्त्री० (Smallvar of crot-on tiglium- *Linn*) क्षुद्रदन्ती। र० नि० व० ६।

अनुरोध-हिं० पु० अपेक्षा, बाधा, पक्षपात, उपरोध। (Obligingness)।

अनुलासः-सं० पु०
अनुलास्य-सं० पु० } मयूर पक्षी मोर। (A peacock).

अनुलिप्त-हिं० वि० (Smeared) लिप्त, अभिषिक्त, पोता हुआ।

अनुलेपः-सं० पु०
अनुलेपनम्-सं० क्ली० } (१) लेपन, किसी तरल वस्तु की तह चढ़ाना। (२) To plaster लीपना, पोतना। (३) (Cosmetic) सुगन्धित द्रव्यों वा औषधों का मर्दन। उपटन करना, बटना, लगाना, अंगराग, लेप (न) चन्दन आदि वा गंधद्रव्य आदि का लेपन। मुहस्सिन, गुम्जह-अ०। हुस्नअफ़्ज़ा, रूशोयह। गाजह्, उब्टना-फा०।

इसके गुण— अनुलेप से तृषा, मूर्च्छा, दुर्गंधि श्रम और वात दूर होते हैं तथा सौभाग्य तेज, त्वचा, वर्ण, प्रीति, ओज और बल की वृद्धि होती है। मद० व० १३। अनुलेपन बल्य तथा तेज एवं सौभाग्य का देने वाला है। पूर्व आचार्यों ने इसे त्वच्य, प्रीति का देने वाला, तृषा, मूर्च्छा एवं श्रम का नाश करने वाला तथा वात नाशक कहा है। वै० निघ०। प्रीतिकारक, ओज का देने वाला, शुक्रवर्द्धक, दुर्गंधिनाशक तथा श्रम, पाप और तन्द्रा का नाश करने वाला है। राज०।

अनुलोम-हिं० संज्ञा पु० [सं०] ऊपर से नीचे की ओर आने का क्रम। सीधा क्रम से, अवरोही, जाति।वशेष।

अनुलोमन-हिं० संज्ञा पु०
अनुलोमनम्-सं० क्ली० } (१) अनुलोमन। वह औषध जो मलादि धातुओं को यथा मार्ग प्रवृत्त करे, जो मलादि धातुओं का पाक करके और वात द्वारा हुए मल के बंध को तोड़

फोड़ के यथा मार्ग नीचे ले जाय उसे "अनुलोमन" कहते हैं, जैसे–हरड़। भा०।

(२) कोष्ठबद्ध को दूर करने वाली रेचक या भेदक औषध।

अनुल्की–सं० स्त्री० (१) हिक्का, हिचकी (Hiccup, Hiccough) (२) तृष्णा, तृषा, पिपासा (Thirst)। मे०।

अनुल्बण–सं० त्रि० पटा सा न दिखाने वाला। यह चन्दन का एक विशेषण है। कौटि० अर्थ०।

अनुवधी–सं० स्त्री० प्यास, तृषा,। (Thirst)

अनुवासः-
अनुवासनः-
अनुवासनकः-
} सं० पु० क्ली० (१) Fragrant सौरभ सुगंधि, सुवास (२) स्नेह वस्ति। (Oily enemata)। (३) स्नेहन। (४) धूपन। मे०। जो स्नेह अर्थात् चिकनाई प्रदान करे उसे "अनुवासन" कहते हैं। इसकी मात्रा दो पल का आधा अर्थात् एक पल (४ तो०) है। भा०। दे० अनुवासन वस्तिः।

अनुवासनवस्तिः–सं० पु० (Oily enemata) स्नेह वस्ति, मात्रावस्ति। पिचकारी द्वारा गुदा मार्ग (रेक्टम) से तरल पदार्थ अन्दर पहुँचाने का नाम 'वस्ति' (पिचकारी डूश, एनिमा) है। देखो–वस्ति।

इसका एक भेद "अनुवासन वस्ति" भी है। यह वस्ति घी तेल आदि स्नैहिक पदार्थों से की जाती है। इस लिये इसे स्नेहवस्ति भी कहते हैं।

आयुर्वेद शास्त्र में सोना आदि धातुओं और बाँस, नल, सींग तथा जानवरों की आँतड़ी अण्डकोष आदि से वस्ति बनाने की क्रिया लिखी हैं, परन्तु, आजकल अंग्रेजी दवा बेचने वालों के यहां जो रबर की नली वाली वस्ति मिलती है, उसी से समस्त प्रकार का वस्ति कर्म सिद्ध हो सकता है।

बलवान मनुष्यों को वस्ति देने के लिए ६ पल, मध्यम बल वाले को ३ पल, और निर्बल मनुष्य को वस्ति देने के लिये १॥ पल स्नेह लेना चाहिये।

अनुवासन वस्ति का एक भेद मात्रावस्ति भी है, इसमें १ पल से २ पल तक स्नेह भिषा जाता है।

अनुवासन वस्ति रूक्ष और वात रोगी के लिए हितकर है। परन्तु रोगी की जठराग्नि तीव्र हो, तभी यह वस्ति देनी चाहिये। मन्दाग्नि वाले कुष्ठरोगी, प्रमेही उदर रोगी और स्थूल शरीर वाले पुरुष को स्नेहन वस्ति कदापि न देनी चाहिये।

स्नेह वस्ति वसन्त ऋतु में सायंकाल में और ग्रीष्म, वर्षा तथा शरद ऋतु में रात में देनी चाहिये। पहिले रोगी को विरेचन दें, फिर ७ दिन बाद पूर्ववत शक्ति आने पर स्नेहवस्ति देनी चाहिये। जिस रोज स्नेह वस्ति देनी हो, उसदिन रोगी के शरीर में तैल मर्दन करके पानी की भाप से पसीना देना चाहिये। और चावलों की पतली पेया आदि शास्त्रोक्त भोजन कराके जरा देर टहलना चाहिये, इसके बाद यदि आवश्यकता हो तो मल मूत्रादि त्याग करके यथाविधि वस्ति देना चाहिये। उस रोज रोगी को अधिक स्निग्ध भोजन देना हानिकारक है।

बस्ति लेने के समय रोगी को छींकना, जँभाई लेना, खाँसना आदि कार्य न करने चाहिए।

स्नेह वस्ति लेने के बाद रोगी को हाथ पैर सीधे फैलाकर लेट रहना चाहिए। यदि स्नेह वस्ति का स्नेह मल युक्त होकर २४ घंटे के अन्दर स्वमेव बाहर न निकले, तो रोगी को तीक्ष्ण निरूहण वस्ति, तीक्ष्ण फलवर्ति (शाफ), तीक्ष्ण जुलाब और तीक्ष्ण नस्य देनी चाहिए।

बस्ति देने के बाद यदि समस्त स्नेह बाहर आ गया हो और रोगी की जठराग्नि तीव्र हो तो उसे सायंकाल में पुराने चावल का भात देना चाहिए।

अनुवासनोपयोग–सं० पु० अनुवासनवर्ग।

अनुवासनोपवर्गः–सं० पु० षड् विशदशुक-कषायवर्ग। वह दस औषधियाँ जो अनुवासन के लिये उपयोगी हैं। यथा –(१) रास्ना, (२) देवदारु, (३) बेल, (४) मैनफल, (५)

सौंफ, (६) श्वेत पुनर्नवा, (७) लाल पुनर्नवा (८) अरनी, (९) गोखरू और (१०) सोनापाटा। च० सू० ४ अ०।

अनुवासनम्-सं० पु० अनुवासन। वै० निघ०।

अनुवृजो-सं० पु० फेफड़े, प्लाशि, फुफ्फुसद्वयम्। वस्त्रौ-स०। अथ०। सू० ६। ४। १२

अनुवेदना-सं० स्त्री० समवेदना, सहानुभूति (Sympathy)

अनुवेल्लितम्-सं० क्ली० शाखा व्रण बन्धन भेद। सु० सू० १८ अ०।

अनुशय-हिं० संज्ञा पु० पश्चात्ताप, अनुताप, द्वेष।

अनुशयी-सं० स्त्री० क्षुद्ररोगान्तर्गत पादरोग विशेष।

लक्षण-जो फोड़ा गेहरा हो, आरम्भमें थोड़ा सा दीखे ऊपर से त्वचाके रंग ही का हो (भीतर चक्करदार हो) और भीतर से पकता आए, उसे वैद्य पैर का "अनुशयी" कहते हैं। इसको कफ से उत्पन्न जानना चाहिये। "कफादन्तः प्रपाकांतं विद्यादनुशयी भिषक्"। सु० सं० अ० १३।

चि-श्लेष्म विद्रधि के समान इसका उपचार करना चाहिए। भा० पाद० रो० चि०।

अनुशस्त्रम्-सं० क्ली० त्वक् सार, स्फटिक, काच, जलौका, अग्नि, क्षार तथा नख आदि रूप शस्त्र, यह शिशु एवं भीरू प्रभृति के लिये होता है। सु० सू० ८ अ०।

अनुष्ठान शरीर-हिं० संज्ञा पु० लिंगदेह, आद्यदेह, पुरुषचिन्ह।

अनुष्णम् सं० क्ली० उत्पल, नीलकमल, कुमुद। रा० नि०। (Bluelotus)

अनुष्णवल्लिका-, अनुष्णवल्ली- सं० स्त्री० नील दूर्वा, नीलीदूब रा० नि० व० ८। (See-Nila-durvva)

अनुसंधान-हिं० पु० खोज, तलाश (Search)।

अनुसार्य्यकम्-सं० क्ली० सुगन्ध द्रव्य विशेष। बड़ीजटा-मह०। Nardostachys Jatamansi D C.। वै० श०

अनुह-, अनूह- अ० श्वास लेना, दम चढ़ना, खाँसनाँ खकारना, दमा। (Dyspnœa)

अनूक-, अनूकम्-, अनूक्यम्- सं० पु० पसली, पर्शुका (Ribs) करुकराणि। शतप० ३२ अ० ४।

अनूक-हिं० संज्ञा पु० (१) पीठ की हड्डी। (२) कुल वंश। (३) गत जन्म, पूर्व जन्म।

अनूक-अ० (A bird) धेनुक पक्षी, हरकीलह्। See dhenuka।

अनूचानः-स० पु० (१) अंग सहित वेदका अध्ययन करने वाला उत्तम वैद्य। (२) वह जो वेद वेदाँग पारगत हो कर गुरुकुल से आया हो। स्नातक।

अनूढ़ा-हिं० स्त्री० कुमारी कुआँरी, अविवाहिता स्त्री० (Virgin' maidem)

अनूढ़ागामी-हिं० पु० लम्पट, व्यभिचारी, छिनरा।

अनूनीलून-यु० एक अप्रसिद्ध बूटी है जो कद्दू के समान पर फल रहित होती है। (A plant)

अनूदिया-बरबा (जदा) ल का रस उसारहेकिसाम उलहिमार) (Succus Elaterinum.)

अनूप- हिं० संज्ञा पु०, अनूपः- स० पु० (१) (A buffalo) महिष भैंस। मे० पत्रिक। (२) अम्बु (जल) प्राय देश, जलप्लावित देश, सजल देश वह स्थान जहाँ जल अधिक हो। मे०। अनूपदेश के लक्षण जिस प्रदेश में जल तथा वृक्ष बहुत हों और जहां वात कफ के रोग होते हों उस देश को अनूप देश कहते हैं।

गुण-गुरु, स्निग्ध, पिच्छिल, मधुर, कफकारक तथा स्निग्ध है और प्रमेह, गलगण्ड, श्लीपद, (फीलपाव) और छर्दि आदि रोगों का उत्पादक है रा० नि०।

राजवल्लभ के मत के अनुसार स्निग्ध, शीतल वात तथा कफकारक और भारी हैं।

वि० [सं०] जल प्राय जहां जल अधिक हो।

अनूपजम्-सं० क्ली० (१) अनूज हिं० पु०। आर्द्रक, अदरक, आदी। (Zingiber offcinalis' *Roxb*) रा० नि० व० ६। पु० (२) वृक्ष विशेष। अनारस गाछ ब० वे० निघ०। त्रि० अनूप देश में उत्पन्न होने वाले द्रव्यमात्र।

अनूपदेशः-सं० पु० अनूप लक्षण युक्त प्रदेश। वे प्रदेश जिनमें अनूप के से लक्षण हों। देखो अनूप See Anupah

अनूपमांसम्-सं० क्ली० अनूपदेशस्थजन्तुमांस। अनूप देश में होने वाले जन्तुओं का मांस देखो अनूपमांसम्। See-anupamansam

अनूफोतानस-यु० गोह, सूसमार (A guana) See Susamara

अनूमा-यु० रतनजोत। (Alkanet)

अनूयस-अशराश See Ashras

अनूशरा-यु० जपा, अड़उल। (Hibiscus Rosa sinensis)

अनूष्णम्-सं० क्ली० उत्पल, नील कमल (Blue lotus)। शुन्दिफूल, ह्यांला-ब० रा० नि० व० १०।

अनूस-यु० सरोकोही, पहाड़ी सरो।

अनृजुः-सं० त्रि० शठ, असरल पु० तगर पुष्प वृक्ष See-shatham

अनेक-हिं० वि० अधिक बहु, भूरि. (many much' abundant)

अनेकदिग्वायु-सं० पु० (A whirlwind विष्वग्वायु, घूर्णित वायु, बवंडर, घूमती हुई हवा।

अनेकपः-सं० पु० गज, हाथी (An elephant) मद० व० ११

अनेकरूप-
अनेकाकार० } हिं० संज्ञा पु० नाना रूप भांति भांति के रूप बहुरूप पल्टिफार्म Multiform इं०।

अनेकान्तः-सं० त्रि०

अनेकांत-हिं० वि० जो स्थिर न हो चचल सं० पु० कोई ऐसा कहें और कोई अन्यथा (और तरह) वह अनेकार्थ कहलाता है जैसे कोई आचार्य द्रव्य को प्रधान मानते हैं। कोई रस को प्रधान कहते हैं कोई वीर्य को और कोई विपाक को प्रधान कहते हैं। सु० उ० अ० ६५ क्वचित्तथा क्वचिदन्यथेति यः सः।

अनेगुन्दुमनी-ता० कुचन्दन कम्बोजी. सं० रक्त कम्बल, रञ्जन व० अडेनऐन्थरा पैवोनीना (Adenanthera Pavonina) ले०। इं० मे० मे०।

अनेनेग्गिलु-कना० बड़ा गोखरू हिं- द०, गु०, बं० पेडेलियम म्युरेक्स (Pedalium Murex) ले०। इं० मे० मे०।

अनेडमूकः-सं० त्रि० (१) जो शब्द न सुन सके वाक्‌गति रहित, बधिर, डेफ (Deaf) इं० मे० [२) अन्धा। ब्लाइंड (Blind) इं०।

अनेमल-सं० क्ली० (Enamel)

अनेमुई-ता० असन वृक्ष हिं०। See-Asana

अनेमोनीन-इं० काकरुजसत्व, अनोमीनीन रतनजोत सत्व हिं०। जौहर शकायिक-अ०। यह उपयुक्त औषध अनमून आंब्ट्युजी लोआ (Anemone Obtusiloba) अथवा पल्साटिला (Pulsatilla) अर्थात् शकायिक वा रतनजोत के पौधे का सत्व है जो १५२।० के उत्तापपर पिघल कर तुल्यचातुर्भुजीय रवारूप में तल स्थाई हो जाता है वाष्प के साथ उड़नशील होता है और साधारण ताप क्रम पर वायुमें खुला रहने पर यह शनः शनै अनोमोनिक एसिड में परिणत हो जाता है।

प्रभाव—चरपरा और फोस्काजनक अनोमोनीन विषैला पदार्थ है इसके प्रयोग से मध्यस्थ वातमण्डल वातग्रस्त (पैरालाइज्ड) हो जाता है इं० मे० मे०। फा० इं०।

अनेसाइक्लस पाइरेथ्रम-ले० अकरकरा (Pellitory)

अनेककट रजई-ता० राकसपत्ता, कण्टाल। (Agave americana)

अनैच्छिक-हिं० वि० स्वाधीन गैर इरादी मुत्तरिक बिला इरादह अ०। इन्वालण्टरी Involuntary आंटोमैटिक Automatic, इं०। शरीर की दो गतियों में से वह जो हमारी इच्छा के आधीन न हों।

हम उनको अपनी इच्छासे रोक नहीं सकते और जब वे न होतीं हों या होनी बन्द हो जांय तब हम अपनी इच्छा से उनको रोक नहीं सकते थे और ऐसी ऐसा गतियां इच्छा के आधीन न होने के कारण स्वाधीन या अनैच्छिक कही जाती हैं।

अनैच्छिक पेशी-
अनैच्छिच मांस- } हिं० स्त्री० हिं० पु० (Involuntary musele) स्वाधीन मांस. अनैच्छिक मांस। अजलह गैर इरादी-अ०। अनैच्छिक मांस से हृदय नालियों, मार्गों और आशयों की दीवारें बनी हुई हैं।

अनैच्छिक मांस सेल-हिं० पु० स्वाधीन मांस सेल (Involuntary muscular cell) यह सेल लम्बी होती है, बीच में से मोटी होती है और सिरों पर पतला और नोकीला। इनकी लम्बाई $\frac{1}{४८०}$ से $\frac{1}{१००}$ इञ्च तक और मोटाई $\frac{1}{८०००}$ से $\frac{1}{३०००}$ इञ्च तक होती है। प्रत्येक सेल में अंडा कार या सलाकाकार मींगी होती है। प्रत्येक सेलसे वात मंडल का एक सूक्ष्म तार लगा रहता है।

अनैनेरुखी-ता० बड़ा गोखरू। (Pedalium Murex, *Linn*), फा० इ० ३ भा०।

अनैन्द्रिक-हिं० वि० निरैन्द्रिक, निरावयविक। (Inorganic)

अनैन्द्रिकदोष-हिं० पु० अनैन्द्रिक अशुद्धि। Inorganic Impurities,

अनैन्द्रिक द्रव्य-हिं० पु० अनैन्द्रियक पदार्थ। (Inorganic substances)।

अनैन्द्रिक पदार्थ-हिं० संज्ञा पु० सृष्टि में पाए जाने वाले दो प्रकार के पदार्थों में से वह जिसकी उत्पत्ति में प्राणिवर्ग का कोई हाथ नहीं जैसे जल वायु, मट्टी, लवण शोरक, गन्धकाम्ल, स्वर्णादि धातु वा अधातु। इनआर्गेनिक सब्सटेन्स Inorganic substance इं०। जमादी-अ०।

अनैन्द्रियक रसायन-हिं० संज्ञा पु० (Inorganicchemistry) रसायनका वह विभाग जिसमें अनैन्द्रियक पदार्थों का वर्णन होता है।

अनैपुलियमरम्-ता० गोरख इमली। (Adansonia Digitata *Linn*) इ० मे० मे० स० फा० इं०। फा० इं०।

अनैपुलियगोय-ता० गोरख इमली। (Adansonia Digitata *Linn*) मेमो०।

अनैफ़-अ० जिसकी नासिका में व्यथा हो अथवा चोट लगी हो।

अनोकह: सं० पु० वृक्ष, पेड़। ट्री (Tree)-इं०। गाछ-बं०।

अनोजीमस अक्युमनेटा-ले०। चकया-बं०। पाँरी, पाम-हिं०। नुम्मा-ता०। पाची-माँचु, पाशा; पाँमी-ते०। फास मर०। गों-बर०। इसके पत्र रंग के काम में आते हैं। मेमो०।

अनोजीमस लेटिफोलिआ-ले० धव०। (Conocarpus Latifolia)

अ(ए)नोडाइन-इ० वेदना नाशक, व्यथा शामक, अङ्गमर्द शमनम्। (Analgesic)

अनोना-हिं० वि० (१) अलोना, नोन रहित। साल्टलेस (Saltless)-इं०। हिं० को०। सिं०। (२) अतिबला, कंघी। अब्युटिलन इण्डिकम् (Abutilon Indicum)-ले०। इ० मे० मे०।

अनोना ड्यूमोसा-ले० तूबाई चारह्। (Unona bushy) इ० हिं० गा०।

अनोना नेरम-ले० अनत।

अनोना बुशी-इं० तूबाई चारह्। (Unona dumosa, *Roxb*)-ले०। इं० हिं० गा०।

अनोना म्युरिकेटा–ले० यह आतृष्य वर्ग (या सीताफल वर्ग) अर्थात् (Anonaceæ) की वनस्पति है। इसका मूल उत्पत्तिस्थान पश्चिमी द्वीप समूह है परन्तु अब यह पूर्वी भारतवर्ष में भी लगाई गई है।

गुणधर्म—पक्वफल में प्रिय व किंचित् अम्ल गूदा होता है जिससे उदर में शैत्यकारक प्रपानक प्रस्तुत किया जाता है। अपक्व फल–अत्यन्त सकोचक होता है और आन्त्रिक असुस्थता एवं स्कर्वी की दशा में व्यवहार में आता है। त्वक् सकोचक है तथा मूल त्वचा शव अर्थात् मृत शरीरजन्य विषाक्तता (Ptomaine-Poisoning) में बरती जाती है, विशेषत: सड़ी हुई मछलियों के खाने के बाद। पत्र कृमिघ्न रूप से और पूयजनन हेतु इसका बहि: प्रयोग होता है। इं० मे० मे०।

अनोना रेटिक्युलेटा–ले० रामफल–द०। नोना–बं० मेमों०। शरीफा Bullocks heart–इ०। इं० हैं० गा०। Citron–इं०।

अनोना लांङ्ग लीएड–इ० कलाकुरा (Unona longifolia; *Pro, Lind*) ले०। इं० हैं० गा०।

अनोना लांङ्ग फोलिआ–ले० कलाकुरा (Unona long-leaved R.) -ले०। इ० हैं० गा०।

अनोना स्कामोसा–ले०। शरीफा, सीताफल, आतृष्य।

अनोनेसीई–ले० आतृष्य वा सीताफल वर्ग।

अनोफिलिज़–इ० यह रोग को एक से दूसरे मनुष्य तक पहुँचाने वाला एक विशेष जाति का मच्छर है।

अनोप्ल्युरा लेण्टाइसी–ले० अफिस। फा० इं० १ भा० ३८१। देखो—पिस्ता।

अनोरस्मा–अ० धामनीयार्बुद। देखो—अबूरस्मा।

अनोशदारू–
नोशदारू– } अ० क्रु० माजून के समान एक यौगिक औषध है, जिसका प्रधान अवयव आमला है। इसकी निर्माण-विधि—पक्व आमला ताजा लेकर जल में पका कर भली भाँति मल कर इसके बीज पृथक करें और झरझरे कपड़े में छानें जिससे रेशे को छोड़ कर आमले का गूदा निकल आए। तत्पश्चात् बीज तथा रेशे को तौलें और इस प्रकार कुल आमले के भार में से इनके (रेशे के) भार को घटा कर आमले के गूदे का भार मालूम करें। इस गूदे के भार से दुगनी मिश्री (अथवा कोई अन्य शुद्ध शर्करा) मिलाकर चाशनी करें। पक्व होने पर अभी जब कि यह कुछ कुछ गर्म ही अन्य रहे, इसमें ओषधों के चूर्ण मिश्रित करें। और यदि आमला शुष्क हो तो उसके बीज निकाल, माप कर धो डालें, जिसमें वह धूल प्रभृति से रहित होकर शुद्ध हो जाए। इसके पश्चात् उसे इतने गव्यदुग्ध में भिगोएं जिसमें आमले डूब जाएँ। चार प्रहर पश्चात् अधिक जल डालकर उबालें जिससे आमले का कषैलापन एवं दुग्ध की चिकनाई दूर हो जाये। पुनः अल्प स्वच्छ जल में उबाल कर उपरोल्लिखित नियमानुसार "अनोशदारू" प्रस्तुत करें।

अनौम–अ० निद्रापूर्ण, जिसके नेत्रों में निद्रा भरी हो निद्रालु, निद्रित (Sleepy, sleeping)

अनंग–हिं० वि० [सं] [क्रि० अनंगना] बिना शरीर का, देह रहित।

संज्ञा पु० कामदेव (Cupid) देखो–अनङ्गम्।

अनंगक्रीड़ा–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] (१) रति, सम्भोग। (Coition)

अनंगवती–हिं० वि० स्त्री० [सं०] कामवती। कामिनी।

अनंगारि–हिं० संज्ञा पु० [सं०] कामदेव के वैरी शिव।

अनंगी–हिं० वि० [सं० अनङ्गिन्] [स्त्री० अनंगिनी] अंग रहित। बिना देह का। अशरीर।

संज्ञा पु० कामदेव (Cupid)

अनंत–हिं० संज्ञा पु० दे०— अनन्तः।

अनंतमूल–हिं० संज्ञा पु० [संस्कृत अनन्तमूलम्]

अनंता–हिं० वि० स्त्री० [सं०] जिसका अन्त या पारावार न हो।

संज्ञा स्त्री० (१) पृथ्वी, (२) अनन्तसूत्र। देखो—अनन्ता।

अनंदी-हिं० संज्ञा पु० [सं० , (१) एक प्रकार का धान। (२) दे०—आनन्दी।

अनभ-हिं० वि० [सं० अन्=नहीं+अम्भ=जल] बिना पानी का।

अनंशुमत्फला-सं० स्त्री० कदली वृक्ष, केला का पेड़। (Musa sapientum, *Linn*) जटा०।

अन्-अव्य० [सं०] संस्कृत व्याकरण में यह निषेधार्थक नञ्' अव्यय का स्थानादेश है और अभाव वा निषेध सूचित करने के लिये स्वर में आरम्भ होने वाले शब्दों के पहिले लगाया जाता है। उ० अनन्त, अनधिकार, अनीश्वर। पर हिन्दी में यह अव्यय वा उपसर्ग कभी २ सस्वर होता है और व्यजन से आरम्भ होने वाले शब्दों के पहिले भी लगाया जाता है। उ०—अनहोनी, अनबन, अनरीति इत्यादि।

अन्त-हिं० पु० नाश स्वरूप, शेष, समाप्ति, सीमा, निकट, अति। (End, completion, death)

अन्तकः-सं० पु० (१) काञ्चनार वृक्षः सं०। कचनार का पेड़-हिं०। (Bauhini a Variegata, *Linn*) भा० गु० व०। (२) नाशकर्ता, काल (The Supposedregent of death)। (३) सन्निपात ज्वर विशेष। इसके लक्षण—अंगों का टूटना भ्रम, कम्प और शिर का हिलना, खाज तथा रोना कुछ का कुछ बकना, सन्ताप; हिचकी का आना, जिसमें ये लक्षण हों उसको असाध्य, अन्तक सन्निपात जानना चाहिये। इसकी अवधि १०दिन की है, जैसे—'अन्तके दश वासराः।" मा० नि०।

उक्त सन्निपात के लक्षण भावमिश्र महोदय ने निम्न प्रकार वर्णन किये हैं, यथा—जिस मनुष्य के अन्तक नामक सन्निपात कुपित होता है उसके शरीर में बहुत सी गाँठें पड़ जाती हैं, उदर वायु से भर जाता है, निरन्तर श्वास से पीड़ित रहता है और अचेत रहता है। भा० म० १ भा।

अन्तकोटर पुष्पी-सं० स्त्री० नील बोना-बं०।

अन्तड़ी- } हिं० स्त्री० आँतें, आन्त्र। (Intestines, Bowels Entrails, Gut)
अन्त्री- }

अन्तरम्-सं० क्ली० अवकाश, छिद्र, मध्य बीच, दूर, भीतर। (Interval, hole or rent, midst)

अन्तमल-सं० (१) मद्य, मदिरा, (Wine) (२) मल, विष्ठा (Fœces)

अन्तमात्रिका धमनी-हिं० स्त्री० (Internal carotid artery) ग्रैवान्तरिक धमनी। शिर्यान सुवाती गाइर-अ०।

अन्तमल- } हिं० संज्ञा पु० काला मदार। [सं०
अन्तमूल- }

अन्तर्मलः] जंगली पिक्कन (-क्वा-)। टाइलोफोरा अस्थमेटिका Tylophora asthmatica, *W. & A.* ऐस्क्लिपिअस अस्थमेटिका Asclepias Asthamatica, *Willd, Roxb*-ले०। इण्डियन इपीकेक्वाइना Indian Ipecacuanha-कंट्री इपिकेक्वाइना प्लांट Country Ipecacuanha plant-इ०। संस्कृत पर्याय—मलाण्डः, अण्डमलः, पूति, अम्भपर्णः, रोमशः (भा०), अन्तर्पाचक, मलान्तः, अन्तर्मलः, अण्डपर्णः, लोमशः पित्-काड़ी-द०। इर्कुज़ज़हब हिन्दी अ०। अन्तोमुल-बं०। पितमारी, खड़की रास्ना, अन्थमुल, पितकाड़ी-बम्ब०। पितकाड़ी, खड़की रास्ना० मह०। मेण्डी-उड़ि०। नच् चुरुप्पान, नञ्ज मुरिच्चान, नाय्-पालै पैय्प्-पालै-ता०। वेर्रिपाल, कुक्कपाल-ते०। वल्लपाल-मल०। बिन्नुग-सिं०। अदु-मुत्तद-कना०।

शारिवा वा मूलिनी वर्ग

(*N. O. Asclepiadeœ*)

उत्पत्ति स्थान—उत्तरी तथा पूर्वी बंगाल आसाम से बर्मा पर्यंत, दकन (या दक्षिण भारत वर्ष) और लंका।

पर्याय निर्णायक नोट—अन्तोमुल (अन्तमल, अन्तमूल-हिं०) तथा अनन्तमूल (अनन्तमूल-हिं०) इन दो बंगला भाषा के शब्दों के उच्चारण में बहुत कुछ समानता होने के कारण ये भ्रमवश एक दूसरे के लिये प्रयोग किये जाते हैं। परन्तु, इनमें से प्रथम अर्थात् अन्तोमुल जंगली पिक्कन Country Ipecacuanha (Tylophora Asthamatica) और दूसरा शारिवा वा अनन्तमूल Country Sarsaparilla (Hemidesmus Indicus, *R. Br.*) के लिये प्रयोग किया जाना चाहिये।

वानस्पतिक वर्णन—यह शारिवा की जाति की एक बहुवर्षीय लता है। मूल एक लघु काष्ठमय ग्रंथि है जिससे बहुसंख्यक सूत्रमय जड़ें निकल कर नीचे की ओर जाती हैं। यह २ से ५ वा ६ इञ्च या अधिक लम्बी और $\frac{१}{२४}$ या $\frac{१}{१२}$ इञ्च व्यास में और अत्यन्त कर्कश अर्थात् टूटने वाली (भंगुर) होता है। सौत्रिक जड़ों की संख्या विभिन्न होती है। ये ५ से १५ या २० और कभी इससे भी अधिक होती है। ये अस्पष्ट वर्ण की अथवा धूसर श्वेत वर्ण की होती है। जड़ें प्रायः अशाखी होती हैं। पर साधारणतः उनसे बहुत पतले लोमवत् तन्तु या क्षुद्रमूल लगे रहते हैं।

इससे २ से ३ आकाशी धड़ (कांड) निकलते हैं। कांड अनेक, दाएँ बाएँ लिपटे हुये साधारणतः कुक्कुट-पराकार कभी कभी हंस के पर के समान मोटे शाखायुक्त, किञ्चित लोमश होते हैं। पत्र सम्मुखवर्ती, पत्र प्रांत समान अर्थात् अखंड (जड़ के समीप प्रायः व्यत्यस्त) २ से ३॥ या ५ इञ्च दीर्घ और १॥ से २॥ इञ्च चौड़ा, आयतांडाकार, डंठल (पत्रवृंत) के पास कभी कभी तथा कुछ हृदयाकार, किञ्चित् नोकीला, ऊपर का भाग (उदर) चिकना और नीचे का भाग (पृष्ठ) किञ्चित् लोमश और डंठल युक्त होता है। पत्रवृंत (डंठल) लघु, आधा से $\frac{३}{४}$ इञ्च लम्बा, लोमश किञ्चित् नलिकाकार होता है। पत्र शुष्कावस्था में अधिक पीले सख्त और पीताभहरित वर्ण के होते हैं। उनमें किसी प्रकार की अप्रिय गंध नहीं होती। स्वाद बहुत कम होता है। पुष्प सूक्ष्म तारा के सदृश प्रातः सायं तथा रात्रि में विकसित होते, परन्तु दिन में जब सूर्य का प्रखर उत्ताप होता है तब वे कुम्हला जाते हैं। ये वृंतयुक्त छत्रकाकार और पुष्पवल्यावरण युक्त होते हैं। पुष्पवृंत कक्षीय साधारण, सामान्यतः विषमवर्ती पत्रवृंत की अपेक्षा दीर्घतर होते हैं। छत्रक (Umbel) साधारणतः मिश्रित, विषम, आधार पर पुष्पावल्यावरण (Involucres) द्वारा घिरे होते हैं। पुष्पावल्यावरण (Involucres) अत्यन्त लघु और स्थायी होता है। पुष्पबाह्यावरण बीजकोषाधः, स्थायी, बहुसपत्रीय (Polysepalous) होता है। सपत्र (Sepals) ५, लघु $\frac{१}{१२}$ से $\frac{१}{८}$ इञ्च लम्बे हरित या पीत हरित होते हैं। पुष्पाभ्यन्तर-कोष बीजकोषाधः एवं बहुदलीय होता है। दल ५, त्रिकोणाकार, $\frac{१}{१०}$ से $\frac{१}{८}$ इञ्च लम्बे, कभी कभी एवं किञ्चित् पीछे को झुके हुये, पीले (सिवाय आधार के सामीप्य भीतरी भागके जहाँ वे गुलाबी अथवा गुलाबी रंग के चिह्नों से युक्त) होते हैं। पराग-केशर तथा गर्भकेशर परस्पर सप्रक्त होकर एक हो जाते हैं जिसका व्यास लगभग $\frac{१}{१२}$ इञ्च होता और जो पंच पीताभ उभरी हुई रेखाओं से अंकित होता है। बीजकोष (डिम्बाशय) दो होते हैं। शिम्बी युग्म, एक दूसरी के सम्मुख और आधार पर किंचित् चिपकी हुई, एक और गावदुमी, २ से ४ इंच लम्बी मध्य में लगभग आधा इञ्च मोटी, चिकनी, एक कपाटयुक्त और स्फुटित होने वाली होती है। बीज लोमश जिसके ऊपर के सिरे वा आधार पर रूई का एक गुच्छा होता है, लघु अत्यन्त पतला, रक्ताभायुक्त धूसर वर्ण का और किञ्चित् अंडाकार होता है।

इसका पौधा वर्ष भर पुष्पमान रहता है विशेषतः उस समय जब कि लगाया जाता है।

इस पौधे के दो भेद होते हैं। यह केवलआकार एवं कुछ अन्य साधारण लक्षणों में एक दूसरे से भिन्न होते हैं। जब इनको एक अवस्था में रक्खा जाता है तब इनमें से एक दूसरे से सदा बड़ा होता है। बड़ी जाति में पुष्पदल बृहत्तर एवं न्यूनाधिक परावर्तित और कभी कभी किञ्चित् लिपटे हुये भी होते हैं। पुरातन पत्र अधिक चौड़े, पतले, गम्भीर वर्ण के और कुछ कुछ पीछे की ओर झुके होते हैं।

इस पौधे का जड़ के सम्बंध में ऐसा प्रतीत होता है कि कतिपय ग्रन्थों में यह एक दूसरी जड़ के साथ मिलाकर भ्रमकारक बना दिया गया है। उदाहरण के लिये मेटेरिया मेटिका खंड २ पृ० ८३ पर लिखे हुए वाक्य को ही लीजिए जो इस प्रकार है—

"The root of this plant'asit appears in the Indian bazars is thick' twisted of a palecolour' and of a bitterish and somewhat nauseous taste"

अर्थात् इस पौधे की जड़ जो बाजारों में दिखाई देती है, मोटी, बलखाई हुई, अस्पष्ट वर्ण की और किंचित् तिक्त एवं कुछ कुछ उत्क्लेशजनक स्वादयुक्त होती है।

प्रथम तो इसकी जड़ें विक्रयार्थ बाजारों में नहीं आतीं और द्वितीय यह कि इसकी जड़ें पूर्वोक्त वर्णन के अनुसार नहीं होतीं। देखो—वनस्पतिक वर्णनांतर्गत मूल वर्णन।

रासायनिक-संगठन—इसके पत्र का घन शीतकषाय स्वाद में किञ्चित् चरपरा होता है पत्र एवं मूल में टाइलोफोरीन (Tylophorine) अर्थात् अतमलीन नामक एक क्षारीय सत्व और दूसरा एक वामकसत्व ये दो प्रकार के सत्व पाए जाते हैं। टाइलोफोरीन जलमें तो कम परन्तु मद्यसार एवं ईथर में अत्यन्त विलेय होता है।

प्रयोगांश—शुष्क पत्र तथा मूल।

औषध निर्माण—(१) पत्र का अभिश्रित चूर्ण (Simple Powder of Tylophora Leaves (Pulvis Tylophoræ Foliæ Simplex)—पत्र जड़ की अपेक्षा कठिनतापूर्वक चूर्ण किए जा सकते हैं। पहले उनको धूप में अथवा सैंडबाथ (वालुकाकुंड) पर रखकर भलीप्रकार सुखालें। फिर चूर्णकर वस्त्रपूत करलें। इस स्थूल चूर्ण को पुनः विचूर्णित करें और पुनः बारीक चलनी या वस्त्र से छान लें तथा बंद मुँह की बोतल में सुरक्षित रक्खें। मात्रा—मूल चूर्णवत्।

(२) जड़ का अभिश्रित चूर्ण Simple Powder of Tylophora Root Pulvis Tylophoræ Simplex)—सामान्य विधि से तैयार कर बन्द मुख के बोतल में रक्खें। मात्रा—वामक प्रभाव के लिए ४० से ५० ग्रेन (२० रत्ती से २५ रत्ती तक), प्रवाहिका में २५ से ३० ग्रेन (७॥ रत्ती से १५ रत्ती) या इससे अधिक। कफनिस्सारक रूप से आधा ग्रेन।

(३) अभ्यङ्ग वा उद्धर्तन (Liniment)

(४) टाइलोफोरीन नामक सत्व।

प्रतिनिधि—यह इपिकेक्वाइना की उत्तम प्रतिनिधि है और प्रायः उन सम्पूर्ण दशाओं में जिनमें इपिकेक्वाइना व्यवहृत होता है, इसका उपयोग किया जाता है।

इतिहास, गुणधर्म तथा उपयोग—यद्यपि ऐसा प्रकट होता है कि भारतवर्ष के उस प्रांत के निवासी जिसमें अन्तमूल होता है, इसके औषधीय गुणधर्म से अति प्राचीन काल से परिचित हैं, तथापि इसके व्यापारिक द्रव्य होने का हमारे पास कोई प्रमाण नहीं और न किसी प्रमाणिक हिंदू अथवा इस्लामी निघण्टु ग्रन्थों में इसका वर्णन आया है किसी किसी ग्रन्थ में भावप्रकाशोक्त मलाण्ड शब्द इसके पर्य्याय स्वरूप लिखा है। भावप्रकाशकार मलाण्ड का गुण इस प्रकार लिखते हैं—वामनः स्वेदजननः कफनिर्हरणस्तथा।

अर्थात् मलाण्ड वामक, स्वेदजनक और श्लेष्म-निस्सारक है ये सम्पूर्ण गुण अन्तमूल में विद्यमान हैं अतः मलाण्ड को अन्तमूल मानना हमें अनुपयुक्त नहीं प्रतीत होता।

रोक्सबर्ग लिखते हैं—कारो मंडल तट पर अन्तमूल की जड़ इपीकेक्काइना की प्रतिनिधि रूप से प्रायः प्रयोग में लाई जा चुकी है मैंने प्रायः इसका सेवन कराया और सदा इससे वेही प्रभाव उत्पन्न होते हुये पाया, जिनकी इपीकेक्काइना के द्वारा होने की आशा की जाती है दूसरों से इसके अनुसार प्रभाव होने की भी मुझे प्रायः सूचनाए मिली। सन् १७८०—८३ ईसवी के युद्ध काल में आभाग्य बस हैदरअली द्वारावन्दी कृत यूरोपियनों के लिये यह अत्यन्त उपयोगी औषधि सिद्ध हुई। अधिक मात्रा में वामक थोड़ी मात्रा में और वारम्वार प्रयोग करने से विरेचक उभय विधि यह अत्यन्त प्रभावात्मक सिद्ध हुआ।

डॉक्टर रसेल (Dr. Russel) को मद्रास के फिजिशन जनरल (चिकित्सा के अधिनायक) डॉक्टर जे० एण्डरसन (Dr JAnderson) ने सूचित की कि उनको इसके युरोपीय तथा देशी दोनों सेनाओं द्वारा प्रवाहिका में जिसने उस समय सेनामें सक्रामक रूप धारण किया था सफलतापूर्ण उपयोग किये जाने का बहुत वर्ष पूर्व से ज्ञान है ऐसा मालूम होता कि इपिकेक्वाइना सर्वथा समाप्त हो चुका था और डाक्टर एण्डसन ने देशी चिकित्सकों को चिकित्सा में अपनी अपेक्षा अधिकतर सरलता प्राप्त करतेहुये पाकर उन्होंने सहज पक्षपातशून्य हृदय से स्वीकार किया कि उनसे शिक्षा ग्रहण करने में मुझे कोई लज्जा नहीं। और उन्होंने उनके बतलाए हुए पौधे को अधिक परिमाण में एकत्रित करके उनकी जड़का एक बड़ा गट्टा मदरासकोभेजा वस्तुतः यह हिंदू मेटिरिया मेडिका (आयुर्वेदीय निघण्टु) का वह द्रव्य है जो जिसकी ओर अत्यन्त ध्यान देने की आवश्यकता है। (फ्लोरा इंडिका खं० २, पृष्ठ ३४, ३५)

एन्सली लिखते हैं—इसकी जड़ श्लेष्म निस्सारक (कण्ठ्य) तथा स्वेदक प्रभावके लिये अत्यन्त प्रशस्त है। इसका शीतकषाय (Infusion) आधे चाय की चम्मच की मात्रा में कफ पीड़ित बालको को वमन कराने के लिये प्रायःप्रयोग किया जाता है। इपिकेक्वाइना के कुछ कुछ समान गुण रखने के कारण प्रवाहिका जन्य विकारों में यह लाभदायक औषध ज्ञात हुई और लोअर इंडिया के युरोपीय चिकित्सकों द्वारा समय समयपर इसका अत्यन्य लाभदायक प्रयोग किया गया। (मेटिरिया मेडिका आंफ इंडिया, २ पृ० ८३)

डा० मोहीदीन शरीफ—इस देश के कालबेलियों (सपेरों) में यह सर्पदंश आदि के अगद होनेकेलिये बहुतप्रसिद्धहै उनका कहनाहैकिजबनकुल को सर्प काट लेता है तो वह इसी पौधे की शरण लेता है देशी लोग उसके वामक प्रभाव से परिचित हैं किंतु वे इसका बहुत कम उपयोग करते हैं इस पौधे का कोई अंग बाजार में नही बिकता उपयोग में लानेके लिये इसको एकत्रित करने की आवश्यकता होती है।

कांड एवं फली सहित उक्त पौधे का सर्वांग वामक है परन्तु जड़ एवं पत्र केवल सर्वोत्तम ही नही प्रत्युत उपयोग के लिये सरलतापूर्वक चूर्ण भी किये जा सकते हैं।

पुनः प्रवाहिका में तथा कण्ठ्य एवं स्वेदक रूप से इसकी जड़ इपिकेक्काइना की कहीं सर्वोत्तम प्रतिनिधि है।

चार साल हुए जब मुझे कतिपय देशी दवाओं की आलोचना का अवसर प्राप्त हुआ तब अन्तमूल के सम्बन्ध मेंरे विचार निम्न प्रकार थे।

वामक रूप से तथा अधिक मात्रा में प्रवाहिका की चिकित्सा में दोनों प्रकार से इपिकेक्काइना की प्रतिनिधि स्वरूप में पाए जाने वाली एतद्देशीय औषधों में यह सर्वोत्तम है। २० से ४० ग्रेन (१० से २० रत्ती) इसका चूर्ण और इतनी ही बूंद की मात्रा में टिंक्चूरा ओपियाई २४ घंटों में दिन में तीन चार बार सेवन कराने से वह उतना ही शीघ्र एवं सफलतापूर्वक रोग का

निराकरण करता है जितना शीघ्र कि इपिकेक्काइना श्वास रोग में वामक या कफघ्न रूप से इसका उपयोग इपिकेक्काइना की अपेक्षा उत्तम रहता है

सर्पदंश के अगद स्वरूप कोई अन्य औषध की अपेक्षा एमोनिया के बाद अन्तमूल पर मेरा अधिक विश्वास है जब तक स्वतंत्र वमन न आने लगे तब तक इसका ताजा रस अधिक मात्रामें थोड़ी २ देर पर देते रहें इसके बाद सशक्त एवं सर्वांगिक उत्तेजक का व्यवहार करें।

देशी औषधोंके अपने अधिक विशाल अनुभव के पश्चात मैंने अन्तमूल को सर्वोत्तम हो नहीं प्रत्युत भारतीय ४,५ सर्वोत्कृष्ट वामक औषधियों में एक पाया।

कतक (निर्मली) तथा मदनफल के पश्चात् इसका दर्जा आता है। यद्यपि इसका सर्वांश वामक है तथापि प्रवाहिका में केवल इसकी जड़ उत्तम रोग निवारक कार्य करती है। उक्त रोग में इसका प्रभाव कतकवत होता है (स० फा० इं० पृ० ३६३)

डाक्टर किर्कपत्रिक (Cat of mysore drugs)में लिखते हैं'यदि प्रबल वमन की आवश्यकता हो तो २० से ३० ग्रेन की मात्रा में उक्त औषधि को एक या आध ग्रेन टार्टार इमेटिक के साथ दें। मैं शुष्क पत्र का चूर्ण औषध रूप से व्यवहार करता हूं!

कोंकड़में १-२ तो० तक रस वामक रूप से व्यवहार किया जाता है शुष्क कर इसकी मूँग के बराबर बटिकाएं प्रस्तुत कर प्रवहिका में बरती जाती हैं पर्याप्त मल प्रवर्तन हेतु एक गोली काफी है इंडियन फार्माकोपिया में इसका पत्र आफिसल है (फा० इं० २ भा० पृ० ४३६!

डा० नदकारिणी—प्रभाव में पत्र से जड़ श्रेष्ठ है। ये कोष्ठमृदुकर (Laxative) और प्रवाहिका में १५ ग्रेन की मात्रा में उत्तम औषध हैं। इनको साधारणतः चूर्ण रूपमें किंचिद बबूर निर्यास तथा अफीम १ ग्रेन के साथ मिला कर व्यवहार करते हैं। शिरोरोग एवं वात वेदना में शिर में इसकी जड़ का प्रलेप करते हैं कास तथा अन्य उन शिरोविकारों में जिनमें साधारणतः इपिकेक्काइना व्यवहृत होता है। यह अत्यन्त लाभदायक पाया गया है। अतीसार तथा प्रवाहिका की प्रथमावस्था में भी जबकि ज्वर विद्यमान हो इनको १० ग्रेन की मात्रा में १ आउंस जल के साथ तथा उसमें १ ड्राम कीकर का लुआबऔर आवश्कतानुसार चौथाई ग्रेन अफीम मिलाकर दिया जा सकता है। यदि विषम अथवा मलेरिया ज्वर हो तो इसके साथ क्वनीन (कुनैन) सम्मिलित कर देना चाहिये श्वासोच्छ्वास विकार तथा कुकर खांसी (whooping Cough) की प्राथमिक अवस्था में इसे ५ ग्रेन की मात्रामेंदिनमें तीन बार अकेले अथवा आधा ड्राम मुलेठी शर्बत में आधा आउंस जल मिलाकर इसके साथ दिन में तीन बार सेवन करें। यह रक्त शोधक तथा परिवर्तक रूप से अति प्रख्यात है और आमवात में इसका उपयोग किया जाता है यह तिक्त सुगन्धित तथा उत्तेजक है। यह औपदंशीय आमवात में भी प्रयुक्त होता है स्थानिक रूप से यह प्रशामक है और सधिवात जन्य वेदना निवारणार्थ प्रयोग में आता है। इं० मे० मे०।

श्वास कास और प्रवाहिका में अन्तमूलके पत्ते के क्वाथ (१० में १) तथा इसकी जड़ के शीत कषाय की परीक्षा की गई। उक्त रोगों में ये अत्यन्त लाभदायक पाए गए। (Ind Drugs Report'Madras)

यह औषध बंगाल फार्माकोपिया (१८४४) और फार्माकोपिया आफ इंडिया (१८६७) में प्रविष्ट है विस्तार के लिए देखो फार्माकोग्राफिया फल्कोजर महोदय रचित पृ० ४८७।

आर० एन० चोपरा—यह पौधा नीची एवं रेतीली भूमि में साधारण रूप से मिलता है। यह औषधि देशी चिकित्सा में विस्तृत रूप से व्यवहार में आ चुकी है इसलिए इसके पत्र एवं जड़ अत्युत्तम ख्याल की जाती हैं। इसके सूखेपत्तों को १० से २० ग्रेन की मात्रा में दिन में २–३ बार देने से कहा जाता है कि प्रवाहिका में

उपयोगी है। पुरातन काल में कण्डू रूप से भी यह लाभप्रद है (इं० ड्रू० इं० पृ० ६००)

अन्तमोरा-वं० मरोड़फली आवर्तकी, आवर्तनी, (Heli cteres Isora *Linn*)। मृग-शृंग गु०. स०।

अन्तर-हिं० सज्ञा पु० (१) एक कीड़ा जो बैलों को काटता है। जय० (२) दूतर अमृ० सा०।

अन्तरङ्ग-कुम्भिका। सं० भीतरी अंग। अथर्व०। सू० ७। ८। का० ६।

अन्तरगङ्गा-ङ्गे-कना०, द० जलकुम्भी। (Pistia stratiotes *Linn*) मे० मो०।

अन्तर तामर-ते० जल कुम्भी। (Pistia stratiotes *Linn*) मे० मो०। इं० मे० मे०।

अन्तर नायनी-सं० स्त्री० अन्तर वाहिनी। (Adducter)

अन्तर नायनी पेशी-
अन्तर वाहिनी पेशी- सं० स्त्री० किसी अंग को मध्य रेखा की ओर ले जाने वाली पेशी (जैसे बाहु को वक्ष की ओर और एक जाँघ को दूसरी जाँघ की ओर ले जाने वाली) एडडक्टर (Adductor muscle) इ० अजलह् मुकर्रिबह् अ०।

अन्तरपडत-हिं० पु० योनि का भीतरी पर्दा। वं० कल्प०।

अन्तर पाचा-सं० पु० अन्तमूल (Tylophora asthama tica) इं० मे० मे०

अन्तरम्-सं० क्ली० अवकाश। छिद्र। मध्य। मे० त्रिकम्।

अन्तरमुख-हिं० पु० जहाँ गर्भाशय की ग्रीवा तथा उसके अन्दर का भाग मिलता है उसको अन्तर मुख कहते हैं। वं० कल्प।

अन्तर लसिका-हिं० स्त्री० (Endolymph)

अन्तर वाहिनी-सं० स्त्री० अन्तरनायनी (Adductor)

अन्तर बाह्य कृमिनाशक-हिं० पु०।

अन्तरा-हिं० पु० चरण, मध्य, पद, निकट बीच बिना (In the middleamong'near at hand Withoutexcept)

अन्तरा ज्वर-
अन्तरतप- हिं० संज्ञा पु० (Tertian-fever) वह ज्वर जो बीच में एक एक दिन का अंतर देकर चढ़े। एकतरा ज्वर अँतरिया बुखार तिजारी बुखार देखो—तृतीयक:।

अन्तरात्म-हिं० पु० जीवात्मा, प्राण (The internal and spiritual partof man the soul)

अन्तरापत्या-सं० स्त्री० गर्भिणी, गर्भवती, । हामिलह् हाविलह् हब्ला अ० प्रेग्नेण्ट (Pregnant) इं०

अन्तरामिषीयः-सं० पु० (Endomysium) मांसान्तरीय।

अन्तराय-हिं० पु० बाधा, विघ्न, रुकावट। (Obstruction)

अन्तरायामः-सं० पु० आक्षेपक भेद। एक रोग जिसमें वायु कोप से मनुष्य की आँखें, ठुड्डी और पसली स्तब्ध हो जाती है और मुँह से आपही आप कफ गिरता है तथा दृष्टिभ्रम से तरह तरह के आकार दिखाई पड़ते हैं।

लक्षण—जब बलवान वायु अन्तरायाम को करती हैं तथा अङ्गुली, गुल्फ (पाँवकी की गांठ, गट्टा), पेट, हृदय, वक्षःस्थल और गलेमें रहने वाली वायु वेगवान होकर स्नायु समूह (नाड़ी-समुदाय) को भी कम्पित करती है तो उस समय उस मनुष्य की आँख पथरा जाती है, ठोड़ी जकड़ जाती है. पसलियों में टूटने की सी पीड़ा होती है। कफ का वमन करता और वह छाती से (आगे की ओर) कमान के समान नत हो जाता है। भा०। मा० नि०।

अन्तरालम्-सं० पु०
अन्तराल- हिं० संज्ञा पु० (१) अन्दर, अन्तर (Interspace) (२) घेरा, घिरा हुआ स्थान। आवृत्त स्थान। (Included space)। (३) बीच।

अन्तरावयव-हिं० संज्ञा पु० स्त्री की वस्ति का आभ्यंतरीय भाग जिसमें गर्भाशय तथा गर्भाशयके

बंधन, स्त्री अण्ड, फलवाहिनी और योनि मार्ग का समावेश होता है। बं० कल्प०।

अन्तरिच्छ,च्च-हिं० संज्ञा पु० आकाश (The sky,atmosphere)।

अन्तरित-हिं० वि० भीतरी, आन्तरिक (InWard'internal)।

अन्तरिया-हिं० स्त्री० तिजारी, तीसरे दिन जाड़ा देकर आने वाला ज्वर, अन्तरात (A tertian ague)। देखो-तृतीयकः।

अन्तरि(री)क्षम्-सं० क्ली० पृथ्वी और सूर्यादि लोकों के बीच का स्थान। कोई दो ग्रहों वा तारों के बीच का शून्यस्थान। आकाश, गगन, शून्य, नभ व्योम, अधर रोदसी (The sky or atmosphere) रा० नि० व० १३।

अन्तरी-हिं० स्त्री० अन्त्र। (Intestines)

अन्तरीप-हिं० संज्ञा पु० (१) द्वीप, टापु। (२) A Promontory cape) रास। पृथ्वी का वह नोकीला भाग जो समुद्र में दूर तक चला गया हो।

अन्तरीय-सं० हिं० वि० अन्तः- } निचला, भीतर का अन्दर का, भीतरी, मध्य (Inward internal) जो चीज शरीर में मध्य रेखा की ओर रहती हैं उसके लिये छेदन शास्त्र की परिभाषा में अंतरीय या अन्तः शब्द का प्रयोग होताहै। इन्सी अन्दरूनी -अ०।

अन्तर्मुखम्-सं० क्ली० (१) व्रण विस्रावणास्त्र विशेष। अत्रि०। कुशपत्र और आठी मुख के समान अन्तर्मुखनामक शस्त्र स्राव के लिये उपयोग में लाया जाता है। इसका फल डेढ़ अंगुल होता है (२) कुशाटा के सदृश ही एक अर्ध चंद्रानन शस्त्र होता है, यह भी स्राव के निमित्त काम आता है।

अन्तर्मुखी-सं० स्त्री० स्त्रीयोनिरोग विशेष। च० चि०

अन्तर्लसीका-सं० स्त्री० (Endolymph)

अन्तर्वत्नी-सं० स्त्री० गर्भिणी गर्भवती। (Pregnant) अमा०।

अन्तर्वर्मिः-सं० स्त्री० अपरिपाक, अजीर्ण (Dyspepsia) त्रिका०।

अन्तर्विद्रधि-सं० पु० जठरांतस्थ विद्रधि रोग।

निदान व लक्षण—भारी अन्न का भोजन करने से असात्म्य (जो अपने को प्रतिकूल हो) विरुद्ध भोजन, सूखा हुआ शाक और रूखे पदार्थों को खाने से, अत्यन्त मैथुन करने से- आम से मल मूत्रादि वेगों को राकने से अत्यन्त उष्ण पदार्थों से दाह जनक पदार्थों से अलग अलग अथवा सब एकत्र मिलकर कोप को प्राप्त हुए दोष गुदा के भीतर, वंक्षण संधियों के भीतर, कोख में बगल में प्लीहा और यकृत में, हृदय में, अथवा तृषा लगने के भीतर, सॉस की बाँबी और ऊंचे गुल्म के समान विद्रधि उत्पन्न करते हैं। इनविद्रधियों के लक्षण बाहर की विद्रधियों के समान जानना चाहिए। भा० म० २। विद्रधिः

अन्तर्वृद्धिः-सं० पु० अन्त्रवृद्धि रोग आँत उतरने का रोग (Hernia)

अन्तर्वेधः-सं० पु० मर्मभेद, मर्म्म पीड़ा। (Serious pain)

अन्तल-कना० रीठा। (Sapindus Trifoliatus) फा० इं० १ भा०।

अन्तलीस-यु० एक बूटी है जो वृक्ष तथा घास के मध्य होती है। इसके पत्ते मसूर के पत्तो के समान होते हैं। और इसकी शाखाएं अत्यन्त खुरदरी और एक बालिश्त के बराबर होती हैं। (A plant)

अन्तश्शय्या-सं० स्त्री० मरण, मृत्यु। (Dying, death) मे०। (२) मृत्युशय्या, मरणखाट भूमिशय्या। (३) श्मशान, मसान, मरघट।

अन्तश्श्रोत्रम्-सं० क्ली० अन्तःस्थकर्ण। (Internal ear)

अन्तश्श्रोत्र मार्गः-सं० पु० (Internal Acoustic Meatus) अंतःस्थकर्ण सुरंग। कर्णान्तर नाली।

अन्तश्श्रोत्रमार्गद्वारम्-सं० क्ली० (Porus Acousticus Internus) कर्णान्तर द्वार।

अन्तस्तल-
अन्तस्थल- } सं० हिं० पु० भीतरी भाग। भीतरी तल। (End plates, Internal Surface)

अन्तस्त्वक्-सं० पु० (१) अन्तरकला (Epithelium)। (२) अधस्त्वक् (वृत्त)।

अन्तस्नेहफला-सं० स्त्री० श्वेत कंटकारी, सफेद भटकटैया, श्वेत कटकारिका (रा) श्वेत कंटारिका।

अन्तस्सुषिर-सं० पु० भीतरी छिद्र (Hollow)

अन्तामरा-बं० मरोड़फली, मरोड़ी, अइता गों० हिं० (Helicteress Isora *Linn*) इं० मे० प्लां०।

अन्ताव्यसायी (इन्)-सं० पु० (१) नापित, नाई, हज्जाम ; (A Barber a shaver) मे० (२) घिसक। चांडाल।

अन्तिक-हि० पु० समीप, पास।

अन्तिका-सं० स्त्री० (१) सातला, सीकाकाई (Acacia concinna *D. C.*) (२) चुल्लि। मे० कत्रिकं।

अन्तिम-हिं० वि० [सं०](Finalultimate) जो अंत में हो आखिरी। सबसे पिछला सबसे पीछे का (२) चरम। सबसे बढ़के।

अन्तुलह-अंदलुसी० एक बूटी है यह २ प्रकार की होती है (१) अंतुलहे बैजाअ् तथा (२) अंतुलहे सोदाअ्।

अन्तुलहे बैजाअ्-अंदलुसी० साधारण इन्दुलसी (Spainish) लोग इसको भी फहीक कहते हैं। इसके पत्ते सनाय के पत्तों के समान होते हैं। गंध तीक्ष्ण सुगन्धि युक्त और स्वाद मधुर होताहै इसके पत्ते उपयोग में आते हैं ये समस्त विषों के अगद हैं। यह बूटी इन्दुलस (Spain), चीन तिब्बत और भारतवर्ष के पर्वतों में उत्पन्न होती है।

अन्तुलहे सौदाअ्-अंदलुसी० इसको जदवार, इंदुलुसी(Spainish) में फहीक और हिन्दी में निर्विसी कहते हैं। इसके मूल शाखा में शाखा युक्त और बड़े होते हैं। पत्र मकोपत्र सदृश, किंतु रक्त आभायुक्त होतेहैं। किसी किसी के मतानुसार हंसराज के पत्तों के समान होते हैं। स्वाद तिक्त।

अन्तू-कल डुम्बो-ता० दोपाती लता (Ipomœa biloba, *Forsk*) फा० इं० २ भा०।

अन्तोमूत्त-बं० अन्तमूत्त ; (Tylophora Asthamatica)

अन्तरीय उदरच्छदा-हिं० स्त्री० (Transversalis Abdominis) अन्तः उदरच्छदा।

अन्तरीय जननेन्द्रिय-हिं० संज्ञा स्त्री० (Internal organ of generation) वह जननेन्द्रिय जो वस्ति गह्वर के भीतर रहती है। और इस कारण बाहर से दिखाई नहीं देती जैसे शुक्राशय, शुक्रप्रणाली, प्रोस्टेट, शिश्नमूत्र ग्रन्थि।

अन्तरीय नाड़ीकोष-हिं० संज्ञा पु० Internal capsule)

अन्तरीय पटल-हिं० संज्ञा पु० भीतरी पर्दा। (Inner-coat)

अन्तरीय पटल शोथ-हिं० संज्ञा पु० (Choroiditis) नेत्र के भीतरी परदे की सूजन।

अन्तरीय पृष्ठ-हिं० पु० भीतरी पृष्ठ, अन्तस्थल। (Internalsurface).

अन्तरीक्ष-हिं० पु० आकाश। (The sky or atmosphere)

अन्तरीक्ष जलम्-
अन्तरिक्ष जलम्- } सं० क्ली० आकाश जल, गगनाम्बु' गगनोदक, नीहार जल, वर्षा (वृष्टि) जल। (Rain water)

अन्तरुहा-सं० स्त्री० श्वेत दूर्वा, सफेद दूब। See shveta durvva.

अन्तरोत्पादक-हिं०(Entoderm)

अन्तर्गत-हिं० पु० (In the midst) भीतरी शामिल, अन्तर्भूत।

अन्तर्गति-हिं० स्त्री० (InWard Sensations) मन की तरङ्ग (Forgotten) विस्मरण ।

अन्तर्जङ्घास्थि-हिं० स्त्री० Shin-bone(Tibia) जङ्घास्थि टाँग की दो अस्थियों में से अङ्गुष्ट (शरीर की मध्य रेखा के निकट) की ओर की अस्थि । कसबहे कुब्रा, अज़मुल् कस् बत्-अ० ।

अन्तर्जठरम्-सं० क्लो० कोष्ट, कोठा, । कुक्षिमध्य, कोख । अमर०

अन्तर्जानु महराव-हिं० पु० (Innercondylar notch) घुटनों के अन्तरीय हड्डी की महराव ।

अन्तर्दधनम्-सं० क्ली० सुराबीज, किण्वक । येस्ट Yeast इ० श० च० ।

अन्तर्दाहः-सं० (हि०) पु० (१) शरीराभ्यन्त-दाह शरीर के भीतर दाह होना, छातीकी जलन, कोष्ठ संताप कोठे के भीतर की जलन रा० नि० व० २०। (२) सन्निपात ज्वर विशेष ।

लक्षण—जिस सन्निपात ज्वर में मनुष्य शरीर के भीतर दाह हो ऊपर से शीत लगे सूजन बेचैनी श्वास और सम्पूर्ण शरीर जला सा हो जाए उसे अन्तरदाह. सन्निपात ज्वर से पीड़ित जानना चाहिए । भा० म० १ भा० ।

अन्तर्द्वार-हिं० पु० भीतरी दरवाजा (केवाड़)। (A private door)

अन्तर्धर्मा-सं० स्त्री० (Endoderm orHypoblast) अन्तर्वलिष्ठा ।

अन्तर्धूमः-सं० त्रि० मुख बधे हुए हंडिका के भीतर अग्नि जलाने से उत्पन्न हुआ धूम । च० द० प्रहणी चि० चित्रकल्प ।

अन्तर्पट-हिं० पु० ओट, आड़, टट्टी, पर्दा। (A curtain'as kreen)

अन्तर्वलिष्ठा-सं० स्त्री० (Endodermor Hypoblast) अन्तर्धर्मा ।

अन्तर्वेल-कों० आकासवेल (CuscutaReflexa) ।

अन्तर्भूत-हिं० वि० [सं०] मध्यगत, मध्य में स्थापित । (In the midst) अन्तर्गत । शामिल । संज्ञा पु० जीवात्मा । जीव ।

अन्तर्मणिक-हिं० पु० (Styloid Process ofulna) अन्तः प्रकोष्ठास्थि के सिर के पास एक छोटा सा नोकेला उभार जो अंगुलीसे टटोल कर मालूम किया जा सकता है ।

अन्तर्मलः-स० पु० (१) मलांत वृक्ष, अन्तमूल । कश्चिदन्त्रि । See Antamula । (२) भीतर का मल । पेट के भीतर का मैला ।

अन्तर्महानादः-सं० पु० शङ्ख । (A Conch)

अन्तर्मुखी-सं० स्त्री० योनिरोग विशेष । यदि स्त्री बहुत भोजन करके विषम रीतसे बैठकर पुरुषसंगम में प्रवृत्ति हो तो वायु भुक्त अन्न से प्रपीड़ित होकर योनि के स्रोत में अवस्थित होकर योनि के मुख को टेढ़ा कर देता है ऐसा होने से योनि की हड्डी और मांस में घोर वेदना होने लगती है इस रोग का नाम अन्तर्मुखी योनि व्यापत् है वा० उ० अ० ३३ ।

अन्तर्लोहिता-सं० स्त्री० एसा रोगी जिसके भीतर रुधिर भर जाने से हाथ पांव श्वास और मुख ठंडे हो गये हों, आंखों में ललाई देहमें पाण्डु वर्णता और अफरा भी हो तो उसे अन्तर्लोहिता कहते हैं यह सदा दुश्चिकित्स्य होती है वा० उत्त० अ० २६ ।

अन्तःउदरच्छदा पेशी-सं० स्त्री० उदरच्छदा अन्तःस्था । (Transveralis Abdominis)

अन्तःउपाङ्गीया-सं० स्त्री० (Internal angular artry) धमनी विशेष ।

अन्तः अंस नाड़ी-हिं० स्त्री० कंधे की भीतरी नाड़ी । (Deepnerve of the shoulder)

अन्तःकण्ठगाशिरा-हिं० स्त्री० (Internaljugular vein) गले की अन्दर वाली अशुद्ध रक्त नाली ।

अन्तः कण्ठशल्यावलोकिनी-सं० स्त्री० नाड़ी यंत्र विशेष । यह दस अंगुल परिमाण की होतीहै अग्निः ।

अन्तकरणम्–सं० क्लो० (१) अन्तरिन्द्रिय, भीतरी अवयव' हृदय, मन, अन्तरात्मा । (२) भीतरी चार इन्द्रियां (बुद्धि अहंकार, चित्त और मन) अन्तःकरण अर्थात् भीतरके च र औजार कहलाते हैं (The understanding, the he art,the will the co :science the soul) देखो—अन्तःकरण

अन्तः करतली नाड़ी-हिं० स्त्री० (Deeper nerve of hand.) हथेली की गहरी नस

अन्तः कर्त्तनक–हिं० संज्ञा पु० कर्त्तनक दांतों में से भीतरी दाँत, अन्तः छेदक दन्त । (First molar)

अन्तः कुटिलः–सं० पु० (Theconch shell) शंख । शांक व० । See-shankha.

अन्तःकूर्परिका धमनी–सं० स्त्री० (Medial cubital) तन्नामक धमनी विशेष ।

अन्तःकूर्परिका शिरा–स० स्त्री० तन्नामक शिरा विशेष ।

अन्तः कोटरपुष्पी, ष्पिका–सं० स्त्री० नील वुह्मा, छगलाँत्री–स० । छागलबेंटे बं० । प० मु० । रत्ना० देखो छगलांत्री (Chhagalantri)

अन्तः जानु पिण्ड–हिं० पु० (Inner tuberosity) घुटनों पर जंघास्थिका मोटा उभार ।

अन्तः जंघासाकी आंतरिक शाखा–सं० स्त्री० (Deep tibial nerve inner branch पैर को नाड़ी की भीतर को शाखा ।

अन्तः जंघासाको बाह्यशाखा–हिं० स्त्री०(Deep tibial nerve outer branch) पैर की नाड़ी की बाहरी शाखा ।

अन्तः जंघासा नाड़ी–हिं० स्त्री० (Deep tibial nerve) टखने (पैर) की गहरी नस ।

अन्तः जंघासा पेशी–हिं० स्त्री० (Inner part of thesoleus muscle) टखनेकी अन्दर की पेशी ।

अन्तः जंघस्थि–हिं० स्त्री० (Tibia) टखने की अन्दर की हड्डी ।

अन्तः जंघीया धमनी–हिं० स्त्री० (Innerartery of the thigh) जाँघ के अन्दर वाली धमनी ।

अन्तः जंघीया नाड़ी–हिं० स्त्री० (Deep nerve of the thigh) जांघके अन्दरकी नाड़ी ।

अन्तः जंघीया शिरा–हिं० स्त्री० (Internal saphenousvein) जांघ के अन्दर वाली अशुद्ध रुधिर की नली ।

अन्तः त्रिपार्श्विका–हिं० संज्ञा स्त्री (Internal or first cuneiform) कूर्चास्थियों में से एक (प्रथमा) त्रिपार्श्विक अस्थि विशेष ।

अन्तः पटल–हिं० पु० (Retina) नेत्र का जल दार पर्दा शब्किय्यह् तबकहे शब्किय्यह् अ० ।

अन्तःपदवी–स० पु० सुषुम्ना नाड़ी । (Spinal cord) वै० श० ।

अन्तपाती–हिं० वि० (Medial) बीच वाला मध्यवर्ती अन्तर्गत ।

अन्तः पादतलिकी धमनी–सं० स्त्री० धमनी विशेष

अन्तः पूयुकः–सं० पु० (Endoneurium)

अन्तः प्रकोष्ट चालिनी नाड़ियाँ–हिं० स्त्री० (ब० व०) (Deep nervesof the lower arm)अग्रबाहुँ (हाथ) के अन्दर की नाड़ियां।

अन्तः प्रकोष्ठास्थि–सं० स्त्री० दोनों प्रकोष्ठास्थियों में से कनिष्ठा की ओर की अस्थि । (Ulna)

अन्तः प्रकोष्ठिका धमनी–सं० स्त्री० (Ulnar artery) अग्र बाहु (हाथ) की अन्दरवाली रुधिर नाली ।

अन्तः प्रकोष्ठ(ष्ठिका) नाड़ी–हिं० संज्ञा स्त्री० (Ulnar nerve) भीतरी प्रकोष्ठ नाड़ी ।

अन्तःप्रकोष्ठिका शिरा–सं० स्त्री० (Bessilic vein) शिरा विशेष ।

अन्त प्रगण्ड चालिनी–हिं० स्त्री०(Deep nervesof the upper arm) भुजा की अन्दर की नाड़िया ।

अन्तः प्रगण्डीया शिरा–सं० स्त्री० शिरा विशेष।

अन्तःप्रविष्ट योनि -सं० स्त्री० वह योनि जो भीतर की तरफ चली गई हो।

अन्तः प्राचीर-सं० (हिं० संज्ञा) पु० (Inner wall) भीतरी दीवार।

अन्त फल-हिं० संज्ञा स्त्री० अण्ड, आण्ड-हिं०। ओवरी (Ovary) इं०। यह गर्भाशय के प्रत्येक बाजू (बगल) में एक एक पृथुवन्द के बीच में स्थित बादाम की आकृति के स्त्री अंड को कहते हैं। इनकी लम्बाई आध इञ्च चोड़ाई ३/४ इंच मोटाई आधा इञ्च होती है वं० कल्प देखो डिम्बाशय।

अन्तः शरीर-हिं० पु० आत्मा चिदात्मा। (The internal & Spiritual part ofman, the conscicnce, the soul)

अन्तः शिरोधीया धमनी-स० स्त्री० (Int ernalcarotid artery) तन्नामक धमनी विशेष।

अन्तः श्रोणिगा धमनी-सं० स्त्री० (Internal iliac artery, Hypo, gastric) पेडू के आंतरिक अंगों को पोषणकरनेवालीधमनी।

अन्तः श्रोणिगा शिरा-सं० स्त्री०वस्ति देश की शिरा (Internal ili ac vein Hypogastric vein)

अन्तःश्रोत्र धमनी-सं० स्त्री० (Intern al Auditory artery-) अन्तःस्थकरण धमनी

अन्यःश्रोत्रम्-सं० क्ली० अन्तःस्थकर्ण। अंतर्कर्ण। (Internal ear)

अन्तः श्रोधीया शिरा-सं० स्त्री शिरा विशेष।

अन्तः श्वसनम्-सं० क्ली० निःश्वास'श्वास लेना उच्छ्वास,अंतर्मुख, श्वास।(Inspiration) वायु का नासिका में से होकर फुफ्फुसों के भीतर प्रवेश करना (इससे छाती फैलकर पहिलेसे बड़ी हो जाती है)।

जवान मनुष्य एक मिनट में १६-१७ श्वास लिया करता है।

अन्तःश्वेत-हिं० पु० हाथी, गज। (An elephant)

अन्तः सत्वा-सं० स्त्री० हिं० संज्ञा पु० (१) (Se. mecarpus anacardium) भल्लात क वृक्ष, भिलावे का पेड़ हिं० वि० गर्भिणी, गर्भवती (A preganantfemale) श० च०।

अन्तःसुषुम्ना शोथ-हिं० सज्ञा पु० (Poliomyelites)

अन्तः स्तनीया-सं० स्त्री० स्तन की पोषण करने वाली (Inter nalmammary artery)

अन्तः स्थकर्ण-हिं० पु० (Internal ear) गहन, अंतःकर्ण।

अन्तःक्षेप-हिं० संज्ञा पु० [सं० अन्तः+क्षिप् फेंकना] (Injection) इन्जेक्शन इसका शाब्दिक अर्थ भीतर फेंकना है। परन्तु अर्वाचीन वैद्यकीय परिभाषा में किसी तरल द्रव्य का शरीर के किसी भाग के भीतर सूचीवेध (इंजेक्शन सिरिञ्ज) द्वारा अथवा तद्वत् किसी अन्य यंत्र द्वारा प्रविष्ट करना (सूचिकाभरण) अन्तक्षेप कहलाता है। सूचीवेध। सूचिकाभरण। जर्क अ० देखो—सूचीवेध।

अन्त्य-हिं० संज्ञा पु० [सं०] शेष का, नीच, अधम, जाति, जघन्य A shudra or man of the fourth tri be।

वि० अंत का। अंतिम। आखीरी सब से पिछला।

अन्त्यकोष्टकः-सं० पु० (Terminal Vent ircle) आखीरी कोष्ट।

अन्त्यगण्डुः-सं० पु० (Termin al Ganglion) अंतिम गण्ड।

अन्त्यतन्तुः-सं० पु०

अन्त्यपुष्पा-सं० स्त्री० धातुकी वृक्ष, धव का पेड़। (Anogeissus latifolia) वै० निघ०।

अन्त्यफलकम्-सं० क्ली० (Motor end plate)

अन्त्याङ्गम्-सं० पु० अंतके यंत्र। (End organ)

अन्त्यः-सं० पु० मुस्ता, मोथा। (cyperus rotundus)।

अन्त्रम्-सं० क्ली०
अन्त्र- हिं० संज्ञा पु० } प्राणियों के पेट के भीतर

की यह लम्बी नली जो गुदा मार्ग तक रहती है। खाया हुआ पदार्थ पेट में कुछ पच कर फिर इस नली में जाता है और मल या रद्दी पदार्थ बाहर निकाला जाता है। मनुष्य की आँत उसके डील से पांच व छः गुनी लम्बी होती है।

पर्य्याय—पुरीतत् (रा० नि० व० १८), आंत्र-सं० अतड़ी अंत्र, आँत, रोधा, अत्री-हिं०। मिआअ् (ए० व०) अम्आअ् (व० व०) मसार्र (ए० व०), मस्सरीन (व० व०)-अं० इन्टेस्टाइन Intestine (ए० व०), इन्टेस्टाइञ्ज Intestines (व० व०), बांवेल Bowels (ए० व०) वावेल्ज Bowels (व० व०)-इं०।

नोट—आंकार तथा परिमाण के अनुसार आँतें दो प्रकार की होती है—

(१) छोटी और (२) बड़ी। पुनः इनमें से प्रत्येक के ३-३ भेद होते हैं। देखो=क्षुद्रांत्र व बृहदांत्र।

अन्त्रअन्योन्यानुद्रविष्ट—हिं० संज्ञा पु० आँतका एक भाग से दूसरे भाग में उतर जाना। इस विकार में ऊपर के आँत का भाग, अधःस्थित आँत्र भाग के पोले स्थान में घुस जाता है। आंत्र के उस भाग को जो प्रवेश करता है प्रवेशक (Intussueptum) और जिस आंत्र के पोले स्थान में वह प्रविष्ट होता है उसको ग्राहक (Intussucepiens) कहते हैं। आन्त्रान्त्र प्रवेश।

पर्य्याय—आंतों में बल पड़ना, आंतों में गिरह पड़ जाना। इल्तिवाउल्लफाइफ, इंलूतिबाउल् अम्आअ्, एलाऊस, कौलञ्ज इल्तिवाई, मगस रव्य इर्हुम, इन्गिमाद्लू अम्आअ्, तगन्मदूल् अम्आअ्-अ०। इन्टस् ससेप्शन (Intussusception) इंलियस Ileus, वोलव्युलस Volvulus; इन्वैजिनेशन Invagination-इ०।

पर्य्याय निर्णायक नोट—एलाऊस वस्तुतः यूनानी भाषा में शब्द है जिसका अर्थ बलखाना या आवर्तन है। एलोपैथिक परिभाषा में इन्टस्ससपेशन तथा वालव्युलस सामान्यतः स्थूल एवं क्षुद्र दोनों प्रकार की आंतों के व्यावर्त्तन के लिये प्रयोग में आते हैं। परन्तु इंलियस मुख्यतः केवल ऊर्ध्व क्षुद्रांत के आवर्त्तन के लिये प्रयुक्त होता है।

उक्त अन्त्रान्त्रप्रवेशन की क्रिया लघ्वान्त्र और स्थूलांत्र की संधि स्थान में हुआ करती हैं लघ्वांत्र का भाग स्थूलांत्रके भीतर कभी कभी इतने वेगसे प्रविष्ट हो जाता है या खिचा हुआ चला जाता है कि उसके परत एकदम गुदद्वार के मुख तक पहुच जाते हैं। कभी कभी लघ्वांत्र का एक भाग उसी के अन्य भाग में प्रविष्ट हो जाता है इस प्रकार को लघ्वांत्रिक (Enteric) कहते हैं। और कभी कभी स्थूलांत्र का एक भाग उसी के अन्य भाग में प्रविष्ट होजाता है, इसे स्थूलांत्रिक (Colica) कहते हैं। ५० प्रतिशत से भी अधिक रोगियों में अधर क्षुद्रांत्र और अंत्रपुट को बृहदांत्र में प्रविष्ट होते हुए देखा गया है। इस प्रकार की अंत्रप्रवेशन क्रिया को अधःक्षुद्रांत्रपुटिक (Ileocæcalis) कहते हैं। इसी प्रकार अधर क्षुद्रांत्र, उत्तर क्षुदांत्र तथा द्वादशांगुलांत्र का भी व्यावर्त्तन होता है। किसी किसी में अधर क्षुद्रांत्र में अधर क्षुद्रांत्र अपने एक अन्य भाग में प्रविष्ट होकर अधरक्षुद्रांत्रपुटिक कपाट से गुजर कर बृहद्रांत्र में पहुँच जाती है। इसको अधरक्षुद्रबृहदांत्रिक (Ileocolica) कहते हैं।

निदान

आंत्र प्रदाह, आंत्र क्षत तथा आंत्रस्थ मांसार्बुद के कारण आंत्रावरोध होना, आंत्र के ऊर्ध्व भाग का अधःभाग में उतर जाना और अंत्रवृद्धि में आंत्रावरोध का हो जाना प्रभृति।

लक्षण

तीव्र आशुकारी, आंत्रांत्रप्रवेशजन्य आंत्रावरोध विशेषकर छोटे बच्चों में पाया जाता है। इसके कारण बच्चों को कभी कभी आक्षेप होता है। रोगी को सख्त मलावरोध होता है, बार बार वमन आता है, अंततः वमन में मल विसर्जित

होने लगता है जो इस रोग का एक नैदानिक लक्षण है। उदरशूल होता है और उदराध्मान द्वारा वह फूलकर ढोलवत् हो जाता है। रक्त और श्लेष्मा मिश्रित मल निकलता, रोगी अत्यधिक कांखता रहता और बलक्षय आदि लक्षण होते हैं। बलक्षय से बालक २४ घंटे में गत प्राण हो जाता है। यदि रक्त अवधि के भीतर गत प्राण न हो तो उदरककलाप्रदाह के लक्षण (श्वास, हिक्का, तीव्र ज्वर, हृदय की त्वरित गति इत्यादि) होते हैं। विकारी स्थल पर एक उभार सा मालूम होता है। रोगी अत्यन्त तड़फड़ाता है और बड़े कष्ट से प्राण निकलते हैं।

रोगविनिश्चय

बाल्यकाल एवं अत्युग्र अन्त्रअन्योन्यानुप्रविष्ठ की दशा में प्रागुक्त लक्षणों को भली प्रकार देखने से सरलतापूर्वक इसका निदान हो जाता है। परन्तु कतिपय अति पुरातन दशाओं में, जो प्रौढ़ावस्था में होता है, इसका निदान करना सर्वथा सरल नहीं। इसका स्वरूप चिरकारी आंत्रावरोध जैसा ही व्यक्त होता है। उदर को चीर कर देखने पर ही इसका वास्तविक रूप समझ में आ सकता है।

चिकित्सा

इस रोग में कदापि विरेचन न देना चाहिये। वस्तिक प्रारम्भ में जब शूल, आध्मान और अधिक बलक्षय हो तब उष्ण जल, तैल या तैल व पतले मंड की वस्ति देनी चाहिये अथवा धौकनी द्वारा आंतों में वायु प्रविष्ठ कराना या रोगी को उलटा करके बलपूर्वक हिलाना उपयोगी होता है। परंतु जब वेदना व आध्मान अत्यधिक हो और बलक्षय एवं निर्बलता असीम हो उस समय सिवा शल्यक्रिया अर्थात् चीर फाड़की चिकित्सा के और कोई उपाय नहीं। अस्तु, जितनाशीघ्र ऑपरेशन किया जाय उतना ही अच्छा हो। परन्तु इसे कोई दक्ष शल्यशास्त्री ही कर सकता है।

नोट—बस्तिदान काल में सेर स्वासेर उष्ण जल वस्तियंत्र की नली द्वारा अंत्र में दूर तक पहुँचाना चाहिए। जल बाहर निकल आने पर उदर के नीचे से ऊपर की ओर धीरे धीरे मलना चाहिये। यदि रोगी को उलटा कर हिलाना हो तो पहिले उसको ईथर वा क्लोरोफार्म सुँघाकर बिसंज्ञ कर लेना चाहिये।

आयुर्वेद के अनुसार उदावर्त रोगाधिकार में वर्णित चिकित्सा कुछ अंश में, इस रोग के प्रतीकारार्थ सफलीभूत हो सकती है। अस्तु, खूबसोच समझ कर तदनुसार कोई औषध की व्यवस्था करने से रोगी लाभ अनुभव करता है और वह चीर फाड़ के बखेड़े से बच जाता है। किन्तु दवा का प्रबंध यथासम्भव शीघ्र ही करना चाहिए।

प्राचीन यूनानी चिकित्सकों ने चूंकि इसके वास्तविक रूप को समझने में धोखा खाया, अतएव उन्होंने इसकी चिकित्सा अवरोध जन्य उदरशूल के समान लिखी है। उदाहरणार्थ—विरेचन का प्रयोग और बास्तिदान या पेट पर सूज्री (सींघिया) लगाना आदि। परन्तु जैसा कि वर्णन हुआ इस रोग में विरेचन देना अत्यंत हानिकारक है। इस लिये प्राक्कथित डाक्टरी चिकित्सा की ही शरण लेना चाहिये।

पथ्य—रोगी को थोड़ा, स्निग्ध एवं उष्ण और पतला आहार दें। दूध में सोडाबाटर मिला कर या दूध में अण्डे फेंटकर या पतला साबू, अरारूट, यखनी (मांसरस) अथवा शोरबा प्रभृति थोड़ी थोड़ी मात्रा में तीन—तीन चार चार घन्टे बाद दें। यदि इतने पर भी न पचे तो पोषक वस्ति द्वारा रोगी का पोषण करें।

अन्त्रकणिका-सं० स्त्री० गेंदा, पत्रचारिणी। (Tagetes Erecta),

अन्त्रकूज:-सं० पु० वायुरोग विशेष। नाड़ी शब्द। (Rumble) सु० नि० १ अ० १६ श्लो०।

अन्त्रकूजनम्-सं० क्ली० (Rumble) आंत्रध्वनि, आँतों का शब्द, पेटमें गुड़ गुड़ (गड़गड़) आदि शब्द होना, आंतों की गुड़गुड़ाहट, अंतड़ियों की कुड़कुड़ाहट।

अन्त्रच्छदा कला–हिं० संज्ञा स्त्री० (Omentum) अंत्रच्छदाकला।

अन्त्रताम्रा–सं० स्त्री० गेंदा, पञ्चचारिणी। (Tagetes Erecta),

अन्त्रधारक कला–हिं० संज्ञा स्त्री० उदरच्छदा कला वह भाग जो आंत को पृष्ठवंश के साथ बांधता है। मेसेन्टरी Mesentery-इं०। मासारीका अ०। देखो–मासारीका।

अन्त्र परिशिष्ट–सं० हिं० पु० उपांत्र (Appendix), बृहत् अंत्रके आरंभिक थैली जैसे भाग (अत्रपुट) में दो तीन इञ्च लम्बी एक पतली नली लगी रहती है, उस नली को उपांत्र या अंत्रपरिशिष्ट कहते हैं। उपांत्र का क्या विशेष काम है यह अभी किसी को ठीक तौर से मालूम नहीं। सब मनुष्योंमें इसकी लम्बाई एक ही जैसी नहीं होती; किसी में यह आधा इञ्च से अधिक लम्बी नहीं होती है। किसी में ८ इञ्च लम्बी भी होती है। इस नली का कभी कभी प्रदाह हो जाता है, और फोड़ा भी बन जाता है तब इसको काट कर निकाल देने की आवश्यकता होती है। देखो—उपांत्र।

अन्त्रपाचम्–सं० क्ली० स्थावर विषांतर्गत त्वक् (छाल) और सार तथा निर्यास (गोंद) विष विशेष। सु० कल्प० १ अ० श्लो० ७।

अन्त्रपुच्छ–हिं० संज्ञा पु० (Appendix) अन्त्र परिशिष्ट।

अन्त्रपुट–हिं० संज्ञा पु० सीकम् Cæcum–इं०। (मिश्र.अ.) अश्वर-अ०। रोदहे चहारम्, रोदहे काज, कानी आंत–उ०।

चतुर्थ आंत, यह बृहदन्त्र में की वह आंत है जो अधरक्षुद्रांत्र के बाद थैली की शकल में स्थित होती है। आंतों के विरुद्ध दो मार्गों के स्थान में इसमें केवल एक ही मार्ग होता है। इसीलिए अरबी में इसको अश्वर अर्थात् एक चक्षु या कानी आंत कहते हैं। अंत्रवृद्धि में प्रायः यही आंत अन्डकोषो में उतर आती है, क्योंकि अन्य आंतों के समान यह बंधक सूत्रों द्वारा बँधी नही होती।

अन्त्ररुत्सेचनापः–सं० पु० सँड़ाधावरोधक, पचननिवारक। (Antiseptic)

अन्त्रवचा–सं० हिं० स्त्री० चोवचीनी (Smilax glabra, *Roxb*),

अन्त्रवल्लिका–सं० स्त्री० अहिफेन। रा० नि० व० ६।

अन्त्रवल्ली–सं० स्त्री० सोमवल्ली लता। वै०श०।

अन्त्रविद्रधि–सं० हि० स्त्री० उपांत्र प्रदाह, (Appendicitis)

अन्त्रवृद्धि–हिं० संज्ञा स्त्री०
अन्त्रवृद्धिः–सं० स्त्री० } अंत्रांडवृद्धि, अंत्रवृद्धि

(Intostinal Hernia, Hernia)। फत्क मिअ्आई, फत्क मिअ्वी–अ०। आंत का फत्क–उ०। आंत उतरना आंत उतरने का रोग एक रोग जिसमें आँत का कोई भाग ढीला होकर नाभि के नीचे उतर कर फोते में चला आता है और फोता फूल जाता है जिससे अण्डकोष में पीड़ा उत्पन्न होती हैं। अतएव केवल लक्षण की ओर ध्यान रख कर आयुर्वेद में इसे वृषण विकारांतर्गत मान लिया गया है। परन्तु अण्डवृद्धि एक अलग रोग है जिसको डाक्टरी में ऑर्काइटिस (Orchitis) अर्थात् अण्डप्रदाह कहते हैं। देखो—वृद्धि।

नोट—चिकित्सा प्रणालीत्रय के ग्रंथों के गवेषणापूर्ण तुलनात्मक अध्ययन से यह स्पष्ट रूप से ज्ञात होता है कि आयुर्वेदीय चिकित्सा ग्रंथों में वृद्धि शब्द का प्रयोग जिन अर्थों में होता है प्रायः उन्हीं अर्थों में अंगरेजी शब्द हर्निया (Hernia) और अरबी फत्क् का होता है। यद्यपि ये तुल्यार्थक नहीं और न इनका सर्वांश में समान भावों के लिये उपयोग ही होता है, तो भी अल्प सामान्य भेदों के सिवा इनमें समानता का ही अधिक भाव सन्निविष्ट है। अस्तु इनका पूर्णतः समान अर्थों में प्रयोग करना हमें श्रेष्ठतर जान पड़ता है। पूर्ण विवेचन के लिए देखिए वृद्धि।

तीनो चिकित्सा प्रणाली के मत से अन्त्रवृद्धि वृद्धिरोग का केवल एक भेद मात्र है।

निदान लक्षण—वातप्रकोपक आहार करने, शीतल जल में डुबकी लगाकर नहाने, मल मूत्र के वेग रोकने अथवा मल मूत्र का वेग न होते हुए बलपूर्वक उनके प्रवर्तन करने बलवान के साथ युद्ध करने, अधिक बोझ उठाने, अत्यन्त मार्ग चलने, अङ्गों के टेढ़ा मेढ़ा चलाने इत्यादि कारणों से तथा अन्य वातप्रकोपक कारणों द्वारा प्रकुपित वात क्षुद्रान्त्रीय अवयवों को विकृत (संकुचित) कर उनको जब अपने स्थान से नीचेलेजाता है तब वे वंक्षण की सन्धि में स्थित हो वहां गांठ के समान सूजन को प्रगट करते हैं। इसे ही अन्त्रवृद्धि कहते हैं। फिर यही ग्रंथि रूप से स्थित हो कुछ काल में यह फलकोषों में प्राप्त होती है। इसकी चिकित्सा न करने से आध्मान, पीड़ा तथा रक्तसंयुक्त मुष्कवृद्धि उत्पन्न होती है। मा० नि० वृद्धि०।

चूँकि आंत्रवृद्ध रोग कभी तो जातज होता है और कभी सम्पादित। अस्तु, इसके हेतु भी दो प्रकार के होते हैं। अर्थात् एक जातज और दूसरा संपादित। अब इनमें से प्रत्येक का पृथक् पृथक् सविस्तर वर्णन किया जाता है :—

(१) जातज या सहज अर्थात् पैदायशी कारण-(क) वृषण प्रदेश में अण्डमार्ग का बन्द न होना, बालकों में अन्ड का वृषण में देर से अथवा कम उतरना।

(ख) उदर की दीवार तथा मांस पेशियों का जन्म से कमजोर होना और वंक्षण की नाली प्रभृति के छिद्रों का कोमल होना।

(ग) आंत्र के बधन अथवा उस की वसामय झिल्ली का अस्वाभाविक रूप से लम्बा होना भी इस रोग का हेतु हैं।

(घ) सहज रूप से उदर की दीवार के कतिपय मांसपेशियों के सम्मुख छिद्र या दरार का रह जाना जिनके मार्ग से अंत्र (वा वसा) प्रभृति ऊपर को उभर आती है। उदरीय वृद्धि का प्रायः यही कारण हुआ करता है!

(ङ) जन्म काल में नाभि का विकृत रह जाना, जिससे नाभ्यन्त्रवृद्धि होती है।

(२) संपादित हेतु

(क) उदर पर चोट का लगना।

(ख) शस्त्रक्रिया करने के पश्चात् क्षत का यथार्थ रूप से पूरित न होना।

(ग) अधिक भार वहन अधिक भार उठाना विशेषतः उठाकर सीधे खड़ा हो जाना या चलना क्योंकि उक्त अवस्था में उदर पर जोर पड़ता है, विषमांग प्रवर्तन, खांसने आदि चेष्टाओं से (इन कारणों से वात प्रकुपित होने के कारण) वे छिद्र और भी बड़े हो जाते हैं, तथा उन्हीं के द्वारा काल पाकर बड़ी अंतड़ियों का (अथवा छोटी अंतड़ियों का भी) कुछ भाग नीचे उतर कर सरल मार्ग से वंक्षण सन्धि से होते हुये वृषणों में प्रवेश कर जाता है। ऐसी स्थिति में जब उन छिद्रों में आकुञ्चन की क्रिया होती है तब उन अंतड़ियों में दबाव के पड़ने से अत्यन्त वेदना होती है।

चिरकारी कास, अत्यन्त श्रम और चिरकारी मलावरोध इत्यादि कारणों से भी यह रोग हो जाता है।

(घ) जठर स्नायु को दुर्बल या शिथिल करने वाले कारण—मेदोवृद्धि, आंत्रपतन रोग इत्यादि।

(ङ) बस्त्यश्मरी प्रभृति के कारण जब मूत्रावरोध हो, जिससे मूत्रोत्सर्ग काल में काँखना या जोर लगाना पड़े, तब भी प्रायः यह शिकायत हो जाती है।

(च) गर्भावस्था में उदर की दीवार पर जोर पड़कर उसके तनने से भी उदरांत्रवृद्धि की उत्पत्ति होती है।

(छ) उसी प्रकार वृद्धावस्था में जब उदर शिथिल होकर तोंद निकल आता है तब उग्र कास प्रभृति से इस रोग के होने का भय रहता है

(ज) स्थूल या मेदावी व्यक्तियों को भी यह रोग अधिक हुआ करता है। क्योंकि उदरस्थ मेदवृद्धि के कारण उदरीय अवयवों पर भार पड़कर पेट तना रहता है इत्यादि।

वृद्धि के भाग

प्रत्येक वृद्धि सम्बन्धी अर्बुद के तीन भाग होते हैं। यथा—(१) ग्रीवा, (२) गात्र और (३) मुख।

अस्तु आँत का हिस्सा जहाँ निकलता है उसको ग्रीवा और जहां ठहरता है उसे गात्र कहते हैं। कई बार ग्रीवा के तंग होने के कारण या ग्रीवा का मुख बन्द हो जाने के कारण अन्त्रवृद्धि विन्यस्त नहीं हो सकती।

अन्त्रवृद्धि भेद

स्थानानुसार एवं विविध लक्षणों से युक्त होने के कारण अन्त्रवृद्धि रोग कई प्रकार का होता है। यहां उनमें से प्रत्येक का विस्तृत वर्णन दिया जाता है।

(१) वंक्षणांत्रवृद्धि जब अन्त्रच्छदा कला वंक्षण स्थान में विदीर्ण हो जाय जिससे कोई वस्तु (अन्त्र वा वसा प्रभृति) उदर में से नीचे आकर वंक्षण अर्थात् चड्डे की नली में रुक जाए, किंतु अण्डकोष में न उतरे, तब उसको उक्त नाम से अभिहित करते हैं, अरबी में इसे फत्कुल् उर्विय्यह वा फतक फखजी तथा अंग्रेजी में ब्युबोनोसील (Bubonocele) कहते हैं।

नोट—ज्ञात रहे कि वंक्षण में दो प्राकृतिक नलियां होती हैं—(१) वंक्षण नलिका (Inguinal canal) इस मार्ग से होकर अंड अपनी डोरी (अंडधारक रज्जु) से अण्डकोष में उतरता है। और (२) ऊर्ध्व नलिका (Femoral ctnal) इसके रास्ते उरु की रगें गुजरती हैं। अस्तु जब उदर में से अन्त्र वा वसा वंक्षण नलिका में उतर कर उभार आए तब उसको वंक्षणांत्रवृद्धि कहते हैं और यदि वह ऊर्ध्व नलिका (जो वंक्षण के बाहर की ओर स्थित है) में उतर कर उभर आए तो उसको ऊर्ध्वांत्रवृद्धि कहते हैं, अब इनमें से प्रत्येक का अलग अलग वर्णन किया जाता है।

वंक्षणांत्रवृद्धि

चड्डेका फत्क—उ०। फत्कुल् उर्विय्यह्—अ० इंग्विनल हर्निया (Inguinalhernia)-इं० इसके मुख्य चार भेद हैं—

(१) वंक्षण सरलांत्रवृद्धि, (२) वंक्षण तिर्यग् (असरल) अन्त्रवृद्धि, (३) सहजांत्रवृद्धि और (४) कोषाकार वृद्धि। रोगकी उन्नति के विचार से पुनः इनकी ये अवस्थाएं होती हैं। अस्तु, यदि वृद्धि वंक्षण की नली के भीतर ही रहे, बाहर न निकले तो उसे अपूर्ण अन्त्रवृद्धि अरबी में फत्क नाकिस तथा अंगरेजी में इन्कम्प्लीट हर्निया (Incomplete hernia) वा ब्युबोनोसील (Bubonocele) कहते हैं। और जब वह बाहर निकल आए तब उसको क्रमशः पूर्ण अन्त्रवृद्धि, फत्क कामिल तथा कम्प्लीट हर्निया (Cmpiete hernia) कहते हैं। चूंकि पुरुषों में यह अण्ड कोष में चली जाती है। अस्तु इसको अण्डकोष वृद्धि (मुष्क वृद्धि) फत्क सिफन् वा फोतह् का फत्क और स्क्रोटल हर्निया (Scrotal hernia) कहते हैं। स्त्री के शरीर में यह वंक्षण वा उरुसन्धि के कुछ नीचे प्रकट होती है स्त्रियों की अपेक्षा यह पुरुषों को ही हुआ करती है। इसे आयुर्वेद में ब्रध्न कहा गया है। इनमें से यहाँ प्रत्येक का पृथक् पृथक् वर्णन किया जाता है—

(क) तिर्यग् वंक्षण अन्त्रवृद्धि

चड्डेका तिर्छा फत्क—उ०। फत्कुल् उर्विय्यह् मुन्हरिफ—अ०। आब्लीक इंग्वीनल हर्निया (Oblique inguinal hernia)-इं०।

इस प्रकार की आंत्रवृद्धि वंक्षण प्रणाली (Inguinal canal) में होती है, उससे बाहर नहीं निकलती। लक्षण—इस प्रकार की वृद्धि में रोगी के खड़े होने या खाँसने से वंक्षण की नाली के भीतर उभार प्रतीत होता है यदि नाली के भीतर अंगुली प्रविष्ट कर रोगी को खांसने की आज्ञा दें तो खाँसने से अंगुली पर उक्त वृद्धि के आघात का बोध होता है। इस भाँति की तिर्यग् वंक्षण वृद्धि में वृद्धि अण्डाकार होती है। उस पर छः परत होते हैं। कौवेयी

धमनियां और अण्डधारक रज्जु उक्त वृद्धि के पीछे तथा अण्डकोष उसके नीचे होते हैं।

(ख) सरल वंक्षण अन्त्रवृद्धि

चड्डेका सीधा फत्क-उ०। फत्कुल् उर्बियह् मुस्तकीम-अ०। डायरेक्ट इन्बीनल हर्निया (Direct inguiral hernia)-इं०।

लक्षण—इस प्रकार की वृद्धि में आंत्र प्रभृति वंक्षण नलिका में से न निकल कर उसके बहिश्छिद्र के पीछे से निकलती है। इस दशा में वृद्धि अत्यन्त स्थूल होती है। तिर्यग् वृद्धि के समान इस पर भी छः परदे होते हैं। इस तरह की वृद्धि में कौक्षीय धमनियां और अण्डधारक रज्जुएँ वृद्धि की ग्रीवा की बाह्य ओर और अण्ड पीछे की ओर स्थित मालूम होते हैं। वृद्धि अर्बुदाकार गोल शकल की उपस्थमूल के समीप स्थित होती है।

(ग) जातज वा पैदायशी (सहज) अन्त्रवृद्धि

पैदायशी फत्क-उ०। फत्क मौलूदी अ०। कन्जेनिटल हर्निया (Congenital hernia)-इं०।

यह भी एक प्रकार की तिर्यग् अन्त्रवृद्धि है जो जन्म काल अथवा जन्म के पश्चात् उपस्थितहोती है। इसमें वसा व अन्त्र का भाग फोतों के साथ अण्डवेष्ट में उतर आता है और उसके कोष्टों में रहता हैं। इसकी थैली उक्त वेष्ट के परदों से बनती है और अन्त्र अन्ड के पीछे रहती है। इस प्रकार की रसौली (अर्बुद) गोल और उसकी ग्रीवा संकुचित होती है। यद्यपि अन्ड वृद्धि से प्रथक् होते हैं। परन्तु, उससे आवृत्त होते है। इसके साथ अन्डकोष में जल सचित (कुरण्ड-हायड्रोसील) भी होता है।

नोट—गर्भावस्था में अण्ड उदर में उदरच्छदा कला (परिविस्तृत कला) के पीछे और वृक्क के नीचे रहते हैं। पांचवें मास में वृषण की गोलियां वृषणों में उतरती हैं। किसी किसी के मत से ५ या ६ मास हो जाने पर ये गुठलियां उदर गह्वरसे वस्ति गह्वर में आती है, फिर सातवें मास में कमर के सामने और आठवें मास में अपने वृषण स्थान में उतर पड़ती है। जब अण्ड उदर में से उतर कर अण्डकोष में आता है, तब उस पर उदर की दीवार के मांस एवं सौत्रिक पांच कोषों के अतिरिक्त एक कोष उदरककला (Peritoneum) का भी होता है। इसके दो भाग होते हैं। प्रथम वह जो अण्डधारक रज्जु को आच्छादित करता है और द्वितीय जो अण्ड को आवरित करता है। जन्म के बाद अण्डधारक रज्जु को आच्छादित करने वाला उदरक कला का भाग नष्ट हो जाता है और अण्डवाला भाग अण्डवेष्ट का निर्माण करता है। परन्तु जातज अन्त्रवृद्धि में अण्डधारकरज्जु वाला उदरककला का भाग नष्ट नहीं होता। अत एव उदरककला तथा अण्डवेष्ट के बीच रास्ता रह जाता है जिससे होकर उदर से वसा वा अन्त्र उतर आती है।

कोषयुक्त वृद्धि—कोसह्दार फत्क-उ०। फत्क युकस्स-अ०। इन्सिस्टेड हर्निया (Incysted Hernia)-इं०।

यह भी एक प्रकार की जातज वृद्धि ही है जिसमें अण्डधारकरज्जु आच्छादक उदरककला का भाग एक पर्दे के कारण थैली बन जाता है। यह थैली साधारणतः अण्डवेष्ट के पीछे रहती है इस प्रकार की वृद्धि का जातज वृद्धि से निदान करना कठिन होता है। क्योंकि दोनों के लक्षण समान होते हैं।

स्थानानुसार इसके कतिपय अन्य भेद होते है जिनमें से प्रत्येक का यहां क्रमशः वर्णन किया जाता है। यथा—

उदरीय वृद्धि—पेट का फत्क-उ०। फत्क बतनी, फत्कमराकुल्बतनी-अ०। ऐब्डोमिनल हर्निया (Abdominal hernia)-इ०।

इस प्रकार की वृद्धि में नाभि के गिर्द उदरक कला के फट जाने के कारण वसा वा अन्त्र ऊपर को उभर आती है।

(२) नाभ्यंत्र वृद्धि—नाफ का फत्क–उ०। फत्क सुर्रा, फत्क सुर्रती, नुतूउल्-सुर्रह–अ०। अम्बिलाइकल हर्निया Umbilical hernia आमफेलोसील Omphalocele–इं०।

इस प्रकार की वृद्धि में नाभिस्थल पर उदरक कला के फट जाने के कारण वसा वा अन्त्र ऊपर को उभर आती है। इस लिये नाभि भी उभरी हुई मालूम होती है। ऐसे रोगी को भारतवर्ष में सूएडा (पं० में धुन्नज) कहते हैं। इसके तीन प्रकार हैं:—

१—जन्मतः बाल्यावस्था में होने वाली।

२—प्रौढ़ावस्था में होने वाली।

३—वृद्धावस्था में होने वाली।

(३) अन्त्र वृद्धि—आँत का फत्क–उ०। फत्क मिआई, फत्क मिअवी–अ०। इन्टेस्टाइनल हर्निया Intestinal hernia–इं०।

यह वही प्रकार है जिसका वर्णन हो रहा है। आयुर्वेद में केवल एक इसी प्रकार की अन्त्रवृद्धि का वर्णन किया गया है। देखो—वृद्धि।

(४) सक्थि वृद्धि (ऊर्ध्वन्त्र वृद्धि)

रान का फत्क–उ०। फत्क फख्जी–अ०। फेमोरल हर्निया Femoral hernia–इं०।

इस प्रकार की वृद्धि में वंक्षण के बाहर (उरु या जानु के ऊपरी भाग) की ओर उरु की नाली (Femoral Canal) में वसा वा अन्त्र बाहर को उभर आती है। इस प्रकार का फत्क प्रायः स्त्रियों को हुआ करता है। जिस स्त्री के कई बच्चे हो गये हों उसको प्रायः यह विकार होता है।

लक्षण—वंक्षण के बाहर की ओर उरु के ऊर्ध्व भाग में एक गोल उभार या सूजन जान पड़ती है और खाँसते समय संक्षोभ इत्यादि लक्षण होते हैं।

नोट—पूर्व यूनानी चिकित्सकों ने इस प्रकार की वृद्धि (फत्क) को भी वंक्षणस्थवृद्धि फत्क उर्विय्यह) संज्ञा से ही अभिहित किया है परन्तु इसको ऊर्ध्वस्थवृद्धि (फत्क फख्जी) कहना अधिक उपयुक्त एवं उचित है। डाक्टरी में इसको फेमरलसील (Femoral cele) भी कहते हैं।

(५) अण्डकोष वृद्धि (अन्त्रांड वृद्धि)—फोते का फत्क–उ०। फत्क सफनी, कोलह, उबरह, कर्ब–अ०। स्क्रोटल हर्निया (Scrotal hernia)–इं०।

इस प्रकार की वृद्धि में अण्डकोष में अन्त्र उतर आता है।

नोट—अण्डकोष में पानी उतरने को कुरुड Hydrocele (सूत्रज वृद्धि) और वायु उतरने को वातज वृद्धि Physocele कहते हैं देखो—वृद्धिः।

(६) गुह्यनिद्रिक वृद्धि—शर्मगाह की फत्क–उ०। फत्कुल् इस्तिह्याई–अ०। पुडेण्डल हर्निया Pudendal hernia–इं०।

इस प्रकार की वृद्धि में वसा वा अन्त्रका कोई भाग गुह्येन्द्रिय की ओर उतर आना अर्थात् उभर आता है।

(७) जठरस्थ वृद्धि—वेण्ट्रल हर्निया Ventral hernia–इं०।

यह वृद्धि नाभि के ऊपर होती है।

दबने वाली वृद्धि

दबने वाला फत्क–उ०। फत्क गिमाजी अ० रेडयुसिबल हर्निया Reducible hernia–इं०।

इस प्रकार की वृद्धि चित लेटने पर आपही या हाथ से उसको (आंत्रवृद्धि को) विन्यस्त करने पर दूर होती है, केवल उस समय के जब ग्रीवा का मुख बंद हो या तंग। खांसने या खड़े होने की दशा में वह फिर प्रगट होती है। रोगी के खांसते समय यदि शोथस्थल पर हाथ रक्खा जाए तो यह फैलता हुआ मालूम होता है। खांसने से शोथ पर तरंग सी मालूम होती है यह शोथ उदर की दीवार से जुड़ा हुआ प्रतीत होता है।

अंत्रवृद्धि होने की दशा में शोथ गोल, कोमल और नमनीय (लचकदार) होती है। हर्निया को विन्यस्त करने पर यदि आंत होगी तो गड़गड़

शब्द करेगी और झटके के साथ उदर गह्वर के भीतर प्रविष्ट होगी। मेदवृद्धि होने पर उभार चपटा, ढीला और विषम होता है और विन्यस्त करने पर धीरे धीरे उदर में प्रविष्ट होता है।

न दबनेवाली वृद्धि

न दबने वाला फतक-उ०। फतक आसी-अ०। इर्रेड्यूसिबुल हर्निया Irreducible hernia-इं०।

इस प्रकार की वृद्धि में उतरी हुई वस्तु (अंत्र प्रभृति) दबाने से अपनी जगह पर लौट नहीं जाती, अपितु दिन दिन बढ़कर विविध प्रकार के दुःखों का कारण होती है। इस प्रकार की वृद्धि पाशित वृद्धि में परिणत होकर अशुभ लक्षणों को उत्पन्न कर देती है।

लक्षण—उदर में शूल, चूसनवत् पीड़ा, आध्मान, मलबद्धता इत्यादि नानाप्रकार के उपद्रव खड़े हो जाते है। ऐसा स्थितिमें, उस अतड़ी को ऊपर स्वस्थान में पहुँचाने का प्रारम्भिक उपाय तो करना ही चाहिये, किन्तु साथ ही साथ उसमें शोथ न आने पावे इसका भी उपाय करते रहें। रोगी को अल्पाहार करना तथा पड़े रहना चाहिये। इधर ऊधर घूमना और खड़ा रहना हानिकर है।

शोथयुक्त वृद्धि

सूजा हुआ फतक, सुतवर्म फतक=उ०। फतक वर्मी-अ०। इन्फ्लेमूड हर्निया Inflamed hernia-इं०।

इस प्रकार की वृद्धि में उतरी हुई वस्तु (आँत प्रभृति) में शोथ हो जाता है, अस्तु, विकारी स्थान पर सूजन होती और उसमें पीड़ा उष्णता तथा रक्तवर्णता हो जाती है और उदरक कला के प्रदाह के लक्षण भी प्रारम्भ हो जाते हैं, सूजन के बाद अवरोध के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं, तीव्र वेदना होती और प्रायः न्यूनाधिक ज्वर, वमन, अजीर्ण मलबद्धतादि लक्षण हो जाते हैं, इसमें अन्त्र भाग विन्यस्त नही हो सकता है।

अवरोधजन्य वृद्धि

सुदह् बाला (दार) फतक-उ०। फतक सुद्दी-अ०। इन्कासिरेटेड हर्निया Incarceratedhernia-इं०।

यह वृद्धिकी एक अवस्था है जिसमें उतरी हुई वस्तु (आँत प्रभृति) कोष की ग्रीवा में किसी प्रकार की अवरोध होने अथवा किसी अन्य कारण से उसका विन्यास नही हो सकता। उस में अत्यन्त वेदना होती है। कभी कभी तीव्र उदावर्त्त के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। इस प्रकार की वृद्धि व्यक्तियों को हो जाया करती है।

पाशित वा अवरुद्ध अन्त्रवृद्धि

फँसा हुआ फतक-उ०। फतक इख्तिनाकी-अ०। स्ट्रैङ्गुलेटेड हर्निया Strangulated hernia-इं०।

इस प्रकार की उतरी वृद्धि में उतरी हुई वस्तु (आंन्त्र प्रभृति) शोथयुक्त होकर छिद्रों में पूर्णतया फँस जाती है। वह (अन्तड़ी) ऊपर तो नहीं जाती प्रत्युत उसका कुछ भाग, वंक्षण संधि के अभ्यन्तरिक छिद्रों में दृढ़ता के साथ अटक जाता है तथा अत्यंत वेदना को करता है। कोई इसी को "अन्त्र या वद कहते हैं यह अन्त्रवृद्धि की वह एक तीसरी अवस्था है जिसकी उपेक्षा करने से मृत्यु अवश्यम्भावी होती है।

लक्षण—मलावरोध तथा उदराध्मानवत् शूल होता है और बार बार दस्तकीहाजत होती है किन्तु दस्त नहीं उतरता या बहुत ही कम होता है। पुनः वमन आते हैं पहिले आमाशयस्थित सब आहार मुख द्वारा बाहर निकल पड़ता है। फिर अम्ल तथा तिक्त ऐसा पित्त निकलता है। फिर कुछ श्वेत पदार्थ (कदाचित यह रस ही निकलता हो) निकलता है। बाद में मल के समान दुर्गन्धित पदार्थ निकलता है—अर्थात् पुरीषावरोध जन्य उदावर्त के प्रायः सब लक्षण दिखाई पड़ते हैं।

यथा—

आटोप शूलौ परिकर्तिका च संगः पुरीषस्य तथोर्ध्ववातः।
पुरीष मास्यादथवा निरेति पुरीष वेगेऽभिहते नरस्य॥

तदनन्तर वृषण वा वंक्षण स्थिति शोथ पत्थर के समान कठोर हो जाता है किन्तु धीरे धीरे

बढ़ता ही जाता है। रोगी का चेहरा काला पड़ जाता है। वमन बन्द नहीं होते, रोगी को किसी प्रकार चैन नहीं पड़ता वह निराश हो जाता है नाड़ी की गति मद पर रह रह के चपल होती है हिक्का की भी प्रबलता होती है।

कुछ काल पश्चात् व सूजन या गांठ कुछ श्याम वर्ण की होती है वेदना कुछ शमन हुई सी जान पड़ती है रोगी की जीवनाशा कुछ पल्लवित सी होती है कि तुरन्त ही यमराज उसका समूल नाश कर देते हैं।

अन्त्रवृद्धि की असाध्यता—

वह अन्त्रवृद्धि (उपक्षणात्मक अंड वृद्धि) जिसमें अफरा, पीड़ा और जड़ता हो उसकी चिकित्सा न करने पर यदि अंड कोष को दबाने पर उसमें की वायु आँतों समेत ऊपर को चढ़ जाए और छोड़ने पर नीचे उतर अन्डकोषो को फुला दे और उसमें उक्त सभी वात के लक्षण मिलते हों तो वह अन्त्रवृद्धिअसाध्य है जैसा कि लिखा है—

उपेक्ष्यमाणस्य च मुष्कवृद्धिमाध्मान रुक् स्तम्भवतीं स वायुः। प्रपीडितोऽन्तः स्वनवान् प्रयाति प्रध्मापयन्नेति पुनश्च मुक्तः॥
अन्त्रवृद्धिर साध्योऽयं वातबृद्धि समाकृतिः।
मा० नि०।

यहां पर यह बात ध्यान रखने योग्य है कि आयुर्वेदीयमतानुसार अन्त्रवृद्धि और मूत्रज वृद्धि दोनों वात के ही कारण से होती हैं केवल उत्पत्ति के हेतु पृथक पृथक हैं। अर्थात् मूत्र संधारणादि से कुपित हुआ बात मूत्रज वृद्धि करता है और भार हरण विषमांग प्रवर्त्तनादि से कुपित हुआ वात मूत्रज वृद्धि करता है और भार हरण, विषमांग प्रवर्त्तनादिसे कुपित वायु अंत्रज वृद्धियों (Intestinal Hernia) जैसा कि लिखा है—

मूत्रांत्रजावप्य निलाद्धेतुभेदस्तु केवलम्।

अंतवृद्धि में वृषणांतगत अंड या ग्रन्थि में किसी प्रकार शोथ या प्रदाह उत्पन्न नहीं होता और जो वेदना होती है, वह सदैव नहीं होती, किंतु जब होती है तब बहुत असह्य होती है।

चिकित्सा

आयुर्वेदीय मतानुसार—

आंतें जब तक अंडकोष में न उतरी हों तब वात वृद्धि के सदृश चिकित्सा करें यथा—

अंत्रहेतु के।
फलकोशम सम्प्राप्ते चिकित्सा वात वृद्धिवत्।
वा० चि० अ० १३।

यदि रोगी को कब्जियत रहती हो तो उसकी जठराग्नि दीपन करने के लिये वस्तिकर्म के द्वारा नरायण तेल का प्रयोग करें।

अंत्रवृद्धिमदीप्ताग्ने वस्तिभिःसमुपाचरेत्।
तैलनारायणं योज्य पानाभ्यंजन वस्तिभिः॥

अंड कोष में आंतों के उतर आने की दशा में निम्नांकित उपचार करें।

सुकुमार नामक रसायन वाग्भट्टोक्त तथा गंधर्वहस्त तैल इस रोग में उत्तम प्रमाणित होते हैं। अस्तु इनमें से किसी एक का नियमपूर्वक उपयोग करसे से लाभ होता है।

गोमूत्र योग—गोमूत्र १॥ से २ तो० में गूगल (१ से ३ मा०) अथवा एरन्ड तैल १ से १॥ तो० मिलाकर नित्य सवेरे पान करने से अंत्रवृद्धि का नाश होता है, यह योग वातज वृद्धि पर भी अच्छा काम देता है।

रास्नादि क्वाथ

रास्ना, गिलोय, खिरेटी, मुलहठी, गोखुरू, और एरण्ड की जड़, इनको समभाग लेकर, यवकुट चूर्ण करलें। नित्य प्रातः २ से ४ तो० तक चूर्ण लेकर उसमें ३२ से ६४ तो० तक जल डालकर मन्दाग्नि से औटाऐ जब ४ तो० या ८ तो० जल शेष रहे तब उतार कर छान लें। फिर उसमें एरण्ड तैल १ या २ तो० डाल कर पान करने से (७ या १४ दिन तक) अवश्य लाभ होता है। यथा शार्ङ्गधर—

रास्नामृतावलायष्टी गोकण्टेरंडजः शृतः ।
एरंडतेल संयुक्तो वृद्धिमन्त्र भवांजयेत् ॥

लाख, कचनार के बीज, सोंठ, देवदारु, गेरू, कुंदरू, इनको काँजी में पीस कर अण्डकोष पर गरम गरम प्रलेप करने से अन्त्रवृद्धि दूर होती है, यथा—

लाक्षा कांचनका बीज शुंठी दारु गैरिकम् ।
कुन्दरू कांजिकैर्लेप्यमुष्णमंत्र विबद्धने ॥
(योगचिन्तामणिः)

पीपल, जीरा, कूठ; वेर सुखाया हुआ, गोबर, इनको कांजी में मिला कर लेप करने से भी उपरोक्त परिणाम होता है यथा—

पिप्पली जीरकं कुष्ठं बदरं शुष्क गोमयम् ।
कांजिकेन प्रलेपैरन्त्रवृद्धि विनाशनम् ।
(वृ० नि० र०)

बालकों की अंत्रवृद्धि पर केवल पलाश की छाल व काढ़ा पिलाने से ही लाभ होता है। यथा—

अन्त्रवृद्धिशमनाय किंशुकत्वक्कषायमपि ।
पाययेच्छिशुभ ॥ (वैद्य मनोरमा)

करंज के बीजों को सिल पर पीसकर उसमें थोड़ा अन्डी का तैल मिलाए। फिर इस मिश्रण को तम्माखू के पत्ते पर गाढ़ा गाढ़ा लेप कर वह पत्ता वृषण पर रात्रि के समय बांध देने से भी अन्त्रवृद्धि में लाभ होता है।

छोटे बालकों की अंत्रवृद्धि वा कुरण्टक रोग पर इन्द्रायन अच्छा काम देता है। यथा—

इन्द्रवारुणिका मूलं तैलं पुष्करजं तथा
संमद्य च स गोदुग्धं पिवेज्जंतुः कुरण्टके ॥
(वृ० नि० र०)

ग्लौपैथी मतानुसार

प्रायः सभी प्रकार के अंत्रवृद्धि रोग दुःसाध्य एवं अत्यन्त भयावह होते हैं। अकस्मात् अवरोध उत्पन्न होने से शोथ होकर यह रोगी के प्राण नाश का कारण हो सकता है, अस्तु इसके उचित उपचार में विलम्ब व आलस्य करना यथार्थ नहीं।

यद्यपि वृषणोंमें उतर आई हुई अंतड़ी के भाग को फिर से पूर्ववत् दाबकर ऊपर चढ़ाना अति कठिन कार्य है तथापि उष्ण जल में बैठ कर छिद्रों के मार्ग में पाशवत फँसी हुई अंतड़ी के बंधन को ढीला किया जा सकता है तथा अंतड़ी के उस भाग को कुछ संकुचित कर; युक्तिपूर्वक ऊपर को चढ़ाया भी जा सकता है। परन्तु यदि उपर्युल्लिखित बंधन का दबाव अधिक जोर का हो और चिकित्सा करने में बहुत देर हो गई हो तो शस्त्र क्रिया करना अधिक उपादेय है।

यद्यपि इसकी वास्तविक चिकित्सा शस्त्र ही है, जो केवल बच्चों और युवाओं पर ही सफलीभूत होती है, तो भी ऐसा न हो सकने पर इसका याप्योपचार ट्रूस (Truss) अर्थात् पट्टी लगाना है। अस्तु विविध प्रकार की अंत्रवृद्धि के लिये नाना भांति की पट्टियाँ डॉक्टरी औषध विक्रेताओंकी दूकानोंसे मिल सकती है, पट्टी चाहे किसी प्रकार अथवा किसी भी वस्तु से निर्मितहो उसकी विशेषता यह है कि उसके लगाने से न तो त्वचा को किसी प्रकार की हानि पहुंचे न वृद्धि उतरने ही पाए और न उससे शारीरिक चेष्टा में किसी प्रकार का बाधा उपस्थित हो और न उसके निरन्तर उपयोग से छिद्र का प्रसार ही हो। ठीक माप की पेटी यदि किसी अन्य स्थान से मंगाना हो तो वृद्धि भेद और यथार्थ माप लिखना चाहिये।

ऊर्ध्वन्त्रवृद्धि में माप लेने का नियम यह है—पेडू की अस्थि की ऊर्ध्व धारा से लगभग १ इंच नीचे वृद्धि के छिद्र तक पेडू की परिधि को नाप लें। इस नाप के अनुसार पेटी मंगवानी चाहिये। पेटी प्रत्येक पुरुष की मोटाई पर निर्भर है। पेटी से वृद्धावस्था में स्थायी आराम नहीं होता जब तक ट्रूस (पेटी) लगी रहे तब तक आँत का हिस्सा नहीं उतरता, जब वहां से न लगाई जाये तो फिर आँत का हिस्सा उतर आता है। परन्तु यदि बाल्य एवं युवावस्था में प्रारम्भ से निरन्तर १–२ वर्ष तक पेटी लगी रहे और उतरने काल में एक बार भी आँत का भाग न उतरा

हो तो वह मार्ग सदैव के लिये बन्द हो जाता है एवं रोगी स्वास्थ्य लाभ करता है तो भी स्वस्थ हो जाने के बाद भी रोगी को वर्ष दो वर्ष तक पेटी लगाते रहना चाहिये, जिसमें रोग के पुनराक्रमण की शंका न रहे]

पेटी लगाने से यद्यपि प्रारम्भ में किञ्चित् कष्ट अनुभव होता है। पर दो चार दिवस में ही वह दूर हो जाता है, रात्रि में सोते समय पेटी को उतार देना चाहिये शेष सभी काल में उसको लगाये रहना चाहिये, प्रातः काल शय्या से उठने से प्रथम उसे लगा लेना चाहिये जिसमें वृद्धि के बार २ बाहर आने से उसका छिद्र बड़ा न हो जाए, अन्यथा पेटी लगाने का लाभ नष्ट होता रहेगा। पेटी की गद्दी अर्थात् पिचु भाग को स्वच्छ एवं शुष्क रखना चाहिये। उस पर कभी कभी खड़िया मिट्टी वा जिंक आक्साइड (यशद भस्म) अवचूर्णित कर दिया करें जिसमें क्लेश तथा भार से वहां की त्वचा निर्बल एवं क्षतयुक्त न हो जाए।

टिप्पणी

यह उपर्युक्त उपाय विन्यस्त होने वाली अन्त्र वृद्धि के लिये है। अस्तु, यह स्मरण रहे कि पेटी लगाने से पूर्व रोगी को उत्तान लिटाने और टाँग सिकोड़ने से आँत वा परिविस्तृत कला का आया हुआ भाग स्वयमेव यथा स्थान चला जाता है। इस प्रकार उनको विन्यस्त करके फिर पेटी लगाएँ।

यदि इस प्रकार वे यथा स्थान प्रविष्ट न हों तो वृद्धि को वाम हस्त की उंगलियों से पकड़ कर दाहिने हाथ से उनको धीरे धीरे भीतर प्रविष्ट करें, किन्तु यह स्मरण रखें कि जो भाग सब से पीछे उतरा हो वह सबसे पहिले भीतर जाए यदि इस प्रकार भी सफलता न हो तो क्लोरोफार्म सुंघाकर यह क्रिया करें।

इस भाँति पेशियों को शिथिल कर हर्निया भीतर प्रविष्ट की जा सकती है।

यदि वृद्धि विन्यस्त न होने योग्य (न दबने वाली अर्थात यथा स्थान न लौट जाने योग्य) हो तो पेटी का पिचु भाग वा गद्दी ऐसी हो जो उसकी पूर्ण रक्षा कर सके और उस पर किसी प्रकार का भार न पड़े। इस प्रकार की वृद्धि में शोथ हो जाने पर रोगी का सुखपूर्वक लिटाए रखें, किसी प्रकार की गति न करने दें। उसकी जानु के नीचे एक बड़ा सा तकिया रखें, जिसमें हर्निया का छिद्र ढीला होकर वेदना कम हो जाए वस्त्र वा रबर की थैली में बर्फ भर कर शोथयुक्त स्थान पर रखें और आध आध घन्टा पश्चात् वृद्धि को धीरे धीरे नीचे और पीछे को दबाएँ ऐसा करने से प्रायः हर्निया अपने स्थान पर चली जाती है और रोगी के प्राण बच जाते हैं। वेदना हरणार्थ मार्फीन (अहिफेनीन) और एट्रोपीन (धत्तूरीन) का त्वकस्थ अन्तःक्षेप करें, अथवा एक एक ग्रेन अहिफेन आध आध घन्टे के अन्तर से तीन चार बार दें। परन्तु, खाने को कुछ न दें, और विरेचन किसी दशा में न दें। २४ घंटे हर्निया के फसे रहने पर फिर उसमें शोथ होकर रोगी के प्राणान्त होजाने की आशंका होती है। अस्तु यदि उसमें अवरोध प्रभृति हो तो तत्काल वस्ति क्रिया करनी चाहिये। तदनन्तर उस पर बर्फ लगाना चाहिये।

नोट—अन्त्रवृद्धि रोगी को बहुत इहतियात से विरेचन लेना चाहिये। यथा सम्भव उसका न लेना ही उत्तम है, मलावरोध होने की दशा में उष्ण जल द्वारा वस्ति लेना चाहिये।

अन्त्रवृद्धि के लिये—डाक्टरी चिकित्सा में प्रयुक्त होने वाली अमिश्रित औषधें—

टार्टार इमेटिक, क्लोरोफार्म, ईथर, ओपियम् (अहिफेन), ग्लम्बाई एसीटास, टबेकम् (तम्बाकू) उष्ण स्नान, रक्तमोक्षण और बर्फ।

अन्त्रवेल–सं० एक हिन्दी दवा है (Anihdigonous drug)

अन्त्रच्छदाकला–हिं० संज्ञा स्त्री० अन्त्रच्छदा कला, आंत्रावरण, जठरावरण, ओमेण्टम् Omentum एपिप्लून Epiploon, काल Caul–इ०। सूर्व–अ०। बाशोमहे पियह्, चादर पियह्, –फ़ा०।

नोट—काँल उस झिल्ली को भी कहते हैं जो जन्म काल में शिशु के शिर पर लिपटी हुई निकलती है। वस्तुतः यह भ्रूणावरण का एक भाग है।

उदर की वसामय झिल्ली जो आँतों पर फैली होती है। वास्तव में यह उदरच्छदा कला का ही एक भाग है जो उसके नीचे आमाशयिक द्वार से कोलून तक परिस्तृत होता है।

इसके दो भाग हैं—

(१) बृहद् आन्त्रच्छदा कला (स़र्व कबीर) जो आमाशय के बृहन्मुख से आरम्भ होकर कोलून तक जाती है इसको अगरेजी में ग्रेट ओमेण्टम् (Great omentum) कहते हैं।

(२) क्षुद्र अन्त्रच्छदा कला (स़र्वसगीर) जो आमाशय के क्षुद्र मुख से आरम्भ होकर यकृत तक जाती है। अंगरेजी में इसको लेसर ओमेण्टम् (Lesser omentum) कहतेहैं।

अन्त्रच्छदाकला छेदन-हिं० संज्ञा पु० अन्त्रच्छदा कला का काटना कत्उ स़र्व-अ०। ओमेण्टेक्टोमी Omentectomy-इ०।

अन्त्रच्छदाकला प्रदाह-हिं० संज्ञा पु० अन्त्रच्छदा कला (आँतों को आच्छादित करने वाली झिल्ली) की सूजन। आमेण्टाइटिस Omentitis-इं०। इल्तिहाब स़र्व, बर्म स़र्व-इं०।

अन्त्रच्छदिक वृद्धि-हिं० संज्ञा स्त्री० अन्त्रच्छदा कला के किसी भाग का उतर आना। एपिप्लोसील Epiplocele-इ०। फतक स़र्वी-अ०।

अन्त्रशोधक-हिं० वि० पु० आंत्र पचननिवारक। दाफिआते तअफ्फुने अम्आअ्-अ०। Intestinalantiseptics-इं०। आन्त्रस्त द्रव्यों में अभिषव (खमीर) अथवा सड़ाँध पैदा न हो या उनमें सड़े हुये द्रव्यों का अभिशोषित होने से रोकें इस हेतु कभी कभी पचननिवारक (Antiseptic) औषधों का उपयोग होता है। अस्तु समस्त आमाशय पचननिवारक (Gastric antiseptics) तथा दुग्धाम्ल (Lacticacid) और सैलोल (Salol) और केलोमेल इस प्रयोजन के लिये व्यवहार किये जाते हैं।

नोट—आन्त्रस्थ द्रव्यों का (जब कि वे शरीर में होते हैं) कीट रहित (Disinfectant) करना सम्भव है या नहीं? यह बात अब तक सन्देहपूर्ण है, यदि यह सम्भव हो तो यह लाभप्रद भी है या नहीं? क्यो कि आन्त्र के भीतर सूक्ष्माणु विद्यमान होते हैं जो सामान्य अवस्था में आंत्र की पाचन क्रिया के सहायक होते हैं। पर तो भी ऐसी औषधों के प्रयोग का यत्न किया जा रहा है। और उसमें किसी सीमा तक सफलता भी हुई है।

अन्त्रशोषान्तकः-स० पु० नीबू सहिजन, दुग्धवल्लरी (चमार दूधी) चिरायता, गिलोय, शतावरी, अर्जुनमूल, त्रिफला, बिदारीकन्द, वला, असगंध मुसली, बायबिडंग इनके रस द्वारा कांत लोह में पृथक् २ कई बार भावना देकर वाराह पुटकी आंच दें। पुनः इस भस्म के समान शीशाभस्म, अभ्रक, सुवर्ण, ताम्र, तथा लोह भस्म लें और खपरिया कांत लौह से आधा भाग मिलाकर उपर्युक्त द्रव्यों के क्वाथ तथा घिकुवार के रस की भावना देकर रख लें। मात्रा ३ र०।

गुण—यह अंत्रशोष, फुफ्फुसप्रदाह, जीर्ण ज्वर, धातुक्षय, राजयक्ष्मा, श्वास, गुल्म अरुचि, अतिसार, संग्रहणी, को नष्ट करता और बल की वृद्धि करता है र० यो० सा०।

अन्त्रश्छदा शिरा-सं० स्त्री० अंत्र के अशुद्ध रक्त को ले जाने वाली शिरा।

अन्त्रसंकोचक-हिं० वि० पु० इनटेस्टाइनल ऐस्ट्रिञ्जेण्ट्स (Intestinal astringents) वे औषधें जो आंत्र के कृमिवत् आकुंचन को शिथिल एवं उनके रसों को कम करती हैं।

अन्त्रसंधि-हिं० स्त्री० दोनों आँतों का जोड़।

अन्त्रहानिकर-हिं० देखो मुजिरात अम्आअ्।

अन्त्रक्षय-हिं० संज्ञा पु० (Intestinal Tuberculosis) यह रोग एक प्रकार के यक्ष्मा कीट के अन्त्र में प्रवेश करने से होता है देखो—राजयक्ष्मा।

अन्त्रांडवृद्धि-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] (Scrotal hernia) देखो—अन्त्रवृद्धि।

अन्त्रादः-सं० पु० आभ्यन्तर कृमि (Internal worm) देखो कृमिः मा० नि०। शार्ङ्ग ७ अ०

अन्त्राधः धमनी-हिं० संज्ञा स्त्री० (Inferior mesenteric artery) वह धमनी जो अंत्रधारक कला से नीचे स्थित है।

अन्त्राधः शिरा-हिं० संज्ञा स्त्री (Inferior mesenteric vein) वह शिरा जो अंत्रधारक कला से नीचे स्थित है।

अन्त्राधः पेशी-सं० स्त्री० (Inferior mesenteric muscle) वह पेशी जो अन्त्रधारक कला से नीचे स्थित है।

अन्त्रान्त-अन्त्रसंधि-हिं० स्त्री० (Cæcum) दोनों आंतों का जोड़। देखो—अन्त्रपुट।

अन्त्रालजी-(मा०) } अन्ध्रालजी-(सु०) } सं० स्त्री० वात श्लेष्म जन्य क्षुद्र रोग विशेष। लक्षण—वह फुन्सी जो कठिन मुख रहित, ऊँची गोल मण्डलाकार तथा अल्पपीव (राध) युक्त हो। यह कफ और वात के प्रकोप से होती है मा० नि० क्षुद्ररो०।

अन्त्री-सं० स्त्री० वृद्धदारक लता, वृद्धदारु, विधारा। (See-Vidhara) फा० इं० २ भा०। अ० टी०। हिं० संज्ञा स्त्री० अन्त्र, आँत अंतड़ी (Intestine)

अन्त्रोर्ध्व धमनी-हिं० संज्ञा स्त्री० (Superior mesenteric artery) वह धमनी जो अन्त्र धारक कला से ऊपर स्थित है।

अन्त्रोर्ध्व शिरा-सं० स्त्री० (Superior mesenteric vein) वह शिरा जो अन्त्रधारक कला से ऊपर स्थित है।

अन्थकम्-सं० क्ली० अङ्गार। (A firebrand embers) रत्ना०।

अन्थाइलिस-यु० रुद्रवन्ती, रुदन्ती हिं०। (Cressa cretica' *Linn*) फा० इं० २ भा०। देखो रुदन्तिका (न्ती)।

अन्थीनल्-ता० गुले-अब्बास फा० इं० ब० (Mirabilis jalapa LINN) फा० इं० ३ भा०

अन्थेमिक एसिड-इ० बाबूने का सत, बाबूने का तेजाब। इसके सूचिका कार वर्ण रहित रवे होते हैं। गध बाबूना के के समान ग्राहि। स्वाद अत्यन्त कड़ुआ। यह जल, मद्यसार, ईथर, एवं क्लोरोफार्म में घुल जाता है। इसको वर्नर (Werner) महोदय ने सन् १८६७ ई० में बाबूना पुष्प से विशेष प्रक्रिया द्वारा प्रस्तुत किया था। फा० इं० २ भा०। देखो बाबूना।

अन्थेमिस आर्वेन्सिस-ले० बाबूनह, शज्रतुल काफूर फा० इं० २ भा०।

अन्थेमिस किआ-ले० बाबूनह भेद। फा० इं० २ भा०।

अन्थेमिस नोबिलिस-ले० बाबूनह शज्रतुल काफूर फा० इं० २ भा०।

अन्थेमीडीन-इ० बाबूनह के तेजाब को मद्यसार में घोलने पर जो पदार्थ तलस्थायी हो जाता है उस में एक प्रकार का स्वाद रहित रवायुक्त, सत्व होता है, जिससे अन्थेमीडीन कहते हैं। यह मद्यसार ईथर और क्लोरोफार्म में अविलेय होता है किन्तु ऐसीटिक एसिड (सिरकाम्ल) में विलीन हो जाता है फा० इं० २ भा०।

अन्थेमून-यु० बाबूनह भेद। फा० इं० २ भा०।

अन्थेरिकम्ट्युबरोसम-ले० खुन्सा अ०, फा०, सु०। (Asphodel) फा० इं० ३ भा०।

अ (ऐ) न्थेल्मिण्टिक-इं० कृमिघ्न, कृमिहर, कृमिनाशक, (Medicine) of use against intestinal worms, देखो—कृमिघ्न।

अ (ऐ) न्थोसिफैलस केडम्बा-कदम्ब, कदम। इं० मे० प्लां०।

अ (ऐ) न्थ्रिस्कस सेरीफोलिअम्-ले०। अत्रीलाल इं० बा०। फा० इं० २ भा०। देखो—आतरीलाल।

अन्थ्रैक्स-इं० देखो—ऐन्थ्रैक्स।

अन्दम-अ० (१) पतंग (Cæsalpinia sappan' *Linn*) वकम। (२) (Kino) दम्बुल अखवैन अ० हीरादोखी हिं०। (३) Red sandal wood सन्दलसुर्ख, रक्त चन्दन। इं० हैं० गा०।

अन्दरूमाखुस–अ०(Andromachus) हकीम बुकरात के बाद उनके समकालीन एक प्रसिद्ध युनानी हकीम हुए हैं। यह यूनान के महाराज धिराज के निजी चिकित्सक (राजवैद्य) थे। इन्होंने एक अगद निर्मित किया था जो अन्दरूमाखी नाम से प्रसिद्ध है यह नब्बे ९० वर्ष की अवस्था में स्वर्गवासी हुए।

अन्दलीब–अ० बुलबुल एक पक्षी विशेष (Nightingale)।

अन्दलुस–अ० हस्पानिया। स्पेन Spain इं० अरब के लोग स्पेन (Spain) को अन्दलुस कहते हैं। अन्दलूसियह वस्तुतः स्पेन का एक प्रान्त था जिसको खलीफा वालीद के समय में जयाद के पुत्र तारक ने सन् ७१० ई० में सर्व प्रथम विजय किया था इसी सम्बन्ध से अरब लोग स्पेन को अन्दलुस कहते हैं इस देशमें बड़े २ नामवर हकीम व चिकित्सक उत्पन्न हुए इनमें से किसी का परिचय इस कोष में दिया जायगा। चूँकि "स्पेन,, यूरोप महाद्वीप में स्थित है अतः इस मुल्कके हकीमों एवं वैद्यों को फरिश्मी हकीम भी कहते हैं।

अन्दाव–अ० व्रण चिन्ह क्षतों के दाग।

अन्दाम–अ० शरीर' अवयव, रूह। (Body'an organ)

अन्दाम दाना–फा० तर्जनी अँगुली। फोर फिङ्गर Fore Finger–इं०

अन्दामपेश– / अन्दाम शर्म– } फा० स्त्री गुह्य भाग भग। अन्दामनिशानी, शर्मगाहे मर्द या औरत–अ०। (Pudendum' Vulva)

अन्दिका–सं० स्त्री० चुल्लि। अ० टी०See-Chulli

अन्द्रनी–सम्हालू, निर्गुण्डी। (Vitex Negundo) इं० है० गा०।

अन्धः–सं० त्रि० (१) नेत्रहीन, अन्धा (Blind) क्लो० (२) तिमिर, अन्धकार (Darkness) मे० षट्त्रिकम्। (३) (न्धस्) अन्न। रा० नि० व० २०। (४) जल (Water) भरत० (५) भात, ओदन, भक्त (Boiled rice) वृ० नि० र० कृ० व०।

अन्धकः–सं० पु० तुम्बुरु, धनियाँ (नैगली)। (Xanthoxylon alatum) भा० पू० १ भा० ह० व०।

अन्धकाकः–सं० पु० (A bird) काकाकार पक्षी। पानकौड़ि–बं०। भेदाजुग्या–म० त्रिका०।

अन्धकारः–सं० पु० अंधेरा, आलोकाभाव (Darkness) इसके निम्न पर्यायवाची शब्द हैं। जैसे ध्वान्तं, तमिस्रं, तिमिरं, तमः (अ), भूच्छाय (रा०), अंधतामसं, अन्धतामसं, सन्तमसं, अवतमसं। गुण—भय, दृष्टि, तेज तथा अवरोधकारक और रोगजनक, राज०।

नोट—महा अन्धकार को अन्धतमस, सर्वव्यापी वा चारों ओर के अन्धकार को सन्तमस और थोड़े अन्धकार को अवतमस कहते हैं।

(२) उदासी, कान्तिहीनता।

अन्धकूपः–सं० पु० (१) मोह (Loss of consciousnessor sense) (२) अंधा कुआँ। (A blind well)

अन्धतमस–हिं० पु० अत्यन्त अन्धकार (Great darkness)

अन्धता–सं० स्त्री० (१) पित्त रोग (Biliary disease)। वै० निघ०। (२) अन्धापन, (Blindness)

अन्धपुष्पी–हिं० संज्ञा स्त्री० अन्धाहुली, अर्क पुष्पी, अर्काहुली।

अन्धपूतना–सं० स्त्री० बालक ग्रहपीड़ा विशेष। इसके लक्षण निम्न हैं, यथा—

जो बालक स्तन से द्वेष रक्खे (अर्थात् माता के स्तन को नहीं पीवे) तथा अतिसार, खाँसी, हिचकी, वमन और ज्वर इनसे पीड़ित हो वर्ण बिगड़ जाए, सोते समय नीचे को मुख करके सोए, खट्टी खट्टी गन्ध आए, ऐसे बालक को अन्धपूतना से पीड़ित कहते हैं।

चिकित्सा—तिक्त द्रुम अर्थात् निम्बादि तिक्त रस युक्त वृक्षों के पत्र से सिद्ध किये हुये जल से स्नान, सुरादि साधित तैल तथा पिप्पली आदि

द्वारा साधित घृत के उपयोग द्वारा उपर्युक्त सम्पूर्ण विकार शमन होते हैं। सु० उ० २७। ३३ अ०।

अन्धमूषा–सं० स्त्री० औषध पाकार्थ यन्त्र विशेष। इसे वज्रमूषा भी कहते हैं।

विधि—दो भाग तिनकों की भस्म, एक भाग बांबी की मिट्टी, एक भाग लोह किट्ट, एक भाग सफेद पत्थर का चूरा और कुछ मनुष्य के बाल डालें। सबको एकत्र कर बकरी के दूध में औटा दो पहर पर्यन्त अच्छी तरह घोटें, पीछे उस मिट्टी की गौ के थन के सदृश गोल और लम्बी मूषा बनाएँ। पीछे इसका ढकना बनाकर धूप में सुखा इसमें पारा भर ढकने से ढकदें और सन्धियों को उसी मिट्टी से बन्द करें। यह पारा मारने की वज्रमूषा कहा है, इसी को अन्धमूषा कहते हैं। र० सा० सं०। कश्चिदत्रिः।

अन्धमूषिका–सं० स्त्री० (१) देवताड़ वृक्ष (See Devatara) (२) तृण विशेष (A grass) श० च०।

अन्धरन्ध्रम्–सं० क्ली० अन्त्रपुट छिद्र (Foramen cæcum)

अन्धला–
अन्धा– } हिं० वि० अचक्षु, बिना आँख का।
(Blind)

अन्धस्थानम्–सं० क्ली०
अन्धस्थान–हिं० संज्ञा पु० } अंधेरा स्थान।
(Blind spot)

अन्धसूदशक अञ्जनम्–सं० क्ली० कृष्ण सर्प १, काले बिच्छू ४ लेकर एक दूधके कलशमें २१ दिन पर्यंत क्वथित कर मर्दे। उसमें से निकले हुये मक्खनको मुर्गे को खिला कर पुष्ट करें। उसका बीट ले अन्जन करने से अन्धता दूर होती है। व० से० सं० नेत्र रो० चि०।

अन्धाहिः–सं० पु० कुँचिया मीन। कूँचेमाछ, जलमेटे–बं०। त्रिका०।

अन्धाहुली–सं० स्त्री० आहुल्य नामक शिम्बी–फल वनस्पति विशेष। भुञ्जित खड़–हिं०। तरवड़–काश०, मह०। See ahulyam,

अन्धाहिक–अन्धा साँप। एक प्रकार का साँप। कौटि० अर्थ०।

अन्धिका–सं० स्त्री० (१) सर्षप, सफेद सरसों। (२) स्त्री विशेष। (A woman) मे० कत्रिकं (३) नेत्र रोग विशेष (Aneyedisease)

अन्धियार,–रा–हिं० पु० अंधेरा। (Dark, darkness)

अन्धुक–हिं० पु० जंगली अंगूर–द०। आमोलका–बं० इण्डियन वाइल्ड वाइन Indianwild vine)–इं०। वाइटिस इण्डिका (Vitis Indica, *Linn*)–ले०। विग्नी डो'इण्डो (Vigne d' Inde)–फ्रा०। यूवाँस डास ब्युगिआंस (Uvas dos bugios)–पुर्त्त०। शेम्बर–वल्लि–ते०। चेम्बार–वल्लि–मल०। राणद्राक्ष, कोले जान–मह०। साव–लम्बर–कों०।

द्राक्षावर्ग

(*N.O. Ampelideœ*)

उत्पत्तिस्थान—पश्चिम प्रायद्वीप, मध्य भारतवर्षीय पठार, बङ्गाल, मालावार तथा ट्रावनकोर।

वानस्पतिक–विवरण—यह एक वृहत् आरोही पौधा है जिसमें चिरायु (बहुवर्षीय) कंदमूल होता है। उक्त पौधे के पत्र पुष्प तथा समग्र आकृति द्राक्षा का स्मरण दिलाती है। इसका मूल कन्द के वृहद् गुच्छों का समूह है जो माध्यमिक मूल-तन्तुसे लगा रहता है। कंद एक से दो फीट लम्बे, शंखाकार (दोनों सिरों पर), ताजे होने पर अधिकाधिक व्यास (चौथाई) २–३ इञ्च, बाहरसे वे धूसर वर्णीय ऊर्ध्वचर्म से आच्छादित होते हैं जिन पर वृत्ताकार घेरों में स्थित सूक्ष्म मस्सावत् उभार होते हैं भीतर से वे रक्त वर्णीय एवं सरस होते हैं। परत (पत्ता) काटने पर एक स्थूल घेरा युक्त त्वक् भाग सरलतापूर्वक पृथक् किये जाने योग्य और माध्यमिक मज्जामय भाग चुकन्दरवत् दीख पड़ता है।

सूक्ष्मदर्शक से जड़ की परीक्षा करने पर वह पतली दीवर के पैरेन्काइमा (Parenchyma) से बने दीख पड़ते हैं जिनके कोषों में

वृहदायताकार श्वेतसारीय कण तथा सूच्याकार रवों के असख्य गट्ठे (Bundles) होते हैं। मूल तथा मूल त्वक् के बाहरी भाग में असंख्य बड़े बड़े कोष्ठ होते हैं।

स्वाद—कुछ कुछ मधुर, लुआबी तथा कषैला कंद चूर्ण तथा पांशु (Potash) लवणों से पूर्ण होते हैं। ताजी अवस्था में ऑग्जेलेट ऑफ लाइम की सूचियों द्वारा उत्पन्न यांत्रिक क्षोभ के कारण वे चरपरे होते हैं।

इतिहास तथा उपयोग—ग्रहीडी के मत से इसकी जड़का रस नारियल के मज्जा के साथ रोधोद्घाटक (Depurative) तथा शर्करा के साथ रेचक रूप से व्यवहार किया जाता है। कोंकण के दिहाती लोग इसके क्वाथ को आधा से १ आऊंस की मात्रा में परिवर्तक रूप से भी भी प्रयोग में लाते हैं।

उनका विचार है कि यह रक्त शुद्धिकर्त्ता, मूत्रल प्रभावकर्त्ता और स्रावों (की क्रिया) को स्वस्थता प्रदान करता है।

गोवील (वं०) Vitis latifolia) का कंद भी उसी हेतु उपयोग में आता है (फा० इं० १ भा। इं० मे० मे०) इसके मूलस्वरसको तेलके साथ मिलाकर चक्षु रोगोंके लिये एक उत्तम प्रलेप प्रस्तुत करते है। और नारिकेल दुग्ध के साथ मिलाकर इसको कारबंकल तथा अन्य प्रकार के दुष्ट व्रणों पर लगाते है। इं० मे० मे०। यह परिवर्तक तथा मूत्रल है। इं० ड्रू० इं०।

अन्धुलः-सं० पु०
अन्धुल-हिं० संज्ञा पु० } शिरीष वृक्ष, सिरिस का पेड़ (Albizzia lebbeck)। श० च०।

अन्धेरा,-री-हिं० पु०, स्त्री० अंधियारा। (Darkness),

अन्नम्-सं० क्लो०
अन्न-हिं०-संज्ञा पु० } (१) Grain Corn शस्य, अनाज नाज, धान्य, दाना, गल्ला। (२) (Food material) खाद्य पदार्थ, व्रीहि एवं यव आदि खाद्य द्रव्य मात्र। चर्व्य, चोष्य, लेह्य और पेय भेद से यह चार प्रकार का होता है। किसी किसी ने निष्पेय, निःचर्व्वण, अचोष्य और अखाद्य इन चार और भेदों को मिलाकर इसको ८ प्रकार का लिखा है।

राजनिघण्टुकार भी चर्व्य आदि भेद से अन्न को ८ प्रकार का लिखते हैं। रा० नि० व० २०। (३) पकाया हुआ (अन्न)। भक्त। भात।

संस्कृत पर्याय—भक्तं, अन्धः, भिस्मा (अटी) अट्टं कसिपुः, जीवातुः (ज्ञ) क्रूरं (रा) जीवनकं (हे) कूरं, आपूष्टिकं, जीवंति, प्रसादनं (शब्द र०)। इसको पांच गुने जल में पकाना चाहिए, अन्न पंच गुण में सिद्ध करणीय है। च० द० ज्वर० चि०। प० प्र० २ ख०। स्विन्न तण्डुल। पकाचावल (Boiled rice)। यथा—सतुष (भूसीयुक्त) अनाज को धान्य और तुष रहित एक को अन्न कहते हैं खेत में जो हो उसको शस्य और तुषरहित को धान्य कहा है। वशिष्ठ। जिस प्रकार जलदान (जल की मात्रा) के अनुसार अन्न के चार भेद होते है। उसी प्रकार भक्त, विलेपी, यवागू और पेया भेदसे भक्त चार प्रकारका होता है। प्रयोग रत्नाकरः अन्न के गुण—अग्निकारक, पथ्य, तर्पण, मूत्रल, और हलका। विना धोया हुआ और बिना मॉड निकाला हुआ अन्न—शीतल, भारी वृष्य और कफजनक है। भली प्रकार धोया हुआ अन्न—उष्ण, बिपद और गुणकारक है। भूजिया चावल का भात—रुचिकारक, सुगंधि, कफघ्न और हलका है। अत्यन्त गीला—ग्लानिकारक और तण्डुलान्बित दुर्जर होता है। मद० व० ११। ६। अम्लधान्य में पकाया हुआ भक्त लघु, अग्निप्रदीपक और रुचिकारक है। वै० निघ०।

मथित युक्त भक्त—स्वादु शीतल, रुचिकारक अग्निदीपक, पाचक एवं पुष्टिकर है तथा ग्रहणी अर्श और शूल नाशक है।

रात्रि में खाया हुआ अन्न—रुचिकारक, तृप्तिजनक, दीपन, और अर्श का नाश करने वाला है।

मुद्गयूष युक्तअन्न—कफ ज्वर, और शर्करा मिला हुआ पित्तज्वर में हित है।

लाज भक्त–लघु शीतल, अग्निजनक, मधुर वृष्य, निद्राकारक, रुचिजनक और व्रणशोधक है।

यवान्न–(यव)—भारी, मधुर, वृष्य तथा स्निग्ध है और गुल्म, ज्वर, कण्ठरोग, कास और प्रमेह नाशक है।

खेचरान्न–(खिचड़ी)—तर्पण, भारी, वृष्य और धातुवर्धक है।

यौगन्धरान्न–(यावनालान्न अर्थात् ज्वार का भात)–भारी, घन तथा कास और श्वास की प्रवृत्ति करने वाला है।

कोद्रवान्न–(कोदों का भात)—रुचिकारक, मधुर, प्रमेहनाशक और मूत्र विकार नाशक तथा तृषानाशक है और वमन, कफ वात एवं दाह नाशक है।

श्यामाकान्न–(सावाँ का भात)—रुचिकर, लघु, रूक्ष दीपन वल्य एवं वातकारक है और प्रमेह, गलरोग तथा मूत्रकृच्छ्र नाशक है।

नीवारान्न–रुचिप्रद लघु, दीपन, गुरु तथा वातकारक है। और यकृत, प्लीहा, श्वास एवं व्रण नाशक है।

कुलत्थान्न–(कुलथी)—मधुर,, रुक्ष उष्ण, लघु, पाक में कटु तथा दीपन है और कफ, वात कृमि रोग और श्वासनाशक है।

माषान्न–(उड़द)—दुर्जर (कठिनतापूर्वक पचने वाला) भारी, मांस वर्द्धक और वृष्य तथा वातनाशक है।

शिम्ब्यन्न मधुर तथा रुक्ष है और वात पित्त प्रकोपक है।

वैदलान्न—भारी और रुचिकारक है।

आढक्यन्न (अरहर)—भारी है तथा कफ पित्त नाशक है

मत्स्योदन (मीनपक्व भक्त, मछलीका पोलाव) कफकारक, त्रिदोषजनक, और मन्दाग्निकारक है

शाकान्न—लेखन' रूक्ष तथा उष्ण है और दोषद्रावक अर्थात् दोषों को पतला करने वालाहै।

मांसोदन (मांस सिद्धौदन, मांसका पोलाव) धातुवर्द्धक स्निग्ध और भारी है।

पलान्न, (फलान्न) रुचिकारक, भारी और फल के समान गुण वाला है अर्थात् जिस फल में वह तय्यार किया गया है उसी के समान गुण करता है।

साधारण साठी चावल का भात—दीपन वल्य, पाचन, त्रिदोषनाशक तथा क्षय और विष का नाश करने वाला है।

नवान्न (नवीन अन्न) मधुर स्निग्ध गुरु तथा मलस्तम्भक अर्थात् मलावरोधक है और रक्त पित्त नाशक है।

उष्णान्न (गरम) दीपन, लघु, श्रमकारक तथा मदात्यय, रक्तपित्त; प्रमेह और वातकारक है एवं कास, श्वास, कृमि, आध्मान' गुल्म, जड़ता, क्षत, और कास का हरण करने वाला है

शीतान्न (शीतल)—शीतल तथा लालास्रावक है और मन्दाग्नि, प्रमेह, मूर्च्छा आदि का हरण करने वाला है। वै० निघ०।

क्लिन्नान्न (गीला अन्न) दुर्जर (कठिनता से पचने वाला और ग्लानिकारक है।

(४) वह जो सबको भक्षण वा ग्रहण करे। (Omnivorous) हमा खोर फा०। आ-किलुसायरिल माकूलात–अ०

(५) सूर्य्य (The sun)

(६) पृथ्वी (The earth)

(७) प्राण (Prana)

(८) जल (Water)

अन्नअ् नइल् अख्जर–अ० पुदीना रूमी, पुदीनाए-सब्ज़ी। Spearmint (mentha viridis) म० अ० डॉ० २ भा०।

अन्नअ् नाउल् मुजअ्अद–अ० पुदीना, पेचीदा। (Mentha crispa)

अन्नअ् नाउल् फिल्फिली–अ० पुदीना, फिलफिली, पुदीना पिप्पली। Peppermint (Mentha piperata)

अन्नअ् नाउल बर्री–पुदीना, वर्री, अरण्य पुदीना। Horsemint (Mentha sylvestris)

अन्नअ् नाउल माई–अ० पुदीना नहरी। (Mentha aquatica)

अन्नअ नाउल मुस्तदीरुल औराक–अ० गोलपत्रीय पुदीना। (Meneha rotundi falia)

अन्नअ नाउरूमी–अ० पुदीनारूमी पुदीना सुम्बुलो Spearmint (Mentha viridis)

अन्नकालः–सं० पु० भोजन का समय, आहार काल रस दोष तथा मलों का परिपाक होनेपर जबही क्षुधा प्रतीत हो चाहे वह कालवा अकाल हो वही अन्नकाल अर्थात् भोजन का समय कहा गया है भा०।

अन्नकोष्ठ सं० पु० कोठिला, खाता, तण्डुल धान्य आदि सुरक्षित रखने का आधार। (A storehouse) गोला बराई बं०।

अन्नगंधि–सं० पु० अतीसार रोग मलभेद। हरवरा मह० (Diarrhœa) त्रिका०।

अन्नजम्–सं० क्ली० त्रैदिवसिकान्नमण्ड तीन दिन का भक्त मण्ड (भात का मांड़)। तिन दिव सांचीं शिलीपेज–मह०।

अन्नजल–, अन्नपानी– } हिं० पु० अन्नपानी, खाना पीना। (Victuals & drink)

अन्नजा–सं० स्त्री० हिक्का का एक भेद। (A kind of hiccup)

लक्षण—अत्यन्त अन्नपानी के सेवन करने से एकसाथ प्राणवायु दबकर ऊर्ध्वगति होकर (हिक् हिक्) शब्द करती है उसको वैद्य अन्नजाहिक्का कहते हैं। भा० म० ख० २।

अन्नदोष–हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) अन्न से उत्पन्न विकार। जैसे दूषित अन्न खाने से रोग इत्यादि का होना। (२) निषिद्ध स्थान वा व्यक्ति का अन्न खाने से उत्पन्न दोष वा पाप

अन्नद्रवशूलः–सं० पु० क्ली० , अन्नद्रवशूल–हिं० संज्ञा पु० } परिणामशूल, पेट का वह दर्द जो सदा बना रहे, चाहे अन्न पचे या न पचे और जो पथ्य करने पर भी शांत न हो। लगातार बनी रहने वाली पेट की पीड़ा। इसके लक्षण निम्न प्रकार हैं, जैसे—भोजनके पचने पर या पचते समय अथवा अजीर्ण हो अर्थात् सब काल में जो शूल उत्पन्न हो उसको "अन्नद्रवशूल कहते हैं। यह पथ्यापथ्य से भोजन करने या नहीं भोजन करने प्रभृति नियमों के द्वारा शांत नहीं होता इससे तबतक चैन नहीं पड़ता जब तक वमन के द्वारा पित्त निःसरित नहीं हो जाता मा० नि०। देखो—पङ्क्तिशूलः।

अन्नद्रवशूलनाशक–हिं० वि० पु० पंक्तिशूलहर।

अन्नद्रवाख्यः–सं० पु० अन्नद्रवशूल। मा० नि०।

अन्नद्वेष–हिं० संज्ञा पु० [सं०] [वि० अन्नद्वेषी] अन्न में रुचि न होना। अन्न में अरुचि, भूख न लगना। (Disgust)

अन्नधर कला–हिं० स्त्री० (१) (Pyloric valve) आमाशय दक्षिणांश कपाट। (२) (Pyloric sphincter) आमाशय दक्षिणांश संकोचक।

अन्ननाड़ी–सं० स्त्री० (œsoPhagus) अन्नपाक नाड़ी। यह कला एवं पेशी द्वारा निर्मित और २० हाथ लम्बी होती है इसका काम अन्न पचाना है इसलिये इसको पाक नाड़ी कहते हैं। इसके ऊपर के भाग का नाम मुख और नीचे का नाम गुदा है। इसमें कंठ से आमाशय तक जो भागहै उसको अन्ननाड़ी कहतेहैं। आन्त्रेय देखो—अन्नप्रणाली।

अन्ननाली.डी–सं० स्त्री० (१) (Alimentary canal with its appendages) अन्नप्रणाली। (२) (Alimentary system) पाचक संस्थान।

अन्ननस–द० अननास।(Ananas sativus) मो० श०।

अन्नप्रणा (ना)ली–सं० स्त्री० अन्ननाड़ी। (œsophagusguilet Digestivetube) मरी० अ०।

अन्नप्रणाली–हिं० स्त्री० (œsophagus) गला या कंठ से आरम्भ होकर आमाशय या पाकस्थली पर अंत होने वाली एक नली विशेष। इसकी लम्बाई १० इंच के लगभग होती है ग्रीवा और वक्ष में होती हुई यह उदर में पहुचतीहै और अन्नमार्गकेतीसरे भागसे जा मिलतीहै अन्नप्रणाली में किसी प्रकार का पाचक रस नहीं बनता। इस

नली का काम केवल भोजन को कंठ से आमाशय तक पहुचाने का है।

अन्नप्रणाली का अधो भाग-हिं० पु० (Lower-erend of œsophagus) अहार के मार्ग का मेदे के ऊपर का हिस्सा।

अन्नप्रणाली परिखा-हिं० संज्ञा स्त्री० (Groove for œsophagus)वह नली जिसमें अन्न प्रणाली पड़ी रहती है।

अन्नप्राशनम्- सं० क्ली०
अन्नप्राशन-हिं० संज्ञा, पु० } छठवें या आठवें महीने बालक का अन्न आहार करना। भा०। बच्चों को पहिले पहल अन्न चटाने का संस्कार। चटावन। पसनी। पेहनी (Ceremony of giving Farinaceous food to a baby for the first time)

नोट—स्मृति के अनुसार छटे या आठवें महीने बालक का और पांचवें वा सातवें महीने बालिका को पहिले पहिल अन्न चटाना चाहिए।

अन्नवेदि-बं० हीराकसीस (Ferri sulphas) सं० फा० इ०।

अन्नभेदि-मल० ते० कसीस, हीराकसीस। Ferri sulphas(Sulphate of iron or green vitriol) सं० फा० इ०।

अन्नमण्ड-सं० पु० (Ricegruel) माँड़ भक्त मण्ड, भात का माँड़। भातेर मांड़-बं०। देखो—मण्डः (Mandah) गुण—क्षुद्बोधक (क्षुधा पैदा करता) वस्तिविशोधक (मूत्रल), प्राणप्रद तथा शोणितवर्द्धक है। ज्वरनाशक कफ पित्त नाशक और वायु नाशक है। ये आठ गुण मण्ड (माँड़) में पाये जाते हैं। च० द० अग्निमां० चि०।

अन्नमय-सं० पु० (Physical body) स्थूल शरीर। देखो—शरीर।

अन्नमयकोषः-सं० पु० (Physical—body) वेदांतके अनुसार पञ्चकोषोंमें से अन्तिम(पांचवां) कोष विशेष ! यह पञ्चतत्त्वमय तथा त्रिगुणात्मक होता है) अन्न से बना हुआ त्वचासे लेकर वीर्य तक का समुदाय। स्थूल शरीर। देखो—शरीर

अन्नमल-हिं० संज्ञा पु०
अन्नमलम्-सं० क्ली० } (१) पुरीष मल, विष्ठा (Excrement, Fæces)। (२) मद्य, सुरा, यव आदि अन्नों से बनी शराब। (Wine) वै० श०।

अन्नमार्ग-हिं० संज्ञा पु० आहार पथ अन्नपाक नाड़ी कनात् गिज़ाइय्यह् कनात् हज़्मिय्यह्। अ०. गिज़ा या हज़्म की नाली उ०।

एलिमेण्टरी कैनाल (Alimentary canal) डाइजेस्टिव ट्रैक्ट (Digestivetract)इं०

शरीर की नालियों में से वह जिसमें पचने तक भुक्त पदार्थ रहता है। यह नली बहुत लम्बी होती है। इसका आरम्भ मुख से होता है। और इसका अन्त नीचे जाकर मलद्वार पर होता है। प्रौढावस्था में मुख से मलद्वार तक अन्नमार्ग की लम्बाई २८, २९ फुट(नौ दस गज) के लगभग होती है।

अन्नरसः-सं० पु० (१) (Rice-gruel)मण्ड माँड़ भात का माँड़ भक्त मण्ड। वै० श०। (२) आहार रस। (Chyle)

अन्नलिप्सा-सं० स्त्री० अन्न भोजन (खाने) की इच्छा, भूख क्षुधा। (Appetite' Hunger) वै० निघ०। प्रकृति गामिमनोऽभिलिप्सान्न च० द०।

अन्नवहा-सं० स्त्री० धमनी युगल अन्नवाहि स्रोत द्वय (इनकी जड़ आमाशय और अन्नवाहिनी धमनी है) इनसे भोजन किया हुआ अन्न उदर में पहुचाया जाता है सु० शा० ९ अ०।

अन्नवाहि स्रोतः-सं० क्ली० गलनाड़ी अन्नप्रणाली, कठनलिका। (œsophagus) गलार नली बं०। वै० श०।

अन्न विकारः-सं० पु०
अन्नविकार-हिं० संज्ञा पु० } (१) विष्टा, मल (Excrement, Fæces) (२) शुक्र, वीर्य(Seminal secretion semen) (३) भक्तविकृति, (Ricegruel) मण्ड माँड़ (४) अन्नका परिवर्तित रूप। अन्न पचने

से क्रमशः बने हुये रस, रक्त, मांस मज्जा, चरबी हड्डी और शुक्र आदि।

अन्नविपाक नाड़ी–सं० स्त्री० (œsophagus) अन्ननाड़ी, पाकनाड़ी, अन्नप्रणाली आत्रेयः।

अन्नशेषः–सं० पु० उच्छिष्टान्न, जूठा, छोड़ा हुआ भोजन एटों भात–बं०। (Food left or rejected)

अन्नहीन–हिं० वि० अन्न रहित। (Destitute of food)

अन्ना–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अम्ब] (१) धात्रि-पति (The husband of a nurse) (२) धात्री, धाय, दाई, दूध पिलाने वाली स्त्री (A midwife)

[सं० अग्नि] एक छोटी अँगीठी वा बोरसी जिसमें सुनार सोना आदि रखकर भाथी के द्वारा तपाते वा गलाते हैं।

अन्नाजीर्णम्–सं० क्ली० (१) आमाजीर्ण, भुक्त अन्न का अजीर्ण। भा० म० १ भा० आमातीसार। "अन्नाजीर्णात्प्रदुताः क्षोभयन्तः।" (२) तन्नामक शूल रोग।

अन्नाद–हिं० वि० अन्न खाने वाला, अन्नाहारी।

अन्नाद्यम्–सं० क्ली० (१) अन्न, भात। रा० नि० व० २०। (२) धान्य।

अन्नाभेदि–कना० हीरा, कसीस, कसीस–हिं०। (Ferri sulphas)–ले०। स० फा० इ०

अन्नावृत वायुः–स० पु० वायु के अन्न से आवृत्त होने पर भोजन करने से कुक्षि में शूल होता है और अन्न के पचने पर वेदना की शान्ति होती है "भुक्तेकुक्षौरुजा जीर्णशाम्यत्यन्नावृतेऽनले।" वा० नि० अ० १६।

अन्नाशयः–सं० पु० उदर (Abdomen)

अन्नास–द० / अन्नासि–सि० / अन्निनस–गु० अनन्नास (Ananas sativus, Mill) स० फा० इं०।

अन्नी–हिं० स्त्री० दाई, धात्री। (Anurse or female attendant on a child)

अन्नेटो–इं० सेन्दूरिया–हिं०। लटकन–बं०। (Bixa orellana)–ले०। इं० मे० मे० फा० इं० १ भा०।

अन्नेटोवुश–इं० सेन्दूरिया–हिं०। (Bixa orellana; *Linn*)–ले०। फा० इं० १ भा०।

अन्नेस्ली स्पाइनस–इं० मखाना। इ० हैं० गा०।

अन्नेस्लीस्पाइनोसा–Dr. Wall Included by Prof Lindley in plants imperfectly known"–ले०। मखाना एक अप्रसिद्ध क्षुप है। इं० हैं० गा०।

अन्नोद्वहा–सं० स्त्री० अन्न और जल को भीतर ले जाने वाली नली।

अन्पल–मल० कँवल, छोटा कमल, कुइबेरा, कुमुदिनी हिं०। नीलोफर। अ० फा०। (Nymphæa Edulis, *D C.*) म० फा० इ०।

अन्पाजम–मल० अमड़ा, अम्बाड़ा, आम्रातक, आम्रेका पेड़–हिं०। (Spondias mangifera, *Pers*) स० फा० इं०।

अन्फ़–अ० (Nose) नासिका–हिं०। इसके बहुवचन निम्न हैं, यथा—आनाफ, उनूफ, आनिफ।

अन्फ़कह्–अ० दाढ़ी की बच्ची, निम्नोष्ठ और चिबुक के मध्य के केश।

अन्फ़ख़–अ० प्रदाह युक्त प्राणी, वह मनुष्य जिसके अण्डकोष में प्रदाह हुआ हो।

अन्फ़स्–अ० भ्रूणबाह्यावरण। (Chorion)

अन्फुल्बर्द–अ० शीताधिक्य, ठंडक की अधिकता। (Excessive cold)

अन्मस–यु० वस्ति–हिं०। मसानह्–अ०। (Bladder)

अन्मिल / अन्मेल विरुद्ध, विपरीत। (Heterogenous)

अन्मिलह्–अ० अंगुल्याग्र, अंगुली का अग्र पोर्वा। इसके बहुवचन अन्मिलात वा अनामिल हैं। (The top of the finger)

अन्य–हिं० वि० भिन्न पृथक, पर। (Another, different)

अन्यक रुका-सं० स्त्री० शकृत् कीट, पुरीषज कृमि, पाखाने का कीड़ा, हारा० ।

अन्यतः-हिं० क्रि० वि० [सं०] (१) किसी और से । (२) किसी और स्थान से, कहीं और से ।

अन्यत्र-हिं० वि० [सं०] और कहीं (जगह), स्थानान्तर, दूसरी जगह ।

अन्यतोपाक-हिं० संज्ञा पु० [सं० अन्यतोवात] दाढ़ी, कान, भौं इत्यादि में वायु के प्रवेश होने के कारण आँखों की पीड़ा ।

अन्यतोवातः-सं० पु० अक्षिगत रोग विशेष (An eye-disease) जो वायु निज स्थित स्थान से अन्यत्र वेदना उत्पन्न करे उसे "अन्यतोवात" कहते हैं, जैसे—घांटी, कान, शिर, हनु, और मन्या (गर्दन) की नसों में अथवा अन्य स्थानों में स्थित वायु भौंहों अथवा नेत्रों में तोद, भेद आदि पीड़ा करता है । मा० नि० नेत्रसर्वगत रो०

अन्यपुष्टः-सं० पु०
अन्यपुष्ट-हिं० संज्ञा पु० } [स्त्री० अन्यपुष्टा] (१) वह जिसका पोषण अन्य के द्वारा हुआ हो । कोइल, काकपाली, कोकिल । The black or Indian Cackoo (Cuculus)

नोट—ऐसा कहा जाता है कि कोयल अपने अंडों को सेने के लिये कौवों के घोंसलों में रख आती है ।

(२) परपालित, दूसरों के द्वारा पालित ।

अन्यपूर्वा-सं० स्त्री० दो बार ब्याही हुई (Twice married) वह कन्या जो एक को ब्याही जाकर वा वाग्दत्त होकर फिर दूसरे से ब्याही जाए इसके दो भेद हैं—पुनर्भू और स्वैरिणी ।

अन्यभृत-सं० पु० (१) कोकिल, कोयल (Cuckoo) हला० । (२) काक (a crow) हे० च० ।

अन्यभृतः-सं० पु० कोकिल, कोयल (A cuckoo) रत्ना० ।

अन्यलोहम्-सं० क्ली० (Bronze) कांस्य धातु, कांसा । वै० निघ० ।

अन्या-सं० स्त्री० हरीतकी, हरड़ (Terminalia Chebula) वै० निघ० ।

अन्याव-अ० (व० ब०), नाव (ए० ब०) रदनक (Canine tooth)

अन्येद्यु-हिं० क्रि० वि० [सं०] [वि० अन्येद्युक] दूसरे दिन ।

अन्येद्युक-हिं० वि० [सं०] दूसरे दिन होने वाला ।

अन्येद्युष्कः-सं० पु०
अन्येद्युः ज्वर-हिं० संज्ञा पु० } उरस्थ श्लेष्मजन्य ज्वर विशेष । वह ज्वर जो दिन रात्रि में एक समय आता है । मा० नि० ।

यह एक प्रकार का मलेरिया (विषम या शीत पूर्व) ज्वर है जिसका दौरा हर रोज होता है । उक्त ज्वर में एक बारी से दूसरी बार तक २४ घंटे अर्थात् एक दिन का अन्तर पड़ता है । इस लिये इसको रोजाना का बुखार (आह्निक ज्वर) भी कहते हैं । वर्षा ऋतु के बाद होने के कारण इसको मौसमी या फसली बुखार भी कहते हैं । एकाह्निक तप, एकतरा, जाड़ा बुखार—हिं० । रोजाना नौबती बुखार—उ० । तपे हररोज—फा० । नायब, हुम्मा मुवाज़िबह—अ० । कोटिडियन फीवर (Quotidian Fever)-इं० ।

अन्योदर्य-हिं० वि० [सं०] [स्त्री० अन्योदर्या] दूसरे के पेट से पैदा । सहोदर का उलटा ।

अन्योन्य-हिं० सर्व० [सं०] परस्पर, उभयतः (Reciprocal, mutual)

अन्योन्यलङ्घनम्-सं० क्ली० (Decessation) परस्पर एक दूसरे को पार (काटना) ।

अन्योन्याश्रय-हिं० पु० सापेक्ष, परस्पर का सहारा । एक दुसरे की अपेक्षा ।

अन्वय-हिं० संज्ञा पु० [सं०] [वि० अन्वयी] (१) परस्पर सम्बन्ध, तारतम्य । (२) संयोग । मेल । (३) वंश । खानदान ।

अन्वह-हिं० पु० नित्य, प्रतिदिन (Every day)

अन्वाम-अ० (बहु० व०) नोम (ए० व०) निद्रा नींद । (Sleep, narcosis, stupor),

अन्वाशनम्-सं० क्ली० (१) कर्मशाला । हला० (२) स्नेह वस्ति (Oily enemata) ।

देखो—अनुवासन वस्तिः ।

अन्वासन-हिं० पु० } अनुवासन, स्नेहवस्ति।
अन्वासनम्-सं०क्ली० }
(Oily enemata),

अन्वाहिकः-सं० त्रि० प्रात्यहिक, प्रति दैनिक, रोजाना (Daily, quotidian)।

अन्वित-हिं० वि० [स०] युक्त मिला हुआ, सहित, शामिल।

अन्शर-अ० मदार, आक। (Calotropis gigantea).

अन्सः-अ० अर्जुन। (Terminalia Torrentosa or Arjuna),

अन्सल-अन्सलान् } -अ० हिलायती काँदा। विलायती जंगली काँदा-हिं०। पियाजे दश्ती-फा०। Scilla (Squill) स० फा० इं०। देखो—अरण्य पलाण्डुः।

अन्सले-हिन्दी अ० कांदा, जंगली पियाज-हिं०। पियाजे दश्ती हिन्दी-फा० Urginea Indica, *Kunth*, Scilla Indica, *Roxb* (Bulb of Indian Squill) स० फा० इं०। देखो—अरण्य पलाण्डुः।

अनसरण्डा-तेल० खैर-नैपा० वेलवैलम्-ता०। (Acacia Ferruginea *D. C.*)।

अन्सारिशा-बं० हुलहुल्। आदित्यभक्ता। (Cleome Pentaphylla), इं० मे० प्लां०।

अन्हैलोनि-यम्-ले० मस्केल बटन्स (Muscale Buttons),

अन्हैलोनियम लीवीनिआई-ले०।
(*N. O. Cactaceæ*)

उत्पत्तिस्थान—वेस्ट इण्डीज।

प्रयोगांश—पुष्प।

इंद्रिय व्यापारिक कार्य-इसका प्रारम्भिक प्रभाव अवसादक होता है। इससे नाड़ी-स्पन्दन निर्बल एवं शिथिल होजाता है। (प्रायः ४० प्रति मिनट से न्यून) और शरीर बाह्य तल शीतल पड़ जाता है। प्रहर्षण (या शिश्नोत्थान) बिना वीर्य स्खलित होता है।

उपयोग—सिरिअस (Cereus grandiflorus and cereus 'cactus' bonplandii) की अपेक्षा यह कहीं उत्तम हृदुत्तेजक तथा उत्तम घन हृदयबलप्रद औषधि है। उग्र हृच्छूल, फुफ्फुसौप, श्वासावरोध में कदाचित् २ या ३ बूंद इसके तरल सत्वको जब तक कि लाभ प्रदर्शित न हो कभी कभी उपयोग में लाना चाहिये, तदनन्तर बढ़ाने के स्थान में थोड़ी मात्रा उपयोग में ला सकते हैं। इसके उपयोग से उत्थान बिना वीर्य स्खलित होने लगता है। अस्तु, उक्त अवस्थाओं में इसके विराम रहित अधिक कालीन उपयोग से बचनाचाहिये। अधिक वातल प्रकृति वाले व्यक्तियों में इसका उपयोग चतुरतापूर्वक करना चाहिए। शिथिल (कफ) प्रकृति वालों में यह अधिक स्वतन्त्रतापूर्वक उपयोग में लाई जा सकती है। डिजिटेलिस को यह उत्तम सहायक औषधि है। (पी० वी० एम०)

अन्वान्त्रयम्-सं० क्ली० आँतों में उत्पन्न होने वाले बिशूचिकाके कीड़े। अथर्व०। सू० ३१। ५ का० २।

अन्वीक्षण-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) ध्यान से देखना। गौर बिचार।
(२) अनुसंधान। तलाश।

अन्वीक्षा-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] (१) ध्यानपूर्वक देखना। (२) खोज, ढूंढ़, तलाश।

अप-उप० [स०] उलटा, बिरुद्ध, बुरा, अधिक। यह उपसर्ग जिस शब्द के पहिले आता है उसके अर्थ में निम्न लिखित बिशेषता उत्पन्न करता है।
(१) निशेध। उ०-अपकार। अपमान।
(२) अपकृष्ट (दूषण)। उ०-अपकर्म। अपकीर्ति।
(३) बिकृति। उ०-अपकुक्षि। अपांग।
(४) विशेषता। उ०-अपकलंक। अपहरण।

अपक-हिं० संज्ञा पु० [सं० अप्=जल] पानी, जल-हिं०।

अपकर्ष-अपकर्षण- } हिं० संज्ञा पु० (१) नीचेको खींचना गिराना, डालना। (२) बहिर्नायन, शरीर की

मध्य रेखा से दूर लेजाना । Abduction, Drawing away fromthe median line), (३) निराकरण हटाया जाना । (Repulsion)

अपकर्षणी–सं० स्त्री० (Abdu ctor) बहिरनायनी, शरीर की मध्य रेखा से दूर ले जाने वाली।

अपक्व-
अपक- | हिं० वि० कच्चा, अपूर्ण । (Raw, unripe, imperfect, immature)

अपक्वता–हिं० स्त्री० अपक्वता, कच्चापन । (Immaturity)

अपक्रम–हिं० संज्ञा पु० [सं०] भागना, छूटना, व्यतिक्रम, क्रमभंग, अनियम ।

अपक्रीता–सं० त्रि० दूर देश से द्रव्य के बल से प्राप्त की गई । अथ० । सू० ७ । १ । का० ८

अपक्वः–सं० त्रि०
अपक्व–हिं० वि० } (१) (Unripe) बिना पका हुआ, आम, अशृत, अपक्व, कच्चा, असिद्ध, प० प्र० । (२) (Undigested) बिना पचा, अनात्मीकृत ।

अपक्व कदली–सं० स्त्री० (Unripe-plantain) अपक्व रम्भा, कच्ची कदली (केला), जुण केले मह० । काँचा कला–बं० ।

गुण—कच्चा केला मलस्तम्भ करने वाला अर्थात् काबिज, तिक्त, कषैला, स्वादयुक्त तथा रूक्ष एवं रक्तपित्त और तृषानाशक है । प्रमेह नेत्र रोग, रक्तातिसार तथा ज्वर नाशक है । वै० निघ० ।

अपक्वमांसम्–सं० क्ली० (Raw-flesh) असिद्ध मांस, कच्चा मांस ।

गुण—कच्चा मांस रक्तदोषकारक और वातादि दोष जनक है ऐसा मांस विदों का मत है । वै० निघ० ।

अपक्व वस्तु–सं० क्ली० (Rawobjects) असिद्ध वा अशृत वस्तु, र० मा० ।

अपक्वक्षीरम्–सं० क्ली० (Nonboiled milk) अपक्व दुग्ध, कच्चा दूध ।

गुण—यह अभिष्यन्दी और भारी होता है,

अपग–अ० कली का चूना अशांत चूर्ण । (Calx-Lime-quick lime) इं० मे० मे० ।

अपगत–हिं० वि० [सं०] (१) दूर गया हुआ, दूरीभूत हटा हुआ, रहित । (२) पलायित, भागा हुआ, पलटा हुआ । (३) मृत, नष्ट ।

अपगमनम्–सं० पु०
अपगम–हिं० पु० } (१) वियोग, अलग होना (२) दूर होना, भागना, (Diverging)

अपगामितन्तुः–सं० पु० चेष्टा वहा नाड़ी (Efferent Fibre)

अपघनः–सं० पु० अंग, शरीरावयव (An organ) अम० ।

अपघातः–सं० पु० अस्वाभाविक मरण । हत्या, वध, मारना, हिंसा ।

अपघातक
अपघाती } –हिं० वि० [सं०] घातक, विनाशक, विनाश करने वाला ।

अपगा–सं० वि० अन्यत्र जाने वाला अथर्व । सू० ३० २ । का० २ ।

अपंग–हिं० वि० [सं० अपांग=हीनांग] (१) अंग हीन, न्यूनांग । (२) लँगड़ा, लूला ।

अ(ओ)पग–बं० अपामार्ग, चिरचरा । (Achyranthes Aspora, *Linn*)

अपच–हिं० संज्ञा पु० [सं०] न पचने का रोग, अजीर्ण, बदहजमी, (Dyspepsia)

अपचय–हिं० संज्ञा पु० [सं०] घटा, घाटा, क्षति, हानि (Loss, detriment) (२) व्यय कमी, नाश ।

अपचायितः–सं० पु० रोग, व्याधि (Disease)

अपचारः–सं० पु०
अपचार–हिं० पु० } (१) अजीर्ण, (Dyspepsia) (२) दोष, भूल । (३) कुपथ्य, स्वास्थ्यनाशक व्यवहार । (४) कुव्यवहार (An error)

अपचिताम्–सं० क्ली० अपक्व बुरे माद्दे के संचय से उत्पन्न । अथर्व । सू० २५ । १ का० ६

अपची-सं० स्त्री० (a kind of Scrofula) गण्डमाला नाम के कंठ रोग का एक भेद। कंठमाला की वह अवस्था जब गाँठें पुरानी होकर पक जाती हैं और जगह जगह पर फोड़े निकलते और बहने लगते हैं। इसके लक्षण—ठोड़ी की अस्थि, काँख, नेत्र के कोये, भुजा की सन्धि, कनपुटी और गला इन स्थानों में मेद और कफ (दूषित हो) स्थिर, गोल, चौड़ी, फैली, चिकनी, अल्प पीड़ा वाली ग्रन्थि उत्पन्न करते हैं। आमले की गुठली जैसी गाँठों करके तथा मछली के अण्डों के जाल जैसी त्वचा के वर्ण की अन्य गाँठों करके उपचीय मान (सचित) होती है इससे चय (सचय) की उत्कर्षता से इसे अपची कहते हैं।

यह अपची रोग खाज युक्त होता है, और अल्प पीड़ा होती है। इनमें से कोई तो फूटकर बहने लग जाते हैं और कोई स्वयं नाश हो जाते हैं, यह रोग मेद और कफ से होता है। यदि यह कई वर्षों का हो जाय तो नहीं जाता। सु० नि० ११ अ०। अथ०। सू० ८३। ३ का० ६

चिकित्सा—

इस रोग में वमन विरेचन के द्वारा ऊपर और नीचे के अंगों का शोधन करके दन्ती, द्रवन्ती, निशोथ, कोसातकी (कड़वी तरोई) और देव दाली इन सब द्रव्यों के साथ सिद्ध किया हुआ घृत पान करना चाहिये। कफ, मेद नाशक धूप गण्डूष और नस्य का प्रयोग हितकारी है। नस (शिरा) में नस्तर लगाकर रुधिर निकालें और गोमूत्र में रसौत मिलाकर पान कराएँ।

अपची नाशक तैल

(१) कलिहारी की जड़ का कल्क १ मा०, तेल ४ मा०, निर्गुण्डी का स्वरस ४ भाग, इन सबको विधिवत् पकाएँ। नस्य द्वारा इसका सेवन करने से अपची रोग छूट जाता है।

(२) बच, हड़, लाख, कुटकी, चन्दन इनके कल्क के साथ सिद्ध किया हुआ तेल पान करने से अपची निर्मूल होती है।

(३) गौ, मेढ़ा और घोड़े के खुर जलाकर राख करलें। इसे कड़वे तेल में मिलाकर अपची पर लेप करें।

(४) काला सर्प वा अपने आप मरा हुआ कौवा इनकी राख को इंगुदी के तेल में मिलाकर लेप करने से विशेष लाभ होता है। वा० उ० अ० ३०।

अपच्छो-हिं० संज्ञा पु० [सं० अ=नहीं+पक्ष=पक्ष वाला] विरोधी, विपक्षी, शत्रु वि० बिना पंख का, पक्ष रहित।

अपजात-सं० पु० वह सन्तान जो पिता के अधम गुण रखती हो। अथर्व० सू० ६। का० ८।

अपञ्चीकृत-हिं० वि० पु० सूक्ष्म भूत।

अपटक-हिं० वि० पु० हस्तपाद पक्षाघात ग्रस्त (वात ग्रस्त) (Paralytic)

अपटन-हिं० संज्ञा पु० देखो—उबटन।

अपटुः-सं० त्रि० अपटु-हिं० वि० (१) रोगी, बीमार (Diseased) रा० नि० व० २०। (२) निर्बुद्धि, अनाड़ी।

अपडा-सं० स्त्री० असमन्तक वृक्ष (See-Ashmantaka,-kah)

अपण्य-हिं० वि० [सं०] न बेचने योग्य।

अपतन्त्रः
अपतन्त्रकः } -सं० पु० स्वनामाख्यात वात व्याधि विशेष। एक रोग जिससे शरीर टेढ़ा हो जाता है।

लक्षण—अपने कारणों (रूक्षादि) से प्रकुपित हुई वायु यदि अपने निज स्थान को छोड़ ऊपर जाकर हृदय को पीड़ित करे, फिर मस्तक और कनपुटियों में पीड़ा करे शरीर को धनुष के समान टेढ़ा कर दे तथा कम्पित करे और चित्त को मोह युक्त करदे, रोगी बड़े कष्ट से श्वास ले, आँखें चढ़ी रहें अथवा ऊपर को लगी रहें, कबूतर के समान शब्द करे और बेसुध हो जाय तो उसको अपतन्त्रक रोग कहते हैं। मा० नि० वा० व्या०।

चिकित्सा—अपतन्त्र से पीड़ित मनुष्य की तृप्ति विरुद्ध क्रिया न करे और कभी भी निरूह वस्ति तथा वमन का सेवन न कराएं, परन्तु कफ

तथा वायु से घिरी हुई उन श्वास को चलाने वाली नाड़ियों को तीक्ष्ण प्रधमन (तीक्ष्ण चूर्ण का नस्य) देकर खोलदें नाड़ियों के खुल जाने से रोगी संज्ञा को प्राप्त होता है।

अपतर्पण–हिं० पु० भूखा रहना, लंघन। (Fasting)

अपत्त–हिं० वि० [सं० अ=नहीं+पत्र, प्रा० पत्त, हिं० पत्ता] (१) पत्र हीन, बिना पत्तों का, आच्छादन रहित, नग्न।

अपतिः–सं० स्त्री० पति हीन, अथर्व०।

अपतर्पणम्–सं० क्ली० (१) अपतर्पण, लंघन, तृप्त्यभाव, भूखा रहना, उपवास करना, (२) कार्श्य, कृशीकरण, स्थौल्य हरण, स्थूलता को दूर करना, दुर्बल करना। यह दो प्रकार की चिकित्साओं में से एक है। इसका उलटा संतर्पण (बृंहण) है। अग्नि, वायु और आकाशात्मक पदार्थ अर्थात् उक्त महाभूतों से उत्पन्न हुई औषध अपतर्पण होती है। इसके दो भेद होते हैं।

(१) शोधनातर्पण—वह जो शरीरस्थ बातादिक दोषों को बाहर निकाल देता है। ये पांच प्रकार के होते हैं। यथा—१–निरूह (गुदा में पिचकारी लगाना), २—वमन, ३—विरेचन, ४—शिरो विरेचन और, ५—रक्त स्रुति (फस्द खोलना)

(२) शमनातर्पण—वह औषध जो शरीरस्थ वातादिक दोषों को बाहर नहीं निकालती और अपने प्रमाण से स्थित वातादिक दोषों को उत्क्लेशित भी नहीं करती, प्रत्युत विषम दोषों को समान भाव में ले आती है। उसको संशमन औषध कहते हैं। यह सात प्रकार की होती है। यथा—पाचन, दीपन, क्षुधा निग्रह, तृष्णानिग्रह, व्यायाम, आतप और वायु। वा० सू० अ० १४ हारा०। च० द० रक्तपित्त–चि०।

(३) व्रण के उपशमनार्थ प्रारम्भिक उपक्रम सु० चि० १ अ०।

अपतानः, अपतानकः } सं० पु० हिं० संज्ञा पु०

स्वनामाख्यात वातव्याधि रोग विशेष एक रोग जो स्त्रियों को गर्भपात तथा पुरुषों को विशेष रुधिर निकलने या भारी चोट लगने से हो जाता है। इसमें बार बार मूर्च्छा आती है और नेत्र फटते हैं तथा कंठ में कफ एकत्रित होकर घरघराहट का शब्द करता है।

लक्षण—वायु कुपित होकर मनुष्य की दृष्टि, शक्ति एवं संज्ञा को नष्ट कर देती, कण्ठ में घुर-घुर शब्द करती है और जब वायु हृदय को त्याग देती है तब सुख होता है और जब पकड़ लेती है तब फिर बेहोसी हो जाती है। इस दारुण रोगको अपतानक कहते हैं। मा० नि० वा० व्या०।

असाध्यता—गर्भ की उत्पत्ति से एवं रुधिर के बहुत निकलने से उत्पन्नहुआ और अभिघात से उत्पन्न हुआ "अपतानक,, नहीं आरोग्य होता

चिकित्सा—अपतानक रोग से पीड़ित मनुष्यों के नेत्रों में से यदि पानी बहता हो कम्प नहीं होता हो और खाट पर न पड़ाहो तो इससे पहले ही तत्काल चिकित्सा करनी चाहिये दशमूल डाल कर पकाया हुआ पानी अपतानक रोगी के लिये हित है तैल की मालिस स्वेद और तीक्ष्ण नस्य द्वारा स्रोतो के शोधन के पश्चात घी पिलानाहित कारक हैं विशेष देखो—वात व्याधि।

अपत्यम्–सं० क्ली०
अपत्य–हिं० संज्ञा०पु० } सन्तान पुत्र या कन्या। (Offspring' male or female)

अपत्यकामा–हिं० वि० स्त्री० पुत्र की इच्छा रखने वाली।

अपत्यजीवः–सं० पु० (Putranjiva Roxburghii) पुत्र जीव वृक्ष। जियापुता गाछ बं० रा० नि० व० ६। देखो—पुत्रजी (जीवः)।

अपत्यदा–सं० स्त्री०पुत्रदात्री लक्ष्मणा। (see putrada) रा० नि० व० ४।

अपत्यपथः–सं० पु० योनि (Vagina) हे० च०।

अपत्यशत्रुः–सं० पु० हिं० संज्ञा पु० जिसका शत्रु अपत्य वा संतान हो। कर्कट केकड़ा (Crab) श० च०।

नोट—अंडा देने के बाद केकड़ी का पेट फट जाता है और वह मर जाती है (२) अपत्य का शत्रु वह जो अपने अंडे बच्चे खा जाय सांप।

अपत्यसिद्धिकृत्-सं०पु० (Putrajiva Roxburghii) पुत्रजीवः वृक्ष देखो— पुत्रजीवः। वै० निघ०।

अपत्र-हिं० वि० पत्र रहित विना पत्तों का।

अपत्रवल्लिका-सं० स्त्री० महिषवल्ली, सोमलता विशेष लघु सोमवल्ली म०। रा० नि० व० ३ see-Mahishavalli

अपत्रा-सं० स्त्री० पुष्प वृक्ष विशेष। महाराष्ट्र में यह नेवती नाम से प्रसिद्ध है। वै० निघ०।

अपतृष्णा-सं० स्त्री० व्यर्थ लालच।

अपथम्-सं० क्ली० अपथ हिं० संज्ञा पु० (१) योनि (Vagina) श० र०। (२) कुमार्ग बुरा रास्ता (A badroad)

अपथ्यम्-सं० त्रि०
अपथ्य-हिं० वि० } जो पथ्य न हो स्वास्थ्यनाशक (Indigestible' unwho lesome) सं० क्ली० हिं० संज्ञा पु० (१) व्यवहार जो स्वास्थ्य को हानि कर हो रोग बढाने वाला आहार विहार।

(२) अहितकर वस्तु रोग बढाने वाला भोजन

अपथ्य ज्वर-सं० पु० कुपथ्य से होने वाला ज्वर।

अपथ्य और मद्य जन्य हेतु ज्वर के हेतु पित्त को प्रकुपित करते हैं, जिसे दाह शैत्य' शिरःशूलः और कोष्ट की वृद्धि तीव्र वेदना, खुजली, मल का अधिक निकलना अथवा उसका अत्यन्त बँधजाना आदि लक्षण अपथ्य जन्य ज्वर में होते हैं। वै० निघ० २ भा० ज्व०।

अपद-हिं० वि०
अपदः-सं० त्रि० } पादहीन, पंगु, कर्मच्युत (Lame) पु० विना पैर के रेंगने वाले जंतु। जैसे (१) सर्प केचुआ, जोंक आदि। (२) सर्प (Snake)।

अपदरुहा-
अपदरोहिणी } सं० स्त्री० बन्दा। बांदरा बं० वांदांगुल-म०। व० निघ०। A parasite plant (Epidendrumtessellatum.)

अपदस्थ-हिं० वि० कर्मच्युत, पदच्युत।

अपदारथ-हिं० पु० अयोग्य वस्तु।

अपदेवता-सं० स्त्री० हिं० संज्ञा पु० प्रेत, पिशाचादि दुष्टदेव। दैत्य। राक्षस असुर।

अपदेशः-सं० (हिं० संज्ञा) पु० अनेन कारणेनेत्थ पदेश अर्थात् इस कारण से यह होता है इसे अपदेश कहते हैं जैसे कहते हैं कि मीठा खाने से कफ बढता है अर्थात् कफ वृद्धि का हेतु मधुर रस है सु० उ० ६५ अ० १३ श्लो०।

अपद्रव्य-हिं० संज्ञा पु० [सं०] निकृष्ट वस्तु। बुरी चीज। कुद्रव्य। कुवस्तु।

अपध्वंसक-हिं० वि० (१) (घिनौना) (२) नाश करने वाला, क्षयकारी।

अपनयन-हिं० संज्ञा पु० [सं०] [वि अपनीत] (१) दूर करना हटाना। (२) स्थानांतरित करना। एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाना। (३) खंडन।

अपनीत-हिं० वि० [सं०] दूर किया हुआ, हटाया हुआ निकाला हुआ।

अपवश्य-
अपवस-श- } हिं० वि० पु- स्वाधीन, मन्मुखी (Independent)

अपवाहुकः- सं० पु०
अपवाहुक-हिं० संज्ञा पु० } एक रोग जिसमें बाहु की नसें मारी जातीहैं और बाहु बेकाम हो जाता है अपबाहुक वात कफ जन्य असगत वात व्याधि भुजस्तम्भ रोग विशेष। लक्षण—कंधे अथवा खवों में रहने वाली वायु खवों के बंधन को सुखा देती है उसके बंधन के सूखने से अत्यन्त वेदना वाला अपवाहुक रोग उत्पन्न होता है मा० नि०। बाहु में रहने वाली वायु उसमें रहने वाली शिराओं को संकुचित कर के अपवाहुक रोग को उत्पन्न करती है भा० प्र० २ ख०।

चिकित्सा

इस रोग में नस्य तथा भोजन के पश्चात् स्नेह पान हितहै। वा० चि० अ० २०।

अपभ्रंश–हिं० पु० विगड़ा हुआ शब्द। (Corruption' Common or vulgur talk)

अपमुमूर्ष–सं० हिं० पु० जलमें डूब कर मरणोन्मुख हुआ रोगी।

अपर–हि० वि० [सं०] [स्त्री० अपरा] (१) जो पर न हो पहिला, पूर्व का पिछला' जिससे कोई पर न हो (२) अन्य दूसरा भिन्न। मे० रत्रिक०।

अपरपिंडतैलम्–सं० क्ली० बला(खिरेटी) पृष्टपर्णी गङ्गेरन, गिलोय, और शतावर। इनके कल्क तथा क्वाथ से सिद्ध किये हुये तैल के अनुवासन(पिचकारी) लेने से प्रबल वातरक्त का नाश होता है।

भा० प्र० मध्य खण्ड २ वातरक्त चि०।

अपरतंत्र–हिं० वि० [सं०] जो पर तंत्र वा परवश न हों, स्वतन्त्र, स्वाधीन, आजाद।

अपमार्जन–हिं० संज्ञा पु० [सं०] शुद्धि, सफाई, संस्कार, संशोधन।

अपमुख–हिं० वि० [सं०] [स्त्री० अपमुखी] जिसका मुँह टेढ़ा हो, विकृतानन, टेढ़मुहाँ।

अपमृत्यु–हिं० संज्ञा पु० [सं०] अकालमृत्यु, कुमृत्यु, कुसमयमृत्यु, अल्पायु जैसे– बिजली के गिरने विष खाने, साँप आदि के काटने से मरना।

अपयोग–हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) कुयोग, दुरायोग। (२) नियमित मात्रा से अधिक या न्यून औषध पदार्थों का योग। (३) कुशकुन, असगुन। (४) कुसमय, कुवेला।

अपरकाय–हि० संज्ञा पु० शरीर का पिछला भाग।

अपरना–हिं० स्त्री० अपामार्ग। वि० बिना पत्ते वाली (Leafless)

अपरम्–सं० क्ली० हाथी के पीछे का अर्द्ध भाग, गजपश्चार्द्ध। हाथी का पिछला भाग, जंघा, पैर इत्यादि।

अपरस–हिं० संज्ञा पु०, उ० चम्बल। सम्किय्यह्, सदफिय्यह्, कश्फुल्जिल्द–अ०। सोरायसिस (Psoriasis)–इं०। चर्मरोग भेद। एक चर्मरोग जो हथेली और तलवे में होता है। इसमें खुजलाहट होती है, और चमड़ा सूख सूख कर गिरा करता है। विचर्चिका।

चिकित्सा

(१) गोधूम (गेहूँ) ऽ४ सेर लेकर पातालयन्त्र द्वारा तैल निकालें। इस तेल के लगाने से अपरस नष्ट होता है।

(२) आक का दूध १ छटांक, बाकुची का तेल १ पाव, सेंहुड़ के दूध १ छ० को १ पाव तिल तैल मिलाकर सिद्ध करें इसके लगाने से अपरस दूर होता है।

(३) आठिल की जड़ की छाल लेकर स्वरस निकालें और उसे भेड़ (मेष) के १ छटाँक घी में पकाएँ, फिर काम में लाएँ।

(४) सिन्दूर ६ मासा को भेड़ के घी में घोट कर रखलें। इसके उपयोग से अपरस दूर होता है।

अपरा–सं० स्त्री०, हिं० संज्ञा स्त्री० (१) (Placenta) खेड़ी, आँवल। भा० म० ४ भा० प्रसूतोपद्रव–चि०। अपरा–सं०। (२) पदार्थ विद्या (३) पश्चिम दिशा। (४) पञ्चतन्मात्र, मन, बुद्धि और अहंकार इनको अपरा कहते हैं।

वि० [सं०] दूसरी।

अपराजित–सं० लहसुनिया। हिं० वि० [स्त्री० अपराजिता] (Inconqurable) जो जीता न जाए, जो पराजित न हुआ हो।

संज्ञा पु० विष्णु।

अपराजितधूपः–सं० पु० यह धूप सब प्रकार के ज्वरों का नाश करने वाला है। गुग्गुल, गन्धतृण, वच, सर्ज, निम्ब, आक, अगर और देवदारु। च० द० ज्व० चि०।

अपराजिता–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० स्त्री०] (१) कोयल की वेल का साधारण नाम है।

क्लिटोरिया टर्नेटिया (Clitorea Ternatea, *Linn*)–ले०। बटर फ्लाई पी Butter fly pea, विंग्ड-लीव्ड क्लिटोरिया (Winged leaved Clitoria) इण्डियन मेजेरीन (Indian Mezereon)

-इं० । क्लिटोरिया डी टर्नेटी Clitoriade Ternate-फ्रां० । फियुला-क्रिका Feula-criqua--पुर्त० ।

संस्कृत पर्याय—आस्फोता, गिरिकर्णी, विष्णुक्रांता (अ०), गिरिशालिनी (के०), दुर्गा (श०), अस्फोटा (अ० टी०), गवाक्षी, अश्वखुरी, श्वेता, श्वेतभण्टा, गवाक्षी (र०), अद्रिकर्णी, कटभी, दधि पुष्पिका, गर्दभां, सित पुष्पी, श्वेतस्पन्दा, भद्रा, सुपुत्री, विषघ्नी, नगपर्यायकर्णी, अश्वाह्वादखुरी । अपराजिता, कवाठेंठी, कोयल, विष्णुक्रांति, कालीजीर-हिं० । अपराजिता—बं० । माजरियूने हिन्दी—अ० । नबात बीखे हयात--फा० । फीकी की जड़ का झाड़, घुट्टी की जड़ का झाड़, फीकी-द०; हिं० । काक्कणङ्-कोडि, कवच्छी, कुरु बिलइ-ता० । नल्ल, विष्णुकान्त, विष्णुक्रांत, दिनूटन, नल्लनेल गुम्मिरि तेल्ल, मेल्ल, तेल्लदिण्टन, नीलदिण्टन--ते० । अरल, शङ्ख-पुष्पम्, काक्कणम्-कोटि, काकवल्लि--मल० । कत्तरोदु--सिं० । गोकर्ण (-र्णी) काजलि--मह० । बम्व० । काष्ठी पाण्टरी--मह० । गरणी--गु० । कर्णिके, शंखपुष्प, विष्णु—काण्टसुप्पु, कीर, गुल, गोकर्णमूल-कना० । धन्तर—पं० । विलीय-गिरि कर्णिके, नील गिरि कर्णिके—क० । आरल माला० ।

अपराजिता बीज

क्लिटोरिया टर्नेटिया Clitorea ternatea *Linn* (Seeds of)—ले० । अपराजिता के बीज, कवाठेंठी के बीज—हिन्दी । फीकी की जड़ के बीज, घुट्टी की जड़ के बीज—द० । अपराजितार बीज—बं० । बज़्रुल माजरियूनेहिंदी अ० । तुख्मे—बीखेहयात्—फा० । काक्कणङ्कोडि विरै—ता० । दिण्टन-बित्तुलु-ते० ।

शंखवित्त; काक्कणम्-वित्त, काक-वित्त—मल० । कत्तरोदु-बीज—सिं० ।

नोट—अपराजिता शब्द से निघण्टु में अश्व खुरक, बला मोटा, विष्णुक्रांता, शुक्लांगी, शेफालिका या शंखपुष्पी ली जाती है । अश्वखुरकः ।

गिरिकर्णिका, कटभी, श्वेता, आदि नाम से कही जाती है ।

शेफालिका—गिरिसिन्दुक या श्वेत सुरमा कहाती है यह विपघ्न है ।

शिम्बी या बबूर वर्ग
(*N. O. Leguminosœ*)

उत्पत्तिस्थान—सम्पूर्ण भारतवर्ष ।

संज्ञा निर्णय—अरबी संज्ञा माजरियूनेहिन्दी का अर्थ हिन्दी माजरियून (Indian Meseron) है और यही संज्ञा मदरास में अपराजिता के लिये व्यवहार में आती है, क्योंकि उन्होंने मान लिया है कि इसकी जड़ में माजरियून की जड़ के समान प्रभाव है ।

दक्खिनी सज्ञाएँ काली जिर्की वा काली जिर्की के बीज तथा सुफेद जिर्की व सुफेद जिर्की के बीज कभी कभी अपराजिता बीज के लिये कतिपय ग्रन्थों में ही नहीं व्यवहार में लाई गई है, प्रत्युत किसी किसी बाजार में भी उनका व्यवहार किया जाता है । परन्तु वे असन्दिग्ध रूप से काला-दाना और उसके लाल भेद की याथार्थ संज्ञाएँ हैं, अतः उन्हें उन्हीं तक सीमित रहने देना चाहिये ।

काकवल्लि मलयालिम भाषा का शब्द है जिसका अर्थ काकलता होता है और यह इस लिये है कि इसके पुष्प का रंग काक वर्णवत् होता है, परंतु हार्टस मालाबारिकस (Hortus malabaricus) तथा अन्य ग्रन्थों में यह नाम म्युकुना जायगैंटिया (Mucuna gigantea) के लिये प्रयोग में लाया गया है ।

तामिल शब्द काक्कणङ् वा काक्कटाङ् प्रायः अपराजिता तथा कालादाना दोनों के लिये समान रूप से व्यवहार में आते हैं, परन्तु यथार्थतः वे अपराजिता के ही नाम हैं । अतः उनको इसी के लिये प्रयोग करना चाहिये, कालेदाने के बीज उस नाम के अन्तर्गत आये हुये नामों से सरलता पूर्वक पहचाने जा सकते हैं ।

डिमक (१म खंड ४५६ पृ०) महोदय अपराजिता का सं० नाम गोकर्ण लिखते हैं। परन्तु किसी भी प्रचलित वैद्यक ग्रंथ में इसकी उक्त संज्ञा का उल्लेख नहीं मिलता। ऐसा प्रतीत होता है कि "गिरिकर्णिका वा गिरिकर्णी" को भ्रमवश "गोकर्ण" लिख दिया गया है। "गोकर्णी" वा "गोकर्ण" अपराजिता का महाराष्ट्री नाम है।

सकल नव्य लेखकों ने एक स्वर से कालेदाने के बीज को अपराजिता बीज के सर्वथा समान होने का उल्लेख किया है। परन्तु कालेदाने का गात्र एवं वर्ण रुक्ष कृष्ण होता है, इसके विपरीत अपराजिता के बीज का गात्र चिकना एवं कृष्ण वर्ण का होता है।

वनस्पतिक— वर्णन—अपराजिता एक प्रकार की वृक्षारूढ बहुवर्षीय लता है। प्रायः शोभार्थ इसे उद्यानों में लगाते हैं। यह बहु शाखी एवं तृणमय होती है। मूल किञ्चित् गूदादार काष्ठमयी शाखायुक्त होता है। प्रकाण्ड अनेक दाहिने से बाएं को लिपटे हुए छोटे पौधोंमें मृदुलोमयुक्त (Tubescent) होते हैं। पत्र छोटे प्रायः गोल वा अंडाकार, विषम पक्षाकार, एक सींक को दोनों ओर जोड़े जोड़े होते हैं। प्रायः कुल २–३ किसी किसी में ४ जोड़े होते हैं। किन्तु उनके सिरेपर अर्थात् अग्रभाग पर एक अयुग्म पत्र होता है। पुष्प बड़े श्वेत वा नीले (या रक्त) दलयुक्त (सवृन्त) उल्टे ब्रैक्टियोलेट होते हैं। पुष्पवृन्त लघु लग भग चौथाई इञ्च लम्बा, कक्षीय, अकेला एक पुष्प युक्त होता है ब्रैक्टिओल्स किञ्चित् गोल पुष्प—बाह्य कोष के आधार से संलग्न होते हैं। पुष्प-बाह्य कोष पुष्पाभ्यन्तर कोष का १ वटा ३ लम्बा पंचशिखर युक्त, विषम, स्थाई, बीज-कोषाध होता है। पुष्पाभ्यन्तर-कोष तितलीस्वरूप, वृहदौर्ध्व पटल (Vexillum) बड़ा सिरा गोलाकार शिखरयुक्त, बहिः, नीला, (मध्यभाग पीताभ युक्त श्वेतवर्ण का) पक्ष (Alœ) कुंड़ाकार अत्यन्त पतला और सकुचित दलयुक्त, तरिणिका (keel) कुछ कुछ बूट के आकार के दो पतले सूत्रवत् दलदल से युक्त होते हैं। नरतंतु वा पुंकेसर पराग केशर या पराग की तीली (Stamens) ५ से १० वा इससे भी अधिक, दो स्थानों में स्थित (Diadelphous) होते हैं जिनमें एक पृथक रहता है और शेष तन्तुओं द्वारा आपस में मिले रहते एवं बीजकोषाधः होते हैं परागकोष वा पराग की घुण्डी (Anthers) बहुत सूक्ष्म, गोलाकार और श्वेत होती है। नारितंतु वा गर्भकेशर (Style) साधारण, परागकेशर की अपेक्षा लंबे किञ्चित् वक्र, सिरेपर वरिवस्तृत होते हैं। शिम्बी वा छीमी (Legume) २ से ३ इंच लम्बी और चौथाई इंच चौड़ी, चिपटी, सीधी, कुछ कुछ लोमश, द्विकपाटीय (दो छिलके युक्त) एक कोष युक्त (पर कोष की दीवारों से बहुत से भागों में विभाजित होती है, जिनमें से प्रत्येक में एक एक बीज होता है) और बहुबीजयुक्त होता है।

बीज आयताकार $\frac{1}{8}$ इंच लम्बे, चिकने, कृष्ण वा हरिताभायुक्त धूसर वा धूसरवर्ण के होते हैं यह सदा पुष्पित रहती है।

पुष्पभेद से यह दो प्रकार की होती है—(१) यह जिसमें सफेद फूल लगते हैं श्वेतापराजिता श्वेतगिरिकर्णिका। विष्णुकान्ता। सफेद कोयल और (२) वह जिसमें नीले फूल आते हैं नीला पराजिता, नील गिरिकर्णिका, कृष्णकांता, नीली कोयल आदि नामों से संबोधित की जाती है।

नीलापराजिता का एक और उपभेद होता है जिसमें दोहरे फूल लगते हैं।

नोट—इन विभिन्न प्रकार के अपराजिता के बीजों के प्रभाव में कोई प्रकट भेद नहीं और यदि कुछ होता है तो वह इसकी सफेद जाति के बीज में हो सकता है, किन्तु इनमें यह बीज जो दूसरे की अपेक्षा अधिक गोल एवं मोटे होते हैं, प्रभाव में अधिकबलशाली सिद्धि होंगे पुनः चाहे वे किसी जाति के हों।

रासायनिक संगठन—मूलत्वक्—में श्वेतसार, कषायिन और राल, बीज में एक स्थिर तैल एक तिक्त राल (जो इसका प्रभावात्मक सत्व है) कषायाम्ल (Tannic acid) द्राक्षौज एक इलका धूसर वर्ण का राल) और भस्म (६ प्रतिशत) प्रभृति होते है। बीज बाह्यत्वक् टूट जाने वाला (भंगुर) होता है। इसमें एक दौल होता है जो कणदार श्वेतसार से पूर्ण होता है।

प्रयोगांश—जड़ की छाल बीज और पत्र।

औषध-निर्माण-(१) बीज का अमिश्रित चूर्ण-Simple Powder of Clitorea Seeds (Pulvis Clitoreœ Simplex)

निर्माण-विधि—साधारण तौर पर चूर्ण बारीक चलनी या कपड़े से छानकर बोतल में भरकर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—१ से १॥ ड्राम तक (२-४ आना)

गुण—इतनी मात्रा से ५ या ६ दस्त खुलकर आएँगे और इसकी मात्रा १ ड्राम पर्यन्त करने से दस्तों की संख्या बढ़ाई जा सकती है। इतने से साधारणतः ८ या ९ दस्त आएगे।

(२) अपराजिताके बीजका मिश्रित चूर्ण-Compound Powder of Clitorea Seeds (pulvis Clitoreœ Compositus)

निर्माण-विधि—अपराजिता के बीज, सैंधव या क्रीम औफ टार्टार इनको चूर्ण कर इनमें से प्रत्येक ७ औंस लें. सोंठ या कुलंजन क्षुद्र का चूर्ण एक आउंस इनको एक साथ भली प्रकार रगड़कर बारीक चलनी या कपड़े से चलाकर बंद बोतल में सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—१॥ ड्राम से २ ड्राम तक।

(३) शीत कषाय (Infusion)—(८ में १)।

मात्रा—१ से २ आउंस।

(४) एलकोहलिक एक्सट्रैक्ट।

(५) क्वाथ।

(६) पत्र एवं मूल स्वरस।

(७) सूखी हुई जड़की छालका चूर्ण। मात्रा १ से ३ ड्राम।

प्रतिनिधि—काला दाना व लालदाना, जलापा तथा कॉन्वोल्व्युलस के बीजकी यह उत्तम प्रतिनिधि है। भेद केवल इतना है कि यह अधिक अग्राह्य एवं चरपरी होती है।

अपरजिता के प्रभाव तथा प्रयोग

आयुर्वेद की मत से—दोनों गिरिकर्णी(श्वेतापराजिता तथा नीलापराजिता) तिक्त पित्त के उपद्रव को प्रशमन करने वाली, चक्षुष्य, विष-दोषनाशक तथा त्रिदोषशामक होती है। गिरिकर्णी (अपराजिता) शीतल, तिक्त पित्तोपद्रवनाशक, विष तथा नेत्र के विकारो को शमन करने वाली और कुष्टरोग को नष्ट करने वाली है।

(धन्वन्तरीय निघंटु)

गिरिकर्णी (अपराजिता) हिम, तिक्त, पित्तोपद्रव नाशक चक्षुष्य, विषदोषशामक और त्रिदोष को शमन करने वाली है। नीलाद्रिकर्णी (नीलापराजिता) शीतल, तिक्त है, रक्तातिसार, ज्वर तथा दाह को नष्ट करने वाली तथा विष, वमन, उन्माद, भ्रमरोग, श्वास और अतिकास रोग को हरण करनेवाली है। राज०।

कटु, तिक्त, कफ वातनाशक, सूजन को दूर करने वाली, खांसी को नष्ट करने वाली है और कण्ठ्य अर्थात् कण्ठ को शुद्ध करने वाली है। राज०।

अपराजिता कटु, मेध्य शीतल, कण्ठ्य, दृष्टि को प्रसन्नताकारक तथा कुष्ट, शूल, त्रिदोष, आम शोथ, व्रण और विष को नष्ट करनेवाली है तथा कसेली, पाकमें कटुक (चरपरी) व तिक्त है तथा स्मृति और बुद्धिदायक है। भा०।

अपरजिता के प्रयोग—

यह पृश्नि (चितकबरे, कौड़िया साँप), वज्र नामक साँप और बिच्छू के विष की नाशक है। अथर्व०। सू० ४। १५। का० १०।

चरक-दर्वीकार सर्प के काटने पर सिन्धुवार (श्वेत निर्गुण्डी) वृक्ष की जड़ की छाल और श्वेत अपराजिता की जड़ की छाल इनको जल के साथ पीस कर पिलाए। चि० २१ अ०)।

चक्रदत्त-(१) श्वेतापराजिता की जड़ की छाल के रस को तण्डुलोदक के साथ गोघृत के योग से पान कराएँ। इससे भूतोन्माद शमन होगा। (उन्माद चि०)

(२) सफेद कोयल की जड़ को पीस कर गो घृत मिला गलगण्ड रोगी को पिलाए।

(गलगण्ड चि०)।

शार्ङ्गधर—परिणाम शूल में चीनी, मधु और गोघृत के साथ विष्णुक्रांता की जड़ का कल्क ७ दिन तक सेवन करने से परिणामशूल नष्ट होता। है (२ खं० ५ अ०)।

वंगसेन-शोथरोग में श्वेत या नील अपराजिता की जड़ की छाल को उष्ण जल में पीसकर पान करने से सूजन जाती रहती है। (जी० स० ५१६ वृ०)।

हारीत-वल्मीक श्लीपद रोग में गिरिकर्णिका अर्थात् अपराजिता की जड़ की छाल को पीस कर लेप करें। (चि० ३३ अ०)

जलोदर एवं प्लीहा व यकृत वृद्धि में—अपराजिता की जड़, शंखिनी' दन्तीमूल और नीलनी। इनको समभाग लेकर जल के साथ इमलशनवत् प्रस्तुत करें और गोमूत्र के साथ सेवन करें।

वक्तव्य

सुश्रुत में दर्वीकर सर्प की चिकित्सा में अन्य द्रव्यों के साथ अपराजिता का प्रयोग दिखाई देता है, यथा— श्वेत गिरिह्वा कणिही सिताच, (क० ५ अ०) सुश्रुतोक्त शोथ एवं उन्माद की चिकित्सा में अपराजिता का उल्लेख नहींहै सुश्रुत के सूत्र स्थान के ३९ वें अध्याय के वामक द्रव्यों की तालिका में अपराजिता का नाम नहीं आया है किंतु शिरोविरेचन वर्ग की औषधियों में अपराजिता का उल्लेख है। यथा—

"करवीरादीनामर्कातानां मूलानि'।

वाक्य में अपराजिता के मूल को शिरोविरेचक माना गया है।

चरकोक्त वान्तिकर द्रव्यों में अपराजिता का पाठ नहो है (वि० ८ अ०)।

चरक में सुश्रुतवत् शिरोविरेचन द्रव्यो के वर्ग में इसका पाठ आयाहै। (सू० ४ अ०) चरकोक्त शोथ चिकित्सा में अपराजिता का प्रयोग नहीं दिखाई देता किंतु उन्माद चिकित्सामें द्रव्यांतर के साथ इसका प्रयोग आया है चक्रदत्त के शोथ और शूल की चिकित्सा में अपराजिता का प्रयोग नहीं है।

नव्यमत

डिमक महोदयके कथानुसार विरेचक व मूत्रल गुणों के कारण इसको माजरियूने हिंदी (Indian mezereon) नाम से अभिहित किया गया है किंतु यहां पर यह बतला देना आवश्यक प्रतीत होता है कि माजरियून उदरीय शोथ को दूर करने के लिये व्यवहार में लाया जाता है। और यह फार्माकोपिया वर्णित माजरियून नहीं है

वे और भी लिखते हैं कि कोंकण में इसकी जड़ का रस २ तो० की मात्रा में शीतल दुग्ध के साथ पुरातन कास में कफघ्न (कफनिस्सारक) रूप से व्यवहार में आता है इससे उत्क्लेश (मतली) तथा वमन जनित होता है अर्द्धावभेदक में श्वेतापराजिता की जड़ का रस नकुआं द्वारा फूंका जाता है।

एन्सली विवमिषाजननार्थ किंवा वामक प्रभाव के लिए घुंडिकास वा स्वरध्नी कास(Croup) में अपरा जिता की जड़ के उपयोग का वर्णन करते हैं।

वंगाल डिस्पेंसेटरी नामक पुस्तक के रचियता वहुत से प्रयोगों के पश्चात् अपराजिता के वांतिकरत्व गुण को अस्वीकार करते हैं वे लिखते हैं कि अपराजिता की जड़ "एल्कोहलिक एक्सट्रैक्ट ५ से १० ग्रेन की मात्रा में शीघ्र विरेचक सिद्ध हुआ किंतु इसके सेवन से रोगी के पेट में दर्द (ऐंठन) एवं वारम्वार मल त्यागने की इच्छा

होती है और बहुत वेदना के बाद थोड़ा मल निकलता है। सुतरां वे इसे व्यवहार करने का परामर्श नहीं देते।

सर्व प्रथम इसका बीज टर्नेटी (Ternate) द्वीप से जो मलक्काद्वीपों में से एक है, इंगलैंड में लाया गया। अस्तु, इस पौधे का यह प्रधान नाम हुआ। हेंस (Haines) इसके (नीला पराजिता पुष्प) टिंचर को लिट्मस (क्षारद्योतक) की प्रतिनिधि बतलाते हैं। (फा० इं० १ खण्ड, ४५६-४६०)

डॉ० आर० एन० खोरी—अपराजिता की जड़, स्निग्ध, मूत्रकारक एवं मृदुरेचक है और पुरातन कास, जलोदर, शोथ एवं प्लीहा व यकृत् विवृद्धि तथा ज्वर और स्वरघ्नी कास (Croup) में व्यवहृत होती है। अपराजिता की जड़ का शीत कषाय स्निग्ध (Demulcent) रूप से बस्ति तथा मूत्र प्रणालीस्थ क्षोभ और कास में व्यवहार किया जाता है। अर्द्धावभेदक अर्थात् अर्धकपाली रोग में इसकी ताजी जड़ के रस का नस्य देते हैं। इसका एक्सट्रैक्ट शीघ्र रेचक तथा कालादाना, गुलाबांसबीज और जलापा की उत्तम प्रतिनिधि है। (मेटेरिया मेडिका आफ इंडिया २. य खंड २०६ पृ०)

मि० मोहीदीन शरीफ—स्वानुभव के आधार पर इसकी जड़ की छाल के १-२ ड्राम की मात्रा के शीत कषाय की बस्ति एवं मूत्रप्रणाली जन्य क्षोभों में स्निग्ध प्रभाव करने की बड़ी प्रशंसा करते हैं। साथ ही इसका मूत्रजनक और किसी किसी में मृदुवेचक प्रभाव होता है।

इसके बीज रेचक है। फा० इं०।

इसके पत्र का शीत कषाय विस्फोटक (Eruptions) में व्यवहृत होता है। वैट०।

इसके पत्ते के रस को आर्द्रक के साथ मिला कर तपेदिक (Hetic fever) में स्वेद आने की हालत में व्यवहार करते हैं। टेलर।

कर्णशूल में विशेषतया उस अवस्था में जब कि कान के आस पास की ग्रंथियाँ सूज गई हों, तब कान के चारों ओर अपराजिता के पत्ते के रस में सेंधा नमक मिलाकर गरमागरम लेप करें ए० सी० मुकर्जी।

डा० नादकरिणी—अपराजिता के बीज को भून कर चूर्ण प्रस्तुत करें। इसको जलोदर और प्लीहा व यकृत विवृद्धि में २० से ६० ग्रेन (१५ से ३० रत्ती) की मात्रा में प्रयुक्त करें। साधारणतः इसको इस प्रकार वर्तते हैं—२ भाग क्रीम ऑफ टार्टार १ भाग सोंठ और १ भाग अपराजिता के बीज, इनका चूर्ण बनाएँ। मात्रा-आधा से १ ड्राम।

उपयोग—इनको दृष्टिनैर्बल्य, कंठक्षत, श्लेष्मविकार, अर्बुद, त्वग्दोष तथा शोथ आदि रोगों में वर्तते हैं।

एक दो वा अधिक बीजों को भूनकर फिर मानुषी दुग्ध में पीस कर वा घीमें भूनकर बालकों के उदरशूल तथा मलावरोध में देते हैं। जड़ का एल्कोहलिक एक्सट्रैक्ट भी एक से दो ड्राम की मात्रा में उपयोगी है। (इंडियन मेटेरिया मेडिका पृष्ठ २२१-२२२)।

आर० एन० चोपरा—अपराजिता की जड़ मलशोधक तथा मूत्रल है और सर्प के विष में प्रयुक्त होती है।

(इं० ड० इं० पृ० ४७६)।

अपराजिता की पत्ती का कल्क प्रस्तुत कर नाखून खोरह् अर्थात् नरकहिया (Whitlow) फोड़े पर बांधने और निरन्तर जल से तर रखने से बहुत शीघ्र लाभ होता है। परीक्षित।

(२) पीत निर्गुण्डी। (३) जयन्ती वृक्ष, रा० नि० व० २३, ४। (४) शालपर्णी। भा० पू० २ भा०। (५) श्वेत सिंधुवार। (६) ब्राह्मी। (७) एक प्रकार की शमी। रा० नि० व० ८। (८) शेफालिका। रा० नि० व० ४। (९) शङ्खिनी। (१०) एक प्रकार का त्रपुषा। (११) एक प्रकार का हपुषा। रा० नि० व० ४।

अपराजिता धूपः—सं० पु० विनौला, मोरपंख, बड़ी कटेरी, शिवनिर्माल्य, तगर, तज, वंशलोचन, बिल्ली का विष्ठा, धान के तुष (भूसी), वच, मनुष्य के बाल, काले साँप की केचुली, हाथीदाँत

गौ का सींग, हींग, मिर्च, इन्हें बराबर लेकर धूप बनाऐ। यह धूप पसीना, उन्माद, पिशाच राक्षस देवता का आवेश, ज्वर इन सबका नाश करता है। ग्रह में इनकी धूप (धूनी) दें तो सब बाल-ग्रहों को दूर करता है और पिशाच तथा राक्षसों को निकालकर सब ज्वरों को नाश करता है। यो० चिन्ता म०।

अपराजितायोगः–सं० पु० सफेद कोयल की जड़ को पीस प्रातःकाल पीऐ तो गलगण्डरोग नष्ट होता है। इसके ऊपर से शुद्ध गोघृत पीएँ और पथ्य से रहे। योग० त० गल० ग० चि०।

अपराजितालेहः–सं० पु० (१) काकड़ासिंगी, कचूर, पीपल, भारंगी, गुड़, नागरमोथा, जवासा, तैल इनका लेह (चटनी) बना चाटने से वात की खाँसी नष्ट होती है। चक्र० द०।

(२) मजीठ २ तो०, कुड़ा ८ तो०, भांगरा की जड़ २ तो० इन्हें कूट कर ६४ तो० जल में पकाएँ। जब चतुर्थांश शेष रहे तो छानकर रस निकालें और उसमें ८ तो० मिश्री, बकरी का दूध १६ तो०, बेलफल, अतीस इनका चूर्ण १–१ तो० मिला तथा नागरमोथा, इन्द्रजौ १-१ तो० मिलाकर पकाएँ। जब चटनी सी हो जाय तब उतार रक्खें। इसके सेवन से ग्रहणी, अतिसार दूर होते हैं।

(३) मजीठ २ तो०, कुड़े की छाल ८ तो०, भांगरा मूल १ तो० इन्हें कूट कर १०२४ तो० जल में पकाएँ जब चौथाई रहे तो इसमें १६ तो० बकरी का दूध मिलाकर पकाएँ। जब गाढ़ा चटनी के तुल्य हो जाय तब इसमें सोंठ, अतीस, नागरमोंथा, इन्द्र जौ एक एक तो० मिलाकर रक्खें। इसे खाएं और ऊपर से कांजी, खटाई इनमें सिद्ध मांस खाएं और बकरी का दूध पिएं तो संग्रहणी तथा अतिसार दूर हो। वंगसे-सं० संग्रहणी-चि०।

अपराधीन–हिं० वि० स्वाधीन। (An voluntary)

अपरापातन–सं० पु० आँवल गिराना, खेडी गिराना, सु० सं० शा० अ० १०।

अपरायुः–सं० पु० भ्रूणांतरावरण। (Amnion)

अपराह्णः–सं० पु०
अपराह्न–हिं० पु० } (Afternoon) दिवस शेष भाग, तीसरा पहर, दिन का पिछला भाग, दोपहर के पीछे का काल यह काल प्रावृट् काल के समान होता है। सु० सू० ६।

अपरिक्लिन्न–हिं० वि० [सं०] शुष्क, सूखा।

अपरिगृहीता–सं० (हिं०) स्त्री० अविवाहिता स्त्री, रखेली स्त्री।

अपरिचालक–हिं० वि० पु० रोधक, अवाहक, जो विद्युत धारा का वाहक न हो। (Noncon-ductors-insulator)

अपरिच्छद
अपरिच्छन्न
अप्रच्छन्न– } –हिं० वि० [सं०] आच्छादन रहित, आवरण रहित, जो ढका न हो, नंगा, खुला।

अपरिच्छिन्न–हिं० वि० [सं०] (१) जिसका विभाग न हो सके, अभेद्य। (२) जो अलग न हुआ हो, मिला हुआ। (३) असीम, सीमा रहित।

अपरिणत–हिं० वि० [सं०] (१) अपरिपक्व, जो पका न हो, कच्चा। (२) जिसमें विकार और परिवर्तन न हुआ हो, विकार शून्य, ज्यों का त्यों।

अपरिणामी–हिं० वि० [सं० अपरिणामिन्] [स्त्री० अपरिणामिनी] परिणाम रहित, विकार शून्य, जिसकी दशा में परिवर्तन न हो।

अपरिणीत–हिं० वि० [सं०] [स्त्री० अपरिणीता] अविवाहित, कारा। (Bachelor)

अपरिणीता–हिं० वि० स्त्री० कारी, अनूढ़ा (Maid, virgin, unmarriedgirl)

अपरितुष्ट–हिं० वि० [सं०] असन्तुष्ट, तृप्तिरहित। (Dissatisfied)

अपरिपक्व–हिं० वि० [सं०] (१) जो परिपक्व न हो, अपक्व, कच्चा। (Unripe) (२) जो भली भाँति पका न हो, डेंसर, अधकच्चा। यो० अपरिपक्व कषाय।

अपरिपूर्णयोग–हिं० पु० (Unsaturated compound) ऐन्त्रियक रसायन के अनुसार यदि कार्बन वा किसी अन्य तत्व के परिमाणु के साथ अन्य तत्व के संयोग से उसकी कोई शक्ति वा स्थान रिक्त हो तो उसे अपरिपूर्ण योग कहते हैं, जैसे—एसीटिलीन जो कज्जलन के एक और उदजन के दो परमाणुओं का एक यौगिक है।

अपरिपूर्णविलयन–हिं० पु० (Unsaturated-solution) रसायन शास्त्रानुसार जब किसी द्रव में विलेय पदार्थ का विलयन करते समय उस पदार्थ का घुलना बन्द न हो अर्थात् वह घुलता ही रहे, तो वह विलयन अपरिपूर्ण विलयन कहलाता है।

अपरिमाण / अपरिमित –हिं० वि० [सं०] परिमाणहीन, असंख्यात, अनन्त। (Unlimited)

अपरिमेय–हिं० वि० [सं०] जिसका परिमाण न पाया जाय। जिसकी नाप न हो सके।

अपरिम्लानः–सं० पु० (The red var of Barleria prionites) रक्त अम्लान पुष्प वृक्ष। लाल कटसरैया–हिं० वि० जो न कुम्हलाया हो, ताजा खिला हुआ। (Newly opened)

अपरिवर्तनीय–हिं० वि० [सं०] (१) जो परिवर्तन के योग्य न हो, जो बदल न सके। (२) जो बदले में न दिया जा सके।

अपरिवृत्त–हिं० वि० [सं०] जो ढका या घिरा न हो, अपरिच्छन्न।

अपरिष्कार–हिं० संज्ञा पु० [सं०] [वि० अपरिष्कृत] (१) संस्कार का अभाव असंशोधन। सफाई वा काट छांट का न होना। (२) मैलापन, (३) भद्दापन।

अपरिष्कृत–हिं० वि० [सं०] (१) जिसका परिष्कार न हुआ हो, जो साफ न किया गया हो, (२) मैला कुचैला, (३) बेडौल, भद्दा।

अपरिसर–हिं० वि० संकीर्ण, संकुचित (Crowded)

अपरीक्षित–हिं० वि० [सं०] [स्त्री० अपरीक्षिता] जिसकी परीक्षा न हुई हो। जो परखा न गया हो, जिसकी जांच न हुई हो। जिसके रूप, गुण, परिमाण और वर्ण आदि का अनुसंधान न किया हो।

अपरूप–हिं० वि० [सं०] (Deformed) कुरूप, बदशकल, भद्दा, बेडौल, (२) अपूर्व का अपभ्रंश] अद्भुत, अपूर्व।

अपरेद्युः–सं० [अव्यय] पर दिन।

अपरेशन–हिं० संज्ञा पु० [अं० आपरेशन] (Operation) शस्त्रचिकित्सा। चीरफाड़।

अपरोक्ष–हिं० पु० प्रत्यक्ष, समक्ष, (Present)

अपर्णा–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] अपरना, पत्रशून्य (Leafless)

अपर्याप्त–हिं० वि० [सं०] अयथेष्ट, अपूर्ण, स्वल्प, थोड़ा, काफी नहीं। (A little, not enough)

अपर्व्वदण्डः–स० पु० रामशर, सरपत। (Sacch arum sara) रा० नि० व० ८।

अपसे–हिं० संज्ञा पु० कुष्ठ, कोढ़। (leprosy) देखो—अपरस।

अपर्स–बिलूच०, शबंत, हिमा०। धूपी, धूपड़ी, चंदन नेपा०। (Juniperus excelsa) मे० मो०।

अपलक्षण–हिं० संज्ञा पु० (१) अपशकुन। (२) (A Bad Sign) कुलक्षण, बुरा चिन्ह, दोष (३) दुष्टलक्षण।

अपलक्षणा–हिं० वि० स्त्री० [सं०] बुरे लक्षणवाली दुष्ट लक्षण। (of a badsign; ominous)

अपलापः–सं० पु० / अपलाप–हिं० संज्ञा पु० } [वि० अपलापित]

यह पेट और छाती (अर्थात् धड़) के मर्मों में से एक शिरा मर्म है जो (अंसकूट कन्धों) से नीचे तथा पार्श्वों (पंसवाड़ों) के ऊपर एक एक दोनों ओर स्थित हैं। सु० शा० ६ अ०

अपलापिका-सं० स्त्री० पिपासा, प्यास (Thirst) हे० च०।

अपवनम्-सं० क्ली०
अपवन-हिं० संज्ञा पु० } कृत्रिम वन, (An artificial garden) उपवन, बाग। हे० च०।

अपवरकः-सं० पु० गर्भगृह। (Inner room) हला०। See-Garbhagriha

अपवर्ग-सं० पु०
अपवर्ग-हिं० संज्ञा पु० } (१) अभिव्याप्य में से अपकर्षण करने को "अपवर्ग, कहते हैं, जैसे विष शास्त्र-विदोंके सम्मुख सिवा कीट विष वालों को विषोपसृष्ट अस्वेद योग्य नहीं होते। इसमें से "विषोपसृष्ट अस्वेद्य अर्थात् स्वेदन क्रिया के अयोग्य होते हैं,, यह वह व्यापक है जिसमें से कीट विष वाले पृथक कर दिये गये। सु० उ० ६५ अ० श्लो० १६। (२) मोक्ष' मुक्ति हिं० Liberation Deliverance इं०। (३) त्याग

अपवर्त्तन-हिं० संज्ञा पु० परिवर्तन, उलटफेर, पलटाव।

अपवर्तित-हिं० वि० [सं०] बदला हुआ। पलटाया हुआ। लौटाया हुआ।

अपवश-हिं० वि० [हिं० अप=अपना+सं० वश] अपने आधीन। अपने वश का। स्वाधीन। (Voluntary) परवश का उलटा।

अपविद्ध-हिं० वि० [सं०] (१) त्यागा हुआ। त्यक्त. छोड़ा हुआ। (२) बेधा हुआ विद्ध (३) चूर्णित।

अपविषा-सं० स्त्री० निर्विषदृण' निर्विषी (Curcuma zedoariæ) रा० नि०।

अपशोकः-सं० पु० अशोक वृक्ष। (Saraca Indica) रा० नि० व० १०।

अपष्ट-हिं० वि० अस्पष्ट गुप्त। (Notclear, hidden)

अपसरण-हिं० पु० प्रस्थान, चला जाना।

अपसर्जन-हिं० संज्ञा पु० [सं०] विसर्जन त्याग।

अपसव्यः-सं० त्रि०
अपसव्य-हिं० वि० } (१) दक्षिण, दाहिना (Right) (२) प्रतिकूल, उलटा, विरुद्ध (Opposite) सव्य का उलटा। मे०।

अपसार-हिं० संज्ञा पु० [सं० अप्+सार (१) अँबुकण। पानी का छींटा। (२) पानी की भाप।

अपवाहक-हिं० वि० [सं०] स्थानांतरित करने वाला एक स्थान से किसी पदार्थ को दूसरे स्थान पर ले जाना।

अपवाहन-हिं० संज्ञा पु० [सं०] स्थानांतरितकरना एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाना।

अपवाहित-हिं० वि० [सं०] एक स्थान से दूसरे स्थान पर लाया हुआ। स्थानांतरित।

अपवाहुक-हिं० सं० पु० [सं०] देखो—अपवाहुकः।

अपशकुन-हिं० संज्ञा पु० [सं०] कुशगुन। असगुन।

अपशब्द-हिं० संज्ञा पु० [सं०] पाद अपान वायु का छूटना। गोज। पर्दन।

अपसर्पण-हिं० संज्ञा पु० [सं०] [वि० असर्पित] पीछे सरकना पीछे हटना।

अपसर्पित-हिं० वि० [सं०] पीछे हटा हुआ पीछे सरका हुआ।

अपसारण-हिं० पु० (भौ० वि०) (Repulsion) अपकर्षण।

अपस्कम्भः-सं० पुं० (Symplocos racemosa) लोध्र अथर्व०। ४। ६। ४।

अपस्करः-सं० पु० (१) मलद्वार चूति। गुदा (Anus) इं० (२) विष्टा पुरीष (Faeces) धर०।

अपस्तम्भ (स्व) मर्म्म-सं० क्ली० उदर और वक्ष स्थ मर्मों में से एक शिरा मर्म विशेष। यह उर (हृदय की दोनों ओर वायु को बहाने वाली दो नाड़ियां "अपस्तम्भ,, नामक दो मर्म हैं। सु० शा० अ० ६।

अपस्तम्भिनी-सं० स्त्री० श्वेतपुष्पिका लता, श्वेतलिंगी (Bryonia)। वै० निघ०।

अपस्मारः स्मृतिः-सं० पु० अपस्मार-हिं० संज्ञा पु० [वि० अपस्मारी] स्वानामाख्यात प्रसिद्ध वात व्याधि पर्य्याय से होने वाला एक रोग विशेष। इसमें हृदय काँपने लगता है और आंखों के सामने अंधेरा छा जाता है रोगी कांपकर पृथ्वी पर मूर्छित हो गिर पड़ता है इसके हाथ पाँव में आकुंचन होता और मुँह से झाग आता है।

पर्य्याय—अंग विकृति, लालाध, भूत विक्रिया मृगी-सं०, हिं०, बं०। मिरगी हिं०, उ०। फेफरे म०। सरअ-अ०। मर्ज काहनी, मर्ज साकत। अवर वलसा, इब्र अकलसा-यु०। एपिलेप्सी Epilepsy एपिलेप्सिया Epilepsia। मॉर्बस कॉमिटिएलिस Morbus comitialis. सासर मेजर Sacer major इं०। एपलेप्सां Epilepsie हॉटमैल Haut mal फ्रां० फालसुखट Fallsucht-जर०।

पर्य्याय-निर्णायक नोट—इस रोग में स्मृति नष्ट हो जाती है इसलिये इसको अपस्मार कहते हैं। सरअ के शाब्दिक अर्थ गिर पड़ना गिरना गिराना आदि हैं। परन्तु तिब्ब की परिभाषा में मृगी को कहते हैं। इस रोग में संज्ञा व चेष्टा वहां इन्द्रियां अव्यवस्थित हो जाती है ऐच्छिक मांस पेसियों में आकुंचन होता है और रोगी मूर्छित होकर गिर पड़ता है इसी कारण इसको उक्त नाम से अभिहित करते हैं। फारसी में इस को नैदुलान कहते हैं।

नोट—शेष शब्दों की व्याख्या क्रमशः उन उन शब्दो के सामने की जायगी।

निदान व सम्प्राप्ति

प्रायः यह रोग पैतृक होता है परन्तु शिशुओं में दांत निकलना, उदरीय कृमि, अकस्मात भय का होना, युवा पुरुषों में अति मैथुन हस्तमैथुन मस्तिष्क को आघात पहुचना, मस्तिष्क वा मस्तिष्कावरक प्रदाह, चिंता शोक मानसिक श्रम की अधिकता, मद्यपान, उपदंश, वातरक्त वा सधिवात और रक्त विकार इत्यादि नासिका कंठ आंत्र और जननेन्द्रिय में किसी चिरकारी क्षोभक व्याधि की उपस्थिति, स्त्रियों में मासिक दोष आदि इसके कारण हैं।

लिखा भी है—

चिन्ता शोकादिभिः क्रुद्धा दोष हृत्स्रोतसिस्थिताः
कृत्वा स्मृतेरपध्वंसमपस्मार प्रकुर्वते॥

अर्थात्—चिंता शोक और भय के कारण कुपित एवं हृदय में स्थित हुए दोष (त्रय) स्मृति का नाश कर अपस्मार रोग को करते हैं। तथाच्च

वाग्भट्टः—

स्मृत्यपाये ह्यपस्मारः संधि सत्वाभि संप्लवात्।
जायतेऽभिहते चित्ते चिंता शोक भयादिभिः
उन्माद वत्प्रकुपितैश्चित्तदेह गतैर्मलैः॥
हते सत्वे हृदि व्याप्ते संज्ञावाहिषु खेषु च।

× × × ×

(वा० उ० अ० ७)

अर्थात्—जिस रोग में स्मृति का नाश हो जाता है, उसे अपस्मार कहते हैं बुद्धि और सत्व गुण में विप्लव होने के कारण चिंता शोक और भयादि द्वारा आक्रमित हुआ चित्त तथा उन्माद के सदृश चित्त और देह में रहनेवाले प्रकुपित दोषों से सत्व गुण नष्ट होकर हृदय और संज्ञावाही संपूर्ण स्रोतों में व्याप्त हो जाता है इसी से स्मृति का नाश होकर अपस्मार उत्पन्न होता है।

अपस्मार के भेद—

वैद्यक शास्त्रानुसार यह ४ प्रकार का होता है यथा—

अपस्मार इति ज्ञेयो गदो घोरश्चतुर्विधः।
(मा० नि०)

या "सच दृष्टश्चतुर्विधः"।

वातपित्त कफैर्नृणांचतुर्थः सन्निपाततः।
(सु०)

अर्थात्—(१) वातज, (२) पित्तज, (३) कफज और (४) सन्निपातज। (यह रोग नैमित्तिक है)

डाक्टरी मत से यह दो प्रकार का होता है—(१) ग्रैण्डमाल (Grand Mal) या हॉट माल (Haut Mal) अर्थात् उग्र

अपस्मार या सरअ शदीद और (२) पेटिट्मल (PetitMal) अर्थात् साधारण अपस्मार या सुरअ खफीफ। परंतु इस रोगका इससे भी एक साधारण प्रकार वह है जिसको अंग्रेजी में एपिलेप्टिक वर्टिगो (Epileptic vertigo) अर्थात् आपस्मारिक शिरोघूर्णन या दुवार सरई कहते हैं। इससे भिन्न अपस्मार की एक और अवस्था है जिसको अंग्रेजी में स्टेटस एपिलेप्टिकस (Status Epilepticus)अर्थात् आपस्मारिकावस्था या सरअ मुतवातिर कहते हैं। इसके अतिरिक्त बच्चोंके अपस्मारको बाल अपस्मार वा शिशवपस्मार तथा अंग्रेजी में इन्फेण्टाइल कन्वल्शन (Infantile convulsion) और अरबी में सउ'ल् अतफाल या उम्मुसिब्यान आदि नामों से पुकारते हैं।

नोट—यूनानी भेदो के लिये देखिए सरअ।

पूर्व रूप

जो किसी समय रोगाक्रमण काल के बहुत समीप उपस्थित होता है, यहां तक कि रोगी अपने आपको सँभाल नहीं सकता और कभी उससे एक वा दो दिवस पूर्व उपस्थित होता है पूर्वरूप में से यह एक प्रधान लक्षण है कि रोगी को अपने शरीर के किसी मुख्य भाग साधारणतः हस्तपाद की अंगुलियों वा पेट पर से सुरसुराहट मालूम होती है, जो वहां से आरंभ होकर ऊपर को जाती हुई शिर तक पहुंचते ही रोगी को मूर्च्छित कर देती है और रोग का दौरा हो जाता है। उक्त प्रकार की सुरसुराहट को डाक्टरी की परिभाषा में औरा एपिलेप्टिका (Aura Epil eptica) अर्थात् नसीम सरअ (मृगी की सुरसुराहट) कहते हैं। इसके अतिरिक्त रोगाक्रमण से पूर्व शिरोशूल एवं शिरोघूर्णन होता है अथवा नासिका से एक प्रकार की गंध आने लगती है और आँखोंके सामने चिनगारियों सी उड़ती प्रतीत होती है। कभी दौरे से पूर्व भयावह रूप दिखाई देते और कर्णनाद होता है, बुद्धि भ्रंश एवं किञ्चित् निर्बलता होती कभी ज्वर का वेग होता और कभी आक्षेप होकर शिर किञ्चित् एक कंधे की ओर झुक जाता है, जो एक प्रधान लक्षण है। कभी कभी कोई रूप प्रगट नहीं होता। आयुर्वेद में भी प्रायःयही बातें लिखी है, यथा—

हृत्कम्पः शून्यता खेदो ध्यान मूर्च्छा ऽमूढता।
निद्रानाशश्च तस्मिंश्च भविष्यति भवत्यथा॥
मा० नि०।

अर्थात्—हृदय का कांपना, हृदय की शून्यता खेदखाव, विस्मित सा रहजाना, मूर्च्छा (मनोमोह), अत्यन्त अचेतता और अनिद्रा आदि लक्षण अपस्मार रोग होने से पूर्व होते हैं।

रोगाक्रमणकालीन सामान्य लक्षण

जब इस रोग का आक्रमण होता है तब रोगी साधारणतः एक चीख मारकर और मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ता और तड़पने लगता हैं। हस्तपाद आकुंचित होकर मुखमण्डल भयावह और नीलवर्ण का हो जाता है, नेत्रपिण्ड ऊपर को फिर जाते एवं निश्चेष्ट हो जाते हैं। परन्तु, कभी कभी उनमें गति भी होती है, हृदय धड़कता है, श्वास कष्ट से आता है और मुंह से झाग आता है। कभी जिह्वा दाँतों के भीतर आकर कट जाती है। मूर्च्छितावस्था में ही मल व मूत्र का प्रवर्त्तन और शुक्र का स्खलन हो जाता है। फिर एक ओर से हस्तपाद में एक झटका सा लगकर आक्षेप प्रशमित हो जाता है तथा रोगी एक सर्द आह भरकर कुछ काल तक मूर्च्छित पड़ा रहता है। रुदनान्तर ज्ञान होने पर उसकी बुद्धि ठिकाने नहीं रहती। अपितु, क्लान्ति शिरःशूल, शिरोभ्रमण, अजीर्ण स्थानिक आक्षेप या पक्षाघात तथा बुद्धिभ्रंश आदि विकार शेष रह जाते है उन्मत्त के समान कभी कभी रोगी को क्षोभ उत्पन्न हो जाता है। रोगाक्रमण काल ३ मिनट से १० मिनट पर्यन्त और कभी आध घंटा तक होता हैं।

इस रोग के वेगकी न्यूनाधिकता विभिन्नव्यक्ति में एवं एक ही व्यक्तिको भिन्न भिन्न काल में विभिन्न होती है। यथा—

पक्षाद्द्वादशाहाद्वा मासाद्वा कुपिता मलाः।
अपस्मारायकुर्वंति वेगं किञ्चिदथान्तरम्॥

देवे वर्षत्यपिययथा भूमौ बीजाति कानिचित्।
शरदि प्ररिरोहन्ति यथा व्याधि समुच्छ्रयः॥
भा० नि०।

अर्थ—वात आदि दोषों के प्रकुपित होने से वातज का दौरा बारहवें दिन होता है। कभी कभी उपर्युक्त अवधि को छोड़ कर न्यूनाधिक दिनों में भी होता है। उदाहरणार्थ—जैसे चौमासे में मेघके बरसने पर भी भूमि में पड़े हुये गेहूँ चने आदि बीज शरदऋतु में उगते है। उसी प्रकार सम्पूर्ण रोगोंके बीज रूप वात आदिक दोंष कभी किसी मृगी आदि रोग विशेष के निदान आदि के संयोग होने से उस रोग को प्रकट करते हैं।

अतः एक रोगी को १७ वर्ष पर्यंत प्रति दिन रात्रि को एक बार इसका वेग होता रहा और एक अन्य ऐसे रोगी को हर रात्रि को १० वार रोग का वेग होता रहा तथा एक तीसरे को ६१ वर्ष की अवस्था में केवल ७ वार वेग हुआ।

पेटिन्ट माल अर्थात् सामान्य प्रकार की मृगी अन्य नौवती रोगों के सदृश कभी नियत काल पर सप्ताह में एक बार या मास में एक वार होती है। कभी मृगी का वेग स्वप्नावस्था में हो जाता है जिससे रोगी अथवा किसी अन्य व्यक्ति को उसकी सूचना तक भी नही होती। स्टेट्स एपिलेप्टिका मृगी रोग की वह अवस्था है जिसमें क्षण क्षण में वेग होते है। एक वेग का अंत भी नहीं होने पाता कि दूसरे वेग का आरम्भ हो जाता है, यह दशा अत्यन्त शोचनीय होती है। एपिलेप्टिक वर्टिगो (आपस्मारिक शिरोघूर्णन) अर्थात् मृगी के कारण शिरोभ्रमण—इसमें रोगी को क्षण भर के लिये चक्कर आकर किञ्चित् मूर्च्छा आजाती है। किसी किसी रोगी को इसका वेग इतना अल्प होता है कि समीपस्थ तथा ध्यान देने वाले व्यक्तियों को उसका पता नही लगता। और किसी किसी में अल्पसी विसंज्ञता होकर मुखमण्डल एवं ग्रीवा का तशत्रुज (आक्षेप) उपस्थित हो जाता है, नेत्रकनीनिका प्रसरित हो जाती है और एक गम्भीर श्वास लेकर रोगी होश में आकर काम में लग जाता है।

दोषानुसार अपस्मार के लक्षण

वातापस्मार—वात के अपस्मार में रोगी कांपता, दांत पीसता व चबाता, फेन का वमन करता अर्थात् मुख से झाग डालता, खर श्वास लेता और कठोर (रूक्ष), धूसर व लाल, काले रंग के मनुष्यों को देखता है अर्थात् उससे ऐसा प्रतीत होता है मानो कोई उक्तवर्ण वाला मनुष्य उसके ऊपर दौड़ा आता है। मा० नि०। वातज अपस्मार में रोगी का पांव कांपने लगता है, वार वार गिरता पड़ता है तथा ज्ञान के नष्ट हो जाने से वह विकृत स्वर से रुदन करने लगता, आंखें गोल सी हो जाती, श्वास लेता, मुख से झाग डालता, कांपने लगता, शिर को घुमाता, दांतों को चबाता, कन्धों को ऊंचे करता और अंग को चारों ओर फेंकता है। देह में विषमता हो जाती और सम्पूर्ण अंगुलियाँ टेढ़ी पड़ जाती है। आंखें त्वचा, नख और मुख रूक्ष, श्याव, अरुण वा काले पड़ जाते हैं। रोगी को चंचल, कर्कश, विरूप और विकृतानन सम्पूर्ण वस्तु दिखाई देने लगती है। वा० उ० अ० ७।

पित्तापस्मार—पित्तापस्मारी के मुखके झाग, देह, मुख और आंखें पीली हो जाती है। वह समग्र वस्तुओं को पीतलोहित वर्णान्वित देखता है अथवा उसे ऐसा दीखता है मानो कोई पीले रंग का मनुष्य सामने से दौड़ा आता है, यथा—

"पीतोमामनुधावति"—सुश्रुत, और तृषायुक्त होकर वह सम्पूर्ण जगत् को इस भांति देखता है मानो वह उष्णता एवं अग्नि से व्याप्त हो। मा० नि०। बार बार चेत कर लेना, त्वचा का पीला पड़ जाना, भूमि को खोदने लगना, प्यास का लगना और भयानक, प्रदीप्त एवं क्रोधित रूप देखना आदि लक्षण वाग्भट्ट महोदय ने अधिक लिखे हैं।

कफापस्मार—कफ की मृगी वाला रोगी सफेद रंग के रूप को देखकर (मानो कोई श्वेत वर्ण का मनुष्य सामने से उसके पास दौड़ा हुआ आताहै ऐसा देखकर-सुश्रुत) मूर्छित हो जाता है। रोगी का मुख, मुख का झाग, नेत्र और अंग

सफेद हो जाते हैं शरीर शीतल हो जाता है, रोम हर्ष होता और देह में भारीपन हो जाता है। श्लैष्मिक मृगी का रोगी अन्यान्य मृगी बालों की अपेक्षा देर में चैतन्य होता है मा० नि० । मुख से लार का अधिक गिरना और नख का श्वेत हो जाना वाग्भट्ट ने अधिक लिखे हैं । वा० उ० ७ अ० ।

त्रिदोषज वा सान्निपातिक अपस्मार और अपस्मार की असाध्यता—

जिसमें तीनों दोषों के लक्षण मिले उसे त्रिदोषज अपस्मार कहते हैं। यह तथा क्षीण पुरुष का पुराना अपस्मार भी असाध्य है जो बहुत काँपे क्षीण हो और जिसकी भौंह चलायमान हो और नेत्र टेढ़े हो जांय ऐसे अपस्माररोगी असाध्य हैं। मा० नि० ।

पैतृक अपस्मार को कम लाभ हुआ करता है अन्य प्रकार की बात व्याधियों की अपेक्षा मस्तिष्कविकार जन्य अपस्मार, चाहे वह औहदंशिक हो या न हो अधिकतर चिकित्स्य होता है दन्तोद्भेजन्य या आंत्रविकारजन्य शैशव कालसे आरंभ होने वाला अपस्मार और जिसे बहुत काल हो गये हों लगभग असाध्य होते हैं।

रोग विनिश्चय

अपस्मार के लक्षण निम्नलिखित कतिपय रोगों के लक्षण बहुत कुछ समान होते हैं। अस्तु इसके निदान करने में उनका विचार कर लेना अत्यावश्यक है:—

(१) अपस्मार तथा शिरोभ्रमण—

अपस्मार रोगी अकस्मात पृथ्वीपर गिर पड़ता है और उसके हस्तपाद आक्षेपग्रस्त हो जाते हैं। एवं उसके मुख से कफ जारी होता है इसके विपरीत शिरोघूर्णन में यद्यपि रोगी चक्कर खाकर गिर पड़ता है तो भी न उसके हस्तपाद आक्षेपग्रस्त होते हैं और नतो मुख में झाग ही आता है।

(२) अपस्मार और योषापस्मार—

देखो योषापस्मार।

(३) अपस्मार और आक्षेपक—

देखो आक्षेपक।

स्वास्थ्य संरक्षण

रोगारम्भ के पूर्व जिस स्थान पर सुरसुराहट का बोध हो उससे ऊपर एक रूमाल या पटका कसकर बाँधना और वेग से पूर्व उक्त क्रिया का दोहराना या उक्त स्थल पर चुटकी लेना, सर्दी, गर्मी अथवा बिजली लगाना या ब्लिष्टर लगाना (फोस्का उत्पन्न करना) या उस स्थल की नाड़ी का छेदन करना, प्रायः लाभदायक सिद्ध होता है

दोनों हाथों को उष्ण जल में रखना मन्या पर बर्फ लगाना ५–१० मिनट तक उछलना कूदना या जोर से पढ़ना वस्तिदान, वमन कराना या विरेचन देना २० ग्रेन क्लोरल एक आउस पानी में मिलाकर पिलाना या तिहाई ग्रेन मॉर्फिया (अहिफेन सत्व) और $\frac{१}{४०}$ ग्रेन ऐट्रोपीन (धत्तूरीन) का त्वगन्तरीय अन्तक्षेप करना, आदि में मूर्छा न होने पर अवयवों को बलपूर्वक खीचना और शिर विपरीत दिशाकी ओर घुमाना श्वासावरोध में ईथर, क्लोरोफार्म या नाइट्रेड आंफ इमायल सुँघाना इत्यादि उपाय रोग प्रतिषेधक रूप से उपयोगी सिद्ध हुये हैं।

रोगी के शिर को तीव्र गति से सुरक्षित रक्खें कठिन परिश्रम, अधिक अध्ययन, अति मैथुन आदि से तथा मद्यपान एवं अधिक सर्दी गर्मी से परहेज करना चाहिये। गतिशील एवं घूमती हुई चीज को देखना, ऊँचाई पर चढ़कर नीचे देखना दौड़ना या घोड़े परसवार होकर उसे दौड़ाना, स्नानागार के भीतर अथवा जिस ओर से गन्दा वायु आता हो उस ओर बैठना, मधुर, स्निग्ध व गुरु (दीर्घपाकी) एवं उष्ण आहार का सेवन करना दिन में सोना मेघ का गरजन सुनना, विद्युत की चमक को देखना और वर्षा में भीगना इत्यादि से सब हानिकारक हैं।

रोग के वेग से पूर्व जिस स्थल पर सुरसुराहट, अनुभव हो वहाँ पर कपड़ा या रूमाल बाधें या उक्त स्थल पर कोई भक्षक (वा दाहक) औषध लगाकर छत उत्पन्न करे। भक्षक योग अर्थात् (कॉस्टिक) (-रक्त मिर्च, राई और फर्फ्यून इनको

सम भाग लेकर खूब कूटकर मिलावे के तेल में मिलाकर उक्त स्थल पर रखकर बांध दे।

वेग के प्रारम्भ में रोगी के आक्षेपयुक्त अवयव को खींचकर पूर्व अवस्था में ले आना प्रायः वेग कम कर देता और कभी कभी रोक भी देता है।

सऊत अजीब (विलक्षण नस्य)—वासमती चावल को आवश्यकतानुसार लेकर आक दुग्ध में तर करके सुखालें। फिर बारीक पीसकर रखलें।

मात्रा व सेवन-विधि—एक रत्ती इस दवा को किसी नली (या इन्सफ्लेटर) द्वारा नासिका में फूकें।

प्रभाव व उपयोग—प्रतिश्याय कफज शिरो वेदना, समलवायु, (इसावह) अर्द्धभेदक, अपस्मार बालापस्मार और मूर्छा में लाभदायक है। सूचना—नियत मात्रा से अधिक कदापि न सेवन कराएँ यदि एक बार में लाभ न हो तो १० १५ मिनट बाद पुनः उतना ही प्रयोग में लाएँ।

अपस्मार के वेग (दौरे) की चिकित्सा

जब मृगी का वेग हो, तब रोगी को ऐसे गृह में जिसमें शुद्ध वायु का प्रवेश हो, सुरक्षित रूप से कोमल स्थान पर सुखपूर्वक लिटाए। ग्रीवा, वक्ष तथा उदर के बन्धन को ढीला कर दें शिरको ऊंचा रक्खें और दांतों के बीच में बोतल का कार्क (काग) या कपड़े की गद्दी रखदें। जिससे जिह्वा दाँतों तले आकर कट न जाय। फिर किसी उपयुक्त नस्य वा अञ्जन का प्रयोग कराए कभी ब्राइट्ड आंफ इमायल को ५ बूंद की मात्रा में सुँघाने से वेग की तीव्रता कम हो जाती है रोगी के शिर पर शीतल जल अथवा बर्फ लगाए। मुखमण्डल पर शीतल जल के छींटे मारें और जब रोगी सर्वथा निश्चेष्ट हो जाए तब उसको उसी दशा में लेटा रहने दें। तत्क्षण मूर्छा निवारण का यत्ननकरें ज्ञान होने पर दोतीन घन्टे तक उसकी रक्षा करें। क्योंकि कभी कभी वेग के पश्चात् रोगी मूढ़मति होकर उन्मत्त के समान निंदित कामों को करने लगता है वेग की शांति के पश्चात प्रायः शिरोशूल हुआ करता है। तदर्थ फिनेसेटीन को ५ ग्रेन (२॥ रत्ती) की मात्रा में देने से प्रायः लाभ हो जाता है।

वेग काल में हकीम लोग प्रायः हींग और जुन्दबेदस्तर को सिकंजवीन अंसली में घिसकर इसके कुछ बूंद कंठ में टपकाते हैं अथवा कुन्दश श्वेत बचुकी या इन्द्रायन का गूदा या काली मरिच या कलौंजी, सोंठ, मुर्मकी, फफ्यूंन अथवा जुन्दबेदस्तर आदि में जो उपलब्ध हो उसको घिसकर नस्य दे या सुदाब को सुघाएँ अथवा ऊदसलीब जलाकर उसका धूम्र नासिका में सुँघाएँ।

विराम कालीन चिकित्सा

अपस्मार के वेग के प्रशमित होने और उसके स्वरूप एवं कारण का ज्ञान हो जाने पर तदनुकूल चिकित्सा की व्यवस्था करनी चाहिये अस्तु दोषों से आवृत बुद्धि चित्त हृदय और सम्पूर्ण स्रोतों के प्रबोध कराने के निमित्त तीक्ष्ण वमनादि का दोषानुसार प्रयोग करें यथा—

वातिकं बस्ति भूयिष्ठैः पैत्तं प्रायो विरेचनैः।
श्लैष्मिकं वमनप्रायैरपस्मारमुपाचरेत् ॥
(वा० उ० ७ अ०)

अर्थात्—वातिक अपस्मार में वस्ति प्रधान पैत्तिक अपस्मार में विरेचन और कफज में वमन प्रधान चिकित्सा द्वारा उपचार करें।

वमन विरेचनादि द्वारा सब तरह से शुद्ध हुए तथा पेया यागादि द्वारा ससर्गी करके सम्यक् आश्वासन किये हुये रोगो को अपस्मार की शांति के निमित्त उचित संशमन औषधों का उपयोग करना आवश्यक है।

बालकों के आन्त्रस्थ कृमिविकार या दन्तोद्भेद होने की दशा में उनका उचित उपचार करें, युवाओं के आमाशय, आंत्र तथा यकृत की क्रिया को ठीक करें। किसी रोग के कारण यदि कोई दांत खराब हो गया हो तो उसको उचित उपाय करें। मलावरोध न होने दें, क्यों कि इससे साधारणतः रोग का वेग हो जाया करता है। तम्बाकू, कहवा, चाय, मद्य एवं अन्य उत्तेजक औषधों से बिलकुल परहेज कराएं। अधिक

अध्ययन एवं कठिन श्रम से बचें। उद्वेग तथा वासनाओं विशेषकर काम वासनाओं से एवं अन्य दुर्व्यसनों से सख्त परहेज करें! चिन्ता, शोक, भय और क्रोध प्रभृति मनोविकारों का अवलम्बन करना अपवित्रता तथा विरुद्ध, तीक्ष्ण, उष्ण यथा—मांस और अंडे प्रभृति तथा भारी आहार करना अपस्मारी के लिये अहितकर है। स्त्रियों के अनियमित मासिक स्राव को स्वास्थ्यावस्था पर ले आएं।

ताजी तरकारी और दूध प्रभृति आहार अधिकतर उसकी प्रकृति के अनुकूल होते हैं। साफ स्वच्छ वायु में रहना, दैनिक शीतल जल से स्नान करना, प्रातः सायं वायु सेवन के लिये जाना, अधिक सोना, पथ्य लघु शीघ्रपाकी आहार का सेवन और स्वास्थ्य संरक्षण सम्बन्धी नियमों का पालन करना अत्यन्त उपयोगी है। अपरञ्च धूपन, अंजन, नस्य, शिराव्यधन (फसद खोलना), भय दिखाना, बन्धन, भय, तर्जन, ताडन, हर्ष, धूम्रपान, धैर्य देना, स्नान, मर्दन और विस्मय आदि भी उसके लिये हित हैं एवं लाल शालिधान्य का चावल, मूंग, गेहुँ, प्रतन, घृत, कूर्म (कछुए) का मांस, धन्वरसा, दुग्ध, ब्रह्मी के पत्र, बच, पटोल, श्वेत कुष्मांड, वास्तुक, दाड़िम, शोभाञ्जन (सहिंजन); नारिकेल, द्राक्षा आमला, परुषक, (फालसा), तेल, गदहे और घोड़े का मूत्र, आकाश जल और हरीतकी ये अपस्मार रोगी के लिये पथ्य एवं अत्यन्त हितकारक है। चिंता, शोक, भय, क्रोध आदि मनोविकार, अपवित्रता और सम मत्स्य, विरुद्ध अन्न, तीक्ष्ण, उष्ण और भारी भोजन ये अपस्मारी के लिये अहित हैं।

देश काल, अवस्था और प्रकृति आदि का विचार करके आवश्यकतानुसार निम्न योगों में से किसी एक के उचित मात्रा में उपयोग करने से अपस्मार में लाभ होता है :—

अपस्मार गजांकुश, अपस्मारारि, कल्याण चूर्ण, सूतभस्म प्रयोग, वातकुलान्तक, चण्ड भैरव, इन्द्र ब्रह्मवटी, कुष्माण्ड घृत, स्वल्प पञ्च गव्य घृत, बृहत् पंचगव्य घृत, महा चैतस घृत, ब्राह्मीघृत और पलङ्कषाद्य तैल, सिद्धार्थक तैल, कुमारी आसव तथा चतुर्मुख रस इत्यादि।

नोट—योग, सेवन-विधि व अनुपान प्रभृति क्रमानुसार दिये जाएँगे।

यूनानी वैद्यक की मत से रोग के मूलभूत कारण को दूर करें। भोजन से पूर्व व पश्चात् लघु श्रम विशेषकर अधोशाखाओं का मर्दन लाभदायक है, श्रमकाल में शिर को गति न दें। वक्ष व उदर से दोनों पिंडलियों तक किसी मोटे वस्त्र से इतना मर्दन करें जिसमें अवयव रक्त युक्त हो जाय। आह्निक मध्यम अवगाहन करें।

चिकित्सा

(१) मिश्रित दवाएँ—

नोट—अमिश्रित दवाएं आगे वर्णित हैं।

खमीरह् गावजुवान अम्बरी जदवार उद सलीब बाला ५ मा०, अर्क गाजर (गाजरार्क) वा अर्क गावजुवान प्रत्येक ६ तो० और शर्बत अबरेशम २ तो० के साथ देना अपस्मार में लाभप्रद है।

अन्नोफज उस्तोखुदूस ७ मा० को अर्क मुण्डी ५ तो० तथा अर्क गावजुवान ७ तो० के साथ देने से लाभ होता है।

मअजून जवीब ७ मा० को अर्क गावजुवान १२ तो० के साथ देना प्रायः लाभदायक होता है।

मअजून फैकरा ७ मा०, अर्क बादियान व अर्क गावजुवान प्रत्येक ६ तो० के साथ उपयोगी है।

मुफर्रिह शेखुर्रईस ३ मा० को ५ मा० शीरह् गावजुबान १२ तो०, अर्क गावजुवान और ४ तो० खमीरा बनफ्सा के साथ देना लाभप्रद होता है।

मअजून आकर्करहा ३ मा० या मअजून कुचार ५ मा० अथवा मअजून सूतिरा ४ मा० को अर्क मुण्डी या अर्क गावजुबान प्रभृति के साथ देना लाभदायक है।

सरअ मिश्रूदी व सरअ मराक़ी अर्थात् आमाशयिक वा औन्मादिक अपस्मार

इसमें आमाशय तथा यकृत् का ध्यान रखकर चिकित्सा करें। अस्तु अयारिज फैकरा, गुलकन्द मरतगी, पुदीना और अफ्सन्तीन प्रभृति औषधों द्वारा आमाशय को बलप्रदान करें तथा लघु और शीघ्रपाकी आहार की योजना करें। यदि रोगी के रक्त प्रकृति होने अथवा रोगिणी के अतुस्राव के अवरुद्ध हो जाने से शरीर में शोणित का प्रकोप हुआ हो तो साफिन नाम्नी शिरा का वेधन करें (फसद खोलें) या पिंडलियों पर भरी सींगियाँ (शृंगी) लगाएं तथा विरेचन दें। मधुर एवं उष्ण आहार व मादक द्रव्यों से परहेज कराए और अनारदाना जरिश्क या सुमाक अथवा आवगोरह् मिलाकर शीतल आहार दें। यदि रोगी शीतल और कफ प्रकृति हो जिसके ये लक्षण है, ज्ञान, विभ्रम शिरोगौरव एवं वेग काल में मुख में कफ की अधिकता हो, अवयव शिथिल वा आलस्य पूर्ण हो तो निम्न लिखित मुन्जिज व विरेचन देकर श्लेष्मा को शोधन करें।

उस्तोखुद्दूस	५ मा०
बादरञ्जबूया पत्र (विल्लीलोटन का पत्ता)	५ मा०
बादियान (सौंफ)	५ मा०
ऊदसलीब	५ मा०
जूफा खुश्क	५ मा०
अनीसूँ	५ तो०

सेवन-विधि—इनको रात में उष्ण जल में भिगोकर प्रातःकाल मल छानकर गुलकन्द २ तो० सम्मिलित कर रोजाना प्रातः काल पिलाएँ और सायंकाल उसके साथ यह योग दें, यथा—

जदवार	१ मा०
ऊदसलीब	१ मा०
खमीरा गावजुबान	१ तो०

मिलाकर रजत पत्र एक अदद सम्मिलित करके प्रथम पिलाएँ और ऊपर से शीरा बादियान ७ मा०, अञ्जीर जर्द ३ अदद, अर्क बादियान अर्क मको प्रत्येक ६ तो० में निकाल कर खमीरा बनफशा २ तो मिलाकर पिलाए और उक्त योग को कम से कम सात दिवस पर्यन्त पिलाए। आठवें दिन उक्त मुन्जिज में सफेद निशोथ, सनाय मक्की, गुर्लसुर्ख प्रत्येक ७ मा०, मग्ज फुलूस खयार शंबर (अमलतास फलमज्जा), १ तो०, तुरंजबीन (यवास शर्करा) शकर सुर्ख प्रत्येक ४ तो०, मग्ज बादाम ५ अदद वा रोगन बादाम ६ मा० मिलाकर विरेचन दें। दूसरे और तीसरे विरेचन में मुख्यतः मस्तिष्क शुद्धि हेतु उक्त रेचन के अतिरिक्त रात्रि को नियमानुसार हब्ब अयारिज ६ मा० सेवन कराऐ। शुद्धि हेतु निम्नांकित वटिकाओं में किसी एक को व्यवहार में लाए।

(१) हब्ब मुनक्का दिमाग (मस्तिष्क शोधनी वटी)—सिन्नजर्द (पीत पलुआ) गारीकून, तुर्बुद सफेद (श्वेत निशोथ) प्रत्येक ३॥ मा०, हब्बुन्नील १॥ मा०, सकमूनिया मुशब्बी, भुलभुलाया हुआ सकमूनिया) ४ रत्ती, इन्द्रायण मज्जा २ मा०, सबको कूट छानकर शुद्ध मधु में गूंध कर चने प्रमाण गोलिया बनाये। आवश्यकतानुसार ७ मा० औषध को अर्क बादियान या उपर्युक्त योग के साथ प्रयोग कराये।

(२) हब्बसरअ (अपस्मार वटी)—

गारीकून, उस्तोखुद्दूस, अफतीमून, बसफाइज, सैंधव, ऊदसलीब प्रत्येक १ मा०, इन्द्रायन का गूदा, निशोथ, सकमूनियां मुशब्बी, पीत हरड़ का बक्कल और कतीरा प्रत्येक २ मा०, अयारिज फैकरा ५ मा० सबको पीसकर गोलियां बनाएँ।

सेवन-विधि व मात्रा—७ मा० उक्त औषध को अर्क मको वा अर्क बादियान के साथ सेवन कराएं।

जब अभीष्ट शुद्धि हो जाय तब निम्न लिखित योगों में से किसी एक का सेवन कराएं। इनमें से प्रत्येक परीक्षित है।

(१) मअजून जबीब—इसको मुहम्मद जकरिया राजी ने अत्यन्त परीक्षित बतलाया है।

अफतीमून, उस्तोखुद्दूस, अकरकरा, बसफाइज फिस्तकी प्रत्येक ३ तो० को कूट छान कर

जवीब मुनक्का १॥ पाव में या सिकंजवीन अंसली १॥ पाव में मिलाकर मअजून बनाएं। मात्रा—१ से १॥ तो० तक।

(२) हलेलह जर्द हलेलह काबुली, बलेलह (बहेड़ा), आमला; उस्तोखुद्दूस प्रत्येक तीन तो०, उद सलीब १॥ तो०, आकरकरहा १॥ मा० मवेज मुनक्का ऽ॥ सेर सब दवाओं को कूट छान कर और मवेज मुनक्का को सिल पर पीस कर मिलालें और किञ्चिद् उष्ण करके रख लें।

मात्रा व सेवन विधि—७ मा० इस औषध को जल के साथ सेवन करें।

उपयोग—अपस्मार को दूर करता है।

(३) सफूफ सरअ मुरक्कब

(यौगिक अपस्मार चूर्ण)

काबुली हड़ का बक्कल, हरड़ की छाल, गुठली निकाला हुआ आमला, काली हड़ प्रत्येक ३ तो० निशोथ, बसफाइज फिस्तकी और उस्तोखुद्दूस प्रत्येक १॥ तो०, पोटासियम ब्रोमाइड, सोडियम ब्रोमाइड प्रत्येक २ तो० ८ मा० सबको बारीक पीस परस्पर मिलालें।

मात्रा व सेवन-विधि- ६ मा० प्रातः काल अर्क बादियान १२ तो० के साथ फांक लिया करें।

प्रभाव तथा उपयोग—सम्पूर्ण वातज (सौदावी) मस्तिष्क बिकारों यथा मालीखोलिया अपस्मार और अनिद्रा प्रभृति को लाभदायक है इंख्तनाक (कण्ठावरोध) को भी लाभ प्रदान करता है।

(४) अक्सीर सरअ—संखिया, मनुष्य के शिर की खोपड़ी भस्म की हुई, आकरकरहा, हिंगु, उद सलीब, जदवार खताई प्रत्येक ७ मा० शुद्ध आमलासार गन्धक १॥ मा०, सोंठ ३॥ मा०, शकर ४ मा० सबको भृङ्गराज स्वरस में ३ दिन लगातार खरल कर एक एक रत्ती की गोलियां बनालें।

मात्रा व सेवन-विधि—एक गोली सुबह एक ग्राम को अर्क मुण्डी ६ तोला के साथ खिलाए।

गुण—अपस्मार के लिये अत्यन्त लाभदायक है

(५) दवाए जुनून एक प्रसिद्ध औषध है जो उन्माद, मृगी और योपापस्मार के लिये विशेष रूप से लाभदायक है। स्वर्गवासी डा० जेबुर्रहमान प्रिंसिपल तिब्बिया कालेज लाहौर इस औषध को अधिकता के साथ प्रयोग करते थे।

हिन्दुस्तानी दवाखाना देहली प्राचीन औषधों को नवीन रंग रूप में पेश कर देश एवं कला की असीम सेवा कर रहा है। अतः उसने उक्त औषध की नव्य विधानानुसार खोज पड़ताल की है और उसका प्रभावात्मक सार प्राप्त किया है यह क्रियात्मक सार ब्रोमाइड की तरह श्वेत है। किन्तु उससे अपेक्षाकृत अधिक प्रभावशाली एवं लाभदायक होने के सिवा उसके प्रत्येक हानिकारक गुणों से रहित है। ब्रोमाइड के समान इसके अधिक उपयोग में किसी प्रकार की हानि की सम्भावना नहीं। इससे असीम शान्ति लाभ होता और तत्क्षण नींद आ जाती है।

अवयव व विधि—छोटी चन्दन (यह एक बूटी है जो बिहार और बंगाल में मिलती है) को मय पत्र व फल को छाया में शुष्क कर और बारीक पीसकर रख लें।

मात्रा व सेवन-विधि—आवश्यकतानुसार २-२ मा० साधारण जल या अर्क गावजुबां के साथ प्रातः साय सेवन कराएँ।

प्रभाव व उपयोग—शामक व निद्राजनक मृगी, उन्माद और योपापस्मार में अत्यन्त लाभप्रद है।

डाक्टरी मत से—मृगी की चिकित्सा में अब तक जितनी औषधें ज्ञात हुई हैं, उन सब में ब्रोमाइड्स (ब्रोमाइड आफ पोटासियम, ब्रोमाइड आफ सोडियम और ब्रोमाइड आफ अमोनियम इत्यादि) अपेक्षाकृत अधिक लाभदायक सिद्ध हुये हैं। इनके प्रयोग से कभी २ तो रोगी को बिलकुल लाभ हो जाता है। किंतु प्रायः रोगियों को औषध सेवन काल में रोग का वेग रुक जाता है पर औषध का सेवन बन्द कर

देने से थोड़े काल पश्चात् पुनः रोग का आक्रमण होने लगता है।

सामान्य प्रकार की मृगी की अपेक्षा उग्र प्रकार में और रात्रि की अपेक्षा दिन के वेग में यह औषध अधिक लाभदायक होती है। किसी किसी रोगी में कुछ काल के सेवन के बाद ब्रोमाइड का प्रभाव अधिक काल स्थायी नहीं रहता और अल्प संज्ञक रोगियों में यह कुछ लाभ ही नहीं प्रदर्शित करता। तिस पर भी यह अन्य औषधों की अपेक्षा अवश्यमेव अधिक गुणप्रद है, इसकी मात्रा रोगी तथा रोगावस्था के अनुकूल होनी चाहिये। क्यों कि किसी किसी रोगी में इस औषध के सहन की अधिक क्षमता होती है। और किसी को अल्प। युवा की अपेक्षा बालक को इसकी अधिक क्षमता होती है। परन्तु पुरुष की अपेक्षा स्त्री को कम।

ब्रोमाइड को थोड़ी मात्रा में प्रारम्भ करना उत्तम है। अस्तु, एक युवा रोगी को १५ से ३० ग्रेन (७॥ से १५ रत्ती) की मात्रा में दिन में तीन बार देना प्रारम्भ करें। आवश्यकतानुसार इस मात्रा में न्यूनाधिकता कर सकते हैं। अर्थात् यदि रोगी के वेग में कमी आ जाय तो औषध की मात्रा किंचित् कम दें और यदि वेग बढ़ जाये तो औषध की मात्रा बढ़ा दें। पर यदि ३०–३० ग्रेन दिन में तीन बार देने से रोग का वेग न रुके तो इस औषध से लाभ की कम आशा होती है, उक्त औषध का लाभदायक होना अधिकतर उसके शुद्ध और उत्तम होने पर निर्भर है।

खराब औषध से साधारणतः लाभ नहीं होता इस लिये इस औषध को विश्वस्त कार्यालय द्वारा निर्मित एवं विश्वसनीय दूकान से खरीदनी चाहिये:

यदि रोग का वेग किसी विशेष समय होता हो उदाहरणतः दिन के दो बजे, तो ऐसी दशा में औषध की एक बड़ी मात्रा (१ ड्राम) रोग के वेग से चार घंटे पूर्व देनी चाहिए। जब वेग रात्रि को स्वप्न में किसी समय होता हो तब उक्त औषध को ५०–६० ग्रेन की मात्रा में रात को सोते समय दें और यदि प्रातःकाल निद्रा भंग होने पर वेग होता हो तो ३० या ४० ग्रेन ब्रोमाइड्स रात्रि को सोते समय दें और ऐसी ही एक मात्रा औषध प्रातः काल रोगी को जागते पिलाएँ।

जब ब्रोमाइड्स को दो तीन बार दैनिक देना हो तब भोजन के १ घंटा बाद देना अधिक उत्तम है। आमाशय तथा आंत्र पर इसका क्षोभक प्रभाव न हो तथा मुख मण्डल आदि पर मुँहासे न निकलें, इस हेतु इसके साथ थोड़ी मात्रा में सखिया मिलाकर देना चाहिये। परन्तु जब इसका तात्कालिक एवं विश्वसनीय प्रभाव अभीष्ट हो तब इसे एक ही बड़ी मात्रा में खाली पेट देना अधिक उत्तम होता है जिसमें यह तत्काल रक्त में अभिशोषित हो जाय।

अपस्मारी में ब्रोमाइड्स को इसके प्रयोग द्वारा पूर्ण प्रभाव प्राप्त होने से प्रथम ही बन्द कर देना उचित नहीं, इसके विरुद्ध इसको अधिक मात्रा में अधिक काल तक सेवन कराते जाना व्यर्थ ही नहीं, प्रत्युत हानिकारक भी है। क्योंकि शरीर में जब इसका पूर्ण प्रभाव हो लेता है तब यदि इसकी मात्रा कम न की जाय तो ब्रामिज्म (ब्रोमाइड द्वारा विषाक्तता) के अप्रिय लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। (इसके लिये देखो—ब्रोमाइड)।

ब्रोमाइडस की उपयोग सम्बन्धी कतिपय आवश्यकीय सूचनाएँ—

(१) विस्मृति वा बुद्धिभ्रंश प्रभृति वस्तुतः स्वयं अपस्मार के सामूहिक वा सम्मिलित लक्षण होते हैं। अतः उनको ब्रोमाइड्स द्वारा विषाक्तता के लक्षण मानना भूल है।

(२) ब्रोमिज्म (ब्रोमाइड्स द्वारा विषाक्तता) के विषैले प्रभाव से बचने के लिये इसके साथ सखिया या बेलाडोना वा स्ट्रिकनीन (कारस्करीन) इत्यादि को सम्मिलितकर उपयोग में लाना लाभदायक है।

(३) जब तक ब्रोमाइड्स का पूरा प्रभाव न हो जाय अर्थात् औषध के विषैले प्रभाव

प्रारम्भ न हो जाए, तब तक उसके उपयोग को स्थगित कर देना महान भूल है।

(४) मुखमण्डल या पृष्ठ पर केवल मुँहासों अर्थात् रक्तवर्ण के दानों का निकल आना इस बात का प्रमाण नहीं हो सकता कि शरीर में औषध का पूर्ण प्रभाव हो चुका है अथवा उसका विषैला प्रभाव प्रकट हो गया है। क्योंकि किसी किसी व्यक्ति में ब्रोमाइड्स को थोड़ी मात्रा में देने से भी मुँह से निकल आते हैं। अतएव प्राक्थित अन्य लक्षणों का ध्यान रखना भी आवश्यकीय है।

(५) ब्रोमाइड्स के सेवन काल में यदि रोगी को लवण रहित आहार दिया जाय तो औषध का प्रभाव शीघ्र तर एवं श्रेष्ठतर होता है. क्योंकि आहार में लवण के न रहने से वह औषध शरीर एवं वाततन्तुओं में भली प्रकार अभिशोषित होती है। ऐसी दशा में इसकी थोड़ी मात्रा भी पूर्ण लाभ प्रदर्शित करती है। अस्तु, कतिपय डाक्टरों के अनुभव इस बात के समर्थक है कि ऐसी अवस्था में ब्रोमाइड्स को वा केवल सोडियम् ब्रोमाइड को ३० ग्रेन की मात्रा में प्रतिदिन सेवन कराने से ८ दिनके भीतर रोग के वेग रुक गए।

(६) ब्रोमाइड्स का प्रयोग कितने काल तक जारी रखना चाहिये? रोग के वेग के रुक जाने के बाद तीन वर्ष तक ब्रोमाइड्स के प्रयोग को जारी रखना चाहिये। परन्तु तीसरे वर्ष में धीरे धीरे उसकी मात्रा घटा देनी चाहिये। अस्तु एक वर्ष तक तो औषध को अविच्छिन्न प्रयोग में लाना चाहिये और फिर सप्ताह में एक दो दिन नागा करा देना चाहिये। डेढ़ वर्ष परचात् प्रति दूसरे दिन औषध देनी चाहिए और दो वर्ष परचात् सप्ताह में दो वार औषध देना पर्याप्त है।

(७) जब पैतृक ट्युबर कलोसिस (क्षय) के कारण या अभिघात जन्य वा गिर जाने से मस्तिष्क को आघात पहुचने के कारण मृगी होती है अथवा बालकों को दन्तोद्भेद जन्य तथा युवाओं में उपदंश जन्य मृगी होती है तब उक्त अवस्था में रोग के मूल कारण को तदोक्त उपचार द्वारा दूर करना चाहिये। उन रोगों के उचित उपचार द्वारा अपस्मार को भी लाभ हो जाता है। अस्तु, उपदंश जन्य मृगी में पुटासियम् आयोडाइड से लाभ होता है और इसी प्रकार औरों को भी। अतएव जब तक असल रोग का उचित उपाय न किया जाय तब तक ब्रोमाइड्स के उपयोग द्वारा कुछ भी लाभ नहीं होगा। इसी प्रकार स्त्रियों में जबऋतुदोष वा मानसिक विकारके कारण यहरोग हो अथवा पुरुषों में जब हस्तमैथुन इसका कारण हो तो जब तक रोग के मूलभूत कारण सर्वथा दूर न हो लें तब तक केवल ब्रोमाइड्स के उपयोग से इस रोग को बिलकुल आराम नहीं होगा।

(८) ब्रोमाइड्स से अभिप्राय है—(क) ब्रोमाइड ओफ पुटासियम्, (ख) ब्रोमाइड ऑफ सोडियम्, (ग) ब्रोमाइड ऑफ अमोनियम् (घ) ब्रोमाइड ऑफ स्ट्रांशियम् और (ङ) ब्रोमाइड ऑफ लीथियम् प्रभृति। कोई डाक्टर तो इनमें किसी एक को अकेले ही देना अधिक उत्तम ख्याल करते हैं, किन्तु उनमें से अधिकांश प्रथम तीन को मिला कर देते हैं।

(९) जिन अपस्मार रोगियों को ब्रोमाइड्स से किञ्चिन्मात्र भी लाभ नहीं होता, उनको बोरेक्स (टंकण) के उचित उपयोग से प्रायः लाभ हो जाता है। इसलिये इस औषध का अवश्य परीक्षा करनी चाहिये। इसके अतिरिक्त कतिपय अन्य औषध यथा ब्रोमीपीन, जिंक आक्साइड (यशद भस्म यशदोद्भिद) कस्तूरी, कपूर, भंग, हींग और बालछड़ प्रभृति इस रोग की चिकित्सा में बरती जाती है और कभी कभी इनसे लाभ होता है।

(१०) अपस्मारी को यदि मलेरिया ज्वर (विषम ज्वर) हो तो ज्वर को रोकने के लिये उसे कोनीन सल्फेट नहीं देना चाहिए। क्योंकि मृगी में प्रायः उससे हानि होती है। अस्तु उसके

स्थान में कोनीन वेलेरिएनेट या कोनीन आर्सिनेट को उचित मात्रा में देना चाहिए।

कतिपय अन्य औषध

(१) कामवासना तथा मैथुनाधिक्य वा हस्त-मैथुन आदि कारणों से हुए अपस्मार में मोनो-ब्रोमेट ऑफ कैम्फर (Monobromate of Camphor) को ५-५ ग्रेन की मात्रा में दिन में ३ बार देने से और क्रमशः इसको ५ ग्रेन के स्थान में १०-१५ ग्रेन तक बढ़ाकर देने से प्रायः लाभ होता है। इस दवा को २-२ ग्रेन की पर्ची ज (मुक्तिकावत् वटिका) की शकल में देना उत्तम है।

(३) रजःरोध जन्य मृगी में यह गोलियाँ लाभदायक है—

एक्सट्रैक्टाई न्युसिसवामिकी	१० ग्रेन
पिल्युली एलोज एट फिरूही	२ डूम

दोनों को मिलाकर ३६ गोलियां बनाएँ। १-१ गोली दिन में दो बार प्रातः सायं भोजन के बाद दें।

(३) यदि अपस्मार रोगी अनीमिक (रक्ताल्पता का मरीज) हो तो उसकी लौह के हलके योग देने चाहिए।

उदाहरणतः—फेराई एट एमोनिया साइट्रास या रेडयूड आयन या स्टील वाइन प्रभृति देना लाभदायक होता है। मत्स्य तेल भी (यदि पच जाय) साधारण मृगी में लाभदायक है।

(४) वेग के पश्चात् यदि रोगी अधिक काल तक मूर्च्छित पड़ा रहे तो उसके शिर पर बर्फ और गुद्दी (मन्या) पर ब्लिष्टर लगाना लाभप्रद होता है।

(५) स्टेटस एपिलेप्टिकस (Status Epilepticus) अर्थात् अविच्छिन्न अपस्मार जिसमें रोगवेग मूर्च्छा में अंत होता है तथा मूर्च्छा रोगवेग में। यह दशा अत्यन्त भयावह व घातक होती है। इसमें रोगी को सुरक्षित रूप से क्लोरोफार्म ईथर सुंघाना या मार्फीन (अहिफेनीन) $\frac{1}{4}$ ग्रेन और ऐट्रोपीन $\frac{1}{100}$ ग्रेन वा हायोसीन हाइड्रोब्रोमेट $\frac{1}{100}$ ग्रेन का त्वक्स्थ अन्तःक्षेप करना या क्लोरल हाइड्रेट ४० ग्रेन को ४ आऊंस पानी में विलीन करके इसकी बस्ति (एनिमा) करना लाभदायक है।

अपस्मार तथा सर्प-विष

अपस्मार में ८-८ दिवस के अन्तर से सर्पविष (Cobra venom) के $\frac{1}{200}$ ग्रेन की मात्रा का ३ से ५ त्वगन्तः अन्तःक्षेप करें। फिर १४-१४ दिवस के अन्तर से $\frac{1}{75}$ ग्रेनकी मात्रा का दो अन्तःक्षेप और करें। बस यह काफी है, अन्यथा १-१ मास के अन्तर से इसकी $\frac{1}{250}$ ग्रेन की मात्रा का १ या अधिक अन्तःक्षेप और करें। इतने पर भी यदि लक्षण विद्यमान हो तो इसको $\frac{1}{25}$ ग्रेन की मात्रा में या रोगी की अवस्था प्रकृति या रोग के वेग के अनुसार इसकी मात्रा कम कर अन्तःक्षेप द्वारा प्रयुक्त करें।

यह क्रोटेलस हौर्रिडस (Crotalus horribus) या रैट्ल स्नेक (Rattle snake) जाति के साँप के विष से प्रस्तुत किया जाता है। जीवित साँप का विष निकाल कर उस को बेल-जार में रखकर धूप में शुष्क कर लेते हैं। इसके एम्पुल्स बनाये जाते हैं। जिनमें ग्लीसरीन और जल का विलियन सम्मिलित होता है। उक्त विलियन में पचननिवारक रूप से ट्रिकसोल (Tricesol) भी योजित किया जाता है।

फुफ्फुस विकार राजयक्ष्मा और श्वास में भी त्वगन्तः अन्तक्षेप द्वारा प्रयुक्तकर इसकी परीक्षा की गई है। आभ्यन्तर रूप से इसका क्वचितही प्रयोग होता है। (Extra Pharmacopœa of Martindale)

नोट—आयुर्वेदीय चिकित्सा में आभ्यन्तर और बाहिर दोनों प्रकार से इसका प्रयोग होता है। देखो—सर्प।

कतिपय अन्य परीक्षित योग—

(१) जुन्दवेस्तर	६ मा०
कस्तूरी	६ मा०
जटामांसी	१ तो०
नौसादर	१ तौ०
उष्ट्र नासिका कीट	४ मा०

इन सम्पूर्ण औषधों का चूर्ण कर हस्ति विष्ठा के रस से सप्ताह पर्यन्त खरलकर ३ रत्ती प्रमाण की वटिकाए प्रस्तुत करें।

सेवन विधि—पानके रस से आवश्यकतानुसार १-३ गोली तक सेवन कराएँ।

(२) वच	१ तो०
ब्राह्मी	१ तो०
लशुन	१ तो०
हिंगु	६ मा०
कर्पुर	६ मा०
धत्तूर वीज	६ मा०
इन्द्रायन का गूदा	१ तों०
काली मरिच	१ तो०
अजमोद	१ तों०

इन सबको कूट छान कर चूर्ण प्रस्तुत करें। फिर हस्ति विष्ठा के रस से सप्ताह पर्यन्त खरल कर ६ र० प्रमाण गोलियां बनाए।

अनुपान—पान का रस

मात्रा—१ र० से ४ र० तक।

(३) धवलवरुआ का येन केन प्रकारेण उपयोग अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होता है देखो—धवलवरुआ।

(४) डाक्टरी योग—

अमोनियां ब्रोमाइड	५ ग्रेन
अमोनियावेलेरिएना	१० ग्रेन
स्प्रिरिट कैम्फर	१५ बूंद
सोडा वाई कार्ब	१० ग्रेन
एक्वा प्योरा	१ आउंस

यह एक मात्रा है।

ऐसे ही तीन मात्रा औषध प्रातः मध्यान्ह और सांयं को देनी चाहिये।

अपस्मारमें प्रयुक्त होने वाली मिश्रित और अमिश्रित ओषधें

(अमिश्रित औषध)

आयुर्वेदीय—

वच, अडूसा, पलाण्डु श्वेत कुष्माण्ड, कर्पूर ब्राह्मी, श्वेत सर्षप, शङ्ख पुष्पी, धत्तूर, छागमूत्र काक फल. (काक नासिका) तेजवल, (उगरू नं० सं०) कुसरुण्ट (बुन्दर म्ब०), कर्पास, गंधक, और उसके योग, भल्लातक, रीठा, जल, ब्राह्मी, खुरासानी अजवाइन, वेण्डार्ली (Club Moss) शोभाञ्जन, जटामांसी, केतकी, (केवड़ा) अजमोदा, सोडियम और उसके लवण।

यूनानी— —

(१) टङ्कण भुना हुआ १ से २ मासे तक ६ मासे शुद्ध शहद में मिलाकर कुछ दिवस पर्यन्त प्रतिदिन प्रातःकाल खिलाना इस रोग में लाभ प्रद है।

(२) हिंगु १ से २ मासे मधु ६ मासे या सिकञ्जवीन अन्सली (सिकंजवीन वनपलाण्डु) २ तो० में मिलाकर हर प्रातःकाल को चटाना लाभदायक है।

(३) बादरंजबूयां (विल्लीलोटन) ३ मासे ६ मासे मधु में मिलाकर प्रतिदिवस प्रातःकाल चटाना गुणप्रद है।

(४) कलौंजी १ मा० पीसकर सिकंजवीन अन्सली २ तोला या मधु ६ माशे में मिलाकर देना भी उपयोगी है।

(५) सोसन की जड़ ७ माशे का क्वाथकर २ तो० शर्वत अवरेशम के साथ देना गुणकारकहै

(६) जंगली तितली ५ मासे. अंगूर का रस २ तोला और अर्कगावजुवान ९ तो० के साथ देने से लाभ होता है।

(७) अकरकरा १ से २ मासे पीसकर सिकंजवीन अन्सली २ तो० के साथ देने से लाभ प्रदर्शित होता है।

डाक्टरी औषध—

ऑलियम् क्रोटनिस (जयपाल तेल): अमोनिया वेलेरियाना, आंलियम् मर्हुइ आलियम्

ट्रेबिन्थीनी, अर्जेण्टाई नाइट्रास, आर्टिमिशिया, अमोनियां ब्रोमाइड, अमोनिया कार्बोनास, अर्जेण्टाइ क्लोरोइडम्, अर्जेंटाई नाइट्रास' आर्सेनिक, ऐण्टिपाइरीन, ईथीलीन ब्रोमाइड, एपोमर्फाइनि एमाइलनाइट्रास, एसाफिटिडा (हिंगु) एलिटेरियम्, एलोज (मुसब्बर),एलेक्ट्रिसिटि, (विद्युत) कुप्राय अमोनियां सल्फास,कुप्राय सल्फास, कैम्फर (कर्पूर), कैछर (परड), क्विनाईन, क्लोरोफार्म कोनियम्, क्लीनआर्सेनेट, केलीमेल, कालोसिन्थिस जिन्साइ आक्साइडम्, जिन्साइ सल्फास, जिंक लैक्टेट, जिन्साइ वेलेरियानम् जिंक साइट्रेट ड्रायकपिंग, नक्स वांमिका (कारस्कर), धारा स्नान नाइट्रोग्लीसिरीन, डिजिटेलिस' पोटाशियम् ब्रोमाइडम्, प्रम्बाइमा नायट्रास, फास्फर्स, फेरि को० विस्मथम्, एलबम्, बेलाडोना, बोरक्स, ब्रोमाइडम्, मस्क (कस्तूरी) ब्रोमीपीन (ब्रोमीनौल मष्टर्ड (राई), ल्युमुनौल, वेलेरियन, विराट्राम एलबम्, साम्बल, सोडिआई ब्रोमाइडम्' स्ट्रास्टियम ब्रोमाइडम्, सिरियाइ अक्जालास, स्ट्रोमोनियाइ (धुस्तर) स्टानाइ क्लोरोइडम, लीथियम ब्रोमाइडम्, हाइड्रोब्रोमिक एसिड, हाइड्रोक्लोरिक्म् और जिंक साइट्रेट, जिंक लैक्टेट, ऐण्टिपाइरीन इत्यादि ।

(२) अश्व अपस्मार—

घोड़े के मृगी के लक्षण—अपस्मारी अश्व अकस्मात पृथ्वी पर गिर पड़ता है । नेत्र स्तब्धता विसंज्ञता आदि लक्षण होते हैं और जो शीघ्र स्वस्थ हो जाता है उसको अपस्मार से पीड़ित जानना चाहिये ।

चिकित्सा—कुशल वैद्य को इसमें सम्पूर्ण उन्मादोक्त क्रिया का अवलम्बन करना चाहिये ऐसे घोड़े को अत्यन्त पुराना घी पिलाना लाभ दायक है । जयदत्तः ।

अपस्मार गजाङ्कुशः—सं० क्ली० हींग, काला नमक त्रिकुटा इनको सम भाग लेकर पृथक २ एक एक दिन गोमूत्र में घोटें फिर उसमें ४ मा० शुद्ध मूर्छित पारा मिलाकर घोटकर रक्खें । मात्रा—१ मा० । इसके सेवन से अपस्मार और उन्माद का नाश होता है ।र० यो० सा० ।

अपस्मारारिः—सं० पु० नीलाथोथा, पारा, गन्धक, सम भाग लेकर बहु काल पर्यन्त गिलोय के रस में घोटें, फिर सावधानी के साथ शरावों में बंद करके कपड़मिट्टी कर २–३ जंगली कण्डों की आग दें । फिर निकालकर १ दिन केले के रस से घोटें तो यह सिद्ध होगा ।

मात्रा—२ र० । इसे ब्राह्मी या घृतके योगसे देने से अपस्मार दूर होता है इसमें ककारादि वर्ग का स्त्री सहवास से परहेज करना चाहिये । र० यो० सा० ।

अपस्मारी–हिं० वि० [सं०] जिसे अपस्मार रोग हो (Epileptic)

अपस्वरम्–(अव्य०),अपशब्द, स्वाभाविक स्वर से हीनस्वर । (Low-voice) वा० शा० ५ अ० ४० श्लो० ।

अपह–हिं० वि० [सं०] नाश करने वाला । विनाशक ।

यह शब्द समासांत पद के अन्त में प्रायः आता है जैसे क्लेशापह । ज्वरापह ।

अपहा–अपहा (प्रत्यय) हन्ता, मारडालने वाला । हत्यारा, हिंसक, बधिक । (Killer,-cide)

अपक्ष-हिं० वि० (१) पक्ष रहित, निःसहाय्य (helpless) (२) पङ्ख रहित ।

अपक्षिप्त–हिं० वि० [सं०] (१) अपक्षेपक की क्रिया द्वारा पलटाया वा फेंका हुआ । (२) फेंका हुआ, गिराया हुआ, पतित ।

अपक्षेपण–हिं० संज्ञा पु० [सं०] [वि० अपक्षिप्त] फेंकना । पलटाना । (२) गिराना । च्युत करना (३) पदार्थ विज्ञान के अनुसार प्रकाश (तेज) और शब्द की गति में किसी पदार्थ से टकर खाने से व्यावर्तन होना, प्रकाशादि का किसी पदार्थ से टकरा कर पलटना । (४) वैशेषिक शास्त्रानुसार आकुञ्चन । प्रसारण आदि पांच प्रकार के कर्मों में से एक ।

अपाकः–सं० पु०
अपाक–हिं० संज्ञा पु० } (१) (Indigestion) अजीर्ण, अपच । (२) पाकाभाव

(कच्चापन)। Immaturity (३) उदरामय। आँव, आम।

अपाकरण-हिं० संज्ञा पु० [सं०] [वि० अपाकृत, पृथक्करण, अलग करना।

अपाकशाकम्-स० क्ली०
अपाकशाक-हिं० संज्ञा पु०
} अदरक, आर्द्रक, आदी। आदा बं०। आर्ले-मह०। (Green ginger) रा० नि० व० ६।

अपाङ्गः-सं० वि०
अपाङ्ग-हिं० वि०
} (१) अंग भंग, अङ्गहीन (Crippled) मे०।

संज्ञा पु० (२) Canthus (The outer cornerof the eye) नेत्र प्रान्त। रा० नि० व० १८। (३) तिलक, तिल (Sesamum Indicum) मे० गत्रिकम्। (४) ग्रीवा से ऊपर के मर्मों में से उक्त नाम के दो मर्म्म विशेष। सु० शा० ६ अ०। (५) आँख की कोर (या कोना), नेत्र कोण, कटाक्ष, (Corner of an eye)। (६) दोनों नेत्रों के बाहर की ओर भौवों की पुच्छी के नीचे उक्त नाम के दो मर्म हैं। वा० शा० ४ अ०। (७) बं० लटजीरा, अपामार्ग, चिचिंटा। (Achyran thesaspera)

अपाङ्गकः-स० पु० अपामार्ग क्षुप, चिचिंटा-हिं०। आपाड्-बं०। (Achy ranthes Aspera) ले०। श० र०।

अपाङ्गकमूलम्-सं० क्ली० देखो—अपांगमूल।

अपाङ्गमूल-बं० अपामार्ग की जड़। Achyranthes aspera (Root of)

अपाङ्गदर्शन-हिं० पु० तिरछी नजर से देखना। (A side glance a leer, a wink)

अपाङ्गधा-सं० स्त्री० (Zygomatico arbital)

अपाचीनम्-सं० क्ली० दूर करना। नष्ट करना। अथर्व०।

अपाटवम्-सं० क्ली०
अपाटव-हिं० संज्ञा पु०
} (१) अपाटव, रोग। बीमारी, (A disease)। (२) जाड्य, जड़ता, शीतलता। (Auæsthesia) रा० नि० व० २०। (३) बाढ़ा, भूख। (Hunger)। (४) मद्य, शराब। (५) पटुता का अभाव। अकुशलता, अनाड़ीपन। (६) अचंचलता, मन्दता सुस्ती। (७) कुरूपता, बदसूरती।

वि० (१) रोगी। बीमार। (२) जड़। (३) भूखा। (४) अपटु। अनाड़ी। (५) अचंचल। (६) कुरूप।

अपात-सं० वनराज (Bauhinia racemosa *Lam Hook. etc*) फा० इं० १ भा० ५३७ पृ०। -हिं० वि० पत्रशून्य।

अपादान-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) हटाना, अलगाव, विभाग। (२) ग्रहण। (The taking from a thing)

अपानः-सं० पु० (१) क्ली० गुदा, मलद्वार, चूति, एनस। (Anus)-इं०। रा० नि० व० १८। वा० सू० ११ अ०। (२) अपान देशीय पवन गुदा में रहने वाली अपान वायु। अम०। (३) अपान अर्थात् मन्या पृष्ठ, पृष्ठान्त तथा पार्श्व (एणी) में जाने वाली वायु। हे० च० १। (४) दस या पाँच प्राणोंमें से एक। इन्हीं तीन वायुओं में से कोई किसी को और कोई किसी को अपान कहते हैं—(क) वायु जो नासिका द्वारा बाहर से भीतर की ओर खींची जाती है। (ख) गुदास्थ वायु जो मल मूत्र को बाहर निकालती है। (ग) वह वायु जो तालु से पीठ तक और गुदा से उपस्थ तक व्याप्त है। (५) वायु जो गुदा से निकले। देखो—वात (वायु)।

अपानम्-सं० क्ली० (Anal orifice) गुदा, मलद्वार, चूति।

अपान त्वक् संकोचनी-सं० स्त्री० (Corrugator cutisani) मलद्वार संकोचनी।

अपाकेष्टाः-सं० पु० अकेला अथर्व०। सू० ६। १। का० ८।

अपानदेशः-सं० पु० गुद देश। (Anal region) वै० निघ०।

अपाननाली-सं० स्त्री० (Anal canal) गुदा।

अपानवायुः-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) पांच प्रकार की वायु में एक।

अपान वायु के कर्म—रूक्ष और भारी अन्न के खाने से. मल मूत्रादि के वेग रोकने से सवारी पर अधिक बैठने से, अधिक चलने से, अगम्य स्थानों में जाने से, अपानवायु कुपित होकर मूत्रदोष, शुक्रदोष, अर्श और गुदभ्रंश तथा अन्य कष्टसाध्य' पक्वाशय गत रोगों को उत्पन्न करता है। वा० नि० अ० १६।

(२) गुदास्थ वायु, पाद, पर्द्दन, गोज।

अपां धातुः-सं० पु० रस, जल, मूत्र, स्वेद, मेद, कफ, पित्त और रक्त इत्यादि भा० म० १ भा० अतिसा० चि०। "संशम्यापोधातुरग्निः प्रवृद्धः।"

अपांपित्तम्-सं० क्ली० चित्रक वृक्ष चीतः। (Plumbago Zeylanica) अम०।

अपानोन्नमनी-सं० स्त्री० (Levator ani) गुदोत्थापिका। एक पेशी विशेष।

अपा-पित्तम्-सं० क्ली० चीता वृक्ष, चित्रक। (Plumbago Zeylanica)

अपामार्गः-सं० पु०
अपामार्ग-हिं० संज्ञा पु० } चिचड़ा(-रा) चचिरा

लटजीरा, चिचड़ी, ऊँगा, ऊगी, अंकाझारा-हिं० अकिरैन्थीस, एन्परा (Achyranthes Asera, *Linn*) अकिरैन्थीस इंडिका (Achyranthes Indica, *Roxb* बाइडेन्टेटा Bidentata अकीरैन्थीस आब्ट्युजिफोलिया Achyranthes Obtusifolia, *Lamb*, अकारैन्थीस स्पिकेटा Achyranthes Spicata, *Burm*-ले०। रफ चैफ ट्री Rough Chaff tree प्रिक्ली चैफ फ्लावर Prickly chaff Flower इं० अथर्व० सू० १७। ८। कां० ४। सु० सू० २६ अ० शिरो वि०।

संस्कृत पर्याय—शैखरिकः, धामार्गवः, मयूरकः, प्रत्यकपर्णी, कीशपर्णी, किनिही, खरमञ्जरी, (अ) अपांगकः, किनिः, कोशपर्णः चमत्कारः, (शब्द र०), शैखरेयः, अधोमार्गवः, केशपर्णी, (अ० टी०), स्थलमञ्जरी, प्रत्यपुष्पी, क्षारमध्यः अधोघन्टा, शिखरी, (र) दुर्ग्रहा (भा०), दुर्ग्रहः, अध्वशल्यः, कान्तीरकः मर्कटी, दुरभिग्रहः वासिरः, पराक्पुष्पी, कण्टी, कर्कटपिप्पली, कटु मञ्जरिका अघाटः, क्षारकः, पाण्डुकण्टकः, नाला कण्टकः, कुब्जः; मालाकण्टः,

आघाटः, प्रत्यक् पुष्पी, खरमञ्जरी, पंक्तिकण्टकः, रक्तविन्दुः, अल्पपत्रक, क्षवकः, किणिही, तथा व्रणहन्ता। अपाङ्, चिर्चिर, ओपद्, अपाङ् बं०। अत्कुमह्-अ०। खारे बाजगूनह्, खारेवाजूँ फा० पुठकण्ड. फुटकण्डा, कुत्री-पं०। चिर्चिरी-विहा०। अगाड़ा, अघाड़ा-द०। नायुरिवि, शिरु-काडलाडी ता०। उत्त-रेणि, अणिटश, अपामार्गमु, प्रत्युक् पुष्पि, दुच्चीणिके-ते० तै०। कटलाटि, कडालाडि मल०। उन्राणि-गिड़ा, उत्तराणि, उतैरणि, उत्तरणे कना०। उन्राणिच-झाड़, आघाड़ा, आघेड़ा (पांडर आघाड़ा=श्वेतापामार्ग) मह०। अघेड़ो भिंजरवट्टो-गु०। गरकरल हेब्बों सिं०। किव ला मौ, कुने ला मौ-बर्मी०। सुफेद आँधीझाडो, आँधा-झाडा मा०। अंधाहोली राज०। उत्तरणे का०। उत्तरैणि कों०। अघाड़ा, चिचिया वन्व०।

तण्डुलीय वर्ग

(*N. O. Amarantaceæ*)

उत्पत्ति स्थान—सर्वत्र भारतवर्ष तथा एशिया के वे भाग जो उष्ण कटिबन्ध पर स्थित हैं।

सज्ञा निर्णय—डिमक महोदय (२ य खंड १३६ पृ०) "अध्वशल्य," शब्द का अर्थ 'Roadside rice,, अर्थात् पथिपार्श्वस्थ तण्डुल (मार्ग के किनारे का चावल) करते हैं। परन्तु शल्य शब्द का अर्थ तण्डुल नहीं प्रत्युत शरीर में जिससे कुछ भी पीड़ा उत्पन्न हो उसको शल्य कहते हैं। डल्हण मिश्र लिखते हैं:—

यत्किञ्चित् अबाधकरं शरीरे तत्सर्व्वमेव प्रवदन्ति शल्यम् (सू० टी० १ म अ०)।

अपामार्ग की मञ्जरी कर्कश होती है और उसका वस्त्र वा गात्र से स्पर्श होने से क्लेशप्रद होती है। इस कारण उसको मार्ग का शल्य कहा गया है।

खोरी महोदय (१ म० खं० ! ५०४ पृ०) अपामार्ग का यह अर्थ करते हैं, अप या आव= जल+मार्ग=रजक, धोबी (Apa or ab water and marga a washerman) यह अर्थ अपूर्ण है। मार्ग शब्द का रजक अर्थ कहीं भी देखने में नहीं आता। उपरोल्लिखित कल्पित अर्थ के निर्देश द्वारा खोरी महोदय ने यह बुझाना चाहा है कि अपामार्गक्षार द्वारा रजक (धोबी) वस्त्र को परिष्कृत करता है। अमरकोष के टीकाकार भानुजी दीक्षितकृत "अपामार्जन्त्यनेन इस अर्थ द्वारा जहां खोरी महोदय के उद्देश्य की सिद्धि हो जाती है वहां उन्हों ने उक्त कल्पित अर्थ की रचना करने का क्लेश क्यों स्वीकार किया ?

वानस्पतिक वर्णन—अपामार्ग एक प्रकार का फलपाकांत क्षुप है यह वर्षा का प्रथम पानी पड़ते ही अंकुरित होता है, वर्षा में बढ़ता, शीत काल में पुष्प व फल से शोभित होता और ग्रीष्म ऋतु के सूर्य ताप द्वारा फल के परिपक्व होने के साथ ही सूख जाता है। इसका क्षुप १॥ या २ फुट दीर्घ और कभी कभी इससे भी अधिक उच्च होता है।

काण्ड वा साधारण वृन्त सीधा, खड़ा, चिपटा, चौकौना, (रक्त अपामार्ग की शाखाएं रक्त वर्ण की होती हैं), धारीदार और लोमश होता है। पार्श्विक शाखायें (पार्श्व वृन्त) युग्म, परिविस्तृत: पत्र अति सूक्ष्म शुभ्रवर्ण के रोम से आवृत्त, अण्डाकार' पत्र प्रान्त सामान्य, अधिक कोणीय, नाकीले आधार पर पतले (रक्तापामार्ग के पत्र पर रक्तबिंदुवत् दाग होते हैं) पत्र वृन्त (पत्ते की डन्डी लघु दोनों प्रकार के अपामार्ग की मञ्जरियाँ दीर्घ, कर्कश (इसी कारण इसका खरमन्जरी नाम पड़ा)पुष्प लघु हरित वा लाल तथा बैंगनी मिले हुये रंग के जो मयूर कंठवत् होते हैं। इसीलिये इसको मयूरक नाम से अभिहित किया गया है ब्रैक्ट्स कठोर तथा कण्टकाकीर्ण होते हैं। फल के भीतर बीज होता है। यह आयताकार, धूसर वर्ण का, $\frac{1}{10}$ से $\frac{1}{8}$ इंच लम्बा (बीज) होताहै तण्डुलवत् होने के कारण इसको अपामार्ग तण्डुल कहते हैं इसका स्वाद तिक्त होता है।

श्वेत, कृष्ण और रक्त भेद से अपामार्ग तीन प्रकार का होता है। ये सब गुण में भी भिन्न २ होते हैं। (रा० नि०)

रासायनिक संगठन—बीज में अधिक परिमाण में क्षारीय भस्म होती है जिसमें पोटास वर्तमान होताहै (मेटिरिया मेडिका ऑफ इंडिया आर० एन० खोरी,० २, ५०४)।

प्रयोगांश—क्षुप (पञ्चाग) अर्थात् शाखा, पत्र, मूल, तथा बीज।

औषधि निर्माण—(१) पत्ते का स्वरस, मात्रा-१ तो०। (२) क्वाथ तथा शीत कषाय, मात्रा १ छ० से २ छ०। (३) मूल, मात्रा-४ मा० से ६ मा० तक। (४) बीज चूर्ण, मात्रा—४ आने से ६ आने तक (बजन में)। (५) क्षार। (६) मूल चूर्ण। (७) मूल कल्क। (८) औषधीय तेल।

इतिहास—शुक्ल यजुर्वेद के अनुसार वृत्र एवं अन्य दैत्यों को मार डालने के बाद नमुचि द्वारा पराजित हुआ और उसे किसी स्नेह वा द्रव्य पदार्थ से तथा न दिन में न रात में ही कभी न मारने का वचन देकर उससे सन्धि कर ली। परन्तु इन्द्र ने कुछ फेन एकत्रित किये जो न द्रव है और न स्नेह और नमुचि को प्रातः सूर्योदय और रात्रि के मध्यकाल में मार डाला। उस दैत्य के सिर से अपामार्ग का क्षुप उत्पन्न हुआ जिसकी सहायता से इन्द्र सम्पूर्ण दैत्यों के बध करने में समर्थ हुआ। अब यह पौधा अपने प्रबल जादूमय प्रभाव के लिये प्रसिद्ध है और ऐसा माना जाता है कि बिच्छु एवं सर्प को ग्रस्त (स्तब्ध) कर यह उनके विरुद्ध उनसे हमारी रक्षा करता है। नरकचतुर्दशी वा दिवाली

के त्योहार के पहिले दिन की सुबह को अत्यन्त तड़के स्नान के समय इसको शरीर के चारों ओर घुमाते हैं। अथर्ववेद में भी अपामार्ग का विस्तृत वर्णन आया है। देखो—अथर्व०। सू० १७। ८। का० ४।

अपामार्ग के प्रभाव तथा प्रयोग।

आयुर्वेद की दृष्टि से—

अपामार्ग स्वाद में तिक्त और कटु, उष्ण वीर्य्य कफ नाशक, ग्राही तथा वामक है और बवासीर खुजली, उदर रोग आम तथा रक्त का हरण करने वाला है। "रक्तापामार्ग शीतल, कटुक कफ वात नाशक, वामक तथा संग्राही है और व्रण खुजली और विष को नष्ट करने वाला है धन्वन्तरीय निघंटु। रा० नि० व० ४।

सर अर्थात् विरेचक और तीक्ष्ण है। वा० सू० १५ अ० शिरोविरेचन।

"पृश्निपर्णी त्वपामार्गः।,, च० द० सन्निपात ज्व० चि०।

अपामार्ग दस्तावर, तीक्ष्ण, दीपक, कड़वा चरपरा पाचक, और रोचक है तथा वमन कफ, मेद के रोग, वायु हृद्रोग, अफरा, बवासीर, खुजली, शूल, उदररोग और अपची रोग को नष्ट करता है। रक्तापामार्ग वातकारक, विष्टंभी कफवर्द्धक शीतल और रुक्ष है यह पूर्वोक्त अपामार्ग की अपेक्षा गुण में न्यून है। अपामार्ग के फल (चावल) खाने से जीर्ण नहीं होते अर्थात् पचते नहीं हैं पाक में चरपरे, मधुर विष्टंभी वात कर्ता, रूखे और रक्तपित्त को दूर करने वाले हैं। भा० पू० १ भा०।

अपामार्ग अग्नि के समान तीक्ष्ण क्षेदन और पाचन है। राजबल्लभः

अपामार्ग के पत्र रक्तपित्त नाशक हैं। मद० व० १।

श्वेत अपामार्ग स्वाद में तिक्त, ग्राहक, दस्तावर, किंचित कटु, कांतिकारक, पाचक तथा अग्नि प्रदीपक है और वमन में एवं नस्य के लिये श्रेष्ठ है। कफ कण्डू (खुजली) उदर रोग और अत्यन्त बुरे प्रकार के रक्त रोगों, मेद रोगों, उदर रोगों तथा बाल सिध्म, अपची, दद्रु नमन और आम रोगों को नष्ट करने वाला है रक्तापामार्ग किंचित चरपरा तथा शीतल है और मन्यास्तंभ (मन्यास्तम, गर्दन का जकड़ जाना) वमन, वात एवं विष्टंभकारक और रूक्ष है तथा व्रण विष, वात, कफ और खुजली का नाश करता है।

अपामार्ग का बीज (चावल) पाक में दुर्जर है अर्थात् यह पचता नहीं है रस में मधुर, शीतल, मलावरोधक, रूक्ष, वान्तिकारक और रक्तपित्त को दूर करने वाला है। अपामार्ग जल तिक्त, शोथ और कफनाशक है तथा कास, वात और शोष (सूखा) का नाश करता। वै० निघ०।

अपामार्ग के वैद्यकीय उपयोग

चरक—शिरोविरेचक वस्तुओं में अपामार्ग तण्डुल (चिचड़ी का बीज) श्रेष्ठ है। (सू० २५ अ०)।

सुश्रुत—(१) अर्श में अपामार्ग मूल (चिचड़ी की जड़) को चावल के धोवन में पीसकर मधु के साथ प्रति दिन सेवन करें। (चि० ६ अ०)। टीकाकार डल्हण-लिखते हैं—"अपामार्ग मूल योगः पित्त रक्तार्शसि गयदास कफानुबंध रक्तेषु।" अर्थात् पित्तज रक्तार्श वा कफानुबंध रक्तार्श रोगी को इस औषध का सेवन करना चाहिये। (२) कृमि रोग में स्नेह वस्ति लेने के बाद शिरीष और अपामार्ग का रस मधु के साथ सेवन करें। (उ० ५४ अ०)।

चक्रदत्त—(१) सद्योव्रण द्वारा रक्तस्राव होने की दशा में, अर्थात् शरीर के किसी भाग के कट जाने के कारण जब वहां रुधिर स्राव होने लगे तब अपामार्ग के पत्र का रस प्रचुर परिमाण में लेकर क्षत के मुख को सेचन करने से रक्त स्रुति बन्द हो जाती है। (व्रण शोथ चि०)। (२) कर्णनाद तथा बधिरता में अपामार्ग क्षार—अपामार्ग के अन्तर्धूमदग्ध क्षार के जल तथा कल्क में तिल के तेल को डालकर यथा विधि तेल प्रस्तुत करें। इस तेल को कान में भरने (कर्णपूरण) से कर्णनाद तथा बधिरता रोग

नष्ट होते हैं। (कर्ण रोग चि०)। (३) नूतन लोचनोत्कोप अर्थात् अभिष्यंद वा आँख आने में अपामार्ग मूल तांबा के बरतन में किंचित् लवण मिश्रित दही के तोड़ को अपामार्ग की जड़ से घिस कर उस जल को आँख में भरने से अभिष्यंद रोग को लाभ होता है। (नेत्र रोग चि०)।

भावप्रकाश—विसूचिका में अपामार्गमूल—अपामार्ग की जड़को जल के साथ पीस कर पान करने से विसूचिका रोग दूर होता है। (म० ख० २ भा०)।

शार्ङ्गधर—रक्तार्श में अपामार्ग के बीज को चावल के धोवन के साथ पीस कर पीने से रक्तार्श (खूनी बवासीर) नष्ट होती है, इसमें कोई संशय नहीं। द्वि० खं० ५ म० अ०)।

वङ्गसेन—(१) उन्माद रोग में अपामार्ग श्वेत पुष्प की बरियारा की जड़ की छाल १ तो० अपामार्ग की जड़ २ तो०, । इनको एकत्र कूटकर ऽ१॥ जल एवं ऽ॥ गोदुग्ध के साथ क्वथ प्रस्तुत करें। शीतल होने पर इसे प्रातःकाल सेवन करे, इससे घोर उन्माद रोग को तत्काल शांति होती है। (उन्माद चि०)।

(२) आगन्तुक व्रण रोपणार्थ अपामार्ग मूल—बरियारा एवं अपामार्ग की जड़ के कल्क द्वारा तैल पाक करें। इसे मूल तैल कहते हैं। यह आगन्तु व्रण का रोपण करने वाला है।

(आगन्तुव्रणाधिकार)।

हरीत—(१) निद्रानाश रोग में अपामार्ग और काकजङ्घा द्वारा प्रस्तुत क्वाथ के सेवन से शीघ्र नींद आ जाती है। (चि १६ अ०)। (२) शोथ रोग में अपामार्ग तथा कोकिलाक्ष के क्वाथ द्वारा बाष्प स्वेद वा वहां पर पिंड स्वेद करना शोथ रोगी के लिये हितकर है। (चि० ३६ अ०)।

वक्तव्य

चरक में सूत्रस्थान के चतुर्थ अध्याय के कृमिघ्न तथा वमनोपगवर्ग में अपामार्ग का पाठ दिया है। चरकोक्त अर्श चिकित्सा में अपामार्ग का नामोल्लेख नहीं है। शोथ चिकित्सा के "मयूरकं मागधिकां समूलां" पाठमें मयूरक नाम से अपामार्ग का प्रयोग आया है। सुश्रुतोक्त शोथ चिकित्सा में अपामार्ग का उल्लेख नहीं है। चक्रदत्त के लिङ्गार्श चिकित्सा में तथा भल्लातक-लौह में अपामार्ग का व्यवहार हुआ है, परन्तु शार्ङ्गधर में इसका उल्लेख नहीं है। चरक के विमान स्थान के आठवें अध्याय में वर्णित वान्तिकारद्रव्यों के अन्तर्गत अपामार्ग का पाठ आया है। विमान के प्रथम अध्याय के कृमिहर पथ्योपदेश के वर्णन में अपामार्ग के स्वरस में शालिचावल की पिट्ठी तैयार कर उसके सेवन करने की व्यवस्था दी गई है।

चरकोक्त—उन्माद चिकित्सा में "पिष्ट्वा तुल्यमपामार्गम्" इत्यादि पाठ में अञ्जनार्थ अपामार्ग व्यवहृत हुआ है। पर इसके सेवन की विधि नहीं दिखाई देती। सुश्रुतोक्त उन्माद चिकित्सा में इसका नामोल्लेख नहीं है। सुश्रुत ने शिरोविरेचन वर्ग में अपामार्ग का पाठ दिया है (सू० ३६ अ०)। सुश्रुत सूत्रस्थान के ११ वें अध्याय में जहां व्रणजनक समग्र उद्भिद औषधों का नाम आया है वहां अपामार्ग का उल्लेख है। अपामार्ग व्रण के लिए उपयोगी है। अतएव इसका नाम "किणिही" (व्रण हन्ता) हुआ।

अपामार्ग के सम्बन्ध में यूनानी तथा नव्य मत।

प्रकृति—१ कक्षा में शीतल तथा रूक्ष।

हानिकर्त्ता—उष्ण प्रकृति को और क्षुधा को मन्द एवं नष्ट करता है। दर्पघ्न—अनार का पानी सिकजवीन, कांजी और आवगोश्त।

प्रतिनिधि—प्रायः गुणों में मेष मांस।

मुख्य प्रभाव—कामोद्दीपक, दुग्धोत्पादक और शुक्र जनक। मात्रा—शक्त्यानुसार।

गुण, कर्म, प्रयोग—यदि ६ मा० इसके पत्र को काली मिर्च के साथ पिए और उसके बाद घी प्लुत रोटी खाए तो रक्तार्श को लाभ हो। यह आर्त्तवरुद्धक और प्रायः स्वग्रोगों, रक्त दोष, एवं नेत्र की धुंधता को लाभप्रद है।

अपामार्ग संकोचक, (संग्राही) मूत्रल और परिवर्तक है। रजः स्राव, अतिसार और प्रवाहिका में इसका उपयोग किया जाता है। अपामार्ग क्षार अगंभीर शोथ जलोदर, चर्मरोग और ग्रन्थि वृद्धि तथा गलगंड आदि रोगों में प्रयोजनीय है। अपिच शुष्क कास में इसके सेवन से यह श्लेष्मा को तरल (द्रवीभूत) करता है। सर्प, कुक्कुर किंवा अन्यान्य विष धर-प्राणि दशन जन्य विष दोष निवारण के लिए अपामार्ग बहुत प्रख्यात है। एतदर्थ यह सेवन व लेपन उभय प्रकार से व्यवहार में आता है। कभी कभी अपामार्ग का स्वरस दन्तमूल में एवं इसका कल्क फुन्सी रोग में अंजन रूप से प्रयुक्त होता है (मेटिरिया मेडिका ऑफ इंडिया २ य० खं०, ४०५ पृष्ठ)

अपामार्ग के मूत्रल गुण से इस देश के लोग भली प्रकार परिचित है। यूरोपीय चिकित्सक गण शोथ रोग में अपामार्ग की उपयोगिता स्वीकार करते हैं। मूल शाखापत्र सहित आध छटांक अपामार्ग को पांच छटाक जल में १५ मिनट तक क्वथित करें। इसमें से आध छटांक लेकर एक छटांक की मात्रा तक दिन में तीन बार सेवन करें (फा० इं० पृष्ट १८४)

अपामार्ग की जड़ एक तोला रात्रि को सोते समय सेवन करने से नक्तांधता (रतौंधी) जाती रहती है। फा० इं० ३ भा०।

इसका शुष्क पौधा बालकों के उदर शूल में दिया जाता है। मूत्रमेह (सूजाक) में भी इसका संकोचक रूप से उपयोग होता है। (रयुवर्ट)

मेजर मैडेन (Madden) लिखते हैं—"अपामार्ग को पुष्पमान मञ्जरियाँ वृश्चिक विष से रक्षा करने वाली ख्याल की जाती है। इसकी टहनी पास रहने से वह स्तब्ध हो जाता है।"

भस्म में अधिक परिणाम में पोटास होता है। इससे यह क्षार सम्बन्धी कार्यों के लिये भी उतना ही उपयोगी सिद्ध होता है जितना कि औषध के लिये। हरताल के साथ मिलाकर व्रण तथा शिश्न एवं शरीर के अन्य स्थल पर होने वाले मस्क के लिये इसका बाह्य उपयोग (लेप) होता है।

उदय चन्द्रदत्त महोदय कर्ण रोगों के लिये अपामार्गक्षारतैल के उपयोग का वर्णन करते हैं।

डा० बीडी (Bidie) कहते हैं—"कतिपय आंग्ल चिकित्सक इस क्वाथ रूप से इसके व्यक्त मूत्रल गुण को स्वीकार करते हैं।"

डा० कार्निश (Dr. Cornish) ने जलोदर में इसका उपयोग किया और इसे उपयोगी पाया।

सिन्ध के जंगली दिहाती लोग बब्बूर-कण्टक जन्य क्षतों में इसका उपयोग करते हैं (मुरे)

बिहार में जब किसी व्यक्ति को कुक्कुर काट लेता है तब उसको अपामार्ग की पुष्पमान मञ्जरियों में किञ्चित् शर्करा मिलाकर बनाई हुई गोलियों का मुख्य रक्षक औषध रूप से व्यवहार करते हैं। (बैलफोर)

यह चरपरा एवं मृदुविरेचक है तथा जलोदर अर्श, विस्फोट और खगरोगों में उपयोगी ख्याल किया जाता है। इसके बीज और पत्र वामक ख्याल किये जाते हैं तथा जलत्रास और सर्पदंश में उपयोगी है। टी० एन० मुकर्जी।

डा० नादकर्णी—अपामार्ग का क्वाथ (अपामार्ग २ आउंस=१ छ० तथा जल १॥ पाइंट) उत्तम मूत्रल है और वृक्कीय जलोदर में लाभदायक पाया गया है। उदरशूल तथा आंत्र विकारों में इसके पत्ते का रस भी उपयोगी है।

अधिक मात्रा में गर्भपात वा प्रसव वेदना उत्पन्न करता है इसके ताजे पत्तों को पीसकर गुड़ के साथ कल्क प्रस्तुत करें अथवा काली मिरच एवं लहसुन (रसोन) के साथ मिश्रित कर वटिकाएँ बनाएँ। इसके सेवन से विषम ज्वरों विशेष कर चातुर्थिक ज्वरों में लाभ होता है।

इसके पत्तों का ताजा रस सूर्यताप द्वारा शुष्क कर इसका गाढ़ा सत्व प्रस्तुत करके इसमें थोड़ी

अफीम मिलाकर सेवन कराएं। प्रारम्भिक औपदंशीय क्षतों के लिये यह उत्तम अनुलेपन है।

बीजों के सहित इसकी मञ्जरियां प्रायः श्लेष्मा निस्सारकरूप से व्यवहार की जाती हैं।

इसके बीज और दुग्ध द्वारा प्रस्तुत क्षीर (खीर) मस्तिष्क रोगों के लिये उत्तम औषध है।

स्नान करने के बाद रविवार के दिन एवं पुष्य नक्षत्र में लाई हुई और कोने में लटका कर रखी हुई इसकी जड़, उत्तेजना सहित प्रसव वेदना में तथा शीघ्र प्रसव कराने के लिये उपयोग की जाती है। वेदना काल में इसको स्त्री के केशों वा उसकी कटि में बांधते हैं। प्रसव हो जाने के बाद इसे तुरन्त निकाल कर धारा प्रवाह जल में फेंक देते हैं। (इं० मे० मे० पृ० १९-२०)

अपामार्ग की पुष्पमान मञ्जरियों वा बीज को जल के साथ पीस एवं छान कर प्रस्तुत कर विषधर सर्प एवं सरीसृप दंशों में इसका बहिर प्रयोग किया गया है। चूर्ण किये हुए पत्र का क्वाथ मधु वा मिश्री के साथ सेवन करना अतिसार तथा प्रवाहिका की प्रथमावस्था में उपयोगी है। (इं० डू० इं० पृ० ५६२—आर० एन० चोपरा)

अपामार्ग की जड़ को पानी में खूब बारीक पीसकर पेड़ू के नीचे रान तथा गुह्येन्द्रिय पर प्रलेप करदें तो शीघ्र बच्चा पैदा हो जाता है। इसको स्त्री के पांव पर प्रलेप करने से भी यह बात होती है। चिचड़ी के पत्र तथा बीज, प्रत्येक १-१ तो० को सुखाकर तम्बाकू की तरह हुक्का पर पीने से श्वास व पुरातन कास को बहुत लाभ होता है।

चिचड़ी का बीज ३ मा० कूट कर समान भाग शर्करा मिलाकर जल के साथ सेवन करने से रजःस्राव का अवरोध होता है।

इसकी जड़, बीज एवं पत्र को कूट कर चूर्ण बना और समान भाग शर्करा मिलाकर इसमें से ६ माशा की मात्रा में जल के साथ सेवन कराने से रक्तार्श नष्ट होता है। इसके ताजे पत्ते एवं जड़ को तिल तेल में मिला कर व्यवहार करना कण्डू रोगी को अत्यन्त लाभदायक है। उभय प्रकार की पुरानी से पुरानी खुजली को आराम हो जाता है।

६ मा० इसकी ताजी जड़ पानी में घोंटकर पिलाने से वृक्काश्मरी को लाभ होता है। वस्ति से पथरी को टुकड़े टुकड़े कर निकाल देती है। वृक्कशूल की यह अव्यर्थ महौषध है।

इसकी ताजी जड़ के दैनिक दन्तधावन से दाँत मोती की तरह सफेद हो जाते हैं। मुँह से कफ निर्गत होता है। यह दन्तशूल की शर्तिया दवा है। दाँतों के हिलने और मसूड़ों के कमजोर होने को दूर करता है। विशेष कर मुख दुर्गन्धि के लिये अत्यन्त लाभदायक है।

इसकी जड़ पीसकर लगाने से स्तम्भन होता है; इसके बीजों की खीर पकाकर खाने से कई दिन तक क्षुधा नहीं लगती और शक्ति भी यथावत् बनी रहती है।

इसकी जड़ पीसकर स्तन पर प्रलेप करने से दूध बहुत उतरता है। हस्तपाद मलने से क्षय रोग को लाभ होता है।

इसकी जड़ की भस्म लगाने और खाने से कण्ठमाला को आराम होता है।

इसके पत्तों का रस नासूर (नाड़ीव्रण) को भरता है।

इसके पुरातन वृक्ष की ग्रंथि में एक कीट निकलता है। इसको घिसकर पिलाने से बच्चों का डब्बा रोग दूर होता है।

मस्मक रोग में जिसमें तीक्ष्णाग्नि के कारण अत्यधिक क्षुधा लगती है उसमें अपामार्ग तण्डुल चूर्ण १ तो फाँक लेने से वह जाती रहती है।

चिचड़ी की जड़ ६ मा०, कुकरौंधा के पत्र ६ मा० इनको सफेद जीरा के साथ पीसकर उसमें १ मा० काले नमक का चूर्ण मिलाकर सेवन करने से उदरशूल, उदरजन्य वायु के लिये अत्यन्त लाभप्रद और परीक्षित है।

अपामार्ग के विभिन्न अंगों द्वारा कतिपय धातुओं की भस्मों के निर्माण-क्रम

(१) अकीक भस्म—अपामार्ग के एक पाव कल्क में एक तोला अकीक रखकर कपड़ मिट्टी कर सूखने पर निर्वात स्थान में ७-८ सेर अरने उपलों की अग्नि दें। शीतल होने पर निकालें। बस अपूर्व भस्म तैयार मिलेगी।

मात्रा—२ रत्ती।

सेवन-विधि—गाय के मक्खन (गोनवनीत) के साथ सेवन करें।

गुण—हृदय की निर्बलता में उपयोगी है।

(२) सोमल भस्म—२ तो० सखिया को शीशी में डालकर उसमें इतना आक का दूध डालें कि वह डूब जाय। तदनन्तर २१ रोज तक भूमि के भीतर गाड़ रखें। फिर एक बड़ी लोहे की कड़ाही में एक सेर अपामार्ग की भस्म बिछा कर हाथ से दबा दें। उसके बीच में सखिया को रखकर ऊपर से एक सेर उक्त भस्म और बिछा कर चारो ओर से भली प्रकार दबादें। फिर उस पर ४ सेर रेत (बालू) डालकर चूल्हा पर रख कर नीचे आग जलादें और रेत के ऊपर मकाई के कुछ दाने रख दें। ४ पहर अग्नि देने पर मकाई के दाने खिल जावेंगे। बस अग्नि देना बन्द करदें। दूसरे दिन जब वह अच्छी तरह शीतल हो जाय तब उसको धीरे-धीरे निकालें। श्वेत रंग की संखिया की भस्म प्रस्तुत होगी।

मात्रा—१ चावल का चतुर्थ भाग।

गुण—श्वास के लिये अपूर्व औषध है। इसके अतिरिक्त बहुशः अन्य रोगों में भी उपयोगी है।

(३) संखिया भस्म की सरल विधि—एक मिट्टी के बर्तन में १० तो० अपामार्ग की भस्म बिछाकर उस पर एक तोले समूचे संखिया की डली जो २१ दिन तक मदार के दूध में तर करके रक्खी हो, रखदें। ऊपर से १० तोले और उक्त भस्म को डालकर हाथ से भली प्रकार दबा दें और बर्तन का मुँह बन्द करके ऊपर से तीन कपरौटी करके सुखाएँ। सूख जाने पर उसको १० सेर घरेलू उपलों में रखकर आग दें। शीतल होने पर धीरे से खोलकर निकाल लें।

गुण—कफज रोगों के लिये अत्यन्त लाभप्रद है।

(४) हिंगुल की भस्म—शिंगरफ रूमी २ तो० खरल में डालकर २० तो० आक के दूध के साथ खरल करें। जब सम्पूर्ण दुग्ध समाप्त हो जाए तब टिकिया बनाकर छाया में शुष्क करें। फिर मिट्टी के शराब में १० तो० चिरचिटा की राख बिछा कर उस पर हिंगुल की टिकिया रखकर ऊपर से १० तोला उक्त राख डाल कर हाथ से दबा दें। फिर ढक्कन देकर तीन बार कपड़ मिट्टी करने के पश्चात् शुष्क करें और १० सेर घरेलू उपलों में रखकर आग दें। शीतल होने पर निकाले। हिंगुल की सर्वोत्तम भस्म प्राप्त होगी।

गुण—शरद ऋतु में इसके सेवन करने से सर्दी कम लगती है और कामशक्ति का पुनरावर्तन होता है। कतिपय रोगों के लिये अत्युत्तमहै

हड़ताल व अभ्रक की भस्म—हड़ताल बरकी ४ तो०, अभ्रक ४ तो०, दोनों को खरल में डालकर अपामार्ग जल २० तो० के साथ घोट कर सुखा लें। फिर मिट्टी के बर्तन में रखकर कपड़मिट्टी करके चूल्हे के भीतर डाल दें। दो घन्टे के बाद निकाल कर दोबारा खरल में २० तो० उक्त जल के साथ फिर खरल करें जब शुष्क होने पर हो तब बर्तन में डालकर बन्द करके यथाविधि पहले दो घन्टा तक चूल्हा में दबा दें शीतल होने पर तीसरी बार पुनः वैसा ही करें। अत्युत्तम धूसर वर्ण की भस्म प्रस्तुत होगी।

मात्रा—आधा र० से २ रत्ती तक। सेवन विधि—शर्बत बजूरी अथवा किसी अन्य उचित अनुपान के साथ सेवन करें। गुण—यह प्राचीन से प्राचीन ज्वर की अमोघ औषध है। श्वांस कांठिन्य एवं कास के लिये अक्सीर का काम देती है। इससे आह्निक द्वयह्निक, तृतीयक, चातुर्थक आदि विषम ज्वर नष्ट भ्रष्ट हो जाते हैं।

अपामार्गजटा—सं० स्त्री० अपामार्ग मूल, चिर्चिटा की जड़। Achyranthes Aspera (*Root of*) सि० यो० तृतीयक ज्वर श्रीकण्ठः। अपामार्ग जटा कट्यां,,। च० द० सन्निपात ज्वर चि०। अपामार्ग की जड़ का बांधना तृतीयक ज्वर के लिये हितकारक है। अपामार्ग मूल को भली प्रकार धोकर बाँए हाथ में बांधने से सब प्रकार के ज्वरों का नाश होता है। वैद्यक।

अपामार्ग तण्डुल—सं० पु० अपामार्ग बीज चिर्चिटा का बीज। Achyranthes Aspera (Seedsof) च० सू० ४ अ०।

अपामार्ग तैलम्-सं० क्ली० एक औषधीय तैल जो शिरोरोग में काम आता है।

अपामार्ग बीज, सोंठ मिर्च, पीपल, हलदी, हींग त्वक्, विड्ंग, इनकाकल्ककर गोमूत्रके साथ यथा बिधि तेल पकाकर नस्य लेने से शिर में उत्पन्न कृमियां नष्ट होतीं हैं इसमें तेल ४ श० औरकल्क १ श० लेना चहिये। प्रयोगा०। च० द०। ब० से० सं० शिरोरो० चि०।

नोट—त्वक्=नकछिकनी।

अपामार्ग बीजादि चूर्णः-सं० पु० चिचिंटा के बीज चित्रक, सोंठ; हड़, मोथा, चिरायता, प्रत्येक सम भाग ले चूर्ण कर सर्व तुल्य गुड़ मिलाए। इसे भोजनांत में १ कर्ष खाकर जब भोजन जीर्ण हो जाए तो ऊपर से तक्र पीएँ। वृ० नि० र०।

-अपामार्गम्-ते० अपामार्ग, लटजीरा हिं०। (A. chyranthes Asphra, *Linn.*) स० फा० इं०।

अपामार्ग क्षार-सं० पु० अपामार्ग द्वारा प्रस्तुत क्षार आठ प्रकार के क्षारों में से एक। गुण-यह गुल्म तथा शूल नाशक है। भा० पू० १ भा० ह० च०

अपामार्ग क्षार तैलम्-सं० क्ली० (१) एक औषधीय तेल जो कर्ण रोग में प्रयुक्त होता है। तिल के तेल में अपामार्ग (चिचिंटा) क्षार जल और अपामार्ग (की जड़) से बनाए हुए कल्क को सिद्ध करके कान में डालने से कर्णनाद और बहिरापन दूर होता है।

नोट—तिल तैल ४ श०। जल १६ श०। २१ बार परिस्रावित करके क्षारिवारि (क्षार जल) प्रस्तुत करलें (मतान्तर क्षार परिमाण २६ प० जल, १८ श० और कल्क द्रव्य १ श०)।

ब० द० कर्ण-रो० चि०। भैष० र० कर्ण रो० चि०।

(२) १६ श० अपामार्ग क्षार को २४ श० जल में २१ बार परिस्रावित कर और तैल १६ श० लें तैल जल न जाय इसलिये अपामार्ग क्षार में उसका कल्क डालें और पिण्डीभूत कल्क से प्रथमभूत तैल ही ग्रहण करें। उसे गारे नहीं। प्रयोगाः।

अपामार्गादिकल्कम्-सं० क्ली० (१) चिरचिटा की लुगदी। (२) चिरचिटे के बीज को चावल धोवन से खाँए तो रक्तार्श दूरहो। वृ० नि० र०।

अपाय-हिं० संज्ञा पु० [सं०] [वि० अपायी] (१) विश्लेष। अलगाव। (२) नाश। (३) उपद्रव। वि० [सं० अ=नहीं+पाद, प्रा० पाय पैर] बिना पैर का। लँगड़ा। अपाहिज।

अपारदर्शक-हिं० वि० (भौ० वि०) अदर्शक, अस्वच्छ। गैर शफ़्फाफ़-अ०। ओपेक। (Opaque) इ०। वे पदार्थ जिनमें से प्रकाश बिलकुल न जा सके अर्थात् जिनमें से प्रकाश की रेखाएं नहीं गुजर सकें। जैसे लकड़ी, लोहा, चमड़ा, इत्यादि।

अपालापमर्म्म-सं० क्ली० पृष्ठवंश (कशेरुक) और वक्ष के मध्य भाग में दोनों ओर कन्धों के अधोभाग में "अपालाप" नाम के दो मर्म हैं। इनके विद्ध होने से कोष्ट रुधिर से भर जाता है और इसी रुधिर को राध (पूय पीव) में परिणित होने पर रोगी मर जाता है अन्यथा नहीं। सु० शा० ४ अ०।

अपावर्तन-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) पलटाव बापसी। (२) भागना। पीछे हटना। (३) लौटाना।

अपासनम्-सं० क्ली० मारण। अमं०।

अपाह(हि)ज-हिं० वि० [सं० अपभञ्ज प्रा० अपहञ्ज] (१) (Lazy, cripple) अंग भंग, खंज। लूला लँगड़ा; (२) आलसी-बेकार।

अपि-अव्य० [सं०] (१) निश्चयार्थक। भी, ही। (२) निश्चय ठीक।

अपिङ्-बर० (ए० ब०) वृक्षः-सं०। (Tree, shrub, or Herbaceousplant)

अपिङ्गियाआ-बर० (ब० ब०) वृक्षाः-सं०। (Trees' shrubs or Herbaceous plants)

अपिंडी-हिं० वि० [सं०] पिंडरहित। बिना शरीर का। अशरीरी।

अपिधान-हिं० संज्ञा पु० [सं०] आच्छादन। आवरण। ढक्कन। पिहान।

अपित्तम्-सं० क्ली० चित्रक, चीता। (Plumbago zeylanicum) अम०।

अपिनद्ध-हिं० वि० [सं०] [स्त्री० अपिनद्धा] बँधा हुवा। जकड़ा हुआ। ढका हुआ।

अपिहित-हिं० वि० [सं०] [स्त्री० अपिहिता] आच्छादित। ढँका हुआ, आवृत।

अपीन-हिं० वि० हल्का, क्षीण, कृश (Light, Lean) संज्ञा पु० अफीम (Opium)

अपीनस-हिं० पु०
अपीनसः-सं० पु० } नासिका रोग विशेष। पीनस रोग भेद।

लक्षण—जिस मनुष्य की नाक रुकी हुई सी हो घुर्वा से घुटी हुई सी पकी हुई और क्लेदित गोली सी हो और सुगन्ध एवं दुर्गन्ध को न मालूम कर सके उसे अपीनस का रोगी जानना चाहिये यह विकार कफ वायु से होता है और प्राय लक्षण प्रतिश्याय के से होते हैं। सु० चि० २२ अ०। च० चि०। (Dryness of the nose, want of the pititary-seeretion & Loss of smell)

अपीनस में कफ बढ़कर नासिका के सम्पूर्ण स्रोतों को रोककर घुर्घुर श्वांस युक्त औा पीनस से अधिक एक प्रकार का रोग उत्पन्न कर देता है। जिसे अपीनस कहते हैं।

लक्षण—इसमें रोगी की नासिका भेड़ की नासिका की तरह झरा करती है। तथा पिच्छिल पीला पका हुआ और पाढ़ा गाढ़ा नासिका का मल निरन्तर निकलता रहता है। वा० उ० अ० १३।

अपीय-हिं० वि० अपेय, पान निषिद्ध। (Unfit to be drunk forbidden liquor)

अपुङ्ग-छो० नाग०, संता० तुलतुकी, सिदोरी-बम्ब० (Holostemmarbeedii) इं० मे० मे०

अपुच्छ-हिं० वि० पुच्छ रहित। (Tailless)।

अपुच्छा-सं० स्त्री० शिंशपावृक्ष-सं०। शीशव (भ०)-हिं०। A timber tree (Dalbergia Sisu)

अपुत्र-हिं० वि० [सं०] जिसके पुत्र न हो। निःसंतान। पुत्रहीन। निपूता।

अपुरुष-हिं० वि० पु० [सं०] पुरुषत्वहीन, नपुंसक (Impotent),

अपुष्टः-सं० त्रि० अपरिपक्व, कच्चा। (Immature),

अपुष्पः-सं० पु० उदुम्बर वृक्ष, गूलर। (Ficus glomerata),

अपुष्पफलदः-सं० पु० पनसवृक्ष, कटहल। (Artocarpus integrifolia) फणस-म०। रा० नि० व० ११। बिना पुष्प के फल लगने वाले वृक्ष मात्र। (Flowerless tree) रा० नि०।

अपुष्पित-हिं० वि० [सं०] पुष्प रहित, बिना फूले हुये। Without flowers (a tree or plant) notbearing flowers-, not in flowers,

अपूत-हिं० वि० [सं०] अपवित्र। अशुद्ध। -वि० [सं० अपुत्र, पा० अपुत्त] पुत्रहीन। निपूता।

अपूपः-सं० पु०
अपूप-हिं० संज्ञा पु० } (१) पिष्टक। पूरी, पूड़ी, पुआ,-हिं०। पुलि पिटे-बं०। बारीक-म० कोई कोई इसे पाव रोटी कहते हैं। पूरब में इसे रोट अथवा सुहारी कहते हैं। हला०। बारीक पिसे हुए गेहूँ के आटे में गुड़ मिलाकर जल से भली भांति मर्दन कर गोलाकार बेलें और पीछे इसको घी में पकाऐ। इसे 'अपूप' प्रभृति नामों से अभिधानित करते हैं इसे बलकारक, हृद्य, रुचिकारक, भारी, वृष्य, तुष्टि देने वाला पित्त और वायु को शमन करने वाला तथा मधुर कहा है। वै० निघ०।

(२) गोधूम. गेहूँ। (Wheat) रा० नि० व० १६। (३) इंद्रा। "इन्द्रियम् अपूप"। ऐ० २।२४। अथर्व०। सू० ६।५। का० १०।

अपूप्यः-सं० पु० (१) गोधूम गेहूँ (Wheat) (२) गोधूम चूर्ण. गेहूँ का आटा, मयदा। (Wheat flour).

अपूरणी-सं० स्त्री० (१) शालपर्णी वृक्ष। सेमल

(२) हिं० (Bombax Malabaricum) श० च०। (२) कार्पास वृक्ष, कपास। (GossypiumIndicum),

अपूर्ण-हिं० वि० अधूरा। (Imperfect),

अपूर्ण मण्डलम्-सं० क्ली० अधूरा घेरा, अर्द्धवृत्त। (Imperfect circle),

अपूर्वोरसः-सं० पु० कर्पूररसः-उत्तम हींग १० तो० लेकर इसको २ मूषा बनाकर उनके भीतर २ तो० शुद्ध पारद डालकर दूसरी मूषा को ऊपर रखकर कपड़मिट्टी कर दें। ऊपर वाली मूषा के तल में पहले से ही एक बारीक छिद्र कर लें, फिर एक हांड़ी में नीचे थोड़ा सा यवक्षार और समुद्रलवण रख कर बीच में ऊपर वाला यंत्र धरकर ऊपर वही क्षार और लवण रखकर यंत्र को तिरोहित कर दें, उसके ऊपर साफ ठीकरे ढककर दूसरी हांड़ी ऊपर रखकर कपड़ मिट्टी कर दें। फिर इसको सूखने पर चूल्हेपर रखकर ८ पहर तक साधारण आँच देना और ठण्डा हो जाने पर उन खपड़ों में लगी हुई सुवर्ण के सदृश चमकीली बजन में पूरी पारद भस्म मिलेगी। उसको बारीक कपड़े में रखकर पोटली बनाकर दोपहर तक दूध में स्वेदित करे। फिर निकाल कर अच्छी तरह सुखा लें। मात्रा—आधी रत्ती, गुण—यह क्षयादि रोगों को समूल नष्ट करता और जठराग्नि को प्रदीप्त करता है। रस० यो० सा०।

अपृक्त-हिं० वि० [सं०] (१) बेमेल। बिना मिलावट का। असंबद्ध। बिना लगाव का। (२) खालिस। अकेला।

अपेक्षः-स० पु० दूरालभा, धमासा। (Alhagi maurorum),

अपेण्डक्स-इं० उपान्त्र अन्त्रपरिशिष्ट।

अपेण्डिक साइटिस-इं० उपान्त्र प्रदाह, अन्त्रपुच्छ प्रदाह, अन्त्रपरिशिष्ट प्रदाह।

अपेतराक्षसी-स० स्त्री० (१) तुलसीभेद (Ocimum Sanctum), रा० नि० व० १०। (२) कृष्ण तुलसी। काली तुलस-मह०। भा० पू० १ भा० गु० व० वर्बरी। (३) बाबुई तुलसी। (Ocimum Basilicum)। र० मा०।

अपेय-हिं० वि० [सं०] न पीने योग्य, पान निषिद्ध Unfitto be drunk forbidden (Liquor),

अपेहिवातः-सं० पु० प्रसारणी। गंधाली-हिं०। (Fœderia Fœtida, *Linn*) फा० इं०।

अपोएन्-बर० (ए० व०) } पुष्प। फूल
अपोएन्-मि-याआ-बर० (ब. व.) } पुष्प। फूल
(Flowers) स० फा० इ०।

अपोगण्डः-सं० त्रि० } (१) बलिश, वृद्ध
अपोगंड-हिं० वि० } पुरुष। (२) पंगुकाय। विकलांग। -पुं० शिशु। मे० डचतुष्कं। -वि० (१) सोलह वर्ष के ऊपर की अवस्था वाला। (२) बालिग।

अपोदक-सं० पु० रेगिस्तानी साँप। अथर्व०। सू० १३। ६। का० ५।

अपोदिका-स० स्त्री० पूतिका शाक, पोय (ई) का साग। अ० टी०। Basella alba & rubra (Malabar nightshade),

अपोनोगेटनमोनैस्टिकॉन-ले० बेचू-हि०। इं० है० गा०।

अपोनोगेटन, मॉनोस्टेकिअम्-ले० बेचू-हिं०। काकाङ्गा-सं०। नमा-ते०। इसकी जड़ आहार के काम आती है। मेमो०।

अपोनोगेटन सिम्प्लस्टॉक्ड-इं० बेचू। इं० है० गा०।

अपोरोसा बाइलोसा-ले० या-मेइन-बर०। इसका राल तथा छाल प्रयोग में आती है। गोंद रंग के काम में आता है। मेमो०।

अपोलाइसीन-इं० यह एक पीताभायुक्त श्वेत स्फटिकीय चूर्ण है जो जल में विलेप होता है। यह फीनेसीटीनके समान प्रभाव करता है। इसे अहोरात्रि में १२० ग्रेन (६० रत्ती) तक की

मात्रा में भी प्रयोग करने से यह कोई हानिकारक प्रभाव नहीं करता, किन्तु इसका वेदनाशामक प्रभाव उसकी (फीनेसीटीन) अपेक्षा निर्बल होता है। यह शोधक अर्थात् पचननिवारक भी है, पर इसको बहुधा ज्वर नाशक तथा वेदना-नाशक प्रभाव के लिये ही उपयोग में लाते है कभी कभी काऊ बटर (गो-नवनीत) के साथ इसकी वर्तिका बनाकर भी प्रयोग में लाते हैं।

मात्रा—१० से ३० ग्रेन (५ से १५ रत्ती)

अपोहन-हिं० पु० तर्क के द्वारा बुद्धि को परिमार्जित करना।

अपौरुष-हिं० पु० साहस हीन, नपुंसक, असाहस, पुरुषार्थ हीन। (Impotent)

अपांग-हिं० संज्ञा पु० जहां दोनों पलक आपस में एक दूसरे से जुड़ते है, उस स्थान को कोया या अपांग कहते हैं।

अपांनपात्-सं० पु० विद्युत् सम्बन्धी अग्नि। अथर्व०।

अप:(स)-सं० क्ली० (१) जल, पानी (water) (२) जल धारा। अथर्व०। सू० २३। २। कां० ६।

अप्-सं० स्त्री०
अप्-हिं० संज्ञा पु० } जल, पानी (Water)

(उप०) निम्न, अधः, नीच, बुरा, विकृत, त्याग, हर्ष। इसके विरुद्ध अर्थ में "अधि" प्रयुक्त होता है।

अप्पम(स्)-सं० क्ली० जल, Water (Aqua)

अप्पकोवय,-कलुञ्ज-ता० कुकुम-दुण्ड ते०। रिहन्कोकार्पा फीटीडा (Rhyn chocarpa Fœtida, Schrad), ट्रिकोसैन्थीस नर्विफोलिया (Trichosanthes nervifolia, *Linn*), ट्रि० डायोइका (T. Dioica, *Roxb*), ब्रायोनिया पिल्सा (Bryonia pilsa; *Roxb*)-ले०।

कुष्माण्ड वर्ग

(*N. O. Cucurbitaceæ*)

उत्पत्ति-स्थान—गुजरात, दकन प्रायद्वीप, और मालाबार की पहाड़ियाँ।

उपयोग—थेन्सकी का वर्णन है कि इसकी जड़ का माजून में अर्श की दशा में अन्तः प्रयोग होता है और दोषिक श्वास में स्नेहजनक रूप से इसका चूर्ण व्यवहार में आता है।

इसकी जड़ लगभग मनुष्य की अँगुली के बराबर होती है तथा हलकी, धूसर वर्ण की और स्वाद में मधुर एवं लुआबी होती है।

अप्पेल-मल० अरणी। (Premna Integrifolia), इं० मे० मे०।

अप्पो-बम्ब० अफीम। (Opium) फा० इं० १ भा०।

अप्यय-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) अपगमन। (२) लय, नाश।

अप्रकाण्डः-सं० पु० (१) कांड रहित वृक्ष, (प्रकांड) धड़ रहित वृक्ष, तनारहित वृक्ष। (Stemless tree) (२) क्षिपिटका आदि। अम०। -हि० वि० कांड (तना) रहित (Ste mless),

अप्रकाश-हिं० संज्ञा पु० [सं०] [वि० अप्रकाशित, अप्रकाश्य] प्रकाश का अभाव। अंधकार।

अप्रकृत-हिं० वि० [सं०] (१) अस्वाभाविक। (२) बनावटी। कृत्रिम। गढ़ा हुआ।

अप्रकृष्टः-सं० पु० काक। (A crow)। श० र० -त्रि० अधम (Inferior, vile)।

अप्रखर-हिं० वि० [सं०] मृदु। कोमल।

अप्रचङ्क्रषा-सं० पु० लँगड़ा लूला और आँखों से लाचार। अथर्व०। सू० ६। १६। का० ८।

अप्रच्छन्न-हिं० वि० [सं०] (१) जो प्रच्छन्न न हो, खुला हुआ। अनावृत। (२) स्पष्ट। प्रगट।

अप्रजाता-हिं० वि० स्त्री० (Nulliptra) जिस स्त्री के कभी सन्तान न हुई हो अथवा जिसने गर्भ धारण न किया हो।

अप्रजास्त्वम्-सं० क्ली० सतान न होना। अथर्व० सू० ६। २६। का० ६।

अप्रतिकार-हिं० संज्ञा पु० [सं०] [वि० अप्रतिकारी] उपाय का अभाव। तदबीर न होना। -वि० जिसका उपाय या तदबीर न हो सके। लाइलाज।

अप्रतिकार–हिं० संज्ञा पु० देखोअप्रतिकार ।

अप्रतिकारी–हिं० वि० [सं०] अप्रतिकारिन्] [अप्रतिकारिणी] उपाय वा तदबीर न करने वाला ।

अप्रतिकार्यः–सं० वि० दुश्चिकित्स्य । (Incurable),

अप्रतिभ–हिं० वि० [सं०] (१) प्रतिभा शून्य । चेष्टाहीन । उदास । (२) स्फूर्ति शून्य । मन्द सुस्त ।

अप्रत्यक्ष–हिं० वि० [सं०] (१) अलक्षित, अदृष्ट जो देखा न जाय । (Invisible, Absent) । छिपा । गुप्त ।

अप्रति सारास्य अञ्जनम्–सं० क्ली० कालीमिर्च १० अदद, स्वर्णमाक्षिक आधा पिचु, नीलाथोथा आधा पल, मुलहठी एक पिचु इन सबको दूध में भिगोकर अग्नि में भस्म करलें । गुण–यह तिमिर रोग को परमोत्तम औषध है, वा० उ० अ० १३ ।

अप्रधान–हिं० वि० [सं०] (१) कनिष्ट, क्षुद्र, मुख्यनही, जघन्य, (Subordinate,secondary) । (२) जो प्रधान या मुख्य न हो गौण । साधारण । सामान्य ।

अप्रभा–हिं० स्त्री० प्रभाहीन, प्रकाश शून्य (Want of splendour),

अप्रमेय–हिं० वि० [सं०] जो नापा न जा सके । अपरिमित । अपार । अनंत ।

अप्रयुक्त–हिं० वि० [सं०] जिसका प्रयोग न हुआ हो । जो काम में न लाया गया हो । अव्यवहृत ।

अप्ररोहता–हिं० जो उगा न हो, अंकुरहीन ।

अप्रसन्न–हिं० वि० असंतुष्ट, दुखित, नाराज, अनच्छ, मैला । (Displeased),

अप्रसवधर्म्मी–सं० त्रि० अप्रसव धर्मवाला पुरुष क्योंकि आत्मा में कुछ उत्पन्न नही होता इससे यह प्रसवधर्मी नहीं है । अबीजधर्म्मी । मध्यस्थधर्मी । सु० शा० १ अ० ।

अप्रहतः–सं० त्रि० / अप्रहत–हिं० वि० } (१) माक्षक्षेत्र, केदार भूमि । मालुभूमि–म० । (२) जो भूमि जोती न गई हो । खिल (अपहृत) भूमि । रा० नि० व० २ ।

अप्राकृत–हिं० वि० (सं०] जो प्राकृत न हो । अस्वाभाविक । असामान्य । असाधारण ।

अप्राकृतिक–हिं० वि० [सं०] अस्वाभाविक, प्रकृति विरुद्ध । (Unnatural),

अप्राकृतिक संयोग–हिं० पु० अस्वाभाविक मैथुन, गुद मैथुन, पशु मैथुन आदि ।

अप्राजिता–बं० हिं० अपराजिता, विष्णुक्रान्ता, कवाटेंडो । (Clitoreaternate, *Linn*) स० फा० इं० ।

अप्राजितार बीज–बं० / अप्राजितेके बीज– हिं० पु० } अपराजिताका बीज (Clitorea ternatea, *Ltnn*) (*Seedsof*)स० फा० इं० ।

अप्राजितारमूल–बं० अपराजिता की जड़ The root of Clitorea, Ternatea *Linn*),

अप्राण–सं० त्रि० विना प्राण का । निर्जीव । मृत । अथर्व० । सू० ६ । ६ । का ८ ।

अप्राप्तक–सं० एक प्रकार का सोना, उत्तम जाति के सुवर्णों में से जो सोना कुछ पीला सा अर्थात् भुरभुरा और सफेद रह गया हो वह अप्राप्तक कहलाता (याने संशोधन आदि के समय यह ठीक शुद्ध नही होता) है, इसके शोधन की विधि भी कौटिल्य ने दी है, बिस्तार भयसे उसे यहां नही दिया गया है, कौटि० अर्थ० ।

अप्रिय–(सं०) हिं० वि० [स०] [स्त्री० अप्रिया] अहित, (Disagreeable, unfriendly) अप्यारा, अनचाहा, जो प्रिय न हो, अरुचिकर, जो न रुचे, जो पसंद न हो ।

अप्रिया–सं० स्त्री० (१) शृङ्गी मत्स्य, सिङ्गी मछली (Singi fish) (२) बोदालि मत्स्य ।

अप्रीति–हिं० संज्ञा स्त्री० सं०] (१) अरुचि (Indifference, dislike) (२) क्रोध (३) वैर । विरोध ।

अप्रीतिकर–हिं० पु० अरुचिकर, निठुर, कठोर ।

अप्रेतराक्षसी–स० स्त्री० तुलसी वृक्ष । (Ocimum Sanctum) रा० मा० ।

अप्रोटः-सं० पु० भारद्वाज पक्षी । वै० नि० A bird named Bharadvaja

अप्रौढ़-हिं० वि० [सं०] (१) जो पुष्ट न हो। कमजोर। (कच्ची उम्र का। नाबालिग।

अप्सरसः-सं० पु० (१) उत्तम स्त्रियां। (२) जल धाराएँ। अथर्व०। सू० १११। ४। का० ६। (३) जल में फैलने वाले रोगोत्पादक कीट अथर्व०। सू० ३७। ३ का० ४।

अप्सरा-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०]अंबुकण। बाष्पकण

अफई-अ० यह अरबी संज्ञा "अफ़ई तफज़ील,, का अपभ्रंश है। काला सर्प कृष्ण सर्प। यह लाल वा काला होता है और इसके शरीर पर सफेद एवं भूरे बिन्दु होते हैं यह लगभग १८ गिरह लम्बा होता और एक हाथ ऊंचा खड़ा हो जाता है। जिस मनुष्य को यह काट लेता है उसकी उसकी आँखें निकल पड़ती हैं इसका विष इतना तीव्र होता है कि इसका काटा हुआ मनुष्य कभी कभी तो केवल १० ही श्वास ले पाता है। इसके चार भेद होते हैं:—

(१) कौड़ियाली और (२) परीला। इन के अतिरिक्त इसके दो अन्य भेदहैं। जिनमें बहुत थोड़ा अन्तर होता है।

अफक-अ० निम्न हनु के दोनों भागों के मिलने का स्थान निम्न हनु संधि।

अफञ्जनोश-, फञ्जनोश- } अ० पञ्जनोशसे अरबी बनाया हुआ शब्द है जिसका अर्थ पञ्जपाचक (द्रव्य) है एक मअ्जून का नाम है जिसका प्रधान अवयव मण्डूर है। See-Fanjanosha

अफद-अ० पारावत, कबूतर या उसके समान पक्षी (A pigeon or a bird of the same kind)

अफन-, रफनत-, नतानत- } अ० पचन, सड़ांध, सड़ना गलना दुर्गन्ध उत्पन्न करना, तिब की परिभाषा में किसी तरल द्रव्य का शारीरोष्मा के प्रभाव से सड़ांध में परिणित होने की ओर रुख करना (प्रवृत होना) है, परन्तु अभी उसके स्वरूप एवं प्रकार में कोई अन्तर न आया हो। क्योंकि स्वरूप आदि का परिवर्तित हो जाना इस्तहालह कहलाता है। प्युट्रिफैक्शन (Putrifaction) प्युट्रिसेन्स (Putriscence) इं-

अफफञ्जेसिक्ट-जर० वकुल, मोलसरी। Atree (Mimusops elengi) इं० मे० मे०।

अफयून-हिं० संज्ञा स्त्री०देखो—अफीम।

अफयूनी-हिं० वि० देखो—अफीमची।

अफयूम-, अफफ्यूम- } जर० पारसीक अजवाइन अजवाइन' खुरासानी। (Hyocyamus) इं० मे० मे०।

अफयूस-यु० जंगली मूली, अरण्यमूलक।(wild Radish.)

अफर-अ० मायाफल, माजू (Galla)

अफरञ्जमिश्क-अ० रामतुलसी। (Ocimum Gratissimum *Linn*)। देखो—तुलसी

अफरगञ्ज-आकाशवेल, अमरवेल। (Cuscuta Reflexa)

अफरना-हिं० क्रि० अ० [सं० स्फार=प्रचुर] पेट का फूलना।

अफरा-हिं० संज्ञा पु० [सं० स्फार=प्रचुर] (१) पेट का फूलना (२) अजीर्ण वा वायु से पेट फूलने का रोग आध्मान (Flatulent)

अफ़र्गमा-दियाफ्रग्मा } अ० वक्षोदरमध्यस्थ पेशी-हिं०। डायाफ्रम (Diaphragm) मिड्रिफ (Midriff) इं०।

अफब्यून-यु० फर्ब्यून (प्यु) फर्फ्यून-अ०। सेहुँड़ दुग्ध, थूहरका शुष्क दुग्ध-हिं०।यूफोर्बिअम (Euphorbium)-ले०।

अफर्वी-तु० वेदग्याह (एक गांठदार वृक्ष या घास) (A knotty grass)

अफल-अ० स्त्री गुह्य भागस्थ अन्त्रवृद्धि रोग, (स्त्री) गुह्येन्द्रिक वृद्धि। पुरुष के अन्डकोष में जिस प्रकार आंत उतर आती है उसी प्रकार स्त्रियों के गुह्य भाग में भी आंत उतर आती है। प्युडेण्डल हर्निया (Pudendal Hernia) इं० देखो—अन्त्रवृद्धि।

अफलः-सं० पु० }
अफल-हिं० पु० } अफल, फलहीन वृक्ष, बाँझ वृक्ष (Fruitlesstree barren) जिसमें फल न हो। बिना फल का। हे० च० ४ का०। त्रि० हिं० वि० (१) जो नहीं फलता, फल रहित (औषधि) श० च०। अथर्व० सू० ७। २७। का० ८। (२) व्यर्थ, वृथा। हिं० पु० झाबू (ऊ) का वृक्ष। (३) बांझ, वन्ध्या।

अफलता-हिं० स्त्री० फलहीनता, बाझपन। (Barrenness, sterility)

अफला-सं० (हिं० संज्ञा) स्त्री० (१) भूम्यामल की, भुई आमला (Phyllanthus niruri) काष्ठ धात्री वृक्ष (Emblicofficinalis) भा०। रा० नि० व० ११ (३) लघु कारवेल्लक। The small var of (momordica muricata) (४) आमल की वृक्ष, आम (आव-) ला। (Phyllanthus Emblica) भा० पू० १ भा०। (५) घृत कुमारी घी कुवार (Aloe Barbadensis) श० च०।

अफलित-हिं० वि० [सं] जो फला न हो जिसमें फल न लगे। फलहीन। (Not in fruit A fruitless tree)

अफलिनी-सं० स्त्री० सन्तान रहित, वन्ध्या "तरुण्या फलिनी भवेत्। सु० सं० उ० अ० ३८। See-Bandhya

अफसंतीन-हिं० संज्ञा पुं० [यू०] देखो—अफसंतीन।

अफा- }
अफाय- } अ० (१) गदहे का बच्चा (२) शुतुर्मुर्ग़ के पर।

अफागियह्-अ० हिना पुष्प, मेंहदी का फूल। (Myrtle flower)

अफातीस-यु० मूली, मूलक। (A radish)

अफादामून-यु० हब्बुल्कुल्कुल। (See-habbul qulqul)।

अफाफह्-अ० गुदद्वार, चूति हिं०। एनस (Anus) इं०।

अफायद-सी० मगास। See-Maghasa

अफार-अ० कुत्तान्न। कातिल, अन्यह।

अफारह्-अ० (टेंट) कपास का फल। Fruit-of (Gossypium Indicum)

अफारहम-अ० वलिष्ट ऊँटनी।

अफारीकून-यु० (१) चने के बराबर एक फल है जो हरित वर्ण का होता है परन्तु अधिक गोल नहीं होता इसको अरबी में मवेजज अस्ली, कहते हैं (२) माजरियून या (३) जैतुन का फूल।

अफारीन-यु- बुलसकी, हशीशतुल्अफई (बूटी है) (A Plant)

अफाबियह्-अ० (Spice) मसाला, वे सुगंधित द्रव्य जो खाने की वस्तुओं में प्रयुक्त होते हैं, जैसे—दालचीनी आदि।

अफासून-यु० (१) सूंफी का तेल (२) वेद का वृक्ष।

अफिज-अ० (ए० व०) अअ्फाज़ (ब० व०) अन्त्र, आन्त्र, आंत। इन्टेस्टाइन (Intestine) इं०।

अफिन-अ० मैला, दूरगन्ध युक्त, वह स्नेहमय द्रव्य जो शारीरोष्मा के प्रभाव से दुर्गन्ध युक्त हो गये, तथा सड़ गल गये हों, लेकिन अभी उनके स्वरूपादि में कोई अन्तर न आया हो। मीफाइटिक (Mephitic)-इं०।

अफिन-बं० }
अफिम-द० बं० } अफीम (Opium)

अफ़िरञ्जमुश्क-अ० फरञ्जमिश्क, रामतुलसी। (Ocimum Gratissimum. Linn)

अफ़िस-अ० बिकठा, कपैला। यह पद स्वाद के लिये विशेषण से तुल्य प्रयोग में आता है। ऐस्ट्रिञ्जेण्ट (Astringent)-इं०।

अफ़ीकुत्स }
अफ़ीनीकुत्स- } -यु० एक अप्रसिद्ध बूटी है। (An unimportant plant)

अफ़ीकून-यु० अजबायन खुरासानी। (Hyocyamus)

अफीण,-म-गु० अफीम। (Opium) स० फा० इं०।

अफीणनुडोडवां-गु० पोस्ते का डोंड (Poppy capsules)

अफीन-मह०
अफीनम्-सं० क्ली०
अफीम-सं० (हिं० संज्ञा) स्त्री०
अफ़ीम-द०
[यू० ओपियम, अ० अफयून]. (Opium) अफीम पोस्ते का दूध है, खश्खश बीज। देखो—पोस्ता।

अफ़ीमची-हिं० संज्ञा पु० [अ० अफयून+ची 'प्रत्य०'] अफीम खाने वाला। वह पुरुष जिसे अफीम खाने की लत हो।

अफ़ीमी-हिं० वि० [अ० अफयून] अफीमची।

अफीमपाक:-सं० पु० अकरकरा, केशर, लवङ्ग, जायफल, भङ्ग, सिंगरफ इन्हें समान भाग लेकर सब की आधी शुद्ध अफीम डालें, प्रथम अफीम को दोलायन्त्र द्वारा दुग्ध में शुद्ध करें, तदनन्तर सब औषधों से छः गुणी मिश्री की चासनी कर और औषधों को मिलाकर अच्छी तरह मर्दन करे। पुनः एक एक टंक की गोलियां बनाएं। रात्रि को स्त्री सहवास से दो घड़ी पूर्व इस गोली को मुख में रक्खें या भक्षण करें। इसके सेवन से पुष्ट हो मनुष्य ऊंचे अंगवाला होता है और उसमें स्त्री प्रसंग की शक्ति का संचार होता है। यो० चि०।

अफीमोदून-यु० अप्रसिद्ध बूटी है। (An unimportant plant) यह वृक्ष एवं घास के बीच होती है। इसकी एक बारीक डाली होती है।

अफीमु-कना० अफीम। (Opium)

अफीमूना-यु० दालचीनी। (Cinnamomum zeylanicum Nees (Bark of Cinnamon)

अफीलन-
अफीलून-
अफील्यून-
युo पहाड़ी जौहरी जवाइन, दर्मिनह् कोही।

अफीसूस-अ० अज्ञात।

अफुल्ल-हिं० वि० [सं०] अविकसित, बेखिला।

अफू
आफू-
म० हिं० संज्ञा स्त्री० अफीम। (Opium)

अफेन-हिं० वि० [सं०] बिना फेन, कफ रहित। (Foamless)-पु० [सं०] अफीम (Opium)

अफेनम्-सं० क्ली० अफीम, अहिफेन। (Opium)

अफेनफलम्-सं० क्ली० अहिफेन फल, पोस्ते की डोंड (Poppy capsules) भैष० स्त्री० रोग चि०।

अफेलम्-स० क्ली० आफूक, अफीम, अहिफेन। (Opium) वै० नि०।

अफौत-अ० (१) जिसका मुख बड़ा हो, चौड़े मुंह वाला। (२) जिसके दन्त ओष्ठ तक हों अर्थात् मुंह से बाहर निकले हुये हों।

अफ़्आल-अ० (ब० व०) फिअल (ए० व०) क्रिया, कार्य, काम। शक्ति द्वारा जो कुछ प्रगट हो उसे क्रिया (फिअल) कहते हैं। अस्तु, मनुष्य शरीर में जितनी प्रकार की शक्तियां हैं उतनी ही प्रकार की क्रियाएं हैं।

अफ़्आल तबइय्यह्-अ० (१) प्राकृतिक शक्ति सम्बन्धी क्रियाएं। (२) शरीर के सम्पूर्ण प्राकृतिक कार्य, जैसे—आहार, पान, सोना, जागना, उठना, बैठना, चलना, फिरना, देखना, सुनना, सोचना, समझना इत्यादि।

अफ़्आल दिमाग़ियह्-अ० मास्तिष्क क्रियाएं, दिमाग़ी काम। जैसे—विवेक, बिचार इत्यादि।

अफ़्आल नफ़्सानिय्यह्-अ० मानसिक क्रियाएं वे क्रियाएं जो मानसिक शक्तियों द्वारा प्रगट होती हैं। अस्तु, पञ्च ज्ञानेन्द्रियों की क्रियाएं, यथा—देखना, सुनना, स्वाद लेना, स्पर्श करना और सूंघना, आदि और अन्तःकरण चतुष्टय की क्रियाएं (हवास ख़म्सह् बातनी के अफ़आल), जैसे—सोचना, स्मरण रखना और बिचार करना आदि इसी के आधीन हैं।

अफ़्आल बसीतह्-अ० अफ़्आल मुफ़रिदह्, अमिश्रित क्रियाएं, सामान्य क्रियाएं।

अफ़्आल मुफ़्रिदह्-अ० साधारण क्रियाएं जो केवल एक ही शक्ति द्वारा प्रगट हों। जैसे—चाक्षुषी, जो दृष्टि शक्ति द्वारा प्रगट होती है और श्रावण क्रियाएं जो श्रवण शक्ति द्वारा उद्भूत होती है।

अफ़्आल मुरक्कबह्-अ० संयुक्त क्रियाएं जो दो अथवा अधिक शक्तियों द्वारा उद्भूत हो, जैसे—ग्रास, गिलन, जो कंठ की गिलन शक्ति तथा आमाशय की आकर्षण शक्ति द्वारा सम्पादित होती है।

अफ़आल हैवानिय्यह्-अ० प्राण शक्ति सम्बन्धी क्रियाएं जो प्राणशक्ति द्वारा प्रगट हों, जैसे—हार्दिक एवं धामनिक गति प्रभृति।

अफ़्आलुल् अद्वियह्-अ० (१) औषध कार्य विज्ञान, द्रव्य गुण-शास्त्र। (२) प्रभाव, गुण-धर्म। फॉर्माकोलॉजी (Pharmacology) -इं०।

अफ़ऊ़मा-अ० चक्षु क्षत। आँख का एक प्रकार का भयानक क्षत।

अफ़्क-अ० ख़त्नह् करना (मुसलमानों के यहां यह एक धार्मिक रसम है जिसमें बच्चे की शिश्नाग्र त्वचा काटी जाती है)। सर्कमसिज़न (Circumcision)-इं०।

अफ़्कल-अ० झुण्ड, समाज। तिब की परिभाषा में "कम्पन, कंप-कंपो" को कहते हैं। राइगर (Rigor)-इं०।

अफ़्कानह्-अ० अपूर्ण शिशु (भ्रूण) जो माता के उदर से गिर पड़े।

अफ़्त़स-अ० चपटी नासिका वाला। (Flat nosed)

अफ़्त़ह-अ० चौंड़ी नासिका वाला। (Broad nosed)

अफ़्तीऊ़स, अफ़्तीक़्स, अफ़्तीऊ़स -यु० नाइबह्। तिब की परिभाषा में राजयक्ष्मा (तपेदिक) को कहते हैं। हेक्टिक फीवर (Hectic Fever)-इं०।

अफ्तीमून-अ० [यू० एपिथिमून] हि० संज्ञा पु० अकासबेल विलायती, अमरबेल विलायती-हिं०। कस्क्युटा एपिथिमम् (Cuscuta Epythmum, *Linn*)-ले०। दी लेसर डॉडर The Lesser Dodder-इं०। सज्रतुज़्ज़-बअ्, सवउ़श्श् ई़र-अ०। अफ्तीमूने विलायती फा०। शियून-तु०।

(*N. O. Convalvulaceæ*)

उत्पत्ति-स्थान—युरोप, पश्चिम एवं मध्य एशिया और फारस। नोट—इसमें तथा भारतीय अकाशबेल में सिवाय स्थान भेद के और कोई अन्तर नहीं है। अतः इसके वानस्पतिक वर्णन आदि के लिये देखो—आकाशबेल।

रासायनिक संगठन—क्वरसेटीन (Quercetin) राल, एक क्षारीय सत्व तथा कस्क्युटीन (Cuscutine)। फा० इं० २ भा० पृ० ४५७),

इतिहास—दीसकुरीदूस (Dioscorides) ने इस नाम के जिस पौधे का वर्णन किया है वह अस्पष्ट है। प्लाइनी का वर्णन उससे बहुत कुछ स्पष्ट है। भारतवर्ष में जो औषधि अत्फीमून नाम से विकती है उसका आयात वहां फारस से होता है। यह सम्भवतः कस्क्यूटा यूरोपिया (Cuscuta Europea, *Linn*) की ही एक बड़ी जाति मालूम होती है, जिसकी जन्मभूमि युरोप, पश्चिम तथा मध्य एशिया है।

प्रकृति—तीसरी कक्षा में उष्ण और प्रथम में रूक्ष है। हानिकर्त्ता—उष्ण व पित्त प्रकृति वालों को एवं युवा पुरुषों को यह मूर्च्छा और अत्यन्त तृषाजनक है। दर्पघ्न—रुब्ब (घन सत्व) सेब व अनार या शर्बत संदल और केशर। कतीरा एवं रोगन बादाम में मलने से इसके अवगुण दूर हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त यह रूक्षता उत्पन्न करता है, उक्त विकार के शमनार्थ इसको किसी आर्द्रताजनक द्रव्य जैसे गुलबनफ्शहू या गाबजुबान के साथ मिला कर देना चाहिये, कोई कोई कहते हैं कि फुफ्फुस के लिये भी अहितकर है। उसके दूर करने के लिए इसको समग अरबी (बबूर निर्यास) वा कतीरा के साथ प्रयोग करना चाहिये। प्रतिनिधि—लाजवर्द

निशोथ पित्त पापड़ा, उस्तोखुद्दुस और विस्फाइज मात्रा—६ मा० से १ वा १॥ तो० तक। क्वाथ में साधारणतः यह ६ मा० से १ तो० तक व्यवहार में आता हैं और इसको पोटली में बांधकर डाला जाता है। एक या दो जोश देकर पोटली को निकाल लेना चाहिये।

गुण, कर्म, प्रयोग—अफ्तीमून अपनी उष्णता व रूक्षताके कारण आध्मान को दूर करता है। अधेड़ और वृद्ध मनुष्यों के अनुकूल है। क्योंकि उनकी प्रकृति को साम्यावस्था पर लाता है। सौदावी (वातज) व्याधियो को दूर करता और सौदा (वात) एवं बलगम (श्लेष्म।) के दस्त लाता है। अतएव सूगी और मालीखौलिया के लिये उपयोगी है तथा अपनी उष्णता व रूक्षता के कारण युवाओं और उष्ण प्रकृति वालों में तृषा उत्पन्न करता है। यह उनमें मुखशोष उत्पन्न करता है। इस लिये इसके साथ मुलहठी, वनप्रशह, और मधुरवःताद तेल के समान तरी पहुचानेवाली वस्तुएँ मिलानी चाहिये। (त० न०)

यह शोथलयकर्त्ता, रोधोद्घाटक, प्रायः मस्तिष्क रोगोंको लाभप्रद, रक्तशोधक और प्रायःत्वग् रोगो को लाभप्रद है। प्लीहा वृद्धि में इसका प्रलेप लाभदायक है।

इसको साधारणतः माउज्जुब्नके साथ या दूध में क्वथित कर उस दूध का प्रयोग कराया जाता है, इसे बायुनिःसारक भी बतलाया जाता है तथा अङ्गमर्दप्रशमन रूप से इसका स्थानिक उपयोग होता है, मख्जनुल् अद्वियह में इसके गुण तथा उपयोग का सविस्तार वर्णन आया है, उसका सारांश ऊपर दे दिया गया है, विस्तार भय से उन सबको यहां स्थान नही दिया गया। नव्य चिकित्साप्रणाली में विभिन्न प्रकार के अफ्तीमून में से सम्प्रति किसी का प्रयोग नही होता।

कशूस (अफ्तीमून बीज)

कुशूस. अकशूस. कुशूस। वज्जुल्कुशूस } —अ० कसूस, अमरलता के बीज=हिं०, उ०। तुख्मे कसूस, तुख्मे बर्श—फा०। अरबी कुशूस से ही मध्यकालीन लेखकों का लेटिन पद कस्क्युटा (Cuscuta) व्युत्पन्न है।

नोट—यह अकाशवेल का पर्यायवाची शब्द है, परन्तु भारतीय बाजारों में कसूस अफ्तीमून (फारसी) के बीज के लिए प्रयोग में आता है।

वर्णन—इसके बीज में उस पौधे के क्षुद्र एवं आयताकार पत्र तथा कण्टक मिले होते हैं जिस पर कि अफ्तीमून उत्पन्न हुआ होता है और उस पौधे के कांड के कुछ भाग एवं पुष्प भी मिले जुले पाये जाते है, बीज चार, हलके भूरे रङ्ग के, एक ओर उन्नतोदर और दूसरी ओर नतोदर, लगभग मूलक बीजाकार (मूली के बीज इतने बड़े) के गोलाकार ढोंढ से आवृत्त होते हैं। इसका स्वाद—तिक्त होता है।

नोट—मीरमुहम्मद हुसेन इस औषधि का भारतीय आकाशवेल से समानता दिखलाकर लिखते है कि यह पीत वर्ण का होता है और कँटीले एवं अन्य प्रकार के पौधों पर उगता है। इसमें बहुत सूक्ष्म, श्वेताभायुक्त पुष्प आते है। बीज मूलक बीज की अपेक्षा लघु लगभग गोल और लालिमायुक्त पीतवर्ण के होते है, इसके गुण अफ्तीमून के सदृश वर्णन किए गए है।

रसायननिक संगठन—क्वरसेटीन (Quercetin) के अतिरिक्त ग्ल्युकोसाइडल रेजिन, एक क्षारीय सत्व; एक कषाय पदार्थ, मोम और तैल।

प्रकृति—उष्ण व रूक्ष।

हानिकर्त्ता—प्लीहा तथा फुफ्फुस को।

दर्पघ्न—सिकजवीज, शहद तथा कासनी के बीज।

प्रतिनिधि—अफ्सन्तीन व बादरूज।

मात्रा—७ मा० (शर्बत)।

गुण, कर्म, प्रयोग—माद्दा से शुद्ध करता और आमाशय व आंत्र को खोलता है। दोषिक ज्वरों को लाभप्रद है, और खूब पेशाब लाता है तथा उत्तम स्वेदक व रजःप्रवर्तक है, दुग्धवर्द्धक तथा प्रकृति को मृदुकर्त्ता और मलों का प्रवर्तक है। निर्विषैल।

औषध-निर्माण— इत्रीफल, वटिकाएँ, चूर्ण, सिकंजबीज, अर्क, मअ्जून, क्वाथ इत्यादि की शकल में इसके बहुशःमिश्रण है।

अफ्दअ-अ० जिसका टखना या पहुँचा भीतर को मुड़ा हुआ हो।

अफ्दज-अ० एक अप्रसिद्ध औषध है।

अन्फ-अ० मास्तिष्क दौर्बल्य, बुद्धिहीनता।

अन्फान-फा० फरासियून। See- Farasiyun।

अन्फ़ीकून-यु० एक बूटी है जो गेहूँ के तथा अन्य खेतों में उत्पन्न होती है, इसके पत्ते तितली (सुदाब) के पत्तों के समान होते हैं।

अन्फीन-रू० फर्फ़यून अ०। सेहुँड़, थूहर। (Euphorbium)

अफ़िफ़ऊन-मला० } अफीम।
अफ़्फ़ीनी-कना० को० } (Opium)
अफ्यून-अ० कृ०, अ० } इ० मे० मे०।
स० फा० इं०। देखो-पोस्ता।

अफ्यून आबकारी-अ० ठेका की अफीम। इसके बर्ताकार टुकड़े होते हैं और भारतवर्ष में इसकी बिक्री होती है।

अफ्यून ईरानी-अ० ईरान की अफीम।

अफ्यून का पलस्तर-अफीम का पलस्तर (Opium plaster) अफीम का बारीक चूर्ण १ आउंस (२॥ तो०) रेजिन प्लास्टर ६ आउंस (२२॥ तो०), रेजिन प्लास्टर को बाटरवथ (जलकुण्ड) के द्वारा पिघला कर इसमें अफीम धीरे धीरे मिलाए। शक्ति—१० भाग में १ भाग अफीम। प्रभाव व प्रयोग—वेदना शमनार्थ इसको स्थानीय रूप से उपयोग में लाते हैं।

अफ्यून काहू-फा० देखो—लैक्टयुकेरिअम् (Lactucarium),

अफ्यून कुस्तुन्तुनियह्-अ० कुस्तुन्तुनिया की अफीम।

अफ्यूनचीनी-अ० चीन देशीय अफीम (China opium)। देखो अफीम।

अफ्यून जखीरह्-अ० गोले की अफीम। यह भारतीय अफीम का एक भेद है जो चीन देश को भेजा जाता है। देखो—अफीम।

अफ्यून तुर्की-अ० अफ्यून स्मर्ना। देखो—अफीम।

अफ्यून मुह्म्मस-फा० भुनी हुई अफीम। इसके भूनने की विधि "तह्मीस" में देखो।

अफ़्यून मुदब्बर-फा० अफीम को गुलाब जल में भिगोकर छानें, पुनः इतना पकाएँ कि गोली बाँधने योग्य हो जाय। आयुर्वेदिक विधि के लिये देखो—पोस्ता।

अफ़्यून स्मर्ना-फा० अफ्यून तुर्की, एशिया कॉचक की अफीम, Turkey opium, Smyrna (Levant) opium इसके टुकड़े चौथाई आउन्स से लेकर अर्ध पाउण्ड तक भारी होते हैं जिन पर पोस्ते के पत्ते लिपटे हुये और उन पर चूका बीज छिड़के हुये होते हैं।

अफ्यून हिन्दी-फा० सरकारी अफीम। यह तीन प्रकार की होती है, (१) गोले की अफीम, (२) अफ्यून आबकारी और (३) औषधीय अफीम इसकी छोटी २ डलियां अथवा चूर्ण होता है। यह पटना में बनता है। इनके अतिरिक्त अफ्यून मिश्री, युनानी, अंगरेजी, जर्मनी और फ्रांसीसी भी होते हैं।

अफ्यूर-यु० बीज (Seed)

अफ्यूर सफ़्साफ़न-यु० तुख्म खुब्बाजी, See- khubbazi

अफ्यूस-यु० जंगली मूली (wild radish)

अफ़्ज-अ० जिसके अग्र दन्त बाहर निकले हुये हों।

अफ़्ज़ी-अ० कृ० (अफ़्ज़ी से), मिश्र के लोग उपदंश रोग के लिये बोलते हैं। (Syphilis)

अफ़्ज़म-अ० पोपला, जिसके दाँत टूट गये हों।

अफ़्ज़ास्यून-यु० विषखपरा (हिन्दकूकी), पुनर्नवा (Boerhavia Diffusa)

अफ़ीक़-अ० १७ से २० औंकियह् तक का माप या वजन (=४७ तो० ६ मा०)।

अफ़ीकन ऐरो पाइज़न-इ० स्ट्रोफैन्थस (Strophanthus)

अफ़ीकी ज़हर पैकाँ-यु० (Strychnos Bordean)

अफ़ीदस-यु० इज़खिर। See Izkhir

अफ़ीरमूस-अ० स्तत शिश्न प्रहर्षण अर्थात् बिना कामेच्छा के भी सदा शिश्न का प्रहृष्ट (दृढ़ उत्तेजित) रहना। देखो—पर्सीमूस। प्रायापिज़्म (Priapism)-इं०।

अफ़ूदीजान-यु० मिट्टी भेद। (A kind of earth)

अफ़ूसालीस } -यु० चन्द्रकान्त (हजुल कुमर)
अफ़ूसाल्यूस }

एक प्रकार का पत्थर है। (A kind of stone)

अफ़लज-अ० वह मनुष्य जिसका निम्न ओष्ठ फटा हुआ हो अर्थात् जिसके अधः ओष्ठ में चीरा पड़ी हो।

अफ़्लुह्- } अ० फूल, फिरंज़ी पुष्प। ये रक्त
फ़्लुह्- } राई के समान बीज हैं अर्थात् एक प्रकार के पीत बीज होते हैं, सर्वोत्तम वे होते हैं जिनको हाथ में मलने से वेद की गंध आए। इनका स्वाद तिक्त होता है। ये प्रायः इत्रों में प्रयुक्त होते हैं। मद्य जून आदि में भी डाले जाते हैं। उद्भवस्थान भारतवर्ष।

अफ़लातन-अ० यु० मुक़्ल, मुक़्ले, अर्क़क़। गूगल -हि०, द०। गुग्गुलुः-सं०। (Balsamodendron agallcha, W. & A. (Resin of Bdellium) स० फा० इं०।

अफ़्लातून-यु० } प्लेटो Plato-इं०। यूनानी
फ़्लातुन०अ० } भाषा में अफ़्लातून का अर्थ प्रकाण्ड विद्वान है। यह एक प्रख्यात हकीम थे। आपका जन्म ईसवी सन् से ४२७ वर्ष पूर्व एथेन्स (यूनान की राजधानी) नगर में हुआ। आपके पिता यूनान के प्रतिष्ठित व्यक्तियों तथा हकीम अस्क्लीपियूस (Asclepios) की सन्तानों में से थे। अपने काल के आप प्रसिद्ध दार्शनिक और चिकित्साशास्त्र के प्रमुख एवं कुशल पंडित थे। आपको रसितशास्त्र से भी बहुत प्रेम था। आप सुकरात के अनुयायी और अरस्तू के गुरू थे। ईसवी सन् से ३४७ वर्ष पूर्व एकासी वर्ष की अवस्था में आपका देहांत हुआ। आपने अनेक ग्रन्थों की रचना की जिनमें से कई एक आज भी उपलब्ध हैं।

अफ़्लार्तस-यु० छोटी माई का वृक्ष, फ़रांकवृक्ष। Tamarix Orientalis, *Vahl (Galls of*-Tamarix Galls)

अफ़्लासून-यु० मूली का तैल। (Radish oil)

अफ़्लीकान } -अ० (१) चिबुक की दोनों अस्थियों
अफ़ीकान } के किनारे जो मिल गये हैं। (२) कण्ठ में कण्ठे के पास जो मांस के दो लोथड़े हैं।

अफ़्लीज-अ० पक्षाघात का रोगी, फ़ालिज का रोगी, (Paralytic)

अफ़्लूनिया } -अ० एक रूमी जून का नाम है जो
फ़्लूनिया } अपने रूमी आविष्कर्ता हकीम अफ़्लून के नाम से प्रसिद्ध है, यह वेदना नाशक है।

अफ़्वात-अ० अंगुलियों के बीच की दूरी। (Distance between fingers)

अफ़्वाफ़-अ० (व० व०), फ़ौफ़ (ए० व०) नखों के किनारों के श्वेत बिन्दु।

अफ़्वोलून-बर० बरमेंह (एक अप्रसिद्ध वृक्ष) (An unimportant tree)

अफ़्शर्नीकी-यु० शुकाई (भा० बाजा०) The herb (See-shukai)

अफ़्शसीकी-फा० अज्ञात है।

अफ्शुरज } —अ० अफ्शुरह् या अफ्शुर्दह् का अ०
अफ्शुरूज }

कृ० पद है। जिसका अर्थ ताजा फल अथवा वनस्पतियों का निचोड़, अर्थात् निचोड़ा हुआ रस स्वरस अथवा अर्क होता है।

अफ्शुरह्—फा० वस्तुतः "अफ्शुर्दह्" है। पर प्रयोगाधिक्य के कारण "अफ्शुरह्" हो गया है। फलों का निचोड़ा हुआ जल। juice (Succus)

अफ्शुर्दह्—फा० रस, स्वरस, निचोड़-हिं०। juice (Succus)

अफ्शुर्दहे बङ्क-फा० अजवाइन खुरासानी का रस। (Juice of Hyoscyamus)

अफ्शुर्दहे शौकरान—फा० कोनाइम अर्थात् शौकरान का रस। (Juice of conium)

अफ्स—अ० माजूफल माफल-हिं०। मायी, मायिका -सं०। Galls (Galla)

अफ्सन्तीन—अ०, रू०, यू० (हिं० पु०) आर्टिमिसिया ऐब्सिन्थियम् Artemisia Absinthium *Linn* एब्सिन्थियम् वल्गेरी Absinthium Vulgare, Coertn, आर्टीमिसिया आफिशिनल Artemisia officinal; *Lam*, आर्टिमिसिया Artemisia (शुष्क क्षुप)-ले०। वर्म वुड Worm Wood, मग-वर्ट Mug-wort दी एब्सिन्थ (The absinth)-इं०। खतरक़-अ०। ऐप्सिन्थियून (Apsinthion) यू०। मूय व खुशह्, मर्वह्—फा०। विलायती अफसन्तीन—हिं०, द०। (पार्वतीय अफसन्तीन) खल, (बुरे प्रकार का) वसीह्—मिश्र०।

मिश्र वा सेवती वर्ग

(*N. O. Compositœ*)

उत्पत्तिस्थान—उत्तरी अफरीका, दक्षिण अमेरिका, यूरुप के कतिपय पार्वतीय प्रदेश, एशिया में साइबेरिया मंगोलिया, खुरासन और भारतवर्ष के कतिपय पर्व्वतीय प्रदेश, काशमीर तथा नैपाल इत्यादि।

वानस्पतिक वर्णन—यह शीह् वा दोना के प्रकार की एक बूटी है। कांड-तृण कांडवत् सरल एवं शाखामय होता है। शाखा-श्वेत लोमों से आवृत होता है। शाखा पर असंख्य पत्र लगे होते हैं। पत्र दोनों ओर रेशमवत् लोमोंसे युक्त होने के कारण रजत वर्ण के और लगभग २ इंचदीर्घ होते हैं। पुष्प सूक्ष्म, पीताभ श्वेत और गुलेबाबूना के समान होता है, जिसके मध्यमें एक प्रकार का पीलापन होता है। इसमें छोटे २ गोल दाने अर्थात् फल लगते हैं जिनके भीतर बारीक बीज भरे होते हैं। इसके अनेक भेद हैं जिनका वर्णन यथा स्थान होगा। गंध तीव्र एवं अग्राह्य और स्वाद अत्यन्त तिक्त होता है।

प्रयोगांश—इसके पत्र एव पुष्पमान शाखाएं औषध काय में आतीं है।

रासायनिक सघठन—इसमें १॥ प्रतिशत एक उड़नशील तेल जिसका सान्द्र भाग एब्सिन्थोल (Absinthol) कहलाता है। इसके अतिरिक्त इसमे एक रवादार (स्फटिकीय) सत्व जिसको एब्सिन्थीन (Absinthin) कहते हैं और ½ प्रतिशत एक तिक्त राल और ५ प्रतिशत एक हरित राल आदि पदार्थ होते हैं।

घुलन शीलता—ऐब्सिन्थीन (Absinthin) अत्यन्त कटु, श्वेत वा पीताभ धूसर वर्ण का एक ग्ल्युकोसाइड है जो मद्यसार (Alcohol) वा सम्मोहनी (Chloroform) में अत्यन्त बिलेय, किंतु ईथर तथा जल में अल्प बिलेय होता है। अफसंतीन के शीत कषाय (Infusion) को कषायीन द्वारा तल स्थायी करने से एब्सिन्थीन प्राप्त होता है।

संयोग विरुद्ध (Incompatibles) आयर्न सल्फास (हीरा कासीस), जिंक सल्फास (तूतिया श्वेत) प्लम्बाई एसीटास और अर्जेण्टाई नाइट्रास।

औषध-निर्माण-पौधा, १० से ६० ग्रेन। शीत कषाय—(१० में १), मात्रा-½ से १ आउंस। तरल सत्व—५ से ६० बूंद तक (पूर्ण वयस्क मात्रा) टिंक्चर=(८ में १), मात्रा आधा से १ ड्राम तक। तैल-मात्रा, आधा से ३ बूंद।

सुगन्धित मद्य—(एकफरासीसी मद्य जिस को वायनम ऐरोमैटिकम् एब्सिन्थियम् कहते हैं। इसमें मर्जोरम् अर्ज़ेलिका, एनिस प्रभृति सम्मिलित होते हैं) यह मस्तिष्कोत्तेजक है इसके अधिक सेवनसे ऐब्सिन्थिजम(Absinthism अर्थात् अफसंतीन द्वारा विषाक्तता उत्पन्नहो जाया करती है जिसके लक्षण निम्न हैं—

रोगी को कठिन गरमी मालूम होती है हृदय धड़कता है नाड़ी की गति तीव्र हो जाती है और श्वास जल्द आता है इत्यादि।

नोट—यूनानी चिकित्सा में यह तेल, मद्य, शर्बत अनुलेपन, अर्क, टिंक्चिया, क्वाथ तथा मश्जून प्रभृति मिश्रण रूपों में व्यवहृत होता है।

अफ संतीन के एलोपैथिक (डाक्टरी) चिकित्सा में व्यवहृत होने वाले मिश्रण—

(डाक्टरी में से मिश्रण नोट ऑफिसल हैं)

(१) पल्विस एब्सिन्थियाई, मात्रा-२० से ३० ग्रेन
(२) एक्का ,, ,, १/२से १ औंस
(३) एक्सट्रैक्टम् ,, ,, ५ से १५ ग्रेन
(४) एक्सट्रैक्टम् एब्सिन्थियाई लिक्विडम्, मात्रा १५ से ४५ बुंद।
(५) इन्फ्युजन एब्सिन्थियाई ,, १ से २ औंस।
(६) ऑलियम ,, ,, १ से ५ बुंद।
(७) टिंक्चूरा ,, ,, १ से २ ड्राम।
(८) ,, कम्पाँजिटा ,, ,, १ से ४ ड्राम।

नोट—यद्यपि युरोप के कतिपय प्रदेशोंमें इस औषधि के उपर्युक्त मिश्रण प्रयोगमें लाए जातेहैं, तथापि अधिकतर इसका टिंक्चर ही व्यवहार में आताहै यह एक भाग वर्मबुड (अफसतीन)और १० भाग मद्यसार (६० ०/०) से निर्मितकिया जाता है।

अफ़संतीन के प्रभाव तथा उपयोग।

आयुर्वेद की दृष्टि से—

यद्यपि अफसंतीन और इसकी कतिपय जातियां भारतवर्ष में उत्पन्न होतीहैं और उनका वर्णन भी आयुर्वेदीय ग्रन्थों में आया है तथापि अफ्संतीन का वर्णन किसी भी आयुर्वेदीय ग्रन्थ में नहीं मिलता। इसकी अन्य जातियां निम्न हैं।

(१)दमनक वा दौना (Artemisia Scoparia or Indica) (२) नाग दमनी (ArteMisia Vulgaris)(३) शीह वा किर्माला (Artemisis Maritima) और (.) परदेशी दौना (Artemisia Persica) इत्यादि। इनके लिये उन उन नामों के अन्तर्गत वा आर्टिमिसिया देखो।

यूनानी मत से—

प्रकृति—यह प्रथम कक्षा में उष्ण और द्वितीय कक्षा में रूक्ष है। हानिकर्ता—मस्तिष्क व आमाशय को निर्बल करता, शिरः शूल उत्पन्न करता तथा रूक्षता की वृद्धि करता है। दर्पघ्न—अनीसून, मस्तगी, नीलोफ़र या शर्बत अनार। प्रतिनिधि—ग़ाफिस और असारून। मात्रा—३ मा० से ७ मा० तक। चूर्ण रूप में सामान्यतः ४-४॥ मा० और क्वाथ रूप में ६-७ मा० तक प्रयोग में ला सकते हैं।

गुण, कर्म, प्रयोग—(१) रोधोद्घाटक है क्योंकि इसमें कटुता और चरपराहठ है। (२) सकोचक है। क्योंकि इसमें कषायपन है: और कषायपन (या कब्ज़) पृथ्वी तत्व के कारण प्राप्त होता है और पृथ्वी तत्व रूक्ष होता है। इसके अतिरिक्त इसमें कटुता भी तीक्ष्ण एवं तीव्र पार्थिव तत्व ही से हुआ करती है और यह स्पष्ट है कि तीक्ष्ण पार्थिव तत्व के भीतर रूक्षता का प्राधान्य होता है। इसके अतिरिक्त इसके स्वाद में चरपराहट भी है और यह अग्नि तत्व के कारण हुआ करता है। इस कारण से भी यह रूक्ष है अतएव इससे यह निष्पन्न हुआ कि अफसंतीन दो प्रकार के सत्वों के योग द्वारा निर्मित हुआ है (१) उष्ण सत्व कटु सारक और चरपराहै और (२) दूसरा सत्व पार्थिव एवं संकोचक है। (३)मूत्र एवं आर्त्तवप्रवर्त्तक है। क्योंकि इसके भीतर तत्तीफ (मलशोधन, द्रवजनन) और तफ्तीह (अवरोध उद्घाटन) की शक्ति है। (४) पित्त को दस्तों के द्वारा विसर्जित करता है। क्योंकि इसमें जिला (कांतिकारिणी) शक्ति विद्यमान है जो इसके भीतर कड़ुआहट के कारण पाई जाती

है। स्तम्भिनी (क़ाबिज़ह) शक्ति भी इसमें वर्तमान है तो अवयवको आकुञ्चित एवं बलिष्ठ करती है। इससे कुव्वत दाफिअह् (प्रक्षेपक वा उत्सर्जन शक्ति) को शक्ति मिलती है और (दस्त आ जाते हैं) (५) इसका स्वरस आमाशय के लिये हानिकर है। क्योंकि यथार्थतः स्वरस अफसंतीन के अवयव से अधिक उष्ण एवं तीक्ष्ण होता है। इसलिये कि स्वरसमें पार्थिवांश जो कि शीतल होता है नहीं आता। अतएव इसका स्वरस अपनी तीक्ष्णता एवं उष्णता के कारण आमाशयिक द्वार को शक्ति प्रदान करता है बल्कि इसके जिर्म (फोक) में शेष रह जाता है और निचोड़े हुये रस में नहीं निकलता (६) हाँ स्वरस में अफसंतीन की अपेक्षा अधिकतर लयकारिणी (विलायक) तथा अवरोधोद्घटकीय शक्ति होती है जिसके कारण यह कामला (यर्कान) के लिये लाभदायक है। इसका जिर्म और इसका शर्बत आमाशय एवं यकृत को बलप्रद है। जिर्म के बल्य होने का कारण यह है कि उसके भीतर स्तम्भिनी (क़ाबिज़ह) शक्ति काफी होती है। अतएव वह प्रति दो अवयवों को शक्ति प्रदान करता है। शर्बत इसलिये बल्य है कि उसमें स्तंभक (क़ाबिज़ह) एवं सुगन्धित औषधियाँ सम्मिलित की जाती हैं उसमें क्षोभ एवं तीक्ष्णता भी नहीं होती शर्बत बनाने की कई विधियां हैं:— कोई इस प्रकार बनाता है।

अफसंतीन को अंगूर के शीरा में भिगो देते हैं। और तीन मास तक छोड़ रखते हैं और कोई इस तरह बनाता है कि अफसतीन को सुगन्धित दवाओं के साथ २ मास पर्यन्त अंगूर के शीरे में भिगो रखते हैं अतः यह शर्बत अपने स्तंभक एवं क्षोभ रहित सौरभ के कारण आमाशय और यकृत को शक्ति प्रदान करता है (१) अफसंतीन अर्श के लिये उपयोगी है। क्योंकि अर्श का रोग स्थल चूँकि मुख तथा आमाशय से दूर स्थिति है और वहाँ तक इसकी शक्ति निर्बल होकर पहुँचती है। इसलिए इसकी उष्णता वहाँ ऐसी न होगी कि रूक्षता को वृद्धि कर मस्सों को कठिन बना सके, प्रत्युत उस सूक्ष्म उष्मा के कारण तलयिन (मृदुता), तह्लील (विलेयता) और तस्खीन (गर्मी) प्राप्त होगी। (८) और अपनी तलतीफ (संशोधन वा द्रावण), तहलील (विलायन) और इद्रार (प्रवर्तन, रेचन) के कारण विषम ज्वरों को लाभदायक है। (९) इसके क्वाथ का वाष्प स्वेद (भपारा) करने से वर्णशूल प्रशमित होता है। क्यों कि यह वायु को जयकर्ता और श्लेष्मा को मृदु एवं लय करता है। और पैत्तिक दोषों को भी निकाल डालता है। (१०) चूंकि अफसन्तीन के भीतर कड़ुआहट है। अतः यह उदर की कृमियों को मार डालता है। (त० न०)

संक्षेप में यह बल्य, संकोचक, रोधोद्घाटक, संकोचक, प्रवर्तक वा रेचक, ज्वरघ्न, उदरकृमिनाशक, मस्तिष्कोत्तेजक और कीटाणु नाशक है। आमाशयावसान, आध्मानजन्य पाचन विकार, आन्त्रकृमि, पर्याय—ज्वर निवारण हेतु श्लेष्म स्राव, रजःरोध, रजः स्राव, शिरो रोग यथा शिरःशूल, पक्षाघात, कम्पन, अपस्मार, सिरचकराना, मालीखोलिया इत्यादि तथा कर्ण रोगों और यकृत एवं प्लीहा आदि रोगों में इसका व्यवहार होता है।

एलोपैथिक वा डाक्टरी मतानुसार

प्रभाव—अफसन्तीन (पौधा) तिक्त बल्य, सुगन्धित, आमाशय बलप्रद अर्थात् अग्निप्रदीपक ज्वरघ्न, कृमिघ्न (आन्त्रस्थ), मस्तिष्कोत्तेजक, रजः प्रवर्तक, अवरोधोद्घाटक, स्वेदक, पचननिवारक और किञ्चित् निद्राजनक है, (तैल) अधिक काल तक सेवन करने से यह निद्राजनक विष (Narcotic poison) है।

उपयोग—आमाशय बल्य रूप से इसको आमाशय की निर्बलता के कारण उत्पन्न अजीर्ण एवं आध्मानजन्य अजीर्ण में देते हैं। कृमिघ्न रूप से इसको केंचुओं (Round worms) और सूती कीड़ों (Thread worms) के निःसारण हेतु व्यवहार में लाते हैं। ज्वरघ्न रूप से इसको विषम ज्वरों (Intermittent fevers) में प्रयुक्त करते हैं। रजः प्रवर्तक

रूप से इसको रजः रोध तथा कष्टरज में देते हैं। मस्तिष्कोत्तेजक रूप से इसको अपस्मार और मस्तिष्क नैर्बल्य इत्यादि रोगों में देते हैं।

नोट—आमाशय तथा आन्त्र की प्रदाहावस्था में इसका उपयोग करना चाहिये।

अफ्सन्तीन को गरम सिरका में डुबोकर मोच आए हुये अथवा कुचल गए हुये स्थान की चारों ओर बाँधते हैं, आक्षेप निरोध के लिये भी इस पौधे के कुचल कर निकाले हुये रस को सिर में लगाते हैं। शिरोवेदना में सिर को तथा संधिवात और आमवात में संधियों को पूर्वोक्त विधि द्वारा सेंकते भी है। एबिसन्थियम् सिक्र आमाशय बल-प्रद है। यह क्षुधा की वृद्धि करता है और पाचन शक्ति को बढ़ाता है। अजीर्ण रोग में इसका उप-योग करते हैं। वह योषापस्मार (Hysteria) आक्षेप विकार यथा, अपस्मार, वात तान्त्रिक क्षोभ वात-तन्तुओं की निर्बलता (वात नैर्बल्य) में तथा मानसिक भ्रांति में भी व्यवहृत होता है। कृमिघ्न प्रभाव के लिये इसके शीत कषाय की वस्ति देते हैं। कृमिनिस्सारक रूप से इस पौधे का तीक्ष्ण क्वाथ प्रयुक्त होता है। बालकों की शीतला में इसका मन्द क्वाथ देते हैं। त्वग् रोगों एवं दुष्ट व्रणों में टकोर रूप से इसका बहिर प्रयोग होता है। (इ० मे० मे० पृ० ८५—डां० वदकारणी कृत। पी० वी० एम०)।

सिकोना के दर्याफ्त से पूर्व विषमज्वरों में इसका अत्यधिक उपयोग होता था। वातसंस्थान पर इसका सशक्त प्रभाव होता है! शिरःशूल एवं इसके अन्य वात संबन्धी विकारों को उत्पन्न करने वाली प्रवृत्ति से काश्मीर तथा लेदक के यात्री भली प्रकार परिचित हैं, क्योंकि जब वे देश के उस विस्तृत भाग से जो उक्त पौधे से आच्छादित है, यात्रा करते हैं, तब उनको यह महान कष्ट सहन करना पड़ता। (वैट्स डिक्-शनरी १ खं० ३२४ पृ०)

अफ् सन्तीनुल् बहर—अ० (Artemisia Maritima *Linn*) शीह, शरीफून,—अ०। दर्मनह्-फा०। किर्माला-हिं०।

अफ् सन्तीने हिन्दी—फा० (Artemisia Indica, *Willd*) ग्रन्थिपर्णी—सं०।

अफ़्सीह—अ० वलूत भेद। See-Balu*ta*,

अफ् सुल् अबैज—अ० माजूफल। (White galls),

अफ् सुल् अखजर—अ० माजूफल मायाफल, (Green galls),

अफ्सुल अजक—अ० नील मांजूफल (Blue galls)

अफ् सुल् अस्वद्—अ० श्याम माजूफल (मायाफल) (Black galls),

अफ सुल् वलूत—अ० माजूफल, मायाफल—हिं। Ga ls (Galla),

अवका—हिं० संज्ञा पु० [सं० अवका=सेवार] एक पौधा जिसके डंठल की छाल रेशेदार होती है और रस्सी बनाने के काम आती है। खूदड़ का मैनिला पेपर बनता है। यह पौधा फिलिपाइन देश का है। अब इसकी खेती अण्डमन टापू और आराकान की पहाड़ियों में भी होती है। इसकी खेती इस प्रकार की जाती है। इसकी जड़ से पेड़ के चारों ओर पौधे भूफोड़ निकलते है। जब वे पौधे तीन तीन फुट के हो जाते है तब उन्हें उखाड़ कर खेतों में ८।९ फुट की दूरी पर लगाते है। तीन चार साल में इसकी फसल तैयार होती है; तब इसे एक एक फुट ऊपर से काट लेते हैं। ढन्ठलों से इसकी छाल निकाल ली जाती है और साफ करके रस्सी आदि बनाने के काम में आती है। हिं० श० सा०।

अवकेशी—हिं०वि० अफल, फलरहित, बाँझ। Without fruit barren (A tree)

अवखरा—हिं० संज्ञा पु० [अ०] भाप। वाष्प। (Vapour).

अवखोरा—हिं० संज्ञा पु० दे०—आवखोरा।

अब्ज— } —अ० अभ्यन्तर जानु, घुटने का पिछला
मावज— } या मध्य रेखा की ओर का भाग या तल

पोप्लीज (poples)-इं०।

अबटन—हिं० संज्ञा पु० दे०—इबटन।

अवद-अ० एक सुगंधित पौधा है। (Anaromatic plant)

अब-दातक-सं० लामज्जकम्। (Andropogon laniger)

अबद्ध-हिं० वि० [सं०] जो बँधा न हो। मुक्त।

अबनी-हिं० स्त्री० धरती, पृथ्वी। (Theearth-,the world),

अबब-अ० काकनज भेद जिसको हुब्बुल्लहु कहते हैं, (२) नकब्बा Physicnut (Jatropha glauca)। इसके बीज से एकप्रकार का उत्तेजक तैल प्राप्त होता है जो आमवात तथा पक्षाघात के लिए लाभदायक है, इं० हैं० गा०।

अबमकाजी-तु० खुब्बाजी। See khubbazi,

अबयी-मह०महाशिब्बी-सं०। श्वेत सेन-हिं०। (Canav allia ensiformis)

अबरक-हिं० संज्ञा पु० [सं० अभ्रकम्] (१) Talc (mica) अभ्रक, भोदल। (२) एक प्रकार का पत्थर जो खान से निकलता है और बरतन बनाने के काम में आता है। यह बहुत चिकना होता है, इसकी बुकनी चीजों के चमकने के लिये पालिस वा रौगन बनाने के काम में आती है।

अबरक भस्म-हिं० स्त्री० अभ्रक की भस्म। (Calcinated talc)

अबरकलया-यु० पालक। (Spinace aoleracea),

अबरख-हिं० संज्ञा पु० अभ्रक, भोडल। Talc (Mica)

अबरञ्जमिश्क-अ० कृ० फ़रञ्जमिश्क-अ०। रामतुलसी-हिं०। Ocimum (gratissimum)

अबरन-हिं० वि० [सं० अवर्ण] बिना रूप रंग का वर्णशून्य।

अबरम्-सं० क्ली० अन्तर्वस्त्र। मे० रत्रिकं।

अबरस-हिं० संज्ञा पु० [फा०] (१) घोड़े का एक रंग जो सब्जे से कुछ खुलता हुआ सफेद होता है। (२) घोड़ा जिसका सब्जे से कुछ खुलता हुआ सफेद रंग हो। वि० सब्जे से कुछ खुलता हुआ सफेद रंग का।

अबराबृत्तिः- सं० स्त्री० एक अम्ल फल है। (An acidnous fruit)

अबरी-हिं० संज्ञा स्त्री० [फा०] पीले रंग का एक पत्थर। जैसलमेरी।

अबर्क-अ० अबरक या शफ़्नीन दरियाई (एक जानवर है या कोई फारसी दवा है।

अबर्कलसा-यु०
अब्रअकलसा-यु० } भयानक मृगी। युकुलस यूनान का एक अन्यायी तथा हिंसक राजा था। इस रोग का नाम अबरकलसा उसी के नाम पर रक्खा गया है क्योंकि यह भी एक भयन्कर रोग है एपिलेप्सिया ग्रेविअर (Epilepsia Gravior)

अबर्ख-अबर्क, अभ्रक। Talc(Mica)

अबर्दान-अ० सुबह और शाम का समय। प्रातः सांयकाल (Morning & the evening)

अबर्नी-रू० लोफ (जिसे हिंदी में मुश्तकन्द कहतेहैं यह एक वनस्पति है)।

अबर्नेथीज़ पिल्स-इं०मर्करीपिल ३ ग्रेन, कम्पाउण्ड एक्स टैक्टआंफ कॉलोसिन्थ २ ग्रेन दोनों की एक गोली बनाले और ऐसी एक गोली रात को सोते समय दें। यह उस कब्ज रोग में जिसमें यकृत विकार भी हो अत्यन्त लाभदायक है।

अबर्व्यून-यु० फर्व्यून अ०। सेहुड़, थूहर। (Euphorbium)

अबर्स-यु० गुले सौसन। See Sousana

अबलख-हिं० वि० [सं० अवलक्ष=श्वेत] कबरा। दो रंगा। सफेद और काला अथवा सफेद और लाल रंग का।

अबलखा-हिं० संज्ञा स्त्री०[सं० अवलक्ष] एक पक्षी जिसका शरीर काला होता है, केवल पेट सफेद होता है इसके पैर सफेदी लिये होते हैं चोंच का रंग नारंगी होता है यह संयुक्त प्रान्त बिहार और बंगाल में होता है और पत्तियों और पौधों का

घोंसला बनाता है। एक बार में ४-५ अण्डे देता है इसकी लम्बाई ६ इंच होती है।

अवलः-सं० पु० वरुण वृक्ष वरना। A tree (Capparis Trifoliata)

अवलहह्-
खशिनुस्सात- } अ० भर्राए हुए शब्द वाला, बैठे हुये शब्द वाला। स्ट्रिड्युलस (Stridulous) इं०।

अवलासः-सं० पु० (१) कफकारी (२) बल नाशक अथर्व० सू०। २। १८। का० ८।

अवलासेन-हिं० संज्ञा पु० कामदेव। (Cupid)

अवाखिस-अ० पोर्वे पर्ब्ब-सं०। डिजिट्स (Digits) इं०।

अवाजीर-
तवाबिल- } अ० अब्जार का (ब० व०) और अब्जार है बहुबचन बज्र का जिसका अर्थ बीज है लेकिन तिब्ब की परिभाषा में अब्जार या अवाजीरउन बीजों वा तर वा शुष्क बीजों को कहते हैं जो आहार में मसाला रूप से उसको स्वादिष्ट एवं सुगन्धयुक्त करने के लिये। डाले जाते हैं।

उदाहरणार्थ—जीरा, कालीमिर्च, लौंग, दाल दीनी, और धनियां प्रभृति। स्पाइसेज (Spices), सीजनिङ्ग्ज (Seasonings) इं०

अबाती-हि० बि० [सं० अ=नहीं+बात=वायु] (१) विना बायु का। (२) जिसे बायु न हिलाती हो

अबानस-यु० आबनूस। See abanus

अबाबील-हिं० संज्ञा स्त्री० [अ०] स्वालो (Swallow) इं० काले रंग की एक चिड़िया। इसकी छातीका रंग कुछ खुलता होता है। पैर इसके बहुत छोटे होते हैं जिस कारण यह बैठ नहीं सकती और दिन भर आकाश में बहुत ऊपर झुंड के साथ उड़ती रहती है यह पृथ्वी के सब देशों में होती है। इनके घोसले पुरानी दीवारो पर मिलते हैं। पर्याय—कृष्णा। कन्हैया। देब दिलाई। सयानी, सियाली, पित्त देबरी-हिं०। कफ अबाबील, खुत्ताफ (खुतातीफ-बहु०). अस्फूरुज्जनह्, ज़नीव-अ०। परसत्वक, फरसंग्रह, बाबुबानह्-फा०। शालीतून, खालीदूस-यु०। यु०। करला नफूख़ तु०। खजला वेल्मी०।

प्रकृति—इसका मांस तीसरी कक्षा के अव्वल मर्तबा में उष्ण व रूक्ष है। भस्म शीतल व रूक्ष होती है बिट् अत्यन्त उष्ण व रूक्ष होता है। रंग—स्वयं श्यामाभायुक्त धूसर और इसका मांस श्यामाभायुक्त होता है। स्वाद—अन्य पक्षियों के मांस के समान किंतुकुछ नमकीन। हानिकर्ता गर्भवती तथा उष्ण अर्थात् पित्त प्रकृति को। दर्पघ्न—वृत व दुग्ध एवं सर्दतर वस्तुएँ।

प्रतिनिधि—ग्रन्थों में इसकी प्रतिनिधि का वर्णन नहीं। किंतु, चक्षु रोगों में जतूका का मग्ज मुख्य कार्य—चक्षु रोगों के लिये अत्यन्त लाभदायक है और रक्ताल्पतानाशक है।

गुण कर्म प्रयोग—इसके मांस का कवाब अबरोद्धाटक और रक्ताल्पता एवं प्लीहा संम्बन्धी रोगों और वस्त्यश्मरी के लिये लाभदायक है। एक मिस्काल (४॥ मा०) की मात्रा में इसके शुष्क पिसे हुये चूर्ण को फांकना दृष्टिशक्तिवर्द्धक है। और दो दिरम नमक सूए खुनाक के लिए लाभदायक हैं इसकी भस्म का गंडूष वा शहद के साथ प्रलेप करना उपजिह्वा (कौवा) और कंठगत सम्पूर्ण व्याधियों को नष्ट करता है। इसके बच्चे की भस्म को रुधिर में मिलाकर अथवा इस का मस्तिष्क मधु में मिलाकर नेत्र में लगाना चक्षुष्य है और मोतिया विन्दु की आरम्भिक अवस्था में लाभप्रद है नाखूना फूली और सवल के लिये लामदायकहै। इसका ताजा रक्त अत्यन्त कांतिदायक एव त्वचागत चिन्हों का नाश करने वाला है। गो पित्त के साथ बालों को सफेद करता है इसके झोंज को जलाकर उसमें से एक मिसकाल (४॥ मा०) की मात्रा में पिलाने से वन्ध्यत्व नाश होता है और इसके पित्त का नस्य बालों को काला बनाता है परन्तु मुंह में दुग्ध रक्खें जिससे कि दांत काले नहीं। इसके नेत्र को चमेली के तेल में रगड़ कर पेडू पर लगाना बन्ध्यत्व के लिये परीक्षित है। म० अ०।

इसके शिर को जलाकर भस्म प्रस्तुतकर मद्य

में डाल दें। इससे नशा न होगी इसकी विष्ठा को श्वेत बालों पर लगाने से बाल काले हो जाते हैं यदि किसी के बाल असमय श्वेत हो गये हों तो इसके पित्त का नत्य देने से वे काले हो जाते हैं।

अबाबीलों में मिश्री अबाबील उत्तम होता है इनके अन्डे वल्य तथा कामोद्दीपक होते हैं। घोंसलों से कफे अबाबील प्राप्त होता है। इसको खानहे अबाबील और अबाबील मिश्री, मूए अबाबील और अबाबील की मस्ती कहते हैं इसकी प्रकृति उष्ण तथा रूक्षहै। यह अत्यन्त कामोद्दीपक शुक्रमेहघ्न, हृद्य और नाड़ियों को बल प्रदान करने वाला है। यह मुर्गे के खुले हुये चोंच के समान होता है। कोई सफेद रंग का और कोई एक वर्ण का होता है। सफेद रंग वाला शुद्ध पजाबी साखव मिश्री जैसा कठोर होता है, किंतु शुष्क होने पर सरलता से टूट जाता है।

योग—

(१) अबाबील के मांस को शुष्क करके चूर्ण करें और ४॥ मा० जल के साथ सेवन करे। गुण—दृष्टि शक्ति को अत्यन्त लाभ प्रद है, प्लीहा वृद्धि को लाभदायक और अश्मरीद्राबक है। यदि इसको ऋतुस्नाता स्त्री को खिलाया जाय तो सम्पूर्ण आयु भर रजः स्राव न होगा और न गर्भाधान होगा।

(२) अबाबील की विष्टा को शुष्क कर चूर्ण कर और जैतून के तेल में मिलाकर झाई तथा मुहासों पर लेप करने से लाभ होता है। गालों पर मलने से यह उसको सुर्ख करता है।

(३) अबाबील के शिर को शुद्ध मधु में मिलाकर नेत्र में लगाने से आरंभिक मोतियाबिंदु में लाभ होता है।

(४) अबाबील के हृदय को शुष्क करकेचूर्ण करे। इसमें सम भाग शर्करा योजित कर दुग्ध के साथ सेवन करने से कामोत्तेजक प्रभाव होता है।

(५) अबाबील के रुधिर को बिना सूचित किए स्त्री को खिलाने से कामावसान होता है।

अबाबूस-यु० मूली, मूलक। (Radish),

अबामरून-यु० चकोर (एक पक्षी है)। See-chakora,

अबार-अ० ऊँट, उष्ट्र। (A camel)

अबॉर्टिफशेएट-इं०, अबार्टिव-इं० } गर्भपात, गर्भशातक। See-गर्भपातक।

अबार्टिव पेपर कार्न्स-इं० पोंकल मिरी-हिं०, मह० पाइपर ट्रायोइकम् (Piper Trioicum) -ले०। इ० मे० मे०।

अबॉन ब्लैटटराइजर फ्लूजेल सेमेन-जर० मुचकुन्द-बं०, हिं०। (Pterospermum Acerifolium)। इं० मे० मे०।

अबार्शन-इं० गर्भपात, गर्भस्राव। (Miscarriage),

अबाल-हिं० वि० [सं०] (१) जो बालक न हो जवान। (२) पूर्ण, पूरा।

अबाली-हिं० संज्ञा स्त्री० [देश०] एक पक्षी जो उत्तरीय भारत और बम्बई प्रान्त तथा आसाम, चीन और श्याम में मिलता है। यह अपना घोसला घास या पर का बनाता है। वेंगनकुटी।

अबालुकः-सं० पु० पानीयालुक। रा० नि० व० ७। See Paniyaluh

अबास-अ० शेर, सिंह। (Lion)

अबासी-अ० जाती, गुलेअब्बासी। (Mirabilis jalapa)

अबिक्त-हिं० वि० गुप्त, अबोधनीय, अबोधगम्य। (Hidden, unintelligible)

अबिङ्-सिं० अफीम। (Opium) स० फा० इं०

अबिचल-हि० अचल. गतिशून्य अबिचल। (Motionless, Immovable)

अबिरञ्ज-अ० कृ० बिरञ्ज काबुली।

अबिरञ्जबीन-यु० शोकतुलूयहूद-अ०। एक कांटेदार वृक्ष है। (A spinoustree)

अबिरञ्जमुश्क-अ० कृ० फारञ्जमिश्क, रामतुलसी। (Ocimum gratissimum)

अ(इ)बुरत-अ० अश्रु, आंसू डबडबाना, आँसू बहना, रोने की हिचकी। टीयरिंग (Tearing)-इं०।

अविला-सं० स्त्री० मेषी। भेड़ी-हिं०। (A she-sheep)

अविशून-यु० रातीनज, राल, धूप। (Resin)

अविंघन-हिं० संज्ञा पु० [सं०] समुद्र। (Sea)

अविद्ध-हिं० वि० [सं० अविद्ध] अनवेधा। विना छिदा हुआ। देखो—अविद्ध।

अविद्धकर्णी-हिं० संज्ञा स्त्री० देखो अविद्धकर्णी

अविरल-हिं० वि० देखो —अविरल

अवीकमा-सूची- } अ० कनीनिका के वाह्य पटल का अण जो ऐसा प्रतीत होता है कि नेत्रके ऊपर एक छोटा सा सफेद ऊन (पश्मे सूफ) का टुकड़ा रक्खा है। इसी कारण इसको सूफी भी कहते हैं अरबर आँफ कॉर्निआ (Ulcer of cornea)

अवीज एक्सेलसा-ले० लालसिरस हिन्दी लाहुली, जाली (मारदारी) हिं०। मेमो०। इसका गोंद औषध तुल्य काम में आता है।

अवीज केनाडेन्सिस-ले० शूकरान। हेमलॉक (Hemlock) स्प्रूस (Spruce) इं०। See-Shukrana)

अवीजडर्यु मेसा-ले० चङ्गथासी धूप-नेपा०। तंगलिंग भूटा०। सेमडंग-लेप। प्रयोगांश—राल और गोंद। मे मो०।

अवीज खटरो-ले० रातियानज राल, धूप। (Resin)

अवीज द्राक्षा-सं० स्त्री० किशमिश। (Raisin)

अवीजबालसेमी-ले० बालसम।

अवीज वेन्विआना-ले० तालीसपत्र-हिं० (Himalayan Silver Fir)फा० इं० ३ भा०, मेमो०, इं० मे० मे०।

अवीज स्पिथिआना-ले० राव, सिरस-हिं०। रेवड़ी, वनलूदर पं०, हिं०। See-shirisha

अवीर्-अ० (१) शुद्ध ताजा रक्त। (Pure fresh blood)। रसायनी० पारद (Hydrargyrum)

अवीर-अ०, हिं० (१) अभ्रक (Talc)। (२) यौगिक सुगंधित चूर्ण (An aromatic compound Powder) कोई कोई भ्रमवश केशर को कहते हैं। स० फा० इं०।

अबीर-हिं० संज्ञा पु० [अ०][वि० अबीरी] (१) रंगीन बुकनी जिसे लोग होली के दिनों में अपने इष्ट मित्रों पर डालते हैं यह प्रायः लाल रंग की होती है और सिंघाड़े के आटे में हल्दी और चूना मिलाकर बनती है। अब अरारोट और विलायती बुकनियों से तैयार की जाती है। गुलाल।

(२) कहीं २ अभ्रक के चूर्ण को भी जिसे होली में लोग अपने इष्ट मित्रों के मुख पर मलते हैं अबीर कहते हैं। बुक्का।

(३) श्वेत रंग की सुगन्ध मिली बुकनी जो वल्लभ कुल के मन्दिरों में होली में उड़ाई जाती है।

अबीरी-हिं० वि० [अ०] अबीर के रंग का। कुछ कुछ स्याही लिये लाल रंग का। संज्ञा पु० अबीरी रंग।

अबीरमायह्-अ० एक सुगन्धित यौगिक औषध है जो चन्दन, गुलाब और कस्तूरी से बनाई जाती है

अबीरी-अ० हब्बुल आस, विलायती मेंहदी, वर्ग मोरद। (Myrtus Communis) मे० मो०।

अबीलस-सर्व- } अ० उदरच्छदा कला। ओमेण्टम (Omentum) एपिप्लून (Epiploon) इं०।

अबीलीभिया-अ० बुरे प्रकारकी मृगी जिसमें आरंभ ही से सम्पूर्ण शरीर में तनाव उपस्थित होता है बिपरीत इसके अन्य प्रकार की मृगी रोगमें तनाव मृगी के आधीन होता है। स्टेटस एपिलेप्टिकस (Status epilepticus) इं०।

अबीसह-अ० मत्तू या क़त् शुष्क।

अबुअमारह्-अ० एक शिकारी पक्षी है जो बाज से छोटा होता है, (चर्ग)।

अबुअरक अबुअराक } -यु० पीलू। Salvadora oleoides, *Dcne*-ले०। फा० इं० २ भा०।

अबुअलस-रू० गुलेख़ैरी, गुलेख़ैरू, गुलेख़ितमी।

एक पुष्प है जो रात्रि में पुष्पित होता है। (Althæa officinalis, *Linn*)

अबुअबारस–अ० जंगली गाजर, वन्यगाजर (Wild carrot)

अबुअश्जअ
अबुहरून
अबुसफर
अबुकअब
} –अ० ऊंट, उष्ट्र। केमल (Camel)–इं०।

अबुउमर–अ० पलंग–फ़ा०। चीता, तेंदुआ। (Tiger)

अबुउमरा–अ० चर्ग पक्षी। (A bird)

अबुउमरान–अ० दर्शन (एक पक्षी है) (A bird)

अबुउमरान मूसा बिन मैमून–अ० (Abu Umran Musa Ben Maimun or Maimunedes Rabbi Moses Bin Maimun) सन् पैदाइश ११३५ ई० और सन् मृत्यु १२०४ ई०। इन्होंने कई पुस्तकें, जैसे—किताबुस्समियात व तियर्याक़ात (अगदतन्त्र) आदि लिखी थी जिसके अनुवाद लैटिन तथा अंगरेजी में किए गए हैं।

अबुउमारह्–अ० एक शिकारी पक्षी है।

अबुकअ्ब–अ० ऊँट। (A camel)

अबुकल्मून–अ० गिरगिट। (Achameleon)

अबुकसीर–अ० एक पक्षी है। (Abird)

अबुकह्ला–अ० रतनजोत। (Alkanet)

अबुकानस–यु० एक बूटी की जड़ है जिससे वस्त्र प्रक्षालन किया जाता है।

अबुकुस्तुस–यु० एक वनस्पति है, जो मिश्र तथा शाम में फासूलरूमी के नाम से प्रसिद्ध है। यह अर्तनीसा की जड़ के समान होता है। इससे वस्त्र धोते हैं।

अबुखतार–अ० तीतर। A partridge (Perdix Francolinus)

अबुखलस
अबुखलसा
} –अ० रतनजोत (Alkanet)

अबुजन्दीक–अ० गिरगिट, गिरगिट। (A chameleon)

अबुजबाद–अ० गर्दभ, गदहा–हिं०। खर–फा०। (An ass)

अबुजरादह–अ० एक पक्षी है जो अराक और शाम होता है।

अबुजसान–अ० अज़दहा, अजगर। (The boa constrictor)

अबुजह्ल–अ० चीता। (Tiger)

अबुत्तिब–अ० प्रसिद्ध युनानी हकीम बुकरात का उपनाम है। फादर आफ मेडिसन (Father of medicine)–इं०।

नोट—बुकरात शब्द वस्तुतः हिब्बुकरात (Hippærate) था, किन्तु "ह" के गिर जाने से बुकरात रह गया, पर आंग्ल भाषा में अभी तक यही नाम हैं। देखो—बुकरात।

अबुदायत
अबुदाल
} –अ० गीदड़, शृगाल। A jackal (Canis aureus)

अबुनमामह–अ० हुदहुद (कठबढ़ई) (A bird)

अबुनस्रुल् फ़ाराबी–अ० अबुनस्र कन्नीत मुहम्मद बिन उदरनिअ, विनतर्ख़ान नाम था। यह खुरासान के फाराब प्रदेश के रहने वाले थे। प्रारम्भ में यह दमिश्क के एक बगीचे में माली का काम करते थे। पर स्वभावतः इनके हृदयमें विद्यासे प्रेम था। अतएव रात्रि में चौकीदारों के लालटेन की प्रकाश में ये पुस्तकों का अध्ययन किया करते थे ये अपने समय के अखंड दार्शनिक और संगीत के प्रमुख विद्वान थे। आपने १३ पुस्तकें लिखी हैं।

अबुनामून–यु० कुफ्रुलयहूद (A kind of stone) See–qafrul yahuda

अबुनास–अ० पोस्ता। (Papaver somniferum, *Roxb*)

अबुबकर इब्नबाजह्–अ० इब्नबाजह्। See–Ibna bajah

अबुबकर ज़करिया राज़ी–अ० ज़क्रिया राज़ी। See Zakriya razi

अबुबरा–अ० समूल (–र)। एक पक्षी है। (A bird called samula)

अबुवलिकया-यु० सार्वांगिक या व्यापक पक्षाघात। वह पक्षाघात जो मुखमण्डल के सिवाय सम्पूर्ण शरीर में हो। पक्षाघात, वातग्रस्तता। जेनरल पैरेलिसिस (General Paralysis) -इं०।

अबुमन्सूर-अ० अबुमन्सुर मुवफ्फिक बिन अली हरवी (abu mansur muwaffik bin Haravi) इनकी पुस्तक इल्मुस अद्-वियह् अपने समय की अत्यन्त विश्वसनीय एवं लाभदायी कृति है जिसमें बहुत सी भारतीय औषधों का वर्णन भी मौजूद है। इसमें लगभग ५०० औषधों का वर्णन विद्यमान है।

अबुमर्दान्-अ० इब्न जुहर। See-Ibn zuhr

अबुमल्यून-यु० सफेदा, सुपेदह। White Lead (Plumbi carbonas)

अबुमालिक-अ० गृद्ध, गिद्ध। (Eagle a vulture)

अबुमिस्तार-अ० मद्य, सुरा। (Wine)

अबुमुकाविल-अ० गाजर। (A carrot)

अबुयुह्-अ० (१) गिद्ध (Avulture) (२) अजूदहा, अजगर। (Boa Constrictor)

अबूरस्मा-अ० एन्युरिस्मा Aneurisma-इ०। इनोरस्मा, इनोरज्मा, उमुद्म। शाब्दिक अर्थ रक्तस्रुति अर्थात् रक्त का बहना। परन्तु प्राचीन चिकित्सा परिभाषा के अनुसार एक प्रकार का रोग जिसमें आघात वा क्षत प्रभृति के कारण त्वचा के नीचे किसी स्थल की धमनी फट जाती है जिससे धमनी से रक्त एवं वायु निकल कर त्वचा के नीचे एकत्रित हो जाते हैं और वहां एक उभार बन जाता है।

उक्त उभार का यह विशेष गुण है कि वह दबाने से दबा रहता है अर्थात् जब उसको दबाया जाता है तब त्वगधरीय एकत्रित वायु और रक्त पुनः धमनियों में लौट जाते हैं। तथा दबाव हटाने से वे पुनः उक्त स्थान में एकत्रित हो जाते हैं।

अन्ताकी के वचनानुसार उक्त उभार का प्रादुर्भाव कभी तो शिरा के फटने से और कभी धमनी के फटने से होता है। अतः शिराजन्य उभार में उसका रंग श्यामाभायुक्त (स्याही-मायल) और धामनिक में रक्ताभायुक्त होता है। और इसके साथ ही उक्त स्थल पर शिरास्थित स्पन्दन का बोध होता है। अस्तु, शिरा प्रसार काल में यह उभार बढ़ जाता है। और शिरा संकोच काल में यह घट जाता है।

डाक्टरी नोट—एन्युरिस्मा जिसको इनोरज्मा भी कहते हैं, वस्तुतः युनानी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ धामनिक अर्बुद (रसौली) है। जिन लोगों ने इसको अबूरस्मा लिखा है वास्तव में उनको उक्त शब्द में सन्देह उपस्थित हुआ है। आधुनिक चिकित्सक (डाक्टर) इस को धामनीयार्ब्युद मानते हैं जो धमनी की दीवाल के प्रसार के कारण उत्पन्न होता है। इस रोग में जहाँ धामनीयार्ब्युद का उभार होता है वहाँ हाथ लगाने से धामनिक स्पन्दन का बोध होता है। उरोवीक्षण (Stethoscope) अथवा कान लगाने से वहाँ एक प्रकार का शब्द सुनाई दिया करता है।

नोट—अबूरस्मा के प्राचीन चिकित्सकों द्वारा कथित अर्थ अर्थात् स्वगधः रक्तस्रुति का समानार्थक अंगरेजी शब्द एक्ट्रावजेशन ओफ ब्लड (Extravasation of Blood) है।

अबुरुमाज-अ० बाकला। Garden bean (Vicia Faba)

अबुरबीअ-अ० हुदहुद (कठबढ़ई)। (A bird)

अबुलअंब-अ०
अबुलीस-अ० } गीदड़, शृगाल। (a jackal)।

अबुल् अर्ज़-अ० बाशह् (जर्रह्)।

अबुल् अस्ज़र-अ० दर्शान (एक पक्षी है)। (a bird)

अबुल् अस्वार-अ० हुदहुद (कठबढ़ई) (a bird)

अबुल् अज्साद-अ० (रसा० पारि०) गंधक। (Sulphur)

अबुल्अम्र–अ० पलंग–फ़ा० । चीता, तेंदुआ। (a tiger)

अबुल् अर्वाह–अ० (रसा०) पारद । (Hydraargyrum)

अबुल् इस्फर–अ० जयफल । जातीफल (Nutmeg)

अबुल् अस्वद–अ० नब्बीज, एक प्रकार का हलका मद्य ।

अबुल क़ादिम–अ० गिरगिट । (a chameleon)

अबुल् कासिम ज़हरावी–अ० जहरावी । (See-Zahravi

अबुल् क़त्ताफ़–अ० चील (प्रसिद्ध पक्षी) । (a kite)

अबुल्खज़ीव–अ० मांस, गोश्त । (Flesh, meat)

अबुल राजव–अ० चीता, तेंदुआ । (a tiger)

अबुल जहीम–अ० रीछ, भालू भल्लुक । (a bear)

अबुल् जेब–अ० नमक या नमकीन मछली ।

अबुलून ज्जारह–अ० ऐनक लगाने वाला ।

अबुल फ़ज़ील–अ० मसीलह (एक पक्षी है । (a bird)

अबुलफ़र्जबिनुत्तय्यब–अ० इमाम जमानहे क्रैलअस, दलामहे अह्द् अबुलफर्ज अब्दुल्लाह बिनुतैयब । ये इनके नाम थे, यह धार्मिक दृष्टि से ईसाई, और अपने काल के प्रसिद्ध एवं कुशल चिकित्सक थे, यह शेखुर्रईस बूअली सीना के समकालीन थे, शेख स्वयं भी इनके वैद्यक सम्बन्धी लेखों की प्रशंसा एवं प्रतिष्ठा करते थे, विभिन्न विषयों पर इन्होंने लगभग ४० ग्रन्थ लिखे है ।

अबुल्फवाख्त–अ० दर्शान (एक पक्षी है) । (a bird)

अबुल्वहर–अ० ककंट, केकड़ा-हिं० । सर्तान-अ० । (Crab)

अबुल्मलीह–अ० चिड़ियों (गौरैयों) में से एक पक्षी है, परन्तु यह उनसे बड़ा और सुन्दर एव ताजदार होता है । मनोलह, पातर खञ्जन ।

अबुलमसीह–अ० ताजी मछली । (Fresh fish)

अबुल्मुसाफिर–अ० पनीर, चीज । (Cheese) इं० ।

अबुल्बसास–अ०
अबुल् हुक्म–अ० } नेवला, Mongoose (Viveramungo)

अबुव्वा–अ० अज्ञात ।

अबुशफीक–अ० गिरगिट । (a chameleon),

अबुशिशफा–अ० शकर, शर्करा । Sugar (saccharum)

अबुसबअ–अ० मकड़ी जैसा एक जानवर है, जिसके अधिक पैर होते है । जंगली तथा दरियाई भेद से दो प्रकार होता है । सकूलोकन्दरिया ।

अबुस मरून–रू० नाजु नाम का एक पक्षी है, देखो—नग्ज ।

अबुमहल्ल मसीही–अ० अबुसह्ल ईसा बिन युहा मसीही । यह जर्जान (गोरगान) के निवासी तथा चिकित्सा कला में प्रवीण थे, आपके ग्रंथ उच्चकोटि के है, कहते है कि मसीही चिकित्सा कला में शेखुर्रईस बूअली बिन सीना के गुरु थे और खुरासान में वहां के राजाके मुख्य चिकित्सक रहे हैं । चालीस वर्ष की अवस्था में इनकी मृत्यु हुई । आपकी रचनाओं में "किताबुल् माइनह्" श्रेष्ठतर रचना है ।

अबुर्सिलत–अ० चील- हिं० । काइट (Kite) इं० ।

अबुहज़ाजव–अ० गिरगिट (a chameleon)

अबुहरून–अ० ऊँट । केमल (Camel)-इं० ।

अबु हुमरा–अ० रतनजोत । (alka net) ।

अबूक–अ० पारद-सं०, हिं० । (Hydrargyrum) इं० मे० मे० ।

अबूतमरून–रू० नगज़ पक्षी (a bird)

अबूती–सं० स्त्री० भैंस के गोबर की राख ।

अबूतोलून–अ० कद्दू के समान एक बूटी है ।

अबूनस–अ० एक नाप विशेष (=६ रत्ती) ।

अबूस–अ० नीलाथोथा, तूतिया (Bluevitriol)

अबूस–अ० शेर, सिंह । (a lion)

अवेद्यः–सं० पु० मत्स्य, मछली Fish (pisces),

अवेध–हिं० वि० [सं० अविद्ध] जो छिदा न हो। बिना बेधा । अवविधा ।

अवेर मुरदेय-फा० अब्र मुर्दह् (फा०) का अपभ्रंश है। मुआबादल, स्फञ्ज, अस्पञ्ज। Spongia officinalis-ले०। दी स्पञ्ज (The sponge)-इं०।

अवेलिआ ट्रिफ्लोरा-ले० कमकी। (a belia threeflowered)

अवेलिया थ्रीफ्लावर्ड-इं० कमकी (abelia triflora, *Dr. Woll*)

अवैज-अ० श्वेत, सफेद, उजला। इसके दो भेद हैं, (१) अवैज हकीकी और (२) अवैज मुशफ्फफ। ह्वाइट White-इं०।

अवैज मुशफ्फफ-
अवैज मजाजी- } अ० स्वच्छ श्वेत, जिसमें आरपार दिखाई दे, जैसे जल या शीशा। ट्रैन्सपेरेण्ट (Transparent)-इं०।

अवैज हकीकी-अ० इसका अर्थ शुद्ध श्वेत, अस्वच्छ श्वेत, दुग्ध के समान श्वेत है, पर तिब् की परिभाषा में दुग्ध के समान श्वेत वर्ण के क्षारोरह (मूत्र) को कहते हैं। देखो—बौल लब्नी। (१) ओपेक Opaque (२) काइलस युरिन (Chyious urine)-इं०।

अवैदी-रू० नासपाती। a pear (Pyrus communis)

अवैशून-यु० रातीनज, राल, धूप। (Resin)

अवोली-म० झिण्टी, कोरण्टा, पियाबाँसा। (Barlaria prionitis)

अवौलो-अ० एक माप विशेष (=६ जौ =३ रत्ती)

अव्-वालछड़ (सुगंधबाला)। (Nardo stachys jatamansi, *D. C.*)

अव्अव्-अ० नर हिरन (हरिण)।

अव्अवह्-अ० रक्त ऊर्ण, लाल ऊन। (Red wool)

अव्आदेसलासह
अक्तारेसलासह } -अ० परिमाण त्रय अर्थात् लम्बाई, चौड़ाई, गहराई; (उंचाई)। डाइमेन्शञ्ज (Dimentions, sions)-इं०।

अब्क़-अ० गुले नीलोफर या भंग।

अव्कम
अख़रस } -अ० गूंगा, गूंग। डम्ब (Dumb) -इं०।

अव्क़र-अ० (१) सौसन श्वेत। (२) मर्जञ्गोश।

अवक़स
अव्क़स् } यु० एक छोटा जानवर है। (A small animal)

अब्कह-अ० इजखिर भेद। See Izkhir

अब्कार-अ० लम्बा उल्लाव।

अव्क़स-यु० एक छोटा जानवर है। (A little animal)

अब्ख़र-अ० मुख दुर्गन्धि। मुखदौर्गन्ध्य रोगी।

अब्ख़रह-अ० (ए० व०) बुखार (ब० ब०) वाष्प, भाप। वेपर (Vapour)-इं०।

अव्ख़रह फ़ासिदह-अ० दुर्गन्ध वाष्प। मिआस्म (Miasm)-इं०।

अब्ज-हिं० संज्ञा पु०
अब्जः-सं० पु० } (१) (Barringtonia Acutangula, *Roxb*)-ले०। इं० हैं० गा०। (निचुल वृक्ष), हिजल वृक्ष, समुद्रफल, इज्जल, ईजड़। (२) शङ्ख। Conch-इं०। (३) धन्वन्तरि। (The physicians of the gods) सर्वत्र मे० जद्विकं। (४) चन्द्रमा, सून (The moon)-इं०। (५) कपूर। (Camphor) (६) एक संख्या सौ करोड़। अरब। (७) अरब के स्थान पर आने वाली संख्या।

अब्जम्-सं० क्ली०
अब्ज-हिं० संज्ञा पु० } (१) जल से उत्पन्न वस्तु। (२) पद्म, कमल (The nymphæa or lotus) प० मु०। रा० नि० व० १०।

अब्जकर्णिका-सं० स्त्री० कमल बीज कोश। कमल का छाता (Lotus capsule) वै० निघ०।

अब्जकेशरः-सं० पु० पद्म केशर, कमल की तुरी। च० द०।

अब्जबाँधव-हिं० संज्ञा पु० [सं०] सूर्य्य। (The sun)

अब्जभोगः-सं० पु० कमल कन्द। श० च०।

अब्जबीजभृत्-सं० पु० श्वेत करवीर वृक्ष, सफेद कनेर। वै० निघ०। Nerium odorum (The white var of-)

अब्जहस्त-हिं० संज्ञा पु० सूर्य्य। (The sun)

अब्जार-अ० यह "बज्र" का यह बहुवचन है और इसका बहुवचन अबाजीर है। (१) "बज्र" का अर्थ बीज है। (२) एक पौधा है और (३) मसाला को भी कहते हैं]

अब्जारुल्फ़ितर-अ० (१) सदाबहार या (२) सदाबहार के बीज। या (३) कोई स्याह, तर और बारीक रेशेदार बेल (लता) है।

अब्जाह्वम्-सं० क्ली० बालक, ह्रीवेर, सुगन्धबाला (Pavonia odorata) बाला-बं०- मे०। वै० निघ०।

अब्जिनी-सं० स्त्री०, हिं० संज्ञा स्त्री० (१) पद्मिनी नीलोफर हिं०। पद्मेर झाड़ बं०। Nymphæa lotus। (२) पद्म समूह। कमल वन (३) पद्मलता।

अब्टना-हिं० स्त्री० (Artimisia Elegans, Roxb)

अब्दः-सं० पु०
अब्द-हिं० संज्ञा पु० } (१) मुस्तक, मुस्ता, मोथा हिं०। Cyperus rotundus ले० सि० यो० ज्वर० किरातादि। च० द० वात ज्व० चि० (२) नागरमुस्ता (-स्तक), भद्रमुस्तक (स्ता)-सं०। नागरमोथा-हिं० Cyperus Pertenuis ले० मद० १ व०। (३) मेघ बादल Cloud इं०। मे० दद्रिकं। क्ली० (४) अभ्रक हिं०, सं०। Talc इं०। र० मा०। (५) वर्ष, साल, सम्वत्सर (A year)। (६) कपूर (Camphor) (७) आकाश

अब्दअ्-रू० दम्मुलअख्वैन। किसी किसी के मत से केशर।

अब्दनादः-सं० पु० (१) मेघनाद चुप। काँटा नटे बं० (See-Meghanada)। स्त्री० (२) शङ्खिनी। (३) भेकी। तान्त्रिक-मह०। See-shankhini वै० निघ०।

अब्दसारः-सं० पु० कर्पूर भेद। (A kind of Camphor) रा० नि०।

अब्दहुल्लु-कना० मोथा, मुस्तक हिं०। Cyperus Rotundus-इं०।

अब्दान-अ० (बहु० व०) बदन (ए० व०)। शरीर हिं०, सं०। बॉडीज (Bodies) इं०।

अब्दुल् जिन्न-अ० काबूस रोग। See kabusa

अब्धिः-सं० पु०
अब्धि-हिं० संज्ञा पु० } अब्धि, सागर सिंधु, समुद्र अर्णव। दी ओशन (The ocean) इं०। रत्ना० (२) सरोवर। ताल।

अब्धि कफ-सं० पु०
अब्धिकफ-हिं० संज्ञा पु० } समुद्रफेन। कटल फिश बोन (Cuttlefssh bone) इं० भा० पू० १ भा० ह० व०। (२) समुद्रशोष (Argyreia Speciosa, *Sweet*)

अब्धिजः-सं० पु०
अब्धिज-हिं० संज्ञा पु० } (१) समुद्र से पैदा हुई वस्तु (२) समुद्रफेन (Cuttle-fishbone)। रत्ना० (३) (जौ) अश्विनीकुमार (Ashvinikumara)। (४) शंख। (५) चन्द्रमा।

अब्धिजा-सं० स्त्री० सुरा। (Spirituous liquor) हे० च०।

अब्धिडिण्डीरः-सं० पु० समुद्रफेन। (Cuttle-fish bone) वै० निघ०।

अब्धिफलम्-सं० क्ली० समुद्रफल, समुद्रजात फल। (Barringtonia acutangula)

अब्धिफेनः-सं० पु० समुद्रफेन (Cuttlefish bone) रा० नि०।

अब्धिमंडुकी-सं० स्त्री०
अब्धिमंडकी-हिं० संज्ञा स्त्री० } मोती की सीपी

हिं० । झिनुक-बं० मुक्ता स्फोट सुक्तिका सं० । मोती सीप मह० । (Pearloyster) हे० व० ४ का० ।

अन्धिवृक्षः-सं० पु० शाखिमूल वृक्ष । काका तोदाली

अन्धिसार-सं० पु० रत्न । (A jewel वै० निघ० ।

अब्व-अ० जल पीना, घूंट २ जल पीना । चुप चुप में जल पीना, या एकदम से पानी पीना, पशुओं के समान मुँह लगाकर जल पीना । सिपिंग (Sipping)-इं० ।

अब्बल-द० हाऊबेर, अभल । (Juniperus communis) इं० मे० मे० ।

अब्बास-हिं० संज्ञा पु० [अ० अब्बास] [वि० अब्बासी] (Mirabilis jalapa) एक पौधा जो तीन फुट तक ऊंचा होता है । इसकी पत्तियां कुत्ते के कान की तरह लम्बी और नुकीली होती हैं । कुछ लोग भूल से इसकी मोटी जड़ को चोबचीनी कहते हैं । इसके फूल प्रायः लाल होते हैं पर पीले और सफेद भी मिलते हैं । फूलों के झड़ जाने पर उनके स्थान पर काले २ मिर्च के ऐसे बीज पड़ते हैं । देखो—गुल अब्बास ।

अब्बास-अ० शेर, सिंह । लायन (Lion)-इं० । (२) गुले अब्बास (Mirabilis jalapa, *Linn*)

अब्बासी-हिं० संज्ञा स्त्री० [अ० अब्बासी] (१) जातो, गुले अब्बासी (Mirabilis jalapa, *Linn*) (२) मिश्र देश की एक प्रकार की कपास ।

अब्बे-सिं० राई, राजसर्षप । (Sinapis juncea) इं० मे० मे० ।

अब्भच्च-हिं० संज्ञा पु० [सं०] पानी का साँप । बेदहा साँप ।

अभ्रम्-सं० क्ली० (१) अभ्रधातु, अभ्रक । Talc (Mica) । (२) मुस्ता (-स्तक), मोंथा । (Cyperus rotundus) रा० नि० ।

अब्युटिलन अबिसीनी-ले० अबूतीलून, कबू । फा० इं० १ भा० । इसके तन्तु काम में आते हैं

अब्युटिलन इण्डिकम्-ले० कंघी, अतिबला । फा० इं० १ भा० । इं० मे० मे०

अब्युटिलन एशियाटिकम्-ले० कंघी, अतिबला । इं० मे० मे० ।

अब्युटिलन ग्रेविओलेन्स-ले० । बड़ी कंघी-हिं० बं० ।

अब्युटिलन पोलिएण्ड्रम्-ले० बेलाई थूथी-ता० मेमो० ।

अब्युटिलन म्युटिकम्-ले० वला भेद इसका रेशा काम आता है । फा० इं० १ भा० । मेमो० ।

अब्यून-यु० अफ्यून, अफीम । (Opium)

अभ्र-हिं० संज्ञा पु० [फा० । सं० अभ्र] मेघ, बादल । (Cloud)

अभ्रक-फा० अभ्रक । Talc (Mica)

अभ्रक़-अ० (१) अभ्रक (Mica) (२) सफनीन दरियाई (एक जानवर है) (३) कोई फारसी दवा है ।

अभ्रकल्या-यु० पालक । (Spinacea oleracea)

अभ्रकाकिया-यु० मकड़ी का जाला । (A web, spider's web)

अभ्रकुह्न-फा० अस्फञ्ज, मुआबादल । (sponge)

अभ्रगी
अभ्राँङ्ग
} -सिरोपिअन० कानफात-हिं० । Cardiospermum Halicacabum, *Linn*) -ले० । फा० इं० १ भा०।

अभ्रद-अ० अत्यन्त शीतल (ए० ब०) अबारिद (ब० ब०) ।

अभ्रनी-रू० (१) लोफ । (२) मुस्तकन्द-हिं० । (एक वनस्पति है) ।

अभ्रब-अ० सुमाक (sumac)

अभ्रबियह-अ० सुमाक्रियह ।

अभ्रब्यून-यु० फर्फ्यून अ० । सेहुँड़, थूहर । (Euphorbium)

अभ्रमुदह्-अस्फञ्ज, मुआबादल । (sponge)

अब्रश–अ० वह मनुष्य जिसकी त्वचा पर श्वेत चत्तियां पड़ी हों। स्पोटेड (Spotted)–इं०।

अब्रस–अ० श्वित्र रोगी, श्वेत कुष्ट का रोगी, चितकबरा। ल्युकोडर्मिक (Leucodermic) –इं०।

अब्रस–यु० गुले सोसन। See sousau

अ(ए)ब्रस प्रीकेटोरिअस–ले० गुञ्जा सं०। घु घची रत्ती, गुञ्जा-हिं०। Indian liquorice इं०। इं० मे० मे०। फा० इं० १ भा०।

अब्रह्मचर्य्यकम्–सं० क्लीं० मैथुन। क्वाइशन (Coition), कप्युलेशन (copulation)-इं० त्रिक०।

अब्राज–शामी० सूरिञ्जान की घास। पश्चिमी भाषा में सदाबहार को कहते है।

आब्रक एसिड–इं० गुञ्जाम्ल। डाक्टर वार्डेन (Dr. warden) महोदय ने गुञ्जाबीज द्वारा इसे पृथक किया था। उनके मतानुसार इस तेजाब का फार्म्युला (रासायनिक सूत्र) इस प्रकार है। यथा—($C^{21}H^{24}N_2O^4$) इसमें कोई प्रभाव नहीं (inert) होता है। फा० इं० १ भा०।

अब्रिन–इं० एक प्रोटीड अवयव जो गुञ्जा बीज में वर्तमान रहता है। और गुञ्जा के समस्त इन्द्रिय व्यापारिक गुणधर्म रखता है। फा० इं० १ भा० यह गुञ्जा का मुख्य प्रभावात्मक अंश है।

अब्रिय्यह–अ० हब्रिय्यह् कल्बुर्रास, हजाज। सबूसहे सर–फा०। सर की वफाअ्, सर की भूसी। उ०।

सीबोरिआ (Seborrhœa,) स्कर्फ (Scarf), डेण्ड्रुफ (Dandruff) फर्फर (Furfur)–इं०।

अब्री–अ० बेर का वृक्ष जो नहरों के किनारे उगता है।

अब्रीमून–रू० ईरसा; पुष्करमूल। (Ovris root)

अब्रुज–अ० राँग।

अब्रूता–सिं० दर्मनह् (जौहरी जवाइन), शीह, अप्रसन्तीनुल बहार। (Artemisia maritima, *Linn*)

अब्रूद–फा० सुम्बुल। (Hyacinthus Orientalis)

अब्रून–यु० सदाबहार (हयुल् आलम)।

अब्रूनास–यु० अब्रूस बरबाकी। (An unimportant plant)

अब्रूनी–खुन्सी। (Asphodelus fistulosus, *Linn*)

अब्रूयून–यु० छड़ीला (उश्नह्)। (Nardostachys jatamansi)

अब्रूस–यु० बरबाकी। (An unimportant plant)

अब्रेअंबर–हिं० संज्ञा पु० दे०—अम्बर।

अब्रेज–अ० शुद्ध स्वर्ण, खालिस सोना। (Pure gold)

अब्रेशम्–फा०, अ० आबरेशम, क़ज़, अबरेसम। कोषकारजम्, कोषा (रेशम), कोषकार, कोषकृ (रेशमकीट), कौशे (जे)य (रेशमी अर्थात् कोषोत्थवस्त्र)–सं०। रेशम–हिं०। पट–बं०। बाम्बिस मोराइ (Bombys Mori)–ले०। सिल्क पॉड (Silk-pod), राँ सिल्क कोकून (Rawsilk cocoon), सिल्क वर्म मॉथ Silk worm moth, सिल्क Silk–इं०। सेरकोस serikos–जर०। रेशम की कीड़े–द०। रेशम ना-पोटन-बम्ब०; गु०। पटलूपुर्ग ता० मह०। पुट्टुपुरुग, नर-पुट्टिपो-ते०। रेशम हुल-कना०। रेशी-चि कीड-मह०, को०।

अबरेशम वस्तुतः एक कीड़े का घर है, जिसे वह अपने मुख के लार द्वारा अपने ऊपर बनाता है। यह कीट शहतूत के वृक्षों पर उनके पत्ते खाकर अपना जीवन निर्वाह करता है। वह कीड़ा जो बदरी (बेर) वृक्ष पर लगाया जाता है उसे लैटिन में बाम्बिस माईलेटा (Bombys mylletta) कहते हैं। रेशम का कोआ (रेशम कीट गृह) वा अण्डाकार कोष एक प्रकार का आवरण है जिसका निर्माण कीट आकार परिवर्तन काल में करते हैं।

लक्षण—यह कोआ की शक्ल में पूर्व रंग भायुक्त पीत वर्ण का और स्वाद रहित होता है

इसके भीतर रेशम का मृत कीट होता है। इसलिए इसको कैंची (कर्तरी) से काटकर और इसके भीतर से मरे हुये कीड़े को निकालकर औषधि कार्य में लाते हैं।

प्रकृति—प्रथम कक्षा में उष्ण एवं रूक्ष होता है। किसी किसी ने इसको शीतोष्ण (समप्रकृति) लिखा है। हानिकर्त्ता इसके बने वस्त्र का प्रयोग करने से त्वचा पतली हो जाती है। दर्पघ्न इसके वस्त्र में रूई के सूत का मिश्रण। प्रतिनिधि जला का धोई हुई मुक्तिका (मोती)। मात्रा—३॥ मा० से १०॥ मा० तक क्वाथ एवं शीतकषाय साधारणतः ७ मा० व्यवहार किया जाता है।

गुण, कर्म, प्रयोग—अपनी खासियत (सहकारिणी शक्ति) से यह आह्लादजनक है। इसकी तारल्यकारिता अपनी उष्मा के द्वारा प्रशमता उत्पन्न करने में खासियत की साहयता करती है फलतः रूह में प्रसार का उदय होता है। और यह अपनी उष्णता एवं रूक्षता के कारण उसकी तर्वत् (संक्लेद) को अभिशोभित कर लेता है जिससे रूह में कठोरता एवं शक्ति आ जाती है। इससे रूह में स्वच्छता एवं प्रकाश का उदय होना आवश्यक है। यह बात विशेषकर अबरेशम खाम (कच्चे रेशम) में होती है, क्योंकि पकाते समय इसकी मनोल्लासकारिणी शक्ति बहुधा जल में स्थानांतरित हो जाती है इसलिये खरल की हुई किसी किसी औषध को उक्त जल में भिगोकर तीक्ष्ण धूप में रक्खा जाता है जिससे उक्त औषध सम्पूर्ण जल को अभिशोषित करके उससे मनोल्लासकारिणी शक्ति ग्रहण कर लेती है तदनन्तर शुष्क कर प्रयोग में लाई जाती है।

इसका वस्त्र धारण करने से परंपरागत जूओं की उत्पत्ति रुक जाती है क्योंकि अबरेशम अन्डों को खराब कर देता है जिससे जूं पैदा नहीं होने पाती चूंकि यह सर्दी तथा गरमी में मअ्तदिल (समप्रकृति) है इसलिये इसको धारण करने से शरीर उष्ण नहीं होता और इसी कारण अन्डे सेए नहीं जा सकते। इसके विपरीत रूई के वस्त्र से शरीर गरम हो जाता है (और अंडे उस गरमी में भली प्रकार सेए जाते हैं)। (त० नफा)

जलाया हुआ अबरेशम प्रायः चक्षु रोगों यथा अश्रुस्राव एवं नेत्रकंडू में उपयोगी है? अबरेशम मानस, प्राकृतिक एवं प्राणात्मा (रूह नफसानी तबीई व हैवानी) को प्रशमनकर्ता, स्मरण शक्ति तथा मेधा को बलदानकर्ता है। चक्षु रोगों, मूर्च्छा, काठिन्य अर्थात् मेदा की सख्ती और फुफ्फुस को बल प्रदान कर्ता है, चेहरे के वर्ण को निखारता और रोधोंका उद्घाटन करता है प्रकृति को मृदु करता रतूबतों अर्थात् द्रवों को अभिशोषण करता तथा (क्लेदाभिशोषक) उत्तमांगों को बल प्रदान कर्ताहै। यह तारल्यताजनक वा द्रावक (मुल्लतिफ़) एवं अभिशोषणकर्ता (मुनशिफ़) है। इसका वस्त्र धारण करने से शरीर स्थूल होता और जूएँ नहीं पड़ती। किन्तु, यह त्वचा को कोमल करता है। म० अ०। यह हृदय को बल प्रदान करता एवं भ्रम तथा मूर्च्छा रोग में विशेषकर लाभप्रद है।

अब्रेशम जलाने की विधि—रेशम को बारीक कतर कर मिट्टी के बर्तन में आग पर रक्खें और हिलाते रहें। जब भुनकर पिसने योग्य हो जाए तब उतार लें देखो तह्मीश अब्रेशम।

यह शोणित स्थापक, बल्य तथा संकोचक रूप से अतिरज (रक्तप्रदर) श्वेत प्रदर, एवं पुरातन अतिसार में स्राव रोकने के लिये व्यवहार किया जाता है। इ० मे० मे०। इं० डू० इं०।

यह अन्य संकोचक औषधोके साथ सामान्यतः प्रयोग किया जाता है और साधारणतः सरदी एवं चक्षु रोग में प्रयुक्त होने वाले मोदकों में पड़ता है इ० मे० मे०।

नोट—एलोपैथिक चिकित्सा में इसका औषधीय उपयोग नहीं होता है।

औषध निर्माण—खमीरा, चूर्ण शर्बत, मद्य तथा हृद्य (मुफर्रिहात) अर्थात् मनोल्लासकारी औषध प्रभृति। परन्तु अधिकतर निम्नलिखित खमीरे और शर्बत आदि में प्रयुक्त होता है।

(१) खमीरा अब्रेशम सादा—योग एवं निर्माण विधि—कतरा हुआ अबरेशम २ तो० ऊद गर्की ४ मा०, बालछड़, पोस्त तुरंज, मस्तगी

लौंग, एला, तेजपत्र प्रत्येक ५ मा० श्वेत चन्दन ६ मा०, अवरेशमसहित सम्पूर्ण औषध को कपड़ा में बांधकर अर्क गावजुबान, गुलाब आब सेव-शीरी, आबविही शीरी, आब अनार शीरीं प्रत्येक १४ तो० तथा वर्षा जल २ सेर में क्वाथ करें। जब पानी जल जाय तब एक पाव मधु और ३ पाव श्वेत शर्करा मिलाकर खमीरा की चासनी प्रस्तुत कर लें।

मात्रा व सेवन विधि—इसमें से ५ मा० अर्क गावजुबान १२ तो० वा अन्य उचित अनुपान के साथ सेवन करें। गुण हृदय तथा मस्तिष्क को बलवान बनाता और दृष्टि शक्ति के लिये उपयोगी है इसके प्रयोग से मूर्च्छा, दिल की धड़कन और भ्रम आदि दूर होते हैं।

(१) खमीरा अबरेशम हकीम इर्शदवाला।

(२) खमीरा अबरेशम शीरा उन्नाववाला।

(३) खमीरा अबरेशम ऊद मस्तगीवाला।

इनके तथा अन्य खमीराओं के लिये देखो—खमीरा।

(५) शर्बत अबरेशम सादा-योग एवं निर्माण-विधि—कतरा हुआ अबरेशम आधसेर श्वेत चन्दनम् वालछड़ प्रत्येक ६ मा०, मस्तगी लौंग, छोंटी इलायची, तेजपत्र, ऊद हिन्दी प्रत्येक ६॥ मा०, अर्क गावजुबान' अर्क बेदमुश्क, अर्क गुलाब प्रत्येक १-१ सेर, आबसेव, आब विही आब अनार, आब अमरूद, सफेद बूरा, मधु १-१ सेर यथाविधि शर्बत प्रस्तुत करें।

मात्रा व सेवन विधि—इसमें से २ तोला शर्बत अर्क गावजुबान ७ तो० और अर्क बेदमुश्क ५ तो० के साथ सेवन करें। गुण—मस्तिष्क एवं हृदय को बलप्रद है तथा मूर्च्छा और भ्रम को दूर करता है।

अब्रेस्टोल—इं० (Asaprol) यह धूसर वर्ण का एक चूर्ण है जो जल तथा मद्यसार (alcohol) में सरलता पूर्वक विलीन हो जाता है। विस्तारके लिये देखो—नैफथोल (Naphthol)

अब्रोङ्ग—यु० अब्रगी। किसी किसी के मतानुसार कर्ण स्फोटा (सं०)' कनफौड़ी (हिं०) और ड्रायमॉक महोदय लेखक "फार्माकोग्रैफिया इण्डिका के मतानुसार "चित्रतण्डुल,, सं० (spotted grain) अथवा लेटिन एम्बेलिआ रीबीस (Embelia Ribes) का बीज है। फा० इं० १ भा०।

अब्रोमा ऑगस्टा—ले० ओलक तम्बोल-बम्ब०। उलट कम्बल, ओलट कम्बेल—वं०। पीबरी, द्रुमोत्पल सं०। डेविल्स काटन Devil,s cotton इं०

फा० इं० १ भा०। इं० मे० मे०।

अब्रोमा फैस्ट्युओजम—ले० उलट कम्बल वं० Devil's cotton। इं० मे० मे०।

अब्ल—फा० कपाल अगा, इलायची। (Cardamum इं० है० गा०।

अब्ल—अ० (१) मांसल भुज, स्थूल भुजा। (२) वह मनुष्य जिसके डण्ड पुष्ट हों।

अब्लम्—हिं० सं० क्ली० मक्खन सेम। (Dolichos Gladiatus) ले० इं० है० गा०।

अब्लह्—अ० मूर्ख, सीधा आदमी, भोला भाला मनुष्य। ईडिअट (Idiot) इं०।

अब्ला—पथरी, श्वेत अश्मकण, सुफेद संगरेजे।

अब्शउल्अम्राज—अ० अत्यन्त बुरा एवं कठिन रोग। मैलिग्नैण्ट डिजीज (Malignant Disease) इं०

अब्स—अ० (१) कुचरित्र, दुराचरण, कुव्यवहार। (२) शाबानक।

अब्सक्यून—रू० अफ्सन्तीन। (Absinthium)

अब्सार—अ० (ब० व०), वसर (ए० व०)। दृष्टि, निगाह, नजर। साइट (Sight) विजन (Vision)- इं०।

अब्सेसरूठ—इं० पॉलिमोनियम रेप्टैंस (Polemonium Reptans)-ले०।

अब्हर—अ० अवरती। महाधमनी i एवोर्टा (Aorta)-इं०।

अब्हाम—अगूष्ठ, अँगूठा। इसका बहुवचन "अबाहम" है थम (Thumb)-इं०।

अभक्त-हिं० वि० [सं०] (१) भक्ति रहित । शठ । (२) अरुचि (Want of desrie)

अभक्तच्छन्दः-पु० अरोचक भेद । जिसमें अन्न में रुचि न हो । See-Arochaka,

अभग्न-हिं० वि० [सं०) अखंड । जो खंडित न हो । समूचा ।

अभञ्जन-हिं० वि० [सं०] जिसका भंजन न हो सके, । अटूट, अखंड । संज्ञा पु० द्रव वा तरल पदार्थ जिनके टुकड़े नहीं हो सकते, जैसे जल, तैल आदि ।

अभयम्-सं० क्ली० } उशीर,
अभय-हिं० संज्ञा पु० } रूस, वीरणमूल (Andropogon muricatus) रा० नि० व० १२, मद० व० ३, अम, भैष०कुष्ठचि० कन्दर्पसार तैल ।

अभयदा-सं० स्त्री. (Phyllanthus Niruri' *Linn*) भूम्यामलकी भुँई आमला । भूम आंवली-सं० । त० निघ० ।

अभयनृसिंह रसः-सं० पु० वह रस अतिसार तथा ग्रहणी में हित है । योग-(१) हिंगुल, त्रिकटु विष, जीरा, सुहागा, पारद, गन्धक, अभ्रक भस्म, शुद्ध भस्म समभाग और अहिफेन सर्वतुल्य मिला कर नीबू के रस से मर्दन करे । मात्रा—१ रत्ती । अनुपान—जीरा का चूर्ण और शहद । र० यो० सा० । (२) गंधक और अभ्रक इनको समभाग लेकर इन सब के बराबर अफीम शुद्ध लेवें । और इन सबको कागजी नींबू के रस में घोट कर गुंजा प्रमाण गोली बनावे । मात्रा—१ गोली, अनुपान—जीरा का चूर्ण और मधु ।

(३) शिङ्गरफ, मीठातेलिया, सोंठ, मिर्च, पीपर, जीरा, भूना सोहागा, अभ्रक भस्म इन्हें समान भाग ले, शुद्ध पारा १ भाग; सर्व तुल्य मात्रा (मण्डूकपर्णी) लें, पुनः चूर्ण कर नाँबू के रस में खरल कर १ या २ दो रत्ती प्रमाण गोलियां बनाए, जीरा शहद के साथ देने से सन्निपातातिसार, ज्वरातिसार, विना ज्वर का अतिसार तथा सर्व प्रकार के अतिसार, संग्रहणी, का नाश होता है । भैष० र० अतिसार० चि०

अभया-सं० (हिं० संज्ञा) स्त्री० (१) (Terminalia chebula' *Retz*) हरीतकी विशेष ? एक प्रकार की हरीतकी या हड़ जिसमें पाँच रेखाएँ होती है । हरड । प० मु०, रा० नि० व० ११ भा० पू० १ भा०, वा० सू० ३५ अ० बचादि व०, च० द० कफ ज्व० चि० आमलक्यादि । (२) श्वेत निर्गुण्डी । (३) मञ्जिष्ठा (४) जयन्ती । (५) जया, भंग । (६) मृणाल । (७) काञ्जिक । (८) काञ्चन वृक्ष द्वय । रा० नि० व० १७ ।

अभयावटकः-सं० पु० हड़ ४ तो,० हड़ की छाल ४ तोला आमला ४ तो०, बहेड़ा ४ तो०, त्रिकुटा ४ तो०, अजमोद, चव्य, चित्रक, वायविडंग, अम्लवेतस, बच, सेंधालवण प्रत्येक दो दो तो०, तेजपात इलायची १-१ तो०, दालचीनी १ तो० ले महीन चूर्ण बना इसमें १ तो० पुराना गुड़ मिला एक तो० की गौलियां बनाएँ, गुण-इसके सेवन से प्लीहोदर, अर्श, गुल्म, उदररोग, पाण्डु, कामला, मन्दाग्नि इन सबका नाश होता है । वङ्ग० से० सं० प्लीहोदर चि० ।

अभयादि गुग्गुलः-सं० पु० हड़, आमला, मुनक्का, शतावर, ब्रह्मदण्डी, अनन्तमूल दोनों, मजीठ, हल्दी, दारु हल्दी, बच इन्हें समान भाग ले, आठ मुट्ठी गुगुल लेकर एक बस्त्र में बांध २४ शेर पानी में पकाऐ, जब चौथाई शेष रहे उतारें पुनः उस गुग्गुल को काढ़ा के जल में पकाऐ, जब सिद्ध हो ले तब उसमें मुस्ता, मुलहठी, मुरामांसी, दालचीनी, इलायची, पत्रज, केशर, वायविडङ्ग, लवंग, जवासा, निशोथ, त्रायमाण, सोंठ, मिर्च पीपर, इन सबका वारीक चूर्ण चार २ तोले उक्त गुग्गुल में छोड़ कर अच्छी तरह मेलन कर रक्खें, इसे शहद के साथ सेवन करने से स्नायविक तथा मस्तिष्क सम्बन्धी प्रत्येक बीमारियां दूर होती हैं । भै० र० परिशिष्टम् ।

अभयादिगुटी-सं० स्त्री० आमवातमें प्रयुक्त होनेवाला योग । बृ० नि० र० भा० ५ आमवा० चि० ।

अभयादि चतुस्सम बटी-सं० स्त्री हड़, सोंठ, मोंथा, गुड़, प्रत्येक समान भाग ले गुटिका बनाए, यह त्रिदोष, आमातिसार, अफरा, विबन्ध, हैजा,

कामला; और अरुचि को नष्ट करती तथा अग्नि को शीघ्र दीप्त करती है। वृ० यो० त०।

अभयादि चूर्ण-सं० पु० हड़, अतीस, हींग, सोचल, त्रिकुटा, इनको समान भाग ले चूर्ण बनाएं। गुण—कफज अतिसार नाशक है। वृ० नि० र०।

अभयादि क्वाथः-सं० पु० हड़, आमला, चित्रक और पीपल इनका क्वाथ पाचक भेदक और कफ ज्वर नाशक है। वृ० नि० र०।

अभयादिमोदिका-सं० पु० हड़, पीपल, पीपलामूल, मिर्च, सोंठ, तज, पत्रज, मोंथा, विडंग, आमला, प्रत्येक १-१ कर्ष लें। दन्ती ३ कर्ष मिश्रा ६ कर्ष निशोथ २ पल, इनका चूर्ण करके शहद से मोदक प्रस्तुत करे। मात्रा— १० मा०। गुण— शीतल जल से खाने से उत्तम विरेचन होता है और इसके प्रभाव से पांडु, विष, दुर्बलता, जंघा के रोग, शिरोरोग, मूत्रकृच्छ्र, अर्श, भगदर, पथरी, प्रमेह, कुष्ठ, दाह, शोथ और उदर रोग नष्ट होते हैं। यो० चि०।

यो० त० विरेचन० अ०। सु० सं० चि० अ०। वङ्गसेन सं०। शा० ध० सं० उ० खं० अ० ४

अभयादियोग-सं० पु० गुल्म रोग में प्रयुक्त योग वृ० नि० र०। भा० गु० चि०।

अभयारिष्टः-सं० पु० (१) हड़ १ तुला (५ सेर) मुनक्का (दाख) आधा तुला (२॥ सेर) वायविडंग, महुआ पुष्प; चालीस चालीस तोले लें, ४ द्रोण (६४ सेर) जल में पकाएँ। जब एक द्रोण शेष रहे तो पवित्र रस को ठंडा कर इसमें गुड़ १ तुला (५ सेर) छोड़ें। पुनः गोखरू, निशोथ, धनियां, धव पुष्प, इन्द्रायण, चव्य, सौंफ, सोंठ, जमालगोटा (दन्ती) मोचरस, प्रत्येक आठ आठ तोला ले एक बड़े मिट्टी के पात्र में चूर्ण कर छोड़ मुख बंद कर एक मास पर्यन्त रख छोड़ें जब रस शुद्ध हो छान कर रक्खें। इसे बल तथा अग्नि का विचार करके सेवन करे तो ववासीर, आठ प्रकार के उदर रोग, मूत्र तथा मल की रुकावट, इन्हें दूर कर अग्नि की वृद्धि करे। (भैष० र० अर्श० चि०)

(२) हड़ ३२ तो०, आमला ६४ तो०, कैथ की छाल ४० तो० गांडूमाकी जड़ (इंद्रायण मूल) २० तो०, वायविडंग, पीपल, लोध, भिर्च, एलुवा इन्हें आठ आठ तो० लेकर ४०९६ तो० जलमें पकाएँ, जब १०२४ तो० जल शेषरहे तो उसे वस्त्र से छानलें और उसमें २०० तो० गुड़डाल कर १५ दिन तक घृत के पात्रों रक्खें। मात्रा— ४ तो०। प्रयोग-इसे उचित मात्रा में सेवन करने से गुदा के मस्से नष्ट हो जाते हैं। और वह संग्रहणी, पांडु, तिल्ली, गुल्म, उदर रोग, कुष्ठ, सूजन, अरुचि को दूर करता है तथा बल वर्ण और अग्नि को वृद्धि करता है। इसे कामला, सुफेद कुष्ठ कृमि, ग्रन्थि, अर्बुद क्षुद्ररोग, ज्वर, राजयक्ष्मा में भी दें। वंगसेन सं० अर्श० चि०। वा० अर्श० चि०।

नोट—वाग्भट्ट जी ने इसमें १ प्रस्थ आमले का रस गुड़ डालने के समय छोड़ने को कहा है।

अभयालवणम्-सं० क्ली० पारिभद्र (नीम), पलास सफेद मदार, सेहुँड़, चिर्चिटा, चित्रक दोनों वरना (वरुण), अरनी, लाल मदार, गोखरू, छोटी कटेली, बड़ी कटेली, करंज, श्वेत अनन्तमूल, कडुई तरोई, पुनर्नवा, इनकी जड़, पत्ते, डालियां समेत लेकर ऊखल में कूट के पुनः तिल की नाल लेकर अग्नि में भस्म करें, पुनः नये पात्र में १०२४ तो० पानी डाल उसमें भस्म डालकर पकाएँ जब चौथाई शेष रहे तब खार की विधि से खार तैयार करें। यही क्षार ६४ तो०, नमक ६४ तो०, हड़ ३२ तो० इनके बराबर पानी और गोमूत्र मिलाकर मन्द मन्द अग्नि से पकाएं जब कुछ गाढ़ा हो ले तब जीरा, सोंठ, मिर्च, पीपल, हींग, अजवाइन, पुष्करमूल, कचूर इन्हें २-२ तोले ले चूर्ण कर उक्त बनौषधि में मिलाएं तो यह अभया लवण तैयार हो अग्नि बल का विचार कर सेवन करने से अनेक प्रकार के उदर (कोष्ठरोग), यकृत, प्लीहा, उदर रोग, अफरा, गुल्म, अष्ठीला, मन्दाग्नि, शिरोरोग, हृदरोग, शर्करा, पथरी रोग, इन्हें उचित अनुपान

से दूर करता है। भैष० र० प्लीह० यकृत० चि० वं० से० सं०।

अभयादिलेहः-सं० पु०, हड़, पीपल, दाख, मिश्री, धमासा इनका मधु के साथ अवलेह बना चाटने से मूर्च्छा, कफ, अम्लपित्त, तथा कण्ठ और हृदय की दाह नष्ट होती है। यो० र० अम्लपि० चि०।

अभयावटी-सं० स्त्री० हड़, मिर्च, पीपल, भुना सुहागा इन्हें समान भाग लें इन सबके चूर्ण के बराबर धतूरे का फल ले, और सेहुँड़ के दूध के साथ खरल कर पकी हुई मटर प्रमाण गोलियाँ बनाएं पश्चात् २ गोली और एक हड़ मिलाके चावलों के पानी से महीन पीस कल्क बना खाएं तो उत्तम जुलाब हो, इसके ऊपर गर्म जल पीने से तब तक दस्त आते रहेंगे जब तक कि शीतल जल न पिया जाय। इससे जीर्ण ज्वर, तिल्ली, आठ प्रकार के उदर रोग, बातोदर और हर प्रकार के अजीर्ण, कामला, पांडु रोग, कुम्भ कामला, इन रोगों को नष्ट करता है। भैष० र० उदर रोग चि०।

अभयाविरेचन-सं० पु० हड़, पीपल, समान भाग ले चूर्ण कर गरम पानी के साथ खाने से अल्प २ वार २ होने वाला प्रबल और शूलयुक्त अतिसार नष्ट होता है। सु० सं० उ० अ० ४०।

अभयाष्टकम्-सं० क्ली० अष्ट हरीतकी भक्षण। पहिले दो खाएं फिर दो और खाएं। इसी प्रकार दो-दो हरड़ करके ८ हरड़ खाकर सो रहें। इसी प्रकार तीन सप्ताह रात्रि में अभयाष्टक का प्रयोग करने से पुनः यौवन की प्राप्ति होती है।

अभरख-म०, गु० अभ्रक, अबरख। (Mica)

अभल-अ० हूवेर, हाऊबेर, हपुशा-सं० (Juniperus)

अभक्त-हिं० वि० देखो—अभक्ष्य।

अभक्ष्य-हिं० वि० [सं०] अखाद्य, अभोज्य, जो खाने के योग्य न हो।

अभावः-सं० (हिं०) पु० (१) असत्व, अनस्तित्व असत्ता, अविद्यमानता (Nonexistence, non-entity) (२) मरण, नाश, ध्वन्स (Annihilation, death) मे० वत्रिकं एक उपसर्ग जो शब्दों में लगकर उनमें इन अर्थों की विशेषता करता है।

अभि-हिं० [सं०] (उपसर्ग) चौफेरा, आगे चिह्न, घर्षण, अभिलाष, "अनु" के विपरीत इसका उपयोग होता है। Before, against; with respect to

(१) सामने, उ०—अभ्युत्थान, अभ्यागत।
(२) बुरा, उ०—अभियुक्त।
(३) इच्छा, उ०—अभिलाषा।
(४) समीप, उ०—अभिसारिका।
(५) बारम्बार, अच्छी तरह, उ०—अभ्यास।
(६) दूर, उ०—अभिहरण।
(७) ऊपर, उ०—अभ्युदय।

अभिक-हिं० वि० [सं०] कामुक, कामी, विषयी।

अभिगमन-हिं० संज्ञा पु० [सं०] सहवास, सम्भोग।

अभिगामी-हिं० वि० [सं०] [स्त्री० अभिगामिनी] सहवास वा सम्भोग करने वाला। उ०-ऋतु-कालाभिगामी।

अभिघातः-सं० पु०
अभिघात-हिं० संज्ञा पु० } (१) (Wound or blow) अभिघात। हिं० पु० आघात, चोट पहुँचना, ताड़न, दाँत से काटना। प्रहार, मार, शस्त्र, मुक्का, (घूँसा) और लाठी आदि की चोट का नाम अभिघात है। भा० म० २ आगन्तुक ज्वर लक्षण। "अभिघाताभिषङ्गाभ्याम" (२) पुरुष की बाईं ओर और स्त्री की दाहिनी ओर का मसा।

अभिघात ज्वरः-सं० पु० (Acquired or Accidental fever) आघात जन्य आगन्तुक ज्वर अर्थात् तलवार, छुरा, मुक्का, लाठी और शस्त्र आदि के लगने से उत्पन्न ज्वर। "अभिघाताभिचाराभ्यां आगन्तुर्जायते।" मा० नि० आग० ज्वर।

आघात से प्रकुपित हुई वायु रक्त को दूषित

कर व्यथा, शोफ वैवर्ण्य और वेदना सहित ज्वर को करती है। च०।

उक्त ज्वरों में दोष ज्वर के उत्पादक नहीं होते अपितु वे पश्चात् को उनके परिणाम स्वरूप होते हैं। सारांश यह कि सर्व प्रथम आघात के कारण ज्वर उत्पन्न हो जाता है। फिर उससे दोषों का प्रकोप होता है।

अभिघार-हिं० संज्ञा पु०
अभिघारः-सं० पु० } (१) (Ghee clarified butter) घृत, घी। त्रिका० नि० व० १५। (२) घी से छौंकना व बघारना।

(३) सींचना, छिड़कना।

अभिचारः-सं० पु०
अभिचार-हिं० संज्ञा पु० } (An incantation to destroy) हिंसाकर्म, मारणमन्त्रविशेष। मन्त्र आदि द्वारा मारण आदि प्रयोग करना। किसी शत्रु को की हुई कृत्य आदि का उत्पन्न करना, किसी प्रकार का अपघात, जादू से मूँठ चलाने का नाम अभिचार हैं। भा० म० २ आगन्तुक ज्वर लक्षण मा० नि० ज्व०। मंत्र आदि द्वारा उत्पन्न पीड़ा र० मा०। यन्त्र मन्त्र आदि अवपीड़न, "अभिभारामिशापोत्थैः।" रत्ना०।

अभिचार-सं० पु० तंत्र के प्रयोग जो छः प्रकार के होते हैं—मारण मोहन, स्तंभन विद्वेषण उच्चाटन और वशीकरण।

अभिचारक-हिं० संज्ञा पु० [सं०] यंत्र मंत्र द्वारा मारण उच्चाचन आदि कर्म वि० यंत्र मंत्र द्वारा मारण उच्चाटन आदि करने वाला।

अभिचार ज्वरः-सं० पु० (Fever produced by incantations) विपरीत मंत्र के जपने से, लोहे के स्रुवा से मारणार्थ सर्षपादिक होम वा कृत्य के प्रयोग करने से जो ज्वर प्रगट होता है, उसे 'अभिचार ज्वर' कहते हैं।

अभिचारी-हिं० वि० [सं० अभिचारिन्] [स्त्री० अभिचारिणी] यंत्र मंत्र आदि का प्रयोग करने वाला।

लक्षण—इससे तथा अभिशाप से उत्पन्न ज्वर में मोह और प्यास होती है। मा०नि० ज्व०

अभितापः-सं० पु० (१) सर्वांग ताप (General heat)। (२) अश्वज्वर (Horse fever)। गज० वै०।

अभिद्रव जन-हिं० पु० उदजन। हायड्रोजन (Hyrdogen) इं०।

अभिद्रव हरिक-हिं० पु० हायड्रो-क्लोरिक अम्ल, लवणाम्ल, उदहरिकाम्ल, नमक का तेजाब। Hydrochloric Acid

अभिधान-हिं० संज्ञा पु० [सं०][वि० अभिधायक, अभिधेय] (१) नाम संज्ञा। (२) शब्दकोष शब्दार्थ ग्रन्थ। (A name'a vocabulary, adictionary)

अभिनव-हिं० वि० [सं०] नवीन नया, टटका, नव्य नूतन, रीसेण्ट (recent) न्यू (new) (२) ताजा। (Fresh)।

अभिनव कामदेवो रस-सं० पु० पारा, गन्धक १ तो० समान भाग में लेकर रक्त कमल पुष्प रस में तीन दिन तक भावित करें। फिर ४ मा० गन्धक मिलाकर पूर्ववत् उक्त कमल और शंखिनी के रस से पृथक पृथक् भावनादेवें, फिर शुष्ककर आतशी शीशीमें भरकर बालुका यन्त्र द्वारा ३ प्रहर पकावें मात्रा—१ रत्ती यह पित्त जनक प्रत्येक रोगों को दूर करता है र० यो० सा०।

अभिनव कामेश्वर-सं० पु० बाजीकरण औषध विशेष। देखो—अभिनव कामदेवो रसः।

अभिनि-ते० अफीम (Opium) स० फा० इं० इं० मे० मे०।

अभिनिवेश-हिं० संज्ञा पु० [सं०] [वि० अभिनिवेशित, अभिनिविष्ट] (१) प्रवेश (२) मनोयोग। लीनता। (३) प्रणिधान। मृत्यु शंका गति पैठ।

अभिनी-द० अफीम (Opium)

अभिन्नाशय-सं० पु० शरीर के भीतरी कोठों का शुद्ध रूप अर्थात् जो विदीर्ण न हुये हों। वा० उत्त० अ० २६।

अभिन्यासः-कः-सं० पु० सन्निपात ज्वर का एक भेद जिसमें वातादि तीनों दोष कुपित होकर हृदय में

रस के बहने वाली नाड़ियों के छिद्रों में गमन करते हुये तथा अपक्व रस से मिले हुये और अत्यन्त बढ़े हुये आपस में विशेष गुथे हुये चक्षु, कर्ण, नासा जिह्वा, त्वचा तथा मन में जाकर अति भयङ्कर तथा कठिन अभिन्यास ज्वर को उत्पन्न करते हैं। उक्त ज्वर में रोगी के कानों में शुनना, नेत्रोंसे दीखना बन्द हो जाताहै और किसी प्रकार की चेष्टा (कर चरण प्रभृति चालन), रूप का दीखना दृष्टि ज्ञान, गंध ज्ञान, शब्द ज्ञान मालूम नहीं होता तथा रोगी बार २ शिर को इधर उधर पटकता है और अन्नकी इच्छा नहीं करता अप्रगट शब्द का बोलना, देह में सुई बिधने की सी पीड़ा होना और बार बार करवट लेना, बहुत कम बोलना ये लक्षण होते हैं यह अभिन्यास ज्वर विशेष कर असाध्य होता है और कोई एक आध रोगी यथावत चिकित्सा होने पर बच भी जाता है उसको अभिन्यास सन्निपात ज्वर कहते हैं। मा० नि० ज्व०।

जिस सन्निपात ज्वर में सब दोष अत्यन्त बलवान् और तीव्र हों, अत्यन्त बेहोशी हो' निश्चेष्टता हो, अत्यन्त बिकलता तथा श्वास हो अधिकतर मूकता (गूंगापन) हो दाह हो मुख चिकना हो अग्निमन्द और बल की हानि हो उसे वैद्यों ने "अभिन्यास,, कहा है। मा० म० ख० २ सन्निपा० ज्व०। देखो—सन्निपात।

अभिन्नपुट-हिं० संज्ञा पु० नया पत्ता।

अभिन्नयास हरो रस-हिं० सज्ञा पु० शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौह भस्म चांदी भस्म इन्हें सम भाग लेकर हुरहुर, सम्हालू, तुलसी, विष्णुकान्ता, अग्निपर्णी, अदरक, चित्रक, भांग, अरनी, मकोय इनके रसों में तीन दिन पर्यन्त खरल करें पुनः पञ्चपित्त (मोर, भैंसा, बकरी, सुअर, और रोहू मछली)की भावना देवें' तदन्तर बालुका यन्त्र में अन्धमूषा में बन्द कर एक दिन तक पचाँए, जब स्वांग शीतल हो बारीक चूर्ण कर रक्खें। मात्रा—१ से ८ र०। गुण—अदरक रसके साथ दें। और निर्गुंडी; दशमूल और त्रिकुटाका क्वाथ काली मिर्च मिलाकर पिलांए तो त्रिदोषज ज्वरों को दूर करे।

पथ्य—बकरी का दूध और मूंग का यूष दें वृ० रस० रा० सु०।

अभिपीडनम्-सं० क्ली० अभिचार (An incantation to destroy)

अभिमन्थः,-मन्युः-सं० पु० नेत्र रोग। आई डिज़ीज़ (Eye disease) त्रिका०। देखो—अभिमन्थ।

अभिमर्दः-सं० पु० अवमर्द, पीडन, पीड़ा (Pain)

अभिमर्दन-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) पीसना, चूरचूर करना (२) घस्सा, रगड़, युद्ध।

अभिमर्षणम्-सं० क्ली० (१) यक्ष पिशाच आदि भूतकृत पीड़ा, र० मा०। (२) मनन, चिन्तन (३) पर स्त्री गमन, परदारगामी।

अभिमानितम्-सं० क्ली० मैथुन, स्त्री संग, काइशन, (Coition) कप्युलेशन (Copulation) त्रिका०।

अभिमुख-हिं० क्रि० वि० [सं०] सम्मुख, आगे, सामने, समक्ष (Present facing)

अभिरुचि-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] अत्यन्त रुचि, पसन्द, प्रवृत्ति, तुष्टि, भलाई, आस्वाद, चाह, रसज्ञान (Taste)

अभिरूपः-सं० पु०
अभिरूप-हिं० वि० } (१) बुध, पण्डित, विद्वान। (२) रम्य, रमणीय, मनोहर, सुन्दर, (३) कामदेव, मे० पचतुष्कं।

अभिरोग-हिं० संज्ञा पु० [सं०] चोपायों का एक रोग, जिसमें जीभ में कीड़े पड़ जाते हैं।

अभिल कपित्थः-सं० पु० आम्रातक वृक्ष, अम्बाड़ा, अमड़ा (Spondias mangifera)

अभिलाषिक रोग-हिं० संज्ञा पु० [सं०] वातव्याधि के चौरासी भेदों में से एक।

अभिलावः-सं० पु० छेद, स्रोत (Hole, pore) अम०।

अभिलाषः-सं० पु०
अभिलाष-हिं० संज्ञा पु० } [वि० अभिलाषिक अभिलाषी, अभिलाषुक, अभिलाषित] (१] रमणेच्छा, प्रिय से मिलने की इच्छा, वियोग।

रति० र० । (२) आकांक्षा, कामना, इच्छा' स्पृहा, (Desire) मनोरथ, चाह ।

अभिव्यापक-हिं० वि० [सं०] [स्त्री अभिव्यापिका] पूर्ण रूप से फैलने वाला (Diffusible)

अभिशप्त-हिं० वि० [सं०] शापित, जिसे शाप दिया गया हो ।

अभिशापित-हिं० वि० [सं०] देखो—अभिशप्त ।

आभशस्तिपाः-सं० निन्दनीय पाप मय रोगों से रक्षा करने वाला । अथर्व० । सू० ७ । १४ । कां० ८

अभिशापः-सं० पु०
अभिशाप-हिं० संज्ञापु० } [वि० अभिशापित, अभिशप्त] शाप, अनिष्ट, प्रार्थना, वद दुआ । ब्राह्मण, गुरु, वृद्ध और सिद्ध आदि के शाप का नाम "अभिशाप" है । भा० म० २ । मा० नि० ज्व० ।

अभिशोचनम्-शोच—

अभिषङ्गः-सं० पु०
अभिषंग-हिं० संज्ञा पु० } (१) काम, शोक, भय और भूतादिकों के आवेश होने का नाम अभिषग है । भा० म० २ आगन्तुज्व० लक्षण । (२) भूत, विष, आदि सम्बन्ध । यक्ष पिशाच आदि द्वारा उत्पन्न पीड़ा । र० मा० ७ । (३) दृढ़ मिलाप आलिंगन (४) आक्रोस, निन्दा, कोशना (५) पराजय ।

आभिषङ्ग ज्वरः-सं० पु० ज्वर विशेष जो भूत आदि के आवेश से होता है यह काम आदि जन्य भेद से ६ प्रकार का होताहै शार्ङ्ग० । भा० म० २ आग, न्तुक ज्वर । मा० नि० ज्वर । ज्व० च० ज्व० नि० ।

अभिषवम्-सं० क्ली०
अभिषव-हिं० संज्ञा पु० } (१) काञ्जिक, काँजी (See-kanji) रा० नि० व० १५ । (२) ताड़ी (सुराभेद) सेंधी हिं० । ताड़ाची दारु मह० । ताड़ी (Toddy) इं० । पु० (३) यज्ञ में स्नान (४) मद्य सन्धान । मे० चतुष्कं । (५) सोमरस पान । मद्य खींचना । शराब चुआना । (६) सोमलता को कुचल कर गारना ।

अभिषिक्त-हिं० वि० [सं०] [स्त्री० अभिषिक्ता] कर्म में नियुक्त, कृताभिषेक (Anointed to office, enthroned)

अभिषुकम्-सं० क्ली० (१) कावेल आदि प्रसिद्ध फल विशेष । पोस्ता वं० च० चि० च्यवनप्राश । पु०, (२) कावेल वृक्ष । सु० ।

अभिषुतम्-स० पण्डाकी, शांडाकी, काञ्जिक विशेष । अम० । देखो काँजो । (Kanji)

अभिषुविक्रान्तम्-स० पु० माधवी सुरा' माधवी सुरा० । (A kind of wine) देखो—माधवी । वै० निघ० ।

अभिषेकः-स० पु०
अभिषेचनम्- सं० क्ली० } (१) ऊपरसे जलडाल कर स्नान करना । शांति स्नान जल से सिञ्चन । छिड़काव (Bathing, sprinkling)

अभिष्यन्द-हिं० पु०
अभिष्यन्दः-सं० पु० } नेत्र रोग भेद ।(१) नेत्रशूल रोग । आँख आनी, चक्षुपीड़ा Ophthalmia, conjunctivitis) आंख का एक रोग जिसमें सुई छेदने के समान पीड़ा और किरकिराहट होती है । आंखें लाल होती हैं और उनसे पानी और कीचड़ बहता है। वात आदि भेद से यह ४ प्रकार का होता है । देखो नेत्राभिष्यन्दः । (२) अतिवृद्ध । (३) अस्राव, स्राव बहाव, मे० दचतुष्कं ।

अभिष्यन्दी-सं० त्रि० (१) दोष, धातु, तथा मल आदि स्रोतों को क्लेदयुक्त करने वाला, छिद्रों को आर्द्र (नर्म, तर) करने वाला ।

कुसुमा० टी० ज्वर । (२) स्रोत स्राबि द्रव्य वा० टी० हेमाद्रि० । (३) कफकारक पदार्थ। लक्षण—जो द्रव्य अपने पिच्छिल और भारीपन से रस वाहिनी शिराओं को रोक कर शरीर में भारीपन करता है उस पदार्थ को "अभिष्यन्दी" कहते हैं[जैसे—दही भा० मि० प्र० खं० १ ।

अभिसरः-सं० पु० (१) परिचारक (२) (An attendant) सहचर, अनुचर । (३) मददगार; संगी, साथ रहने वाला साथी । रत्ना० । प्राणाभिसर च० द्र० सू० ६ अ० ।

अभिसरण,न-हिं० संज्ञा पु०[सं०अभिसरण] आगे जाना (२) समीप गमन ।

अभिसरना-हिं० क्री० अ० [सं० अभिसरण] संचरण करना । जाना । (२) किसी वांछित स्थान को जाना ।

अभिसारना-हिं० क्री० अ० [सं० अभिसारणम्] (१) गमन करना । जाना । घूमना ।

अभिसार:-सं० पु० अभिसार हिं० संज्ञा पु० (१) शकुली मत्स्य [शाल माछ वं० मद० व० १२ । (२) बल (Strength) धर० मत्स्य, मछली (Fish) [वि० अभिसारिका, अभिसारी] ।

अभिसोचनम्-सं० क्री० कोसना । अथर्व० सू० ६ ७ । का० ४

अभिहिता-सं० स्त्री० जल पिप्पली जल पीपर । वै० नि०

अभिज्ञ:-सं० त्रि०
अभिज्ञ:-हिं० वि० } (१) जानकार, विज्ञ । (२) निपुण । कुशल

अभिज्ञान-हिं० संज्ञा पु० [सं०] [वि० अभिज्ञात] (१) स्मृति, ख्याल ।

(२) वह चिन्ह जिससे कोई चीज पहिचानी जाय । लक्षण । पहिचान । (३) निशानी । परिचायक । चिन्ह ।

अभीक:-सं० पु०
अभीक हिं० वि० } कामुक (Cupidinous, lustful) मे० कत्रिकं । (२)निर्भयनिडर लंपट

अभीरणी-सं० स्त्री० दुन्दुभ सर्प (A serpent named dundubha) वै० निघ० ।

अभीरु-सं० स्त्री० (१) शतमूली । सतावर -हिं० (Asparagusrecemosus) वा० सू० १५ अ० दूर्व्वादिव० सि० यो० यक्ष्म० चि० त्रयोदशांगे । (२) महाशतावरी । रसे० चि० ८ अ० ।

अभीरूपत्री-त्रिका-सं० स्त्री० शतावरी, सतावर, (Asparagusrecemosus) अम०

अभीशु:घु:-स० पु० ग्रग्रह, लगाम, डोर, मे० ।

अभीषङ्ग:-सं० पु० आक्रोस, अभिषङ्ग, शाप (Curse)

अभीष्ट-सं० पु०
अभीष्ट:-हिं० संज्ञा पु० } (१) तिलक वृक्ष । तिल हिं० । (Sesamum Indicum)-रा० नि० व० १० (२) वि० इच्छित, वांछित । मनोरथ. मन चाहीवात (Wished for Desired)

अभीष्टगन्धक-सं० पु० माधवी लता । मद० व० ३ See Madhavilata

अभीष्टा-सं० स्त्री० रेणुक' गन्ध, द्रव्य, रेणुका । श० च० see renuka

अभुक्त:-सं० त्रि०
अभुक्त-सं० वि० } न खाया हुआ । उपवास किया हुआ (Starved, fasted) अजीर्णेस्व दिवा निद्रा पाषाणमपि जीर्य्यति वै० निघ० । (२) न भोग किया हुआ ।

अभुग्ण:-सं० त्रि० नीरोग, स्वस्थ (Healthy)

अभुलास-सिंध० हब्बुलाआस, बिलायती मेंहदीहै ।

अभेडा-गु० अमड़ा' अम्बाड़ा (Spondias magifera)

अभेद-हिं० संज्ञा पु० [सं०] [वि० अभेदनीय, अभेद्य (१) भेद का आभाव । अभिसन्नता । एकत्व । (२) एकरूपता, समानता वि० । (३) शून्यभेद । एक रूप । समान वि० [सं० अभेद्य ।

अभेदनीय-हिं० वि० [सं०] दे० अभेद्य ।

अभेद्यम्-सं० क्री०
अभेद्य-हिं० संज्ञा पु० } (१) हीरक, हीरा । Diamond डायमण्ड इं० रा० नि० व० १३ । देखो वज्रम । हिं० वि० (१) अभेदनीय । जिस का भेदन वा छेदन न हो सके । जिसके भीतरकोई चीज घुस न सके जिसका विभाग न हो सके Indivisivle Inseparadle (२) जो टूट न सके । अखडनीय ।

अभेषजम्-सं० क्री० विपरीत औषध, उलटी दवा । बाधन तथा अनुबाधन भेद से यह दो प्रकार का होता है । च० चि० १ अ० ।

अभोज-हिं० वि० [सं० अभोज्य] न खाने योग्य ।

अभोजनम्-स० क्री० (Fasting) अभोजन

हिं० पु० । उपवास, अभोजन, भोजनाभाव, अनाहार, लंघन: ।

अभोज्य-हिं० भोजन के अयोग्य (Unfit to be eaten)

अभौतिक-हिं० वि० [सं०] (१) जो पञ्चभूत का न बना हो । जो पृथ्वी, जल, अग्नि आदि से उत्पन्न न हो ।

अभ्यक्त-हिं० वि० [सं०] (१) पाते हुये लगाये हुये, (२) तैल वा उबटन लगाये हुये ।

अभ्यङ्ग-सं० पु० तिल कल्क ।

अभ्यङ्गः-सं० पु०
अभ्यङ्ग-हिं० संज्ञा पु० } [वि० अभ्यक्त, अभ्यंजनीय (१) लेपन, चारोओर पोतना, मल मल कर लगाना, उद्वर्तन । (२) तैल (आदि) मर्दन, तेल लगाना, तेल लेपन, स्नेहन ।

(१) कमलपत्र, तगर, चिरौंजी, दारुहल्दी, कदम्ब, बेर की मिंगी, इनकी मालिश करने से मुख कमलवत् हो जाता है । (२) जौ, राल, लोध, खस, रक्तचंदन, शहद, घी, गुड़ इनको गोमूत्र में पकाये । जब कलछी से लगने लगे तब उतार लें, इसका मर्दन करने से नीलिका व्यंग और मुखदूषिकादि रोग दूर होकर मुख मण्डल कमल सदृश हो जाता है और पांव कमल दल के तुल्य हो जाते हैं । वा० उ० अ० ३२ ।

अभ्यङ्गादि—चोगुने बकरा के मूत्र में गौं के गोबर का रस मिलाय उसमें सिद्ध किया हुआ तैल (सरसों का तैल) मालिश, पान तथा उत्सादन में श्रेष्ट है ।

चक्र० द० अपस्मार चि०

अभ्यङ्गादि समान्योपाय:—अभ्यङ्ग, स्नेहन निरूहवस्ति, स्वेदकर्म, उपनाह, उत्तर वस्ति, सेकें, इन्ही को तथा वातनाशक, स्थिरादिगण से सिद्ध किये रसों को वात के मूत्रकृच्छ में दें ।

गिलोय, सोंठ, आमला, असगन्ध, गोखरू, इन्हें वात रोगी तथा शूलयुक्त मूत्रकृच्छ वाले मनुष्य को पिलाएँ ।

सेंक, गोता लगाना, शीतल लेप, ग्रीष्म ऋतु, के योग्य विधान, वस्ति कर्म, दूध के पदार्थ, दाख, विदारीकन्द, गन्ने का रस तथा घृत इन्हे पित्त के रोगो में बरतें ।

कुश, काश, सर, डाभ, ईख ये तृण पञ्चमूल पित्तके मूत्रकृच्छ को हरता तथा बस्ति का शोधन करता है । इनमें सिद्ध दूध पान करने से लिंग में उपजे हुये रक्त को दूर करता है ।

चक्र० द० मूत्रकृच्छ्र० चि० ।

गुण—जल सींचने से जिस प्रकार वृक्षमूल में अंखुए बढ़ते हैं उसी प्रकार स्नेहसिंचन (तेलाभ्यंग से धातुओं की वृद्धि होती है । शिरा, मुख रोमकूप तथा धमनी द्वारा तर्पण होताहै । सुश्रुत ।

मनुष्य को उचित है कि प्रति दिन अभ्यंग अर्थात् तैल मर्दन करता रहे । क्यों कि इससे बुढ़ापा, थकावट तथा बात रोग नष्ट हो जाते हैं, दृष्टि निर्मल बनी रहती है, शरीर पुष्ट बना रहता है, निद्रा सुखपूर्वक आती है, त्वचा सुन्दर और दृढ़ हो जाती है, वा० सू० १ अ० । परन्तु इस तेल का प्रयोग सिर, कान और पैर में विशेषता से करता रहे । र० मा० अभ्यंग वातरोग नाशक है तथा धातुओं की समता, बल, सुख, नींद, वर्ण, मृदुता करता और दृष्टि को पुष्ट करता है, शिरोऽभ्यंग अर्थात् शिर में तैल लगाने से शिर को तृप्त, केशों को दृढ़ और नेत्र को पुष्ट करता है तथा केशों को साफ करता, केशों के लिये उत्तम और धूलि प्रभृति द्वारा हुई केश की मलिनता को दूर करता है । मद० व० ३ ।

अभ्यंग का निषेध—जो मनुष्य कफ से ग्रस्त है, अथवा वमन विरेचन देकर शुद्ध किया गया है या जो अजीर्ण से पीड़ित है उसको तैल मर्दन न करे । वा० सू० १ अ० ।

(३) शिर में तेल लगाना, भा० ।

(४) दोषयुक्त व्रण के दोष शमनार्थ तथा उनको कोमल करने के लिये उपाय विशेष । सु० चि० १ अ० ।

अभ्यंजनीय-हिं० वि० [सं०] (१) पोतने योग्य लगाने योग्य, (२) तेल वा उबटन लगाने योग्य ।

अभ्यञ्जनम्-सं० क्ली० तैल (Oil) । हे० च० तैल मर्दन, तैल लेपन, उबटन । रा० नि० व० १५ ।

अभ्यन्तः-सं० त्रि० आतुर रोगी (Diseased affected, with sickness) अम०।

अभ्यन्तर-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) मध्यम बीच। (Inner, Internal) (२) हृदय (Heart) क्रि० वि० भीतर, अन्दर।

अभ्यन्तरवर्ती-सं० स्त्री० मध्यवर्ती।

अभ्यन्तरायामः-सं० पु० उक्त नाम का धनुस्तम्भ रोग विशेष अन्तरायाम। यह एक प्रकार की वातव्याधि है जिसमें बलवान वायु कुपित होकर अंगुली, वंक्ष, हृदय और गल देश आदि में प्राप्त होकर वायु समूह को खींचकर मनुष्य को क्रोणवत् (कूबड़) झुका हुआ कर देता है, जिससे नेत्र स्तब्ध हो जाते हैं और डाढें बैठ जाती हैं।

लक्षण—अंगुली, गुल्फ (पांव की गांठ), पेट, हृदय, वक्षस्थल और गल में रहने वाली वायु वेगवान होकर नसों के समूह को सुखाकर बाहर निकाल दे और जब उस मनुष्य के नेत्र स्थिर हो जावें, ठोड़ी जकड़ जाय, पसलियों में पीड़ा हो, मुख से कफ गिरने लगे और मनुष्य आगे की ओर को झुक जाय तो वह बलवान वायु अन्तरायाम को उत्पन्न करता है अर्थात् तब उसे "अन्तरायाम वात व्याधि" के नाम से पुकारते हैं। मा० नि० वा० व्या०। देखो—

अभ्यमितः-सं० त्रि० आतुर, रोगी (Disesed) अम०।

अभ्यवकर्षणम्-सं० क्ली० शल्य आदि उत्पाटन। शल्य आदि का उखाड़ना (निकालना) अम०।

अभ्यवहरणम्-सं० क्ली० भोजन (Eating, Food)

अभ्यवहारः-सं० पु० आहार (Food) रत्ना०।

अभ्यक्त-सं० तिल की खली।

अभ्यान्तः-सं० त्रि० रोगी आतुर, (Diseased) अम०।

अभ्याहारः-सं० पु० भक्षण, भोजन, आहार, ईटिंग (Eating) यह चर्व्य (चर्वण योग्य), चोष्य (चूसने या चोषण योग्य), पेय (पान योग्य) और लेह्य (चाटने योग्य) भेद से चार प्रकार का होता है। (१) च्युएबल (Chewable) मैस्टिकेटिबल (Masticatible)। (२) (Capable of being sucked) (३) (To belicked (४) Drinkable। सु०।

अभ्यु-सं० पु० मुनक्का बीज (Seeds of dried grapes)

अभ्युदय-हिं० संज्ञा पु० [अ०] [वि० अभ्युदित, आभ्युदयिक] (१) प्रादुर्भाव, उत्पत्ति।

अभ्युदित-हिं० वि० [सं०] (१) उगा हुआ। निकला हुआ। उत्पन्न, प्रादुर्भूत। (२) दिन चढ़े तक सोने वाला।

अभ्युषः-सं० पु० रोटी (Bread) आ० सं० इं० डि०।

अभ्युक्षण-हिं० संज्ञा पु० [सं०] [वि० अभ्युक्षित अभ्युक्षय] सेचन, छिड़काव, सिंचन।

अभ्युक्षित-हिं० वि० [सं०] (१) छिड़का हुआ, अभिसिंचित। (२) जिस पर छिड़का गया हो, जिसका अभिसिंचन हुआ हो।

अभ्युक्ष्य-हिं० वि० [सं०] छिड़कने योग्य।

अभ्यूषः-सं० पु० अभ्योष। ईषत्पक्व कलाय आदि। (अटी० भ०) अम०। रोटी। आ० सं० इ० डि०

अभ्रम्-सं० क्ली० / अभ्र-हिं० संज्ञा पु० (१) मुस्ता, नागर मोंथा (Cyperus Rotundus) (२) मेघ, बादल। क्लाउड (Cloud) इं०। रा० नि० व० ६। (३) अभ्रक धातु टैल्क (Talc) इं० रा० नि० व० १३। (४) आकाश। स्काइ (Sky) ऐट्मॉस्फियर (Atmosphere) इं०। (५) स्वर्ण। सोना। Gold ऑरम (Aurum) ले०।

अभ्रकम्-सं० स्त्री० / अभ्रक-हिं० संज्ञा पु० (१) भद्रमुस्ता, नागर मोंथा (Cyperus pertenuis) (२) कर्पूर। कैम्फर (Camphor) इं० (३) सुवर्ण। ऑरम (Aurum) (४) वेत्र, वेतसवृक्ष (Calamus rotong) देखो—वेत्रसः। (५) अबरक धातु विशेष। भोडल। भुखेज।

गिरिजं, अमल (अ) गिरिजामलं, गौर्य्यमलं (स्वामी) गिरिजा बीजं, गरजध्वजं, (के),

निर्मल, (मे)' शुभ्रं (ज), घनं' व्योम, अब्दं (र), अभ्रं भृङ्गं, अम्बरं, अन्तरीक्षं, आकाश, बहुपत्रं, ख, अनन्तं, गोरोजं, गोरीजेयं, (ग) सं० अभ्भर बं० अभ्रक, तल्क, अफ़रीदून, इख्तराल, कर्बून, कौकबुल् अर्ज़, मुनक्का, मुकलिस, अर्कुलअरूस, समअ, गगन, जना, हुल्सब्त, अ० । तल्क–द० सितारहे ज़मीन–फा० । अबरक उ०माइका Mica ले० । टैल्क, Talc मस्कोबी ग्लास Muscovy glass, ग्लीमर Glimmser इं० भिंगा कना० । कों० । किन । सिं० । हिंगुल गु०, मह० ।

यह एक प्रकार का स्फटिकवत खनिज है। जिसकी रचना पत्राकार होती है और जिसके अत्यन्त पतले २ परत या पत्र किये जा सकते हैं ।। यह बड़े बड़े ढोंकों में तह पस्तह जमा हुआपहाड़ों पर मिलता है साफ करके निकालने पर इसकी तह कांच की तरह निकलती है यह आग से नहीं एवं लचीला होता तथा धातुवत् आभा प्रभा रखता है इसके पत्र पारदर्शक एवं मृदु होते और सरलता पूर्वक पृथक किये जा सकते हैं । एक ओरसे दूसरी ओर तक फाड़नेपर टूटने की अपेक्षा फटते हुये प्रतीत होते हैं । वैद्यक ग्रन्थों में इसका महारस या उपरस लिखा है परन्तु आधुनिक रसायन वाद के अनुसार यह न धातु है न उपधातु है क्योंकि न इसमें धातु के लक्षण हैं और न उपधातु के और न वह मौलिक तत्वों में से है

उद्भव स्थान—बहुधा यह पर्वतों पर पाया जाता है । हमारे देश में अभ्रक प्रायः श्वेत भूरा तथा काला निकलता है सीरिया और भारतवर्ष में बंगाल, राजपूताना ज़ैयपुर, मद्रास नेल्लौर और मध्य प्रदेश आदि की पहाड़ियों में इसकी बड़ी बड़ी खानें हैं अबरक के पत्तर कंदील इत्यादि में लगते हैं तथा विलायत आदि में भी भेजे जाते हैं। वहां ये कांच की टट्टी की जगह किवाड़ के पल्लों में लगाने के काम में आते हैं ।

अभ्रक भेद—

रस शास्त्रों में अभ्रक की चार जाति एवं वर्णानुसार इसके चार भेदों का उल्लेख पाया जाता है जैसे—

ब्रह्मक्षत्रिय विट् शूद्र भेदात्तस्य चतुर्विधम् ।
क्रमेणैवं सितं रक्त पीतं कृष्णं च वर्णतः ॥

अर्थ—ब्राह्मण, क्षत्रीय' वैश्य एव शूद्र भेद से अभ्रक चार प्रकार का है उन चारों के क्रमश सफेद, लाल, पीत, और काले वर्ण हैं ।

चारों वर्णों के भेद—

प्रशस्यते सितं तारे रक्तं तन्त्र रसायने ।
पीतं हेम निकृष्णं तु गदे शुद्धं तथापि च ॥

अथ—चांदी के काम में सफेद अभ्रक, रसायन कर्म में लाल, सुवर्ण कर्म में पीला और औषध कार्य में शुद्ध काला अभ्रक काम में लाना चाहिये ।

कृष्णाभ्रक के भेद—

पिनाकं दर्दुरं नागं बज्रं चेति चतुर्विधम् ।
कृष्णाभ्रक कथितं प्राज्ञस्तेषां लक्षण मुच्यते ॥

अर्थ—पिनाक, दर्दुर, नाग और वज्र ये चार भेद काले अभ्रक के पंडितों ने कहे है। अब इनके लक्षण का वर्णन किया जाता है।

पिनाक के लक्षण—

मुंचत्यग्नो विनिक्षिप्त पिनाकं दलसंचयम् ।
अज्ञानाद्भक्षणं तस्य महाकुष्ठप्रदायकम् ॥

अथ—पिनाक अभ्रक अग्नि में डालने से अर्थात् धमन करने से दलसंचय अर्थात् पर्तों को छोड़ता है । अज्ञानवश खाने से यह महाकुष्ठ करता है ।

दर्दुर के लक्षण—

दर्दुरत्वग्नि निक्षिप्त कुरुते दर्दुरध्वनिम् ।
गोलकान् बहुशःकृत्वातस्मान्मृत्युप्रदायकम् ॥

अर्थ—दर्दुर अभ्रक अग्नि में डालने से मण्डूक की तरह शब्द करता है और भक्षण करने से पेट में गोले का रोग प्रगट करता एवं मृत्युकारक होता है ।

नाग के लक्षण—

नागं तु नागवद्वन्हौ फूत्कारं परिमुंचति ।
तद्भक्षितमवश्यन्तु विदधाति भगदरम् ॥

अर्थ—नाग अभ्रक अग्नि में डालने से सर्प के समान फुफकार मारता हैं । इसके खाने से अवश्य भगंदर रोग होता है ।

वज्राभ्रक के लक्षण—

वज्रं तु वज्रवत्तिष्ठे न चाग्नोविकृतिं व्रजेत् ।
सर्वाभ्रेपुवरं वज्रं व्याधिर्वार्धक्य मृत्युजित् ॥

अर्थ—वज्राभ्रक अग्नि में डालने से वज्र के समान जैसा का तैसा रह जाता है और बिकार को नहीं प्राप्त होता। वह सब में श्रेष्ट है और व्याधि, बुढ़ापा एवं मृत्यु को दूर करता है।

यदंजननिभं चिस्नं न वह्नौ बिकृतिं व्रजेत् ।
वज्र संज्ञं हितद् योज्यमभ्रं सर्वत्रनेतरत् ॥

अर्थ—जो अभ्रक कालां होता है तथा अग्नि में तपाने से विकार को नहीं प्राप्त होता, वह वज्राभ्रक है। यह सर्वत्र हितकारक और योग्य है इससे भिन्न अन्य प्रकार ऊत्तम नहीं।

इस शास्त्रोक्त वर्णन के विपरीत आज हमें पांच प्रकार का अभ्रक प्राप्त होता है—श्वेत, अरुण, पीत, भूरा और काला। ये सब वर्ण के कारण ही भिन्न नहीं प्रत्युत प्रकृति में इनकी रचना ही एक दूसरे से सर्वथा भिन्न है।

अभ्रक कोई मौलिक पदार्थ नहीं,प्रत्युत अनेक मौलिकों का एक यौगिक है। इसीलिये रसायन शास्त्रियो ने इस यौगिक से कोई और यौगिक बनाने का प्रयत्न नहीं किया न डाक्टरों ने इसे रोगों में व्यवहार किया है। एलोपैथी में अभ्रक को किसी रूप मे भी खाने में नही बर्ता जाता। हाँ इसके पत्रोंका उपयोगअदृश्य रसायन बिज्ञानी यन्त्रों में करते हैं। परन्तु आयुर्वेदज्ञों ने इसको खाने के लिए उपयोगी बताया और इन्होंने ही इसको अग्नि में डालकर इसके उक्त यौगिक तोड़ कर नए यौगिक ऐसे बनाये कि जिसे प्राणियों को रोग के समय में देने पर वह बड़े लाभदायक सिद्ध हुये तब से इसका उपयोग चल पड़ा।

(१) श्वेताभ्रक—(Muscovite) यह पत्राकार चांदीवत् शुभ्र वर्ण का होता है। सुहागे के साथ मिलाकर तीव्र अग्नि देने से इसका आधे के लगभग शैलकेतु (Silicate) नाम नया यौगिक बनता है यह काच सा होता है इस को हमारे यहां अभ्रक सत्व कहते हैं।

(२) अरुणाभ्रक या रक्ताभ्रक(Lepidolite) यह अभ्रक श्वेत अभ्रक की अपेक्षा कम पत्राकार होता है इसके छोटे छोटे पत्र होते हैं और इसके साथ औरयौगिकके कण मिश्रित होतेहैं बहुधा यह अभ्रक एक प्रकार की अरुण खड़िया मिट्टी के साथ मिला पाया जाता है यह समग्र अभ्रकों से मूल्यवान् होता है क्योंकि इसमें रक्तरूपम् नामक धातु का संयोग हुआ होता है इसका संकेत सूत्र पां रक्त [स्क (ऊ उ प्ल) २] (स्फ शै उ- ३) ३।

(३) पीताभ्रक—(Cookeite) इस अभ्रक में पांशुजम धातु नही होती न तीसरा स्फट शैलोष्मिद का यौगिक होता है बल्कि इस के स्थान पर शैलोष्मिद होता है इसका सकेत सूत्र रक्त [स्फ (ऊ उ) २] ३ (शै ऊ ३) २ है। यह पत्राकार कहरवी वर्ण का होता है।

(४) भूराभ्रक—(Lepidomelane) यह अभ्रक भारतवर्ष में बहुत पाया जाता है। यह वर्ण में श्यामता लिये, भूरा होता है। प्राय: बाजार में यही अभ्रक मिलता है। इसके पांच पांच सात सात इंच तक बड़े पत्र देखे जाते हैं। इसका संकेत सूत्र—(उ पां) २ लो ३ (लो स्फ) ४ (शै ऊ ४) ५

(५) श्याम अभ्रक—(Biotite) इसके दो भेद हैं। एक बृहद पत्र युक्त, दूसरा सूक्ष्म पत्र युक्त। सूक्ष्म पत्र युक्त श्याम अभ्रक को हमारे यहां वज्र कहते हैं।

इस बृहद् पत्र युक्त अभ्रक का संकेत सूत्र—(उ पां) (कां लो) २ स्फ २ (शै ऊ ४) ३

दूसरा श्याम अभ्रक—जो छोटे पत्र का होता हैं और जिसकी रचना प्राय: डलों के आकार की होती है। इसकी और प्रथम की रासायनिक बनावट में भी अन्तर है। सकेत सूत्र—(उपां) २ (कां लो) २ का ३ स्फ (शै ऊ ३) इसमें उष्मजन को १ मात्रा कम है, किसी में दो कम होती है। जिसमें उष्मजन कम होता है वह अभ्रक अग्नि पर रखने से नहीं फूलता। जिसमें अधिक होता है वह फूलता है। जो अभ्रक नहीं फूलता उसको वज्र संज्ञक कहते हैं और रस

शास्त्रों में इसी को श्रेष्ठ माना है। भस्म के लिए इसी को व्यवहार में लाना चाहिये।

कहा भी है—

तथाभ्रं कृष्ण वर्णाभं कोटि कोटि गुणाधिकम्।
स्निग्धं पृथु दलं वर्ण सयुक्तं भारतोधिकम्॥
सुख निर्मोच पत्रं च तदभ्रं शस्तमीरितम्।

अर्थात्—कृष्णाभ्रक अर्थात् वज्र करोड़ों गुण युक्त है (इसके लक्षण) जो चिकना मोटे दल का, सुन्दर वर्ण युक्त और बहुत भारी हो और जिसके पत्र सहज में अलग हो जाएँ वह अभ्रक श्रेष्ठ है।

टिप्पणी—इस समय वैद्य तीन प्रकार के अभ्रक भस्म के लिये काम में लाते हैं। श्वेत भूरा और काला (यूनानी हकीम इनमें से श्वेत और श्याम दो ही का उपयोग करते हैं) तीनों अभ्रकों में से श्वेत और भूरे ये दोनों शास्त्र परीक्षा में वज्र नहीं उतरते। काले अभ्रक में से कोई कोई ही इस परीक्षा में ठीक उतरता है।

ज्ञात रहे कि दर्दुर, नाग और पिनाक नाम धारी अभ्रकों में प्रयोग करने पर उपर्युक्त कोई शास्त्रीय दुर्गुण दिखाई नहीं देता। रही गुण की बात, प्रत्येक प्रकार के अभ्रक एक सा गुण नहीं कर सकते, क्यों कि आप ऊपर देख चुके हैं कि सब के यौगिक भिन्न २ हैं। जब सबों की रसायनिक रचना में अन्तर है तो जब इनकी भस्में बनेगीं, उनकी रसायनिक रचना भी एक दूसरे से भिन्न होगी। ऐसी दशा में गुणों में अन्तर आना स्वभाविक बात है, पर इस कथन में कोई महत्व नहीं कि पिनाक; दर्दुर, नाग नामक अभ्रक अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न करते हैं।

अभ्रक शोधन विधि

छोटे कण का श्याम; अभ्रक प्रायः बालू रेत आदि से मिश्रित होता है। अत एव भस्म बनाने से पूर्व इसकी शुद्धि आवश्यकीय है। अन्यथा इससे नाना प्रकार के रोगों के होने की अत्यधिक सम्भावना रहती है। यथा—

सत्वार्थं सेवनार्थं च योजयेच्छोधिताभ्रकम्।
अन्यथात्व गुणं कृत्वाविकरोत्येव निश्चितम्॥

अर्थ—सत्व के वास्ते या सेवन के वास्ते शोधित अभ्रक लेना चाहिये। अन्यथा अवगुण कर निश्चय विकारों को उत्पन्न करता है।

अशोधित अभ्रक की भस्म निम्न दोषों को करती है।

पीडां विधत्ते विविधांनराणां
कुष्टंक्षयं पांडु गदं च शोफम्।
हृत्पार्श्व पीडां च करोत्यशुद्ध-
मभ्रंहि तद्वद गुरुबह्नि हृस्यात्॥

अर्थ—यह (अशुद्ध अभ्रक) मनुष्यों को अनेक प्रकार की पीड़ा. कोढ़, क्षय, पांडु, सूजन और हृदय एवं पार्श्वशूल आदि रोगों को करता तथा भारी है और जठराग्नि को मन्द करने वाला है।

अतः अभ्रक शोधन की कतिपय सरल एवं उत्तम विधियों का यहां उल्लेख किया जाता है-

(१) अभ्रक को तपा तपा कर काँजी या गोमूत्र या त्रिफला के क्वाथ में विशेष कर गोदुग्ध में सात सात बार अथवा तीन तीन बार बुझाने से अभ्रक शुद्ध होता है।

अभ्रक पत्रों को लेकर गाय के धारोष्ण दुग्ध में मलें और सुखाकर फिर मलकर सुखाएँ। तीन बार ऐसा करने से अभ्रक नवनीत के समान कोमल हो जाएगा।

(२) अभ्रक को तपा तपा कर २१ बार काँजी में बुझाने से अभ्रक शुद्ध होता है।

(३) अभ्रक के पृथक पृथक पत्र कर और तपा तपा कर काँजी में बुझाएं। बाद उन पत्रों सहित काँजी को तेज धूप में धर दें। १५-२० दिन या एक मास बाद काँजी को फेंक दूसरे शुद्ध जल में धो लें, अभ्रक शुद्ध हो जायगा।

(४) अभ्रक को तपा तपा कर सात बार सम्भालू के रस में बुझाएं तो अभ्रक के त्रिदोष की शान्ति होती है।

(५) अभ्रक को तपा तपा कर बारबार बेर के काढ़े में बुझाएं। पीछे सुखाकर हाथों से मर्दन करें तो धान्याभ्रक से भी उत्तम हो।

इस प्रकार शुद्धि क्रिया के पश्चात् इसके सूक्ष्म चूर्ण बनाने के लिये धान्याभ्रक क्रिया करें।

धान्याभ्रक की निरुक्ति

चूर्णाभ्रं शालि संयुक्तं वस्त्र बद्धं हि कांजिके।
निर्यात मर्दनाद्यत्तद्धान्याभ्रमिति कथ्यते॥

अर्थ—चूर्ण किये हुये अभ्रक के साथ धानों को कपड़े में बांध कर काँजी में रख दें और उसे मर्दन करें। इससे जो रेत सा अभ्रक चूर्ण निकले इसे धान्याभ्रक कहते हैं।

धान्याभ्रक करण विधि

अभ्रक को चूर्णकर धान (चौथाई भाग) मिला दें और कम्बल में ढीला बांध कर तीन रात तक काँजी में रखें। फिर इसे जोर से मलें। इस प्रकार मलकर पानी में डुबाकर फिर मलें, फिर डुबाएँ। इस प्रकार रगड़ने से अभ्रक मुलायम होकर शीघ्र टूटता रहता है और उसके छोटे छोटे कण होकर कम्बल से निकल कर उस पानी में नीचे बैठ रहते हैं। इस तरह अभ्रक को पानी में बारीक रूप से निकाल लें। जल के स्थिर हो जाने पर निथार दें। और नीचे बैठेरेत समकोमल धान्याभ्रक को मारण के काम में लाएं।

अभ्रक को कोमल करने की विधि—

अभ्रक के पत्रों को अलग अलग करके एक पात्र में रखें। इसके ऊपर से कुकरौंधे का इतना रस भरें कि वह डूब जाय और ४–५ दिन तक धरा रहने दें। तदन्तर उसको एक माटी थैली में भर कर उसमें कौड़ियां डालें और थैली का मुँह बांध खूब रगड़ कर धोएँ। अभ्रक रेशमवत् स्वच्छ एवं मुलायम हो जायगा। उपयुक्त समग्र क्रियाओं के हो जाने के बाद इसकी भस्म प्रस्तुत करें।

श्याम अभ्रक भस्म विधि

१—धान्याभ्रक किये हुये श्यामाभ्रक को कुकरौंधे के रस में थोड़ी सज्जी अथवा सुहागा मिलाकर साने, फिर टिकिया बनाकर शराव में धरें और कपरोटी कर गजपुट की अग्नि दें। एक बार में ही अभ्रक भस्म होगी। इसी प्रकार १० या १६ बार करने से निश्चन्द्र गोरथे रंग का अभ्रक भस्म प्रस्तुत होगा। ३० पुट या १०० पुट देने पर उत्तम प्रकार की भस्म निर्मित होगी। गुण वृद्धि के लिये १६ पुट आक के दूध की धतूरे के पत्तों के रस की, थूहर के दूध की, भांग के काढ़े की, पीपल वृक्ष के अन्तर छाल के काढ़े की त्रिफले के काढ़े की, बकरे के खून की, गोखरू आदि की दें। और क्रमशः १६–१६ बार पुटित करके टिकिया बना शराब में कपरौटी युक्त कर गजपुट में फूंकते जाएँ १००० पुट देकर सहस्र पुटी करलें या ५०० पुटी बना लें। यह प्रत्येक रोग में अचूक सिद्ध होगी।

२—शुद्ध अभ्रक को बसौंदी के रस में खरल करके सम्पुट में रखकर गजपुट की अग्नि दें। शीतल होने पर निकाल कर पुनः बसौंदी के रस में खरल कर टिकिया बनाकर उक्त विधि से दस अग्नि दें तो उत्तम भस्म बन जाती है।

३—इसी तरह नागरमोथे के क्वाथ में छोटे छोटे टुकड़े कर अग्नि देते रहने से दस पुट में अभ्रक की भस्म बन जाती है।

४—इसी तरह अभ्रक को भोलाई पानी के रस में घोट २ कर दसवार अग्नि देनेसे उत्तम भस्मबन जाती है। प्रतिवार वनस्पति रस छोड़कर अभ्रक भस्मखूब घोटना चाहिये। जितना अधिक घुटेगा उतना ही शीघ्र चन्द्रिका रहित अभ्रक हो जायगा

५—मिट्टी रेत रहित अभ्रक के सूक्ष्म टुकड़े लेकर उनको आधे दूध में घोटकर २५ पचीस कपरौटी करके सुखाएं और धूपमें सुखाकर अकपन्न गजपुट रखकर खूब अच्छी गजपुटकी अग्नि दें स्वांग शीतल होने पर निकाल पुनः उक्त आधे दूधमें अच्छी तरह घोटकर अग्नि दें इस पुट इसी प्रकार आधे दूधको और बटजटा क्वाथको दें प्रत्येक बार में अग्नि की मात्रा काफी होनी चाहिये। दसपुट में चंद्रिका रहित उत्तम लाल अभ्रक की भस्म बन जाती है। यह भस्म अच्छी बनती है। और काफी गुण करती है।

६—अभ्रक को पान के रसमें घोटकर टिकिया बनाकर तीन भावना अग्नि सहित दें। फिर तीन भावना हुलहुल के रस की दें, फिर बटजटा क्वाथ की, फिर मूसली के काढ़े की फिर तीन गोखरू के

[illegible] बाद फिर तीन चौंच के बाद वा. फिर तीन [illegible] मूसली वा. फिर तीन ताड़ फलके बाद [illegible] फिर तीन कटहल वा. इसके पश्चात एक [illegible] दुग्ध की, एक दधि की और एक घृत की, एक शहद की, एक खांड की देकर पकाकर रखें. इस प्रकार उत्तम पोटली अभ्रक तयार होती है।

७—वट, दुग्ध, तुलसी, अर्क, नागरमोथा, गजपीपल, आकाश, अदरख का रस इन सब वस्तुओं को भस्म में २-१२ गजपुट दें। तो उत्तम वरण वर्ण की भस्म बनती है।

८—दोषरहित अभ्रक में बेधा जाय इतना पूर्व आदि का रस भर कुम्हार के रस में घोटकर टिकियां बनाएं और गजपुट विधि से फूंकें तो एक बार में ही भस्म निश्चन्द्र होगी।

९—अन्य ग्रन्थ में निम्बू, आंवले का रस और सुहागा मिलाकर घोटें पीछे टिकिया बनाकर अग्नि दें. इस प्रकार छः अग्नि देने से सिंदूर समान लाल भस्म प्रस्तुत होगी। यह भस्म दोषों का नाश करती है।

१०. क्षुद्र पुटी अभ्रक क्रिया—

[illegible] अभ्रक खरल में डालकर कूटें। [illegible] सबको करंज में तपाकर गौ दुग्ध में बुझाएं [illegible] पात्र में घृत डाल कर इस अभ्रक को [illegible] दोनों ओर [illegible] या गाय या बकरी का थेला में रख भिगो दें। फिर एक दो पत्र (करौंदा पपीता आदि) में इस अभ्रक को डाल थैली को खूब मसलें जो पानी बाद छः सम्पूर्ण अभ्रक [illegible] पानी में आधा छः पत्तों का निचोड़ अभ्रक को [illegible] लें। इस प्रकार अभ्रक शुद्ध एवं भस्मरूप होता है।

सहस्रपुट देने के लिये [illegible] औषधियों का [illegible] भावना [illegible] ओषधियां [illegible] हैं

[illegible] वट दूध थूहर के दूध अकुवार के पत्र, अपामार्ग की जड़ का रस कुटकी मोथा, गिलोय, भांग गोखरू, कटेरी शालपर्णी, पृश्निपर्णी, सफेद सरसों, खरमंजरी, बकरी की जटा, बकरे का रुधिर बेल, अरणी, चित्रक, तेंदु, हरड़, पाढल की जड़ गोमूत्र, आमला बहेड़ा, जल-कुम्भी, तालीस पत्र, मुसली, अडूसा, असगंध अगस्तिया का रस, भांगरा, केले का रस, सप्तपर्ण धतूरा सोफ, देवदारु, तुलसी, दोनों दूर्वा (श्वेत वा हरित दुर्वा) बसींदी, मरुवा, अनार दाना का रस, काकमाची, (मकोय) शंखपुष्पी, बालछड़, पान का रस. सोंठ, मण्डूकपर्णी, (ब्राह्मी) इन्द्रायण, भारङ्गी, देवदाली, कैथ, शिवलिंगी, कटुम्ही ढाक का रस, तोई' मूषकपर्णी, जवासा, मकोय कलौंजी, और तेजपर्णी। कोई कोई ये ओषधि कहते हैं—पचांगुल का रस, टुंटक, गुड़, सुहागा मालती, सप्तपर्णी (सतवन) नागबला, अतिबला, महाबला, सतावर, कौंच की जड़ का रस, गाजर, (गर्जर) प्याज, लहसुन, उटंगण, अमरबेल, हिलमोचिका, दुद्धी पातालगरुड़ी, जटामांसी दूध, दही, घृत शहद, खाँड़, धाय और पालंकिका

अभ्रक को खरलमें डालकर उपर्युक्त औषधियों के रस में घोटें। जब सूख जाय तब अपने उपलों की आग में फूँक दें। फिर आग में से निकाल कर घोटें और अग्नि दें। इस प्रकार प्रत्येक औषधि के १६-१६ पुट देने चाहिये। जो औषधि रस योग्य हो उसका रस डालें और क्वाथ योग्य के क्वाथ की पुट दें यह अभ्रक भस्म निश्चन्द्र (चमक रहित) लाल होता।

गुण—यह अमृत के समान दिव्य रसायन है और अनेक अनुपानों के संयोग से देह को अजर अमर करता है। अतएव मनुष्य को इस श्रेष्ठ भस्म का सेवन करना चाहिये। सेवन करने वाले को हजारों गुण करे यह समस्त रोगों का शत्रु प्रसिद्ध है।

नोट—(१) अभ्रक भस्म के रंग के लाल करने की विधि—नागबला, नागर मोथा, वट दुग्ध, हल्दी का पानी, मजीठका पानी, इनसमस्त का या एक एक का या केवल बटजटा प्ररोह के काढ़े की भावना दें गजपुट देने से शुक्ल वर्ण की भस्म होगा।

अभ्रक में पुट देने के गुण—अठारह पुट का अभ्रक वातनाशक, छत्तीस का पित्तनाशक और ५४ का कफ प्रमेह और सूजन का नाश करता है तथा अम्लपित्त और आम-

वातादि हस्ति रूप रोगों को मारने के लिये सिंह रूप है सौ पुट के उपरांत अभ्रक बीज संज्ञा को प्राप्त होता है सबीज अभ्रक वीर्य पराक्रम तथा कांति का कारण है और देह को धारण करता है यह क्षीर स्वामी का मत है।

उक्त भस्मों के रसायनिक रूप—

सभी श्याम अभ्रक अग्नि संयोग में आने पर ऊष्मिद होते रहते हैं। अग्नि देने पर कांति लोह और स्फटिकस् धातुएँ ऊष्मिद होती हैं। उदपांश वत का यौगिक भी टूटकर ऊष्मेत हो जाता है और जैसे जैसे ऊष्मेत बनता जाता है वैसे वैसे अभ्रक का वर्ण लाल होता चला जाता है। यदि इसके उक्त यौगिक में अन्तर न आए तो अभ्रक का वर्ण लाल नहीं होता कई बार शैलिका का यौगिक टूट जाता है और इसका ऊष्मजन कम हो जाता है और ऊष्मजन का स्थान कज्जल ले लेता है। उस अवस्था में अभ्रक का वर्ण श्यामता युक्त रक्त हो जाताहै जबशैलकज्जलेत बन जायतो इस यौगिक का बिच्छेद नहीं होता। अन्त तक अभ्रक इसी वर्ण में बना रहता है कभी २ उदपांश वेत रूप जल का सयोग पाकर पांशुजम का यौगिक तीक्ष्ण क्षार में भी परिणित हो जाता है। यह रूप कोसमर्द रस में भस्म बनाने पर ही देखा जाता है और अर्क दुरंधादि में बनाने पर पांशुज तीक्ष्ण क्षार नहीं बनता अभ्रक के उक्त लौहकांत स्फटिक के ऊष्मिद कई रोगों में अत्यन्त लाभ करते हैं और जब ज्वर किसी शारीरिक अङ्ग की विकृति शोथ के कारण स्थिर रूप से बढा रहता हो उस अवस्था में यह अभ्रक आन्तरिक विकृति को दूर करने में शरीर की बड़ी सहायता करता है (आ० नि० मा० १ सं० ७।

श्वेत अभ्रक का सत्वपातन

१—हिना सुर्ख १२ तो० को रात्रि को पानी में तर करे। प्रातः उसका जुलाब लेकर ६ तोला चान्द्राकाभ्रक को उस पानी के साथ यहां तक पीसे करे कि उसकी चमक जाती रहे। फिर छोटी इलायचीका दाना वंशलोचन, मूसली श्वेत प्रत्येक ३ तो० एक एक कर सम्मिलितकरके खरल करने जांय पुनः सम्पूर्ण कौषधि को चार पहर तक खूब घोट कर रख दें।

मात्रा—१ मा०। गुण—उष्ण यकृत निर्बलता, प्रमेह (शुक्र) और मूत्रमेह (सूजाक) के लिये अस्त्र गुणकारी और परीक्षित है। (सदरिया)।

२—नौसादर १ तो०, फिटकरी १॥ तो०, अभ्रक २॥ तो०, नौसादर और फिटकरी को १ छ० पानी में घोलकर इसमें अभ्रक के बारीक पत्र को तर करें और रखदें। १ घन्टा बाद उसे दंडे से कूटे में यहां तक रगड़ें कि दूध की तरह सफेद हो जाय फिर उसमें बहुत सा पानी डाल दें। जब अभ्रक तलस्थायी हो जाय तब पानी को निकाल दें। और ताजा पानी डालें। इसी तरह बारम्बार करे जिससे जल में नौसादर आदि का स्वाद न रहे, फिर सुखाकर रख दें।

गुण—उष्ण प्रधान ज्वर यथा पैत्तिक व आन्त्रिक में १ मा० शर्बत अनार के साथ दिन में तीन बार खिलाएँ। बालक को २ र० से ४ र० तक दें। अनेकों बार का परीक्षित और सदा से प्रयोग में आ रहा है। (रफीक़)।

६—अभ्रक को कत्तरी से कतर कर रात्रि में अम्ल दधि में तर करें। प्रातः काल जल में धोकर काकजंघा बूटी के स्वरस में एक प्रहर खरल करें। धूल की तरह हो जायगा।

गुण—मूत्र प्रणाली के रोग, सूजाक, रक्त प्रमेह, रक्त निष्ठीवन, नासारक्तस्राव, पुरातन कास, श्वास कष्ट, कुकुर खांसी, विविध उष्ण प्रधान ज्वर, शोथ, जलोदर, यकृत्प्रदाह, प्लीह शोथ, शुक्रप्रमेह और सैलान के लिये अनेकों बार का परीक्षित है।

मात्रा व सेवन-विधि—१ र० से २ र० तक मक्खन मलाई या पान के पत्र वा कोई अन्य उपयुक्त औषध के साथ सेवन करें (मज्जन)।

श्वेत अभ्रक भस्म विधि

श्वेताभ्रक का चूर्ण करके अभ्रक के बराबर शोरा और गुड़ मिलाकर खूब कूटें और कूट कूट कर टिकिया बना सम्पुट में रखकर गजपुट की अग्नि दें। एक पुट में अभ्रक की श्वेत भस्म बन जाती है। यदि एक बार में कुछ कसर रह जाय तो इसी तरह दूसरी बार करने पर अच्छी भस्म बन जाती है।

नोट—श्वेत अभ्रक में न तो लोह होता है न कांच। पांशुजम् स्फटिकम् और शैलिका के यौगिक होते हैं इसको जब शोरे के साथ फूंका जाता है तब पांशुजम् धातु कज्जलोपमेत नामक यौगिक में और स्फटिकम् ऊष्मेत् में मिल तथा शैलिका कज्जलोपमेत् से मिल जाते हैं। यह भस्म इतनी उपयोगी नहीं। यह बहुत कम लाभ करती है।

मृत भस्म की परीक्षा

अभ्रक की भस्म जब चमक रहित अर्थात् निश्चन्द्र तथा काजल के समान अत्यन्त बारीक हो तब उसकी ठीक भस्म हुई जाननी चाहिये अन्यथा नहीं। निश्चन्द्र भस्म को ही काम में लाना चाहिये क्योंकि यदि चमकदार हो तो यह विष के समान प्राण का हरण करने वाला और अनेक रोगों को कर्ता है। कहा भी है—

मृतं निश्चन्द्रतां यतं मरणं चामृतोपमम्।
सश्चिद्रं विषवद् ज्ञेयं मृत्युकृद्बहु रोगकृत्॥

अमृतीकरण

त्रिफला का काढ़ा १६ पल, गोघृत ८ पल, मृत अभ्रक १० पल इनको एकत्र कर लोहे की कड़ाई में मन्दाग्नि से पकाएँ। जब जल और घी जल जाय केवल अभ्रक मात्र शेष रह जाय तब उतार शीतल कर रख छोड़े और योगों में बरतें। कोई २ आचार्य केवल घृत में ही अमृतीकरण करना लिखते हैं। यथा—

तुल्यघृतं मृताभ्रेण लोहपात्रे विपाचयेत्।
घृतं जातं ततश्चूर्णं सर्व कार्येषु योजयेत्॥

अर्थ—अभ्रक की भस्म समान गोघृत लेकर लोह की कड़ाई में चढ़ा उसमें अभ्रक को पकाएँ। जब घृत जल कर अभ्रक मात्र रह जाय तब उतार कर सब कार्यों में योजित करें।

अभ्रक के गुण-धर्म तथा प्रयोग

अभ्रक की भस्म विभिन्न विधियों द्वारा प्रस्तुत कर अथवा उचित अनुपान भेद से प्रायः सभी प्रकार की सर्द व गर्म बीमारियों में व्यवहृत होती है। उक्त अवसर पर यह प्रश्न उठाना व्यर्थ ही नहीं, प्रत्युत अपनी अज्ञानता का सूचक है, कि विभिन्न अनुपान जिनके साथ ऐसी भस्में प्रयोग में लाई जाती हैं, यदि उनसे कोई लाभ होता है तो तो वह उसी अनुपान का प्रभाव होता है। भस्म नाममात्र को प्रभावकारी मानी जाती है। परन्तु अनुभव इस बात का विश्वास दिलाता है कि उस अवस्था में जब भस्म संग में न हो तब अनुपान की इतनी अल्प मात्रा का शरीर पर किसी प्रकार का प्रगट प्रभाव नहीं होता। अतः यह भस्म का ही गुण है कि इतनी अल्प औषध का प्रभाव सम्पूर्ण शरीर में पहुंचा देता है। गोया किसी वस्तु की शुद्ध भस्म एक ऐसी रसा यन है जो मुख में डालते ही सम्पूर्ण शरीर के नस व नाड़ियों में व्याप्त हो जाता है और अपने स्वाभाविक एवं मौलिक गुण धर्म के अतिरिक्त जो उसमें अन्तर्निहित हैं प्रत्येक उस औषध के प्रभाव को जिसमें वह भस्म किया गया है या जो अनुपान रूप से प्रयोग की जा रही है, सम्पूर्ण शरीर में विशेष कर रोगस्थल पर अत्यन्त शीघ्रता पूर्वक एवं स्थायी रूप से पहुंचा देता है। जो इस सेरों खाने से तब कहीं जाकर शरीर में अपना प्रभाव प्रगट करती है वह एक दो मा० की मात्रा में भस्म के संग योजित करने से तत्क्षण सेर भर औषध के प्रभाव से भी अधिक प्रभाव प्रगट करती है। पुनः चाहे वह प्रभाव उक्त औषध का ही क्यों न हो, पर औषध की इतनी अल्प मात्रा और प्रभाव की उस तात्कालिक शक्ति को देखकर प्रत्येक न्यायग्राही व्यक्ति यह निर्णय कर सकता है कि यह प्रभाव भस्म का ही है। क्यों कि यदि उक्त प्रभाव उस औषध का होता तो भस्म की

अनुपस्थिति में भी इतनी अल्प मात्रा में प्रगट होता। परन्तु वास्तव में ऐसा है नहीं। अतः यह सिद्ध हो गया कि उपर्युक्त सम्पूर्ण चमत्कार उक्त भस्म के ही हैं जो उक्त औषध के साथ सम्मिलित होकर उसके प्रभाव को सौगुना कर दिया।

फलतः अभ्रक की भस्म को उपर्युक्त अनुपान द्वारा प्रत्येक सर्द व गर्म वा परस्पर विरुद्ध (द्वंद व्याधियों) में तद्वत् सफलता पूर्वक बरता जा सकता है। केवल योग्य एवं व्यवहार कुशल होने की आवश्यकता है। इसके विपरीत बहुत सी अन्य भस्मों की तरह इसके द्वारा किसी प्रकार विषैले प्रभाव प्रगट होने की आशंका नहीं अतएव हर एक व्यक्ति में प्रत्येक ऋतु, अवस्था एवं रोग के लिये इसका निर्भय एवं निरापद उपयोग किया जा सकता है।

आयुर्वेद के मत से—

अभ्रक भारी, शीतल, बल्य है तथा कुष्ट, प्रमेह और त्रिदोष नाशक है। मद० व० ४।

रसायन स्निग्ध है, और बल वर्ण एवं अग्नि वर्धक है। राज०।

कषैला, मधुर, शीतल, आयुकर्ता और आयु वर्धक है। प्रयोग—यह त्रिदोष व्रण, प्रमेह, कोढ़, प्लीहोदर, गांठ, विष विकार और कृमि रोग को दूर करता है।

मृत अभ्रक के गुण

अभ्रक की भस्म रोगों को नष्ट करती, देह को दृढ़ करती, वीर्य बढ़ाती, तरुणावस्था प्राप्त कराती और शत स्त्री सम्भोग की शक्ति प्रदान करती है। शार्दूल और सिंह के समान पराक्रमी पुत्रों को पैदा करती है। निरन्तर मृताभ्रक का सेवन मृत्यु के भय को भी दूर करता है।

श्री पार्वती जी का तेज अर्थात् अभ्रक अत्यन्त अमृत है, वात, पित्त और क्षय का नाश करता है। बुद्धि को बढ़ाता, बुढ़ापे को दूर करता, वृष्य (वीर्य कर्ता) है। आयु को बढ़ाता, बल कर्ता एवं चिकना है। रुचिकर्ता, कफ नाशक, दीपन और शीतल वीर्य है। पृथक् पृथक् योगों के साथ सकल रोगों को दूर करता और पारद को बाँधता है।

आयुष्य का स्तम्भन करता, मृत्यु तथा बुढ़ापे को दूर करता, बल तथा आरोग्य प्रदान करता और महा कुष्ट को दूर करता है। मृत अभ्रक को सब रोगों में बरतना चाहिये, क्योंकि इसमें सदैव पारे के समान गुण हैं। देह की दृढ़ता के लिये इसको ३ रत्ती की मात्रा में खाना चाहिये। इसके सिवाय बुढ़ापे और मृत्यु का हर्ता दूसरी दवा नहीं है

मृताभ्रक कामदेव और बल को बढ़ाता है। विष, बादी, श्वास, भगन्दर, प्रमेह, भ्रम, पित्त, कफ, खांसी और क्षय आदि रोगों में अनुपान के साथ इसका सेवन करें।

औषध-निर्माण—अभ्रक कल्क, अभ्र वटिका, ज्वराशनि रसः, ज्वरारि (अभ्रक), अग्निकुमार रस, कन्दर्प कुमाराभ्र, लक्ष्मीविलास रस, महा-लक्ष्मी विलास रस, हरिशंकर रस, अर्जुनाभ्र, शृङ्गाराभ्र, बृहत् चन्द्रामृत रस, ज्वराशनि लौह, महा श्वासारि लौह, बृहत् काञ्चनाभ्र, मन्मथाभ्र रस और गलित कुष्ठारि रस इत्यादि।

प्रकृति—२ कक्षा में शीतल और ३ कक्षा में रूक्ष।

हानिकर्त्ता—प्लीहा व वृक्क को। दर्पनाशक—कंटीरा, शुद्ध मधु, रोगन और करफ्स के बीज।

प्रतिनिधि—देखो शुद्ध पत्र तीन कीमूलिया समान भागया कुछ कम। मुख्य गुण—सार्वांगिक रक्तस्थापक है।

यूनानी ग्रन्थकार—इसकी भस्म को सम्पूर्ण शीतजन्य मस्तिष्क रोगों, वात नैर्बल्य, उत्तमांगों की निर्बलता, कामावसान, श्वास कष्ट, कास, रक्त निष्ठीवन, रक्तपित्त, अधिक रज (प्रदर) व तज्जन्य निर्बलता, शुक्रमेह, तथा पूयमेह भेद, मूत्रप्रणालीय विकार, समग्र प्रकार के ज्वरों एवं राजयक्ष्मा व उरःक्षत में लाभदायक मानते हैं। प्रत्येक अन्तः व्रण का रोपणकर्ता, कामशक्ति वर्धक, शुक्र व सांद्रकर्ता है। इसकी भस्म उप-

युक्त अनुपान के साथ हर एक रोग के लिये लाभदायक है। इसका प्रयोग शारीरिक निर्बलता और याप्य रोगी में विशेष रूप से होता है। मि० ख०।

नव्यमतानुसार अभ्रक के प्रभाव—यह किसी तरह कीटघ्न (संक्रमण हर माना जाता है।

राजेनहेम—(Rosenheim) और एरमन Ehrmann (Deut. Med. woch, 20. Jan. 1910) के मतानुसार, एलुमिनम् सिलिकेट जब इसका मुख द्वारा प्रयोग होता है। तब आमाशयिक रसमें लवणाम्ल की आधिक्यता के सहयोग से उसमें प्रतिक्रिया उत्पन्न होती है। जिससे सिलिसिक एसिड और एल्युमिनियम क्लोराइड बन जाता है, और जिसमें से अन्तिम अर्थात एल्युमिनियम क्लोराइड का आमाशयिक श्लेष्मिक कला पर ठीक बिस्मथ की तरह आवरक व रक्षक प्रभाव होता है। इस बात की परीक्षा करना भी अत्यन्त उचित होगी कि आया औषध योजित अभ्र का प्रभाव भी जो कि एक सिलिकेट ही है आमाशय पर उसी प्रकार होता है, क्यों कि यह सदैव अम्लाजीर्ण और आमाशयिक क्षत में लाभ प्रद पाया गया है। उदाहरणतः विद्याधराभ्र (Jour, Avur, july 1924) मांसपेशी यकृत, प्लीहा, लसीका और सेल आभ्यन्तरिक रसों में तथा विभिन्न शारीरिक मलों तथा मूत्र विष्ठा और स्वेद में भी सिलिसिलिक एसिड विभिन्न प्रतिशतों (८१ प्रतिशत से कुछ चिन्ह तक) में पाया जाता है। आयुर्वेद में मृताभ्र परिवर्ततक और सार्वांगिक वल्य कहा गया है। साधारणतः यह धातु सेलों की संवर्तक क्रियायों का उत्तेजक भी कहा गया है यह कामोद्दीपक रूप से भी प्रयोग किया जाता है। यह त्रिदोषघ्न और उनकी साम्य स्थिति का स्थापक खयाल किया जाता है। धान्याभ्र वल्य और कामोद्दीपक मानां जाता है। अभ्रक के योग सामान्यतः स्तम्भक, वल्य, कामोद्दीपक और परिवर्तक होते हैं अभ्रकल्क, परिवर्तक और स्वास्थ्य पुनरावर्तक है।

उपयोग—अभ्रक की भस्म रक्ताल्पता, कामला, पुरातन अतिसार, प्रवाहिका, स्नायविक, दुर्बलता, जीर्णज्वर, प्लीहविवर्द्धन नपुंसकता, रक्त पित्त और मूत्र सम्बन्धी रोगों में लाभप्रद है। इसके अतिरिक्त इसे शहद और पिप्पली के साथ देने से श्वास, अजीर्ण, (Hecticfe fever) यक्ष्मा, व्रण, (Cachexia) आदि को नष्ट करता है संकोचक रूप से इसे वातातिसार में अधिकतर दिया जाता है। परिवर्तक रूप से इसे ग्रन्थि विवर्द्धन में उपयोग किया जाता है। साधारणतः इसे २–६ ग्रेन की मात्रा में शहद के साथ दिन में दो बार वर्त्ता जाता है। थाइसिस यक्ष्मा में प्रति दिन दो बार २–३ ग्रेन तक शहद या ताजे वासक स्वरस के साथ देने से लाभ होता है। इं० मे० मे०।

अभ्रकल्पः-सं० क्ली० अभ्र की निश्चन्द्र भस्म, आमला, त्रिकुटा, बिडंग प्रत्येक समान भाग लेकर भांगरे के रस अथवा जल से दो पहर तक खरल में बारीक घोटें, गोलियां बना फिर साया में सुखा लेवें। मात्रा—१ मा०। गुण—इसकी १ गोली १ वर्ष तक रोजाना खावें, दूसरे वर्ष २ गोलियां रोजाना, इसी तरह तीसरे वर्ष ३ गोली रोजाना लेवें। इस प्रकार ३ वर्ष पूरे होने पर यह अभ्रक का प्रयोग पूरा हो जाता है। इस योग से तीन वर्ष में जो मनुष्य ४०० तो० अभ्रक खा जाता है वह वज्रवत दृढ़ शरीर वाला हो जाता है। इसके तीन ही महीने के प्रयोग से रक्तविकार, क्षय, असाध्य दमा, ५ प्रकार की खांसी, हृदयशूल, संग्रहणी, बवासीर, आमवात, शोथ, भयानकपांडु वात, पित्त, कफ के रोग, और अठारह प्रकार के कुष्ट दूर हो जाते हैं। रस० यो० सा०।

अभ्रक कल्प-सं० पु० जो अत्यन्त काला तथा अत्यन्त चिकना, काले सुरमे के तुल्य, वज्राभ्र पत्थर आदि दोषों से रहित शुद्ध हो ऐसे अभ्रक को लेकर बुद्धिमान वैद्य एक दृढ़ मिट्टी के पात्र में रख चार या पांच दिन तक कड़ा पुट देवें, इसी तरह चौंलाई के रस में पीस पीस कर पांच पुट पुनः देवें। इसी तरह पूर्वोक्त क्रम से आमला,

सोंठ, मिर्च, पीपल और बायविडंग के योग से पीस-पीस चन्द्रिका रहित करें। पुनः जब चन्द्रिका रहित हो जाय तो अंगूठा के अग्रभाग से पीड़ित कर गोलियां बनाय साया में शुष्क कर रक्खे। इसमें से एक-एक गोली निरन्तर वर्ष पर्यन्त खावें। दूसरे वर्ष में दो गोली निरन्तर खावें, इसी तरह एक एक गोली बढ़ा कर ४०० तोले अभ्रक सेवन करें तो शरीर बलवान हो और वज्रतुल्य दृढ़ हो इसमें संशय नहीं है। इसके तीन महीने के सेवन से रक्त रोग, क्षय, भयङ्कर पाँचों खाँसी, हृदय शूल, संग्रहणी, अर्श, आमवात, सूजन, भयंकर पांडु, वात, पित्त कफ से पैदा हुये मृत्यु तुल्य महा वात व्याधि, अठारह कुष्ट इन्हें उचित पथ्य से यह अभ्रक कल्प नष्ट करता है। वङ्ग० सेन० सं० रसायनाधिकारे।

अभ्रक गुटिका-सं० स्त्री० शुद्ध पारद, शु० गन्धक, शु० विष, त्रिकुटा, भुना सुहागा, क्रान्तिसार भस्म अजमोद, अहिफेन, तुल्य भाग, अभ्रक भस्म सर्व तुल्य लेवें और चित्रक के क्वाथ में एक दिन खरल कर मिर्च प्रमाण गोलियां बनावें, इसके एक मास पर्यन्त सेवन करने से संग्रहणी दूर होती है।

अमृ० सा०। संग्र० चि०।

अभ्रक सन्धानम्-सं० क्ली० उत्तम शुद्ध अभ्रक लेकर मेढकपर्णी, वरुण त्वक, अदरक, दण्डोत्पल, (डानिकुनिशाक-बं०) मिश्री, अपामार्ग, बच, भांगरा, अजवाइन, चौलाई, गिलोय, सूरण, पुनर्नवा इनके रस से पृथक पृथक भावना दें। पुनः तीक्ष्ण धूप में शुष्क करें, पुनः इसमें गिलोय सत्व ४ तो०; पीपल ४ तो० और शु० पारद, त्रिफला, सोंठ, मिर्च, पीपल, अभ्रक तुल्य लेकर पारद की मूर्च्छा शहद, घृत से कर पुनः त्रिफला, त्रिकुटा के चूर्ण से मर्दन कर उत्तम चिकने पात्र में मुख बन्द कर रखें। मात्रा-१ र०

गुण-इसे १ र० वृद्धी क्रम से भोजन के आदि, मध्य और अन्त में जल तथा खट्टे रस से लें। और शुद्ध घृत, दधि, दूध, मांस, मद्य, शाक और प्राचीन अन्न का सेवन करें तो अम्लपित्त, संग्रहणी, अर्श कामला को दूर करता और अग्नि की वृद्धि करता है। भैष० र० संग्र० चि०।

अभ्रक हरीतकी-सं० स्त्री० अभ्रकभस्म ८० तो०, शु० गन्धक २० तो०, स्वर्णमाक्षिक भस्म २४० तो०, हरीतकी ४०० तो०, आमला ८०० तो० इन सबों का चूर्ण कर एक दिन जम्भीरी नीबू के रस की भावना देवें। पश्चात् भांगरा, सोंठ, छिरहटा, भिलावां, चित्रक, कुरण्टक, हाथीशुण्डी कलिहारी, दुद्धी, जल

कुम्भी, इन प्रत्येक के रस में १-१ दिन खरल करें। तदनन्तर चीनी आदि के उत्तम पात्र में रक्खें। गुण-उचित मात्रा में प्रयोग करने से त्रिदोष जन्य अर्श दूर होता है। वृ० रस० रा० सु० अर्श चि०।

अभ्रकादि वटी-सं० स्त्री० पारा, गंधक, विष, त्रिकुटा सुहागा, लोह भस्म, अजमोद, अफीम प्रत्येक समान भाग, अभ्रक भस्म सर्वतुल्य। इन्हें चित्रक के क्वाथमें एक पहर तक खरल करके मिर्च प्रमाण गोलियां बनाएँ। प्रति दिन १ गोली खाने से ४ प्रकार की संग्रहणी का नाश होता है। वृ० नि० र०, भा० ४ सं० चि०।

अभ्रगुग्गुलुः-स० पु० अभ्रक भस्म ४ तो०, त्रिफला ४ तो०, गुग्गुल शुद्ध ४ तो०, गुड़ ४२ तो०, सब को मिलाकर भोजन के प्रथम खाने से परिणाम शूल तथा हर प्रकारके शूल दूर होते हैं।

अभ्रङ्कुशः-सं० पु० (१) वायु (Air)। (२) पाणि, हाथ (hand)।

अभ्रनामकः-स० पु० मुस्ता, नागरमोथा (Cyperus rotundus) श० र०।

अभ्रपटलः-सं० क्ली० पु०, अभ्रक (Talc) वै० निघ०।

अभ्रपर्पटी-सं० स्त्री० अभ्रक भस्म, ताम्रभस्म, गंधक प्रत्येक सम भाग लेकर पपटी बनावे। मात्रा—२ रत्ती। गुण-इसे मूली अथवा पञ्चकोल के क्वाथ के साथ उपयोग करने से जिह्वागत प्रत्येक व्याधियां दूर होती हैं।

अभ्रभानुः—सं० पु० कमीला, हरड़, विड लवण, सहिजन के बीज; अमलवेत, जवाखार, प्रियंगु अथवा निशोथ, वच, सलई, विडंग, और अजवाइन, इन्हें समान भाग लेकर चूर्ण बनावे। उसमें २ तोला अभ्रक, ताम्बा, और स्वर्णकी भस्म मिलावे। मात्रा १-२ रत्ती।

गुण—आमवात, अष्ठीला और गुल्म को नष्ट करता है। रस० यो० सा०।

अभ्रपुष्प-सं० पु० (१) वेतसलता, बेंत, वेंतस केन Cane इं०। केलेमस Calamus ले० भा० पू० १ भ० गु० व०। (२) वारिवेतस, जलवेंत। अम०। क्ली०, (३) जल (Water)।

अभ्रमांसी-सं० स्त्री० आकास. मांसीलता। सूचम जटामांसी-वं० रा० नि० See-Akasham-ansi

अभ्ररोह-सं क्ली०, वैदूर्य्यमणि See-Vaidury-yamanih रा० नि० व० १३।

अभ्रवटिका-सं० स्त्री० शुद्ध पारद १० मा०, शुद्ध गन्धक, १० मा०, की कज्जली, अभ्रक भस्म, १० मा०, मिर्च चूर्ण १० मा०, सुहागा भस्म ५ मा० लेकर काला भांगरा, सफेद भांगरा, निगुण्डी, चित्रक, ग्रीष्मवल्ली, अरणी, मण्डूक पर्णी! कुड़ा विष्णुकान्ता प्रत्येक का रस १०-१० मासे लेकर पृथक २ मर्दन कर चणक प्रमाण गोलियां बनाएँ

गुण—इसे उचित अनुपान उचित अवस्था के अनुसार सेवन करनेसे काँस, श्वांस, क्षय, वात कफ, शूल, ज्वर अतिसार को दूर करती है तथा वशीकरण होते हुये बल, वर्ण और अग्निकी वृद्धि करती है। भैष० र० ग्रहणी चि०।

अभ्रवटिका-सं० स्त्री० शु० पारद, गन्धक और अभ्रक भस्म १-१ तो० लेकर कज्जली बनावे, त्रिकुटा चूर्ण, काला भांगरा, भांगरा सम्हालू. चित्रक, ग्रीष्म सुन्दर, जैत, ब्रह्मी, भङ्ग और श्वेत अपराजिता, पानके पत्ते इनके रस प्रत्येक कज्जली के बराबर और पारे के बराबर काली मिर्च का चूर्ण और पारे से आधा सुहागा डालकर खरल में घोटें, फिर मटर प्रमाण की गोलियाँ बनाएँ।

गुण—रोगानुसार उचित अनुपान के योग से देने से खाँसी, श्वास, क्षय और वात कफ के रोग दूर होते हैं। रस० यो० सा०।

अभ्रवटी-स० स्त्री० अभ्रक भस्म को २१ वार भांगरे के रस से भावित करें, फिर गन्धक, पारद और लौहभस्म पृथक पृथक अभ्रकके बराबर और सोना अभ्रक से आधा मिलाकर त्रिफलाके क्वाथ में डाल कर अच्छी तरप घोटें पुनः १ रत्ती प्रमाण की गोलियां बनाएँ। इसके सेवन करने से ओपसर्गिक मेह (सूजाक) दूर होता है।

अभ्रवद्ध गुटिका-सं० स्त्री० नीलकण्ठ पक्षी (चाष मास गृद्ध विशेष) बैल; उल्लू, खंजन और चमगीदड़ के हृदय और दोनों आंखों दोनों आंखों को निकालकर और शु०पारा तथा अभ्रक सत्व प्रत्येक १-१ तो० मिलाकर बारीक घोटकर २ तौ० की गोली बनाकर त्रिलोह में लपेटकर (सोना' चांदी और तांवा इनके लपेटनेकी विधि यह है कि पहले सोवा आठ भाग फिर चाँदी १२ भाग और सबके ऊपर १६ भाग तांवे के पत्र को लपेट दें अथवा सबके ऊपर कहे प्रमाण में लेकर गलाकर पत्र बनाएँ और ऊपर से लपेटें) गले में बांधने से अदृश्य होकर मनुष्य एक दिन में ४०० कोस जा सकता है। रस० यो० सा०।

अभ्रबद्ध रस-सं० पु० देखो—रसयोग सागर।

अभ्रवाटक-सं० पु० आम्रातकवृक्ष, अमड़ा, अम्बाड़ा आमड़ा-गाछ-बं०। Spondias mangifera रा० नि० व० ११

अभ्र वाटिक-सं० पुं० आम्रातक, अम्बाड़ा, अमड़ा (Spondias mangifera) जटा०

अभ्रसारः-सं० पु० भीमसेनी कपूर। वै० निघ० See-Bhimaseni karpura

अभ्रसिन्दूरम्-सं० क्ली० अभ्रक का चूर्ण कर, घीकुवार, हुरहुर, असगन्ध, संभालू, रुद्रवन्ती, भांग, शतावरी, अधूसा, बला, अतिबला, लेमल, कुम्भाख, नागरमोथा, विदारीकन्द, तुलसी, मैनफल,

भिलावा, बनभाटा, कैथ, दाख गूलर, आक, खस सुगन्धवाला, कूठ, लाल रुहेड़ा, चम्पा, मकोय, गोखुरू, गुलाब, अनार, केवाँच, आमला, पुनर्नवा ब्राह्मी, चित्रक, गोरख मुण्डी, सिरस और गिलोय इनके रसों से पृथक २ भावना देकर पुट दें तो यह अभ्रसिंदूर सभी रोगों को नष्ट करता है जैसे सूर्योदय अन्धकार को। रस० यो० सा०।

अभ्रसुन्दरोरसः-सं० पु० यवक्षार, सोहागा सज्जी, काला अभ्रक, गन्धक; तांबा और पारा समान भाग लेकर मिलावें, फिर हस्तशुण्डी और अम्लोनिया के रस से एक एक दिन उसमें भावना दें। फिर गोलाकर लघुपुट से पकावे फिर उसमें नैपाली ताम्र भस्म मिलावें यदि किसी दूसरे प्रकार का तांबा मिलाया जायगा तो कुछ भी गुण न होगा उचित अनुपान के साथ सभी रोगों को दूर करता है संग्रहणी, खाँसी और मन्दाग्नि में कांजी के साथ देना चाहिये वातरोग, शूल, पार्श्व शूल, और परिणाम शूलमें अदरखके रस से देना चाहिये अम्लपित्त तथा सभी प्रकार के पित्त रोगों को यह धारोष्ण दूधके साथ देनेसे नष्ट करता है

अभ्रातर-स० वि० जिसके कोई भाई न हो।

अभ्रामलक रसायनम् स० क्ली० अभ्रकभस्म, गंधक और मूर्च्छित पारा जो कि मक्खनके माफिक साफ हो इनको बराबर बराबर लें त्रिफला, त्रिकुटा वच, विडंग दोनों जीरे, ढाक के बीज, एलुवा विधारा, तज कमल मूल, विडङ्ग, चित्रक सामा सहिंजन, दन्ता, निशोथ और मेंहदी (वर्णदूषिका) इन सब का १-१ तोला लें और सबका चूर्ण कर कड़ी चाशनी में डाल रक्खें। उचित मात्रा से सेवन करने से यह रस कष्ट साध्य वात रक्त को नष्ट करता है ब० मे०

अभ्रह्वम्-स० क्ली० कुंकुम, केसर, जाफरान Saffron (Crocussativus) मद० व० ३।

अभ्रूषः-स० पु० तालु रोग विशेष। जिससे तालु में शोणित जन्य रोग [illegible] वर्ण का सूजन हो और साथ ही ज्वर और तीव्र वेदना हो तो उसे 'अभ्रूष' कहते हैं। भा० म० ४ भ० मुखरोग चि०।

अमः-सं० पु० अम-हिं० संज्ञा पु० (१) रोग (Disease) बीमारी। (२) आँव (Mucus)। (३) पक्व फल आदि (Ripe fruit etc)। श० र०। (४) बीमारी का कारण।

अमकीर गड्डे-कना०, अश्वगंध-स० मह०, कों०, बं०। पुनीर, अकरी-हि० हब्बुल काकनज-अ०। काकनज-बम्ब०। (Withania Coagulans)-ले०।

अमगोस-अ० टिड्डी, मलख (Alocus)

अमङ्गलः-स० पु०

अमङ्गल-हिं० संज्ञा पु०

एरण्ड वृक्ष, अरण्ड (Castor oil plant) रेंड का पेड़ श० च०।

अमचूर-हिं० संज्ञा पु० [हिं० आम×चूर] सुखाये हुए कच्चे आम का चूर्ण। आम चूर्ण। आम की फकिया। खटाई। पिसी हुई अमहर Parings of the mango dried in the sun इं० मे० मे०।

अमज्-अ० अति उष्ण, अधिक तृषा, अत्यंत प्यासा होना (Very hot excessive thirst)

अमड़ा-हिं० पु० [स० आम्रात, या अंबाड़] अमारी, आम्रातक अम्बाड़ा (Spondias mangifera) एक पेड़ जिसकी पत्तियां शरीफे की पत्तियों से छोटी और सींकों में लगती है। इसमें भी आम की तरह [illegible] आता है। और छोटे छोटे खट्टे फल [illegible] हैं जो चटनी और अचार के काम में आते हैं

अमडाइ-प० कांलीग्वार, पवना, मोरेद-हिं० Aloes Indica (The black varof)

अमणक्कम्-चेड़ा त० एरण्ड, अरण्ड। Castor oil plant-इं०। रिसिन कम्यून (Ricinus communis) फ्रां०। फा० इं० ३ भा०।

अमण्डः-स० पु० एरण्ड वृक्ष। अरण्ड (Castor oil plant) प० मु० हारा०।

अमण्डी कम्यून-फ्रां० (१) बादाम, बाताद, आमण्ड। (Almond) (२) कड़ुवा बादाम

तिक्त बादाम, -हिं० । बिटर आमण्डस (Bitter almonds) -इं० । Amygdalus communis, *Linn.*) फॅ० इं० १ भा० ।

अमण्डीस-डेस-डैमीस-फ्रां० । देखो—अमण्डीस सल्टेनीस ।

अमण्डीस-सल्टेनीस-फ्रा० मीठा बादाम । (Sweet almonds) यह दो प्रकार का होता है एक मोटे छिलके का और दूसरा पतले छिलके का अर्थात् कागजी फा० इं० १ भा० ।

अमत-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) मत का अभाव असम्मति । (२) रोग । (३) मृत्यु ।

अमती-बम्ब० वायबिडंग । रोहिण, गदबा० । (Embelia ribes)

अमतीपण्डु-ता० केला, कदली (A plantain) (Musa sapientum)

अमत्त-हिं० वि० [सं०] (१) मद रहित । (२) शांत ।

अमदरियान-यु० बबूरे के सदृश एक वृक्ष है, किन्तु इससे छोटा होता है । इसकी लकड़ी से तस्बीह (शुमिरनी, मनियाँ) बनाई जाती है इस कारण इसको शजरुत्तस्बीह तथा दमूअ अयूब भी कहते हैं । साधारणतः यह मिश्र और शाम देश में उत्पन्न होता है ।

अमदेव मोटापना-मा० जंगली मदनमस्त का फूल हि० । (Cycas circinalis or C. inermes) । ले० इ० मे० मे० ।

अमधआक-बं० जंगली अंगूर, पञ्जारी-हिं०, द० । Vitis indica ले० । इ० मे० मे० ।

अमधुर-हिं० वि० [सं०] कटु । अरुचिकर ।

अमध्यस्थ धर्म्मिणी-सं० स्त्रि० मध्यस्थ धर्मवाली नहीं वरन् अमध्यस्थ धर्मवाली अर्थात् अनुदासीन (सुखादिक भोग भोगने वाली) । आत्मा (पुरुष) में इसके विपरीत गुण हैं अर्थात् यह मध्यस्थ धर्मवाली है यानी यह सुख दुःखादि में उदासीन रूप मध्यस्थ की भाँति है । सु० शा० १ अ० ।

अमलाफअ-अ० मुर्गी (A hen) मेमो० ।

अमन्-ता० अजवाइन (CarumCopticum)

अमन्तमूल-हिं० पु० तरजी, वन ककड़ा-पं० ।

अमन्दः-सं० पु०
अमन्द-हिं० संज्ञा पु० } वृक्ष, पेड़ (Tree) । श० वि० ।

अमम्-ता० अजवाइन (Carum Ptychotis) Ajowan

अमयूनोफरास-रू० रामतुलसी (Ocimum gratissimum)

अमयूस-यु० नानखाह, अजवाइन (Carum) (Ptychotis) Ajowan ।

अमम्रि- अविनाशी, न मरने वाला । अथर्व० सू० २७ २६ । का ८ ।

अमर-हिं० वि० [सं०] मरण रहित, नित्य चिरस्थायी । जो मरे नहीं । चिरजीवी । हिं० संज्ञा पु० [सं०]

[स्त्री० अमरा, अमरी] (१) लिंगानुशासन नामक प्रसिद्ध कोश के कर्त्ता अमरसिंह (कोषकार) (२) अमरकोश । (३) Amoora Cucullata'*lind* Andersonia cucullata' *Rox* Amoora' Hooded इं० है० गा० । (४) मरुद्गणों में से एक उनंचास पवनों में से एक । (५) पारद, पारा (६) हड़जोड़ का पेड़ । अस्थि संहार । (७) देवता (८) वज्री वृक्ष । सिजू-व० । (९) स्वर्ण सोना ।

अमर-अ० मसूड़े, दांतों के मध्य का मांस । अमूर (बc व०) । गम्ज (Gums)-इं० ।

अमरकण-सं० स्त्री० गजपिप्पली (Scindapsus offcinalis) । वै० निघ० २ भा० पांडु० चि० भूनिम्बादि गुटी ।

अमरकण्टिका-सं० स्त्री० शतावरी (Asparagus racemosa) रा० नि० व० ४ ।

अमरकन्दः-सं० पु० कन्द विशेष (Asort of tuber) वै० निघं० ।

अमरकलानिधि रसः-सं० पु० मोती, मूंगा, पारा, गंधक समान भाग लेकर बिजौरे के रस में घोट कर गोला बनावें फिर उस गोले को बारीक कपड़

मिट्टी करके सुखा लेवें, फिर दो शराबों के बीच में रखकर अग्नि में पका लेवें । ठण्डा होने पर बारीक चूर्ण कर रख लेवें । मात्रा—३ रत्ती । उचित अनुपान में सेवन करने से राजयक्ष्मा को नष्ट करता है । र० प्र० सु० राजयक्ष्मणि ।

अमरकली–हिं० स्त्री० आर्डिसिया कोलोरेटा Ardisia Colorata–ले० । Aredflowered–ई० । इं० है० गा० ।

अमरकालिकः–सं० पु० वृश्चिकाली (Tragia involucrata) भैष वा० व्या० सिंहनाद गुग्गुल ।

अमरकाष्ठम्–सं० क्ली० देवकाष्ठ, देवदारु । (Pinus Deodara)

अमरकुसुमम्–सं० क्ली० लवंग, लौंग । Clovos (caryophyllus aromaticus) । वै० निघ० चय रो० त्रैलोक्य–चि० रस ।

अमरख–हिं० पु० कमरख । Afruit (Averrhoa corimbola)

अमरगटा–आमला (Phyllanthus Emblica)

अमरगंधका–सं० स्त्री० अज्ञात ।

अमरग्रीस–इं० अम्बर–अ०, हिं० व०, मह०, कों० अम्ब्र ग्रसीआ ambra grsea–ले० इं० मे० मे० ।

अमरजः–सं० पु० (२) दुर्गन्ध खैर, गूह बबूल । Acacia Farnesiana, *Willd* । रा० नि० । (२) देवदारु (Pinusdeodara) (३) नदीबट । वै० नि० २ भ० । ग्रंथ्यादि ज्व० ।

अमरजेल–श० अज्ञात ।

अमरतरुः–सं० पु० देवदारु (Pinus deodara) अर्कादि: 'किराता मरतरूरसना: ।" वै० निघ० सा० ज्व० ।

अमरद–इरफ्स, अजमोदा (carum roxburghienum)

अमरदारु–सं० पु० क्ली०, हिं० संज्ञा पु० वृक्ष विशेष देवदारु का पेड़ । तैल देवदारु रा० नि० ब० १२ चि० क्ष० क० वक्ता स्त्री० रोग चि० । तैल देवदारु वृक्ष । मलंगा देवदारु–बं० । (Cedrus deodara)

अमरद्रुः–सं० पु० विट् खदिर वृक्ष, दुर्गन्ध खदिर । गूह बबूल । गुजे बाबूला –बं० । (Acaciafarnesiana, *Willd*

अमरन्थ–इं० चौलाई । देखो—अमारेन्थस ।

अमरपुष्पम्–सं० पु० क्ली० पूगफल, सुपारी (Arecæ semima) (२) काश तृण, कास(सा) (Sacch arum spontaneum) (३) आम्र. आम (Mangifera Indica)(४) केतक, केवड़ा (Padanus odoratissimus) मे० पपञ्चक ।

अमरपुष्पकः–सं० पु० देखो—अमरपुष्पक ।

अमरपुष्पक–हिं० संज्ञा पु० काश, तृण, काँस का पौधा । काँसा (Saccharum spontaneum) य० मु० (२) कास भेद र० मा० । (३) तालमखाना । (४) गोखरू । (५) कल्पवृक्ष ।

अमरपुष्पिका–
अमर पुष्पी– } सं० स्त्री० चोर पुष्पी, शंखिनी, काचकी, चोर खड़िका–बं० । See–shankhini र० मा० । (२) काशतृण, कासा (Saccharum spontaneum) । देखो अमरपुष्पक ।

अमरफलम्–सं० क्ली० अमृतफल, नाशपाती The pear (tree pyrus communis)

अमरबेल–हिं० संज्ञा पु०
अमरबल्ली ,, ,, स्त्री०
अमरवेली ,, ,, ,, } अमरबेल्य गु०
आकासबेल, आकाश वौरँ, आकाशबल्ली (Cassytha Filiformis *Linn*). फा० इं० ३ भा० ।

अमर (ल) रत्नम्–सं० क्ली० बिल्लोर । रा० नि० ।

अमरत्न–हिं० संज्ञा पु० । स्फटिक (मणी) फिटकिरी (Alumen) । रा० नि० । काच । देखो काचः (Kachali)

अमरवल्ली–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अमरवल्ली] अकासवेल । आकाशबंबर अमरबोरिया । (cass ythaiei formis,

अमरतान–
उमैर्तान–

अ० जिह्वामूल में दो छोटी छोटी अस्थियां हैं जिन्होंने ऊर्ध्व कण्ठ को भीतर की ओर से घेरा है ।

नोट—चूँकि चुल्लिकास्थि (Os Hyoid) के अतिरिक्त कोई और अस्थि नहीं इसी लिये ये उसी अस्थि के दूसरी प्रवर्द्धन (निकाल) हैं जिनको लघु शृंग व बृहत् शृंग कहते है ।

अमरलगड्ड–द० अज्ञात ।

अमरलता–हिं० स्त्री० गुरुच, सोमलता (Tinospora cordifolia)

अमरलता का बीज–हिं० पु० गुरुच बीज । Tino spora cordifolia (Seeds of–)

अमर वल्लरी–
अमरवल्लिका
अमरवल्ली
सं० स्त्री० अकासवेल, आकाशवल्ली (Cuscuta Reflexa)

भा० पू० १ भ० गु० व० मद० व० १ ।

अमरस–हिं० संज्ञा पु० [हिं० आम+रस] निचोड़ कर सुखाया हुआ आम का रस जिसकी मोटी पर्त बन जाती है । अमावट ।

अमर सर्षप–सं० पु० देवसर्षप राई । Sinapis juncea । वै० निघ० See-Dev--sarshapa

अमरसालह–
अमुखनह–

अ० धेनुक पक्षी हरकीलह (गृध्र सदृश एक मांसाहारी पक्षी है)

अमरसी–पु०, आस वृक्ष (Myrtus comumnis) हिं० वि० [हिं० अमरस] आम के रस की तरह पीला सुनहला–यह रंग एक छटाँक हल्दी और ८ मा० चूना मलाकर बनता है ।

अमर सुन्दर:–सं० पु० पारद की भस्म, निरफ शुद्ध हरताल की भस्म और गन्धक इन सबको बराबर लेकर भांगरे के रस से और काकमांची के रस से भावना देकर कुक्कुट पुट में पकावें, इसी प्रकार पांच बार करने से यह सिद्ध होता है । उचित मात्रा से उचित अनुपान द्वारा सभी रोगों को नष्ट करता है । र० प्र० स०, र० म० मा० अतिसार ज्वरादौ ।

अमर सुन्दरी–स स्त्री० ज्वराधिकार में वर्णित रस यथा— त्रिकटु, त्रिफला, पीपलामूल, अकरकरा, रेणुका, चित्रक, विडंग, चातुर्जात, मोथा, लौह-भस्म, पारद विष तथा गन्धक इनको समान भाग लेकर चूर्ण करें । पुनः इससे द्विगुण गुड़ मिलाकर कोल अर्थात् बेरी सदृश गुटिका निर्मित कर सबेरे सेवन करें ।

प्रयोग—श्वास, खांसी, अपस्मार, सन्निपात, गुदरोग, वातव्याधि और उन्माद को नष्ट करती है । बृ० नि० र० भा० वा० ।

अमरा–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० (१) अम्बाड़ा, आम्रातक । The hog plum (Spondias man-gifera)

सं० स्त्री० (२) दूर्वा, दूब (Cynodon dactylon, *Pers*) । मे० रत्रिक । (३) गुड़ची, गुरुच, गिलोय (Tinospora cordifolia) र० मा० । (४) इन्द्रवारुणी लता, इन्द्रायन–हिं० ; राखालशशा–बं० । (Citrullus Colocynthis) रा० नि० व० ३ । (५) नील दूर्वा, नीली (या हरी) दूब (Cynodon Linearis) (६) गृहकन्या घीकुवार (Aloe Barbebedeis) रा० नि० व० ५ । (७) नीली वृक्ष, नील (Indigofera indica) (८) मेषशृंगी, मेढ़ासिंगी (Gymnema sylvestres) (९) वृश्चिकाली, बिछाती (Fragia involnerata) रा० नि० व० ८ (१०) नदीवट वटवृक्ष (Ficus bengalensis) रा० नि० व० ११ । (११) चमड़े की झिल्ली जिसमें गर्भ का बच्चा लिपटा रहता है । आँवल, जरायु (Uterus) । मे० रत्रिक । (१२) जेर, जेरी, खेड़ी, (Placenta) (१३) गर्भ

नाड़ी, फूल। भैष० स्त्री० (१४) नाभिनाल। नाभि का नाल जो नवजात बच्चे से लगा रहता है। (१५) सेहुँड़ थूहर।

(१६) नीली कोयल। बड़ा नील का पेड़ (१७) बरियारा। (१८) वरगदकी एक छोटी जंगली जाति।

अमराई-हिं० संज्ञा स्त्री०, [सं० आम्रराजि] आम का बाग, बगीचा. आमकी बारी (Agarden of mango trees) प० पवना, मोरेड़।

अमरापातन-हिं० खेंड़ी गिराना।

अमरापातन विधि—(१) कड़ई तुम्बी, साँप की काचली, सफेद सरसों, कड़ुआ तेल, योनि में इनकी धूनी देने से अमरा (खेड़ी) गिर जाती है।

(२) कलिहारी की जड़ पीसकर हाथ, पांव में लेप करने से खेड़ी गिरती है।

(३) पीपर आदि का चूर्ण मद्यके साथ पीने से खेड़ी गिर जाती है।

भै० र० स्त्री० रोग चि०।

अमरालकः-सं० पु० अम्बाड़ा, आम्रातक। (Spondias mangifera)

अमराव-[सं० आम्रराजि, हिं० अमराई] आम की बारी। आम का बगीचा। अमराई।

अमराह्वम्-सं० क्ली० देवदारु काष्ठ। Cedrus Deodara (Wood of) बा० सू० १५ एलादि० अरुणः। "शुक्रर्व्याघ्रनखोऽमराह्वमगुरु,।

अमरी-सं० स्त्री० नील दूर्व्वा, हरी दूब (Cynodou Linearis)। (२) कृष्ण निर्गुण्डी, नीला सँभालू (Vitex Negundo' Black var of-)। (३) मूर्व्वा (Sans eviera Roxburghiana)। वै० निघ०। मल०, । (४) नील वृक्ष (Indigofera Indica)। आसा०, हि० संज्ञा स्त्री० [सं०] (५) आसन का पेड़ (Terminalia Tomentosa)। सज। सग। पिया साल एक पेड़ जिससे एक प्रकार की चमकीली गोंद निकलती है इस गोंद को सुगन्ध के लिये जलाते हैं और सथाललोग इसे खाते भी हैं। इसकी छाल से रंग बनता है। और चमड़ा सिझाया जाता है और जलाने में वर्त्ता जाता है। इसमें से लाही निकलती है और इसके पत्तियों पर रेशम का कीड़ा पाला जाता है।

अमरीके का सुमाक-द० सुमाकेअमरीकह् (Cæsalpinia Coriaria, *Willd*) स० फा० इं०।

अमरूत-हिं० सं० पु० [सं० अमृत (फल)] अमरूद (Psidium Guyava' *Linn*) दी ग्वावा The Guava इं०। जामबिही (मध्य भारत और मध्य प्रदेश में) पेरुक, पेरू फल (दक्षिण में)। रुन्नी (नैपाल तराई में) सफरी, अमरूद, (अवधमें)। लताम (तिहूंत में)। दृढ़ बीजं, पेरुक, मांसलं, अपृथक त्वचं, अमरूदं, जांवफलं, वर्तुलं, मृदुपीतकं, अम्बरूत फलम् मधुराम्लकं, तुवर, अमृतफल-सं०। प्यारा ब०। रक्त और श्वेत भेद से अमरूत दो प्रकार का होता है। (ये एक ही जाति के दो भेद है)

मधुरियम्-आसा०। अमुक-नैपा०। अमरूत प०। पेराला बम्ब०। जाम्ब-मह०। सेगापु, कोअया-ता०। जाम-ते०। सीबी कना०। माल काट वैक-वर०। अम्रूद-अ०। -फा०।

(१) रक्त अमरूद, लाल अमरूत। सीडियम पॉमिफर्रम् Psidium Pomiferum, *Linn*) (Fruit of Red Cuava) रक्त अमरूदफलम्, रक्तबहुबीज फलम् सं०। लाल सफरी आम, लाल सफरी, लाल जाम द० लाल प्यारा, लाल गो आछि फल वं० अम्रूदे अह् मर, कुम्स्स् रा-अ०। अम्रूदे सुर्ख-फां० (बिल्लई) शिवप्पु गोय्याप्जम् सेगापु, कोय्या पलम्-ता०। एर्रजाम पण्डु, एर्र-गाय्या-पण्डु, जाम कोइआ ते०। चेम्-पेर चेम्-पेरक्क, चोबन्न-मलाक-केप्पर, पालम-पेर, मल०। कम्पु-शिबे-हरणु-कना०। ताम्बड जाम्ब, ताम्बड तूप केल-मह०। लाल पियार- लालपेरु, लाल जाम्रूद गु० रत पेर, रत पेरगडि-सिं०। मालकी नी, मलक्का बेङ्ग वर०। मोधरियान-आसा०। ताम्बड पेरु बम्ब०।

(२) श्वेत अमरूद, सफेद अमरूत, सीडियम् पायरिफेरम् Psidium Pyriferum *Linn* (Fruit of white Guava) ले० । मुफेद सफरी, आम सुफेद, जाम्-द० । धोप गोआ, आछि, फल, सादा पियारा-बं० । अमरूदे अबैज-अ० : अमरूदे सुपेद-फा० । वे ल्लइ गोय्या पज़म-ता० । तेल्ल जाम-पण्डु, तेल्ल-गोय्या-पण्डु-ते० । वेड् पेरा, वेड् पेरक, वेल्ल-मल्लाक-कप्पेर मल० विलि-शिवे-हण्णु-कना० पाढर जाम्ब, पांढर तूप केल-मह० । उज् लोपियार, उज्लो-पेरु, सफेद जमूरूद-गु० सुदुपेर, सुदुपेर-गडि-सिं० । मालका-फिऊ-बर० । पाएर-कों० । आमुक नैपा० । पाढर-पेरु बम्ब० ।

जम्बू वर्ग

(*N' O. Myrtaceae*)

उत्पत्ति-स्थान—अमेरिका, यहलगभग सम्पूर्ण भारतवर्ष साधारणत: बंग प्रदेश में लगाया जाता है ।

वानस्पतिक वर्णन—एक पेड़ जिसका धड़ कमजोर, टहनियां पतली और पत्तियां पांच या छः अगुल लम्बी होती है । इसका फल कच्चे पर कषैला और पकने पर मीठा होता है और इसके भीतर छोटे २ बीज होते हैं ।

इसके ताजे धड़ की छाल का बाह्य पृष्ट चिकना और भूरे रंग का होता है, और इस पर पर के समान सूखी हुई छाल के चिन्ह होते हैं । कभी कभी वे कुछ २ लगे होते हैं । धूसर उपचर्म के नीचे ताजी छाल हरित वर्ण की होती है इसके भीतरी पृष्ट पर लम्बाई की रुख उभरी हुई रेखाएँ पड़ी होती हैं तथा यह हलके धूसर वर्ण का होता है । स्वाद—कषैला और ग्राह्य अम्ल होता है । पत्र सुगंधि युक्त अण्डाकार या आयताकार लघु डंठल युक्त नीचे की ओर कोमल रोमों से आवृत और मुख्य पत्र शिराएँ अत्यन्त स्पष्ट होती है ।

रासायनिक संगठन—छाल में कषायीन (टैनीन) २८ ४ प्रतिशत राल और कैल्शियम ऑग्जेलेट के रवे होते हैं । अधिक परिमाण में कार्बोहाइड्रेट्स (कार्बोज) और लवण होते हैं । पत्र में राल, वसा काष्ठोज (cellulose) कषायीन (टैनीन) तड़नशील तेल हरिन्मूरि (Chlorophyll) और खनिज लवण आदि होते हैं । बसा क्लोरोफार्म में पूर्ण रूप से और ईथर या ऐलकोहल में अंशत: विलेय होता है । किंचित हरित उड़नशील तेल में युजिनोल (Eugenol) नामक पदार्थ होता है । यह तेल क्लोरोफार्म ईथर या ऐलकोहल में विलेय होता है ईस पेड़ में स्फुरिक (Phosphoric) शुक (Oxalic) और सेव (Malic) अम्लों (Acids) के साथ मिले हुये कैल्शियम तथा मैंगानीज वर्तमान होते हैं । मूल, कांड, त्वक तथा पत्र में अधिक परिणाम में टैनिक एसिड (कषा, यिनाश्ल होता है ।

प्रयोगांश—त्वक (मूल तथा कांड) फल और पत्र व भस्म ।

इतिहास—वि० डिमक महोदय के मतानुसार दोनों प्रकार के अमरूत अमेरिका से लाए गए । सम्भवत: पुर्तगाल निवासी इसको यहां लाए पर भारत वर्ष में कई स्थानों पर यह जंगली होता है ।

प्रभाव—कांड, त्वचा और मूलत्वक् संकोचक हैं । अपक्व फल न पचने योग्य होते और वमन तथा ज्वरोत्पादक होते हैं ।

गुणधर्म तथा उपयोग

गुण—कषैला, मधुर, खट्टा है और पका अमरूद स्वादिष्ट होता है यह वीर्यदायक' वात पित्तघ्न' शीतल कफ का स्थान है तथा भ्रम दाह, और मूर्छा को नष्ट करता तथा भारी है । अभि० नि० १ भा० ।

यूनानी मत से

प्रकृति—प्रथम कक्षा में शीतल और दूसरी कक्षा में रूक्ष है । किसी किसी के मत से १ कक्षा में सर्द व तर तथा मधुर उष्ण प्रकृति युक्त ।

हानिकर्त्ता—आध्मान कारक शीत प्रकृति तथा आमाशय नैर्बल्य को ।

दर्पघ्न—सांठ का मुरब्बा और सौंफ (मिश्री स्याह तथा लवण) ।

प्रतिनिधि—सेव, बिही या नाशपाती आवश्यकतानुसार।

मुख्य कार्य—हृद्य, हृदयबलदायक तथा आमाशय व पाचन शक्तिको बल देने वाला है।

मात्रा—मध्यम परिमाण में शक्त्यानुसार २-४ शर्बत की मात्रा—२ से ४ तो० तक व न्यूनाधिक।

गुण, कर्म, प्रयोग—अपने कषायपन तथा कब्ज (संकोच) के कारण संग्राही है। मवादका अवरोधक और अपनी शीतलता तथा अम्लता के कारण तृषा तथा पित्त को प्रशांत करता है। अपने संग्रहण या संकोच (कब्ज) तथा कषायपन अम्लत्व और सुगन्ध के कारण आमाशय को बल प्रदान करता तथा उसके परदों को स्थूल एवं सशक्त बना देता है। (नफी०)।

यह आह्लादकर्ता और शक्ति प्रदान करता है। संग्राही तथा कोष्ठमृदुकर होने पर भी जिला करता है। हृदय आमाशय और पाचन शक्ति को बलप्रद करता, प्रकृति को मृदु करता और मूर्च्छा को दूर करता है। क्षुधा को बढ़ाता और मस्तिष्क को शीतल रखता है। इसका गण्डूष हृद्य तथा वल्य और रक्तपित्तघ्न है। इसके पत्र अतिसार तथा व्रण के लिये अत्यन्त लाभप्रद है। फिटकिरी के साथ इसका क्वाथ दाँतों को लाभप्रद और इसके जले हुए पत्र तूतिया की प्रतिनिधि है। (निर्विपैल)। म० मु०।

इसके पुष्प—हृद्य, हृदय बलदायक, रक्तनिष्ठीवन तथा अतिसार को नष्ट करने वाले है। इसका लेप चक्षु शोथ लयकर्ता है। इसके बीज आमाशयस्थ कृमिघ्न है। इसके पत्र अतिसार के बद्धक और शुष्क पत्र को बारीक पीस कर छिड़कने से व्रण शोधक एवं पूरक है। इसका निर्यास दोष लयकर्ता और बलप्रद मुंजिज (मल पक्वकर्ता) है इसकी लकड़ी और जले हुये पत्र तूतिया की प्रतिनिधि हैं। अवचूर्णन करने से ये क्षतों को शुष्क करते हैं। लेखक के अनुभव में मधुर अमरूद पेचिश (प्रवाहिका) को नष्ट करता है। इ० मु०।

नव्यमत—

इसके फल अर्थात् अमरूद देशी लोगों को बहुत प्रिय है। वे इसकी सुगन्धि को बहुत पसंद करते हैं। यह संग्राही है और मलावरोध जनन की प्रवृत्ति रखता है। युरोप निवासी इसको जैली रूप में अथवा पकाकर खाना अधिक उत्तम ख्याल करते हैं। गोआ के पुर्तगाली इससे एक प्रकार का पनीर प्रस्तुत करते हैं। इसकी छाल संग्राही है और बालकों के पुरातन अतिसार की औषध रूप से यह फार्माकोपिया ऑफ इण्डिया में प्रशंसित है। डाक्टर वैट्ज (Dr, waitz) अर्द्ध आउंस मूलत्वक् को छः आउंस जल में ३ आउंस रहने तक क्वथित कर उपयोग में लाने का आदेश करते है। इसकी मात्रा—१ या अधिक चाय की चम्मच भर दिन में ३ या चार वार दें। वे इसको बच्चों के गुदभ्रंश रोग में वाह्य संकोचक रूप से उपयोग करने की सिफारिश करते हैं। अतिसार में इसके पत्रका भी सफलता पूर्वक उपयोग किया जा चुका है।

डिसकोर्टिल्ज—(Discourtilz) सुगंध्य चेंपहारक औषधों में इस पौधे का वर्णन करते हैं। इसके कोमल पत्र एवं पल्लव का क्वाथ वेस्ट इण्डीज में ज्वरघ्न तथा आक्षेपहर स्थानों में प्रयुक्त होता है तथा पत्र का फांट मस्तिष्क विकारो, वृक्क प्रदाह और प्रकृति दोष (Cachexia) में। आमवात में इसके पीसे हुए पत्र का स्थानिक उपयोग होता है। इसका सत्व अपस्मार तथा कम्पवात में प्रयुक्त होता है। बालकों के आक्षेप (Convulsion) में इसके टिंक्चरको उसकी रीढ़ पर मालिश करते हैं। फल तथा फल का मुरब्बा ये दोनों संग्राही हैं, और उन रोगियों के लिये जो अतिसार और प्रवाहिका से पीड़ित हैं, अत्यन्त उपयोगी है। फा० इं० २ भा०।

कांड त्वक् तथा मूलत्वक् सग्राही हैं। अपक्व फल पचने के अयोग्य है और वमन तथा उदरांश उत्पन्न करता है।

मनोहर फल के कारण इसके वृक्ष की बड़ी प्रतिष्ठा है, परन्तु इसके बीज हानिकारक होते हैं,

इसकी जैली हृदय बलदायक और मलावरोध के लिये उत्तम है। फलत्वक् युक्त इसको खाना चाहिये। फलत्वक् रहित खानेपर यह मलावरोध करता है। अपक्व फल अतिसार में प्रयुक्त है। गैरड (Garrod) ने रक्तवात में इसके फल की बड़ी प्रशंसा की है। वह जल जिसमें इसके फल तर किये गये हो बहुमूत्र जनित तृषा के लिये उत्तम है। विशूचिका जन्य छर्दि तथा अतिसार के निग्रहण के लिये इसका (मूलत्वक्) क्वाथ प्रयोग में आता है। इसके क्वाथ का स्कर्वी तथा दूषित व्रण में मुख धावन रूप से सूजे हुये मसूढ़ों में लाभदायक प्रयोग होता है। इसके पीसे हुए पत्र की अत्युत्तम पुल्टिस तैयार होती है। इं० मे० मे०।

इसकी छाल सग्राही, ज्वरघ्न और आक्षेपहर, फल—कोष्ठमृदुकर और पत्र—संग्राही है। इ० ड्र० इं०।

अमरूद—हिं० अ० अमरूत अमृतफल। (Psydium Pyriferum)

अमरूदे-अबैज—अ०, सि० अमरूद। See Amarut

अमरूदे-अह्मर—अ०
अमरूदेसुर्ख—फा०
लाल अमरूत, सुर्ख अमरूद। (The Red-guava) See Amaruta

अमरूदे-सुफेद—फ०, हिं० श्वेत अमरूत (The white guava. See Amaruta

अमरुफलम्—सं० क्ली० उत्तर देश में प्रसिद्ध फल विशेष। गुण—अमरुफल शीतल, मल को पतला करने वाला, दस्तावर, दाहकारक तथा रक्तपित्त, कामला, मूत्रकृच्छ्र तथा मूत्राश्मरी को नाश करने वाला है। वै० निघ०।

अमरुल—व० चूका, खटकल। चांगेरी—सं०। (Rumex scutatus)

अमरेन्द्रतरुः—सं० पु०, देवदारु वृक्ष (Cedrus Deodara) वै० निघ० २ भा० ज्व० निर्गुण्डीधूपः।

अमरेन्द्ररसः—सं० पु० शुद्ध गन्धक और सोहागा प्रत्येक १ मा०, गोदन्ती २ मा०, इनको मिलाकर चार पहर तक भांगरे के रस में मर्दन करें, फिर ६ दिन तक पान के रस में घोटें। मात्रा—मुग्द प्रमाण। गुण—भयानक ज्वर, पित्तजनित दाह, अनेक प्रकार के शूल और गुल्म को नष्ट करता है पथ्य—दही, भात। र० क० यो०।

अमरेश्वररसः—सं० पु० पारा और उससे द्विगुण गन्धक लेकर कज्जली बनाएँ, और जमीकन्द के रस से सात भावना दें, फिर शख, थूहर, धतूरा कौड़ी, छोटे शख, चित्रक, भिलावां, हरिण का सींग, अंगुलिया थूहर और सेंधा नमक इनके क्षारों को प्रत्येक गन्धक के समान मिलाकर घोटें। फिर थूहर का क्षार, त्रिकुटा, जमीकन्द, वंशलोचन भिलावां और चित्रक प्रत्येक को गन्धक के समान डालें और सूरण के रस की २१ भावना देवें। मात्रा—२ र०। अनुपान—घी। गुण—अर्श को २१ दिन में नष्ट करता सिद्ध योग है। र० कों० अर्शोधिकारे।

अमरेर—पं० चेञ्जुल, थान, सियारू, पिञ्जो, शकेई। -झेल० सुस्स, संसरू-चनाव। मेमो०। Bœhmeria Salicifolia *D. Don* एक पौधा है जिसका फल खाया जाता है। Debregeasia Bicolor, *Wedd*

अमरैया—हिं० संज्ञा स्त्री० देखो—अमराई।

अमरोला—हिं० चूका, चांगेरी। (Rumex Scutatus)

अमर्त्य—सं० त्रि० जिसकी मृत्यु न हो। अथर्व। सू० ३७। १२। का० ४।

अमर्दित—हिं० वि० [सं०] जिसका मर्दन न हुआ हो। जो मला न गया हो।

अमर्ष—हिं० संज्ञा पु० [वि० अमर्षित, अमर्षी] क्रोध कोप, रिस।

अमर्षण—हिं० संज्ञा पु० [सं०] क्रोध, रिस। (Anger) असहिष्णुता, अक्षमा।

अमर्षी—हिं० वि० [सं० अमर्षिन] क्रोधी, रागी, कोपान्वित, असहनशील। (Passionate, choleric)

अमलम्-सं० क्ली०
अमल-हिं० संज्ञा पु०

(१) अभ्रक, अबरक Talc (Mica) मे० लत्रिक। (२) समुद्रफेन, समुद्रझाग। (Cuttlefish bone) र० मा०। (३) कर्पूर, कपूर (Camphor) वै० निघ० २ भा० अप० चि०। (४) रौप्यमाक्षिक, रूपामक्खी। See-Roupyamakshika (५) पित्त (Bile) See-Pitta। (६) कतक वृक्ष, निर्मली। (Strychnos Potatorum) (७) गन्धद्रव्य विशेष। (An Aromatic Substance)

अमल-हिं० संज्ञा पु० [अ०] (१) मादक वस्तु, नशा। (Intoxication) (२) अफीम (Opium) (३) काम (Cupid)। (४) प्रभाव, असर। (५) प्रयोग (Use)

-वि० [सं०] निर्मल, स्वच्छ।

अमल-अ० (ए० व०) अअ्माल, कार्य, कार्य करना।

अमल फिअ्ल और सिन्अ का भेद, अमल प्रधान है तथा फिअ्ल सामान्य अर्थात् अमल उस फिअ्ल का नाम है जो प्राणियों जैसे मनुष्य व पशु से इच्छापूर्वक सम्पादित हो। विरुद्ध इसके फिअ्ल में इसका बन्धन नहीं। यह प्राणि एवं खनिजों में से हर एक के कार्य तथा प्रभाव के लिये बोला जाता है।

अमलकी-सं० स्त्री० भुँई आमला (Phyllanthus neruri)

अमलक्यादिखण्ड-सं० पु० आमला १ कुडव (१६ तो०) लेकर पकाएं, पुनः टुकड़े टुकड़े करके ६४ तो० गोदुग्ध में पीस ६४ तो० गोघृत में पकाएं, पुनः उसमें ६४ तो० मिश्री, अडूसा मूल १६तो०, जीरा, मिर्च, पीपल, दालचीनी, इलायची, तेजपत्र नागकेशर प्रत्येक १-१ तो०, बारीक चूर्ण कर उक्त अवलेह में मिश्रण कर उत्तम पात्रमें स्थापित करें। उचित मात्रा में सेवन करने से भयानक दाह, मूर्च्छा, पुरानी छर्दि दूर होता है। बंगसे० सं० दाह चि०

अमलक्यादिगणः-आमला, हड़, पीपल, चित्रक।

गुण-प्रत्येक ज्वर नाशक, कफघ्न, भेदी, दीपन और पाचन है। बंगसे० सं० गण पाठाधिकारः।

अमलक्यादि पाकः-सं० पु०, काकड़ासिंगी, तालीस पत्र, त्रिफला, खिरेटी, गिलोय, विदारीकन्द, कचूर, जीवन्ती, दशमूल, चन्दन, नागरमोथा, कमलगट्टा, इलायची, अडूसा, दाख, अष्टवर्ग, पुष्करमूल पृथक पृथक १॥-१॥ पल लें। और १६ सेर पानी में ५०० आमला औटाएं फिर औट जाने पर निकाल तैल घृत ६-६ पल लेकर आमलों को भूने तदनन्तर आधा तुला मिश्री की चाशनी करके आमलों का पाक करें। जब शीतल हो जाय तो ६ पल शहद डालदें। फिर बंशलोचन, चातुर्जात और पिप्पली इनमें से प्रत्येक २-२ पल डाले और उक्त शृंगयादि का चूर्ण भी डालें।

गुण-इसके सेवन से रक्तपित्त, क्षय, कास, कुष्ठ, भ्रम, प्यास तथा बुढ़ापा दूर होता है। यो० चि० क्षय० चि०।

अमलगुच-पं० पद्मकाष्ठ, पदमुकाठ। (Prunus sylvatica)

अमलच्छदा-सं० स्त्री० भोजपत्र। (Betula Bhojputra)

अमलज-अ० खर्नूब भेद। See kharnuba

अमलतास-हिं० (द०) संज्ञा पु० [सं० अम्ल] अमिलतांस, किरबेरा, घनबहेड़ा, किरवालो, किरवारो, सियार, (-ह) लाठी (-लठिया) बादर तोरई, बाँदर ककड़ी, गिरमाला, शोणहाली, आमलटास्।

केशिया फिस्च्युला (Cassia fistula, *Linn*) केथार्टोकार्पस फिस्च्युला (Cathartocarpus fistula. *Linn*) ले०। इण्डियन लेबर्नम् (Indian laburnum) पुडिंग पाइप ट्री (Pudding pipetree) पर्जिंग केशिया Purging casia (Pod or legumeof)-इं०। केशी केनीफिशिअर (Casse Canefician) फ्रा०।

संस्कृत पर्याय—चक्रपरिव्याधः (बै०), जठरनुत् (शे०), राजवृक्षः, सम्पाकः, चतुरंगुलः, शम्पाक, आरेवतः, व्याधघातः, कृतमालः, सुवर्णकः, (ख०), मन्थानः, रोचनः, दीर्घफलः, नृपद्रुमः, प्रग्रहः, हिमपुष्पः, राजतरुः, कृतघ्नः, महाकर्णिकारः, ज्वरान्तकः, अरुजः, स्वर्णालुफलः, स्वर्णपुष्पाः, स्वर्णद्रुः, कुष्ठसूदनः, कर्णाभरणकः, महाराजद्रुमः, कर्णिकारः, स्वर्णाङ्ग, आरग्वधः, अरग्वधः, आरग्वधम्, सम्पाकः, कडूघ्नः, रेचनः, स्वर्णभूषण, । सोनालु सों (शों) दाल, होनालु, लड़िया, शोणाल, वड़, सोन्दालि, वानीर-लाठी, वाँदर-लाठी, सोनाली, आमलतास, राखालवानड़ी, वं- । खियार शबर, खर्न्वे हिन्दी, फलूस अ० । खियारचवर-फा० । सक्के, कायिसार; तु० । कोन्डैक्-काय् शरक् कौन्डैक्-काय्, इरज्विरुट्टम, कोमरे, कोंने, यम्बल कोण्णइ-ता० । रैल-कायलु, सुवर्णम्, कारड्रा कायि, रैल, चेटु, रैला-काय, आरग्वधमु, रेल, राला, कोयल पन्ना, रेयलु-ते०, तै० । कोन्नक् काय, कोन्न (-न)-मल० । कक्क-कायि, हेग्गके, कक्के । कक्के-मर-कना० ।

भावाचो-सैङ्गे, वाहवा, वाव्याच्या, संगातिलगर, थोर-वाहबा, वाय बावा-वड़िलु वाह व्याचे झाड़ मह० । गड़ मालु, गरमालों. मीटौ-गरमालो, गरमाल, सरमाल-गु० । आहल्ल, आहिल्ल-सिं० । नुसी, ग्नूग्यी, ग्नुशवाय, नर० । कक्कायि, कानात्वइलड़ि, वानरलाठि कों० । कट्टु-कोना माला० अलोश, अली, करङ्कल, कियार; कनियार अलश-प० । राजवृक्ष, किटोल-कुमा० । राजवृक्ष-नैपा० । चिमूकनी-सि० । ननिक-संता० हरी-(कोल-) सोनलु-(गारो । सनारु-आसा० । बन्दौलाट कछा० । सन्दारी, सुनारी-उड़ि० । कितवाली, सितोली, इतोला, कितोली, भिमरे; सीम उ० प० प्रा० । बर्गा-अव० । जग्गर वह, रैला, पिरोजह्, करकच-म० प्र० । जग्गर, जगरुआ० कंबार, रेरा (ड्रा) गो० । गरमाल, बावा बम्ब० । वड़िलु बाहबा हेगके-क० । कानइलड़ी-आ० । सुनारि, सदरी सौनरी-उ० एसल (सिंहली) ।

परिचय ज्ञापिका संज्ञाए-स्वर्ण पुष्प, दीर्घ फल गुणप्रकाशिका संज्ञाए-कण्डूघ्न, ज्वरान्तक, कुष्ठसूदन, रेचन ।

शिम्बी या बर्बुर वर्ग ।

N. O. Legum inosœ

उत्पत्ति स्थान—प्रायः समस्त भारतवर्ष पश्चिम भारतीय द्वीप समूह और बर्मा तथा ब्राजील अफ्रीका के उष्ण प्रदेश ।

वानस्पतिक—वर्णन—अमलताल के वृक्ष विना यत्न के जहाँ तहाँ उत्पन्न होते हैं, पत्र प्रायः ३—६ जोड़े में होते हैं, अग्र भाग में अयुग्म पत्र नही होता, पत्र का पृष्ट तथा उदर मसृण और वृन्त ह्रस्व होता है । पुष्प पीत वर्ण का एवं सुदीर्घ, अवनत और अशाख पुष्प दंड पर स्थित होता है, पुष्प—बीज-कोष—एक कोष युक्त होता है जिसमें असंख्य बीजकण होते हैं। वे जितने ही परिपक्व होते जाते हैं, उतने ही अन्तर में पड़े हुए परदों की वृद्धिके साथ परस्पर पृथक् भूत होते जाते हैं, परिपक्व फल नलाकृति, हस्ताधिक दीर्घ ह्रस्व, मजबूत, काष्ठीय डंठल युक्त एवं नोकदार और लगभग १ इं० व्यास वृक्ष से लटका रहता है । फल का ऊपरी भाग मसृण, पकने पर गम्भीर धूसर वर्ण का हो जाता है। डंठल का फाइब्रो वैस्कुलर (Fibro vascular) स्तम्भ दो चौड़े समांतर सीविनियों में विभक्त होता है, जैसे पृष्ठीय और उदरीय सीमंत जो शिम्बके समग्र लम्बाई भर होतेहैं । ये (सीमंत) सचिक्कण अथवा लम्बाई की रुख किंचित धारीदार होते हैं । इनमें से हर एक दो काष्ठीय गट्ठों द्वारा निर्मित और एक संकुचित रेखा द्वारा संयुक्त होता है । एक फली में पाये जाने वाले २५ से १०० बीजों में से प्रत्येक अत्यन्त पतला काष्ठीय पर्दा से निर्मित एक कोष में स्थित होता है। बीज चक्राकार रक्ताभ धूसर वर्ण का होता है, जो चारों ओर से अहिफेनवत् कृष्णवर्ण के पदार्थ से आवृत होता है । यह चिपचिपा मधुर एवं दुर्गन्धि युक्त होता है ।

नोट—इसका केवल यह शुद्ध गुदा ही

फार्माकोपिया में प्रविष्ट हैं, पुष्पकालः—वैशाख और ज्येष्ट।

रासायनिक संगठन—फल के बारीक चूर्ण के वाष्प स्रवण विधि द्वारा अर्क खींचने से मधु गंधि युक्त एक श्याम पीत वर्ण का अस्थिर तेल प्राप्त होता। तैलीय अर्क में साधारण व्युटिरिक एसिड होता है फल मज्जा में शर्करा ६० प्रतिशत तुआव, सग्राही पदार्थ, ग्लूटीन (सरेश) रञ्जक पदार्थ, पेक्टीन, कैल्शियम ऑक्ज़ेलेट, भस्म, निर्यास और जल सम्मिलित होता है।

प्रयोज्यांश—मूल मूल त्वक, (वृक्ष त्वक्) पत्र, पुष्प, फल, मज्जा बीज की गिरी अंतः परिमार्जन हेतु फल और वहिः परिमार्जन हेतु यथा कुल्ल आदि में पत्र लेना चाहिये। सि० यो० पित्त० ज्व० द्राक्षादौ।

इतिहास—अमलतास वृक्ष की आदि जन्म भूमि भारतवर्ष है अतएव प्राचीन भारतियों को उक्त औषधि का ज्ञान था किंतु प्राचीन यूनानियों को इसका ज्ञान न था कदाचित पश्चात् कालीन यूनानियों को अरब निवासियों द्वारा इसका ज्ञान हुआ।

औषधि निर्माण—(१) मूल त्वक क्वाथ मात्रा—१ से १० तो०। (२) फल मज्जा, मात्रा २–४ आने भर। विरेचनार्थ आधा से १ तो०। (३) आरग्वध पञ्चक। हा० अत्रि०। (४) आरग्वधादि वा० सु०। (५) आरग्वधाद्य तेल। च० द०। (६) गुलकंद। (७) वटिका। (८) मद्य। (९) बर्तिका। (१०) अवलेह। (११) मज्जून और (१२) फांट।

अमलतास के गुण धर्म तथा प्रयोग

आयुर्वेदीय मतानुसार—अमलतास कंडुघ्न (चरक) और कफवात प्रशमन (सुश्रुत) है। अमलतास (आरग्वध) रस में तिक्त भारी उष्ण है तथा कृमि और शूल का नाश करता है और कफ उदर रोग, प्रमेह, मूत्रकृच्छ, गुल्म और त्रिदोषनाशक है। धन्वन्तरीय निघण्टु।

आरग्वध अति मधुर, शीतल, शूलघ्न है तथा ज्वर, कण्डू (खुजली) कुष्ट, प्रमेह कफ और विष्टम्भनाशक है। रा० नि० व० ६।

आरग्वध गुरु, मधुर, शीतल और उत्तम रेचन कोष्ठस्थ मलादि को ढीला करने वाला है। तथा ज्वर हृद्रोग, रक्त पित्त, वातोदावर्त (ऊर्द्ध्वगतवायु) और शूल नाशक है। इसकी फली रेचन (कोठे के मलादिक को शिथिल करने वाली) रुचिकारी है। तथा कुष्ट, पित्त और कफ नाशक है। अमलतास ज्वर में सर्वदा पथ्य और परम कोष्ठशोधक है। भा० पू० १ भा०।

राजवृक्ष (अमलतास) अधिक पथ्य मृदु, मधुर और शीतल है। इसका फल मधुर वृष्य, वात पित्त नाशक और सर (दस्तावर) है। राजवल्लभः।

अमलतास पत्र रेचक और कफ तथा मेदनाशक है। पुष्प मधुर, शीतल, तिक्त और ग्राहक है। तथा कषैला। फल मज्जा पाक में मधुर, स्निग्ध अग्निवर्धक, रेचक और वात एवं पित्त का नाश करने वाली है। द्रव्य० गु० वै० निघ०।

अमलतास के वैद्यकीय व्यवहार—

चरक—ज्वर में आरग्वध फल—(१)

ज्वर रोगी की कोष्ट शुद्धि हेतु ऊष्ण गाय के दूध वा किसमिस के रस (क्वाथ के साथ आरग्वध फल व मज्जा सेवन करनेको दें। चि० ६ अ०

(२) रक्त पित्तमें आरग्वध फल—अमलतास की फली की मज्जा को प्रचुर परिमाण में मधु और शर्करा के साथ उर्द्धगत रक्त पित्त रोगी को विरेचन के लिये सेवन कराएँ। (चि० ४ अ०)।

(३) पित्तोदर में।

आरग्वध का फल—क्वाथ विधि से अमलतास के फल के गूदा का काढ़ा तैयार कर पित्तोदर रोगी को सेवन कराना चाहिये। (चि० १८ अ०)।

(४) कामलामें आरग्वध फल—आरग्वध फल मज्जा को इक्षु भूमिकुष्माण्ड वा बड़े आमले के रस के साथ कामला रोगी को सेवन

कराना चाहिये। इससे कामला का नाश होता है (चि० २० अ०)।

(५) कुष्ट में आरग्वध पत्र—अमलतास के पत्रको पीसकर कुष्ट में प्रलेपकरें। (चि० ७ अ०)।

(६) विसर्प में आरग्वध पत्र—अमलतास के पत्र को वाटकर घृत मिला कफज विसर्प में प्रलेप करें। (चि० ११ अ०)।

(७) उरस्तम्भ रोग में अमलतास के पत्र का शाक तिल तेल द्वारा अमलतास के पत्र का जल में लवण रहित शाक सिद्ध कर उरुस्तम्भ रोगी को सेवन कराएँ। (चि० २७ अ०)।

'वेत्रारग्वध पल्लवैः,

सुश्रुत—(१) उपदंश में व्रत प्रक्षालनार्थ आरग्वध पत्र—जाति (चमेली) तथा आरग्वध इन दोनो के पत्र का काढ़ा कर उससे औपदंशीय व्रत का प्रक्षालन कराएँ। (चि० १६ अ०)

हारिद्रप्रमेह में आरग्वध—अमलतास के पत्र वा मूलत्वक का क्वाथ हरिद्रामेही को सेवन कराएँ। (चि० ११ अ०)

वाग्भट्ट—(१) कफ विद्रधि में आरग्वध पत्र—आरग्वध पत्र के क्वाथ से कफज विद्रधि के व्रत को धोएँ। (चि० १३ अ०)।

(२) कफज आरोचक में आरग्वध—आरग्वध फल मज्जा तथा अजवाइन इन दोनों के द्वारा निर्मित क्वाथ को कफज अरोचक में पान कराएँ। चि० ५ अ०)।

(३) राजयक्ष्मा में आरग्वध—बहुदोष, बलवान यक्ष्मा रोगी को विरेचनार्थ मधु, शर्करा, तथा घृत के साथ अथवा दुग्ध वा अन्य तर्पक वस्तु के साथ आरग्वध फल मज्जाका सेवन कराएँ (चि० ५ अ०)

(४) कुष्ट में आरग्वध मूल—अमलतास की जड़ के काढ़े से १०० बार घृत का पाक करें। इस घृत को कुष्टरोगी को पान कराएँ। औषध सेवन काल में स्नान वा पानार्थ खदिरयुक्त जल का व्यवहार कराते रहें। (चि० १६ अ०)

भावप्रकाश—आमवात में आरग्वध पत्र—सरसों के तेल में अमलतास के पत्र को भूनकर सायंकाल भोजन के साथ इसका सेवन करें। यह आमदोषनाशक है।

चक्रदत्त—(१) पित्त ज्वर में आरग्वध पित्तज्वरी को अमलतास के गूदा तथा किसमिस द्वारा प्रस्तुत क्वाथ का पान कराएँ ज्वर० चि०।

(२) गन्डमाला में आरग्वध मूल—ताजे अमलतास की जड़ की ताजी छाल को चावल के धोवन से पीसकर नस्य देने तथा गण्ड माला पर प्रलेप व अभ्यग करने से इसका नाश होता है। गण्डमाला चि०।

वङ्गसेन—दद्रु व किटिभ कुष्ट में आरग्वध पत्र—

अमलतास के पत्र को पीसकर लेप करने से उक्त कुष्ठ और सिध्म आदि कुष्ठों का भी नाश होता है।

वक्तव्य

राज निघण्टुकार के मत से क्षुद्र अमलतास का नाम कर्णिकार है। यह मालूम नही होता कि यह किस अंश में छोटा है। धन्वन्तरि निघण्टूक्तकर्णिकार का एक नाम 'आरोग्य शिम्बी,, और राजनिघंटूक्त दूसरा नाम "पंक्ति बीजक,, है। कालिदास लिखते हैं—

"आकृष्ट हेमद्युति कर्णिकारम्"।

यूनानी वैद्यकीय मत से

प्रकृति—गरमी और सरदी में मश्रतदिल है। जिसका प्रमाण यह है कि इसमें कोई ऐसा स्वाद नही पाया जाता है (इसका स्वाद मधुर और हीक अत्यन्त तीव्र होता है। अतएव इसको कच्चा प्रथम वा द्वितीय का उष्ण होना चाहिये) जिस हेतु से इसको किसी बलवान कैफियत से संबद्ध किया जाय, और तर है नफा० ३। किसी किसी ने १ कच्चामें गरम तर और किसी किसी ने मश्रतदिल (शीतोष्ण) लिखा है। हानिकर्ता-आमाशय के लिये तथा हृल्लास, मरोड़ और पेचिश उत्पन्न करता है। दर्पघ्न-मस्तगी और अनीसू

से इसके आमाशय पर हानिकर तथा हल्लास-कारक प्रभावकी निवृत्ति होती है। मरोड़ और पेचिश के लिये इसमें रोगन बादाम मिलाकर देना चाहिये। मग्ज तुख्म कद्दू और जुलाल इमली प्रतिनिधि—इससे तिगुनी द्राक्षा, तुर्बुद (निशोथ) और तुरञ्जबीन। मात्रा—१ तो० से २ या ८ तो० तक। साधारणतः २॥ तो० से ४ तो० तक प्रयुक्त है।

गुण-कर्म, प्रयोग—अमलतास उदरीय वा वातीय अन्तर अवयवों के उष्ण शोथों को लाभ पहुँचाता है। क्योंकि यह मृदुकर्ता, विलायक व द्रावक है। इन्हीं प्रभावों के कारण कण्ठस्थ शोथों के लिये मक्को के पानी के साथ इसका गण्डूष किया जाता है, और इन्हीं कारणों से सन्धिवात तथा वातरक्त पर इसका प्रलेप किया जाता है।

यह यर्कान (कामला) और यकृद्वेदना को लाभ पहुचाता और उदर (कोष्ठ) को मृदु करता और बिना कष्ट के दग्ध पित्त और कफ के विरेक लाता है। गर्भवती स्त्री को भी इसका विरेचन दिया जा सकता है, क्योंकि इसमें क्षोभ (लज्ज्) तीक्ष्णता, कब्ज (धारकत्व) और कषायपन जैसी कोई बुरी कैफियत नहीं है, जो अन्तरावयवों को हानि पहुँचाए। नफी०।

मीर मुहम्मदहुसेन—लिखते हैं कि उत्तम जुलाब होने के लिये अमलतास का फलियों को थोड़ा गरम कर उसका गूदा निकाल थोड़े रोगन बादाम के साथ मिलाकर प्रयोग करे, यह मुलत्तिफ (द्रावक) वक्ष के अवरोधों तथा रक्तष्ठीवा को लाभ प्रद है और बालक तथा स्त्री यहाँ तक कि गर्भिणी के लिये भी निरापद रेचक है, किंतु इसका अत्यन्त हलका प्रभाव होता है। उपर्युक्त औषध के साथ यह सम्पूर्ण दोषों का शोधक है, उदाहरण स्वरूप एकत्र हुये पित्त को दूर करने के लिये इसको इमली के साथ पिलाना चाहिये, बलगम तथा सौदा के लिये क्रमशः निशोथ तथा बसफाइज (कासनी, बर्ग बेद, आब शाहतरा) के साथ और आन्त्रीयावरोधों को दूर करने के लिए इसको लुआबदार वस्तु यथा अतसी वा रोगन बादाम (रीशा खित्मी, बिहीदाना, या ईषद गोल के लुआब) के साथ अथवा कोई उपयुक्त औषध यथा कासनी के साथ सम्मिलित कर प्रयोग करने की सिफारिश की जाती है। संधिवात एवं वात रक्त आदि के लिये बाह्य रूप से इसका प्रलेप उत्तम होता है। पुष्प एवं पत्र में मुलत्तिफ (द्रावक) गुण का होना बतलाया जाता है। (किसी किसी ने रेचन गुण का होना भी लिखा है) पुष्प के गुलकन्द बनाने का भी वर्णन आया है। ५ से ७ की मात्रा में इसके बीजों के चूर्ण के प्रयोग करने से बमन आते हैं, और यदि फली के ऊपर की छाल, केशर, मिश्री और गुलाबजल के साथ पीसकर दें तो स्त्री को तुरन्त प्रसव हो। छाल और पत्तों को तेल में पीसकर फोड़ा के ऊपर लगाने से लाभ होता है। (म० अ०)

धनियें के जल के साथ इसका गण्डूष खुनाक को लाभप्रद है। इसके पत्र सम्पूर्ण शोथों को लय करते हैं। क्वथित करने से अमलतास के गूदे का प्रभाव नष्ट हो जाता है। म० मु०।

यह पेचिश को नष्ट करता, यकृत के रोध का उद्घाटक और यर्कान (कामला) और उष्ण प्रकृति को लाभप्रद है जिसे एक वर्ष न हुए हो वह रक्त प्रमेह उत्पन्न करता है। पुष्प-मृदुकर्ता, श्याम त्वचा का प्रलेप दद्रुघ्न है। ब्रु० मु०।

कासनी पत्र स्वरस, मक्को और कसूस तथा अन्य उपयुक्त औषधों के साथ इसका उपयोग करने से यह यकृद्वेदना व यकृत् के अवरोध यर्कान (कामला) और उष्ण ज्वरों को लाभ दायक है। बकरी के दूध या आब अञ्जीर के साथ इसका गण्डूष करने से खुनाक को लाभ होता है।

नोट—चूँकि यह आन्त्र के भीतर चिपट जाने के कारण क्षोभ व घर्षण उत्पन्न करने का हेतु बनता है। अत एव इसको रोगन बादाम के साथ मलकर काम में लाना चाहिये।

डाक्टरी मत से—

एलोपैथी चिकित्सा में केवल इसका गूदा अर्थात् आरग्वध फल मज्जा ही औषधार्थ व्यवहार होती है।

आरग्वध फल मज्जा, आरग्वध गूदिका, अमलतास का गूदा-हिं०। केशीई पल्पा Cassiæ Pulpa-ले०। केशिया पल्प Cassia Pulp-इं०। अरले खयार शम्बर-अ०।

(ऑफ़िशल *Oflicial*)

निर्माण-विधि—यह कोमल, मधुर, लगभग श्यामवर्ण का गूदा है जो अमलतास की फली से प्राप्त होता है। इक फली को जल में मल छान कर यहां तक पकाएं कि वह मृदु रसक्रियावत् रह जाय।

प्रभाव—मृदुरेचक। मात्रा—मृदुरेचक रूप से ३० से १२० ग्रेन तक और १ से २ आउंस तक विरेचक रूप से। यह कन्फेक्शियो सेन्ना में पड़ता है।

प्रभाव तथा प्रयोग—यद्यपि यह मृदुकर्ता व विरेचक है। परन्तु, क्योंकि इसके प्रयोग से जी मचलाता है और उदर में मरोड़ होने लगती है। इस लिये इसको अकेला उपयोग में नहीं लाते, प्रत्युत सनाय के साथ सम्मिलित कर मअजून की शकल में दिया करते हैं। (फ़ा० मे० मे०)

अन्यमत

एन्सली ने भारतीय लोगों को इसके गूदे और पुष्प का उपयोग करते हुये पाया।

डाक्टर इर्विन लिखते हैं—"मैंने इसकी जड़ को सबल रेचक पाया।" गुजरात से विरेचक रूप से इसके उपयोग करने की भी सूचना मिलती है।

कोंकण में इसके कोमल पत्तों का स्वरस दूधिया रूप से तथा भिलावे के रस के प्रयोग द्वारा हुये खराश के शमनार्थ इसका उपयोग करते हैं।

रम्फियस कहते हैं कि पुर्तगाल निवासी नव्य फलियों एवं पुष्प का मअजून बनाते हैं। इसके वृक्ष में, छेदा देने से एक विशेष प्रकार का निर्यास निर्गत होता है जो कतीरा के समान पानी में फूल जाता है। (डीमक) कैशिया ब्रेज़िलिएना (Cassia Braziliana) तथा कैशिया मास्केटा (Cassia Moschata) भी भारतवर्ष में लगाये गये हैं। ये गुण में बिलकुल अमलतास के समान होते हैं। अधिक काल तक इसका प्रयोग करने से गम्भीर धूम्र वर्ण का मूत्र आने लगता है। काफी के एसेंस में मिश्रण करने के लिये इसका गूदा काम में आता है। अजीर्ण स्वभाव के व्यक्तियों के लिये इसके गूदे की प्रशंसा की जाती है। बीज वामक है। मूल तीव्रविरेचक है। फल मज्जा संग्रहणी प्रवण व्यक्तियों के पक्ष में हितकर है। मृदुरेचक रूप से इसकी मात्रा ३० से ८० ग्रेन है। (मेटिरिया मेडिका आफ इन्डिया—आर० एन० खोरि, भा० ३, पृ० २८०)

मज्जा, मूल त्वक्, बीज और पत्र में रेचक गुण है। मूल रेचक, वल्य और ज्वरघ्न प्रभाव करता है। चूँकि अकेला प्रयोग करने पर पूर्ण प्रभाव हेतु इसकी एक या दो आउंस अथवा इससे भी कहीं अधिक मात्रा में देना पड़ता है। इस लिये इसको अन्य रेचक औषधों के साथ (सहायक रूप से) पाक वा अवलेह रूपमें बर्तते हैं। इसको अकेला न बर्तने का यह भी कारण है कि इससे शूलवत् वेदना परिकर्त्तिका और उदराध्मान जनित होता है) आरग्वध गूदिका काँफी के एसेंस में भी प्रयुक्त होती है। इसके गूदे का मअजून (पाक २ से ४ ड्राम की मात्रा में मृदु रेचक है। इससे १ व २ दस्त आ जाते हैं। इसके गूदे का पाक बहुमूत्र में प्रयुक्त है। वह गुलकन्द जिसमें कि यह पड़ता है विशेषतः कोमल प्रकृतिकी स्त्रियों के लिये एक शीतल काष्ट मृदुकर औषध है इस की मात्रा आधा आउंस है। इसको सोते समय उष्ण दुग्ध से सेवन करएँ। इसकी पकी फली के गूदे में इमली का गूदा मिलाकर सोते समय सेवन करने से आंत्र पर इसका मृदु प्रभाव होकर दूसरी सुबह को १ वा २ नरम विरेक हो जाते हैं बालकों के आध्मान युक्त उदर शूल में विरेक हेतु साधारणतः इसको नाभि के चारो तरफ लगाते हैं आमाशयिक विकारों में इसके फूल का

काढ़ा दिया जाता है। इसके पत्र को पीस कर दाद पर लगाते हैं। इसके पत्र एवं छाल को पीस कर उसमें तेल सम्मिलितकर उसका फुन्सी, दद्रु शीतके कारण हस्तपादकी अंगुलियों का कण्डूयुक्त शोथ (Chilblains) कीटदंष्ट्र, अर्द्धांगवात (Facial paralysis) और आमवात पर प्रलेप करते हैं। मूल, ज्वर, हृद्रोग, अवरुद्धस्राव और पित्त विकार प्रभृतिमें लाभदायक है। (इ० मे० मे०)

आरग्वध के कतिपय चुने हुये उत्तम मिश्रित योग

(१) पाचकावलेह—नीबू के १ सेर रस में आधसेर अमलतास को फलिवों को कूटकर डाल दें। दो दिन भीगने बाद धुले हुये स्वच्छ वस्त्र में डालकर हाथ से हिला हिलाकर छान लें। पुनः उसमें निम्नांकित १० वस्तुओं के चूर्ण को कपड़ छान करके डाल दें। वे यह हैं दालचीनी, सोंठ काली मरिच, छोटी पीपल, हींग, (भुनी हुई) छोटी अथवा बड़ी इलायची के दाने इन छः चीजों को २-२ तोला लें। और सेंधा नमक, कालानमक काला दाना, (अग्नि पर भुना हुआ) और नवीन सफेद जीरा (भुना हुआ)

निर्माण विधि—इनमें से अन्तिम की तीन चीजों को सिलपर खूब पीस डालें। बाकी ऊपर लिखी हुई सात चीजों को लोहे की खरल में कूट कर कपड़ छान कर लें। सब चूर्ण को ऊपर कही हुई खटाई में मिलाने से बहुत स्वाद पाचकावलेप (पाचक चटपटी चटनी) बन जाता है। मात्रा ३ मा० से १ तो० तक।

सेवन विधि तथा गुण व प्रयोग—इसके चाटने से मन्दाग्नि व आलस्य दूर हो जाते हैं। रात्रि को चाटकर सोने से प्रातः काल दस्त साफ हो जाता है। चित्त खूब प्रसन्न रहता है। भोजन में अरुचि होने पर दो घन्टे पहले चाट लेने से भोजन मे रुचि हो जाती है प्रायः ज्वरमें मुख का स्वाद बिगड़ा रहता है इसके चाटने से वह दोष दूर हो जाता है यह अवलेह कुछ गरम होता है इसलिये ५ तोले दाख को नीबू के रस के साथ सिल पर पीस छानकर अवलेह में डाल दें और पके हुये अनार के दानों का रस डाल दें तो ये सब गरमी को शांत कर स्वाद को बढ़ायेंगे। इस को धातु के पात्र में न बनायें। स्वादानुसार लवण को न्यूनाधिक कर सकते हैं। (रसायनसार १ भा०)।

(२) गुलकंद खयार शंबर (आरग्वध का गुलकंद) अमलतास के उत्तम फूल आधसेर लेकर एक चीनी के हावनदस्ता में डालकर थोड़ी सफेद चीनी फूलों में डाले और कूटते जांय। जब १ सेर चीनी मिल जांय और मिश्रण गुलकन्द के समान हो जाय तब तैयार जानना चाहिये। ईसका रंग पेत होगा (अथवा गुलकन्दकी विधि से इसको तैयार करें)।

मात्रा—४ से ८ मा० तक। बालकों तथा स्त्रियों के लिये अत्यत्तम है।

(३) लऊक़ खयार शंबर—यह युह्या (यूहन्ना) बिन मासूयह् का योग है। उन्नाब ५ दाना, सपिस्ता (श्लेष्मान्तक) १०० दाना तुख्म खित्मी ३ तो० मवेज मुनक्का ७॥ तो० वनफसहअधकुट किया और छीली हुई मुलेठी प्रत्येक ४ तो० कतीरा ४॥ तोला अस्पगोल (ईषदगोल) ३ तो०, इन सम्पूर्ण औषधों को ३ सेर पानी में क्वथित करें। जब तीसरा भाग रह जाय तब उतार कर साफ करलें। फिट ३ तो० अमलतास घोलकर दुबारा साफ करें। पुनः ३॥ मा० सक बीनज और ६ तो० मिश्री मिलाकर क्वाथ करें। गाढ़ा होने पर रोगन बादाम या रोगन बनफ्सह् के साथ मर्दन कर आवश्यकतानुसार थोड़ी थोड़ी दिनमें २-३ बार चाटें।

उपयोग—कंठ, शोथ, ज्वर, तृषा, जिह्वा की रूक्षता और वक्षस्थ व्याधियों यथा कास, प्रतिश्याय पार्श्वशूल तथा उग्रफुप्फुशोथ प्रभृति में लाभदायक है।

(४) (मुरब्बाए फलूस खयार शंबर—कच्चा अमलतास जिसमें गंध का प्रादुर्भाव न हुआ हो लेकर उसका छिलका दूरकरके फलूस(लुआब) निकालें और पान में खाने वाले चूने के पानी में एक दो घन्टे भिगो रखें। जब लाल हो जाय तब

उक्त पानी से निकालकर २-३ बार निर्मल जलसे धोएँ। मिश्री को गुलाब जल में विलीन कर के अग्नि पर रखें। जब चाशनी तैयार होने के निकट आए उस समय उक्तफलूस खयार शंवर को उस में डालकर दो तीन उबाल और दें और उतार लें यदि सुवासित करना चाहेंतो किंचित कस्तूरी तथा अम्बर भी उसमें सम्मिलित कर दें।

गुण—कोष्टमृदुकर है और अविच्छिन्न बद्ध कोष्ट तथा बिट् संज्ञक उदरशूल के लिये विशेष कर लाभदायक है।

(५) मअ्जून खयार शंवर—गुलाब पुष्प ७ तो०, सनाय मक्की ७ तो०' सूखी धनियां, रुब्बुस्सूस (सत मुलेठी) १ तो०, सैंधव १ तो० इनको वारीक करके पृथक रखलें। निम्न औषधों को २ सेर वृष्टि जल में अहोरात्रि भिगो रक्खें अञ्जीर १२ तो०, इमली ६ तो०, आलूबुखारा ५ तो०, मग्ज फलूस खयार शम्बर २० तोला अमलतास के अतिरिक्त शेष औषधों को पादशेष रहने तक कथित कर चलनी से छान लें तदनन्तर उक्त जल में २० तो०, अमलतास भिगोकर कुछ मिनट तक मन्दाग्नि की उत्ताप देकर उतार लें। और पुनः चलनीसे छानकर उपर्युक्त बीज प्रभृति डाल दें। उस पानी में १ सेर सफेद चीनी मिला कर गाढ़ा होने तक पकाएँ फिर उतार कर वारीक की हुई दवाओंको मिलाकर ५तो०, रोगन बादाम मिला दें। ध्यान रखें कि वह अग्नि पर जल न पाँए।

गुण—कौलज्जहर तथा आंत्र की रूक्षता के लिये अत्युत्तम कोष्ठमृदु कर है। यह मअ्जून प्रत्येक प्रकृति के लिये विशेष कर अर्श रोगी के लिये अत्यन्त लाभप्रद है। मात्रा—४ मा० से ८ मा० तक सोते समय पानी या दूध के साथ सेवन करें।

आरग्वध क्वाथ—पीली हड़ का बकला ३ तो० ६मा० आलुबुखारा, उन्नाव विलायती प्रत्येक २०— दाने, मबेज मुनक्का, इमली प्रत्येक ५ तो० ७॥ मा०, गुलाब, गुले नीलोफर प्रत्येक १ तो० १॥ मा० बनफसा १॥ ola ६.वर्षा १ सेर ६ छ० पानी में क्वाथ करें जब १॥ पाव पानी शेष रहे। उस समय उतार कर साफ करें इसमें मग्जफलू स खयार शंवर ४ तो० से ७ तो० तक विलीन करके साफ करे और ६ मा० मधुर बादादि तैल सम्मिलित कर पिलाएँ गुण—रेचक है और पैत्तिक (उष्ण) दोषों को निःसृत करता है।

(७) आरग्वध फांट—मग्ज फलूस खयार शंवर, इमली प्रत्येक ४॥ तो० आलूबोखारा १५ दाना, उन्नाव १० दाना, सपिस्ताँ (लिसोड़ा) २० दाना सबको गरम किये हुये अर्क कासनी आवश्यकतानुसार में भिगो दें। प्रातःकाल निथार कर तुरंजबीन; शीर खिश्त प्रत्येक ३ तो० ६ मा० सम्मिलित कर बिलीन करें और स्वच्छ करके रोगन बादाम १ तो० मिलाकर पिलाएँ।

गुण—समग्र उष्ण एवं उग्र पैत्तिक तथा रक्त जन्य रोगों में लाभदायक है और कोष्ट को मृदु कर्त्ता है। यदि पित्तज कामला (यर्कान) हो और पित्त की उल्वणता हो तो कासनी पत्र स्वरस ताजा ६ तोले से १२ तो० तक इसी योग में अधिक सम्मिलित करें।

सूचना— कास रोगी को इस योग का सेवन न कराएँ।

(८) आरग्वध वटिका—मग्ज फलूस खबार शंबर ७॥ तो०, सक्मूनिया मुशब्बी (भुलभुलाया हुआ) ४॥ मा०, कतीरा ६ मा०, पीली हड़ का बकला, काबुली हड़, काबुली हड़ का बकला, सनाय मक्की, जरिश्क (साफ किया हुआ), गुलबनफ्शा प्रत्येक १॥ तो०। निर्माण विधि—मग्ज फलूस खयार शंबर के सिवा शेष सब औषधों को कूट छानकर १ तो० १०॥ मा०, मधुर बादाद तैल में मर्दन करके चने प्रमाण वटिकाए प्रस्तुत करे और वर्क चांदी में लपेट कर रखें। मात्रा—आवश्यकतानुसार इसमें से ७ मा० से ६ मा० तक सेवन करे।

गुण—यह सर्वोत्कृष्ट विरेचन है और मस्तिष्क रोगों में हितकर है।

(९) मुलय्यिन मुबारक—गुलाब १ तो० गुल नीलोफर १ तो०, गुलबनफ्शा १ तो०,

आलूबुखारा १ तो०, तुरंजबीन २ तो०, निर्माण विधि—समग्र औषधों को रात्रि भर आधसेर अर्क गुलाब में तर करके प्रातः काल इतना पकाए जिससे आधा शेष रह जाय। तदनन्तर फलूस खयार शंबर १० तो० को उक्त तरल में डालकर थोड़ी देर तक मृदु अग्नि देकर उतार लें इसमें १० तो० हड़ के मुरब्बे का सीरा मिला कर १ तो० रागन बादाम सम्मिलित कर लें। मात्रा—अवस्थानुसार वैद्य की राय से।

गुण—यह अत्युत्तम कोष्ठ मृदुकर है। यह अत्यन्त सुस्वाद और प्रत्येक प्रकृति के अनुकूल है।

(१०) आरग्वध गण्डूष—रुब्ब खयार शंबर १ तो०, वृष्टिजल २० तो०, शिब्ब यमानी (यमनी फिटकरी) १ मा० सबको विलीन करके कवल रूप कराए।

गुण—टोन्सिल के शोथ तथा खुनाक के लिये रामबाण है।

(११) शियाफ खयार शंबर—आरग्वध फलवर्ति)-आरग्वध फल मज्जा, लाल शकर प्रत्येक ३ तो०, सनाय मक्की १॥ तो०, खिरमी ११ मा०, लवण ३॥ मा०। निर्माण विधि—औषधों को कूट पीस कर प्रथम दो औषधों के द्वारा वर्ति प्रस्तुत करे और यथा विधि उपयोग में लाये।

गुण—उदरशूल को लाभप्रद है और कोष्ठ को मृदु करता है।

(१२) आरग्वध त्वक् क्वाथ—आरग्वध की छाल, सौंफ, कुसुम्भ बीज प्रत्येक ५ तो०, मजीठ ३ मा०। सबको जौकुट करके ११ सेर पानी में १॥ पाव जल शेष रहने तक पकाये। फिर शर्बत बजूरी मिलाकर पिलाए।

गुण—रजः रोध एवं कष्ट रज में लाभदायक है।

अमलतासकल्प—हिं० पु० अमलतास को दाह और उदावर्त से पीड़ित रोगी को दाख के रस के साथ दे (१)—४ वर्ष की अवस्था से लेकर १२ वर्ष तक की उम्र वाले के लिये इसके गूदे को मात्रा १ प्रसृत से १ अंजली तक है। इसे सुरामण्ड, कोल शीधु, दधिमण्ड, आमले के रस या शीत कषाय बनाकर उसे सौवीरक के साथ दें। (२) अमलतास की मज्जा (गूदे) के साथ दूध को सिद्ध करके उससे घी निकाले, फिर उस घी को आमले के रस और उसके गूदे के कल्क से सिद्ध कर सेवन करें। (३)—अथवा उसी घी को दशमूल, कुलथी, और जौ के कषाय तथा निशोथ आदि के कल्क से सिद्ध करके सेवन करें। (४) अथवा दन्ती क्वाथ लेकर उसमें अमलतास की मज्जा (गूदा) १ अंजली और गुड़ १ अंजली मिलाकर यथा विधि सन्धान कर ४५ दिन तक रक्खा रहने दें, जब अरिष्ट सिद्ध हो जाय तो उसे सेवन करें। जिस मनुष्य को मधुर कटु या लवण जिस प्रकार का खान पान प्रिय हो उसे उसी के साथ अमलतास से विरेचन देना उचित है। च० स० च० अ० ८।

अमलतासादि क्वाथ—हिं० पु० अमलतास गूदा, पीपलामूल, मोंथा, कुटकी, बड़ी हड़, इनका क्वाथ पीने से वात, कफ ज्वर का शीघ्र ही नाश होता है तथा गोटा गिरता और आमशूल दूर करते हुये अग्नि दीपन व पाचन करता है। शार्ङ्ग० सं०।

अमल दीप्तिः—स० पु०, कर्पूर, कपूर (Camphor)। च० द०।

अमलपट्टी—हिं० स्त्री० (Akind of stithing)।

अमल पतत्री—(इन्), सं० पु०, हंस। (Agoose. a gander, a swan)।

अमल् विल्यद्—अ०
अम्लिय्यह—

हस्त क्रिया, शस्त्र चिकित्सा, जर्राही, दस्तकारी, चीरफाड़। ऑपरेशन (Operation)-इं०

अमलवेत—हिं० सं० पु० [सं० अम्लवेतस्] (१) एक प्रकार की लता जो पश्चिम के पहाड़ों में होती है और जिसकी सूखी हुई टहनियाँ बाजारमें बिकती हैं। ये खट्टी होती हैं और पाचक चूरण में पड़ती है। (२) एक मध्यम आकार का

पेड़ जो बागों में लगाया जाता है। इसके फूल सफेद और फल गोल खरबूजे के समान पकने पर पीले और चिकने होते हैं। इस फल की खटाई बड़ी तीक्ष्ण होती है। इसमें सुई गल जाती है यह अग्नि संदीपक है। यह एक प्रकार का नींबू है।

अमलवेद-हिं० संज्ञा पु० उ० अमलवेत, अम्लवेतस (Rumex Vesicarius)।

अमलवेद नींबू-हिं० तुरञ्ज लीमूँ।

अमलवेल-हिं० गिहड़ द्राक, कस्सर। पं०, हिं०। अम्लपर्णी-सं०। बण्डल, अम्ललता, सानेशुर -बं०। वाइट्रिमा (Vitis Carnosa, *Wall, Wight*)। सासस कार्नोसा (Cissus carnosa)-ले० फ्लेशी। वाइल्ड वाइन (Fleshy wild wine इं०) मेक मेकतवी-चेटु-ता० (फा इ०) कनपतिगे (फा० इ० मे० प्लां०) मण्डल मरी-तीगे मेक-मेतवी-चेटु, कडु-डिन्ने, कडप-तीगे (इं० मे० प्लां०)--ते०। जंगला लरा (इं० मे० प्लां०)-पहा०। खट-तुम्बो, खट-तुम्बो (फा० ह०, इ० मे० प्लां०, मे० मो०) गु० तमन्या खटुम्बों (इं० मे० प्लां०) बलरत दुग्लबू-सिं० (इ० मे० मे०) मैं मतीं (इं० मे० प्लां०)-आसा०। कारिक, अमटवेल, गिदड़-द्राक, द्रिकरी, बल्लुर, द्रुकी (इं० मे० प्लां०,) -पं०। बांडी, अम्बट बेल (इं० मे० प्लां०, फा० इं०)--कडपोडी-मह०। इक्वलीरिक-लेप०।

द्राक्ष वर्ग

(N. O. *Ampelideae*)

उत्पत्ति स्थान—भारतवर्ष के सम्पूर्ण उष्ण प्रधान देश तथा हिमालय, (के उष्ण स्थान)।

प्रयोगांश—बीज तथा मूल।

प्रभाव तथा उपयोग—इसके पत्रकी पुल्टिस (उत्कारिका) बैलों की ग्रीवा पर जुआं के कारण हुए क्षतों के लिए प्रयुक्त होती है। (इलियट) इर्विन (Irvine) के मतानुसार इसके बीज एवं पत्र दोनों अभ्यङ्ग रूप से प्रयोग में आते है।

स्टयुवर्ट के कथनानुसार इसकी जड़ को काली मरिचके साथ पीसकर विस्फोटक (फोड़ा फुन्सी) पर लगाते है।

जड़ संग्राही रूप से प्रयोग में लाई जाती है। इ० मे० मे०।

अमलमणिः-स० पु०
अमलमणि-हिं० पु०
(१) स्फटिक, फिटकरी, (Alumen)। रा० नि० ब० १३। (२) कर्पूरमणि, कर्पूरगंध मणि विशेष। (३) बिल्लोर, स्फटिक।

अमल रत्नम्-स० क्ली० स्फटिक, फिटकरी। (Alumen) रा० नि० ब० १३।

अमल लता-बं०
अमल वेत-
देखो—अमलवेल।

अमलसी-फा० अनार भेद अर्थात् अनार वेदना। इसे अनार सीतानी भी कहते है।

अमला-स० स्त्री० -हिं० संज्ञा स्त्री० (१) महानीली, बड़ा नील। राज० नि० ब० ४। (२) सेहुन्ड भेद। रा० नि०। (३) भूम्यामलकी, पताल आँवला, भूँई आमला (Phyllanthus neruri) अम०। (४)। (५) सतला वृक्ष-हिं० संज्ञा पु० [सं० आमलक] (६) नाभिनाला, आमला, आँवला (Phyllanthus Emblica) प्रयोग० क्षुद्रोग० चि०।

अमलाज्झटा-स० स्त्री० भूधात्री, भुँई आमला (Phyllanthus neruri) अ० टी० भ०।

अमली-हिं० वि०
अमली-अ०
(१) अमल में आने वाला, व्यवहारिक। (२) करने वाला। (३) चिकित्सा शास्त्र का वह अंग जो क्रिया से सम्बन्ध रखता है। (४) नशे बाज, (५) अम्ली, इम्ली।

अमली-हिं० संज्ञा स्त्री० द०
अमली का बोट-
[सं० अम्लिका]

(१) इमली, तिंतडीक (Tamarindus Indicus), (२) एक झाड़ीदार पेड़ जो हिमालय के दक्षिण गढ़वाल से आसाम तक होता है। करमई, गौरूबरी।

अमलूक-हिं० संज्ञा पु० [सं० अम्ल] एक पेड़ जो अफगानिस्तान, बिलूचिस्तान, हजारा, काश्मीर और पंजाब के उत्तर हिमालय की पहाड़ियों पर हो। है। इसमें से बहुत सा रस बहता है जो जम कर गोंद की तरह हो जाता है। इसका फल ताजा और सूखा दोनों खाया जाता है। सूखा फल काबुली लोग लाते हैं, इसे मलूक भी कहते हैं।

अमलूल-अ० कनावरी।

अमलेक्स-वरब० अफरीका के किसी किसी भाग में एक प्रसिद्ध वनस्पति का नाम है।

अमलोनी-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अम्ललोणी] नोनियाँ घास, नोनी। इसकी पत्तियां बहुत छोटी छोटी और मोटे दल की तथा खाने में खट्टी होती हैं, लोग इस का साग बनाकर खाते हैं जो अग्नि वर्द्धक है। कहते हैं कि इसके रस से धतूरे का विष उतर जाता है, यह बड़ी पत्तियों का भी होता है जिसे कुलफा कहते हैं।

अमलोरा-पं० आमला, आमी खेमिल, खेतिमल मेमो०।

अमलोल-अ० रेत में रहने वाला एक जानवर है

अमलोलवा-हिं० त्रिपत्री, अम्लपत्री, गोधापदी-सं० Vitis Trifolia, Cissus Carnosa। देखो—गोधापदिका-(दी-)

अमवती,-टी-हिं० खटकल, चांगेरी, चूका। Rumex Scutatus

अमश-अ० (१) दृष्टिमांद्य, दृष्टि की निर्बलता -हिं०। जोफ बसर, नजर की कमजोरी। (२) चक्षु द्वारा जलस्राव, आँख से पानी बहना।

अमस-सं० पु०
अमस-हिं० संज्ञा पु० | रोग (Disease)

अमसानिया-पं० बुतशुर। चीब मेमो०।

अमसुल-मिस्र० ओठ, अष्ट। Garcinia xantho chymus। फा० इं० ३ भा० इं० मे० मे०।

अमसूल-हिं० संज्ञा पु० [देश०] एक पतला पेड़ जिसकी डालियां नीचे की ओर झुकी होती हैं और जो दक्षिण में कोंकण किनारा, और कुर्ग के जंगलों में होता है। इसका फल खाया जाता है और गोआ में त्रिदाय के नाम से बिकता है, पर यह वृक्ष उस तेल के कारण अधिक प्रसिद्ध है जो उसके बीज से निकाला जाता है। बाजारों में यह तेल जमी हुई सफेद लम्बी पत्तियों वा टिकियों के रूप में मिलता है जो साधारण गर्मी से पिघल जाती है। यह वर्द्धक और संकोचक समझा जाता है तथा सूजन आदि में इसकी मालिश होती है। मरहम भी इससे बनाते हैं।

अमसूख-वरब०, यू० एक अप्रसिद्ध बूटी है।

अमसोल } -बं० काकम, डासरा। हिं०; वृक्षाम्ल,
आमसोल } अम्लवृक्षक।

अमहर-हिं० संज्ञा स्त्री० [हिं० आम] आम की सूखी कली, छिले हुये कच्चे आम की सुखाई हुई फाँक यह दाल और तरकारी में पड़ती है, इसे कूटकर अमचूर भी बनाते हैं।

अमा-अ० अंधता, अंधापन हिं०। कोरा, नाबीनाई, अन्धा होना। Blindness

नोट—अमा अर्थात् अन्धा। इसका स्त्रीलिंग अमया है।

अमाअदी-बं० कर्पूर हरिद्रा, अम्बा हलदी। (Curcuma amada) इं० मे० मे०।

अमाइरिस केम्फोरिफेरा-ले० अज्ञात।

अमाइरिस कामीफोरा-कॉम्मिफोरा मेडागास्करेन्सिस (Commiphora Madagascarensis, *Lindl*) गुग्गुल। इं० है० गा० १

अमाइरिस गाइलीडेन्सिस-ले० अज्ञात।

अमाइली त्रो माइडम-देखो—एमाइल।

अमाइलोडेक्स्ट्रीन-ले० श्वेत सार भेद। देखो—जावफल। फा० इं० ३, भा०।

अमाइलोप्सिन–इं० श्वेतसार विश्लेषक। देखो–क्लोमरस।

अमाक–अ० (ब० ब०), मौक (ए० ब०) आँख का भीतरी कोया।

अमागीरून–यू०, खर्नूब नब्ती, अप्रसिद्ध है। See–kharnuba-nabti

अमाघौत–हिं० संज्ञा पु० (१) एक प्रकार का धान जो अगहन में तैयार होता है।

अमातशी–सं० स्त्री० सुर्ख रवासन।

अमातीतस–यू०, शादनज या कण जो गर्म ताम्र और लोह के कूटने के पश्चात् गिरते हैं।

अमात्र–हिं० वि० [सं०] मात्रा रहित, बेहद, अपरिमित।

अमाद–अ०, आस की जड़। See–Asa

अमान–ता०, अजवाइन। (Carum (Ptychotis) Ajowan हिं० वि० [सं०] जिसका मान वा अंदाज न हो। अपरिमित। परिमाण रहित, इयत्ताशून्य।

अमानस्यम्–सं० क्ली०, पीड़ा, दुख (Pain)

अमामून– } यू०, हमामा, अपर प्रसिद्ध बूटी है।
अमूमन– }

अमायरीन–इं० गोंद।

अमार–हिं० संज्ञा पु० अमड़ा।

अमारस–यू० झालर, तुर्मुस।

अमाराइलीडीई– }
अमाराइलिडेसीई– }
ले०, सुखदर्शनवर्ग।

अमाराइलिस जीलेनिका–ले०। सुखदर्शन–हिं०। Crinum zeylanica–इं० हैं० गा०।

अमाराइलिस लिनिऐटा–ले० सुखदर्शन। इं० हैं० गा०।

अमाराइलिस सिङ्गालीज–ले० सुदर्शन। इं० हैं० गा०।

अमारी–हिं० स्त्री० अम्ली, सरसोटी–हिं०। मुत्ता–बं० पाती मिल–नैपा०। कण्टजीर–लेप०। पेल गुमडु मसुर, बडरी–गों०। किम्प–लीन–बर०। Antidesma Diandrum' Tulasn मेमो० पत्र व फल खाद्य कार्य में आते हैं।

अमारीतन–एक बूटी जो किसी किसी के मत से बाबूनह् गाब तथा किसी के मत से कैसूम की भेद से है।

अमॉर्फोफैलस कैम्पेन्युलेटस–ले० जिमीकन्द, सूरण फा० इं० ३ भा०।

अमांर्फोफलस सिल्वैटेकस–ले० सूरन, जमीकन्द हिं०। ओल–बं०। इं० मे० मे०।

अमालीन–रु० अंगूर का पानी।

अमारेण्ट (न्थ)स–ले० चौलाई।

अमारेण्ट (न्थ) स अङ्गस्टिफोलिया–ले० वनसपाता नटिया–बं०। मेमो०।

अमारेन्ट (न्थ)स अनर्डैना–ले० चुआ–हिं०। चौलाई, गनहर, तवल, सिल (बीज) प०। साग बं०। मेमो०।

अमारेन्ट (न्थ)स ऐट्रोपर्प्युरिअस–ले० वानस्पता। (Blackamaranth) इं० हैं० गा०

अमारेण्ट (न्थ) स आंलिरेशिअस–ले० मरसा माटकी भाजी, चन्दी साग। इं० हैं० गा०।

अमारेन्ट (न्थ) स कैम्पेस्ट्रिस–ले० मेघनाद सं० सिर्रु–किरई ता०। सिर्रु–कुर–ते०। चौलाई–हिं०।

अमारेण्ट (न्थ)स क्रुएण्टस–ले० ताजे खरुस, बुस्तान अफरोज। गुलकेश। Amaranth Various leaved। मेमो० इं० हैं० गा०।

अमारेण्ट (न्थ) स गैञ्जेटिकस–ले० वानसपाता नटिया–बं०। मेमो०।

अमारेण्ट (न्थ) स ट्रिस्टिस–ले० माट की भाजी Amaranth' round headed इं०

अमारेण्ट (न्थ)स पैनिक्युलेटा–ले० ताजे खरुस बुस्तान अफरोज। मेमो०

अमारेण्ट (न्थ) स पालिगेमस–ले० Prince sfeather(*Cock's comb*) इं०। सखारा, देवकटी, चौलाई, कलगा। इं० मे० मे० श्वेत मुर्गा बं०

अमारेण्ट (न्थ) स फेरिनेशिअस–ले० चौलाई वर्ग की एक औषधि है।

अमारेण्ट (न्थ) स फ्रुमेण्टेसिअस–ले० कियेरी द० भा० । मेमो० ।

अमारेण्ट (न्थ) स मैङ्गोस्टेनस–ले० चौलाई गनहर, उत्तरी भा० । सान बं० । मेमो० ।

अमारेण्ट (न्थ)स स्पाइनोसस–ले० काण्टा नटिया कण्टा नटे बं० । कांटेमाठ–द० बं० मुलुक किरई ता० । चौलाई तण्डुलीय सं० । काण्टाको डम्भो गु० । फा० इं० ३ भा० ।

अमारेण्ट(न्थ)स हाइपोकेण्ड्रिएकस–ले० । श्वेत मुरगा–बं० । कलगा, सरवारी, देवकटी-हिं० । सफेद मुरगा–गु० । ह० मे० मे० ।

अमारेण्टे (न्थे) शीई–ले० चौलाई व तण्डुलीय (अपामार्ग) वर्ग । देखो—अमारेन्थेशीई ।

अमारेन्थ–इं० चौलाई, तण्डुलीय ।

अमारेन्थ इंटेब्ल–इं० मरसा, माट । इं० हैं० गा० ।

अमारेन्थ गैङ्गेटिक–इं० लाल साग । इं० हैं० गा० ।

अमारेन्थ ब्लैक–इं० बानस्पता । इं० हैं० गा० ।

अमारेन्थ राउण्डहेडेड–इं० माट की भाजी । इं० हैं० गा० ।

अमारेन्थ वेरिअस लीव्ड–इं० गुच्छकेश । इं० हैं० गा० ।

अमारेन्थ हर्मैफ्रोडाइड–इं० चौलाई, कलगा-हिं० इं० हैं० गा० ।

अमालह्–अ० इन्तिकाल मर्ज । इसका शाब्दिकअर्थ प्रवृति कर देना, परिवर्तन, करना फेर देना है, किंतु वैद्यक की परिभाषामें किसी दोष को विकारी अवयव से दूसरे अवयव की ओर प्रवृति कर देना अमालह् कहलाता है । मेटास्टेसिस Metastasis इं० ।

अमालीन–रू० अंगूर का पानी ।

अमावट-हिं० संज्ञा स्त्री० [स० आम्र, हिं० आम+सं० आवर्त प्रा० आवह] (१) रोटिका रूप में सुखाया हुआ आम का रस । आम्रावर्त-सं० आम के सुखाए हुये रस के पर्त वा तह । इसे बनाने के लिये पके आम को निचोड़ कर उसका रस कपड़े पर फैलाकर सुखाते हैं । जब रस की तह सूख जाती है । तब उसे लपेट कर रख लेते हैं ।

The inspissated juice of the mango.

(२) पहिना जाति की एक मछली ।

अमाह–हिं० संज्ञा पु० [सं० अमांस] [वि० अमाही] नेत्र रोग विशेष । आंख के ढेले से निकला हुआ लाल मांस नाखूना ।

अमाही–हिं० वि० [हिं० अमाह] अमाहरोग संबन्धी

अमिए–बर० (ए० व०) अमिए मियाआ (ब० ब) जड़, मूल– हिं० । Root or Rhizome स० फा० इं० ।

अमिका नांकटर्नो आंफ रम्फियस–ले० गुलेशब्बो गुलचेरी' हिं०, बम्ब० । रजनी गंधा सं०, बं० । (Polianthus Tuberosa' *Linn* फा० इं० ३ भा० ।

अ (ऐ) मिग्दला–ले० कडुआ बादाम (Bitter almond)

अ (ऐ) मिग्दला अमारा–ले० कटु वातादु, कडुआ बादाम । (Bitter almond)

अमिग्दला डलिसस–ले० मधुर वातादु, मीठा बादाम (Sweet Almond)

अ (ऐ) मिग्डेलस कम्युनिस–ले० बदाम फार्सी बादाम (The Almond) फा० इं० १ भा० ।

अ (ऐ) मिग्डेलस डलिसस–ले० मधुर वातादु मीठा बादाम । (Sweet almond)

अ (ऐ) मिग्डेलीन–इं० बातादु सत्व । (A glucoside contained inb itter Almonds)

अमिताशन–हिं० वि० [सं०] जो सब कुछ खाए । जिसके खाने का ठिकना न हो ।

संज्ञा पु० (Fire) अग्नि । आग ।

अमिय मूरि–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अमृत मूरि] अमरमूर । अमृत बूटी । संजीवनी जड़ी, जिलाने वाली बूटी ।

अमिया–हिं० आम का कच्चा फल ।

अमिरती–हिं० संज्ञा स्त्री० दे० इमरती । मिठाई भेद ।

अमिल–हिं० वि० [सं० अ=नहीं+हिं० मिलना) (१) न मिलने योग्य। (२) बेमेल। अनमिल।

अमिलतास–हिं० संज्ञा पु० दे० अमलतास।

अमिलातकम्–सं० क्ली० बेला –हिं०। हला०। See-Bela

अमिलातका–सं० स्त्री० महाराज तरुणी पुष्प वृक्ष बेला–हिं०, बं०। रा० नि० व० १०।

अमिलियापाट–हिं० संज्ञा पु० [हिं० अमिली=इमिली+पाट=रेशम] एक प्रकार का पट वा पटशन।

अमिली–हिं० संज्ञा स्त्री० दे० अम्लिका,

अमिश्रण–हिं० संज्ञा पु० [सं०] [वि० अमिश्रित] मिलावट का अभाव।

अमिश्रित–हिं० वि० [सं०] (१) न मिला हुआ। जो मिलाया न गया हो। (२) जिसमें कोई वस्तु न मिलाई गई हो वे मिलावट। खालिस शुद्ध। पृथक् भूत।

अमिष–हिं० संज्ञा पु० [सं०] दे० आमिष।

अमी–सं० स्त्री० अमृत–हिं०। (The water of life nectar),

अमी–अ० दृष्टि शक्ति का नष्ट हो जाना; देखने की शक्ति का ह्रास।

अमानोअम्ल–हिं० पु० (Amino acid) प्रोटीन की अन्तिम अवस्था का कहते हैं जो शरीर द्वारा ग्रहण की जाती है।

अमीनोफॉर्म–इं० युगेट्रापीन।

अमीबा–इं० आधुनिक प्राणिशास्त्र के अनुसार एक अणुवीक्ष्य एकसेल युक्त जीवधारी।

नोट—वेद (अथर्व) में अमीव शब्द रोगोत्पादक कीटाणु अथवा रोग के लिए प्रयुक्त हुआ है।

अमीवा का शरीर एक स्वच्छ गाढ़े भली प्रकार न बहने वाले शहद जैसी वस्तु से बना है। इसका वास्तविक परिमाण $\frac{१}{२४०}$ से $\frac{१}{८०}$ इंच तक व्यासमें होता है। इसमें चैतन्यता के प्रायः सभी लक्षण पाये जाते हैं अर्थात् यह एक ही घटक से उन सम्पूर्ण कार्यों को सम्पादित करता है जो किसी एक जीवधारी को जीवन व्यापार चलाने के लिये करना आवश्यकीय होता हैं। देखो-सेल।

अमीर जम्बूरान–फा० शहद की मक्खियों का सरदार।

अमीरह्–ले० लिसानुल् कल्ब। See-Lisanul kalb,

अमीरुशिया–यू० शकासर (वरिञ्जासिफ या कैसूम भेद)।

अमीरेही–अ० अम्लूकूमा। वस्तुतः यह श्याम अथवा हरित वर्ण का मोतियाबिन्दु है, जिसमें नेत्रपिण्ड प्रगट रूप से ठीक मालूम होता है, परन्तु वस्तुतः उसमें दृष्टि शक्ति नहीं होती। ग्लांकूमा (GlaucoMa)–इं०।

अमीरोसिया–यु० यकृत तथा एक माजून विशेष।

अमीलैली– } —अ० नक्तान्ध्य, रतौंधी। हेमीरेलोपिया (Hemeralopia)
अशा– }
–इं०।

अमीब–हिं० संज्ञा पु० [सं०] रोग।

अमीव चातनी:–सं० रोग नाशक, रोग उत्पन्न करने वाले जन्तुओं का नाश करने वाला। अथर्व०। सू० ७। ५।

अमुइङ्गुरु–सिं० आर्द्रक, आदी, अदरख। (Zingiberofficinalis, *Roxb*) सं० फा० इं०।

अ(ा)मुक–नैपा० अमरूद। (Guava) See-Amaruta

अमुकी–नैपा० मैनफल। (Randia Dumetorum' *Lam*)

अमुकिरम–मल } पुनीर।
अमुक्कीर–ता० }
Withania (Puneeria) coagulans. *Dunal* इं० मे० मे०।

अमुक्कुडा विरई–ता० असगंध के बीज, पुनीर–हिं० Wishania Coagulans *Dunal* स० फा० इं०।

अमुज्जनह्–अ० धेनुक पक्षी।

अमुत-पं० बण्डा-म० प्रां० । (Loranthus Longiflorus)

अमुत्तआम-अ० गेहूँ, किसी किसी के विचार से आमाशय का नाम है ।

अमुदपु चेट्टु-ते० एरण्ड, अरण्ड वृक्ष । (Ricinus Communis), फा० इं० ३ भा० ।

अमुम-ता० दुद्धी, रक्तविन्दुच्छदा (Euphorbia Pilulifera) । इं० मे० मे० ।

अमुलटी-बं० आमला । (Phyllanthus Emblica),

अमुल्का-बं० जंगली अंगूर, पश्चीरी-द०, हिं० । (Vitis Indica) इं० मे० मे० ।

अमुसा-अ० अजवाइन । (Carum "Ptychotis" Ajowan) इं० मे० मे० ।

अमूक-नैपा० अमरूत (Guava) । -हिं० वि० [सं०] (१) जो गूँगा न हो । (२) बोलने वाला । वक्ता ।

अमूद-अ० इमाद, उम्दह् । स्तम्भ, खम्भा । इसका बहुवचन "उमूद" है । कॉलम (Column) -इं० ।

अमूद कासातार-अ० मूत्र प्रवर्त्तक सलाई के भीतर का तार । स्टिलेट (Stillet)-इं० ।

अमूदन्दाँ-पं० रसवत, भेद । (Berberis Nepalensis, *Spreng*) मेमो० ।

अमूदुल् कल्ब-अ० मध्य हृदय, हृदय का बीचो बीच ।

अमूदुल् फकरात्-, अमूद फकरी- } -अ० उम्दतुल् फकरात, सिलसिलतुज् जहर । मेरुदण्ड, सुषुम्नाकांड । (Vertebral column, Rachis, Back bone)

अमूदुल् बत्न-अ० सुषुम्नाकाण्ड का वह भाग जो उदर के सम्मुख स्थित है, पृष्ठ पीठ ।

अमूदुल् मिह्बली-अ० योनि के भीतर श्लैष्मिक-कला सम्बन्धी एक सीवन है । कॉलम ऑफ दी वेजाइना (column of the bagina) ।

अमूमन-अ० हमामा, अमामून, हामामा, हमाम । महिलू-फा० (Dionysia Diapensiæfolia' *Boiss*) फा० इं० २ भा० ।

अमूरा-ले० तिक्तराज, हारिनाहारा ।

अमूरा कल्क्युलेटा-, अमूरा कुक्युलेटा- } ले० उमर । (Andersonia Cucullata' *Roxb*) । इं० है० भा० ।

अमूरा रोहितका-ले० रोहितका रोहिना, रुहेड़ा हिं० (Andersonia Rohituka, *Roxb*) फा० इं० १ भा० । मेमो० ।

अमूरारोटक-इं० तिक्तराजहारीत हारा । Amoora or Hnderconia Rohituka' *Rox* इं० है० गा० ।

अमूरा हुडेड-इं० उमर । इं० है० गा० ।

अमूर्त्त-हिं० वि० [सं०] निराकार, मूर्त्ति रहित, अवयव शून्य, निरवयव । Formless, Shapeless; Unembodied) -संज्ञा पु० (१) आकाश । (२) वायु । (३) जीव ।

अमूर्त्ति-, अमूर्त्तिमान- } -हिं० वि० [सं०] (१) मूर्तिहीन, आकृति रहित (Formless) निराकार । (२) अप्रत्यक्ष, अगोचर ।

अमूल, अमूलक- } -हिं० वि० [सं०] मूल रहित, निर्मूल, जड़शून्य । (Destitute of a root or origin)

अमूलक-हिं० वि० मूलशून्य, निर्मूल, अप्रमाणिक ।

अमूला-सं० स्त्री० (१) अग्नि शिखा वृक्ष, लांगली ईपलांगुलिया-बं० । वै० निघ० । (२) अर्क पत्रा, के० ।

अमूस-अजवाइन, नानख्वाह (Ligusticum Ajowan) इं० है० गा० ।

अमृणालम्-सं० क्ली० (१) अमृणाल, लामज्जक, श्वेत उशीर । (Andropogon laniger)

रा० नि० व० १२, भा० पू० १ भा० क० व०, मद० व० ३। (२) उशीर खस-हिं०। वेणार मूल-बं०। (Andropogon muricatus) रत्ना०, रा० नि० व० १२। च० द० अर्श चि० प्रायदागुटिका।

अमृतः-सं० पु०
अमृत-हिं० संज्ञा पु०
(१) पारद, पारा (Marcury) रा० नि० व० १३। (२) वन मुद्ग, वनमूंग (Phaseolus trilobus) रा० नि० व० १६। देखो—मकुष्टकः। अग्नि० २ स्थान २ अ०। (३) धन्वन्तरि "ना धन्वन्तरि देवयोः"। मे तत्रिकं। (४) बाराही कन्द (Tacca aspera) रा० नि० व० ७। -क्ली०। (५) वह वस्तु जिसके पीने से मनुष्य अमर हो जाता है। पीयूष, सुधा, निर्जर, समुद्रोत्पन्न १४ द्रव्यों में से एक द्रव्य विशेष। (Ambrosia, nectar) (६) सलिल, जल, (Water) रा० नि० व० १४। (७) घृत, घी (Ghee)। मे० रा० नि० व० १५, वै० निघ० वा० व्या० भुजङ्गी गुटी। "अमृतं यज्ञशेषे स्यात पीयूषे सलिले घृते"। मे०। (८) सामान्य विष (Simple poison) (९) दुग्ध (Milk)। रा० नि० व० १५। (१०) अन्न। (Corn) हे० च०। (११) औषध (Medicine)। रा० नि० व० २०, (१२) शृंगी विष, सींगिया, वच्छनाग (Aconite) (१३) स्वर्ण, सोना (Gold) (१४) भक्ष्य द्रव्य (Edible thing) हे० च०। (१५) यज्ञ के पीछे की बची हुई सामग्री। (१६) धन (१७) हृद्य पदार्थ। (१८) सुस्वादु द्रव्य। मीठी वा मधुर वस्तु।

अमृत कन्दा-सं० स्त्री० कन्द गुडूची-हिं०। कन्दगुल बेल-मह०। वै० निघ० See-kanda-guduchi

अमृतकर-हिं० संज्ञा पु० [सं०] चन्द्रमा, शशि जिसकी किरणों में अमृत रहता है। निशाकर। (The moon)

अमृत कला निधि-सं० पु० वच्छनाग २ मा०, कौड़ी भस्म ५ मा०, काली मिर्च ६ मा०, बारीक चूर्ण कर जल से मूंग प्रमाण गोलियाँ बनाएँ। गुण-ज्वर, पित्त और कफज अग्निमांद्य को नष्ट करता है। वृ० नि० र० ज्वरे।

अमृतकल्प भल्लातकः-सं० पु० पका हुआ भिलावाँ तीक्ष्ण वीर्य तथा अग्नि के तुल्य होता है, इसका विधि पूर्वक सेवन करना अमृत कल्प होता है। वा० उ० अ० ३६।

अमृत कल्प रसः-सं० पु० अजीर्णाधिकारोक्त रस। शुद्ध पारद तथा गन्धक के समान भाग की कज्जली करें पुनः एक कज्जली का अर्ध शुद्ध विष (वत्सनाभ) तथा इतना ही सुहागा (खाजा किया हुआ) लेकर इसे यत्न पूर्वक तीन दिन तक भृंगराज स्वरस की भावना दें। मात्रा-१ गुंजा प्रमाण।

अमृत कल्प वटी-सं० स्त्री० पारा, गन्धक समान भाग लेकर कज्जली करें, फिर विष और सुहागा प्रत्येक पारे के बराबर डालकर भांगरे के रस में ३ दिन घोटें, और मूंग के समान गोलियाँ बनाएँ। मात्रा—२ गोली। गुण-शूल, मंदाग्नि अजीर्ण आदि का नाश करती तथा धातु पुष्ट करती और अनुपान भेद से अनेक रोगों को नाश करती है। र० सा० सं० अ० चि०।

अमृतकाशः-सं० पु० (Oxygen) आंपजन उष्मजन।

अमृत गर्भः-सं० पु० आत्मा के भीतर। अथर्व०। शू० ४६। १। कां० ३।

अमृत गर्भ रसः-सं० पु० शु० गन्धक, शु० पारद, १०-१० गद्याणक लेकर दोनों को तीन दिन तक २० गद्याणक आकके दूध में घोट कर फिर ३ दिन सेंहुड़ के दूध में घोटकर शराव सम्पुट में रखकर भूधर यन्त्र में पुट दें। इसी तरह ८ पुट देने के पश्चात् पीसकर बारीक चूर्ण करके चन्दन, हर और मिरचों में क्वाथ और अम्बरवेल के रस की ७-७ भावना दें। मात्रा—२ रत्ती। १ गद्याणक मिश्री के सहित ठंडे पानी से सर्व रोगों में दें। विशेषकर बालशूल, पसली का दर्द, परिणामशूल

वात ज्वर मन्दाग्नि, अजीर्ण, कफ पीनस, आम-वात और कफ के रोगों का नाशक है। र० चि० ७ स्तबक।

नोट—१ गद्याणक=६४ वा ४८ र०।

अमृत गुटिका-सं० स्त्री० यह औषध अजीर्ण के लिए हितकारी है। योग—पारद, गन्धक, बिष (सींगिया) त्रिकटु और त्रिफला। सर्व प्रथम पारद गन्धक समान भाग की कज्जली करें। पुनः शेष औषध के समान भाग चूर्ण को इसमें योजित कर भृंगराज स्वरस की भावना देकर मुद्ग प्रमाण मात्रा की बटिकाएं प्रस्तुत करें। यही अमृत वटी अर्थात् अमृत गुटिका है। रसे० चि०।

अमृत घृतम्-सं० क्ली० अपामार्ग बीज, सिरस बीज, मेदा, महामेदा, काकमाची इन्हें गोमूत्र में पीस गोघृत में किंचा घृत सिद्ध कर पीने से विष शांत होता है। यह अमृत नाम से विख्यात घृत मरे हुये को भी जीवित करता है। बंग० से० सं० विष चि०।

अमृतजटा-सं० स्त्री०
अमृतजरा-हिं० स्त्री० } जटामांसी, बालछड़।

Nardostachys jatamansi *Dc.*। रा०।

अमृतजा-सं० स्त्री० (१) हरीतकी, हरड़। (Chebulic Myrobalap) वै० निघ० (२) आमला (Phyllanthus Emblica)। (३) गुडूची (Tinospora Cordifolia)। (४) लहसुन, रसोन (Garlic)

अमृतदान-हिं० संज्ञा पु० [सं० मृद्भान] भोजन की अथवा अन्य चीजें रखने का ढकनेदार बर्तन। मिट्टी का लुकदार बर्तन।

अमृतधारा-हिं० संज्ञा स्त्री० एक पेटेण्ट औषध विशेष।

अमृतनाभि-सं० स्त्री० पारद, पारा। अथर्व०। ६। ४४। ३।

अमृतनाम गुटिका-सं० स्त्री० देखो—अमृत गुटिका।

अमृत पञ्चकम्-सं० क्ली० सोंठ, गिलोय, सफेद मूसली, शतावर, गोखरू इन पाँच चीजों को अमृत पञ्चक कहते हैं इन पांच चीजों के क्वाथ की ताम्रादि धातुओं की भस्म में तीन या सात भावना देकर गजपुट में फूंकने से धातुओं का अमृतीकरण संस्कार होता है जिससे धातुओं की भस्म अमृत के समान गुणकारी होती है।

अमृतपाणिः-सं० पु० विशुद्ध पाणि, वह वैद्य जिसके हाथ में अमृत का सा असर हो। अथर्व०।

अमृतपालो रसः-सं० पु० पारा, गन्धक, वत्सनाग प्रत्येक समान भाग लेकर पानी में घोटकर गोला बनाएँ, फिर हाँडी के मध्य में रखकर ऊपर से तांबे की लोटी रख कर सन्धि बन्द करके हांडी के मुँह पर ढक्कन देकर कपड़ मिट्टी कर सुखा लें। फिर एक दिन दीपाग्नि से पकावें, ठण्डा होने पर तांबे के पत्र और उसके भीतर के रस को बारीक पीसकर रख लें। सेंधा नमक और अदरक का रस मिलाकर प्रथम जिह्वा और मुख को अच्छी तरह चुपड़ लें। फिर इस रस की ३ र० की मात्रा रोगी को देकर गरम कपड़े ओढा दें। एक पहर के बाद खूब पसीना आयगा इसी तरह तीन दिन तक करने से ज्वर बिलकुल नष्ट हो जाता है।

पथ्य—छांछ, चावल का भात।

रस० यो० सा०।

अमृतप्रभा गुटिका-
अमृतप्रभा वटी- } सं० स्त्री० (१) मिर्च पीपलामूल, लवंग, हड़, अजवाइन, हल्दी, अनार दाना, सेंधा लवण, सोंचर लवण, बिड लवण, १-१ पल, पीपल, जवाखार, चित्रक, सुफेद जीरा स्याह जीरा, सोंठ, धनियां, इलायची, आमला प्रत्येक २-२ पल, इन्हें चूर्ण कर बिजौरे नींबू के रसमें घोटकर तीन पुट देकर एक मा० की गोलियां बनाएँ। बृ० नि० र०। भा० अरु०।

(२) अकरकरा, सेंधा लवण, चित्रक, सोंठ आमला, मिर्च, लवंग, हड़ तुल्य भाग ले, बिजोरा नींबू के रस की भावना दे १-१ मा० की गोलियां बनाएं। गुण—इसके सेवन से खांसी, गलरोग,

श्वास, पीनस, अपस्मार, उन्माद तथा सन्निपात का नाश होता है।

अमृत प्राशः—सं० पु० उत्तम सुवर्ण का चूर्ण, ब्राह्मी, वच, कूट, हरीतकी, इनका चूर्ण घी और शहद के साथ चाटने से बालकों की आयु, प्रसन्नता बल की वृद्धि और अङ्ग की पुष्टि होती है। र० यो० सा०।

अमृतप्राश घृतम्—सं० क्ली० बकरे का मांस और असगन्ध १-१ तुला (५-५ सेर) एक द्रोण (१६ सेर) जल में पकाएँ, जब चौथाई रहे, तब गो घृत १ प्रस्थ (६४ तोले) और बकरी का दुग्ध ४ प्रस्थ डाल विधिवत पकाए पुनः २ कर्ष (२० मा०) केशर डाल मूर्छितकर पश्चात् निम्न औषधियों का कल्क तैयार कर पुनः घृत में डाल पाक करें। यथा—खिरेंटी की जड़, गेहूँ (गोधूम) असगन्ध, गुरुच, गोखरू, कशेरू, सोंठ मिर्च पीपल, धनिया, तालांकुर, आमला, हड़ बहेड़ा, करंजी, कौंच बीज, मेदा, महामेदा, कूठ, जीवक, ऋषभक, कचूर, दारुहल्दी, प्रियंगु, मजीठ तेज पत्र, तालीस पत्र, बड़ी इलायची, पत्रज, दालचीनी, नागकेसर, पुष्पकेसर, रेणुका, सरल, जायफल, छोटी इलायची, अनन्तमूल, कंदूरी की जड़ जीवन्ती, ऋद्धि, वृद्धि, गूलर, प्रत्येक १-१ कर्ष (१०-१० मा०)। जब तैयार हो पुनः रेशम वस्त्र से छानकर इसमें शरावकभर (१ सेर) उत्तम मिश्री छोड़ विधिवत रक्खे। मात्रा—१० मा०।

गुण—इसके सेवन से शरोव्याधि, खांसी अर्श, आमशूल, वृक्ककष्ट दूर होता है। तथा उष्ण दुग्ध के साथ सेवन करने से ध्वज भंग-प्रमेह, नष्ट होता है। और बलवीर्य की वृद्धि होती है। भैष० र० ध्वजभङ्गाधिकार। हा० अग्नि० ३ स्था० ६ अ०।

अमृतप्राशचूर्णम्—सं० पु० पलुवा मुद्गपर्णीमूल, शतावरी, विदारीकन्द, बाराहीकन्द मुलहटी, वंशलोचन, दाख' प्रत्येक २ पल। सरलधूप, चन्दन' तेजपात नीलोफर, कुमुद दोनों काकोली, मेदा, महामेदा, जीवक, ऋषभक चाना प्रत्येक अर्द्धपल इनका चूर्ण कर फिर पलुवा विदारी कन्द, वाराही कन्द और मुद्गपर्णी तथा शतावरी के रस की भावना दें। फिर ईख, आमला, और शहद की सात सात भावना दें। यह दूध के साथ पीने से दाह, शिरोदाह, प्रबल रक्तपित्त, शिर और अक्षि कम्प तथा भ्रम आदि रोगों का नाश होता है। र० र० स० अ० २१।

अमृत प्राशावलेहः—सं० पु० (१) आमला, मजीठ विदारी कन्द (काकोली, क्षीरकाकोली) इन का रस सम भाग निचोड़कर गोघृत में मिलाएँ, पुनः जीवनीय गण की समस्त औषधियां एक एक तो०, दाख, चन्दन, लाल चन्दन, खस मिश्री कमल, पद्म काष्ट, महुए के फूल, सारिवा, कुम्भेर के फल, सुगन्ध रोहिष, तृण, १-१ तो० ले, इनका कल्क बनाकर घी में पकाँए। जब पककर शीतल हो जाय, तो इसमें शहद ३२ तो०, मिश्री २०० तो० दालचीनी का चूर्ण २ तो० इलायची चूर्ण २ तो० कमल केशर चूर्ण २ तो० ले मिलादे इस तरह यह अवलेह सिद्ध होता है।

जितेन्द्रिय होकर इसे नित्य सेवन करें। और इस पर दूध गो मांस रस के साथ भोजन करें। तो उरःक्षत, रक्तपित्त, तृषा, अरुचि, श्वास, खांसी वमन, मूर्च्छा, मूत्रकृच्छ्र, और ज्वर का नाश होता है। स्त्रियों में प्रीति उत्पन्न होती तथा बल की वृद्धि होती है।

भा० प्र० क्षय० रो० चि०।

(२) दूध में अथवा आमला' विदारी कन्द ईख, तथा दूध वाले वृक्षों के समान भाग रस में ६४ तो० गोघृत को पकाए पुनः इसमें मुलहटी, दाख, सुफेदचन्दन, लालचन्दन, खस, मिश्री, ईख कमल, पद्मकाष्ट महुए का फूल, गुरुच, खम्भारी रोहिष तृण, इनका कल्क मिला सिद्ध करें, पुनः शीतल होने पर इसमें ३२ तो० शहद, २०० तो० मिश्री, दालचीनी, और इलायची डाल सेवन करें।

अमृत प्राश्यावलेह—सं० पु० दूध, आमले का रस, विदारीकन्द का रस, गन्ने का रस, पञ्चवीरी वृक्षों

का रस, और घी प्रत्येक १ प्रस्थ मिलाकर पकाएं, फिर इसमें मधु आदि गण, दाख दोनों चन्दन खस; चीनी, निलोफर, पद्माख, महुए का फूल अनन्त मूल, खम्भारी, कतृण का कल्क १-१ कर्ष डाल कर अवलेह बनाएँ शीतल होने पर अर्द्ध प्रस्थ मधु, १ तुला चीनी और दालचीनी, इलायची, पद्म केसर, प्रत्येक आधा आधा पल डालकर भली प्रकार मिलाएँ। यथोचित सेवन करने से रक्त-पित्त, क्षत, क्षय, तृष्णा, अरुचि, श्वास, खाँसी वमन, हिचकी, मूत्र कृच्छ्र तथा ज्वर का नाश होता है।

अमृतफल-कुमा० शर्वतीनीबू (Sweet lime)

अमृत फलम्-, अमृत फल- (१) नास पाती हिं० । नाक-पं० Pyruscommunis (The pear tree)। मद० ब० ६ भा० (१) अमरूद (Guava)। पु० (३) पारद (Mercury)। (४) पटोल, परवल (SespadulaT richosanthes cucumerina) (५) वृद्धि नामक औषधि (See vriddhi)। रा० नि० व० ३। (६) धात्री वृक्ष आमला (Phyllanthus emblica) मद०।

अमृतफला-सं० स्त्री०, हिं० संज्ञा स्त्री० (१) अंगूर द्राक्षा, दाख। किसमिस हिं० । Raisin (२) आमला की । आमला । (Phyllanthus emblica) रा० नि० व० ११। (३) क्षुद्र खर्जूरी वृक्ष, छोटा खजूर वृक्ष, (Small-date palmtree)। (४) श्वेत द्राक्षा हिं० । उत्तरा, उत्तरी-को० । (५) मुनक्का।

अमृत बन्धुः-सं० पु० (१) अश्व, घोड़ा (Ahorse) । वै० निघ० । (२) चन्द्रमा।

अमृतबान-हिं० संज्ञा पु० [सं० अमृतद्वान] अमृत दान, रोगनी हाँड़ी मिट्टी का रोगनी पात्र। लाह रोगन किया हुआ मिट्टी का बरतन जिसमें अचार मुरब्बा घी, आदि रखते हैं।

अमृत भल्लातकम्-सं० क्ली० पवनसे टूटे तथा नकुओं से रहित पके हुये भिलावे २५६ तो० ईंट के चूर्ण से घिसकर पानी से प्रक्षालन कर हवा में रख शुष्क कर दो दो दल करके १०२४ तो० जल में उबालें जब चौथाई शेष रहे तो वस्त्र से छान कर रखडा करलें। पुनः २५६ तो० दुग्ध में पकाएं जब चौथाई शेष रह जाय तब बराबर भाग गोघृत मिलाकर पुनः पकाएँ, पश्चात् अर्ध भाग मिश्री मिलाकर रई से अच्छी तरह मथें ७ दिन तक रखने के पश्चात्यह अमृत तुल्य हो जाता है। प्रातः शौचादि से शुद्ध हो मात्रा पूर्वक सेवन करने से कुष्ठ, कृमि, कान, नाक, उँगली का गलकर गिरना तथा केशोंका श्वेत होना, दांतों का गिरना इत्यादि दूर हो स्मृति की वृद्धि होती है। भैष० र० कुष्ठ० चि०।

अमृतभल्लातकावलेहः-सं० पु० १२८ तो०, शुद्ध भिलावे को १०२४ तो० जल में पकाएं। पुनः १२८ तो० गुरुच का कल्क डाल पकाएं। जब पक कर चौथाई शेष रह जाए तब वस्त्र से छान कर उसमें ३२ तो० गो घृत, २५६ तो० गोदुग्ध, ६४ तो० मिश्री, ३२ तो० शहद डाल मन्द-मन्द अग्नि से पकाएँ। जब पककर गाढ़ा होजाए अग्नि पृथक् कर निम्न औषधों का उत्तम चूर्ण डालें यथा—वेलगिरी, अतीस, गुरुचि, सोमराजी, पमाड़, नीमछाल, हड़, बहेड़ा, आमला, मजीठ, सोंठ, मिर्च, पीपल, अजवाइन, सेंधा नमक, मोंथा, दालचीनी, छो० इलायची, नागकेशर, पित्तपापड़ा, तेजपत्र, सुगन्धबाला, खस, चन्दन, गोखरू, कचूर, और रक्त चन्दन प्रत्येक २ २ तो० मात्रा-१-४ तो०। इसके सेवन से कुष्ठ, वातरक्त तथा अर्श दूर होता है। अपथ्य-मांस, अम्ल, धूप, अग्नितप, मैथुन, दही, तेल, तथा अधिक मार्ग चलना निषेध हैं। भा० प्र० मध्य० ख० २ कुष्ठ० चि०।

अमृत भल्लातकी-सं० स्त्री० उत्तम सुन्दर पके हुये भिलावें २५६ तो० को दो दो फांक कर चौगुने जल में पकाएँ जब चौथाई जल शेष रहे तब उन्हें पुनः चौगुने गोदुग्ध में पकाये। जब अच्छी तरह

गादा होजाय तब ६४ तो० मिश्री मिला कर सात दिन तक रख छोड़े। पश्चात् अग्नि और बल का पूर्ण अनुमान कर उचित मात्रा से सेवन करने से गुदा के सम्पूर्ण विकार दूर होते और अग्र भाग के केश सुन्दर कृष्ण वर्ण के हो जाते हैं। इसके लिये पथ्यापथ्य का कोई नियम नहीं।

अमृत भस्म सूतः—सं० पु० पारा और गन्धक समान लेकर त्रिफला के साथ ३ दिन तक लोह के खल में घोंठ कर ताम्बे की डिब्बी में रख कर बाहर से कपड़मिट्टी करके उसमें पुट दें। फिर त्रिफला, भाँगरा, चित्रक, सोंठ, वच, बकुची, शतावरी, भिलावाँ, गन्धक, नीलाथोथा, और वत्सनाग, सबको समान भाग लेकर पीसकर चूर्ण करें। और उपयुक्त पुट दिया हुआ पारा $\frac{१}{१६}$ भाग मिला कर इसको कान्तलोह के बर्तन में त्रिफला का क्वाथ करके उसके साथ खाने से ६ महीने में कुष्ठ नष्ट होता है। नीम का पञ्चांग, शहद, घी और शक्कर के साथ ६ महीने तक इसका प्रयोग करने से कोढ़ी की नासिका इत्यादि का गिरना बन्द हो जाता है। भिलावाँ का तेल और हरताल भस्म के साथ इसका प्रयोग करने से श्वित्र कुष्ठ दूर होता है।

अमृतमञ्जरी—सं० स्त्री० (१) गोरक्ष दुग्धी क्षुप। रा० नि० व० ५। (२) सामान्य ज्वर में प्रयुक्त रस विशेष, यथा—हिंगुल, मरिच, सुहागा, पीपल, विष, जायफल, इनको सम भाग ले जम्भीरी के रस की भावना दें। मात्रा—२ वा ३ गुंजा। किसी किसी ग्रन्थ में यह रस कासाधिकार में वर्णित है। र० सा० सं०।

अमृतमञ्जरीरसः—सं० पु० सिंगरफ, मीठातेलिया, पीपल, काजीमिरच, सुहागा, जावित्री प्रत्येक समान भाग लेकर जम्भीरी के रस में खरल करके १ रत्ती प्रमाण की गोलियां बना सेवन करने से दारुण सन्निपात, मन्दाग्नि, अजीर्ण और आमवात, रोग नष्ट होते हैं। गर्म जल के साथ सेवन करने से हर प्रकार के रोग शमन होते हैं। इससे पाँच प्रकार की खांसी, श्वास, सर्वाङ्ग पीड़ा जीर्ण ज्वर और क्षयज खाँसी दूर होती है। र० सा० सं० कासे।

अमृत मण्डुरः—सं० पु० देखो अमृत मण्डूरम्।

अमृत मण्डूरम्—सं० क्ली० शुद्ध मण्डूर ८ पल, शतावरी का रस ८ पल, दूध, घी और दही प्रत्येक ४-४ पल लेकर एकत्र पीस पका कर गाढ़ा करें। इसको प्रातःकाल और सायंकाल समय १-१ निष्क खाने से वातज, पित्तज और सन्निपातज परिणामशूल का नाश होता है। र० र० शूले।

अमृत मन्थः—सं० पु० दुग्धादिपरिशोलित मन्थ। प० मु० र० व०।

अमृत महल—हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] मैसूर प्रदेश की एक प्रकार की भैंस।

अमृत मूरि—हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] सञ्जीवनीबूटी अमरमूर।

अमृतयोगः—सं० पु० फलित ज्योतिष में एक नक्षत्र विशेष। शुभ फल दायक योग। अग्नि० २ स्था० ७ अ०।

अमृत रसः—सं० पु० शुद्ध गन्धक २ कर्ष, शुद्ध पारद १ कर्ष, त्रिफला, त्रिकुटा, नागरमोथा, विडंग, चित्रक प्रत्येक का चूर्ण १-१ पल सबको मिश्रित कर रखें। १ कर्ष शहद और घी के योग से चाटें और ऊपर शीतल जल तथा गोदुग्ध यथा क्रम पान करें तो अम्लपित्त, मन्दाग्नि, परिणाम शूल, कामला और पाण्डु रोग का नाश होता है। र० चि०। ११ स्तवक।

अमृत रसतुल्य पाकः—सं० पु० देखो—अमृत भल्लातकम्। तथा वाग्भ० उत्तर स्थान० अ० ३६ श्लो० ७५।

अमृतरसा—सं० स्त्री० कपिल द्राक्षा, दंगूर। काबे दाख—म०। (Vitis Vinifera) रा० नि० व० ११।

अमृत रसायनम्—सं० क्ली० लोह चूर्ण ३ भा०, त्रिफला ३ भा०, अभ्रक १ भा०, पारद भस्म १ भा०, इनको १६ गुने पानी में उपर्युक्त चीजों में से आधी डालकर उबालें जब चतुर्थांश शेष रहे तो इसमें समान भाग घी मिलाकर और घी के बराबर शतावरी का रस और उससे द्विगुण

दूध मिलाकर लोह के अथवा मिट्टी के बर्तन में उसे होशियारी से पकायें। फिर उपरोक्त बचा हुआ आधा लोह चूर्ण जो कि दिव्य औषधियों से और रुम्पुट आदि से मारा हुआ है और उपरोक्त ही सूताभ्रक; पारद भस्म और त्रिफला, दन्ती, विडंग, दोनों जीरे (अलग-अलग) ढाकके बीज काकु, चित्रक, बिधारा, हस्तिकर्ण पलाश की जड़ (अभाव में भूमिकुष्माण्ड), कपालू, तज, त्रिकुटा पीपलामूल, गिलोय, तालमूली, सहिंजन के बीज, अरनी, जवासा, नागदौन, सोनापाठा, की गिरी, इन्द्र जौ, प्रियंगु, नीम और अजवाइन इन सबका पृथक पृथक चूर्ण करके अभ्रक और लोह के बराबर मिलाएँ।

गुण—वात कफ प्रधान में सोंठ और त्रिफला के साथ दें। उचित मात्रा में सेवन करने से यह तत्काल ही जठराग्नि, बल और पुष्टि को बढ़ाता है। र० यो० सा०।

अमृतलता-सं० स्त्री०, हिं० सज्ञा स्त्री० गुरुच, गिलोय रा० नि० व० ३। (Tinospora Cordifolia)

अमृतलतादि घृतम्-सं० क्ली० गिलोय रस और उसका कल्क तथा भैंस का घृत डालकर पकायें। पुनः उसमें चौगुना दुग्ध डालकर पकाएँ। इसके सेवन से हलीमक रोग समूल नष्ट होता है। भा० प्र० मध्य० खं० २ श्लोक ४६।

अमृतवटकः-सं० पु० सान्निपातिक अतिसार में हितकारक योग विशेष। देखो—हा० अन्नि० स्था० ३ अ० पांडु० चि०।

अमृतवटी-सं० स्त्री० अग्निमांद्य में प्रयुक्त रस विशेष विष १ भा०, कौड़ी १ भा०, मिर्च ६ भाग इनको जल में घोटकर मुद्ग प्रमाण गोलियां बनाएँ भैष० र०। रस० रा० सु०।

अमृत वर्तिका-सं० स्त्री० मृत्युञ्जयतन्त्रोक्त रसायन वर्ती। साधन विधि—यथा—त्रिफला, त्रिकुटा, ब्राह्मी, गिलोय, चित्रक, नागकेशर, सोंठ, भांगरा, सम्भालू, हल्दी, दारुहल्दी, शंखाशन, (भांग सिद्धि), तज, इलायची, गम्भीरी की छाल, वच, वायविडंग प्रत्येक का चूर्ण २ पल, कामरूपदेशीय गुड ५० पल एकत्र मर्दन कर ३६० वर्तिका प्रस्तुत करें। इसे भोजन के पूर्व प्रति दिवस शीतल जल से १-१ सेवन करें। भैष०।

अमृतवल्लरी-सं० स्त्री० (१) गुडूची, गिलोय, (Tinospora Cordifolia) भा० पू० १ भा० गु० व०। (२) उपोदकी, बड़ी पोई।

अमृतवल्लिका
अमृतवल्ली } -स० स्त्री० चित्रकूट प्रसिद्ध गुडूची र० मा०, रा० नि० व० ३। अन्नि० २ स्था० २ अ०। इसे विषनाशक, किञ्चित तिक्त, जरा, व्याधि, कुष्ठ, कामला, शोथ, व्रणनाशक ऋषियों ने कहा है। वै० निघ० जीर्णज्व० हरीतकी पाक।

अमृत षट्फल घृतम्-सं० क्ली० सोंठ, चित्रक, चव्य, जवाखार, पीपल, पीपलामूल प्रत्येक ४-४ तो० गोघृत ६४ तो०, अदरक का स्वरस ६४ तो० दही का पानी ६४ तो० उक्त औषधियों का कल्क प्रस्तुत कर यथा विधि घृत सिद्ध कर सेवन करने से ऐकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक और चातुर्थिक, ज्वर दूर होते हैं। यह खाँसी श्वास तथा अर्श में भी हितकारी है। बं० सं० ज्वर० चि०।

अमृताष्टकः-सं० पु० गुरुच, चिरायता, कुटकी, नागरमोथा, सोंठ, खस, पाठा, नेत्रवाला इन्हें अमृताष्टक कहते हैं, इसके सेवन करने से ज्वर दूर होता है, च० द० या० त० बं० से० सं०।

अमृतस्कन्दः-सं० पु० खपरिया, संगवसरी-हिं०। खापर-ब०। कलखापरी-म०, वै० निघ०। See khapariya

अमृतसञ्जीवनी-सं० स्त्री०, हिं० वि० स्त्री० (१) गोरखमुंडी नामक क्षुप विशेष। रा० नि० व० ५ See-Gorakshaduddhi (२) मृतसञ्जीवनी।

अमृतसम्भवा-सं० स्त्री० गुडूची, गिलोय, गुलबेल, गुरुच (Tinospora Cordifolia) रा० नि० व० ५।

अमृत सहोदरः-सं० पु० (A Horse) घोटकः, घोड़ा, अश्व, जयद०।

अमृतसार-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) नवनीत, मक्खन, (२) घी।

अमृतसार गुटिका-सं० स्त्री० त्रिफला, गिलोय, मोंथा' बिधारा, वायविडंग, वच २-२ पल, त्रिकुटा, पीपलामूल, बला, चीता, दालचीनी, इलायची, नागकेशर इनका चूर्ण १-१ पल, यह चूर्ण २५ पल लेकर ५० पल गुड़के द्वारा ३६० मोदक बनाएँ। गुण—अग्नि वर्द्धक है। र० र० रसायने।

अमृतसारजः-सं० पु० गुड़ (Jaggery) काकली-म०। रा० नि० व० १४। (२) तवराजखण्ड। नवात-वं०। रा० नि० व० १४। गुण—यह प्वास, ज्वर, दाह और रक्तपित्त को दूर करता है।

अमृतसारजा-सं० स्त्री० चीनी, शर्करा। म०-खड़े साकर। (Sugar)

अमृतसार ताम्रम्-स० क्ली० रसायन अधिकारोक्त।

अमृत सुन्दरो रसः-सं० पु० मैनसिल, सोनामाखी, हरताल, गधक, पारा, खपरिया प्रत्येक समान भाग लेकर अदरख, बासा और तुलसी के रस में खरल करके तांबे के पात्र में भर कर सम्पुट करके ३ दिन पकाएँ, फिर ठण्डा होने पर निकाल कर रखें। मात्रा—३ रत्ती। यह वातज और कफज रोगों का नाशक है।

अमृतसोदरः-सं० पु० घोड़ा, अश्व, घोटक (A horse) रा० नि० व० ६।

अमृत स्रवा-स० स्त्री० (१) चित्रकूट में प्रसिद्ध लता, अमृतवल्ली, रुद्रवन्ती-वं०।

तत्पर्य्याय—वृक्षरुहा, उपवल्लिका, घनवल्ली, सितलता। गुण—किञ्चित तिक्त, रसायन, विषघ्न, व्रण, कुष्ट, आम, कामला और शोथनाशक है। रा० नि० व० ३।

(२) त्रायमाणा रा० नि० व० ५। मात्रा—३ मा०।

अमृतहरीतकी-सं० स्त्री० धनियां, जीरा, मोंथा, पञ्चलवण, अजवायन, हिंगु, तेजपत्र, लवङ्ग, त्रिकुटा प्रत्येक सम भाग ले उत्तम चूर्ण करें इस चूर्ण के बराबर शुद्ध हड़ का चूर्ण मिलाएँ। हड़ शोधन विधि १०० हरड़ों को लेकर तक्र में भिगोएं। जब हड़ मुलायम हो जाएँ तब उनके बीज अलग २ कर छिलकों को लेकर चूर्ण करें यही चूर्ण उक्त योग में मिलाया जाता है। पुनः इसमें षडूषण, पञ्चलवण, भूनी हींग, जवाखार, जीरा, अजमोद ले चूर्णकर चुक्र की भावना दें और उक्त समस्त चूर्ण में मिला रक्खे। उचित मात्रा में सेवन करने से घोर अजीर्ण का नाश होता है।

अमृतक्षारः-सं० पु० नवसादर, नृ (नर) सार। (Ammonium chloridum) वै० निघ०।

अमृता-स० स्त्री० हिं० संज्ञा स्त्री० (१) गुडूची, गिलोय। (Tinospora cordifolia) रा० नि० व० ३। २ मा०। (२) (Phyllantlhus emblica) आमला रा० नि० ११ (३) हड़, हरीतकी। (Terminalia chebula) प० मु० "स्थूल मांसामृता स्मृता." इयं चम्पा जाता। रा० नि० व० ११। (४) तुलसी (Ocimum Sanctum)। (५) काष्ठधात्री वृक्ष, भा०। (६) मदिरा, मद्य (Wine) रा० नि० व० १४। (७) इन्द्रायण (Citrullus colocynthes) रा० नि० व० ३। (८) पारावतपदी, लताफटकी, रा० नि० व० ३। (९) गोरक्षदुग्धा। (१०) काली अतीस, कृष्ण अतिविषा। (११) रक्त निशोथ, तुर्बुद सुर्ख, रक्तत्रिवृत्ता, रा० नि० व० ६ (१२) दूर्वा, दूब। (१३) पिप्पली मे०। (१४) लिंगिनी, रा० नि० व० ३। (१५) नील दूर्वा, हरी दूब, रा० नि० व० ८। (१६) श्वेत दूर्वा, सुफेद दूब। (१७) नागवल्ली, पान। (१८) रास्ना। (१९) गरुडवल्ली, वै० नि० क्षय चि० (२०) सूर्यप्रभा। (२१) खर्बूजालता। (२२) कन्द गुडूची, कन्द गिलोय। (२३) स्फटिकारिका (Alumen) मद० व० ४। प्रयोगा०। गिलोय (चित्रक गुड़े) वा० सू० १५ आरग्वधादिः, "निम्बामृता मधुरसा श्रुववृक्षपाठाः" पद्म कादौ अरुण शृंग्यमृता दश जीवन संज्ञाः,

चि० १ अ० किरातादिः । किराततिक्तममृता, च० द्र० वात ज्वर चि० । किराताब्दामृतोदीच्य–। च० द्र० पित्त ज्वर० चि० लोध्रादिः । च० सू० ४ अ० ।

(२४) मालकांगनी । (२५) अतीस ।

अमृताख्य गुग्गुलुः–सं० पु० बातरक्तरोग में प्रयुक्त योग तथा गुरुच २ श०, गुग्गुल १ श०, त्रिफला प्रत्येक १ श० जल ६४ श० में कूट कर पकाएँ जब चौथाई शेष रहे छानकर पुनः इतना पकाएँ कि गाढ़ा हो जाय । इसमें दन्तीमूल ४ तो० निशोथ, २ तो० चूर्णकर मिलाएँ । इसका बला बल विचार कर मात्रा दें । चक्र० द० वात० रो० चि० ।

अमृताख्यघृतम्–सं० क्ली० अपामार्ग बीज और शिरस के बीज दोनों प्रकार की श्वेता (कटभी और महा कटभी) और काकमाची (मकोय) इन्हें गो मूत्र में पीसें इनसे सिद्ध किया हुआ घृत विष का परम शमन करता कहा गया है यह अमृत नामक विख्यात घृत है । सुश्रुत० सं० कल्प० अ० ७ श्लो० ११ ।

अमृताख्य तैलम्–सं० क्ली० गिलोय, मुलहठी, लघु पञ्चमूल, पुनर्नवा, रास्ना, एरण्डमूल, जीवनीय गण. प्रत्येक १०० पल । बला ५०० पल, बेर बेल, जौं, कुल्थी, प्रत्येक एक एक आढ़क शुष्क गाम्भारी फल १ द्रोण इनको कूट धोकर १०० द्रोण जल में पकाए जब ४ द्रोण जल शेष रहे तब छान लें और इसमें ५ गुना दूध डालकर तथा चन्दन, खस, नाग केसर, तेजपात, इलायची, अगर, कूठ, तगर, मुलहठी, प्रत्येक २–३ पल और मजीठ ८ पल का कल्क बनाकर उसके साथ १ द्रोण तेल का पाक सिद्ध करे यह वातरक्त, क्षत क्षीण, वीर्यकी अल्पता थकान, योनिदोष, अपस्मार और उन्माद को दूर करता है । च० सं० ।

अमृताख्य लौह रसायनम्–सं० क्ली० देखो अमृताख्य लौह ।

अमृताख्य लौह–सं०पु० क्ली० रक्त, पित्तमें प्रयुक्त रसायन यथा—गुरुच, निशोथ, दन्तीमूल, मुरडी, खदिर, अडूसा, चित्रक, भांगरा, तालमखाना, पुष्करमूल, पुनर्नवा, खिरेटी, कांस, सहिंजन, देवदारु, दुद्धि, आक रस, डाभ, (कुशा) का रस, शतावरी, इन्द्रायण, बरना, जमींकन्द, चव्य, ताल मूली, गगेरन, पीपला मूल, कूट, भारंगी, प्रत्येक ४–४ तो० जल १०२४ तोला में पकाएँ। जब आठवां भाग शेष रहे क्वाथ छानकर रक्खे; पुनः त्रिफला १ प्रस्थ (६४ तो०) ८ प्रस्थ जल में पकाएँ । जब जल आठवां भाग शेष रहे क्वाथ छानकर रक्खे पुनः शहद से पुट देकर मृत लौह चूर्ण ६४ तो०, अभ्रक १६ तो०, गन्धक १६ तो० विधिवत् शुद्ध पारद ८ तो०, गुड़ ३२ तो०, मिश्री ३२ तो०, गुग्गुल शु. ८ तो०, घृत ३२ तो०, उक्त क्वाथ में विधिवत् इस लोह को पकाएँ । शीतल होने पर शहद ३२ तो० मिलाएँ। पुनः शुद्ध सोनामक्खी का चूर्ण ८ तो० शिलाजीत शु० २ तो०, सोंठ, मिर्च, पीपल, त्रिफला, जमालगोटे की जड़; शुद्ध निशोथ, दोनों जीरा, खदिरसार, तालीसपत्र, धनियां, मुलहठी' वंशलोचन, रसवत, काकड़ाशृंगी, चित्रक, चव्य' नागर मोथा, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, कङ्कोल, लवंग, जायफल, मुनक्का, छोंहारा, प्रत्येक का चूर्ण २–२ तो०, उक्त अवलेह में मिलाएँ। इस के सेवन से रक्तपित्त; अम्लपित्त, क्षय, कुष्ट, ज्वर, अरुचि, अर्श, उदरशूल, संग्रहणी, आमवात, वात रक्त, मूत्रकृच्छ, प्रमेह, शर्करा, रोग दूर होता है ।

मात्रा—१ रत्ती से ८ र० ।

अनुपान—शहद, घृत ।

अपथ्य—अनूपदेशज मांस और जिनके आदि का अक्षर 'क' हो उसे न खाना चाहिये । वंग० सं० रक्त पित्त चि० ।

अमृता ख्य हरीतकी–सं० स्त्री० पाण्डु रोग में प्रयुक्त योग— सतावर, भांगरा, पुनर्नवा, पियावांसा, प्रत्येक कूटकर चौगुने जल में क्वाढ़ा करें । जब चौथाई शेष रहे, कपड़े से छान उसमें ३६० बड़ी और स्थूल हड़ डालकर पकाएँ पुनः सुखा कर ३० पल दुग्ध में औटाएँ । पश्चात गुठली निकालकर ये औषध डालें—पारद गन्धक प्रत्येक ६ पल दोनों को किसी पात्र में रख थोड़ी देर तक अग्नि से पचाएँ पुनः उतारकर जब तक गाढ़ा

न हो जाय चलाते रहें, फिर इसमें गिलोय का सत्व मिला कर शहद से ३६० गोलियां बनाएँ और १-१ गोली पूर्वोक्त हड़ों में भर दें और ऊपर सूत लपेटे पुनः एक पात्र में शहद भरकर उसमें हड़ों को डाल दें इनमेंसे प्रतिदिन एक हड़ भक्षण करें। इसके सेवन से शुष्क पाँडु रोग का नाश होता है। वृ० रस० रा० सु०। पांडु रो० अधि०

अमृतागुग्गुलु–सं० पु० गिलोय, परवल, की जड़, त्रिफला, त्रिकुटा, वायविडंग, सर्व तुल्य भाग ले चूर्ण कर समान भाग शुद्ध गुग्गुल चूर्ण के साथ मर्दन कर १-१ तो० की गोलियां बनाएँ।

इसके सेवन से व्रण, वातरक्त, गुल्म, उदर, व्याधि, शोथ इत्यादि दूर होते हैं। वङ्ग० सं० व्रण० चि० श्लो० ५०। अन्य रोग के लिये देखो—भाव० प्र० मध्य० ख० २७ श्लो०। प्रारम्भ १७० श्लो० १७८ वातरक्त० चि०॥ भैष० र० वातरक्त० चि०। चक्र० द० वात० र० चि०।

अमृताघृतम्–सं० क्ली० वात रक्ताधिकारोक्त योग विशेष। चक्र० द० वा० र० चि०।

अमृताङ्कुरः–सं० पु० पारा, गन्धक, त्रिकुटा, पीपल मूल, चव्य, चित्रक, वच्छनाग, सैंधव, प्रत्येक समान भाग लेकर भांगरे के रस से भावना दें। मात्रा—२ रत्ती। गुण—यह पांचो प्रकार की खाँसी को नष्ट करता है। रस० यो० सा०।

अमृताङ्कुर लौहः–सं० पु० क्ली० चित्रकमूल प्रभृति से शुद्ध पारा, लौह चूर्ण, ताम्रभस्म, भिलावा, गन्धक, गूगुल, और अभ्रक भस्म, प्रत्येक ४-४ तो० हड़, बहेड़ा, एक एक तो०, आमला ६ तो० और ८ भा०, लोह से अष्टगुण घी, त्रिफला का क्वाथ १२८ तो० इन सबको लोहे की कड़ाही में पकाए और लोहे की कड़छी से चलाते रहें। मात्रा आवश्यकतानुसार।

गुण—प्रत्येक कुष्ठ, पांण्डु, प्रमेह, आमवात, वातरक्त, कृमि, शोथ, पथरी, शूल, वातरोग, क्षय, दमा और वलि, व पलित को नष्ट करता है। रस० यो० सा०।

नोट—इसी नाम के दूसरे योग में बहेड़ा ६ पल, आमला २८ ले, गोघृत १८ तोले और १ प्रस्थ त्रिफला के क्वाथ के साथ उक्त विधि से पकाने को कहा है। उ० द० चि०। र० स० सं० रस०। र० र० स० सं० टी०।

अमृताङ्कुर वटी–सं० स्त्री० पारद, गन्धक, लौह, अभ्रक, शुद्ध शिलाजीत, इन्हें गिलोय के स्वरस से मर्दन कर गुञ्जा प्रमाण गोली बनाए। इसके सेवन से क्षुद्ररोग, रक्तपित्त, जीर्ण ज्वर, प्रमेह, कृशता, अग्निक्षय आदि आमला के स्वरस के साथ सेवन करने से दूर होते हैं तथा यह पुष्टि कान्ति मेधा और शुभ मति को उत्पन्न करती है। भैष० र० क्षुद्ररोग चि०

अमृताञ्जन–सं० पु० पारा, सीसा समान भाग इनसे द्विगुण शु० सुर्मा और थोड़े से कपूर मिलाकर बनाया हुआ सुर्मा तिमिर को नष्ट करता है।

अमृतादिः- सं० पु० विसर्प रोग में प्रयुक्त क्वाथ यथा गिलोय, अडूसा, परवल, नागर मोंथा, सप्तपर्णी खैर, कालावेंत, नीम के पत्ते, हल्दी, दारुहल्दी, इनका क्वाथ कुष्ट, विष, विसर्प, विस्फोटक, क्षुद्र मसूरिका, शीतपित्त और ज्वर को दूर करता है। भैष० र० विसर्प चि०।

गिलोय, सोंठ, पीयाबाँसा, इलायची, बड़ी कटेली छोटी कटेली, शालपर्णी, पृश्नपर्णी, गोखरू, नागर मोथा, नेत्रवाला, इन्हें पांस मधुयुक्त सेवन करने से गर्भ शूल नष्ट होता है।

भैष० र० गर्भिणी चि०।

अमृतादि क्वाथ–सं० पु० गिलोय, सोंठ, कटसरैया, नागरमोंथा, लघुपञ्चमूल, मोंथा, सुगन्ध वाला, इनके क्वाथ में शहद डाल पीने से प्रसूत को पीड़ा दूर होती। यो० तर० गर्भ० चि०। इस नाम के भिन्न २ बीस योग अनेक ग्रन्थों में आए हैं।

अमृतादिगुग्गुलुः–सं० पु० देखो—अमृताद्यगुग्गुलुः।

अमृतादि गुग्गुलुघृतः-सं० पु० गिलोय, बासा, पटोल, चदन, मोंथा, कुटकी, कुड़ा की छाल, इंद्रयव, हड़, चिरायता, कालहारी, अनन्तमूल जौ, बहेड़ा, आमला, खम्भारी, सोंठ, प्रत्येक १-१ मा-, इनके क्वाथ तथा ८ पल शु० गूगल के कल्क से १ प्रस्थ घी का विधिवत पाक करें। यह हर प्रकार के नेत्र व्याधि अर्बुद, मोतिया बिंदु

तिमिर पिल्ल कण्डु, आंसुओं का अधिक स्राव, गठिया आदि को दूर करता है। र० र०।

अमृतादि घृतम्–सं० क्ली० वात रक्त में प्रयुक्त घृत योग—गिलोय के क्वाथ अथवा कल्क द्वारा सोंठ युक्त सिद्ध घृत वात रक्त आमवात, कुष्ट, व्रण, अर्श, और कृमि रोग को दूर करता है। बंग० सं० वात० रक्त० चि०।

अमृतादि चूर्ण–सं० पु० (१) गिलोय, गोखरू, सोंठ, मुण्डी, वरुणछाल, इनका चूर्ण मस्तु और नाल के साथ खाने से आमवात नष्ट होता है। भा० प्र० म० ख० आ० वा०

(२) गिलोय, कुटकी, सोंठ मुलेठा, इनका चूर्ण शहद के साथ चाटकर ऊपर गोमूत्र पीने से आम वात नष्ट होता है। वृ० नि० र०।

अमृतादि तैलम्–सं० पु० देखो—अमृताद्यतैलम्। उक्त योग में देवदारु के स्थान में तून पाठ रक्खा है अमृत० सा० गलगण्ड चि०।

अमृतादि तैलम्–सं० क्ली० गिलोय का रस, नीम की छाल, हींग, हड़, कुड़े की छाल, बला, अतिबला, देवदारु और पीपल के कल्क से सिद्ध किया हुआ तेल गलगण्ड में हित है। वृ० नि० र०।

अमृतादि वर्टी–सं० स्त्री० विष २ भा०, कपर्द भस्म १ भा० मिर्च ३ भा० जल से मर्दन कर मुद्ग प्रमाण गोलियां बनाएँ। यह अग्निमान्द्य, शोथ, और कफ के रोगों में हित है भा० प्र० १ भा० ज्वर चि०।

अमृतादिस्वरसः–सं० पु० गिलोय हरी ले कुचल कर रस निकाल कर स्वच्छ वस्त्र से छानें, यह रस २ तो० और शहद ६ मा० डाल कर पीने से प्रमेह दूर होता है।

यो० तरं० स्वरसादि सा०।

अमृतादिहिम–सं० क्ली० गिलोय का हिम बनाकर प्रातः काल पीने से पित्त ज्वर नष्ट होता है। वृ० नि० र०।

अमृताद्यगुग्गुलुः–सं० पु० गिलोय, १ भा०, इलायची २ भा०, वंशलोचन ३ भा०, इन्द्रजौ ४ भा० बहेड़ा, ५ भा०, हड़ ६ भा०, आमला ७ भा०, और शु० गुग्गुल ८ भा०। इनके शहद में मिलाकर खाने से स्थूलता भगन्दर और पिड़काएँ दूर होती हैं। भा० प्र० मध्य० ख० २।

अमृताद्यघृतम्–सं० क्ली० (१) आमवात में प्रयुक्त योग–गिलोय ४०० तो०, को १०२४ तो० जल में पकाये, जब चौथाई शेष रहे तब उस क्वाथ में १४ तो० घृत तथा चौगुना गोदुग्ध, काकोली, क्षीरकाकोली जीवक, ऋषभक, सतावर, विदारी-कन्द- मुलहठी, नीलकमल, अस-गन्धमूल, पृष्ठ, पर्णी, कुटकी, ऋद्धि, वृद्धि, मेदा, महामेदा, गोखरू, कटेरी गिलोय, पीपल, रास्ना और अडूसा, सर्व तुल्य भाग ले कल्क बनाकर उसमें डाल मन्द मन्द अग्नि से पकाएँ तो यह घृत सिद्ध हो। धन्वन्तरि जी का कथन है कि इसके सेवन से (पान, अभ्यंग, नस्य) शोथ, दाह वात रक्त, क्रोष्टुशीर्ष, अंसवात, उरुस्तम्भ, दारुण वातरक्त, वातकण्ठ, गृध्रसी और वातकंटक दूर होता है। उक्त नाम के छः प्रकार के योग भावमिश्र जी ने अपने ग्रन्थ में वर्णन किए हैं।

गिलोय, शारिवाँ, लघुपंचमूल, अडूसा, खिरेटी इनका पञ्चांग पृथक् पृथक् ४० चालीस तो०, को १०२४ तो०, जल में पकाएँ। जब चौथाई शेष रहे तब उसमें पीपल, चन्दन, हाऊबेर, अंस, पित्त पापड़ा, सोनापाठा, मुलहठी, चिरायता नीलकमल इन्द्रजौ, नागरमोथा, सोंठ, कुटकी, धमासा, दालचीनी, तेजपात, अडूसामूल, नागरमोथा, (अभाव में वनपशा) प्रत्येक २.२ तो०। इनका कल्क और इस कल्क के समान भाग बकरी का दुग्ध, १४ तो० गोघृत मिलाकर सिद्ध करें। इसके सेवन से भयानक राजयक्ष्मा, सन्निपात, रक्तपित्त, श्वास, कास, उरःक्षत, दाह और शोथ दूर होता है। वंग० से० सं० २ खं० १५, ६६ प्र०। राज यक्ष्मा० चि०।

अमृताद्यचूर्णम्–सं० क्ली० आमवात में प्रयुक्त योग–गिलोय, सोंठ, गोखरू, मुण्डी, वरुणछाल प्रत्येक तुल्य भाग ले चूर्ण प्रस्तुत कर सेवन करने से आमवात दूर होता है। भा० म० २ भा०।

अमृताद्य तैलम्–सं० क्ली० गलगण्ड रोग में प्रयुक्त योग—गिलोय, नीम की छाल, अम्लवेतस,

पीपल, देवदारु, दोनों बला इनसे सिद्ध तैल गलगण्ड रोग को दूर करता है। बं० स० गलगण्ड चि०।

अमृताद्यवलेहिका—सं० स्त्री० हड़, कुटकी, सोंठ मुलहठी शहद में मिलाकर ऊपर से गोमूत्र पान करने से वातरक्त नष्ट होता है। यो० र० बा० र०।

अमृताद्यो गुग्गुलः—सं० पु० देखो—अमृताद्य गुग्गुलः।

अमृता नाम गुटिका—सं० स्त्री० चित्रक, हड़ १-१ पल, पारद, त्रिकुटा, पीपलामूल, मोंथा, जायफल, विधारा, प्रत्येक १-१ पल, इलायची, वंशलोचन, कूठ, गन्धक, हिंगुल, मैनफल, मालकांगनी, दालचीनी, अभ्रक, लोह प्रत्येक आधा पल, हलाहल विष २-३ रत्ती, गुड़ ८ पल, भांगरे के रस में मर्दन कर छोटी बेर बराबर गोलियां बनाऐ

गुण—सम्पूर्ण वात व्याधियों को दूर करता है। र० र० सु०।

अमृताफलः—सं० पु० क्ली० (१) पटोल, परवर (Trichosanthes dioica)। (२) नाशपाती। (Pyrus Communis)

अमृतारिष्टम्—सं० क्ली० विषम ज्वर में प्रयुक्त अरिष्ट।

योग—गिलोय १०० पल, दशमूल १०० पल, ४ द्रोण १६ सेर=१ द्रोण) जल में क्वाथ करें। जब चौथाई शेष रहे तब उसमें शीतल होजाने पर ३ तुला पुराना गुड़ मिलाए। पुनः इसमें जौरा १६ पल, पित्तपापड़ा २ पल, सप्तपर्ण, सोंठ, मिर्च, पीपल, नागरमोथा, नागकेशर, कुटकी, अतीस, इन्द्रजौ इन्हें एक एक पल मिला मिट्टी के पात्र में रख एक मास पर्यन्त रख अरिष्ट प्रस्तुत करें। इसके सेवन से सब प्रकार ज्वर दूर होते है। भै० र० ज्व० चि०।

अमृताणवः—सं० पु० मीठा विष पारद, गन्धक लौहभस्म, और अभ्रकभस्म, तुल्य भाग ले चित्रक के रस से सात भावना दें।

मात्रा—१-२ रत्ती इसे दोष अनुसार अनुपान के साथ खाने से आमाशय के सम्पूर्ण रोग और विषमज्वर का नाश होता है।

भै० र० आमाशय रो० चि०

अमृताणवरसः—सं० पु० हिंगुलोत्थ पारद, लौहभस्म गन्धक, सोहागा, कपूर, धनियाँ, नेत्रबाला, नागरमोथा, पाढ, जीरा और अतीस प्रत्येक १-१ तो० सबका चूर्ण कर बकरी के दूध से पीस कर १-१ मा० की गोलियाँ बनाएँ।

अनुपान—धनिया, जीरा, भंग, शालपर्णी, मधु, बकरी के दूध, मण्ड, शीतल जल केला की जड़ का रस, मोचरस अथवा कटेरी का रस, इनमें से किसी एक के साथ खाने से घोर अतिसार दूर होता है। संग्रहणी, अर्श, अम्लपित्त, खांसी, गुल्म और एक दोषज, द्विदोषज, त्रिदोषज, तथा उपद्रव युक्त प्रत्येक अतिसारों को यह रस नष्ट करता हैं। वृ० रस० रा० सु० अतिसार चि०।

अमृतार्णवलौहम्—सं० क्ली० कुष्ट रोग में प्रयुक्त योग—त्रिकुटा त्रिफला, लौहभस्म तुल्य भाग ले चूर्ण करें। सर्व तुल्य शुद्ध शिलाजीत मिला गिलोय के रस से भावना दें और सूर्य के ताप से शुष्क करें इसी तरह तीन भावना दे और सुखाए और पुनः घृत से मर्दन कर रखें। मात्रा-१ मा० मधु के साथ सेवन करें। रस० र०। इसे प्रमेह में भी दया जाता है।

अमृतार्णव लौहः—सं० पु० त्रिकुटा, त्रिफला, लौह भस्म प्रत्येक समान भाग ले चूर्ण करें, सर्व तुल्य शिलाजीत मिलाकर धूप में गिलोय के रस से ३ वार भावना दें। फिर घी में घोटे। मात्रा-१ मा०। गुण—शहद के साथ खाने से १८ कुष्ठ, कठिन वातरक्त, ववासीर, प्रत्येक प्रमेह और उदर रोग नष्ट होते हैं। रस० यो० सा०।

अमृता वटिका (गुग्गुलुः)—सं० स्त्री० (१) सद्यः व्रण नाशक योग। गिलोय, पटोलमूल, त्रिफला, त्रिकुटा, और बायबिडङ्ग इन्हें तुल्य भाग ले चूर्ण कर सर्व तुल्य शुद्ध गुग्गुल मिश्रित कर एक एक मासे की गोलियां प्रस्तुत करें। एक एक वटी प्रति दिन सेवन करने से व्रण विकार दूर होता है। रस० र०।

(२) घृत पिष्टित गुग्गुलु १६ पल, क्वाथार्थ गुडूची १०० पल, दशमूल १०० पल, पाठा, मूर्वा

बड़ियालाश्वेत बड़िआलू-मूल, परण्डमूल प्रत्येक १० पल सास्थि (गुठली युक्त) हरीतकी १००, बहेड़ा १००, आमला ४००, पाकार्थ जल ३ द्रोण (४८ सेर) इसमें गुग्गुल को एक पोटली में बाँध दोलायन्त्र की विधि से पकाएँ। जब ४८ शराव शेष रहे तब इसी क्वाथ में त्रिफला, निशोथ मूल, त्रिकुटा, दन्तीमूल, गिलोय, असगन्ध, वायविडंग, तेजपत्र, दारचीनी. छोटी इलायची, नागकेशर, गुण्डतृण प्रत्येक १-१ पल का चूर्ण मिला स्निग्ध पात्र में रक्खें. मात्रा—८ मा० इसे उष्ण जल से सेवन करना चाहिये। रस० र० व्रण शोथ चि०।

अमृताष्टकः—सं० पु०, क्ली० पित्तज्वर में प्रयुक्त कषाय गिलोय, इन्द्र जौ, नीम की छाल, पटोलपत्र, कुटकी, सोंठ, चन्दन और मोथा इनके द्वारा निर्मित कषाय को पिप्पली चूर्ण युक्त सेवन करने से पित्त तथा कफज्वर का नाश होता है। चक्र० द० चि०।

अमृतासङ्गम्—सं० क्ली० खर्परिका तुत्थ, खपरिया, खर्पर, तत्पर्याय—कर्परिका तुत्थ, अञ्जन (हे) मद०।

अमृतासङ्गमः—सं० पु० खर्परी तुत्थ। तूँते-बं० तूतिया—हिं०। मोर चूत—म०। वै० निघ०।

अमृताह्वम्—सं० क्ली० (१) अमृत फल, नासपाती। (Pyrus communis) मद० व० ६। (२) खर्बूजा मद० व० ६।

अमृताह्वयतैलम्—सं० क्ली० वातरक्त में प्रयुक्त तैल। जैसे—गिलोय, मधुक, लघुपञ्चमूल. पुनर्नवा, रास्ना, परण्डमूल, जीवनीयगण की औषधें, इन्हें १-१ सौ पल लें, वला ५०० पल, कोल (बदरी) बेल, उड़द, जौ, कुलथी १-१ आढ़क (४-४ सेर) छोटा गम्भारीमूल—छाल शुष्क १ द्रोण (१६ सेर), १०० द्रोण जल में विधिवत् पचाएँ। जब ४ द्रोण जल शेष रहे तब इसमें १ द्रोण तिल तैल और ५ द्रोण गोदुग्ध मिलाएँ। पुनः त्रिफला, चंदन, केशर खस, तेजपात, इलायची, कूट, अगर; तगर, मुलेठी, मजीठ इन्हें आधा आधा पल लेकर कल्क बना सविधि तैल पकाएँ, मा० म० २ मा० वातरो० चि०।

अमृतिः—सं० स्त्री० जलपात्र विशेष।

अमृतिकरणम्—सं० क्ली० विधि—अभ्रक के बराबर घी लेकर दोनों को लोहे के पात्र में पकाएँ। जब घी सूख जाय तब उतार कर अभ्रक को सब काम में वर्तें। यो० चि०।

अमृतेन्द्ररसः—सं० पु० सिद्ध पारद १ पल, त्रिफला, १ पल, शुद्ध गन्धक १२ तो०, ताम्रभस्म ४ तो० लोहभस्म ४ तो०, वच्छनाग ४ तो०, सबको मिला कर गुडूची, काला धतूरा, भाँग, त्रिकुटा, महाराष्ट्री (मरेठी), भांगरा, अदरख, ब्राह्मी, हुलहुल, जैत, काली तुलसी, धतूरा, (दूसरीवार), भांगरा, (दूसरीबार) और वच्छनाग इसके रस से क्रम से पृथक् पृथक् एक एक दिन भावना दें। पुनः मूंग प्रमाण गोलियाँ बना कर रक्खें।

गुण—सन्निपात, भयानक ज्वर और मन्दाग्नि में चित्रक और अदरख के साथ दें। यह उचित अनुपानों के साथ देने से रोग मात्र को एवं वलि और पलित को नष्ट करता है। र० यो० सा०।

अमृतेशरसः—सं० पु० पारद भस्म. अभ्रक भस्म, कान्तलौह भस्म, वच्छनाग, सोनामाखी और शिलाजीत प्रत्येक समान भाग लेकर बारीक चूर्ण करें। मात्रा—१ रत्ती। गुण—इसके सेवन से वृद्धता दूर होकर आयु की वृद्धि होती और शरीर की पुष्टि होती है। इसके ऊपर असगंध-मूल-चूर्ण १ भा०, घृत ७ भा०, गुड़ ८ भा०, पीपल १ भा० इन सबको मिलाकर मन्द मन्द अग्नि से पकाकर लड्डु बनाकर खाना उचित है। रस० यो० सा०।

अमृतेश्वररसः—सं० पु० (१) सोहागा १६ भा०, कालीमिर्च, १२ भा०, सोनामाखी, वच्छनाग शंकरकरा. प्रत्येक २ भा० मिलाकर चूर्ण करें। मात्रा—१-२ रत्ती। गुण—कफ, अजीर्ण, सन्निपात. शूल, और अनेक रोगों को नष्ट करता है। रस० यो० सा०।

(२) रससिंदूर, सतगिलोय. लोहभस्म समान भाग लेकर शहद और घृत में मिलाकर

रखें। मात्रा—१ रत्ती। गुण—यह राजयक्ष्मा को नष्ट करता है। रसे० चि० अ० १ भा० म० २ भा० प्रयोगा०।

अमृतोत्था-सं० स्त्री० (Orchis laxiflora *Linn*) सुधामूली, साबर मिश्री, साबरम् (ब) मिसरी। अत्रि०।

अमृतोत्पलम्-सं० क्ली० (१) तुत्थ (Vitriol) (२) खपरी तुत्थ, तुत्थाञ्जन, खापर। काल-खापरी-मह०। रा० नि० ध० १३।

अमृतोत्पन्ना-सं० स्त्री० गृहमक्षिका। रा० नि० ब०।

अमृतोद्भवः-सं० पु० (१) धन्वन्तरि। रत्ना०। क्ली० (२) तुत्थ, तूतिया (Blue Vitriol)। रा० नि० ब० १३। (३) खपरी तुत्थ, तुत्थाञ्जन, खापर। रा० नि०। (४) आमलकी, आमला। (Phyllanthus Emblica).

अमृतोपमम्-सं० क्ली० (१) खपरी तूत्थ तूँते-बं०। मोरचूत-मह०। वै० निघ०। (२) द्रव्य। वै० निघ०।

अमृतोपहिता-सं० स्त्री० तो (चो) प (ब) चीनी।

अमृध्रम्-सं० क्ली० शिश्न, भेद, उपस्थ। इसके तीन भेद है। यथा—(१) वर्षिष्ठम्, (२) अवान्यम् और (३) अमृध्रम्।

अमेढ़ी-बिहा० कच्चा आम।(Green mango)

अमेध्यम्-सं० क्ली०
अमेध्य- ,, संज्ञा पु० } (१) पुरीष ((Fœces excrement)। श० र०। (२) अपवित्र वस्तु। विष्टा, मल, मूत्र आदि। -वि० अपवित्र।

अमेनिया वेसिकेटरी-ले० देखो—अमेनिया वेसिकेटोरिया।

अमेनिया वेसिकेटोरिया-ले० दादमारी। इं० है० गा०।

अग्निगर्भ—सं० जंगली मेंहदी, दादमारी -हिं०, बं०। दादकूटी-पं०। वन मिरिच, अग्नि-बूटी, भूर जम्बोल—बम्ब० द०।

अमेरिकनवेलेरियन्-इं० वालछड़ अमरीकी, सुरभुण अमरीकी। (Cypripedium)

अमेरिकन वर्मसीड-इं० (Chenopodium Anthelminticum).

अमेरिकन अइवी-इं० (Vitis Quinquefolia)

अमेरिकन कुटकी-इं० इचवीड (Itch weed) इं०।

अमेरिकन कोलम्बो-इ० (Frasera carolinensis),

अमेरिकन मेंपल-इं० पॉडोफिल्लाइ रहाइजोमा (PodophylliRhizoma)-ले० हशीश-तुस्सफरा अमरीकी-अ०। म० अ० डॉ०।

अमेरिकन मेन्ना-इं० शीरखिश्त-फा०। आकाश मधु-सं०। यह पाइनस लम्बरशियानी वृक्ष से प्राप्त होता है। देखो—शीरखिश्त। म० अ० डॉ०।

अमेरिकन रोगन तारपीन-फा० देखो-रोगन तारपीन।

अमेरिकन सेण्टॉरी-इं० Sabbatia Angularis)।

अमेरिकन सारसा पैरिल्ला-इं० अरेलिया न्युडिकॉलिस (Aralia Nudicaulis)

अमेरिकन सैफ्रन-इं० कुसुम्भ, कड़। (Safflower)

अमेरिकन हेलीवार-इं० अमरीकी कुटकी। इच वीड (Itchweed) इं०।

अमेरिका का जङ्गली तम्बाकू-हिं० पु० तामकूट विशेष।

अमेरिका का लोबान-हिं० पु० लोबान विशेष।

अमेसा-बर० शरीफा सीताफल। (Anona Squamosa)

अमैथुनी विधि-हिं० स्त्री० वह सृष्टि जो बिना मैथुन के उत्पन्न होती है।
(Asexual reproduction)

अमोला-सं० स्त्री० हड़- हरीतकी। (Terminalia Chebula)

अमोघ-हिं० वि० [सं०] निष्फल न होना। वृथा वा अन्यथा नहोने वाला अव्यर्थ। सफल। सत्य साचा। फलद ता। अचूक। लक्ष्य पर पहुचने वाला खाली नजाने वाला। (Productive' Fruitful Inf..llible Effeetual)

अमोघा-सं० स्त्री० हि० सज्ञा स्त्री० (१) पाटला वृक्ष पाढल (२) का पेड़ और फूल। (Stereospermum SuaVeolens' *Dc*) भा०। (२) श्वेत पाटला (३) हरीत की हड़ (Terminalia Chebula)। (४) विडंग वायविडग। (Embelia Ribes) मे०। श्वेत पाटला। (५) पद्मभेद, कमलभेद, (Lotus Var) रा० नि० व० २३।

अमोघास्त्र रस:-सं० पु० तार्बा, गन्धक, वच्छनाग, संखिया प्रत्येक समान भाग लें। तावे से तीन गुना पारा और कस्तूरी लें। फिर सबको सम्भालू और तुलसी के रस में बारीक घोटकर तिलो के बराबर गोलियां बना छाया में सुखाएँ गुण—यह १३ सन्निपात, ८ प्रकार के ज्वरो को और विषम शीत ज्वर तथा साधारणतया सभी रोगों को नष्ट करता है। रस० यो० सा०।

अमोघौषध-हिं० स्त्री० (Specific Medicine) ऐसी औषध जो कभी निष्फल नहो अर्थात् अवश्यमेव फल देने वाली दवा, अव्यर्थ, सत्य औषध वे औषधें जो रक्त में पहुचकर रोगाणुओं को मार डालती है यदि औषध का यथा विधि प्रयोग किया जाए तो जन्तु मर जाते है और रोग घट जाता है या जाता रहता है और रोगी फिर धीरे २ अपने पहले स्वास्थ्य को प्राप्त करता है।

अमोड़ो- बिहा० अमिया हिं०।

अमोद- हि० संज्ञा पु० देखो—आमोद

अमोनम् कर्क्युमा-ले० हल्दी, हरिद्रा, पीत रस। (Turmeric) इं० है० गा०।

अ (ए) मोनिएक- इं० } उशक कास्टर
अ (ए) मोनिएकम्-इं० }

अ (ए) मोनिएकम् ऐण्ड मकरी प्लास्टर-इं० उशक व पारद प्रस्तर वा प्रलेप। देखो—उशक।

अ (ए) मोनिएकम् मिक्चर-इं० उशक मिश्रण देखो—उशक।

अमोनिएटेड आर्सिनियो साइट्रेट आंफ आयर्न इं० यह एक प्रकार का यौगिक लवण है। देखो—लौह।

अमोनिएटेड टिंक्चर ऑफ अर्गट-इं० अमूनित अर्गट आसव। देखो अर्गट।

अमोनिएटेड टिंक्चर ऑफ इण्डियन वेलेरियन-इं० देखो—जटामांसी।

अमोनिएटेड टिंक्चर ऑफ ओपियम्-इं० अमूनित अहिफेन आसव। देखो—पोस्ता।

अमोनिएटेड टिंक्चर ऑफ़ कीनीन-इ० अमोनित कीनीन आसव। देखो—सिन्कोना।

अमोनिएटेड टिंक्चर ऑफ वेलेरियन-इं० अमूनित ह्वेवर आसव। देखो—सुगन्धवाला।

अमोनिएटेड क्लोरोफाम-इं० क्लोरोफार्म अमोनिएटा

अमोनिएटेड फेनाइल एसेट अमाइड-ई० अमोनाल। देखो—एसेट एनिलाइडम्।

अमोनिएटेड मकरी-इं० अमूनित पारद देखो—पारद।

अमोनिएटेड मकरी आइण्टमेण्ट-इं० अमूनित पारदानुलेपन। देखो—पारद।

अमोनिएटेड लिनिमेंट ऑफ केम्फर-इं० अमोनित कर्पूर अभ्यञ्जन। देखो—अमोनियम।

अमोनियम्-ले० नरसार वायव्य। देखो—अमोनिया

अमोनियम आयन एलम्-ले० एल्युमीन अमोनियो

अमोनियम आयोडाइड-ले० अमोनियम नैलिद। देखो—आयोडम।

अमोनियम इक्थियोल-ले० देखो सरेशममाही।

अमोनियम इक्थियोल सल्फानेट-ले० इक्थो सल्फोल। देखो—सरेशममाही।

अमोनियमएरोमेटिकम-ले० सुवासित अमोनिया। देखो—एला, इलायची। (Cardamum)

अमोनियम एलम-ले० फिटकरी भेद। एक प्रकार की फिटकरी।

अमोनियम कार्बनित-हिं० पु० अमोनियाई कार्बोनास।

अमोनियम कार्बोनेट-ले० देखो—अमोनियाईकार्बोनास।

अमोनियम क्लोराइड-ले० नृ (नर) सार, नौसादर (Salammoniac)

अमोनियत फास्फेट-इं० नृसार स्फुरेत। देखो—अमोनियाई फाँस्फास।

अमोनियम बेञ्जाएट-इं० लोबान अम्ल। देखो—एसिडम बेञ्जोहकम्।

अमोनियम बारेट-इं० देखो—अमोनियाई बोरास।

अमोनियम ब्रोमाइडम् ले० अमोनियम ब्रह्मणिकम् देखो—ब्रोमीन।

अमोनियम सक्कीकार्बोनेट-ले० देखो- अमोनियाई कार्बोनास।

अमोनियम सक्कीनेट-ले० अमोनियम अम्बर। देखो - अम्बर।

अमोनियम सल्फो इक्थियोलेट-ले० देखो—अमोनिया।

अमोनियम सस्की कार्बोनेट-इं० देखो—अमोनियाई कार्बोनास।

अमोनियम हरिद्र-हिं० पु० नौसादर, नृसार। देखो-अमोनियम क्लोराइड।

अमोनिया-इं० नरसार वायव्य अमोनियम Ammonium-ले०। गाज़ुन्नो नौसादर गैस नौसादर -ति०।

रासायनिक संकेत सूत्र

(न उ ३) N. H_3.

लक्षण—यह एक उग्रगन्धि अदृश्य वायव्य (गैस) है, जो नवसादर (अमोनियम हरिद) और चूर्ण के मिश्रण से उत्पन्न होता है।

प्रयोग—नवसादर १ भाग और चूर्ण २ भाग लेकर खरल में डालकर चूर्ण करें। दोनों के परस्पर चूर्ण होने पर एक उग्रगंधि गैस निकलने लगता है, यही अमोनिया है।

यदि शृंग, खुर, केश, त्वचा और मांस आदि अथवा खेचरों के पक्ष दग्ध किये जाएँ तो जो विशेष दुर्गन्ध प्राप्त होती है, वह अमोनिया गैस के कारण ही है, क्योंकि यह उनका एक प्रधान अंग है, इस विधि से बहुलता से अमोनिया प्राप्त होता है। प्राचीनकाल में मृगशृंग प्रभृति अमोनिया बनाने के काम आते थे। यह गैस कई एक वानस्पतिक रसों यथा इक्षु रस आदि में और किसी भाँति वायु में भी विद्यमान होता है।

यद्यपि अमोनियम कोई धातु विशेष नहीं है; केवल नत्रजन और उदजन के परमाणुओं का समूह है, तथापि इसका अणु (न उ ३) धातुवत् काम करता है, और अम्लोंसे मिलकर लवण बनाता है, उसका सुप्रसिद्ध लवण नवसादर (अमोनियम हरिद) है। यह अमोनियम और लवणाम्ल के संयोग से बनता है। अमोनियम के कर्बनित आदि लवण भी होते हैं जो बहुत उपयोगी हैं।

गुण—(क) अमोनिया एक अदृश्य, उग्र, परन्तु रोचक गंधयुक्त गैस है जो वर्ण रहित, स्वच्छ तथा नमनीय होता है, स्वाद तीव्रदाहक है।

(ख) यह अत्यन्त जल विलेय है (मद्यसार में भी विलीन हो जाता है), परन्तु जल विलीन होकर यह स्थिर नहीं रहता। अस्तु, जल विलीन अमोनिया उबालने पर वा बोतल खुली रखने पर जल से निकल जाता है।

(ग) खरल, जिसमें नवसादर और चूर्ण को मिलाया गया हो, उसके समीप यदि आर्द्र रक्त लिटमस पत्र लाएँ, तो वह नीला हो जाता है अतः यह गैस क्षारीय है।

(घ) उसी खरल के पास यदि उदहरिकाम्ल में डुबोकर एक काचदण्डी लाएं, श्वेत धूम्र निकलते हैं।

(ङ) इस गैस का जलविलिथन क्षारों के समान गुण रखता है। रक्त लिटमस को नीला और अम्लों को उदासीन कर देता है। यह क्षार ऐसा तीव्र और दाहक नहीं है, जैसा कि दाहक सोडा या पोटास। अतः इसकी संज्ञा मृदुक्षार है।

(ब) इसका आपेक्षिक गुरुत्व ·५८६ है।

यदि इस गैस को बहुत सी हवा के साथ मिलाकर सुंघाया जाय तो भी यह बहुत क्षोभक प्रभाव करता है और यदि इसको शुद्ध रूप में सूंघा जाय तब तो तत्काल दम घुटने लगता है।

संज्ञा-निर्णय—प्राचीन मिश्र, यूनान तथा रोम देश निवासियों के एमन नामक देवता का मन्दिर, जिनका वर्णन एमोनाइकम (उशक) के संज्ञा-निर्णायक-नोट शीर्षक के अन्तर्गत होगा, लेबिया (शाम) के जिस जिला में था, उस जिला का नाम उक्त देवता के नाम पर रखा गया था। उस जिला का नाम अ(ए)मोनिया था, चूंकि कृत्रिम नवसादर सर्व प्रथम उसी जगह बनाया गया था। अतएव नवसादर का नाम सल एमोनिएक (Sal ammoniac) अमोनीयिक लवण या अमोनिया (स्थान) का नमक है और चूंकि यह गैस सल एमोनिएक अर्थात् नवसादर से बनता है। अस्तु, इसी सम्बन्ध से उसका नाम भी अ(ए)मोनिया रखा गया।

औषध-निर्माण—(१) लाइकर अमोनी फॉर्टिस Liquor Ammoniæ Fortis-ले०। स्ट्रॉङ्ग सोल्युशन आफ अमोनिया Strong Solution of Ammonia-इ०। सबल अमोनिया द्रव, तीव्र अमोनिया विलयन हिं०। क़वी साइल अमोनिया-उ०।

(आफिसल *Official*)

संकेत सूत्र (न उ$_3$) NH_3

निर्माण विधि—अमोनियम क्लोराइड (अमोनियम हरिद्र, नवसादर) को शांत चूर्ण मिला कर उत्ताप देने से जो अमोनिया गैस प्रादुर्भूत हो उसको परिस्रुत जल में विलीन कर लें।

गुण—यह एक अत्यन्त उग्रगंधि, वर्ण रहित एवं अति क्षारीय द्रव होता है जिसका आपेक्षिक गुरुत्व ·८६१ होता है इसमें ३२.५०/० (भार में) अमोनिया वायव्य पाया जाता है।

प्रभाव—बेसिकेण्ट (क्षोस्काजनक)। इस का आभ्यन्तर प्रयोग न करना चाहिए।

यह पड़ता है—लिनिमेण्टम कैम्फोरी अमोनिएटम, लायकर एमोनी, स्पिरिटस एमोनी एरोमेटिकस, स्पिरिटस एमोनी; फेटिडस और टिंक्चर क्वाऐसाई एमोनिएटा में तथा अमोनियाई बेन्जोआस, एमोनियाई ब्रोमाइडम, एमोनियाई, फास्फॉस और निम्नांकित आँफिसल योगों के निर्माण में आता है।

आँफिसल प्रिपेयरेशञ्ज

(*Official Preparations*)

(२) लाइकर एमोनी—Liquor Ammoniæ ले०। सोल्युसन आँफ अमोनिया Solution of Ammonia इ०। अमोनिया घोल-हिं०। सय्याल एमोनिया-उ०।

संकेत सूत्र (न उ$_3$) NH_3

निर्माण-विधि—स्ट्राँग सोल्युसन आँफ अमोनिया १ भाग परिस्रुत जल २ भाग, दोनों को मिला लें।

गुण—स्ट्राँग सोल्युशन आँफ अमोनिया के सदृश, परन्तु तीक्ष्णता में यह उससे हीन होता है इसका आपेक्षिक गुरुत्व ·९२९ होता है और इस में १००/० (भार में) एमोनिया गैस पाया जाता है मात्रा—१० से २० बूंद।

नोट—इसको खूब डायल्युट करके अर्थात् जल मिश्रित कर देना चाहिए।

प्रभाव—स्टिम्युलेण्ट (उत्तेजक) और रूबीफेशेण्ट (वर्ण्य वा आरुण्यकर)।

यह काम आता है—लिनिमेण्टम अमोनी, लिनिमेण्टम हाइड्रार्जिराई, टिंकचर किनीनी एमोनिएटा, टिंक्चर अर्गोटी अमोनिएटा, टिंक्चर बेलेरिएनी अमोनिएटा और टिंक्चर ओपियाई अमोनिएटा तथा निम्नांकित योग के बनाने में:—

(३) लिनिमेण्टम अमोनी—Linimentum Ammoniæ-ले०। लिनिमेण्ट आफ अमोनिया Liniment of Ammonia' हार्टशार्न लिनिमेण्ट Hartshorn Liniment इ०। अमोनिया अभ्यंग, अमोनिया उद्वर्त्तन-हिं०। तमरीख अमोनियाई, तम्रीख क़र्नुल्ईल-ति०

नोट—प्राचीन कालमें हार्टशार्न (मृगशृंग बारहसिंघा) अमोनिया बनाने के काम आता है अस्तु, लिनिमेण्ट आफ अमोनिया की दूसरी अंग्रेजी संज्ञा हार्टशार्न लिनिमेण्ट अर्थात् मृगशृंगा भ्यंग भी है ।

निर्माण विधि—लाइकर (सोल्युसन) आफ अमोनिया १ आउंस, आमंड आयल (वाताद तैल) १ आउंस, और आलिव आइल (जैतून तेल) २ भाग इनको भली प्रकार मिला लें। प्रभाव—रूबीफेशेण्ट(वर्ण्य वा आरुण्य कारक)

लिनिमेण्टम कम्फोरी एमोनिएटम—Linimentum camphoræ ammoniatum–ले० एमोनिएटेड लिनिमेण्ट आंफ कैम्फर Ammoniated liniment of camphor–इं० अमोनिया कर्पूराभ्यंग हिं०। तमरीख काफूरी अमोनियाई रोगन मालिश काफूरी एमोनियाई–ति० ।

निर्माण विधि—स्ट्रांग सौल्युसन आफ अमोनिया ५ फ्लुइड आउंस, कैम्फर २॥ आउंस आइल आंफ लेवेण्डर १ फ्लुइड ड्राम, ऐलकुहाल (९००/०) आवश्यकतानुसार। कैम्फर और आइल आफ लेवेण्डर को १२ फ्लुइड आउंस एलकुहाल (मद्यसार) में विलीन कर ले फिर उसमें थोड़ा २ स्ट्रांग सोल्युसन आंफ अमोनिया मिलाते और हिलातेजाएँ । पुनः इतना एलकुहाल (मद्यसार) मिलादें जिसमें कुल द्रव्य पूरा २० फ्लुइड आउंस हो जाए ।

(५) लिनिमेण्ट हाइड्रार्जिराई Linimentum Hydrargyri–ले० । लिनिमेण्ट आफ मर्करी Liniment of mercury –इं० । पारदाभ्यंग–हिं० । तमरीख वा मालिश सीमाब–ति० । देखो—पारद ।

(६) स्पिरिटस अमोनी ऐरोमैटिकस Spiritus ammoniæ aromaticus –ले० । एरोमैटिक स्पिरिट आफ अमोनिया Aromatic spirit of ammonia –इ० । सुवासित अमोनिया सुरा । देखो—अमोनिया कार्बोनास के योग ।

(७) स्पिरिटस अमोनी फेटिडस Spiritus ammoniæ fetidus–ले० । फेटिड स्पिरिट आफ अमोनिया Fetid spirit of ammonia–इ० । पूतिगंध अमोनिया सुरा–हिं० । रूह नवशादर मुन्तिन, रूह नवशादर बदबू–ति० ।

निर्माण-विधि—स्ट्राँग सोल्युशन आफ अमोनिया २ फ्लुइड आउंस, ऐसाफेटिडा (हिंगु) १॥ आउंस और ऐलकुहाल (९० प्रतिशत) आवश्यकतानुसार । ऐसाफेटिडा (हिंगु) के टुकड़े करके १५ फ्लुइड आउंस ऐलकुहाल में २४ घंटे तक भिगोकर इसका स्रवण करें । पुनः इसमें स्ट्राँग सोल्युशन आफ अमोनिया और इतना एलकुहाल और योजित करें, जिसमें सम्पूर्ण औषध एक पाइंट हो जाय ।

मात्रा—२० से ४० बूंद (= १·२ से १·८ क्युविक सेन्टीमीटर) जब एक बार देना हो और ६० से १० बूंद (३·६ से ४·८१) घन शतांश मीटर) जब एक ही बार देना हो । इसको अच्छी तरह जल मिश्रित कर सेवन कराएँ ।

प्रभाव—उत्तेजक (Stimulant) और उद्वेष्टनहर (Antispasmodic)

नॉट ऑफ़िशल योग
(*Not official preparations*)

(१) लोशियो क्रिनेलिस Lotio crinalis–ले० । लोमजनक विलयन–हिं० । अर्क मू अफ्जा–ति० । योग—ऑलियम एमिग्डली (वाताद तैल) १ भाग, लाइकर अमोनी फॉर्टिस १ भाग, स्पिरिटस रोजमेराइनी ४ भाग, एक्वामेलिस २ भाग, सब औषधियों को मिलालें। बालों को बढ़ाने के लिये इस अर्क का प्रयोग करते हैं ।

(२) टिंकचूरा अमोनिया कम्पोजिटा Tunctura ammoniæ compositæ ओडीलूस Eau-de-Luce–डॉ० । यौगिक अमोनियासव, सर्पागदर्क–हिं० । तरुफीन अमोनिया मुरक्कब, अर्क दाफिमू मुरक्कब–हिं० । योग–मस्टिक (मस्तगी) २ ड्राम,

एल कुहोल (६००/०) ६ ड्राम, ओलियम लेवण्डयुली १४ बूंद, लाइकर अमोनी फॉर्टिस २० फ्लुइड आउंस। समग्र औषध को परस्पर मिलाकर साँप के काटे पर लगाया करते हैं।

अमोनिया की फार्माकोलौजी अर्थात् प्रभाव

(बाह्य प्रभाव)

सोल्यूशन ओफ अमोनिया (अमोनिया विलयन) को जब त्वचा पर लगाया जाता है तब यह उसमें अंत होने वाले तन्तुओं एवं रक्त वाहिनियों को उत्तेजना प्रदान करता है, जिससे उक्त स्थल पर ऊष्मा एवं राग का अनुभव होता है। यदि अमोनिया के तीक्ष्ण विलयन को त्वचा के किसी भाग पर लगाकर उसको वाष्पीभूत न होने दें तो यहां पर फोस्का उत्पन्न हो जाता है। अतएव अमोनिया रूबीफेशेण्ट (आरुण्यकारक) और वेसिकेण्ट (फोस्कजनक) है।

नासिका और वायुप्रणाली—नासिका तथा वायु प्रणाली की श्लेष्मिक कला पर अमोनिया वाष्प का सबल क्षोभक एवं उत्तेजक प्रभाव होता है, जिससे छींके आने लगती हैं। कञ्जङ्क्टाइह्वा (चक्षु के ऊपरी परत) पर भी इसका क्षोभक प्रभाव होता है, जिससे नेत्र द्वारा अश्रुस्राव होने लगता है। नासिका की संज्ञावहा नाड़ियों को उत्तेजित करने के कारण अमोनिया परावर्तित रूप से रुधिराभिसरण को उत्तेजना प्रदान करता और नाड़ी की गति को तीव्र करता है। यदि अमोनिया को देर तक सूंघा जाय अथवा वाष्प अधिक तीव्र हो तो नासिका एवं वायु प्रणालियों में क्षोभ उत्पन्न हो जाता है। परावर्तित क्रिया द्वारा यह सार्वांगिक रक्तभार को वृद्धि करता और आघात जन्य मूर्च्छा के लिए हितकारक है।

आन्तरिक प्रभाव

आमाशय—आमाशयमें पहुँचकर अमोनिया तत्क्षण परावर्तित रूप से रक्ताभिसरण तथा हृदय को उत्तेजित करता है अर्थात् शोणित सञ्चालन और हृदय की गति को चपल करता है। क्योंकि इनको तीव्र करने वाले सौषुम्न वातकेन्द्र पर इसका प्रभाव पड़ता है। रक्त में अभिशोषित होने के पश्चात् इसका यह प्रभाव जारी रहता है, और श्वासोच्छ्वास तीव्र हो जाता है

अन्य क्षारीय औषधों के समान यदि आहार से पूर्व अमोनिया का प्रयोग किया जाय तो यह आमाशयिक रस के स्राव को वृद्धि करता है। और यदि आहार पश्चात् दिया जाए तो यह आमाशयिक रस की अम्लता को उदासीन कर देता है। अर्थात् उसके प्रभाव को नष्ट कर देता है। यह आंत्रस्थ कृमिवत् आकुञ्चन को भी तीव्र करता है और इससे आमाशय में उष्मा का बोध होता है। अतएव अमोनिया पित्तघ्न (ऐण्टेसिड) आमोशयोत्तेजक और वायु निस्सारक आध्मानहर) है। अधिक मात्रा में देने से यह आमाशयांत्र क्षोभक है।

शोणित—अमोनिया रक्तवारि (प्लाज्मा) के क्षारत्व को किसी प्रकार अधिक करता है। अनुमान किया जाता है कि थाम्बोसिस (रक्तवाहिनियों में रक्त का थक्का बन जाना) रोग में यह रक्त के थक्का बनाने की शक्ति को हीन करता है और जो क्लोट (खून का थक्का) पूर्व से बन चुका है उसको विलीन कर देता है।

हृदय—अमोनिया के प्रभाव से हृदय एवं नाड़ी की गति तीव्र हो जाती है और रक्तभार बढ़ जाता है। कदाचित् यह प्रभाव हृदय पर कुछ तो परावर्तित रूप से होता है, परन्तु अधिकतर इस हेतु कि अमोनिया रक्त में अभिशोषित होने के पश्चात् हृदय की गति को तीव्र करने-वाले सौषुम्न-वातकेन्द्रों को उत्तेजना प्रदान करता है।

फुफ्फुस—रक्त में अभिशोषित होने के पश्चात् श्वासोच्छ्वासकेन्द्र पर अमोनिया का सरलोत्तेजक प्रभाव पड़ने से श्वासोच्छ्वास की गति तीव्र हो जाती है। अमोनिया किसी प्रकार वायु प्रणालीस्थ ग्रंथियों के मार्ग शरीर से विसर्जित होता है। अस्तु, इसके उपयोग से उन ग्रन्थियों का स्राव अधिक हो जाता है। अतः रासबैक (Rossbach) ने कतिपय सजीव

प्राणियों की वायुप्राणालीय श्लैष्मिक कला पर अमोनिया का मन्द विलयन लगाकर इस बात की परीक्षा की है कि इसके लगाने से वहां पर रक्त घनीभूत होकर रक्तस्राव बढ़ जाता है।

वात-मंडल—अमोनिया सार्वांगोत्तेजक है। क्योंकि यह श्वासोच्छ्वासकेन्द्र और हृदयाशुकारी सौषुम्न-वातकेन्द्रों को उत्तेजित करता हैं। परन्तु मस्तिष्क पर इसका कुछ प्रभाव नहीं होता और न वात तन्तुओं पर कोई असर पड़ता है। जब इसको स्थानिक रूप से लगाते हैं, तब उस स्थल पर कुलकुलाहट और दाह प्रतीत होता है।

जीवधारियों को जब विषैली अर्थात अधिक मात्रा में अमोनिया दिया जाता है, तब प्रायः आक्षेप (Convulsion) होने लगता है। इसका कारण यह है कि अमोनिया सुषुम्ना को गत्युत्पादक सेलों पर उत्तेजक प्रभाव करता है।

वृक्क—अमोनिया और इसके लवण शोणित तथा शारीरिक धातुओं (तन्तुओं) में प्रविष्ट होकर वियुक्त व पाचित होजाते (सड़जाते) है। कदाचित् यकृत् में इससे भी अधिकतर परिवर्तन उपस्थित होते हैं, जिनका अवश्यम्भावी परिणाम यह होता है कि मूत्र (कारुरा) में यूरिया, युरिकाम्ल और शोरकम्ल की मात्रा बढ़ जाती है। अस्तु, इस बात को भली भांति स्मरण रखनी चाहिये कि अमोनिया मूत्र की अम्लता को बढ़ाता है।

उत्सर्ग—शरीर से श्वासोच्छ्वास, वायु-प्रणालीस्थ स्राव, मूत्र व स्वेद द्वारा अमोनिया उत्सर्जित होता है।

अमोनिया द्वारा विषाक्तता

यदि अमोनिया के तीव्र विलयन की एक बड़ी मात्रा पान करली जाय तो स्वरयन्त्र (Glottis) के आक्षेपग्रस्त होने से श्वासावरोध होकर किंचित् काल में ही मृत्यु उपस्थित होसकती है। अन्यथा भक्षक वा दाहक क्षारीय विषों यथा दाहक सोडा (Caustic soda) या पोटास प्रभृति के समान लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

अगद—जो अन्य एलकेलीज अर्थात् क्षारीय विषों के अगद हैं, वे ही इसके भी हैं। देखो—पोटासः कॉस्टिका।

अमोनिया के थेराप्युटिक्स
अर्थात्
औषधीय उपयोग
(बहिःप्रयोग)

स्थानिक वातन्तु एवं रक्तवाहिन्योत्तेजक रूप से स्टिफ जाइण्ट्स (विकृत कठोर सन्धियों) पर और क्रानिक रयुमैटिज्म (पुरातन सन्धिवात) की विभिन्न दशाओं में लिनिमेण्ट आफ अमोनिया का अभ्यंग करते हैं। आंकाइटिस (कास), न्युमोनिया फुफ्फुसौप और प्ल्युरिसी (पार्श्व शूल) में स्थानिक उग्रता साधक (Counter irritant) रूप से भी इसका उद्वर्तन करें।

जिन रोगों में फोस्काजनन के लिये कैन्थेरिडीज (तेलिनी मक्खी) का उपयोग वर्जित एवं अनुचित है, उनमें उक्त अभिप्राय के लिये अमोनिया का प्रयोग करते हैं। अस्तु, जितना बड़ा फोला डालना हो उससे किंचित् बड़ा लिंट का एक टुकड़ा काटकर और उसको स्ट्रांग सोल्युशन आफ अमोनिया में क्लेदित कर जिस स्थल पर फोस्का उठाना हो उसे वहाँ पर रखकर ऊपर से वांच ग्लास (जेब घड़ी के शीशे) से आवरित कर दें, किंचित् काल में वहां पर फोला पड़ जायगा। अमोनिया प्रायः विषैले कीड़ों के विष को प्रभाव शून्य कर देता है। अस्तु, वृश्चिक, भिड़ ततैया और हाउस इत्यादि के दंश-स्थल पर (दंश अर्थात् डंक को निकाल कर), कनखजूरे (गोजर) प्रभृति के काटे हुये स्थान पर और रतेल (मकड़, आरण्य मकड़) या मकड़ी मले हुये स्थान पर अमोनिया का निर्बल सोल्यूशन लगाने से वेदना एवं शोथ कम हो जाता है। अल्पविष सर्प के दंशित स्थान पर कम्पाउण्ड टिंकचर आफ अमोनिया (ओ-डी-लूस) का त्वक्स्थ अन्तःक्षेप करना लाभदायक सिद्ध होता है। लोमवर्द्धन हेतु लोशियो क्रिनेलिस (रोम वर्द्धनार्थ) एक अत्युत्तम औषध है।

मूर्च्छित व्यक्ति को अमोनिया सुंघाने से

तत्क्षण होश आ जाता है। क्यों कि इसके घ्राण करने से परावर्त्तितरूप से श्वासोच्छ्वास तथा हृदय की गति तीव्र हो जाती है, अस्तु मूर्च्छा, आघात वा क्षोभ, नि। (जन्य विसंज्ञता और निद्राजनक (वा अवसन्नताजनक) विषों यथा अहिफेन प्राप्ति में रोगी की मूर्च्छा निवारणार्थ अमोनिया सुंघाया करते हैं।

नोट—विभिन्न प्रकार के सूंघने के चूर्ण वा लखलखे (Smelling salts) जिनका प्रधान अवयव अमोनिया होता है, वने बनाये खुले मुख के हरित वर्ण आदि की बन्द शीशियों में अँगरेजी औषध-विक्रेताओं की दूकानों में बिका करते हैं।

आन्तरिक प्रयोग

अन्य क्षारीय औषधों के समान अमोनिया को भी अम्लाजीर्ण (एसिड डिस्पेप्सिया) में दे सकते हैं। गैस्ट्रिक इन्टेस्टाइनल क्रैम्प्स (आमाशयांत्र के प्रावाहकीय आक्षेपक वेदनाओं) में स्पिरिट ए (अ) मोनिया ऐरोमैटिक एक अत्युत्तम औषध है। बालक के उदराध्मान में सोडा और डिल वाटर (सोआ के अर्क) के साथ इसके कुछ बूंद देने से सामान्यतः लाभ हो जाता है। जेनरल डिफ्युजिब्ल स्टिम्युलेण्ट (सर्वांग व्याप्तोत्तेजक) रूप से सिंकोनी (मूर्च्छा), शॉक (क्षोभ) फेंण्टङ्ग (विसंज्ञता) में तथा फेब्राइल डिजीजेज (ज्वरयुक्त व्याधियां), न्युमोनिया (फुफ्फुसौष) और थाइसिस (उरःक्षत) इत्यादि में जब रोगी की शक्तियाँ निर्बल हो जाती हैं, उस समय अमोनिया के उपयोग में बहुत लाभ होता है।

कास तथा प्रातिश्यायिक फुफ्फुसौष (कैटारल न्युमोनिया) में अमोनिया सान्द्र एवं पिच्छिल श्लेष्मा को द्रवीभूत एवं मृदु करता है। पर इस हेतु अमोनियम कार्बोनेट का उपयोग श्रेष्ठतर होता है। नैलिका द्वारा विषाक्तता अर्थात् आयोडिज्म (नैलिका या उसके यौगिकों से पुरातन विषाक्तता के हो जाने) को अमोनिया रोकता है। अस्तु, जब आयोडाइड्ज को अधिक मात्रा में देना होता है तब इसको उनके साथ मिलाकर देते हैं।

अमोनिया असारुनी—हिं० पु० देखो—जटामांसी।

अमोनियाई आयोडायडम्—ले० नैलिद अमोनिया देखो—आयोडम्।

अमोनियाई एम्बेलास—ले० देखो—वायविडङ्ग।

अमोनियाई कार्बोजोटास—ले० देखो—अमोनियाई सिक्रास।

अमोनियाई कार्बोनास—ले० अमोनियम कार्बनित कज्जलित नरसार—हिं०। अमोनियम कार्बोनेट Ammonium carbonate अमोनियम सस्की कार्बोनेट Ammoniom Sesqi carbonate-इ०। कर्बूनातुत्रौसादर, अमोनिया मुरक्कब व (सेहचन्द) कार्बन।

आफिशल (*Offical*)

निर्माण विधि—क्लोराइड आफ अमोनियम (नवसादर) वा सल्फेट आफ अमोनियम और कार्बोनेट आफ कैल्सियम (चूर्ण कज्जलेत अर्थात् शुद्ध खटिका) को परस्पर संयोजित कर बारबार ऊर्ध्वपातित करने से कार्बोनेट आफ अमोनियम प्राप्त होता है। इसमें अमोनियम हाइड्रोजन कार्बोनेट ($NH_4 NCO_3$) और अमोनियम कार्बोनेट ($NH_4 NH_2 CO$) सम्मिलित पाये जाते हैं; संकेत सूत्र $N_3 H_{11} C_2 O_5$ ($NH_4 HCO_3 + NH_4 NH_2 CO_2$)

नोट—उम्दतुल्मुहताज के लेखक के मत से हार्टशार्न अर्थात् मृगशृङ्ग का उड्डनशील लवण भी कज्जलित नरसार (कर्बूनातुत्रौसादर) ही होता है। किन्तु, उसमें गन्धमय तैल प्रभृति मिलित होते हैं।

लक्षण—अमोनियम कार्बनित एक श्वेत पार्थिव द्रव्य है, जो वायु में खुला रखने से वा सूंघने से अमोनिया और कार्बन द्रवाम्लजिद (कार्बन द्विओषित) गैस देता हुआ स्वयं नष्ट हो जाता है। इसके अर्द्ध स्वच्छ स्फटिकीय उड्डनशील उग्रगन्धि के बड़े बड़े टुकड़े होते हैं। वायु में

खुला रखने पर उन पर श्वेत चूर्ण जम जाता है इसकी प्रतिक्रिया क्षारीय होती है।

परीक्षा—अमोनियम की परीक्षा के लिये सदिग्ध लवण को चूर्ण (Lime) के साथ मिलाकर उष्ण करें और सूंघें। यदि अमोनिया की उग्र गन्ध निकले, तो समझें, कि यह लवण अमोनिया का कोई योग है।

विलेयता—यह १ भाग ४ भाग शीतल जल में विलीन हो जाता है।

मिश्रण—इसमें सल्फेट्स (गन्धित) और क्लोराइड्स (हरिद) का मिश्रण हुआ करता है,

उदासीन जनक मात्रा—२० ग्रेन अमोनियम कार्बोनेट २६॥। ग्रेन, साइट्रिक एसिड को और २८॥। ग्रेन टार्टरिक एसिड तथा १३ ग्रेन अर्द्ध आउस निम्बुस्वरस को न्यूटल अर्थात् उदासीन कर देता है।

संयोग-विरुद्ध—अम्ल, अम्लीय लवण (एसिड साल्ट्स), चूर्णोदक (लाइम वाटर) लौह के लवण (आयर्न साल्ट्स), क्षारीय मृत्तिकाएँ (अलकलाइन अर्थ्स) और क्षारोद (अलकलाइट्स) को अमोनियम कार्बोनेट के साथ नहीं मिलाना चाहिये।

औषध-निर्माण-संकेत—औषध में योजित करने से पूर्व अमोनिया कार्ब के टुकड़े पर जो श्वेत चूर्ण लगा होता है उसको खुरच डालना चाहिये।

प्रभाव—व्याप्तोत्तेजक, श्लेष्मानिस्सारक, वामक और अम्लहर (एण्टेसिड)।

मात्रा—३ से १० ग्रेन (·२० से ·६५) ग्राम उत्तेजक व कफ निस्सारक रूप से और ३० ग्रैन (२ ग्राम) वामक रूप से।

यह लाइकर अमोनियाई एसिटेटिस, लाइकर अमोनियाई साइट्रेटिस, स्पिरिटस अमोनी ऐरोमैटिकस और विज्मथ कार्ब तथा निम्नांकित योगों के निर्माण में काम आता है:—

(१) ऑफिशल प्रिपेयरेशञ्ज (योग)
(*Official Preparations*)

(१) लाइकर अमोनियाई एसिटेटिस Liquor ammonii acetatis-ले०। सोल्युशन ऑफ अमोनियम एसिटेट Solution of ammonium acetate स्प्रिरिट ऑफ मिण्डीरर Spirit of Minderer-इ०, शुक्रित अमोनियम द्रव हिं०। सय्याल खुल्लातुन्नौशादर, अर्क अमोनिया सिर्कादार, शराब मिंदरीर।

रासायनिक सूत्र

(न उ$_{४}$ क$_{२}$ उ$_{३}$ ऊ$_{२}$)

$NH_4C_2H_3O_2$

नोट—सन् १६२२ ई० में सर्वप्रथम मिण्डीरर महोदय ने; जो ड्यूक ऑफ बेवारियाके सर्वोत्कृष्ट चिकित्सक थे इस औषध का निर्माण किया था। अस्तु इसे इन्ही के नाम से अभिहित किया गया।

निर्माण विधि—अमोनियम कार्बोनेट १ आऊस, एसिटिक एसिड (शुक्राम्ल) परिस्रुत वारि प्रत्येक आवश्यकतानुसार। अमोनियम कार्बोनेट को दस गुने परिस्रुत जल में विलीनकर के फिर उसमें एसिटिक एसिड (शुक्राम्ल) सम्मिलित कर उसे न्युट्रल (उदासीन) कर लें बाद को उसमें इतना परिस्रुत जल और मिलाएँ जिसमें सम्पूर्ण द्रव का द्रव्यमान पूरा एक पाइंट हो जाय। इसमें लगभग ६॥ प्रतिशत अमोनिया होता है।

मात्रा—२ से ६ फ्लुइड ड्राम=(७-१ से २१-३ घन शतांश मीटर)।

प्रभाव—मूत्रल और स्वेदक।

(२) लाइकर अमोनिया साइट्रेटिस Liquor ammonia citratis-ले०। सोल्युसन ऑफ अमोनिम साइट्रेट Solution of ammonium citrate इं० निम्बुकित अमोनिया द्रव—हिं० सय्याल सत्रातुन्नौसादर अर्क अमोनिया लेमूनी—ति०

निर्माण विधि—अमोनियम कार्बोनेट १॥। आउंस वा आवश्यकतानुसार, साइट्रिक एसिड (निम्बुकाम्ल) २॥ आउंस, परिस्रुत जल

आवश्यकतानुसार । साइट्रिक एसिड (निम्बुकाम्ल) को पाँचगुने परिस्रुत जल में विलीन करके फिर उसमें अमोनियम कार्बोनेट मिलाकर उसको उदासीन (न्युट्रल) कर लें और फिर उसमें इतना और परिस्रुत जल मिला दें जिसमें कुल द्रव एक पाइंट हो जाय इसमें लगभग १६ प्रतिशत अमोनिया होता है।

रासायनिक सूत्र

$(NH_4)_3\ C_6\ H_5\ O_7$

$(NH_4)_3\ C_6\ H_5\ O_7$

प्रभाव—मूत्रल। मात्रा—२ से ६ फ्लुइड ड्राम (७.१ से २१.३ घन शतांशम टर)।

नोट—इसको सदा हरित वर्ण के बोतलों में रखना चाहिये।

(३) स्पिरिटस अमोनी ऐरोमैटिकस Spiritus ammoniæ aromaticus—ले०। ऐरोमैटिक स्पिरिट आफ अमोनिया Aromatic spirit of ammonia, स्पिरिट आफ सैल वालेटाइल Spirie of sal Volatile इं० सुवासित अमोनिया सुरा—हिं० रूह नौसादर तय्यब, रूह नौस दर मुअत्तर, रूह मिल्हुत्तय्यार ति०।

रासायनिक सूत्र $(NH_3)NH_3$

निर्माण विधि—अमोनियम कार्बोनेट ४ आउंस, स्ट्रौंग सोल्युशन आफ अमोनिया ८ आउंस आइल आफ नटमेग (जातीफल तेल) ४॥ फ्लुइड ड्राम, आइल आफ लेमन (निम्बुक तैल) ६॥ फ्लुइड ड्राम, ऐलकुहाँल वा मद्यसार (६० प्रतिशत ६ पाइंट, परिस्रुत जल १ पाइंट। प्रथम आइल आफ नटमेग और आयल आफ लेमन को ऐलकुहाँल और परिस्रुत जल के साथ योजित कर सात पाइंट द्रव स्रावित करके पृथक कर करलें। फिर १ आउंस द्रव और स्रावित करें। तथा इस में स्ट्रांग सोल्युसन आफ अमोनिया और अमोनियम कार्बोनेट को योजित कर इतना उत्ताप दें जिसमें वे विलीन हो जांय। अब इसमें पूर्व स्रावित सात पाइंट अर्क मिला लें। इसका अपेक्षिक भार .८१ होना चाहिये। यह लगभग वर्ण रहित होता है

मात्रा—जब बार बार देना हो तब २० से ४० बूंद और जब एक ही बार देना हो तब ६० से १२० बूंद तक।

नोट—योग में स्पिरिट अमोनी एरोमैटिक के साथ सिरूपस सिम्पी (वनपलाण्डु प्रपानक अर्थात् शर्बत) कदापि नहीं लिखना चाहिये।

यह मिस्चुरा (मिश्रण) सेन्ना० को० में० पढ़ता है।

नाँट आफ़िशल योग

(*Not official preparations*)

(१) लिङ्क्टस अमोनी कम्पोजिटस Linctus ammoniæ compositus-ले० यौगिक अमोनियावलेह—हिं०। लऊक अमोनिया मुरक्कब—ति०।

योग—अमोनियम कार्बोनेट $\frac{1}{6}$ ग्रेन, इपिके काइना वाइन २ बूंद, टिंक्चर आफ स्क्वील ५ बूंद, एसेंस आफ एनिसाई १ बूंद, म्युसिलेज (लुआब) अकेसिया २० बूंद, जल एक आउंस पर्यन्त। यह एक मात्रा है। (रायल चेष्ट)

(२) अमोनियाईबाईकार्बनास ammnii bicarbonas—ले०। अमोनियम कार्बोनेट की अपेक्षा इसका स्वाद उत्तम होता है और यह कम दाहक (कॉस्टिक) होता है एफर्वेसिंग ड्राफ्टस (उफाणयुक्त घूँट) हेतु यह अधिक उपयोगी है।

(३) अमोनियाई फ्लोराइडम् ammonii fluoridum—ले०। इसके ४ ग्रेन प्रति आउंस वाले विचयन को ५ से ३० बूंदकी मात्रा में विवर्द्धित प्लीहा एवं गलगण्ड प्रभृति में दिया करते हैं।

(४) अमोनियाई पिक्रास ammonii picras—ले०। इसके पीत वर्ण के छोटे २ पत्र होते हैं जो जल में विलीन हो जाते हैं। इसको शीत ज्वर और मलेरिया ज्वरों में देते हैं। मात्रा—$\frac{1}{2}$ से १ $\frac{1}{2}$ ग्रेन तक दिन रात में ४–५ बार।

(५) अमानियाई टार्ट्रास ammonii tartras–ले०। कफ निस्सारक रूप से इसको ५ से ३० ग्रेन तक की मात्रा में देते हैं।

(६) स्मेलिंग साल्ट Smeiling-salt –ले०। आघ्राण लवण, सूंघने का चूर्ण हिं०। मिल्हुश्शम, लखलखा–अ०। ये कई प्रकार के होते हैं। इसका एक श्रेष्टतर योग निम्न है।

योग—अमोनियम क्लोराइड (नवसादर) १॥ आउंस पोटाशियम कार्बोनेट १ आउंस ६ ड्राम, कैम्फर (कपूर) १ ड्राम, अमोनियम कार्बोनेट ३ ड्राम, आंयल आंफ क्लव्ज (लवंग तेल) १० बूंद, आयल ऑफ बर्गेमांट १० बूंद, आयल ऑफ स्पियरमिंट ४ बूंद, शुष्क औषध का बारीक चूर्ण का उसमें तेल मिला दें।

(७) पिक मी अप Pick me up इ०

योग—स्पिरिटस अमोनी ऐरोमैटिकस आधा ड्राम, स्पिरिटस क्लोरोफार्माई आधा ड्राम, टिंकचूरा जन्सियाई कम्पाजिटस १ ड्राम टिंकचूरा कार्डिमोमाई कम्पाजिटस २ ड्राम, सरूपस २ ड्राम, जल २ आउंस पर्यन्त। सब औषधों को मिला लें। यह एक मात्रा आषध है।

प्रभाव तथा उपयोग—

(बाह्य) यद्यपि लाइकर अमोनिया के समान ही इसके प्रभाव होतेहैं, तथापि अमोनिया कार्बोनेट का बहिर प्रयोग नहीं होता। परावर्तित क्रिया के लिये स्पिरिटस अमोनिया ऐरोमैटिक सुँघाई जाती है।

(आन्तरिक) अमोनियम, कार्बोनेट में वे सभी प्रभाव वर्तमान होते है जो लाइकर अमोनिया में है। इसके अतिरिक्त यह सशक्त सोत्तेज्य कफनिस्सारक (लगभग ८ ग्रेन की मात्रा में भली प्रकार जल मिश्रित कर देने से) है। अतएव कास, प्रातिश्यायिक फुफ्फुसौष में यह एक अत्युत्तम औषध है। अमोनियम कार्बोनेट ३० ग्रेन का मात्रा में वामक है, किन्तु इस प्रयोजन हेतु क्वचित ही उपयोग में आता है। अधिक मात्रा, उदाहरणतः २० से ३० ग्रेन में देने से यह रेचक प्रभाव करता है अर्थात् इससे विरेक आने लग जाते हैं। कभी कभी छोटी मात्रा में अधिक समय तक निरन्तर देते रहने से भी यह आन्त्र में क्षोभ उत्पन्न करता है। अतु, ऐसे कास रोगी को जिसको विरेक भी आते हैं, अमोनियम कार्बोनेट नहीं देना चाहिए।

कार्बोनेट ऑफ अमोनिया स्वतंत्र गैसों (वायव्य) की तरह प्रभाव करता है। लगभग ८ ग्रेन की मात्रा में भली प्रकार जल मिश्रित कर देने से यह सार्वांङ्गिक उत्तेजक हैं और समग्र ज्वर-जन्य कायशैथिल्य की दशाओं में इसका अत्युत्तम प्रभाव होता है। मसूरिका (मीजिल्स) और रक्तज्वर (स्कारलेटिना) में इसका प्रयोग करने से कभी कभी अत्यन्त संतोषदायक परिणाम निष्पन्न हुए हैं। इससे तापक्रम भी कम हो जाता है। स्थानिक उपयोग से जिस प्रकारततैया के दंश और कीट दष्ट में यह विषघ्न प्रभाव करता है। सम्भवतः उक्त दशाओं में यह दूषित विषों को नष्ट कर अपना प्रभाव करता है। अमोनिएकल ब्रेथ सहित टाइफॉईड (आंत्रसन्निपात ज्वर) की दशा में यह निष्प्रयोजनीय है। सर्प दष्ट में इसके अन्तःक्षेप की उपयोगिता सन्दिग्ध है। (ह्वि० मे० मे०)।

लाइकर अमोनियाई एसिटेटिस और लाइकर अमोनियाई साइट्रेटिस दोनों स्वेदक है (बालकों) के ज्वर की सम्पूर्ण दशाओ में यह विशेष कर लाभप्रद है)। सम्भवतः स्वेदोत्पादक ग्रंथियों की सेलों पर अथवा उन ग्रन्थियों में व्याप्त होने वाले वाततन्तुओं पर उनका प्रभाव पड़ने से स्वेद आता है। परन्तु ज्ञात होता है कि लाइकर अमोनिया एसिटेटिस का अधिक शक्तिशाली प्रभाव होता है। यदि रोगी को शीतल स्थान में रखा जाए अर्थात् उसके शरीर को शीतल रखा जाय तो फिर वृक्क पर एकत्र हो कर (संगठित रूप से) उनका प्रभाव होता है, जिससे अधिक मूत्र आने लगता है, अतु, प्राथुक्त प्रभावों के अनुसार उनको ज्वरों में ऐसे अल्पस्वेदक रूप से, जिनसे निर्बलता न हो, प्रयोग करते हैं। अधिक मद्यपान जनित प्रभावों

को स्वर्थ करने के लिये भी उनको वर्तते हैं। अस्तु सुरा की शीशी (wine glassful) की मात्रा में सेवन करने से मद्यात्यय के प्रभाव को नष्ट करने में यह (एसिटेट ऑफ अमोनिया सोल्युशन) विलक्षण प्रभाव करता है अथवा आरम्भ में कार्बोनेट को एक ड्राम की चम्मच भर एक शीशी सिरके में मिलाकर देने से भी वैसा ही प्रभाव होता है। यह यूरिया की शकल में मूत्र द्वारा, बिना उसके क्षारत्व को बढ़ाए, उत्सर्जित होता है।

अमोनिया के प्रयोग की सर्वोत्तम विधि, उसको ऐरोमैटिक स्पिरिट ऑफ अमोनिया और लाइकर अमोनी का शकल विशेषतः प्रथम रूप देना है; उनमें सदा स्वतंत्रतापूर्वक जल मिश्रित करलें। कुश्नी के विचारानुसार इन योगों का आमाशय के धरातल पर उत्तेजक प्रभाव होकर परावर्तित रूप से हृदय पर प्रभाव होता है।

नोट—कार्बोनेट ऑफ अमोनिया को दुग्ध, शर्बत (प्रपानक) या पानी में भली प्रकार विलीन करके वर्तना चाहिए।

युरोप तथा अमेरिका के डॉक्टरों के परीक्षित प्रयोग

(१) डायफोरेटिक मिक्सचर (स्वेदक मिश्रण)

एसिडेट ऑफ अमोनिया सोल्युशन	२ आउंस
एसिटेट ऑफ पोटासियम	२ ड्राम
स्पिरिट ऑफ नाइट्रर	४ ड्राम
कैम्फर वाटर	८ आउंस पर्यन्त
सिरप	१ आउंस

इसमें से १ आउंस की मात्रा में प्रति ३-३ घंटे पश्चात् दें। यह एक निरापद अत्यन्त संतोषदायक स्वेदक मिश्रण है, जिसका उपयोग प्रत्येक प्रकार के ज्वर में किया जा सकता है।

साइट्रेट सोल्युशन का भी ऐसा ही प्रभाव होता है (SeeB,on p 318)

(२) न्युमोनिया मिक्सचर (फुफ्फुसप्रदाहहर मिश्रण)—

लाइकर अमोनिया एसिटेटिस	२ आउंस
अमोनियाई कार्बोनास	४० ग्रेन
पोटासियम आयोडाइड	१६ ग्रेन
बाइनम ऐण्टिमोनियाई	४० बूंद
सिरूपस	१ आउंस
एक्वा	८ आउंस पर्यन्त

इसमें से १-१ आउंस की मात्रा में दिन रात में तीन चार वार दें।

प्रयोग—यह मिश्रण प्रतिश्यायिक फुफ्फुसौष (कैटारल न्युमोनिया) में सामान्य रूप से प्रयुक्त होता है।

(३) योगः—

सिरुपस अमोनी ऐरोमैटिकस	२० बूंद
बाइनम ऐण्टिमोनिएलिस	५ बूंद
टिंकचूरा एकोनाइटाई	२ बूंद
इन्फ्यूजम डिजिटेलिस	१ ड्राम
एक्वा एनिसाई	१ आउंस पर्यन्त

ऐसी एक-एक मात्रा औषध प्रति ३-३ घंटे पश्चात् दें।

नोट—रक्तप्रकृति के न्युमोनिया-रोगी में रोग के आरंभ में जब तक नाड़ी फुल (पूर्ण, भरी हुई) चलती हो तब तक इस औषध को देते रहें। परन्तु जब रक्तभार कम और नाड़ी मृदु हो जाय तब इसको बन्द करके सोत्तेज्य कफ निस्सारक औषध का उपयोग करें। इस हेतु निम्न लिखित योग लाभदायक है :—

(४) योग—

अमोनियाई कार्बोनास	३ ग्रेन
स्पिरिटस अमोनियाई ऐरोमैटिकस	२० बूंद
स्पिरिटस कैजेप्युटाई	१५ बूंद
टिंचर सिल्ली	५ बूंद
इन्फ्युज़म सिनेगी	१ आउंस पर्यन्त

ऐसी १-१ मात्रा औषध प्रति ४-४ या ६-६ घन्टे पश्चात् दें। परन्तु, दिन रात में ४ मात्रा से अधिक न दें।

अमोनियाई क्लोराइडम्—ले० नवसादर, नरसार, नौसादर। (Sal ammoniac)

अमोनियाई ग्लीसिरहाइड्रास-ले० अमोनियाई ग्लीसिर् हाईजेट।

अमोनियाई ग्लीसिर् हाइजेट–ले० अमोनिया संयुक्त मुलेठी का सुस्वादु सत्व। यह क्वीनीन की तिक्तता और अन्य ह्रासजनक औषधों के दोषशमनार्थ प्रयुक्त होता है। मात्रा–चौथाई ग्रेन से १ ग्रेन तक। पी० वी० एम०।

अमोनियाई टाट्रास–ले० देखो—अमोनियाई कार्बोनास।

अमोनियाई पिक्रास–ले० देखो—अमोनियाई कार्बोनास।

अमोनियाई फास्फास–ले० अमोनियम फास्फेट (Ammonium phosphate)–इं०। अमोनियम स्फुरित।

ऑफिशल (*Official*)

रासायनिक सूत्र $(NH_4)_2 HPO_5$

निर्माण-विधि—स्ट्रौंग सोल्यूशन आफ अमोनिया (तीक्ष्ण अमोनिया घोल) में डायल्यूट फास्फोरिक एसिड (जल मिश्रित स्फुराम्ल) मिलानेसे अमोनियम फास्फेट (अमोनियमस्फुरित) प्रस्तुत होता है।

लक्षण—इसके स्वच्छ वर्ण रहित रवे होते हैं

विलेयता—यह १ भाग चार भाग जल में विलीन हो जाता है, परन्तु एलकुहाल (६० प्रतिशत में विलीन नहीं होता।

प्रभाव—डाइरेक्ट कोलेगांग (सरल पित्तरेचक) और डायोरेटिक (मूत्रल) है। मात्रा—५ से २० ग्रेन (·३२ से १·३० ग्राम)।

प्रभाव तथा उपयोग

चूकि अमोनियम फास्फेट साधा यकृत को उत्तेजना प्रदान करता है एवं मूत्रल है और चूँकि यह अविलेय युरेट आफ सोडियम को युरेट आफ अमोनियम और फास्फेट आफ सोडियम में परिणत कर देता है, अतएव इसको वात रक्त (गाउट) तथा युरिक एसिड डायथेसिस (अर्थात् उन सभी दशाओं में जब युरिकाम्ल की कंकड़ी बनने की आशंका हो) में देने से लाभ होता है।

अमोनियाई फ्लोराइडम्–ले० देखो—अमोनियाई कार्बोनास।

अमोनियाई बाई कार्बोनास–ले० नूसार द्विकजनेत देखो—अमोनियाई कार्बोनास।

अमोनियाई बेञ्जोआस–ले० लोबान अम्ल। देखो–एसिडम बेञ्जोइकम्।

अमोनियाई बोरास–ले० टङ्कण अमोनिया। अमोनिया तिनकारी।

नाट आफिशल (*Not official*)

लक्षण—यह एक स्फटिकीय लवण है, जिसकी प्रति क्रिया क्षारीय होती है। विलेयता यह एक भाग १५ भाग जल में विलीन हो जाता है।

प्रभाव तथा उपयोग—रेनल और वेसिकल केल्क्युलाई (वृक्क व वस्त्यश्मरी) में इसका उपयोग अत्यन्त लाभदायक प्रमाणित हुआ है। अस्तु, रेनल कालिक (वृक्कशूल) में २० ग्रेन (१० रत्ती) की मात्रा में इसको २-२ घण्टे पश्चात् उस समय देते हैं, जब तक कि खूब खुलकर पेशाब नहीं आ जाता। पुनः १५ ग्रेन की मात्रा में दिन में तीन बार देते हैं।

अमोनियाई ब्रोमाइडम्–ले० देखो—ब्रोमीन (ब्रह्मिका)।

अमोनियाई वैलेरिएनास–ले० देखो—वैलेरियन, सुगन्धवालः।

अमोनियाई सैलिसीलास–ले० वेतस अमोनिया देखो—एसिडम् सैलिसीलिकम् (वेतसाम्ल)।

अमोनियाकून–यु० (Ammoniacum) देखो उशक।

अमोनियातुज्जैवक–अ० नूसारेत पारद (Hydrargyrum ammoniatum) देखो–पारद।

अमोनियाते जीवह–अ० नूसारेत पारद (Ammoniated mercury) देखो—पारद।

अमोनिया वैकिसफेरा–ले० दादमारी। इं० मे० मे०।

अमोनिया मक्युरिक क्लोराइड–इं० अमोनिया-पारद हरिद। देखो—पारद।

अमोनिया लोबानी–अ० देखो—एसिडम् बेञ्जोइकम् (लोबानाम्ल)।

अमोनिया बेसिकेटोरिया–ले० दादमारी । इं० मे० मे० ।

अमोनिया बैलेरियाना–इं० हीवेर अमोनिया, देखो–वैलेरियन ।

अमोनिया सैलिसीलास–इं० वेतस अमोनिया । देखो—ऐसिडम् सैलिसीलिकम् (वेतसाम्ल) ।

अमोनिया क्वाराइडआफ मकरी–इं० अमोनियात सीमाब । देखो—पारद ।

अमोनिया लाइकार फोर्टिस–ले० सशक्त ए (अ) मोनिया द्रव । देखो—अ(ए)मोनिया ।

अ(ए)मोनोल–इं० यह एक श्वेत वर्ण का चूर्ण है । देखो—एसेटअनालाइडम् ।

अमोमम्–ले० (१) हमामः । फा० इं० २ भा० । (२) बड़ी इलायची । स० फा० इ० ।

अमोमम् ऐरोमेटिकम्–ले० बड़ी इलायची, बृहदेला इलायची, मोरंग–ब० । इ० मे० मे० । मेमो । देखो—एला ।

अमोमम् अना–ले० अज्ञात ।

अमोमम् ज़ाञ्जबेरिना–ले० बड़ा कुलिञ्जन । फा० इं० ३ भा० ।

अमोमम् जैन्थओइडिस–ले० छोटी इलायची, क्षुद्रैला । फा० इं० ३ भा० । देख—एला ।

अमोमम् डाऐनबेटम्–ले० यह खाद्य कार्य में आता है । मेमो० ।

अमोमम् मेलेग्वेटा–ले० इसका फल औषध कार्य में आता है । मेमो० ।

अमोमम् मैक्ज़िमम्–ले० यह एक खाद्य है । मेमो० ।

अमोमम् रिपेन्स–ले० छोटी इलायची, क्षुद्रैला । देखो—एला ।

अमोमम् वाइल्ड–इं० हमामा ।

अमोमम् सब्युलेटम् ले० बड़ी इलायची, बृहदेला –सं०, हिं० । क़ाक़िलहे कबीर–अ० । मेमो० । फा० इ० ३ भा० । देखा—एला ।

अमोमम् सिलवस्ट्रिस–ले० हमामा । (amomum wild) इं० हैं० गा० ।

अमोमिस–यु० हमामा । (amomum) फा० इ० २ भा० ।

अमोरई–रू० जैतून तैलकिट्ट ।

अमोरा अमारी–आसा० रोहितक, रोहिनी, रोहेड़ा –स० । (amora rohituka, W. & A.) फा० इ० १ भा० ।

अमोरी–हिं० संज्ञा स्त्री० [हिं० आम+औरी (प्रत्यय)] (१) आम की कच्ची फली । अँबिया, (२) आमड़ा, अम्मारी, आम्रातक ।

अमोला–हिं० संज्ञा पु० [स० आम्र] आम का नया निकलता हुआ पौधा ।

अमोलीकून–रू० सीसभस्म, सीसा की भस्म । (Lead oxide) देखो—सीस(क)म् ।

अ(ा)मालुका–व० अन्धुक, आमधुक–हिं० । (vitis indica, linn) फा० इ० १ भा० ।

अमालूनस–यू० गोधूम सत्व, श्वेतसार, निशास्ता, स्टार्च (starch)–इं० ।

अमोआ–हिं० संज्ञा पु० [हिं० आम+ओआ (प्रत्यय)] आम के रस का सा रंग । यह कई प्रकार का होता है । जैसे पीला, सुनहरी, माशी, किशमिशी, मूँगिया इत्यादि ।

(२) अमौआ रंग का कपड़ा ।

वि० आम के रस के रंग का ।

अमौलिक–हिं० वि० [सं०] (१) बिना जड़ का निर्मूल । (२) बिना आधार का । (३) अयथार्थ, मिथ्या ।

अमांसम्–सं० क्ली० मांस रहित ।

अम्अदालया–यु० बादाम, चातार । (Amygdalæ)

अम्अर–अ० कम बालों वाला । जिसके बाल गिरते हों ।

अम्आऽ–अ० (व० व०) मिअ़ा या मिअ़ा (ए० व०) । मस्सारीन–अ० । रोंदहे, आँतें–फा०, उ० । आत्र, अन्तड़ी–सं०, हिं० । (intestines, Boweis)

नोट—आंतें सूक्ष्म व बृहत् भेद से दो प्रकार की होती है, जिसमें से पुनः प्रत्येक के तीन-तीन भेद होते हैं । अस्तु, ये संख्या में कुल ६ हुईं ।

देखो—अम्आऽ दिक़ाक़ व गिलाज़ ।

अम्बाउल् अर्ज-अ० ख़रातीन, केंचुए। (Earthworm)

अम्बाडलया-अ० अम्बा दिकाक।

अम्बाडगिलाज़-अ० अम्बाड सुफला। मोटी वा बड़ी आँतें, जेरीं आँतें-उ०। बृहदांत्र, स्थूलांत्र-हिं० (Large intestines)

अम्बाडदिक़ाक-अ० छोटी आँतें ऊपर की आंतें-उ० लघु आंत्र, सूक्ष्मांत्र, क्षुद्रांत्र-हिं० (Small intestines)

अम्बाडसीन-अ० गोरहे (अपक्व) अंगूर का पानी

अम्बी-नैपा० सफ्यी-लेपचा०। (Pyrularia edulis)

अम्बुल्ऐन-अ० माक अक्बर। आँख का बड़ा कोया जो नासिका की ओर स्थित है। इनर कैन्थस (Inner canthus) इ०।

अम्बल-अ० वह व्यक्ति जिसकी नासिका सदा बहती रहे। नासा (परि) स्राव रोगी।

अम्बार-अ० रूक्ष रोमों वाला।

अम्जर-अ० नर; पुरुष, मनुष्य, आदमी, मर्द। मैन (Man) इं०।

अम्जह्-अ० (१) चलते समय जिसके दोनों पैर परस्पर मिलें। (२) गन्दह् दुहून, मुख दुर्गन्धि। जिसके मुख से दुर्गन्ध आती हो।

अम्जिजह्-अ० मिजाज (प्रकृति) का बहुवचन है।

अम्तश-अ० निर्बल दृष्टि वाला मनुष्य, कमज़ोर नज़र का आदमी।

अम्तीपरदु-ले० केला कदली। Musa paradisiaca' *Linn*)

अम्दश-अ० निर्बल तथा अल्प बुद्धि वाला मनुष्य दुर्बल तथा कम अक्ल वाला मर्द।

अम्देस जामोटाफाना-गोआ० बजर बट्टू, जंगली मदन मस्त-हिं०। (Cycas circinalis) इं० मे० मे०।

अम्धुका-बं० देखो अन्धुक।

अम्न-अ० चैन, आराम, शांति सुरक्षितता, निडर होना (Peace)।

अम्नाऽ-अ० (ब० व०) मनाऽ (ए० व०) माप विशेष। लगभग पक्का १ सेर का वजन।

अम्नाऽ-अ० (ब० व०) मनाऽ (ए० व०) माप विशेष। लगभग पक्का १ सेर का वजन।

अम्नान-अ० (ब० व०) मन (ए० व०) एक माप विशेष। लगभग २ पौंड अर्थात् १ सेर का वजन।

अम्निय्यत्-
इअ्फ़ाऽ- } शाब्दिक अर्थ स्वास्थ्य एवं सुरक्षिता प्राप्त करना, रोगनाशकता, रोग क्षमता (Immunity)।

अम्पफर-जर० चाङ्गेरी, चूका। (Rumex Scutatus) इं० मे० मे०।

अम्पार-बाकला' बेलहर।

अम्पिलोप्सिस क्विन् क्वि फोलिया-ले० अमेरिकन अङ्गूर-इ० वाइटिस क्विन्क्वि फोलिया (Vitis quinquefolia)-ले०।

अम्पुट्टं-ता० अम्बाड़ा, अमड़ा, आम्रातक। (Spondias Mangifera) इं० मे० मे०।

अम्पेलोसिक्योस स्कैण्डेन्स-(Thot Bot. Mag2681, 27o-1'-2.)-ले० इसका बीज कृमिहर है। बीज चिपटा करीब करीब गोलाकार लगभग १॥ इन्च मोटा बाह्याच्छादन कोमल टोकरी की रचना से समानता रखता है और बहुत कठोर एवं मजबूत होता है। गिरी में मृदु तेल की कुछ मात्रा पाई जाती है। समग्र फल २-३ इंच लम्बा और ८-१० इन्च मोटा होता है इस पर लम्बाई की रूख गहरी धारियां पड़ी रहती हैं। इसका भीतरी भाग ३ से ६ कोषों में विभाजित होता है इसमें प्रायः २१० बीज होते हैं

अम्फी-नैपा० सफ्यी-लेपचा०।

अम्ब-हिं० पु०
अम्बह्-फा० } आम, आम्र। (A mango a mango tree)

अम्बकः-सं पु० (१) व (ब) कुल वृक्ष, मौलसरी (Mimusops Elengi) जटा०। क्ली० (२) नेत्र, चक्षु आंख। (Eye) हे० ब०। (३) ताम्र, ताम्बा। (Copper) रा० नि० ब० १३। (४) पिता।

(२) नेत्र, चक्षु आंख। (Eye) हे० ब०। (३) ताम्र, ताम्बा। (Copper) रा० नि० ब० १३। (४) पिता।

अम्बकरञ्ज–ब० करञ्ज भेद, डहर करञ्ज (Pongamia glabra) इं० मेंo मे० ।

अम्बकुदा–हिं० संज्ञा पु० / अम्बकाड़ा– ,, / अम्बकाल– ,, } अङ्केल देरा । (Alangium decapetalum)

अम्ब गोल–अ० महाकाल, लाल इन्द्रायन । (Trichosanthus palmata) स० फा० इ० ।

अम्बज–अ० आम । (Mango tree)

अम्बजात–अ० मुरब्बा (Preserve)

अम्बट–बम्ब० बायविडंग, विडंग । (Embelia ribes)

अम्बट वेल– / अम्बट वेल– } हिं० म० अम्ल वेल, गिदड़द्राक्ष पं० । अम्ललता–बं० । अम्लपर्णी सं० । (Vitis trifolia) मेमो० । इं० मे० मे० ।

अम्बटा–बम्ब० वायविडंग, विडंग । (Embelia ribes)

अम्बटी मद्–ते० अज्ञात ।

अम्बटे–कना० / अम्बटेमरा–कना० } अमड़ा, आम्रातक, अम्बड़ा (SPondia Smangifera)

अम्बटे हुल्लु–कना० सफेद दूब, श्वेत दूर्व्वा (Cynodon dactylon)

अम्बड़े–गारो० आरी, रीस–पं० । मेमो० ।

अम्बत–हिं० वि० अम्ल, खट्टा, खटाई, चूक । (Sour)

अम्बताना–हिं० क्रि० संज्ञा खट्टा होना । (To grow sour)

अम्ब पाली–मह० अमावट । See Amavata

अम्बरम्–सं० क्लो० / अम्बर–हिं० संज्ञा पु० } कपास, कार्पास, (Gossypium Indicum) र० मा० (२) अभ्रक । Talc (Mica) । रा० नि० ब० १३, भैष० । वसन्त कुसुमाकरे । (३) तक्षामक गन्धद्रव्य, एक सुगन्धित द्रव्य, अम्बर । विश्वः (४) वस्त्र विशेष (Clothes Apparel) (५) वस्त्र कपड़ा पट । (६) आकाश । आसमान । (७) एक इन्द्र (८) अमृत अने० (९) बादल । मेघ । (त्रि०)

अम्बर–फा० संदंश चिमटा चिमटी, दस्तपनाह । फॉर्सेप्स (Forceps)-इं० ।

अम्बर–अ० अम्बर–हिं०, बं०, मह०, ब्र०, मद, कों० गुज० । अग्निजार, वह्निजार, अम्बर सुगन्ध अम्बरम्–सं० । शाहेबू–फा० । अम्बाग्रसया AmbraGrsea–ले० इं० । अम्बरग्रीस Ambergris ले० इं० । अमर ग्रीस. Amergris इं० मिनम्बर–ता० । मुसम्बर–सिं० । पयेन-अम्भट–बर० । अम्बर एक प्रसिद्ध सुगन्धिपूर्ण मूल्यवान औषध है इसके विषय में विभिन्न व परस्पर विरोधी वचन प्राचीन हिन्दी ग्रन्थों में विद्यमान हैं, यथा—

अम्बर को किसी ने एक समुद्री चतुष्पद प्राणी का गोबर (लीद) वर्णन किया है । और किसी किसी ने लिखा है, कि यह एक बूटी है जो समुद्र तल में उत्पन्न होती है इसको कोई २ समुद्री जीव खाते हैं जब उनका पेट भर जाता है तब वे इसको उगल देते हैं और यह उगालदी अम्बर कहलाता है ।

शेख का अनुमान है कि अम्बर समुद्र तल के स्रोत का जोश (या रतूबत) है । उनके विचार से जिन लोगों ने इसको समुद्रफेण वा किसी सामुद्री चातुष्पद जन्तु का गोबर लिखा है वह मिथ्या है ।

शेख के सिवा कतिपय अन्य इतिज्ञा भी इसी विचार के समर्थक हैं और इसे ही सत्य एवं अधिक प्रामाणिकमानते हैं । अस्तु, उनका वर्णनहै कि अम्बर एक रतूबत है जो समुद्रतलस्थ स्रोतों एवं समुद्र के आभ्यन्तरीय कान या द्वीप से क़फ़र, मोमियाई तथा क़ीर के समान निकलता है और अम्बर कह लाता है । यह सामुद्र तरंग के थपेड़ों के कारण उत्ताप पहुँचने से समुद्र के पानीपरतह बतह एकत्रितहोकर सान्द्र (प्रगाढ)

होजाताहै। और शमामह् के समान गोल या अन्य स्वरूप ग्रहण कर समुद्र तट पर आ पड़ता है कहते हैं कि समुद्री जीवों को अम्बर अत्यन्त प्रिय है। जब यह उनको मिलता है तब वे इसको तुरंत निगल जाते है। किन्तु न पचने के कारण यह उनको मार डालता है अथवा उनके उदर में आध्मान उत्पन्न कर देता है और वे जन्तु पानी के ऊपर आ जाते हैं। जो लोग इस बात का ज्ञान रखते हैं वे तत्काल उक्त जीव के उदर को विदीर्ण करके अम्बर निकाल लेते हैं। इस प्रकार का अम्बर श्याम वर्ण का और बशाँध युक्त (पूति-गंधमय) होता है। इसको अम्बर वलई कहते है। यह अंबर जंजी (जंगी) नाम से भी प्रसिद्ध है। यही कारण है कि किसी किसी ने इसको समुद्री गाय का गोबर माना हैं।

अम्बर के सम्बन्ध में मुल्ला नफीस के ये वचन है—

"किसी किसी के कथनानुसार यह बात सत्य है कि भारतवर्ष में यह मधु से प्राप्त होता है। इसका इस प्रकार प्राप्त किया जाता है। मधु मक्षिकाएँ सुगंधित पुष्प, और पत्र से रस चूस चूस कर भारतवर्ष के पर्वतो पर मधुका निर्माण करती है। इसी कारण यह मधु अत्यन्त सुगंध-युक्त होता है। फिर जब वर्षाधिक्य के कारण उन मक्षिकाओं के छत्तों पर जल का सैलाब आता है तब मधु तो पानी में घुल जाता है और केवल मोम का भाग अवशिष्ट रह जाता है। यह अत्यन्त सुगंधित होते और नदियों में बहते हुए समुद्र तक जा पहुँचते है। फिर यह समुद्र के पानी में सूर्यताप द्वारा द्रवांभूत होते है एवं स्वच्छ हो जाते है। समुद्र तरंग इनको तट पर ला डालता है। यही अम्बर होता है।" इसके ज्ञाता इसे उठा कर ले जाते और बहुमूल्य लेकर बेचते हैं।

मुल्ला सदीद गाजरानो ने मुफूरदात कानून की टीका में उपर्युक्त कथन का समर्थन किया है और उसी वचन को सत्य माना है। क्योंकि अम्बर में मोम के लक्षण व्यक्त है। कारण यह है कि उष्ण जल में घोलने से यह घुल जाता है एवं शीतल होने पर मोम के समान जम जाता है। कतिपय इतिब्बा ने लिखा है कि प्रतिष्ठित व्यक्तियों की जबानी सुना गया है कि कभी सौभाग्यवश ताजा अम्बर हस्तगत हो जाता है। वह मधुर 'खमीरवत्' मृदु और अत्यन्त सुगंधित होता है और यमन सागर, मालद्वीप तथा प्रशांत महासागर और समुद्र तरंग द्वारा उनके समीप के तटों पर आ लगता है तथा वहाँ के निवासी उसको उठा लाते हैं।

हकीम उजबीखाँ लिखते है कि मैंने अम्बर शमामह् (सर्वोत्कृष्ट प्रकार का अम्बर जिसके टूकड़े गोल होते हैं) देखा हैं। उसमें मधुमक्षिका के समान बहुत से जन्तु लगभग शत की संख्या में थे।

मीर मुहम्मद हुसेन लेखक मख्जनुल्-अदविह लिखते है कि मैंने भी अम्बर का एक टुकड़ा देखा है जिसमें किसी रक्तजोजो वर्ण के सदृश (शौक्लिक) जन्तु के सिर व ग्रीवा और चंचुवत् कोई वस्तु दृष्टिगोचर होती थी। परन्तु तो भी हमारे समीप वे ही बचन अधिक यथार्थ एवं विश्वस्त ज्ञात होते है जिन्हें शेख तथा प्रायः इतिब्बा ने वर्णन किए हैं। (अर्थात् अम्बर एक रतूबत है जो समुद्र तल के कतिपय सहायक तथा द्वीप से मोमियाई और कीर प्रभृति के समान निकलती है।)

परन्तु अर्वाचीन शास्त्रीयात्मक शोधों से यह ज्ञात हुआ है कि अम्बर ह्वेल मछली की एक विशेष जाति स्पर्म ह्वेल (Sperm whale) के उदर से निकलता है। यह एक प्रकार का दूषित मल है जो उसके आँत्र वा अंत्रपुट में रहता है। स्पर्म ह्वेल ८० फुट तक लम्बी होती है। इसका सिर इतना बड़ा होता है कि समग्र शरीर का तिहाई भाग सिर में सम्मिलित होता है इसके सिर में एक विशेष प्रकार का तैल भरा होता है जो हवा खाकर जम जाता है। इसके उदर से अम्बर निकलता है। इसकी वास्तविकता से अनभिज्ञ होने के कारण यह भ्रम

पड़ता है कि अम्बर समुद्र में बहता हुआ तरंगों के कारण समुद्र तट से आ लगता था। वहाँ से लोग इसे उठा लाते थे या नाविकों को समुद्र में ही प्राप्त हो जाता था। और इसके सम्बन्ध में विभिन्न विचार व अनुमान स्थिर कर लिये गए थे। इसमें दूसरी चीजों यथा विविध प्रकार के मृत जन्तु सम्मिलित हो जाते होंगे जिनको कतिपय इतिहज्ञ ने अवलोकन किया होगा जैसा कि स्वर्गवासी हकीम उल्वी खाँ के वचन में इसका उल्लेख है।

अधुना भी अम्बर समुद्र में बहता हुआ या समुद्र तटपर पड़ा हुआ मिल जाता है। परन्तु स्पर्म ह्वेल के उदर से प्राप्त होने पर इसकी सत्यता स्पष्ट रूप से स्थापित हो गई है।

स्पर्म ह्वेल का शिकार अधिकतर उसके शिरके तैल और अम्बर के लिये ही किया जाता है। इसका शिकार बड़ी जानजोखूँ का काम होता है। क्योंकि इसका यह एक विशेष स्वभाव वर्णन किया जाता है कि यह दौड़ दौड़ कर जहाजों को टक्करें मारती है जिससे कभी कभी वे छिन्न-भिन्न हो जाते हैं।

अम्बर के सम्बन्ध में आयुर्वेदीय मत—

बहुत से आधुनिक लेखक अग्निजार को अम्बर मानकर लिखते हैं। परन्तु वास्तविक बात तो यह है कि अष्टवर्ग की औषधियों के समान यह भी एक संदिग्ध एवं अन्वेषणीय औषध है। अष्टवर्ग की दवाओं के सम्बन्ध में कम से कम इतना तो निश्चित तथा ज्ञात है कि वे वनस्पतिक द्रव्य है। परन्तु अग्निजार के सम्बन्ध में यह बात भी सन्देह पूर्ण है।

अस्तु, कोई तो इसको समुद्री फल लिखते हैं और कोई तो इसको एक समुद्री पोधा वा अडिधार बतलाते हैं। कई कोषों में भी अग्निजार के जितने भी पर्याय आये हैं इनके सामने वृक्ष ही लिखा है अतः उनके मत से अग्निजार एक वनस्पतिक द्रव्य है।

इसके विपरीत रसरत्नसमुच्चयकार के मतानुसार यह एक प्राणिज द्रव्य सिद्ध होता है। यथा वे लिखते हैं—

समुद्रेणाग्निनक्रस्य जरायुर्वहिरुज्झितः।
संशुष्को भानुतापेनसोऽग्निजार इतिस्मृतः॥

अर्थ—अग्निनक्र नामक जीव का जरायु (झर) बाहर आकर समुद्र के किनारे सूर्यताप द्वारा सूख जाता है उसी को अग्निजार कहते है।

अम्बर भी एक समुद्री प्राणिज द्रव्य है, इसी आधार पर किसी किसी ने अग्निजार को अम्बर का पर्याय मान लिया है, ऐसा प्रतीत होता है।

आज अब यह बात भली प्रकार सिद्ध होचुकी है कि अम्बर स्पर्म ह्वेल नामक मत्स्य द्वारा प्राप्त होने वाला एक प्राणिजद्रव्य है। फिर भी इस बात का पता लगाना अत्यन्त कठिन है कि आया हमारे पूर्वाचार्य उक्त मत्स्य को अग्निनक्र नाम से अभिहित करते थे वा नहीं।

चाहे कुछ भी हो, पर इतना तो निश्चय रूप से ज्ञात होता है कि अग्निजार के जो गुणधर्म हमारे प्राचीन शास्त्रों में वर्णित हैं। प्रायः उनसे मिलता जुलता ही वर्णन यूनानी ग्रन्थकारों का है जैसा कि आगे के वर्णन से ज्ञात होगा।

अग्निजार नाम से आज उक्त ओषध को प्राप्त करना उतना ही दुरुह है जितना कि बालू से तेल निकालना। अस्तु, यह उचित जान पड़ता है कि जहाँ जहाँ अग्निजार का प्रयोग आया हो वहां पर अम्बर का ही उपयोग किया जाए।

प्राप्त स्थान तथा इतिहास—स्पर्म ह्वेल अमरीका के दक्षिण में प्रायः मिलती है। हिन्द-महासागर यहां तक कि बंगाल की खाड़ी में भी यह मिलती है किन्तु अत्यन्त छोटी होती है। अम्बर जालसागर, ब्रेजिल और अफरीका के समुद्र तट पर तैरता हुआ पाया जाता है, केवल एक मछली के उदर से ७५० पौंड तक अम्बर पाया जा चुका है। ह्वेल का शिकार भी इसके लिये होता है। इसका व्यवहार औषधियों में होने के कारण यह नीकोबार (काले पानी का एक द्वीप) तथा भारत समुद्र के और और टापुओं से आता है। प्राचीन काल में अरब, यू-

नानी लोग इसे भारतवर्ष से ले जाते थे। जहाँगीर ने इससे राजसिंहासन को सुगन्धित किया जाना लिखा है।

लक्षण—यह अपारदर्शक कभी कभी श्वेत प्रायः श्यामाभायुक्त धूसर या गुलाबी या श्याम वर्ण का होता है।

नोट—(१) साफ पीताभ अम्बर को अंबर अश्हब कहते हैं। यह सर्वोत्कृष्ट श्रेष्ठतर अम्बर होता है इससे निम्न कोटि का अम्बर अज़्रक़ (फिरतकी) और इसके बाद श्याम है। जो अम्बर श्वेताभ होता है उस पर छोटे छोटे श्वेत विन्दु होते हैं। यह अम्बर खश्खाशी कहलाता है और जो अम्बर गोल टुकड़ों की शकल में होता है उसका नाम अम्बर शमामह् रखते हैं।

(२) जो अम्बर समुद्र के तरंगों द्वारा समुद्र तट पर आ पड़ता है और उसमें धूल आदि के कण मिल जाते हैं उसको तिब में अम्बर रमली कहते है उसको विना शोधन किये व्यवहार न करना चाहिये। मोमवत् उसकी शुद्धि करनी चाहिये। अथवा उसमें समान भाग मिश्री मिला कर खरल कर लेने से उसकी शुद्धि होती है।

परन्तु रसरत्न समुच्चयकार अग्निजार की शुद्धि न करने में निम्न कारण बतलाते हैं—

"तदब्धिक्षार संशुद्धं तस्माच्छुद्धिं न हीष्यते।"

(र० र० स० ३ अ०)

अर्थात्—समुद्र के क्षारमय जल से शुद्ध ही रहता है। अतः इसके शोधन की आवश्यकता नहीं।

गन्ध—कस्तूरीवत् विशेष सुगन्धि। इसमें से मीठी मिट्टी जैसी गन्ध आती है जो अत्यन्त मन मोहक होती है। सर्व प्रथम जब स्पर्महेल से यह बाहर आता है, तब भूरे रंग का नर्म और दुर्गन्धयुक्त होता है, पर शीघ्र ही वायु लगने पर यह कठिन और नीलवर्ण का हो जाता है। ज्यों ज्यों सूखता जाता है त्यों त्यों उत्तम गन्ध उत्पन्न होती जाती हैं। और धीरे धीरे यह गन्ध इतनी बढ़ जाती है, कि दूर से ही अम्बर का बोध करा देती है।

स्वाद—यह लगभग स्वाद रहित होता है।

परीक्षा—(१) इसको एक शीशी में डाल कर कोयले की आग पर रखें। यदि यह सब पिघल जाय और शीशी में तेल की भाँति बहने लगे तो शुद्ध अन्यथा अशुद्ध जानना चाहिये।

(२) अम्बर को लेकर जरा सा आग में डालें यदि धूम्र सुगन्धियुक्त हो तो उत्तम अन्यथा नकली समझना चाहिये।

(३) जरा सा अम्बर लेकर चबाएँ यदि मुख सुगन्ध से पूर्ण हो जाय और चबाते समय वह दाँतों में मोम सा लगे तो उत्तम अन्यथा नकली है।

(४) तोड़ने से यदि अम्बर ठोस हो तो उत्तम और पोला हो तो नकली है।

(५) यह लघु और कम चिकना होता है और इसकी गन्ध कस्तूरी की गन्ध पर ग़ालिब नहीं होती। यह बहुत शीघ्र जलने वाला होता है तथा आँच दिखाते रहने से बिलकुल भाप होकर उड़ जाता है।

यह उष्ण जल में द्रवीभूत हो जाता है, परन्तु शीतल जल में नहीं होता। यह ईथर, वसा, उड़नशील (अस्थिर) तैल और उष्ण मद्यसार में विलेय होता है। इस पर अम्लों का कुछ भी प्रभाव नहीं होता। सूखने पर अम्बर का विशिष्ट गुरुत्व ·७८० से ·९२६ तक होता है। १४५° फारनहाइट की उत्ताप पर यह पिघल कर पीले रंग के वसामय तरल में परिणत हो जाता है। २१२° फारन हाइट पर श्वेत वाष्प बनकर यह जल जाता है।

रासायनिक संगठन—

इसमें अम्ब्रीन (Ambrein) ८५ प्रतिशत और किञ्चित् भस्म प्रभृति पदार्थ होते हैं।

औषध-निर्माण—अर्क अम्बर, अर्क गजर, अर्क बहार, अर्क हराभरा, अर्क हाजिम, खमीरह, गावजुबाँ अम्बरी (जवाहर वाला या जदीद), जवारिश ज़रऊनी अम्बरी बनुस्खा कलाँ, जवाहर मुहरा अम्बरी, मअजून कलाँ, मअजून नुकरा, मअजून फलकसेर, मअजून हम्ल अम्बरी

उल्लीखाँ मुफर्रिह अम्बरी, रोगन अम्बर, हब्बे अम्बर, हब्बे कीमियाये इश्क़त, हब्बे ताऊन अम्बरी।

आयुर्वेदीय मत से अम्बर के गुणधर्म तथा उपयोग—

अग्निजार त्रिदोषघ्न, धनुर्वातादि वातरोग नाशक और पारद का बल बढ़ाने वाला, दीपन एवं जारण कर्म कारक है। यथा—

अग्निजारस्त्रिदोषघ्नो धनुर्वातादि वातनुत्।
वर्धनो रसवीर्यस्य दीपनो जारणस्तथा॥
(र० र० स० ३ अ०)

नोट—शेष गुणधर्म के लिये देखो—अग्निजार।

यह पक्षाघात, कम्पवात आदि वातरोग-नाशक, हृदयरोग, नपुंसकता, फुप्फुस रोग, शिरोरोग, यकृतरोग, उदररोग, प्लीहरोग वृक्कीय आदि अनेक रोग नाशक माना गया है। कामाग्नि वर्द्धक जितना इसे बताया गया है उतना अन्य किसी औषध को नहीं। प्रायः ऐसी कोई व्याधि नहीं, जिसके लिये आयुर्वेद शास्त्र में यह न कहा गया हो कि अम्बर से उत्तम अन्य औषध नहीं है।

यूनानी एवं नव्य मतानुसार

प्रकृति—प्रथम कक्षा में उष्ण व रूक्ष है किसी किसी के मत से २ कक्षामें उष्ण व १ कक्षा में रूक्ष अथवा १ कक्षा में उष्ण और २ कक्षा में रूक्ष है।

स्वाद—किंचित् कटु।

गन्ध—अत्यन्त सुगन्धमय।

हानिकर्त्ता—आँतों को और उद्वर्तजनक (पित्त उछाल देता है)

दर्पघ्न—धनिया, समग अरबी, तबाशीर और सूँघने में कर्पूर। कपूर अम्बर की तेजी को कम करता है। इस लिये उसे इसके साथ न रखना चाहिये।

प्रतिनिधि—कस्तूरी तथा केशर समभाग लेना चाहिये।

प्रतिनिधि—कस्तूरी तथा केशर समभाग।

मात्रा—२ र० से ४ र० तक (१ से १५ ग्रेन) इं० मे० मे०।

आयुर्वेद में इसकी मात्रा १ र० से ३ र० तक बताई गई है।

नोट—आज कल के मनुष्यों की प्रकृति का विचार करते हुये उपर्युक्त ये सभी मात्राएँ बहुत अधिक प्रतीत होती हैं।

प्रधान गुण—रूह शक्ति तथा बाह्य व अन्तःकरण का बलदायक उत्तेजक तथा आक्षेपहर है।

गुण, कर्म, प्रयोग—यह हृदय को शक्ति प्रदान करता है तथा ज्ञानेन्द्रीय (पंच ज्ञानेन्द्रीय) तथा पंच कर्म इन्द्रीय व मस्तिष्क को लाभ पहुचाता है क्योंकि इसमें हृद्य व हृदय को बल प्रदान करने का असीम गुण है। इस बात में तीव्र गंध इसमें सहायक होती है। इसके सिवा इसमें द्रवी कारण पिच्छिलता (लेहेस) और मतानत पाई जाती है। अस्तु: अम्बर अपने इन गुणों के समवाय के कारण सम्पूर्ण अर्वाह के जौहर को शक्ति देता और उनको बढ़ाता है। (नफी०) अम्बर रूहो का रक्षक और हेबानी (प्राण) नफ्शानी (मानसिक) और शारीरिक (तबई) तीनों शक्तियों को बल प्रदान करता है। चित्त को प्रसन्न करता, शीतल प्रकृतियों के लिये अत्यन्त हृद्य और वास्तविक उष्मा तथा बाह्य व अन्तरेन्द्रियों को शक्ति देता है। वृद्ध पुरुष के लिये अत्युपयोगी, मास्तिष्क, हार्दिक और यकृत रोगों को अत्यन्त लाभ दायक है। मूर्च्छा व बबा (महामारी) को दूर करता है। रोधोद्घाटक और कामोद्दीपक है। शिश्न पर इसका प्रलेप करने से कामोद्दीपन कर्ता और आनंद प्रदान करता है।

प्रायः विषोंका अगद और शीत रोगोंको लाभदायक है। पक्षाघात, अर्द्धवात, कम्पवात, धनुस्तम्भ, अवसन्नता, शिरःशूल तथा अर्द्धभेदक आदि वात रोगों को लाभप्रद, वेदना तथा वायु का परिवाहक और कास, फुप्फुसस्थ क्षत हृदय की निर्बलता, मूर्च्छा, आमाशय तथा यकृत की निर्बलता एवं कामला, लक्कोदर, आमाशय शूल

शीर्ष वेदना और संधि शूल को लाभ पहुचाता है। म० मु० ।बु० मु०।

सार्वांगिक निर्बलता, अपस्मार आक्षेप और वातनैर्बल्य (Nervous debility) मेंइसका प्रयोग किया जाता है। विसज्ञता एवं उन्माद युक्त तंत्र ज्वर बिसूचिका के कालेप्स की अवस्था, प्लेग तथा अन्य सक्रामक व्याधियों में भी इसका प्रयोग किया जाता है यह पाक व मअजून रूप में व्यवहृत होता है। इ० मे० मे०

एलोपैथा चिकित्सा में अम्बर का विशेश व्यवहार रोग निवारणार्थ नहीं होता (वहाँ यह केवल सुगन्धियों में प्रयुक्त होता है।) हाँ ? होमयोपैथी मेंडक हेतु इसका प्रचुर उपयोग होता है।

अस्तु, वे स्त्री रोगों यथा यःपापस्मार (Hysteria) या उससे मिलते-जुलते रोगों में अम्बर का बिशेष उपयोग करते हैं। उनका कहना है कि उक्त अवस्थाओं में अम्बर शीघ्र ही प्रभाव प्रगट करता है। खिन्नता, बुरे बिचार, अनिद्रा मानसिक अवस्था के कारण दर्शन तथा श्रवण-शक्ति का ह्रास आदि योषापस्मार या तत्सम उत्पन्न होने वाली व्याधियों में दृष्टिगत होने वाले कुलक्षणों में अम्बर का बड़ा ही उत्तम प्रभाव प्रत्यक्ष देखा जा सकता है।

विशेष वर्णन के लिये देखिये होमियोपैथिक निघण्टु प्रभृति।

अम्बर–इं० एक प्रकार का निर्यास कहरुवा।

–फ्रां०, हि०। देखो—सक्सीनम (Succinum)

अम्बरअशहब–अ० (A kind of amber) एक प्रकार का धूसराभ श्वेतअम्बर। देखो–अम्बर।

अम्बरग्रीस–इं०
अम्बरग्रसिया–ले० } अम्बर।

अम्बरतुश्शिता–अ० शीताधिक्य, कठिन शीत, सख्त जाड़ा।

अम्बरदः–सं० पुं० कपास, कार्पास। (Gossybium Indicum) वै० निघ०

अम्बरबारी–हिं० सज्ञा पु० [सं०] एक चूप है।

दारुहरिद्रा, दारुहल्द, चित्रा। (Berberis Asiatica.)

अम्बर बारीस–यु०, अ० जरिश्क, दारुहल्दी दारुहरिद्रा। (Berberis)

अम्बर बारीसियह्–अ० एक प्रकार का आहार जिसे जरिश्कियह् भी कहते हैं।

अम्बरबेद–फा० गुले अर्वश् जुअ्दह् (जादह)–अ०। फुलियुन (Fuliyun)–यु०। पोली, जर्मेण्डर (ट्युक्रियम् पालिमम) Poley Germander (Teucrium Polium, *Linn*)–ले०। फा० इं० ३ भा०)

तुलसी वर्ग—

(*N. O. Labiatœ*)

उत्पत्ति स्थान—अरब (जद्दा)।

वानस्पतिक–वर्णन–भंगरा या कोई और बूटी है)। जुअ्दह् वस्तुतः शेह (दरमनह् जोहरी जवायन) की एक जाति है जिसमें शाखाएँ होती है। इसके पुष्प पीताभ श्वेत और पत्ते श्वेत पतले तथा लोमश होते हैं। यह लगभग एक बित्ता ऊंचा होता है। इसके शिरों पर बालों का गुच्छा होता है जिनमें बीज भरे होते हैं। यह दो प्रकार का होता है—(१) छोटा और (२) बड़ा।

नोट—यद्यपि जुअ्दह का वर्णन मूजिबुल् कानून एवं अक्सराई में बिद्यमान है, तो भी वर्तमान नफीसी में इसका वर्णन न था। कदाचित् प्रकाशकीय भूल से रह गया हो।

प्रकृति—छोटा ३ कक्षा में उष्ण और २ कक्षा में रूक्ष है, बड़ा २ कक्षा में उष्ण व रूक्ष है। परन्तु दोनों मूत्र और आर्त्तवप्रवर्त्तक है एवं रोधोद्घाटक तथा उदरीय कृमिघ्न व कृमिनि स्सारकहैं यर्कान स्याह (Black jaundice) तथा जलोदर के लिये गुणदायक हैं, परन्तु आमाशय तथा शिर के लिये हानिकर है। (नफी०)

रोध उद्घाटक, मूत्रल, कृमिघ्न और बल्य है। (Diosc. iii., 115; Pliny21, 60, 84)

अरब निवासी इसको ज्वर-विकारों में प्रयुक्त

करते हैं। २॥ तो० उक्त औषधि को रात्रिभर ठंडे जल में भिगोकर प्रातः काल उसको छान कर सेवन करते हैं। बाल ज्वर में उक्त औषधि की शरीर में धूनी देते हैं। फा० इं ३ भा०।

स्वाद तिक्त। गंध—तीव्र।

हानिकर्त्ता—शिरः शूलोत्पादक तथा आमाशय हानिकर है। दर्पघ्न—हमामा आवश्यकतानुसार और सर्द तर वस्तु। किसी किसी के मतमें कश्नीज (धान्यक)। प्रतिनिधि—पर्वती पुदीना, शेह, अनार मूलत्वक् और तज। शर्बत की मात्रा—४ मा० से १०॥ मा० तक।

प्रधानगुण—बुद्धि वर्द्धक, रोधोद्घाटक और मूत्र एवं आर्त्तवप्रर्त्तक।

गुण, कर्म, प्रयोग—इसमें रेचन तथा तिर्याक की शक्ति है। यह सम्पूर्ण अवयव के रोध का उद्घाटक, अख्लात (दोषों) को द्रवीभूत कर्त्ता और मूत्र तथा आर्त्तव का प्रवर्त्तक है, इसका क्वाथ बुद्धि को तीव्र करता है और विस्मृति को दूर करता है तथा इस्तिस्काअ वारिद (शीत जलोदर), यर्कान स्याह (Black Janndice) एवं श्लेष्मा व वातजन्य ज्वरों को लाभप्रद है। उदरस्थ कृमि निःसारक वायुलयकर्त्ता, मूत्ररोध तथा संधिशूल को लाभप्रद एवं गर्भाशयशोधक और प्लीहा के शोथ को लय कर्त्ता है। इसका अवचूर्णन व्रणपूरक है। नवीन पत्तों का प्रलेप व्रण का स्वच्छकर्त्ता एवं पूरणकर्त्ता है। इसकी धूनी विषैले जानवरों को भगाती है। मधु के साथ इसका अंजन करने से दृष्टि तीव्र होती है। म० अ०। तुह्फा।

यह रक्त शोधक और बिच्छू के विष को दूर करने वाला है। म० मु०।

अम्बरबेल-पं० अर्कपुष्पी, बनवेरी-हिं०। सिंगरोटा-पं०, बम्ब०। (Pentatropis spiralis) मेमो०।

अम्बर माइअ-फा०
अम्बर साइल-अ० }

शिलारसः, सिह्लकः-सं०। मिअ्हे साइलह्-फा०। Liquidamber (Styrax præparatus)

अम्बर सुगन्धः-सं० पु० मश्क अम्बर, अम्बर। (Amber Grsea)

अम्बरहा-मास्रुवन्ती। लु० क०।

अम्बरा-सं० स्त्री० कपास, कार्पास। (Gossypium Indicum)

अम्बरा-सं० स्त्री० आम। (Mango)

अम्बराक्षी-ची-सं० स्त्री० अज्ञात।

अम्बरातकः,-रीयः-सं० पु० आमड़ा, आम्रातक। (Spondias Mangifera) जटा०।

अम्बरि,-रीषः-सं० पु० क्ली०
अम्बरीष-हिं० संज्ञा पु० (१) अमड़ा, आम्रातक। (Spondias Mangifera) (२) भर्जन पात्र। वह मिट्टी का वतन जिसमें भड़भूँजा गरम वालू डालकर दाना भूनते हैं। अम०। (३) भाड़। (४) सूर्य का नाम। (५) किशोर अर्थात् ग्यारह वर्ष से छोटा बालक (६) अनुताप। पश्चात्ताप।

अम्बरी-गारो० आमला। (Phyllanthus Emblica)

अम्बरीसक-हिं० संज्ञा पु० [सं० अम्बरीष] भाड़, भरसायँ-ड०।

अम्बल-हिं० स्त्री० (१) मादक वस्तु (Intoxication)। (२) खट्टा रस।

अम्बल-हिं० पु० रामतुलसी (Ocimum gratissimum) देखो—तुलसी।

अम्बल-ता० कमल (Nelumbium Speciosum, *Wight*) फा० इं०।

अम्बलह-फा० अम्लिका, अमली, इमली। (Tamarindus Indicus)

अम्बलपिष्ट-सं० चांङ्गेरी, चूका, खटकल। (Rumex scutatus)

अम्बली-हिं० स्त्री० अम्लिका, इमली, अमली। (Tamar indus Indicus)

अम्बली-पं०
अम्बलीय-अ० }

आमला। (Phyllanthus emblica)

अम्बलु-पं० मोवा, बच्चवा। मेमो०

अम्बलोना-हिं० स्त्री० खटकल, चांङ्गेरी (Rumex scutatus)

अम्बलोनान-हिं० पु० एक भारतीय वृक्ष का फल है जिसका स्वाद खट्टा होता है।

अम्बलोलवा- हिं० पु० गिदड़द्राक-पं०। (Vitis trifolia)

अम्बलोवान-हिं० अज्ञात।

अम्बवटी-हिं० स्त्री० खटकल, चूका, चांङ्गेरी। (Rumex scutatus)

अम्बष्ठः ष्ठः-स० पु० (१) देश विशेष। पंजाब के मध्य भाग का पुराना नाम। (२) वैश्य स्त्री व ब्राह्मण पुरुष से उत्पन्न एक जाति। इस जाति के लोग चिकित्सक होते थे। (३) अंबष्ठ देश में बसने वाला मनुष्य। (४) महावत, हाथीवान, फीलवान।

अम्बष्ट(ष्ठ)का,-की-
अम्बष्टा(ष्ठा),-ष्टि(ष्ठि)-का- } स० स्त्री० (१) एक लता का नाम। पाढ़ा। ब्राह्मणी लता। पाठा। (Cissampelas pareira, *Linn*) रा० नि० व० ६। पटाण्डू-हिमा०। (२) भार्ङ्गी, भार्गी। (Clerodendron siphonanthus) र० मा०। (३) लक्ष (क्ष्म)णा मूल, श्वेत कण्टकारी। भैष० स्त्रीरोग-चि० पुष्यानुग चूर्ण। (४) अम्ल लोणी, आमरूल, चांगेरी। (Rumex scutatus) रा० नि० व० ५। भा० पू० १ भा०। (५) यूथिका, जूही। (Jasminum auriculatus) प० मु०। (६) मयूरशिखा। (Actinopteris dichotoma) वा० सू० प्रियङ्ग्वादि। "अम्बष्ठामधुकं नमस्कारी"। (७) आम्रातक, अमड़ा। (Spondias mangifera) क्षुद्र क्षुप विशेष। मोइआ, मोहुपा-हिं०। माचिका और साकुरुण्ड-पश्चिम०। अम्बाड़ा, अम्बरी-द०। पुदिना-बं०।

पर्य्याय—वालिका, बाला, शठाम्बा, अम्बालिका, अम्बिका, अम्बा, माचिका, दृढ़वल्का, मयूरिका, गधपत्रा, चित्रपुष्पी, श्रेयसी, सुखवाचिका, छिन्नपत्री, भूरिमल्ली-सं०। सु० सू० ३८ अ०। रस० र० पुष्यानुग चूर्ण।

गुण—कसेली; अम्ल, कफघ्न, रुचिकारी, तथा दीपन है और कन्ठ रोग एवं वात रोगनाशक है। रा० नि० व० ४।

अम्बष्ठादिः-सं० पु० पाठादि गण विशेष यथा—अम्बष्ठा, धातकी पुष्प, समंगा कट्वंग, मधुक, विल्वपेशी, रोध्र, सावररोध, पलाश, नन्दी, वृक्ष और पद्मकेशर। गुण-सघानीय, पित्त में हितकारक व्रण (रोपण) पूरक और पक्वातिसार नाशक है। सु० सू० ३८ अ०।

अम्बष्ठा-स० स्त्री० (१) कुटकी भेद, कटुकी, Akind of (Picrorrhiza kurroa) यथा-"रक्तकाण्डेरुहाम्बष्ठी कटुका चापरा स्मृता" द्रव्याभि०। (२) इन्द्रायण। (Citrullus colocpnthis)

अम्बह्-फा० आम (Mangifera Indica)

अम्बहहल्दी-हिं० स्त्री० अम्बाहल्दी। आम्रहरिद्रा। (Curcumaamada)

अम्बहे हिन्दी-फा० आ० अण्डखर्बूजा, पपैया। (Carica papaya)

अम्बा-हिं० संज्ञा पु० आम (Mangifera indica)

अम्बा (लिका)-सं० स्त्री० (१) अम्बष्ठा, पाठा, निर्विषी। (Stephania hernandifolia) रा० नि० व० ४। (२) मोंइया, माचिका (Solanum nigrum)। (३) आम्रातक अम्बाड़ा। (Spondias mangifera)

अम्बाड़म्-सं० क्ली० अमला, अम्बाड़ा, आम्रातक। (Spondias mangifera)

अम्बाड़ा-
अम्बाड़ी- } हिं० पु० स्त्री (१) आमड़ा, आम्रातक। (२)-बम्ब० पटसन-द०, म०। (Hibiscus cannabinus, *Linn*) फा० इं०।-हिं० चुक्र, शतवेधी।

अम्बाड़ी की भाजी-मेष्ठा बं०। (Hibiscus

sabdariffa) पालो साग-हिं० । इं० है० मा० ।

अम्बानुझाड़-गु० आम का पेड़ । (Mangotree)

अम्बापुरी-बन्ब० आम का पेड़ । (Mangifera Indica) मे० मो० ।

अम्बापोली-मह०. हिं० संज्ञा स्त्री० [स० आम्र=आम, प्रा० अव+सं० पोलि=पोतला, रोटी] आम्रावर्त-सं० । अमरस, अमावट=हिं० । फा० इं० । See-Amavata

अम्बारी-हिं० स्त्री० अमडा आम्रातक । (Spondias Mangifera)

अम्बारी-द० (Hibiscus cannabinus) पटसन, मेष्टपात-बं० । सन-हि० । गोगुंकूरु ते० पलङ्गु-ता० । ढोढे कुद्रम-सन्ता० । कनरिया-उ ॰ासा । कुद्रम-विहार । पिण्डिक गिडा.कना० । नील-सं० । इं० मे० प्ला० ।

अम्बारीकन-खुन्सा । लु० क० । See-Khunsa

अम्बाल-गु० (१) आमला ।-फा० (२) इमली अम्लिका ।

अम्बालम-मल० } आम्रातक, अमड़ा अम्बाड़ा
अम्बालमु-ते० }
(Spondias mangifera) इं० मे० मे०

अम्बालस-यू० अंगूरलता ।

अम्बालस अग्रिया-यू० जंगली शलगम या जंगली अंगूर का वृक्ष ।

अम्बालस मालिया-यू० फाशरस्तीन । See Fasharastina

अम्बालस लूका-यू० फाशरा । (Bryoniascabrella)

अम्बालिका-सं० स्त्री० (१) देखो—अम्बा ।-हिं० स्त्री० (२) मा, माता, जननी । (३) पांण्डुराज; की माता ।

अम्बासीस-यू० अनागलुसके समान प्रभावशाली एक औषधि है ।

अम्बाहलद- कों० } कर्पूरहरिद्रा,
अम्बा(बे) हल्दी-हिं०महा० }
बनहरिद्रा । (Curcuma aromatica, *Sa lisb*)

अम्बा हिन्दी-अ० फा० अण्डखरबूजा, पपीता, विलायती रेंड । (Carica papaya) इं० मे० मे० ।

अम्बिका-स० स्त्री० } (१) अम्बष्ठा,
अंबिका-हिं० संज्ञा स्त्री० }
पाठा । (Cissampelas hexandra) मा० पू० १ भा० । (२) मायाफल वृक्ष-सं० । मयनफल-हिं० । (Randia dumetorum, *Lum*) मद० व० ४ । (३) कटुकी, कुटकी । (Picrorrhiza kurroa) श० च० ।-हिं० स्त्री० (४) माता, माँ । (५) दुर्गा, भगवती, भवानी, देवी । (Anameof Bhavani wife of shiva)

अम्बिया-हिं० स्त्री० अमिया, अमिया, टिकोरा, छोटा आम । (A small unripe mango)

अम्बिल-हिं० पु० एक आहार है । यह धोए हुए चावल या छिलका उतारे हुए ज्वार को पीसकर उसमें खट्टा छाछ मिलाकर धूप में रखते हैं कि खट्टा हो जाए । फिर लवण योजित कर और छाछ डालकर तैयार करते हैं । यह शीतल आहार है ।

अम्बीतून-यू० शतपुष्पा, सोया, सोवा (Peucedanum graveolens, *Benth*)

अम्बीबूटी-हि० स्त्री० तिनपतिया, चाङ्गेरी । (Rumex scutatus.)

अम्बु-सं० क्ली० } (१) जल । (Water)
अंबु-हि० संज्ञा पु० }
रा० नि० व० १४ । (२) बालक, सुगन्ध, बाला (Pavonia odorata.) च० द० ज्वरातिसार-चि० । "किराताम्बु यवासकम् ।" भैष० शोथ -चि० पुनर्णवा तैल ।

अम्बुक-पं० मलूक बिस्साढ़ी । (Diospyros lotus, Linn.) मे० मो० ।

अम्बुकः-सं० पुं० (१) श्वेतार्क मन्दार । (२) रक्तैरण्ड ।

अम्बुकण–हि० पुं० ओस, तुसार, शीत। (Dew)

अम्बुकणा–सं० स्त्री० जल पिप्पली। (Lippia nodiflora.)

अम्बुकण्टकः–सं० पुं० जल जन्तु विशेष, नक्र, ग्राह, मगर। (Analligator.) त्रिका०।

अम्बुकन्दः–सं० पुं० शृङ्गाटक, सिंघाड़ः। (Trapa bispinosa.) वै० निघ०।

अम्बुकिरातः,-टः–सं० पुं० नक्र ग्राह। (An alligator) त्रिका०।

अम्बुकीशः–स० पुं० (१) गोधा। गोह(-ही)। (A lizard, a guana) (२) शिशुमार सेकची। त्रिका०। see–shishmara

अम्बुकुक्कुटी-टिका–स० स्त्री० जल कुक्कुटी, जल मुर्गी, मुर्गाबी-हि०, पान कउड़ी-बं० पान कोंवड़ी म०। (A water-hen-diver.) देखो–प्लवः।

अम्बुकूग्मः–सं० पुं० गोधा। (A guana.) वै० निघ०।

अम्बुकृष्णा–स० स्त्री० जल पिप्पली जल पीपल-हि कांचड़ा दाम् बं० वै० निघ०। see–Jala-pippali

अम्बुकेशर–सं० पुं० बीजपूर, छोलगवृक्ष बिजौरा नीबू-हि,० सं०। लेबू-बं०। (Citrus limonum) र० सा० सं०।

अम्बुचरः–सं० पुं० (१) जलचर (Aquatic) (२) कञ्चट, गजपीपल, गजपिप्पली। (Scindapsus officinalis) वै० निघ०।

अम्बुचामरम्–स० क्ली० शैवाल-सं० सेवार-हि०। (Sea-weed) जटा०।

अम्बुचारिणी–स० स्त्री० स्थल पद्मिनी थल पद्म। (See-Sthala padmini) वै० निघ०।

अम्बुजः–स० पुं०
अम्बुज–हि० संज्ञा पुं०

(१) पानीके किनारे होने वाला एक पेड़। हिज्जल समुद्रफल, ईजड़, पनिहा। (Eugeniaacutangula) अम० (२) मत्स्य आदि (Piscis) भा०। (३) जलबेतस, जलबेंत। (४) कञ्चट गजपीपल, गजपिप्पली। (Scindapsus officinalis) वै० निघ०। त्रि० (५) जलजातमात्र, सम्पूर्ण, जलोद्भूत पदार्थ जल से उत्पन्न वस्तु (Aquatic)। क्ली०, हि० पुं० (६) कमल, पद्म अम्भोज। The lotus (Nymphaeanelumbo) मे० जत्रिक। (७) बेंत (८) वज्र (९) शंख (१०) ब्रह्मा।

अम्बुजन्म–हि० पुं० पद्म कमल पंकज। (The lotus)।

अम्बुजा–स० स्त्री० आम्रगंधक। कुत्तू-हि० अम्बुली-म०। कर्पूर-बं० माङ्गनारी-मल०। (Limnophila gratio loides, Br) फा० इ० ३ भा०।

अम्बुजामलकी–सं० स्त्री० पानीयामलक। (Flacourtia cataphracta)

अम्बुटः–सं० पुं० अश्मन्तक वृक्ष। आबुटा अ(-ा)पटा मह० रा० नि० व० ९ see–Ashmantakah

अम्बुटी–बम्ब० चाङ्गेरी, चूका। (Oxalis corniculata, Linn) फा० इ० १ भा०।

अम्बुतालः–सं० पुं० शैवाल। सेवार हि० (Sea weed) त्रिका०।

अम्बुदः–सं० पुं० मुस्ता मुस्तक, मोथा (Cyperus rotundus, Linn) सि० यो० कामला चि० मूर्व्वाद्यघृत वृन्द। 'पटोलाम्बुददारुभिः।"

अम्बुधरः–सं० पु० नागरमुस्ता, भद्रमुस्ता, नागरमोथा (Cyperus pertenuis) वै० निघ०।

अम्बुधिः–सं० पु० सागर, समुद्र, सिन्धु, जलधि। (A sea)।

अम्बुधिफेनः–सं० पु० समुद्रफेन। Os sepie (Cuttle fish bone) भा०।

अम्बुधिश्रवाः–स० स्त्री० ग्वारपाठा घीकुँआर, घृतकुमारी। (Alœbarbadensis) कोड़फल–म०। रा० नि० व० ५।

अम्बुनाम–सं० क्ली०, ह्रीबेर, सुगन्धवाला। (Pavonia odora, Willd) भा० बालक।

अम्बुनाली–सं० स्त्री० (Cerebral aqueduct)

अम्बुनियामिका–सं० स्त्री० (Amnion) गर्भकला भ्रूणमध्यावरण।

अम्बुपः-सं० पु०
अम्बुप-हिं० संज्ञा पु० } चक्रमर्द, चकवड़, चकौड़ का पौधा। (Cassia tora) वाकुन्द (बाँ) श०। (२) कञ्चट, गजपिप्पली (Scindapsus officinalis) के०।

अम्बुपटलम्-सं० क्ली० (Aqueous humour) जलीय पटल।

अम्बुपत्रा (त्रिका) पत्री-सं० स्त्री० उच्चटा, गुआ, घुँघची। (Abrus precatorius) रा० मा०।

अम्बुपिप्पली-सं० स्त्री० जलपिप्पली, काँचड़ा घास-बं०। बुकन-हिं०। (Lippia nodiflora)

अम्बुप्रसादः-
अम्बुप्रसादकः
अम्बुप्रसादनः } सं० पु० निर्मली-फल वृक्ष, निर्मली का पौधा। (Strychnos potatorum, *Linn*) रा० नि० व० ११। देखो—कतकः।

अम्बुप्रसादन फलम्-सं० क्ली० कतक, निर्मलीफल। Strychnos potatorum (fruit of) वै० निघ०।

अम्बुफलम्-सं० क्ली० शृङ्गाटक, सिंघाड़ा (Trapa Bispinosa)

अम्बुवाह-हिं०पु० मेघ, वारिद, बादल। (Cloud)

अम्बुबेया-सिरि० (१) कासनी। Endive seeds (Cichoriumin intybus, *Linn*) फ्लाइ०।

नोट—अम्बुवया सिरिया भाषा का शब्द है, किन्तु फारसी ग्रन्थों में इसके निम्न रूढ़ार्थ पाये जाते हैं, यथा—अम्बुई (Ambui) अर्थात् गन्ध व वया अर्थात् पूर्ण यानी गंधपूर्ण (Allurements)। देखो—कासनी। मा० इ० २ भा०।

अम्बुबोइया-फा० कासनी। (Endive seeds) इ० मे० मे०।

अम्बुभृत्-सं० पु० (१) मेघ, बादल (Cloud) (२) मुस्तक, मोथा (Cyperus rotundus) अ०। (३) सागर, समुद्र। (Sea) के०।

अम्बुमयूरकः-सं० पु० जलापामार्ग, जल चिर्चिटा। वै० निघ०।

अम्बुमात्रः
अम्बुमात्रजः- } सं० पु० शम्बूक, घोंघा A snail (Cochlea helix)

अम्बुमुक्-च्-सं० पु० (१) मुस्तक, मोथा। (Cyperus rotundus) (२) मेघ, बादल (cloud) के०।

अम्बुयष्टिका-सं० स्त्री० भार्गी, भारंगी। (Clerodendron siphonanthus) र० मा० वामन हाटी-बं०।

अम्बुरः-सं० पु० द्वाराधः काष्ठ। गोबराट् (कां)।

अम्बुरु(रो)ह-सं० पु०, क्ली० पद्म, कमल। (Nymphæanelunbo) रा०।

अम्बुरुहा-सं० स्त्री० पद्मिनी, स्थल पद्मिनी। वै० निघ०। (See-sthalapadmini)

अम्बुल-पं० आमला (Phyllanthus emblica) मेमो०।

अम्बुली-मह० अम्बुजा, आम्रगन्धक। (Limnophila gratioloides, Br) फा० इ० ३ भा०।

अम्बुवल्लिका-सं० स्त्री० कारवेल्ला, करेली (Momordica charantia) वै० निघ०।

अम्बुवल्ली-सं० स्त्री० (१) क्षुद्रकारवेल्ली, छोटी करेली (Momordica charantia) (२) जल पिप्पली, (Lippia nodiflora) वै० निघ०।

अम्बुवासिनी-
अम्बुवासी- } सं० स्त्री० रक्त पाटला, पादल

अम्बुवाहः-सं० पु० मुस्तक, मोथा, नागरमोथा। (Cyperus rotundus) वि० क० क० वङ्गी प्रदर-वि०। (२) बादल मेघ।

अम्बुवेतसः-सं० पु० जलवेतस, एक प्रकार की वेत जो पानी में होती है, बड़ी बेंत, जलाला-मह० । पर्याय-परिव्याधः, विदुलः, नादेयी (अ०) ।

अम्बुशिरीषिका-
अम्बुशिरीषी-
सं० स्त्री० जलशिरीष, दाडोन, टिटिनी । वै० निघ० ।

अम्बुशुक्तिः-सं० स्त्री० जलशुक्ति, जल सीपी, जलशिंपी-मह० । झिनुक-बं० । (A snail) वै० निघ० ।

अम्बुसर्पिणी-सं० स्त्री० जलायुका, जलौकस, जोंक -हिं० ब० । Leech (Hirudo)

अम्बुसादनम्-सं० क्ली० निर्म्मली बीज, कतक । (Strychnos potatorum) वै० निघ०

अम्बुसारा-सं० स्त्री० कदली वृक्ष । (Musa sapientum) भा० पू० १ भा० फा० ब० ;

अम्बुसाह्वः-सं० पु० कुन्द पुष्प क्षुप । (Jasminum multiflorum) वै० निघ० ।

अम्बुसीमा-अ० अञ्जनहारी, घेरी, गई रह । स्टाइ (Stye), ब्लीफेराइटिस (Blepharitis) -इं० ।

अम्बूकृत्-सं० त्रि० ऐसा वचन जिसमें थूक निकले, निष्ठीवन युक्त वचन ।

अम्बूकः-सं० पु० लकुच वृक्ष । बदहर-हिं० । (Artocarpus lakoocha)-के० ।

अम्बूब भको-अ० बुस्तान अफरोज ।

अम्बूबुर्राई-अ० सदाबहार, हयुल आलम ।

अम्बूबुल् मलिक-अ० इसके लक्षण में मतभेद है। कोई २ हयुल् आलम को तथा कोई कलगह वा महूरा को कहते हैं ।

अम्बूरस्मा-यू० सफेद कुटकी । Picrorrhiza kurroa (The white var)

अम्बूस-यू० नानखाह, अजवाइन । (Ptychotis ajowan)

अम्बूस मारीस-यू० काली कुटकी । Picrorrhiza kurroa (The black variety of-)

अम्बेलिफरी-ले० छत्र या छत्री (-त्रिका) वर्ग ।

अम्बेलोउग्रिया-अ० अजात ।

अम्बेहल्दी-द० अम्बा-हलदी, वनहरिद्रा । (Curcuma aromatica, Salisb) स० फा० इं० ।

अम्बो-गु० आम्र, आम । (Mangifera indica) फा० इं० १ भा० ।

अम्बोलटी-बं० आमला । (Phyllanthus emblica)

अम्ब्लोगिना पालिगोनाइडीस-ले० । वन तरबूजीय, जंगली चोलाई । मेमो० ।

अम्ब्लोगिना सीनीगेलेंसिस-ले० जंगली मेंहदी, दादमारी । मेमो० ।

अम्बोसो-बम्ब० (१) आम्रपेशी, आम की गुठली (Phyllanthusemblika) फा० इं० १ भा० । बं० (२) आ (अ) मचूर । बम्ब० । (३) आम । (Mangifera iddica) मेमो० । फा० इ० १ भा० । इं० मे० मे० ।

अम्बौटी-हिं० स्त्री० चांगेरी, चूका । आमरुल बं० । (Rumex scutatus)

अम्त्री-मरा० । नक्छिकनी, छिक्किका । (Dragea volubilis, *Benth*) फा० इं० २ भा० ।

अम्भः-सं०, हिं० पु० (१) अम्बु, जल, पानी । (Water) रा० नि० व० १४ । (२) वाव, सुगन्धवाला । (Pavonia odorata) अम० ।

अम्भःपा-सं० पु० चातक पक्षी । A kind of cuckoo (cuculus melano-leucus)

अम्भः सारः-सं० पु० मुक्ता, मोती । (Pearl) वै० निघ० ।

अम्भः सूः-सं० स्त्री० (१) शम्बूक, घोंघा (A snail) । (२) धूम, धुआँ । धुवे-मह० । (Smoke) हे० । (३) भाप, वाष्प । (Vapour)

अम्भसोज-हिं० पु० (१) कमल, पद्म, अम्बुज (A lotus) (२) चन्द्र (Moon) । (३) सारस पक्षी (A ostork)

अम्मसोद-हिं० पु० जलद, अभ्र, मेघ (Cloud)

अम्मसोधर-हिं० पु० (१) जलधर, मेघ (Cloud) (२) समुद्र (A sea)

अम्मसोधि-
अम्मसोनिधि- } हिं० पु० समुद्र, सागर; जलधि (A sea)

अम्मेडो-गु० अम्बाड़ा। आम्रातकः (Spondias mangifera)

अम्भोजम्-सं० क्ली०
अम्भोज-हिं० संज्ञा पु० } (१) पद्म, कमल। (Nymphœa nelumbo) (२) वारिवेतस, जलबेतस। (See-Jalavetas)-पु० (३) पुष्करास्थ, पुष्करमूल (The root of alpotaxis auriculata)। (४) सारस पक्षी। (A stork) के०। (५) कपूर। (६) शंख। (७) चन्द्रमा।

वि० जल से उत्पन्न।

अम्भोजनालः-सं० पु० पद्मनाल, कमलनाल, कमल की डण्डी। (Root- stock of nymphoea lotus) वै० निघ०।

अम्भोजनी-
अम्भोजिनी- } सं० स्त्री० (१) पद्मलता, कमल का पौधा। कमलिनी। पद्मिनी। (२) कमलों का समूह। (३) वह स्थान जहाँ पर बहुत से कमल हों।

अम्भोजा-सं० स्त्री० यष्टिमधु वल्ली, मुलेठी। (Glycyrrhiza Gladra) वै० निघ०।

अम्भोदः सं० पु०
अम्भोद-हिं० संज्ञा पु० } (१) भद्रमुस्ता, नागरमोथा,। (Gyperus Rotundus) रा० नि० व० १। च० द० यक्ष्म-चिं० एलादिमन्थ। (२) प्रपौण्डरीक। (Root stock of nymphoea lotus) प० मु०। (३) बादल। -क्ली० (४) कांस्य, काँसा। (Bronze)

वि० जो पानी दे।

अम्भोधरः-सं० पु० (१) मुस्तक, मोथा। (Cyperus Rotundus) (२) मेघ (Cloud)। (३) समुद्र। (A sea) शब्द० र०।

अम्भोधिपल्लवः-
अम्भोधिवल्लभः- } सं० पु० प्रवाल, मूँगा। (Coral) रा० नि० व० १३।

अम्भोमुक्-सं० पु० प्रवाल, मूँगा। (coral)

अम्भोरुहम्-सं० क्ली० (१) पद्म, कमल। (Nymphœanelumbo) च० द० र० पि० चि०। पु० (२) सारस पक्षी। (The Crane) अ०।

अम्भोरुहकेशरम्-सं० क्ली० पद्मकेशर। (see--Padma--keshar) च० द० र० पि० चि०।

अम्मअह्-
अम्मअ- } अ० शिथिल विचार, निर्बुद्धि, जो प्रत्येक के आधीन हो जाय।

अम्मरस-हिं० संज्ञा पु० [सं०अमरस] अमृत सरका कबूतर। एक कबूतर जिसका सारा शरीर सफेद और कण्ठ काला होता है।

अम्मा-हिं० स्त्री० माता, माँ। (Mother)

अम्मी-यू० इं०

अम्मीकाप्टि अम्-ले०
अम्मी डी, इण्डी-फ्रां०
अम्मोपप्यु सीलम-ले० } अजवायन—(Carum copticum, *Benth*) फा० इं० २ भा०।

अम्मुगीलाँ-
मुगीलाँ- } अ० कीकर, बबूल, बबूर। (Acacia Arabica, *Willd*) (Babool tree) स० फा० इ०। मु० अ०। म० अ०।

अम्मेनिया सिनेगेलेन्सिस-ले० दादमारी वर्ग।

उत्पत्ति स्थान—पञ्जाब के मैदान तथा उत्तर पश्चिम हिन्दुस्तान।

उपयोग— फ़ोस्फ़ाजनक प्रभाव हेतु । इं० मे० प्रा० ।

अन्धा–अ० अंधी स्त्री । यह अम्यून का स्त्री लिंग है,

अन्धुल् अल्वान–अ० रंगों का अंधापन यह एक प्रकार का विकार है जिसमें रोगी रंगों का, विशेष कर जब कि उनको दूरी से देखे तो एक दूसरे में भेद नहीं कर सकता ।

क्रोमैटाप्सिया (Chromatopsia) कलर ब्लाइण्डनेस (Colour blindness)

अन्यूशूफ़ारास–रू० रामतुलसी । (Ocimum gratissimum.)

अन्यूस–यू० अजवाइन, नान्ख़ाह । (Carum copticum) ।

अम्र:–सं० पु० (१) आम्रवृक्ष आम । (Mangifera iadica) रा० नि० । (२) माचिका मोइ (हु) या । पुदिना–बं० । (३) अम्लवेतस (Rumex vesicarius) रा० नि० ।

अम्रम्–सं० क्ली० आम का फल । Mangifera indica (The fruit of)

अम्रगंध हरिद्रा–सं० स्त्री० आम्रहरिद्रा. अम्बा हल्दी आम हल्दी, आमहलुद–बं० । (Curcuma reclinata) ।

अम्रत. अ० वह मनुष्य जिसके भव (भ्रू) के रोम गिर गये हों जिसकी डाढी घनी न हो अर्थात् छतरी डाढी वाला ।

अम्रत–मल० गुड्ची, गुरुच, गिलोय । (Tinos pora cordifolia) ।

अम्रत–हिं० पु० लाल सफ़री आम लाल, अमरूद । (Psidium Guava Var. P.) इं० मे० मे० ।

अम्रतवल्ली–कना० गुड्ची, गुरुच गिलोय अमृतवल्ली (Tinospora cerdifolia) ।

अम्रद–अ० रमश्रुहीन, डाढी रहित, जिसके अभी डाढी मूँछ न निकले हों बियर्डलेस (Beardless)

अम्रद परस्त–अ० लूती, बच्चा बाज़ पेडीरेस्ट (Pederest)–इ० ।

अम्रवेतस:–सं पु० अम्लवेतस (Rumexvesicarius) ।

–अम्रसार:–सं० पु० अम्लवेतस । (Rumex vesicarius) रा० नि० ।

अम्र:–हि०पु० आम्रातक, अम्बाडा (Hogplum)

अम्राक–यू० मांस रस, सोरबा । (Soup) ।

अम्राज़ा–अ० (ब० व०) मर्ज़ (ए० व०) नाखुशी, दुःख दर्द बीमारियाँ । रोग, व्याधि विकार –हि० । डिजीज (Disease) इं० । देखो मर्ज़ ।

अम्राज अस्सिय्यह्–अ० वे रोग जिनमें शरीर के कारण मवाद बन्द होकर ठिठर जाए ।

अम्राज अस्सिय्यह्
अम्राज जातायह्
–अ० असली बीमारियाँ, जाती बीमारियां, वे रोग जो स्वतः उत्पन्न हों अर्थात् अन्य रोगों के आधीन न हों या उनकी उपस्थिति के कारण न उत्पन्न हों । ईडिओपैथिक डिजीजेज (Idiopathic diseases)–इं० ।

अम्राज आम्मह्–अ० व्यापक रोग, सार्वांगिक रोग, वे रोग जो सम्पूर्ण शरीर में एक समान उत्पन्न हों जैसे—ज्वर या रक्ताल्पता आदि । जेनरल डिजीजेज (General Diseases)–इं० ।

अम्राज इन्हिलाल फ़र्द–अ० देखो—अम्राजतफ़र्कुब इन्तिसाब ।

अम्राज औइयह्–अ० अम्राज तजावीफ़, वे रोग जिनमें शारीरिक स्रोत संकुचित अथवा विस्तृत हो जाते हैं । वैस्क्युलर डिजीजेज (Vascular Diseases)–इं० ।

अम्राज कल्ब–अ० हार्दिक रोग, हृद्रोग । हार्ट डिजीजेज (Heart Diseases)–इं० ।

अम्राज कुल्लय्ह्–अ० कष्टसाध्य, दुःसाध्य । (Difficult to cure)

अम्राज ख़नाजीरिय्यह्–अ० कण्ठमाला, गलगण्ड, गण्डमाला । स्क्रफ्युलस डिजीजेज (Scrofulous Diseases)–इं० ।

अम्राज ख़ास्सह–अ० ख़ास, ख़ास रोग, स्थानिक रोग, वे रोग जो ख़ास ख़ास अवयवों में ही उत्पन्न हुआ करते हैं, जैसे–बधिरता कान तथा अंधता आँख में ही उत्पन्न होती है । लोकल डिजीजेज (Local Diseases)–इं० ।

अम्राज ख़िल्क़त-अ० वे रोग जिनमें विकृताऽयव की रूपाकृति परिवर्तित हो जाए।

अम्राजुल मुसल्लमह्-अ० वे रोग जिनके उचित तथा उपयुक्त उपाय में कोई बात रोधक हो।

नोट—यह शब्द अम्राज मुस्तल्लमह् का विपरीतार्थक है।

अम्राज सुह्लुल्इलाज-अ० सुखसाध्य, वे रोग जिनकी चिकित्सा आसान हो। (Easy to cure),

अम्राज सुह्रिय्यह्-अ० अम्राज सुह्रह् की बीमारियाँ। इसका संकेत उपदंश व सूजाक की ओर है। काम व्याधि, जननेन्द्रिय, सम्बन्धी रोग, गुप्तरोग। वेनरियल डिज़ीजेज (Venerial Diseases) इ०।

नोट—चूँकि प्राचीन यूनानियों का यह विश्वास था, कि जब सीतानी लोगों ने उनके ऊपर चढ़ाई की, तो उनकी मुहब्बत की देवी वीनस (शुक्र) याना जुह्रह ने उन आक्रमणकारियों में दण्ड स्वरूप उपदंश व सुजाक की व्याधि उत्पन्न करदी। इस कारण उक्त दोनों व्याधियाँ अम्राज जुह्रह् के नाम से अभिहित हो गईं।

सूचना—विशेष विवरण हेतु देखो-उपदंश व सूजाक।

अम्राज तजावीफ-अ० वे रोग जिनमें तजावीफ अर्थात् शारीरिक स्रोत अपनी प्राकृतिक अवस्था से छोटे, बड़े या अवरुद्ध हो जाएं, जैसे—आमाशय का सिकुड़ना या फैल जाना।

अम्राज तफ़र्रुक इत्तिसाल- अ० अम्राज इन्हिलालुल् फ़र्द। यह साधारण बीमारियाँ जो प्रत्येक अवयव (मिश्रित व अमिश्रित) में उत्पन्न हो सकें, जैसे-किसी अवयव में विच्छेद अर्थात् विश्लेष या पार्थक्य का उपस्थित हो जाना। विस्तार के लिये देखो--तफ़र्रुक इत्तिसाल वा मर्ज तफ़र्रुक इत्तिसाल।

अम्राज तर्कीब-अ० देखो-मर्ज तर्कीब।

अम्राज तारिय्यह्-अ० ये वस्तुतः छूतदार (संक्रामक) बीमारियां है जो दो प्रकार की होती हैं—

(१) वह जो किसी एक कुटुम्ब या स्थान में ही मत हों, उनको अम्राज वाफिज़ह् और अंग्रेजी में एन्डमिक डिज़ीजेज (Endemic-diseases) कहते हैं और २) वह जो किसी जाति अथवा स्थान में न हों, वरन् सामान्य तौर पर व्याप्त हो जाएँ, उनको अम्राज तबइय्यह् तथा अंग्रेजी में एपिडमिक डिज़ीजेज (Epidemic diseases) कहते हैं।

अम्राज फ़स्लिय्यह्-अ० वे व्याधियां जो किसी विशेष ऋतु या फसल में होती है जैसे-मौसमी ज्वर।

अम्राज बलदिय्यह्-अ० वह बीमारियां जिनका सम्बन्ध किसी विशेष स्थान या देश से हो। एन्डेमिक डिज़ीजेज (Endemic Diseases)-इ०।

अम्राज वसीतह्-अ० देखो-अम्राज मुफ़्रिदह्।

अम्राज बुह्रानिय्यह्-अ० वह बीमारियां जो बुह्रान में इन्तिकाल मर्ज के तौर पर पैदा हो, जैसे-आन्त्रिक ज्वर के पश्चात् फुफ्फुस प्रदाह या वृक्कप्रदाह अथवा उन्माद प्रवृत्ति का हो जाना, क्रिटिकल डिज़ीजेज (Critical Diseases) इ०।

अम्राज मजारी-अ० शारीरिक अर्थात् शरीर की रग एवं नालियों की बीमारियां, वह बीमारियां जिनमें शारीरिक प्रणालियां संकुचित अथवा प्रसारित या अवरुद्ध हो जाएँ।

अम्राज मादिय्यह्-अ० वे रोग जो दोषाधिक्य अथवा उनके विकृत होने के कारण उत्पन्न हों।

अम्राज मावियह्-अ० बवाई मर्ज, महामारी रोग

अम्राज मिक्दार-अ० वह रोग जिसमें विकारी अवयव के आयतन में अन्तर आ जाए अर्थात् वह स्थूल या क्षीण हो जाए।

अम्राज मिजाजिय्यह्-अ० प्रकृति विकार जन्य रोग।

अम्राज मुख़्तस्सह्-अ० वे रोग जो विशेष अवयवों से सम्बन्ध रखते हों।

अम्राज मुज़्मिनह्-अ० जीर्ण या पुरातन (चिरकारी) रोग, पुरानी बीमारियां, मुज़्मिन बीमा०

रियाँ। ऐसी व्याधियां जो ४० दिन अथवा इससे अधिक काल की होगई हो। समय की कोई सीमा नहीं, चाहे रोग सम्पूर्ण आयु भर रहे। क्रोनिक डिजीजेज (Chronic Diseases) -इं०।

अम्राज मुतअद्दियह्-अ० अम्राज मुअद्दियह् अम्राज सारियह्। छूतदार रोग, संक्रामक व्याधि, मुतअद्दी बीमारियां, वे रोग जो रोगी से स्वस्थ व्यक्ति को लग जाएँ। इन्फेक्शस-डिजीजेज (Infectious Diseases) कांण्टेजिअस डिजीजेज (Contagious diseases)-इं०।

नोट—प्राचीन इतिब्बा (यूनानी चिकित्सक) छः से लेकर दस रोग तक को मुतअद्दी अर्थात् छूतदार (संक्रामक) जानते रहे हैं। उनका उल्लेख निम्न पंक्तियों में किया गया है यथा—

(१) जज़ाम, (कुष्ठ, कोढ़), (२) जर्ब (तर कण्डू या खुजली), (३) जुदरी (चेचक, शीतला), (४) हस्बह् (खसरा), (५) सिल व कुरुह् अफिनह् (यक्ष्मा व सड़ाँधयुक्त व्रण) और (६) हुम्मा वबाइयह (वबाई बुखार, महामारी का ज्वर) जो, सामान्य रूप से प्रसार पाते है एवं जिनमें प्लेग (ताऊन) भी सम्मिलित है। किन्तु अर्वाचीन शोधो, गवेषणों द्वारा लगभग ६० रोग मुतअद्दी (छूतदार) सिद्ध हुए हैं। इन सबके लिये देखो-सक्रामक।

अम्राज मुतग़य्यरह-अ०वे रोग जो क्रमानुसार उत्पन्न हों तथा धीरे धीरे बदलें।

अम्राज मुतवस्सितह्-अ० वे रोग जो हादह् तथा मुज़मिनह् के मध्य हों और जिनकी अवधि १० से ४० रोज के भीतर हो।

अम्राज मुतवारिसह्-अ० पैतृक व्याधियां, वे रोग जो पिता माता से सन्तति में हों, मौरूसी बीमारियां। इन्हेरिटेट डिजीजेज (Inherited Diseases)-इं०।

नोट—कोई कोई इतिब्बा (यूनानी चिकित्सक) इनकी संख्या ८ लिखते हैं। वे निम्न हैं, यथा-(१) जज़ाम (कुष्ठ, कोढ़), (२) बरस (श्वित्र, श्वेत दाग), (३) दिक (जीर्ण ज्वर). (४) सिल (यक्ष्मा), (५) मालीखोलिया (Melancholia), (६) सुरअह (गश, इन्द्रलुप्त). (७) निकरस (छोटी संधियों की वेदना) और (८) मानिया (उन्माद भेद)। किन्तु किसी किसी हकीम ने इसकी संख्या १७ पर्यन्त लिखी है अर्थात् अट उपरोक्त एवं (९) सरअ (अपस्मार), (१०) उज्नह् (११) जरब (तर खुजली), (१२) जुदरी (शीतला, चेचक), (१३) बखू (मुख दुर्गन्धि), (१४) रमद (नेत्र आना या दुखना, नेत्राभिष्यन्द) (१५) कुरुह् मुतबफ्फिनह् (क्लिन्नता युक्त व्रण), (१६) हस्बह् (खसरा) और (१७) वबा (महामारी)। इसके अतिरिक्त शेख ने वृक्क एवं वस्तिस्थ अश्मरियों को भी पैतृक रोगों में समावेशित की है। आधुनिक चिकित्सक उपदंश व सूजाक को भी पैतृक रोगो की सूची में अंकित करते हैं।

अम्राज मुफ़रिदह्-अ० साधारण रोग अमिश्रित व्याधियां। वे रोग जो कतिपय रोगों के योग द्वारा न उत्पन्न हो, प्रत्युत स्वयं अकेले हों। सिम्पल डिजीज़ेज़ (Simple Diseases)-इं०।

अम्राज मुरक्कबह्-अ० मुरक्कब बीमारियाँ योगिक वा मिश्रित व्याधियाँ, इस प्रकार की व्याधियाँ कतिपय रोगों के योग द्वारा उत्पन्न होती हैं। और इनका नाम व चिकित्सा विशेष होती है।

उदाहरणतः—शोथ प्रकृति विकार संधि च्युति और मज्जा के पारस्परिक योग द्वारा उत्पन्न होता और एक ही नाम (शोथ) से पुकारा जाता है विपरीत इसके यदि समग्र देह या किसी विशेष अवयव में कतिपय बीमारियाँ एकत्रित हो जाँय पर उनके समवाय का नाम व चिकित्सा विशेष न हो तो उन्हें मर्ज मुरक्कब (मिश्रित रोग) नहीं कहते, प्रत्युत अम्राज मुजतमअह् (समूहिक) नाम से अभिहित करते हैं। जैसे—ज्वर कास और जलोदर।

कम्प्लिकेटेड डिजीजेज (Complicated Diseases)-इं०।

अम्राज मुशारिकह्--अ० वह रोग जोकिसी अवयव के समीप अथवा दूर होने के लिहाज से उत्पन्न हो।

उदाहरणतः--एक अंगुली का अपनी निकटस्थ दूसरी अंगुली से कठिनतापूर्वक मिलना या न मिल सकना। देखो—अम्राज बजअ्

अम्राज मुश्तर्कह्--अ० अम्राज अाम्मह्, वह रोग जो साधारण एवं मिश्रित प्रत्येक अवयव में उत्पन्न हो।

अम्राजमुमल्लमह्--अ०अम्राज़ सलीमह्, वे रोग जिनके उचित तथा उपयुक्त उपाय में कोई बात अवरोधक न हो।

अम्राजमुस्तअ्सियह्--अ०असाध्य रोग इन्क्योरेबल डिज़ीजेज (Incurable Diseases) इ०

अम्राजमुस्तिय्यह्--अ०देखो अम्राज मुतअद्दियह्।

अम्राजमूमनह्--अ०वे रोग जोअन्य रोगों से मुक्ति दिलाएँ।

अम्राज व अअ्राज मुन्ज़िरह्--अ० वे रोग व लक्षण जो किसी अन्य रोग का भय दिलाएँ, उदाहरणतः स्थाई मूर्च्छा तात्कालिक मृत्यु का मुन्ज़िरह् (पूर्वरूप) होती है या काबूस जो अपस्मार व अर्दांग प्रभृति के उत्पन्न होने का भय दिलाता है।

अम्राज वजअ्--अ० वे रोग जिनमें विकृतावयव की स्थिति में अन्तर उपस्थित हो जाय इसके २ भेद हैं-(१)मौजई (स्थित सबन्धी) और (२)मुशारिकी (सहचारी संबंधीय)।

पुनः मौजई के चार रूप हैं—(१)किसी अवयव का निज स्थान से उखड़ जाना, (२) अवयव का अपनी संधिमें गति करना,(३) स्थिर अवयव का गतिशील होना. जैसे—कम्पन वायु (रैसा) में सिर हिलना. (४) गतिशील अवयव का स्थिर हो जाना, जैसे—तहज्जुर मुफ़ासिल (संधि का विच्य) में सन्धियों का गति न कर सकना।

मुशारकी के दो रूप हैं—(१) अवयव का अपने निकटस्थ अवयव से दूर हो जाना उदाहरण स्वरूप—एक अंगुली का टेढा होकर दूसरी अंगुली से न मिल सकना या कठिनतापूर्वक मिलना और (२) एक अवयव का दूसरे अवयव से जुड़ जाना या मिल जाना।

उदाहरणतः दो अंगुलियों का जुड जाना या मर्ज सर्नाक में नेत्र का कठिनाई से खुलना।

अम्राज वबाइय्यह्--अ०महामारी, बबाई बीमारियाँ वे रोग जिनमें एक ही काल में बहुत से मनुष्य रोगा क्रान्त हो जाएँ, जैसे--प्लेग, विसूचिका प्रभृति। एपिडेमिक डिज़ीज़ेज़ (Epidemic diseases)।

अम्राज वाफ़िजह्--अ०वे छूतदार (संक्रामक) रोग जो किसी विशेष स्थान या जाति से सम्बन्ध न रखते हों देखो—अम्राज़ तारियह्।

एन्डेमिक डिज़ीज़ेज़ (Endemic Diseases) इ०

अम्राज शक्लिय्यह्--अ०वे व्याधियां जिनमें विकृतावयव का प्राकृतिक स्वरूप परिवर्तित हो जाए, जैसे—इस्तिस्क़ाउर्रास (मारितष्कीय जलन्धर अर्थात् जल संचय वा शोथ) में सिरका चिपटा हो जाना या पृष्ठआदि में कूबड़ निकल आना।

आम्राज़शिर्किय्यह्--अ०वे व्याधियाँ जो अन्य रोगों के सहयोग द्वारा उत्पन्न हों। सहचारी रोग।

अम्राजसफ़ायह् अअ्ज़ाऽ--अ०वे रोग जिनमें अवयवों के धरातल को प्राकृतिक दशा बदल जाये उदाहरणतः—जो धरातल प्राकृतिक एवं स्वाभाविक रूप से चिकना था वह खुरदरा हो जाए और जो प्राकृतिक तोर पर खुरदरा था वह चिकना हो जाए, जैसे—आमाशय के भीतरी धरातल का चिकना हो जाना या फुप्फुस के चिकने धरातल का खुरदरा हो जाना।

अम्राज़ सलीमह्--अ०सुखसाध्य रोग जिनमें कोई बात उचित उपचार की विरोधी न हो।

अम्राज़ साज़िजह्--अ०साधारण रोग जो किसी दोष के कुपित होने से न हो।

अम्राज़ सारियह्--अ०देखो-अम्राज़ मुतअद्दियह् (Infectious Diseases)।

अम्राज़ सूउत्तर्कीब-अ० वे साधारण रोग जो प्रथम मिश्रितावयवों में उत्पन्न हों; जैसे—संधिभ्रंश।

अम्राज़ सूय मिज़ाज-अ० वह साधारण रोग जो प्रथम साधारण अवयवोंमें उत्पन्न हो, जैसे—वात तन्तु का उष्ण या शीतल हो जाना। देखो-मर्ज सूय मिज़ाज।

अम्राज़ हादह्-अ० (उग्र) व्याधियाँ, कठिन, रोग वे तीक्ष्ण व्याधियाँ जिनकी अवधि थोड़ी होती है अर्थात् ४० दिवस के भीतर भीतर या तो रोग दूर हो जाता है अथवा रोगी की मृत्यु हो जाती है या रोग चिरकारी पुरातन रूप में परिणित हो जाता है ये रोग चार प्रकार के होते हैं, यथा —(१) हाद कामिल या हाद फ़िलग़ायत अर्थात् अत्यन्त उग्र व्याधि जिसकी अवधि अधिक से अधिक चौथे दिन तक होती है। (२) हादमुत्वस्सित या हाद दूनुच् ग़ायत, वह उग्र व्याधि जिसकी अवधि सातवें दिन तक होती है। (३) हाद मुत्लक वह तीव्र व्याधि जिसकी अवधि चौदहवें से बीसवें दिन तक होती है। (४) हाद मुन्तकिल या हाज़ मुज्मिन, वह उग्र व्याधि जिसकी अवधि इक्कीसवें दिवस से उन्तालीसवें दिवस पर्यन्त होती है। अम्राज हाद (उग्र व्याधियों) के मुकाबिले में अम्राज मुज़्मिनह (पुरातन व्याधियाँ) हैं, जिनकी अवधि चालीस दिवस अथवा इससे अधिक होती है। एक्यूट डिज़ीज़ (Acute diseases)-इ०।

नोट—(१) मर्ज हाद कामिल व हाद मुत्वस्सित व हाद मुत्लक़ का डाक्टरी में एक्यूट डिज़ीज़ (Acute diseases) और हाद मुज़्मिन को सब एक्यूट (Sub acute) और मर्ज मुज़्मिन को क्रॉनिक डिज़ीज़ेज (Chronic diseases) कहते हैं।

(२) डॉक्टरी में हाद मुज़्मिन रोगों के लिये अवधि की कोई सीमा नहीं प्रत्युत रोग के लक्षणों की उग्रता व सूक्ष्मता से ही उनको हाद व मुज़्मिन कहा जाता है। देखो मर्ज हाद व मर्ज मुज़्मिन।

अम्राज़ हादह् जहन-अ० अत्यन्त उग्र व्याधि। देखो अम्राज हादह्।

अम्राज़ हादतुल् मुज़्मिनात-अ० वे उग्र व्याधियाँ जिनकी अवधि २१ दिन से ३६ दिन तक हुआ करती है। देखो—अम्राज हादह्।

अम्रातः, कः-सं० पु० अम्बाड़ा Hog plum (Spondias mangifera) अ० मा०। त्रिका०। देखो—आम्रातकः।

अम्रालकः-सं० पु० अम्बाड़ा, अमड़ा, आम्रातक। (Spondias mangifera)

अम्रावर्त्तः-सं० पु० अमावट, आम्रावर्त्त। (The inspissated juice of the mango) फा० इं०।

अम्रियात
इहशाउलबतन } -अ० उदरीय अवयव, जैसे यकृत, आमाशय तथा आंत्र आदि। (Abdominal Viscerae)

अम्रुचह-फा० अम्रुकक, अम्राजक (Pyrus Communis, *Linn*)। यह अम्रूद का अल्पार्थक प्रयोग है। देखो—अम्रूकक। फा० इं० १ भा०।

अम्रूत-हिं० पु० अमरूद। Aguava (Psydium Pyriferum)

अम्रेर-फ्रेगम-पं० (Debregeasia bicolor) मेमो०।

अम्राद-हिं० पु० पथरचूर। पाषाण-भेदी-सं०। पथर कुची-बं०। पान-अजवा-म०। (Coleus Aromaticus)

अम्रोला-हिं० चूका वा चांगेरी, आमरुल (Rumex Acetosa)

अम्रोला का सत्त
अम्रोलासत्व } -हिं० पु० काछाम्ल, चूका का सत चुक्र सत्व, चुक्राम्ल। Oxalic Acid (Acidum Oxalicum) देखो—चुक।

अम्लः-सं० पु० हिं० संज्ञा पु० जिह्वा से अनुभव होने वाले छः रसों में से एक। खटाई। जैसे—जम्बीर मातुलुङ्ग तथा निम्बुक प्रभृति।

गुण—लघु, उष्ण, रुचिकर, दीपन, हृद्य को तर्पण करता, वातानुलोमक, बलकारी, कफ में वाह उत्पन्न करता है, रा० नि० व० १०।

इसका विपाक अम्ल तथा गुण में पित्तकारक और वात कफ के रोग को दूर करने वाला है। सु० सू०। प्रीतिकारक, पाचन, आर्द्रताकारक, इसके अधिक सेवन से भ्रान्ति, कुष्ठ, कफ, पाण्डु, कृशता और कास उत्पन्न होता है। रा० नि० व० १२। पाचन, रुचिकारक, पित्तजनक कफ उत्पन्न कर्त्ता, रक्तवर्द्धक, लघु, लेखन, उष्णवीर्य स्पर्श में शीतल संकोचक, क्लेदकारक, वातनाशक, स्निग्ध, तीक्ष्ण, सारक तथा शुक्र विबंध आनाह तथा दृष्टि नाशक और हर्षकारक है। अति सेवन से श्रम, तृष्णा, दाह, तिमिर, शोथ, विस्फोटक, कुष्ठ, पाण्डु उत्पन्न कर्त्ता त्वच्य और ज्वर नाशक है। भा० पू० १ भ०। लघु पाचक पित्त, कफ, छर्दि, क्लेद, उष्ण तथा वातनाशक है। राज०।

वि० इसका शाब्दिक अर्थ खट्टा है। हामिज़, हम्ज़, हिम्ज़- अ०। तुर्श- फा०। अम्बल-बं०। सावर (Sour); एसिड (Acid)-इं०। किन्तु अर्वाचीन परिभाषा में तेजाब अर्थात् एसिड (Acid) द्रव या अद्रव के लिये व्यवहार में आता है। देखो—एसिड।

अम्लम्-सं० क्ली० (१) अम्लवेतस फल। (२) कांजी। (३) घोल रा० नि०। (४) बदर फल। सि० यो० अरोचक चि०। (५) बर्बर चन्दन। रा० नि० व० १२।

अम्लकः-सं० पु०, हिं० संज्ञा पु० बड़हर। लकुच वृक्ष। (Artocarpus Lakoocha)

अम्ल-कन्दः-सं० पु० एक जंगली बूटी की जड़ है; जिसके पत्ते पान के समान और पुष्प सफेद तथा फल लाल मिर्च के तुल्य लम्बे और बीज नीबू के बीज के सदृश होते हैं।

अम्लकरञ्जः-स० पु० करञ्जभेद। टक् करञ्जा बं०। इसका फल—तृष्णा नाशक, गुरु, रुचिकर और पित्तकारक है। राज०। (A kind of karanja)

अम्लका-सं० स्त्री० (१) पालंकशाक प० मु०। (२) पलाशीलता। रा० नि० व० ७।

अम्लका-बं०। (Vitis lodica) अन्धुका। अन्धुक।

अम्ल-काञ्जिकम्-सं० क्ली० (sour gruel) काञ्जिक, कांजी। च० द० ग्रहणी-चि० महाषट्पल घृत। see-kanji

अम्ल-काण्डः-स० पु० सफेद लहसुन, शुक्र रसोन, (White garlic) वै० निघ०। क्ली० (२) लोणी, लवण तृण। लोणा घास-बं०। रा० नि० व० ८।

अम्लकादि चूर्णं-सं० क्ली० चतुराम्ल १ प्रस्थ, त्रिकुटा ३ पल, लवण ४ पल, चीनी ८ पल इनका चूर्ण दाल और अन्नादि में डालकर सेवन करने से खाँसी, अजीर्ण, अरुचि, श्वास, हृद्रोग, पाण्डु और गुल्म का नाश होता है। च० स०।

अम्ल-कुचाई-बं०, हिं० स्त्री० (१) एक भारतीय जंगली कण्टकयुक्त वृक्ष है जिसके पत्ते अमली के पत्तों के समान किन्तु उससे छोटे होते हैं। (२) चुक्र।

अम्ल-कुचि-बं० पथरचूर, पाषाणभेदी, अश्मन्तक, हिमसागर। (Coleus Aromaticus) इं० मे० मे०।

अम्लकुचिः-स० पु० वृक्ष विशेष (a tree)

अम्ल केशरः-सं० पु० (१) विजौरा नीबू, मातुलुङ्ग। (Citrus medica) प० मु० (२) दाडिम्ब वृक्ष, अनार।

अम्ल केशरी-सं० पु० अम्ल रस निम्बुक वृक्ष। गोंड़ा, नीबू, गोड़ा लेबू-बं०। बै० निघ०।

अम्लकोशः. (शाकः)-स० पु० तिन्तिड़ी वृक्ष। अम्लिका, अ (इ) मली (Tamarindus Indicus) मद० व० ६।

अम्ल गोरसः-सं० पु० माठा, तक्र, घोल। अम्ल तक्र खट्टी छाछ। टक् घोल-ब०। बटरमिल्क (Buttermilk)-इं०।

अम्ल चाङ्गेरी-सं० स्त्री० (१) चांगेरी भेद; टक् आमरुल-बं०। च० चि० ३ अ० अगु० तैल। (२) हिं० स्त्री० दक्षिण में इसे चौंगर कहते हैं। एक भारतीय वृक्ष का फल है, जो अम्ल

स्वादयुक्त तथा मकोय के दाने के बराबर होता है। लु० क०।

अम्ल चुक्रिका-सं० स्त्री० चिञ्चाम्ल, चिञ्चासार, अम्लासार। तेंतुलेर अम्बल-ब०। रा० नि० व० ११। see-chinchasarah

अम्ल चूड़ः-सं० पु० (१) शाकाम्ल, वृक्षाम्ल। (२) चिञ्चासार, तेंतुलेर अम्बल-ब०। अम्ली के रस से प्रस्तुत किया हुआ एक प्रसिद्ध गाढ़ा पदार्थ है। रा० नि० व० ११। (३) अम्लशाक चुक्र पालकी रा० नि०।

अम्लच्छदा-सं० पु० भोजपत्र वृक्ष। See-Bhojapatra

अम्लज-अ० (१) आमला, (Phyllanthus emblica)

अम्लज-अ० खनू बभेद। see-kharnub

अम्लजन-हिं० पु० ओषजन ऊष्मजन। (Oxygen)

अम्लजन मिश्रण-हिं० पु० ओषजन मिश्रण। (Oxygen mixture)

अम्लजनीकरण-हिं० पु० ओषजनीकरण। (Oxidation)

अम्लजम्बीरः-सं० पु० (Citrus medica) खट्टा नीबू, अम्लरस, निम्बुक वृक्ष। टक्लेबू गाछ बं०। इडनिम्बू-मह०। रा० नि० व० ११। देखो—निम्बुकः।

अम्लजिद-हिं० पु० ओषिद, ऊष्मिद। (Oxide)

अम्लटकः-सं० पु० अश्मन्तक वृक्ष। अम्लकुच ई-बं०, हिं०। see-ashmant akah

अम्लत्-अ० वह मनुष्य जिसके शिर तथा दाढ़ी के अतिरिक्त और कहीं बाल न हों।

अम्लता-हिं० स्त्री० अम्लत्व, खट्टापन। हुमू जत-अ०। तुर्शी-फा०(Acidity, Sourness)

अम्लजनक-हिं० पु० (Antacid) श्लेष्मजनक।

अम्लतून-सं० पु० खट्टातूत। see tuta

अम्लतृण-सं० पु० लवण तृण। लोणी।

अम्लत्वक्-सं० पु० चार वृक्ष। प्रियाल पियाल या चिरोंजी का पेड़। चारोली-मह०। (Buchanania latifolia, chironjia sapida)

अम्लदोलकः-सं० पु० चुक। चुकापालंङ् बं०। अम्बोटी (तो)-म०। वै० नि०। see-chukra

अम्लद्रवः-सं० पु० बीजपूर रस। भा० म० १ भा० जिह्मक ज्व० चि०।

"अम्लद्रवः संशमयेद्रसज्ञां।"

अम्लदधि-सं० क्ली० खट्टा दही। लक्षण—जिस दही में से मिठास जाता रहा हो और खट्टा तथा अव्यक्त रसयुक्त हो गया हो उसे अम्ल दधि कहते है। गुण—यह अग्नि प्रदीपक पित्तवर्द्धक, रक्तवर्द्धक, तथा कफवर्द्धक है। वृ० नि० र०।

अम्ल द्रव्यम्-
अम्ल-नायकम्- } सं० क्ली० अम्ल वेतस। थैकल ब०। रा० नि० व० ६। अम्लवेतस-मह०। See-am-lavetasah

अम्लनिम्बूकः-सं० पु० महाम्ल निम्बुक। गोड़ा लेबू-बं०। मीटें इरनिम्बु-मह०। नै० निघ०।

अम्लनिशा-सं० स्त्री० शटी, कचूर। शटी-बं०। (Curcuma zedoaria) रा० नि०।

अम्लपञ्चकम्-सं० क्ली० (१) मुख्य पांच प्रकार के खट्टे फल बेर, अनार चूका, बिषांबिल, और अम्लवेत इन्हें अम्लपञ्चक कहते हैं। गुण—ये खट्टे रुचिकारी कफ और खांसी को उत्पन्न करने वाले, कड़वे और जड़ताकारक हैं, तथा विष्टम्भ, शूल, वात, शुक्रगुल्म और बवासीर को दूर करते हैं।

(२) पलाम्लपञ्चकम्, बिजौरा नीबू जम्भीरी नीबू नारङ्गी, अम्लवेत और इमली ये दूसरे पलाम्लपञ्चक हैं। गुण—शोफकारक मदजनक तथा विष्टंभ शूल, गुल्म, बवासीर, शुक्र, और वातनासक हैं। रा० नि० व० २१। देखो—पञ्चाम्ल (फल)म्।

अम्ल पञ्च फलम्-सं० क्ली० देखो—अम्लपञ्चकम्।

अम्लपत्रः-सं० पु० (१) दण्ड लु (क) खाम आलु-बं०। वै० निघ०। See Dandaluh

(१) अश्मन्तक वृक्ष। (See Ashmantak) रा० नि० व० ६। (३) क्षुद्रपत्र तुलसी वृक्ष। रा० मा०।

अम्लपत्रम्-सं० क्ली० चुक्र शाक, चूका (Rumex Scutatus) रा० नि० व० ७।

अम्ल पत्रकः-सं० पु० (१) भेण्डा भिण्डी (Hibiscus Esculentus) (२) अश्मन्तक वृक्ष सं० अम्लकुचाई आवुटा-बं० (Coleus Aromaticus) रा० नि० व० ६ मद० व० १। अम्लशोणिका चूका आमरूल बं० (Rumex Scutatus) भा० पू० १ भ०।

अम्लपत्रा-सं० स्त्री० शुक्ला ओकणा-बं०। See-Shukrala प० मु०।

अम्लपत्रिका-सं० स्त्री० चांगेरी, चूका शुनी, आवेता हिं०। छुदे शुनी-बं० (Rumex Scutatus) रा० नि० व० ५।

अम्लपत्री-सं० स्त्री० (१) पलासी लता रा० नि० व० ४ (२) चांगेरी चूका। (Rumex Scutatus) रा० नि० व० ५। (३) क्षुद्राम्लिका-सं० छुदे शुनी-व०।

अम्लपनसः-सं० पु० लिकुच वृक्ष, बड़हर। देखो, मान्दार गाछ बं०। आंटीचे झाड़ म० व० नि० व०। (Artocarpus Lakoocha)

अम्लपर्णिका-
अम्लपर्णी-
} -सं० स्त्री० वृक्ष विशेष सुरपर्णी भा० गुण—अम्लपर्णी वात कफ तथा शूल विनाशिनी है, वै० निघ० See-Suraparni

अम्लपादपः-सं० पु० वृक्षाम्ल, अमली तेंतुल गाछ बं० कोवंबी म० वै० निघ०।

अम्लपित्तम्-सं० क्ली०
अम्लपित्त-हिं० संज्ञा पु०
} (Hyper-acidity) साबर, बाइल (Sour bile)-इं० हुमू जत अ० रोग विशेष इसमें जो कुछ भोजन किया जाता है, सब पित्त के दोष से खट्टा हो जाता है।

निदान

पूर्व सञ्चित पित्त, पित्तकर आहार विहार से जल कर अम्लपित्त रोग पैदा करता है, पित्त विदग्ध होने पर भोजन अच्छी तरह पचता नहीं है जो पचता है वह भी अम्लरस में परिणत हो जाता है इसी से अम्ल आस्वाद होता है और खट्टी डकार आदि उपद्रव उपस्थित होते हैं। अजीर्ण होने पर भोजन, गुरु पदार्थ और देरसे पचने वाली वस्तुओं का भोजन अधिक खट्टे और भुने द्रव्यों का खाना इत्यादि कारणों से अम्लपित्त रोग उत्पन्न होता है, कहा भी है।

विरुद्ध दुष्टाम्ल विदाहि पित्तप्रकोपि पानान्नभुजो विदग्धम्। पित्तं स्वहेतूपचितं पुरा यत्तदम्लपित्तं प्रवदन्ति सन्तः॥ (मा० नि०)

अर्थ—विरुद्ध (क्षीर,मत्स्यादि), दुष्ट बासीअन्न खट्टा विदाहि तथा पित्त को प्रकुपित करने वाले अन्नपान (तक्रसुरादि) के सेवन से विदग्ध (अम्लपाक) हुआ और, पहिले वर्षाऋतु में जल तथा औषधों में स्थित विदाह आदि कारणों से जो पित्त सञ्चित हुआ है, उसके दूषित होने को अम्लपित्त कहते हैं।

लक्षण—

आहार का न पचना, क्लांति (थकावट या श्रमित होना) वमन आना या जी मिचलाना, तिक्त तथा खट्टी डकार आना, देह भारी रहना, हृदय और कन्ठ में दाह होना और अरुचि आदि लक्षण अम्लपित्त के वैद्यों ने कहे हैं। ऊर्द्ध तथा अधः भेद से यह दो प्रकार का कहा गया है।

ऊर्द्धगत अम्लपित्त के लक्षण—

ऊर्द्धगत अम्लपित्त में हरे, पीले, नीले काले; किंचित् लाल, अतिपिच्छल, निर्मल, अत्यंतखट्टे, मांस के धोवन के जल के समान कफयुक्त लवण, कटु, तिक्त इत्यादि अनेक रसयुक्त पित्त वमन के द्वारा गिरते हैं। कभी भोजन के विदग्ध होनेपर अथवा भोजन के न करने पर निम्ब के समान कटुआ वमन होता है और ऐसी ही डकार आती है, गला हृदय तथा कांख में दाह और मस्तक में पीड़ा होती है। कफ पित्त से उत्पन्न अम्लपित्त में हाथ पैरों में दाह होता है शरीर में उष्णता अन्न में अरुचि, ज्वर, खुजली और देह में चकत्ते

तथा सैकड़ों फुन्सियां और अन्न न पचने आदि अनेक रोगों के समूह से युक्त होता है।

अधोगत अम्लपित्त के लक्षण—

प्यास दाह मूर्च्छा भ्रम, मोह (विपरीतज्ञान) (इन्द्रियों का मोह) इनको करने वाला पित्त कभी नाना प्रकार का होके गुदा के द्वारा निकलता है और हृल्लास (जी का मचलाना) कोठ होना, अग्नि का मन्द होना, हर्ष, श्वेत अंग का पीत वर्ण होना आदि लक्षणों से जो युक्त होता है उसको अधोगत अम्लपित्त कहते है।

दोष संसर्ग से अम्लपित्त के लक्षण

वात युक्त, वात कफ युक्त और कफ युक्त ये दोषानुसार, अम्लपित्त के लक्षण बुद्धिमान वैद्योंने कहे है। कारण यह है कि उर्द्धगत में वमन और अधोगत में अतिसार के लक्षण से इसके भेदों का निर्णय करना कठिन है। अस्तु, वैद्य को विचार पूर्वक इस रोग की परीक्षा करनी चाहिये। नीचे इनमें से प्रत्येक का पृथक् पृथक् वर्णन किया जाता है—

वात प्रकोप जनित अम्लपित्त में कम्प, प्रलाप मूर्च्छा, चिउँटी काटने की सी चिमचिमाहट (झिनझिनाहट) शरीरकी शिथिलता और शूल आँखों के आगे अँधेरा, भ्रान्ति, इन्द्रिय तथा मन का मोह और हर्ष (रोमाञ्च) ये लक्षण होते हैं।

कफ युक्त अम्ल पित्त में कफ का थूकना शरीर का भारी रहना और जड़ता, अरुचि, शीतलता, साद (अंग की ग्लानि, अवसान), वमन, मुख का कफ से लिप्त रहना, मन्दाग्नि, बल का नाश, खुजली और निद्रा ये लक्षण होते हैं।

वात कफ युक्त अम्लपित्त में ऊपर कहे हुये दोनों के चिह्न होते हैं।

कफ पित्त के अम्लपित्त में ये लक्षण होते हैं भ्रम (तम), मूर्च्छा, अरुचि, वमन, आलस्य, शिर में पीड़ा, मुख से पानी का गिरना (प्रसेक) और मुख का मीठा रहना।

अम्लपित्त का साध्यासाध्यता

अम्लपित्त रोग नया होने पर तो साध्य होता है, पर बहुत दिन का अर्थात् पुरातन साध्य (चिकित्सा करने पर अच्छा हो जाता है, परन्तु जब चिकित्सा करना बन्द कर दिया जाता है तब उसका पुनरावर्तन होता है।) और अहित आहार तथा अहित आचार वाले पुरुष का अम्लपित्त कष्टसाध्य होता है।

इस रोग के एक बार उत्पन्न होने पर फिर इसका दूर होना बहुत कठिन है। अतएव रोग के उत्पन्न होते ही चिकित्सा करना उचित है। अन्यथा रोग पुराना होकर पुनः प्रायः छूटता नहीं।

चिकित्सा

अम्लपित्त में पटोल, अरिष्ट (रीठा) अडूसा, मैनफल, मधु तथा लवण (सैंधव) प्रभृति द्वारा वमन कराएँ और निशोथ के चूर्ण को आमले के रस और शहद में मिलाकर विरेचन दें। ऊर्ध्वगत अम्लपित्त को वमन द्वारा और अधोगत को रेचन द्वारा शमन करे। यथा—

अम्लपित्ते तु वमनं पटोलारिष्ट वासकैः।
कारयेत् मदनैः चौद्रैः सैन्धवैश्च तथा भिषक्॥
विरेचनं त्रिवृच्चूर्णं मधुधात्री फलद्रवैः।
ऊर्ध्वगं वमनविद्वानधाग रेचनैर्हरेत्॥
भा० म० खं०।

अस्तु वमन हेतु जल में सेंधानमक (जरासा) डालकर एक पाव या आधसेर की मात्रा में गरम करके पीने के बाद गले उंगली डालने से वमन होगा। इससे ऊर्ध्वगामी अम्लपित्त बहुत कुछ अच्छा हो जाता है। अधोगामी अम्लपित्त में सप्ताह में एक दिन या दो दिन चौअन्नी भर "अविपत्तिकर चूर्ण" चौअन्नी भर चीनी के साथ विरेचन के लिए सेवन करना चाहिए। अविपत्तिकर चूर्ण इस रोग की एक उत्तम औषध है। जिस दिन इसका सेवन करे उस दिन अन्य औषध सेवन नहीं करनी चाहिए, स्नान-आहार भी निषिद्ध है। शाम को साबूदाना या बारली का सेवन करे।

तीक्ष्ण संस्कार बर्जित जौ या गेहूं की बनी चीजें, लाजयुक्त (लावा या धान की खील का सत्तू) शर्करा या मधु में मिलाकर पिलावे वा भूसी से साफ किए हुए जौ, गेहूं तथा आमला द्वारा पकाया हुआ जल, दालचीनी, इलायची और तेजपत्र के चूर्ण मिलाकर पिलाने से अम्ल पित्त जन्य वमन तत्काल दूर होता है।

अम्लपित्तहर औषधं

(अमिश्रित औषधें)

अडूसा, पर्पटक (पित्तपापड़ा) कुलत्थी, पाठा, यव, चन्दन, धान्य आमला (रस) नागकेशर, जीरा, करञ्ज, जम्बीर, पाटला, कदली (फल) (Pyrosis) पीतशाल, साडियम के लवण और योग गधक और उसके योग, प्रातः काल त्रिफला या हरीतकी के शीत कषायों का रेचन तथा अन्य तिक्त पित्तहर द्रव्य जैसे गुडूची, पटोलपत्र, किरात तक्त, (चिरायता), कटुकी, धान्यक, द्राक्षा, मधुयष्टी के कषाय या योग, कूष्माण्ड, आमलकी, मण्डूर, लोह भस्म और अभ्रक आदि के योग एवं भोजन के दो तीन घटे बाद चार शीतल जल से दिऐ जाते हैं।

मिश्रित औषधें

अविपत्तकर चूर्ण, पञ्च निम्बादि चूर्ण, पिप्पली-खंड; बृहत पिप्पली खड, शुण्ठि खड, सोभाग्य शुण्ठि मोदक, खड कुष्मांड अवलेह, अभयादि अवलेह, अम्लपित्तान्तक मोदक वा सुधा, त्रिफला मण्डूर, सित मण्डूर, पानीय भक्त वटी, सुधावती गुडिका, बृहत सुधावती गुडिका, पञ्चानन गुडिका, भास्कर मृताभ्र, अम्ल पित्तान्तकलौह, सर्वतोभद्र लौह, लीलाविलास रस, दसांग, पिप्पली घृत, पटोल शुण्ठि घृत, शतावरि घृत, नारायण घृत, द्राक्षाद्य घृत, जीरकाद्य घृत, श्री विल्व तैल, नारिकेल खंड, बृहन्नारिकेल खंड, बृहत अश्विनकुमार रस, भास्कर लवण, शुण्ठी खंड और अम्ल पित्तारि चूर्ण।

पथ्यादि—अम्लपित्त और शूल रोग से पीड़ित व्यक्ति को जीवन भर आहार सुख से वञ्चित रहना पड़ता है। कड़ुऐ पदार्थों का छोड़ अन्य कोई द्रव्य हितकर नहीं। दूध, अधिक नमक, खट्टा, भूना और पीसा हुआ द्रव्य और मद्य सर्वदा निषिद्ध है।

अम्लपित्त हर—[सं०पुं०] अम्लपित्तनाशक। देखो—अम्लपित्त।

अम्लपित्तहारक पाक—[सं० पुं०] त्रिकुटा त्रिफला भांगरा, दोनों जीरा, धनियां, कूट, अजमोद, लौह भस्म, अभ्रक भस्म, काकड़ासिंगी, कायफल, मोथा इलायची, जायफल जटामांसी, पत्रज, तालीसपत्र केसर, वन कचूर, कचूर, मुलहठी, लवंग, लाल चन्दन, प्रत्येक समान भाग लें, सर्व तुल्य सोंठ का चूर्ण, सब से द्विगुण मिश्री, गाय का दूध चारगुना मिलाकर विधवत पाक बनाय।

मात्रा—१ता० पानी या दूध के साथ।

गुण:—अम्लपित्त, अरुचि शूल, हृद्रोग, अम्ल कण्ठदाह, हृदय का जलन, शिरःशूल, मन्दाग्नि तथा हृदय पार्श्व, एवबस्तिशूलको नष्ट करता और विशेषकर अम्लपित्त, मूत्रकृच्छ्र ज्वर और भ्रम का नासक है। वै० क० द्रु०।

अम्लपित्तान्तक मोदक.—[सं० पुं०] सोंठ, पीपर और सुपारी बत्तीस बत्तीस तोले लें इन्हें चूर्ण कर एक में मिलाकर इसमें घृत ६४ तो० गोदुग्ध ६४ तो० मिलाकर, पकाय, पुनः, लवंग, नागकेशर कूट अजवायन, मेंथा, वच, चन्दन, मुलहठा, रास्ना, देवदारु, हड़, बहेड़ा, आमला, तेजपात इलायची, दालचीनी, सेंधा नमक, हाऊबेर, कचूर, मैनफल, कायफल, जटामांसी तथा अभ्रक भंग, और चांदी की भस्म, तालीसपत्र, पद्मकाष्ट, मूर्वा, मजीठ, वंसलोचन, पीपलामूल, सौंफ, शतावर, कुलंजन, जायफल, जावित्री, शीतलचीनी पीपर, नगरमोथा, कपूर, वायविडंग, अजमोद, खिरेटी, गुरुच, केवाँच के बीज, तालमखाना, चन्दन, देवदारु, चतुर्धातु विधि से मारे हुये, लोहा और कांसा की भस्में प्रत्येक एक एक ता० स्वर्ण की भस्म ६ मासे इन सबको एकत्र मिलाकर तैयार करें।

गुण—यह छर्दि, मूर्छा दाह, खांसी, श्वास भ्रम, वातज, पित्तज, कफज और सन्निपातज, भ्रम

२० प्रमेह, सूतिका रोग, शूल, मन्दाग्नि, मूत्र, कृच्छ्र, गलग्रह और प्रत्येक रोगों को दूर करता है भैष० अम्लपित्त० चि०।

अम्लपित्तान्तक रसः-सं० पु० पारद भस्म, लोह भस्म, अभ्रक भस्म प्रत्येक समान भाग ले चूर्ण कर इसमें से १ मा० शहद के साथ खाने से अम्लपित्त नष्ट होता है रस० यो० सा०।

अम्लपित्तान्तक लौहः-सं० पु० (१) पारा ताम्बा, लोहे की भस्म और इन सब भस्मों के बराबर हड़ को पांस शहद मिलकर १ मा० नित्य चाटने से अम्लपित्त शांत होता है।

भैष० अम्ल पित्त० चि०।

(२) यह रस अम्लपित्त नाशक है रसे० चि० र० सा० सं०।

अम्लपित्तान्तको रसः-सं० पु० रससिन्दूर अभ्रभस्म लोहभस्म समान भाग लेकर सबके समान हड़ मिलकर चूर्ण करें। मात्रा—१ मा० शहद के साथ उपयोग करने से अम्लपित्त का नाश होता है। रस रा० सु० अम्ल० पि० चि०।

अम्लपिष्टा-सं० पु० चांगेरी। (Rumex Scutatus)

अम्लपूरम्-सं० क्ली० (१) अम्लिका कोकमफल। तिन्तिड़ी, तेंतुल-बं०। कोकम्बी-म०। (२) वृक्षाम्ल रा० नि० व० ६।

अम्लपुष्पिका-सं० स्त्री० आरण्यशण वृक्ष जंगली सन का पेड़-हिं०। वन्य शण-बं०। रानताग-म० A wild Indian Hemp (Crotalaria juncea) नै० निघ०।

अम्लफलः-सं० पु० अम्रवृक्ष आम। The mango tree (Mangifera Indica) रा० नि० व० ११। तिन्तिडाक, नीबू भेद।

अम्लफलम्-सं० क्ली० वृक्षाम्ल, विषांबिल-हिं०। तेंतुल-बं०। रा० नि० व० ६।

अम्लफला-सं० स्त्री० कन्थारिका, लघु कन्थारी-महा० वै० निघ०।

अम्लबदरः-सं० पु० अम्लकोलिका, खट्टा बेर। टक कुल-बं०। च० सू० ४ अ०।

अम्लवेल-हिं० पु० अम्लवेतस, गिरहद्राक-प०। अम्लोलवा-सं० प्रां०। (Vitis trifolia)

अम्लमेदनः-सं० पु० (१) अम्लवेतस। (See-Amlavetasa) रा० नि०। (२) चुक्र (Rumex Acetosella)

अम्लमारीषः-सं० पु० अम्लशाक विशेष। अम्बल नटिया-ब०। सारा-हिं०। गुण—अम्लमारीष दोष कोपकारक, मधुर तथा कटु है। वै० निघ०।

अम्लमूलकम्-सं० क्ली० व्युषित अर्थात् बासा (घी हुई) कॉजी में पकाई हुई मूली। प० प्र० ३ ख०। च० द० संग्रहणी वृक्षचुक्र। "व्युषितं कांजिकं पक्वं मूलकं त्वम्लमूलकम्।"

अम्लमेहः-सं० पु० पित्तजन्य मेह रोग भेद, पित्त प्रमेह इसमें रोगी अम्लरस गंधयुक्त पेशाब करता है। सु० नि० ६ अ०। "अम्लरस गन्धमम्ल मेही।"

अम्ल-श्वेच्छु श्वेताणु-हिं० संज्ञा पु० इओसिनोफाइल ल्युकोसाइट (Eosinophile leucocyte) इं०। रक्त में पाये जाने वाला एक प्रकार का श्वेताणु ये कण बहुरूपी सींगी वालों से कुछ बड़े होते हैं, इन कणों की सींगी या तो गोल होती है या नाल की भांति मुड़ी हुई। कभी-कभी इसके कई टुकड़े होते हैं जो एक दूसरे से तारों द्वारा जड़े रहते हैं। इनके प्रोटोप्लाज्म (जीवोज) में बहुत मोटे मोटे दाने होते हैं जिनमें यह गुण है कि जब कण इओसीन (एक प्रकार का रंग है। इसकी प्रतिक्रिया अम्ल होती है) आदि अम्लरंगों में रंगे जाते हैं तो ये खूब गहरा रंग पकड़ते हैं। इन कणों के लिये अम्ल रंगेच्छु शब्द का प्रयोग इसी कारण होता है। इन कणों की संख्या प्रति सैकड़ा २ से ४ तक होती है। इ० श० र०।

अम्लरुहा-सं० स्त्री० मालव देश प्रसिद्ध नागदंती भेद, ताम्बूल भेद। गुण—यह रुचिकारी, दीपनी गुल्महरी, मदकरी, अग्निबलवर्द्धिनी और आमनाशिनी है, रा० नि०।

अम्ललता-
अमललता-
} सं० स्त्री० अम्लवेल, अम्लोलवा

हिं। गिदड़द्राक-पं० (Vitis Carnosa. *Wall*) फा० इ० १ भा०।

अम्लतोणका } -सं० स्त्री० (१) तोणी विशेष
अम्लतोणी }

पर्याय—चांगेरी, चुक्रिका, दन्तशठा, अम्लष्ठा (अ) चांगेरी, आमरुल शाक वं०। चुका-म०। (Oxalis Corniculata)

गुण—दीपन, रुचिकारी, कफवात नाशक, पित्तकारक और खट्टी है, तथा ग्रहणी, अर्श, कुष्ठ, और अतिसार का नाश करने वाली है। भा० पू० १ भा०।

मात्रा—२-३ मा०। देखो—चांगेरी। (२) चुक्र, पालङ्क विशेष। चुका पालङ् बं०। (Rumex monadelpha) र० मा० (३) अमलोनी-हिं०। खुर्फा, कुल्फा-अ०। (Portulaca oleracea, *Linn*) देखो—लोणी।

अम्लराज-हिं० पु० (Aqua rigia) लवणाम्ल और नत्रिकाम्ल का मिश्रण, जो अत्यन्त बलवान धातुद्रावक है, अम्लराज कहलाता है।

अम्लवती-सं० स्त्री० (१) चांगेरी, आमरुल-बं०। (Oxalis corniculata) रा० नि० व० ५। (२) क्षुद्राम्लिका, खुदेणुनी-बं०।

अम्लवर्गः-सं० पु० अम्लवर्ग की ओषधियाँ निम्न हैं, यथा—(१) चांगेरी, (२) लकुच, (३) अम्लवेतस (४) जम्बीरक, (५) बीजपूरक (बिजौरा नीबू), (६) नागरंग (नारंगी), (७) दाड़िम (अनार), (८) कपित्थ (कैथ), (९) अम्लबीज, (१०) अम्लिका, (११) अम्लष्ठा, (१२) करमर्दक, (१३) तिन्दुक (१४) कोल (बेर), और (१५) तिन्तिड़ी। देखो—रा० नि० व० २२

"अम्लष्ठा सहितं द्विरेतदुदितं पञ्चाम्लकं तद्द्वयं, विज्ञेयं करमर्दनिम्बुकयुतं स्यादम्लवर्गाह्वयम्।"

रसेन्द्रसारसंग्रह के लेखक के मतानुसार अम्लवर्ग की ओषधियाँ निम्न हैं; यथा—(१) अम्लवेत, (२) जम्बीर, (३) लुङ्गाम्ल, मातुलुङ्ग (४) चणक, (५) अम्लिका, (६) नारंगी, (७) अम्लो, (८) चिञ्चाफल (९) निम्बुक (१०) चांगेरी, (११) दाड़िम और (१२) करमर्द। र० सा० सं०।

अम्लवल्ली,-ल्लिका-सं० स्त्री० त्रिपर्णीकन्द। See—Tripaani-kanda

अम्लवाटकः-सं० पु० अम्रातक, अम्बाड़ा, आंवाटा मह०। (Spondias mangifera) वै० निघ०।

अम्लवाटा-
अम्लवाटिका-
अम्लवाटी- } सं० स्त्री० अम्ल रस युक्त नागबल्ली भेद, खट्टा रस युक्त पान, अंबोड़े पर्ण-मह०। अम्लरस विशिष्ट पान विशेष-बं०। रा० नि० व० ११ गुण—अम्ल, तिक्त, कटुरस युक्त, रूक्ष व उष्ण वीर्य, मुखपाक करने वाली विदाहिनी, रक्त पित्त कुपित करने वाली, विष्टम्भ करने वाली और वायु नाशिनी है। रा० देखो—नागवल्ली।

अम्लवातकः,-वाडकः-सं० पु० अम्रातक, अम्बाड़ा (Spondias mangifera)

अम्लवास्पः-सं० पु० चांगेरी, चूका (Oxalis corniculata) वै० निघ०।

अम्लवास्तु(स्तू)कम्-सं० क्ली० चुक्र नामक शाक अम्लवेतुवा, टांगा पता-बं०। रा० नि० व० ७।

अम्लविदुनः-सं० पु० अम्लवेतस (Rumex vesicarius) वै० निघ०।

अम्लविवेक-हिं० पु० (Tests of acids) अम्लपरीक्षा। देखो—एसिड।

अम्लवीजम्-सं० क्ली० वृक्षाम्ल, तिन्तिड़ी, रा० नि० व० ६।

अम्लवृक्ष,-कम्-सं० क्ली०, पु० वृक्षाम्ल, तिन्तिड़ी, भा० पू० १ भा०।

अम्लवेतसः-(कः) सं० पु० क्ली
अम्लवेत-हिं० संज्ञा पु० } अमलवेत, अम्लवेत, यह एक प्रकार की लता है जो पश्चिम के पहाड़ों में होती है और जिसकी सूखी हुई टहनियाँ बाजार में बिकती हैं। वे खट्टी होती हैं और चूरण में पड़ती हैं। (२) चुक। चुके का शाक, चुक पालक। चुकापालक, बं०।

(Rumex acetosella) प० मु० (३) अम्ललोणा। (Oxalis corniculata) च० द० काङ्काय० गु०। (४) स्वनामाख्यात क्षुप विशेष। एक मध्यम आकार का पेड़ जो बागों में लगाया जाता है। च० द०। च० द० ज्य० चि०। "सिन्धुत्र्यूषणैः साम्लवेतसैः"। च० सू० २ अ०।

संस्कृतपर्याय—अम्ला, बोधिः, रसाम्लः, अम्लवेतसः, वेतसाम्लः अम्लसार शतवेधी; वेधकः भीमः, भेदनः, अम्लांकुशः, भेदी, राजाम्लः अम्लभेदनः, रक्तसारः, फलाम्लः, अम्लनायकः सहस्रवेधी, वीराम्ल, गुल्मकेतु, बरामिधाः शंखद्रावी, (वि०), मांसद्रावी (रा०) बरांगी (र), चुक्रः (अ) गुल्महा, रक्तस्रावि, सहस्रनुत् अमलवेद, अमलवे (वे) त (स), थैकल –हिं०। थैकल (ड)-बं०। चूका-मह०। अम्लवेत-गु०। तुर्शक-फा०। रयुमेक्स वेसिकेरियस (Rumex vesicarius *linn*) रयुमेक्स क्रिस्पस (Rumex crispus) –ले०। कण्ट्री या कामन सारेल (Gountryor Common sorrel)-इं०।

अम्लवेतसवर्ग

(*N.O polygonaceæ*)

उत्पत्ति-स्थान—भारतवर्ष (कोच विहार)।

वानस्पतिक-वर्णन—एक मध्यम आकार का पेड़ जो फल के लिये बागों में लगाया जाता है पत्र बड़ा, चौड़ा और कर्कश होता है। अषाढ़ में इसमें पुष्प लगते हैं। पुष्प सफेद होता है। शरत् काल में फल पकते हैं। फल तोल नाशपातों के आकार के किन्तु उसकी अपेक्षा दुगुने वा तिगुने बड़े कच्चे पर हरिद्वर्ण के और पकने पर पीले और चिकने होते हैं। इसका थैकल कहते हैं। इस फल की खटाई बड़ी तीक्ष्ण होती है। इसमें सुई गल जाती है। यह अग्निसंदीपक और पाचक है, इस कारण यह चूरण में पड़ता है। यह एक प्रकार का नीबू है।

कोचविहार राज्य में सर्वत्र अम्लवेतस के वृक्ष प्रचुर मात्रा में उत्पन्न होते हैं। राजनिघण्टुकार ने यथार्थ ही लिखा है, "भोट देशे प्रसिद्धम्"। हमारे देश में जिस प्रकार आम को काट सुलाकर रखते हैं उसी प्रकार, कोचविहार में वहां के निवासी अमलवेत के पके फल (थैकल) को काट सुखा कर रखते हैं। कोई कोई इस प्रकार सुखाए हुए थैकल को दीर्घकाल तक सर्षप तैल में भिगो कर रखते हैं। और इस तैल को वायु प्रशमनार्थ प्रयोग में लाते हैं। शुष्क थैकल बहुत चिमटा होता है और सहज में चूर्ण नहीं होता।

प्रयोगांश—फल।

प्रभाव तथा उपयोग

आयुर्वेदीय मतानुसार—

अमलवेत कसैला, कटु, रूक्ष, उष्ण है तथा प्यास, कफ वात, जन्तु, अर्श, हृद्रोग, अश्मरी और गुल्म को जीतता है। (धन्वन्तरीय निघण्टु)

अम्लवेत अत्यम्ल, कषैला एवं उष्ण है और वात, कफ, अर्श श्रम, गुल्म तथा अरोचक का हरण करने वाला है तथा भोट देश में प्रसिद्ध है। (रा० नि० व० ६)

अत्यन्त खट्टा, भेदक, हलका, अग्निवर्द्धक, पित्तजनक, रोमांचकारक और रूक्ष। इसके सेवन करने से हृद्रोग, शूल गुल्म रोग, मूत्रदोष, मलदोष, प्लीहा, उदावर्त्त, हिचकी, अफरा, अरुचि, श्वास, खांसी, अजीर्ण वमन, कफजन्य रोग और वातव्याधि दूर होती है। इससे बकरे का मांस पानी हो जाता है (अर्थात् यह छागमांस द्रावक है) और जिस प्रकार चणकाम्ल (चने के तेजाब या क्षार) में लोहे की सूई गल जाती है उसी प्रकार इसमें भी सूई डालने से सुई गल जाती है। (भा० पू० १ भा०)

अत्यन्त खट्टा, अफरा और कफ तथा वात नाशक है। यही पका हुआ (पक्वफल) दोषघ्न श्रमघ्न, ग्राही और भारी है। (राज०)

अम्लवेतस के वैद्यकीय व्यवहार

चरक भेदनीय, दीपनीय, अनुलोमक एवं वातश्लेष्मप्रशमक द्रव्यों में अम्लवेत श्रेष्ठ है। (सू० २५ अ०)। वङ्गसेन—प्लीहा में अम्लवेतस—सहिजन की जड़ की छाल का सैंधवयुक्त क्वाथ प्रस्तुत कर उसमें बहु थैकल चूर्ण एवं अल्प पीपल व मरिच का चूर्ण मिश्रित कर प्लीहोदरी को सेवन कराए। (उदर चि०)

वक्तव्य

चरकमें अम्लवेतस का पाठ हृद्यवर्ग के अन्तर्गत आया है (सू० ४ अ०)। चरक के गुल्म चिकित्साधिकार में द्रव्यान्तर से अम्लवेतस का बहुशः प्रयोग आया है। यथा—(१) "पुष्कर व्योष धान्याम्लवेतसः"—(२) "तिन्तिडीकाम्लवेतसैः"। (३) 'शटी पुष्कर हिंवम्लवेतस"—(चि० ५ अ०)। सुश्रुतोक्त गुल्म चिकित्साधिकार में अम्लवेतस का बारम्बार उल्लेख दिखाई देता है। यथा—(१) 'हिंगु सौवर्च्चल ❀ ❀ अम्लवेतसैः। (२) 'हिंग्वम्लवेतसाजाजी"—(उ० ३२ अ०)। अग्निमांद्याधिकार के प्रसिद्ध "भास्करलवण" में अम्लवेतसका पाठ आया है। चक्रदत्तोक्त गुल्माधिकार में 'हिंग्वाद्य चूर्ण" "काङ्कायन गुटिका" तथा रसोनाद्यघृत" आदि योगों में अम्लवेतस व्यवहार में आया है।

नोट—जिन प्रयोगों में अम्लवेतस व्यवहृत हुआ है उनमें आजकल प्रायः वैद्य उपर्युक्त न०१ में वर्णित लकड़ी का ही व्यवहार करते है क्योंकि बाजारों में अमलवेत के नाम से प्रायः वही औषधि उपलब्ध होती है। यह शास्त्रोक्त अम्लवेतस नहीं, अपितु कोई और ही पदार्थ है। अस्तु उपर्युक्त नं० ४ ,, में वर्णित अम्लवेतस (अर्थात् उसका शुष्क फल) ही औषध कार्य में लाना उचित है।

नव्यमत समालोचना

अम्लवेतस, चांगेरी, अम्लकोणी, लोणी और चुक्र ये पांचों अम्ल द्रव्य हैं। अस्तु, प्राचीन अर्वाचीन दोनों प्रकार के लेखकों ने इसका परस्पर एक दूसरे के स्थानमें उपयोग कर इन्हें भ्रमकारक बना दिए हैं। प्रायः सभी जगह ऐसा किया गया है जहां अम्लकोणी का वर्णन आया है वही उसके परियाय स्वरूप "चांगेरी" और "चुक्र" आदि संज्ञाएँ भी व्यवहार में लाई गई है, उसी प्रकार जहाँ अम्लवेतस का वर्णन दिया हैं, वहीं पर शेष तीन संज्ञाए भी व्यवहृत हुई है। इसी प्रकार शेष भी जानना चाहिये। ऐसे अवसर पर उक्त संज्ञाओं को अपने अपने स्थानों पर मुख्य और शेष को गौण समझना चाहिये।

डॉक्टर उदयचाँद एवं रॉक्सबर्ग दोनों ही ने अम्लवेतस का बंगला नाम "चुक्रापालङ्" लिखा है। परन्तु ध्यान पूर्वक विचार करने से यह ज्ञात होता है कि उदयचाँद ने अम्लवेतस का उल्लेख ही नहीं किया है। अम्लवेतस के अर्थ में इनका किया हुआ चुक्र का प्रयोग गौण है। चुक्र का मुख्य अर्थ चुक्रापालक है। यदि उदयचाँदोक्त संस्कृत नाम चुक्र एवं बंगला नाम चुक्रापालङ्क को ठीक मान लिया जाय तो उसका लेटिन नाम अशुद्ध रह जाता है और यदि लेटिन नाम को ठीक रक्खा जाय तो संस्कृत आदि नाम अशुद्ध रह जाते हे। अतः उसको अम्लवेतस ही कहना उचित है, किन्तु बंगला नाम थैकल अवश्य लिखना चाहिये।

यूनानी मत से—प्रकृति-सर्द व तर। हानिकर्त्ता-वायुवर्द्धक तथा कफकारक। दर्पघ्न—काली मरिच, लवण और अदरक। प्रतिनिधि—खट्टा तुरञ्ज आवश्यकतानुसार। मात्रा—एक अदद। मुख्य प्रभाव-रक्त व पैत्तिक व्याधियों को लाभदायक है।

गुण, कर्म, प्रयोग—(१) प्रायः हृद्रोगों को लाभप्रद है, (२) पित्त का छेदन करता, (३) पाचनकर्त्ता, (४) आमाशय को मृदुकरता (५) क्षुद्बोधकर्त्ता, (६) रक्तोष्मा को प्रशमन करता, (७) बावगोला की वायु को लाभकरता और (८) उदरशूल को लाभप्रदान करता है, (९) यदि अजवाइन खुरासानी को सैंधानमक के साथ सात बार इसके अर्क में तर

करके सुखा लें तो प्रायः वातज तथा उदरीय व्याधियों को लाभप्रद है और इसका चूरन सम्मिलित करना और भी गुणदायक है, (१०) लवंग, काली मरिच, लवण, अजवायन और अदरक को कूटकर इसमें छिद्रकर भर दें और सूर्यताप में रखें दो चार दिन तक उसे लकड़ी से चलाते रहें सूख जाने पर इसको चूर्ण कर रखें। इसके सेवन से यह क्षुधा की वृद्धिकर्ता आहार का पाचनकर्ता और प्लीहा को लाभ करता है। म० मु० वृ० मु०।

अम्लवेद–हिं० पु० अम्लवेत।

अम्लवेदसः–सं० पुं० चुक्र। चुक्र–हिं० बं०, द०।

अम्लशाकम्–सं० क्ली० (१) वृक्षाम्ल तिन्तिड़ी हिं० तेंतुल बं०। रा० नि० व० ६। पु० (२) चुक्र नामक पत्र शाक चूका हिं० अम्लकुचाइ कट पालङ्चुका पालङ्–द०।

संस्कृत पर्याय–शाकाम्ल शुक्राम्लः अम्लचुक्रिका चिञ्चाम्लं अम्लचूडः चिञ्चासारः।

गुण–अत्यन्त खट्टा, वातनाशक, दाह तथा कफनाशक है शर्करा के साथ मिलाकर सेवन करने से यह दाह पित्त तथा कफनाशक है। रा० नि० व० ७।

अम्लशाकाख्यम्–सं० क्ली० चुक्र नामक पत्र शाक चूका थोर चुका महा० (Rumex Acetosella) रा० नि० व० ७।

अम्लष्टा–सं० स्त्री० चांगेरी। आंवती महा० (Oxalis corniculata)

अम्लस–अ०, समधरातल, सादा हमवार, चिकना वह वस्तु जिसका धरातल सम तथा चिक्कण हो। (Soft)–इं०

अम्लस–गन्द्रोक–बं० गंधक आमलासार।

अम्लसरा–सं० स्त्री० नागवल्ली भेद, पान (A sort of betel-leaf) रा० नि० व० ६।

अम्लसारः–सं० पुं०
अम्लसार–हिं० संज्ञा पुं०

अम्लवेतस अमलवेत (Rumex Vesicarius) रा० नि० व० ६। (२) निम्बुक नीबू (Citrus medica) रा० नि० व० ११। (३) हिन्ताल (Hintala) रा० नि० व० ६ (४) चूक, चुक्र। आमलासार गंधक।

अम्लसारं–कम् स० क्ली०
अम्लसार–हिं० संज्ञा० पुं०

कांजी। कांजिक चुक्र नामक कांजिक भेद। रा० नि० व० ५।

अम्लस्कधः–सं० पुं० अम्लरसान्वित द्रव्य समूह अर्थात् अम्लवर्ग की ओषधियां। वे निम्न हैं। (१) आमला, (२) इमली, (३) बिजौरा, (४) अम्लवेत, (५) अनार, (६) चांदी (७) तक्र (८) चूका (९) परेवत (१०) दही (११) आम (१२) अम्बाड़ा (१३) भव्य (१४) कैथ और (१५) करौंदा इनके सिवा कोशाम्र, लकुच, कुवल झाड़ी बेर, बड़ा बेर, दही का तोड़ आदि द्रव्य अन्य अन्थकारों के मतानुसार अम्लवर्ग की ओषधियों के साथ वर्णित हैं। वा० सू० १० अ श्लो० २६।

अम्ल स्तम्भनिका–सं० स्त्री० तिन्तिड़ी, अमली अम्लिका (Tamarindus Indica) वै० निघ०।

अम्लहरिद्रा–सं० स्त्री० (१) शठीकचूर (Curcuma zedoaria) रा० नि० व० ६। (२) अम्बाहलदी, आंबाहलदी, आम्रहरिद्रा (Curcuma amada)।

अम्ला–सं० स्त्री० (१) चांगेरी, आमरूल बं०। (Oxalis Corniculata)।

रा० नि० व० ५ (२) बन्मातुलुङ्ग (Citrus medica)। (३) अम्लवेतस (Rumex vesicarius) रा० नि० व० ६। (४) श्री वल्ली वृक्ष, वर्षा मल्लिका बं० रा० नि० व० ८ (५) तिन्तिड़ी, अमली, अम्लिका (Tamarindus Indica) रा० नि० व० ११। भा० पू० १ भा० फल० वं०।

अम्लाङ्गः–सं० पु० अम्लवेतस (Rumex vesicarius) रा० नि० व० ६।

अम्लोटनः–सं० पुं० महासहा वृक्ष कटसरैया, लाल गुलमक्खन, –हिं०। झांटी विशेष बं०। आप०

नाट, -द० वाणपुष्प -गौड़ भाषा में आयना कहते हैं। (Barleria Prionitis *linn*)

गुण—कसैला, मधुर, तिक्त उष्णवीर्य तथा स्निग्ध है भा० पू० भा० पु० व०। ४ख० म० भा० योनिरो० चि०। चि० क्र० क० ब्रह्मी० गर्भवेदनाहर योगान्तर्गत।

अम्लाढ्यः-सं० पु० करण, निम्बुक, नारंगी, नारांगा तेंदुर-गाछ-बं० पं० मु०।

अम्लातः-कः सं० पु० अम्लाटन वृक्ष भा० पू० १भा० पु० व०।

अम्लातकी-सं० स्त्री० पलाशीलता रा० नि०।

अम्लादानः-सं० पु० कुरण्टक वृक्ष कटसरैया, पीयाबांस। वाणपुष्प गौड़। (Barleria prionitis *linn*)

अम्लादिः—सं० पु० (१) तिन्तिड़ी, अमली, अम्लिका। (Tamarindus Indica) रा० नि० व० ६ (२) चुक्र नामक पत्र शाक (COuntry Sorrel) रा० नि० व० ७।

अम्लाध्युषितः-सं० पु० क्ली०
अम्लाध्युषित-(रोग) हिं० संज्ञा पु०

(१) सर्वगताक्षि रोग।

लक्षण—इस रोग में आंखों के बीच का भाग नीला और किनारे लाल हो जाते हैं। कभी कभी आंखें पक भी जाती हैं। उनमें सूजन, दाह और पीडा होती और पानी बहा करता है। अम्ल अर्थात् खटाई आदि के अधिक सेवन द्वारा होने के कारण इसको अम्लाध्युषित कहते हैं। मा० नि०।

(२) करण निम्बुक, मीठा शरबती नीबू Citrus decumana (Sweatline)

अम्लानः—सं० पु० बन्धुजीवक वृक्ष बान्धुली वृक्ष वं०; (Comphrena globosa) त्रिका० (२) झिण्टिका भेद कटसरैया। (Barleria prionitis *linn*) विश्व० (३) अम्लाटन वृक्ष, आयना-बं० भा० म० ४भा० योनिरो० चि० (४) महासहा मे० नत्रिकं (५) महाराज तरणी वृक्ष रा० नि० व० १०।

अम्लानम्—सं० क्ली० पद्म, कमल (Nymphaea nelumbo) श० र०।

अम्लानक
अम्लान्तक } सं० पु० कटसरैया, वाणपुष्प (Barleria prionitis *linn*)।

अम्लाना—सं० स्त्री० महासेवती पुष्प वृक्ष, बड़ बन सेउती-बं० थोर राणसेवती मह०। वै० निघ०।

अम्लानिनी—सं० स्त्री० पद्म समूह पद्मिनी (Nymphæa lotus) त्रिका०।

अम्लाम्ना-सं० स्त्री० चांगेरी। Oxalis monadelpha।

अम्लायनी—सं० स्त्री० मल्लिका भेद। नेवारी-हिं०। नेवाली-मह०। वै० निघ०।

अम्लावल—सं० अमली, चिञ्चा, अम्लिका। (Tamarindus indica)

अम्लिका-सं० स्त्री०, हिं० संज्ञा स्त्री (१) आम्र, आम, (Mangifera Indica) रा० नि० व० ३। (२) पलाशी लता (Palashi) (३) माक्षिका मोहया, रा० नि० व० २३। अम्लोद्गार, खट्टा डकार मे०। (४) आमला (Phyllanthus emblica) (५) श्वेताम्लिका, (८) चांगेरी, (Rumex Cornicalata) रा०नि०व०२३ (६) अर्श रोग में तिन्तिड़ी अर्थ में और सर्वत्र दीपन और पुरीष संग्रहणादि योगों में अम्लिका श्यामच्छद एवं बृद्धदारक के अर्थों में प्रयुक्त हुई है। सि० यो० अग्निमुखचूर्ण वृन्द। सि० यो० अरोच० चि०। (१०) अमूला, अम्बला, इमली कटारे-हिं०। अम्ली, अम्लीका, वोट, अम्बली-द०। चिञ्चा, अम्लिका (अ०), तिन्तिडीकः, तिन्तीडीका, तिन्तिडिकं, अम्लीका, आम्लिका, आम्लीका, तिन्तिलीका (अ० टी०), वृक्षाम्ल, तिन्तिडः (वै०) तिन्तिली, तिन्तिडिका, आम्बिका, चुक्रुः, चुक्रः, चुक्र, अम्ला, अत्यम्ला, भुक्रा, भुक्रिका, चारित्रा गुरुपत्रा, पिच्छिला, यमदूतिका, चरित्रा (शब्दर०) शाक चुक्रिका, सुचुक्रिका, सुतिन्तड़ी, चुक्रिका, अम्ली, दन्तशठा, चिचिका-सं०। तेंतुल, तेंतुल

गाछ (बै० श०), तिंतुरी, आम्ली तेंतै (स० फा० इं०)-बं० । तम (म्) रे हिंदी, हमर. हूमर सदारा (स० फा० इ०). हवारा, जोश-अ० । अम्बलह् तमरेहिंदी, खुर्माये हिंदी--फा० । टैमरिण्डस Tamarindus टैमरिण्डस इंडिका (Tamarindus Indica, *Linn*) ले० । टैमरिण्ड Tamarind-इं० । टैमरिनिपर डी' इण्डी (Tamarinier de I' Inde)-फ्रा० · टैमरिण्डी (Tamarindi) -जर० । पुलि; पुलियम पज़म-ता० । चिण्ट-पण्डु चिण्ट-चेट्टु-ते० । पुलियम पज़म (स० फा० इं०) पुलि, पलम (इं० मे० प्रां०)-मल० । हुग्गिसे, हुणसिनयले, हुणशे-हण्ण-कना० । चिंच, चिंचोक चिचा, चिंट्ज, अमली-मह० । आम्बली, आम्बलीनु, चिंचोर-गु० । सियम्बुल-सिं० । मगि-बर्मी० आसामजब (बीज)-मल० । कँआँ-उड़ि० । काङ्गी-मैसू० । इमली-पं० । टिण्टज-चम० । तेंतुलि उड़ि० ।

शिम्बी वर्ग

(*N O. Leguminosœ*)

उद्भव-स्थान—एशिया के बहुत से भाग, भारतवर्ष, वर्मा तथा अफरीका (मिश्र) अमेरिका, और पूर्वीय भारतीय द्वीप ।

संज्ञा-निर्णय—इसकी अंगरेजी या लेटिन संज्ञा टैमरिण्डस इसकी अरबी संज्ञा तमरहिंदी से, जिसका अर्थ हिंदी खजूर है, व्युत्पन्न है ।

वानस्पतिक-वर्णन—इसके वृक्ष से प्रायः सभी लोग परिचित हैं । इसके वृक्ष बहुवर्षीय, विशाल एवं सशाख होते हैं । देखो--इमली ।

नोट—वृक्षाम्ल और तिन्तिड़ी पृथक् पृथक् वृक्ष हैं । वैद्यक में इसके गुण-पर्याय पृथक् लिखे हैं । वृक्षाम्ल का पर्याय तिन्तिडी लिखा है, और तिन्तिड़ी के पर्यायो में वृक्षाम्ल शब्द का उल्लेख है वृक्षाम्ल के वृक्ष उत्तर पश्चिमाञ्चल में विषाम्बिल (वृक्ष) नाम से प्रसिद्ध है। ये देखने में अत्यन्त शोभायमान होते हैं । पत्र दीर्घ एवं चिक्कण होते हैं, ये वसन्त ऋतु में फलते हैं फल निम्बुक फलवत् होता है। वृक्षाम्ल नाम इसकी सर्वथा अन्वर्थ संज्ञा है । इस हेतु इसको "शाकाम्ल" "चूक्राम्ल" "फलाम्ल" और "अम्लबीज" कहते हैं । यह चतुराम्ल तथा पञ्चाम्ल का एक अवयव है । इसका वानस्पतिक वर्ग भी यही अर्थात् वृक्षाम्लवर्ग (Guttiferæ) है ।

इसके पर्याय निम्न हैं—

वृक्षाम्लं—सं० । विषा (षां) बिल-हिं० । अमसूल, कोकम--बम्ब० । (Garcinia purpurea, *Roxb* or Garcinia indica, *Chois*)। विस्तार हेतु देखो—वृक्षाम्ल (अमसूल) ।

रासायनिक-संगठन—तिन्तिड़ी--फल-मज्जा में तिन्तिडिकाम्ल (टार्टारिक एसिड) ५ प्रतिशत निम्बुकाम्ल (साईट्रिक एसिड), सेवाम्ल (मैलिक एसिड). तथा शुक्राम्ल (एसेटिक एसिड), पांशु तिन्तिड़त (टार्ट्रेट आफ पोटासियम) ८ प्रतिशत, शर्करा २५ प्रतिशत से ३० प्रतिशत निर्यास और पेक्टिन प्रभृति होते हैं। बीजत्वक् (Testa) में कषायीन (टैनिकाम्ल) एक स्थिर तैल तथा अविलेय पदार्थ होते हैं। बीज में ऐल्ब्युमिनाइड्स, वसा, कर्बोज ६३·११ प्रतिशत तन्तु और भस्म जिसमें स्फुर एवं नत्रजन होते हैं ।

प्रयोगांश—फल (पक्व व अपक्व), मज्जा, बीज, पत्र, पुष्प, त्वक्, त्वक् भस्मसार ।

औषध-निर्माण—अम्लिकापान, अम्लिकावटक (भा०), पत्रक्वाथ-मात्रा-१ से १० तोः त्वक्क्षार-मात्रा—आध आना से एक आना भर

इमली के गुणधर्म तथा उपयोग

आयुर्वेदीय मतानुसार—अमली अत्यन्त खट्टी, पित्तकारक, लघु, रक्तजनक, वातप्रशामक, और परम वस्तिशोधक है । पक्की अमली मधुराम्ल, भेदक, विष्टम्भी और वात नाशक है। त्वक् भस्म कषैली उष्ण, कफघ्न और वातनाशक है । (धन्वन्तरीय निघण्टु)

आम तिन्तिड़ी—(कच्ची इमली अत्यन्त खट्टी और पक्की इमली मधुराम्ल (खटमिट्ठी)

वातघ्न, पित्त, दाह, रक्त तथा कफ प्रकोपक है। इमली की कच्ची फली अत्यन्त खट्टी लघु और पित्तकारक है। पक्वफल स्वादाम्ल, भेदक तथा विष्टम्भ और वात नाशक है। अम्ल, कटु, कषाय उष्ण तथा कफ व अर्श का नाश करने वाली है। और वात, उदर रोग, तृष्णा, हृद्रोग, यक्ष्मा, अतिसार तथा व्रण की नाशक है। रा० नि० व० ६।

पक्व चिञ्चाफल रस—(पक्व अमली का रस)—मधुराम्ल (खटमिट्ठा), रुचिकारक, शोफ पाककर (सूजन को पकाने वाला), और इसका प्रलेप व्रणदोष विनाशक है। अमली के पत्र शोफघ्न, रक्तदोष तथा वेदना नाशक हैं। इसके शुष्क त्वक् का क्वाथ शूल तथा मन्दाग्नि नाशक है। रा० नि० व० ११।

अपक्व अमली गुरु, वातहर, पित्त, कफ और रक्त नाशक है, पक्व—रेचक, रुचिकारक, अग्नि प्रदीपक और वस्तिशोधक है। शुष्क हृद्य लघु, श्रम, भ्रान्ति और पिपासा हर है। मद० व० ६

आम—खट्टी गुरु, वातनाशक, पित्तकर्ता, कफ वर्द्धक और रक्त दोष निवारक है। पकी इमली अग्निप्रदीपकर्ता, रूक्ष, सर (दस्तावर) गरम और वात श्लेष्म नाशक है। भा० पू० १ भा०।

आम—(कच्ची इमली) वात नाशक, उष्ण और अत्यन्त भारी है। पक्व-लघु, संग्राही है तथा ग्रहणी और कफ वात नाशक है। मद० व० ६।

अमली के पक्व फल के गुण में वृक्षाम्ल फल से थोड़ा अन्तर है। (चरक सू० २७ अ०)

इमली का फूल (चिञ्चा पुष्प) कषैला, स्वादाम्ल और रुचिकारक, विशद, अग्निजनक, लघु तथा वातश्लेष्मनाशक और प्रमेह नाशक है। पत्र शोथहर है। नूतन इमली वात श्लेष्मकारक और वही वार्षिकी अर्थात् एक वर्ष की (पुरानी) वा पित्त नाशक है। (निघण्टु रत्नाकर)

तिन्तड़ी के वैद्यकीय व्यवहार

हारीत—शोथ पर तिन्तड़ी पत्र—तिन्तिड़ी पत्र द्वारा सिद्ध किये हुये अत्युष्ण जल में नमक मिलाकर किंवा पिसे हुये तिंतिड़ी के पत्र के उष्ण पिण्ड द्वारा शोथ को स्वेदन करें। यथा—

"सस्वेदन क्रिया कार्य्या सा कार्य्या च पुनः पुनः।
अथवा तिन्तिड़ीच्छदैः"। (चि० २६ अ०)

चक्रदत्त—अरोचक में तेतुल—(१) पकी इमली के शर्बत में गुड़ मिलाकर मधु एवं दालचीनी, इलायची तथा मरिच चूर्ण द्वारा सुगन्धित कर मुख में इसका कवल धारण करने से अभक्तच्छन्द नामक अरोचक रोग प्रशान्त होता है। यथा—"अम्लिका गुडतोयञ्च स्वगेला मरिचान्वितम्। अभक्तच्छन्द रोगेषु शस्तं कवल धारणम्। (अरोचक-चि०)

(२) मसूरिका में तिन्तिड़ी पत्र—इमली और इमली के पत्र को शीतल जल में पीसकर पान करें। यह वसन्त के पथ्य में हितकर है। यथा—"निशा चिञ्चाच्छदे शीतवारिपीते तथैव तु" (मसूरिका चि०)

(३) नव प्रतिश्याय में तिन्तिड़ी पत्र—नूतन कफ रोग में इमली के पत्ते का यूषपान श्रेष्ठ है। कफ परिपक्व हो गया ऐसा जानकर इसके नस्य द्वारा शिरोविरेचन कराएँ यथा—"नवे प्रतिश्याये शस्तो यूषश्चिञ्चादलोद्भवः। ततः पक्वं ज्ञात्वा हरेच्छीर्षं विरेचनैः।"
(नासारोग चि०)

भाव प्रकाश—गुल्म में चिञ्चाक्षार (१) तिन्तिड़ी वृक्ष के काण्ड के स्वयं शुष्क हुये त्वक को अन्तर्धूम अग्नि द्वारा दग्ध करें। पुनः उससे यथाविधि क्षार प्रस्तुत कर उचित मात्रा में सेवन कराएँ। यह गुल्म तथा अजीर्ण में प्रशस्त है। यथा—"पलाश वह्निशिखरी चिञ्चार्कतिलनालजा यवजः स्वर्जिका चेति क्षारा अष्टौ प्रकीर्त्तिताः। एते गुल्महराः क्षारा अजीर्णस्य च पाचकाः।"
(गुल्म-चि०)

(२) अस्थिभग्न वा अभिघात में अम्लिका कच्ची इमली का पीसकर कल्क प्रस्तुत करें फिर उसको काँजी और तिल तैल में पकाकर प्रलेप करें। किसी अंग में आघातजन्य वेदना होने, वा अस्थिच्युत होने पर यह प्रलेप विशेष रूप

से फलप्रद है। यथा—"अम्लिका फल कल्कैः सोवीर तैल मिश्रितैः स्वेदात् । भग्नाभिहत रुजाघ्नैः।" (भग्न चि०)

वङ्गसेन-वातव्याधिमें तिन्तिड़ी पत्र तालवृन्त द्वारा उद्भिक्त तालरस में इमली के पत्र कोपीशकर सुहात सुहाता उष्ण प्रलेप करने से वात रोगका नाश होता है। यथा—तिन्तिड़ीक दलैः सिद्धं तालमधिकया सह । पिष्ट्वा सुखोष्णमालेप वृद्धाद्वातरुजापहम्,, (वातव्याधि चि०)

अम्ली काफल—इमली के शुष्क फल संदीपक भेदक, तृषाहर; लघु और कफ वात में पथ्य है एवं थकावट और क्लांति को दूर करते हैं (वा० सू० अ० ६) कच्चा इमली रक्तपित्त तथा आमकारक और विदाही है एवं वात व शूल रोग में प्रशस्त है पक्व शीतगुणयुक्त है। (अत्रि० १७ अ०)

युनानी मतानुसार—

प्रकृति—द्वितीय कक्षा में शीतल व रूक्ष है, क्योंकि किञ्चित सकाच के साथ इसमें अम्लत्व अत्यन्त बलिष्ठ है (नफी) किसी किसी के मत से १ कक्षा में शीतल और २ कक्षा में रूक्ष एवं किसी के मत से तीसरे में शीतल व रूक्ष है। कोई कोई इस को मअ्तदिल लिखते हैं। हानि कर्ता—स्वर, कास, प्रतिश्याय और प्लीहा को एवं यह अवरोधजनक है। द्रव्यघ्न—खसखास, बनफशा, उन्नाब और कुछ मधुर द्रव्य। प्रतिनिधि—आलूबोखारा (आरुक) मात्रा शर्बत—४से ५वा० तो० तक मुख्य प्रभाव—पित्त एवं रक्त की उष्णता का शमन करने वाला और प्रकृति को मृदुकर्त्ता है।

गुण, कर्म, प्रयोग,—अपनी तेज़ाबत (पिच्छिलता) और अम्लता के कारण इमली रतूबतों (प्रकोप) का छेदन करती है पित्त के विरेक लाती और अपने शोधक व संग्राही गुण के कारण आमाशय को बल प्रदान करती है। इसमें संशोधक शक्ति विरेचक शक्ति के कारण आती है अपनी शीतलता के कारण पिपासाहर है और अपनी संग्राही शक्ति से वमन का निरोध करती है, विशेषतः जब इसका प्रपानक वा हिम उपयोग में लाया जाता है। परन्तु मिगोकर बिना मले छान कर इसका प्रपानक प्रस्तुत करना श्रेष्ठतर है या वैसे ही जुलाल लेकर शर्करा योजित कर पान करें क्योंकि मलने पर यह कुस्वाद हो जाता है कि बमन आने लगते हैं। (त० न०)

मीर मुहम्मद हुसेन-स्वरचित मख्ज़नुल् अद्वियह् नामक ग्रंथ में लिखते हैं- इमली दो प्रकार की होती है —(१) लाल और (२) भूरे रंग की। इन दोनों में लाल जाति की उत्तम होती है इसलामी हकीम इमली के गूदे को हृद्य, संग्राही; खुलासा दस्त लाने वाला, पैत्तिक नवनावरोधक रेचन द्वारा पित्त एवं विदग्ध दोषों से शरीर को शुद्ध करने वाला मानते हैं। जुलाब लाने को जब इसका उपयोग करना हो तब इसके साथ अन्य प्रवाही बहुत थोड़े देने चाहिये। कंठस्थ में इमली के पानी के कुल्ले करने से लाभ होता है। बीज के उत्तम संग्राही बतलाया जाता है तथा उबाल कर विस्फोटक पर इसको उत्कारिया (Poultice) रूप में उपयोग किया जाता है जल में पीसकर कास तथा काग लटक आने में इसको शिर की चँदिया पर लगाते हैं। इसके पत्र को जल के साथ कुचल कर दबाकर रस निकालने से एक प्रकार का अम्ल द्रव प्रस्तुत होता है! इसको पैत्तिक ज्वर एवं मूत्र दाह में लाभप्रद बतलाया जाता है। प्रादाहिक शोथों तथा वेदनाके निवारणार्थ इसकी उत्कारिका उपयोग में आती है नेत्राभिष्यन्द में आंख पर इसके पुष्प की पुल्टिस बांधते हैं पुष्प के रस का रक्तार्श में आन्तरिक उपयोग होता है। इसके वृक्ष की छाल ग्राही और पाचक ख्याल की जाती है। (मख्ज़नुल् अद्वियह्)

देशी लोग इसके वृक्ष का पवन स्वास्थ्य को हानिप्रद मानते हैं। कहते हैं कि इमली के वृक्ष के नीचे तंबू बहुत दिन रखने से उसका कपड़ा सड़ जाता है। यह भी कहा जाता है कि उसके वृक्षके नीचे अन्य पौदे भी नहीं उगते। परन्तु यह

सर्वव्यापक नियम नहीं क्योंकि हम लोगों ने उसके नीचे चिरायता एवं अन्य छाया प्रेमी पौधों को प्रायः उत्पन्न होते हुये देखे हैं। (डीमक—फा. इं० भा०)

हृदय और आमाशय को बल प्रदान करता, हृल्लास को शमन करता, मूर्च्छाहर शिरःशूल को लाभप्रद और सक्रमक वायु के विषको दूर करता है इसके बीज संग्राही और वीर्यस्तम्भक हैं। खुनाक में इसके पत्र के क्वाथ का गण्डूष कराना लाभप्रद है शुक्रसांद्रकर्ता और योनिसंकोचक हैं इसकी छाल पीस कर छिड़कने से व्रणपूरण होता है (मु० मु० बु० मु०)

एलोपैथिक मेटीरिया मेडिका तथा तिन्तिड़ी फलमज्जा

एलोपैथी चिकित्सामें पक्व तिन्तिड़ी फल-फलमज्जा औषधार्थ व्यवहार में आती है वह बिगड़े नहीं, इस हेतु इसमें शकरा मिलाकर रखते हैं। अम्लिका द्वारा प्राप्त अम्ल (तिन्तिड़िकाम्ल) अर्थात् टार्टारिक एसिड (Tartaric acid) भी डॉक्टरी चिकित्सा में व्यवहृत है। अस्तु, देखो एसिडम टार्टारिकम् यह दोनों ही उक्त चिकित्सा प्रणाली में ऑफ़िशल है। इनमें से प्रथम अर्थात् इमली के फलके गूदे का यहाँ वर्णन किया जाता है।

मिश्रण—यूरोप में कभी कभी इसमें ताम्र चूर्ण का मिश्रण कर देते हैं।

यह पड़ती है—कन्फ़ेक्शियो सेनी के ७२ भाग में ६ भाग।

प्रभाव—लैक्जेटिव (कोष्ठमृदुकर) तथा रेफ्रिजेरण्ट (शैत्यकारक) मात्रा आधा से १ आउंस वा अधिक।

प्रभाव तथा उपयोग

अकेले इसका क्वचित् ही उपयोग होता है। एक आउंस की मात्रा में यह कोष्ठमृदुकर है। इससे आन्त्रीय कृमिवत् आकुञ्चन की वृद्धि होती है इसको शैत्यकारक बतलाया जाता है और टैमरिण्ड ह्वे (Tamarind whey) या अम्लि आ वारि रूप में कभी कभी उत्तरों में इसका उपयोग किया जाता है। विधि—थोड़े गरम पानी में ढाई तोला इमली का गूदा मिलाकर फांट प्रस्तुत कर उसमें चौथाई दुग्ध मिलाएँ वानस्पतिक सेव और निम्बुक प्रभृति अम्लों की विद्यमानता के कारण इसका शैत्यकारक प्रभाव होता है।

अन्य मत

ज्वर में इमली का पन्ना (अम्लिकापान) देने से तृषा कम हो जाती है और किसी प्रकार चित्त को शान्ति लाभ होता है, बालकों के मलावरोध में इसका मुरब्बा विशेष रूपसे लाभदायक होता है। (म० अ० डां० २ भा०) ॥

मदात्यय एवं धुस्तुरजन्य उन्मत्तता में इमली के फल का गूदा हितकारक है। फलत्वक्भस्म का उक्त प्रकार की अन्य ओषधों के साथ क्षारीय द्रव्य रूप से ओषधीय उपयोग होता है। (दत्त. हिन्दु मेटीरिया मेडिका)।

धतूरा प्रभृति के वेग उतारने के लिये खजूर, दाख, इमली का गूदा, अनारदाना, फालसे और आमले सबको सम भाग ले तथा बारीक पीस और इसमें पचगुना पानी मिला औटाकर काढ़ा प्रस्तुत कर उपयोग करना चाहिये।

मात्रा—१ छ० : २ आउंस) च० द०।

जिस औषध के साथ यह दी जाती है उसके प्रभाव को बढ़ा देती है। परन्तु शीरा रेवन्दचीनी के साथ पिलाने से उसका प्रभाव कम हो जाता है।

कभी कभी इमली के वृक्ष से एक प्रकार का तरल स्राव होता है, जिसको नीर कहते हैं। लगभग इसका सर्वांश काष्ठिस खटिक (Oxalate of calcium) होता है। ये श्वेत स्फटिकीय पिण्ड रूप से शुष्क होजाते हैं। (फा० इं० १ भा०)

विसीयन लोग—पेट के मरोड़ के रोग में तथा पाचनशक्ति बढ़ाने को इमली के बीज को अन्य औषध के साथ मिला कर बर्त्तते हैं।

सीलोन (लङ्का) द्वीप में यकृत और प्लीहा की गांठ होने में इमली के फूल को एक प्रकार की मिठाई बनाकर रोगी को देते हैं। पत्तों को उबाल कर उसको सेक करने में प्रयुक्त करते हैं। इमली के वृक्ष के नीचे सोने से रोग होता हैं। परन्तु नीम के पेड़ के नीचे सोने से सर्व रोग दूर होते हैं। इमली के गोंदका चूर्ण करके नासूर (नाड़ी व्रण) के घाव पर डालते हैं, इससे क्षत शीघ्रपूरित होजाता है। पत्तों को शीतल जल में भिगो के अभिष्यद में आँखों पर तथा नासूर के घाव पर बांधते हैं। बीज को पीस जल में मिला गांठ पर चुपड़ने से उसके भीतर तत्काल राध पड़कर वह विदीर्ण होजाता है।

के० एम० नदकारणी—प्रभाव—अम्लफल, अत्यन्त। पक्वफलमज्जा—शैत्यकारक, आध्मानहर, पाचक, कोष्ठमृदुकर मूल्यवान स्कर्वीहर (Antiscorbutic) और पित्तनाशक है। बीज—सग्राहक, कोमल पत्र तथा पुष्प शैत्यकारक तथा पित्तघ्न है। बीज का रक्त वर्णीय बाहिर त्वक् मृदु सग्राहक और वृक्षत्वक् संग्राहक व बल्य है।

उपयोग—एक वा दो वर्ष की पुरानी पकी इमली यकृत, आमाशय तथा आंत्रनैर्बल्य में हितकर है। प्रथम पक्वफल मलावरोध में लाभदायक है। भारतीय आहारमें इमली चटनी, कढ़ी तथा शर्बत रूप से बहुत उपयोग में आती है कोष्ठ मृदुकर रूप से यह बालकों के ज्वर में भी हितकर है। इस हेतु इमली, अञ्जीर और आलूबोखारा इनका शर्बत प्रस्तुत कर १ से २ ड्राम की मात्रा में उपयोग किया जाता है।

१ औंस (२॥ तो०) इमली का फल और १ औंस खजूर इनको पाव सेर दुग्ध में क्वथित कर छान लें। इसमें किञ्चित् लवंग तथा इलायची और रत्ती आध रत्ती कपूर सम्मिलित करने से उत्तम कोष्ठमृदुकर पानक प्रस्तुत होता है। यह ज्वर अंशुघात और प्रादाहिक विकारों में लाभदायक है

स्कर्वी (Scurvy) के नाशन व प्रतिषेधन हेतु इमली उत्तम है।

प्रवाहिका में इसके बीज का चूर्ण प्रयोग में आता है।

गुल्फ तथा सधि-शोथ पर सूजन एवं वेदना को कम करने के लिये अम्लिका पत्र को जल के साथ कुचलकर इसकी पुल्टिस बांधते हैं।

तिन्तिड़ी—फल-मज्जा एवं पत्र को क्वथित कर बनाया हुआ घन शर्बत, उत्तापाधिक्य एवं दग्धजन्य शोथ के निवारणार्थ उत्तम है।

मन्द व्रतों को स्वास्थ्यकर-क्रिया अभिवृद्धि के लिये इमली के पत्र का क्वाथ धावन रूप से उपयोग में आता है।

प्रवाहिका में इसके पत्तियों के स्वरस को लाल किये हुये लोहे से छौंक कर देते हैं। पुरातन प्रवाहिका में बीजके रक्त बाह्यत्वक् के चूर्ण को आधा ड्राम की मात्रा में मोदक रूप से उपयोग में लाते हैं। स्वाद हेतु इसमें तिगुना जीरा का चूर्ण और पर्याप्त परिमाण में खजूर खड डालते हैं।

इसकी छाल की भस्म का पाचक रूप से आन्तरिक उपयोग होता है। छाल को सैन्धव के साथ एक मृत्तिका पात्र में रखकर जला लें। जब श्वेत भस्म हो जाए तब चूर्णकर रखें। १ से २ ग्रेन की मात्रा में अजीर्ण तथा उदरशूल की यह एक उत्तम औषध है। मुख एवं कंठक्षत के निवारणार्थ इसकी भस्म को जल में घोलकर इसका गण्डूष कराते हैं। (इं० मे० मे०)

आर० एन० चोपरा—

इमली के बीज (चियों) की बाहरी लाल त्वचा प्रवाहिका एवं अतिसार को उत्तम औषध ख्याल की जाती है। अतएव १० ग्रेन (५ रत्ती) की मात्रा में इसके बीज का चूर्ण सम भाग जीरा व शर्करा के साथ दिन में दो तीन बार उपयोग किया जाता हैं। आदली कल्प में इसके फल का गूदा अत्यन्त प्रभावात्मक कोष्ठमृदुकर गिना जाता है। नीबू के अभाव में ऐण्टिस्क्युर्टिक (Antiscorbutic) गुण

के लिये इसका उपयोग किया जा सकता है। (इं० ड्रू० इं० पृ० ५६७)

हिंदुस्तानी वैद्य—इमली को शीतल पाचक साफ दस्त लानेवाली, दस्त की कब्जियत और ज्वर में अत्यन्त उपयोगी गणना करते हैं। इमली की फली के ऊपर की छाल की राख को खारके सदृश दवा में डालते हैं। पत्तोंको सूजन पर बाँधने से सूजन उतर जाती है।

पक्व तिन्तिड़ी—फलमज्जा स्कर्वी रोग प्रतिषेधक श्रमहर एवं मृदुरेचक है। यह ज्वर, तृष्णा, अंशुघात (सर्दी गर्मी) एवं पित्तप्रधान वान्ति रोग में व्यवहृत होती है। रेचन हेतु, यह चिरकारी कोष्ठबद्ध रोग में हितकर हैं, चोट लगने के कारण यदि किसी अंग में सूजन हो तो कच्ची इमली और इमली पत्र को पीस कर उष्णकर लें और शोथयुक्त अंग पर इसका प्रलेप करें। मुख क्षत में इसका कवल हितकर है। इमली के बीज आम वा रक्तातिसार में व्यवहृत होते हैं। स्वयं शुष्कभूत इमली की छाल का क्षार मूत्राम्लता तथा पूयमेह में क्षारीय औषध रूप से प्रयुक्त होता है। (आर० एन० खोरी० भा० २ प्र० २३१)

अम्लिका वृक्ष के वाह्यापरित्वक् द्वारा वज्रभस्म-निर्माण क्रम

सर्व प्रथम इमली वृक्ष की ऊपरी शुष्क छाल को एकत्रित कर उसके छोटे छोटे टुकड़े करलें किंतु वारीक चूर्ण न करें। फिर टाट आदि के टुकड़े की लम्बी थैली बनाएँ। उसमें नीचे एक अंगुल मोटा उक्त इमली के टुकड़ों को बिछा दें और ऊपर से शुद्धवंग (Tin) के कण्टक वेधी पत्र के छोटे छोटे टुकड़े काटकर थोड़ी थोड़ी दूरी पर रख दें और ऊपर फिर उक्त इमली के टुकड़ों को बिछा दें। इसी भाँति थैली को पूरी कर उसकी संधियों को भली प्रकार कस कर सी दें। पुनः कपरौटी कर सुखा लें। तदनन्तर उसे गजपुट में रख अग्नि दें। स्वांग शीतल होने पर आहिस्ते से फूल हुए वंग के टुकड़ों को एकत्रित करलें। यह सर्वोत्तम श्वेत वंग की भस्म प्रस्तुत होगी।

उपयोग—सम्पूर्ण वीर्यरोगों यथा प्रमेह, शुक्रमेह, शीघ्रपतन और स्वप्नदोष प्रभृति के लिये रामबाण औषध है। यह सैकड़ों बार परीक्षा में आचुकी है।

मात्रा व सेवन विधि—१ रत्तीसे ४ रत्ती तक उपयुक्त औषध व अनुपान के साथ प्रातः सायं सेवन करें।

अम्लिकाकन्दः—सं० पु० अम्लनालिकः—म० वै० निघ०।

अम्लिका(प्र)पान(क)—हिं० पु० अम्लिका पानम्—सं० क्ली० } तिन्तिड़ीपानक, अम्लिकाफल—प्रपानक, अमली का पना। तेंतुल पाना—बं०।

विधि—पकी अमली को जल में भिगोकर खूब मललें उसमें सफेद बूरा, मरिच, लौंग और कपूर आदि डालकर सुवासित करलें। इसको अमली का प्रपानक (पना) कहते हैं। यह अमली का पना वातविनाशक, पित्त तथा कफ कारक, रुचिकारक और अग्निवर्द्धक है। भा० पू० पानकवर्गः।

अम्लिकावटकः—सं० पु० वटक विशेष, अमली का बड़ा (बरा)। अम्ल बड़ा—बं०।

विधि—पकी अमली का कतर कर जल में ओटाएँ और जल के साथ ही मलले, पश्चात् रस बनाये हुये पानी में बड़े छोड़दें और नमक मसाला आदि डाल दें, तो अमली के बड़े बन जाते हैं।

गुण—यह बड़े रुचिकारक और अग्निदीपक हैं। इनमें पूर्वोक्त बड़ों के भी सब गुण हैं। भा० प्र० खं० १।

अम्लिकासार—हिं० संज्ञा पु० अम्ली का सत। (Acidum Tartaricum)

अम्ली—सं० स्त्री० (१) जलवेतस वै० निघ० २ भा० मदात्यय चि० खर्जूरादिमन्थ। (२) चुक्रिका—सं०। टकपालङ्—ब०। See—Chukrika (३) तिन्तिड़ी, इमली, अम्लिका। (Tama-

rindus Indica.) रा० नि० व० ११। भा० पू० १ भा० फल-व०। (४) चांगेरी। (Oxalis monadelpha) मे० लघ्विकं। हिं० स्त्री। (५) अमारी (Antidesma Diandrum) (६) अम्लोसा (Bauhinia Malabarica, *Roxb*) मेमो०।

अम्लीका-सं० स्त्री० (१) तिन्तिड़ी, इमली, अम्बिका। (Tamarindus Indica) अ० टी०। (२) अम्लोद्गार, खट्टा डकार, सु० नि० ६ अ०।

अम्लीकाफलम्-सं० क्ली० तिन्तिड़ी फल, इमली। Tamarindus Indica (Fruit of) देखो—अम्लिका।

अम्लीकासत-हिं० संज्ञा पु० अम्लिक अम्ल। देखो—एसिडम्। टार्टारिकम् (Acidum Tartaricum)

अम्लीन चिंचोर-गु० इमली, अम्लिका। Tamarind (Tamarindus Indica) इं० मे० मे०।

अम्लीयः-सं० पु० अम्लवेतस। (Rumex Vesicarius) वै० निघ०।

अम्लीय-अम्लजिद-हिं० पु० (Acidic Oxide) अम्लीय ओषिद वा ऊष्मिद। यह जल में घुल कर अम्ल बनाते हैं और ओषजन तथा अधातुओं के संयोग से बनते हैं। देखो—ओषिद।

अम्लुकी-बं० सामसुन्दर, सिरस, शिरीष। (Albizzia Stipulata)

अम्लुकी-बम्ब० आमला। (Phyllanthus Emblica) मेमो०।

अम्लू-पं० चोह, हक। आक्जीरिया डाइगाइना (Oxyria Digyna, *Hill*), ऑ० इलेटियर (O. Elatior), ऑ० रेनिफार्मिस (O. Reniformis, *Hook*)-ले०।

प्रयोगांश—फल।

उत्पत्ति-स्थान—आल्पीय हिमालय सिक्कम से काश्मीर पर्यन्त।

उपयोग—चम्बा में यह कच्चा ही और चटनी बनाकर खाया जाता है। तथा शीतल ज्वर में किया जाता है। वनाचार में यह औषध रूप से प्रसिद्ध है। स्प्युवर्ट।

अम्लोटकः-सं० पु० अश्मन्तक वृक्ष। आमोरा-हिं०। अम्लकुचाइ-बं०। रत्ना०। See-Ashmantak.

अम्लोटजः-सं० पु० चांगेरी (Oxalis corniculata) बड़ आमरुल पाता-व०। च० द० चातुर्थ ज्वर चि०। "अम्लोटजसहस्रेण दलेन।"

अम्लोत्तमम्-सं० क्ली० दाड़िम, अनार। Pomegranate (Punica granatum) पं० मु०।

अम्लोत्पादक सेल-हिं० स्त्री (Oxytic cell) अम्लजनक सेल।

अम्लोद्गार-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] खट्टा डकार।

अम्लोपित-सं० पु० सर्वांगगत रोग विशेष।

लक्षण—पित्त और रक्त की अधिकता वाले दोषों के कारण अन्न का सार भाग खट्टा होकर शिराओं में होता हुआ नेत्र को श्याम लोहित वर्ण का कर देता है तथा सूजन, दाह, पाक, अश्रुपूर्ण और धुंधलापन पैदा कर देता है।

यथा—

अम्लोपितोऽयम् इत्युक्ता गदाः षोडशसंगा।

वा० उत्तर० अ० ११

अम्लोसा-हिं० (१) आमली (Phyllanthus emblica) (२) (Bauhinia Malabarica, *Roxb*) इसका निर्यास तथा पत्र खाद्य कार्य में आता है। मेमो०।

अम्ल्युलाज-अ० दुग्ध दन्तोद्भव। दूध के दाँत निकलना।

अम्वात-अ० (व० व०), मौत, मय्यत (पु० व०) मृत्यु, मरण (Death)

अम्शाज-अ० शारीरिक धातुएँ। स्त्री तथा पुरुष वीर्य का एकत्रीभवन जो अमिश्रित अवयव का आधार बनता है। स्त्री तथा पुरुष के वीर्य का सम्मेलन। स्त्री व पुरुष वीर्य के पारस्परिक सम्मेलन से जो वुत्फा में इफ़्तिलात होता है।

अम्सानिया-पं० अस्मानिया (मेमो०) बुद्धुर, के (-चे) वा, बुद्धुर, खत्ता। एफिड्रा पेकिंग्रेन्सिस

(Ephedra Pachyclada, *Boiss.*) ए० जिरार्डिएना (E. Gerardiana, *Wall.*)-ले० । फोक-सत० । हुम, हुमा (फा०, बम्ब०) म०-ओह-जापा० । खण्ड, खम-कुनबर ।

एफिड्रा वर्ग
(*N. O. Gnetaceae*)

उत्पत्ति-स्थान-पश्चिमी हिमालय, अफगानिस्तान और पूर्वी फारस ।

नोट-इसका द्वितीय भेद, एफिड्रा वल्गेरिस (EPhedra vulgaris, *Rich*) है ।

उत्पत्ति-स्थान-शीतोष्ण तथा आल्पीय हिमालय, युरोप, पश्चिम तथा मध्य एशिया और जापान ।

इतिहास-उपरोक्त दोनों पौधे मुश्किल से भिन्न है । इनमें से अम्सानिया (E. dachyclada), एफिड्रा वल्गेरिस (E. Vulgaris) की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली एवं विषमतल (खुरदुरा) होता है । इनमें से प्रथम के विषय में श्री जे० डी० हूकर महोदय लिखते हैं:-"इसके बालियों तथा पुष्प में कोई विशेष बात नहीं होती, सिवा इसके कि इसमें न्यूनाधिक झिल्लीयुक्त ब्रैक्टस (पौष्पिक पत्र) होते हैं ।" अम्सानिया (हुम) की शुष्क शाखाएँ अब भी फारस से भारतवर्ष में लाई जाती हैं । इसमें औषधीय गुण-धर्म होने का निश्चय किया जाता है । उक्त पौधे को प्राचीन आर्य (एरियन) उपयोग में लाते थे और सम्भवतः वेद वर्णित 'सोम' यही है । (डीमक)

वानस्पतिक-वर्णन-ए० वल्गेरिस एक निम्न भूमि में उत्पन्न होने वाला, कठिन, गठा हुआ पौधा है, जिसकी जड़ें परस्पर लिपटी हुई और शाखाएँ (उत्थित, खड़ी) हरितवर्ण की होती हैं, एवं जिन पर धारियां पड़ी रहती हैं और जो लगभग समतल (चिक्कण) होती हैं । पौष्पिक पत्र मध्यदिक, शुण्डाकार, धारवर्जित, छोमश, क्वचित् क्षुद्र रेखाकार होता है । पुष्पाच्छादनक (Spikelets) १/४ से ½ इञ्च अवृन्तक, प्रायः आवर्त्तयुक्त, फल प्रायः मांसल रक्तवर्ण, रसपूर्ण, पौष्पिक पत्रयुक्त और एक या दो बीजयुक्त होता है । बीज युगलोन्नतोदर या समोन्नतोदर होते हैं । स्वाद-(टहनी) निशाथ वत् और कषाय । इनके पत्ते वा परत काटकर अणुदर्शक से देखने पर इनके तन्तु एक प्रकार के रक्तरस से पूर्ण लक्षित होते हैं ।

रासायनिक संगठन-(या सयोगी द्रव्य) इसके प्रकाण्ड में एफीड्रीन (Ephedrine) नामक एक क्षारीय सत्व पाया जाता है जिसका संकेत सूत्र क ^{१०} उद ^{१५} नत्र ऊ है, ओषजनीकरण द्वारा उक्त सत्व बेंजोइनाम्ल (Benzoic-acid), मोनोमिथलअमीन (Monomethylamine) और चुक्रिकाम्ल अर्थात् कैल्काम्ल (Oxalic acid) में विश्लेषित हो जाता है एफीड्रीन (घूर्णन विन्दु वा द्रवणाङ्क ३०° शतांश) को उत्ताप पहुँचाने पर आइसो-एफीड्रीन Isoephedrine (द्रवणांक १०४° शतांश) प्राप्त होता है । डा० एन० नेगी ! ए० वल्गेरिस की टहनियों में ३ प्रतिशत कषायिन होता है । मिस्टर जे० जी० प्रेबल (१८८८) ।

प्रयोगांश-जड़ और शुष्क शाखाएँ ।

औषध-निर्माण-जड़ का क्वाथ (४० में १)

मात्रा-आधा से १ आउंस ।

प्रभाव तथा उपयोग-यह परिवर्तक (रसायन) मूत्रल आमाशय बलप्रद और बल्य है (इं० मे० मे०) सर्व प्रथम डॉ० एन० नेगी (टोकियो) ने इस बात की ओर ध्यान आकृष्ट की, कि ए० वल्गेरिस में एफीड्रीन नामक एक क्षारीय सत्व होता है, जिसमें नेत्र कनीनिका-प्रसारक गुण है, तथा ऐट्रोपीन (धत्तूरीन) के स्थान में इसका उपयोग किया जाता है, डाक्टर टी० बी० बीक्टीन ने ध्यान दिलाया कि ए० वल्गेरिस की जड़ तथा प्रकाण्ड द्वारा निर्मित क्वाथ इस देशमें आमवात गठिया एवं उपदंश रोग की ओर इसके फल का स्वरस श्वासपथ सम्बन्धी रोगों की प्रख्यात औषध है ।

उग्र तथा पुरातन आमवात (Rheumatism) के अनेक रोगियों को उक्त क्वाथ का स्वयं व्यवहार कराने के पश्चात् अन्ततः वे इस परिणाम पहुँचे कि उक्त पौधा पेसी एवं संधि सम्बन्धी उक्त रोगों की प्रधान अमूल्य औषध है इससे व्यथा कम हो जाती है नाड़ी मन्द तथा कोमल और श्वासोच्छ्वास सरल हो जाता है, ५-६ दिन में तापक्रम स्वस्थ दशा की तरह हो जाता और संधिशोथ लुप्तप्राय हो जाता है, और लगभग १२ दिवस के बाद रोगी रोग मुक्त हो जाता है, कतिपय रोगियों में उस समय के समीप या उससे प्रथम, जबकि तापक्रम घटने लगा हो, मूत्रस्राव होते देखा गया इससे पाचन एवं आन्त्रिक क्रिया भी बढ़ती हुई देखी गई। पुरातन रोगियों में एफीड्रा का प्रभाव कम प्रदर्शित होता है। आमवात सबन्धी गृध्रसी तथा अस्थिसौषुम्नकांड प्रदाह के दो रोगियों में तो मुश्किलसे कोई प्रभाव उत्पन्न हुआ, परन्तु यहां पर यह विचारणीय बात है कि उक्त दोनों अवस्थाओं में ऐण्टिपाइरिन सैलसिलेट आंफ़ सोडा, एण्टिफेब्रीन तथा सेलोल इत्यादि औषधें भी लाभ प्रदान करने में असफल रहीं। डां० बीक्टीन द्वारा निर्मित क्वाथ की मात्रा यह है:—औषध ३ ८१ ग्राम और जल १८० ग्राम।

डां० कोबर्ट बतलाते हैं कि एफीड्रीन ०·२० ग्राम की मात्रा में कुक्कुर एवं बिल्ली की शिरा में अन्तःक्षेप द्वारा प्रविष्ट किया गया और इससे तीव्र उत्तेजना, सार्वांगिक आक्षेप, वाह्य चक्षु शोथ तथा नेत्र कनीनिकाप्रसार उत्पन्न होते देखा गया।

अम्सुल—पश्चिम घाट० कोंकम भिरण्ड Mangosteen (Carcinia xanthoxymus, *Hook*) फा० इं० ई १भा० देखो—दम्पिल।

अम्सेल—गो० कोंकम, भिरण्ड हिं०। देखो—कोकम

अम्सेल रतोम्बिसाल—गो० कोंकम की छाल (Carciniapurpuria brka of) इं० मेमे० मे० फा० इ० १ भा०।

अम्हक्रे—अ० शुद्ध श्वेत बिना चमक के जैसे चूने का रंग गोराचिट्टा।

अम्हदन्दी—पं० ओड, चूची प०। मेमो०।

अम्हर्ष्टिया नोबिल—अम्हर्ष्टियानोविलिस } इं० ले० थौका। इं० है० गा०।

अम्हौरी—हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अम्भस्=जल अर्थात् पसीना+औरी (प्रत्य०)] बहुत छोटी २ फुन्सियाँ जो गरमी के दिनों में पसीने के कारण लोगों के शरीर में निकल आती हैं अँधोरी।

अय:—सं० पुं० **अय**—हिं० सज्ञा० पु० } लोह, लोहा

(Ferrum) Iron। (२) अग्नि। (Fire)। (३) अस्त्र, शस्त्र। हथियार

अय-ता० पपड़ी हिं०, रसबीज कना०। नविली ते० बवल—म०। (Holoptelea Integrifolia, *Planch*) फा० इं० भा० ३।

अयङ्गोलम्—मल० अङ्कोल, ढेरा, (Alangium decapetalum, *Lam*) स० फा० इ०

अयच्चेण्डूरम्—ता० मण्डूर, लौहकिट्ट (Ferri peroxide) स० फा० इ०।

अयत्ला—पं० एइलत, एल्लाल, आरूड, अलान

अयनम्—सं० क्ली० **अयन**—हिं० संज्ञा पु० } (१) गति, चाल

(२) A path, the half year, i·e· the sun's course north or south of the equator.

सूर्य वा चन्द्रमा की दक्षिण से उत्तर वा उत्तर से दक्षिण की गति वा प्रवृत्ति जिसको उत्तरायण और दक्षिणायन कहते हैं। मे० नक्षिकं।

नोट—बारह राशि चक्र का आधा मकर से मिथुन तक की ६ राशियों को उत्तरायण कहते हैं, क्योंकि इसमें स्थित सूर्य वा चंद्र पूर्व से पश्चिम को जाते हुये भी क्रम से कुछ कुछ उत्तर को झुकते जाते हैं, ऐसे ही कर्क से धन की

संक्रांति तक जब सूर्य या चन्द्र की गति दक्षिण की ओर झुकी दिखाई देती है तब दक्षिणायन होता है।

आयुर्वेद के अनुसार शिशिर वसन्त और ग्रीष्म इन तीन ऋतुओं का उत्तरायण काल होता है यह पुरुष के बल का आदान काल है अर्थात् उत्तरायण में सूर्य प्रति दिन मनुष्य के बल को हरण करता है उत्तरायण में सूर्यकाल में सूर्य का मार्ग बदलनेके कारण सूर्य और पवन अत्यन्त प्रचण्ड, गर्म और रूक्ष हो जाते हैं और पृथ्वी के सौम्य गुणो को नष्ट कर देते हैं। क्रम से इन ऋतुओं में तिक्त, कषाय और कटु रस उत्तरोत्तर बलवान हो जाते हैं अर्थात शिशिरमें तिक्त वसन्त में कषाय और ग्रीष्म में कटु रस बलवान होजाते हैं. इस कहे हुये हेतुसे बलका आदान अग्नि रूप है तथा इसके विपरीत वर्षा शरद और हेमन्त ये तीन ऋतु दक्षिणायन कहलाती हैं इन तीन ऋतुओं में पुरुष के बल की वृद्धि होती है।

इसको विसर्ग काल कहते हैं, मेघ की वृष्टि और ठंढे पवन के चलने से पृथ्वी पुष्ट और शीतल हो जाती है और इस शीतलता के कारण चन्द्रमा बलवान हो जाता है। और सूर्य हीनता को प्राप्त होता है इस ऋतु में उत्तरोत्तर खट्टे खारे (लवण) और मधुर रस बलवान हो जाते हैं जैसे वर्षा में खट्टा शरद में लवण और हेमन्त में मधुर रस बलवान हो जाते हैं। वा० सू० ३ अ० सु० सू०।

(३) मार्ग, राह (४) आश्रम (५) स्थान (६) घर (७) काल, समय (८) अंश (९) गाय या भैंस के थन के ऊपर का वह भाग जिसमें दूध भरा रहता है।

अयनकाल-हिं० संज्ञा पु० [सं] (१) वह काल जो एक अयन में लगे (२) छः महीने का काल।

अयना-ता० अञ्जली। पतफणस-म० (ऐनी अन्सजेनी-मल०। हिवलसु, हेरवा-कना०। (Artocarpus Hirsuta *Lamk*) मेमा०।

अयपान-हिं० मह० ब० / **अयपानी**-ता० ते० / **अयप्पनई**-ता० — अल्लाप-गु०। विशल्य-कर्णी-सं०

अयपान-हिं०, म०, बं०। (Epuatorium Ayapana *vent*) स० फा० इं०। फा० इं० २ भा०। देखो—अयापना।

अयम्-ता० खुम्बी० कुम्बी-हिं०। (Gareya Arborea, Roxb) मेमो०।

अयमोदकम्-मल० अजवाइन-हिं०। Carum (Ptychotis) Ajowan, *D C*। स० फा० इं०।

अयलूरचे-फा० अगर-हिं०। (Alo ewood)

अयव-हिं० संज्ञा पु० [सं०] पुरीष का एक कीड़ा जो यव से छोटा होता है। (२) शुक्र।

अयसिन्दूरम्-ता० मरुडूर। (Ferri perox ide) स० फा० इ०।

अयम्-सं० क्ली० / **अयस्**- ,, / **अयसम्**- ,, — (१) लौहमात्र। लोहा। Iron (Ferrum) च० द० पाण्डु चि०। रत्ना०। (२) कान्तलौह। (Load-Stone) प० मु०। (३) मुण्डलौह। See-mundalouhah रा० नि० व० १३। देखो—लौह।

अयस-हिं० संज्ञा पु०

अयस्कन्त-हिं० पु० / **अयस्कान्त**-हिं० संज्ञा पु० / **अयस्कान्तः**-सं० पु० — (१) कान्तलौह रा० नि० व० १२। लौहचुम्बक, चुंबक। (२) कान्त पाषाण। चुम्बक पत्थर। गुण—लेखन, शीतल मेदकारक व-विषघ्न है। मद० व० ४ Load stone (Ferri Oxidum magneticum)

अयस्कान्त शिला-सं० स्त्री० कान्तलौह, लोहचुम्बक (Magnet. loadstone) वै० निघ०।

अयस्कान्तम्-सं० क्ली० एक धातुतत्व विशेष। मैङ्गनीज (Manganese)-इं० देखो—मङ्गनीज वा मैङ्गनेसियम्।

अयस्कारः-सं० पु०
अयस्कार-हिं० संज्ञा पु० } (१) जङ्घाग्र भाग (Foreleg) त्रिका०। (२) लोहार।

अयस्कृति-सं० स्त्री० (१) फौलाद के बारीक पत्र बनाकर लवण वर्ग से उन पर लेप करके जंगली कन्डों में १६ बार खूब तपाकर त्रिफला और शालसारादिगण के क्वाथ में उनको बुझाएँ। फिर इसी तरह १६ बार खैर के कोयलों में तपा कर बुझाये, ठण्डा होने पर उनका बहुत बारीक चूर्ण कर लें, फिर गाढ़े कपड़े से छानकर रक्खें। बलानुसार इसकी मात्रा घी और शहद के साथ खाएँ। इसके पच जाने पर खटाई और नमक को छोड़कर व्याधिशामक आहार करें। इसके ४०० तो० खाने से कुष्ठ, प्रमेह, मेदवृद्धि, शोथ, पांडु, उन्माद, अपस्मार, नष्ट होते हैं। रस० यो० सा०। (२) प्रमेह विषयक योग विशेष। वा० चि० अ० १२ प्रमेह।

अयस्कोटः-सं० पु० मण्डूर, लोहकिट्ट (Ferri-pr-oxide) वै० निघ०।

अयस्तम्भना-सं० स्त्री० शिवलिङ्गी। (Bryonia Laciniosa).

अयस्मयी सं० त्रि० लोहे की बनी हुई। अथर्व०। सू० ३७। ८। का० ४।

अयक्ष्मं-सं० त्रि०
अयक्ष्म-हिं० वि० } (१) नीरोग रोगरहित। (२) विरुपद्रव। बाधा शून्य। अथर्व०। सू० ३०। २। का० ४।

अयाअ्-अ० असाध्य या कष्टसाध्य रोग।

नोट—अयाअ् तथा दाअ् का भेद देखो—"दाअ्" में।

अयाउल बह्र
मजुल् बह्र
गस्यान बह्रो } —अ० सामुद्रिक रोग, समुद्रीय व्याधियां, दरियाई बीमारी, जहाजी बीमारी, जहाजी के समुद्र यात्रा करते हुऐ जहाज में किसी किसी को मतला तथा वमन की व्याधि हो जाता है, विशेषकर वे लोग इस व्याधि से अधिक ग्रसित होते हैं जो प्रथम बार जहाज यात्रा करते हैं। सी सिक्नेस (Sea Sickness) नोपेथिया (Naupathia)-इं०।

अयाचित-सं० क्ली० अमृत नामक आहार, बिना मांगी मिली वस्तु। "अमृत स्याद्याचितम्" इति मनुः।

अयात अस्ल-अज्ञात।

अयादि लेप-सं० क्ली० लोहे का बुरादा, भांगरा, त्रिफला, और काली मिट्टी को ईख के रस में १ मास तक रख कर लेप करने से बालों का श्वेत होना बन्द होता है। बु० नि० र०।

अयातयाम-हिं० वि० [सं०] (१) जिसको एक पहर न बीता हो। (२) जो बासी न हो। ताजा। (३) विगत दोष। शुद्ध। (४) अनतिक्रांत काल का। ठीक समय का।

अयादत-अ० बीमार पुर्सी, रोगी से उसकी हालत पूछना।

अयानम्-सं० क्ली०
अयान-हिं० संज्ञा पु० } स्वभाव, प्रकृति, निसर्ग नेचर (Nature)-इं०। हारा०। (२) अचंचलता। स्थिरता। -वि [सं०] बिना सवारी का। पैदल।

अयान-(रसा० परि०), पारद, पारा। (Mercury)

अयाना-मह० खाजा० हिं०। कर्गनेलिया-हिं०। (Briedelia montana) मेमो०।

अयापनम्-ओ०
अयापान-
अयापना-
आयापान- } —हिं०, मह० बं० अयपानि -ता० ते०। अरकल, तत्री-पं० अय (या) पा (प)नम् कों०। अल्लाप, एलिपा, अल्लापः-गु०। युपेटोरियम् अयापना (Eupatorium Ayapana, Vent)-ले०। वीनसेट (Voneset) थोरोवर्ट (Thorough wort)-इं०। अयप्पनै-ता०। निर्विषा -बं०। रामागणम्, विशल्यकरणी-स० (वै० श० सिं०)

मिश्र वर्ग

(*N.O Compositae*)

नॉट ऑफिशल (*Not Official*)

उत्पत्ति-स्थान—अमरीका का ब्राजील इसका मूल निवासस्थान है, परन्तु अधिक काल से यह भारतवर्ष में भी लगाया गया है । यह आर्द्र स्थानों, चरागाहों तथा झील एवं नदी तटों पर होती है ।

इतिहास—वेण्टीनाट ने इसे अमेज़न नदी (दक्षिण अमरीका की एक नदी) तट पर भी उगा हुआ पाया । इसका एक अन्य भेद युपेटोरियम् पर्फोलिएटम् (E. Perfoliatum) अमरादा में उत्पन्न खयाल किया जाता है । ऐन्सली इसके विषय में बयान करते हैं—यह एक लघु क्षुप है जो सर्व प्रथम फ्रांसीय द्वीपों से भारतवर्ष में लाया गया। देशी चिकित्सकों को अब भी इसके विषय में बहुत कम ज्ञात है । यद्यपि इसके स्निग्ध, किञ्चित् सुगंधिमय किन्तु विशेष गंध के कारण इसमें औषधीय गुण होने का उन्हें विश्वास है । मॉरीशियस में यह बहुत विख्यात है । और वहां इसे परिवर्तक तथा यकृद्दोषनाशक खयाल किया जाता है इसने अन्तः रूप से आपध्य उपयोग के लिये युरोपीय चिकित्सकों को अब तक सर्वथा निराश रक्खा है । इसकी पत्तियों के शीतकषाय का स्वाद अम्ल एवं कुछ कुछ मसालावत् होता है और यह एक उत्तम पथ्य पेय है । ताजा होने पर कुचल कर मुख मण्डल के बुरे व्रणों के पारमार्जनार्थ प्रयुक्त करने के लिये यह सर्वोत्तम व्रण शोधक है, डायर महोदय माननीय ऐन्सली को सूचित करते हैं कि इसे शुष्क कर, फ्रांस जहाँ कि चीनी चाय की प्रतिनिधि स्वरूप, एक प्रकार की चाय बनाने में इसका उपयोग होता है, भोजन के लिये बोर्बन (Bourbon) द्वीप में उक्त पौधे की कृषि की जाती है। गिबर्ट (Guibourt) के अनुसार अब यह कीर्ति २ विस्मृत सा होगया है फार्माकोपिया ऑफ इण्डिया से इसके विषय में निम्न सूचना मिलती है—"यह दक्षिणी अमरीका का एक पौधा है जो अब भारतवर्ष के विभिन्न प्रान्तों तथा जावा लङ्का प्रभृति द्वीपों में उत्पन्न होता है और साधारणतः अपने ब्राजील संज्ञा अयापान नाम से विख्यात है. सम्पूर्ण पौधा सुगन्धित किञ्चित् कटु वा कषाय स्वादयुक्त होता है। यह एक उत्तम उत्तेजक, वल्य तथा स्वेदक है। बाटन (Bouton) के कथनानुसार मारीशियस (Mauritius) के ओषधीय पौधों में यह सर्व श्रेष्ठ गणित होता है। अजीर्ण तथा आन्त्र वा फुप्फुस के अन्य विकारों में शीतकषाय रूप से यह वहां दैनिक उपयोग की वस्तु है। उक्त द्वीप की सन् १८२४ –२६ की विशूचिका महामारी में शरीर के बाह्य भाग की उष्मा के पुनरावर्तन तथा रक्तसंभ्रमण शैथिल्य को दूर करने के लिये इसका अधिकता के साथ उपयोग किया गया है। सर्पदंश के प्रति विष स्वरूप इसका अन्तः वा बहिः प्रयोग सफलता के साथ किया जा चुका है। यद्यपि सामान्य रूप से यह अज्ञात है, तथापि बागों (बम्बई) में प्रायः होता है और जो इसे जानते हैं वे इसकी बड़ी प्रशंसा करते हैं। डाइमक।

वानस्पतिक-विवरण—एक लघु भूलुण्ठित क्षुपवत् पौधा ५ से ६ फीट ऊँच, शाखाएं सरल रक्ताभ (सुर्खी मायल) कतिपय साधारण बिखरे हुए (वरल) लोमों से व्याप्त. नूतन अङ्कुर एक प्रकार के श्वेत वालसमीय स्राव के सूक्ष्म अणुओं की उपस्थिति के कारण कुछ कुछ भुरे भुरे स्वरूप के होते हैं, पत्र सम्मुखवर्ती, युग्म जिनके आधार प्रकाण्ड के चारों ओर सलग्न होते हैं तथा ४-५ इंच लम्बे और ¾ इंच चौड़े, मज्जापूर्ण, ऊर्ध्व पृष्ठ विषम (खुरदरा), अधः पृष्ठः लोमश तथा रालीय विन्दुयुक्त (पी० वी० एम०), चिकने (सम तल), भालाकार (शलाकार क्वचित्) आरीवत्, आधार पर पतले शिराव्यूह होते हैं, मध्यमिक नस (शिरा) मोटी, सुर्खीमायल; इसके मलने से अच्छी गन्ध आती है ! पुष्प ग्राण्डसेलवत्, बैंगनी, गन्ध निर्मल तथा सुगन्धिमयकुछ कुछ, इवकपेचा (Ivy) के समान

किंतु अधिक ग्राह्य, स्वाद सुगंधित, कटु तथा कषाय (विशेष प्रकार का) होता है। डाइमाक पी० वी० एम०।

रासायनिक-संगठन—(या संयोगी अवयव) डा० डाइमाक महोदय के विश्लेषणानुसार इसमें दो सत्व पाये गये, इनमें से (१) वर्ण रहित उडनशील तैल जो ताजे पौधों को जल के साथ परिश्रुत करने से प्राप्त हुआ और (२) एक स्फटिक वत् (रवादार) न्युट्रल (उदासीन) सत्व जिसका नाम उन्होंने अयपानीन या अयापनीन (Ayapanin) रक्खा। जल में यह अविलेय तथा ईथर या मद्यसार में विलेय होता है। इसके सूचीवत् दीर्घ रवे (स्फटिक) होते हैं, यह १२६° १६०° के उत्ताप पर सरलतापूर्वक उच्चपातित हो जाता है।

प्रयोगांश—सम्पूर्ण पौधा (शुष्क पत्र पुष्पान्वित शाखाएँ तथा कलिकाएँ वा कोपल) औषध कार्य में आता है।

औषध-निर्माण—पत्र-स्वरस मात्रा-चौथाई से १ तो० शुष्कचुप-१० से ६० ग्रेन (१०-३० रत्ती) तरल सत्व-१ से २ फ्लु० ड्रा०। घनसत्व १० से २५ ग्रेन (५ १२॥ रत्ती) शीतकषाय—(२० में १) आधा से २ फ्लु० आउंस (प्रभावावश्यकतानुसार)।

युपेटोरीन—(घन) १ से ३ ग्रेन (आधा १॥ रत्ती)।

इन्फ्युजम युपेटोरियई (Infusum Eupatorii)-ले०। इन्फ्युजन आफ बोनसेट (Infusion of Boneset)-इं०। अयपान शीत कषाय-हिं०। खिसाँदा अयापना-फा०, अ०।

निर्माण-विधि—एक भाग यूपेटोरियम् को १० भाग उष्ण जल में ३० मिनट तक भिगोकर छान लें। मात्रा—आधा से १ फ्लु० आउंस।

(२) फ्लुइड एक्सट्रैक्टम् युपेटोरियम् (Fluid Extractum Eupatorium)-ले०। फ्लुइड एक्सट्रैक्ट आफ युपेटोरियम् (Fluid Extract of Eupatorium)-इं०। अयपाज तरल सत्व-हिं०। खुलासहे अयापना सय्याल-उ०। मात्रा—२० से ६० मिनिम (बूंद)।

प्रभाव तथा उपयोग—

अयापान के शुष्क पत्र तथा पुष्प कैलम्बा के समान अमूल्य तिक्त वल्य रूप से प्रभाव करते हैं किन्तु इसमें स्वेदक गुण भी है। उष्ण कषाय (१ आउंस से १ पाइन्ट पर्यन्त) मद्यसारसपूर्ण अर्थात् मद्य की शीशी की मात्रा में प्रति २-१ घंटे पश्चात् देने से अत्यन्त स्वेद स्राव होता है। गुले बाबूना (Chamomile) के उष्ण कषाय के समान प्रागुक्त परिमाण से चतुर्गुण मात्रा में यह वामक है और विरेचक भी। वायु प्रणालीय कास, सक्रामक प्रतिश्याय तथा मांसपेशीय आमवात में स्वगोपरि प्रभाव हेतु इसका उपयोग किया जा चुका है और कद्दूदाना तथा केंचुओं को निकालने में इसके विरेचक गुण से लाभ प्राप्त किया गया है।

(मे० मे० ह्विटला)

प्रभाव में गुले बाबूना से अयपान की तुलना की जा सकती है। सूक्ष्म मात्रा में यह उत्तेजक एवं वल्य और पूर्ण मात्रा में कोष्ठमृदुकर है। उष्ण कषाय वामक तथा स्वेदक है। शीत पूर्व ज्वर (Agus) की शैथिल्यावस्था में तथा रक्त प्रदाह जन्य विकारों से पूर्व होने वाली निर्बलता (Depression) में इसका लाभदायक उपयोग किया जा सकता है। इसका शीत कषाय १ आउंस (अयपान पञ्चांग) को १ पाइंट पर्यन्त जल में निर्मित किया जा सकता है तथा तीन घंटे पर दो आउंस की मात्रा में इसका उपयोग किया जा सकता है। डाइमाक।

कहा जाता है कि इसमें स्कर्वी नाशक तथा परिवर्तक (रसायन) गुण भी है अमरीका में पीतज्वर (yellow fever) में इसका उष्ण कषाय की बड़ी प्रशंसा की जाती है (डा० होर्नर) इसके तरल सत्व की मात्रा १० से ३० मिनिम (बूंद) है। पूर्ण मात्रा में यह कोष्ठशुद्धिकारक है तथा इसे आमाशय या आन्त्रविकार, मूत्रविकार

कास तथा शीत ज्वर में देते हैं। इं० मे० मे०।

यह पौधा अमूल्य उग्रस्वेदक, वल्य, परिवर्तक, अन्तरुत्सेचनापह (या पचन निवारक) वामक उत्तेजक, मूत्रल और मृदु उत्तेजक गुणों से पूर्ण है। स्वेदक प्रभाव में यह गुले बाबूना से श्रेष्ठतर है। पाचकावयवों पर यह वल्य प्रभाव प्रदर्शित करता है। इससे पित्त स्राव बढ़ जाता है। अजीर्ण तथा उन दशाओं में, जिनमें उत्तेजक की आवश्यकता होती है तथा सविराम, स्वल्पविराम आन्त्रिक तथा अन्य भांति के ज्वरों, कास, शीत सक्रामक प्रतिश्याय, प्रतिश्याय और निर्बलता में भी यह उत्तेजक वल्य कहा गया है। सर्प तथा विषैले जानवरों के दंशपर इसका प्रस्तर (पुल्टिस) रूप से उपयोग होता है पी० वी० एम०।

तिक्त वल्य रूप से इसको आमाशय वा आंत्र विकार जैसे—अजीर्ण में बरतते हैं। श्लेष्म निस्सारक रूप से कास और सक्रामक प्रतिश्याव में इसका उपयोग करते हैं। कास में यह एक अत्युत्तम औषध है। परियायनिवारक रूप से शीतज्वर तथा स्वेदक रूप से आमवात रोग में इसे प्रयुक्त करते हैं। म० अ० डा०।

रक्तपित्त क्षय, प्रदर, अर्श, रक्तातिसार प्रभृति रक्तस्राव एवं किसी अंग के अस्त्र आदि से कट जाने पर रक्तस्राव होने में इसके पत्र स्वरस का आभ्यन्तर एवं बाह्य प्रयोग उपयोगी होता है। (ब० द०) प्रतिनिधि—पाठा।

अयापनाह–हिं० (Eupatoium Repandum) इं० हैं० गा०।

अयापनी–ता०, ते० अरखर–पं०। रक्षेल–उ० प० सू०। (Ayapana) मेमो०।

अयापनीन–इं० सत्व अयापना। देखो—अयापना।

अयापान–हिं० संज्ञा पु०
अयापानी–ता०
} अयापना–हिं०।

(Eupatorium ayapana)

अयामोनून–यू० अफीम। (Opium)

अयायाअ–अ० अपाहिज, पंगु, व्यर्थ, बेकाम, निर्बल असमर्थ, शक्तिहीन, जो किसी काम के योग्य न हो।

अयार–हिं० पीरिस ओवेलिफोलिया (Pieris Ovalifolia, D. *Don.*), ऐण्ड्रोमेडा ओवेलिफोलिया (Andromeda Ovalifolia, *Wall.*)–ले०। अयत्ला एहलन, एल्लल, अरुर, अर्वान, पं०। अङ्गिर, अंगिअर, जगछाल–नैपा०। पिआजय-भूटि०। कगशिओर–लेप०।

उत्पत्ति-स्थान–शीतोष्ण हिमालय, काश्मीर से भूटान पर्यन्त तथा खसिया पर्वत।

प्रयोगांश—पत्र, कलिका।

उपयोग—सूचमपत्र एवं कलिकाएँ बकरों के लिए विष है। कीड़ों के मारने के लिये इनका उपयोग होता हैं। इनका शीत कषाय त्वग्रोगों में उपयोग किया जाता है। (गैम्बल)

अयारानुतानो–यू० एक अप्रसिद्ध बूटी है। लु०क०।

अयारुफ़स–यू० जर्द सोसन। (Jris)

अयाल–हिं० पु०, स्त्री० [तु० याल] घोड़े और सिंह आदि के गर्दन के बाल। केशर। [अ०] लड़के बाले। बालबच्चे।

अयाल्हम्–स० क्ली० कांस्य धातु, काँसा। (Bronze); वै० निघ०।

अयारिज–अ० इसका शाब्दिक अर्थ ईश्वरीय औषध (दवाए-इलाही) है, किन्तु तिब्ब की परिभाषा में रेचक औषध को कहते हैं और इसकी क्रिया शक्ति (प्रभाव) के कारण इसे परमेश्वर (अल्लाह) से सम्बन्धित करते हैं। किसी किसी के मतानुसार प्रत्येक वह औषध, जो अपने ईश्वरदत्त प्रभाव के कारण रेचन लाती है, उसे ईश्वरीय औषध कहते है। किसी किसी ग्रंथ में इयारज का अर्थ रेचक (वा दर्पघ्न) किया गया है, क्योंकि इस योग में रेचक औषधें दर्पघ्न औषधों के साथ हैं। किसी किसी ने इसका अर्थ इसकी शिष्टता के कारण श्रेष्ठ औषध (दवाए शरीफ) किया है। यह प्राचीन चिकित्सकों द्वारा योजित किया हुआ प्रथम रेचन है। तदनन्तर इसके अवयवों में समय समय पर परिवर्तन होता रहा है।

नोट—इसका उच्चारण अयारिज या इयारज दोनों होता है।

अयारिज फ़ैकरा—अ० तल्ख़ अर्थात् कड़ुआ अयारिज यह एक तिक्त मिश्रित रेचक औषध है। म० ज०। किसी किसी ने इसका अर्थ तिक्तता को लाभ प्रद किया है। जब इसमें शह्महञ्जल (इंद्रायन का गूदा) सम्मिलित किया जाता है, तब इसको मुशह्हम कहते हैं। यह शिरःशूल के प्रायः भेदों के लिये लाभदायक है एवं आमाशय को सांद्र दोषों (अख्लात गलीजुह) से शुद्ध करता है। मेरे आचार्य प्रायः इसे इत्रीफल सगीर या इत्रीफल कश्नीज या गुलकंद में मिलाकर उपयोग में लाते थे। योग निम्न है—

वालछड़, दालचीनी, ऊदवलसाँ, हब्बवलसाँ, तज, मस्तगी, तगर केशर, प्रत्येक १-१ भाग तथा एलुआ २ भाग सबको कूट छान कर तैयार करें। मात्रा—७ मा० शहद तथा उष्ण जल के साथ।

नोट—कोई कोई चिकित्सक एलुआ को शेष औषधों के समान भाग लेकर अयारिज फैक्रा प्रस्तुत करते हैं। (इ० अ०)

अयारिज लूगाजिया—अ० लूगाजिया एक हकीम का नाम है। यह अयारिज शिरःशूल, आधाशीशी (अर्द्धावभेदक) बैजह, खुजह, कर्णशूल, सिर चकराना, (शिरोघूर्णन) बधिरता, अर्द्धांग (फालिज), कम्पनवायु, लकवा, झाई, श्वित्र तथा कुष्ठ और अन्य सर्दभाद्दी (श्लेष्मज) रोगों के लिये लाभप्रद है। योग यह है—

इंद्रायन का गूदा १७॥ मा०, प्याज अन्सल भूना हुआ (मुशब्मी) गारीकून, सक्मूनिया, कुटकाश्याम, उश्शक, इस्कूरदयून प्रत्येक, १ तो० ३॥ मा० अफ्तीमून, कमाज़रयूस, एलुआ, गूगल प्रत्येक १०॥ मा०, हाशाह्फारीकून, अनीसूँ, तेजपात, फरासियून, जुअदह्, (नागरमोथा) तज, सफेद्मिर्च, मुर्मुकी, जावशीर, जुन्दवेदस्तर, वालछड़, फित्रासालियून, जरावन्द तवील, फर्फ्यून, हमामा, सोंठ, उसारहे अफसन्तीन प्रत्येक ७ मा०, जिन्तियाना, उस्तोखुद्दूस प्रत्येक ५ मा०, इन्हें कूट छान कर यथोचित श्वेत शहद में गूँधें।

मात्रा—१४ मा०, शहद तथा उष्ण जल के साथ। इतको प्रस्तुत करने के ६ मास पश्चात् उपयोग में लाना चाहिये। (इ० अ०)

अयारिज हूफ़क़्रातीस—अ० "हूफ़क़्रातीस" अवक़रात का नाम है। यह अयारिज शिरःशूल जो अशुद्ध वाष्पों (पाचन विकार सम्बन्धी दोष) से हो, उसे नष्ट करता है तथा आमाशयिक रतूबतों को दूर करता है। योग इस प्रकार है—

जिन्तियाना, वालछड़, इन्द्रायन का गूदा, जरावन्द मदहर्ज, दारचीनी, तज प्रत्येक ३॥ मा० फितरासालियून, कमाजरियूस, उस्तोखुद्दूस, पीपलामूल मस्तगी, प्रत्येक ५ मा० एलुआ ५ तो० ३॥ मा० कूट छान कर तिगुने शहद में जिसके झाग उतारे गये हों प्रस्तुत करें।

मात्रा व सेवन विधि—६ मा० से १३॥ मा० तक उष्ण जल या किसी यथोचित क्वाथ के साथ सेवन करें। (इ० अ०)

अयास्य-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) प्राणवायु। (२) शत्रु। विरोधी।—वि० [सं०] निश्चल अटल।

अयिम्परात्त—मल० जपा पुष्प, अढउल-हिं०। Shoeflower (Hibiscus rosasinensis, *Linn*) स० फा० इं०।

अयु—बर० अस्थि, हड्डी। Bones (Ossa) स० फा० इं०।

अयुक्छद:—सं० पु०
अयुक्छद—हिं० संज्ञा पु० } (१) सप्तपर्ण वृक्ष, छातिम वृक्ष, छतिवन, सतवन। (Alstonia scholaris *R. Br.*) हे० च०। (२) वह वृक्ष जिसकी अयुग्म पत्तियाँ हों जैसे बेल, अरहर इत्यादि।

अयुक्त—हिं० वि०
अयुत—[सं०] } (१) अमिश्रित, अमिलित, असयुक्त, अलग। (२) अयोग्य असम्मिलन, संयोग विरुद्ध। इन्कम्पैठिब्ल (Incompatible),

अयुग—हिं० वि० [सं०] विषम। ताक्।

अयुत-हिं० संज्ञा पु० दस हजार की संख्या का स्थान दस सहस्र। टेन थाउज़ण्ड (Ten thousand)-इं०। (२) उस स्थान की संख्या।

अयुग्म-हिं० वि० [सं०] (१) विषम, ताक्। (२) अकेला। एकाकी।

अयुग्मकः-सं० पु० सप्तपर्ण वृक्ष, छातिम छतिवन। (Alstonia scholaris. *R. B.*) वै० निघ०।

अयुग्मच्छदः-सं० पु० (Alstoniascholaris *R Br.*) देखो—अयुग्मच्छद।

अयुग्मच्छद-हिं० संज्ञा पु० सप्तपर्ण, छातिम छतिवन, (Alstonia Scholaris, *R. Br.*) अ० टी० (२) यह वृक्ष जिसकी अयुग्म पत्तियां हों. जैसे वेल, अरहर इत्यादि।

अयुग्मपत्र-सं० पु०
अयुग्मपर्णः ,,
} सप्तपर्ण, छातिम, छतिवन (Alstonia Schola ris, *R. Br.*) वै० निघ०।

अयुग्मबाण-हिं० संज्ञा पु० [सं०] कामदेव। (Cupid).

अयुग्मवाह-हिं० संज्ञा पु० [सं०] सूर्य्य। (Sun)

अयू-तु० रीछ, भल्लूक। बीअर (Bear) इं०।

अयूक-तु० काकम जो एक मूल्यवान खाल है।

अयूवा-सं० भूताङ्कुश। See-Bhutankus

अयुष-हिं० संज्ञा स्त्री० देखो--आयुस।

अयूमीसुए-बर० अस्थि अङ्गार, हड्डी का कोयला Animal-charcoal (Carbo Animalis) स० फा० इं०।

अयूप-यु०, रू० ज़ङ्गार। यह खनिज तथा कृत्रिम दोनों तरहका होता है।

अये-बर० (ए० व०) सुरा, मद्य, दारू, शराब Spirit, Arrack (Indian Spiritous Liquor) स० फा० इं०।

-हिं० संज्ञा पु० [अनु०] स्लोथ की जाति का एक जन्तु। यह जन्तु अये अये शब्द करता है इसलिये इसको अये कहते हैं।

अयेमियाआ-बर० (ब० व०) मद्य, सुरा, (Spirit) स० फा० इं०।

अयोए-बर० (ए० व०) पत्रम् सं० पत्र, पर्ण, पत्ता पत्ती, पात,-हिं० (Leaf) स० फा० इं०।

अयोए मियाआ-बर० (ब० व०) पत्तियां पत्र, पर्ण, (Leaves) स० फा० इं०।

अयोगः-स० पु०
अयोग-हिं० संज्ञा पु०
} (१) योग का अभाव विश्लेष विच्छेद अनैक्य। (Analysis) (२) कठिनोद्यम ३) कूट (Kuta) मे० नत्रिकं।

अयागुड़ः-सं० पु० लौह गुड़िका लोहे की गोली (Ball of iron) यथा—दत्तमासी. विषविषं कथितं ताम्रमेव वा। पीत-मत्यग्नि सन्तप्ती भक्षितो वाप्ययोगुड़॥" च०।

अयोग्य-हिं० वि० [सं०] जो योग्य न हो अयुक्त अनुपयुक्त (Incompatidle, Incompetent)

अयोग्रम्-सं० क्ली० (१) मूषल (२) बाण आदि (An Arrow) (३) अस्त्र (A weapon)

अयाघनः-सं० पु० (१) एकीभूत-लौहपुञ्ज, लौहकूटम्. हतोड़ी (२) निहाई।

अयोच्छिष्टम्-सं० क्ली० लौहकिट्ट, मण्डूर (Ferriperoxide) वै० निघ०।

अयोनि-हिं० वि० [सं०] अनुत्पन्न अजन्मा।

अयोनिज-हिं० वि० [सं०] जो योनि से उत्पन्न न हो जीव विशेष यानि जातिभिन्न, वृक्ष आदि (२) अदेह।

अयोभस्म योगः-सं० पु० लोह भस्म के नागरमोथे का चूर्ण मिलाकर खैर के क्वाथ के साथ पीने से हलीमक दूर होता है नि० र०।

अयोमलम्-सं० क्ली० लोह मल लौह किट्ट मण्डूर (Ferri Peroxide) लोहारगु वा मण्डूर -ब०, प० मु० अयोमलन्तु सन्तप्तं सि० यो० पाण्डु--चि० वृन्द च० द० पाण्डु--चि०।

अयोमोदकः-सं० पु० लोह भस्म, तिल, त्रिकुटा समान भाग लेकर तथा सर्व तुल्य सोनामाखी

भस्म मिलाकर शहद के साथ लड्डू बनाकर खाने से असाध्य पाण्डु का नाश होता है। नि० र० वै० चि०।

अयोरजः-सं० क्ली० लोहकिट्ट मण्डूर (Ferri-Peroxide) (२) लोह चूर्ण (Iron P-woder) च० द० पाण्डु-चि० नवायस चूर्ण।

अयोरजः प्रभृति चूर्णम्-सं० क्ली० सोंठ, मिर्च, पीपल, विडंग इनके चूर्ण के साथ अथवा हल्दी त्रिफला चूर्ण के साथ समभाग लोह भस्म मिला कर मधु के साथ खाएँ रस० यो० सा०।

अयोरजादि चूर्णः-सं० पु० लोह चूर्ण त्रिकुटा विडंग, हल्दी, त्रिफला अथवा निसोथ और मिश्री वा इन्द्रायण की गूदी गुड़ और सोंठ मिलाकर खाने से कामला दूर होता है।

अयोरजादियोगः-सं० पु० लोह चूर्ण, हड़, हल्दी इनका चूर्ण शहद और घी के साथ अथवा हड़ का चूर्ण गुड़ और शहद के साथ चाटने से कामला दूर होता है। वृ० नि० रा०।

अयोरजादि लेपः-सं० पु० (१) लोह चूर्ण कसीस त्रिफला, लवंग और दारु हल्दी का लेप करने से नवीन त्वचा का रंग पूर्ववत् हो जाता है। (२) लोह चूर्ण काला तिल सुर्मा वकुची, आमला इनको जलाकर भांगरे रस में पीसकर लेप करने से किलास कुष्ट (तांबे के समान रंग वाले कोढ़ श्वेत कुष्ट का भेद) का नास होता है इसे जिस स्थान पर लगाना हो पहले खुजलाकर लेप करना चाहिये।

अयः पान-सं० क्ली० द्रवीभूत तप्त लोहे का पान अयस्पान नर्कमें तप्त लोहे का पान करने को कहा है।

अयः पिण्ड-हिं० पु० लौह पिंड, लौहे का गोला।

अयः शूल-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) अस्त्र (२) तीव्र उपताप।

अयोवस्तिः-सं० पु० स्त्री० वस्तिकर्म विशेष (A-kind of enemate) यथा—"एरण्डमूलं निःक्वाथ्य मधुतैलं ससैन्धवम्। एष युक्त अयोवस्तिः सवचापिप्पली फलः॥" भा०।

अय्म-ता० देखो—अयम्।

अय्याम् अव्वल-अ० रोगारम्भ काल अर्थात् आरम्भ रोग से तीन दिवस।

अय्याम् इञ्जार-अ० बुह्रान की सूचना देने वाले दिन इन दिनों में विशेष प्रकार के परिवर्तन पाये जाते हैं जिनसे यह सूचित होता है। कि उक्त रोग का अमुक दिवस बुह्रान होने वाला है, यथा—नवीन रोगों में प्रथम दिवस परिपक्वता (नुज़ुज़) के प्रभाव का प्रगट होना चतुर्थ दिवस बुह्रान उपस्थित होने की सूचना देता है।

अय्याम् ग़ैर बाहूरिय्यह्-अ० वह दिवस जिसमें बुह्रान उपस्थित नहीं होता वे निम्न तेरह दिवस हैं—२२ वाँ, २३ वाँ, २५ वाँ, २६ वाँ, २८ वाँ, २९ वाँ, ३० वाँ, ३२ वाँ, ३३ वाँ, ३५ वाँ ३६ वाँ ३८ वाँ तथा ३९ वाँ। किन्तु शेख़ ने निम्नलिखित रोगों का अय्याम् ग़ैर बाहूरिय्यह माना है—पहिला दूसरा, दसवाँ, बारहवाँ, पन्द्रहवाँ, सोलहवाँ, तथा, बीसवाँ,।

अय्याम् बाहूरिय्यह्—

अय्याम् बुह्रान-अ० वह दिवस जिनमें बुह्रान ताम उपस्थित हो वे निम्नांकित ११ दिवस हैं। इनमें नवीन रोगों का बुह्रान उपस्थित होता है—

चौथा, सातवाँ, चौदहवाँ, बीसवाँ, इक्कीसवाँ, चौबीसवाँ, सत्ताईसवाँ, इक्तीसवाँ चौंतीसवाँ, सैंतीसवाँ तथा चालीसवाँ। किसी किसी ने प्रथम व द्वतीय दिवस की भी अय्याम् बुह्रान में गणना की है। पुरातन रोगों का सर्व प्रथम बुह्रान चालीसवें दिन उपस्थित होता है।

अय्याम् वाक़अ् फ़िल्वस्त-अ० मध्यकाल जो न बाहूरी (बुह्रान काल) और न इञ्जारी (बुह्रान सूचक दिवस) किन्तु किसी घटन या प्रतिद्वन्दिता के कारण इनमें बुह्रान ग़ैर ताम उपस्थित हो। वे छः दिन हैं, यथा—३ रा, ५ वाँ, ९ वाँ, ११ वाँ, १३वाँ, और १७ वाँ, इन दिनों में कभी बुह्रान उपस्थित होता है, और कभी नहीं, जिन दिनों में बुह्रान नाक़िस

(अपूर्ण) होता तथा दुःख व चिन्ता होती है वे निम्न ८ दिवस हैं, यथा—६ वाँ ८ वाँ, १०वाँ १२ वाँ, १५ वाँ, १६ वाँ, १८वाँ, और,१६ वाँ

अर्थिम्–अ० विधवा या राँड़ स्त्री अथवा रंडुआ पुरुष अविवाहिता स्त्री वा पुरुष इसका बहुवचन अयामा हैं। नन् (Nun)-इं०।

अर्थी–अ० रुक रुक कर बात करना, बात चीत में रुकावट होना आज़िज़ हो जाना किसी वस्तु को न जानते हुये उसकी बातचीत से अवाक् रहना अर्थी तथा स्मिहत का भेद देखो–सिहित में।

अर्रंग–हिं० संज्ञा पु० [सं०] अर्घ्य=पूजाद्रव्य] सुगंध, महक।

अरंड–हिं० संज्ञा पु० रेंड़ (Ricinus Communis) देखो—एरंड।

अर–हिं० संज्ञा पु० [स०] (१) कोण, कोना। (Corner, angle) (२) सेवाल, शैवाल (Sea–wead)

अरह–अ० खरगोश, खरहा, शशक। हेयर (A hare), रैबिट (Rabbit)–इं०।

अरअर–अ० (१) सरोकोही–फा०। हाऊबेर, हपु (हु)षा–हिं०। (Juniperi fructus) यह दो प्रकार का होता है—(क) वृहत् जिसका फल फ़िन्दक़ के समान होता है और (ख) लघु जिसका फल बाक़ला के बराबर गोल होता है। (२) खजूर (Date) (३) अभल।

अरइल–हिं० संज्ञा पु० [देश] एक वृक्ष का नाम।

अरई–हिं० स्त्री० आलुकी, घुइयाँ, अरुई। (The root of Arum colocasia)

अरऊन–हिं० पु० अहटणी, अहरन।

अरकः–सं० पु० क्लो०
अरक–हिं० संज्ञा पु०
(१) शैवाल, सेवार। (Sea wead) हारा०। वै० निघ०। (२) क्षेत्रपर्पट. खेतपापड़ा। (Oldenlandia corymbosa) रा०।

अरक–हिं० संज्ञा पु०
अरक़–अ०
(१) स्वेद, घर्म, पसीना, पर्स्पाइरेशन (Perspiration), स्वीट (Sweat)–इं०। (२) परिस्रुत जल, टपकाया हुआ पानी, भभके से खींचा हुआ औषधीय जल। किसी पदार्थ का रस जो भभके से खींचने से निकले। एक्वा (Aqua), वाटर (Water) देखो—अर्क। (३) रस।

अरककुद्रमी–सन्ता० लाल पटुआ, लाल अम्बाड़ी। (Hibiscus sabdariffa) इं० मे० प्रां०।

अरक़ जुज़्ई–
अरक़ मोज़ई–
अ० स्थानिक स्वेद, आंशिकघर्म वह स्वेद जो किसी विशेष अवयव में प्रादुर्भूत हो। मेरिड्रोसिस (Meridrosis)-इं०।

अरक़दम्बी–अ० रक्तमय स्वेद स्राव होना, पसीने में शोणित आना, रक्त मिश्रित स्वेद स्राव होना, स्वेद में रक्त मिला हुआ निकलना, हेमिड्रोसिस (Hemidrosis)-इं०।

अरकनाना–हिं० संज्ञा पु० [सं० अर्क नञ्+नञ्] एक अरक जो पुदीना और सिरका मिला कर खींचने से निकाला जाता है।

अरकब–अ० पर्वतीय अर्थात् पहाड़ी बकरा, गाय या बारहसिंगा।

अरक बादियान–हिं० संज्ञा पु० [अ०] सौंफ का अरक।

अरक बौली–अ० मूत्रीयघर्म, पेशाबमय स्वेद, वह स्वेद जिसमें मूत्रद्रव्य विसर्जित हो। ऐसे स्वेद में मूत्र की सी गंध आती है। यूरिड्रोसिस (Uridrosis)-इं०।

अरक मुतलव्वन–अ० वर्णयुक्त स्वेद, रंगीन पसीना, आना, क्रोमिड्रोसिस (Chromidrosis) -इं०।

अरक मुन्तिन–
अरक मन्तिन–
अ० दुर्गन्धित स्वेद, दुर्गन्धमय पसीना। ब्रोमिड्रोसिस (Bromidrosis) -इं०।

अरक मुफ़रित–अ० स्वेदाधिक्य, पसीने की अधिकता, अधिकता के साथ स्वेद स्राव होना। एफिड्रोसिस (Aphidrosis), हाइपरिड्रोसिस

(Hyperidrosis), स्युडोरेसिस (Sudoresis)-इं० ।

अरकला-हिं० संज्ञा पु० [सं० अर्गल = अगरी वा बेंड़ा] रोक, मर्यादा ।

अरक़लियान-यू० अरग़ाश जुब्दी ।

अरक़लेलो-अ० रात्रि स्वेदस्राव, रात में पसीना आना, जैसा कि राजयक्ष्मा में प्रायः होता है। नाइट स्वीट (Night sweat)-इं० ।

अरकाकिया-यू० मकड़ी का जाला । (The Spider's web)

अरक़ान-यू०
अरक़ेन- ,, } मेंहदी (Myrtus communis)

अरकान-बारहसिंगा । A stag (Cerous elaphus)

अरक़ुद्दम-अ० रक्तमय स्वेदस्राव, स्वेद के स्थान में रक्त निकलना. यह एक रोग है जिसमें स्वेद के स्थान में शुद्ध शोणित निकलता है। हेमेटीड्रासिस (Hematidrosis)-इं० ।

अरकुन-द० दखमिला, दसविला-उ० प० सू० ।

अरक़ेन-यू० मेंहदी । (Myrtus communis)

अरकूलस-यू० अमल, हाऊबेर, हपु (बु) पा । (Juniperi fructus)

अरक्टियम लप्पा-ले० । (Burdock)-इं० ।

अरक्टास्टेाफलास ग्लाँका-ले० । (Manzanita leaves)-इ० ।

अरक्टोस्टेफिलोस यूवा अर्साई-ले० मलूक द्राक्षा, ऋक्ष द्राक्षा सं० । इनबुद्दुब, आबिस-अ० ।

अरक्तः-सं० पु० लाक्षा, लाख, लाही । ला-बं० । (Lac) रा० नि० व० ६ । देखो—अलक्तः ।

अरक्तक्-अ० मांसज तथा उभरा हुआ पेड़ू ।

अरखर-पं० गडुम्बल; अकोरिया, भटियून । उ० प० सू० मेमो० ।

अरखर-पं० दखमिला, दसविला उ० प० सू० । मे० मो० ।

अरकोल-हिं० संज्ञा पु० [सं० कोलीरा] एक वृक्ष जो हिमालय पर्वत पर होता है। इसका पेड़ झेलम से आसाम तक २००० से ८००० फुट तक की ऊँचाई पर मिलता है ।

अरकासार-हिं० संज्ञा पु० [?] तालाब, बावली । -हिं० ।

अरग-हिं० संज्ञा पु० [सं० अगरू=एक चन्दन] अरगजा । पीले रंग का एक मिश्रित द्रव्य जो सुगन्धित होता है ।

अरगजा-हिं० संज्ञा पु० [हिं० अरग+जा] एक सुगन्धित द्रव्य जो शरीर में लगाया जाता है। यह केशर, चन्दन, कपूर आदि को मिलाने से बनता है । (A perfume of a yellowish colour and compounded of several scented ingredients)

अरगजी-हिं० संज्ञा पु० [हिं० अरगजा] एक रंग जो अरगजे का सा होता है ।

वि० [हिं० अरगजा] (१) अरगजी रंग का (२) अरगजा की सुगन्धि का ।

अरगट-हिं० संज्ञा पु० [इं०] देखो—अर्गट । (Ergota)

अरगावाँ-फा० अर्गवाँ-फ़ा० ।

अरगावानी-हिं० संज्ञा पु० [फ़ा०] रक्त वर्ण, लाल रंग ।

वि० (१) गहरे लाल रंग का, लाल, (२) बैंगनी ।

अरगल-हिं० संज्ञा पु० [सं० अर्गल] वह लकड़ी जो किवाड़ बन्द करने पर इस लिये आड़ी लगाई जाती है कि वह बाहर से खुले नहीं । ब्योंड़ा, गज ।

अरगामूनी-यू० वन पोस्ता, मामीसा सुर्ख (जंगली ख़समख़ास के सदृश एक बूटी है) ।

अरगू-फा० लाख, लाक्षा । Lac (Coccus lacca)

अरघट्ट
अरघट्टक } -हिं० संज्ञा पु० [सं०] रहट । देखो-"अरहट" arahata

अरग्वधः-सं० पु० अमलतास, आरग्वध, धन बहेड़ा (Cassia fistula) रा० नि० व० ६ । भा० पू० १ भा० द्रव्य गु० वै० निघ० ।

आरग्वधम्–सं० क्ली० अमलतास स्वर्णालुफल (Cassia fistula) लि० यो० बृहद् अग्निमुख चूर्ण।

आरघान–हिं० संज्ञा पु० [सं०] आघ्राण=सूँघना गंध। महक। आघ्राण।

आरङ्गः गा-गी–सं० पु० स्त्री० एरङ्गोमत्स्य' मछली भेद मछली विशेष (Fisces) वै० निघ०।

(२) मधु शिग्रुः, मीठा सहिंजन। रत्ना। (Guilandina Moringa, Sweatv. ar of.)

आरङ्ग–ते० बरार कुरकी भोण्डर गोण्डा, नार-बोटकु. (Eriolæna Hookeriana, *W & I*, Syn. Ereolœna Spectabilis *Planch*) इसके तन्तु एवं रुई व्यवहार में आती है। मेमो०।

आरङ्कः–सं० पु० दिनकलिंग, कटु-खजूर, काला खजूर–हिं०। मीलिया डयुबिया (Melia dubia, *Cav*) मी सुपर्बा (Melia Superba) मी रोबष्टा (Melia robusta)-ले० कडु खजुर–गुज० बं०, बम्बई निम्बर-मह कांड–वेबु, अर वेबु-कना०।

निम्ववर्ग

(*N. O. meliaceae*)

उत्पत्ति-स्थान—पूर्वी व पश्चिमी प्रायद्वीप ब्रह्मा तथा लंका।

वानस्पतिक-विवरण—दिनकलिंग वृक्ष के शुष्क फल को संस्कृत में अरङ्कक ख्याल किया जाता है आकार, रूप तथा वर्ण में यह बहुतकुछ खजूरके समान होताहै परन्तु स्थानपूर्वक परीक्षा करने पर मज्जा एक अत्यन्त कठिन अस्थि (गुठली) से भली भांति संश्लिष्ट पाई जाती है फल डण्डी का अवशिष्ट भाग भी खजूर की डण्डी से भिन्न दीख पड़ता है। जलमें भिगोने पर फल शीघ्र अपनी सिकुडन को छोड़कर अंडाकार पीताभहरित वर्ण के बेर के समान हो जाता है अब छिकला मोटा दीख पड़ता है तथा सफलतापूर्वक गूदा से भिन्न किया जा सकता है।

फलशीर्ष मुड़ा हुआ होता है और उस पर सूक्ष्म अंकुर होते हैं आधार पर पञ्च भाग युक्त पुष्पाभ्यन्तरकोष दलतथा फलडण्डीका एक छोटा भाग लगा होता है। गुठली १ इञ्च लम्बी, अप्रशस्त रूप से पञ्च परिखा-युक्त प्रलम्बित दोनों शिरों पर छिद्र युक्त होती है शीर्ष छिद्र श्रीं चारों ओर पञ्च दृष्टियुक्त, पञ्चकोषयुक्त (या पतन के कारण इससे न्यून) होता है. बीज अकेला; भालाकार शीर्ष से लगा रहता है, बीजावरण सूक्ष्म परिमाण में गर्भ सरल, विलोम, दीर्घ भालाकार, आदि मूल अंडाकार एवं ऊर्द्ध होता है बीज ¾ इञ्चलम्बा तथा ५/६इञ्च चौड़ा होता है बीज त्वक् (Testa) गम्भीर धूमर या श्याम वर्ण का परिमार्जित गिरी अत्यन्त तैलीय एवं मधुर स्वाद युक्तहोती है।

उपयोगांश—फल।

रासायनिक संगठन—(उपयोगी द्रव्य) फलस्थ तिक्त तत्व एक प्रकार के रवा में परिणतिशील ग्लूकोसाइड है जो ईथर मध्यसार तथा जल में विलेय होता है इसमें किञ्चित् अम्ल प्रतिक्रिया होती है, इसके अतिरिक्तइसमें सेव की तेजाब (Malic acid) ग्लूकोज, लुआब, तथा पेक्टीन नामक पदार्थ पाये जाते हैं।

डाइमॉक।

प्रभाव तथा उपयोग—फल मज्जा में एक प्रकार का तिक्त एवं मतलीजनक स्वाद होता है। अमजीवियों में उदरशूल की यह एक उत्तम औषध है। इस हेतु युवापुरुष की मात्रा अर्द्ध फल है इसमें किसी रेचक गुण की विद्यमानता मुश्किल से प्रतीत होती है तो भी कहा जाता है कि यह कृमिघ्न प्रभाव करता है तथा व्यथाको तत्काल शमन करता है कोंकनमें कच्चे फल का स्वरस १भाग गंधक १/३ भाग और दही १भाग इन तीनों को ताम्र पात्र में अग्नि पर गरम कर तर खुजली (Scabies) एवं (Maggots) द्वारा जनित क्षतों में लगाते हैं। डाइमॉक।

फल कटु सकोचक और और वायुनिस्सारक (आध्मानहर) है इ० मे० मे०।

अरङ्गरः-सं० पु० कृत्रिम विष (Artificial Poision) वै० निघ०।

अरङ्गुदी-सं० स्त्री० माधवीलता (See--madhavilata) वै० निघ०।

अरचर्रु-सिमला० पसुरी मकोला, हिं०, रसेलवा पजेरी सिमला०। भोजिन्सी नैपा०। (Coriaria nepalensis) मेमो०।

अरचि-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अर्चि०] ज्योति। दीप्ति। आभा। प्रकाश। तेज।

अरची-ता० काञ्चनार, कचनाल, अस्ता-हिं० (Bauhinia variegata.) मेमो०।

अरचु-गढ़वाल हिन्दी रेवतचीनी। मेमो०।

अरज़-अ० / मुज़ाअफ़ह्-

तिब की परिभाषा में उस अस्वाभाविक दशा या व्याधि का नाम है जो अन्य रोगों के कारण अर्थात् उसके आधीन होकर उत्पन्न होती है। उदाहरणतः वह शिरःशूल जो किसी ज्वर के आधीन होकर जनित होता है अरज़ (उपसर्ग उपद्रव) कहलाता है। कम्प्लिकेशन (Complicatien) सिम्प्टम् (Symptom)-इं०।

अलामत और अरज़का भेद—

इन दोनों में मुख्य और गौड़ का अन्तर है अर्थात् अरज़ अलामत की अपेक्षा मुख्य वा प्रधान है क्योंकि अलामत (लक्षण) स्वास्थ्य तथा रोग प्रत्येक दशा के लिये प्रयोग में आता है और फिर कभी यह स्वास्थ्य एवं रोग से पूर्व और कभी पश्चात् होता है, इसके विपरीत अरज (उपसर्ग) रोगाक्रमण के पश्चात् ही पाया जाता है और उसके आधीन होता है। अस्तु निम्नोष्ठ स्फुरण वमन होने की अलामत (रूप) कहा जाता है, किन्तु उसको अरज़नहीं कहा जा सकता। क्योंकि वह रोग (वमन) से पश्चात् नहीं प्रत्युत पूर्व में पाया जाता है।

अलामत और दलील का भेद देखो अलामत है।

डाक्टरी नोट—कम्प्लीकेशनका शाब्दिक अर्थ परस्पर सश्लिष्ट (लिपटना) या द्विगुण होना है। डक्टरी की परिभाषा में दो या अधिक व्याधियों का एक ही काल में उपस्थित हो जाना अर्थात् एक ही रोगके वेग पथ में अन्य रोग वा व्याधियों का उत्पन्न हो जाना है, जिनका स्थायित्व प्रथम रोग पर निर्भर होता है। दूसरे शब्दों में यह पूर्व व्याधि के आधीन होते हैं।

अर्वाचीन मिश्रदेशीय चिकित्सक उक्त शब्द की रचना तथा उसके मौलिक शब्दार्थ को दृष्टि में रखकर मुज़ाअफ़ह् संज्ञा को उसके पर्याय रूप से प्रयोग में लाते हैं। परन्तु तिब की परिभाषा में उसका वास्तविक प्राचीन सत्व भाव अरज शब्द से प्रगट हो जाता है, अस्तु, इसे यहां ग्रहण किया गया है।

सिम्प्टम्का शाब्दिक अर्थ परस्पर घटित होना है किन्तु डाक्टरी परिभाषा में उस परिवर्तन को कहते हैं, जो रोगकाल में उपस्थित होता है और जिससे उक्त व्याधि की उपस्थित का पता लगता है, अस्तु इस विचार से सिम्प्टम् अलामत (रूप वा लक्षण) का पर्याय है, परन्तु अर्वाचीन मिश्रदेशीय तबीब अलामत की बजाय अरज़को इसका पर्याय मानते हैं।

अरज-हिं० संज्ञा पु० चौड़ाह।

अरज-अ० पंगु या लुंगु लंगड़ा होना पंगुत्व, लंगड़ापन। लेमनेस (Lameness)-इं०

अरजल-हिं० संज्ञा पु० [अ०] (१) वह घोड़ा जिसके दोनों पिछले पैर और अगला दाहिना पैर सफ़ेद वा एक रंग के हों।

ऐसा घोड़ा ऐबी माना जाता है। (२) नीच जाति का पुरुष। (३) वर्ण शंकर।

वि० (अ०) नीच।

अरज़ा-अ० चर्ख़, आकाश; आस्मान। (Sky)

अरजान-बरब० बरबरी बादाम का वृक्ष।

अरजालून-अरब० फ़ाशरा, शिबलिंगी। (Bryonia laciniosa),

अरजा-सं० स्त्री० घृतकुमारी, घीकुआर। (Aloes Barbadensis)

अर्जुन–हिं० संज्ञा पु० [सं०] दे० अर्जुन। (Terminalia ArJuna),

अरटी–सं० स्त्री० अरटीपण्डू–ते० अरटीचेट्टु–तें० } केला, कदली –हिं०। अनटि-चेट्टु, अरिट चेटू–ते०। (Musa sientum *Linn*) स० फ़ा० इं०।

अरटुः–सं० पु० अरलुवृक्ष, सोनापाठा; श्यो (णा) नाक। श्योणा गाछ–बं० (Oroxylum, Indicum *Vent*) अ० टी०।

अरटुपर्णः–स० पु० यह चिरस्थायी वृक्ष है। अरटुपर्णनामक वृक्ष। अथर्व० सू० १३। १९। का० २०।

अरडी–नैपा० कचैरा–हिं०। अरलागल, किंगली। (Mamosa rubicaulis) मेमो०।

अरडुसी–गु० अडूसा, वासक। (Adhatoda vasica *Nees*),

अरणः–सं० पु० (१) चित्रक वृक्ष, चीता। (Plumbago zeylanica) वै० निघ०। (२) गंदा, मलिन। अथर्व० सू० २२। १२। का० ५।

अरण तन्दिग भूकस–त्रम्ब० भूतफल–मं०। बकरा यू० पी० वी०। मिरन्दुप-अव० मेमो०।

अरणमरण–मह० जख्महयात्, हेमसागर हिं०, बं०, (kalnchœ laciniata *D. C.*) फा० इं० १ भा०।

अरण मरम्–मल० तून। (Cedrela toona Roxb) इं० मे० मे०। स० फा० इं० मे० प्रां०।

अरणा–हिं० पु०, स्त्री० (१) जंगली भैंसा। (A wild buffalo)। (२) कण्डा, जंगली कण्डा, अरना। (Cowdung founddried in the forest),

अरणिः–सं० पु० अरणि–हिं० संज्ञा स्त्री० } (१) एक प्रकार का वृक्ष गनियार। अँगेथू। क्षुद्राग्निमंथ वृक्ष। छोटी अरणी का वृक्ष, कुण्डली, अरणी–हिं०, सं०। छोट गणिर–बं०। (Cleredendron Inerme) वा० ठी० १५ अ०, हेमा० वीरतर्वादि। अरणिर्वह्निमन्थेना द्वयोर्निर्मथ्यदारुणि। मे० णत्रिकं। (२) श्योणाक, सोनापाठा, अरलु (Oroxylum Indicum *Vent.*)। (३) चित्रक वृक्ष, चीता (Plumbago Zeylanica)। (४) सूर्य (The Sun) (५) अग्न्युत्पादककाष्ठयन्त्र। काठ का बना हुआ एक यन्त्र जो यज्ञों में आग निकालने के लिए काम आता है। इसके दो भाग होते हैं—अरणि व अधरारणि और उत्तरारणि। यह शमीगर्भ अश्वत्थसे बनाया जाता है। अधरारणी नीचे होती है और उसमें एक छेद होता है। इस छेद पर उत्तरारणी खड़ी करके रस्सी से मथानी के समान मथी जाती है। छेद के नीचे कुश वा कपास रख लेते हैं जिसमें आग लग जाती है। इसके मथने के समय वैदिक मंत्र पढ़ते हैं और ऋत्विक लोग ही इसके मथने आदि का काम करते हैं, यज्ञ में प्रायः अरणीसे निकली हुई आग ही काम में लाई जाती है। अग्निमंथ।

अरणिका–स० स्त्री० अग्निमंथ वृक्ष, अरणी। (Clerodendron Inerme) वा० सू० १५ अ० वेल्लन्तरादि व०। "वेल्लन्तारग्वधवृक्ष वृषास्य भेद……।"

अरणी–सं० स्त्री० हिं० संज्ञा स्त्री० (१) जंगली मादा भैंस, भैंस (A female wild buffalo)। (२) क्षुद्राग्निमन्थ। रा० नि० व० ६। (३) अरनी (णी) अगेथ (थु) गणि (नि) आरि, टेकार–हिं०।

संस्कृत पर्याय—गणिकारिका, अग्निमन्थः, श्रीपर्ण, कर्णिका, जया, तेजोमन्थः, हविर्मन्थ, ज्योतिष्कः, पावकः, अरणिः, वह्निमंथः, मथनः (२) जयः (भा०), गिरिकर्णिका (द्रव्याभि०) पावकारणिः (शब्द मा०) अग्निमथनः, तर्कारी वैजयन्तिका, वैजयन्ती, अरणीकेतुः, श्रीपर्णी, नादेयी, विजया, अनन्ता, नदीजः, हरिमन्थः।

अन्वर्थ–संज्ञा—"अनुत्वा" "गन्धपुष्पा" और "गन्धपत्रा" गणिरी, अ (आ)रण्यान्त, भूत-

भैरवी, गणियारी-बं०। प्रेम्ना इण्टेग्रिफोलिया (Premna integrifolia. *Linn*) प्रेम्ना स्पाइनोसा (Premna spinosa, Roxb) मुन्नय (ता), नेल्लोचेट्टु-ता०। घेबु-नेल्लि, पिन्न-नेल्लि, चिरिनेल्लु-चेट्टु, पिनुआ-नेल्लि, नेल्लिचेट्टु-ते०, तै०। अध्येज-मल०। तक्कले तग्गी, नरुवल, ऐरणा-कना० कर०। गयेन्दारी, गँयदारी:-कों०। ऐरण, नरवेल, टाकला, चामारी (थोर ऐरण=क्षुद्राग्निमंथ)-मह०। अरणी, मोटी अरणी, ऐरणमूल-गु०। अगयाबात-उडि०। गन्नियारी-अव०। बकर्च-ग०। अगिवथ-उत्०। गिनेरी-नैपा०। गन्नियरी-आसा०। सिंहिन्-मिदि, कणिका सिं०। अरणी, ऐरणमूल-वम्ब०। टॉगथैग़्-यी-बर०।

निर्गुण्डी वर्ग

(*N. O. Verbenceea*)

उत्पत्ति स्थान—यह भारतवर्ष के अनेक प्रांतों विशेषतः समुद्रतट पर होती है। उत्तरी भारत, तिब्बत, काशमीर, बम्बई से मलक्का पर्यन्त, सिलहठ और लंका।

नोट—क्षुद्र बृहद भेद से अग्निमंथ दो प्रकार का होता है। दोनों प्रकार के अग्निमंथ गुण में समान होते हैं।

क्षुद्राग्निमन्थ के पर्याय—

ह्रस्वगणिकारिका, तपनः, विजया, गणिकारिका अरिणः, लघुमन्थः, तेजोवृक्षः, तनुत्वचा, (रा० नि० व० ६)। छोट गणियारी-बं०। नरवेल, टाकली, नरयेलर-मह०। तल्ली-का०। प्रेम्ना सिरेटिफोलिया (Premna serratifolia *Linn.*) क्लेरोडेण्ड्रोन फ्लोमाइडिस Clerodendron phlomoides) ले०। देखो-क्षुद्राग्निमन्थ।

किसी किसीने संगकुप्पी (Clerodendron Inerme, *Gœrtn.*) को क्षुद्राग्निमन्थ अर्थात् छोटी अरणी लिखा हैं। देखो० संगकुप्पी-कूपी (कुण्डली-सं० वनजोई-बं०। इसमूधारी द०)।

वानस्पतिक वर्णन—इसके बृहत् क्षुप वा लघुवृक्ष होते हैं। वृक्ष १० १२ हस्तउच्च और बहुशाख-होते हैं। कांड लघु, बहुशाख, शाखाएँ, प्रायः भूमिलुण्ठित (भूमि के निकट से निकली) प्रसरित होती हैं जिनसे मूल उत्पन्न होते हैं। कांड त्वक् ऊपर से म्लानशुभ्र एवं सूचिक्य, भीतर से हस्तिदंतवत् अतिशुभ्र, लघु अल्पाघात से टूट जाने वाले होते हैं। पत्र सम्मुखवर्ती, वृन्तयुक्त, हृदयकार. पत्राग्र सूक्ष्म (अनीदृग् न्यूनकोणीय) पत्रप्रांत करपत्र-शस्त्राकार सतर (दाँतेदार), पत्रोदर मसृक्षण, चिक्कण, पत्रपृष्ठ शिरान्वित एवं चिक्कण, १-६ इंच लम्बा और १-३ इंच चौड़ा, पत्र में एक प्रकार की तीव्र गंध होती है, पत्रवृन्त पत्र की लम्बाई से चौथाई दीर्घ। पुष्प, सशाख, पुष्पदण्ड पर स्थित पुष्प-दंडकी प्रत्येक शाखा ३-४ पुष्प धारण करती है सविन्यासु, सांमान्तिक का कक्षीय, प्रारम्भिक विभाग सम्मुखवर्ती और द्विशाख, पुष्प अतिक्षुद्र, बहुसंख्यक, पीत वा हरिदाभशुभ्रवर्ण, मिलितदल, दल-अग्र प्रधानतः २ भाग युक्त जिनमें से एक भाग तीन अंशमें ईषत् खंडित व दीर्घ, अपरांश अखंड व ह्रस्व। पुंकेशर ४, जिनमें २ बृहत् तथा २ क्षुद्रक्षुद्र, श्वेताभ, पुष्पोपरि दीर्घ पुंकेशमें कृष्ण वर्ण के परागकोष स्पष्टतयादृष्टिगोचर होतेहैं

क्षुद्राग्निमन्थ का वृक्षक्षुद्रतर होता है इसलिये इसे गुल्म कहते हैं। गणियारी के कांड तथा शाखाओं में बृहत् दृढ़ और तीक्ष्णाग्र शाखाएँ परस्पर एक दूसरे के विपरीत दिक् विस्तृत भाव से स्थित होती हैं; वह (अरणी) ऐसी नहीं होती दोनों प्रकार के अग्निमन्थ में यही भेदक चिन्ह है।

रासायनिक संगठन—एक राल (Arosin) एक तिक्त क्षारीय सत्व अर्थात् क्षारोद (Alkaloid) और कषायिन (Tannin)

प्रयोगांश—पत्र, मूल. कांडत्वक्।

औषध-निर्माण—क्वाथ मात्रा-१ से १० तो०। यह दशमूल की दस औषधियों में से एक है अर्थात् इसकी जड़ दशमूल में पड़ती है।

संज्ञा-निर्णय तथा इतिहास—मन्थन वा घर्षण द्वारा जिससे अग्नि उत्पन्न हो उसको

अग्निमन्थ' वा वन्हिमन्थ, कहते हैं। अरणि का अर्थ अग्नि है और यहाँ इससे अभिप्राय अग्न्युत्पादक यंत्र है चूँकि यज्ञ के लिये पवित्राग्नि प्राप्त करने के लिये इसका काष्ठ काम में आता था इसलिये इसके वृक्ष को उक्त नामों से अभिहित किया गया गैम्बल (Gamble) के कथनानुसार सिक्किमकी पहाड़ी जातियां अग्नि प्राप्ति हेतु स्वभावतः अब भी इसके काष्ट को उपयोग करती है इसके दो भाग होते हैं—(१) निम्न भाग जिसका काष्ठकोमल होता है उसे संस्कृत में अधरारणी और (२) ऊर्ध्व भाग को जिसका काष्ठकठोर होता है और जिससे मन्थन क्रिया सम्पन्न होती है प्रमन्थ कहते हैं ये योनि और उपस्थ के संकेत माने जाते हैं।

अरणी के गुणधर्म तथा उपयोग

आयुर्वेदीय मतानुसार—तर्कारी (गणिकारिका) कटु उष्ण तिक्त तथा वातकफनाशक है और सूजन, श्लेष्मा, अग्निमांद्य, अर्श मल के विबन्ध तथा आध्मान को हरण करने वाली है दोनों अरणी वीर्य में और रसादि में तुल्य है इसलिये जहा जैसा प्रयोग हो उसी के अनुसार इनका उपयोग करना चाहिये यथा-अग्निन्थ द्वयंह्येव तुल्य वीर्य रसादिषु तत्प्रयोगानुसारेण योजयेत् स्वमनीषया॥" (रा० नि०)

तर्कारी कटुक (चरपरी), तिक्त तथा उष्ण है और वात, पांडु, शोथ, कफ, अग्निमांद्य, आम एवं विबन्ध (मलरोध) को नष्ट करने वाली है। (धन्वन्तरीय निघण्टु)

गुण—अग्निमन्थ, उष्णवीर्य तथा कफ वात को नष्ट करने वाला, कटुक (चरपरा), तिक्त, हल्का (कपैला), मधुर और अग्निवर्द्धक है।

प्रयोग—सूजन और पांडु रोग को दूर करता है, भा० पू० १ भा० गु० व०।

गणिकारी शोथहर और वात रोगों के लिये हितकारी है। राज०।

लघु अग्निमन्थ के गुण वृद्धाग्नि मन्थ के समान हैं। यथा—

लघ्वग्निमन्थस्य गुणाः प्रोक्ता वृद्धाग्निमन्थवत्।
विशेषाल्लेपने चोपनाहे शोफे च पूजितः॥

परन्तु लेपन, उपनाह और सूजन में इसका विशेष उपयोग होता है। (निघण्टु रत्नाकर)

यह विष आम और मेद रोग नाशक है।

अरणी के वैद्यकीय व्यवहार

चरक—अर्श में अग्निमन्थ पत्र अर्श जन्य वेदना से पीड़ित रोगी को तैलाभ्यंग कराके अरणी पत्र के कोष्ण क्वाथ से अवगाहन कराएँ। (चि० ९ अ०)

सुश्रुत—इक्षुमेह में गणिकारिका मूल वा काण्डत्वक्—(१) इक्षुमेही को अरणी मूल वा कांडत्वक् द्वारा प्रस्तुत क्वाथ पान कराएँ। 'इक्षुमेहिनं वैजयन्तीकषायम्।' (चि० ११ अ०)

(२) चक्षुकामित्व में गणिकारिका मूलत्वक् (देखो—असन)

हारीत—वातव्रण में गणिकारिका मूल—मातुलुङ्ग और अग्निमन्थ मूल को कांजी में पीस कर वातव्रण पर प्रलेप करना हितकारक है। (चि० ३५ अ०)

चक्रदत्त—वसामेह में गणिकारिका मूलत्वक् (१) वसामेह में अग्निमन्थ की जड़ की छाल का क्वाथ प्रयोग में लाएँ। (प्रमेह-चि०) (२) शीतपित्त में गणिकारिका मूल—अग्निमन्थ की जड़ की छाल को पीसकर (कल्क) गोघृत के साथ एक सप्ताह पर्यन्त पीने से शीत पित्त, उदर्द और कोठ का नाश होता है। (शीतपित्तोदर्द-चि०) (३) स्थूलता में गणिकारिका मूलत्वक्—अग्निमन्थ की जड़ की छाल द्वारा निर्मित क्वाथ में शिलाजीत का प्रक्षेप देकर पान करने से स्थूलता नष्ट होती है। (स्थौल्य-चि०)

वक्तव्य

चरक, अनुवासनोपग, शोथहर एवं शीतप्रशमन वर्ग में तथा सुश्रुत वरुणादि व वीरतर्वादिगण में गणिकारिका का पाठ आया है। किसी किसी देश में वातरोगी को गणिकारिका के पत्र का शाक व्यवहार कराया जाता है।

नव्यमत

प्रभाव—अरणी पाचक, आध्मानहर, परिवर्तक (रसायन) और वल्य है।

प्रयोग—इसके पत्र का फान्ट (१० में १) विस्फोटकादि कृत ज्वर, शूल, उदराध्मान में १ से २ आउंस की मात्रा में व्यवहृत होता है और मूलत्वक् क्वाथ (१० में १) ज्वरावसानज दुर्बलावस्था, पूयमेह, आमवात तथा वातवेदना (Neuralgir) रोग में सेवनीय है। (मेटिरिया मेडिका आफ इण्डिका—आर० एन० खोरी, भा० २, पृ० ४७२)

एन्स्ली—(Ainslie) लिखते हैं—गणिकारिका मूलत्वक् क्वाथ हृद्य पाचक एवं ज्वर में लाभदायक है। इसकी जड़ तिक्त एवं प्रियगन्धि है तथा क्वाथ रूप में प्रयुक्त होती है।

र्होडी—(Rheede) इसको अप्पेल नाम से अभिहित करते हैं और इसके पत्र के क्वाथ को उदराध्मान में सेवनीय बतलाते हैं। लंका में यह महामिंदि या मिंदि-गस्स नाम से प्रसिद्ध है।

ऐट्किन्सन (Atkinson) लिखते हैं—शैत्यप्रभव रोग एवं ज्वर में गणिकारिका पत्र को काली मरिच के साथ पीसकर व्यवहार करते हैं शाखा-पत्र सहित अर्थात् गणिकारिका के पञ्चांग को कूटकर क्वाथ प्रस्तुत करें। आमवात तथा वातवेदना (Neuralgia) ग्रस्त रोगी के अंग को उक्त क्वाथ से सेचन करें (डिमक; ३य खंड ६७ पृ०)

आर एन चोप्रा महोदय के अनुसार यह एक साधारण क्षुप है जो भारतवर्ष के बहुत से भाग विशेष कर समुद्रतटों में पाया जाता है प्राचीन चिकित्सकों ने इसके पत्र एवं मूल में प्रभावात्मक औषधीय गुण के वर्तमान होने का उल्लेख किया है इसकी जड़ का क्वाथ (लगभग ४ आउंस १ पाइंट जल में १५ मिनट उबाल कर) २ से ४ आउंस की मात्रा में पाचक एवं तिक्तवल्य रूप से दिन में २ बार प्रयोग किया जाता है इसी हेतु पत्र भी व्यवहार में आता है। (इं० ड्रू० इ० पृ० २९२)

अरणीकेतुः-सं० पु० महाग्निमन्थ वृक्ष बड़ी अरणी, बड़ गणिरि-वं०। थोर ऐरण मह० (Premna longifolia) रा० नि० व० ९।

अरण्ड-हिं० पु० (१) रेंडी का पेड़, अंडीवृक्ष, एरण्ड (Ricinus vulgarisor Palma christi) (२) सं० हिं० सिंध उलटा कण्टा-कुमा० (Cadaba barrida) इ० मे० प्लां०।

अरण्डककड़ी- हिं० स्त्री०
अरण्ड खबूजा- हिं० पु०
अरण्ड पपय्या- हिं० पु०

पपीता विलायची रेंड पपय्या-हिं० अण्डखरबूजा (Carica papapa) म० अ० डा०। म० अ० मु० अ०।

अरण्ड तैल
अरण्डी का तैल
-हिं० पु०

एरण्डतैल, रेंडी का तैल Castor oil (Oleum Ricini)।

अरण्डबीज-सं० हिं० पु० अण्डी का बीज। रेंडी। (Castor oil seed) देखो—एरण्ड।

अरण्डी-हिं० स्त्री० रेंड, अण्डी। (The fruit of Palma christa) देखो एरण्ड।

अरण्डी का पेड़-हिं० पु० एरंड वृक्ष, रेंड, अण्डी का पेड़। (Castor oil palnt) (Rnc iius communis *Linn*) स० फा० इं०। देखो-एरण्ड।

अरण्डी के बीज-हिं० पु० अण्डी के बीज, रेंड के बीज, रेंडी। Ricinus com munis, *Liun*) (Seeds of-Castto oil seeds)। स० फा० ई०।

अरण्डोली-जय० एरण्ड बीज, रेंडी, अण्डी के बीज (Castor-oil seeds) देखो-एरण्ड।

अरण्डः-सं० पु०
अरण्ड-हिं० संज्ञा पु०
(१) कट्फल वृक्ष, कायफल। कट्फलेर गाछ-वं०। (Myrica sapida) श० च०। (२) शाल भेद, साल (Shorea robusta) वै० निघ०।

अरण्यम्-सं० क्ली० अरण्य-हिं० संज्ञा पु० } (१) अटवी-सं० । वन, जंगल, विपिन, कानन-हिं० । राण-मह० । अटवि-कं० । बर्र, सह्‌रा-अ० । दश्त-फा० । जंगल-हिं०, द० । काट्टु-ता० । अडवि-ते० । काट्ट-मल० । काडु, अडवि-कना० । बन, बनेर, जंगलेर; जंगली-बं० । जंगली-गु० । वल-सिं० । तो-बर० । फॉरेस्ट (A forest), विल्डरनेस (Wilderness), वाइल्ड (Wild) -इं० ।

उद्यान, महावन, उपवन और प्रमदवन भेद से वन चार प्रकार का होता है । इनमें से रागी लोगों के क्रीड़ा स्थल को उद्यान (फुलवारी), भीतरी राजमहल के सामने के बाग को प्रमदवन और नगर से बाहर स्थित बाग को उपवन कहते हैं । रा० नि० व० २ ।

सं० पु० (२) कट्‌फल वृक्ष, कायफल । (Myrica sapida)

अरण्यकः-सं० पु० महानिम्ब, बकाइन । महानिम्ब-बं० । बकान निम्ब-मह० । (Ailantus excelsa, *Roxb*) वै० निघ० ।

अरण्यकणा-सं० स्त्री० (१) कटुजीरक, जीरक, जीरा विशेष । Cumin Seed (Cuminum Cyminum) वै० निघ० । (२) वनपिप्पली । (Wildpiper)

अरण्य कदली-सं० स्त्री० गिरिकदली, वनकदली, जंगली केला-हिं० । बोचेकला, बुनो कला, दयाकला-बं० । राणकेला-मह० । Musa Sapientum, *Linn*) (Wild var. of) रा० नि० व० ११ ।

गुण—शीतल, मधुर, बलकारक, वीर्यवर्द्धक रुचिकारक, दुर्जर और भारी तथा दाह, शोष, पित्त नाशक है । इसका फल कषैला, मधुर तथा भारी है । वै० निघ० ।

अरण्य कर्कटी-सं० स्त्री० वनजात कर्कटी, जंगली ककड़ी । बुनो काँकुड़ -बं० । राणतवसे-मह० ।

गुण—जंगली ककड़ी, उष्ण, तिक्त, रसयुक्त, पाक में कटु और भेदक है तथा कफ, कृमी, पित्त, कण्डु और ज्वर का नाश करने वाली है । वै० निघ० ।

अरण्य कर्पासः-सं० पु० पीवरी । Devil's cotton (Abroma Aug usta) देखो-ओलट् कम्बल ।

अरण्य कदल-सं० पु० चाकसू । (Cassia absus) ।

अरण्यकाकः-सं० पु० वनकाक, वनकौआ । (Awild crow) दाँड़ काक-बं० । राण कावला-मह० । द्रव्य० गु० वै० निघ० ।

-अरण्य कार्पासी-सं० स्त्री० (१) वन कार्पास, जंगली कपास । वन कपासी -बं० । राण कापासी-मह० । पत्ति-ते० । (The wild Cotton) गुण—व्रणनाशक, शस्त्र-क्षतघ्न और रूक्ष है । रा० नि० व० ११ । (२) ओलट् कम्बल, पीबरी । (Abroma Augusta)

अरण्यकासनी-हिं० स्त्री० दुधल, बरन, कानफूल, रदम, शमुकेह, दुध वथल-पं०, हिं० । पथरी-द० बुथुर-सिंध० । टैरेक्जेकम् ऑफिसिनेली (Taraxacum Officinale *Wigg*) टै० डेण्डेलिओनिस (T. Dendelionis) ले० डेण्डेलिओन (Dendelion) इं० । पिस्सेन लिट (Pissen lit) फ्रां० ; उद्रचेकन-कों० ।

मिश्र वा तुलसी वर्ग

(*N. O. Compositae*)

उत्पत्तिस्थान—सर्वत्र हिमालय (शीतोष्ण—इं० मे० मे०) तथा नीलगिरी पर्वतों, उत्तरी पश्चिमी सूबों में यह बोई जाती है, तिब्बत में साधारण रूप से होती है, युरुप (इङ्गलैण्ड) तथा उत्तरी अमरीका ।

नोट—डॉ डाइमॉक महोदय के कथनानुसार सहारनपुर के सरकारी वनस्पत्योद्यान में प्रतिवर्ष इसको कृषि की जाती है ।

नाम विवरण—पुजश्कोनामा के सम्पादक नाजिमुल्‌हुतिब्बा महोदय के कथनानुसार टैरेक्सेकम युनानी भाषा का शब्द है, जो तारास्सु-

इसे जिसका साङ्केतिक अर्थ तलय्यिन (मृदुता जनक) है, व्युत्पन्न शब्द है, परन्तु डा० डाइमांक महोदय के कथनानुसार इस शब्द की वास्तविकता अनिश्चित है, कदाचित् यह तर्खश्कून (फारसी शब्द) का अपभ्रंश है।

उक्त वनस्पति के गंभीर दनदाने क्योंकि दुग्धदन्त के समान होते हैं, इस कारण आंग्ल भाषा में इसे डेण्डिलॉन (दुग्धदन्त) नाम से अभिहित करते है।

इतिहास—यद्यपि प्राचीन युनानी व रूमी चिकित्सकों ने कई भांति की कासनी का वर्णन किया है, तथापि ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने इस भांति की कासनी का वर्णन नही किया। इब्नसीना ने तखश्कून नाम से इसका वर्णन किया है तथा अन्य मुसलमान चिकित्सकों ने भी इसका वर्णन किया हैं। युरुप में सोलहवी शताब्दि मसीही में फ्रशिअस Fuchsius (१५४२) ने हेडिप्नाइस (Hedypnois) नाम से ट्रैगस Tragus (सन् १५५२ ई० में) ने हीरेशियम मेजस(Hieracium majus) मैथिओलस Matthiolus (१५८३) ने डेन्सलिओनिस (Densleonis) और जीनिअस Linnœus (१७६१) ने लिआण्टोडान टैरेक्सेकम् (Leontodon Taraxacum) इत्यादि नामों से (जिसको वह इब्नसीना के तखश्कून का पर्याय समझते थे) इसका वर्णन किया है। सतरहवीं शताब्दि के अन्त में यूरुपमें अरण्यकासनी (Dandelioa) का उपयोग बहुतायत के साथ होने लगा। भारतीय (आयुर्वेदिक) चिकित्सकों को उक्त ओषधि ज्ञात न थी।

नोट—मख्जनुल् अद्वियह् में हिन्दवाउब्बरों तथा मुहीतआजम में कासनीदश्ती नाम से उक्त ओषधि का वर्णन किया गया है।

प्रयोगांश—युनानी वा भारतीय चिकित्सक तो इसकी जड़, पत्र एवं नव्य पौधा सभी औषध कार्य में लाते हैं किंतु डांक्टरी में केवल इसकी जड़ औषध तुल्य व्यवहार में आती है और यह ब्रि० फा० में ऑफिशल है।

अरण्यकासनी मूल

पर्याय—टैरेक्सेसाई रैडिक्स (Taraxaci Radix)-ले०। टैरेक्सेकम् रूट (Taraxacum Root), डैण्डेलियन रूट (Dandelion Root) ह्वाइट वाइल्ड इण्डाइव (White wild endive) इं०। संघ दन्तीमूल-सं०। जंगली कासनी की जड़ हिं०, उ०। अस्लुलू दिन्द बाउब्बरीं-अ०। बीखतखश्कून, बीख कासनी दश्ती—फा०।

ऑफशल

(*Official*)

वानस्पतिक-विवरण—ताजी जड़ (बहुवर्षीय) ६ से १२ या १६ इञ्च लम्बी करीब २ वेलनाकार, आधा से १ इञ्च चौड़ी (व्यास) ऊर्ध्व भाग अनेक सूक्ष्म कुछ कुछ घने शिरकों से आच्छादित रहता है तथा निम्न भाग में कम शाखाएँ होती हैं। ताजी दशामें यह हलके पीत धूसर वर्णकी एवं गूदादार और शुष्क दशा गंभीर धूसर या श्याम धूसर वर्ण की, जिन पर लम्बाई की रुख अधिक झुर्रियां पड़ी रहती हैं। भीतर से यह श्वेत वर्ण की जिसका मध्य भाग जरदीमायल (पीताभ) होता है। यह गंधरहित एवं कटु स्वाद युक्त होती है। यह स्रोतपूर्ण तथा आर्द्र ऋतु में अधिक लचीली होती है, परन्तु शुष्क होने पर सूक्ष्म चड़चड़ाहट के साथ टूट जाती है। टूटने पर बीच की लकड़ी पीत वर्ण की, स्रोतपूर्ण जिसके चारों ओर गभीर श्याम वर्ण की कैम्बिथम रेखा तथा घनी श्वेत त्वचा होती है जिसके मध्य धूसरित वर्ण की दुग्धकी नालियों के वृत्त होते हैं। ये पतली दीवाल की (Parenchyma) से भिन्न किये गये होते हैं।

शीतकाल से पश्चात् एवं बन्सत ऋतु के आरम्भ में इसकी जड़ मधुर स्वाद युक्त रहती है वसन्त और ग्रीष्म के बीच दुग्ध रस गाढ़ा हो जाताहै तथा कटु रसबढ़ जाताहै इस कारण इसकी जड़ को पतझड़ (Autumn) के समय में एकत्रित करना चाहिये बसन्त ऋतु की जड़ में तिक्त मधुर सत्व निकलता है।

समानता—अकरकरा की जड़ (Pellitory root) इसके समान होती है किन्तु चबाने पर उसका स्वाद चरपरा होता है।

रासायनिक संगठन—दुग्ध रस में एक कटु विकृताकार (अस्फटिकीय)सत्व (१) टेरेक्सेसीन (Taraxacin) अर्थात् अरण्यकासनीन वा तर्खश्कूनीन, (२) एक स्फटिकवत् (कटु) सत्व टैरेक्सेसीरीन, (Taraxacerin) और (३) एन्पैरेगीन (खित्मी सत्व अस्फार्गीन) पोटाशियम कैल्शियम के लवण रालदार और सरेशदार पदार्थ होते हैं। इसकी जड़ में आइन्युलीन २५ प्रतिशत, पेक्टीन, शर्करा लीव्युलीन भस्म ५ से ७ प्रतिशत पाए जाते है प्रभाव—मूत्रल- वल्य निर्बल पित्तनिस्सारक और कोष्ठ मृदुकारी।

औषध निर्माण—ऑफिसल योग (Official Preparations—

(१) अरण्य कासनी सत्व एक्सट्रैक्टम टैरेक्सेसाई (Extractum Taraxaci) ले०। एक्सट्रैक्ट ऑफ टैरेक्जेकम (Extract of Tar axacum)-इं० । खुलासहे कासनी वर्री उसारहे तर्खश्कून ।

निर्माण क्रम—टैरेक्जेकम की ताजा जड़ को कुचलकर दबानेसे जोरस प्राप्त हो, उये स्थूल भाग के अन्तः क्षेपित हो जाने पर निथार लें। तदन्तर १० मिनट तक १ से ५१२० फारन हायट के उत्ताप पर रखकर छान कर द्रव को इतने ताप पर उड़ाएँ जिसमें वह गाढ़ा हो जाय।

मात्रा—५ से १५ ग्रेन (३ से १० डेकिग्राम)।

(२) अरण्यकासनी तरल सत्व—एक्सट्रैक्टम् टैरेक्सेसाई लिक्विडम(Extractum TaraxaciiLiquidum—ले०लिक्विड एक्सटैक्ट आंफ टैरेक्जेकम्(Liquid Extract of Taraxacum) इं०। खुलासहे कासनी वर्री सय्याल, उसारहे तर्खश्कून सय्याल—अ०, फा०।

निर्माण क्रम—टैरेक्जेकम् की शुष्क जड़ का २० नं०का चूर्ण २०आउंस मद्यसार (६० ०/० २ पाइन्ट परिस्रुत वारि आवश्यकतानुसार। टैरेक्जेकमको ४८ घन्टा पर्यन्त मद्यसार में भिगोएँ पुनः इसमें से १० फ्लुइड आउंस द्रव निचोड़ कर पृथक करलें अवशिष्ट स्थूल भाग को २ पांइट परिस्रुत जल में ४८ चन्टा तक भिगोएँ और दबाने से तरल प्राप्त हो उसे छानकर अग्नि पर यहां तक रक्खें कि उसका द्रव्यमान १० फ्लुइड आउंस बच रहे पुनः प्रति तरल द्वय को परस्पर मिला लें और आवश्यकतानुसार इतना परिस्रुत जल और योजित करें कि तरल सत्व का द्रव्यमान पूर्ण २० फ्लुइड आउंस हो जाए।

मात्रा—आधा से २फ्लुइड ड्राम=(१.८ से ७.१ घनशतांश मीटर)।

(३) अरण्य कासनी स्वरस—सक्कस टैरेक्सेसाई (Succus taraxaci)—ले० जूस आफ टैरेक्जेकम् (Juice of Taraxacum) इं० असीर कासनी वर्री, असीर तर्खश्कून—अ०, फ० ।

निर्माण क्रम—टैरेक्जेकम् की ताजी जड़ को कुचलकर दबाने से जो रस प्राप्त हो उसमें तिगुना मद्यसार मिलाएँ और सात दिवस पश्चात् फिल्टर करलें (पोतन करलें)।

मात्रा—१ से २ फ्लुइड ड्राम=(३.६ से ७.१ घन शतांश मीटर)।

प्रतिनिधि—अल्मिराव (Launœa pinnatifida' *Cass*) लैक्ट्युक हेनिएना, (Lactuca Heyneana *D. C.*) हिरनखुरी (Emili a sonchifolia' *D. C.*) और सॉङ्कस आलिरेसिअस(Sonchus Ole raceus' *Linn*) विस्तार के लिए उन उन नामों के अन्तर्गत अवलोकन करिये।

प्रभाव तथा उपयोग—टैरेक्सेसाई रैडिकस (अरण्यकासनी मूल) चिरकाल से वल्य, पित्त रेचक मूत्रल और कोष्ठ मृदुकारी रूप से प्रसिद्ध रहा है ताजे स्वरस का वल्य प्रभाव जो प्रयोग से

ठीक प्रथम प्रस्तुत किया गया हो अथवा जो जड़ को एकत्रित करने के ठीक पश्चात् अभी जबकि वह कटु हो निर्मित किया गया हो निश्चित रूप से उत्तम होता है वह बहुशः प्रभावकारी वल्य औषधों का लाभदायक अनुपान है। इसके सत्व प्रायोगिक रूप से प्रभाव हीन होते हैं और इसकी जड़ द्वारा निर्मित औषध व्यर्थ। ब्रि० फा० ह्विट्लॉ।

ताजी जड़का रस इसका शीतकषाय केलम्बा के समान आमाशयबलप्रद प्रभाव करता है तथा यह किसी प्रकार कोष्ठमृदुकारी भी है। परन्तु इसके वे प्रयोग जो अंग्रेजी औषध विक्रेताओं से उपलब्ध होते हैं, उनका प्रभावात्मक होना सन्देहपूर्ण विचार किया जाता है।

पहिले बहुधा पित्तरेचक वा मूत्रल रूप से इसे यकृद्रोगों जैसे– पांडु तथा जलोदर प्रभृति में अधिकतया व्यवहार में लाते थे। किन्तु, अब इसका उपयोग बहुत कम हो गया है।

अरण्यकुक्कुट–सं० पु० वन मुर्गा, कोमड़ा' वन मोर्गा हिं० वन-कुक्कुट सं० वन कुक्ड़ी बं०। राण कीवडे मह०। (Wild Cock or hen)

गुण–इसका मांस हृद्य लघु और कफ नाशक है। रा० नि० व० १७। बृंहण, स्निग्ध वृष्य वीर्य, गुरु, और वात नाशक है। मद० व० १२।

अरण्य कुलित्थिका–
अरण्य कुलित्था-त्थी– } सं० स्त्री० (१) वन कुलथी, कुञ्जत्था। वन कुर्ति कलाय बं० रा० नि० व० ५ (२) (A bluestone used as a collyrium) कुलत्थाञ्जन, कृत्रिम अञ्जन विशेष रा० नि० व० १३। कालाशुर्मा हिं०। देखो—कुलत्थाञ्जन।

अरण्य-कुसुम्भः-सं० पु० वन कुसुम, वन कुसुम्भ जुप–जंगली कट (वर्रे)। राण कड़ई, राण कुसुम्भ मह०। वन कुसुम व०। गुण–कटुपाकी कफनाशक, तथा दीपन। रा० नि० व० ४।

अरण्य-कोलिः–सं० स्त्री० बनकोलि, वन बदरी। वन कुल बं० (Zizyphus Jujuba)

अरण्य गवयः–सं० पु० जंगली गाय, वन गाय, वन गऊ यह कूलचर जाति की है। सु० सू० ४६ अ०। देखो—कूलेचर।

अरण्य-घोली-लिका–सं० स्त्री० (१) वनघोली नामक प्रसिद्ध पत्रशाक विशेष, घांली शाक। रा० नि० व० ६। (२) मन्थन दण्ड।

अरण्यचटकः–सं० पु० वन चटक पक्षी। धूसरः, भूमिशयः-सं०। वनचटा पाखि, गुड़गुड़े, नागर भड़ई, छातार बं०।

गुण—इसका मांस लघु, हितावह, शीतल शुक्रवृद्धिकारक, बलप्रद और चटक के समान गुण वाला होता है। वै० नि० द्रव्य गु०।

अरण्यचम्पकः–सं० पु० बनचम्पक, वन चम्पा। Michelia champaca (The wild varof–) बनचाँपा–व०।

गुण—शीतल, लघु, शुक्रवर्द्धक और बल-वर्द्धक है। रा० नि० व० १०।

अरण्यछागः–सं० पु० बनछाग, जंगली बकरा। बुनोछागल–बं०। (A wild goat)

अरण्यजः–सं० पु० (Sesamum indicum) तिलक क्षुप, तिल वा तिल्ली का क्षुप। See-Tilakah (तिलकः) हे० च०।

अरण्यजयपालः–सं० पु० जंगली जमालगोटा–हिं०। (Croton polyandrum, *Roxb*) हाकूह, दन्ति-बं०। देखो—दन्ती।

अरण्यजा–सं० स्त्री० पेऊँ।

अरण्यजार्द्रका–सं० स्त्री० वनार्द्रकः, वनजार्द्रकः (रा० नि० व० ७)। वाइल्ड जिञ्जर (Wild ginger)–इं०। ज़िञ्जबर कैसुमुनार (Zingiber cassumunar, *Roxb*) फा० इं० ३ भा०। इं० मे० प्लां०। ज़ि० पर्प्युरियम् (Z. Purpureum) ज़ि० क्लिफोर्डिआई (Z. cliffordii)–इं० मे० मे०। वन आद्रक, वन आदी, जंगली आदी–हिं०। वन आदा–बं०। करुअल्लमु, करुशुप्पु–ते०। राण आले, निसा, निसण मालाबारी हलद–मह०। जक्षबीलदश्ती–फा०, अ०।

आर्द्रक वा हरिद्रा वर्ग

(*N.O. Scitamineæ or Zingiberaceæ*)

उत्पत्तिस्थान—भारतवर्ष (हिमालय से लंका पर्यन्त)

वानस्पतिक-विवरण—इसका ताजा पातालीधड़ (Rhizome) १ से २ इञ्च मोटा (व्यास) जुड़ा हुआ, दबा हुआ (संकुचित) अनेक श्वेत गूदादार अंकुरों से युक्त होता है, जिनमें से कुछ में श्वेत कन्द (Tuber) लगे होते हैं। धड़ की प्रत्येक सन्धि पर शुङ्ग होता है. बहिर्त्वक् छिलकायुक्त तथा हलका धूसर होता है अन्तः भाग पूर्ण सुवर्ण-पीतवर्ण का, गन्ध अति तीव्र तथा बहुत प्रिय नहीं (आर्द्रक, कर्पूर तथा हरिद्रा के सम्मिलित गन्धवत्) होती है। स्वाद उष्ण और कर्पूरवत् होता है।

वन आर्द्रक की सूक्ष्म रचना—त्वचा का ऊर्ध्व भाग पिच्चित (संकुचित) एवं अस्पष्ट कोषोंके बहुत से स्तरों द्वारा बनता है, पैरेनकाइमा में बृहतबहुभुज कोष होते हैं। पातालीधड़ के स्वगीय भागस्थ कोष करीब करीब श्वेतसारशून्य होते हैं, परन्तु उसके मध्य भाग में पाये जानेवाले कोष बृहद् अंडाकार, श्वेतसारीय कणों से पूरित होते हैं। उक्त धड के सम्पूर्ण भाग के बृहत् कोष सुवर्ण-पीतवर्ण के स्थायी तैल से पूर्ण होते हैं। वैस्क्युलर सिष्टम (कोषक्रम) हरिद्रावत् होत है।

रासायनिक संगठन—इसमें निम्न पदार्थ पाए जाते हैं—

ईथर एकसट्रैक्ट
(१) स्थायी तैल, (२) वसा, और (३) मृदुराल ६. ३६
ऐल्कुहॉलिक एक्सट्रैक्ट (४) शर्करा, राल ७. २६
वाटरएक्सट्रैक्ट (५) निर्यास, (६) अम्ल आदि १३. ४२
(७) श्वेतसार १५. ०८
(८) क्रूड फाइबर १२. ६१
(९) भस्म ६. ८७
(१०) आर्द्रता ७. ६६
(११) अल्ब्युमिनाइड्स और (१२) Modifications of arabin etc) ३०. १७
१००. ००

जड़ कर्पूर तथा जायफल की मिश्रित गन्ध तद्वत् चरपरी होती है। मृदु राल ज्वलनयुक्त स्वादु रखता है। जड़ में कर्पूर हरिद्रा (Curcuma (aromatica) की अपेक्षा अधिकशर्करा का लुआब होते हैं।

प्रयोगांश—पातालीधड़ (Rhizome) तथा जड़।

इतिहास—यद्यपि राजबर्ग ने उक्त पौधे को कस्सुमुनार (Cassumunar) लिखा है, तथापि इस बात में अत्यन्त सन्देह प्रतीत होता है कि आया इसकी जड़ कभी युरुप भेजी गई है या यह कभी भारत वर्ष में व्यापार की वस्तु रही हैं। कटुमञ्जल वनहरिद्रा का मालाबारी नाम हैं, और इन्हींसे औषध-विक्रेताओं को कस्सुमुनार (Cassumunar root) नामक जड़ की प्राप्ति होती है। गंध एवं स्वाद में दोनों जड़े बहुतसमान होती है। महरठी नाम निसा संस्कृत भाषा का शब्द है। निशा संस्कृत में हरिद्रा कोकहते हैं, इससे यह प्रगट होता है कि देहाती लोग इसकी जड़ को वनार्द्रक मूल की प्रतिनिधि रूप से व्यवहार में लाते हैं।

गुणधर्म तथा उपयोग—यह कटु, अम्ल, रुचिकारक, वस्य तथा अग्निवर्द्धक है। रा० नि० व० ६।

इसके प्रभाव तथा उपयोग आर्द्रक के समान है। कोंकण में इसे वायुनिःसारक, उत्तेजक रूप से अतिसार एवं उदरशूल में वर्तते हैं। डाइमांक।

इसके अन्य उपयोग हरिद्रावत् है। इं० मे० मे०।

अरण्यजीरम्—कम् सं० क्ली० वनजीरक, कटुजीरक, जंगली जीरा। वनजीरा—बं०। कडुजीरे—मह०। जीरकव—ते०। (Wild cumiSeed) देखा-जीरा।

गुण—जंगली जीरा, उष्ण वीर्य, कसेला, कटु, वात कफ स्तंभक तथा व्रणविनाशक है। बैं० निघ० द्रव्य० गु०।

अरण्य तमाल-हिं० } फुल, बन तम्बाकू, गोदड़
अरण्य-तम्बाकू-बु० } तम्बाकू, वनतमाल, वनज ताम्रकूट। ग्रेट मुलीन (Great mullein), मुलीन(Mullein) इं०। बर्बैस्कम् थैप्सस (Verbascum Thapsus, *Linn*) ले०। वोइलाँन ब्लेंक (Bouillon blace)मोलीनो (Molene) -आं०। बूलरफूल, भूम के धूम; वन तम्बाकू, फ्रस् रुक, एक्लयीर, कडण्ड, फूँदर, खगोंश, खर्ख-रुआर, स्पिनखरुआर, गुरगन्ना, करथी, रावन्द-चीनी, किरम्री-पं०। अदानुद्दुब्ब्य (रीछ कर्ण), माहीजह्रज (मत्स्यविष), सिक्रानुल्हुत (मत्स्य शूकरान) लबींदतुलूवैदा (श्वेत चुप) और बुसीर-अ०। माहीजह्रह, बुसोर-फा० (इख्ति०)।

कटुकी वर्ग

(*N.O ScrophulaRineœ*),

उत्पत्ति स्थान-शीतोष्ण हिमालय, काश्मीर से भूटान पर्यन्त, यूरूप (ब्रिटेन से पश्चिमास्व) संयुक्त राज्य (United states),

इतिहास—ऐसा प्रतीत होता है कि चिकित्साशास्त्र के संस्कृत लेखकों ने उक्त पोधे का वर्णन नहीं किया है। अरब निवासी अदानुद्दुब्य, माहीजह्रज तथा सीकरानुलू-हुत आदि नामों से उक्त पौधे का वर्णन करते हैं। अर्वाचीन अरबी (भाषा) में इसे लबीदतुल्वैदा वा बुसीर कहते हैं।

मुलीन (Mullein) का फारसी नाम माहीं-जह्रह तथा बुसोर हैं, इख्तियारात में हाजी जैन ने इसका स्पष्ट वर्णन किया है।

वानस्पतिक-विवरण—पत्र, मूल-पत्र ६ से १८ इंच लम्बे, प्रकाण्ड (धड़) पत्र आयताकार, ऊर्ध्वपत्र छोटे नुकीले, डंठल रहित (वृन्त शून्य) न्यूनाधिक दंष्ट्राकार (लहरदार) तथा सफेदी मायल चमकीले (श्वेताभ) एवं कोमल रोमों से घनाच्छादित होते हैं। स्वाद-लुआबी कुछ कुछ तिक्त, गंध ताजा होने पर यह बात दूर होजाती है।

इसके पुष्प ६ से १० इञ्च लम्बी बालियों पर लगे होते हैं। केवल पुष्पाभ्यन्तर कोष (पुष्प दल) एक त्रिवत किए जाते है। इसकी चौड़ाई (व्यास) १|२ से $\frac{3}{4}$ इंच तथा लम्बाई १ इंचहोती है। दल चमकीले. पीत वर्ण के (अथवा बाहर से सुफेदी मायल पीत और भीतरसे सफेदी मायल नीले), पञ्च खण्ड युक्त, ऊर्ध्व भाग चिकना और अधः भाग लोमश होता है। नर-तन्तु गर्भकेशर की नली से लगे होते हैं। इनमें से ऊपर के तीन ऊर्णीय तथा नीचे के दो लम्बे और चिकने होते हैं। स्वाद--लुआबी और कुछ कुछ तिक्त होता है। हाजी जैन इसके पुष्प को नीलगूँ बतलाते हैं जो बर्बैस्कम् ब्लेटेरिया (V. Blattaria) प्रतीत होता है। पुष्करमूल (Orrsroot) के साथ इसके पुष्प की गंध की तुलना की गई है बीज १|१२ इञ्च लम्बे, गावदुमी (शुंडाकार), अत्यन्त कड़े जिनका चूर्ण करना अति कठिन है, करीब करीब गंध रहित होते हैं। स्वाद कुछ कुछ चरपरा होता है।

रसायनिक संगठन—पुष्प में एक प्रकार का पीत उड़नशील तैल, वसामय अम्ल, स्वतन्त्र सेव वा स्फुरिकाम्ल, चूर्ण स्फुरेत तथा चूर्ण मलेत (Malate of lime), ऐसीटेट ऑफ पोठास, रवा न बनने योग्य शर्करा, निर्यास, हरिन्मूरि (हरियाली) और एक पीत रागीय रञ्जक आदि पदार्थ होते हैं। (मोरिन)

पत्र में रसायनिक विश्लेषण द्वारा ०, ८०% स्फटिकवत मोम, उड़नशील तैल के कुछ चिह्न ईथरविलेय राल ०, ७८% ईथर में अविलेय किंतु बिशुद्ध मद्यसार (ऐलकोहल) में विलेय राल १, ००% सूक्ष्म मात्रा में कषायीन, एक तिक्त सत्व, शर्करा, लुआब इत्यादि, आर्द्रता ५, ६०/0 और भस्म १२·६० प्रतिशत तक होता है। (एडांल्फ) औषध (drug) में लुआब १६·७६0/0 डेक्ट्रीन (अंगूरी शकर) के समान कार्बोज (Carbohydrate) ११·७६0|0 ग्लूकोज (मद्यौज) ५,४८०|० सैकरीन (शर्करौज) १·२६0/0 आर्द्रता १६·७६0/0 भस्म ४·११०|० सेल्युलोज (काष्ठौज) ११·

७५ प्रतिशत और लिग्नीन (काष्ठीन) आदि पदार्थ होते हैं।

प्रयोगांश—चुप (अर्थात् मूल, पत्र, पुष्प एवं बीज)

औषध-निर्माण—पत्र—१ से ४ ड्राम।

तरल सत्व—(पत्र वा पुष्प द्वारा प्रस्तुत) १ से ४ फ्लु० ड्रा०।

प्रभाव—पत्र वेदनाशामक, आक्षेपहर, स्निग्धताजनक है। मूत्रल, मृदुताजनक, लुआवी और सूक्ष्म निद्राजनक हैं।

उपयोग—मुसलमान चिकित्सक इसे त्रितीय कक्षामें उष्ण व रूक्ष मानते हैं, और विरेचन के साथ इसे आमवात तथा संधिवात में देते हैं। दीसक्रीडूस ने इसके कई भेदोंका वर्णन किया है। इसे कास तथा अतिसार में लाभदायक और वाह्य रूप से मृदुता जनक बतलाते हैं। इसकी एक जाति से लैम्प की बत्ती बनाई जाती थी। एसा प्रतीत होता है कि अरब तथा फ़ारस निवासी मुक्तीन के निद्राजनक (मस्त्य के लिए) विष प्रभाव से भली भाँति परिचित थे।

डाक्टर स्टयुवर्ट—के मतानुसार इसकी जड़ उत्तर भारत में ज्वरघ्न रूप से उपयोग में आती है।

यूरुप में मुक्तीन चिरकाल से पशुओं के फुफ़्फुस रोगों के लिए प्रसिद्ध प्राप्त कर चुका है। इसी हेतु इसे काऊज लङ्गवर्ट (Cows' lung wort) अर्थात् गो-फुफ्फुस-तृण कहते हैं। जर्मनी में चूहों को भगाने के लिये इस पौधे को अन्न की कोठियों (खातो) में रखते हैं। आरम्भ में इसके डंठल को मशाल रूपसे व्यवहारमें लाते थे। इस कारण उक्त पौधे का, फ्रांस में सिअर्जी डी नाट्रो डेमी (Cierge de notreDame) तथा फ्लोर डी ग्रांड शैण्डेलिअर(Fleur de grand chandeliere) और इङ्गलैंड में हाई टेपर (High taper) नाम पड़ गया।

इसके पत्र तथा पुष्प स्निग्धताजनक, मूत्रल, अङ्ग मर्दप्रशमन और आक्षेपहर है तथा चिरकाल से अतिसार एवं फुफ्फुस रोगों में व्यवहृत होते आ रहे हैं। फ्रांस में इसके पुष्प का शीत कषाय मूत्रल रूप से तथा पत्र का प्रलेप स्नेहजनक रूप से व्यवहार में आता है। बीज को निद्राजनक बतलाया जाता है और कहा जाता है कि श्वास तथा शिशवाक्षेप (Infantile-convulsions) में इसका उपयोग किया गया हैं। डाक्टर एफ० जे० बी० किनलैन (१८८३) ने आयरलैंड में इसके पत्र को दुग्ध में उबाल कर क्षयजन्य कास तथा अतिसार के मुख्य औषधीय उपयोग की ओर ध्यान दिया। उन्होंने बतलाया कि बागों में उक्त पौधे की विस्तृत कृषि की जाती है, उनका दावा है कि इसमें कांडलिवरआंइल (कांड मत्स्य यकृत्तैल) समान शरीरभारवर्द्धक तथा रोगनिवारक गुण हैं।

इसकी जड़ ज्वरघ्न रूप से दी जाती है। इसके बीज कामोत्तेजक है। इसके पत्ते को रगड़ कर उसमें तैल सम्मिलित कर तथा उसे गर्म करके शोथ युक्त स्थानों पर लगाते हैं, मुट्ठी भर इसके पत्र को १ पाईट (१० छटांक) गोदुग्ध में यहां तक उबाले कि अर्द्ध पाईट (५ छटांक) दुग्ध शेष रहजाए। तदनन्तर इसे छानकर शर्करा सम्मिलित कर सोते समय सेवन करे। इससे कास होती है तथा वेदना और क्षोभ दूर होते है। इं० मे० मे०।

डाक्टर स्टयुवर्ट के कथनानुसार इसको रेवन्दचीनी भी कहते हैं। यह इस कारण है कि कभी रेबन्दचीनी में इसका मिश्रण करते थे।

गेरांड—डिलिटेलिस में कभी कभी इसका तथा अन्य पौधोंका मिश्रण करते हैं। दत्त महोदय वर्णन करते हैं कि देशी लोग इसे श्वास तथा फुफ्फुस रोगों में वर्तते है और यह कि इसमें तमालवत् (ताम्रकूट अर्थात् तम्बाकू वत्) निद्राजनक गुण है। बीज कामोदीपक ख्याल किए जाते हैं।

यूरुप तथा अमरीका के संयुक्तराज्य में एक समय स्निग्धताजनक वा मृदुताकारक रूप से

इसके घने ऊर्णीय पत्र का केवल गृह औषध में ही नहीं, अपितु चिकित्सकगणों से भी बहुत मान्य था। प्रतिश्याय तथा अतिसार की चिकित्सा में इसका अन्तः और अर्श में बाह्य (प्रलेप रूप से) उपयोग किया जाता था। (वैट)

यह यक्ष्मा की मूल्यवान औषध है तथा यह रात्रिस्वेद को रोकती, कास को कम करती और आंत्र शैथिल्य को ठीक करती है। एक आउंस (२॥ तो०) इसके पत्र को एक पाइण्ट (१० छटांक) दुग्ध में उबाल कर दिन में दो बार उपयोग करने से यह श्वासावरोध को दूर करता है। (वैट)

यह मूत्रावयवस्थ क्षोभ तथा प्रदाह, प्रतिश्याय और अतिसार में लाभदायक है। श्वास रोग में इसके शुष्क पत्र को हुक्का पर पीते हैं अथवा इसका सिगरेट उपयोग में लाते हैं।]

डाक्टरकिन लैण्ड के चिकित्सालय विषयक प्रयोगों द्वारा निम्न परिणाम स्थिर किए गए हैं:- (१) यक्ष्माकी प्रारम्भिक तथा उरःक्षतीय अवस्था से पूर्व प्रयोग करने से मुलीन में कॉड लिवर ऑइल (कोडमत्स्य यकृत्तैल) की अपेक्षा अधिक तथा रशन कौमिस (Russian koumiss) के तुल्य शरीरभारवर्द्धक एवं रोगनिवारक शक्ति है। (२) उरःक्षतावस्था में यह कास को बहुत कम करता है। (३) यक्ष्मीयातिसार पूर्णतः प्रतिबन्धित हो जाता है। (१) इसका यक्ष्मा के रात्रिस्वेद पर कोई सशक्त प्रभाव नहीं होता। अस्तु उसका धस्तूरीन (ऐट्रोपीन) से सामना करना चाहिए। पं० बी० एम०।

अरण्ड-तुलसी-सं० स्त्री० वनतुलसी, कृष्ण तुलसी, (Ocimum Gratissimum) काला-बावरी-हिं०। रानतुलस-मह०। वैऊयन्ती तुलसी। यह दो प्रकार की होती है:—(१) ह्रस्व (छोटी) तुलसी और (२) दीर्घ (बड़ी) तुलसी। गुण—जंगली तुलसी सुगन्धयुक्त, उष्ण, कटु है तथा वात चर्म दोष विसर्प और विषनाशक है छोटी जंगली तुलसी कटु, उष्ण, तिक्त रुचिकारक, दीपन, हृदय को हितकारक, लघु विबन्धी पित्तकारक एवं रूक्ष है तथा कटु, विष, वृद्धि, कृमि और ज्वरनाशक है एवं वात कृमि, कफ, दद्रु तथा रक्तदोष नाशक है बीज-दाह तथा शोषनाशक है वै० निघ० द्र० गु०।

अरण्य त्रपुसकः-सं० पु० वन्य त्रपुष, जंगली खीरा (Wild cucumber) वनशशा, वनकार्कुक वं० गोंड़शेदनी-मह० वै० निघ०।

अरण्य त्रपुसी-सं० स्त्री० (१) इन्द्रवारुणी, इन्द्रायन, राखाल शशा-बं० (Citrullus Colocynthis), महाकालजता, लाल (बड़ा) इन्द्रायन माकालफल-बं० (Trichosanthes Palmata) वै० निघ० अपस्मा० चि० नस्य०।

अरण्य दमनः-सं० पु० वन दवन वृक्ष, वनदौना अफ़सन्तीन भेद (Artemesia Siversiana) के०।

अरण्य(ज)द्राक्षा-सं० स्त्री० जंगली दाख, मवेज़ल, ज़बीबुज्जबल-अ०। (Delphinium staphesagria) ले० स्टैफिसैग्रीई सेमिना (Staphesagriæ semina) ले०।

अरण्य धान्यम्-सं० क्ली० नीवार उड़िधान-बं० देवभात-मह० (Wild variety of Oryza sativa) रा० नि० व० १६।

अरण्य धेनुः-सं० पु० बन गाय, जंगली गाय। (Wild cow)।

अरण्य नील सत्व-हिं० पु० जंगली नीलका सत बैप्टिसीनम् (Baptisinum)-ले० बैप्टिसीन (Baptisin)-इं० जौहर नीले सहूराई-फा० उ०।

नांट आफ़िशल
(*Not Oficial*)

उत्पत्ति-स्थान-संयुक्त राज्य अमरीका में एक भाँति के जंगली नील के पौधे उत्पन्न होते हैं जिनका वानस्पतिक नाम बैप्टीसिया टिंक्टोरिया (Baptisia Tinctoria) है,

उन्हें आंग्ल भाषा में वाइल्ड इण्डिगो (Wild Indigo) अर्थात् वन्य (अरण्य) नील कहते हैं। उनमें (जड़) से दो सत्व प्राप्त होते हैं, जिनमें से एक वह है जिसका यहां वर्णन हो रहा है।

लक्षण—यह एक प्रकार का धूसर वर्ण का चूर्ण है जो जल में तो अविलेय परन्तु मद्यसार में विलेय होता है।

मात्रा—१ से ५ ग्रेन (·० ६ से ·३) ग्राम वटिका (या चूर्ण) रूप में वरतें।

टिंकचूरा बैप्टिसीई (Tinctura Baptisiœ) टिंकचर अफ़ बैप्टसीन (Tincture of Baptisin) स़ब्राह् नीलज वर्री-अ़० तअ़फ़ीन नील स़ह्राई-फ़ा०।

मात्रा—५ से ३० मिनिम=(·३ से २ घन शतांशमीटर)।

प्रभाव तथा उपयोग—थोड़ी मात्रा में कोष्ठ मृदुकारी रूप से पुरातन विष्टम्भ (मलावरोध) में देते हैं। अधिक मात्रा में विरेचक और वामक है यह यकृदोत्तेजक एवं आमाशय विकार करने वाला है।

अरण्य पलाण्डुः—सं० पु० वन जाति पलांडु, जंगली प्याज, काँदा वन पेंयाज—वं (Scilla-Indica) अत्रि०।

गुण—मूत्र विरेचक, श्लेष्मघ्न, अति उग्र अधिक मात्रा में देने पर वान्तिकारक तथा मलभेदक है और विष के समान मनुष्य को मार डालता है, शोथ, श्वास, कास तथा मूत्रसंग (मूत्रावरोध) की दशा में यह प्रयुक्त होता है, अत्रि० देखो—वन पलाण्डुः।

अरण्य पिप्पली—सं० स्त्री० वन पिप्पली नामक क्षुप, वन पीपल। वन पिपुल—वं० (See-Vanapippali) रा० नि० व० ६।

अरण्य पु (पो) दीना—हिं० पु० जंगली पुदीना (रोचनी) हासा—अ० पुदीना कोही—फ़ा० Wild thyme (Thymus Vulgaris or Serpyllum, *Linn*)

अरण्य मदनमस्त पुष्प—हिं० पु० सिकास सर्सिनेलिस (Cycas Circinalis, *Linn. Syn. C. Inermes.*) जंगली मदनमस्त का फूल बजर वट्टु—बम्ब० पहाड़ी मदनमस्त का फूल-द० आम्देसामोटपन-गो०मदन कामेशुरप्पू, काममूपू, कामप्पू, चनंग काय—ता० मदन मस्तु, रान, गुवा, मदन,कामाक्षी ते० मालाबारी सुपारी—मह० रिन बदम, टोड्डपन, एन्थकाय—मलय० मुदंग वर० मदू गस्स—सिं०।

(*N. O. Cycadaceoe*)

उत्पत्ति-स्थान—मालाबार तट पश्चिम मदरास की शुष्क पहाड़ियां।

प्रयोगांश—पौष्टिक पत्र (ब्रेक्टस) गुठली तथा काण्ड।

वानस्पतिक-विवरण—बाजार में बिकने वाले पौष्पिकपत्र भाला के शिर के शकल के दो इञ्च लम्बे तथा आध इञ्च चौड़े और पृष्ठकी ओर धूसरपीत वर्ण के कोमल सूक्ष्म रोगों से आच्छादित होते हैं। प्रत्येक छिलके के वाह्य ऊर्ध्वकोण से एक सूआकार अन्तः वक्र विन्दु निकलता है। जबकि कोण प्रथम प्रथम प्रगट होता है तो वे अनन्नास के अङ्कुर के समान बहुत निकट निकट चापित रहते हैं परन्तु ज्यो ज्यों उसकी अवस्था अधिक होती है त्यों त्यों वे एक दूसरे से भिन्न होते जाते हैं। इनमें कोई तन्तु नहीं होता छिलके का अन्तस्तल पराग कोष (ऐन्थर) द्वारा पूर्णरूप से आच्छादित होता है, पराग कोष (ऐन्थर) एक सेलीय द्विकपाट युक्त शिखरके इर्दगिर्द खुला हुआ होता है, जिससे पराग विसर्जित हुआ करता हैं मज्जा में पाये जाने वाले श्वेतसार की अणु वीक्षण द्वारा परीक्षा करने पर यह सागूके समान होता है।

रासायनिक-संगठन(या संयोगी अवयव)—पौष्पिकपत्र तथा त्वचा में अधिक परिमाण में अल्ब्युमेनीय वा लुआबदार पदार्थ जो जल में लयशील होते हैं शुष्क रूप में पाये जाते हैं। परन्तु इसमें कोई क्षारीय वा अन्य ऐसे सत्व नहीं पाये जाते जो इसके प्रसिद्ध मदकारी प्रभाव के

हेतु सिद्धहस्त इससे कतीरा के समान एक निर्यास तथा एक प्रकार का साग़ू या प्रकांड तथा अस्थि द्वारा निर्मितआटा जिसकी मालाबार में इन्दुम पोदी" कहते हैं, पाये जाते हैं।

प्रभाव तथा उपयोग—नर पौष्पिकपत्र (कोष) दक्षिण भारतवर्ष में मादक रूप से उपयोग में आते हैं। इनमें उनपर रहने वाले कीटाणुओं को मदान्वित करने का गुण है। ये उत्तेजक तथा कामोद्दीपक भी हैं इसका औषधीय गुण पाटला (पाढल) पुष्प के समान ख़याल किया जाता है इसी कारण इन दोनों ओषधियों को तामिल भाषा में मदन काम-पु अर्थात् कामपुष्प शब्द से अभिहित करते हैं। अरण्य-मदन मस्त पुष्प के पौष्पिकपत्र (ब्रेक्ट्स) को अन्य द्रव्यों के साथ चूर्णित कर इससे कामोद्दीप भोदक प्रस्तुत किये जाते हैं। इस वृक्षके कांड तथा गुठली द्वारा आटा प्रस्तुत किया जाता है मालाबार इस की गुठलियों को एकत्रित कर मास पर्यंत धूप में सुखाते हैं, तदनन्तर इसे खल में कूटकर आटा बनाते हैं जिसको इंदुम पोदी" कहते हैं। यह (Caryota) के आटे से श्रेष्ठ, किन्तु चावल से निम्नकोटि का होता है और इसे पहाड़ी जातियाँ तथा निर्धनलोग खाते हैं, विशेषकर जुलाई से मिसम्बर मास तक जबकि चावल कम होता है और उनके नाश होनेका भय रहता है, प्रायः साग़ू में इसका मिश्रण किया जाता है रूहीडी (Rheede) के वर्णनानुसार फलान्वित कोण (Cone) को पुष्टिस कटि पर लगाने से वृक्कशोथ विषयक शूल दूर होता है फ़ा० इं० ३ भा०। इं० मे० मे०।

नोट—"मदनमस्त" (Artabotrys odoratissimus, *R. Br.*) तथा 'मदनमस्त का झाड़,, नाम की दो और वनस्पतियाँ हैं जो पूर्व कथित वनस्पतियों से नाम सादृश्यता रखने पर भी दो सर्वथा भिन्न भिन्न औषधि हैं। स० फा० इ०। इनके लिये यथास्थान देखो।

अरण्यमल्लिका-सं० स्त्री० वन मल्लिका, वन, मल्लुक हिं० डाँश, माछि-बं०। गैडफ़्लाई (Gadfly) -इं०। श० र०।

अरण्य मुद्गः-सं० पु० वनमुद्ग, वनमूग, मुद्गपर्णी घोड़ा मुग-बं०। (Phaseolus Trilobus *Ait*) रा० नि० व० १६। देखो—मकुष्टकः।

अरण्य मुद्गा-सं० स्त्री० मुद्गपर्णी, वनमूँग-हिं० मुगानि-बं० (Phaseolus Trilobus *Ait*) रा० नि० व० ३।

अरण्य मेथी-सं० स्त्री० वन मेथिका, वन मेथा, जंगली मेथी बन मेति-बं० राण मेथि मह० (*See*-Vanamethi) वै० निघ०।

अरण्य रजनी-सं० स्त्री० वनहरिद्रा, जंगली हलदी बन हलुद बं० राण हलद-मह०। (Curcuma Aromatica) वै० निघ०।

अरण्यलक्ष्मी-सं० स्त्री० वन लक्ष्मी रम्भा फल अरण्य कदली, जंगली केला (Wild Plantain (Musa Paradisiaca)

अरण्य वातादः-सं० पु० (१) बीज जंगली बादाम हिं०, द० हिडनो कार्पश वाइटिएना Hydnocarpus Wightiana, *Blume*). हिं० आयनेब्रिअंश (H. inebrians, *Will.*) ले० जंगूल आमण्ड (Jungle Almond) इं० नीरडि मुत्तु एट्टी ता० नारडि मुक्तु ते० कडु-कवथ कौटी-मह० तमन मरवेत्ति मल० र० केकुन मकूलू-सिं० कोट्टो गो कोटी वम्ब० तैल जंगली बादाम का तैल-द०। नीरडि मुत्तु एणणेय-नीरडि विक्तुलु-नूने-ते०।

कुष्ठबैरी वा चांलमूगरा वर्ग
(*N. O. Bixineae.*)

उत्पत्ति स्थान—पश्चिम प्रायद्वीप दक्षिण कोंकणसे ट्रावनकोर पर्यंत मालाबार और दक्षिण भारत के कुछ अन्य भाग।

इतिहास—उक्त वृक्ष के इतिहास के विषय में जो कुछ हमें ज्ञात हैवह यह है कि पश्चिमसमुद्र तट पर यह कतिपय हटीले त्वग्रोगों में गृह औषध रूप से चिरकाल से उपयोग में आ रहा है तथा निर्धन जाति के लोग जलाने तथा औष-

वीय उपयोग हेतु इसका तैल निकालते हैं। (डाइमॉक)

वानस्पतिक-विवरण—इसका फल गोलाकार सेव के आकार का होता है, जिसके ऊपर एक खुरदरा मोटा धूसर रंग का छिलका होता है, जो बाहर की ओर कार्कवत् और भीतर से काष्ठीय होता है जिस पर वृहद्बुंद जटित होते हैं पर किसी किसी वृक्ष में अबुंदशून्य फल भी होते हैं इसके भीतर १० से २० अधिक कोणाकार बीज जो करीब करीब ½ इं० लम्बे, आधाइं० चौड़े और ३से ४इं० मोटे सामान्यतः विषम अंडाकार कभी कभी अंडाकार या आयताकार होते हैं और जिनके ऊपर का सिरा नीचे की अपेक्षा अधिक नोकीला होता है।

बीज अल्प श्वेतमज्जा में रखे रहते और श्याम पतले बाह्यत्वक् से मज़बूती के साथ चिपके रहते हैं मज्जा को खुरच कर पृथक् करने पर बीजबहिःत्वक् का बाह्यपृष्ठ खुरदरा और लम्बाई की रुख़ छिछली नलिकाकार धारियों से युक्त दीख पड़ता है उभार स्पष्ट व्यक्त नहीं होते छिलके के भीतर भरपूर तैलीय अल्ब्युमेन होता है, जिसमें चालमूगरा के समान दो वृहद् स्पष्ट हृदाकार तीन नसों से युक्त पत्रीय दोल होते हैं। ताजी अवस्था में अल्ब्युमेन का वर्ण श्वेत, किन्तु शुष्क होने पर गम्भीर धूसर वर्ण का हो जाता है। इसकी गंध चालमूगरा के समान होती है।

मोहीदीन शरीफ़ के मतानुसार यह गन्धरहित तथा कुछ कुछ बादामवत् निर्मल मधुर स्वादयुक्त होता है पारस्परिक दबाव के कारण प्रायः ये विषम हो जाते हैं इसके बीज चालमूगरा के समान होते हैं परन्तु आकार में छोटे तथा खुरदरे होते हैं जिनकी लम्बाई की रुख़ धारियाँ होती हैं चालमूगरा में यह बात नहीं होती। उसके बीज चिकने और आकारमें इससे दुगुने बड़े होते हैं।

सूक्ष्म रचना—बीज बाह्यत्वक् तथा अल्ब्युमेन को सूक्ष्म दर्शक द्वारा परीक्षा करने पर ये चालमूगरा बीजवत् पाये जाते हैं।

रासायनिक संगठन—बीज में लगभग ४४०/०स्थिर तैल होता है, जो गंध या स्वाद में चालमूगरा तैल के समान होता है। तैल में चालमूग्रिकाम्ल तथा हिडनोकार्पिकाम्ल और किंचित मात्रा में पामिटिक एसिड होता है। उपयुक्त दोनो अम्ल स्फटिकीय होते हैं।

प्रयोगांश—बीज तथा तैल।

इन्द्रियव्यापारिक-कायपरिवर्तक, वल्य, स्थानिक उत्तेजक (मो० श०), पराश्रयी कीटघ्न बीज शोधक है।

औषध-निर्माण—औषधीय उपयोग और इनकी प्रतिनिधि स्वरूप युरुपीय द्रव्य चालमूगराके बीज और तैल।

मात्रा—तैल १५ बूंद से २ ड्राम पर्यन्त (१२ पलुइड ड्राम) अथवा आमाशयपूर्ति पर्यन्त बीज क्रमशः इन्हें १५ ग्रेन (७॥ रत्ती) से २ ड्राम तक बढ़ायें। अन्त रूप से बीज को चबाकर केवल रसको निगलें पर सम्पूर्ण वस्तु की नहीं बीज की अपेक्षा तैल अधिक लाभदायक संतोषजनक तथा उत्तम है। तैल चालमूगरा तेल की उत्तम प्रतिनिधि है। पूर्ण लाभ हेतु इसका पूर्ण औषधीय मात्रा में उपयोग करना चाहिये।

नोट—क्योंकि यह बहुत स्वल्प मूल्य की वस्तु है अस्तु अकेले ही बिना किसी अन्य तेलके सम्मेलन में इसका बहिरप्रयोग करना चाहिये।

उपयोग—खर्रा (तर खुजली) तथा बिस्फोटक आदि त्वग्रोगोंमें इसके बराबर कानन एरण्ड तेल (Jatropha curcas oil.) मिश्रित कर उसमें गंधक २ भाग, कपूर आधा भाग तथा नीबू का रस १० भाग योजित कर इसका अभ्यग करते हैं प्रलेप वा इमलसन रूप में इसका बाह्य उपयोगहोता है।

शिरोदग्ध व्रण में इसका तेल तथा चूने का पानी समान भाग से प्रलेप रूपसे उपयोग में आते हैं। डायमॉक।

यह आमवात विपयक वेदना को शमन करता है और इसे त्वग्रोगों में बर्तते हैं भस्में क्षारीय

के साथ मिलाकर इसे विद्रधि चक्षुक्षत तथा अन्य क्षतों पर लगाते हैं। रहीडी

ट्रावनकोर में आधे चाय के चम्मच भर की मात्रा में इसे कुष्ट रोगों में देते हैं और एरण्ड की गिरी तथा छिलके साथ कुचल कर खुजली में इसे औषध रूप से उपयोग में लाते हैं।

(डायमांक)

यद्यपि १५ बूंद से २ ड्राम की मात्रा में कुष्ठ विभिन्न प्रकार के त्वग्रोग उपदंश की द्वतीय कक्षा और पुरातन आमवात में इसका अंतः प्रयोग होता है तथापि इसके उपयोग में अत्यन्त सावधानीकी आवश्यकता होती है कहा जाताहै कि यह आमाशय तथा आन्त्र क्षोभक है क्योंकि कतिपय दशाओं में इसके उपयोग से वमन व रेचक आने लगते हैं। (वैट)

इसका तेल कुष्ट के लिये न्यारा तथा चाल-मूगरा से श्रेष्ठतर अनुमान किया जाता है इसकी मात्रा ५ बूंद से क्रमशः बढाकर ३० बूंद पर्यन्त है कुष्ट में मांसांतरीय वा शिरान्तः अन्तःक्षेप द्वारा भी इसे प्रयुक्त करते हैं ईथिलेस्टर्स के मांसांतरीय वा इसके लवण (चालमूग्रिक तथा हाइड् नोकार्पिकाम्ल) के शिरान्तरीय अन्तः क्षेपों के सर्वोत्तम परिमाण दृष्टिगोचर होते हैं इससे लेप्रा वेसिलाई (कुष्ट के जीवाणु) और ग्रन्थियों (Nodules) का अन्त हो जाता है।

(चक्रवर्ती)

डाक्टर एम० सी० कोमनदेशी औषध विषयक मदरास समाचारमें जो अभी हालही में प्रकाशित हुआ है एक पुरातन कुष्ठ रोगी का उल्लेख करते हैं, कि उसे उक्त तेल के अंतः (मुख द्वारा एवं त्वक्स्थ (अन्तःक्षेप) प्रयोग से (रोग की विभिन्न अवस्थाओं वा भेदों– स्पर्शाज्ञता, मिश्रग्रंथि युक्त तथा क्षतज इत्यादि में) अत्यन्त लाभ हुआ। ५ बूंद उक्त तैल तथा उतना ही पिथांस वसा (Pythons fat) इन दोनों को मिलाकर तथा एक एक बूंद दैनिक तैल को मात्रा बढ़ाते हुए उक्त मिश्रण का उस समय पर्यन्त मांसांतर अन्तःक्षेप करें, जिसमें मात्रा ३० वा ४० बूंद होजाय। किसी किसी रोगी को वोज की गिरी पिसा हुई, नारिकेल तैल, सोंठ, तथा गुड़ (Jayery) द्वारा निर्मित लड्डु भी दिया गया। इसका तेल १० बूंद की मात्रा में कलेवा से १ घंटा पूर्व तथा पाक २० ग्रेन (१० रत्ती) की मात्रा में संध्या काल में दिया गया। इस प्रागुक्त चिकित्सा से पूर्व विशुद्ध विचूर्णित जयपाल बीज का ८ से १० दिवस पर्यन्त रेचन दिया गया। उपर्युक्त चिकित्सा के अतिरिक्त किसी किसी रोगी को सप्ताह में २ वार सोडियमहाइड्नोकार्पेट-घोल (१ घन शतांश मीटर) का त्वक्स्थ अन्तःक्षेप किया गया।

परिणाम निम्न हुआ–"जो कुछ मैं ने देखा उसमें सन्देह नहीं कि अरण्यवाताद (H. Inebrians) कुष्ठ की घृणायुक्त दशाओं के सुधारने के लिये एक शक्तीमान औषध है।"

कलकत्ता के वैज्ञानिक अन्वेषक डॉक्टर सुधामय घोष अक्टूबर मास सन् १९२० ई० के इण्डियन जर्नल आंफ मेडिकल रीसर्च में लिखते हैं कि कुष्ठ की चिकित्सा में हाइड्नोकार्पिकाम्ल का सोडियम साल्ट अत्यन्त गुणदायक एवं उपयुक्त पाया गया। उनका कथन है कि अरण्यवाताद। (Hydnocarpus Wightiana) तथा लघु कवटी (H. Venata) द्वारा प्राप्त तैल, चालमूगरा तैल की अपेक्षा अधिक सुलभ है। चालमूगरा तैल की तुलना करने पर ५–५ प्रतिशत के स्थान में उनमें अधिक (१० प्रतिशत) हाइड्नोकार्पिकाम्ल वर्तमान होता है। अस्तु, मितव्ययता के विचार से कुष्ठ चिकित्सा में उनका उपयोग योग्य प्रतीत होता है। यक्ष्मा, छिलका युक्त विस्फोटक, कण्ठमाला के ग्रंथियों, हठीले त्वग्रोगों यथा कंडू, रक्ताभायुक्त विस्फोटक (Lichen) रक्तस्राव (Prurigo) तथा उपदंश मूलक त्वग्रोगों पर उक्त तैल का अभ्यंग करते हैं। दुर्गन्धित (पूतिगंध युक्त) स्रावोंमें विशेषतया प्रक्षय के पश्चात योनि शोधन रूप से योनि में तथा पूय-

मेह में इसके बीज के शीत कषाय का मूत्रमार्ग में पिचकारी करते हैं।

सुश्रुत महाराज स्वरचित सुश्रुत संहिता नामक प्रामाणिक संस्कृत ग्रंथ में लिखते हैं कि कुष्ट रोग में खदिर क्वाथ चाँवलमूगरा तेल के सेवन करने से इसकी गुणदायक शक्ति अधिक हो जाती है। यदि यह सत्य है तो चालमूग्रिकाम्ल खदिरोल (Catechol) के साथ, जो उसका प्रभावात्मक सत्व है, सम्मिलित कर परीक्षा की जा सकती है। कहा जाता है कि डाक्टर उन्ना (Unna) ने पाइरोगयलोल का जो खदिरोल के बहुत समान है, ओषिद (Oxide) रूप में कुष्ठ रोग में सफलतापूर्ण उपयोग किया।

कुष्ट रोग आयुर्वेदिक चिकित्सा में चालमूगरा तैल तथा गोमूत्र दोनों अन्तः एवं बहिर रूप से उपयोग में आते हैं। इसके विषय में आधुनिक सर्वश्रेष्ठ भारतीय वैज्ञानिक जगदीश चन्द्र बोश महोदय लिखते हैं कि सम्भवतः तैल के अम्लों का मूत्र के सैन्धजम् (Sodium) तथा अमोनियम आदि लवणों से सम्पर्क होने पर कुछ क्षारीय लवण बनजाते हैं और विलेय होने के कारण ये रोगी के रक्त द्वारा समस्त शरीर में व्याप्त हो जाते हैं तथा चाँलमूगराम्ल के विलेय लवणों की तरह प्रभाव करते हैं, (इं० मे० मे०) अरब के वर्षाती नामक रोग में यह तैल औषध रूप से प्रयुक्त होता है।

(२) जंगली बादाम-हिं०, बम्ब० मद्र०। वाइल्ड आमण्ड (Wild almond) पून ट्री (Poon tree)-इं०।

स्टरक्युलिया फीटिडा (Sterkulia Foetida, *Linn.*)-ले०। पून-बम्ब०। कुडुप दुक्कू, पिनारी, कुद्दुरई-पुडुकी, कुद्र फुक्कु; पिनारी (-थ) मरम्-ता०। गुरपू बादाम-ते०। पिनारी मर भाटला-कना०। पोट्ट-कवलम-मल०। हलियूम पियू, लेट् कोय्-बर०। कुओमद, विरोही-गो०। नर्क्य ऊद गु०, मद्र०।

आवर्त्तनी वा मरोड़फली वर्ग
(*N. O. Sterculiaceae*)

उत्पत्ति स्थान—पश्चिमी घाट (वा प्रायद्वीप) दक्षिण भारत, कोंकण, मालाबार, ब्रह्मा और लंका।

वानस्पतिक-विवरण—इसके विशाल वृक्ष होते हैं। स्टर्क्युलिया की अनेक जातियों से वृहत तैलीय बीज प्राप्त होते हैं, जिन्हें विहाती लोग खाते हैं। बीज अर्द्ध अंडाकार १ इंच लम्बे और आध इंच चौड़े (व्यास) एक पीले श्यामवर्ण की झिल्ली से आच्छादित होते हैं। आधार पर एक पीतवर्ण का अर्बुद होता है। कठिन श्यामत्वचा एक ऊर्ण जटित स्तर से आच्छादित होती है। यह भीतर से भूसर एवं मखमली होती, और इसके भीतर बीज के आकार की तैलीय श्वेत गिरी सम्पुटित होती है। प्रत्येक बीज का भार लगभग २ ग्रॉम के होता है, छिलका कठिनतापूर्वक चूर्ण किया जा सकता है ऊर्णवत् त्वचा जलमें बैसोरीन (Bassorin) की तरह मृदु हो जाती है। गिरी में लगभग ४० प्रतिशत स्थिर तैल और अधिक परिमाणमें श्वेतसार विद्यमान होते हैं।

रासायनिक संगठन—तैल गाढ़ा, फीका पीतवर्ण का, कोमल और शुष्क नहीं होने वाला है।

प्रयोगांश—पत्र, पुष्प, बीज, त्वक्।

प्रभाव तथा उपयोग—लोरीरो (Loureiro) के कथनानुसार उक्त वृक्ष की त्वचा (वा पत्र) रेचक, स्वेदक तथा मूत्रक है। चीनी लोग इसे जलोदर तथा आमवात में देते हैं। पुष्प विष्ठावत् गंध के लिये प्रसिद्ध है। (डाइमॉक)

इसके बीज तैलीय होते हैं। और जब इसे असावधानी से निगल लिया जाता है तो उत्क्लेश जनित होता तथा शिर चकराने लगता है। इं० मे० प्लां०।

हॉर्सफील्डके कथनानुसार इसकी फली लुआबी तथा संकोचक होती है। (ऐन्स्ली)

भूषन रूप से इसका मुख्य उपयोग होता है। कंडु एवम् अन्य रोगों में इसका अन्तर और प्रस्तर (उत्कारिका) रूप में बहिरप्रयोग होता है, इसके बीजको भूनकर खाते हैं। (इं० मे० मे०)

(३) जंगली बादाम–हिं०, कच्छ,-बं०।

जावा आमण्ड (Java almond)-इं० एलीमाइ ट्री (Elemi tree), केनेरियम् कम्यून (Canarium commune, *Linn*)–ले०। बॉइस डी कोलोफेन (Boisde colophane)–फ्रां०। एलीमाइ– पृ० मा०। कानारि–मल०। बदामी-जावा। करगली मर, करगली बीज, सम्ब्राणो, जावा बदामी यौनी–कना०। बादाम जावी–हिं०। मन्शिम –अ०।

महारुख वर्ग—

नॉट ऑफिशल

(*N. O. off-icial*)

(*N. O. Basueraceœ.*, or *amyridaceœ & simarubaceœ*),

उत्पत्ति स्थान—मलया आर्चीपेलेगो, पूर्वी भारतीय द्वीपसमुदाय, पेनैंग, मलया, ट्रावनकोर, दक्षिण भारत में इसकी कृषि की जाती है।

इतिहास—रम्फियस (Rnmpheus) के वर्णनानुसार यह सीराम और उसके आसपास के महाद्वीपों में होने वाला एक विशाल वृक्ष है। जिससे इतनी अधिकता के साथ राल उत्पन्न होता है कि यह वृहत् टुकड़ों अथवा शंकाकार अश्रु रूप में धड़ तथा मुख्य शाखाओं से लटके रहते हैं, प्रारम्भ में यह श्वेत, तरल एवं चिपचिपा, किंतु पश्चात् को यह पीताभायुक्त और मोमवत् गाढ़े हो जाते हैं। यह आमण्ड (बादाम) का भी वर्णन करते हैं और कहते है कि उसे कच्चा खाने से रेचन आते हैं तथा अजीर्ण हो जाता है।

स्प्रेङ्गेल के विचारानुसार आमण्ड इन्नसीना वर्णित मन्शिम है जो उनके वर्णनानुसार बतम (Pistncia terebinthus) के समान त्रिकोणमय बीज होते हैं। परन्तु अरबी कोषकार उसे बालसमरुख (Carpobalsamum) ख्याल करते हैं। ऐन्सली कहते हैं कि अपनी जाव की औषधीय वनस्पतियों की सूची में हॉर्सफील्ड हमें बतलाते हैं कि उक्त निर्यास में कोपाइवी बालसम (Balsam of copaiba) के समान ही गुणधर्म हैं। इसकी त्रिकोण युक्त गिरी को दिहाती लोग कच्चे ही एवं पकाकर खाते हैं और तेल ताजी दशा में खाने तथा बासी होने पर जलाने के काम आता है। राल भी जलाने के काम आता है।

जावा में बीज के लिये इसके वृक्ष लगाए जाते हैं भारत वर्ष में ट्रावनकोर के पास यह अत्यन्त सफलता पूर्वक उत्पन्न किया गया है।

शेखुर्रईस ने मन्शिम (हब्बुल् मन्शिम) के नाम से इस वृक्ष का फल का वर्णन किया है। हब्बुल् मन्शिम के नाम से मख्ज़नुल् अदवियह् और मुफ़ीत आज़म में भी इसका वर्णन आया है यमन तथा हजाज निवासी इसके तेल को इन्नेमन्शिम कहते हैं।

वानस्पतिक वर्णन—राल, वृहत्, शुष्क जरदीमायल श्वेत वर्ण के समूहों में पाया जाता है उत्तप्त पहुंचाने पर यह शीघ्र मृदु हो जाता है और तब उसकी गंध एलेमीवत् (मन्शिमवत्) होती है।

फल $\frac{1}{4}$ से आधा इञ्च लम्बा, अण्डाकार, त्रिकोणयुक्त, सिरे की ओर नुकीला (तीक्ष्णाग्र) चिकना, किंचित फीके बैंगनी पतले गूदादार वाह्यत्व कयुक्त, गुठली अत्यन्त कठोर, त्रिकोणीय अस्फुटनीय (Indehiscnt) अन्य बीजों के पतन होने के कारण एककोषीय होती है आमण्ड (वातादिगिरी) का वहिरावरण झिल्लीमय होता है जिसके भीतर तीन खण्डों में विभाजित और परस्पर लिपटे तथा बल खाये हुये तैलीय दोल होते हैं गिरी से ४० प्रतिशत अर्द्ध ठोस ग्राह्य एवं मधुर स्वादमय वसा प्राप्त होती है जो बहुत काल पर्यन्त दुर्गन्ध रहित बनी रहती है। (ब्रैंड)

रासायनिक संगठन—ब्रोन (Breim)

६० प्रतिशत, एमाइरीन (राल) २५ प्रशतित ब्रायोआइडीन (Bryoidin), ब्रीडीन (Brediu) तथा एलेमिक अम्ल । क्षय-शीलता यह ईथर में तो बिलकुल लय हो जाता है पर मद्यसार (९० ०/०) में भी इसका बहुत सा भाग लयशील होता है ।

प्रयोगांश—गुठली अर्थात् बीज तथा तेल, जमा हुआ ऑलियोरेजिन जो काटने से टपकने लगता है (एलेमी) ।

औषध निर्माण—प्रलेप (२ में १) गिरी अर्थात् बीज तथा तेल का इमल्शन । मात्रा आधा आउंस से १ आउंस ।

एलिमाई प्रलेप (Unguentum elemi) मरहम रातीनजुल मस्तिम-अ० ।

निर्माण—एलीमाई १ भाग स्पर्मसीटाई आइंटमेंट ४ भाग दोनों को परस्पर पिघलाकर छान लें और शीतल होने तक हिलाते जांय ।

प्रभाव—स्निग्धताजनक, उत्तेजक और श्लेष्म निस्सारक । निर्यास उत्तेजक तथा वर्ण्यलेपन है । तैल स्नेहकारक है ।

गुण धर्म उपयोग—ऐम्सली के मतानुसार इसका गोंद बालसम साफ कोपाइबा के समान गुणधर्म युक्त है शिथिल (व्यथा रहित) व्रणों में इसे प्रलेप रूप से प्रयोग में लाते हैं । इसकी गिरी द्वारा प्राप्त तेल बातादि तेल की प्रतिनिधि है इं० मे० प्लां० ।

डॉक्टर बैटज—(Waitz) लिखते हैं इसकी गिरी द्वारा निर्मितइमल्शन बातादमिन्नग (Miatura amygdalœ) की उत्तम प्रतिनिधि है तथा वह इसके कोष्ठमृदुकारक गुण के कारण इसे वातादि मिश्रण से उत्तम ख्याल करते हैं ।

गिवर्ट—(Guibcurt) एलेमी गंधयुक्त न्युगीनिया रेजिन (Nuw Guinea Resin) के अन्तर्गत उक्त राल का वर्णन करते हैं ।

यह राल (Manilla elemi) जो उपर्युक्त वृक्ष से प्राप्त होता है प्रधानतः वार्निश बनाने के काम आता है यह रसौत बनाने के भी काम आता है । तथा बादाद तेलवत् स्नेहकारक व सुस्वादु और अशुस्रद्धावों तथा पूयमेह आदि में लाभदायक ख्याल किया जाता है । उक्त वृक्ष की त्वचा से अधिकता के साथ स्वच्छ तैल प्राप्त होता है जो नवनीतीय कर्पूरवत् समूहों में जम जाता है इं० मे० मे० ।

(४) जंगली बादाम, हिन्दी बादाम-हिं०, द०, बम्ब० । इङ्गुदी फलम् देश-बादामित्ते-सं० बादामे हिन्दी-फा० । इण्डियन आमण्ड (Indian Almond nut of) आमण्ड ट्री (Almon d tree) इं० । टर्मिनेलिया कैटेप्पा (Terminalia catappa, *Linn*) ले० । बडामीर डी मलाबार (Badamier d. malabar) फ्रां० । अखटेर कैट्टा-पेन बाम (Achter Cattapen baum)-जर० बंगला बदाम, बदाम बं० । नाट्टुम्बादम् मौट्टै नाट् बादम्, आमण्डी मरम् ता० । इगुदी, तपस तरुबु, नाट्टु बादमु, नाट्टु बादम, वित्तुलु, वा (वे) दम ते० । नाट्टु बादम कोट्टु कुरु, आदम मर्रम, कटप्पा-मल० । नाट बादामि, तरू, बादमीमर-कना० । नाट बादाम देशी बादम, हात बदाम, बेंगाली बदाम, जंगली बादाम-मह०, बम्ब० । कोटम्ब सिं० । नाट-नि बदाम गु० ।

हिमज वर्ग

(*N. O. Combretaceæ*)

उत्पत्ति स्थान—मलाया (अब सम्पूर्ण भारत वर्ष में लगाया गया है) ।

नोट—वी० डी० वसु तथा मोहीदीन शरीफ आदि लेखकों ने इसका संस्कृत व तेलगु नाम इंगुदी लिखा है परन्तु आयुर्वेदीय-ग्रन्थ लेखकों का इंगुदी, हिंगोट वा हिंगुआ (Balanites Roxburghii' *Planch*) इससे भिन्न ही वस्तु है ।

वानस्पतिक विवरण—यह एक वृक्ष है । इसका फल अन्डाकारा पिच्चित (भिचा हुआ, संकुलित) चिकना, गुठलीयुक्त, जिसके उभरे हुए नाली युक्त दो किनारे होते हैं, यह दो इञ्च लम्बा

और पकने पर मन्द बैंगनी रंग का होता है मज्जा चमकीले बैंगनी रङ्ग की होती है। गुठली खुरदरी कठिन और मोटी होती है। गिरी बादाम के अर्द्ध आकार की और करीब करीब वेलनाकार होती और बङ्गदेशीय पुरुष निवासियों में "कीक्र नट,, नाम से सामान्यतया व्यवहार में आती है।

रासायनिक संगठन—ब्रैंट (Brannt) के मतानुसार इसमें २८ प्रतिशत तैल होता है जो स्वाद एवं मृदुता में बादाम तैल से बढ़कर होता है। यह पीताभायुक्त एवं बिलकुल गंध रहित होता है। इसमें मुख्यतः स्टियरीन (Stearin) तथा ओलीईन (Olein) विद्यमान होते हैं। इस वृक्ष में बैसोरा (Bassora) की तरह का एक निर्यास होता है। पत्र और त्वचा में कषायीन होता है। त्वचा में एक प्रकार का काला रङ्ग होता है जिससे कोई कोई दाँत रंगने का काम लेते हैं। त्वक् भस्म में पोटास तथा कषायीन होते हैं।

प्रभाव तथा उपयोग—इसकी त्वचा संकोचक (संग्राही) है। अस्तु, पूयमेह तथा श्वेतप्रदर में क्वाथ रूप में इसके अन्तः प्रयोग की प्रशंसा की जाती है।

इसके कोमल पत्र स्वरस द्वारा एक प्रकार का प्रलेप निर्मित किया जाता है जो कण्डू, कुष्ठ तथा अन्य प्रकार के त्वग्रोगों और शिरोऽर्ति तथा उदर शूल में अन्तःरूप से लाभदायक ख्याल किया जाता है।

इसका फल प्रभाव में बादाम के समान होता है।

अरण्य वायसः—सं० पु० अरण्य काक, वन कौआ डोम कौआ, काला कौआ हिं० डोम काक बं०। डोम काव्वा मह०। रैवेन (Raven) इं० रा० नि० व० १६।

अरण्य वासिनी—सं० स्त्री० अत्यम्लपर्णी लता, अमर बेल, अमलोनवा। रा० नि० व० ३ (Vitis-Trifolio)

अरण्यवास्तुकः—सं० पु० कुणक्षर क्षुप, वन बथुआ। बनबेतो-बं०। रणचाकवत-मह०। (A kind of Chenopodium) रा० नि० व० ५।

अरण्यशालिः—सं० पु० नीवारधान्य। उड़िधान-बं० देवभात-मह०। (Wild rice) रा० नि० व० २२।

अरण्य शुनः—सं० पु० (Wild dog) वन कुक्कुर सं०। नेकड़ेबाघ बं०। वै० निघ०।

अरण्यशूरणः—सं० पु० वनजशूरण, जंगली सूरन बुना ओल-बं०। गोड़ा सूरण-मह०। (Amorphophallus Campanulatus) रा० नि० व० ७। देखो—वनशू(सू)रणः।

अरण्यश्वा—सं० पु० (१) कपि, वानर। (A Monkey) हे० च०। (२) चित्र(क) व्याघ्र। चीता। (A tiger)

अरण्य सम्भूतः—सं० पु० A crab (Scilla serrata) कर्कटक, केकड़ा। काँकरोल बं०। See—Karkatak

अरण्य हल्दी कन्दः—सं० पु०
अरण्य हरिद्रा—सं० स्त्री०
वन हरिद्रा, वनहर्दी, जंगली हल्दी-हिं०। वन हलुद-बं०। (Curcuma Aromatica)

गुण—कुष्टघ्न तथा वातरक्त नाशक है। भा० पू० १ भा० ह० व०। कटु, मधुर, रुचिकारी, अग्निदीपक, कड़ुई, कुष्ट एवं वातहर है तथा रक्तदोष, विष, श्वास, कास और हिक्का का नाश करने वाली है। वै० निघ०।

अरण्या—हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] एक ओषधि।

अरण्याक्षोट—हिं० संज्ञा० पु० (Indian walnut) जंगली अखरोट।

अरण्यू—जय० अरणी, अरनी, अग्निमन्थ (Premna Serratifolia)

अरण्येन्द्रवारुणिका,-णी—सं० हिं० स्त्री०
अरण्येन्द्रायन—हिं० पु०
बिशाला

सं०। विषलम्बी (म्भी), जंगली इंद्रायन, विषलोम्बी—हिं०। Bitter gourd (Cucumis trigonus, *Roxb.* Syn. Pseudo colocynthis, *Roy*)

नोट—इन्द्रायन का साधारण संस्कृत नाम इन्द्रवारुणिका,-णी (Citrullus colocynthis *Sch ad*) है। क्षुद्र तथा वृहत् भेद से यह दो प्रकार का होता है। इसके वृहत् भेद को ही लाल इन्द्रायन और संस्कृत में महाकाल अर्थात् महेन्द्रवारुणी वा विशाला (Trichosanthes palmata, *Roxb*) कहतेहैं। इन सबका वर्णन यथास्थान होगा।

अरताल-गु० हड़ताल; हरिताल। (Haritala) इं० मे० मे०।

अरतिः-सं० स्त्री० अनिच्छा, विराग, चित्त का न लगना (Absence of desire) अस्वास्थ्यं चिंतयात्यर्थमरतिः कथ्यतेबुधैः।" भा०। (२) औदासीन्य (Sadness)। (३) पित्त के रोग (Biliary disease)

अरत्निः-सं० पु०
अरत्नि-हिं० संज्ञा स्त्री०

(१) निष्ठकनिष्ठ मुष्टी, मुट्ठी-बँधा हाथ। वा० सं० २०। ८। रा० नि० व० १८। (२) कर्पूर (Camphor)। (३) कुहनी (Elbow), (४) बाहु, हाथ।

अरत्नीय प्रसारणी-सं० स्त्री० मणिबन्ध, प्रसारणी अन्तःस्था। (Ext ensor Carpi Ulnaris)

अरत्नीया-सं० स्त्री० अन्तःप्रकोष्ठिका (Ulnar nerve)

अरत्नीयाकुञ्चनी-सं० स्त्री० करसङ्कोचनी अन्तःस्था, (Flexor carpi Ulnaris)

अरद-अ० गर्दभ, गदहा, खर, (Anass)

अरदट-कना० हील, बर्गेरस। (Garcinia Cambogia, *Dess*)

अरदंड-हिं० संज्ञा पु० [देश०] एक प्रकार का करील जो गंगा के किनारे होता है।

अरदंत-हिं० वि० [सं० अ+रदन] वे दाँत का, वे दाँत वाला।

अरदना-हिं० क्रि० सं० [सं० अर्दन] (१) रौंदना, कुचलना। (२) वध करना, मार डालना।

अरदल-हिं० संज्ञा पु० [देश०] एक प्रकार का वृक्ष जो पश्चिमी घाट और लंका द्वीप में होता है। इससे पीले रंग की गोंद निकलती है जो पानी में नहीं घुलती, शराब में घुलती है। इससे अच्छा पीले रंग का वार्निश बनता है। इसका फल खट्टा होता है और खटाई के काम में आता है। इसके बीज से तेल निकलता है जो औषधि के काम में आता है। इसकी लकड़ी भूरे रंग की होती है जिसमें नीली धारियां होती हैं। गोरका, ओट, भव्य, चालते। हिं० श० सा०।

अरदा-सिं० सुदाब, तितली। (Ruta Graveolens, *Linn*)

अरदार-अ० हस्ति, हाथी, (An elephant)

अरदाल-कना०, कों० हरिताल, हरताल। See—Harital

अरदावल-हिमा० घास, घीऊ,-हिं०।

अरदावा-हिं० संज्ञा पु० [सं० अर्द। फा० आरद] (१) दला हुआ अन्न। कुचला हुआ अन्न। (२) भरता।

अरदीग-गुवाक, सुपारी, (Arecanut)

अरदैवक-एरण्ड, अरण्ड, रेंड। (Ricinus communis)

अरध-हिं० वि० (Half) अर्द्ध, समांश। व — अर्ध।

अरधंग-हिं० संज्ञा पु० (Hemiplegia) अर्द्धांग। दे०—पक्षाघात।

अरधगी-हिं० संज्ञा पु० पक्षाघात रोगी। व — अर्द्धांगी। (One afflicted with the hemiplegia)

अरधाँगी-हिं० संज्ञा पु० (Hemiplegic) देखो—अर्द्धांग।

अरन-अ० पर जो घोड़े व गदहे के खुरों के ऊपर होते हैं।

अरन-हिं० संज्ञा पु० [सं० अरण्य] (A forest) वन।

अरपा-रोग रहित, नीरोग, स्वस्थ। अथर्व० सू० २२ ३। कां० १।

अरनव बर्री-अ० शशक, खरगोश, खरहा। (A hare, a rabbit)

अरनव वह्री-अ० दरियाई खरगोश (Sea rabbit)

अरनबी-अ० एक बूटी है जो खरगोश के सदृश होती है। और खराब एवं शीतप्रधान स्थलों में होती है

अरन मरम्-मह० (१) जख़्महयात, घाव पत्ता (kalnchœ laciniata, *D. C.* (२) तून। Cedrela toona, *Roxb*) इ० मे० मे०।

अरनसुत-हिं० संज्ञा पु० [सं०] वंश, अरण्योद्भव बाँस। (Bambusa aru ndinacea, *Relz*) सूर०।

अरना-हिं० सं० पु० (१) महा निम्ब, वकायन, (Ailanthus excelsa)।

संज्ञा पु० [संस्कृत अरण्य] (२) जंगली भैंसा (Wild buffalo) जंगलों में इसके झुंड के झुंड मिलते हैं। यह साधारण भैंसे से बड़ा और मजबूत होता है। इसके सुडौल और दृढ़ अङ्गों पर बड़े बड़े बाल होते है। इसका सींग लम्बा मोटा और पैना होता है। यह बड़ा बलवान होता और शेर तक का सामना करता है।

अरना उपला-हिं० संज्ञा पु० जंगली कण्डा, गोहरा (Cow dungfonnd-dried in the forest)

अरनी-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अरणी] (१) अरणी अग्निमंथ (Premna serratifolia) (२) एक छोटा वृक्ष जो हिमालय पर होता है। इसका फल लोग खाते हैं इसकी गुठली भी काम आती है काश्मीरी और काबुली अरनी बहुत अच्छी होती है। लकड़ीसे चरखे की चरख और खो आदि बनती है यह माघ फाल्गुन में फूलता फलता है और बरसात में पकता है (२ यज्ञ का अग्निमंथन काष्ठ जो शमीके पेड़ में लगे हुये पीपलसे लिया जाता है। दे० अरणि

अरनेविया-ले० इसकी जड़ रंगके काम आती है। मेमो०।

अरन्य-हिं० संज्ञा पु० (Forest) दे० अरण्य।

अरपा-तु० जौ यव Barley (Hordeum vu-lgare)

अरफ़-अ० वंशबाँस बँस Bamboo (Bambusa arundinacea)

अरफ़ज-अ० एक प्रकार की तीक्ष्णदुरभमय बूटी है।

अरफ़ियह-अ० फ़ाख़्ता।

अरब-यू० लोफ़ुज्जुअ्द लोफ़कबीर से इसके पत्ते छोटे होते हैं।

हिं० संज्ञा पु० [सं० अर्बुद] (१) सौ करोड़। संख्या में दशवाँ स्थान (२) इस स्थान की संख्या संज्ञा पु० [सं० अर्वन] घोड़ा संज्ञा पु० [अ] (१) एक देश (२) अरब देश का उत्पन्न घोड़ा (३) अरब का निवासी।

अरबम्-हिं० पु० एक धातु तत्व विशेष इर्बियम् (Erdium) ले०।

अरबहरा-सिरि० तुख़्म संभालू मेउड़ी के बीज (Vitex negundo (Seeds of)

अरबा अबऐन-अ० (१) हज़ार पायह् सहस्रपद, कन्खजूरा, गोजर। (Centipede)। (२) पुदीना (Menthus arvensis)। (३) मकड़ी के समान एक जानवर है यह दो प्रकार का होता है—(१) दरियाई और (२) ज़मीनी।

अरबायस-यू० चना, चणक। (Gram)

अरबिक एसिड-इं० अरबिकाम्ल, गुलाबीज अम्ल निर्यास में पाये जाने वाला एक सत्व विशेष। म० अ० डा०। इं० मे० मे०।

अरबिन्द-हिं० पु० कमल, उत्पल, पङ्कज। The lotus (Nymphœa nelumbo)

अरबियान-बहार या बाबूना मेद।

अरबिस्तान-हिं० संज्ञा पु० [फ़ा०] अरबदेश। (Arabia)

अरबी-हिं० वि० [फ़ा०] अरब देश का।

संज्ञा पु० (१) अरबी घोड़ा। अरब देश का उत्पन्न वा अरबी नस्ल का घोड़ा। ताजी, तुरंगी (२) अरबी ऊंट। अरब देश का ऊंट। (३) अरब देश की भाषा।

अरबी-अ० (१) श्वेतयव (Whitebarley) (२) सुश्रुत, छिला हुआ जौ। (Husked barley)

अरबी-ज्यः हिं० आलुकी, अरुई, घुईयां, अरवी, हिं० । कच्चु बं० । A species of Arum (Arum colocasia)

अरबोस-यू० अक्कू उलयक ।

अरवेवु-कना० अरङ्गक । (Melia dubia, Cav) फा० इं० १ भा० ।

अरब्बी-हिं० वि० दे० अरबी ।

अरभक-हिं० वि० दे० अभक ।

अरमः-सं० पु० नेत्ररोग विशेष । (A kind of eye disease) वै० निघ० । देखो-अर्म्म ।

अरम-अ० एक प्रकार की मछली, मत्स्य भेद । (A kind of fish)

अरमङ्ग-सं० कुरङ्गक । (Indian antilope)

अरमनी-हिं० संज्ञा पु० [फ़ा०] आरमेनियां देश का निवासी ।

अरमनीन-यू० एक बूटी है जो प्रतिवर्ष उगती है। बागी तथा जंगली दो प्रकार की होती है। इनमें से जंगली उपयोग में नहीं आती। बागी के पत्ते झाऊ के समान होते हैं ।

अरमह्-अ० जंगली चूहा। (A wild rat)

अरमा-अ० सुर्ख स्याह साँड, रक्त श्याम सर्प । (A red black serpent)

अरमा-गोरडा० बकली ।

अरमाक-कहू की वेल या केवड़ा वृक्ष की छाल ।

अरमात-यू० केवड़ा, गुले केवड़ा । (Pandanus odoratissimus)

अरमानियाँ-यू० लाजवर्द । See-lajavarda

अरमानूस-सिरि० अजवाइन खुरासानी पारसीक यमानी (Hyocyamus)

अरमाल-, अरमालक- } एक वृक्ष की छाल है जो तजके समान एवं सुगन्धित होती है।

अरम्मू-अ० मध्य शिर पार्श्विकास्थियों के ऊपर मिलने का स्थान ।

अरय अङ्गेली-मल० चान्दल, चाँदकुड सापसुण्डी मह० । (Antiaristoxicaria' *Lesch*) फा० इं० ३ भा० । देखो—सापशुण्डी ।

अरयावल-मल० अर्निका (Arnica)

अरयिली-नैपा० कचूरी (Edgeworthia gardneri, *Meisn.*) मेमो० ।

अरर-यू० क़न्तूरियून । See Qanturiyun ।

अरर-हिं० पु० (१) मैनफल, मदनफल Randia dumetorum, *Lam.* (Emetic nut) (२) तुम्बुरु-बं०, (Xanthoxylon alatum)

-हिं० संज्ञा पु० [सं० अरर] (१) किवाड़ कपाट । (२) पिधान, ढक्कन ।

अररट्टो-इं० सन्दरच ।

अररुट किजङ्ग-ता० तवक्षीर, तीखुर, तिखुर-हिं० See-Tikhur स० फा० इं० ।

अररुट गड्डलु-ते० तवक्षीर, तीखुर तिखुर-हिं० । Curcuma angustifolia, Roxb (root of) स० फा० इं० ।

अर्रा-हिं० स्त्री० अरहर, आढ़की । (Cajanus indicus)

अरलः-सं० पु० श्योणाक वृक्ष सोनापाठा, अरलु (Oroxylum Indicum) अम० ।

अरल-हिं० पु० अज्ञात ।

अरला-सं० स्त्री० हंसपत्नी ।

अरलि-का० अश्वत्थ, पीपल वृक्ष । (Ficus religiosa)

अरलु-सिंगा० हरीतकी, हड़ (Terminalia chheula) स० फा० इ० ।

अरलुः-कः सं० पु०
अरलु-हिं० संज्ञा पु० } (१) श्योणाक वृक्ष सोनापाठा अलु । (Oroxyiumiodieun) शोनागाछ-बं० टेंटु दिंड़ा मह० टंटयः-ब्रि० गढ़० । भा० म० १ भा० अतिसा० चि० गंगाधर चूर्ण । "नागर पाठारलु धातकी कुसुमैः । "च० द० गर्भ ज्वर वै० निघ० अतिसा० चि० अम्बष्ठादि (२) बेंतस वृक्ष बेंत (Calamus rotong) (३) अलाबु । अलाबु ।

कड़ुई लौकी। महानिम्ब, महारुखा, (Ailanthus excelsa) इं० मे० मे०।

अरलु-पं० कचैटा, किंगली, अगलागल।

अरलु-सिं० मल० हरीतकी पुष्प हड़ का फूल।

अरलु पुटपाक-सं० पु० सोनापाटा की छाल द्वारा प्रस्तुत किया हुआ पुटपाक। इसे कुटज पुटपाकवत् प्रस्तुत करते हैं। देखो—कुटज।

गुण—अरलु त्वक् द्वारा निर्मित पुटपाक अग्नि दीपक है। इसे मधु तथा मोचरस के साथ संयुक्त कर उपयोग करने से यह समस्त प्रकार के अतिसार को दूर करता है शार्ङ्ग० म० ख० १ अ०

अरलु मल-सिंगा० हरीतकी, हड़। (Terminaliachebula) सं० फा० इं०।

अरल्वादि क्वाथ-सं० पु० अरलु, अतीस, मोंथा, सोंठ, बेलगिरी, अनारदाना, इनका क्वाथ प्रत्येक ज्वरों और अतिसार को शमन करता है। वृ० नि० र०।

अरवद-ता० } सतनी, सुदाब,। (Ruta graveolens' *Linn*)
अरवदा- }

अरवा-हिं० सज्ञा पु० [सं० अ=नहीं+हिं० लावना जलाना, भूनना] वह चावल जो कच्चे अर्थात् बिना उबाले या भूने धान से निकाला जाए।

अरवान-पं० अयार, यज्ञ छाल नैपा०।

अरवानह्-फा० खैरी सह्राई। एक जंगली बूटी है जो रात को पुष्पित होती है।

अरविन्दम्-सं० स्त्री० } (१) पद्म, कमल उत्पल, पङ्कज, The lotus (Nymphœa nelumbo) प० मु०। रा० नि० व० १०। (२) ताम्र ताम्बा। Copper (Cuprum) रा० नि० व० १३। (३) कोकनद रक्तपद्म (Nelumbium speciosum) रक्त कम्बल वं०। (४) नीलोत्पल, नील कमल नीलोफर (Nymphœa stelata) रा० नि० व० १०।-पु०। (५) सारस पक्षी (Thecrane) अम०।
अरविंद-हिं० संज्ञा पु० }

अरविन्ददल प्रभम्-सं० क्ली० ताम्र, ताम्बा। तामा वं०। Copper (cuprum) वै० निघ०।

अरविन्द बन्धु-हिं० संज्ञा पु० [सं०] सूर्य (The sun)

अरविन्दासव-सं० पु० कमल, खस, गम्भारी के फल, मजीठ, नीलोफर, इलायची, बला, जटामांसी, मोथा, अनन्तमूल, हड़, बहेड़ा, वच, आमला, कचूर' काला सारिवाँ' नीली, पटोल, पित्त पापड़ा, अर्जुन महुआ, मुलेठी, मुरामांसी' प्रत्येक १-१ पल मुनक्का, २० पल, धव पुष्प' १६ प० पानी २ द्रोण, मिट्टी, १०० प०, शहद ५० पल, सबको मिलाकर यथा विधि मिट्टी के बर्तन में संधान करके १ मास तक रक्खा रहने दें। यह बालकों के समस्त रोगों को दूर करता है। आ० वे० सं० भै० र०।

अरविन्दनी-स० स्त्री० पद्म समूह। र० मा०

अरवी-हिं० स्त्री० द० आलुकी, अरुई' घुइयाँ। कच्चु ब०। A species of Arum (Arum colocasia)

अरवी-अ० अशराश। लु० क० See--Asrasha

अरवीनीम-ते० माकर लिम्बू मह०। (Atalantiamono phylla Corr) मेमो०।

अरबोरेडानोट्टो-पुर्त गा० शेफालिका, हरसिंगार, परजाता (Nyctanthes arbortristis

अरशद-फा० सोनामाक्खी, सुवर्ण माक्षिक तारामक्खी Iron pyrites (Ferrisulphuretum)

अरशरम्-ता० अश्वत्थ, पीपल वृक्ष। (Ficus religiosa) इं० मे० मे०

अरशा-एक हिन्दी बूटी है जिसकी ऊंचाई मनुष्य के बराबर होती है। शाखाएँ घास की तरह ग्रन्थि युक्त होती है। पत्तियाँ भी तृण समान तथा पुष्प बनफशा के सदृश किंतु उससे भिन्न २ वर्ण का होता है फल इलायची के समान त्रिपार्श्वाकार होता है। लु० क०।

अरस-हपु (बु)षा, अर्दज अभल, हाऊबेर। (Juniperus chinensis) इं० हैं० गा०।

अरस-ता० पीपल वृक्ष, अश्वत्थ। (Fieusreligiosa)हिं० वि० [सं० अरस] नीरस, फीका (Insipid)

अरसं-काली सम्भालो, बाकस। (Justicia gendarulssa) इं० हैं० गा०।

अरस-अ० यर्बूअ, घूस, घुहस। A bandicote rat (Mus giganteus)

अरसः-सं० पु०
अरसम्-सं० क्लो० } (१) रस रहित। (२) विष रहित। अथर्व०। सू० ६। ६। का० ४। अथर्व०। सू २२। २। का० ५।

अरसमरम्-ता० अश्वत्थ, पीपलवृक्ष (Ficus religiosa)

अरसा-ता० पीपलवृक्ष, अश्वत्थ। (Ficus religiosa)

अरसाः-प्राण रहित। अथर्व० सू० ३१। ३। का० २।

अरसास-सं० निर्वज्र। अथर्व०। सू० ४। का० १०

अरसिवणद्ह विणणु-का० सहिजन, शोभाञ्जन। (Moringapterygosperma)

अरसी-हिं० संज्ञा पु० [सं० अतसी] अलसी तीसी देखो—अतसी।

अरसीन-कना० जहरीसोनतक्क मह० (Allamanda cathartica'Linn) फा० इं० २ भा०।

अरसीना-कना० हरिद्रा० हल्दी। (Curcuma longa)

अरसीना उन्मत्त-कना० पीला धतूरा पीत धुस्तुर। (Yellowvariety of Datura)

अरसूसा-यू० कनौचा भेद कोई कोई जंगली गाजर को कहते हैं

अरस्तन-फा० यूनानी संज्ञा आइरिस (Iris) इसी से व्युत्पन्नहैं देखो पुष्कर मूल फा० इं० ३ भा०।

अरस्ता तालीस-अ०
अरस्तू-अ० } अरिस्टॉटल (Aristote) अरस्तूका जन्म सन् ईस्वी से ३८४ वर्ष पूर्व थ्रेस के इलाके रस्तागीर नामक स्थान में हुआ था। सत्तरह वर्ष की अवस्था में यह हकीम अफलातून के शिक्षालय में सम्मिलित हुये और पूरे २० वर्ष तक दर्शनशास्त्र का अध्यन किए और उनके पारंगत शिष्य बने ४३ वर्ष की अवस्था में अरस्तू सिकन्दर आजमके गुरु हुये। इनमें भौतिक वस्तुओं के अन्वेषण की प्रबल इच्छा थी। इन्होंने अलेकजेण्डरिया में एक महाविद्यालय की स्थापना की जहाँ से सुप्रसिद्ध एवं प्रकाण्ड विद्वान् उत्पन्न हुये। यह दर्शन शास्त्र के तो प्रमुख पंडित थे। परन्तु वैद्यक शास्त्र में इनका पद बुकरात (Hippocrate) से अत्यन्त निम्न कोटि का है। व्यवच्छेद व इन्द्रियव्यापारशास्त्र सम्बन्धी इनके कतिपय असत्य सिद्धांतों का जालीनूस ने खंडन किया है।

इनके मुख्य मुख्य निम्न सिद्धांत थे—

(१) यह हृदयको प्राकृतिक ऊष्मा का उद्गम और रूह हैवानी का स्रोत मानते हैं। (२) इन के मतानुसार फुप्फुस हृदय को वायु प्रदान करता है (३) धमनियाँ हृदय से रूह हैवानी को सम्पूर्ण शरीर में पहुँचाती है और (४) शिराएं याकृदीय शोणित से सम्पूर्ण शरीर को आहार प्रदान करती है इत्यादि।

परन्तु आश्चर्य तो यह है कि आज दो सहस्र वर्ष पश्चात् भी उनके ये असत्य सिद्धांत यूनानी इतिब्बा में सत्य माने जाते है। शेख भी अरस्तू के अनुयायी थे।

भिन्न भिन्न विषयों में अरस्तू के बहुसंख्यक ग्रंथ है। पर उनसे से लगभग १०० से कुछ ही अधिक प्रसिद्ध हैं, जिनका वर्णन हकीम बतलीमूस (Ptolemy) ने किया है। सन् ईस्वी से ३२२ वर्ष पूर्व ६२ वर्ष की अवस्था में निज जन्मभूम में ही आपका स्वर्गवास हुआ।

अरस्त्-फा० छागलपाती, कलियालता-बं०। Swallow-wort ('Asclepiastunicata' Roxb) इं० हैं० गा२।

अरस्तून-यू० एक प्रकार का तीक्ष्ण मद्य।

अरस्तूनास-यू० खटिका, खरि- (टि) या मिट्टी, सेतखरी। (Chalk)

अरस्तूर–यू० भंगबूटी, भांग। (Cannabis indica)

अरस्तूलोखिया–यू० ज़रावंद, इसरमूल। (Aristolochia Indica)

अरस्मीन–फ़ा० एक बूटी का फल है जिसे घास के स्थान में घोड़ों को बृंहित करने के लिये खिलाते हैं।

अरह–अ० शशक, खरखोश, खरहा। (Hare)

अरह् जान–अ० हिन्दकूकी।

अरहट–हिं० संज्ञा पु० [सं० अरघट्ट, रेंटा, रहेट। पानी का चरखा, एक यंत्र जिसमें तीन चक्कर या पहिए होते हैं। इन पहियों पर घड़ों कीमाला लगी होती है, जिनसे कुएँ से पानी निकाला जाता है। (Anengine for raising water)

अरहड़–जय० आढ़की, तुवर, अरहर। A kind of pulsd (Cytisuscajan)

अरहदार्जून–खर्जूर वृक्ष। Phoenix dactylifera' Linn (Drie fruits of-Dates)

अरहन–हिं० संज्ञा पु० [सं० रन्धन] वह आटा या बेशन जो तर्कारी साग आदि पकाते समय उसमें मिला दिया जाता है। रेहन।

अरहर–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० आढकी, प्रा० अड्ढकी] (१) आढ़की, रहर। (Cytisus cajan)। (२) इसका बीज। तुवरी। तुवर। तूअर। पर्या०–तुवरी। वीर्य्या। करवीरभुजा। वृत्तबीजा। पीतपुष्पा। काक्षीगृत्स्ना, मृतालका। सुराष्ट्र जंभा।

अरहवी–हिं० स्त्री० आरी उरि, उरु।

अरहा–सं० आमला। (Phyllanthusemblica)

अरहिरे–का० नेनुआ, घोषालता।

अरहून–अ० वर्ग नील, वस्मह्। (The leaf of Indigo plant)

अरहूम–अरजून।

अरहेड़–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० हेड़] चोपायों का झुण्ड, लेहड़ी।– हिं०।

अरा–हिं० संज्ञा पु० दे० आरा।

अरा–अ० (१) शीत की तीव्रता, जाड़े का कड़ाका, शीताधिक्य।

–सिरि०। (२) तर्फ़ह्, गज़, भाऊ। (Tamarix gallicaLinn)

अराकू–यू० पीलू (जालवृक्ष), मिस्वाक। झालराजपु०। (Salvadoraoleoidesdcne)

–हिं० संज्ञा पु० [अ०] (१) एक देश जो अरब में है। (२) वहां का घोड़ा।

अराक़्–यू० करीला। (A tree)

अराज़–अ० देखो–इराज़। (Cautery)

अराज़म्–
अराज़म्– } –अ० सिंह, शेर, व्याघ्र। (Alion)

अराजि:–सं० स्त्री० धारीविहीन माँसपेशी। (Unstriped muscle),

अराजिकेसर:–सं० पु० धारीविहीन मांसतन्तु। (Unstriped muscle fibre)

अराड़ जाना–हिं० क्रि० अ० (१) गर्भपात हो जाना, बच्चा फेंक देना। गर्भ का गिर जाना। लड़ाना।

नोट—इस शब्द का व्यवहार प्रायः पशुओं ही के लिये होता है, जैसे-गाय अराड़गई।

अराति–सं० पु० शत्रु, दुश्मन।

अरातिम्–सं० क्ली० जीवन को नाश करने वाले रोग अथर्व०।

अरादीस–अ० अस्थि-सधि; हड्डियों के जोड़। मुफासिल उस्तख़ाँ अ०। बोन जाँइण्ट (Bone joint)–इ०।

अराब–अ० सन, शण(Crotalaria juncea)

अरायसुन्नील–अ० विश्नीन, नीलोफर के समान एक बूटी है।

अरार–अ० (१) उक़ह्वान, बाबूनह् गाब (Parthenium)। (२) जअ्रूर। See-zaarura.

अरारह्–अ० वह स्त्री जो केवल लड़के प्रसव करे। अर्थात् वह जिसके केवल लड़के उत्पन्न हों।

अरारा-हिं० पु० ददोड़ा, दरदरा।

अरारि:-रीहिं० स्त्री० करंजिया।

संस्कृत पर्याय—उदकीर्य, षड्ग्रंथा, हस्तिबारुणी, मर्कटी, वायसी, करंजी और करभंजिका। और करंज-मह०।

विवरण—यह उतकीर्य नामक करंज का ही एक भेद है। इसके बड़े बड़े वृक्ष बन में होते है, पत्ते पाकर पत्र के समान गोल होते और ऊपरका भाग चमकदार होता है। फल भी नीले नीले झुमकदार लगते हैं, पत्तों में दुर्गन्ध आती हैं।

गुणधर्म—यह करंज वीर्यस्तम्भक, कवया, कसैला, पाक में चरपरा, उष्ण वीर्य और बमन, पित्त, बवासीर, कृमि, कोढ़ तथा प्रमेह को नष्ट करता है। रा० प्र० ख०।

अरारी-हिं० स्त्री० करंज। (Pongamiaglabra)

अरारूट-हिं० संज्ञा पु० य० बम्ब० [अ० एरोरूट] (१) आरारोट मेरन्टा, (Maranta) ले०। ऐरोरूट (Arrow root) वेस्टइन्डियन ऐरोरूट (west Indianarrowroot) इं० विलायती तीखुर हिं०। कुअमऊ-ता० कुवेहित कना०। कुवा-मल० पेनवव्वा वर० अरारूट को।

आर्द्रक वा हरिद्रा वर्ग

(*N O. Scitaminœ*)

नांटऑफ़िशल (*Not official*)।

उत्पत्ति स्थान—यह एक भांति का श्वेतसार है जो मेरन्टा अरुन्डी नेसिया (Maranta Arundinacia) नामक वनस्पति की जड़ से प्राप्ति होता है। यह वनस्पति पूर्वीय भारतीय द्वीप वर्मिसरोडा और ब्राजी में उत्पन्न होती है, अब पूर्वी बंगाल, संयुक्तप्रांत और मदरास में इसकी कृषि होती है।

वानस्पतिव-वर्णन व इतिहास——

एक पौधा जो अमेरिका से हिंदुस्तान में आया है गरमी के दिनों में दो दो फुट की दूरी पर इसके कन्द गाड़े जाते हैं। इसके लिये अच्छी दोमट और बलुई जमीन चाहिये यह अगस्त से फूलने लगता है और जनवरी फरवरी में तैयार हो जाता है जब इसके पत्ते झड़ने लगते हैं तब यह पका समझा जाता है और इसकी जड़ खोदली जाती है खोदने पर भी इसकी जड़ रह जाती है इससे जहाँ यह एक बार लगाया गया वहाँ से इसका उच्छिन्न करना कठिन हो जाता है।

निर्माण-क्रम—इस वनस्पति की जड़ को पानी में खूब धोकरऔर स्वच्छ करके जलमें पीसते पुनः उसे मलकर छानते और एक ओर रख छोड़ते हैं इस प्रकार अरारूट अधक्षेपित हो जाता है।

लक्षण—यह एक हलका श्वेत वर्ण का चूर्ण है। जिसमें किसी प्रकार की ऊग्राह्य गंध वा स्वाद नहीं होता। यह अमेरिका का तीखुर है। इसका रंग देशी तीखुर के रंग से सफेद होता है।

टिप्पणी इसके अतिरिक्त कर्कुमा के कतिपय अन्य भेदोंसे भी अरारूट प्रस्तुत होता है जिन्हें अरारूट हिन्दीकहना अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है संस्कृत में उनको तवक्षीरम् और हिन्दी में तीखुर कहते है विस्तार हेतु देखो—तवक्षीरम् (Curcuma Angustifolia)

प्रभाव तथा उपयोग—यह पोषणकर्ता और स्नेहजनक है इसको प्रायः दुग्ध में पकाकर बालकों, निर्बल रोगों मुख्यतः आन्त्र वा मूत्र संस्थान विषयक रोगों के पश्चात् की निर्बलता में दिया करते हैं।

पाक-विधि—पहिले शीतल जलसे इसकी लेई सी बना लें तदन्तर उसमें खौलता हुआ दुग्ध डालकर उसका गाढ़ा सा लुआब बनालें। बाजार से जो अरारूट प्राप्त होता है उसमें प्रायः आलू के श्वेतसार का मिश्रण किया हुआ रहता है।

परीक्षा—सूक्ष्मदर्शक से इसकी भली भांति परीक्षा की जासकती है उसमें देखने से आलू के श्वेतसार के कण अरारूट श्वेसारीय कण से बड़े दीख पड़ते हैं। इं० मे० मे०। म० अ० डॉ०।

(२) अरारूट का आटा।

अरारुट करकमी-हिं० स्त्री० (Curcuma Arrowroot) अरारूट भेद। देखो अरारूट

अरारूटहिन्दी-हिं० स्त्री० (Indian Arrowroot) अररूट भेद देखो—अरारूट ।

अरारोबा-अं०।इं० गोआ पाउडर (Goa Powder)अर्थात् गोआ चूर्ण, क्रूड क्रायसारोबीन (Crude Chrysarobin) अर्थात् अपूर्ण वा कच्चा क्रायसारोबीन ।

आफ़िशल *Official*

(*N. O. Leguminosæ*)

उत्पत्ति-स्थान—यह औषधि ब्राजील देश के बाहिया नामक स्थान में पैदा होती है ।

इतिहास—पुर्तगाली भारत (गोआ) के देशी ईसाई इसको एक प्रकार त्वग्रोग में जिसे मराठी भाषा में गजकरण कहते हैं, लगाया करते थे और उक्त औषधि उनके गुप्त योगों में से थी अस्तु सर्व प्रथम यह बम्बई में १२) से ३०) प्रतिटिन के भाव से जिसमें एक पौंड (अर्द्धसेर) औषधि होती थी, विक्रय हेतु अकस्मात् आया करती थी और दद्रुघ्न चूर्ण (Ringworm Powder), गोआ चूर्ण (Goa Powder) ब्राजील चूर्ण (Brazil Powder) प्रभृति नामों से विख्यात थी । माननीय डी० एस० केम्प महोदय ने सर्व प्रथम सन् १८६४ ई० में इसकी ओर ध्यान दी । तदन्तर क्रमशः अन्य डाक्टरों ने इस ओर ध्यान दिया ।

भारतवर्ष में इसके प्रथम प्रवेश की ठीक तिथि अज्ञात है । नई दुनियां के अन्य पैदावारों के समान सम्भवतः १८ वीं शताब्दि के पश्चात्काल में ईसाई यात्री इसे यहां ले आये । केम्प महाशय ने इसकी परीक्षाकी ओर वे इस परिणाम पर पहुँचे कि इसमें माननीय पेलोज़ (Pelouze) तथा फ्रेमी (Fremy) वर्णित आर्केला वीड (Orchella weed) में होने वाले सत्व के समान ही एक प्रकार का सत्व विद्यमान है । ऐटफ़ील्ड (Attfield) ने सन् १८७५ ई० में इसकी ओर सर्वांग पूर्ण परीक्षा की ओर क्रायसारोबीन (Chrysarobin) नामक पदार्थ जो उनकी कल्पना में मुख्य कर क्राइसोफेनिक एसिड (Chrysophanic Acid) था पाया उसी वर्ष ब्राजील डांडतेर जे० एफ० डा० सिल्वा लाइमाने सूचिनकी भारतवर्ष में जो पदार्थ गोआ पाउडर के नाम से प्रख्यात है, वह सम्भवतः ब्राजील देश निवासियों का अरारोबा या अरारीबा (धूसर वर्ण का चूर्ण) ही है जिसे पुर्तगाल निवासी उक्त प्रान्त में होने के कारण पांडी बाहिया (Pode Bahia) या बाहिया पाउडर कहते थे उक्त डाक्टर महोदय ने यह भी बतलाया कि वह एक वन्य जातीय वृक्ष से प्राप्त होता है और ब्राज़ील में चिरकाल से कतिपय त्वग्रोगों में प्रयुक्त होता रहा है । इसके कुछ ही समय पहले कलकत्ता के डॉक्टर फेयरर ने सिरका या नीबू स्वरस संयुक्त गोआ पाउडर कल्क के प्राक्थित औषधीय उपयोग विषयक गुण की ओर चिकित्सकों का ध्यान आकृष्ट किया एसा प्रगट होता है कि उनके लेख ने डॉ० सिल्वा लाइमा महाशय का भी ध्यान उक्त विषय की ओर आकृष्ट किया ।

माननीय ई० एम० होमस ने बतलाया कि वह काष्ट जो गोआ पाउडर से प्राप्त होता है वह (Cœsa pilnia echinata, Lian) के बहुत समान हैं परन्तु जे० एल० मेकमिलन ने बतलाया कि उक्त काष्ठ से जल रञ्जित हो जाता है और यह बात अरारोबा में नहीं है ।

सन् १८७८ ई० में सी० लीवरमेंन तथा पी० सीडलर ने प्रगट किया कि क्राईसारोबीन (क ^{३०} उद ^{२५} ऊ ^{७}) अभी तक एक यौगिक है तथा ऐटफील्ड द्वारा निवेदित नाम को ही आपने स्थिर रक्खा ।

सन् १८७६ ई० में अरारोबा का प्राप्तिस्थान एण्डीरा अरारोबा (Andira Araroba' *Aguiar*) स्थिर किया गया । यह बाहिया के आर्य वनों में सामान्य रूप से होने वाला एक बृहत वृक्ष है जिसे वहाँ के लोग ऐन्जेली अमर गोसो (Angelim amargoso) कहते

है अरारोबा तने के छिद्रयुक्त खोखले भागों में रहता है ये तने में चौड़ाई (व्यास) की रुख आर पार तक रहते और सम्पूर्ण तने के बीच प्रसरित होते हैं। प्राप्तिविधि—वृक्ष को काटकर तथा तने को चीर फाड़कर खोखलों से अरारोबा चूर्ण को खुरच लेते हैं। इसे लकड़ी के टुकड़ों या रेशों आदिसे स्वच्छ करके तथा शुष्क कर चूर्ण कर लेते हैं।

लक्षण—यह एक खुरदरा चूर्ण अथवा सूक्ष्म विषम कण है जो आरम्भ में हलका पीतवर्ण का, परन्तु प्रकाश एवं नमी में खुला रहने पर साधारणतः गम्भीर वर्ण से मन्द पीत, पीत-धूसर या अम्बरी धूसर अथवा गम्भीर बैंगनी वर्ण का हो जाता है। स्वाद—तिक्त (डाइमाँक)

यह क्रायसारोबीन के निर्माणमें प्रयुक्त होता है। यदि इसको उष्ण क्लोरोफार्म में मिलाया जाए तो क्लोरोफार्म द्वारा वाष्प उड़ जानेके पश्चात् उक्त चूर्णमें से न्यूनातिन्यून ५०% क्राइसारोबीन प्राप्त होना चाहिये।

क्राईसारोबीन (Chrysarobin)-इं० क्राईसारोबीनम् Chrysarobinum-ले०।

निर्माण-विधि—अरारोबा (गोआ पाउडर) को उष्ण क्लोरोफार्म वा उष्णबेञ्जीन के साथ एक्सट्रैक्ट करके शुष्क होने तक वाष्पीभवन क्रिया कर इसे चूर्ण करलें।

रासायनिक संगठन (या संयोगी अवयव) इसमें (१) क्राइसारोबीन ($C_{15}H_{12}O_3$) जिसको रहीईन या क्राइसोफ़ोन भी कहते हैं। (२) क्राइसोफ़ेनिक एसिड, अवस्था और दशानुसार यह न्यूनाधिक होता है; औषजनीकरण क्रिया द्वारा अधिक क्राइसोफेनिक एसिड प्राप्त होता है।

एलेन (Allen) के मतानुसार क्राइसोफेनिक एसिड, एसिड और क्राइसारोबीन का एक अनिश्चित मिश्रण है इसमें पिकरिक एसिड तथा अन्य पीत रञ्जक पदार्थ का मिश्रण किया जाता है।

नोट—अरारोबा या गोआपाउडरसे ५५ से ८०% प्रतिशत और औषतन् ७१% प्रतिशत क्राइसारोबीन प्राप्त किया जाता है।

लक्षण—क्राइसारोबीन एक स्फटिकवत् पीत वर्ण का चूर्ण है जो गंधरहित और जल में अविलेय होने के कारण स्वाद रहित होता है।

घुलनशीलता—यह जलमें लगभग अविलेय, मद्यसारमें कुछ कुछ विलेय तथा एमायलिक-अलकोहल, ईथर, कोलोडिअन तथा क्लोरोफार्म में पूर्णतः विलेय होता है।

३२३°६० फ़ारनाइटके उत्ताप पर यह पिघल जाता है और आंशिक ऊर्ध्वपातित भी होता है। घन गंधकाम्ल में यह घुल जाता है तथा घोल पीतवर्ण का होता है। अधिक जल मिश्रित पोटास घोल में यह लगभग अविलेय होता है। इसके विपरीत क्रायसोफेनिक एसिड घन गंधकाम्ल में घुल जाता है तथा अधिक जल मिश्रित पोटास घोल में भी घुल जाता है तथा घोल का रङ्ग लाल हो जाता है।

परीक्षा—यदि क्राईसारोबीन को २००० भाग जल में उबाला जाय तो यह पूर्णतः नहीं घुलता और छाना हुआ पदार्थ सुर्खीमायल धूसर वर्ण का, स्वाद रहित टेस्ट पेपर (न्यूट्रल) तथा लौह हरिद से अरञ्जित रहता है। क्रायसारोबीन १२० भाग उष्ण मद्यसार में पूर्णतः विलेय होता है।

व्यापार—अरारोबा अधिक परिमाण में भारतवर्ष में आता है और क्रायसारोबीन, अरारोबीन तथा गोआ पाउडर नाम से विक्रीत होता है मात्रा-$\frac{1}{6}$ से आधा ग्रेन (पी० बी० एम०)।

कार्य—त्वग्रोगों में कीटघ्न (Antiparsitic) है।

ऑफिसल योग

(*Official preparations*)

औषध निर्माण—क्रायसारोबीन प्रलेप अङ्गुएण्टम् क्रायसारोबीनाई (Unguentum Chrysarobini) ले०। क्रायसारोबीन

आइन्टमेन्ट (Chrysarobin Ointment) इं० । मर्हम क्रायसारोबीन-उ० ।

निर्माण विधि—क्राइसारोबीन २० ग्रेन, वेजेटेबुल लार्ड वा साफ्टपैराफीन ४८० ग्रेन । लार्ड को पिघला कर उसमें क्रायसारोबीन सम्मिलित करलें ।

प्रभाव व उपयोग—चम्बल वा विचर्चिका (Psoriasis) के लिये यह पराश्रयी कीटघ्न वा उत्तेजक प्रयोग है ।

नॉट ऑफिशल योग
और पेटेन्ट औषधें
(*Not official preparations*)

(१) अङ्गुएण्टम् क्राईसारोबीनी कम्पाँजिटम् (Unguentum Chrysarobini compositum) ले० । कम्पाउण्ड ऑइंट मेंट ऑफ क्राइसारोबीन (Compound ointment of Chrysarobin) इं० । मिश्रित क्राइसारोबीन प्रलेप हिं० । मर्हम क्राइसारोबीन मुरक्कब' मुरक्कब मर्हम क्राइसारोबीन उ० ।

निर्माण विधि—क्राइसारोबीन ५ भाग' सैलीसिलिक एसिड २ भाग, इक्थिओल ५ भाग वैजेलीन ८८ भाग सबको परस्पर योजित कर मरहम बना लें ।

उपयोग—चम्बल या विचर्चिका (Psoriasis) के लिये लाभप्रद है ।

(२) पिग्मेण्टम् क्राइसारोबीन (Pigmentum Chrysarobini) ले० तिलांए क्राइसारोबीन फा० ।

निर्माण विधि—क्राइसारोबीन १ भाग क्लोरोफार्म १० भाग' गट्टापार्चा टिशू १ भाग दोनों औषधों को क्लोरोफार्म में हल करलें (इस से कपड़े पर चिन्ह नहीं पड़ता ।

उपयोग—चम्बल (Psoriasis) पर ब्रुश के द्वारा १० दिवस पर्यन्त प्रतिदिन दो वार लगाते रहने से बतलाते कि उस जगह पर पानी न लगने पाए रोग निवृत्ति हो जाती है ।
(एक्सट्राफार्माकोपिया)

(३) पिग्मेण्टम् क्राइसारोबीनी एट पाइरोगैलोल (Pigmentum Chrysarobinet Pyrogallol) ले० तिलांए क्राइसारोबीन व पाइरोगैलोल अ० ।

निर्माण विधि—क्राइसारोबीन १ भाग, पाइरोगैलोल १ भाग ईथर और क्लोरोफार्म में प्रत्येक १० भाग, क्लोडीन १२० भाग प्रथम दो औषधों को ईथर और क्लोरोफार्म में घोलकर इस में क्लोडीन सम्मिलित करें ।

उपयोग—चम्बल (Psoriasis) और दद्रु पर उसे पोंछकर प्रति तीसरे दिन इसे लगाने से बहुत लाभ होता है (एक्सट्रा फार्माकोपिया)

(४) सपाँजिटोरियम् क्राइसारोबीनी (Suppositorium Chrysarobini) ले० । क्राइसारोबीन वर्तिका-हिं० । शियाफ क्राइसारोबीन ।

निर्माण विधि— क्राईसारोबीन १½ ग्रेन आयोडोफार्म $\frac{3}{10}$ ग्रेन बिलाडोना एक्सट्रक्ट $\frac{1}{10}$ ग्रेन ग्लीसरीन आवश्यकतानुसार जिससे कि उचित वर्ति प्रस्तुत हो जाए और काका उबटर १० ग्रेन पर्यन्त ।

उपयोग—इस वर्ति के प्रयोगसे अर्श में बहुत लाभ होता है । (एक्सट्रा फार्माकोपिया)

(५) एन्थ्रोरोबीन (Anthrarobin) इसका प्रलेप रूप से क्राइसारोबीन के स्थान में प्रयोग करते हैं ।

(६) लेनीरोबीन (Lenirobin)-यह भी क्राइसारोबीन का एक यौगिक है । जिसको पुरातन नार फारसी या जबलनदार विस्फोटक (Chronic Eczema) और पुरातन वर्म (विचर्चिका) पर लगाते हैं ।

(७) यूरोबीन (Eurobin) यह एक पीत वर्ण का चूर्ण है जिसको क्राइसारोबीन के स्थान में बरतते हैं ।

उपयोग—इसका २ या ३ % का घोल चम्बल (Psoriasis) और दद्रु (Ring worm) के लिये लाभदायक है, इससे न तो त्वचा पर खराश (क्षोभ) होती है और न कपड़े पर चिन्ह पड़ते हैं।

क्राइसारोवीन की फार्माकालॉजी अर्थात् औषधीय प्रभाव

वहिः प्रभाव—त्वचा पर क्राइसारोवीन का सशक्त क्षोभक (Powerful irritant) प्रभाव होता है अस्तु इसके प्रयोग से त्वचा पर ददोड़े निकल आते हैं मुख्यतः स्वस्थ त्वचा पर क्योंकि बिकारी त्वचा पर इससे उतना क्षोभ नहीं उत्पन्न नहीं होता वानस्पत्य जीवाणु विषयक त्वग्-रोग को उक्त औषध नष्ट करती है। अस्तु, यह सशक्त पराश्रयी कीटघ्न भी है इसका स्थानिक वा सार्वाङ्गिक दोनों प्रभाव होता है यह त्वचा द्वारा शोषित हो जाता है और इससे त्वचा पर पीताभायुक्त धूसर वर्ण के चिन्ह पड़ जाते हैं। वस्त्र पर भी इससे उसी प्रकार के चिन्ह पड़जाते हैं।

अन्तः प्रभाव—अति न्यून मात्रा (१/८ ग्रेन में देने से भी यह आमाशय वा आन्त्र को अत्यन्त क्षुभित करता है, जिससे क्षुधा कम हो जाती है वमन आते हैं और पेट में ऐंठन होकर मल आते हैं अर्थात् प्रवाहिका के से लक्षण उपस्थित होते हैं, अस्तु उक्त औषध सशक्त आमाशय वा आंन्त्र क्षोभक (Powerfulgastro intestinal irritnt) है।

विसर्जन—यह किसी भाँति त्वचा द्वारा, किन्तु अधिकतर वृक्क द्वारा शरीर से विसर्जित होता है और इससे मूत्र का रंग पीत व नीलगूँ हो जाता है।

क्राइसारोवीनके उपयोग अर्थात् थेराप्युटिक्स

वहिः उपयोग—पराश्रयी कीटघ्न रूप से इसको दद्रु (Ringworm) तथा कई अन्य पुरातन रूक्ष त्वग्रोगो जैसे चम्बल अर्थात् विचर्चिका (Psoriasis) ज्वलनशील फुन्सियाँ (Eczema) यौवन पीड़िकाओ (Acne) पर लगाते हैं। यद्यपि यह बात प्रमाणित करना कि जीवांणु ही उन रोगों के उत्पादक कारण हैं अभी शेष रह जाता है, तथापि विचर्चिका (Psoriasis) रोग में इसका मुख्य उपयोग होता है अस्तु १ आउंस वेंजेलीन को तप्त कर $\frac{1}{3}$ से आधा वा १ ड्राम क्राइसारोवीन मिलाकर ऐसा प्रलेप दिन में २ समय लगाने से उक्त रोग शीघ्र दूर हो जाता है और इसी भाँति उपयोग करने से यह त्वचा द्वारा शोषित होकर विचर्चिका (Psoriasis) के ऐसे धब्बों को भी दूर कर देता है कि जिनमें इसका वहिरप्रयोग नही किया जाता इससे प्रायः आस पास की स्वस्थ त्वचा पर व्यवस्थापूर्ण विसर्पीय प्रदाहहोता वा वेगनी धब्बे पड़ जातेहैं जिससे किसी किसी रोगमें इसका उपयोग नहीं किया जा सकता, विस्तीर्ण अनुभव के पश्चात् लेखक (Sir W- whitla) को इस बात से सन्तुष्टि हुई, कि यदि उक्त प्रलेप को केवल रोग स्तल तक ही सीमित रक्खा जाय एवं स्वस्थ त्वचा को उसका स्पर्श न होने दिया जाय तो इसकी अवस्यकता हीन हो, आपकाविश्वास है कि [यह छोटी सी बात इसकी चिकित्सा की सफलता का गूढ़ तत्व है।

डॉक्टर फॉक्स ने क्राइसारोवीन को जल के साथ पीस कर इसका कल्क प्रस्तुत कर इसे धब्बों पर लगा ऊपर कोलेडिअन से आवरित करने की सम्मति दी है। (Tramaticine) अर्थात् गट्टापर्चा इससे भी श्रेष्ठतर, सिद्ध होगा, ब्रूक प्रलेप वर्तिकाएँ Brookes, salve sticks उससे भी उत्तम होती है, परन्तु पूर्वोक्त सम्पूर्ण विधियों में से सर्वोत्तम विधि लेखक ह्विटलों की राय में धब्बे को औषधि के तीव्र कठिन प्रलेप या कल्क द्वारा आवरित कर रखना और उसके सिरे पर रवर प्रस्तर का एक बड़ा टुकड़ा स्थापित करना है।

विचर्चिका (Psoriasis) रोग से पीड़ित प्राणी के शरीर की एक ओर के विकारी स्थलपर

प्रलेप के मर्दन से उसका स्थानिक प्रभाव देखा जा सकता है। सप्ताह अथवा दस दिवस में उक्त ओर की त्वचा के सुधार का निश्चित चिह्न दिखाई देता है। इसकी दूसरी ओर की त्वचा पर भी यह इससे कम स्पष्ट नहीं होता है, और उक्त औषध को यथोक्त विधि द्वारा उपयोग करने से विकृत धब्बे लुप्तप्राय होने लगते हैं, तब उस ओर की त्वचा भी जिस ओर औषध नहीं लगाई गई है, परिणामस्वरूप सुधार के चिह्न प्रगट करने लगती है, लेखक ने उक्त औषध को निरन्तर उस स्थल पर लगाने से जिसपर सर्व प्रथम औषध लगाई गई हो शरीर के सम्पूर्ण पृष्ठतल को रोग मुक्त होते हुये पाया, सम्भवतः ऐसा औषध के शरीर में शोषित होजाने और विकारी क्षेत्र तक पहुंचाए जाने के कारण होता है। (भे० मे० ह्विटेलॉ)

"विस्फोटक, विचर्चिका (Psoriasis) एवं दद्रु प्रभृति त्वारोगों में शीघ्र एवं निश्चय प्रभावकारी जो औषध मुझे मालूम हुई है यह गोआ पावडर तथा नीबू स्वरस वा सिरका है। इनको दिन में २ या ३ वार निरन्तर लगाने से पूर्ण लाभ होता है। प्रलेप विधि—थोड़ी सी दवा को सिरका या नींबू के रस में घोलकर जब वह मलाई की भाँति होजाय तब उसे विस्फोटक पर कुछ दूर तक प्रलेपित कर दें। (डाइमांक)

अन्तःप्रयोग—क्राइसारोबीन के अन्तःप्रयोग से विचर्चिका (Psoriasis) ज्वलनशील विस्फोटक (Eczema) तथा यौवनपीडिका अर्थात् मुंहासा प्रभृति में लाभ होता है, परन्तु अति न्यून मात्रा मे (१/६ ग्रेन) में भी इससे प्रायः उदरमें रेचन रेचन वमन व होते है, क्षुधा कम हो जाती है। और व्यग्रता प्रतीत होती है। अस्तु, इस का अन्तःप्रयोग न करना चाहिये।

योग निर्माण विषयक आदेश—क्राइसारोबीन को मुख मण्डल पर नहीं लगाना चाहिये क्योंकि इसके क्षोभ से नेत्राभिष्यन्द होने का भय रहता है। परन्तु शिर पर १२ ग्रेन प्रति आउंस वाला प्रलेप लगा सकते हैं।

क्राईसारोबीन को एकही समय शरीर के अधिक भाग पर नहीं लगाना चाहिए, क्योंकि इसके शोषित हो जाने से बुरे लक्षण उपस्थित होने का भय रहता है। अस्तु, यदि शरीर पर बहुत विस्तीर्ण दद्रु हो तो उसके थोड़े थोड़े भाग पर दवा लगाते रहे। जब एक ओर से यह अच्छा हो जाए तब दूसरी ओर दवा लगाएँ।

वस्त्र पर जो क्राइसारोबीन प्रलेप का चिह्न पड़ जाता है वह वानस्पतिकाम्ल, पोटाश या क्लोरोरिनेटेड लाइम के हलके घोल से दूर हो जाता है। अथवा उस पर प्रथम बेन्जीन लगाकर उसकी चिकनाई को दूर करें और फिर उस पर क्लोरीनेटेड लाइम का घोल लगाये, कभी कभी किञ्चित् कास्टिक सोडा का घोल भी लगाना पड़ता है।

अरालः-सं० पु०
अराल-हिं०संज्ञा पु० } (१) धूप, धुना, राल, सर्ज़रस-हिं०। धुना-बं०। राल-मह०। (Resin)। (२) शाल वृक्ष (A saltree)। (३) मत्तहस्ति (Anintoicatedelephant)। मे०। वि० कुटिल। टेढ़ा।

अरालिएसीइ—ले०, तापमारी वर्ग।

अरावह-अ० मादा टिड्डी; (A female locust),

अराह-मर० तगी, मस्तकी। (Mastiche)

अरिः-सं० स्त्री० अरि नामक खदिर, खदिर विशेष, कत्था। खदिर विशेष-बं० आरि-मह०। शीगुरि कं०। (Catechu) पर्याय-सन्दानिका, दाक्षी खदिरपत्रिका। गुण-कषेला, कटुक, तिक्त और रक्तपित्तनाशक है। रा० नि० व० ८। देखो-खदिर।

अरिः-हिं० संज्ञा० पु० [सं०] (१) रिपु, शत्रु (An enemy)। (२) विट्खदिर। दुर्गन्ध खैर। अरिभेद। (*Acacia Farnesiana Willd*) (३) चक्र। -मह० (१)

चावल। Rice-Seeds or grains without htsk (Coryzasativa Linn) इं० फा० इं०।

अरिआलु-पीपल, अश्वत्थ। (Ficus religiosa) फा० इं० ३ भा०।

अरिइकन्-मल० मछली का सरेस, सिरेशमें माही, Iothyocolla (Isingglass)।

अरिक-अ० अर्थ का ठीक होना, पूरित होना। इन्दिमाज और तक्कर कुश के भेद के लिये देखो हम्स।

अरिङ्ग-राजपु० श्वेत बबूर वृक्ष, सफेद कीकर। (Acacia leucophlœa' *Willd*)।

अरिचारायम्-मल० चावल मद्य, चावल की शराब या दारू (Liuor of rice) स० फा० इं०।

अरिजन-हिं० संज्ञा पु० एक निष्क्रिय वायव्य विशेष, आरगन (Argon)-इं०।

अरिञ्ज-हिं० संज्ञा० पु० [देश०] (Acacia-leucophlœa; Willd.) एक प्रकार का बबूल। यह पंजाब, राजपूताने, मध्य और दक्षिण भारत तथा बरमा में पाया जाता है। इसका छिलका रेशेदार होता है और इससे मछली पकड़ने का जाल बनाया जाता है। इससे एक प्रकार का गोंद भी निकलता है जो पानी में घोला जाने पर पीला रंग पैदा करता है। यह अमृतसरी गोंद कहलाता है इसे बबूल की गोंद के साथ मिलाकर भी बेचते हैं। पेड़ की छाल को पीसकर गरीब लोग अकाल में बाजरे के आटे के साथ खाने के लिये मिलाते हैं। इसमें एक प्रकार का नशा भी होता है और यह मद्य में भी मिलाई जाती है। इसीलिये आरंज को शराब का कीकर कहते हैं। २ सफेद बबूल। अरिक्र। श्वेत बबूर वृक्ष।

अरितमञ्जरी-सं० स्त्री० कुण्डली, हरितमञ्जरी। (Clerodendron Inerme)

अरितारम-ता०
अरिदला-कना०
अरिन्दाल-स० } हरि (ड)ताल Orpiment (Trisulphuret of Arsenic)

अरिपूरिमः-सं० पु० बिड्खदिर, अरिमेद, दुर्गन्ध खैर, गूहकीकर। गुये बाबूला वं०। गंधी हिंवर-मह०। (Acacia Farnesia-na) वै० निघ०।

अरिप्र-सं० दुःख रहित। निष्पाप। अथर्व०। सू० ५। २४। का० १०।

अरिम-सं० पु० बिट्खदिर, अरिमेदः गूहकीकर। (Acacia Farnesiana) रत्ना० भैष० मुखरो० चि०।

अरिमत्स्य-हिं० पु० मत्स्य विशेष। (Arius arius, *Ham. & Buch.*)

गुण—इसका मांस कठिनता से पचने वाला पिच्छल, हृदयोत्तेजक, स्मृतिवर्धक तथा वात-व कफवर्धक है। (इं० डू० इं०)

अरिमदः-सं० पु० 'कासमर्द' चुप कसौंदी काश काशन्दा-बं० काशविन्दा-मह०। (Cassia Sophora) रा० नि० व० ४।

गुण—इसका पत्र रुचिकारक, वस्तिकारक, विष, कास तथा रक्तनाशक है और मधुर वात कफनाशक, पाचक, कण्ठशोधक तथा विशेष रूप से कासहर, विषघ्न, धारक और हलका है। भा० पू० १ भा०।

अरिमाशत-सं०पु० खदिर खैर वृक्ष Catechu tree(Acaciacatechu, *Willd.*)

अरिमेदः,-कः- सं० पु०
अरिमेद हिं० पु० }

(१) एक वृक्ष। (A kind of taee)(२) एक बदबूदार कीड़ा गँधिया। गंधी। (A green bug)। (३) बिट्खदिर। गूह बबूल, गन्धाबुल, दुर्गन्ध खैर, बिलाइती बबूल कीकर हिं० गू-कीकर-द०। बिटः, हरिमेदहः, आसमदः दरिमेदः, क्रिमिशात्रयः, मरुद्रुम कालस्कंधः, (रा० नि०), काम्बोजी, मरुजः, बहुसारः गौरटः अमराज, पत्रतरु, सारखदिरः, महासारः, क्षुद्र-खदिरः, दुष्खदिरः, (रा० नि०) ईरिमेदः, रिमेदः, गोधास्कन्धः, अरिमेदकः, अहिमारः,

पूतिमेदः, अहिमेदः, बिट्खदिरः–सं० । गू-बाबूल, गुया-बाव्ना, बिट्खयेर, गुयेबाबूला, दुर्गंधखदिर, कांटानागेश्वर,–बं० अकेशिया फार्नेशियाना या मायमोसा फार्नेशियेना (Acacia farnesana, *Willd*, syn, mimosa farnesiana, Linn.)-ले० । पिय वेलम् हिय्-वेज्ञ, वेद्दवला, पिक्करु-बिल-ता० । पिचि तुम्म कस्तु-तुम्म, नाग-तुम्म-ते० । पी-वेलम्, करी-वीलम्–मल० । करी जली, करयवेलु, जाली –कना० । गु बावल–गु० । गन्धो-हिम्बर, गुइबवल-मह० । नन्लूँ–मैं-बर्मी० । कुए-बवल –सिंध० । कुसरी-झाड़-कों० ।

शिम्बी वर्ग

(*N. O. Leguminosae*)

उत्पत्ति-स्थान––सम्पूर्ण भारतवर्ष, हिमालय से लेकर लंका पर्यन्त ।

संज्ञा-निर्णायक-नोट–अरिमेदकी ताजी छाल और काष्ठ की गंध मानुषी विष्ठा के तद्वत् होती है । अस्तु, उपर्युक्त प्रायः इसके सभी पर्याय बिट्-गंधि बोधक हैं। तेलगु नाम कस्तूरि-तुम्म जो किसी किसी ग्रंथ में इसके परियाय स्वरूप लिखा गया है और जिसका अर्थ कस्तूरी-गंध बबूर होता है इसके लिये प्रयुक्त नहीं किया जाना चाहिये । कारण स्पष्ट है । मेसर्स नेचरल प्रोडक्शन्स ऑफ़ बर्मा नामक ग्रंथ में इसके दो पर्याय और लिखे गये हैं । यथा–(१) न्नूलून खैन जिसका अर्थ उत्तम गंध और (२) जिसका अर्थ दुःगंध है । इनमें से प्रथम शब्द का इसका पर्याय होना संदेह पूर्ण है । कारण वही है जैसा तेलगु शब्द कस्तूरी-तुम्म के लिये वर्णन किया है । इसीकारण इन संज्ञाओं को उपर्युक्त तालिका में नहीं लिखा गया ।

दक्खिनी संज्ञा गू–कीकर कभी कभी पार्किन-सोनिया एक्युलिएटा (Parkinsonia aculeata) केलिये भी प्रयुक्त होता है; परन्तु इसको जंगली कीकर कहना अधिक उपयुक्त होगा ।

वानस्पतिक-वर्णन––इसके वृक्ष सर्वथा (बबूल कीकर) वृक्ष के समान होते हैं, केवल भेद यह है कि इसके काँटे छोटे होते हैं और इसके पत्र आदि से बिष्ठावत् गंध आती है, (पूर्ण विवेचन हेतु देखो-बब्बूर वा खदिर ।)

इससे एक प्रकार का निर्यास निर्गत होता है जो गोलाकार अश्रुरूप में प्राप्त होता है । इनमें क्रमशः पाडु, पीत तथा गंभीर रक्ताभधूमरवर्णों की श्रेणियां होती हैं । डेकन में बम्बई और पूनाके आस पास जो गोंद एकत्रित की जाती है वह अल्प विलेय होती है ।

रासायनिक-संगठन––इसके पुष्प द्वारा प्रस्तुत तैलमें बेञ्जएल्डीहाइड, सैलिसिलिक एसिड, मीथिल सैलीसिलेट, बेञ्जिल एलकोहल बेन-उल्डीहाइड प्रभृति होते हैं ।

प्रयोगांश––कांड तथा मूलवल्कल, पत्र, निर्यास फली और पुष्प ।

औषध-निर्माण––क्वाथ, लुआब, तैल (अरिमेदादि तैल–च० द०) ।

मात्रा–वल्कल, काष्ठ तथा पुष्प चूर्ण १-१ आना भर । सार (खैर)-½-२ आनाभर काष्ठ वल्कल क्वाथ –५–१० तो० ।

गुणधर्म तथा उपयोग

आयुर्वेदीय मतानुसार––

अरिमेद कसेला, उष्ण, तिक्त, भूतघ्न है और शोफ (सूजन) अतिसार, कास तथा विसर्प का नाश करनेवाला है ।

विटखदिर कटु, उष्ण, तिक्त, रक्त के दोष तथा व्रणदोष नाशक है तथाकण्डू (खुजली), विष, विशर्प नाशक और ज्वर कुष्ट उन्माद तथा भूत-बाधाहरण करने वाला है । रा० नि० व० ८ ।

मुख एवं दन्त के रोग नाश करने वाला तथा कण्डू, (खुजली) विष, श्लेष्म, कृमि, कुष्ठ और व्रण नाशक है । मद० व० ५ ।

कषैला, उष्ण, तिक्त, भूत विनाशक है तथा मुख रोग और दन्त रोग नाशक रक्तदोष, रुधिर विकार, कण्डू, (खुजली), कृमि, कफ, शोथ,

(सूजन), अतिसार, कास, विसर्प, विष, कुष्ठ, और व्रण का नाश करने वाला है, भा० पू० १ भा० वटादि । भैष० मुखरो० चि० । च० सू० ४ अ० ।

नव्यमत

प्रभाव--संग्राही (संकोचक), स्निग्धताकारक और परिवर्त्तक वल्कल संकोचक अर्थात् ग्राही और पुष्प उत्तेजक है ।

उपयोग--इसकी छाल का क्वाथ (२० में १) संकोचक मुखधावन है । इसहेतु मसूढ़ों से रक्त आने प्रभृति में यह लाभदायक है, इसकी गोंद अरबी बब्बूर निर्यास (Gum arabic) की उत्तम प्रतिनिधि है; परन्तु जल में डालने से यह सरेशवत् होजाती है । इसकी कोमल पत्तियों को किञ्चित् जल में पीसकर पूयमेह अर्थात् सूजाक रोगी को पिलाते हैं। इसके पुष्प को स्रवण करने पर इससे एक प्रकार का सुस्वादु इतर प्राप्त होता है; जो परिवर्तक प्रभावके लिये प्रसिद्धहैं इसमें एक प्रकार का तैल होता है । शुक्रमेह में कामोद्दीपक औषधोंके सहायक रूप से इसका उपयोग करते हैं ।

अरिमेदाद्यतैलम्-सं० क्ली० यह तैल मुख रोग में हितकारक है पाठ-मूर्छित तिल तेल ८ श० क्वाथार्थ विटखदिर (गुहब्बुल) १२॥ श० जल ६४श० में पकाएँ, जब १६ श० शेष रहे तब इसमें मजीठ का २ तोला कल्क डालकर विधिवत् तेल सिद्धकर कार्यमें लायें च० द० मुखरो० चि० ।

अरिय वेप्प-मल० नीम, निम्ब । (Azadirachta Indica, *Juss.*) स० फा० इं० ।

अरिया पोरियम्-मल० ऐण्टिडेस्मा बुनियास, (Antidesma Bunis, *Spreng*) स्टिलेगो बु० (Stilagodbnias, *Linn. Roxb.*)-ले० ।

उत्पत्ति-स्थान-भारत के समग्र उष्ण-प्रधान प्रदेश ।

उपयोग--अम्ल एवं स्वेदक, पत्र सर्पदंशमें प्रयुक्त होते हैं नए रहने पर इसे उबाल कर औपदंशिक शरीर विकार में उपयोग करते हैं । (लिण्डले)

अरिशि-ता० चावल (Rice) स० फा० इं० ।

अरिशिना-कना० दरिद्रा हलदी (Curcuma Longa, *Linn* (Root of) स० फा० इं० ।

अरिशि शाडायाम-ता० चावल की दारु, चावल की शराब (Liquor of rice.) स० फा० इं० ।

अरिष्टः-सं० पु०
अरिष्ट-हिं० संज्ञा पु० } (१) रीठा

(ठी) का पेड़, फेनिल, निर्मली, रीठा, वृक्ष, रीठा करञ्ज-हिं० । रिटे गाछ बं० Soapberry plant (Sapindus trifoliatus) रा० नि० व० ६ । मे० गुण-रीठा पाक में कटुक (चरपरा), तीक्ष्ण, उष्णवीर्य, लेखन, गर्भपातक स्निग्ध तथा त्रिदोषघ्न है और गृहपीड़ा दाह तथा शूलनाशक है बं० निघ० । (२) रसोन, लसुन, लहसुन, । Garlic (Allium Sativum) प० मु० । रा० नि० व० २३ । वा० सू० १ भा० , (३) निम्न वृक्ष नीम The neemb tree (Melia azad-dirachta) रा० नि० व० २३ । प० मु० । वा० सू० । १५ अ० । गुडूच्य दि । "गुडूची पद्यकारिष्ट--" च० द० पित्तश्लेष्म ज्व० अमृताष्टक--। गुडूचीन्नयवारिष्ट--" सु० सू० ४३ अ० संशोधन । (४) काक, कौआ । (Acrow) हारा० । (५) कङ्क पक्षी, मांस भक्षी गिद्ध । (A vulture or heron) (Ardea lorra and putea) (६) सुरा विशेष । औषध को जल में क्वथित करके पुनः उसमें मीठा आदि छोड़ संधान करने से सिद्ध किये हुये मद्यकी अरिष्ट संज्ञा है कहा भी है—

अरिष्टः क्वाथ सिद्धः स्याद् ।

(प० प्र० ३)

स एव क्वथितोषधैररिष्ट । वा० टी० हेमाद्रिः ।

क्वाथ सिद्धो वारिष्टः । शार्ङ्गः ।

इक्षुविकार सहितामया-चित्रक-दन्ती-पिप्पल्यादि-भूरि भेषज क्वाथादि सस्कारवानरिष्टोऽभिधीयते । राज० ।

पक्वौषधाम्बुसिद्धं यत् मद्यं तस्यादरिष्टकम् । भा० पू० मद्य० व० ।

विविध प्रकार की ओषधियो को भली प्रकार सुरा वा मद्य में डुबो कर सप्ताह बाद रसको परिस्रावितकर उसे वस्त्रसे छानलें । इसको भिषक् गण अरिष्ट नामसे अभिहित करते हैं । यथा—

"आल्पाव्य सुरया सम्यक् द्रव्याणि विविधानि च० । सप्ताहान्ते परिस्राव्य रस वस्त्रेण गालयेत् । एषोऽरिष्टोऽभिधानेन भिषग्भिः परिकीर्त्तितः ।" (अत्रि०)

नोट—इसी विधान से एलोपैथी चिकित्सा में वर्णित सम्पूर्ण टिंकचर प्रस्तुत किये जाते हैं । अस्तु आसवारिष्ट का टिंकचर के पर्याय रूप से प्रयोग करना यथार्थ है ।

अरिष्ट निर्माण-विधि—(प्राचीन) यह साधारणतः मिट्टी के पात्र में ही प्रस्तुत किया जाता है; यद्यपि किसी किसी स्थान पर स्वर्ण पात्र में भी संधान करने का नियम है । जिस पात्र में अरिष्ट (आसव) तैयार करना हो, प्रथम उस पात्र की भीतरी दीवारों में अच्छी तरह घी लगा देना चाहिये और साथ ही धव पुष्प तथा लोध्र के कल्क का लेप करके सुखा लेना चाहिये । एवं उपर्युक्त विधि से पात्र तैयार करके उसमें क्वथित या कच्चा जल में मिश्रित गुड़, मधु और औषधों का चूर्ण आदि डालकर उसके मुख को शरावे से अच्छी तरह बंद करके उसके ऊपर कपड़मिट्टी करदेनी चाहिये । जिसमें किसी स्थान से वायु उसके अन्दर न जासके अब इस बर्तन का भूमि के अन्दर गढ़े में या किसी गरम स्थान में १५ दिन या १महीने या जैसी शास्त्राज्ञा हो रक्खे रहने देना चाहिये ।

इसके बाद अरिष्ट या आसव को निकाल कर अच्छी तरह छानकर बोतलों में भर कर डाट लगादें, जिसमें उस बोतल के अन्दर वायु न जासके क्योंकि हवा जाने से खट्टा बन जाता है । जिस बोतल में रक्खे उसे थोड़ा खाली रक्खे; क्योंकि मुह तक भर देने से अरिष्ट जोश खाकर बोतल को तोड़ सकता है । यह जितना ही पुराना हो उतना ही अच्छा है । प्रत्येक मद्योंसे श्रेष्ठ अरिष्ट ही होता है । अरिष्टके नव्य निर्माण-क्रम एवं आसवारिष्ट अर्थात् मद्य की विस्तृत व्याख्याके लिए देखिये—आसव ।

गुण—प्रायः नवीन मद्यगुरु और वायु कारक होते हैं और पुराने होने पर स्रोतशोधक दीपन और रुचिवर्द्धक होते हैं ।

(च० सू० अ० २)

जिस द्रव्य से अरिष्ट बनाया जाता है उस द्रव्य का गुण उसमें रहता है मद्यके सम्पूर्णगुण इसमेंविशेष रूप में रहते हैं ग्रहणी, पांडु, कुष्ठ, अर्श, सूजन, शोष, रोग, उदर, गुल्म, क्रमि और तिल्ली इन सबरोगोंको दूर करता है एवं यह कषाय, तिक्त तथा वातकारक है । यथा—

"यथाद्रव्य गुणोऽरिष्टः सर्व मद्यगुणाधिक । ग्रहणीं पांडु कुष्ठार्शशोष शोफोदर ज्वरान् । हन्ति गुल्म कृमिप्लीहानि कषायकटुवातलश्च । वा० सू० ५ आ० मद्य० व० ।

अर्श, शोथ, ग्रहणी तथा श्लेष्म रोग नाशक है । यथा—"अर्श शोथ ग्रहणी श्लेष्म हरत्वम् । ,, राज० ।

मात्रा—१ तो० से २ तो० पर्यन्त

सेवनकाल—प्रायः सभी अरिष्टासव भोजन के पश्चात् पिये जाते हैं । परन्तु रोग और रोगी की परिस्थिति के अनुसार समय में फेर फार भी किया जा सकता है ।

सेवन-विधि—अरिष्ट या आसवमें समान भाग जल मिलाकर सेवन करना उचित है; क्योंकि पानी के साथ सेवन करनेसे ईसका प्रभाव शीघ्र होता है एवं जल रहित सेवन करने से गले और सीने में दाह उत्पन्न होने लगती है।

नोट—जो औषधों के क्वाथ और मधुर वस्तु तथा तरल पदार्थों से सिद्ध किया जाये वह अरिष्ट है और जो अपक्व औषधों और जल के योग से सिद्ध किया जाए वह आसव कहलाता है।

-क्ली० (७) सूतिकागार। सूतिकागृह। सौरी। (Lying-in chamber) रत्ना०। (८) आसव (९) मरणचिन्ह, मृत्युचिन्ह, अशुभचिन्ह, अपशकुन (Sign or symptom or prognostication of death) देखो-अरिष्ट लक्षणम्।

(१०) तीन भाग दधि और एक भाग जल प्रस्तुत तक्र, मट्ठा। घोल-बं०। रा० नि० व० १५। (११) मरणकारक योग। (१२) काढ़ा क्वाथ (Decoction) (१३) क्लेश' दुःख, पीड़ा। (१४) उपद्रव, आपत्ति।

त्रि०, हिं० वि० (१) अशुभ, बुरा। सर्वत्र मे०। (२) सामान्य मद्य। रा० नि० व० १४। (३) शुभ (४) दृढ़ अविनाशी।

अरिष्टकः- सं० पुं०
अरिष्टक-हिं० संज्ञा पु० }

(१) फेनिल वृक्ष, रीठे का पेड़, रीटा करञ्ज Soapnut tree (Sapindus trifoliatus) सि० यो० दाह ज्वर, श्रीकण्ठ। "फेनेनारिष्ट कस्य च" (२) निम्न वृक्ष, नीम। The neemb tree (Melia azad-dirachta) उक्त स्थानमें नीम के कोमल पल्लव व्यवहार में लाने चाहिये। व० द० पित्त० ज्व० शिरोलेप। रीठा-करञ्ज। रीटा। निमंकी। मद०। व०। ५(३) सरल द्रुम, सरल, धूप सरल (Pinus longifolia) रत्ना०। क्ली० (४) मद्य, सुरा। सुरा। Wine (Spirituous liquor) भ०।

अरिष्टत्रयम्-सं० क्ली० अश्व के अरिष्ट (अशुभ) लक्षण विशेष। यह तीन हैं यथा—स्वस्थारिष्ट (२) वेधारिष्ट और (३) कीटारिष्ट इनमें से स्वास्थारिष्ट के पांच भेद हैं, यथा—भोजना रष्ट' छायादि, अरिष्ट, दर्शनेन्द्रिय आदि अरिष्ट श्रवणेन्द्रिय, अरिष्ट। और रसनेन्द्रिय अरिष्ट जय० दत्त० २२ २५ अ०।

अरिष्ट फलः-सं० पु० कटुनिम्ब वृक्ष। रा० नि० व० ६।

अरिष्टफलम्-सं० क्ली० फेनिल, रीठा। Soapnut tree (Sapindus emarginatus. *Vahl*)

अरिष्टलक्षणम्-सं०क्ली० (Prognostication of death) मृत्युकारक चिह्न, मृत्यु लक्षण जिस लक्षण (चिह्न) से रोगी की मृत्यु जानी जाए उस चिह्न को अरिष्टकहते हैं भ०।

अरिष्टा-सं० स्त्री०
-हिं० संज्ञा स्त्री० } (१) कटुकी, कुटकी (Picrorrhi-zakurroa) रा० नि० व० ६। च० सू० ४ अ०। प० मु०। र० मा०। वै० निघ० २ भा०, विषमज्व० पटोलादि। (२) नागबला, गुलशकरी। (Sida alba) रा० नि० व० ४। (३) मद्य, दारू। Wine (Spituous liquer)

अरिष्टादि चूर्ण-सं० पु० नीम के पत्र १० पल त्रिकुटा, ३ प०, त्रिफला ३प० सेंधा, सोचर और साम्भर तीनों ३-३ प०, दोनों क्षार २ प०, अजवाइन ५ प०। इनका चूर्ण करके प्रातःकाल खाने से दैनिक तिजारी, चौथिया आदि का नाश होता है। यो० चि०।

अरिष्टाह्वः-सं० पु० फेनिल, रीठा करञ्ज, रीटा। रीठे-पं०। Soanutree (Sapindusrifoliatus) वै० निघ० २ भा० उन्मा० चि०।

अरिष्टिका-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] (१) फेनिल रीटा। (Soapnut tree) (२) कुटकी। कटुकी (Picro-rrhiza Kurroa)

अरिसिना-कना० हरिद्रा, हल्दी। (Curcuma longa)

अरिसीना बुर्गा-कना० कम्बी, गलगल, कण्टपलास गनिआर-उड़ि०। गन्दी, गंगल-हिं०। (Cochlospermum gossypium, D.-C.) इ० मे० प्लां०।

अरिस्टिडा डिप्रेसा-ले० स्पिन-खलक, स्पिन-बेगी, जन्दरलम्बा-पं०। नलि-पुटिकि-ते०। यह पौधा खाद्य कार्य में आता है। मेमो०।

अरिस्टिडा सिटेसिआ-ले० शिवर-गडि-ते०। थोडग-पुल्ल-ता०। यह भी खाने के काम में आता है। मेमो०।

अरिस्टोटल-इं० अरस्तु, अरस्तातालीस।

अरिस्टीन-इं० देखो—अरिस्टोलोकीन।

अरिस्टोकीन-इं० यह एक स्वाद रहित श्वेत चूर्ण होता है जिसमें ६६.१ प्रतिशत क्वीनीन होता है। यह जल में लय नहीं होता, इसे विषमज्वर (मलेरिया), आन्त्रिकज्वर (टाइफॉइड), संक्रामक प्रतिश्याय (इन्फ्लुएञ्जा) तथा थोड़ी मात्रा में कूकरखांसी (पर्टसिस) में बरतते हैं। मात्रा—१ से १० ग्रेन (आधी से ५ रत्ती) विस्तार के लिये देखो—सिनकोना।

अरिस्टो क्विनाइन-देखो—सिनकोना।

अरिस्टोल-इं० यह डाइ थाइमोल आयोडाइड (Di-thymol-Iodide) पांशु बैजिद (Potassium iodide) तथा थमानीन (Thymol) घोल को सम्मिश्रित करने से बनाया जाता है। यह रक्ताभ धूसर वर्ण का चूर्ण है जो जल तथा ग्लेसरीन में अविलेय होता, किन्तु कोलोडीन, ईथर और तैल (Oils) में लयशील होता है।

गुण—यह (अल्सरेटिव ल्युपस) दद्रु (Tænea) नारफारसी (एक्जैमा) और विचर्चिका (सोराइसिस) में लाभदायक है। इसका १० प्रतिशत का मलहम (लेप) उपयोग में आता है अथवा इसे व्रण पर छिड़कते या क्रोडीन में मिलाकर लगाते हैं। देखो—आयोडोफार्म।

अरिस्टोलोकिएसीई-ले० अरिस्टोलोकिई (Aristolochiæ) ईश्वरमूल वर्ग।

अरिस्टोलोकिया-ले० जरावन्द-फा०। ईश्वरमूल-हिं०।

नाम-विवरण—जरावन्द वस्तुतः फारसी नाम है जिसका शाब्दिक अर्थ स्वर्ण पत्र (वर्क तिला) है। चूँकि उक्त ओषध का वर्ण सुनहला होता है इसलिये उसका यह नाम पड़ा।

इसका वर्तमान डॉक्टरी लेटिन नाम अरिस्टोलोकिया वस्तुतः इसका यूनानी (Greeck) नाम है जिसे तिब्बी ग्रन्थों में अरिस्तोलोखिया लिखा है। अरिस्टोलोकिया या अरिस्तोलोखिया दो यूनानी शब्दों अरिस्टो (लाभप्रद) तथा लोकिया (प्रसव पश्चात्कालीन रक्तस्राव, निफास) का यौगिक है जिसका अर्थ "निफास अर्थात् प्रसव पश्चात् कालीन रक्तस्राव के लिये लाभप्रद" हुआ किन्तु इब्नबेतार ने अरिस्तो (अरिस्टो) का अर्थ योग्य तथा लोखिया (लोकिया) का अर्थ नफ्सा अर्थात् निफास वाली औरत (वह स्त्री जिसे प्रसव के बाद रक्तस्राव जारी हो) किया है और इससे उनका अभिप्राय उस औषध से है जो उक्त प्रसूता के लिये लाभप्रद हो।

नोट—विस्तार के लिये देखो—जरावन्द।

अरिस्टोलोकिया इण्डिका-ले० जरावन्द हिन्दी-फा०। रुद्रजटा, ईश्वर मूल, सुनन्दा, अर्कमूल-हरि, उत्तरि, सं०। इशरमूल, जोवेंल-हिं०। इशरमूल-ब० सापसन-वम्ब० गु०। वेरुमरिवु, इचुरमुलिवेर-ता०। सफर्स, सापुस गोआ। मेमो०। इश्वरी, सापमन्द-मह०। इश्वरी-गु०। इश्वर वेरु, गोविक्षा-ते०। इश्वरी वेरु, नल्लिवेरु कना० करुम वेकम, इश्वर मुरि-मल०। मेमो०, फा०, इ० ३ भा० इ० मे० प्लां०। देखो—रुद्रजटा।

अरिस्टोलकिया ब्रेक्टिएटा-ले० कीड़ामार, गंधाली हिं०। कीड़ामार-गु०। गन्धान गबल, गंधाली,

–मह० । पत्र ब० फा० । धूम्रपत्रा–सं० । देखो–धूम्रपत्रा । फा० इं० ३ भा०, मेमो० । इं० मे० मे०, इं० मे० प्लां० ।

अरिस्टोकिया रेटिक्युलेटा–ले० जरावन्द. अमरीकी जरावन्द, दाफा जहमार । (Aristolochia Serpentaria L.) मेमो०, म० अ० डा०

अरिस्टोलोकिया रोटण्डा–ले० जरावन्द मदहर्ज अ० जरावन्द गिर्द फा० । देखो जरावन्द । मेमो०, फा० इं० ३ भा० ।

अरिस्टोलोकिया लॉङ्गा–ले० जराबन्द तबील, अरिस्त लूखीया-अ० । जरावन्द दराज फा० देखो-जरावन्द मेमो०, फा०, इं० ३ भा० ।

अरिस्टोलोकिया सर्पेण्टेरिया–ले० जराबन्द अमरीकी जरावन्द दाफा मार, जरावन्द मुजादुल अफई अ० सर्पेण्टरी (Serpenteriae) म० अ० डॉ० । मेमो० ।

अरिस्टोलोकिया सिटेसिया–ले० शिपरिगडि–ते० गोडपग-पल्ल–ता० । इसका पौधा खाद्य है । मेमो०

अरिस्टोलोकिया सैकेटा–ले० मतिया चीता–हिं० । (Pouched birthwort) । इं० हैं० गा० ।

अरिष्टोलोकीन–इं० ।

अरिहन–हिं० संज्ञा पु० [सं० रन्धन] रेहन । अरहन ।

अरी–जय० (१) आलुकी, अरुई, घुइयाँ । A species of Arum (Arumcolocasia) सं० स्त्री० (२) खश, उशीर । (Andropogon muricatus) ।

अरीकह्–
अरीकतुल जुरह्– } जख्म का जगूर, शुद्ध माँस जो व्रण में पूरित हो आए । ग्रेन्युलेशन (Granulation)

अरीकह्–अ० आदत, प्रकृति, स्वभाव । नेचर (Nature)–इं० ।

अरीकह्–अ० कोहान् शुतुर ।

अरीकसा अ–
अरीकसानह– } अ० हिन्दकूकी, विषखपरा ।

अरीक़ालूसिया–यू० झाऊ । (Tamarix gallica, Linn)

अरी क़तअह्–अ० एक जानवर है ।

अरीज–अ० छाग, शिशु, बकरी का बच्चा । (A kid)

अरीज़ा–यू० बूटी का मूल, जड़ । (Root)

अरीञ्जियम्–इं० ऊर्सग्रनह् एक बूटी है जो कांटों से युक्त होती है तथा भूमिपर फैलती है ।

अरीठा–हिं० संज्ञा पु० [स० अरिष्ट, प्रा० अरिट्ठा] रीठा, अरिष्ट फल । Soapnut tree (Sapindus trifoliatus)

अरीतह्–अ० वृश्चिक, बिच्छू । (A scorpion)

अरीतस–यू० चूर्ण, चूना । (Calx)

अरीद–निगु एडी, सँभालू, मेउडी । (Vitexnegundo)

अरीदाल–सिं०, कना०, कों०
अरीदारम–ता० } हरिताल ।
Orpiment (Trisulphate of arsenic)

अरीन–अ० गोश्त मांस । (Flesh, meat)

अरीफीस–यू० एक प्रकार का तेल है जो जल के समान कूओं से निकाला जाता है ।

अरीर–कन्तूरियून, See-qanturiyuna

अरीरा–(१) नानूखाह, अजवाइन, (२) ऊशह्

अरीस–फा०
अरीसह–अ० } लोबान, कलङ्गूरा, कमकाम-फा०
(Styrax Benzoin' dryander)
देखो—लोबान; फा० इं० ३ भा० ।

अरीसन–का० हल्दी, हरिद्रा । (Curcuma longa)

अरीसारम–इं० लोफुल् जुअद, एक बूटी है जो एक बालिश्त के बराबर एवं विभिन्न वर्ण युक्त होती है ।

अरीसीन–इं० सिनकोना सत्व विशेष । फा० इं० २ भा० ।

अरीसीमाट्रॉटनोसम्–
अरीसीमा कर्बेटम्– } *Roxb*
ले० बोरबङ्गा–नैपा०, गुरिन, ढोर, किर्किचालू किरकल, जंगुस पं० ।

उद्भव-स्थान—पंजाब तथा हिमालय, ।

उपयोग—कहते हैं कि यह विषाक्त गुणमय औषधि है और कूलू में भेड़ों के उदरशूल होनेपर इसके बीज लवण के साथ मिलाकर उपयोग में आते हैं। वर्षा ऋतु में भवेसियों को कीड़ों से सुरक्षित रखने के लिये इसकी जड़ काम में लाई जाती है इसके उपयोग से वे मृतप्राय हो जाते हैं, (स्टूवर्ट) इं० मे० प्लां० ।

अरीसीमा ट्रिफॉलियम्-ले० शलजम (Turnip)

अरीसीमा लेस्कीनैन्थिस-ले० जातकेदारन सिं० ।

उत्पत्ति स्थान— हिमालय, खसिया की पहाड़ी, नीलगिरि, और लङ्का ।

उपयोग— सिंगाली लोग इसकी जड़ औषध तुल्य व्यवहार में लाते हैं (थ्वैटीज) इं० मे० प्लां० ।

अरीसीमा स्पेसिओसम्-, एरम-पेसिओसम् } ले० साँप की खुम्बी

किरकिरी कुरी किरलु, पं० । उत्पत्ति स्थान— शीतोष्ण हिमालय' कुमायूँ से सिक्किम तथा भूटान पर्यन्त ।

उपयोग—हजारा में इसे विष खयाल किया जाता है। चम्पा में सर्पदंश स्थान पर इसे पीस कर लगाते हैं। कूलू में इसकी जड़ भेड़ों को उदरशूल होने पर व्यवहार में आती है जब बच्चे इसे खाते हैं तो उनके मुखपर इसका हानिकारक प्रभाव होता है, (स्टूवर्ट) इं० मे० प्लां० ।

अरीसुस्सीन-अ० बिशनीन, नीलोफ़र के सदृश एक बूटी है ।

अरू-म०, सफतालू आड़ू ।

अरुंतुद-हिं० वि० [सं०] (१) मर्मस्थान को तोड़ने वाला, मर्मस्पृक् (२) दुखदायी, संज्ञा पु० शत्रु वैरी ।

अरुः-सं० पु० (१) आरग्वध वृक्ष, अमलतास, सोन्दाल, गाछ वं० (Cassia fistula) । (२) रक्त खदिर (Red Catechu) । (३) क्षत, व्रण, अथर्व० । (४) मर्म । (५) संधिस्थान उ० ।

अरुआ-मेवा० महानीम, महानिम्ब, (Ailanthus Excelsa)

अरुआर-हिं० पु० कचनार के सदृश एक वृक्ष है। पत्ते अनार के समान किन्तु उससे बड़े सुडौल डंठल युक्त होतेहैं (डंठल लगभग १ अंगुल दीर्घ) पुष्प डठलयुक्त डंठल १-१॥ अंगुल लम्बेहोतेहैं पुष्प बाह्य कोष (कुपद) सूक्ष्म, दंष्ट्राकार श्वेताभ हर्व हरिताभ पीतवर्ण के होते हैं। पुष्पाभ्यन्तर कोष (दल) पञ्चकंकूरेयुक्त तथा पीताभ होता है नरतन्तु ४, जिनमें २ बड़े तथा २ छोटे होते हैं। पराग कोष इस प्रकार का होता है गर्भ केसर पुंकेशर से बड़ा तथा द्व्योष्ठीयहोता है फाल्गुन मास में इसमें पुष्प आते हैं और उस समय यह पुष्पों से आच्छादित होने के कारण अत्यन्त मनोहर प्रतीत होता है इसकी छाल किञ्चित कटु तथा पुष्प तिक्त व मधुर होती है लकड़ी भीतर से धूसर वर्ण की शीशम के समान अत्यन्त टिकाऊ होती है, इसके वृक्ष अधिकतर कंकरीली पथरीली भूमि पर उत्पन्न होते हैं ।

उत्पत्ति स्थान—संयुक्त प्रान्त ।

अरुई-हिं० संज्ञा स्त्री० आलुकी, अरवी, घुइयां, (Arum colocasia)

अरुकामलक-ता० अम्बाहल्दी आम्रहरिद्रा । (Curcuma amada) इं० मे० मे० ।

अरुक्-सं० त्रि० सुस्थ, नीरोग ।

अरुगम-पट्ट-ता० } दूब्बा, दूब । (Cynod
अरुगम पुल्लु-ता० } on dactylon) मे० लो० ।

अरुगु-ते० (१) कौदों, कोद्रव । (Paspalum scrobiculatum ता० (२) दूबर दूब ।

अरुग्णः-सं० त्रि० } सुस्थ, नीरोग रोग रहित ।
अरुग्ण-हिं० वि० }

(Healthy)

अरुग्निमेष-सं० स्त्री० नेत्र रोग, विशेष । (Ap
eye-disease)

अरुच-हिं० स्त्री० गर्भवती स्त्री० की अरुचि ।

अरुचिः-सं० स्त्री० अरुचि-हिं० संज्ञा स्त्री० } अग्निमांद्य रोग। अरोचक रोग, भूख होने पर भी भोजन करनेकी सामर्थ्य न होना, भोजन की अनिच्छा, वितृष्णा, जी मचलना, (Anorexia) भा० म० १ भा० श्लेष्म ज्वर। देखो—अरोचकः। (२) रुचि का अभाव अनिच्छा। (३) घृणा, नफरत।

अरुचिकर-हिं० त्रि० [सं०] जिससे अरुचि हो जाए जो रुचिकारक न हो, जो भला न लगे।

अरूजः-सं० पु० (१) आरग्वध वृक्ष अमलतास। (Cassia fistula) वृ० सोनालु वं०। रा० नि० व० १।

क्ली० (२) कुंकुम केशर (Saffron) (३) सिन्दूर। (Redlead, minum)

अरुज-हिं० वि० [सं०] नीरोग। रोग रहित। (Healthy)

अरुणः-सं० पु०. अरुण-हिं० संज्ञा पु० } (१) कोकिलाक्ष भेद, तालमखाना ((Hygrophila spinosa) । (२) अतिविषा, अतीस (Aconitum heterophyllum)। (३) श्योणाक वृक्ष, सोनापाठा (Oroxylum Indicum) प० मु०। (४) मञ्जिष्ठा, मजीठ, (Rubia cordifolia)। (५) अर्क वृक्ष, मदार, आक। (Calotropis gigantea) मे०। (६) पुन्नागवृक्ष। (Calophyllum inophyllum) रा० नि० व० १०। (७) गुड़। (Jaggery) रा० नि० व० १४। (८) चित्रक वृक्ष, चीता (Plumbago zeylanica) मद० व० २। (९) रक्तापामार्ग, लालचिर्चिटा (Achyranthes rubrum) देखो-अपामार्ग। (१०) रक्त करवीर लाल कनेर। (Nerium oborum *Soland*) वै० निघ०। (११) एक प्रकार का कुष्ठ रोग, लालकोढ़। (A kind of leprosy)

लक्षण—जिसमें लालवर्ण की छोटी छोटी फैलने वाली फुन्सियां होती हैं तथा सीस, भेद (भेदन की सी पीड़ा) और स्वाप (स्पर्शाज्ञता) होता है उसे अरुण कुष्ठ कहते हैं, यह वातज होता है अर्थात् वायु से (वायुकी प्रधानता से) उत्पन्न होता है। सु० नि० ५ अ०।

(१२) सूर्य्य। (The sun). (१३) गहरा लालरंग। (Deep red), (१४) कुङ्कुम, केशर। (Saffron), (१५) सिन्दूर। Red lead (Plumbi Oxidum RuBrum)-त्रि०, हिं० वि० पु० [स्त्री० अरुणा] (Red) रक्तवर्ण। लालरंग। लाल। रक्त।

अरुणम्-सं० क्ली० (१) अहिफेन अफीम (Opium) वै० निघ०। (२) रक्तोत्पल, लाल कमल (Nymphæa nelumbothered var), (३) रक्तवृक्ष, लाल निसोथ (Ipomœa turpethum R. Br., The reb var.) वा० टी० हेमाद्रि (४) कुंकुम, केशर। Saffron (Crocus sativus) रा० नि० व० १२। (५) सिन्दूर (Red oxide oflead) रा० नि० व० १२ (६) माणिक्य भेद (A kind of ruby) वै० निघ० २ भा० क्षयरोग, त्रैलोक्य चिन्तामणिरस।

अरुणकपिशः-सं० पु० द्राक्षाभेद, किसमिस विशेष फकीरी द्राक्ष मह० वै० निघ०। (A kind of drygrape.)

अरुणकम्-सं० क्ली० प्लाटिनम समूह का कठोर श्वेत धातुतत्व विशेष रोडियम् (Rhodium)-मे० नोट—रहोडियम् युनानी शब्द रोडोन (Rhodon) अर्थात् गुलाब से व्युत्पन्न है। चूंकि इस धातु के लवणोंके घोल गुलाबी रंगके होते हैं, अस्तु इसे उक्त नामसे अभिधानित किया गया। दे० रहोडियम्।

अरुणकमलम्-सं० क्ली० अरुणकमल-हिं० पु० } ( )

कोकनद लाल कमल । रक्त कम्बल-वं० । (Nelumbium speciosum) रा० नि० व० १० ।

अरुणचूड़-हिं० संज्ञा पु०
अरुण चूड़-सं० पु०
कुक्कुट अरुण शिखा । ताम्रचूड़ पक्षी । कुकुड़ा मुर्गा । (Cock) वै० निघ० ।

अरुण तण्डुलीयम्-सं० क्ली० रक्ततण्डुलीय शाक, लाल चौलाई राङ्गां नटे-बं०, Amarantus (Thus) Spinosus (The red-var, ot-च० द० ।

अरुणनागः-सं० पु० मुद्राशङ्ख, पीतिका । अत्रि०, See-mudra shankhah

अरुणनेत्रः-सं० पु० (१) पारावत, कपोत, कबूतर (Pigeon) पायरा-बं०, (२) कोकिल कोइ-(य)ल, The black or Indian cuckoo (Cuculus) वै० निघ० ।

अरुणपुष्पी-सं० स्त्री० बन्धुजीवक वृक्ष बन्धूक, दुपहरिया, गेजुलिया, बान्धुलि फुलबं० रक्तदुपारी, म० (Pantapetes phœnicea *Willd*) वै० निघ० ।

अरुणमक्षिका-सं० स्त्री० रक्तमक्षिका । लाल माचि-बं० वै० निघ० । (See-Rakta-makshika

अरुणलोचनः-सं० पु० (१) पारावत, कपोत कबूतर (Pigeon) रा० नि० व० १९ । (२) कोकिल कोइ(य)ल । The black or Indian cuckoo (Cuculus) वै० निघ० (३) लालनेत्र (Red eye)

अरुणशिखा-हिं० संज्ञा० पु० [सं०] कुक्कुट, मुर्गा (Cock)

अरुण सर्पः-सं० पु० तक्षक सर्प, सर्प विशेष (A snake of amiddle size ared colour) वै० निघ० See-Takshak

अरुणसारः-सं० पु० हिङ्गुल सिंगरफ Cinnabar (Hydrargyri Bisulphuretum) वै० निघ० ।

अरुणा-सं० स्त्री० हिं० संज्ञा० स्त्री० (अतीस) अतिबिषा (Aconitumheterophyllum) मे० रा० नि० व० ६ । भा० ४भा० बाल० ज्व० चि० महाभल्ला० गुड़ । "घन कृष्णारुणाऋङ्गी" । भैष० प्रदरारि रस । कुष्ठ चि० (२) मञ्जिष्ठा, मञ्जीठ , Rubia cordifolia) मे० । रा० नि० व० ३ । भा० म० १भ० ज्व० चि० लाक्षातैल, लाक्षा दशाक्षात्वरुणा षड़क्षा । (३) प्रपोण्डरीक, पुंडेरी, कमलनाल (Root stock of nymphæa lotus) प० मु० (४) त्रिवृता निशो (सो) थ (Ipomoea turpethum, *R. Br.*) मे० (५) जवा, ओड्रपुष्प अढ़उल । (Hibiscus rosa-sinensis.) मद० व० २ "अरुणातबिसा श्यामा मञ्जिष्टा त्रिवृता च" (५) श्यामालता, कृष्णसारिवा, श्यामलता (Ichnocarpus frutescens.) मे० इन्द्रवारुणीलता, इन्द्रायन इनारुन (Citrullus colocynthes, *Shrad.*) (८) गुञ्जालता घुंघची (Abrus precatorius)रा० नि० व० ३ (९) पुनर्णवा, गदहपुन्ना (Bœrhavia diffusa) (१०) मुण्डी । (Sphæranthus Indicus) रत्ना० । (११) कोदो (१२) लालरंग की गाय (१३) उषा ।

अरुणाई-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अरुण] ललाई रक्तता । (Redness)

अरुणात्मिका-सं० स्त्री० कुमरिच, मरचा, लाल मरचा (Capsicum) लङ्का मरिच-बं० लांक-म० वै० निघ० ।

अरुणाभम्-सं० क्ली० वज्रलौह, कान्तलौह । See-kintalouha

अरुणार-हिं० वि० दे०-अरुना ।

अरुणार्कः-सं० पु० रक्तार्क, लाल मदार । मन्दारु मह० मन्दार अक्क-कं० Calotropis gigantea (The redvar, of) रा० व० १० देखो—आक ।

अरुणाक्ष-सं० पु० कबूतर, कपोत। (Pigeon)
अरुणित-हिं० वि० [सं०] लाल किया हुआ।
अरुणिमा-हिं० संज्ञा० पु० [सं० अरुण] ललाई लालिमा, सुर्खी।
अरुणी-सं० स्त्री० सुरसरनी-हिं०। टिकरी-अं० ब्रेनिया रहैमूनाइडीस (Breyniarham nides' *MullArg*), फाइलैन्थस रहैमूनाइडीस (Phyllanthus rhamnoides, willd·) ले०।

एरण्ड वा सेहुण्ड वर्ग
(*NO. Euphorbiaceæ*)

उत्पत्ति-स्थान—समग्र उष्ण कटिबन्धस्थ भारतवर्ष, पूर्वीय अवध से लेकर ऊपरी आसाम तथा दक्षिण की ओर ट्रावनकोर पर्यन्त।
वानस्पतिक-विवरण—क्षुप (या छोटा वृक्ष), नव्याङ्कुर कोणाकार, पत्र-एकान्तर (विषमवर्ती) लघु डंठलयुक्त, प्रसरित, चौड़ा-अण्डाकार, वहिः पत्र सबसे बड़े, अधः भाग सफेदी मायल, अखण्ड (किनारा) अर्ध से ३/४ इं० लम्बे, नरपुष्प निम्न कर्णों में गुच्छाकर, नारि पुष्प उर्ध्व कक्षों में होते हैं, अकेले, ह्रस्व पुष्पडन्डी युक्त, नत, फली मटराकार होती है।
प्रभाव तथा उपयोग—गलशुण्डी शोथ में शुष्कपत्र तमाकू रूप से (हुक्का पर) पिया जाता है। इसकी त्वचा संकोचक है। [डाइमोक]
अरुणोदय-हिं० संज्ञा पु० [सं०] प्रातःकाल। प्रभात। बिहान। ऊषा काल। ब्राह्ममुहुर्त। तड़का। भोर। वह काल जब पूर्व दिशा में निकले हुये सूर्य की लाली दिखाई पड़ती है। यह काल सूर्योदय से दो मुहूर्त वा चार दंड पहले होता है। अरुनोदय।
अरुणोपल-सं० पु० अरुणवर्ण मणि विशेष, चुन्नि, पद्मराग मणि, लाल। (A ruby) हे० च०।
अरुण्डिनेरिया फैल्केटा-ले० निर्मल, नीरल-हिं०। रंग-कनाबार। प्रोङ्ग-ब० प० सू०। प्रांगनोक-लेप०। इसका तना रस्सी के काम आता है। मेमो०।
अरुण्डिनेरिया रेसीमोसा-ले० पम्मून-लेप० पाथ्यू-नैंपा। इसका तना रस्सी या खाद्य कार्य में आता है। मेमो।
अरुण्डिनेरिया हुकेरिएना-ले० प्रोंग, प्राओंग-लेप०। सिवनी-नैपा०। तना तथा बीज खाद्य एवं रस्सी के काम आते हैं। मेमो०।
अरुण्डिनेसिई-ले० वंश वर्ग।
अरुण्डकार्का-ले० कार्का, नल-बं०। नरकट नर, नल, नदनार-हिं०। नरी, वाग-पं० इसका तना व रीशा रस्सी के काम आती हैं। मेमो०।
अरुण्डोवेङ्गालेन्सिस-ले० सं० गावनल, नल विशेष। (Bengalreed) इं० है० गा०।
अरुण्डो वैम्बांस-ले० वंश बाँस वंस (Bambusa arundinacea) इं० मे० मे०।
अरुता-सत्र० } तितली, सुदाव (Euphorbia lathyris *Linn*)।
अरुद-सिं० }
अरुन-हिं० वि० दे० अरुण।
अरुनई-हिं० संज्ञा स्त्री० दे०-अरुणाई।
अरुनचूड़-हिं० संज्ञा पु० दे० अरुनचूड़।
अरुनता-हिं० संज्ञा स्त्री० दे० अरुणता।
अरुनशिखा-हिं० संज्ञा पु० दे०-अरुणशिखा।
अरुना-हिं० संज्ञा स्त्री० मञ्जिष्ठ, मजीठ। (Rubia cordifolia)
अरुनाई-हिं० संज्ञा स्त्री० दे० अरुणाई।
अरुनाना-हिं० क्रि० अ० [सं० अरुण] लाल होना क्रि० स० [सं० अरुण] लाल करना।
अरुनारा-हिं० वि० [सं० अरुण+आरा (प्रत्य०)] लाल रंग का लाल।
अरुनी-सं० स्त्री० सुरसरनी टिक्कारी, अव० मेमो० देखो अरुणि।
अरुनेरुल्ली-ता० हरफा रेवड़ी, लवली।
अरुनोदय-हिं० संज्ञा पु० दे०-अरुणोदय।
अरुन्धती-सं० स्त्री० जिह्वाग्र। जिह्वा की नोक वा फोंक। (The foretongue) वै० निघ० दे०-अरुंधती।
अरुंधती-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अरुन्धती] (१) बहुत छोटा तारा जो सप्तर्षि मंडलस्थ वशिष्ठ के पास उगता है। सुश्रुत के अनुसार, जिसकी

मृत्यु समीप होती है, वह इस तारे को नहीं देखा सकते

(२) तंत्र के अनुसार जिह्वा।

(३) घाव को पूरने वाली औषधि, व्रणपूरक औषध, अरुष। अथर्व०। सू० २। २। का० ४

अरुंषिका-सं० स्त्री० हिं० संज्ञा स्त्री० एक क्षुद्र रोग जिसमें कफ और रक्त के विकार या कृमि के प्रकोप से माथे पर अनेक मुंह वाले फोड़े हो जाते हैं। शिरोव्रण। क्षुद्ररोगान्यतम कपाल रोग भेद। मा० नि०।

अरुवा-हिं० संज्ञा पु० [सं० अरु] (१) एक लता जिसके पत्ते पान के पत्ते के सदृश होते हैं। इसकी जड़ में कन्द पड़ता है, और लता की गांठों से भी एक सूत निकलता है। जो चार पाँच अंगुल बढ़कर मोटा होने लगता है और कन्द बनता जाता है। इसके कन्द की तरकारी बनती है। यह खाने पर कनकनाहट पैदा करता है। बरई लोग इसे पान के भीटे पर बोते है।

संज्ञा पु० [हिं० रुरुआ] (Anowl) उल्लू-उलूक पक्षी। हिं० श० सा०।

अरुषः-सं० पु० (१) व्रण, क्षत (Vranah) (२) घोटक, अश्व। (Horse-) वै० निघ० (३) व्रणपूरक औषध अरुन्धती। अथर्व। सू० १२। का० ४।

अरूषा,-टा-सं० स्त्री० भूम्यामलकी भुई आमला। (Phyllanthusneruri.) रा० नि० व० ५।

अरुषासः सं-०पु० रोष रहित। अथ०। सू० ३। ३। का० ३।

अरुष्कः-सं० पु०
अरुष्क हिं० संज्ञा पु० } भल्लातक वृक्ष भिलावाँ। भेला गाछ-बं। बिबवा-म० (Semecarpvs anacardium) भा० पू० १ भा०। रा० नि० व० ११।

अतष्करः सं० पु० (१) भल्लातक वृक्ष, भिलावाँ (Semecarpns anacardium) पं० मु०। रा० नि० व० ११। भा० पू० १ भा०

मद० व० १ (१) अरुंषिका। त्रि० (२) व्रण कृत व्रणजनक। मे० रचतुष्कं।

अरुष्करम् सं० क्ली० भल्लातक फल भिलावाँ (Semecarpus anacardium) च० द० अर्श चि०। भैष० कुष्ठचि० पञ्चतिक्त घृत। "सनागरारुष्कर वृद्धदारकम्।" सि० यो० चतुः सम लौह। च० सू० ४ अ० कुष्ठघ्नव०।

अरुस हिं० पु० अडूसा वासक। (Adhatoda vasika)

अरुसिमन यू० बज्रुल खुम खुम बज्रुल हवह कसीस-अ० कदूम-इस्फहान मारदरख्त किरमान दरीना तब्रीज (Lepidium iberis *Linn*) ले० (Papper grass; Pap Perwort) इं० Passerage iberide फ्रा०। देखो—तोद्री। फा० इं० १ भा०।

अरुस्राणम्-सं० क्ली० (१) व्रण या दोषों को शीघ्र पकाने वाली औषध, (२) फोड़ा, अथर्व० सू० ३। ४। का० २।

अरुहा-सं० स्त्री० -हिं० संज्ञा पं० भूधात्री, भुंई आमला, भूम्यामलकी। (Phyllanthus Neauri)

अरुक़-अ० स्वेदक औषध। (Diaphoretic)

अरूक-तु० जर्दालू। एक फल है जो मधुर अम्लीन होता है, खूबानी इसी का भेद है।

अरूकलस-रू० उश्नान, एक घास है जिससे कपड़े धोऐ जाते हैं। See-ushnan

अरूकुल-फा० हरिद्रा, हलदी। (Curcuma longa' linn) स० फा० इं०।

अरूकुस्सबबागीन-
अरूकुस्सफ्र- } -अ० (Healthy) नीरोग, स्वस्थ।

अरुज-अ० चावल, धान, (Rice) इं० है० गा०,

अरूजा-सिरि० मुर्गाबी, जल मुर्गी। (Water-hen)

अरूढ़-हिं० वि० दे० आरूढ़।

अरूढ़ अवपाटिका-सं० स्त्री देखो—"निरुद्धप्रकाश" सु० सं०।

अरूप-हिं० पु० उर्द माष। (Phaseolusradiatus)

अरूनस-यू० मटर, कलाय विशेष Pea (Pisum sativum)

अरूनिया-फवाकह् भेद। वह मेवे जिनसे आहार प्राप्त होता है। वस्तुतः जंगली सेब को कहते हैं।

अरूनीस-यू० कनौचा भेद। लु० क०।

अरूप-हिं० वि० [सं०] (१) रूप रहित। निराकार। (२) कुरूप, कुत्सित रूप, कुश्री। (Deformed; ugly)

अरूपाल-मह० अशोक वृक्ष।(Saraca-Indica,Linn)

अरूवा-सिरि० गज़ंगबीन, झाऊ निर्यास, झाउ वृक्ष से स्रवा हुआ गोद।

अरूमचक-तु० मकड़ी, ऊर्णनाभि, (A spider)

अरूस-हिं० संज्ञा पु० दे० अडूसा।

अरूस-अ० (१) एक प्रकार की गुहेरी वा गुहाअनी, (२) दुलहिन, दुलहा (Abride a bridegroom)। (३) नीलोफर, नीलोत्पल (Nymphæa stelata)। (४) गंधक पीत (Sulphur) (५) शीराज गिवासी कुसुम्भ (कड़) द्वारा परिस्रुत पीत जल को कहते हैं जो प्रथम निकलता है।

अरूसक-अ० (१) खद्योत, जुगनू (a firefly), (२) तग्वूस-फा०। (३) उल्लू उलूक (Anowl), (४) वीरबहूटी, इन्द्रगोप कीट, (Scarletfly)

अरूसक दरपर्दह्-
अरूसक पसेपर्दह्- } फा० काकनज, राजपुत्रिका, (Physalis alkekenji: *Linn*) देखो, काकनज।

अरूसा-हिं० पु० अडूसा। (Adhatoda Vasika)

अरूसा गारस-अ० कञ्चुक, साँप की केचुली।

अरेआलु-अश्वत्थ, पीपलवृक्ष। (Ficusreligios) फॉ० इं० ३ भा०।

अरेक गोल-कों० काम रूप-हिं० बं०। (Ficus benjamina)

अरेकिक एसिड-इं०
अरेकिडिक एसिड- } मूँगफलीयम्ल, मूँगफली का तेजाब। फा० इं० १ भा०।

अरेकिसहा इपोजिया-ले० मूंगफली चिनिया बदाम विलायती मूंग। (Ground nut Peanut, Monkey nut) फा०इं०१भा

अरेकू-ता० काञ्चनार कचनार अश्वत्थ। (Bauhinia racemosa' *Lam*) मेमो०।

अरेकोलीनी हाइड्रोब्रोमास ले० दे० मूंगफली

अरेज़ा सैकोरिफेरा-ले० वोज़ौज़ वर। इसका साग, शर्करा तथा तंतु खाद्य और व्यवहार कार्य में आते है मेमो०

अरेबिकएसिड-इं० अरबिकाम्ल। फा० इं० १ भा।

अरेबियन-कॉस्टस इं० कूट कुष्ट हि०। पाचक वं। (Saussurea lappa, *Clarke*) फा० इं० २ भा०

अरेबियन जस्मिन-इं० बेला-हिं०। वार्षिकी-सं०। (Jasminum sambac)

अरेबियनमिर्ह-इं० बो (वो)ल-हिं०; बं०, गु०। (Balsamoendron, *Sp.*) फा० इं० १ भा०।

अरेबियन लेवेण्डर-इं० धारू-हिं०; उस्तुखुद्दूस (Lavamdulslœchas, *Linn*)

अरेबियन सेना-इं० सनाअ् जव्ली, सनाअ् मक्की (Cassia angustifolia, *Vahl*) फा० इं० १ भा०। सनाय विशेष।

अरेबीस चांइनेन्सिस्-ले० एक पौधा विशेष।

अरेयल-मल० पीपल वृक्ष, अश्वत्थ। (Fecus religiosa) इ० मे० मे०।

अरेलिया-इं० तापमारी। गिन-सेङ्ग-ची०। फा० इं० २ भा०।

अरेलिया एकीमाइरिका-ले० वनखोर, चुरियल-पं० मेमो०।

अरेलियाग्विल फांय्लिया-ले० तापमारी-हिं०। गिन्-सेंग-ची०। फा० इं० २ भा०।

अरेलिया स्युडोगिन्सिङ्ग-ले० तापमारी-हिं०। गिन्सेंग-ची०। फा० इं० २ भा०।

अरेलिएसीई–ले० तापमारी वर्ग।

अरोकदन्तः–सं० त्रि० कृष्णदन्त, काले दाँत वाला। वै० निघ०।

अरोग–हिं० वि० [सं०] रोग रहित। नीरोग।

अरोगी–हिं० वि० [सं०] जो रोगी न हो नीरोग चंगा।

अरोच–हिं संज्ञा पु० [सं० अरुचि] रुचि का अभाव। अनिच्छा। त्याग।

अरोचकः–सं० पु०
अरोचक–हिं०संज्ञा पु० } [वि० जो रुचे नहीं। अरुचिकर। (Disgreeable) ना मर्ग्रूब-अ०।] एक रोग जिसमें अन्न आदि का स्वाद मुंह में नहीं मिलता। अरुचिरोग।

संस्कृत पर्याय—अरुचिः, अश्रद्धा; अनभिलाषः। रा०

डिसलाइक ऑफ फोर फूड Dislike of forefood! डिसगस्ट फोर फूड Digust forfood डिसरेलिश Disrelish, अवर्शन avertion–इं०।

निदान

यह दुर्गंधयुक्त और घिनौनी चीजें खाने और घिनौना रूप देखने तथा त्रिदोश के प्रकोप से उत्पन्न होता है। लिखा है—

"वातादिभिः शोक भयात्ति लोभ (भयार्त्ति लोभ–भा०) क्रोधैर्मनोघ्नाशनरूपगन्धैः। अरोचकाः स्युःपरिहृष्ट दन्तः कषाय वक्त्रश्च मतोऽनिलेन॥ (भा० नि०। भा० प्र०)

अर्थ—वात, कफ, शोक, भय (भयरोग), अत्यंत लोभ, क्रोध, अप्रिय भोजन तथा बुरे रूप का दर्शन और दुर्गन्ध इन सब कारणों से मनुष्यों के अरुचि रोग उत्पन्न होता है। वात की अरुचि में रोगी के दन्तहर्ष होता और मुख कषैला रहता है, अरोचक के प्रधान पांच भेद है—

(१) वातज, (२) पित्तज, (३) कफ़ज, (४) सन्निपातज और (५) शोकादि से उत्पन्न अर्थात् आगन्तुज।

लक्षण

(१) वातारोचक—अम्ल पदार्थ के भक्षण से जिस प्रकार दंतहर्ष होता है उसी प्रकार दंत हर्ष होना और मुख का कषैला रहना। ये लक्षण वातजारोचक में होते हैं।

(२) पैत्तिकारोचक—पित्तकी अरुचि से रोगी का मुख तिक्त, खट्टा; बेरस (बेस्वाद) और दुर्गन्धयुक्त होता है।

(३) श्लैष्मिकारोचक—कफ की अरुचि से खार, मीठा, पिच्छिल, भारी तथा शीतल (मुख) और चंगा सा रहता है जिससे खाया नही जाता और मुख कफ से लिपा रहता है। मा० नि०। (दुर्गन्धयुक्त और कफ से स्निग्ध रहता है भा०)

(४) शोकादिजन्य(वा आगन्तुज) अरोचक—शोक, भय, अत्यंत लोभ औरक्रोध, अप्रिय गंध से उत्पन्न हुई अरुचि में मुख स्वाभाविक अर्थात् जैसा का तैसा रहता है।

(५) सन्निपातिकारोचक(त्रिदोषज)—इस अरुचि में रोगी का मुख वातादि जनित तिक्त अम्ल और लवण आदि अनेक रस युक्त, जान पड़ता है।

वातादि भेद से आरोचक के अन्य लक्षण

वातज अरुचि में वक्षःस्थल में शूल के समान पीड़ा होती है। पित्तजन्य अरुचि में शरीर में हृदय में चोपने की सी पीड़ा, दाह, मोह और प्यास होती है। कफज अरुचि में कफस्राव होता है। त्रिदोषज अरुचि में अनेक प्रकार की पीड़ा और मन में विकलता, मोह, जडता तथा शोक और भयादि जन्य आगन्तुक अरुचि में सब लक्षण होते है।

क्षुधा होने पर भी जब आहार की सामर्थ्य न हो तब उसको अरुचि कहते है। अन्न खाने की इच्छा होने पर भी जब खाया हुआ अन्न बाहर निकल जाए अर्थात् मेदा उसको स्वीकार न करे तथा अन्न के श्रवण, स्मरण, दर्शन, गंध एवं स्पर्शन से जिसे घृणा होजाए उसे भक्तद्वेष कहते है। चरक तथा सुश्रुत के मत से इन तीनों प्रकार के रोगों का समावेश अरोचक शब्द के अन्तर्गत होता है,

यथा—

अश्नन्तु मुखे चान्नं यत्र नास्वादते नरः।
अरोचकः स विज्ञेयो भक्तद्वेष मतः शृणु.
चिन्तयित्वा तु मनसा दृष्ट्वा स्पृष्ट्वा तु भोजनम्।
द्वेषमायाति यो जन्तुर्भक्तद्वेषः स उच्यते।
कुपितस्य भयार्त्तस्य तथा भक्त विरोधिनः।
यत्र नान्ने भवेच्छ्रद्धा स भक्तच्छन्द उच्यते।

॥ वृद्ध भोजः ॥

अर्थ—मनुष्य को जब मुख में डाले हुए अर्थात् खाए हुए अन्न का स्वाद नहीं मिलता, वह मीठा नहीं लगता, तब उसको अरोचक जानना चाहिए। अब भक्तद्वेष के सम्बन्ध में कहते हैं, सुनो—भोजन के मनमें चिन्तन करने से, देखने तथा छूने से जिस मनुष्य को घृणा हो जाती है उसको "भक्तद्वेष" कहते हैं। क्रोधित भय से पीड़ित तथा जिसको अन्न द्वेष हो वह और जिसकी अन्न से श्रद्धा न हो उन्हें "भक्तच्छन्द" कहते हैं।

चिकित्सा (सामन्य)

भोजन से पहले लवण और अदरक मिलाकर भक्षण करना सदा पथ्य है। यह रुचिकारक, अग्निदीपक तथा जिह्वा एवं कंठ की शुद्धि करता है। यथा—

भोजनाग्रे सदा पथ्यं लवणार्द्रक भक्षणम्।
रोचनं दीपनं वह्नेर्जिह्वा कण्ठ विशोधनम्॥

॥ भा० म० खं० ॥

अथवा अदरख के रस को मधु के साथ मिला कर योजित करें। यह अरुचि, श्वास, कास, प्रतिश्याय और कफ नाशक है। यथा—

शृंगवेर रसं वापि मधुना सह योजयेत्।
अरुचि श्वासकासघ्नं प्रतिश्याय कफापहम्॥

॥ भा० ॥

अथवा पकी इमली और श्वेत शर्करा को शीतल जल में मल कर कपड़े से छान लें, फिर उसमें इलायची, लवंग, कर्पूर और मरिच के बारीक चूर्ण को बुरक कर पानक प्रस्तुत करें। इसके मुख में धारण करने से यह अरुचि का नाश करता और पित्त को प्रशमित करता है।

दोषानुसार चिकित्सा

वातज अरोचक में मटर, पीपल, वायविडंग द्राक्षा, सेंधानमक और सोंठ इनके चूर्ण के साथ प्रसन्ना नाम वाली मदिरा का पान करें अथवा इलायची भार्गी जवाखार, हींग डालकर घृत के साथ पान करे। अथवा वच का क्वाथ पिला कर वमन कराऐ।

पैत्तिक अरोचक में गुड़ का पानी मिलाकर वमन कराऐ। अथवा खांड, घृत, सेंधानमक और मधु मिलाकर चाटे।

कफज अरोचक में नीम का क्वाथ मिलाकर वमन कराऐ इसके अतिरिक्त अजवाइन और अमलतास का क्वाथ पिलाये अथवा मधु के साथ तीक्ष्ण अरिष्ट और मधु के साथ माध्वीक नामक मद्य पिलाये। और उपर्युक्त मटर आदि के चूर्ण को गरम जल के साथ सेवन कराऐ अथवा निम्न चूर्ण का प्रयोग करें।

इलायची	१ भाग
दालचीनी	२ भाग
नागकेशर	३ भाग
चव्य	४ भाग
पीपल	५ भाग
सोंठ	६ भाग

निर्माण विधि—इन सब का चूर्ण कर सबके बराबर शर्करा मिलाकर सेवन करें।

गुण—इससे मुखमें थूक भरना, अरुचि, हृच्छूल, पार्श्ववेदना, खांसी, श्वास, और कंठ के रोग नष्ट होते हैं।

(२) अजवाइन, इमली, अम्लवेत, सोंठ, अनार और वेर इनको १-१ तो० लेकर चूर्ण कर इसमें ४ पल मिश्री मिलाए। धनियाँ, संचलनमक, कालाजीरा और दालचीनी प्रत्येक १-१ तो०, पीपल सौ और काली मरिच दो सौ इन सब का चूर्ण उक्तचूर्ण में मिलाए।

उपयोग—अत्यंत रुचिकर, ग्राही, हृदय को हितकारी होता है तथा विबन्ध खांसी और हृदय तथा पसली का दर्द, प्लीहा, अर्श और ग्रहणी रोग को नष्ट करता है। (वा० चि० अ० १)

अरोचक रोग में प्रयुक्त होने वाली अमिश्रित औषधें

अनार, इमली, तालीसपत्र, आमला, कपित्थ (कैथ), तक्र कमल फूल, (Gentiana kurroo, *Roxle.*) कोशिया (Quassiaexcel-sa) और सोडियम के लवण तथा योग।

मिश्रित औषधें

यमा (वा) नी पा (खा) ड़ (ण्ड) व, कलहङ्कस, अम्लीकापान (तिन्तिडिपानक), रसाला, आर्द्रक मातुलुङ्गावलेह, सुधानिधिरस, सुलोचनाभ्र दाडिमादिचूर्ण और लवंगादिचूर्ण, शिखरिणी (भीमसेनकृत) द्राक्षासव, कपित्थाष्टक चूर्ण, पिप्पल्यारिष्ट, बड़वानल चूर्ण और तालीसपत्रादि चूर्ण।

अरोचक में पथ्यापथ्य

पथ्य-वातजारोचक में वस्ति, पित्तज में विरेक (जुलाब) तथा कफज अरोचक में वमन और सर्व दोषों से उत्पन्नअर्थात् सान्निपातिक अरोचक में सब कामों की सिद्धि के लिए हर्षण क्रिया करना हित है। भा०।

बलानुसार वस्ति, विरेचन, वमन, धूमपान तथा कवल धारण और तिक्त वा कषैले काष्ठ के दातून से दँतघर्षण करना एवं भाँति २ के अन्न पान का सेवन हितकारक है। गोधूम (गेहूं) मूँग, लाल शालि व साठी का चावल, शूकर, बकरा तथा खरगोश का मांस, चेंग, ऋष्य, मधुशालिका, इलिश (हीलसा), प्रोष्टी (शफरी) खलेश, कवयी (सुम्भा) और रोहित आदि मछली का मांस, कुष्माण्ड, नाड़ी शाक, नवीन मूली का शाक। वार्त्ताकु (भांटा), शोभाञ्जन, (सहिंजन) मोचा (कदली) अनार, भव्य (कमरख का फल) पटोल, रुचक (बीजपूर) घृत, दुग्ध, बाल (झीवेर) ताल (तालीशपत्र) रसोन(लहसुन) सूरण,द्राक्षा, रसाल(आम) नलद (लवंग) निम्ब, काँजी, मद्य, शिखरिणी, दधि, तक्र, आर्द्रक, शीतलचीनी, खजूर, पियाल (चिरौंजी) तिन्दुक, विकङ्कत, कपित्थ, बेर, ताल, अस्थिमज्जा, कर्पूर, मिश्री, हरीतकी, अजवाइन, मरिच, रामठम् (हींग), मधुर, अम्ल, तथा तिक्त पदार्थ, देहमार्जनी अरुचि रोगी के लिए ये द्रव्य हितकारक अर्थात् पथ्य हैं। अपथ्य-कास' उदगार-(डकार), क्षुधा नेत्रवायु तथा वेगों का रोकना, अहृद्य अन्न सेवन अरुचि रोगी के लिये अपथ्य है।

अरोडिस-अण्ड चिकरस्सी बं०। वोता, पोमाआसा०।

अरोहन-हिं० संज्ञा पु० दे०—आरोहण।

अरोहना-हिं० क्रि० अ० [सं० आरोहण] चढ़ना, सवार होना।

अरोही-हिं० वि० [स० आरोही] सवारहोने वाला। संज्ञा पु० [सं० आरोही] आरोही, सवार।

अरंघुषः-सं० पु० तुम्बा (कड़वी तुम्बी)। अथर्व० सू० ४। ४। का० १०।

अर्कः-स० पु०
अर्क-हिं० संज्ञा पु० } (१) आक आकन्द, मन्द (द) र-हिं०। आकन्द गाछ-बं०, रुई०मा० अक्के क०। जिल्लेटु-चेट्टु-ते०। (Calotropis gigantea. Syn. Asclepias gigantea) रा० नि० व० ११। भा० पू० १ भा० : मद० व० १। (२) ताम्र, तांबा, ताँवा। Copper (Cuprum) मे० कंद्विकं० त्रैलोक्यडम्बर रस वे० निघ० वा० व्या० चि० चिन्तामणि रस (३) स्फटिक' फिटकरी। Alum (Alumen) मे० कद्विकं०, (४) अरुणार्क, लालमन्दार। (Calotropis gigantea, the red var' of) प० मु० भा० पू० १ भा०। (५) आदित्य पत्र पुष्प, आदित्यभक्त हुलहुल। (Cleome viscosa' Linn) रा० नि० व० ४। "अर्को रक्त पुष्पः प्रसिद्धः,, सु० सू० ३७ अ० अर्कादिव०। ३६ अ० शिरो० चि० १ (६) यन्त्र द्वारा परिश्रुत किया हुआ द्रव्य सारांश।

देखो अर्क या अरक्क, आरक-बं० (Aqua) (७) सूर्य्य (The sun)। (८) किसी चीज़ का निचोड़ा हुआ रस हाँग स्वरस Juice

(Succus) देखो—अरक वि० [सं०] पूजनीय।

अर्क-सहूर- } अ० अनिद्रा, निद्रानाश, नींद न आने का रोग-हिं० पर्विजिलियम (Pervigilium) इन्सॉम्निया (Insomnia) इं०। देखो—सहर।

अर्क-अ० आर्तवमती ऋतुमती, होना, स्त्री का मासिक धर्म होना ऋतु स्नान करना (Mensuration)

अर्क-नजद० (१) शुष्क व अधपक छुहारा (Dried of half matured date)-अ० (२) भपका (बारुणी यन्त्र) द्वारा परिश्रुत वारि, निर्मल परिश्रुत वारि जो औषधों से स्रवण क्रिया द्वारा प्राप्त होता है वह पानी जो बीज, मूल पुष्प और पत्र आदि से विशेष विधि द्वारा प्राप्त किया जाता है अर्कः-सं०। अर्क हिं० डिस्टिल्ड वाटर Distilled water इं० एक्वा डिस्टलेटा Aqua distillata लै० अरक़-अ०।

नोट—अर्क खींचने में जिस क्रिया को अवलम्बन किया जाता है उसको स्रवण (चुआना) विधि कहते हैं इसी विधान द्वारा शुद्धासव एवं अतर भी प्राप्त किये जाते हैं और जिस यन्त्र द्वारा उक्त क्रिया सम्पन्न होती है उसे नाड़ी यन्त्र वा बारुणी निर्माण में प्रयुक्त होने के कारण बारुणी-यन्त्र कहते हैं पूर्ण परिचय हेतु क्रम में इन शब्दों के सम्मुख अवलोकन करें।

अर्क खींचने का संक्षेप इतिहास—

आर्यों के उन्नति काल में संधान विधि द्वारा फलों और कतिपय वनस्पतियों के आसव प्रस्तुत किये जाते थे। परन्तु क्रमशः बिना सन्धान के ही बारुणी यंत्र द्वारा बीज, पत्र एवं काष्ठ का प्रभाव जल में परिणत होने लगा आर्यों का यह ज्ञान अत्यन्त प्राचीन है। अस्तु इस विषय में कई एक स्वतन्त्र ग्रन्थ भी आज हमें उपलब्ध होते हैं।

इसका बड़ा रस्म ईरानी हकीमों और सबसे अधिक पश्चात् कालीन वैद्यों तथा भारतीय हकीमों में पाया जाता है।

हेतु—(१) ओषधियों के सूक्ष्म प्रभावकारी अंश का पृथक करना। (२) औषधियों के बड़े परिमाण के प्रभाव को दोबारा तिबारा स्रवण करने से संक्षेप मात्रा में लाना और (३) उपयोग की सुविधा के लिये। ये ही कारण अर्क स्रवण करने के मूलाधार कहे जा सकते हैं, गोया अर्क एक प्रकार का सार है।

नोट—अर्क खैंचते समय सौंफ, अजवाइन आदि के उड़नशील तेल जलके ऊष्ण (१००°श) वाष्पों के साथ वाष्पीभूत हो जाते हैं।

यह एक अत्यन्त गवेषणात्मक विषय है कि आया जो द्रव्य अर्क चुआने में व्यवहृत होते हैं। उन सबके प्रभावात्मक अंश परिश्रुत द्रव में आ जाते हैं वा नहीं? आयुर्वेदीय अर्क ग्रन्थों एवं यूनानी करावादीनों में अर्क के बहुसंख्यक योग मिलेंगे, जिनमें अमूल्य प्रभाव का होना बतलाया गया है। परन्तु परीक्षा काल में प्रत्येक अर्क से अभीष्ट लाभ नहीं प्राप्त होता। बहुत से तो ऐसे हैं। जिनमें सिवा समय नष्टकरने के और कोई परिणाम नहीं, अस्तु, इस विषय में अभी काफी अनुसंधान करने की आवश्यकता है आवश्यकता होने एवं अवसर मिलने पर गवेषणापूर्ण तथा अपने अनुभवात्मक लेख द्वारा कभी इस विषयपर उचित प्रकाश डालने का प्रयत्न किया जाएगा।

अवयव—अर्कके योगों को ध्यान पूर्वक देखने से यह ज्ञात होता है कि उनमें प्रायः निम्नलिखित अवयव ही मिश्रित रूप में पाए जाते हैं, यथा—

(१) बीज, (२) पत्र, (३) गिरी(मींगी) (४) खनिज (पाषाण आदि), (५) कस्तूरी तथा अम्बर, (६) पुष्प, (७) त्वक्, (८) काष्ठ, (९) जड़, (१०) मांस रस (यख़नी) (११) माउज्जुब्न (दूध का फाड़ा हुआ पानी (१२) फल तथा (१३) निर्यासवत् पदार्थ।

औषध एवं जल की मात्रा—सामान्य बाजारू अत्तार छटाँक भर औषध में दो सेर तक अर्क प्रस्तुत कर लेते हैं। यह अत्यन्त निर्बल होता है। अस्तु दस पन्द्रह तोले से १ सेर अर्क निकालना श्रेष्टतर है

यदि पाव भर औषध हो और दो सेर अर्क निकालना हो, तो लगभग ४ सेर पानी में औषध भिगोएँ, तब दो सेर अर्क निकलेगा।

यदि अर्कमें दुग्ध भी सम्मिलित हो तो उसको प्रातःकाल अर्क निकालनेकेसमय मिलाना चाहिये

यदि अर्क के योगमें कस्तूरी, केशर तथा अंबर आदि के समान सुगन्धित द्रव्य हों तो उनको पोटली में बांधकर (वारुणी यन्त्र द्वारा अर्क चुआने की दशा में) टोंटी के नीचे इस प्रकार लटकाँए कि अर्क उस पर बूंद बूंद पड़े और फिर उससे टपक कर वर्तन में एकत्रित हो परन्तु यदि भवका द्वारा अर्क चुआना हो तो नीचे के मुख में रखना चाहिऐ।

यदि अर्क में गिरियां पड़ी हों तो उनका शीरा निकालकर अर्थात उनको पानी में पीस छानकर डालना चाहिये।

अर्क के समाप्त होने के लक्षण—

इस बात का जानना अत्यन्त कठिन है कि अर्क समाप्त हो गया या नही अस्तु इस बात के जानने के लिये कुछ कौड़ियाँ (कपर्दिकाएँ) डेग में डाल देनी चाहिए जिस समय जल समाप्त होने के समीप होगा ध्यान देकर श्रवण करने से कौड़ियों का शब्द ज्ञात होगा उस समय तत्क्षण अग्नि देना बन्द करदें।

इसकी एक परीक्षा यहभीहै कि जब अर्कसमाप्त होने को होता है तब वह अत्यल्प और विलम्ब से आता और जल की ध्वनि कम हो जाती है।

नोट—अर्क श्रवण विधान के लिये स्रवण और विविध यत्र विधान अर्थात् तत्साधनोपकरण तन्निर्माण-क्रम, इतिहास एवं उपयोग प्रभृति हेतु देखिये—वारुणी (नाड़िका) यंत्र। आयुर्वेदीय अर्कोंके लिये देखिये अर्कप्रकाश।

(१) अर्क—उस्तोख़ुद्दूस १२ तोला; गुलाब ५ तोला, मुनक्का; गावजुबा प्रत्येक१० तो० हलेला स्याह पावभर, धनिया शुष्क तीनपाव (ऽ॥।) और पोस्त हलेलाज़र्द १ सेर; सम्पूर्ण ओषधियों को तीन दिन-रात जल में भिगोकर ७ सेर अर्क खींचें।

गुण—वातरोग तथा शिरोरोग को नष्ट करता है, हृदय तथा आमाशय को बल प्रदान करता और शिर की ओर वाष्पारोहण को रोकता है। इ० अ०।

(२) अर्क़—उपर्युक्त गुणधर्म युक्त है।

योग—गुलगावज़बान २ तोला, गावजुबान गुलाब, कासनी बीज प्रत्येक २ तोला, शाहरा ३ तो० उस्तोखुद्दूस, अफ़तीमून (पोटली में बाँधकर) प्रत्येक ६ मा०, बिल्लीलोटन, बस्फ़ाइज, —पिस्ती, दरूनज—अक्रबी, हज्रअरमनी, गिले-अर्मनी, गुलसेवती, प्रत्येक ७ मा०, पोस्त, हलेला काबुली, धनियां शुष्क, गुल नीलोफर प्रत्येक १०॥ मा० इनको दो रात दिन जल में भिगोए रक्खें। तदन्तर ५ सेर अर्क खींचें।

(३) अर्क़—गुलकेतकी १ तोला गुलसेवती गुलगावजुबान प्रत्येक२तो०, गुलेनीलोफ़र, धनियाँ शुष्क प्रत्येक १० तो० २ रातदिन जलमें भिगो-कर १० सेर अर्क खींचें। उष्ण प्रकृति वाले के लिये इसमें कपूर की वृद्धि करें इससे बहुत लाभ होता है। कभी कभी कपूर के साथ बंशलोचन सफ़ेद भी यथोचित मात्रा में सम्मिलित किया जाता है अथवा उक्त अर्क का "कुर्सकाफूर" या 'क़ुर्सतबासीर" के साथ उपयोग किया जाता है

गुण—हृदय एवं मस्तिष्क को बल प्रदान करता है।

(४) अर्क़—हकीम क़ाज़मअलीखाँ सदा यह अर्क तैयार करते थे। दोबार लेखकके अनु-भवमें भी आ चुका है और मालीख़ौलिया (Melancholia) के सम्पूर्ण भेदोंमें लाभप्रद है उक्त कराबादीन (अममहूर्म) से उद्धृत है।

योग—कीकर त्वक् धोकर साफ किया हुआ १० सेर, गुड़ १ मन (शाहजहानी), पानी ४ मशक इन सबको मटके में डालकर भूमिमें गाड़ दें और उसके नीचे किञ्चित् घोड़ेकी लीद डालदें जब लाहन उठ आए अर्थात् सन्धानित हो जाये तब ३० सेर एकाग्नीय अर्क खींचें। पुनः लौंग ६ मा० जायफल, जावित्री, दारचीनी, तुन्द व शीरीं इलायची छोटी और खस प्रत्येक

१ तोला चन्दन चूर्ण २ तोला गुलाब ५ तो इन ओषधियों को एक रात-दिन उक्त अर्क में भिगो रक्खें। दूसरे दिन २० सेर द्वयाग्निकार्क खींचें पुनः उक्त लौंग, जावित्री प्रभृति ओषधियों को अर्ध मात्रा में लेकर द्वयाग्निकार्क में एक रात दिन भिगोएं और दूसरे रोज १२ सेर त्रयाग्निकार्क खींचें यदि ३मा० गुलाब का इत्र भबके में डाल दें तो उत्तम होता है। कुछ दिन बाद उपयोग में लाएं।

गुण—हकीम मुहम्मद जाफर अक्वरावादी उक्त अर्क को प्रस्तुत कर ४० दिवस पश्चात् खफकान (मूर्च्छा रोग), हृदय की निर्बलता मालीखौलियाए मराकी और शारीरिक निर्बलता की दशामें गुलाब और मिश्री के साथ अग्नि लगाकर शीतल होने पर पिलाते थे। इसकी विधि निम्न है—

मद्य १० तो० को चीनी प्याले में डालकर मिश्री और गुलाब प्रत्येक ४ तो० को परस्पर मिलाएं और शराब को आग लगाकर गुलाब में घोली हुई मिश्री उसमें डालदें, और चमचा से चलाएं जिसमें अग्नि बुझ जाये। शीतल होने पर पीयें और ४-५ घड़ी बाद भोजन करें। इ० अ०।

अर्क अजवायन—अ० फा०, अजवायन का अर्क यमान्यर्क।

निर्माण-विधि—तुख्म अजवायन १॥ पोंड, जल ३ क्वार्ट० अर्क की विधि से ४ घंटे तक अर्क खींचें।

मात्रा व उपयोग विधि—एक एक आउंस (२॥ तो०) की मात्रा में थोड़ी थोड़ी देर पश्चात् उपयोग करें।

गुणधर्म—आक्षेपयुक्त उदरशूलमें लाभदायक तथा परीक्षित है।

अर्क अजवायन मुरक्कब (जदीद)—अ० नूतन मिश्रित यमान्यर्क।

निर्माण-विधि—दारचीनी, अजवायन देशी प्रत्येक २० तो०, गावजुबान १ सेर सबको २४ घंटे तर रखकर अर्क खींचें और पुनः इस अर्कमें उपर्युक्त औषध २४ घंटे तर करके दुबारा अर्क खींचें।

मात्रा एवं उपयोग विधि—एक एक तो० यह अर्क सिकञ्जबीन सादा १ तो० मिलाकर सवेरे-शाम दिन में तीनबार या यथा आवश्यक चार चार घंटे के अन्तर से पिलाते रहें।

गुणधर्म—विसूचिकामें लाभदायक है। वमन तथा अतिसार को लाभ करता है. हर्ष जनक एवं हृद्य है।

अर्क अजवायन सादह् 'जदीद'—अ० फा० नूतन सामान्य यमान्यर्क।

निर्माण-विधि—अजवायन ऽ२॥ सेर रात को भिगोकर सवेरे १० बोतल अर्क खींचें, पुनः इसमें २॥ सेर अजवायन डालकर रातको तर कर दें. और सवेरे १० बोतल अर्क खींच लें।

मात्रा व उपयोग विधि—आमाशय तथा आंत्ररोग में जवारिस बसूबासह (जावित्री) ५ मा० के साथ और यकृद्रोग में साजुन दबी-दुजवर्द के साथ यह अर्क १॥ तो० की मात्रा में पी लें।

गुण-धर्म—आमाशय शूल, अजीर्ण, उदरा-ध्मान, जलोदर तथा यकृत की शीतलता के लिये यह अर्क अत्यन्त लाभदायक एवं शीघ्र प्रभावकारी है।

अर्क अजीब—अ० बिलचणार्क।

निर्माण-विधि—सत अजवायन, सतपुदीना कपूर प्रत्येक एक तो० सम्पूर्ण औषधों को शोशी में डालकर धूप में रक्खे, अर्क तैयार हो जायगा।

मात्रा व सेवन-विधि—४-५ बूंद, विशू-चिका, उदरशूल तथा ज्वर में अर्क बादियान १२ तोला के साथ या बतासा या शर्करा में मिलाकर वरतें। विसूचिका में एक १ घंटा बाद ऐसी खुराक दी जाऐ जब वमन तथा अतिसार बंद हो जाये तब औषध देना बंद कर दें यदि एक दो मात्रा से आराम न हो तो

स्थानीय चिकित्सक को बुलायें। किन्तु, विशूचिका के दिनों में स्वास्थ्यरक्षा हेतु एक मात्रा प्रयोग में लाया जाऐ शिरःशूल में कनपुटी (शंख) पर लेप करे और चार बूंद ताजे पानी के साथ पीलें। दाढ़ या दंष्ट्रशूल हो तो रूई का फोया इसमें तर करके वेदना स्थलपर लगाएं। वृश्चिक एवं ततैया के काटने पर भी इसे दंश स्थान पर लगाएं।

गुण-धर्म—कई रोगों पर तात्कालिक लाभ प्रदर्शित करता है। संक्रामक तथा आहार-विकार जन्य विशूचिका के लिये बहुत गुणदायक है। प्रत्येक भाँति की वेदना चाहे वह कान में हो चाहे दाढ़ में या आमाशय में हो, शिर में हो अथवा किसी भी स्थान में हो तुरन्त नष्ट होती है आमाशयिक विकार या आहार जन्य विकार के कारण जो ज्वर होजाता है उसको यह दूर करता। वि० फा० १ भा०।

अर्क अञ्जबार—अ० अञ्जवार मूल अञ्जवार की जड़ हिं० (Pyrethri Radix)

अर्क अनन्नास जदीद—अ० नूतन अनन्नासार्क।

निर्माण-विधि—त्वचायुक्त अनन्नास १२ अदद सौफ १ सेर, प्याज श्वेत २ सेर, सबको एक साथ देग में डालकर ऊपर इतना पानी डालें कि चार अंगुल ऊपर रहे। तदन्तर यथोचित विधि से अर्क खींचें। मात्रा व सेवन-विधि—८तो० अर्क में मिश्री का शर्बत बजूरी २ तो० सम्मिलित करें।

गुण-धर्म—वस्त्यश्मरी के लिये अत्यन्त लाभदायक है।

अर्क अनीसूँ—अ० अर्क वादियान रूमी, रूमी सौंफ का अर्क एक्वा एनिसाई (Aqua Anisi) ले० देखो—अर्नीसूं।

अर्क अफीम—
अर्क अफ्यून— } —अ० अफीम का

अर्क। एक्वा ओपियाई (Aqua Opii) —ले०। देखो—अफीम (वा पोस्ता)।

अर्क अफ्सन्तीन—अ० अफसन्तीन रूमी आध सेर को अर्कगुलाब ३ सेर में रातको भिगो दें। सवेरे २ सेर पानी और डालकर ४ बोतल अर्क खींचें। पुनः उक्त अर्क में अफसन्तीन रूमी आधसेर तथा अर्क गुलाब ३ सेर और पानी २ सेर डालकर दोबारा ४ बोतल अर्क खींचें।

मात्रा व सेवन-विधि—डेढ़ तो० यह अर्क सौंफ ६ तो० और शर्बत कासूस २ तो० सम्मिलित कर पिलायें।

गुण-धर्म—यकृद्विकार (शोथ व काठिन्य) के कारण जो ज्वर होता है उसमें यह अर्क बहुत गुणदायक सिद्ध होता है। यकृत् का शोधनकर्ता तथा (सांद्र) स्थूल दोषों से शुद्ध कर उसे स्वाभाविक दशामें ले आता है। सामान्य अर्क अफ्सन्तीन से यह कहीं अधिक लाभप्रद एवं शीघ्र प्रभावकारक है यह अति तीव्र प्रभावकारक है इस की मात्रा अति न्यून है।

अपथ्य—घृत तेल और अन्य तेलीय पदार्थ तथा लाल मिर्चों से परहेज करें।

अर्क अम्बर—अ० मजमुआ से उद्धृत है। हृदय व मस्तिष्क एवं उत्तमांगों को बल प्रदान करने के लिये अनुपमेय है। मूर्च्छा को नष्ट करने और शक्ति को पुनरुज्जीवित करने के लिये शीघ्र प्रभावकारक है। अस्तु, कई स्त्रियां आर्तवाधिक्य के कारण तथा कई पुरुष अर्श में अत्यधिक रक्त स्राव के कारण अन्तिम दशा को पहुंच चुके थे; किन्तु इस अर्क के पीते ही अपनी पूर्वावस्था पर लौटआये। इस अर्क के अत्यन्त विस्मयकारक प्रभाव अनुभव में आरहे हैं।

योग—मिश्क खालिस ४॥ मा०, अम्बर अशहब, मस्तगी रूमी प्रत्येक ६ मासा, वर्क रेहां नवीन, नागरमोथा तज खुश्क, धनियां, गुले गावजुबान गीलानी अनीसूं दरूनजअकरबी पिस्ता वाह्यत्वक प्रत्येक १ तो० १०॥ मासा, जर्न बाद, अगर, कबाबह, खन्दाँ, छड़ीला, बालछड़, बहमन सुर्ख बहमन सफेद शकाकुल मिश्री तेजपात, दारचीनी, जाफरान, लौंग बूनीदार, गुलाब, वंशलोचन सफेद, बड़ी इलायची, छोटी इलायची दूब पोस्त उन्नाज अबूरेशम कतरा

हुआ श्वेत चंदन प्रत्येक २ तो० ताजे बिल्वा-यती सेवका पानी ऽ॥ (आधसेर आलमगीरी), तुर्श अनार का पानी १ सेर, अर्क बेदमुश्क, अर्क गावजुबान, अर्क बादरञ्जबूयह (बिही-बोटन) प्रत्येक २॥ सेर, गुलाब किस्म अव्वल कूटने योग्य औषधियों को कूटें और सबको अर्कों के साथ एकत्रित कर रात को सुरक्षित रखे सवेरे सेव और अनार का पानी सम्मिलित कर देग में डालें तथा अम्बर व मिश्क को नीचे के मुंह में रखकर अर्क खींचें।

मात्रा—कहवे की एक प्याली से ४ प्याली तक।

नोट—चिकित्सक को रोगी की प्रकृति के अनुसार इस अर्क में परिवर्तन करना योग्य है अस्तु आमाशय पुष्टि हेतु मधुर बिही का पानी १ सेर तथा उसे उष्णता पहुँचाने एवं बलप्रदान करने के लिये बहारनारञ्ज १ तो० १०॥ मा० और अतिसार को रोकने के लिये गुलसिञ्जद या सिञ्जद समावेशित करें। इ० अ०।

अर्क अम्बर जदीद—अ० नूतन अम्बरार्क।

निर्माण-विधि—मिश्क ५ मा०, अम्बर ६ मा०, मस्तगी ८ मा०, वर्ग रेहाँ ताजा, नागर मोथा (सुअद कोफ़ी), धनियां शुष्क, गुले-गावजुबान, अनीसूं, दरूनज अकरवी, जर्नबाद, पिस्ता बाह्यत्वक् ऊदगर्की, कबाबचीनी, छड़ीला, बालछड़, बहमन सुर्ख, बहमन सफेद, शकाकुल, दारचीनी, तेजपात, लौंग, बूजीदान, गुले सुर्ख, वंशलोचन, इलायची छोटी तथा बड़ी, अलफ हिन्दी, पोस्त उन्नाब, अबरेशम कतरा हुआ, सफेद चंदन प्रत्येक ४५ मा०, केशर १ तो० ६ मा०, सेव का पानी १ सेर, खट्टे अनार का पानी २ सेर, अर्क गावजुबान, अर्क बेदमिश्क, अर्क बादरञ्जबूया प्रत्यक ५ सेर, अर्क गुलाब १० सेर जो औषध कूटने योग्य हैं उन्हें कूटकर रातको अर्कों में भिगोये। सवेरे सेवका जल, अन्नाब अनार का जल सम्मिलित कर अम्बर व मिश्कपोटली में बाँधकर नीचे के मुंह के भीतर रखें और अर्क खींचें। पुनः उपर्युक्त अर्कों के स्थान में उक्त अर्क में उतनी ही औषधियां रात को भिगोकर दोबारा अर्क खींचें।

मात्रा व सेवन विधि—दो तोला यह अर्क अन्य उपयुक्त औषध के साथ।

गुण-धर्म—उत्तमांगों को बलप्रद तथा मूर्च्छा में लाभप्रद है। अर्श तथा मासिक स्रावाधिक्य के कारण हुई अशक्तता को दूर कर पुनः शक्तिका सञ्चार करता है और कामोद्दीपक भी है, ति० फा० १ भा०।

नोट—इसी नाम के कुछ अवयव तथा मात्रा की न्यूनाधिकता के सहित कई एक और योग भी हैं जो विस्तार भय से यहाँ नहीं दिये गये हैं।

अर्क अम्बर बारीस—अ० यह अर्क आमाशय एवं यकृत को पुष्टि प्रदान करता है, पित्तकी तीक्ष्णता को नष्ट करता तथा क्षुधा की वृद्धि करता है।

निर्माण-विधि—जरिश्क गुठली निकाला हुआ १७५ तो० को २४ घंटे पानी में भिगो रखें। पुनः उसमें ६ तो० ४॥ मा० लौंग पीसकर समावेशित करें और थोड़ा सिकंजे अंगूरी (अंगूरी सिर्का) जो जरिश्क की चौथाई से अधिक न हो सम्मिलित कर विधि अनुसार अर्क खींचें। यदि इसमें थोड़ी सी चना की भस्म मिलालें तो स्वादिष्ट हो जायगा। इ० अ०।

अर्क अस्वद बारिद—अ० उष्ण प्रकृति वालों के लिये उपयुक्त एवं आह्लाद व प्रफुल्लताकारक है। मालीखोलिया तथा मराक के रोगियों के लिये जले हुये वायु के लिये लाभदायक है।

निर्माण-क्रम—गुड़ ६७॥ सेर बबूल की छाल ६७५ तो० दानों को मटके में डालकर इतने जल में भिगोये कि तिहाई मटका शेष रहे। तदनन्तर मटके को घोड़े की लीद में गाड़ दें और रख छोड़ें यहाँ तककि उसमें जोश (सधान) आने के बाद स्थिरता आ जाए। इसके बाद अर्क खींचें और पुनः उक्त अर्क को एक बर्तन में

डालें तथा चन्दन का बुरादा, शुष्क धनियाँ प्रत्येक ७॥ तो० गुलनीलोफर १५ तो० बहेड़े की छाल, आंवला गुठली निकाला हुआ प्रत्येक ३७॥ तो०, गुलगावजुवान, तुख्मकहू प्रत्येक ४५ तो०, मग़ज तुख्म कहू अधकुटा ७५ तो० तुख्म काशनी अधकुटा, तुख्म खुर्फ़ा छिला हुआ मग़ज़ तुख्मे खीरा अधकुटा प्रत्येक ६० तो०, पोस्त हलेला कावुली, किन्नब बेद (जंगली बेद के फल और फूल) व बहार प्रत्येक ११२ तो० ७ मा० गुले सुर्ख ११ सेर सम्पूर्ण औषधों को उक्त अर्क में २४ घंटे भिगोरखें। तदनन्तर अर्क खचे अर्क खींचते समय अम्बर अश्हब ६मा० नीचे के मुंह में रखे। इ० अ०।

अर्क आशोब चश्म–अ० चक्षुः शूल नाशक घोल।

निर्माण-क्रम—अर्क गुलाब शुद्ध २॥ तो०, सिल्वर नाइट्रेट (रजताम्ल, चाँदी का तेजाब रजतनत्रेत) २ग्रेन (१ रत्ती) दोनों को मिलाकर नीलवर्ण की शीशी में रखे।

मात्रा तथा सेवन विधि—दो तीन बूंद दुखते हुये नेत्र में टपकाएं।

गुण-धर्म—हर प्रकार के आँख आने (अभिष्यन्द), नेत्र दुखने में अत्यन्त लाभदायक है। विशेषतः रोहों (कुक्करों) के लिये और उस दशा में जब कि नेत्रसे कीचड़ अधिकता के साथ निकलता है तब यह अत्यन्त लाभ पहुँचाता है।

अर्क आसफ़–अ० बीज़ कबर। (The root of Capparis spinosa.)

अर्क आसव–अ०

निर्माण क्रम—गुड़ १ सेर, कीकर की छाल १२ सेर, मटके में डालकर अग्नि पर रखें, जब जोश आजाए तब बेलगिरी २० तो० लोध, अतीस मोचरस प्रत्येक ४ तो० ८ मा०, पिस्ता बाह्य त्वक्, नागरमोथा, बालछड़, पोस्त तुरंज, ज़र्नबाद प्रत्येक २ तो० ४ मा०, चंदन का बुरादा, गुलाब, खस प्रत्येक १० तो०, आमला आधसेर, माजू जौ कुट किया हुआ १ तो० २ मा०, सम्पूर्ण औषधों को मिलाकर विधि अनुसार अर्क खींच लें।

नोट—द्विआग्नेय बनाना हो तो उक्त औषधों को २४ घंटे मद्य में भिगोकर डालें।

कभी कभी कीकर की छाल ८ सेर, जामुन की छाल २ सेर और सेंभल की छाल २सेर डाली जाती हैं।

मात्रा और सेवन-विधि—६ तो०, शर्बत हब्बुल आस २तो० के साथ व्यवहार में लाये।

गुणधर्म—आमाशय-पुष्टिकर तथा आहार-जनक है एवं आमाशयिक अतिसार के लिए लाभदायक है।

अर्क इलायची–अ० बृहदेलार्क।

निर्माण-विधि—सवासेर बड़ी इलायचीको रात को पानी में भिगोंये और सवेरे २५ बोतल अर्क खींचें।

मात्रा व सेवन बिधि—१०-१२ तो० उपयोग करें।

गुणधर्म—उल्लासकारक तथा हृद्य, विशूचिका वान्ति एवं अतिसार की दशा में लाभदायक और वायुलयकर्त्ता है।

अर्क इलायची, जदीद–नूतनैलार्क २॥ सेर इलायची को रात को जल में भिगोंदें और सवेरे २५ सेर अर्क खींचें, पुनः उतनी ही इलायची उक्त अर्क में डालकर रात्रि कोभिगो रखें और दूसरे सवेरे दोबारा अर्क खींचें।

मात्रा व सेवन-विधि—३ तो० आवश्यकता नुसार अनुपान रूप से उपयोग में लाएँ।

गुणधर्म—अर्क इलायची के सदृश।

अर्क उश्वह्–अ० उश्वा का अर्क।

निर्माण-विधि—उश्वह् मगरबी सवासेर और चोवचीनी सवासेर को रात्रि में स्वच्छ जल में भिगोकर सवेरे ४० तो० अर्क खींचें।

मात्रा व सेवन विधि—७ तो० अनुपान रूप से व्यवहार में लाये।

गुणधर्म—वायुजन्य रोगों में गुणदायक है, सधिवात, उपदंश और सूजाकके लिए लाभदायक है, रक्त की शुद्धि करता एवं फोड़े फुन्सी की शिकायत को दूर करता है।

अर्क उश्वह् मुरक्कब-अ० मिश्रित उश्वार्क।

निर्माण-विधि—उश्वह् ३० तो०, बुरादा चोबचीनी, शीशम का बुरादा प्रत्येक एक पाव गुलबनफ्शा, गुल नीलोफर, गुलनीम, गुलसुर्ख, गावजुबान, शाहतरा, चिरायता, मुंडी, सरफोंका गोखुरू, श्वेतचन्दन का बुरादा, लाल चन्दन का बुरादा प्रत्येक आध पाव, पीली हड़का वक्कल, काबुली हड़ का वक्कल, बर्ग सना, बर्ग हिना प्रत्येक ५ तो० सबको १५ गुने जल में २४ घंटे तर करके जल का दो तिहाई भाग अर्क प्रस्तुत करें।

मात्रा व सेवन-विधि—सवेरे शाम दोनों समय ७-७ तो० उक्त अर्क में शर्बत उश्वह्या शर्बत चोबचीनी २ तो० सम्मिलित कर पिलायें

गुणधर्म—इसमें आश्चर्यजनक, रक्तशोधक, प्रभाव अन्तर्निहित है। उपदंश, रक्तविकार तथा अन्य वात रोगों में लाभदायक है।

अर्क क़तरान-अ० Tar Water (AQua picis) देखो-क़तरान।

अर्क क़न्दी-अ० उल्लास एवं प्रफुल्लताजनक प्रभाव में इससे उत्तम तथा स्वादिष्ट कोई दूसरा अर्क नहीं यह हृदय एवं मस्तिष्क को शक्ति प्रदान करता है खुमार बिलकुल नहीं लाता और नहीं कोई गंध रखता है, कामोद्दीपक करता एवं आहार का पाचन करता है।

योग व निर्माण-क्रम—गुड़ १ मन जहाँगीरी, कीकर की छाल ८ सेर जहाँगीरी, आवश्यकतानुसार शुद्ध स्वच्छ जल के साथ १ मटके में डालरखें। संधानित होने पर ३० सेर एकाग्निक अर्क खींचें।

अर्क कराबियह्-अ० कृष्णजीरकार्क (Caraway Water) देखो-स्याहजीरा।

अर्ककान्ता-सं० स्त्री० आदित्यभक्ता हुलहुल। (Cleome viscosa, *Linn*)-ले० रा० नि० व० ४। मद० व० १।

अर्क काफ़ूर-अ०
अर्क कपूर-हिं० संज्ञा पु० }

निर्माण-क्रम—(१) कपूर १ ड्राम, जल एक पाइण्ट। कपूर को जल में मिश्रित कर रक्खें।

मात्रा व सेवन-विधि—आवश्यकतानुसार यह अर्क एक एक आउंस की मात्रा में दिनमें दो या तीन बार।

गुणधर्म—पाचक और वायु निस्सारक।

(२) २० ग्रेन (१० रत्ती) शुद्ध कपूर को इतने मद्यसार (रेक्टिफाइड स्पिरिट) में घोलें कि आधा आउंस (१॥ तो०) हो जाये। पुनः इस घोल में एक ग्रेन परिस्रुत जल क्रमशः मिलाएँ।

मात्रा व सेवन-विधि—१ से २ औंस तक

गुणधर्म—विशूचिका एवं उदराध्मान के लिए गुणदायक है।

अर्क क़ाशनी-अ० काशनी का अर्क।

निर्माण-विधि—तुख्म कासनी सवासेर ऽ१।, रात को जल में भिगोये तथा सवेरे २० बोतल अर्क खींचें।

मात्रा व सेवन-विधि—१२ तो० उपयुक्त औषध के साथ सेवन करें।

गुणधर्म—रक्त तथा पित्त की तीक्ष्णता को दूर करता है तथा तृष्णानाशक व पित्तज शिरःशूलको लाभ करता है।

अपथ्य—उष्ण वस्तुएँ।

नोट—यदि उपर्युक्त अर्क में उतनी काशनी और डालकर दुबारा अर्क खींच लें, तो यह और भी तीव्र होगा तथा इसकी मात्रा तीन-तीन तो० सवेरे शाम दोनों समय सिकञ्जबीन सादा या शर्बत नीलोफर एक तो० सम्मिलित कर पिलाएँ। इसको अर्क कासनी जदीद कहते हैं। [वि० फ़ा० १ ख० २ भा०]

अर्क किन्नीत-अ०
अर्क गंधक-हिं० संज्ञा पु० }

मिट्टी के बर्तन में एक छोटा सा लौह त्रिपाद रख कर उसकी चारों ओर आमलासार गंधकका चूर्ण फैलाएं और त्रिपाद के ऊपर एक छोटा सा चीनी

का प्याला रख दें, तदनन्तर बर्तन के मुख पर चीनी अथवा एलीमीनियम का एक इतना बड़ा कटोरा रक्खें कि वह बर्तन के मुख पर भली प्रकार बैठ जाए। पुनः किनारों को गूँधे हुये आँटे से भली प्रकार बन्द करदें जिसमें अर्क वाष्प रूपमें बाहर न निकल सके। ऊपर वाले कटोरा में ठंडा पानी भरदें और नीचे मन्दी मन्दी अग्नि दें। गरम होने पर ऊपर का पानी बदलते रहें इसी प्रकार घण्टा दो घंटा तक करें। बाद को अग्नि नरम होने पर बर्तन का मुंह खोलकर प्याली निकालें। उसमें अर्क एकत्रित होगा इसे शीशीमें सुरक्षित रखें।

गुणधर्म—उचित मात्रा एवं उपयुक्त अनुपान के साथ विविध रोगों में इसका आश्चर्यजनक व लाभदायक बाह्य तथा आन्तरिक उपयोग होता है। जिन सबका वर्णन यहाँ विस्तारभय से नहीं किया गया।

अर्क केवड़ा—अ० केतक्यर्क।

निर्माण-विधि—केवड़ा की बासे १० अदद जल में भिगोयें और विधिअनुसार अर्क खींचें।

मात्रा व सेवन विधि—१ तो० ऐसेही उपयोग में आता है।

अपथ्य—उष्ण पदार्थ।

गुण-धर्म—हृद्य तथा प्रमोदजनक और उष्माशामक है। वैकल्य एवं श्रमनिवारक तथा उत्तमांगों को शक्तिप्रद है।

अर्क क्रियाज़ूट—अ० (Apuacreosoti) देखो—क्रियाज़ूट।

अर्क क्लोरोफ़ॉर्म—अ० सम्मोहिन्यर्क Chloroform water (Aquachloroformi) देखो—क्लोरोफार्म।

अर्क खर्बुल् हदीद—अ० मण्डूरार्क मण्डूर का अर्क।

निर्माण-विधि—(१) पुरातन मण्डूर बारीक किया हुआ १ छं०, पीपल, सुहागा, सोंठ नौसादर कूटा हुआ प्रत्येक १॥ तो०; पुराना गुड़ आधसेर मवेज़ मुनक्का १ सेर, घृतकुमारी स्वरस २ सेर। सम्पूर्ण औषधों को मर्तबान में डालकर उसका मुंह बन्द करदें। और गेहूँ की राख अथवा भूसा में गाड़ दें। ग्रीष्म ऋतु में १५ दिवसके पश्चात् तथाशरद ऋतुमें २१दिनके बाद निकाल कर ऊपरी जलीय घोल धीरे धीरे छान लें और बोतल में रखें।

गुण—यकृत नैर्बल्य, प्लीहावृद्धि, पाण्डु, तथा शोथ के लिये परीक्षित है।

मात्रा—सवेरे-शाम १ छं० की मात्रा में पिलायं, (सदरियह)।

(२) अजवाइन पीले हड़ का बक्कल प्रत्येक ७ छं०, मण्डूर १०॥ छं० औषध त्रय को यव कुट करके ऐसे बर्तन में जिसमें प्रथम घृत प्रभृति चिकनी वस्तु रक्खी गयी हो रक्खे और उसमें एक सेर गुड़ १० सेर मीठे पानी में घोलकर समावेशित करें फिर घीकुवार का स्वरस आधसेर डालकर बर्तन का मुंह बन्द करके किसी गढ़े में घोड़े की लीद के बीच स्थापित करें तीन सप्ताह पश्चात् निकाल शुद्धकर बोतल में रक्खें।

गुण-धर्म—प्लीह काठिन्य व आध्मान, उदर-शूल, क्षुधा की कमी तथा यकृत्नैर्बल्य के लिये लाभदायक है।

मात्रा—२-३ तो० या अधिक प्रकृत्यनुकूल। (अक्सी० अ०)

अर्क ख़म्मान—अ० ख़म्मान का अर्क Elder flower Water (Aqua sambuci) देखो ख़म्मान।

अर्क खुश्बू—अ० पक्षाघात, अर्द्धांग तथा सम्पूर्ण शीतजन्य मांसिक रोगों के लिये लाभदायक है।

योग व निर्माण-विधि—दालचीनी, गुल-सेवती प्रत्येक ४ सेर, जायफल जावित्री प्रत्येक २ सेर, छालिया, अगर प्रत्येक आधसेर, केशर ४ तो० और श्वेत तथा सुगन्धित पान के पत्र १०० अदद सबको थोड़ा कूटकर ७ सुराही अर्क लौंग (जो कि अर्क गुलाब में लौंगों को भिगोकर खींचा गया हो) में भिगोकर रातभर रख छोड़े तदनन्तर अर्क खींचें और उसका इत्र लेकर पृथक स्वरक्षित रक्खें तथा उसके अर्क को बोतल में डालकर पृथक सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—सवेरे शाम दो दो तो० पिलाएं। यदि मदकारक बनाना चाहें तो अर्क लौंग के स्थानमें अर्क कन्दी या अर्क खुर्मा (छुहारा) में भिगोकर बनाएं। (इ० अ०)

अर्क गजर अम्बरी व नुस्खहे कलाँ–अ० गर्जराकं विशेष।

निर्माण-विधि—गाजर ५सेर, किशमिश, मवेज मुनक्का प्रत्येक २॥ सेर, बिही, जव प्रत्येक आधसेर, मीठा, अनार, १सेर, गुलेसुर्ख, इलायची, छोटी व बड़ी, जाज व सफेद चन्दन अधरेशम (कतरा हुआ), बर्ग रैहाँ शुष्क बनियाँ गावजुवान, तुख्म कासनी तुख्म ख्यारैन प्रत्येक ५ तो०, अर्क गुलाब, अर्क केवड़ा, अर्क गाँवजुवां प्रत्येक २ सेर। केशर १ तो०, मिश्क (कस्तूरी) तथा अम्बर प्रत्येक ३ मा० को पोटलीमें बाँधकर निम्न मुख पर रख कर विधि अनुसार अर्क खींचें पुन उक्त अर्क में उपर्युक्त अर्कों के सिवा शेष सम्पूर्ण ओषधियाँ डालकर दोबारा अर्क खींचें।

मात्रा व सेवन-विधि—तीन तो० उक्त अर्क को एक मा० शर्बत अनारके साथ पान करें।

गुण-धर्म—हृद्य, मेधाजनक, कामोद्दीपक, शुद्ध रक्त उत्पन्न करता तथा प्रमोदकारक है और इसके उपयोग से मुख मण्डल पर रक्ताभा झलकने लगती है।

अर्क गजर 'जदीद'–अ० नूतन गर्जराकं।

निर्माण-क्रम—गाजर २ सेर, गावजुवान ४ तो०, गुलगावजुवान २ तो०, सफेद चन्दन ३ तो० १मा०, तोदरी सुर्ख, बहमन सुर्ख, बहमन सुफेद प्रत्येक २तो० ३ मा० सबको पानीमें भिगोकर २० बोतल अर्क प्रस्तुत करें। पुनः उतनी ही औषध उक्त जल में भिगोकर अर्क खींचें।

मात्रा व सेवन-विधि—५ तो० अनुपान रूप से उपयोग करें।

गुण-धर्म—प्रमोदजनक, बलकारक एवं उत्ताप शामक है। और मूर्च्छा तथा विभ्रम को दूर करता है।

अर्क गजर मुरक्कब 'जदीद'–अ० नूतन मिश्रित गर्जराकं।

निर्माण-विधि—छिला हुआ गाजर १ सेर बड़ा गावजुवान २ तो०, गुलेगावजुवान १॥ तो० सफेद चन्दन १॥ तो०, बहमन सफेद, तोदरी सुर्ख प्रत्येक १ तो०, सबको मिश्रित कर एक दिन-रात यथोचित जल में। भिगोकर विधि अनुसार अर्क प्रस्तुत करें। तत्पश्चात् प्रति बोतल के हिसाब से टिंकचर बिलाडोना ८ मा० स्पिरिट अमोनिया ऐरोमेटिक १६मा० और स्पिरिट आफ क्लोरोफार्म २तो० भली प्रकार मिश्रित कर रख लें।

निर्माण-क्रम—५-५ तो० दिन में ३ बार व्यवहार करें।

गुण-धर्म—हृदय तथा मस्तिष्कको बल प्रदान करता और मूर्च्छानाशक है।

अर्क गन्धक–देखो-अर्क किब्रीत।

अर्क गन्धिका–सं० स्त्री० (Ipomœa digitata) पताल कुम्हड़ा, भूमि कुष्माण्ड प० मु०।

अर्क गार कर्जी–अ० देखो-चेरी लॉरेल वाटर (Cherrylaurel Water)

अर्क गावजुवाँ–अ० गावजुवां का अर्क।

निर्माण-क्रम—गावजुवां १॥ सेर रातको जल में भिगोकर सवेरे २० बोतल अर्क निकाले।

मात्रा व सेवन-विधि—१२ तो० यह अर्क उपयुक्त औषधि के साथ सेवन करे।

गुणधर्म—उत्तमांगों को बल प्रदायक तथा शारीरोष्मानाशक है और हृदय प्रफुल्लकारक तृष्णाशामक तथा वात रोगों में लाभप्रद है।

अर्क गावजुवाँ 'जदीद'–अ० नूतन गांवजुवांका अर्क।

निर्माण-विधि—गावजुवां २॥ सेर रात को जल में भिगोये और सवेरे यथा विधि अर्क प्रस्तुत करें। फिर २॥ सेर गावजुवां उक्त अर्क में और भिगोकर दूसरे दिन दोबारा अर्क परिस्रुत करें।

मात्रा व सेवन विधि—३ तो०।

गुण-धर्म—उत्तमांगों तथा शारीरोष्मा को बलप्रद है। हृदय प्रमोदकारक, तृष्णा शामक तथा वात रोगों में लाभ पहुँचाता है।

अर्क गुलसेंभल—अ० शाल्मली पुष्पार्क अत्यन्त बलवर्धक, क्षुधाजनक, कामोद्दीपक तथा शिश्न-प्रहर्ष वृद्धिकारक है।

निर्माण-क्रम—सेमल पुष्प छाया में शुष्क किए हुए, इनके समान भाग गुलेसुर्ख तथा उतनी ही गुले मुण्डी और उससे आधी गुल चमेली को परस्पर मिश्रित कर गुलाब के समान अर्क परिस्रुत करें।

अर्क गुलाब—फा० गुलाब जल, गुलाबार्क।

निर्माण विधि—गुलाब के फूल १। सेर का यथाविधि अर्क परिस्रुत करें।

मात्रा व सेवन विधि—७ तो० अनुपान रूप से उपयुक्त औषध के साथ सेवन करें

गुण धर्म—हृदय, मस्तिष्क तथा आमाशय को बल प्रदान करता है। यकृद्वेदना, आमाशय तथा प्लीहा के लिये गुणदायक और उष्णता जन्य मूर्च्छा एवं तृषा को लाभ पहुँचाता और वाशी तथा पाचन विकार का सुधार करता है।

अर्क गुले नीम—फा० निम्ब, पुष्पार्क।

निर्माण क्रम—नीम पुष्प नवीन, गिलोय हरी, सरफोंका, मुण्डी, बर्ग शाहतरा प्रत्येक ४ तो०, खस २ तो०, तुख्म काहू तुख्म कासनी गुलनीलोफर प्रत्येक १ तो०। औषधों को यथा विधि रात को जल में भिगोएँ और सवेरे अर्क परिस्रुत करें।

मात्रा व सेवन विधि—बच्चों को ३ से ५ तो० पर्यन्त और युवावस्था वालों को आध पाव पर्यन्त यह अर्क शर्बत उन्नाब एक दो तोला मिलाकर ख़ाकसी छिड़क कर पिलाएँ।

गुण धर्म—रक्त विकार, वात और पैत्तिक क्लेदक, कुष्ठ, और कण्डु प्रभृति के लिए लाभदायक है।

सूचना—कण्डु आदि में न्यूनातिन्यून २० रोज तक उक्त अर्क को पिलाएँ।

अर्क गोगिर्द—अ० गंध काम्ल' गंधक का अर्क, गन्धक का तेजाब देखो—अर्क किब्रीत। इ० अ० मि० ख०।

अर्क गोलार्ड—गोलार्ड का अर्क। गोलार्ड्स वाटर (Goulard's water)। इं० । देखो—नाग (सीसक)।

अर्क चंदनम्—सं० क्ली०
अर्क चन्दन—हिं० संज्ञा पु० } रक्त चन्दन' जाव (Pterocarpus Santalum Linn) रा० नि० व० १२।

अर्क चोवचीनी—फा० चोबचीनी का अर्क। इ० अ०

अर्क चोवचीनी जदीद—फा० नवीन चोवचीनी का अर्क।

निर्माण क्रम—दालचीनी' गुले शुर्ख, तुख्म रैहाँ प्रत्येक ११ तो० २ मा०, लवंग, बालछड़, तेजपात, इलायची, जर्नबाद, बादरञ्जबूया, गुले-गाँवजुबां, अबरेशम कतरा हुआ प्रत्येक ५ तो० ७ मा०, वह्मन सुर्ख व स्फेद, सफेद चन्दन, ऊद हिन्दी, छड़ीला प्रत्येक १ तो० ५॥ मा०, चोवचीनी १ सेर ४॥ छटांक, सेव मीठा १०० अदद, अर्क गुलाब १ सेर ११ छं०, मिश्री १। तो० २ मा०,। चोवचीनी को टुकड़ा टुकड़ा करें और सेव को भी टुकड़ा २ करें कूटने योग्य औषधों को अधकुट करें और सम्पूर्ण द्रव्य को रात्रि में अर्क गुलाबमें भिगोए और सवेरे ८० वोतल जल सम्मिलित कर अर्क परिस्रुत करें। अर्क परिस्रुत काल में केशर १ तो० ६ मा०, मस्तगी तथा कस्तूरी विशुद्ध हर एक ३॥ मा०, अम्बर अशहब ७ मा०, इन सब को पोटली बनाकर नैचा के मुह पर भबके के भीतर लगाएँ द्वितीय बार पुनः इतनी ही औषध लेकर उक्त अर्क में भिगोए और उपर्युक्त विधि अनुसार पुनः अर्क परिस्रुत करें।

मात्रा व सेवन विधि—२ तो० भोजनोपरांत थोड़ा २ पान करें।

गुण धर्म—उत्तमांगों को बल प्रदान करता आमाशय को बलवान बनाता तथा कामोद्दीपक हृदय प्रफुल्लकारी एवं आहार पाचक है। बुद्धि एवं चेतना को तीव्रकर्ता तथा हृदय को प्रसन्न रखता है। उग्र कच्चा में रक्तशोधक है। इसके उपयोग से सम्पूर्ण रक्त विकारों की शांति होती है। मि० फाँ० १ मा०।

अर्कच्छदनम्-सं० क्ली० अर्क मूल मदार की जड़ The root of (Calotropis gigantea)

अर्क जज्जर-गाजर का अर्क इ० अ०।

अर्क जज्र सादह्-सादह् अर्क गाजर। इ० अ०।

अर्क जदीद-अ० नूतनार्क।

निर्माण विधि—अर्क पुदीना, अर्क इलायची, अर्क बादियान प्रत्येक ३ तो०, सिकञ्जबीन सादा ३ तो०, स्प्रिरिट अमोनिया ऐरोमैटिक ३० बूंद (मिनिम) सबको शीशी में डालकर भली भाँति हिलाएँ जिसमें वे मिश्रित हो जाएँ।

मात्रा व सेवन विधि—३ तो० अर्क अष्टवर्षीय बालक को पिलाएँ- दिन में ऐसी तीन मात्राएँ उपयोग में लाएँ।

गुण धर्म—शिशुओं के उदराध्मान एवं अजीर्ण के लिये अत्यन्त लाभदायक है।

अर्क जाविदानी-अ०।

निर्माण क्रम—जायफल, लौंग, बड़ी इलायची, आमला- बालछड़, धवपुष्प, प्रत्येक १० तो० दालचीनी २० तो०, बबूल की छाल सम्पूर्ण औषधों से द्विगुण, गुड़ सम्पूर्ण औषधों से चतुर्गुण। सबको एक मटके पानी में भिगो रखें जब लाहन उठ आये तो अर्क परिस्रुत करें और काम में लाएँ।

गुण धर्म—मूच्छा तथा आमाशय पुष्टि के लिये अत्यन्त गुणदायक है।

अर्क जियावे तुस-अ० मूत्रमेहार्क।

निर्माण विधि—गिलोय सब्ज, बर्गवेदसादा बर्ग जामुन प्रत्येक १ पाव; गुलनार, तुख्मकाहू, तुख्म खुर्फा, मीठे कद्दू के बीज की गिरी, मग्ज तुख्म पेठा, मग्ज तुख्म तर्बूज, तुख्म कासनी, गुल नीलोफर, सफेद चन्दन का बुरादा, रक्त चंदन का बुरादा, खस गुजराती, आमला शुष्क, झाऊ प्रत्येक ५ तो०, रात्रि में सम्पूर्ण औषधों को जल में भिगोकर सवेरे इसमें भलभलाए हुये कद्दू का पानी भलभलाए हुये खीरा का पानी बकरी का दोग प्रत्येक २ सेर, हरा कासनी के पत्ते का फाड़ा हुआ पानी १ सेर शुद्ध जल ७ सेर अधिक डालकर तवासीर और सफेद चन्दन प्रत्येक ६ मा० नैचा के मुख में लटकाकर अर्क परिस्रुत करें।

मात्रा व सेवन विधि—६ तो० की मात्रा में उक्त अर्क को सवेरे शाम पीयें!

गुण धर्म—जियावे तुस (बहुमूत्ररोग) के लिये लाभदायक है।

अर्क जीरहे विलायती-फा० उ० अर्क करावियह्, कृष्ण जीरकार्क, स्याह जीरा का अर्क-हिं० Caraway water (Aqua carui) : देखो—कृष्ण जीरक वा स्याह जीरा।

अर्क तपेदिक खासुल्खास-यक्ष्मघ्नार्क, राजयक्ष्मा का मुख्य अर्क।

निर्माण क्रम—बर्गवेद सादा आधा सेर, छिली हुई मुलेठी ½ सेर (१ पाव) दोनों को भलभलाए हुये, (मुशब्बी) कद्दू जल, भलभलाए हुये तर्बूज जल तथा भलभलाए हुये खीरा जल प्रत्येक २ सेर, ताजे कसेरू का पानी, हरे पालक के पत्ते का पानी प्रत्येक १ सेर में तर करके सवेरे सत मुलेठी बिलायती, सत गिलो देशी असली प्रत्येक १ तोला नैचे के मुँह में रखकर यथा विधि अर्क परिस्रुत करें।

मात्रा व सेवन विधि—६ तो० इस अर्क में शबंत उन्नाब २ तो०, मिश्रित कर प्रतिदिवस पिलाएँ।

गुण धर्म—राजयक्ष्मा तथा उरःक्षय रोग के लिये अत्यन्त लाभप्रद है। ताप चाहे अकेले तथा उरःक्षत के साथ हो यह दोनों अवस्थाओं में लाभदायक है।

अर्क तम्बाकू-अ० तमाकार्क' ताम्रकूटार्क,। वातग्रस्तता, पक्षाघात, अर्द्धांग, जलोदर, वायु जन्य उदर शूल के वायुका लयकर्ता, यकृत तथा मासारीका के अवरोध का उद्घाटक, जरायुस्थ विकृत दोषों का लयकर्ता एवं क्षुधा विवर्द्धन के लिए भी उत्तम है। श्लेष्मज शिरःशूल और आमवात के लिए भी गुणदायक है। अर्वाचीन चिकित्सकों के अन्वेषित पदार्थों में से है।

योग तथा निर्माण क्रम—तम्बाकू पीत एवं शुष्क २ सेर १३ छटांक (यदि तम्बाकू हरा होतो प्रत्येक १ तो० १०॥ मा०, दालचीनी, लौंग, नख, हासा प्रत्येक ६ मा० सबको ११। सेर जल में एक रात दिन भिगोएं तदनन्तर अर्क परिस्रुत करें।

मात्रा व सेवन-विधि—सवेरे शाम २-२ तो० पिलाएँ।

अर्क तम्बूल—अ० पानका अर्क।

निर्माण-विधि—गुले सुर्ख, गावजुवान, पुदीना शुष्क, पका हुआ पान का पत्ता प्रत्येक १पाव, मान्खाह, (अजवायन), सातर, फारसी, दालचीनी, लौंग, कुलिञ्जन, सोंठ, छोटी इलायची, प्रत्येक आधपाव, अर्क गुलाब ४शीशा, अर्क बेदमिश्क, वर्षाजल प्रत्येक २ शीशा सम्पूर्ण औषधों को अर्क तथा वर्षा जल में रात्रि को भिगो दे। प्रातः यथा विधि ८ सेर अर्क परिस्रुत करें।

मात्रा व सेवन-विधि—३तो० अर्क अधोष्ण करके पान करें।

गुण-धर्म—उदरशूल, वायुजन्य उदर पीड़ा तथा अन्य वातज वेदनाओं के लिये अत्यन्त लाभ प्रद है।

अर्क तिला मुरक्कब व सम्मुलफ़ार ब्रामीनी—देखो संख्या।

अर्क तिहाल—अ० प्लीहार्क, प्लीहानाशक अर्क।

निर्माण-विधि—(१) झाऊ पत्र १सेर और बादावर्द २ तो० को अधकुट करके १२ सेर जलमें क्वथित कर छानलें। पुनः इसमें गुड़ १ सेर मिश्रित कर दोबारा क्वथित करें। जब ४सेर जल शेष रह जाये तब इसको एक सप्ताह धूप में रखकर छानकर बोतलों में रख लें।

मात्रा व सेवन-विधि—प्रतिदिन प्रातःकाल निराहार मुख ६ तो० से १२ तो० पर्यन्त उक्त अर्क पान करें।

गुण-धर्म—प्लीहा शोथ को अति शीघ्र लयकर्ता है। ति० फा० २ भाग।

(२) चोकिया सुहागा, कालीमिर्च प्रत्येक ३ ग्रे०, खाने का नमक, (सेधा नमक), काबा नोन, नमक तल्ख सुलेमानी नमक, आदी का रस, घीकुवार का रस, कागजी नीबू का रस, शुद्ध सिरका प्रत्येक ६ तो० मिश्रित कर शीशा के बर्तन में डालकर दस दिवस पर्यन्त धूप में रक्खे।

मात्रा व सेवन-विधि—एक तो० इस अर्क को १२ तो० सौंफ के अर्क और एक तो० सिकञ्जबीन लेमूं में मिलाकर प्रातःकाल पान करें।

गुण धर्म—प्लीहा के लिये लाभदायक एवं आशु प्रभावकारी है। थोड़े ही दिनों में तिल्ली जाती रहती है। ति० फा० २ भा०।

(३) साल्ट (लवण) १५ तो०, तेजाब शोरा (शोरकाम्ल) हरित काई ३ तो० लौह क्वीनीन ६ मा० तेजाब के अतिरिक्त तीनों औषधों को पीसकर बोतल में रक्खे और आधा बोतल पानी डालकर खूब हिलाएं। तदनन्तर शोरकाम्ल डालकर अच्छी तरह हिलाएं और रक्खे अगले दिन बोतल को जलसे पूरित कर दे। बस! अर्क तैयार है।

मात्रा व सेवन-विधि—सम्पूर्ण औषध को १४ मात्राओं में विभाजित करे और एक मात्रा प्रति दिवस प्रयोग में लाएं।

गुणधर्म—यह अर्क वातज तथा श्लेष्मज ज्वरों को दूर करता है।

विशेष-गुण—प्लीहा वृद्धि के लिये यह अर्क अत्यन्त लाभदायक तथा सशक्त प्रभावकारक है। थोड़े ही दिनों में प्लीहा के शोथ का निवारण करता है। ति० फा० १ भा०।

(४) नवसादर, सफेद फिटकरी, सुहागा, कलमी शोरा प्रत्येक १ तो० इन सबको पीसकर घृतकुमारी के पत्र का भीतरी गूदा निकाल कर उक्त पत्र में उपर्युक्त औषधों को भर दे। परन्तु ध्यान रहे कि उक्त पत्र का निम्न भाग मज़बूत रहे पुनः ऊपर की ओर धागा बाँधकर धूप में लटका दें और उसके नीचे मिट्टी का पात्र रक्खे। उक्त पात्र में जो अर्क टपक कर एकत्रित हो जाये उसे स्वरक्षित रक्खें।

मात्रा व सेवन विधि—तीन बूंद बतासे में डालकर सेवन करें।

गुणधर्म—प्रीहा-वृद्धिके लिये अत्यन्त लाभदायक है। ति० फ्रा० १ भा०।

अर्क तेजाब—अ० तेजाब का अर्क।

(१) श्वित्र को नष्ट करता रोग स्थल से वर्ण को पृथक करता तथा देह के समान नवीन त्वचा को उत्पन्न करता है।

योग—जाज सफेद (कसीम सफेद) १२ भाग, जाज़ जर्द (कसीम पीत) २४ भाग, शोरा ४४ भाग सबको परस्पर मिश्रित कर यथा विधि अर्क परिस्रुत करे श्वित्र स्थल को गाय के शुष्क गोंबर से रगड़ने के पश्चात् उक्त तेजाब को लगाएं।

(२) हकीम अली का परीक्षित है। श्वित्र को जलाकर तथा उसमें क्षत संजनित कर उसको अच्छा कर देता है।

योग—मस्तूकूनियां (कफ आबगीना, कॉच का झाग), शोरा कसीस स्याह इसे यथाविधि परिस्रुत करे तीक्ष्ण तेजाब परिस्रुत होता है मुर्गी के डैने से श्वित्र-स्थल पर लगाएं।

अर्क तैलम्—सं० क्ली० यह तैल कुष्ठाधिकार में वर्णित है।

योग—कडुवा तेल (सरसों का तेल) ८ पल मदार के पत्ते का रस ८ पल, हल्दी एक पल और मेनसिल १ पल। इनका यथाविधि तेल प्रस्तुत करे च० द० कुष्ठ०-चि०। सा० कौ०।

अर्क दल:-सं० पु० (१) आदित्यपत्र क्षुप, हुलहुल (Cleome Viscosa.) रा० नि० व० ४ (२) अर्क वृक्ष आक, मन्दार। (Calotropis gigantea.)

अर्क दार(ल)चीनी—दारचीनी का अर्क Cinnamon water (Aqua Cinnamomi) देखो दारचीनी।

अर्क दो आतशह्—फा० द्व्यग्नीयार्क दोबार परिस्रुत किया हुआ अर्क इ० अ०।

अर्क नअ् नअ्—अ० पुदीना
अर्क नअ् नअ् फ़िल्फ़िली—अ० पुदीना
अर्क नाना—हिं०, उ० पुदीना

अर्क पुदीना, पुदीना का अर्क Peppermint water (Aqua Menthæ Peperaæ) देखो-पुदीना (वारोचनी)।

अर्क नअ् नअ् सब्ज़—
अर्क नअ् नअ् सुम्बुली—

अ० Spearmint water (Aqua menthæ viridis) देखो-पुदीना।

अर्क नअ् नोल—अ० एक्वा मेन्थोल (Aqua menthol) देखो पुदीना।

अर्क नामा—स० पु० रक्तार्क; लालमन्दार Calotropis gigantea (The red var. of-)

अर्क नुकरा—अ० रजतार्क देखो रजत।

अर्क पल:-सं० पु० (१) आदित्यपत्र क्षुप, हुलहुल (Cleome Viscosa) रा० नि० व० ४ च० द० (२) अर्क वृक्ष, मदार, आक (Calotropis gigantea)

अर्कपत्र रस तैलम्—सं० क्ली० हिं० आक के पत्तों का रस और हल्दी के कल्क से सिद्ध किया सरसों का तेल पामा कच्छु और विचर्चिका को दूर करता है। शार्ङ्ग० सं०।

अर्कपत्र स्वरस:-सं० पु० आक के पके हुये पीले पत्तों में घी लगाकर आग पर सेककर निकाला हुआ स्वरस गुनगुना करके कान में डालने से कान का दर्द दूर होता है। वृ० नि०।

अर्क पत्रा,-त्री,-त्रिका-सं० स्त्री० ईश्वरमूल वृक्ष, इशरमूल, जरावन्दे हिन्दी, रुद्रजटा, सापसन्द। (Aristolochia Indica) प० मु०। र० मा०। (२) एक लता जो विष की औषधि है। अर्कमूल।

अर्क पत्रादियोग—सं० पु० आक के पत्ते और लवण को मिट्टी के वर्तन में बन्द करके मुखपर कपड़मिट्टी करके अग्नि में फूँककर रखें। इसे मस्तु के साथ पीने से तिल्ली दूर होती है। च० द० उ० चि०।

अर्क-पर्णः-सं० पु०
अर्क-पर्ण-हिं० संज्ञा पु० } (१) रक्तार्क, लाल मदार, सूर्य, मन्दार-मह० । भा० पू० १ भा० । Calotropis gigantea (the red var. of), (२) मदार का वृक्ष, (३) मदार का पत्ता ।

अर्क पर्णिका. र्णी-सं० स्त्री० माषपर्णी, हयपुच्छा, माषानी-वं० (Teramnus Labialis)

अर्कपादः-सं० पु० (१) सूर्य कान्तमणि । (२) निम्ब वृक्ष (Melia A zadirachta, *Linn*)

अर्क पादपः-सं० पु० (१) निम्ब वृक्ष (Melia Azadirachta, Linn) (२) अर्क क्षुप, मदार, आक । (Calotropis giganttea)

अर्क पान-अ० पान का अर्क ।

निर्माण विधि-(१) गुलेसुर्ख, गाव जुवान, पुदीना, पानपत्र प्रत्येक १ पाव' अजवाइन, सातर, दालचीनी, लौंग, कुलिञ्जन, सोंठ इलायची छोटी हर एक १० तो०, अर्क गुलाब ४ बोतल, अर्क वेदमिश्क, वर्षा जलहर १२बोतल, सब औषधों को रात्रि भर भिगोकर प्रातः काल ७-८ सेर अर्क परिस्रुत करें ।

गुण धर्म—उदरशूल तथा आमाशयस्थ वेदनाशामक, वायु जन्य शूल तथा अन्य पीड़ाओं की शांति हेतु पराक्षित है । व्याज अम्म महूर्म से उद्धृत । इं० अ० ।

(२) पान १८ तो० ४ मा०, दालचीनी नं० १ पौने नौ तो०, बहमन सफेद ५ तो०, १० मा० इलायचीका दाना, जायफल, तोदरी हर एक ३॥ तो०, वर्षा जल २० सेर । यथा विधि १० सेर अर्क परिस्रुत करें ।

मात्रा—चिकित्सक की राय पर निर्भर है ।

गुण धर्म—पाचन शक्ति को बढाने, कपोलों के वर्ण को निखारने तथा कामोद्दीपन के लिए अनुभूत है । अन्य योगों की अपेक्षा कम उष्ण है । इ० अ० ।

अर्क पान जदीद-अ० ।

निर्माण विधि—योग "अर्क पान नं० १" को द्विगुण मात्रा में लेकर उक्त विधि अनुसार ७ सेर अर्क परिस्रुत करें । पुनः उतनी ही औषध और रात्रि भर भिगोकर दोबारा ७ सेर अर्क परिस्रुत करलें ।

मात्रा व सेवन विधि—पौने २ तो० इस अर्क को उपर्युक्त शर्बत के साथ मिलाकर सवेरे शाम दोनों समय पिलाए । यथा—

हृद्रोग में शर्बत सेव या गुड़हल अथवा केवड़ा मिलाएँ, आमाशयिक शूल, एवं वातज वेदनाओं में सिकञ्जबीन सादा या नीमू मिलाए ।

गुण धर्म—आमाशय तथा हृद्रोग को लाभ पहुँचाता है उदर तथा आमाशयिक वेदना में लाभदायक है और वातज वेदनाओं को शमन करता है । हृद्रोल्लासारक तथा हृदय शामक है ति० फा० २ भा० ।

अर्क पियाराङ्गा मुरक्कब-अ० पियारांगा का मिश्रित अर्क । देखो—पियारांगा । ति० फा० २ भा० ।

अर्क पुदीना-
अर्क पुदीना जदीद- } अ० पुदीना का अर्क, नव्य पुदीनार्क । देखो—पुदीना ।

अर्क पुष्प योग- सं० पु० आक के फुल तेल में पकाकर सेवन करने से स्त्रियों का मासिक धर्म खुलकर आता है । यो० र० ।

अर्क पुष्पा-सं० स्त्री० क्षीर काकोली । क्षीर काँकल व० । देखो क्षीरकाकोली (Kshira kakoli)

अर्क पुष्पिका-
अर्क पुष्पी- } सं० स्त्री० (१) सूर्य्यवल्ली । अन्धाहुली, अर्क सदृश पुष्पी लता, अर्कहुली, क्षीरब्रम्, दधियार-हिं० । श्वेत हुड़हुड़िया-वं० (Gygandropsis Centahylla' Syn. Cleome pentaphylla) शिर दोड़ी-मह० । पर्याय पयस्या, सूर्य्यवल्ली, सितपर्णी शीतपर्णी र० । भा० ४ म० बाल रो० चि० ।

गुण—यह कृमि, श्लेष्म, प्रमेह तथा पित्त नाशक है । मद० व० ६ । यह कृमि, कफ, प्रमेह

तथा मनोविकार नाशक है। भा० पू० १ भा०। (२) रक्त अपराजिता। रत्नो०। (४) क्षीर काकोली, (See-kshira kakoli) र० भा०। (४) सूर्यमुखी।

अर्क पुष्पी कल्कम्-सं० क्ली० आकड़े के फूल गाय के दूध में पीसकर ३ दिन तक रोज प्रातः पीने से दाह युक्त प्रबुद्ध पथरी का नाश होता है। वृ० नि० र० भा० ५ अर्श।

अर्क प्रभा गुटि (डि) का-सं० क्ली० रसायनाधिकार में वर्णित रस विशेष। प्रयोगा० रसायना०।

अर्क प्रकाश-सं० पु० रावण कृत ग्रन्थ जिसमें अर्क के अनेक उत्तम से उत्तम योग एवं उनके चुआने की विधियाँ दी गई हैं।

अर्क प्रिया-सं० स्त्री० (१) आदित्यभक्ता, हुलहुल हुड़हुड़िया व०। (Cleome viscosa)। (२) जवा। जपा। अड़हुल। गुड़हर। ओड़ पुष्प वृक्ष। अड़उल। (Hibiscus Rosa Sinensis) रा० नि० व० १०।

अर्क बहार जदीद-अ० निर्माण विधि-अनार अम्ल व मधुर, सेब, बिही हर एक डेढ़ (१॥) सेर, ताख मीठा, अमरूद हरएक एक सेर, जरिश्क का रस २० तो०, सफेद चन्दन का बुरादा आधा सेर, इनसे यथा विधि अर्क परिस्रुत करें। पुनः उतनी ही औषध उक्त अर्क में डालकर दोबारा अर्क खींचे।

मात्रा व सेवन विधि-३ तो० अर्क पान करें।

गुणधर्म-उत्तमांगों को बल प्रदान करता मालीखोलिया (Melancholia) मूर्च्छा, भ्रम तथा भय दूर करने के लिए अत्यन्त लाभदायक सिद्ध हुआ है।

अर्क फौलाद-अ० लोहे का अर्क, लोहासव। देखो-लौह।

अर्क बन्धु-हिं० संज्ञा पु० [सं] पद्म। कमल। The lotus

अर्क बनफ्शह् जदीद-अ० नूतन बनफ्शार्क।

निर्माण विधि-बनफ्शा ३॥ सवा सेर रात को उष्ण जल में भिगो कर सवेरे ४० बोतल अर्क परिस्रुत करें और उक्त अर्क में दोबारा उतना ही बनफ्शा तर करके पुनः दोबारा ४० बोतल अर्क परिस्रुत करें।

मात्रा व सेवन विधि=३-३ तो० प्रातः सायं शर्बत नीलोफर या बनफ्शा एक तो० मिला कर पान करें।

गुण धर्म=प्रतिश्याय, नजला, तथा शिरशूल में अत्यन्त लाभदायक है। ति० फा० २ भा०।

अर्क बरिञ्जासिफ 'जदीद,-अ० नूतन बरिञ्जासिफार्क।

निर्माण विधि—बरिञ्जासिफ, शुकाई, बादावर्द, मकोय शुष्क, सौंफ, मवेज मुनक्का- हर एक ४० तो०, गुले गावजुबान २० तो० सम्पूर्ण ओषधों को रात्रि में उष्ण जल में तर करके प्रातःकाल हरी मकोय का रस ३ सेर योजित कर २८ बोतल अर्क परिस्रुत करें। उक्त अर्क में पुनः उपर्युक्त औषधों को उतनी ही मात्रा में मिला अर्क खींच लें।

मात्रा व सेवन विधि--३ तो० प्रातः साय मातदिल शर्बत बज़ूरी या शर्बतदीनार आवश्यकतानुसार मिला कर पिलाए।

गुणधर्म—आमाशय तथा यकृत् को बल प्रदान करता है। शोथ लयकत्ता एवं श्लैष्मिक ज्वरों में लाभदायक है।

अर्क बल्लभा-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं] गुड़हर। ओड़ पुष्पी। (Hibiscus Rosa-sinensis),

अर्क बहार-अ०

निर्माण-विधि—गुलतरशावह् २ सेर, अर्क गुलाब १ सेर, सौंफ, मवेज मुनक्का, किशमिश हरएक १५ तो०, ऊद, जर्नब, बहमन सुर्ख, बहमन सफेद, शकाकुल हरएक १ तो० अम्बर पौने दो (१॥) तो०। सबको १४ सेर जल में रात को भिगोकर प्रातकाल ५ सेर अर्क परिस्रुत करें। कभी पान पत्र १०० अदद, इलायची, दारचीनी, लौंग हरएक १४ भा० और डालते हैं।

मात्रा वसेवन-विधि—१० तो०, अनुपान रूप से सेवन करें।

गुण धर्म—मूर्च्छा व विभ्रम में लाभप्रद है। तृषानाशक तथा उत्ताप शामक है और हृदय एवं मस्तिष्क को प्रमोद प्रदान करता है।

अर्क बहार जदीद-अ०

निर्माण-क्रम—गुलतुरञ्ज सादा १० सेर, अर्क गुलाब २ सेर, सौंफ, मवेज मुनक्का, किश-मिश प्रत्येक ३०तो०, ऊद,जर्नब, बहमन सुर्ख बा सफेद, शकाकुल हरएक २ तो०, अम्बर ३॥ मा०। सबको तीन सेर पानी में रात को भिगो कर प्रातःकाल अर्क परिस्रुत करें। उक्त अर्क में उतनी ही औषध और भिगोकर दूसरे दिन पुनः दोबारा अर्क परिस्रुत करें।

मात्राब सेवन-विधि—३-३ तो० प्रातः सायं व्यवहार में लाएँ।

गुण-धर्म—मूर्च्छा में लाभप्रद है तृषा को नाश करता एवं उत्ताप को शमन करता है। हृदय तथा मस्तिष्क को उल्लास प्रदान करता है।

सूचना—कभी पान पत्र २०० अदद, इला-यची, दालचीनी, लौंग हरएक २ तो० ४ मा० अधिक डालते हैं। ति० फा० १ भा०।

अर्कबादियान-अ० सौफ का अर्क।

निमाण-विधि—सौफ २॥ सेर, रात को पानी में भिगोकर प्रातःकाल ४० बोतल अर्क परिस्रुत करें।

मात्रा व निर्माण-विधि—१२ तो० अनु-पान रूप ये सेवन करें।

गुण-धर्म—उस यकृद्वेदना व आमाशय तथा वृक्क की पीड़ा में जो शीतलता के कारण हुई हो, लाभदायक है। यकृद्दोषोद्घाटक और वायु लय-कर्त्ता है। ति० फा० १ फा०।

अर्क बादियान मुरक्कब "जदीद"-अ० देखो-अर्क बादियानसिफ जदीद।

अर्क बेद मुश्क-फा० माउल् खिलाफ-अ०। वेदे-मुश्क का अर्क-द०। Salixcaprea, *Linn* (water of) देखो वेदमुश्क।

अर्क बेद स.दह्-अ०

निर्माण विधि—वर्गवेदसादा १। सेर को रात्रि भर जल में भिगोकर प्रातःकाल दस बोतल अर्क परिस्रुत करें पुनः उतना ही बेद सादा उसमें तर करे और दोबारा दश बोतल अर्क परिस्रुत करें।

मात्रा व सेवन-विधि—तीन तीन तो० प्रातः सायं यह अर्क शर्बत उन्नाब २ तो० में मिलाकर पिलाऐ।

गुण-धर्म—हृदय की उष्मा, भ्रम एवं मूर्च्छा को दूर करता है। उष्माजन्य रोगों में लाभदायक है। राजयक्ष्मा में विशेषकर गुणदायक है। साधारण अर्कों की अपेक्षा यह अर्क अधिकतर लाभदायक है। ति० फा० २ भा०।

अर्क भक्रा-सं० स्त्री०, हिं० संज्ञा स्त्री० ब्राह्मी,ब्राह्मी शाक (Hydrocotyle asiatica) (२) हुड़हुड़े। हुल हुल। हुरहुर का वृक्ष-हिं० सूर्य्य फुलवल्ली-म०। (Cleome viscosa) रा० नि० व० ४१ र० मा०।

अर्क भूतिः-सं० स्त्री० ताम्र भस्म। (Copper oxide) वै० निघ० २ भा० वीर ताम्ररस० संग्रहणी० चि०।

अर्क मको-स० मकोय का अर्क।

निर्माण-विधि—मकोशुष्क सवासेर को भिगो कर २० बोतल अर्क परिस्रुत करें।

मात्रा व सेवन विधि—१२ तो० अर्क यथाविधि व्यवहार करें।

गुण-धर्म—उत्तमाँगों तथा प्रकृतोष्मा को शक्ति प्रदान करता है। उष्मा को शमन करता तथा पिपासाको तृप्ति प्रदान करता है। वायु रोगों मूर्च्छा तथा भ्रम में विशेषकर लाभदायी है। ति० फा० १ भा०।

अर्क मको जदीद-अ०

निर्माण-विधि—मको शुष्क २॥ सेर को जल में भिगोकर बीस बोतल अर्क परिस्रुत करें। पुनः उतना ही मको शुष्क उक्त अर्क में भिगोकर दुबारा अर्क खींचें।

मात्रा व सेवन-विधि—५ तो० अर्क अनुपान रूप से व्यवहार में लाएं।

गुण-धर्म—अर्क मको के समान।

अर्क माउज्जुब्न—अ०

निर्माण-क्रम—पीले हड़ का बक्कल, काबुली हड़ का बक्कल, काले हड़ का बक्कल, हरी गिलोय, बकायन के पत्र, बकायन की छाल, निम्बछाल, निम्बबीज, विजयसार पुष्प, गावजुबान, कासनी के बीज, कासनी की जड़, हिरनखुरी, धमनी की गिरी, आमला की गिरी; हड़ का बक्कल, धनियां खुश्क, मौलसिरी वृक्ष की छाल हरएक १० तो०, शाहतरा, चिरायता, सरफोका, मेंहदी के पत्र, अबरेशम, रक्तचन्दन का बुरादा, श्वेत चन्दन का बुरादा, शीशम का बुरादा, इनबुस्स अलब खुश्क (सूखी मकोय) गुलेसुर्ख झाड़ी बेरकी मूल-त्वचा भंगमूल, बहेड़ा मूल त्वचा, चमेली पत्र, आबनूस का बुरादा, उन्नाब, इक्षुमूल प्रत्येक ५ तो०, मज़फलूस आधसेर, माउज्जुब्न एकपाव, मजीठ एक पांव सबको भिगोकर प्रातः काल ४० बोतल विधि अनुसार अर्क परिस्रुत करें।

मात्रा व सेवन विधि—१० तो० अर्क उपयुक्त औषधों के साथ उपयोग में लाएँ।

गुण धर्म—आह्लादजनक, शामक तथा रक्त शोधक है। वातज रोगों में अत्यन्त लाभजनक सिद्ध हुआ है। ति० फा० १ भा०।

अर्क माउल्लहम कासनी मकोवाला—कासनी तथा मकोवाला मांसार्क।

निमाण विधि—वरिञ्जासिफ, शुकाई, वादावर्द, विल्लीलोटन, सौंफ (कूटा छाना हुआ), मवेज मुनक्का, कबर की जड़, इजखिर की जड़, मुलेठा, हरी गिलोय, मको हरएक १० तो०, गावजुबान, गुले गावजुबान हरएक ५ तो०। सम्पूर्ण औषधो को रात्रिभर उष्ण जल में भगोएँ। प्रातः हरी काशनी का पानी, मकोय को पानी जिनमें उक्त दोनों औषधें २ सेर डालीं हों, डालकर युवा बकरे के ४ सेर मांस की यखनी निकाले और उपर्युक्त औषधों को डाल कर विधि अनुसार २० बोतल अर्क खींचे।

मात्रा व सेवन-विधि—५ तो० उक्त अर्क को उपयुक्त औषध के साथ व्यवहार करें।

गुण-धर्म—शरीर को पुष्ट करनेवाला, शोथ लयकारक तथा आमाशय और यकृत की दशा को सुधारने वाला है। ति० फा० १ भा०।

अर्कमाउल्लह् मखास—अ० मुख्य मांसरसार्क।

निर्माण-विधि—बालछड़, तेजपात, छोटी इलायची, बड़ी इलायची, बहमन सफेद, लौंग, दालचीनी, ऊदखाम, पोस्त तुरञ्ज, गावजुबान, बूजीदान, छड़ीला, श्वेतचन्दन, बादरञ्ज, बूया, राम तुलसी के बीज, गुलगावजुबान, सूखी धनियाँ, जर्नबाद, सौंफ, दरूनज, मस्तगी; सुअद बोफी (नागरमोथा) हरएक ४॥ तो०, शक्काकुल मिश्री, सालबमिश्री, गुलेसुर्ख, अबरेशम (कतरा हुआ) प्रत्येक ६ तो०, बैल का शिश्न ३ तो०, गोस्त हलबान (बकरी के एक वर्ष तक के बच्चे को हलबान कहते हैं, इसका मांस) २४ सेर बटेर २४ अदद, अर्क बेदेमुश्क ६ सेर, अर्क गावजुबान ६सेर। अंगूर, सेब, बिही, रेंगेमाहीं, माही रोविया (झींगा मछली) हरएक ३ सेर; झींगा मछली शुष्क या ताजा ६सेर, अम्बर २। तो०, मिश्क २। तो०, चोजहेमुर्ग १४ अदद, साँड़ा १० मात्रा सम्पूर्ण मांसों की यखनी प्रस्तुत करके ऊपरोल्लिखित औषधें सम्मिलित करे और ८० बोतल अर्क परिस्रुत करें।

मात्रा व सेवन विधि—५ तो० अर्क उपयुक्त औषध के साथ व्यवहार में लाये।

गुणधर्म—उत्तमांगों और अर्वाह की शक्ति के लिये मुख्य पदार्थ है। यह सामूहिक शारीर शक्ति की वृद्धि करता है। कामोद्दीपक, स्तम्भक तथा प्रफुल्लताकारक है। हृदय को प्रफुल्ल और चित्तको प्रसन्न रखता है। शुद्ध शोणित उत्पन्न करता एवं मुख की कान्ति को निखारता है। ति० फा० १ फा०।

अर्क माउल्लहम् जदीद-अ० नूतन मांसार्क।

निर्माण-विधि—बकरे का मांस १२ सेर (या हलबान सेर मस्त, मस्त सिंह के बच्चे का मांस), नर गोरैया (नर कुञ्जशक) १०० मात्रा कबूतर लवा, बटेर प्रत्येक ५० मात्रा मुर्गी का बच्चा ३० मात्रा तीतर २० मात्रा सम्पूर्ण मांस को शुद्ध स्वच्छ कर यखनी पकाएं तदनन्तर उसमें मोमियायी, जुन्दबेदस्तर, सुअद कोफी (नागरमोथा), जदवार, केशर, कस्तूरी, अम्बर, हरएक एक तो०, गुलगावजुवान, कबाबचीनी, बालछड़, तबाशीर, बसफाइज, दरूनज, सीसालियूस ऊदसलीब, सातर फारसी फितरा सखियून, चीता, फरासियून, जाबित्री, जायफल, तुख्म, जर्जीर, मायहे सुतुर ऐराबी, रेगमाही हब्बुल कुल्कुल, प्रत्येक २ तो०, अजबायन, जूफ शुष्क, बज्जतुर्की हरएक ३ तो० ४॥ मा०, दालचीनी, तुन्द बेला, अब्रेशम् (कतरा हुआ) प्रत्येक ७ तो० १॥ मा०, तुख्म हलियून, मूली के बीज, स्पस्त, तुख्म बालगो, तुख्म शर्बती, तुख्म रेहाँ, तुख्म फरञ्जमिश्क, वर्ग फरञ्जमिश्क, बीख, सोसन, आसमानजूनी, गुले बाबूना मगास (मेदा), मूजीदान, कुर्फा, तज, मस्तगी, नागेसर, छड़ीला, तेजपात, रक्तचन्दन, उस्तोखुदूस, जेराबन्द मदहर्ज, माहीरोबियां (झींगा मछली), जनब, असारून, कोकनार, हरएक ४। तो०, बहमन सुर्ख व सफेद, तोदरी सुर्ख वा सफेद ऊदगर्की, शकाकुल, मिश्री, सुरिञ्जानशीरीं, गावजुबान, इन्द्रजोमधूर, बादियान, खताई, गुलेसुर्ख, इलायची, छोटी व बड़ी बादरञ्जबूया, परसियाबसान (हंसराज), पुदीना, जिन्तियाना, कूलिञ्जिन, तुख्म खर्बूजा, तुख्म गाजर, तुख्म खितमी, सफेद तुख्म, खुब्बाजी, हब्तुल्खजरा, हब्बुस्समूनह, हब्बुल कुर्तम, हब्बुल कुल्कुल, सपिस्ताँ, माहीरोबियां (झींगा मछली) प्रत्येक ८॥ तो०, चोबचीनी, अम्बर जर्द, मवेज मुनक्का, किशमिस हरएक २४ तो० खार खसक (मुरब्बा) सेवमधुर का पानी विही मधुर का पानी मीठे अनार का रस हरएक ६८ तो०, मिश्री २सेर ८ छटांक ४ तो० बर्ग रेहाँ ताजा आधसेर उन्नाव बिलायती १०० मात्रा अम्बर कस्तूरी केशर के सिवा जो औषधें कूटने की हैं उनको कूटकर मांसो में डालकर एक रात दिन रहने दें दूसरे दिन अर्क गुलाब अर्क वेदेमुश्क हर एक दोबोतल अर्क गावजुबान, अर्क खयार शम्बर (अमलतास) प्रत्येक ३ सेर ताजे गाजर का रस, हबुजल हरएक बीस सेर सम्मिलित करके प्रथमवार १२-१४ सेर अर्क प्राप्त करें। इसे पृथक् रखे पुनः उतना ही और अर्क परिस्रुत करें यह दूसरी कक्षा का अर्क प्रस्तुत होगा अम्बर, कस्तूरी, केशर को पोटली बाँधकर नैचा के मुखमें रखें।

मात्रा व सेवन-विधि—१तो० अर्कमें २तो० मिश्री मिलाकर प्रयोग करें। कोई विशेष परहेज नहीं। हाँ! अम्ल वस्तुओं से बचना आवश्यकीय है।

गुणधर्म—पुरुष शक्ति को विवर्द्धित करनेवाला, शरीर में बल का संचार कर्ता, वृक्क को शक्ति देता, वायुलय कर्ता संधिवात और नजलाके विकार को लाभ पहुँचाता है शीतल रोगों के नष्ट करने में अक्सीर है। ति० फा० १ भा०।

अर्क मुख्तरिञ्च-अ० एक अर्क विशेष इ० अ०।

अर्क मुण्डी-अ० मुण्डी का अर्क।

निर्माण विधि—मुण्डी सवा सेर को पानीमें भिगोकर सबेरे २० बोतल अर्क खींचें।

मात्रा व सेवन विधि—७तो० यह अर्क अनुपान रूप से व्यवहार में लाएं।

गुणधर्म—रक्तशोधक और उल्लासकारक है। दृष्टिको शक्ति प्रदान करता, उत्तमांगों को बलवान बनाता और रोध उद्घाटक है। ति० फा० १ भा०।

अर्क मुण्डी जदीद-अ० नूतन मुण्डी का अर्क।

निर्माण-क्रम—मुंडी २॥ सेर को पानीमें भिगोकर प्रातः २० बोतल अर्क परिस्रुत करे पुनः उतनी ही मुंडी उक्त अर्क में भिगोकर दोबारा अर्क खींचें।

मात्रा व सेवन विधि—३ तो० अनुपान रूप से सेवन करे।

गुण धर्म—अर्क मुंडी के समान ति० फा० १ भा०।

अर्क मुवही व मुकव्वी-अ० बल्य व कामोद्दीपक अर्क।

निर्माणविधि—जावित्री, लौंग, सालबमिश्री दालचीनी हर एक १॥ मासा, गुल गुड़हल, किशमिश, मिश्री प्रत्येक १० तो०, वर्षा जल २ सेर औषधों को अधकुट करके बोतल में डालकर तीन चार दिन तक धूप में सुरक्षित रक्खे जिससे उसमें खूब जोश आजाये तदन्तर व्यवहार में लाएँ इ० अ०।

अर्क मुरक्कब मुसफ्फी खून-अ० रक्तशोधक मिश्रित अर्क विशेष।

निर्माण विधि—बर्ग साहतरा, तुख्म शाहतरा, चिरायता, सरफोंका, मुण्डी, नीलकण्ठी, ब्रह्मदण्डी, आबनूसका बुरादा, शीशम का बुरादा, रक्त व श्वेत चन्दन का बुरादा, अफ्तीमून (पोटली में बाँधकर), वसफाइज. उश्वा हर एक ५ तो०, बर्ग हिना, गुलहिना, बर्ग नीम, गुलनीम हरएक ७ तो० नीम की छाल, बकायन की छाल, शीशम की छाल, कचनार की छाल हर एक पाव सेर, उन्नाव, धमासा हर एक आध पाव, सबको तीस सेर पानी में यहाँ तक क्वथित करे कि सात सेर पानी शेष रह जाऐ। पुनः साफ करके अर्क खींचे।

मात्रा व सेवन विधि—५ तो० इस अर्क को ४ तो० शर्बत गुलाबके साथ प्रातः सायं सेवन करें।

गुणधर्म—रक्तशुद्धि के लिये अनुपम है। फोड़े फुन्सी, तथा खुजली को दूर करता है और उपदंश तथा अन्य वातरोगों में लाभप्रद है।

अर्क मुसक्किन जदीद-अ० नवीन शामक अर्क।

निर्माण क्रम—अर्क अजीब (कपूर, सत अजवायन, सत पुदीना समभागको लेकर मिलालें) १५ बूंद में, १ बूंद, कार्बोलिक एसिड मिला कर रखे।

मात्रा व सेवन विधि—जरा सी रूई को पुरेरी इस अर्क में तर करके मसूढ़ों पर लगाएं और यदि छिद्र हो तो उसमें भरदें।

गुणधर्म—दन्तपीड़ा को तत्काल बन्द करता है ति० फा० १ भा०।

अर्क मुसफ्फी-अ० अर्क रक्तशोधक, शोधक अर्क।

(१) निर्माण विधि—शाहतरा के बीज, शाहतरा का पत्ता, सरफोंका, मेंहदीकी हरी पत्ती, भाऊ की हरी पत्ती, मुण्डी, ब्रह्मदण्डी, नीलकंठी उटङ्गन, अफ्तीमून, चिरायता, तुख्म काहू, तुख्म कासनी, रक्त व सफेद चन्दन का बुरादा शीशम की लकड़ी का बुरादा, आबनूस का बुरादा नीम पुष्प, बेल कारवी, समस्त औषधोंको समान भाग लेकर रात को बलई दार देगचा में भिगो के प्रातःकाल यथा विधि अर्क खींचें।

मात्रा व सेवन विधि—प्रकृति तथा अवस्था नुसार ६ से १२ तो० तक उक्त अर्क को शर्बत उन्नाव या शर्बत शीशम प्रभृति में मिला कर पिलाएँ।

गुण धर्म—रक्त शुद्धि के लिए अत्युत्तम है। सूक्ष्म एवं निर्बल प्रकृति वालों के लिए विचित्र वस्तु है। अति शीघ्र लाभ करता है।

(२) निम्ब पुष्प; निम्ब फल, निम्ब वृक्ष की छाल, निम्ब पत्र, मेंहदी की हरी पत्ती, मेंहदी का फूल, शीशम वृक्ष की छाल, कचनार की छाल प्रत्येक एक पाव। सबको ८ सेर जल में क्वथित कर शुद्ध करें तदनन्तर अर्क परिस्रुत करें।

मात्रा व सेवन विधि—३ तो० से ५ तो० पर्यन्त प्रति दिवस प्रातः सायं पिलाएँ।

गुण धर्म—यह अत्यन्त सरल योग है, किंतु अन्तिम वैद्य का रक्तशोधक तथा अनुभूत है। ति० फा० १ भा०।

(३) अर्क मुसफ्फी जदीद—नीम पत्र, नीम की छाल, बकाइन की छाल, बकायन का पत्ता, कचनार की छाल मौलसिरी की छाल, छोटी दुद्धी; श्याम भृंगराज पत्र, जवासा के पत्ते की छाल, गूलर की छाल, मेंहदी पत्र, मुण्डी, शाहतरा, सरफोंका, धमासा, खोव विजयसार, गुल नीलोफर, गुलेसुर्ख, शुष्क धनियाँ श्वेत चन्दन, तुख्म कासनी, कासनी की जड़, मजीठ, बर्ग वेद सादा, शीशम की लकड़ी का बुरादा,

प्रत्येक २० तो० सब को एक दिन रात जल में भिगोकर १२ सेर अर्क खींचें और इस अर्क में दोबारा उपर्युक्त औषधों को भिगोकर १२ सेर अर्क परिस्रुत करें।

मात्रा व सेवन विधि—तीन तीन तोला इस अर्क में शर्बत उन्नाव या शर्बत शीशम १ तो० मिलाकर प्रातः सायं पिलाएँ-

गुण धर्म—उत्तम रक्त शोधक है फोड़े फुन्सी का विकार इसके उपयोग से जाता रहता है। शरीर तथा चहरे का रङ्ग साफ हो जाता है। उपदंश तथा सूजाक में भी लाभ पहुँचाता है। अत्याहार तथा प्रबल प्रभावकारक है। ति० फा० २ भा०।

अर्क मुसफ्फी खून बनुरखा कलां-अ०

निर्माण विधि—नीम पत्र, नीम की छाल, बकाइन की छाल' कचनाल की छाल, मौलसरी की छाल, दुद्धी जर्द, काली भंगरैया का पत्ता, जवासा के पत्ते की शाख, गूलर की छाल, मेंहदी का पत्ता, मुण्डी- शाहतरा, सरफोंका, धमासा, बिजय सार की लकड़ी, गुलनीलोफर, गुले सुर्ख, शुष्क धनियाँ, श्वेत चन्दन, तुख्मकासनी, कासनी की जड़, मजीठ, बर्ग वेद सादा, शीशम की लकड़ी का बुरादा, प्रत्येक १० तो०। इन सब औषधों को २४ सेर जल में रात दिन तर करे। तदनन्तर १२ सेर अर्क परिस्रुत करें। कभी नीम का बीज, बकाइन का बीज, तुख्म शाहतरा, तगर अफ्तीमून, तेजपात, हरी गिलोय, उन्नाव' खस, चिरायता, प्रत्येक १० तो० और समावेशित करते हैं।

मात्रा व सेवन विधि—१२ तो० यह अर्क शर्बत उन्नाव २ तो० के साथ पीएँ

गुण धर्म—इस अर्क से रक्त शुद्ध होता है! फोड़े फुन्सियों की शिकायत दूर होती है तथा चेहरे का रङ्ग अरुणाभ और साफ निकल आताहै यह उपदंश व सूजाक में भी लाभदायक सिद्ध हुआ है। ति० फा० १ भा०।

अर्क मुहल्लिल—अ० लय कारक अर्क।

निर्माण विधि—कलमी शोरा ४तो०, गंधक आमलासार, गोखरू, हर एक १तो० सबकी पानी में भिगोकर अर्क परिस्रुत करे और उक्त अर्क में झाऊ का पत्ता ८ तो० गुले गाफिस, अफसंतीन रूमी, वालछड़, तुख्म खर्बूजा, तुख्म कासनी सौंफ की जड़, कासनी जड़; करफ्स (अजमोदा) की जड़, इजखिर की जड़, प्रत्येक ८ तो०, मकोय की हरी पत्ती का फाड़ा हुआ पानी कासनी की हरी पत्ती का फाड़ा हुआ पानी प्रत्येक २ सेर शुद्ध सिरका १ सेर सम्मिलित कर यथा विधि अर्क परिस्रुत करें।

मात्रा व सेवन विधि—५ तो० अर्क प्रति दिवस प्रातः काल सेवन करें।

गुण धर्म—यह अर्क समस्त उदरियावयवों के शोथ का लयकर्ता है।

विशिष्ट गुण—यकृद शोथ तथा प्लीहा शोथ के लिए विशेष कर लाभप्रद है। ति० फा० १ भा०।

अर्क मूर्ति रस—सं० पु० यह रस सन्निपात ज्वर में प्रयुक्त है। भै० ज्व० चि०।

अर्क मूर्ती रसः—सं० पु० ताम्बे के पत्र के दोनों तरफ बराबर पारा और गन्धक लपेट कर हांडी में रख ऊपर से हांडी का मुख बन्द करके दो पहर तक तीव्र अग्नि में पकाएँ फिर स्वांग शीतल होने पर ताम्बे के पत्र के बराबर बच्छनाग और उतना ही गन्धक मिलाकर चित्रक के क्वाथ और अदरख के रस से भावना दें।। मात्रा—१ रत्ती।

गुण—यह सूजन-पांडु, कफ और वातरोगों को नष्ट करता है। इसपर लघु पथ्य खाना उचित है रस० यो० सा०।

अर्कमूल-हिं० संज्ञा पु० [सं०] इशरमूल लता। रुहिमूल। अहिगंध।

इसकी जड़ सांप के काटने में दी जाती है। बिच्छू के डक मारने में भी उपयोगी होती है। यह पिलाई और ऊपर लगाई जाती है। स्त्रियों के मासिक धर्म को खोलने के लिये भी यह दी जाती है। कालीमिर्च के साथ, हैजा, अतिसार आदि

पेट के रोगों में पिलाई जाती है। पत्ते का रस कुछ मादक होता है छिलका पेट की बीमारियों में दिया जाता है। रस की मात्रा ३० से १०० बूंद तक है।

अर्क मूलम्-सं० क्ली० इसी नाम से प्रसिद्ध है। एक वृक्ष विशेष। च० द० अग्निमा० चि० क्षार गुण।

अर्क मूला-सं० स्त्री० ईश्वर मूल' ईशेर मूल-बं०। जराबन्दे हिन्दी-अ० फा०।(Aristolochia Indica) रत्ना०।

अर्क मूलादिधूम्र-सं० क्ली० आक की जड़ मैनसिल समान भाग, त्रिकुटा अर्ध भाग इनका चूर्ण बना धूम्रपान करके ऊपर से ताम्बूल खाने से अथवा दूध पीने से ५ प्रकार की खांसी का नाश होता है वृ० नि० र०।

अर्क यासिस-अ० करकूनिया (जङ्गबारी)

अर्क लवणम्-सं० क्ली० अर्कक्षार, मन्दार क्षार। (Analkalioe of Calotropis gigantea) बै० निघ०।

अर्क लेप-सं० क्ली० पुष्कर मूल, दालचीनी चित्रक गुड़, दन्तीबीज, कूट और कसीस को आक दूध में पीसकर लेप करने से कर्णमूल का नाश होता है। वृ० नि० र०

अर्क लोकेश्वरोरसः-सं० पु० ४ तो० शुद्ध पारा में आक के दूध की बार बार भावना दें फिर ८ तो० शुद्ध गन्धक और ३२ तो० शंख वटा इन दोनों को चीते के रस से तीन दिन तक कई बार भावना दें सूखने पर उपर्युक्त पारे में मिला दें। फिर उसमें पारे से आधा सोहागा मिलाकर आक के दूध से एक पहर भावना दें। जब वह सूख जाए तो एक हांड़ी में चूना पोतकर औषध को रखकर चूना पोते हुए ढक्कन से ढक कर बारीक बारीक मिट्टी का लेप ढक्कन के चारों तरफ कर दें फिर लघु पुट दें।

मात्रा—४ र०। अनुपान—घी, मिर्च।

पथ्य—दही भात। रात को इस पर भांग और गुड़ सेवन करना चाहिये।

गुण—संग्रहणी के लिए यह अनुभूत है। रस० यो० सा०।

अर्कलोहाभ्रकम्-सं० क्ली० विदारी कंद पिंड खजूर जवासा, अतीस, हड़, पीपल और दाख, इनका चूर्ण समान भाग लें। विदारीकन्द के बराबर प्रत्येक तांबा, लोह भस्म और अभ्रक मिलाएँ।

मात्रा—१-२ रत्ती घी और शहद के साथ खाने से ६ लक्षणों से युक्त राजयक्ष्मा, उरःक्षत, रक्त पित्त, रक्तार्श और अग्निमांद्य का नाश होता है। रस० यो० सा०।

अर्क लोकेश्वर रसः-सं० पु० शुद्ध पारद ४ तो०, आक के दुग्ध में खरल करें, पुनः शुद्ध गन्धक ८ तो० और बड़े शंख की भस्म ३२ तो०, दोनों को चित्रक के रस में ३ दिन खरल करें, पश्चात् उक्त पारद को इसी चूर्ण में मिला दें, और १ तो० सुहागा इसमें और मिलाएँ, सबको मिला कर १ प्रहर आक के दूध में खरल करें, पीछे उसको एक हंडी के भीतर लेप कर सुखालें, पीछे सम्पुट में रखकर पुट दें, जब शीतल हो जाय तब निकाल कर रक्खें।

मात्रा—१-४ रत्ती।

अनुपान—मक्खन।

पथ्य—दही, भात। रात में गुड़ मिश्रित भंग खाना चाहिये। इसके सेवन से घोर संग्रहणी दूर होती है। वृ० रस० रा० सु०, ग्रह० चि०।

अर्क बन्धूकः-सं० पु० बन्धु जीव वृक्ष, बन्धूक पुष्प, दुपहरिया-हिं०। गुल दुपहरिया-पं०, हिं० बान्धुलि वृक्ष, दुपुरे चण्डी-बं०। दुपारी-मह०। (Pentapetes phœnicea, *Linn. Roxb*) रा० नि० व० १०।

अर्क वल्ली-सं० स्त्री० आदित्यभक्ता। हुलहुल-हिं०। हुड़हुड़े-बं०। (Cleome Viscosa) वै० निघ०।

अर्क वेदम्,-वेधम्-सं० क्ली० तालीशपत्र (Abies webbiana) प० मु०। रा० नि० व० ६।

अर्क शाहतरा } नवीन शाहतरा का अर्क।
अर्क शाहतरा जदीद }

निर्माण-क्रम—२॥ सेर शाहतरा को जल में भिगोकर २० बोतल अर्क परिस्रुत करें, पुनः उक्त अर्क में उतना ही और शाहतरा भिगोकर दोबारा अर्क खींचें।

मात्रा वसेवन-विधि—१ तो० अर्क अनुपान रूप से व्यवहार करें।

गुणधर्म—रक्तशोधक है, चेहरे का वर्ण निखारता और फोड़े फुन्सी की शिकायत को दूर करता है।

अर्कशीर-अ० दुग्धार्क।

निर्माण-क्रम—कासनी का बीज, गुले गावजुवान, खीरा का बीज, बंशलोचन, जहरमोहरा हर एक १-१ तोला, गुले सुर्ख, मकोय शुष्क, गावजुबान, मग्ज कद्दू, तुख्म काहू प्रत्येक २-२ तो०, तुख्म खुर्फा ३ तो० शुष्क धनियां, श्वेत चन्दन, रक्त चन्दन हर एक ४-४ तो०, कद्दू सब्ज, कासनी की हरी पत्ती, काहू की पत्ती हर एक ४ तो० ८ मा०, गुले कँवल ५ तो०, कसेरू, गुलेवेद, गुलेनीलोफर हर एक १० तो०, अर्क वेदमुश्क, अर्क शाहतरा, अर्क मको हर एक १ सेर, अर्क गुलाब २ सेर, अर्क वेद सादा ४ सेर बकरी का दूध १० सेर, वर्षा जल आवश्यकतानुसार विधि अनुसार अर्क परिस्रुत करें।

गुणधर्म—राजयक्ष्मा तथा वातज्वर के लिये लाभदायक है। इ० अ०।

अर्कशीर जदीद-अ०

निर्माण-क्रम—हरा गुच (छिला हुआ) १८ तो०, गुल नीलोफर, गुल मुण्डी, ब्रह्मदण्डी, गुल मासफर (बुसुम्भ पुष्प), मेंहदीपुष्प, निम्बपुष्प गुल सेबती, गुले सुर्ख, पीली हड़ का छिलका, हलेला स्याह, आमला छिला हुआ हर एक १० तो०, सरफोका, चिरायता, बादरञ्जबूया हर एक १४ तो०, कासनी का बीज, खीरा का बीज, खुर्फा का बीज- खर्बूजा का बीज, हर एक १८ तो०, शाहतरा की पत्ती, मकोय की पत्ती, नगुन्दबाबरी, नीलकण्ठी, मेंहदी की हरी पत्ती हर एक आधसेर सफेद चन्दन का बुरादा, लाल चन्दन का बुरादा, शीशम का बुरादा, हाऊबेर का बुरादा, निम्ब की लकड़ी का बुरादा, हर एक पाव, केवड़ा की जड़ २ सेर, सम्पूर्ण औषधियों को रात्रि भर उष्ण जल में भिगोकर। प्रातः काल बकरी का दूध १० सेर कासनी की पत्ती का फाड़ा हुआ पानी १ सेर अफ्तीमून विलायती- बसफाइज पिस्ती प्रत्येक १० तो०, और सम्मिलित कर अर्क परिस्रुत करें और दोबारा उक्त अर्क में उपर्युक्त औषध डालकर पुनः अर्क परिस्रुत करें।

मात्रा व सेवन विधि—२ तो० से ४ तो० पर्यन्त यह अर्क प्रति दिवस प्रातः सायं दोनों काल शर्बत उन्नाब या कोई अन्य उपयुक्त शर्बत मिलाकर पिलाएँ।

गुणधर्म—उपदंश, कुष्ठ तथा अन्य वात रोगों में अत्यन्त लाभप्रद है। ति० फा० २ भा०।

अर्क शीरवसीत्-अ०।

योग निर्माण-विधि—छाग दुग्ध १ सेर, अर्क वेद सादा २ सेर, अर्क वेदे मुश्क, अर्क शाहतरा हर एक १ सेर, मिश्री आध पाव यथा विधि अर्क परिस्रुत करें।

गुणधर्म—राजयक्ष्मा और वातज्वर के लिये लाभदायक है। इ० अ०।

अर्क शीर मुरक्कब जदीद-अ० नूतन मिश्रित दुग्धार्क।

निर्माण-विधि—तुख्म कासनी, गुल गावजुवान, खीरा के बीज, तबशीर, जहर मोहरा प्रत्येक १ तो० गुलेसुर्ख, मकोय, गावजुबान मग्ज कद्दू, तुख्म काहू प्रत्यक २ तो०, तुख्मखुर्फा, ३ तो०, शुष्क धनियां, रक्त व श्वेत चन्दन, प्रत्येक ४ तो०, हरी कासनी की पत्ती, हरा कद्दू, काहू पत्र प्रत्येक ४ तो० ८ मा०; कमल पुष्प १ तो० कसेरू, गुलवेद, गुलनीलोफर हर एक १० तो०, अर्क वेदमुश्क, अर्क शाहतरा, अर्क मको हर एक एक सेर, अर्क गुलाब २ सेर, अर्क वेद सादा १ सेर, छाग दुग्ध १० सेर, इनमें यथावश्यक जल मिश्रित करके ८० बोतल अर्क परिस्रुत करें। पुनः इस अर्क में उपर्युक्त औषधों को सम्मिलित कर दोबारा अर्क खींचें।

मात्रा व सेवन-विधि—१ तो० यह अर्क

प्रातः सायं तथा मध्याह्न तीनों काल में सेवन करें।

गुणधर्म—रक्तशोधक, वल्य, उष्णशामक तथा तर है। वायु रोगों तथा राजयक्ष्मामें अक्सीर सिद्ध हुआ हैं। ति० फा० १ भा०।

अर्क सम्मुलफ़ार-अ० संखिया का घोल, फूलर महाशय का घोल। Fowler's solution (Liquor Arsenicalis) देखो—संखिया।

अर्क सम्मुलफ़ार मुरक्कब व ब्रोमीन-अ० (Liquor Arsenici Bromiatus) देखो—संखिया।

अर्क सम्मुलफ़ार मुरक्कब व सीमाब व आयोडीन-अ० डनोवन महाशय का घोल। Donovan's solution (Liquor Arsepiiet Hydrargyri Iodidi) देखो—संखिया।

अर्कसुता-सं० स्त्री० कृष्ण अपराजिता। Clitorea Ternatea (The black var. of) वै० निघ०।

अर्कसुधा-सं० स्त्री० अर्कोत्थ सुधा-हिं०। सकूरुल् अश्र शकर मदार-अ०। आकन्देर चुण-बं०।

गुण—गुल्म रोग नाशक है। वै० निघ०।

अर्क सूजाक-अ० पूयमेहार्क।

निर्माण विधि—सूखी धनिया ५ तो० को रात्रि भर आधपाव जल में भिगोएँ और प्रातः काल इसका क्वाथ विधि द्वारा काढ़ा प्रस्तुत कर शीतल होने पर इसमें ३ तो० ब्रांडी और ६ मा० रोगन सन्दल सम्मिलित कर अर्क तैयार करलें।

मात्रा व सेवन विधि—प्रातः सायं व मध्याह्न १-१ तो०।

गुणधर्म—सूजाकके लिये यह अत्यन्त लाभजनक सिद्ध हुआ है इसे व्यवहार में लाने से मूत्रदाह वेदना रक्त पीव तथा क्षत सम्बन्धी सम्पूर्ण शिकायतें दूर हो जाती हैं।

नोट—हिन्दुस्तानी दवाखाना देहली का खास नुसखा है जिसे जनाब मसीहुल्मुल्क हकीम अजमलखाँ साहब ने अपनी असीम कृपा से अपने गुप्त योगों में से प्रदान किया था।

अर्क सोडा मुरक्कब ब सम्मुलफ़ार-अ०(Liquor sodii arsenatis) देखो—संखिया।

अर्क सोय-
अर्क शिब्बित-
अर्क शब्बिद,-न-
} अ० सोया (आ) का

अर्क Dill water (Aqua anetoi) देखो शत पुष्प।

अर्क सौंफ़-उ० सौफ का अर्क Anise water (Aqua anisi) देखो सौंफ।

अर्क संखिया तुर्श-अ० (Liquor arsenici hydrochloricus) देखो संखिया।

अर्क हड़ताल-अ० हड़तालका अर्क देखो-हरिताल।

अर्क हरा भरा जदीद-अ०।

योग निर्माण क्रम-लाल व सफेद चन्दन, खश, पद्माख, नागरमोथा, हरी गिलोय, शाहतरा, नीम की छाल, गुल नीलोफर, तुख्म, कासनी, सौंफ कद्दू के बीज, नेत्रबाला, धनियाँ, तुलसी के बीज, बहेड़े की जड़, इक्षुमूल जवासा की जड़, कासनी की जड़, धमासा, मुलेठी, मुण्डी, इलायची छोटी, कोकनार (पोस्त का डोंडा), हरएक एक तो०, रात को जल में भिगोकर यथा विधि अर्क परिस्रुत करे पुनः इस अर्क में उपयुक्त औषध भिगोकर दूसरे दिन दोबारा अर्क परिस्रुत करे।

मात्रा व सेवन विधि—१॥ तो० उपयुक्त औषध के साथ।

गुणधर्म—राजयक्ष्मा में अत्यन्त लाभदायक सिद्ध हुआ है। मूत्र दाह, सूजाक मूर्च्छा के लिए भी गुणदायक है तथा उत्तमांगों को बल प्रदान करता है। प्रधान गुण-राजयक्ष्मा के लिये विशेष कर लाभप्रद है।

अपथ्य—उष्ण एवं शुष्क वस्तु।

नोट—यक्ष्मा के लिये जनाब मसीहुल मुल्क हकीम अजमलखाँ साहबका मुख्य नुसखा है।

अर्क हाजिम-
अर्क हाजिम जदीद-
} अ० पाचकार्क।

निर्माण विधि—नबूल की छाल १० सेर, किशमिस हरा, तथा मिश्री प्रत्येक ५ सेर; लहसुन लौंग प्रत्येक १ तो० ऊदगर्की २ तो० सफेद चन्दन २२ मा०, बीख बनफसा १८ मा०, सुअदकोर्फा (नागरमोथा) १० मा०, पोस्त तुरञ्ज ४ तो०, बहमन सफेद व लाल शकाकुल सालबमिश्री तेजपात दालचीनी, गुलगावजुवान हरएक २ तो०, खस ४ तो०, बड़ी इलायची का दाना ५ तो०, जायफल, जावित्री, हरएक २ तो०, केशर १ तो०, अम्बर ६ मा०, अम्बर व केशर के शिवा शेष सम्पूर्ण औषधों को रात्रि भर उष्ण जल में भिगोकर प्रातःकाल १० बोतल अर्क परिस्रुत करे केशर व अम्बर की पोटली अर्क खींचते समय नीचे के मुंह में रखदे। इस अर्क में समग्र औषधों को पुनः तर करके फिर दस बोतल अर्क खींचें।

मात्रा व सेवन-विधि—सवा तो० यह अर्क किसी उपयुक्त शर्बत के साथ या वैसे ही पिलाएँ।

गुणधर्म—आमाशय के सम्पूर्ण दोषों को दूर करता है। पाचक, क्षुधावर्द्धक, शरीर में चुस्ती व चालाकी लाता एवं बल तथा ओजको बढ़ाता है ति० फा० १व० २मा०।

अर्क हिता-सं० स्त्री० आदित्यभक्ता हुलहुल, हुरहुर -हिं० हुडहुडिया-बं०। (Cleome viscosa) सूर्य्य फुलवल्ली-मह० रा० नि० व० ४।

अर्क हेमाम्बुदम्-सं० क्ली० खस, पतंग, कमलकेशर, चन्दन, एर्वारुक, (ककड़ी भेद) नागकेशर दारुहल्दी नागरमोथा तृणमणि (कैरवा) और श्वेत कमल इन सबको बराबर लेकर बहुत बारीक चूर्ण बनाएं। फिर खस के बराबर ताम्बा लोहा और अभ्रक भस्म पृथक् पृथक् मिलाकर शहद के साथ खाने से मुख, नेत्र, कर्ण, गुदा और रोम कूपों से निकलता हुआ रक्त बन्द होता है र० यो० सा०।

अर्क हैजा-अ० वैसूचिकार्क।

निर्माण-विधि—(१) जरिश्क, अनारदाना खट्टा प्रत्येक एक पाव, रक्त चन्दन का बुरादा, आलूबोखारा, सौंफ प्रत्येक अर्धसेर, पुदीना हरा, दालचीनी प्रत्येक १ सेर, तबाशीर ७ तो०, कपूर ४मा० बड़ी इलायची आधपाव, शुद्ध जल १० सेर औषधों को पानी में भिगोकर यथा विधि ५ सेर अर्क परिस्रुत करें। अर्क खींचते समय २ मा० कपूर नीचे के मुंह में रख दें।

मात्रा व सेवन विधि—२ तो० यह अर्क दो-दो घंटे के अन्तर से पिलाते रहें।

गुणधर्म—हैजा वबाई के लिये अत्यन्त लाभदायक है। तीव्र तृषा को तत्काल शमन करता है और पित्त को समूल नष्ट करता है। ति० फा० २ भा०।

(२) दरियाई नारियल, तुरञ्ज की पीली छाल, गुलाब की कली, पपीता, कागजी नीबू के बीज पियारांगा, नीम वृक्ष की छाल, सौंफ हरएक ६ तो० सबको थबकुट करके अर्क गुलाब में तर करे प्रातः शुद्ध सिरका १ सेर, आबतुरञ्ज, कागज़ी नीबू का रस, हरे पुदीना का फाड़ा हुआ रस प्रत्येक १ पाव सम्मिलित कर अर्क परिस्रुत करे।

मात्रा व सेवन विधि—दो-दो तो० प्रातः सायं नीबू का सिकञ्जबीन मिलाकर या यूँ ही पिलाएं। ति० फा० २ भा०।

अर्क हैजा वबाई-अ० संक्रामक वैसूचिकार्क।

निर्माण क्रम—प्याज लहसुन हरएक २। सेर आकाशबेल २ सेर जीरा स्याह आधसेर इलायची श्वेत सोंठ पीपल प्रत्येक ८ तो० पुदीना शुष्क १६ तो० दालचीनी १४ तो० सब को कूटकर रात को पानी में भिगोदें और प्रातः यथाविधि ५ सेर अर्क परिस्रुत करे तथा बोतलों में रखे॥

मात्रा व सेवन-विधि—१तो० से १ तो० तक प्रातःकाल पान करे।

गुणधर्म—बवाई हैजा के दिनों में स्वास्थ्य संरक्षण हेतु इसका उपयोग अत्यन्त लाभदायक है। हैजा के रोगी के लिये भी इनका प्रयोग अति ही लाभदायी है। त्रि० फा० २भा०।

अर्क क्षारः—सं० पु० आक के कोमल पत्तों को तेल और पांचे नमक तथा काँजी के साथ सेवन विधिवत् भस्म करके क्षार बनायें इसे उष्ण जल या मद्य के साथ सेवन करने से बादी बवासीर का नास होता है वृ० नि० र० वातार्श।

अर्क क्षीरम्—सं० क्लीं० अर्क वृक्ष निर्यास आकन्देर आटा—बं०।

गुण—कृमिहर व्रणशोथ कुष्ट उदररोग तथा अर्श में हित है, राज० तिक्त व लवण स्वादयुक्त, उष्ण वीर्य, लघु, स्निग्ध, गुल्म एवं कुष्ठहर और उदर विकार तथा विरेचन में हित है, भा० पू० १ भा० च० द० अर्श-चि०।

अर्कोर्णिया—अ० मकड़ी का जाला। (Spider's Web)

अर्काङ्कुरादि स्वरसः—सं० पु० आक के अंकुरों को कांजी या नीबू के रस में पीसकर और नमक तथा तेल मिलाकर उसे थूहर के डंडेमें भरकर उसपर कपड़मिट्टी करदें। फिर पुटपाक विधि से पकाकर उसका रस निकालें फिरउस रस को गुनगुना करके कान में डालने से कान के दर्द का नाश होता है। वृ० नि०।

अर्कादि काथः—सं० पु० आक की जड़, पीपलामूल, सहिजन की छाल, दारुहल्दी, चव्य, सम्हालू, पीपल, रास्ना, भांगरा, पुनर्नवा, चित्रक, वच, सोंठ, चिरायता। इनका क्वाथ सन्निपात, तन्द्रा, वायु, सूतिका रोग, शीत और अपस्मार का नाशक है। वृ० नि० र०।

अर्कादिगणः—सं० पु० मन्दार के वर्ग की औषधियां।

(१) आक, (२) सफेद आक, (३) नागदन्ती, (४) विशल्या (भांगरी), (५) भारंगी (भार्गी), (६) रास्ना, (७) वृश्चिकाली, (८) कंजा, (९) भोंगा, (१०) काकादनी, (११) श्वेता, (१२) महाश्वेता (से दोनों कोहल के भेद है) और (१३) हिंगोट अर्थात् इंगुदी यह अर्कादिगण है। सु० सू० ३८ अ०।

गुण—कफ मेद दोष, विष, कृमिरोग, कुष्ट रोग इनको नष्ट करता है और विशेष करके व्रण को शुद्ध करता है। वा० सू० १५ अ०।

अर्कादितैलम्—सं० क्ली० आक का रस; धतूरे का रस, सहिजत का रस, कांजी प्रत्येक १ प्रस्थ कूट और सेंधानमक प्रत्येक २-२ पल। इनके साथ एक प्रस्थ तैल का पाक सिद्ध करें। यह खल्ली, सूजन, हैजा, पक्षाघात और गृध्रसी का नाशक है। वृ० नि० र०।

अर्कादिलेपः—सं० पु० आक का दूध, थूहर का डन्ठल, गोखरू, कड़वी तुरई के पत्ते, करंज की गिरी इन सबको बकरे के मूत्र में पीसकर लेप करने से मस्सों का नाश होता है यो० र०।

अर्कान—फा० मेंहदी, हिना। (Lawsonia inermis) इं० है० गा०।

अर्कान—अ० यर्कान, कॉवर, कामला। देखो—कामला। जांण्डिस (Jaundice) इं०।

अर्कान-
अर्क़न- } —यू० मेंहदी। (Myrtle. Henna Plant.)

अर्कान-
उन्तुकुस्सात- } अ० रुक्न का बहुवचन है। अग्नि, वायु, जल तथा पृथ्वी प्रभृति चार भूत (तत्व) विशेष जिससे सृष्टिकी सम्पूर्ण वस्तुएं उद्भूत हुई है। (Elements) देखो—तत्व।

अर्कानलेश्वरः—सं० पु० पारा १ भाग, सुवर्ण पत्र १ भाग दोनों को मिलाए। जब पारे में सुवर्ण अच्छी तरह मिल जांय तब पारे के समान सोना माखी और आधे प्रमाण में गन्धक मिलाकर अग्नि पर पिघलाकर पर्पटी बनाए। फिर पर्पटी का चूर्ण करके एक दिन वालुकायन्त्र में पकाएं। यदि इसकी शक्ति बढ़ानी हो तो गन्धक दे दे कर ६ लघुपुट दें।

नोट—इसमें स्वर्ण के स्थान में चांदीपत्र और सोनामाखी के स्थान में किसी किसी के मत से वेधक हरिताल डालते हैं। रस० यो० सा०।

अर्कावली-सं० स्त्री० गुर्जा (एक हिन्दीदबाई)।

अर्काश्मन-हिं० पु०, अर्काश्मा-सं० पु० (१) (Acrystal lens) सूर्य्य कान्तमणि। (२) (A ruby) चुन्नी। पन्ना। एक प्रकार का छोटा नगीना। चुनि पान्ना-बं०। अरुणोपल। हला०।

अर्काहुली-ब० (१) सूर्य्य कान्तमणि (The sunstone) (२) हुरहुर, सूर्यावर्त। (Gynandropsis Pentaphylla) अनधाहुली-हिं०।

अर्काह्वः-सं० पु० (१) तालीशपत्र (Talishaptara)। (२) सूर्य्यकांतमणि (A crystal lens a-rubby)। (३) अर्क वृक्ष। (Calotropis gigantea) अम०।

अर्कीपात-अ० (ब० व०), अर्क (ए० व०) Waters (Aquae) देखो—अर्क।

अर्की-सं० पु० मयूर, मोर पक्षी। मयूर-बं०। मोर-महा० (A peacock) वै० निघ०।

अर्कील-अ० अण्डे की जर्दी, अण्डपीत भाग। (Yolk of an egg)

अर्क जवाल-अ० मोमियाई (See-Momiyai)

अर्क जर्जवीब-अ० मुनक्का या दाख का पानी जो विशेष विधि द्वारा निकाला गया हो।

अर्कत्तीब-अ० (१) असरार (A tree) (२) जर्नबाद, नरकचूर, कचूर। (Curcumazedoaria, *Roscoe*)

अर्कुल् अरूस-अ० अभ्रक, भोडर (ल)। Talc (mica)

अर्कुल् कदीद-अ० भुना हुआ नमकीन मांस जिसे यात्रा में साथ ले जाते हैं।

अर्कुल् काफर-अ० (१) कपूरका अर्क, कपूरासव, (The spiritoLiquor of Camph. or) (२) जर्नबाद, नरकचूर, कचूर। (Curcuma zedoaria, *Roscoe*)

अर्कुश्शज्र-अ० गोंद निर्यास। (Gum)

अर्कून-अ० एक पौधा है जिसकी पत्तियां शकायकुन्नअमान (गुले लाला) जैसी होती है।

अर्केगुले सुर्ख-फा० गुलाब, गुलाब जल, गुलाब का अर्क। (Rose Water) स० फा० इं०।

अर्केगोगिर्द-फा० गंधकाम्ल, गंधक का तेजाब (Sulphuric Acid) स० फा० इं०।

अर्के बेदमुश्क-फा० बेदमुश्क का अर्क-द०। माडल्। खिलाफ अ० Salix caprea, *Linn* (Water of-) स० फा० इं०।

अर्क नमक-फा० लवणाम्ल, उज्जहरिकाम्ल नमक का तेजाब (Hydrochloric or Muriatic Acid) स० फा० इं०।

अर्केशोरह-फा० शोरकाम्ल शोरे का तेजाब (Nitricacio) स० फा० इं०।

अर्केश्वररसः-सं० पु० चन्द्रोदय, ताम्र भस्म, लोह भस्म, सुहागा भुना, खपरिया (शुद्ध,) त्रिकुट, हरताल इनको आक के दूध में खरल करे यह एक दिन में सिद्ध होता है। इसे नस्य द्वारा प्रयोग करने से सन्निपात दूर होता है।

अर्केश्वरोरसः-हरताल, सोनमाखी, मेनसिल, शुद्ध पारा, सुहागा, सैंधानमक[चित्रक और भांगरे का चूर्ण सबको बराबर लेकर बारीक चूर्ण करके मिलाएँ।

मात्रा—४ रत्ती गुण—शहद के साथ लेपन करने से सुप्तमण्डल वाला कुष्ठ नष्ट होता है रस० यो० सा०।

अर्केश्वरः-सं० पु० ताम्रभस्म वंगभस्म अभ्रकभस्म सोनामाखी भस्म प्रत्येक समभाग लेकर गिलोय और सुगन्धवाला के रस की २१ पुट देकर शराव सम्पुट में रखकर फूंक दें फिर अदूसा शहद और बिदारीकंद के रस में चार चार रत्ती गोलियां बनाएं इसको शहद के साथ खाने से रक्तपित्त तत्काल नष्ट होजाता है रस० रा० सु० रक्तपित्त।

अर्केत्तमा-सं० स्त्री० बर्बरी बबुई तुलसी (Ocimum basilicum)

अर्कोपलः– सं० पु०
अर्केपल– हि० संज्ञा पुं०
सूर्य कान्तमणि आतसी शीशा लाल पद्मपराग (The sun-stone; a ruby; a crystel Lens)

अर्कोल– } पं० तत्रक, तत्री, तेत्री, चेचर, ककरी
अर्खर– } दूदूल, वाँस हुलशिङ्ग, । रूहस सेमि अलेटा (Rhus Semialata, *Muray*) रहस बकियामेला (R. Buckia mela *Roxb.*)–ले० । रस्तू सत० । दखमिल' दसविल उ० प० सू० । बक्कियामेल, भगमिली-नपा० तुख्रिल-लेप० ।

भल्लातक वर्ग

(*N. O. Anacardiacœ*)

उत्पत्ति स्थान—शीतोष्ण हिमालय, वनहल से सिक्किम पर्यन्त तथा खसियाँ पर्वत ।

प्रयोगांस—फल (Berries)तैल ओषध तथा आहार के काम आता है ।

उपयोग—उदरशूल में इसका फल व्यवहार में आता है । स्ट्यूवर्ट ।

अर्क्जा– } अ० (१) हिंद क्रूकी, विषखपरा
अर्क्जान– }
अर्हजान– } (बूटी) (२) वरवतूरह । कोई कोई वखरुल अकराद को कहते हैं ।

अर्क्टोस्टै फिलाँस ग्लाँका–ले० मेञ्जानीटा लीव्ज (Manzanita leaves) इं० ।

अर्क्टोस्टै फिलाँस यूवा अर्साई–ले० इनबुद्दुब' भल्लूक (रीछ) द्राक्षा हिं० । इसकी पत्तियाँ ओषध कार्य में आती हैं । मेमो० । देखो—युवी अर्साई । (Uvœ ursi)

अर्क्फम–यु० चणकः, चना (gram or chick pea)

अर्खामुन–अ० चक्षु श्याम वृत्त । नेत्र का काला भाग अर्थात् पुतली ।

अर्गजा–हिं० संज्ञा पु० अरगजा, सुगन्धित विशेष (A perfume of a yellowish colourand compounded of several scented ingredients)

अर्गटः–स० पु० आर्त्तगल नामक कण्टक वृक्ष विशेष नील झण्टी-बं० । एरवणी–मह० । कठसरैया-हिं० (Barleria coerulea)

गुण—शीतल, व्रणशोधक तथा रोचक है । मद० व० ५ । अर्गट कसेला, शीतज वीर्य, व्रण विशोधक व्रण रोपण करने वाला तथा पुष्प मधुर है यह तिक्त है एवंज्वर' पित्त, कफ तथा रक्त रोग नाशक है । वै० निघ० ।

अर्गट–
अर्गट ऑफ राई– } इं० गन्दुभ दीवाना शैलम अर्गेटा । (Ergota)

अर्गनौन–अ० अर्गन वाद्य जिसको हकीम अफ्लातून ने अन्वेषित किया था । ऑर्गन Organ इं० ।

नोट—ऑर्गन का अर्थ अवयव, इन्द्रिय । अथवा शस्त्र भी है ।

अर्गल–हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) अरगल । अगरी । व्योड़ा । (२) किवाड़ (३) अवरोध (४) कल्लोल ।

अर्गलम्–सं० क्ली० मांस, गोश्त । (MuscleFlesh) वै० निघ० ।

अर्गल–अ० वह मनुष्य जिसका खतना न हुआ हो (Uncircumcised)

अर्गला–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] (१) अरगल । अगरी । (२) व्योड़ा । (३) अवरोध (४) बाधक अवरोधक । रुकावट डालने वाला ।

अर्गलाधरा–सं० स्त्री० (Infra sapinatus) कशेरु कण्टकाधरा ।

अर्गली–हिं० संज्ञा स्त्री० [देश०] भेड़ की एक जाति जो मिश्र शाम आदि देशों में होती है ।

अर्गलोत्तरा–सं० स्त्री० (Supra spinatus) कशेरुकण्टकोर्ध्व ।

अर्गवाँ–फा० (१) अर्जवाँ अ० । एक वृक्ष हैं जो फारस देश में उत्पन्न होता है । इसके पुष्प अत्यन्त नीलाभरक्त वर्ण के तथा सुन्दर होते हैं । स्वाद मधुर होता है ।

प्रकृति—१ कक्षा में उष्ण व रूक्ष, माइल व इम्प्रावदाल। स्वाद—किञ्चित् मधुर, किसी किसी ने कटु एवं किंचिद् विकठ लिखा है। हानिकर्त्ता—इसकी जड़ बमनकारक है। आमशय के लिए अहितकर। दर्पघ्न—वर्ग उन्नाब और नमाम। प्रतिनिधि—सदल व गुले सुर्ख़ । मात्रा—जड़ २ दिरम (७ मा०) और पुष्प ३ दिरम (१०॥ मा०)। प्रधान कर्म—श्वासाच्छु वासाअवयव का विशोधक।

गुण, कर्म, प्रयोग—पिच्छिल वा सांद्र दोषों को विसर्जित करता तथा आमाशय एवं वृक्क की शीतलताको नष्ट करता है। श्वासोच्छ्वास सम्बन्धी अवयवों (फुफ्फुस) को शुद्ध करता है। जलाकर इसके प्रयोग करने से मुख द्वारा रक्त स्राव होने को लाभदायक है और इसका बीज नेत्र सम्बन्धी औषधों में चाकसू के समान उष्ण नेत्राभिष्यन्द को दूर करता है । म० मु०। अश्मरी को नष्ट करता एवं स्वर को साफ करता है। इसके फूलों का क्वाथ आमाशय एवं फुफ्फुस को शुद्ध करता और अत्यन्त बमन लाता है, जलाकर अवचूर्णन करने से यह रक्तरुद्धक और उत्तम ख़िज़ाब है तथा भवों के रोम उगाता है। बु० मु०। (२) बैंगनी रक्त वर्ण (Red & bluish)

अर्गवानी–अ० श्यामाभायुक्त रक्त वर्ण। (Black ihs red colour)

अर्गाइरोल–इं० वाइटेलीन (Vitellin) देखो—रजत।

अर्गामूनी–अ० वन पोस्ता, मामीसा सुर्ख़ (वन्य पोस्त सदृश एक बूटी। (Wild poppy)

अर्गीमोन मेक्सिकेना–ले० सत्यानासी, भड़भाँड़। (Gamboge thistlemexican poppy) फा० इं० १ भा०।

अर्गीरिय स्पेसिओज़ा–ले० समुद्रशोष। (Elephant-creeper) इं० मे० मे०।

अर्गीलम–इब्रा० सुर्फ़ा। See-khurfa

अर्गीस–यू० जरिश्क मूल त्वचा See-zarishka

अर्गेनिया सिडरॉक्जिलोन–ले० इसका बीज तथा फल प्रयोग में आता है, मेमो०।

अर्गेमान–इं० देखो—अर्गोटा।

अर्गेग्राफ–इं० इटली के एक वैज्ञानिक ने इस नाम का एक यंत्र तैयार किया था इसके द्वारा अंगुलियों की पेशियों की शक्ति नापी जाती है।

अर्गोएपिओल–इं० यह अजमोदा (Apiol) तथा अर्गट का एक मिश्रण है इसको कैप्सूल रूप में रजोरोध में देते हैं। हिं० मे० मे० देखो—अजमोदा।

अर्गोटा–ले० अर्गट Ergot, अर्गट ऑफ राई Ergot of Rye, सीकेल कॉर्नुटम् Secale Carnutum, स्पर्ड राई Spurred rye, स्मट राई Smut rye,–इं०। क्लेवस सिकेलिनस Clavus secalinus ब्ली कॉर्नू Ble cornu,–फ्रें०। मटर कॉर्न Muttercorn–जर०। शैलम्, अरशैलुल् मुक़रन, नवेदार (मिश्र०), अल्क़ुमुद्दिउल् अस्वद, इन्तुतुत्सौदा–अ०। गन्दुम दीवानह् –फ़ा०।

छत्रिका वा तृणवर्ग

(*N. O. Fungi and Graminiceæ.*)

संज्ञा-निर्णय—फ़राशीशी भाषा में अर्गट का अर्थ कुक्कुटकण्टक (ख़ारे मुर्ग़) है। अर्गट स्वरूप में उसके समान होता है। इसलिये इसको उक्त नाम से अभिहित किया गया।

उत्पत्ति—यह फ़ंगस अर्थात् छत्रिकाके प्रकार की एकफफूँदी या काई है, जिसको परिभाषा में क्लेवीसेप्स पर्प्युरिया (Claviceps purpurea, *Tulasne.*) कहते हैं। जब यह फफूँदी सीकेली सिरिएली (Secale Cereale) नामक धान्य में जिसको अँगरेज़ी भाषा में कॉमन राई (Common Rye) और अरबी में शैलम् या जवेपार कहते हैं, लग जाती है (अर्थात् उक्त फफूँदी छत्रकीय जीवाणु वा वानस्पतिक कीट राई के दाने के भीतर प्रविष्ट होकर उसकी रचना में परिवर्तन उपस्थित कर देते हैं।) तब उक्त विकृत राई को जौ वास्तव में उक्त फफूँदी से पूर्ण होती है अर्गट वा अर्गो

ऑफ राई कहते है।

वर्णन—इसके किसी भांति नोकीले त्रिकोणाकार साधारणतः क्रय दाने होते हैं जिनकी नोक पतली होती है। वे $\frac{1}{3}$ से $\frac{1}{2}$ वा एक इंच लम्बे और $\frac{1}{3}$ इंच चौड़े होते हैं। इनके दोनों पृष्ठ विशेष कर नतोदर पृष्ठ तीन परिखायुक्त होते है और दाने स्फुटित (चिड़चिड़ाए या चटखे) होते हैं। बाहर से ये नील लोहित (बनफ़शई स्याह) और भीतर से प्याजी श्वेत वर्ण के और भंगुर होते हैं अर्थात् इनको जहां से तोड़े वहीं से टूट जाते है। गंध विशेष प्रकार की अप्राह्य और स्वाद खराब (कुस्वाद) तथा हल्लासकारक होता है।

रासायनिक संगठन—रासायनिक विधि अनुसार अर्गट का विश्लेषण करने पर इसमें अनेक पदार्थ पाए जाते है। उनमें से इसके केवल प्रभावात्मक सत्वों का ही यहां उल्लेख किया जाता है। वे निम्न हैं—

(१) स्फ़ेसीलिनिक एसिड (Sphacelinic acid) (जिसका प्रभाव स्फ़ेसीलोटॉक्सीन के कारण होता है) गर्भाशयिक मांस पेशियों के संकोचनके अतिरिक्त यह रक्तवाहिनियों को भी आकुंचित करता है। यह जल में अविलेय पर ऐलकोहल (मद्यसार) में विलेय होता है। (२) कार्न्युटीन (Cornutine)—यह एक ऐल्कलाइड (चारोद) है जिसका मुख्य कार्य जरायु सम्बन्धी मांसपेशियों का संकोचन है। यह जल में अविलेय होता है। (३) अर्गोटिनिक एसिड (Ergotinic acid) एक ग्लूकोसाइड। (४) अर्गोटोक्सीन (Ergotoxine)—एक गैंग्रीनोत्पादक सत्व जो प्रयोग करने पर व्यर्थ सिद्ध होता है। कहते है कि यह इसका प्रभावात्मक अंश है। अर्गोटीनीन इसका अन्हाइड्राइड है। (५) अर्गेमीन (Ergamine)। तथा (६) टायरेमीन (Tyramine)। (७) एक स्थिर तैल ३०%, (८) ट्राइमीथल अमाइन जो इसकी गंध का मूल है और (९) टैनीन तथा रञ्जक पदार्थ प्रभृति अवयव इसमें विद्यमान होते हैं।

संयोग-विरुद्ध—(Incompatibles) ग्राही (Astringent) औषध और मेटैलिक साल्ट्श (धातुज लवण)।

प्रतिनिधि—कार्पास मूलत्वक। नोट—स्त्री रोगों की चिकित्सा में कार्पास अर्गट से श्रेष्ठतर एवं निरापद है। देखो—कार्पास।

सूचना—अर्गट के समूचे दानों को सुरक्षित-तया शुष्क करके (अग्नि पर नहीं प्रत्युत अशांत चूर्ण उत्ताप पर शुष्क करें) सर्वथा शुष्क एयर टाईट अर्थात् वायुरोधक शीशी में डालकर और उसमें किंचित् कर्पूर डालकर रखें जिसमें वह विकृति न हो एवं उसमें कीड़े न लग जाएँ, इस औषधि का चूर्ण बहुत शीघ्र विकृत हो जाता है, संयुक्त राज्य अमेरिका की फार्माकोपिया में लिखा है कि एक वर्ष पश्चात् यह अप्रयोजनीय हो जाता है।

प्रभाव—आर्त्तवप्रवर्त्तक, गर्भशातक और सार्वांगीय रक्तस्थापक।

औषध-निर्माण तथा मात्रा—

चूर्णित अर्गट, १० से २० ग्रेन, प्रसव हेतु, ३० से ६० ग्रेन।

तरल रसक्रिया (सार) १० से ६० मिनिम।

घन सत्व (रस क्रिया), १ से ५ ग्रेन।

फ़ाएट (४० में १) १ से २ फ्लु० आऊंस तैल, १० से २० वा० ३० मिनिम प्रसवार्थ। टिंक्चर वा आसव (१ से ४ प्रूफ स्पिरिट), १० से ६० मिनिम।

मात्रा—१५ से ६० ग्रेन (१ से ४ ग्राम), प्रायः चूर्ण रूप में प्रयुक्त होता है।

ऑफ़िशल योग

(Official prerarations)

(१) एक्सट्रैक्टम अर्गोटी (Extractum Ergotæ) ले०। एक्सट्रैक्ट ऑफ अर्गट (Extract of Ergot) अर्गटीन, अर्गट

रसक्रिया, अर्गट सत्व वा सार–हिं० । खुलासहे शैलम्, शैल्मीन–अ० । रुब्ब गन्दुम दीवानह–फा० ।

नोट—अर्गोटीन (Ergotin) ब्रिटिश फार्माकोपिया (B.P.) में सॉफ्ट एक्सट्रैक्ट ऑफ अर्गट का आफिशल पर्याय था । पर इस नाम से भ्रम उत्पन्न होने की आशंका है, अस्तु इस नाम का परित्याग कर देना ही उत्तम है ।

निर्माण-विधि—अर्गट का ४० नं० का चूर्ण २० आउंस, ऐलकोहाल (६८०/०) और परिस्रुत वारि आवश्यकतानुसार डायल्युटेड हाइड्रोक्लोरिक एसिड (जल मिश्रित रञ्जहरिकाम्ल) ७॥ फ्लुइड ड्राम और सोडियम कार्बोनेट १७५ ग्रेन ।

अर्गट के चूर्ण को १० फ्लुइड आउंस ऐलकोहाल से क्लेदित कर पर्कोलेटर (चरण यन्त्र) में स्थापित करें और पर्याप्त ऐलकोहल डालकर इतना चरण करें कि वह एक्हॉस्ट होजाय (खतम होजाय) । पुनः प्राप्त द्रव्य को जल कुण्ड (वाटर बाथ) पर इतना उड़ाएँ वा शुष्क करें कि उसका द्रव्यमान ५ फ्लुइड आउंस शेष रह जाय । फिर उसमें ५ फ्लुइड आउंस परिस्रुत वारि मिलाए और शीतल होने पर पोतन कर उसमें जल मिश्रित रञ्जहरिकाम्ल सम्मिलित कर दें । २४ घन्टे पश्चात् पुनः उक्त द्रव का पोतन करें और जो मल अवशेष रह जाय उसको जल से इतना धोएँ कि उसकी अम्लता सर्वथा दूर हो जाय । फिर अवशिष्टांश को धोने से शेष रहे हुये द्रव को पूर्व प्राप्त द्रव में मिलाकर और सोडियम कार्बोनेट को उसमें विलीन करके उसे जल कुण्ड (वाटर बाथ) पर वाष्पीभूत कर मृदु रसक्रिया रूप में शुष्क करलें ।

मात्रा—२ से ८ ग्रेन (·१३ से ·५२ ग्राम वा १२ से ५० शतांश ग्राम) ।

(२) एक्सट्रैक्टम अर्गोटी लिक्विडम् Extractum Ergotæ Liquidum–ले० । लिक्विड एक्ट्रैक्ट आफ अर्गट Liquid Extract of Ergot–इं० । अर्गट तरल सत्व, अर्गट द्रव रसक्रिया–हिं० । खुलासहे शैलम सय्याल–अ० । रुब्ब गन्दुम दीवानह सय्याल–फा० ।

निर्माण-विधि—कुट्टित अर्गट २० आउंस, परिस्रुत वारि ७॥ पाइंट, ऐलकोहल (२००/०) ७॥ फ्लुइड आउंस, अर्गट को २ पाइंट परिस्रुत वारि में १२ घन्टे तक भिगोकर निःसावित करलें और अवशेष को अवशिष्ट परिस्रुत वारि में उतने काल तक भिगोकर पोतन करें, पुनः प्रत्येक प्राप्त द्रव को परस्पर योजित कर इतने उत्ताप पर वाष्पीभूत करें जिसमें तरल का द्रव्यमान १ फ्लुइड आउंस शेष रह जाय फिर उसमें सुरा सम्मिलित कर १ घन्टा पश्चात् पोतन करलें, प्रस्तुत रसक्रिया का परिमाण पूरा २० फ्लुइड आउंस होना चाहिये ।

मात्रा—१० से ३० मिनिम (·६ से १८ घन शतांश मीटर वा ६ से १८ डेसिमिलिग्राम) जल में ।

(३) इन्फ्युज़म अर्गोटी Infusum Ergotæ–ले० । इन्फ्युज़न आफ अर्गट Infusion of Ergot–इं० । अर्गट फांट–हिं० । खिसाँदहे शैलम–अ० । खिसाँदहे गन्दुम दीवानह–फा० ।

निर्माण-विधि—सद्यः कुट्टित अर्गट १ भाग, खौलता हुआ परिस्रुत जल २० भाग, १ दृढ़ पात्र में १५ मिनट तक अर्गट को जल में प्रक्लेदित कर पोतन करलें ।

मात्रा—१ से २ फ्लुइड आउंस (२८·४ से ५६·८ घन शतांश मीटर वा ३० से ६० मिलिग्राम) ।

इञ्जेक्शयो अर्गोटी हाइपोडर्मिका Injectio ergotæ hypodermica Hypodermicle० injection of ergot or Ergotin हाइपोडर्मिक इञ्जेक्शन ऑफ अर्गट ऑर अर्गोटीन–इं० । अर्गट स्वकस्थ अन्तःक्षेप-हिं० जराकहे शैल्मीन तह्तुजिल्द या जेरेजिल्द-अ० शैल्मीन की जेरे त्वक् पिचकारी–उ० ।

निर्माण विधि—एक्सट्रैक्ट ऑफ अर्गट १०० ग्रेन, फेनोल ३ ग्रेन, परिस्रुत वारि २२० मिनिम वा आवश्यकतानुसार । फेनोल को परिस्रुत वारि में मिलाकर थोड़े काल तक क्वथित करें शीतल होने पर उसमें एक्सट्रैक्ट ऑफ अर्गट सम्मिलित करके इतना परिस्रुत जल और मिलाएं कि इन्हें करानका द्रव्यमान ३३० मिनिम हो जाये ।

शक्ति ३३ ग्रेन, अर्गट ११० मिनिम में या ३ में १ (३३ मिनिम=१ ग्रेन एक्सट्रैक्ट ऑफ अर्गट) ।

मात्रा—३ से १० मिनिम (१८ से ६ घन शतांशमीटर) गम्भीर त्वक्धःस्थ अन्तःक्षेप हेतु ।

सूचना—समय पर इसको सदा सद्यः प्रस्तुत कर प्रयोग करना चाहिये ।

टिंकचूरा अर्गोटी अमोनिएटा Tinctura ergotæ ammoniata—ले० अमोनिएटेड टिंकचर ऑफ अर्गट (ammoniated tincture of ergot—इ० अमोनित अर्गटासव—हिं० । सिब्गहे शैलम् अमूनी—अ० । तअ्फीन गन्दुम दीवानह अमूनी—फा० ।

निर्माण-विधि—अर्गट का २० नं० का चूर्ण २ आउंस, सोल्युसन ऑफ अमोनिया २ फ्लुइड आउंस, एलकोहल (६०%) आवश्यकतानुसार सोल्युशन ऑफ अमोनिया में १८ फ्लुइड आउंस एलकोहल सम्मिलित कर उसमें से २ फ्लुइड आउंस लेकर उससे चूर्ण को प्रक्लेदित कर चरण यंत्र (पर्कोलेटर) में स्थापित करदें तथा अवशिष्ट द्रव को उस पर धीरे धीरे डालकर उसे पर्कोलेट (चरण) करलें । पुनः अवशेष को निचोड़ने से प्राप्त अर्क को चरणकृत तरल में सम्मिलित कर उसमें इतना ऐलकोहल और योजित करे कि प्रस्तुत टिंकचर का द्रव्यमान पूरा १ पाइंट हो जाये । फिर २४ घंटे पश्चात् टिंकचर को पोतन करे ।

मात्रा—आधे से १ ड्राम वा ३० से ६० मिनिम (१.८ से ३.६ घन शतांशमीटर=२ से ४ मिलिग्राम) ।

नॉट आफ़िशल योग तथा पेटेन्ट औषधें (*Not official preparations*)

(१) डिस्क्स ऑफ अर्गोटीन Discs of ergotin अर्थात् अर्गोटीन पट्टिकायें । सफ्हात रकीकह् शैलमीन—अ० ।

प्रत्येक टिकिया में $\frac{1}{6}$ या चौथाई ग्रेन अर्गोटीन होता है । त्वगीय पिचकारी द्वारा त्वगधः प्रविष्ट करने के लिये इसका निर्माण किया गया है ।

समय पर एक टिकिया को १० मिनिमकीट-रहित (क्वथित कर साफ व स्वच्छ किए हुये) परिस्रुत वारि में मिलाकर प्रयुक्त करें ।

(२) पिल्युला अर्गोटीनी Pilula ergotini अर्गोटीन वटिका । हब्ब शैलमीन ।

अर्गोटीन २ ग्रेन, लिकोरिस पाऊडर (यष्टि मधु चूर्ण) ३ ग्रेन दोनों को परस्पर योजित कर गोली प्रस्तुत करें ।

(३) लाइकर अर्गोटी अमोनिएटस Liquor ergotæ ammoniatus—अमोनित अर्गोटीन द्रव । सय्याल शैलमीन अमूनी ।

यह एक प्रकार का लिक्विट एक्सट्रैक्ट ऑफ अर्गट अर्थात् अर्गट तरल सत्व है । जो अमोनियां वाले विलीन एलकोहल से प्रस्तुत किया जाता है ।

(शक्ति १ में १) यह एक प्रभावात्मक और विश्वस्त योग है ।

मात्रा—१० से ६० मिनिम=(.६ से ३.६ घन शतांशमीटर)

(४) मिसचूरा अर्गोटी Mistura ergotæ—अर्गट मिश्रण । मज़ीज शैलम् ।

लिक्विड एक्सट्रैक्ट ऑफ अर्गट ३० मिनिम डाइल्युटेड सल्फ्युरिक एसिड १० मिनिम, क्लोरोफॉर्म वाटर १ आउंस पर्यन्त (वी० पी० सी०)

(५) मिसचूरा अर्गोटी अमोनिएटा—Mistura ergotæ ammoniata—अमोनित अर्गट मिश्रण। मजीज शैलम् अमोनी।

लिक्विड एक्सट्रैक्ट आफ अर्गट २० मिनिम, अमोनियम कार्बोनेट ३ ग्रेन इमलशन आँफ क्लोरोफार्म १५ मिनिम, केम्फर वाटर १ आउंस पर्यन्त। (युनिवर्सिटी हास्पिटल)

(६) मिसचूरा अर्गोटी एटफेराई Mistura ergotaet ferri—लौहार्गट मिश्रण मजीज शैलम व आहन।

लिक्विड एक्सट्रैक्ट आँफ अर्गट ३० मिनिम, सोल्युमन आँफ फेरिक क्लोराइड १५ मिनिम, साइट्रिक एसिड ५ग्रेन, क्लोरोफार्म वाँटर १आउंस पर्यन्त (गार्टेज हास्पिटल लण्डन)

(७) वाइनम अर्गोटा Vinum ergotæ—अर्गट सुरा शराब शैलम।

फ्लुइड एक्सट्रैक्ट आँफ अर्गट २० भाग, डीटलैटेट शेरी ८० भाग (बी० पी० सी०)

(८) एसिडम स्क्लिरोटिकम् Acidum Sclerotieum—ले० स्क्लिरोटिनिक एसिड Sclerotinic acid-इं०-यह अर्गट द्वारा प्राप्त एक महान प्रभावकारी सत्व है परीक्षा—एक निर्मल अम्लीय सार जो धूसर स्फटिकीय चूर्ण रूप में पाया जाता है। यह आर्द्रताशोषक और जलविलेय होता है।

गुण-तथा उपयोग—१ ग्रेन स्क्लिरोटिनिक एसिड प्रभाव में ३० ग्रेन अर्गट के बराबर होता है यह सूक्ष्म रक्तवाहिनी संकोचक है। अस्तु यह रक्तस्थापक रूप से तथा रक्तसंचय जनित शिरोशूलहर रूप से लाभदायक हैं।

मात्रा—$\frac{1}{8}$ से $\frac{1}{4}$ ग्रेन, त्वक्स्थ अन्तःक्षेप द्वारा (वा ५ से १५ मिनिम मुख तथा अन्तः क्षेप द्वारा-ह्वि० मे० मे०)।

(९) कॉर्न्युटीन साइट्रेट Cornutin citrate—यह अर्गट के एक ऐलकलाइड (क्षारोद) का विलेय लवण है जो कोवर्ट के मतानुसार अर्गट का क्रियाशील सत्व का प्रधान बात्मकांश है। यह एक धूसर वर्ण का चूर्ण है। प्रसव हेतु इसका अधिक उपयोग होता है। अस्तु $\frac{1}{12}$ से $\frac{1}{6}$ ग्रेनकी मात्रामें मुख द्वारावा $\frac{1}{32}$ से $\frac{1}{8}$ ग्रेन की मात्रा में त्वकस्थ सूचीवेध द्वारा इसका प्रयोग करते हैं।

(१०) अर्गोटीन (Ergotin)—यह अर्गट का केवल एक विशुद्ध सत्व है। अर्गोटीन (Ergotine), बोन्जियन्स अर्गोटीन (Bonjean's Ergotine)—इं०।

उपयोग

इसका प्रायः उन सभी दशाओं में प्रयोग होता है, जिनमें कि अर्गट प्रयुक्त है परन्तु निम्न लिखित कतिपय अन्य ऐसे विकार भी है जिनमें इसका उपयोग होता है।

(१) नपुंसकत्व (क्लीवता)—सिर पृष्ठस्थ शिराओं के फूल जानेके कारण जब रतिप्रहर्षणाभावसे मैथुन शक्ति कम हो जाती है, तब अर्गोटीन के त्वक्स्थ अन्तःक्षेपसे प्रायः पूर्ण लाभ होता है।

(२) अर्गोटीनऔर क्वीनीन—यह दोनों गर्भाशय एवं प्लीहा को संकुचित करते हैं, और विशेष कर उस अवस्था में जब विषम ज्वरों में प्लीहा कोमल या वह बढ़ गयी हो, तब इनमेंसे प्रत्येक एक दूसरे की प्रतिनिधि हो सकता है। विषम ज्वरों में इन दोनों का मिश्रण अत्यन्त उपयोगी होता है और इस प्रकार उपयोग करने से क्वीनीन के अधिक परिमाण की बचत होती है। क्योंकि मिश्रित रूप में व्यवहार करने से आधा ही क्वीनीन प्रयुक्त होता है।

(३) यक्ष्मा जन्य रात्रि स्वेद-यह यक्ष्मा रोगियों के रात्रि स्वेद में हितकर है।

मात्रा—२ ग्रेन तीन वा चार बार दैनिक कमी की दशा में मात्रा घटाकर देनी चाहिये।

इंजेक्शिया अर्गोटीनी हाइपोडर्मिका (Inj. Ergotini Hypod)—अर्गोटीन त्वकस्थ अन्तःक्षेप।

शक्ति अर्गोटीन १०० ग्रेन, कैम्फर वाटर २०० फ्लुइड ग्रे०। मात्रा—३ से १० मिनिम।

(११) अर्गोटीनीन Ergotinine—यह एक ऐलकलाइड (क्षारोद) है जो अर्गटसे प्राप्त होता है। इसके सूक्ष्म श्वेत स्फटिक (रवे) होते हैं जो वायु एवं प्रकाश के प्रभाव से कृष्ण वर्ण के हो जाया करते हैं।

नोट—अधुना यह अर्गोटॉक्सीन का अनुहाइड्राइड माना जाता है।

विलेयता—यह एक भाग (माप में) ३३ भाग (माप में) शुद्धासव (Absolute Alcohol) में, तथा ५०° फ़ारनहाइट के उत्ताप पर विलीन हो जाता है। और एक भाग २२० भाग शुद्ध ईथर (Absolute æther) में, एक भाग ९१ भाग ईथिल ऐसीटेट में १ भाग २६ भाग एसीटोन में, १ भाग ७७ भाग खौलते हुये बेञ्जीन में, १ भाग ५२ भाग खौलते हुए ईथिल ऐलकोहल में और १ भाग ५६ भाग मीथिल ऐलकोहाल में विलीन हो जाता है।

नोट—अर्गोटीनीन और सम्पूर्ण विषायकद्रव्यों के भाग द्रव्यमान (आयतन) के अनुसार नहीं प्रत्युत माप के अनुसार हैं।

गुण धर्म तथा उपयोग—प्रभाव में यह अर्गोटीन की अपेक्षा अधिकतर शक्तिशाली है। धमनिका गत्युत्पादक वात तन्तु विकार, विशेषतः शिरोऽर्ति, अर्द्धावभेदक (Basedow's disease) और वस्ति की वातग्रस्तता की दशा में इसका प्रयोग करते हैं। अर्गट सत्व (Extract of ergot) के अन्तःक्षेप की अपेक्षा अर्गोटीनीनी का $\frac{1}{३००}$ से $\frac{1}{६०}$ ग्रेन की मात्रा का त्वगधोऽन्तःक्षेप अधिकतर लाभ प्रदर्शित करता है। मॉर्फीन इंजेक्शन (अहिफेनीनन अन्तक्षेप) की अपेक्षा यह अधिक वेदना नहीं उत्पन्न करते (अपितु अपेक्षा कृत वेदना रहित हैं) और क्षोभ या किसी अन्य प्रकार के कुलक्षण नहीं उपस्थित करते। (प्रोफेसर युलेनबर्ग)।

डॉक्टर मरेल (Dr. Murrel) को यक्ष्मा जन्य फुफ्फुसीय रक्त निष्ठीवन में कई दिन तक रक्तस्राव अवरुद्ध रखने के लिये साधारणतः इस का एक अन्तक्षेप ही पर्याप्त सिद्ध हुआ है। प्रसव के पश्चात की चिकित्सा एवं रक्तस्रुत के कतिपय अन्य भेदों में इसका सफलता पूर्वक त्वक्स्थ अन्तःक्षेप किया जा सकता है।

मात्रा—$\frac{1}{२००}$ से $\frac{1}{४०}$ ग्रेन इसको साधारणतः त्वक्स्थ सूचीवेध द्वारा प्रयुक्त करते हैं। अतः अर्गोटीनीन १ ग्रेन, लैक्टिक एसिड २ मिनिम, क्लोरोफार्म ००० मिनिमको मिलाकर इससे ५ से १० मिनिम, लेकर त्वक्स्थ सूचीवेध द्वारा प्रयुक्त करते हैं।

(१२) अर्गोटीनी साइट्रास (Ergotinæ Citras) और (१३) अर्गोटीनी हायड्रोक्लोराइड (Ergotinæ Hydrochloride)—यह दोनों अर्गोटीनीनी द्वारा निर्मित धूसर वर्ण के चूर्ण हैं जो जलविलेय होतेहैं

मात्रा—$\frac{1}{१५०}$ से $\frac{1}{३०}$ ग्रेन इनमें से प्रथम का अन्तक्षेप किया जा सकता है।

(१४) अर्गोटॉक्सीन (Ergotoxine) यह एक लघु श्वेत वर्ण का चूर्ण होता है जो शीतल ऐलकोहाल तथा सोडियम हाइड्रोक्साइड के विलयन में विलीन हो जाता है।

इससे हाइड्रोक्लोराइड (उज्जहरिद) ऑक्जेलेट (काष्टेत) और स्फुरेत लवणों का निर्माण होता है।

मात्रा—$\frac{1}{१००}$ से $\frac{1}{५०}$ ग्रेन। यह कॉन्युटीन एर्गटोक्सीन और हाइड्रो-अर्गोटीनीन नाम से भी प्रख्यात है।

नोट—अर्गोटीन यद्यपि ब्रिटिशफार्माकोपिया के एक्सट्रैक्ट आफ अर्गट का पर्याय है तथापि उसके अतिरिक्त इसके कई एक व्यापारिक भेद हैं जिनमें से कतिपय निम्न हैं—

(क) अर्गोटीनम् बोञ्जियन् (Ergotinum Bonjean) यह एक जलीय रक्ताभधूसर एक्सट्रैक्ट है जो एलकोहल से शुद्ध किया जाता है इसका एक भाग ५ या ६ भाग अर्गट के बराबर होता है। मात्रा—१॥ से ४॥ ग्रेन।

(ख) अर्गोटीनम् बाम्बेलोन फ्लुइडम् (Ergotinum Bombelon Fluidum) यह एक धूसराभकृष्ण वर्णीय द्रव है जिसको ३० मिनिम की मात्रा में त्वक्कूथ सूचीवेध द्वारा प्रयुक्त किया करते हैं।

(ग) अर्गोटीनम् डेञ्जेल फ्लुइडम् (Ergotinum Denzel Fluidum) यह एक स्वच्छ किया हुआ रस क्रिया (खुलासा रुब्ब) है जिसको ३ से १० ग्रेन की मात्रा में देते हैं।

(घ) अर्गोटीनम् कोलमैन फ्लुइडम् (Ergotinum Koblman Fluidum) यह भी श्यामाभधूसर द्रव है जो जल के साथ संयुक्त हो जाता है। मात्रा—६० से ७५ ग्रेन।

(१५) टायरेमीन (Tyramine) हाइड्राक्सीफेनिलथिलामीन (P-Hydroxy phenylethylamine)—यह अर्गट फांट में वर्तमान होता है और इसे सन्धान क्रिया विधि (Synthetically) द्वारा भी प्रस्तुत किया गया है इसका प्रभाव एड्रीनेलीन (उप वृक्कसार) के समान होता है त्वगधोऽन्तःक्षेप द्वारा (१/१२ ग्रेन की मात्रा में) भी इसका प्रयोग किया जा सकता है। यह सिस्टोजन (Systogen) और युटेरामीन (Uteramin) नाम से भी प्रसिद्ध है।

(१६) इर्न्युटीन (Ernutin) यह एक तरल है, जिसमें टायरेमीन और अर्गोटॉक्सीन दोनों सम्मिलित होते हैं। त्वगधोऽन्तःक्षेप रूप से (१० मिनिम की मात्रा में और आन्तरिक रूपसे ३० से ६० बूंद 'मिनिम' की मात्रा में) इसका उपयोग होता है।

अर्गट की फार्माकालाजी
अर्थात्
अर्गट के प्रभाव

(आन्तरिक प्रभाव)

डक्टर डिक्सन (Daixon) एवं डा० डेल (Dale) ने अर्गट स्थित मुख्य प्रभावकारी सत्वों की ध्यानपूर्वक परीक्षा की जो इस कच्ची औषध (Crude drug) के प्रभाव पर यथेष्ट प्रकाश डालती है। जैसा कि डिजिटेलिस के सम्बन्ध में कहा जाता है, इसका यह प्रभाव इसके विभिन्न सत्वों के सम्मिलित प्रभाव का परिणाम माना जा सकता है। डिजिटेलिस के समान, अर्गट से भिन्न किए हुए किसी भी सत्व का ऐसा विश्वस्त प्रभाव नहीं होता जैसा कि कच्ची औषध के फान्ट, टिंक्चर वा लिक्विड एक्सट्रैक्ट अर्थात् तरल सत्व का)

(१) अर्गोटॉक्सीन (Ergotoxine) वे पदार्थ जो प्रथम स्फेसीलिनिक एसिड (Sphacelinic Acid) और स्फेसीलोटॉक्सीन (Sphacelotoxin) नाम से अभिहित होते थे, उक्त ऐल्कलाइड (क्षारोद) के अशुद्ध रूप थे। डिक्सन महोदय इसका प्रभाव स्थल प्रान्तस्थ नाड़ी-गण्ड की सैलो को मानते हैं। उनके मतानुसार यह रक्तवाहिनियों को बलपूर्वक आकुञ्चित करता है जिससे शरीरावयव एवं हस्तपाद में गैंग्रीन बन जाते हैं, और कुक्कुट की अरुण शिखा श्याम वर्ण में परिणत होकर पतित हो जाती है एवं यह गर्भान्वित जरायु के तन्तुओं का सबल आकुञ्चन उत्पन्न करता है। शय्यागत रूप से अर्थात् रोगी पर यद्यपि इसका कोई विशेष प्रभाव नहीं होता, तो भी यही इसका एक ऐसा प्रभावकारी सत्व है जिससे वास्तव में अर्गट को अभिहित कहा जा सकता है।

(२) टायरेमीन (Tyramin)—प्राणिज पदार्थ के पचन काल में अमिनो एसिड द्वारा भी यह निर्मित किया जाता है। टायरोसीन (Tyrosine) से कर्बनद्विओषित (CO_2)

का विच्छेद कर भी यह प्रस्तुत किया जा सकता है और उपवृक्क सत्ववत् प्रभाव करता है। प्रांतस्थ सौषुम्न वात-तन्तुओं के अन्तिम भाग पर प्रभाव करके यह कोष्टगत दीवारों का आकुञ्चन उत्पन्न करता है और गर्भित जरायु की पेशियों का भी संकोच उत्पन्न करता है।

(३) अर्गेमीन (Ergamine)—उसी प्रकार पचनकारक कीटाणुओं की क्रिया द्वारा यह हिस्टिडीन (Histidine) से भी भिन्न किया जा सकता है। यह धमनिकाओं का महत् विस्तार उत्पन्न करता है और इससे गर्भावस्था से पूर्व भी गर्भाशयिक मांसतन्तुओं का सशक्त वत्स्य आकुंचन उपस्थित होता है। जलविलेय न होने के कारण चूंकि अर्गोटॉक्सीन फान्ट वा तरल सत्व में विद्यमान नहीं रहता, अतएव इन औषधों की पूर्ण मात्रा द्वारा उत्पन्न प्रभाव, टायरेमीन के धमनिका-संकोचन (Vasoconstrictor) प्रभाव के कारण होना अवश्यम्भावी है, जो कि अर्गेमीन की धमनिका प्रसारण (Vaso-dilator) शक्ति की अपेक्षा अत्यधिक है।

मुख-आमाशय तथा आन्त्र—अर्गट का स्वाद तिक्त है। यह लालाप्रस्रावबर्द्धक है अर्थात् इससे अधिक लाला (थूक) उत्पन्न होती है। मध्यम मात्रा में प्रयुक्त करने से यह आंत्रीय स्वाधीन वा अनैच्छिक मांसपेशियों को गति प्रदान करता है। अस्तु, आंत्रस्थ कृमिवत् आकुंचन तीव्र हो जाता है। कभी तो यह प्रभाव इतना बढ़ जाता है कि विरेक आने आरम्भ हो जाते हैं। अधिक मात्रा में उपयोग करने से यह आमाशय तथा आंत्र में क्षोभ उत्पन्न कर देता है।

शोणित—इसके प्रभावोत्पादक अंग तत्काल रक्त में प्रविष्ट हो जाते हैं, परन्तु रक्त पर उनका कुछ भी प्रभाव नहीं होता।

हृदय—अर्गट हार्दिक मांसपेशियों पर अवसादक या नैर्बल्योत्पादक (Depressant) प्रभाव करता है अर्थात् इससे हार्दीय मांसपेशियों की शक्ति घट जाती है। अस्तु यह नाड़ी की गति को भी शिथिल करता है। नाड़ी की गति का उक्त शैथिल्य फुफ्फुस वा आमाशय नाड़ी प्रांत के क्षोभ के कारण होता है। क्यों कि अर्गट से पूर्व यदि एट्रोपीन (धत्तूरीन) दी जाय तो फिर ऐसा नहीं होता, अतः इससे प्रथम रक्तभार घट जाता है अर्थात् अर्गट से हृदय निर्बल हो जाता और नाड़ी शिथिल हो जाती है।

रक्त वाहिनी—(रक्त भार-) अधिकतर धामनिक मांसतन्तुओं पर अर्गट का सरल प्रभाव होने से और किसी भाँति इससे सौषुम्न धामनिक गत्युत्पादक केन्द्रों (Vaso-motor centre) को गति प्राप्त होने के कारण सम्पूर्ण शरीर की धमनियों के सबल रूप से आकुंचित होने से रक्तभार जो आरम्भ में कम हो गया है। अब वह शीघ्र बढ़ जाती है। यही नहीं प्रत्युत शिराएँ भी किसी प्रकार संकुचित हो जाती हैं, सारांश यह कि अर्गट से सम्पूर्ण शरीर की रक्तवाहिनियां विशेषतः छोटी-छोटी धमनियों के संकुचित हो जाने और स्फेलीक्लिनिक एसिड के प्रभाव से उनकी दीवारों के स्थूल हो जाने के कारण यह एक सार्वांगिक रक्तस्थापक (General Hæmostatic) है; अस्तु यदि अर्गट को अधिक काल तक सेवन किया जाय तो शारीरिक धमनियों के संकुचित हो जाने के कारण शरीर के विभिन्न भाग में गैंग्रीन (Gangrene) हो सकता है, जिससे गैंग्रीनस अर्गोटिज़्म (Gangrenousergotism) होजाया करता है। इसको अत्यधिक मात्रा वा विषैली मात्रा में प्रयुक्त करने से वैसोमोटर सेण्टर्ज़ (धामनिक गत्युत्पादक केन्द्र) क्षतग्रस्त हो जाते हैं। हृदय के निर्बल हो जाने और धमनियों के प्रसारित हो जाने के कारण रक्तभार बहुत घट जाता है।

श्वासोच्छ्वास—अर्गट श्वासोच्छ्वास को कम करता है। अस्तु, श्वासोच्छ्वास सम्बन्धी मांसपेशियों की निर्बलता तथा आक्षेप के कारण श्वासावरोध होकर मृत्यु उपस्थित होती है।

वात वा नाड़ीमण्डल—मस्तिष्क पर इसका अत्यल्प प्रभाव होता है। औषधीय मात्रा अथवा

एक ही बड़ी मात्रा में इसका उपयोग करने से सर्वोत्कृष्ट वात केन्द्र प्रभावित नहीं होते। पर यदि चिरकाल तक निरन्तर इसका उपयोग किया जाय तो विशेष प्रकार के लक्षण उपस्थित हो जाते हैं, जिनको आक्षेपयुक्त अर्गटजन्य विषाक्तता (Spasmodic argotism) कहते हैं।

गर्भाशय—गर्भवती स्त्रियों तथा क्षुद्र जीवों में गर्भावस्था विशेषकर प्रसव कालमें अर्गट के प्रयोग से जरायु इतनी तीव्र गति से आकुंचित होता है कि तदभ्यन्तरस्थित सभी वस्तुएँ बहिर निर्गत हो जाती हैं। अतएव यह एक सबल गर्भशातक (आशुप्रसवकारी) औषध है। इसको बड़ी मात्रा में प्रयोग करने से टेटेनिक स्पैज्म (धानुस्तम्भीय आक्षेप) होने लगता है। यह बात अभी सन्देहपूर्ण है कि आया यह गर्भशातक भी है? क्यों कि जब तक दरबिज़ह आरम्भ न हो इससे जरायु संकुचित नहीं होता। गर्भविहीन वा शून्य जरायु पर इसका बहुत साधारण प्रभाव होता है, बल्कि कुछ प्रभाव नहीं होता अर्थात् इससे गर्भाशयिक तन्तु संकुचित नहीं होते। सम्भवतः इसका यह प्रभाव गर्भाशय के धारीविहीन मांसपेशियों पर सरलोत्तेजक असर होने से और किसी भाँति सौषुम्न गर्भाशयिक वात केन्द्रों को गति प्रदान करने के कारण हुआ करता है।

प्रस्राव (रसोद्रेक)—अर्गट के प्रयोग से लाला, घर्म, दुग्ध तथा मूत्रोत्पत्ति व प्रस्राव घट जाता है। जिसका कारण यह होता है कि समग्र शरीर की रक्तवाहिनियों के संकुचित हो जाने से उक्त द्रवों को उत्पन्न करने वाली ग्रन्थियों में रक्त यथेष्ट परिमाण में नहीं पहुँचता।

अर्गट-अगदतन्त्र

(अर्गट के विषाक्त प्रभाव वा लक्षण)

क्रॉनिक अर्गोटिज्म (अर्गट द्वारा चिरकारी विषाक्तता)—औषधीय मात्रा में इसका उपयोग करने से तो कदाचित विरला ही तज्जन्य विषाक्तता दृष्टिगोचर होता है। परन्तु ऐसे निर्धन प्राणी जो दूषित राई के धान्य (जिसमें अर्गट आफ राई वर्तमान होती है) भक्षण करते हैं प्रायः वे क्रॉनिक अर्गोटिज्म (पुरातन प्रकार के अर्गट विष) से आक्रान्त पाये जाते हैं। निम्नलिखित इसके दो स्वरूप होते हैं।

(१) ग्रैंग्रीनस अर्गोटिज्म—

धमनियों के संकुचित हो जाने से चूँकि रक्त समग्र अवयवों में यथेष्ट परिमाण में नहीं पहुँच पाता, अतएव पोषण विकार के कारण शरीर के विभिन्न अवयवों में विशेष कर हस्तपाद में गैंग्रीन (Gangrene) की दशा उपस्थित हो जाती है जिसका पैलेग्रा (Pellagra) से निर्णय करने में भ्रम न करना चाहिये।

(२) स्पैज्मोडिक अर्गोटिज्म (आक्षेपयुक्त अर्गट विष) इस प्रकार के रोगी को प्रथम कण्डू या गुदगुदी का बोध होता है अथवा सम्पूर्ण शरीर पर चिउँटियाँ रेंगती हुई प्रतीत होती हैं। तदनन्तर सनसनाहट और स्थानिक संज्ञाशून्यता का अनुभव होता है। अस्तु, साधारणतः पहिले हस्तपाद आक्षेपग्रस्त एवं अवसन्न हो जाते हैं। पुनः सम्पूर्ण शरीर की यह दशा हो जाती है। क्षुधा बढ़ जाती है। श्रवण व दर्शन में अन्तर आ जाता है। मांसपेशियों की निर्बलता के कारण गति अस्थिर हो जाती अर्थात् चाल लड़खड़ाने लगती है। नाड़ी की गति अत्यन्त मन्द हो जाती है, वमन व विरेक आरम्भ हो जाते हैं। अन्ततः सर्वांगाक्षेप होकर ऐस्फिक्सिया (श्वासावरोध) की दशा में मृत्यु उपस्थित होती है।

अगद

अर्गट द्वारा विषाक्त होने पर निम्न मिश्रण का व्यवहार करें।

ईथरिस प्योर	३० मिनिम
टिंक्चर ओपियाई	१० मिनिम
सिरूपाई	½ ड्राम
एक्वी डिस्टिलेटा	४ ड्राम

इसमेंसे एक चाय के चम्मच भर औषधि प्रति आध आध घंटे के अन्तर से प्रयुक्त करें।

नोट—नायट्रोग्लीसरीन को बड़ी मात्रामें देने से जो विषाक्तता उत्पन्न होती है उसका तथा अधिक परिमाण में क्वीनीन के प्रयुक्त करने से हुई मास्तिष्कीय विकार का अर्गट एक उत्तम अगद है।

अर्गट के थेराप्युटिक्स अर्थात् उपयोग

(बहिर प्रयोग)

कभी कभी रालगण्ड (गाँइटर) और धमनीयार्बुद (एन्युरिज्म) के समीप अर्गोटीन का त्वकस्थ अन्तःक्षेप करने से लाभ होता है। गुदभ्रंश (Prolapsus of the rectum) में यदि प्रति दूसरे वा तीसरे दिवस गुदसंकोचनी पेशी वा स्वयं गुदा में ३ ग्रेन अर्गोटीन का त्वकस्थ अन्तःक्षेप किया जाऐ तो कहते हैं कि रक्त व्याधि की निवृत्ति होती है।

आन्तर प्रयोग

सार्वांगिक रक्तस्थापक रूपसे अर्गट अब तक विख्यात है और सम्प्रति इसको आभ्यन्तरिक शोणित चरण यथा नासार्श द्वारा रक्तस्राव होने अर्थात् नकसीर (Epistaxis), रक्तनिष्ठीवन (Hæmoptysis), रक्तवमन (Hæmatemesis) और रक्तमूत्रता (Hœmaturia) प्रभृति रोगो में बर्तते हैं। व्याधियोंकी ऐसी उग्रावस्था एवं भयानक रोगियों में प्रति १५ वा ३० मिनट के अन्तर से अर्गट का त्वकस्थ वा गम्भीर अन्तःक्षेप करना उपयोगी है। आन्तरिक अवयवों की रक्तस्रुतिमें रक्तस्थापक रूप से अर्गट का उपयोग बुद्धयात्मक नहीं प्रत्युत आनुभविक है इस बात का ध्यान में आना अत्यन्त दुष्कर है कि जो औषधि धमनियों को संकुचित कर रक्तभार की वृद्धि करती हो वह किस भाँति रक्तस्थापक (हीमोस्टेटिक) हो सकती है?

परन्तु गर्भाशय जन्य रक्तस्रुति पर जो इसका रक्तस्थापक प्रभाव होता है, वह अधिकतया जरायुस्थ मांस पेशियों के संकोच के कारण होता है। अतएव प्रसवान्तर होने वाले रक्तस्राव में अर्गट एक अत्यन्त चमत्कारिक औषध है। उन बहुप्रसूता नारियों को जिनमें प्रसव के पश्चात् प्रायः रक्तस्राव हुआ करता है, प्रसव के बाद तत्क्षण अर्गट का उपयोग लाभदायक होता है। और यदि इसके प्रयोग में कोई बात रोधक न हो तो प्रसबके पूर्व भी इसे दे सकते हैं। कतिपय प्रधान रोगियों को अमोनिएटेड टिंक्चर ऑफ अर्गट या लिक्विड ऐक्सट्रैक्ट ऑफ अर्गट १ से २ड्राम की मात्रा में दिन में ३-४ बार देते हैं या हाइपोडर्मिक इञ्जेक्शन आंफ अर्गट को १० मिनिम की मात्रा में २-३ बार प्रयुक्त करते हैं रक्तप्रदर एवं कई प्रकार क गर्भाशयक अर्बुदो की रक्तस्रुति में भी उक्त औषधि के प्रयोग से उत्तम परिणाम प्राप्त हुये हैं। ऐसी दशा में गर्भाशयिक द्वार में अर्गोटीन की पिचकारी करनी चाहिये।

अर्गट चूँकि रक्तवाहिनियों को संकुचित करता है; अस्तु कभी कभी इसको पप्युरा (रक्त विकार जन्य विस्फोटक), प्रवाहिका, प्लीहावृद्धि, सौषुम्न काठिन्य (स्पाइनल स्क्लीरोसिस) एवं सौषुम्नस्थ रक्तसंचय (Spinal congestion) धर्माधिक्य और मधुमेह (डायाबेटीज इन्सिपिडस) प्रभृति रोगों में भी बर्तते हैं। अतः यक्ष्माजन्य रात्रिस्वेदके रोकनेके लिये इसका प्रयोग करते हैं।

अर्गट को अधिकतर शिशु प्रसवान्तर प्रयोग में लाते हैं। क्योंकि प्रसब के पश्चात् इसको देने से गर्भाशय भलीभाँति संकुचित हो जाता है, एवं अमरापातन में सहायता मिलती है और जरायु द्वारा रक्तस्राव नहीं होने पाता। परन्तु प्रसब के पूर्व इसका उपयोग अत्यन्त चतुरतापूर्वक करना चाहिये अन्यथा जरायु संकोच के कारण गर्भ के नष्ट हो जाने की आशंका होती है या गर्भाशय के विदीर्ण हो जाने का भय होता है क्योंकि इसके प्रयोग द्वारा जरायु न केवल क्रमशः बल पूर्वक आंकुचित होने लगता है, बल्कि वह अधिक काल तक संकुचित रहता है और यही भ्रूण के पक्ष में भयावह होता है। अपरञ्च यदि

भ्रूण जरायु द्वारा विसर्जित न हो तो जरायु के बलपूर्वक आकुञ्चित होने पर स्वयं गर्भाशय के विदीर्ण हो जाने की आशङ्का होती है। अस्तु यदि बस्तिगह्वर में कोई विकार न हो और भ्रूण उदर के भीतर आड़ा या किसी विकृत रूप में न हो एवं कोई अन्य कारण प्रसव के लिए रोधक वा अहितकर नहीं तथा गर्भाशयिक द्वार भली प्रकार खुलगया हो और गर्भाशय की शिथिलता के कारण प्रसवमें विलम्ब हो रहा हो तो अर्गट को प्रसव की दूसरी वा तीसरी श्रेणी में भी वर्तना उपयोगी है।

योग-निर्माण विषयक आदेश—

(१) अर्गट एक अनाशुकारी विष है, अस्तु क्वचित काल इसके एक आउंस लिक्विड एक्सट्रैक्ट को एक ही मात्रा में देने से विषाक्त लक्षण नहीं उपस्थित हुये।

(२) इसके सद्यः निर्मित फाँट और इसके अमोनित यौगिक उदाहरणतः अमोनिएटेड टिंक्चर आँफ अर्गट अपेक्षाकृत अधिक विश्वस्त योग हैं।

(३) क्लोरोफार्म वाटर और टिंक्चर आंफ आँरेञ्ज के योजित करने से अर्गट के कुस्वाद का निवारण हो जाता है।

(४) लिक्विड एक्सट्रैक्ट आँफ अर्गट को परक्लोराइड आँफ आयर्न के साथ मिश्रित करनेसे जब मिश्रण श्यामवर्ण का हो जाता है, तब उसमें किञ्चित् निम्बुकाम्ल (Citric acid) के मिलाने से उसका शुभ्रवर्ण हो जाता है।

(५) अर्गोटीन को वटिका रूप में वा कैप शूल में डालकर दें। इसके त्वक्स्थ अन्तःक्षेप करने के लिये नितम्ब स्थल की गम्भीर पेशी श्रेष्टतर है उदर की दीवार में इसका त्वगीय अन्तःक्षेप नहीं करना चाहिये त्वस्थक् अन्तःक्षेप के पश्चात् उक्त स्थल प्रायः शोथयुक्त हो जाता और वहाँ पर फोड़ा बन जाया करता है।

परीक्षित प्रयोग

(१) एक्सट्रैक्टम अर्गोटी लिक्विडम ½ ड्राम
लाइक्वार स्ट्रिक्नीना ३ मिनिम
क्वीनीन सल्फ २ ग्रेन
एसिडम सल्फ्युरिकम डिल ५ मिनिम
एक्वा एनिसाई १ आउंस

यह एक मात्रा है। आवश्यकतानुसार ऐसी ही एक एक मात्रा औषध दिनमें २ २ बार दें।

प्रयोग—प्रसव के पश्चात् ज्वर होने की दशा में अथवा ज्वर के न रहने पर भी इसका उपयोग लाभदायक है।

(२) एक्सट्रैक्टम अर्गोटी लिक्विडम् ३०मिनिम
लाइकार स्ट्रिक्नीनी ३ मिनिम
एक्वापाइमेण्टी (या मेन्थी) ½ आउंस पर्यन्त

ऐसी एक एक मात्रा औषध प्रति तीन-तीन घटे पश्चात् दें।

प्रयोग—रुकी हुयी आंवल के निकालने अर्थात् अमरापातन हेतु गुणप्रद है।

(६) एक्सट्रैक्टम अर्गोटी लिक्विडम्
४०-मिनिम
एसिड गैलिक १० ग्रेन
एक्वासिनेमोमाई १ आउंस पर्यन्त

ऐसी एक मात्रा औषध तत्क्षण पिलादें। आवश्यकता होने पर कुछ घटे पश्चात् एक मात्रा और दें।

प्रयोग—जरायु द्वारा रक्तस्राव होने (Uterine hæmorrhage)में लाभप्रद है।

(४) एक्सट्रैक्टम अर्गोटी १ ग्रेन
एक्सट्रैक्टम गॉसीपियाई ½ ग्रेन
फेराई सल्फास एक्सीकेटा १ ग्रेन
एक्सट्रक्टम एलोज सोकोट्राइनी १ ग्रेन

सबकी एक वटिका प्रस्तुत करें और ऐसी एक एक वटी दिन में दो बार दें।

प्रयोग—रजःप्रवर्त्तक है।

(५) एक्सट्रैक्टम अर्गोटी लिक्विडम् ३०मिनिम
पोटासियाई आयोडाइडाई ३ ग्रेन
अमोनियाई कार्ब २ ग्रेन
एक्वा मेन्थी पेप० १आउंस पर्यन्त

ऐसी एक एक मात्रा औषध दिन में दो वार दें। प्रयोग—यूटराइन फाइब्रांइड (गर्भाशय स्थार्बुद) में उपयोगी है।

(६) एक्सट्रैक्टम अर्गोटीलिक्विडम १५ मिनिम
टिंक्चूरा वेलाडोनी ५ मिनिम
सिरुपस आरन्शियाई आधा ड्राम
इन्फ्युजम कस्केरी आधा आउंस पर्यंत

ऐसी एक एक मात्रा औषध दिन में तीन वार दें। प्रयोग—यह स्तन्यह्रासकारक (Antigalactagogue) है।

अर्गोटिक्सन—इं० अर्गट का एक प्रभावकारी सत्व। देखो-अर्गोटा।

अर्गोटिज्म—इं० अर्गट द्वारा विषाक्तता। देखो—अर्गोटा।

अर्गोटीन—इं० अर्गट सत्व। यह अर्गोटॉक्सिन का अन्हाइड्राइड है। देखो—अर्गोटा।

अर्गोटीनीन—इं० अर्गट से निर्मित किया हुआ एक अलकलॉइड (क्षारीय सत्व) विशेष। देखो—अर्गोटा।

अर्गोटीनम् कोलमैन फ्ल्युइडम्—ले० अर्गोटीन भेद देखो—अर्गोटा।

अर्गोटीनम डेक्ज़ील फ्ल्युइडम—ले० अर्गोटीन भेद देखो—अर्गोटा।

अर्गोटीनम् वाम्वेलोन फ्ल्युइडम्—ले० अर्गोटीनभेद देखो—अर्गोटा।

अर्गोटीनमूवाज़ियन—ले० अर्गोटीन भेद। देखो—अर्गोटा।

अर्गोटेनिक एसिड—ले० एक ग्ल्युकोसाइड विशेष। देखो—अर्गोटा।

अर्गोनीन—इं० यह एक चांदी का एक यौगिक है। देखो—रजत।

अर्गोल—काफूर मोती (कपूर का एक भेद है जो पतला नीला सा होता है)।

अर्घ—हिं० पु० (१) Mode for worship, act of pouring out water in honour of a deity (The sun, moon, *etc*) while performing worship पूजा की एक विधि। जलदान, सामने जल गिराना। तर्पण करना। (२) मूल्य। (price, value)

अर्घटम्—सं० क्ली० भस्म। (Oxide) हारा०। See-Bhasman।

अर्घा—हिं० पु०, स्त्री० (१) अर्घ देने का शंख की आकृति का एक ताम्र पात्र। जलहरी, तर्पण का पात्र (A vessel shaped like a boat)। (२) जिस वनमें जरत्कारु मुनि तप करते थे वहां का मधु।

अर्घ्यम्—सं० क्ली०
अर्घ्य—हिं० संज्ञा पु०
} आर्घ्य मधु, मधु। A sort of honey (Mel)। वि० (१) पूजनीय (२) बहुमूल्य।

अर्घ्यत—देखो—मधु।

अर्घ्याटः,-लः—सं० पु० शुक्रत्ता, उचटा, । आंकड़ा, चेचूको-बं०। पर्याय शुक्रत्ता, चालुपत्र, अर्घ्यत, अर्घ्याटलः। द्रव्याभि०।

अर्घ्यातः—सं० पु० अर्घ्याट, उचटा, ओकड़ा। (Abrusprecatorius) द्रव्याभि०।

अर्घ्याहः—सं० पु० मुचकुन्द वृक्ष। (Pterospermum suverifolium) रा० नि० व० १०। देखो—मुच (चु) कुन्दः।

अर्चाकामी—सं० हिं० स्त्री० वलिकामी—सं०।

लक्षण—जब ग्रह अपनी पूजा कराने के निमित्त आक्रमण करते हैं तब बालक दीन होकर अपने हाथों से मुख को मलता है, उसके ओष्ठ, तालु और कंठ सूख जाते है। शंकित चित्त होकर वह चारों ओर देखने लगता है, रोता है ध्यान में बैठ जाता है, दीनता प्राप्त कर लेता है, भोजन की इच्छा होने पर भी नहीं खाता, ऐसा रोगी सुख साध्य होता है।

चिकित्सा—हिंसात्मक ग्रहों को वेदोक्त मन्त्रों द्वारा एवं होमादिसे जय करें। अर्चाकामी ग्रहोंको यथाभिलाषित्त वलिप्रदानादि से जय करने का उपाय करें। वा० उ० अ० ३।

अर्चिः-सं० स्त्री० क्ली० / अर्चि- सं० स्त्री० हिं० संज्ञा स्त्री० } (२) अग्निशिखा, लांगलिक, करिहारी। (Gloriosa superba)। (२) अग्निज्वाला, गज पिप्पली (Pothos officinalis) (३) चमक, आँच, ज्योति, दीप्ति, तेज (Light.splendour), (४) अग्नि आदि की शिखा, (५) किरण।

अर्चिमान-हिं० वि० [सं०] / अर्चिष्मान्-हिं० संज्ञा पु० } [सं०] [स्त्री० अर्चिष्मती] (१) अग्नि (Fire) (२) सूर्य्य (The sun)-वि० [सं०) दीप्त। प्रकाशमान। चमकता हुआ। (Lighted)

अर्ची-ता० काञ्चनार, कचनाल (र)। (Bauhinia racemosa, *Lrm*) मेमो०।

अर्ज़-अ० (१) पीलू-लु (Salvadora persica) (२) दर्शनशास्त्र (फ़िलसफ़ा) की परिभाषा में उस वस्तु को कहते हैं जो दूसरे के आधार से स्थित हो अर्थात् जिसका अस्तित्व दूसरे के आधार पर हो। उदाहरणः रंगीन कपड़े में जो रक्तता, श्यामता या श्वेतता प्रभृति वर्ण पाए जाते हैं वे "अर्ज" हैं और स्वयं कपड़ा उनका मूलाधार है, और पदार्थत्व अर्थात् मृदु, लघु, सूक्ष्म, प्रभृति गुण पदार्थ के अस्तित्व को प्रगट करते हैं अर्थात् वे पदार्थाश्रित है तथा "अर्ज" या गुण कहलाते हैं, क्रियात्मक लक्षण, धर्म, स्वाभाविक गुण, लक्षण प्रभृति इसके पर्यायवाची शब्द हैं, क्वालिटी (Quality) इ०।

अर्ज- / अर्ीज- } -अ० महकना, सुगन्ध फैलना। पर्फ्यूम (Perfume)

अर्ज-अ० (१) पृथ्वी; भू एक तत्व विशेष। (Earth) देखो—तत्व। (२) चौड़ाई। आयत। अर्ज-हिं०।

अर्ज़ह-अ० दीमक। (Whiteant)

अर्जकः-सं० पु० / अर्जक-हिं० पु० } (१) क्षुद्रतुलसी भेद, बावरी-हिं०। बाबुइतुलसी-बं०। अजवला गर्गेर कं०। तेकगग्गेरचेट्टु-ते०। (Ocimum Basilicum)। पर्याय—श्वेतच्छदः, गन्धपत्रः, पोता, कुठेरकः,। बर्बरिकाकारो, लघुमञ्जरीकः, सूक्ष्मपत्रः, निर्गन्धः, श्वेत कुठेरकः (बाबुई)। सु० सु० ३८ अ० सुरसादि ग०। श्वेत बर्बरी, शादा बाबुई-बं०। भा० पू० १ भा०। श्वेत पर्णासः, श्वेत तुलसी, तोकमारी। सि० यो० विसूची-चि० वमन शान्ति। अर्जक अर्थात् बावरी श्वेत, कृष्ण तथा रक्त भेद से तीन प्रकार की और तीनों गुण में समान होती है।

गुण—कटु, उष्ण, वात कफ रोगनाशक, नेत्र रोगहर, रुचिकारक तथा सुखप्रसवकारक है। रा० नि० व० १०। देखो—बर्बरी (बबुतुलसी, बिश्वतुलसी)। (२) श्वेतपलाश वृक्ष। Butea frondosa (The whitVar)

अर्जकर्जः-सं० पु० असन वृक्ष, आसन (-ना), पियाशाल। (Terminalia tomentosa) देखो—आसन।

अर्जकादिवटिका-सं० स्त्री० सफ़ेद तुलसी मूल, शंखाहुली मूल, निर्गुण्डी, आंगरे की जड़, जायफल, लवंग, विडंग, राजपीपल, अतिबला, वंशलोचन, अनन्तमूल, मूसली, शतावरी विदारीकन्द, गोखरू सबको कोकर की छाल के रस में खरल करके १-१ मा० की गोलियां बनाए। अनुपान-सुरामण्ड। यह गोलियां स्तन्यकर और वृष्य है। भै० र० वी० स्तं०।

अर्जता-भूम्यामलकी सदाहज्र मेनी। (Phyllanthus niruri) इं० है०गा०।

अर्जन-इब्रा० मकड़ी (Spider)

अर्जन-फा० कंगुनी या चीना। (Millet)

अर्ज़रा-बरब० आस।

अर्जलवनान-अ० देवदारु, चीड़। (Pinus Cedrus) म० अ० डा०।

अर्जवा-रू० चाँदी, रजत। Silver (Argentum) देखो—रजत।

अर्जवाँ-अ० अरावाँ।

अर्जा-अ० चर्ख। See;charkha

अर्जान-बरब० बरबरी बादाम का वृक्ष।

अर्जानी-अ० मुहम्मद अकबर अर्जाशाह नाम था। आप फरूखशेर के समकालीन तथा उच्चकोटि के हकीम थे। मीजानुत्तिब तिब्ब अकबर, मुफ़र्रहुलक़ुलूब प्रभृति आपके लिखे हुए प्रसिद्ध ग्रन्थों में से हैं।

अर्जाब-
अमूआअ-
अ० आन्त्र। नोट—यह शब्द एक वचन में नहीं आता। (Intestines)

अर्जालून-बरब० फ़ाशरा, शिबलिंगी। (Bryonia)

अर्जीज-
अर्जीर-
फा० वङ्ग रांगा। Tin (Stannum) सं० फा० इं०।

अर्जीकनह-यू. इक्लीलुल्मलिक (नाखूना) (M, elilotus officinalis)

अर्जीनिया-ले० अरण्यपलाण्डु, काँदा, जंगली प्याज अन्सल, इस्कील-अ०। (Indian spill) देखो—वन पलाण्डु।

अर्जीनिया इण्डिका-
अर्जीनियासिल्ला-
ले० काँदा, जंगली प्याज, अरण्यपलाण्डु। (Scilla indica) देखो—वनपलाण्डु।

अर्जुनः-
अर्जुन-
सं० हिं० पु० (१) श्वेतवर्ण, सफेद रङ्ग। स्वच्छ। (२) सफेद कनैल।

(१) नेत्र शुक्लगत रोग विशेष। आँख का एक रोग जिसमें आँख के सफेद भाग में लाल छींटे पड़ जाते हैं।

लक्षण—नेत्रों के सफेद भाग में खरगोश के रुधिर के समान जो एकही बिन्दु उत्पन्न हो उसको "अर्जुन" कहते हैं। मा० नि०।

(२) मयूर, मोर, पक्षी, (The peacock) मे० तन्त्रिक।

(३) एक वृक्ष विशेष।

पर्याय—नदीसर्ज, वीरतरु, इन्द्रद्रुः, ककुभः (अ०), इन्द्रद्रुमः (शब्दर०) शम्बरः पार्थ चित्रयोधी, धनञ्जय, वैरातङ्क' किरीटी, गाण्डीवी कर्णारिः, करवीरकः, कौन्तेयः, इन्द्रसूनुः, गांडीरी शिवमल्लकः, सव्यसाची, वीरद्रु कृष्णसारथिः, पृथाजः, फाल्गुनः, धन्वी, वीर-वृक्षः-सं०। कहू, कहुआ, काह, (हू), कोह, कौह, अर्जुन का पेड़, अर्जन-हिं०। अर्जुनः, अर्जुन, गाछ बं० टर्मिनेलिया अर्जुना (Termnaliaarjuna' *Bedd.*, टर्मिनेलिया ग्लैब्रा Terminalia glabra, *W. & A.*, पेण्टाप्टेरा अर्जुना Pentaptera arjuna' *Roxb*, पेण्टाप्टेरा ग्लैब्रा Pentaptert glabra.' पेण्टापटेरा अंगस्टिफोलिया Pentaptera angustifolia.' बोहीनीया टोमेण्टोसा Bauhenia tomentosa-ले० अर्जुना Arjuna दी अर्जुना माइरोबेलन The Arjunamyrobalan इ०। बेल्लइ-मरुद, मरम्, वेल्ल मरद्, वेल्ल मट्टी-ता०। तेल्ल मद्दि-चेट्टु, मद्दि (ट्टि) चेट्टु येस्मद्दि-ते०, तै० वेल्ल मरुत, पुल्ल मरुत मल०। होले मट्टि, विलि मट्टि, तोर विल्लि मट्टि तोर मट्टि, विल्लि मट्टि-कना०। सारडोल, अश्मर-क०। अर्जुन साद (द) रा, आपटा, सारडोल, अर्जुन वृक्ष, शादूल, पिञ्जल, सन्मदट मह० सादडो, अर्जुन, साजदान, आसोदरो गु० तारेमती-का०। इंजन-उड़िं० श्वेतवर्ण वृक्ष, सारडोल को०। महिविल्लि-मट्टि महि-मैसू०। तौक्क्यान- बर० अर्जुन बम्ब। कुम्बुक सिंहल०। को०। महिविल्लि-मट्टि, महि-मैसू०। तौक्क्यान बर०। अर्जुन-बम्ब०। कुम्बुक-सिंहल०।

हिमज वा हरीतकी वर्ग

(*N. O. Combretaceœ*)

उत्पत्ति-स्थान—यह वृक्ष दक्खिन से अवध तक नदियों के किनारे होता है। यह बरमा और बङ्ग में भी होता है। उत्तरी, पश्चिमी प्रांत, हिमवती पर्वत मूल, संयुक्त प्रांत, बंग प्रदेश

तथा मध्य भारत, दक्षिण विहार और छोटा नागपुर।

वानस्पतिक-वर्णन—इसके वृक्ष अत्यन्त विशाल ३०–३२ हाथ अर्थात् ६० से ८० फीट उच्च तथा पतन शील (पत्र) होते हैं। इसका काण्ड अत्यन्त स्थूल होता है। बङ्ग देश में वीर-भूम्यञ्चल में यह प्रचुर मात्रा में उत्पन्न होता है। यह एक आरण्य वृक्ष है। पत्र नरजिह्वाकार, पत्र पृष्ट में वृन्त के सन्निकट दो अर्बुदाकार ग्रन्थियां इस प्रकार लगी होती हैं जिनको पत्र के ऊपर की ओर से देखने से वे दिखाई देती हैं, ऐसा बोध नहीं होता। वैशाख तथा ज्येष्ठ में इसमें पुष्प लगते हैं। पुष्प अत्यन्त सूक्ष्म, हरिदाभ, श्वेत वर्ण के और पुष्प दण्ड के चतुर्दिक स्थित होते हैं। केशर केशवत् सूक्ष्म एवं उच्च होते हैं। फल अगहन और पौष में परिपक्व होते हैं। फल देखने में कर्म्मरंग के समान लम्बाई की रुख उच्च तोरणिकाओं एवं तन्मध्य गम्भीर परिखाओं से युक्त फाँकदार होते, किन्तु तदपेक्षा खर्व्वाकार एवं तादृश मांसल नहीं होते हैं। नवीन त्वक् आमलक वल्कवत् बाहर से रक्ताभ धूसर तथा भीतर से अरुण वर्ण का होता है। स्वाद ग्राह्य कषाय होता है।

रासायनिक-संगठन—ग्रन्थ संकेतों से यह प्रगट होता है कि बहुशः पूर्व अन्वेषकों को उक्त ओषधि यथेष्ट अभिरुचि प्रदान कर चुकी है। हूपर (१८९१) के अनुसार इसकी छाल में ३४ प्रतिशत भस्म प्राप्त होती है जिसमें लगभग सम्पूर्ण शुद्ध खटिक कार्बनित अर्थात् चूर्णोपल या खड़िया मिट्टी (Calcium carbonate) होता है, जलीय रसक्रिया में २३ प्रतिशत खटिक के लवण और १६ प्रतिशत कषायीन Tannin यह दो द्रव्य वर्तमान होते हैं, ऐलकोहल द्वारा रसक्रिया प्रस्तुत करने पर कषायीन के सिवाय अत्यन्त मात्रा में रञ्जक पदार्थ प्राप्त हुआ।

घोशाल (१९०९) ने इसकी छाल का विस्तृत रासायनिक एवं प्रभाव विषयक अध्ययन किया, उनके अनुसार इसमें निम्न लिखित द्रव्य पाये गये—

(१) शर्करा, (२) कषायीन, (३) रञ्जक पदार्थ, (४) ग्लूकोसाइड के समान एक पदार्थ और (५) कैल्सियम तथा सोडियम के कार्बोनेट्स और किंचित क्षारीय धातुओं के हरिद (Chlorides) उन्हें यह भी ज्ञात हुआ कि सम्पूर्ण कषायीन १२ प्रतिशत और भस्म ३० प्रतिशत हुई।

परन्तु, आर० एन० चोपरा महोदय एवं उनके सहयोगियों ने उत्तम शुद्ध वल्कल को एकत्रित कर, इसके उस प्रभावात्मक सत्व की प्राप्ति हेतु, जिसको उक्त ओषधि के हृदयोत्तेजक प्रभाव का मूल बतलाया जाता है, इसका अत्यन्त चतुरतापूर्वक विश्लेषण किये। कहा जाता है कि इसमें ग्लूकोसाइड्स वर्तमान होते हैं। अस्तु, उनकी विद्यमानता का ज्ञान प्राप्त करने के लिए अत्यन्त ध्यानपूर्ण शोध की गई, परन्तु इसके वल्कल में न एल्कलाइड (क्षारोद) और न तो ग्लूकोसाइड ही प्राप्त हुये और न सुगन्धित वा अस्थिर तैल के स्वभाव का ही कोई द्रव्य पाया गया, आपके अनुसार वल्कल में निम्न पदार्थ वर्तमान पाए गए—

(१) अल्प मात्रा में एल्युमिनियम (फटिकम) तथा मग्नेशियम (मग्नम) लवणों के सहित असाधारणतः बहुल परिमाण में खटिक (Calcium) के लवण।

(२) लगभग १२ प्रतिशत कषायीन जिसमें प्रधानतः पाइरोकैटेकोल टैनिन्स (Pyrocatechol tannins) वर्तमान होता है।

(३) उच्च द्रवणाङ्कयुक्त एक सैन्द्रियकाम्ल और फाइटॉस्टेरोल (Phytosterol)।

(४) एक सैन्द्रियक एस्टर (Ester) जो क्षारत्वम्लों द्वारा सहज में ही हाइड्रोलाइज्ड (Hydrolysed) हो जाता है।

(५) कतिपय रञ्जक द्रव्य शर्करा प्रभृति।

उपर्युक्त विश्लेषण द्वारा यह बात स्पष्ट होगई कि इसमें कोई ऐसा प्रभावात्मक सत्व, जो इसके हृदय बलकारक प्रभावका कारण सिद्ध हो, जिसमें एतद्देशीय जनता की महान श्रद्धा है, नहीं पाया

जाता। पृथक्करण कालमें पेट्रोलियम, ईथर, मद्यसारीय और जलीय सारों से प्राप्त विभिन्न अंशों की ध्यानपूर्वक परीक्षाकी गई; परन्तु खटिक यौगिकों के सिवा कोई अन्य द्रव्य जो हृदय वा किसी अन्य धातु पर प्रभाव उत्पन्न करें, नहीं पाए गये रञ्जक पदार्थ को वियोजित कर उसकी परीक्षा की गई, पर परिमाण पूर्ववत रहा अभी हालमें केइयस (Caius), म्हेसकर (Mhaskar) तथा आइजक (Isaac) (१९३०) ने टर्मिनेलिया अर्थात् हरीतकी जाति के सामान्य भारतीय भेदोंके द्रव्यगठन का विस्तृत अध्यन किया, परंतु क्षारोद (alkaloid) वा मध्वोज (Glucoside) अथवा सुगन्धित वा अस्थिर तैल (Essential oil)के स्वभाव के किसी प्रभावात्मक द्रव्य के प्राप्त करने में वे असमर्थ रहे। सम्पूर्ण १५ प्रकार की छालों को भस्म कर परीक्षा करने पर उसमें एक श्वेत मृदु निर्गंध और निःस्वाद भस्म वर्तमान पाई गई (इं० डू० इं०)

प्रयोगांश—त्वक्, पत्र (तथा अर्जुन सुधा)

मात्रा—त्वक् चूर्ण—२–६ आना भर।

साधारण मात्रा—२ तो०।

औषध-निर्माण—अर्जुनघृतम्, अर्जुनाद्य घृतम्, अर्जुन त्वक्, क्वाथ, (१० में १)

मात्रा—आधा से १आउंस और त्वक चूर्ण।

अर्जुन के गुणधर्म तथा प्रयोग

आयुर्वेदीय मतानुसार—अर्जुन कषेला, उष्ण वीर्य, कफघ्न तथा व्रणशोधक है और पित्त श्रम तथा तृषानाशक एवं वातरोग प्रकोपक है। धन्वन्तरीयनिघण्टु। रा० नि० व० ९।

ककुभ अर्थात् अर्जुन शीतल, कषेला, हृदय को प्रिय (हृद्य), क्षत, क्षय, विष और रुधिर विकार को दूर करता है तथा मेद रोग, प्रमेह, व्रणरोग एवं कफ पित्त को नष्ट करता है। भा० पू० १ भा० वटादि व० वा० सू० १५ अ० न्यग्रोधादि "जम्बू द्वयार्जुनकप्लीतन सोम बल्क।

पार्थ (अर्जुन) क्षत तथा भग्न में पथ्य और रक्तस्तम्भक तथा-मूत्रकृच्छ्र में हितकर है। (राजवल्लभ)।

अर्जुन के वैद्यकीय व्यवहार

चरक–रक्तपित्त में अर्जुन त्वक्—(१) अर्जुन की छाल को रात्रिभर जलमें भिगो रक्खे प्रातः उक्त जल (हिम) को या अर्जुन की छाल के रस वा छाल को जल में पीसकर किम्वा अर्जुन की छाल द्वारा प्रस्तुत क्वाथ के पान करने से रक्तपित्त प्रशमित होता है। (चि० ४ अ०) "धनञ्जयोदुम्बरकौ निशिस्थिता वा स्वरसीकृता वा कल्कीकृता वा मृदिता श्रुता वा। एते समस्ता गणशः पृथग्वा रक्तं सपित्तं शमयन्ति योगाः"।

(२) व्रणाच्छादनार्थ अर्जुनपत्र—अर्जुन पत्र द्वारा व्रण (क्षत) को आच्छादित करें यथा—"कदम्बार्जुन ×। व्रण प्रच्छादने विद्वान् ×।" (चि० १३ अ०)।

सुश्रुत—शुक्रमेह में अर्जुनत्वक्–शुक्रमेही को अर्जुन की छाल वा श्वेत चन्दन का क्वाथ पान कराएँ। यथा:—"शुक्रमेहिनम् ककुभ चन्दन कषायं वा।" (चि० ११ अ०)।

वागभट—मूत्राघात में अर्जुन त्वक्—मूत्रोरोध होने पर अर्जुन की छाल का क्वाथ पान कराएँ। यथा—

"कषायं ककुभस्य वा" (चि० ११ अ०)

(२) व्यङ्ग में अर्जुन त्वक् व्यंग (यौवन पिडिका वा मुहाँसा) रोग के प्रतीकारार्थ अर्जुन त्वक् को पेषण कर मधु के साथ प्रलेप करें। यथा—

"व्यङ्गेषु चार्जुन त्वग्वा," (उ० ३२ अ०)

(२)अर्जुन और सिरिसकी छाल के क्वाथ में रूई की वत्ती भिगोकर योनि में रखने से मृढ़गर्भ के निकलने के पश्चात् की व्यथा दूर होती है।

चक्रदत्त—रक्तातिसार में अर्जुन त्वक् अर्जुन की छाल को बकरी के दूध में पीसकर बकरी का दूध तथा मधु मिलाकर पीने से रक्तातिसार निवृत होता है। यथा—

"× अर्जुन त्वचः। पीताः क्षीरेण मध्वाढ्याः पृथक् शोणित नाशनाः।"

(अतिसार चि०)

(२) हृद्रोग में अर्जुन त्वक्—कुट्टित अर्जुन छाल २तो०, गव्य दुग्ध आध पाव, जल डेढ़पाव, इनको दुग्धावशेष रहने तक क्वथित करें। यह क्वाथ हृद्रोग में सेवनीय है। यथा—

"अर्जुनस्य त्वचा सिद्धं क्षीरं योज्यं हृदामये।" (हृद्रोग चि०)

(३) बलसञ्जननार्थ अर्जुन त्वक्—अर्जुन छाल को दुग्ध में पीसकर दूध के साथ पीने से बल की वृद्धि होती है अथात् यह परं बल्य व रसायन है। यथा—

"ककुभस्य च वल्कलम्।
रसायनं परं बल्यं ॐ।" (हृद्रोग चि०)

(४) अस्थिभग्न में अर्जुन त्वक्—सन्धियुक्त अस्थि भग्न में दुग्ध तथा घृत के साथ अर्जुन त्वक् चूर्ण को पान कराएँ। यथा—

"सघृतेनॐ अर्जुनम्। सन्धियुक्तोऽस्थि भग्ने च पिबेत क्षीरेण मानवः।" (भग्न चि०)

भावप्रकाश—क्षयकास में अर्जुन त्वक्—अर्जुन की छाल को चूर्ण कर अडूसा पत्र स्वरस की सात भावना देकर मिश्री, मधु तथा गोघृत के साथ चाटें यह सरक्त क्षयकास हर है। यथा—

"चूर्णं काकुभमिष्टं वासक रस भावितं बहुवारान। मधु घृत सितोपलाभिर्लेह्यं क्षय कासरक्तहरम्।" (भ० ख० द्वि० भा०)

(२) मूत्ररोधज उदावर्त्त में अर्जुन त्वक्—मूत्ररोध जन्य उदावर्त में अर्जुन की छाल का क्वाथ पान कराएं। यथा—

"मूत्ररोध जनितेॐ कषायंककुभस्य च।" (भ० ख० तृ० भा०)

हारात—पूयमेह में अर्जुन त्वक्—पूयमेही को धव तथा अर्जुन की छाल का क्वाथ पान करायें। यथा—"ॐ पूयमेहे कषायश्च धवार्जुनस्य।" (चि० २८ अ०)

वङ्गसेन—ग्रहणी में अर्जुनत्वार—केशराज एवं अर्जुन की छाल के अन्तर्धूम दग्ध क्षीरको प्रातः काल तक्र (मस्तु) के साथ पान करें यह वेदना बहुल आमग्रहणी के लिये हितकर है। यथा—

केशराजोऽर्जुनत्वारं प्रातः पीतञ्चमस्तुना।
निहन्ति सामभत्यर्थमचिराद् ग्रहणीरुजम्॥
(ग्रहण्यधिकार)

वक्तव्य

चरक के उदर्दप्रशमनवर्ग में अर्जुन का उल्लेख है (सू० ४ अ०) तथा पित्तमेह "निम्बार्जुनाम्रात निशोत पलानां," "शिरीष सर्जार्जुन केशरानां" व कफमेह विडङ्ग पाठार्जुन धन्वनाश्च पूर्वं कफ बातज मेह "बचाप्टोला र्जुन" विषयक पाठों के अन्तर्गत द्रव्यान्तर से प्रमेह रोगों में अर्जुन का व्यवहार दृष्टिगोचर होता है। चक्रदत्त की हृद्रोग चिकित्सा के अन्तर्गत इसका पाठ है और उन्होंने हृद्रोगहर द्रव्यों में इसे श्रेष्ठ माना है किन्तु चरक सुश्रुतोक्त हृद्रोग चिकित्सा में इसका नामोल्लेख भी नहीं हुआ है।

चरक-सुश्रुतोक्त क्षयकास चिकित्सान्तर्गत अर्जुन का प्रयोग दिखाई नहीं देता चक्रदतोक्त रक्तातिसारान्तर्गत अर्जुन का प्रयोग सुश्रुतोक्त की अविकल प्रतिलिपि है। (सु० उ० ४० अ०)

उपयुक्तवर्णन से वह ज्ञात होता है कि संस्कृत ग्रन्थकार अर्जुन को अति प्राचीन कालसे हृदय बलदायक औषध मानते आये हैं। सर्व प्रथम वाग्भट्ट महोदय ने इस ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया। वे लिखते है—

"क्वाथे रौहीतकाश्वत्थ खदिरोदुम्बरार्जुने
ॐ ॐ ॐ।" (चि० अ० ६)

इस पाठ में वे कफज हृद्रोगी को द्रव्यांतर सहित अर्जुन के उपयोग का आदेश करते हैं। इनके बाद के पश्चात्कालीन लेखकों में चक्रदत्त ने इसे कषाय एवं बल्य लिखा और हृद्रोग में इसके प्रयोग का उल्लेख किया।

इसकी छाल एवं तन्निर्मित औषध अपने प्रत्यक्ष हृदयोत्तेजक प्रभाव के लिये इस देश में आजतक विख्यात है। आयुर्वेदीय चिकित्सक हृदौर्बल्य

तथा जलोदर की सभी दशाओं में इसका उपयोग करते हैं। कतिपय पाश्चात्य चिकित्सकों कीभी इसके हृदयोत्तेजक प्रभाव में आस्था है और वे इस का हृद्य (हृदय बल्य) रूप से व्यवहार करते है। अस्तु इसकी छाल द्वारा निर्मित एक तरल सत्व डाक्टरी औषध विक्रेताओं द्वारा उपलब्ध होता है।

परन्तु कोमन Koman (१९१६–२०) महोदय ने हृदय–कपाट जन्य व्याधि विषयक २० रोगियों पर इसके त्वग्द्वारा निर्मित क्वाथका उपयोग किया, पर परिणाम लाभ के विपक्ष में रहा। उष्णकटिबन्धीयौषधि परीक्षणालय (School of Tropical Medicine) में जलोदरयुक्त वा तद्रहित हृन्नैर्बल्य (Failure of cardiac compensation) पीड़ित बहुशः रोगियों में इसके त्वक् द्वारानिर्मित ऐल्कोहलिक एक्सट्रैक्ट की भली भाँति परीक्षा की गई। किन्तु डिजिटेलिस वा कैफीन समूह की औषधों के समान किसी रोगी पर इसका प्रगट प्रभाव न हुआ, रक्तभार एवं हृदय स्पन्दन की शक्ति पूर्ववत् ही रही। उक्त रोगियों के मूत्रोद्रेक पर इसका प्रत्यक्ष प्रभाव नहीं हुआ। जो प्रभाव इस औषध का बतलाया जाता है वह इसमें अधिक परिमाण में पाए जाने वाले खटिक यौगिकों का हो सकता है जिसका संकेत प्रथम किया जा चुका है।

केइयस((Caius) म्हेसकर (Mhaskar) तथा आइजक (Isa-ac) १९३० ने टर्मिनेलिया जाति के भारतीय भेदों के बहुशः भिन्न भिन्न स्वरूपाकर के होने का उल्लेख किया है। इसके भिन्न भिन्न १५ भेद हैं। इस प्रकार के टर्मिनेलिया की छालों की रूपाकृति में परस्पर इतनी सादृश्यता है कि इनके भेद निर्णय करने में भूल हो जाने की बहुत सम्भावना है, भारत वर्षीय औषध-विक्रेता (वणिक्) क्रियात्मकरूप से इनमें कोई भेद नहीं करते और वे सदा अर्जुन की अभेद संज्ञा द्वारा इन सबका विक्रय करते हैं। उक्त विद्वानों ने इसकी शुष्क निर्मल छालों को उष्ण फांट, क्वाथ एवं ऐल्कोहालिक एक्सट्रैक्ट रूप में प्रयोग कर इनके प्रभाव का पृथक् पृथक् अध्ययन किया और परिणाम निम्न रहा–टर्मिनेलिया (हरीतकी) की सामान्य भारतीय जातियों की छालों को स्वास्थ्यावस्था में प्रयुक्त करने पर वे या तो (१) मृदु मूत्रल, यथा अर्जुन (Terminalia Arjuna) बिभीतकी (T. belerica), (T. pallida) वा (२) उत्तम सबल हृद्योत्तेजक यथा टार्मिनेलिया वाइअलेटा (T. bialata) टर्मिनेलिया कीरिएसिया (T. coriacea) टर्मिनेलिया पांइरिफोलिया (T. pyrifolia) वा (३) उभय मूत्रल तथा हृदयोत्तेजक होते हैं, यथा अरण्य वातादं (T. catappa) हरीतकी (T. chebula), हरीतकी भेद (T. citrina) टर्मिनेलिया मायरियोकार्पा (T. myriocarpa), ट० ऑलिवेराई (T. oliveri), किज्जल वा किण्वल (T. paniculata) और आसन (T. tomentosa),

(School of Tropical Medicine Calcutta) द्वारा घोषित परिणामों से वे भिन्न है। परन्तु चूँकि अभीतक कोई प्रभावात्मक द्रव्य पृथक् नहीं किया गया और केइयस (Caius) तथा उनके सहकारियों ने क्रियात्मक रूप से विभिन्न प्रकार की छालों की रासायनिक–संगठन में कोई परिवर्तन न पाया। अस्तु इस बात का समझना अत्यन्त कठिन है कि इसकी अलग अलग जातियोंके इन्द्रियव्यापारिक एवं औपयोगिक प्रभाव पृथक् पृथक् है, अस्तु प्रागुक्त शोधों की पुष्टि हेतु विशेष अध्ययन अपेक्षित है।

यूनानी मत—

प्राचीन यूनानी ग्रन्थों में अर्जुन का वर्णन नहीं मिलता। हां? वर्तमानकालीन लेखकों ने इसका कुछ सामान्य वर्णन किया है, उनके मतानुसार यह—

प्रकृति—उष्ण व रूक्ष २ कक्षा में, किसी किसी के मत से ३ कक्षा में। रंग—श्वेताभधूसर, स्वाद—विकटा। हानिकर्त्ता—उष्ण प्रकृति को तथा आध्मानजनक है। दर्पघ्न—मधु, घृत व तैल, प्रतिनिधि—पलाश त्वक्। प्रधान कार्य—काम शक्तिवर्द्धक तथा शुक्रमेहघ्न। मात्रा—३ मा० से ४ मा०।

गुण, कर्म, प्रयोग—कफ़विकार नाशक, है और पित्तदोष में लाभप्रद है। क्षत में इसका पान व प्रलेप हितकर है, इसकी छाल कामोद्दीपक है एवं शुक्रमेहघ्न है, (लगभगविशेल) म० मु०।

इसके अतिरिक्त इसकी छाल शुक्रतारल्य एवं मज्जा व वदी के पतलेपन तथा कामशक्ति के लिये हितकर है। यह मूत्रप्रस्रावाधिक्यको नष्ट करता है। कामशक्ति के बढ़ाने के लिए कतिपय बल्य औषध में योजित कर इसका हलुवा लाभदायक होता है, भारतीय इसका अधिकता के साथ उपयोग करते और इसको परीक्षित बतलाते हैं, परन्तु यह उतना सत्य नहीं। बु० मु०।

नव्यमत—

अर्जुन त्वक् कषाय तथा बल्य है। यह हृद्रोगी के लिए उपयोगी है। क्षत व्रण तथा पिष्ट अंग के प्रक्षालन हेतु इसकी छाल के क्वाथका स्थानिक उपयोग होता है। अस्थिभग्न किम्वा नेत्र शुक्र गत रक्तफूली अर्थात् अर्जुन (Ecchymosis) में अर्जुन त्वक् को पीस कर प्रलेप करें। एतद्देशीय लोग रक्तस्रुति किम्वा अन्यान्य स्रावों (यथा प्रावाहिकीय श्लेष्मस्राव तथा प्रदर सम्बन्धी रक्त स्राव इत्यादि) में अर्जुन त्वक् का प्रयोग करते है वे अश्मरी व शर्करादि प्रतिषेधक रूप से भी इसका व्यवहार करते हैं। (मे० मे० आंफ इं०—आर० एन० खोरी, २ य खं०. २१८ पृ०। फा० इं० २ भा० ११ पृ०दत्त०)

यह पैत्तिक विकारों में लाभप्रद तथा विषों का अगद है। त्वक् कषाय और उद्वर्त्तन है। फल बल्य तथा रोधोद्घाटक एवं नवीन पत्रस्वरस कर्णशूल में हितकर है।

(वैडेन पॉवेल पंजाब प्रोडक्ट)

कांगड़ा में त्वक् क्षत प्रभृति में प्रयुक्त होता है। (स्टयुवर्ट)

अर्जुनम्-सं० क्ली० तृणमात्र (Grasses) हला०। (२) सुवर्ण। Gold (Aurum) मे० नत्रिकं। (३) कासतृण। (Saccharum spontaneum) र० मा०। (४) दर्भ भेद, कुश (Poa cynosuroides) (५) श्वेत वर्ण के या कुटिल गति से जाने वाले कीट। अथ० शू० ३२। ३। का० २।

अर्जुन-हिं० संज्ञा, पु० पुन्नाग (Ehratiaacuminata), मेमो०। (२) चुक, बड़ा गाछ-बं०। भूताङ्कुसम्-तै०। घनसुरा म०। गोटे-सन्ता। (Croton oblongifolius) फा० इं०। देखो—अर्जुनः।

अर्जुन गाछ-बं० अर्जुन, कहू, कोह। (Terminelia arjuna)

अर्जुन घृतम्-सं० क्ली० (१) अर्जुन की छाल के रस और कल्क से सिद्ध किया घृत समस्त हृद्रोग के लिये लाभदायक है। भै० र०।

(२) अर्जुन की छाल के कल्क से तथा स्वरस से पकाया हुआ घी सम्पूर्ण हृदय रोगों में हितकारी है। योग तथा निर्माण-विधि-घृत ४ श०, अर्जुन स्वरस ४ श०, कल्कार्थ अर्जुन त्वक् १ श०। सा० कौ०. भैष०। भा०। रस० र०। मूर्च्छित घृत ४ श०, अर्जुन स्वरस १६ श०, (अथवा ६४ पल अर्जुन की छाल को ६४ श० जल में यहां तक पकाएँ कि १६ श० जल शेष रह जाए। बस इसको छानकर घृत में सम्मिलित करें) और अर्जुन त्वक्कल्क १ श०. इनको एकत्रित कर घृत पाक विधि से पकाएँ। च० द० हृद्रोग-चि०।

अर्जुनत्वक्-सं० स्त्री० अर्जुन वल्कल, अर्जुन की छाल (Terminalia arjuna (Bark of—) च० द० अ० सा० चि० शङ्खभस्मादि।

अर्जुन त्वगादिलेपः-सं० पु० अर्जुन की छाल, मजीठ, वृष, (बाँसा) को पीस शहद में मिला

कर लगाने से झांई और व्यंग का नाश होता है। वृ० नि० र०।

अर्जुन नामाख्य-सं० पु० अर्जुन वृक्ष, काहू का पेड़ Terminalia arjuna (Tree-of) भा०।

अर्जुन सुधा-सं० स्त्री० अर्जुनोत्थ सुधा, अर्जुन काष्ठ का चूर्ण (बुरादा)।

गुण—अर्जुनोद्भूत सुधा कफ को नाश करने वाली है वै० निघ०। द्रव्यगुण।

अर्जुनाख्य-सं० पु० (१) काशतृण, कासा। (Saccharumspontaneum) र० मा० (२) अर्जुन वृक्ष' कहू का पेड़। Terminalia arjuna (Tree of)।

अर्जुनादः-सं० त्रि० दर्भकाश खादक। च० चि० २ अ०।

अर्जुनादि क्षीरम्-सं० क्ली० दूध को अर्जुन की छाल डालकर पकाकर पीने से पित्त जन्य हृद्रोग दूर होता है। यो० र०।

अर्जुनाद्यघृतम्-
अर्जुनाद्य तैलम्- } सं० क्ली० अर्जुन, परवल, नीम, वच, अजवाइन, रास्ना, मजीठ, भिलावा, अगर, मोंथा, कूट, चीता, चन्दन, खस, गोखरू, और सफेद कटसरैया इनका क्वाथकर, उसमें नवीन परवल, हलदी, हरड़, बहेड़ा, आमला, पाखानभेद अर्जुन, अजमोद, लोध, मजीठ, और अतीस इन का कल्क डालकर पकाया हुआ घी 'अर्जुनाद्य घृत' कहलाता है।

गुण—इसे सेवन करने से पित्त सम्बन्धी प्रमेह नष्ट होते हैं।

नोट—इसी क्वाथ तथा कल्क से पकाया तैल "अर्जुनाद्य तैल" कहलाता है।

गुण—उक्त तैल को व्यवहार में लाने से कफ तथा वायु सम्बन्धी प्रमेह दूर होते हैं। भा० म० ३ भा० मेह० चि०।

अर्जुनाद्य क्षीरपाकम्-सं० क्ली० अर्जुन (कहुआ) की छाल लेकर गो दुग्ध में पकाकर पीने से हृदय रोग का नाश होता है। बंगसेन० सं० हृद्रो० चि०।

अर्जुनी-सं० स्त्री० (हिं० संज्ञा स्त्री०) (१) सफेद रंग की गाय। अथर्व०। सू० ३। का० २०। (२) उषा।

अर्जुनी-सं० स्त्री० गवि, गाय, गो। (A cow) मे० नत्रिकं।

अर्जुनोपमः-सं० पु० शाक द्रुम (A potherb in general) शेगुन गाछ ब०। र० मा०। (२) शाल वृक्ष (Shorea robusta) रत्ना०।

अर्जुन्ना-अव० आद्र-नैपा०। परोकपी-आसा०। गणसूर-मह० भूटन कुसुम-ते०। थेयिङ्-बर०। क्रोटन ऑब्लॉगिफॉलियस (Croton oblongifolius; *Roxb*) ले०।

गुण—इसका तेल एवं छाल औषध कार्य में आती है। मे० मो०।

अर्जेण्टम्-ले० चाँदी, रजत रौप्य हिं०। फिज्जह् अ०। नुक्रह्-फा०। (Silver)

अर्जेण्टम् कोल्लोइडेल-इं० (Collargol)। देखो—रजत।

अर्जेण्टम् लिक्विडम्-
अर्जेण्टम् वीवम्- } -ले० देखो—पारद (Hydrargyrum)

अर्जेण्टाई ऐल्ब्युमिनास-(Silvar albuminate) देखो-लार्जीन (Largin)

अर्जेण्टाई ऑक्साइडम्-ले० रजदाम्बिद, रौप्यभस्म हिं० (Silveroxide) देखो रजतः।

अर्जेण्टाई आयोडाइडाई-ले० रजतैलिद देखो—रजत।

अर्जेण्टाई एसईटास-ले० (Acetate of silver) चुक्रीय रजत देखो—रजत या इट्रोल।

अर्जेण्टाई क्लोराइडम्-ले० रौप्यहरिद देखो—रजत।

अर्जेण्टाइड-इं० यह सिलवर आयोडाइड (रजतैलिद का एक तीक्ष्ण घोल है जिसमें किञ्चित् जल मिश्रित कर स्थानिक पूतनिवारक रूप से प्रयोग करते हैं। देखो—आर्गीरोल ह्विट० मे० मे०।

अर्जेण्टाई नाइट्रास–ले० रजन्नत्रास (Silver nitrate'-Lunar caustic) देखो—रजत ।

अर्जेण्टाई नाइट्रास इण्ड्योरेटस–ले० कठिन रजन्नत्रास देखो—रजत ।

अर्जेण्टाई नाइट्रास मिटिगेटस–ले० (Mitigated caustic) हलका किया हुआ काँष्टिक । देखो—रजत ।

अर्जेण्टाई न्युक्लीआस–ले० नार्गोल (Nargol) इं० । देखो—न्यूक्लीन या न्यूक्लीओल ।

अर्जेण्टाई फ़ाँस्फ़ास–ले० रजत स्फुरेत् । यह अपस्मार तथा अन्य वात रोगों में व्यवहृत होता है । मात्रा—$\frac{1}{6}$ से आधा ग्रेन वटिका रूप में । पी० वी० एम० ।

अर्जेण्टाई फ्लोराइडम्–ले० देखो—रजत एसिडम् हाइड्रोक्लोरिकम ।

अर्जेण्टाई लैक्टास–ले० एक्टोल (Actol) । देखो—रजत ।

अर्जेंटाई साइनाइडम्–ले० सिल्वर साइनाइड (Silver cyanida) इं० देखो—रजत । (Itrol) आर्गीरोल ।

अर्जेण्टाई साइट्रास–इं० देखो—रजत ।

अर्जेण्टार्सील–इं० यह काकोडाइलेट ऑफ आयर्न (Caco dylate of iron) तथा कोलांइड सिल्वर (Colloid Silver) का एक समिश्रण है ।

बारकैवोविच ने मलेरिया ज्वर में ०·०५ से १० घन शतांशमीटर (c c.) की मात्रामें अन्तः क्षेप रूप से इसका व्यक्त सफलता पूर्ण उपयोग किया । उनका यह दावा है कि केवल एक अन्तः क्षेप मात्र से रक्त स्थाई रूप से सम्पूर्ण प्रकार के पराश्रयी कीटों से शून्य हो जाता है । ह्विट० मे० मे० ।

अर्जेण्टेमीन–ले० देखो—रजत ।

अर्जेण्टोल–इं० यह रजतका एक योगिक है । देखो—रजत ।

अर्जोवा–रू० चाँदी, रोप्य । Silver (argeneum)

अर्टिका पिल्युलिफेरा–
अर्टिका प्राइमा– } ले० अञ्जुरह, उतञ्जन (Blepharis edulis' *Pers.*) फा० इ० ३ भा० ।

अर्टिका मोर्चुआ–इं० (Dead nettle, white nettle, blind nettle, white archangel) लेमिनम् ऐल्वम् (Laminum album)–ले० पी० बी० एम० ।

अर्टिकेसीई–ले० वट या अश्वत्थवर्ग ।

अर्टी–सं० स्त्री० केला, कदली । (Musa Sapientum)

अर्ण–सं० पु० शाक वृक्ष । शेगुन–वं० (A potherb in general) श० च० ।

अर्णः,-स–सं० क्ली०
अर्ण–हिं० संज्ञा पु० } जल, पानी । (Water) रा० नि० व० १४

अर्णभवः–सं० पु० शंख (Conchshell) वै० निघ० ।

अर्णवः–सं० पु०
अर्णव–हिं० संज्ञा, पुं० } (१) समुद्र, सागर, जलनिधि । (The ocean) रत्ना० (२) सूर्य । (The sun)

अर्णवजः–
अर्णजमलः–
अर्णवफेनः–
अर्णवमलः– } –सं० पुं० समुद्रफेन, समुद्र कफ–हिं० इजाराफी–अ० । कफेदरिया –फा० । The dorsal scaleorl Cuttle fish bone (Sepia officinalis) रत्ना० ।

अर्णवोद्भवः–सं० पु० अग्निजार वृक्ष । (See-ag nijara) रा० नि० व० ६ ।

अर्णा–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] नदी (River)

अर्णोदः–सं० पु० मुस्तक, मोथा (Cyperus rotundus, Syn. Hexastachyos. (*Roxb.*) रा० नि० व० ६ ।

अर्णोभवः-सं० पु० शंख । (The conch shell) रा० नि० व० १३ ।

अर्तकी-यू० एक पहाड़ी वृक्ष जो अत्यन्त विशाल तथा भारतवर्षमें अधिकता के साथ होता है ।

अर्तनीथ-यू० वस्रुमरियम् (Cyclamen persicum, *Miller*) फा० इं० २ भा० ।

अर्तनीसा-आ० रबू (चोवक उश्नान) एक जड़ है जिससे ऊन धोया जाता है ।

अर्तब-अ० ख़ारख़सक गोखरू (Tribulus terestris)

अर्तवह-
अर्जकमह्-
बाँसा (Bridge of nose) । (२) ऊर्ध्व ओष्ठ का मध्यस्थ गढ़ा ।

अर्तल-कना० अन्तल । रीठा-हिं० (Sapinbus trifoliatus, *Linn*) फा० इं० १ भा० ।

अर्तब-अ० अधिकतर, ज्यादातर, स्निग्धतर ।

अर्तानियाये हिन्दी-अ० बल्लारी, वल्लारी का पत्ता-द० योथोलकुरि-बं० ब्राह्मी सं०-हिं० Hydrocotyle Asiatica, *Linn* (Indian Hydrocotyle or Penny-wort) स० फा० इं० ।

अर्तामासिया-
अर्तियह् मासिया-
सि० बारिञ्जासिफ़; कैसूम । (Artemesia Indica)

अर्ति-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] [वि० अर्त्तित] पीड़ा व्यथा ।

अर्तिया-यू० एक छोटी बूटी है, जिसकी पत्तियाँ अत्यन्त लघु और बहुसंख्यक शाखाओं से युक्त होती हैं बीज खुशाके सदृश होते हैं ।

अर्ती-यू० या० रू० वृक्ष दोरक कोई कोई हाबों व कद्दू और बूयेमादरान को कहते हैं ।

अर्तीक्रह-गँगा, बँग । Tin (tannum)

अर्तीमबू-ता० तीखुर, तवक्षीर । (Curcuma angustifolia, *Roxb*)

अर्तीरस-नेपा० कुरटी-भूटा० । (Caragana crassicaulis) इसकी जड़ ज्वरघ्नी है । फा० इं० ३ भा० ।

अर्तूनास-यू० खटिका, खरिया मिट्टी, (Chalk)

अर्तूवास-यू० मिश्र देशोद्भूत एक प्रकार की मृत्तिका है जो श्वेत या धूसरित वर्ण की और उष्ण स्थलों में उत्पन्न होती है ।

अर्त्तगलः-सं० पु० नील झिण्टी, कटसरैया । (Barleria longifolia) नीलझण्टी बं० । सु० द्रव्य सं०, अ० । आगड़ नामक फल वृक्ष । रत्ना० ।

अर्त्तगाँ-फा० यह एक प्रकार का प्रस्तर है । स्वाद—फीका । वर्ण—रक्त एवं पीत, प्रकृति—१ कक्षा में शीतल व रूक्ष ।

गुण, कर्म, प्रयोग—व्रणपूरक (क्षतों के मांस को भर लाता) और अवयवों के बाह्य शोथों को लयकर्त्ता एवं क्षतों को निर्मल करता (व्रणशोधक) है । मुदिर्रात (प्रवर्तक वा रेचक) के साथ प्रयोग करने से यह वृक्क एवं वस्त्यश्मरी एवं सिकता आदि को नष्ट करता है । म० मु० ।

अर्तिः-सं० स्त्री० रोग (Disease) रा० नि० व० २० ।

अर्थः-सं० पु०
अर्थ-हिं० संज्ञा पु० [वि० अर्थी] (१) इन्द्रियों के विषय (Obgect), (२) धन, सम्पत्ति(Wealth, riches), (३) याचन (Begging, request), (४) कारण, हेतु, निमित्त (Cause, sake), (५) वस्तु (Substance, goods), (६) अभिधेय, अभिप्राय, प्रयोजन मतलब (Intention, purpose), (७) निवृत्ति (Rest) मे० यद्विकं ।

अर्थ चम्पिका-सं० स्त्री० कर्कट शृंगी, काकड़ासिङ्गी (Rhus succedanea, *Linn*) वै० निघ० ।

अर्थनट-इं० मूँगफली, भूफली । (Arachis Hypogœa) इं० डा० इं० ।

अर्थनट ऑइल-इं० मूँगफली का तेल, रोगन मूँगफली, (Arachis Oleum)

अर्थप्रसादनी-सं० स्त्री० धामन वृक्ष, (See-Dhamana) वै० निघ०।

अर्थ बम-इं० केचुआ, ख़रातीन-अ०।

अर्थ साधकः-सं० पु० पुत्रजीव वृक्ष, पुत्रजीवा। (Putrangiva Roxburghii) मद० व० १। भा०।

अर्थ साधनः-सं० पु० (१) पुत्रजीव वृक्ष, पुत्रजीवा (Putranjiva Roxburghii) मद० व० १ (२) रीठा करंज, (Sapindus trifoliatus) मद० व० ५।

अर्थ सिद्धः,-कः-सं० पु० (१) पुत्रजीव वृक्ष (Putranjiva Roxburghii), (२) श्वेत निर्गुण्डी, सफेद मेउड़ी (Vitex negundo album), (३) कृष्ण निर्गुण्डी (Vitex negundo nigrum) रा० नि० व० ४।

अर्थापत्तिः-सं० स्त्री०
अर्थापत्ति-हिं० संज्ञा पु० } जो बिना ही कहा हुआ अर्थ से जाना जाये, उसे "अर्थापत्ति" कहते हैं। जैसे—किसी ने कहा मैं भात खाऊँगा तो इस कथन से जाना गया कि वह यवागू पीने का इच्छुक नहीं है। सु० उ० ६५ अ०। "यदकीर्त्ति तमर्थादापद्यते।"

मीमांसा के अनुसार ऐक प्रकार का प्रमाण जिसमें एक बात कहने से दूसरी बात की सिद्धि आप से आप हो जाए। नतीजा। निगमन। जैसे बादलों के होने से वृष्टि होती है। इससे यह सिद्ध हुआ कि बिना बादल वृष्टि नहीं होती। न्यायशास्त्र में इसे पृथक् प्रमाण न मानकर अनुमान के अन्तर्गत माना है।

अर्थनाइट-फ्रां० बस्तुमरियम्-इं० बाजा०। Sow-bread (Cyclamen Persicum, *Miller*) फा० इं० २ भा०।

अर्थम्-सं० क्ली० शिलाजतु (Bitumen) मे० यद्विक०।

अर्थोक्नीमम-ले० उश्नान, सर्जि। Soda Plants (Caroxylon) फा० इं० ३ भा०।

अर्थोक्नीमम् हाण्डकम्-ले० सर्जि, फा० इं० ३ भा०

अर्द-अ० गदहा, गर्दभ (Anass)

अर्दह्-फ़ा० तिलकचरी।

अर्दक-फ़ा० बत्तख़ (A Duck) (२) आलू-बोख़ारा, (Prunum)

अर्दज-फ़ा० हाऊबेर, अर्स, अरर, अभल, हपुषा। (Juniperus chinensis)

अर्दन-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) पीड़न, दलन, हिंसा (२) जाना, गमन।

अर्दना-हिं० क्रि० स० [सं० अर्दन पीड़न] पीड़ित करना।

अर्दनिः-सं० पु० अग्निरोग। अ० टी०

अर्दम-रू० सूर्यमुखी (Helianthus Annuses)

अर्दमा-(१) कनौचा (२) गावजुबान (Cacoina glauca, *Favi*)

अर्दहालिय्यह्-
सल्अहे मुख़ातियह } अ० (१) गाढ़ा हरीरा जो आटे को मक्खन में गूँथ कर पुनः घी में पकाया जाता है। (२) एक प्रकारकी श्यामाभायुक्त रसौली है जिसके माद्दे की चाशनी गाढ़े हरीरे के सदृश होती है। देखो-सल्अहे मुख़ातियह् (Myxoma)

नोट—अर्दहालिय्यह् फ़ारसी भाषा का शब्द है, जो अर्द=आटा और हालह् तैल का यौगिक है, पर उक्त संयुक्त शब्द का उपयोग उस हरीरे के लिये होता है जो आटा और घी के संयोग द्वारा निर्मित होता है, चूँकि इस रसौली के माद्दे का क़वाम उक्त हरीरे के समान होता है, इस लिये इसे इस नाम से अभिहित किया जाता है।

अर्दार-अ० हाथी, हस्ति (An elephant)

अर्दाल-
अर्दाली- } कना० को०, हरिताल, (Orpiment)

अर्दावा-हिं० पु० मोटा आटा, दलिया, सूजी।

अर्दित-हिं० वि०
अर्दितम्-सं० वि० } पीड़ित, दलित, यन्त्रणायुक्त।

सं० क्ली०, हिं० संज्ञा, पु० एक रोग जिसमें वायु के प्रकोप से मुँह और गर्दन टेढ़ी होजाती है, सिर हिलता है नेत्र आदि विकृत हो जाते हैं, बोला नहीं जाता और गर्दन तथा दाढ़ी में दर्द होता है, पक्षाघात विशेष, लकवा।

फेशल् पैरालिसिस (Facial Paralysis), पैरालिसिस आफ दी पोर्टियो ड्योरा (Paralysis of the portio dura, बेल्स पैरालिसिस Bell's paralysis-इं० लक्वह्-अ०। कजी दहन-फा०। मुँह का टेढ़ा हो जाना-उ०।

निदान सम्प्राप्ति तथा लक्षण

गर्भिणी सूतिका बालवृद्ध क्षीणेष्वसृक् क्षये।
(सु०)
उच्चैर्व्याहरताऽत्यर्थं खादतः कठिनानि वा॥
हस्तोज्जृम्भतोवापि भाराद्विषमशायिनः।
(श्वसनात सु०)
शिरोनासौष्ठ चिबुक ललाटेक्षण सन्धिगः॥
अदेयत्यन्निला वक्त्रमर्दितं जनयंत्यतः।
वक्रीभवति वक्त्रार्धं ग्रीवाचाप्यपवर्तते॥
शिरश्चलति वाक्संगो नेत्रादीनांच वैकृतम्।
ग्रीवाचिबुक दन्तानां तस्मिन् पार्श्व च वेदना॥
यस्याग्रजो रोमहर्षो वेपथुर्नेत्रमाविलम्।
वायुरूर्ध्वं त्वचि स्वापस्तोदोमन्या हनुग्रहः॥
तमर्दितमिति प्राहुर्व्याधिं व्याधिविचक्षणा॥
(मा० नि०। सु० नि०)

अर्थ-निदान— गर्भवती, प्रसूता स्त्री, बालक वृद्ध, दुर्बल तथा शोणित क्षय वाले की (सु०) और ऊंचे स्वर में बोलने से, कठिन वस्तु खाने से बहुत हंसने से, जम्हाई लेने से, बोझ ढोने से ऊँचे नीचे स्थान में सोने (विषम भारवहन तथा विषम श्वास प्रश्वास के कारण सु०) आदि कारणों से (वाग्भट में वे कारण विशेष लिखे हैं यथा शिर पर बोझ ढोना, ऊर्ध्वमुख होना, बल पूर्वक छींक लेना, कठोर धनुष खींचना, ऊंचे नीचे तकिए पर शिर धरना तथा अन्य वात प्रकोपक हेतु) 'सम्प्राप्ति,--वायु प्रकुपित होकर शिर नाक, ओष्ठ, ठोढ़ी, ललाट तथा नेत्रों की संधियों अर्थात् शरीर के ऊर्ध्व भाग में प्राप्त होकर एक ओर के मुख (वाग्भट के अनुसार हँसने और देखने को भी) को टेढ़ाकर (क्वचित् पार्श्वद्वय की पेशियां वातग्रस्त हो जाती हैं) अर्दित रोग को उत्पन्न करता है।

लक्षण—इसमें आधा मुख टेढ़ा हो जाता है गर्दन नहीं मुड़ती, शिर हिलने लगता है, बोला नहीं जाता, नेत्रादि बिगड़ जाते हैं और जिस अंग की ओर वह टेढ़ा होता है उसी ओर की गर्दन, ठोढ़ी और दांतों में पीड़ा होती है। वाग्भट ने ये विशेष लिखे हैं—

दंतचाल' स्वरभ्रंश, श्रवण शक्ति का नाश, छींक का बन्द हो जाना, घ्राणाज्ञता, स्मृतिका मोह, स्वप्नावस्था में त्रास, दोनों ओर से थूक निकलना, एक आँख का बन्द होना, जत्रु के ऊपर के भाग में वा शरीर के आधे भाग में वा नीचे के भाग में तीव्र वेदना आदि उपद्रव उपस्थित होते हैं। पूर्व रूप जिस रोग के पूर्व रोमाञ्च हो शरीर कांपे, नेत्र मलयुक्त हों और वायु ऊपर को गमन करे, त्वचा शून्य होजाए, सूई चुभाने की सी पीड़ा हो, मन्या नाड़ी तथा ठोढ़ी जकड़ जाए उसको रोगों के जानने वाले अर्दित (लकवा) कहते हैं वाग्भट के अनुसार कोई कोई इसको एकांगाम भी कहते हैं।

अन्य तन्त्रों में आधे मुख की तरह अर्द्ध शरीर में व्याप्त वात ग्रस्तता को भी अर्दित नाम से ही लिखा है। यथा—

अर्धे तस्मिन् मुखार्धे वा कालेरयात्तदर्दितम्।
(दृढ़बल)

यदि ऐसा है तो अर्दित और अर्द्धांगवात में अन्तर क्या रहा ? उत्तर में कहते हैं कि इन दोनों में भेद यह है कि अर्दित में कदाचित् ही वेदना होती है किन्तु अर्धांगवात में सर्वदा ही वेदना बनी रहती है। अथवा पूर्वोक्त अर्दित के उन सभी लक्षणों के विपरीत लक्षण अर्द्धांगवात के होते हैं

परन्तु चरक, सुश्रुत, वाग्भट तथा माधव आदि ग्रन्थ निर्माताओं ने केवल मुख मात्र की वातग्रस्तता को ही अर्दित नाम से अभिहित किया है और अर्धांगवात को एकांगवात, पक्षवध तथा पक्षाघात, आदि नामों से। अस्तु ऐसा ही मानकर उक्त शब्द का व्यवहार करना शास्त्र सम्मत है।

डॉक्टर लोग शीत लगना, कनफेड, उपदंश कतिपय, मस्तिष्क रोग, कर्णास्थि क्षत, किसी दाँत का खराब हो जाना, निर्बलता इत्यादि इसके उत्पादक कारण मानते हैं। इसके अनुसार भी अर्दित के प्रायः वे ही लक्षण हैं जिनका वर्णन ऊपर किया गया है। जैसे—

विकृत मुखमण्डल का स्वस्थ की ओर आकृष्ट हो जाना (मुखमण्डल जिस ओर को आकुञ्चित होता है वास्तव में यह पार्श्व सुस्त होता है) मुख के एक कोने का नीचे की ओर लटक पड़ना मुख प्रसेक, जलपान करते समय उसका बाहर बह चलना, कफ निष्ठीवन की असमर्थता, सीटी न बजा सकना और न फूंकमार सकना इत्यादि लक्षण होते हैं। रोगी प वर्ग के अक्षरों का उच्चारण नहीं कर सकता अर्थात् उसके ओष्ठ परस्पर नहीं मिल सकते हैं। विकृत पार्श्व का नेत्र खुला रहता है और उससे अश्रु स्राव होता रहता है। और वह किसी चीज को मुँह से खींचने वा चूसने के अयोग्य होता है।

असाध्यता

जो मनुष्य अत्यन्त क्षीण होगया हो जो स्पष्ट रूप से नहीं बोल सकें, जिसकी आंखों के पलक न लगे और रोग को उत्पन्न हुए तीन वर्ष व्यतीत हो गए हो अथवा जिसकी नासिका, मुख तथानेत्र से जल स्राव होता हो एवं काँपता हो वह अर्दित रोगी असाध्य है। यथा—

क्षीणस्यानिमिषाक्षस्य प्रसक्ताव्यक्तभाषिणः।
न सिध्यत्यर्दितं गाढं (बाढं-सु०) त्रिवर्षं वेपनस्य च ॥ मा० नि०।

चिकित्सा
(आयुर्वेदीय)

अर्दित रोग में नस्य देना, शिर में तैल लगाना तथा कान और आंख का तर्पण करना हित है, यदि अर्दित शोथ युक्त हो तो वमन कराना तथा दाह और राग से युक्त होने पर फस्द खोलना चाहिये। यथा—

अर्दिते नावन मूर्ध्नि तैलं श्रोत्राक्षि तर्पणम्।
सशोफे वमनं दाहरागयुक्तैः सिरा व्यधः॥
(वा० चि० २१ अ०)

सुश्रुताचार्य के मत से अर्दित रोगी की वात-व्याधि विधानोक्त चिकित्सा करें और मस्तिष्क एवं शिर की वस्ति, नस्य, धूमपान, स्नेहन, स्वेदन तथा नाड़ी स्वेद इतना विशेष करें इस हेतु निम्न लिखित औषध प्रयोग में लाएँ—

सतृण (कुश, काश, नल, दर्भ और इक्षुकांड) महापञ्चमूल (बिल्व, अग्निमन्थ, अरलु, गम्भारी और क्षुद्राग्निमन्थ,), काकोल्यादि अष्ट वर्ग की औषधियां विदारिगन्धा आदि, औदकमांस अर्थात् जलीय जीवों का मांस यथा ककंट, शिशुमार, प्रभृति, आनूपदेशीय जीवों का मांस यथा वराह आदि और कशेरू, सिंघाड़ा प्रभृति औदक कन्द इनको समान भाग लेकर १ द्रोण (३२ सेर) दुग्ध और २ द्रोण (६४ सेर) जल में क्वाथ करें चौथाई अथवा दुग्ध मात्र अवशेष रहने पर उतार कर छान लें। इसमें १ प्रस्थ (३२ पल) तैल मिलाकर फिर अग्नि पर रक्खें, दूध के भली प्रकार मिलजाने पर उतार कर शीतल होने पर मथकर घी प्रस्तुत करें। फिर इसको यथा मधुर औषध यथा काकोल्यादि और सहा अर्थात् माषपर्णी (कोई कोई ईसके स्थान में पूर्वोक्त क्वाथ्य द्रव्यों के चतुर्थांश कल्कका प्रक्षेप देते हैं) के कल्क को चतुर्गुण दुग्ध में पकाकर तैल प्रस्तुत करें। इस क्षीरतैल को अर्दित रोगी को पिलाने एवं अभ्यंग आदि में प्रयुक्त करें। तैल रहित सिद्ध कर प्रयुक्त करने से यह अधिक तर्पक है। सु० चि०।

डाक्टरी

चूँकि यह रोग प्रायः कठिन शीत के कारण से ही हो जाया करता है । अस्तु, विकृतपार्श्व के कान के पीछे ब्लिस्टर लगाएँ या चन्द जोंकें लगवाएँ और फिर एक लोटे या पतीली में खौलता हुआ पानी डाल कर उसकी टोंटी विकृत कर्ण के छिद्र में प्रविष्ट करदें अथवा इसके बहुत समीप रखें जिसमें उष्ण जल-वाष्प से कान के भीतर गर्मी पहुँचे । दस मिनट तक इस प्रकार करें फिर गरम रुई से कान को सेंके; पश्चात् वही गरम रुई कान पर बांध दें । ५ ग्रेन कैलोमेल और एक ड्राम कम्पाउंड पाउडर आफ जैलप मिलाकर खिला दें जिसमें दो तीन दस्त आजाएँ ।

आहार—शोरवा या यख़नी (मांस रस) प्रभृति दें ।

यदि रोगी निर्बल हो तो ईस्टज सिरप या आधे से १ ड्राम फेलोज सिरप् को किञ्चित् जल में मिलाकर दिन में दो वार भोजनोंपरांत दें और यदि रोग उपदंश के कारण हो तो पोटासीआयोडाइड का प्रयोग करें यदि कान में क्षत प्रभृति हो तो उसका उचित उपाय करें और यदि कोई दाँत बोसीदा होगया हो तो उसको निकलवा दें ।

नोट—यदि यह रोग शीत, निर्बलता या उपदंश के कारण हो तो उचित उपचार से एकसे अढाई मासमें अच्छा हो जाया करता है और यदि किसी मास्तिष्कीय व्याधि के कारण हो तो कठिनतापूर्वक अच्छा हुआ करता है ।

यूनानी वैद्यकीय अर्थात् तिब्बी चिकित्सा

रोगारम्भ में पक्षाघात के अन्तर्गत वर्णित तिब्बी चिकित्सा से काम लें अर्थात् जब तक चौथा या सातवां दिन न व्यतीत हो जाय तब तक माउल् उसूल और माउलअस्ल (मधुवारि) के सिवा और कोई वस्तु खाने पीने को न दे और न उक्त काल में बाह्य वा आन्तर सबल उष्णजनक एवं दोषप्रकोपक उपाय का अवलम्बन करें । तदनन्तर पांचवें या आठवें दिन पक्षाघातोक्त मुस्हिल कराके विरेचन दें । आहार में कपोत, तीतर, बटेर, प्रभृति जीवों का शोरवा दें या चने का पानी पिलाएँ । मास्तिष्कीय आर्द्रता के रेचन हेतु कबाबचीनी, अकरकरा लवंग जायफल और दालचीनी प्रभृति चबाएँ कलौंजी पीसकर सिरका में मिलाकर नाक में टपकाएँ और राई को जैतून तैल वा तिल तैल में पीस कर मुखमण्डल के विकृत एवं रोगाक्रान्त पार्श्व पर प्रलेप करें, यदि आवश्यकता हो तो चन्द जोंकें कान के पीछे लगवाएँ और सेंक करें तथा कुष्ट तैल रोगन सुर्ख वा रोगन शोनीज का विकृत पार्श्व पर अभ्यंग करें अथवा हिंगु २ तो० पीस कर और रोगन पान में मिलाकर उक्त स्थल पर प्रलेप करें या निम्न तैल प्रस्तुत कर प्रयोग करें ।

रोगन लकवा—मोम १ तो० को एरंड तैल ३ तो०में मिलाकर फर्फ्यून, जुन्दबेदस्तर, मस्तगी सूरिञ्जान तल्ख प्रत्येक ३ मा० को बारीक पीस कर मिलादें और आवश्यकता होने पर इसका अभ्यंग करें यदि जरूरत हो तो मर्जअोश, सातर फारसी, अकरकरा, राई, करबीर मूल त्वक्, अनार दाना तुर्श और सोंठ इन सबको सम भाग से कूटकर जल में क्वाथ करें और सिकजबीन अंसली ४ तो० में मिलाकर गण्डूष कराएँ । छिक्किका को बारीक पीसकर नस्य दें जिसमें दो चार छींकें आजाएँ और (१) जायफल २ मा०, केशर १ मा० को बारीक पीसकर माजून योगराज गूगल ५ मा० सम्मिलित कर अर्क गावजुवान के साथ दें या (२) खमीरह गाउजुवान अम्बरी ऊदसलीब वाला ५ मा० की मात्रा में अर्क गावजुबान के साथ दें या (३) दवाउल मिरकहाल जवाहर वाला ५ मा० अर्क गाउजुबान व अर्क अम्बर के साथ देना हितकर है । कलौंजी २ मा० पीसकर मधु में मिलाकर खिलाएँ या वीरबहूटी एक-दो पांव पृथक कर पान के बीड़े में रख थोड़े दिन खिलाएं । पूर्ण शुद्धि के पश्चात् पक्षाघातोक्त योगों का सेवन कराएं और पक्षाघात के समान शुद्धि के पश्चात् माजून फिलासफा, माजून कुचला, मअजून योगराज

गूगल या दबाउल सिरुक हार प्रभृति यहाँ भी लाभदायक हैं।

अर्दित में प्रयुक्त होने वाली अमिश्रित औषधें

आयुर्वेदीय तथा यूनानी—वन पलाण्डु एवं सभी वातहर औषधें एवं उपचार तथा तिल कल्क युक्त रसोन कल्क तथा स्नेह पान, नस्य, स्निग्ध पदार्थों का भोजन लेपन और स्वेदन आदि इस रोग में हितकर हैं। देखो—पक्षाघात।

डाक्टरी—अर्जेण्टाई नाइट्रास, अर्निका, बेलाडोना, ओलियम, केजेपुटी, केलेबार्बीन, फ़ेरिफर, ऑक्साइड, ऑक्सियम माइरिष्टिस, ऑक्सियम पाइनाइ सिलेवेस्ट्रस, फॉस्फोरस (रफुर), रक्सवाँमिका (कुचिला), पोटाशियम आयोडाइडम्, पोटाशियाई ब्रोमाइडम्, सिकेली कार्युटम्, सल्फर, सल्फ्युरिक एसिड, इलेक्ट्रिसिटि (विद्युत), स्ट्रिक्नया (कुचिला का सत्व) और उत्ताप इत्यादि।

मिश्रित औषध

आयुर्वेदीय—वातव्याधि में प्रयुक्त औषध।

यूनानी—हब्ब फालिज व लक्वा, दवाए इन्नराकी, रोगन लक्वा व फालिज, रोगन हफ्त बर्ग, मअजून इजाराकी, मअजून इजाराकी (जदीद) मअजून जोगराज गूगल, मअजून लना, इत्रीफल ज़मानी, हब्ब लक्वा, दवाए गर्गरह, दवाउल् किब्रीत, रोगन सुर्ख़, लहसन पाक, हब्ब राहत और दवस्याह कर्सानुल् फवायद।

(२) घोड़े का एक रोग विशेष।

लक्षण—दोनों हनुओं का विक्षेप, नासिका एवं नेत्र के मध्य भागमें भेदनवत् वेदना का होना और नासापुट आदि विकार से बुद्धिमान लोग इसे अर्दित कहते हैं।

अधंग-हिं० संज्ञा पु० देखो—अर्द्धांग।

अधंगी-हिं० संज्ञा पु० देखो—अर्द्धांगी।

अर्द्ध-हिं० वि०
अर्द्धम्-सं० क्ली० (१) किसी वस्तु के दो सम भागों में से एक, अर्द्ध, समांश, अर्द्धांश, तुल्य विभाग, आधा, मध्य। (Half) हिं० पु० खण्ड। (Region, section) मे०।

अर्द्धकः-सं० पु० जल सर्प। (An aquatic serpent) वै० निघ०।

अर्द्धकण्टक-सं० पु० छोटा सतावर, क्षुद्रशतावरी Asparagus racemosus (the smallvar of-)

अर्द्धकण्डरामयी-सं० स्त्री० (Semitendinosus)

अर्द्ध कपाट सन्धिकः-सं० पु०

अर्द्धकलामयी-सं० स्त्री० (Somimembranosus)

अर्द्धकैशिकी-सं० स्त्री० छेदनार्थ शस्त्रधारा विशेष। सु० सू० ८ अ०।

अर्द्धखारी-सं० स्त्री० खारीमानार्ध, आधाखारी। देखो—खारि(री)।

अर्द्धगोलम्-सं० क्ली० (Hemisphere) अर्ध वृत्त, अर्ध चन्द्र, आधा गोल।

अर्द्धाङ्ग-हिं० संज्ञा पु० [सं०] पक्षाघात, अर्द्धांग। (Hemiplegia)

अर्द्धचक्रम्-सं० क्ली० अर्द्ध वृत्त। (An arch)

अर्द्धचक्राकारनाली-सं० स्त्री० मुड़ी हुई नाली, अर्द्ध चन्द्राकार नलिका, (Semicircular canal)

अर्द्धचन्द्रः-सं० पु० (१) मयूर पुच्छ, चन्द्रिका, मोर पंख पर की आँख। हे० च०। (२) आधा चन्द्र, अर्द्धेन्दु (A crescent, a half moon), (३) नख-क्षत।

अर्द्धचन्द्रम्-सं० क्ली० अंगुली तोरण। हारा०।

अर्द्धचन्द्र कवाटम्-सं० क्ली० (Semilunar valve) अर्ध गोलाकार कपाट (किवाड़ी)।

अर्द्धचन्द्रगण्डः-सं० पु० (Semilunar ganglion) अर्ध गोलाकार वातगण्ड।

अर्द्धचन्द्रछिद्रम्-सं० क्ली० (Semilunar notch) अर्ध गोलाकार छिद्र।

अर्द्धचन्द्र तैलम्-सं० क्ली० (Lunate surface) अर्ध गोलाकार पृष्ठ।

अर्द्धचन्द्रतान्तवकीकसम्-सं० क्ली० (Semilunar fibro-cartilage) अर्धगोलाकार तान्तवोपास्थि ।

अर्द्धचन्द्रधमनी-सं०, हिं० स्त्री० (Semilunar artery) अर्ध गोलाकार धमनी ।

अर्द्धचन्द्राकार कपाट-हिं० संज्ञा पु० (Semilunar valves) अर्द्ध चक्राकार कवाट ।

अर्द्धचन्द्राकार कार्टिलेज-हिं० संज्ञा पु० (Semilunar cartilage) अर्ध गोलाकार कुर्ची ।

अर्द्धचन्द्राकार पिण्ड-हिं० पु० (Plica semilunaris)

अर्द्धचन्द्राकार नलिका-हिं० संज्ञा स्त्री० (Semilunar canal) अर्ध गोलाकार नली ।

अर्द्धचन्द्राननः- सं० पु० अन्तर्मुख नामक विस्रावण अस्त्र, अमं० ।

अर्द्धचन्द्रास्थि-सं०, हिं० स्त्री० Lunate-bone अर्ध गोलाकार हड्डी ।

अर्द्धचन्द्रिका-सं० (हिं० संज्ञा) स्त्री० (१) कर्ण स्फोटा नाम की लता । कनफोड़ा, रा० नि० व० ३। (२) कृष्ण तृवृता, बाली निशोथ । मद० व० १ ।

अर्द्धचोलकः-सं० पु० चोली, कुर्पास । काँचुली-बं० (A bodice, a waist coat) हारा०।

अर्द्धज्योतिका-हि० संज्ञा स्त्री० [सं०] ताल का एक भेद ।

अर्द्धझिल्लीकृतपेशी-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] (Semimembranosus muscle) वह पेशी जो अर्ध झिल्लीदार हो ।

अर्द्धतरल-हिं० वि० [सं०] (Semi-liquid) अर्ध द्रव ।

अर्द्धतिक्तः-सं० पु० (१) किरात तिक्त, चिरायता (Andrographis paniculata) (२) नेपाल देशज निम्ब विशेष, एक प्रकार की नीम जो नैपाल में होती है। रा०, भा० पू० १ भा०।

अर्द्धधारकम्-सं० क्ली० अस्त्र विशेष, यह छेदन भेदन कार्य में आता है। सु० सू० ८ अ०।

अर्द्धनाराच-हिं० संज्ञा पु० [सं०] एक प्रकार का बाण ।

अर्द्धनारीनटेश्वर रसः-सं० पु० जमालगोटा, तज, इक्षोद पत्र, पटोल पत्र, हुंहुर, अजमोद प्रत्येक तुल्य भाग लें, चूर्ण कर अर्द्ध भाग शुद्ध नीलाथोथा मिश्रित करें। इसका नस्य लेने से संज्ञा होती है और यह सन्निपात, अत्यन्त निद्रा, तन्द्रा मस्तक शूल, श्वास, खाँसी, प्रलाप, उग्र कफ इन्हें तत्क्षण दूर करता है। वृ० रस० रा० सु० ।

अर्द्धनारी नटेश्वरः-सं० पु० त्रिकुटा, त्रिफला, पारा गन्धक, ताम्रभस्म, लौहभस्म, कुटकी, भाँगरा, मोथा, और वत्सनाग प्रत्येक समान भाग और पारद से द्विगुण कुचला मिलाकर बकरे के पित्ते से भावित करें, इसे पुत्र वाली स्त्री के दूध में घिसकर दाहिनी आँख में अंजन करें तो तत्काल ज्वर नष्ट होता है। यह परम आश्चर्यकारी रस है इस नाम के १७ योग रसयोगसागर में आये हैं।

अर्द्धनारीश्वरः रसः-सं० पु० पारद, गन्धक, विष और सुहागा भस्म तुल्य भाग ले खरल करें, जब बजल सा हो जाय तब इसको काले साँप के मुख में रख कपड़ मिट्टी कर एक मिट्टी के पात्रमें प्रथम नमक बिछाकर इसमें पूर्वोक्त सम्पुट रख कर ऊपर पुनः नमक भरदें, पश्चात इस पात्र का मुख सराव से दृढ़ बन्द कर चूल्हे पर रख ४ पहर की तीव्र अग्नि दें, जब खांग शीतल हो जाय तब निकाल कर खरल में डाल पीस लें।

मात्रा—१ रत्ती।

प्रयोग—इसको बाएँ नथने में नास देने से उस तरफ का ज्वर दूर होता है और पुनः दाहिने नथुने में नस्य देने से दाहिने अंग का ज्वर शीघ्र उतर जाता है, यह योग गुप्त रखना उचित है। वृ० रसरा० सु० ।

अर्द्धनाली-हिं० स्त्री० (Groove) परिखा ।

अर्द्ध पलम्-सं० क्ली० दो कर्ष, कर्षद्वय (=४ तो०) "स्यात्कर्षाभ्यामर्द्धपलम्" प० प्र० १ खं० ।

अर्द्धपादा-सं० स्त्री० भूम्यामलकी, भुँई आमला। (Phyllanthus neruri) वै० निघ० ।

अर्द्धपारावतः-सं० पु० (१) वन कुक्कुट (Wild cock) (२) चित्रकण्ठ पारावत। (३) तित्तिर पक्षी, तीतर। A partridge(Perdix francolinus) अमि०।

अर्द्धपुष्पा-स० स्त्री० महाबला। (See Mahabala) वै० निघ०।

अर्द्धपोहल-हिं० संज्ञा पु० (देश) एक पौधा जिसकी पत्तियां मोटी होती हैं।

अर्द्धप्रसादनः-सं० पु० सहदेवी, सहदेई।

अर्द्धभाग-हिं० पु० आधा। (A half)

अर्द्धभोजनम्-सं० क्ली० अर्द्धाशन, आधा पेट खाना।

अर्द्धमात्रा-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] आधी मात्रा।

अर्द्धमात्रिकः-सं० पु० एक प्रकार की निरूहण वस्ति विशेष।

विधि तथा योग-दशमूल के क्वाथ में २ तो० सोंफ पीसकर इसमें २ तो० सेंधानमक, मधु २ पल, तैल २ पल और ऐक मदनफल का चूर्ण योजित करें इसको अर्द्धमात्रिक वस्ति कहते हैं निरूहवत् इसका प्रयोग करें, च० द०।

अर्द्धमासूरी-सं० स्त्री० लेखनार्थ अस्त्रधारा विशेष। सु० सू० ८ अ०।

अर्द्धरन्ध्रम्-सं० क्ली० (Notch) भंग।

अर्द्धरात्रः-सं० पु० रात्रि का अर्ध भाग, आधीरात महानिशा, मिडनाइट (Midnight)-हिं०।

अर्द्धवश्या-सं० स्त्री० (Semispinalis)

अर्द्धवलयम्-सं० पु० (Arch)

अर्द्धवीरच्छा-सं० स्त्री० कृष्ण दूर्वा।

अर्द्धवृत्तम्-सं० क्ली०
अर्द्धवृत्त-हिं० संज्ञा पु० } (Semicircle)

अर्द्धगोलक वृत्त का आधा भाग। वृत्त का वह भाग जो व्यास और परिधि के आधे भाग से घिरा हो।

(२) पूरे वृत्त की परिधि का आधा भाग।

अर्द्धवृत्तप्रणाली-सं० स्त्री० (Semicircular duct) अर्धगोलाकार प्रणाली।

अर्द्धश(स)फरः-सं० पु० दण्डपाल नामक क्षुद्र मत्स्य विशेष। दाढ़िका वा डानकोण-मारु-सं०।

अर्द्धशरावः,-कः-सं० पु० दो प्रसृति, प्रसृतिद्वय (=३२ तो०) प० प्र० १ ख०। भा०।

अर्द्धसह-सं० पु० पेचक, उलूक पक्षी। प्याँचा-सं०। घुघड़-मह०। (An owl)

अर्द्धस्वच्छ-हिं० वि० अस्फुट दर्शक, वे पदार्थ जिनमें से प्रकाश अच्छी तरह न आ सके, जैसे-तेल, पतला कागज, धुँधला काँच इत्यादि। (Translucent, semitranspatent

अर्द्धांग-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) आधा अंग (Half the body) (२) एक रोग जिसमें आधा अंग चेष्टाहीन और बेकाम हो जाता है। फालिज, पक्षाघात, पक्ष वध, एकांग वात, अर्धांगवात, (Hemiplegia) देखो-पक्ष-वध (घात) वा एकांगवात।

अर्द्धांगवातारिरसः-सं० पु० पारा २० तो०, शुद्ध ताम्रचूर्ण ४ तो० लेकर जम्बीरी के रस में घोटें, और उसमें गन्धक २० तो० पान के रस में घोट कर मिलाएँ फिर सम्पुट में बन्द कर भूधरयन्त्र में ५ पहर तक हलकी आँच में पकाएँ और इसके बराबर त्रिकटु का चूर्ण मिलाकर बारीक पीस रख लें।

मात्रा—२ रत्ती।

गुण—यह अर्द्धांग वात और एकांग वात को नष्ट करता है। रस० यो० सा०।

अर्द्धांगी-हिं० वि० [सं०] (१) पक्षाघाती अर्द्धांग रोग-ग्रस्त। (One afflicted with the hemiplegia)

अर्द्धांशोनजलम्-सं० क्ली० अर्द्धांश हीन पक्व जल आधा भाग से कम पकाया हुआ जल। यह वात पित्त नाशक है। रा० नि० व० १४।

अर्द्धांलिगः-सं० पु० जल सर्प। (Aquatic serpent) वै० निघ०।

अर्द्धावभेदकः-सं० पु०
अर्द्धावभेदक-हिं० संज्ञा पु० } एक प्रकार का परि-

याय से होने वाला शिरःशूल जो सामान्यतः आधे शिर में, कभी कभी सम्पूर्ण शिर में हुआ

करता है। इसमें जी मचलाता और उबकाइयाँ आती हैं और आँखों के सामने चिनगारियाँ सी उड़ती दृष्टिगोचर होती हैं इत्यादि आधासीसी, अर्धभेदक, अर्धकपारी (ली)।

हेमिक्रेनिया (Hemicrania), माइग्रीन Migraine, सिकहेडेक Sick headache, मेग्रिम Megrim, नर्वस हेडेक Nervous headache-इं०। माइग्रीन Migraine-फ्रां०। माइग्रेन Migrane-जर। शक़ीकह्, सुदाअ् निस्फी सुदाअ् ग़सयानी-अ०। दर्दे नीम सर, दर्दे शक़ीकह्, दर्दे सरग़स यानी-फ़ा०, उ०। आधा सीसी सर का दर्द-उ०। आध् कपालेर धरा-बं०।

आयुर्वेद के मत से मस्तक के आधे भाग में होने वाले शिरोविकार को अर्द्धावभेदक कहते हैं उनको इसका परिचय रूप से होना भी स्वीकार है। यथा—

अर्धे तु मूर्ध्नः सोर्धावभेदकः।
पक्षात्कुप्यति मासाद्वा स्वयमेव च शाम्यति।
अति वृद्धस्तु नयनं श्रवणं वा विनाशयेत्॥
(वा० उ० २३ अ०)

अर्थ—मस्तक के आधे भाग में जो शिरोविकार होता है, उसे अर्धावभेदक कहते हैं। यह रोग पन्द्रहवें दिन वा मास मास में कुपित होता है और औषध के विना अपने आप शान्त हो जाता है। अर्द्धावभेदक प्रबल हो जाने पर नेत्र वा कानों को मार देता है।

सुश्रुताचार्य भी ऐसा ही मानते हैं। परन्तु माधव के विरुद्ध केवल एक वा दो दोषों से ही कुपित हुआ न मानकर तीनों दोषो सेकुपित हुआ मानते हैं। यथा—

यस्योत्तमांगार्धमतीव जन्तोः
संभेद तोद भ्रम शूल जुष्टम्।
पक्षादशाहादथदाप्यकस्मा-
त्तस्यार्द्धभेद त्रितयाद् व्यवस्येत्॥
(सु० उ० २६ अ०)

माधवाचार्य के मत से—

रूक्षाशनात्यध्यशन प्राग्वातावश्याय मैथुनैः।
वेगसंधारणायास व्यायामैः कुपितोऽनिलः॥
केवलः सकफोवार्धं गृहीत्वा शिरसोवली।
मन्याभ्रूशङ्ख कर्णाक्षि ललाटार्धेऽतिवेदनाम्॥
शम्याऽरणिनिभांकुर्योत तीव्रांसोऽर्धावभेदकः।
नयनंवाथवा श्रोत्रं मतिवृद्धो विनाशयेत्॥
(मा० नि०)

अर्थ—अत्यन्त रूखे पदार्थ खाने से अधिक भोजन करने से, भोजन पर भोजन करने से पूर्व की वायु एवं बर्फ का सेवन करने से अति मैथुन करने तथा मल मूत्रादिक के वेगों को रोकने से, अधिक श्रम तथा व्यायाम करने आदि कारणों से केवल वायु अथवा कफ संयुक्त वायु कुपित होकर आधे शिर को ग्रहण कर मन्या नाड़ी, भौंह, कनपटी, कान, नेत्र, और ललाट एक ओर के इन सभी अवयवोंमें कुल्हाड़ी के काटने कीसी अथवा अरणी (जो मथ कर अग्नि निकालने की लकड़ी है) के समान तीव्र पीड़ा उत्पन्न करता है उसको अर्धावभेदक कहते हैं यह रोग जब अधिक बढ़ जाता है तब एक ओर के कान और नेत्र को नष्ट कर देता है।

यूनानी वैद्यक के मत से शक़ीकह् एक प्रकार का शिरोशूल है जो साधारणतः आधे शिर में अर्थात् शिर की वाम या दक्षिण पार्श्व में होता है, किन्तु कभी सम्पूर्ण शिर में होता है।

जैसा मुल्ला नफीस ने इसकी व्याख्या की है। ऐसी दशा में इसको शक़ीकह् आम कहते हैं। निम्न लिखित डाक्टरी नोट से भी इसकी सत्यता स्थापित होती है। इस वेदना की विशेषता यह है कि यह साधारणतः पर्याय रूप से अर्थात् दौरे के साथ हुआ करती है। इसके साथ सामान्यतः हृल्लास एवं वमन विकार होते हैं। जिस समय यह वेदना सम्पूर्ण शिर में होती है उस समय ईसको सुदाअ् वैज़ह् (सम्पूर्ण शिर के दर्द) से पहिचानने में भ्रम हो जाया करता है। इन दोनों में मुख्य भेद यह है—शक़ीकह् में

शङ्खिकी धमनियों में स्पन्द अधिक होता है और उनको दबा लेने से वेदना शान्त हो जाती है किन्तु सुदाअ नैज़ाअ में ऐसा नहीं होता।

टिक डोलरो (Tic Douloureux) अर्थात् इसाबह् (भौं के दर्द) को भी किसी किसी डाक्टरी उर्दू ग्रन्थों में दर्दे शक़ीक़ह् लिखा है, परन्तु यह ठीक नहीं।

डाक्टरी मत

डाक्टरों के मत से माइग्रोन एक प्रकार का नोचती शिरःशूल है जो सामान्यतः आधे शिर में हुआ करता है।

निदान—उनके मतानुसार यह प्रायः पैतृक होता और अधिकतर स्त्रियों को होता है। विशेषतः अधिक रजःस्राव होने या अधिक काल तक स्तन्यदान से यह हो जाता है। कभी कभी वायुगोला भी इसका कारण होता है। रक्तदिकार, थकावट व श्रम उपवास एवं निर्बलता, अजीर्ण, अनिद्रा, तीव्र प्रकाश, उग्र गन्ध, मलेरिया द्वारा उग्र विषाक्तता, अतिमैथुन, वृक्क व्याधि और मुख्यकर दृष्टि दोष इत्यादि इसके प्रोत्साहक एवं उत्पादक कारण हैं।

लक्षण—साधारणतः वेदनारम्भ से पूर्व तबीयत आलस्यपूर्ण एवं शिथिल होती है, सिर घूमता है, नेत्र के सामने चिनगारियां प्रभृति उड़ती दृष्टिगोचर होती हैं। ये लक्षण पूर्वरूप में होते हैं।

फिर इस प्रकार वेदना आरम्भ होती है—प्रथम कनपटी और भौहों में मन्द मन्द वेदना आरम्भ होकर उग्र रूप धारण करती जाती है। यहां तक कि कुछ काल पश्चात् अत्यन्त तीव्र वेदना होने लगती है। ऐसा प्रतीत होता है गोया शिर विदीर्ण हुआ जाता हो। गति करने से वेदना की वृद्धि होती है। प्रायः तो शिर के एक ही पार्श्व में वेदना होती है, किन्तु किसी किसी समय सम्पूर्ण शिर में वेदना होती है तो भी एक ओर तीव्र होती है। रोगी के लिये शब्द तथा प्रकाश असह्य होते हैं। उसकी आँखों के सामने भुनगे वा चिनगारियां उड़ती सी प्रतीत होती हैं। कर्णनाद होता, मुखमण्डल की विवर्णता, शरीर का काँपना, नाड़ी की निर्बलता, हल्लास (मचली), उबकाइयाँ आना आदि लक्षण होकर अन्ततः एक ओर की कनपटी या भौंह में व्यथा टिक जाती है। दो तीन घंटे से लेकर साधारणतः २४ घंटे तक और यदि उग्र हो तो कभी २–३ दिवस पर्यन्त रहकर जब शमन होने लगती है तब रोगी को नींद आ जाती है। जागृत होने पर वह सर्वथा स्वस्थ होता है और फिर कुछ दिवस पश्चात्, पर सामान्यतः ३ या ४ सप्ताह बाद दर्द का वेग होता है।

अर्धावभेदक की चिकित्सा

अर्धावभेदक में दोषों का सम्बन्ध विचार कर शिरोरोगान्तर्गत चिकित्सा का अवलम्बन करें। कहा है—

अर्धावभेदकेप्येषा यथा दोषान्वयात्क्रिया।
(वा० उ० २४ अ०)

अस्तु, सिरस के बीज, ओंगा की जड़ तथा बिडनमक इनका नस्य अथवा शालपर्णी के काढ़े का नस्य अथवा कांजी के साथ पिसे हुए पँवाड़ के बीजों का लेप हितकारी है। यथा—

शिरीषबीजापामार्गमूलं नस्यं विडान्वितम्।
स्थिरारसो वा लेपेतु प्रपुन्नाटोऽम्लकल्कितः॥
(वा० उ० २४ अ०)

सुश्रुताचार्य के मत से नस्य कर्म आदि रूप औषध, जांगल प्राय भोजन और दुग्ध एवं अन्न के बने पदार्थ तथा घृत आदि केवल सूर्यावर्त में ही नहीं, प्रत्युत अर्धभेदक में भी प्रयोजनीय है। और स्नेह, स्वेद, शिरान्यधन (फसद खोलना) तथा अवपीडनस्य और कर्णशूलोक्त दीपिकातैल आदि में से जो उपयुक्त हों उसका व्यवहार करें।

शिरीष मूलक (मूली) तथा मदनफल इनका अवपीड नस्य देना अर्धावभेदक तथा सूर्यावर्त दोनों में हितकारक है। वच और पिप्पली का अवपीडन करना इसमें लाभदायक है। अथवा मुलेठी को बारीक चूर्ण कर उसमें

मधु मिलाकर इसका अवपीड़ करें। मैनसिल अथवा चन्दन के चूर्ण में शहद योजित कर इस का अवपीड़न करें। (सु० उ० २६ अ०)

परीक्षित नस्य

काश्मीरी पत्र, करवीर पत्र, छोटी इलायची, कायफल, नकछिकनी, जौंहर नवसादर और सफेद चन्दन. सबको समान भाग लेकर खूब बारीक चूर्ण कर रखें। इसका नस्य लेने से आधासीसी को लाभ होता है।

डाक्टरी चिकित्सा

रोग के मूल कारण का पता लगाकर उसको दूर करने का प्रयत्न करें और यदि प्रधान कारण ज्ञात न हो सके तो निम्न लिखित उपाय काम में लाएँ।

रोगी को आदेश करदें कि वह स्वास्थ्य-संरक्षण सम्बन्धी नियमों का पालन करें और मध्य मार्गी बन कर जीवन निर्वाह करें। स्वच्छ एवं खुली हुई वायु में रहें। दैनिक वायु सेवनार्थ भ्रमण किया करें अधिक श्रम एवं बैकल्यकारक कार्यों तथा चिन्ता आदि से अपने को दूर रक्खें। यथा सम्भव अपने को प्रसन्न रखने का यत्न करें उष्ण व उत्तेजक आहार यथा पोलाव, खुर्मा, शराब वा कबाब, चाय तथा कहवा और मिष्टान्न (मिठाई) आदि सेवन न करें। क्यों कि अधिक मांस तथा मिठाई के सेवन से वेग की वृद्धि होती है। जिस पदार्थ के सेवन से वेगारम्भ होने की आशंका हो उसका कदापि व्यवहार न करें और प्रत्येक प्रकार के भारी तथा आध्मानकारक आहार से परहेज करें। रोगी को चाहिये कि भोजन करने से पूर्व १ घंटा तक सर्वथा आराम से लेटने की आदत डालें। इस बात का सर्वथा ध्यान रक्खें कि मलावरोध न हो। पाखाना साफ हो जाया करे। इस लिये किसी मृदुरेचक औषध का व्यवहार करें और कभी कभी (महीने में एक बार) ५–७ दिवस पर्यन्त निम्न योग का व्यवहार करें।

मैग्नेसियाई सल्फास	२० ग्रेन
क्वीनीनी सल्फास	२० ग्रेन
एसिड सल्फ डिल	५ मिनिम
लाइक्वार स्ट्रिकनीनी	२ मिनिम
इन्फ्युजम आरेंशियाई (ऐंड)	१ आउंस

ऐसी एक–एक मात्रा औषध दिन में ३ बार दें।

जब वेदना के वेग से पूर्व आँखों के सामने चिनगारियां सी उड़ती दिखाई दें वा कनपटी पर सुरसुराहट बोध हो या शिरोघूर्णन वा शिर के एक पार्श्व पर सूक्ष्म सी वेदना हो तब दो–तीन दिवस पर्यन्त १० ग्रेन अमोनियम ब्रोमाइड को किञ्चित् जल के साथ दिन में ३ बार व्यवहार करें अथवा ३–४ दिन तक १५ ग्रेन कैल्शियम लैक्टेट थोड़े सोडावाटर में मिलाकर ऐसी एक ऐक मात्रा दिन में ३–४ बार दें।

वेग कालीन चिकित्सा

जब शिर में दर्द होने लगे तब रोगी को एक अँधेरे कमरे में सुखपूर्वक लिटाए रक्खें। वहां पर किसी प्रकार का शोर व गुल न होने दें। रोगी को कोई आहार न दें। यदि आमाशय आहार से पूर्ण हो तो कोई वामक यथा ४ ड्राम वाइनम् इपिकेक्वानी ४ आउंस जल में मिला कर पिलाएँ जिसमें १–२ वमन आकर कोष्ठ शुद्धि हो जाए और यदि आमाशय रिक्त हो तब बार बार उबकाइयां आती हों तो बर्फ चुसाएँ अथवा सोडावाटर में बर्फ डालकर घूँट घूँट पिलाएँ आमाशय द्वार पर १५–२० मिनट तक राई का प्लास्टर लगाएँ। मलावरोध होने की दशा में ब्ल्यूपिल ५ ग्रेन खिलाकर उसके घंटे पश्चात् सोडियाई सल्फास या मैग्नेशियाई सल्फास ४ से ६ ड्राम ४ आउंस (२ छ०) पानी में मिला कर पिलाएँ। शिरोशूल निवारणार्थ निम्न योगों में से किसी एक का व्यवहार करें, ये सब अत्यन्त लाभप्रद और परीक्षित हैं।

कैफीन साइट्रास	१० ग्रेन
फेनासिटीन	१० ग्रेन

यह एक मात्रा है। ऐसी एक मात्रा औषध प्रातःकाल अथवा किसी भी समय वेदना काल में जल वा दुग्ध के साथ सेवन करें।

(२) ऐण्टीपायरीन	५ ग्रेन
सोडियम सैलीसिलेट	५ ग्रेन
केफीनी साइट्रेट	१ ग्रेन
सीरुपस आरेंशियाइ	३० मिनिम
एक्वा क्लोरोफार्माई (ऐड)	½ आउंस

ऐसी एक-एक मात्रा औषध १५-१५ मिनट पश्चात् तीन-चार बार दें। वेदना आरम्भ होते ही इसका प्रयोग करने से प्रायः व्यथा रुक जाती है।

(३) ब्युटल क्लोरल हाइड्रेट	५ ग्रेन
टिंक्चूरा जलसीमियाई	८ मिनिम
टिंक्चूरा कैन्नाबिस इण्डिकी	५ मिनिम
ग्लीसरीन	१ ड्राम
एक्वा (ऐड)	१ आउंस

ऐसी १-१ मात्रा औषध आध-आध घन्टे पश्चात् दो-तीन बार दें। इस प्रकार के शिरोशूल में यह औषध अत्यन्त लाभप्रद है।

(४) ऐण्टिपाइरीन	६० ग्रेन
पोटासियाई ब्रोमाइडाई	२४० ग्रेन
स्पिरिटस क्लोरोफॉर्माई	२ ड्राम
एक्वा कैम्फोरी (ऐड)	८ आउंस

इसमें से आध आउंस (४ ड्राम) औषध वेदना आरम्भ होते ही दें। आवश्यकता होने पर आध घन्टे पश्चात् १-२ मात्रा और दें। वेगान्तर काल में कुछ दिन तक २ ड्राम की मात्रा में प्रातः सायं इसका सेवन किया करें।

प्रत्येक भांति के शिरोशूल में लाभदायक है।

(५) ऐस्पिरीन	५ ग्रेन
फेनासिटीन	३ ग्रेन
डोवर्स पाउडर	३ ग्रेन

ऐसी एक-एक पुड़िया एक एक घन्टे पश्चात् तीन-चार पुड़िया तक दें।

(६) अर्द्धावभेदक के लिए अत्यन्त लाभदायक है।

क्लोरल हाइड्रेट	१० ग्रेन
पोटासियम् ब्रोमाइड	१५ ग्रेन
लाइकार ट्राइ नाइट्रीन	१ मिनिम
एक्वा क्लोरोफार्म (ऐड)	१ आउंस

ऐसी एक-एक मात्रा दिन में तीन बार तक दें।

(७) हर प्रकार के शिरःशूल के लिए गुणदायक है।

ऐस्पिरीन	५ ग्रेन
कोडीन सल्फेट	३ ग्रेन
फेनासिटीन	३ ग्रेन
केफीन	२ ग्रेन

ऐसी एक-एक पुड़िया २-२ घन्टे के अन्तर से ३ पुड़िया तक दें।

(८) यह अर्द्धावभेदक के वेग रोकने के लिए अत्युपयोगी है। दो तीन मास इसका निरन्तर उपयोग करना चाहिए।

सोडियम ब्रोमाइट	१० ग्रेन
टिंक्चर जेलसीमियाई	१० मिनिम
लिक्कार ट्राइ नाइट्रीनी	१ मिनिम
लाइकार स्ट्रिक् नीनी	५ मिनिम
एक्का मेन्थी पेप (ऐड)	१ आउंस

ऐसी एक-एक मात्रा दिन में २-३ बार दें।

नोट—प्रत्येक सप्ताह में एक दिन का नागा देना चाहिऐ। इस प्रकार के हटीले शिरो वेदना में दोनों स्कन्धो के बीच में और कानों के पीछे और नीचे खुश्क गिलास लगाने से तथा गुदी पर रुपये के बराबर ब्लिस्टर लगाने और फिर ब्लिस्टर जनित क्षत पर मरहम सियून लगाकर उसको दस, दिवस पर्यन्त शुष्क न होने देने से और विकारी पार्श्व अर्थात् जिस ओर तीव्र वेदना होती है उस ओर के कान के पीछे के अस्थ्युद पर राई के पलस्तर लगाने से प्रायः लाभ होता है।

यूनानी वैद्यकीय चिकित्सा

रोगी को एक अंधेरे कमरे में सुखपूर्वक लिटाएँ रखें और उसके प्राकृतिक शैत्य व ऊष्मा को ध्यान में रखकर बाह्य तथा आन्तर उपचार काम में लाए तथा रोग के मूल कारण का परिहार करें। अस्तु उदर के आहार से पूर्ण होने से बाध्योन्मुख होकर इस प्रकार का शूल हुआ हो तो—

(१) तीन पाव उष्ण जल में सिकञ्जबीन सिरका ४ तो० और सैंधव १ तो० को विलीन कर पिलाकर वमन कराएँ। यदि मलावरोध की भी शिकायत हो तो किसी उपयुक्त वस्तिदान द्वारा उसको शीघ्र-तिशीघ्र निवारण करें। प्रकृतोष्मा की दशा में रोगी को (२) कपूर तथा श्वेत चन्दन सुँघाएं तथा (३) २ रत्ती अफीम, ४ रत्ती कपूर को पानी वा स्त्री दुग्ध में घोलकर नस्य दें या (४) केवल रोगन बनफ्शा वा स्त्री दुग्ध का उक्त विधि से सेवन कराएं या (५) सिन्दूर ४ रत्ती को एक कागज पर मल कर उसकी बत्ती बनाकर एक सिरा वेदना होने वाली नासिका के विपरीत दूसरी ओर की नाक में रखें और दूसरे सिरे की ओर से जलाकर धूनी लें। माहा के विनाश हेतु पिंडलियों पर मजबूत बन्धन लगाएँ और पाशोया कराएँ। (६) चन्दन और कपूर को गुलाब में घिसकर शिर शंख स्थल पर प्रलेप करें।

(७) परीक्षित प्रलेप—सोंठ, चन्दन श्वेत, पुराण मूल त्वक् सबको सम भाग लेकर साठी चावल के धोवन में पीसकर मस्तक और कनपटी पर लगाएँ। इससे हर प्रकार के अर्द्धावभेदक में लाभ होता है।

(८) उग्र वेदना की दशा में कुर्समुसल्लस का व्यवहार करें।

(९) वर्ग मोरिद सब्ज, मुरमकी सिब्र सक्रोतरी, रसवत मक्की, रसवत हिन्दी, समग अरबी, निशास्ता, अञ्जरूत, कतीरा, पोस्त कुन्दुर, गुलनार फारसी, अकाकिया, दम्बुल अख़वैन, शियाफ मामीसा प्रत्येक ३ मा०, अफीम ६ मा०, जाफरान २ मा०, समग्र औषध को कूटकर मोरिद के हरे पत्तों के पानी में गूंध कर टिकिया प्रस्तुत करें आवश्यकता होने पर एक टिकिया को अण्डे की सफेदी में घोलकर गोल और छिद्रयुक्त कागज पर लगाकर शंखिकी धमनी पर चिपका दें। इससे बहुत शीघ्र वेदना शान्त हो जायगी।

(१०) अनिद्रा की दशा में रोगन बनफ्शा रोगन कद्दू या रोगन काहू प्रभृति का शिर पर अभ्यंग करें, इससे नींद आ जाती है प्रकृति के शैत्य की दशा में मेंहदी के पत्तों को पीसकर इसका प्रलेप करें या बादाम ५ को सर्षप तैल में पीसकर मस्तक पर लगाएँ और रीठा को पानी में घिसकर दो तीन बूंद नाक में टपकाएँ। इससे लाभ न होने की दशा में यह प्रलेप लगाएँ।

एक जमालगोटा को पानी में घिसकर वेदनायुक्त पार्श्व की दूसरी ओर की कनपटी पर रुपया के बराबर प्रलेप करें। यदि इससे अधिक जलन हो और फोस्का उत्पन्न हो जाय तो उस पर मक्खन लगाएँ।

पुरातन आधासीसी पर निम्न प्रलेप का उपयोग करें।

मेंहदी के पत्र, इन्द्रायन का गूदा, उश्शक, इक्लीलुल मलिक, कबाबचीनी, एलुआ, सबको समान भाग लेकर बारीक पीसलें और सिरका में मिलाकर प्रलेप करें या यह प्रलेप लगाएँ—

मुरमकी २ मा० को किञ्चित सिरका में पीस कर लेप करें।

नस्य—यह साधारणतः उस कफज अर्द्धावभेदक में जिससे शिर में गर्मी और वेदना की शिकायत एवं टीस नहीं होता, लाभदायक है। समुद्रफल एक और नवसादर १ मा० दोनों को बारीक पीस कर सूर्य की ओर मुख कर नस्य लें। इससे प्रायः छींकें आकर वेदना शान्त हो जाती है। दिन में कई बार प्रयोग करें।

शीरा उस्तूखुद्दूस ३ मा०, काली मिर्च इसका पानी में शीरा निकाल कर बिना साफ किये सूर्योदय से प्रथम पान कराएँ अथवा इस फांट का प्रयोग करें—गुलबनफ्सा ६ मा०, उन्नाब ५ दाना, संपिस्ताँ १० दाना, गुलखित्मी ४ मा०, शाहतरा ६ मा०, अलूबोखारा ५ दाना, बिहीदाना ३ मा० सम्पूर्ण औषध को अर्क कासनी २० तो० में भिगोए और प्रातः इसको थोड़ा क्वथितकर २ तो० मिस्री मिलाकर पिलाएँ। बिबन्ध को दूर करने के लिए मगज़ फ़लूस ४ तो० को जल में घोलकर इसमें ४ तो० एरंड तेल मिलाकर कभी कभी पिलाते रहें और हब्ब बलसाँ १॥ मा० रोजाना

खिलाएं, अथवा यूनानी मिश्रित औषधों में से आवश्यकतानुसार किसी एक का उपयोग करें।

यदि इन उपचारों से लाभ न हो तो फिर मुस्झिज और मुसहिल पिलाकर व्याधि गत दोषों का पूर्णतया शोधन करें।

मुस्झिज—गुल बनफ्शा, गावजुबांन मकोखुश्क' तुख्म कसूस (पोटली में बधा हुआ)शाहतरा, अफसंतीन प्रत्येक ५ मा०; आलूबोखारा, उन्नाब, सपिस्ताँ, प्रत्येक ६ दाना, तमर हिंदी (अम्लिका) २ तो०' तुबुर्द ६ मा०। सम्पूर्ण औषध को क्वथित कर और मल छानकर खमीरा बनफ्शा सादा ४ तो०, मिलाकर सात दिवस तक पिलाएं। आठवें दिन उसी नुस्खा में मग़ज़ फलूस ख़यार शंबर ५ तो० तुरंजबीन ४ तो०, शीरा मगज बादामशीरीं ५ दाना, मिलाकर विरेचन दें दूसरे और तीसरे विरेचन में मुख्यतः मस्तिष्क की शुद्धि हेतु हब्ब आयारिज ६ मा०, रात को खिला कर प्रातः काल प्रागुक्त विरेचन दें। यदि वेदना पूर्णरूपसे शांत न हो तो फिर कुछ दिन हब्बसिब्र या इत्रीफलसगीर १ तो० या शर्बत उस्त खुहूस २ तो० उपयोग में लाएँ।

हब्ब सिब्र—एलुआ २ तो०, हड़ काबुली १ तो०, मस्तगी ७मा०, गुलसुर्ख, अनीसू प्रत्येक ४ मा०, और बतीरा ६ मा० सबको बारीक पीस कर चने के बराबर वटिकाएं प्रस्तुत करें। मात्रा ५ मा० रात्रि को सोते समय उष्ण जल के साथ।

अर्द्धाव भेदक में प्रयुक्त होने वाली

अमिश्रित औषधें

आयुर्वेदीय तथा यूनानी—जदवार समुद्रफल, छिक्किका (नकछिकनी), अपराजिता, वन खजूर (राम गुआक), विडङ्ग, हिंगु, दुरालभा, तिक्त कोशातकी, विडंग तेल, रीठा।

डॉक्टरी—आर्सेनिक, केफीन, काफी, फेरी सल्फ, क्विनीन, विराट्रिया, केफीनसाइट्रास, फिनासिटीन और एसिटेनिलाइडम् (ऐण्टिफेब्रिन)।

मिश्रित औषध

आयुर्वेदीय—शिरोशूल में प्रयुक्त होने वाली प्रायः औषध।

यूनानी—इत्रीफल फौलादी' हब्बुल आयारिज, सऊतअज़ीब, सऊत इसाबह, बशक़ोक़ह, कुर्स मुसल्लस, दवाए शक़ीक़ह और शिरोशूल में प्रयुक्त होने वाली सभी दवाएँ।

पथ्यापथ्य

शिरोरोग में वर्णित पथ्यापथ्य एवं आहार विहार अनुसरणीय हैं।

अर्द्धाशनम्—सं० क्ली० अर्द्ध भोजन, आधा पेट खाना भूख से कम खाना। श० च०।

अर्द्धिक—हिं० संज्ञा पु० [सं०] अर्द्धावभेदक। (Hemicrania)

अर्द्धीकरण—हिं० संज्ञा पु० [सं०] आधा करना।

अर्द्धेन्दुः—सं० पु० मखचिन्ह। मे० दन्त्रिकं।

अर्द्धेन्दुपुष्पक—सं० अज्ञात।

अर्द्धेन्दु शकला—सं० स्त्री० (१) नासारोग (Nasaldisease) अम्राजुल् अन्फ—अ०। (२) कपाल रोग भेद। (A kind of the diseases of skull)

(२) ओष्ठ रोग (Labial diseases) (४) अर्ब्बुद रोग। (Tumour) (५) गल रोग (Phairyngeal diseases) (६) तालु रोग (Diseases of the palate) (७)कर्ण रोग। (Diseases of the-ear) वै० निघ०।

अर्द्धोदक क्षीरम्—सं० क्ली० अर्द्धोदक श्रृत दुग्ध,आधा जल मिलाकर पकाया हुआ दुग्ध यह श्रेष्ठ एवं लघु होता है।

'अर्द्धोदकं पयः शिष्टमामाल्लघुतरं श्रृतम्। हेमाद्रिश्चारपाणि।

अर्ध-हिं० वि० दे०—अर्द्ध।

अर्न—चीड़ वृक्ष भेद। (Chira)

अर्नकी—यू० एक विशाल वृक्ष है जो चीन तथा भारत वर्ष में पाया जाता है। इसका पुष्प लाल, पीला अथवा श्वेत होता है।

अर्नब वर्री—अ० खरगोश। (A hare)

अर्नब बहरी—अ० दरियाई खरगोश। (Sea-rabbit)

अर्नवी-अ० एक बूटी है जो खरगोश के पैर के सामन होती है यह खराब और शीतल स्थानों में होती है

अर्नविय्यह-
ऐनअर्नविय्यह्- } अ० एक रोग है शतरह (Shatarh) जिसमें ऊर्ध्व पलक संकुचित होकर छोटे हो जाते हैं। इस कारण दोनों पलकें परस्पर नहीं मिल सकती और रोगी के नेत्र सुप्तावस्था में शशा चक्षु सदृश आधे खुले रहते हैं लॉग ऑफ्थैल्मास (Lagophthalm as) इं०।

अर्ना-हिं० जंगली भैंस (Wild buffalo)

अर्ना-हिं० महानिम्ब (Ailantusexcelsa' Roxb.) फा० इं० १ भा०।

अर्नाव-सं० पु० जंगली अंजीर। (Wild fig)

अर्निका-इं०
अर्निका मॉण्टेना- } ले० एक पौधा है जो औषध के काम आता है। मेमो०। देखो—अर्निका मॉण्टेना।

अर्नीका फ्लोरिस-ले० अर्नीका फ्लावर्स (arnica flowers) इं०।

अर्निया कल्द:-सं० पु० चाकसू (Cassia absus)

अर्नियाती-सं स्त्री० थल पद्मनी। स्थल कमल।

अर्नियूक्न-यू० चिरायता (Andrographis paniculata)

अर्नीसीन-इं०, अर्नीका सत्व। V. M. M.

अर्नुक्मान-अ० हिन्दक्क्की, विषखपरा।

अर्नविया-ले० रतन जोत, रङ्गे बादशाह। देखो—रतनजोत। (Alkanet) फा० इं० २ भा० मेमो०।

अर्नैट-
अर्नैट्स डाई- } इं० लटकन, बलकना, (Bixa orellana, Linn इं० मे० प्लां०।

अर्नोटाप्लाण्ट-इं० सेन्दुरिया लटकन, वटकन, Arnatto (Bixa orellana) इं० मे० मे०।

अर्फह्-अ० हथेली का घाव।

अर्फ-अ० (१शाब्दिक अर्थ -'उच्च स्थान,, परन्तु परिभाषा में अस्थि की ऊभरी हुई रेखाको कहतेहै क्रेस्ट (Crest) इं०। (२) बाँस।

अर्फ आनी-अ० पेडू की अस्थि की उभरी हुई रेखा प्युबिकक्रेस्ट (Pubic crest) इं०

अर्फज-अ० तीक्ष्ण दुग्ध मय बूटी भेद।

अर्फ हर्कफ़ी-अ० चड्डे की अस्थि उभरी हुई रेखा। इलिअक क्रेस्ट (Iliaccrest) इं०।

अर्फियह्-अ० फाख्ता।

अर्बतह्-अ० (ब० व०), रबात (ए० व०) बंधनी लिगेमेण्ट्स Ligaments) इं०।

अर्बहरा-सिरि० सँभालूबीज Vitex negundo (Seeds of-)

अर्बिततुर्रिह्म-अ० जरायु बंधनियाँ गर्भाशय के बंधन जो उसको एक दूसरेसे संलग्न रखते हैं लिगेमेण्ट्स ऑफ दी यूटरस (Ligaments of the Uterus) इं०।

अर्बिततुल मसानह्-अ० वस्तिबंधन मूत्राशय के बंधन लिगेमेण्टस ऑफ दी ब्लैडर (Ligaments of the bladder)-इं०।

अर्बियानुस-यू० बाबूनहे गावचश्म-फ़ा०फर्तानियून यू०। पार्थीनिअम (Parthenium), मैट्रिकेरिया Matricaria-ले० म० अ० डॉ०।

अर्बी-अ० सफ़ेद यव (White barley) (२) सुल्त।

अर्बु(बु)द:-सं० पु०, क्ली०
अर्बुद-हिं० संज्ञा पु० }

(१) गणित में नवें स्थान की संख्या दश कोटि दस करोड़।

(२) कद्रु का पुत्र, एक सर्प विशेष।

(३) मेघ। बादल।

(३) दो मांस का गर्भ।

(५)एक रोग जिसमें शरीरमें एकप्रकारकी गाँठ पड़ जाती है। इसमें पीड़ा तो नहीं होती, पर कभीकभी यह पक भी जाती है। इसके कई भेदहैं जिनमेंसे मुख्य रक्तार्बुद और मांसार्बुद हैं। बतौरी रसौली (Tumoru)

सु० नि० ११ अ० मा० नि० दे० अर्ब्बुद।

(६) नेत्र वर्त्म गत रोग विशेष यह मांस के पिंड के समान एक गाँठदार सूजन है जो वर्त्म के भीतर होती है यह रक्त तथा वातादि तीनों दोषों के कारण उत्पन्न होती है इसमें दर्द नहीं होता, इसे अर्बुद कहते हैं जब यह वर्त्म के बाहर होती है तब यह चलायमान और विषम आकृति वाली होती है। जैसे—

वर्त्मान्तर्मांसपिण्डाभः श्वयथुर्ग्रथितो रुजः।
सास्रैःस्यादिर्बुदो दोषैर्विषमोवाह्यतश्चलः॥
वा० उ० अ० ८।

(७) अस्थि का उभरा हुआ भाग। (Pro tuberance)

(८) रक्त के प्रकोप से तालु के बीच में पद्म के आकार के समान जो सूजन होती है उसे "अर्बुद" कहते हैं। वा० भ० सं० अ० २१।

अर्बुदम-सं० क्ली० (१) (Tubercle) उभार (२) अर्ब्बुद फोड़ा विशेष (Tumour)

अर्बुद फलम्-सं० क्ली० मलूक का फल यह एक भारतीय वृक्ष है।

अर्बुदहरो रसः-सं० पु० दे० अर्ब्बुद हरो रसः।

अर्बुदान्तर सरित्व-सं० स्त्री० (Intertubercular)

अर्बूतानून-न० एक बूटी है जो पृथ्वी पर फैलती है यह जंगली तुलसी के समान किन्तु उससे छोटा और नर मादा दो प्रकार की होती है।

अर्बोरकाँन्सिलिओरम्-ले०, पीपल, अश्वत्थ (Ficus relegiosa) फा० इं० ३भा०।

अर्बोरटाँक्सिकेरिया फेमिना-ले० सापसुण्डी मह०फा० इं० ३ भा०।

अर्बोर वाइटी-इं० (Thuya occidentalis) ले० सन्द्रच।

अर्ब्युटीन-इ० रीछदाख सत्व, भल्लूक द्राक्षासार।
मात्रा—५ से ३० ग्रेन देखो—भल्लूक (रीछ) द्राक्षा (Arctostaphylos uva-ursi) पी० वी० एम०।

अर्ब्री अवोग्लेण्ट-फ्रां० गेरिया गङ्गवा, अगुरु-बं० Blinding tree, Tiger's milk tree (Excœcaria agallocha, *Linn*) फा० इं० ३ भा०।

अर्ब्री अ-सोई-फ्रां० आक, मदार Gigantic swallow Wort (Calotropis gigantea, *R. Br*) फा० इं० ३ भा०।

अर्ब्री वची-फ्रा० तगर Ceylon jasmine (Tabernæ montana coronaria *Br.*) फा० इ० ३भा०।

अर्ब्रास डी' एन्सेन्स-फ्रां० लुवान, कुन्दर Frankincense tree (Boswellia) फा० इं० १ भा०।

अर्भः,-कः-सं० पु०
अर्भ,-क-हिं० संज्ञा० पु०

(१) बालक, शिशु, पुत्र (A child, a pupil) रा० नि० व० १८ (२) कुश (Poacynosuroides) मे० कत्रिकं (३) पक्षजात शिशु, १५ दिवस का पैदा हुआ बच्चा रा० नि० व० १८।

हिं० वि० (१) मलिन धुँधरी (२) शिशिर ऋतु (३) साग पात।

अर्भः-सं० पु० बाल सर्प साँप का बच्चा अथर्व० सू० २६ ३ का० ७।

अर्भकम्-सं० क्ली० छोटा विषैला काँटा या विष अथर्व० सू० २६ ६ का० ७।

अर्भा-सं० स्त्री० गुग्गुल (Burseraceæ) "अर्भाचूर्णं सहयुतम्।" प्रयोगा० भग्नचि०।

अर्म-हिं० संज्ञा पु० [सं०] आँख का एक रोग टेंटर ढेंढर।

अर्मह्-अ० जंगली चूहा (A wild rat)।

अर्म-अ० मत्स्य भेद (A kind of fish)।

अर्मज-अ० हरी काई जो जल के ऊपर आजाती है ((Green moss) (२) हब्बुलगार (३) जंगली बेर (४) छोटे पीलू का वृक्ष।

अर्मज़ान-अ० (१) हिन्दूकूकी (२) बुलूरुल अक़राद।

अर्मणः-सं० पु० द्रोणपरिमाण (=३२ सेर) प० प्र० १ ख० च० द० अ० सा० चि० कुटजावलेह।

अर्मद-अ० रम्द अर्थात् आँख दुखने का रोगी, वह व्यक्ति जिसके नेत्र दुखते हों, (आँख आई हो) अभिष्यदी आँफ्थैल्मिएक (Ophthalmiac) -इं०।

अर्मनी-हिं० संज्ञा पु० देखो—अरमनी।

अर्मनीन-यू० एक बूटी है जो प्रतिवर्ष उगती और बागी व वन्य दो प्रकार की होती है इसमें बागी के पत्र झाऊ पत्र सदृश होते हैं तथा जंगली अप्रयुज्य है।

अर्मल-अ० बे तोशा, कुंवारा पुरुष (Bachelor)।

अर्मा-रक्त श्याम सर्प (A red black serpent)

अर्माक-कद्दू की बेल का नाम अथवा केवड़ा वृक्ष की छाल।

अ(इ)र्मोज-अ० काई (Moss)

अर्मात-यू० केवड़ा या गुले केवड़ा।

अर्मानियाँ-यू० लाजवर्द See-Lajavard

अर्मानूस-सिरि० अजवायन, खुरासानी (Hyocyamus)

अर्माल-
अर्मालक- } एक वृक्ष की छाल जो तज के समान तथा सुगन्धित होता है।

अर्मीना-अ० यू० नौशादर। Salammoniac (Ammoniae hydrochloras) स० फा० इं०।

अर्मीनाकन-यू० ज़र्दालू, एक फल है जो पीतवर्ण का और गोल व मधुराम्लता युक्त होता है। खूबानी इसका एक भेद है यह शीत प्रदेशों में अधिक होता है।

अर्मूनिया-यू० अकाकिया। See-Akakia

अर्म्मन्-सं० क्ली० नेत्र रोग विशेष यह पांच प्रकार का होता है—

(१) प्रस्तार्य्यर्म्म, (२) शुक्लार्म्म, (३) रक्तार्म्म, (४) मांसार्म्म और (५) स्नाय्वर्म्म इसके लक्षण यथा स्थान देखो—।

अर्य्यमा-सं० पु०, हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) अर्क वृक्ष, आक (Calotropis gigantea) रा० नि० व० १०। (२) सूर्य (She sun)।

अर-अ० (१) कण्डु, खुजली। (The itch)। (२) जड़ से बाल उखाड़ना।

अरक़-अ० रकीकतर अर्थात् बहुत पतली चीज।

अर्रा-हिं० संज्ञा पु० (१) एक जंगली पेड़ जो अर्जुन वृक्ष से मिलता जुलता होता है, इसकी लकड़ी बहुत मजबूत होती है छत पाटने आदि के काम में आती है।

(२) अरहर। आढ़की।

अर्रुज-
उज- } -अ० तण्डुल, चावल। Rice (Oryza sativa' Linn) स० फा० इं०।

अर्हीनाल-इं० आर्सिनिल Arsynil (Disodiummethy larsenate) यह काकोडाइल का एक नवीन यौगिक है। देखो—संखिया।

अ(र)र्लु-सिं० पीली हड़, हर्रा, हरीतकी फल (Terminalia chebula, Retz) स० फा० इं०।

अर्लू-प० कचैटा, किगली, अगलाग्ल। (Mimosa rubicaulis. Lam) मेमो० फा० इं० ३ भा०। (२) अरलू।

अर्व-अ० कम्पन लगकर ज्वर चढ़ना, जाड़े से ज्वर आना, शीत पूर्व ज्वर, जूड़ी ज्वर।

अर्वती-सं० स्त्री० अज्ञात औषधि अथर्व। सू० ४। २१। का १०।

अर्वन्-सं० पु० गतिशील, चलनेवाला अथर्व०।

अर्वाक्-अव्य० [सं०] (१) पीछे, इधर।

अर्वाक् स्रोता-हिं० संज्ञा पु० जिसके वीर्यपात हुआ हो, ऊर्द्ध रेता का उलटा।

अर्वाह-(ब० व०), रूह (ए० व०) अ० ये तीन हैं—(१) रूह हैवानी (प्राणी शक्ति) जो हृदय में उद्भूत होती है और धमनियों के द्वारा सम्पूर्ण अवयवों में विभाजित होकर उनको प्राण शक्ति प्रदान करती है, (२) रूह नफ्-

सानी (मानसिक शक्ति) जो मस्तिष्क में संजनित होती है और बोध तन्तुओं (नाड़ियों) द्वारा शरीर में फैलकर उनको बोध व गति प्रदान करती है, (३) रूह् तबई (प्राकृतिक शक्ति) जो यकृत में पैदा होती है और शिराओं द्वारा अवयवों में वितरित होकर उनको पाचन शक्ति एवं पोषण प्रदान करती है। रूह् के लक्षण एवम् वास्तविक के लिये देखो—रूह्।

स्पिरिट् Spirits. सोल्स Souls, न्यूमाज Pneumas ये मुख्य पारिभाषिक शब्द है जो अर्वाह के उपयुक्त पर्याय हैं।

अर्वाह कुल्लद-अज्ञात।

अर्व्वणः-न्- } सं० पु० अश्व घोड़ा। (A horse) भा० पू०।

अर्व्वंती-सं० स्त्री० बड़वा। कुम्भ, दासी। मे० तान्त्रिक।

अर्व्वान्-सं० पु० अश्व (A horse)। भा० पू०।

अर्व्बुदः-अर्बुद- } -सं० पु० क्ली० (१) पुरुष। (२) दशकोटि परिमाण। मे० दत्रिक्। (३) मांसकीलकाकार रोग विशेष। देखो—अर्बुद। रसौली, बतोरी (ड़ी), अर्बु (बु) द-हिं०। ट्यूमर (Tumour) इं० जदरह्, सल्-अह् वर्म-अ०। आतु-बं०।

आयुर्वेद के मत से अर्बुद एक प्रकार की मांस की गांठ है जो वातादि दोषों के कुपित होकर मांस और रक्त को दूषित करने से शरीर के किसी भाग में हो जाया करता है। यह गोल स्थिर, मंद, पीड़ायुक्त, अति स्थूल (यह ग्रन्थि से बड़ी होती है), विस्तृत मूलयुक्त, बहुत काल में बढ़ने वाली और नही पकने वाली होती है। वातज, पित्तज, कफज, रक्तज, मांसज और मेदज भेद से ये छः प्रकार के होते हैं, इनके लक्षण सदा ग्रंथि के समान होते हैं। किसीकिसी ने द्विरर्बुद और अध्यर्बुद इन दोनों को सम्मिलित कर इसके आठ भेद माने)।

गात्रप्रदेशे क्वचिदेव दोषाः
संमूर्च्छिता मांसमभि प्रदूष्य।
वृत्तं स्थिरं मन्दरुजं महान्त
मनल्पमूलं चिरवृद्ध्यपाकम्॥
कुर्वन्ति मांसोच्छ्रयमल्पगाधं
तदर्बुदं शास्त्रविदो वदन्ति।
वातेन पित्तेन कफेन चापि
रक्तेन मांसेन च मेदसा च॥
तज्जायते तस्य च लक्षणानि
ग्रन्थे समानानि सदाभवन्ति॥
मा० नि०, सु० नि० ११ अ०

आर्बुद के उपर्युक्त भेदों में से रक्तार्बुद और मांसार्बुद मुख्य है, इनमें से प्रत्येक का यहां पृथक् पृथक् वर्णन किया जाता है।

रक्तार्बुद

दोषः प्रदुष्टो रुधिरं शिरास्तु
संपीड्य संकोच्य गतस्तु पाकम्।
सास्रावमुन्नह्यति मांसपिण्ड
मांसांकुरैराचितमाशु वृद्धिम्॥
स्रवत्यजस्रं रुधिरं प्रदुष्ट
मसाध्यमेतद्रुधिरात्मकं स्यात्।
रक्तक्षयोपद्रव पीडितत्वात्
पाण्डुर्भवेदर्बुद पीडितस्तु॥
मा० नि०। सु० नि० ११ अ०

अर्थ—दूषित हुआ दोष रुधिर की शिराओं को संकुचित कर उनको इकट्ठा कर मांस के गोला को प्रकट कर देता है। वह कुछ पकनेवाला यथा कुछ बहने वाले मांस के अंकुरों से व्याप्त एवं शीघ्र बढ़ने वाला होता है। उसमें से सदा रुधिर बहा करता है वह रक्तार्बुद असाध्य है। यह रक्तार्बुद रोगी रक्तक्षय के उपद्रवों से पीड़ित होने के कारण पीला हो जाता है। ये रक्तार्बुद के लक्षण हैं।

मांसार्बुद (Cancer)

मुष्टि प्रहारादिभिरर्दितेऽङ्गे
मांसं प्रदुष्टं प्रकरोति शोफम्।
अवेदनं स्निग्धमनन्यवर्ण
मपाकमश्मोपममप्रचाल्यम् ॥
प्रदुष्ट मांसस्य नरस्यवाढ
मेतद्भवेन्मांस परायणस्य ।
मांसार्बुद त्वेतदसाध्यमुक्तं
साध्येष्वपीमानि तु वर्ज्जयेच्च ॥
मा० नि० । सु० नि० ११ अ०

अर्थ—मुक्का वा घूसा आदि के लगने से शरीर में जो पीड़ा होती है उस पीड़ा से मांस दूषित होकर सूजन को उत्पन्न करता है, यह सूजन पीड़ा रहित, चिकनी देह के रंग के समान होती है, इसका पाक नहीं होता और यह पत्थर के समान स्थिर होती है, जिस मनुष्य का मांस दूषित हो जाता है अथवा जो सदैव मांस खाते हैं उनको यह अर्बुद रोग उत्पन्न होता है यह माँसार्बुद असाध्य है साध्य अर्बुदों में भी निम्नलिखित अर्बुद त्याज्य हैं यथा—

संप्रश्रुतम् मर्म्मणि यच्च जात।
स्रोतः सुवा यच्च भवेद चात्यम् ॥
यज्जायतेऽन्यत् खलु पूर्वजाते।
ज्ञेयं तदध्यर्बुदमर्बुदज्ञैः ॥
यद् द्वन्द्वजातं युगपत् क्रमाद्वा।
द्विरर्बुदं तच्च भवेदसाध्यम् ॥
मा० नि० सु० नि० ११ अ०।

अर्थ—स्रावयुक्त, मर्मस्थान तथा नासिका आदि छिद्रों में उत्पन्न होने वाले एवं अचल अर्बुद असाध्य होते हैं [प्रथम जिस स्थान में अर्बुद उत्पन्न हुआ हो उसी के ऊपर जो एक दूसरा अर्बुद उत्पन्न हो जाता है उसको अध्यर्बुद कहते हैं एक साथ दो अर्बुद अथवा जो क्रमशः एक के पश्चात् दूसरा अर्बुद उत्पन्न हो जाता है उसको द्विरर्बुद कहते हैं, यह असाध्य है)।

अर्बुदों के न पकने के कारण

न पाकमायान्ति कफाधिकत्वान्मेदोऽधिकत्वाच्च विशेषतस्तु।
दोष स्थिरत्वात् ग्रथनाच्चतेषां सर्वार्बुदान्येव विसर्गतस्तु ॥
मा० नि० सु० नि० ११ अ०।

अर्थ—कफ की अधिकता से वा विशेष कर मेद को अधिकता से एवं दोषों की स्थिरता से अथवा दोषों की ग्रथि रूप होने से सब प्रकार के अर्बुद स्वभाव से ही नहीं पकते।

नोट—यूनानी वैद्यक के मतानुसार अर्बुद के लक्षण आदि विषयक पूर्ण विवेचन के लिये अरबी शब्द सलअह संज्ञाके अन्तर्गत देखें। मेदार्बुद को अंग्रेजी में फैटी ट्युमर (Fatty tumour) और अरबी में सलअह दुहनिहयह वा शहमिय्यह कहते हैं।

आयुर्वेदीय चिकित्सा के लिये इनके अपने अपने भेदों के अन्तर्गत अवलोकन करें।

अर्ब्बुदहरो रसः-सं० पु० पारा (रससिंदूर) को चोलाई, बिषखपरा, पान, घी कुवाँर, खिरेटी और गो मूत्र की भावना देकर पान में लपेट कर उसके ऊपर मिट्टी का २ अंगुल मोटा लेप करके सुखाकर एक लघु पुट दें। इसके सेवन से अर्ब्बुद नष्ट होता है। र० र० स० २४ अ०।

अर्ब्बुदाकारः-सं० पु० बहुवार वृक्ष, लसोरा। चालिता गाछ-बं०। (Cordia myxa or C. Latifolia) वै० निघ०।

अर्ब्बुदाद्रिजः-सं० पु० मेषशृंगी, मेढ़ासिंगी। मेढ़ासिंगी बं०। मुरदारशिंग-मह०। (Asclepias geminata) वै० निघ०।

अर्ब्बुदान्तरिक रेखा-सं० स्त्री० (Intertubercular plane) वह पड़ी रेखा जो नितंबास्थियों के ऊपर के किनारों (जघन चूड़ा) के उभारों में से गुजरती है।

अर्ब्बुदान्तरिका रेखा-सं० स्त्री० (Intertubercular plane)

अर्ब्बुरम्-सं० क्ली० आहुल्य नामक क्षुप। तड़वड़

काश० । तड़बड़—मह० । वै० निघ० २ भा० संग्रहणी० चि० तालीशादि चूर्ण ।

अर्श (स्)–सं० क्ली०
अर्श–हिं० संज्ञा पु० } स्वनामाख्यात गुदरोग विशेष, एक रोग जिसमें वातादि दोषों के दूषित होने के कारण गुदा में अनेक प्रकार के मांस के अंकुर उग आते हैं जिनको अर्श अथवा ववासीर कहते हैं । ये नाक एवं नेत्रादि में भी उत्पन्न होते हैं आयुर्वेदके अनुसार इनके निम्न भेद हैं—

(१) वातज (२) पित्तज (३) कफज (४) सन्निपातिक (५) रक्तज और (६) सहज । विस्तार के लिए देखिये—ववासीर । पर्याय—दुर्नामकं (अ) दुर्नाम, गुदकील, गुदाङ्कुरः (रा०) अनामकं (शब्द र०), गुदकीलक गुदांमयः दुर्नामन्, दुर्नामा, दुर्नाम्नी सं० ।

पायह्, ववासीर (मकअद) उ० । हिमोरी दूस, अमूरेदिस, एमोरीदूस,–यू० । ववासीर (ब० व०) बासूर (ए० व०) अमोरीदूस अ० पाइल (Pile) (ए० व०) पाइलज (Piles) (ब० व०) हीमोराइड (Hæmorrhoid) (ए० व०), हेमोराँइडस (Hæmorrhoids) (ब० व०) इ० हीमोरायडीज (Hæmorrhoides) फ्रां० । हीमोराइडेन (Hœmorrhoiden) जर० ।

अर्श अ० जलाट, छत, तख्त पैलेटबोज (Palate bones) इ० हिं० संज्ञा पु० (१) आकाश (२) स्वर्ग ।

अर्शकर्म–सं० क्ली० भिलावा । (Semicarpus Onacardium)

अर्श कुठार:–सं० पु० वरनीग अर्थात् ६४ पुटित सीसा भस्म अभ्रक सत्व, ताम्र और लोह भस्म प्रत्येक समान भाग लेकर थोड़ी थोड़ी हरताल को चिटकी दे देकर लोह को कड़ाही में पिघलाएं और लोह को कड़छी से चलाते रहें । जब हरताल की दुगनी भूकी खप जाय तब सब अलग निकाल कर पारा मिला पिंडी बनाएं और उस पिण्डी को भिलावे के वृक्ष को जिसके पास १ महीने तक गाड़ रक्खें फिर निकालकर गायके दूध में डालें और इसमें पाताल यन्त्रसे निकाला हुआ भिलावे का तेल एक चिकनी कड़ाही में जालकर उसमें पिण्डी डालकर एक-एक सेर तेल जारित करें फिर भिलावे के तेल में गन्धक को भावित करके उस कन्धक की पुट देकर उपरोक्त पिण्डी के बराबर पारा लेकर कट सरैया के रस में कई भावना देकर धूप में रख भस्म कर डालें फिर उस भस्म की उपरोक्त पिण्डी भस्म में मिलाएँ फिर क्रम से बन, सूरन, निगुंडी, मुरैठी, गोखुरू, हड़, जौर, तिधारी, और चित्रक इनके क्वाथ से भावना दें फिर आंगरे के रस की भावना दे सुखाकर रखलें ।

मात्रा—२ रत्ती ।

गुण—अर्श, दुख आँखके मस्से, प्लीहा, संग्रहणी, गुल्म, यकृत, मन्दाग्नि और कुष्ट को नष्ट करता है ।

अर्श कुठार रस:–सं० पु० शुद्ध पारद ४ तो०, गन्धक ८ पल, ताम्रभस्म, लोहभस्म, प्रत्येक १२ तो० त्रिकुटा, कलिहारी, दन्ती, पीलू, चित्रक प्रत्येक ६ तो०, जवाखार, भुना सुहागा प्रत्येक ५–५ पल, सेंधानमक ५ पल, गोमूत्र ३२ पल, थूहर का दूध ३२ पल, सब एकत्र कर पात्र में रख मन्दाग्नि से पचाएं । जब गोड़ा हो जाये २ माशे की गोलियां बनाएं ।

गुण—एक गोली नित्य सेवन करने से यह अर्श कुठार रस ववासीर को दूर कर देता है वृ० रसरा० सु० अर्श० चि० ।

अर्शद–अ० सोनामाखी, तारामक्खी Iron pyrites (Ferri Sulphuretum)

अर्शन-कर्म–सं० क्ली० अर्श के खुरचने की विधि ।

अर्श नाशक योग–सं० क्ली० पु० जवासा, बेल की छाल अजवाइन और सोंठ इनमें से एक एक के साथ भी पाठे के क्वाथ का पान करने से अर्श की पीड़ा नष्ट होती है च० सं० अ० चि० १४ ।

अर्शपातनम्–सं० क्ली० कटकरञ्ज, हड़, नागरमोथा चिरायता, काला कुड़ा की छाल, सूरन, चित्रक, सेधानमक, देवदाली (बन्दाल) तुल्य भाग ले चूर्ण प्रस्तुत करें ।

मात्रा—१० मा० अनुपान—तक्र।

गुण—इसको १ मांस पर्यन्त भक्षण करने से बवासीर के मस्से गिर पड़ते हैं बंगसे० सं० अर्श चि०।

अर्श में तक्र प्रयोग–सं० पु० चीते की जड़ की छाल को पीसकर घड़े में लेप करके उसमें दही जमा दें, उस दही को या उससे प्रस्तुत तक्र को पीने से अर्श का नाश होता है। च० सं० चि० अ० १४।

अर्शस्–सं० क्ली० अर्श रोग, बवासीर। (The piles or hoemorrhoids) श० र०।

अर्श वर्त्म-हिं० संज्ञा पु० [सं०] एक प्रकार की बवासीर जिसमें गुदा के किनारे ककड़ी के बीज के समान चिकिनी और किंचित् पीड़ा युक्त फुन्सियाँ होती है।

अर्श सूदनः–सं० पु० शूरण, सूरन। तुल–वं०। (Amorphophallus Campanulatus, *Blume*)

अर्शसः–सं० त्रि० अर्शयुक्त, अर्शरोगी।

अर्शहर–हिं० सं० पु० [सं०] (Amorphophallus Campanulatus,:*Blume*) सूरन। ओल। जमीकंद। देखो- शूरण।

अर्शी–अ० देखो—अरशा।

अर्शी–सं० त्रि० अर्शयुक्त, अर्शरोगी। श० र०।

अर्शोऽरि रसः–सं० पु० पारा, १ भाग, अभ्रक भस्म २ भाग, ताम्र भस्म ३ भाग, लोहभस्म ४ भा० और गन्धक ५ भाग, चमार दूधी (धवल कुसुम वल्ली) के रस में लोह की कढाई में १ दिन पकाएँ। ठंडी होने पर १ पहर बच्छनाग के स्वरस अथवा क्वाथ से भावना दें। फिर सफेद पुनर्नवा; त्रिकुटा, त्रिफला इसके रस अथवा क्वाथ से भावना दें।

मात्रा—३ रत्ती। इसके सेवन से बवासीर के सभी उपद्रव नष्ट होते हैं। रस० यो० सा०।

अर्शोघ्न–हिं० संज्ञा पु०
अर्शोघ्नः–सं० पु०

(१) शूरण, सूरन, ओल, जमीकंद। (Amorphophallus Campanulatus, *Blume*) रा० नि० ब० ७। (२) भल्लातक भिलावाँ (Semicarpus anacardium) (३) सर्जिक्षार, स्वर्जिकाक्षार। (४) तेजबल (Zanthoxylum alatum)। (५) श्वेत सर्षप (Brassica juncea)। (६) कटु शूरण। वै० निघ०। (७) अर्श नाशक द्रव्य मात्र।

अर्शोघ्न महाकषायः–सं० पु० कूंड़े की छाल, बेल, चित्रक, सोंठ, अतीस, हड़, धमासा, दारुहल्दी, चव्य, वच, इनका कषाय बनाकर पीने से अर्श दूर होता है। च० सं०।

अर्शोघ्न वटकः–सं० पु० पीपल, पीपलामूल, जमीकंद, मिर्च, चित्रक, कटेली, गुड़हल के फूल प्रत्येक १–१ पल, इसके कल्क को हाथी और बकरी के मूत्र में मिट्टी के बर्तन में पकाएँ जब मूत्र जल जायतबइसका चूर्ण करके इसमें सैंधव, सोंचरनमक १–१ पल मिलाकर १–१ कर्ष प्रमाण के वटक बनाये। पथ्य—तक्र व घृत का भोजन करें। एक मास के प्रयोग से अर्श नष्ट हो जाता है।

अर्शोघ्न वर्गः–सं० पु० कुटज, विल्व, चित्रक, नागर, अतिबिषा, अभया, दुरालभा, दारुहरिद्रा, वच, और चव्य ये दस वस्तु अर्शोघ्न प्रभाव युक्त है। च० सू० ४। विशेष देखो–बवासीर।

अर्शोघ्न वल्कला–सं० स्त्री० तेजबल। (Zanthoxylum alatum) वै० निघ०।

अर्शोघ्नी–सं० स्त्री (१) तालमूली, काली मूषली (Curculigo orchides)। रत्ना०। मे० नत्रिक। (२) भल्लातक, भिलावा (Semicarpus anacardium) वै० निघ०

अर्शोजः–सं० पु० भगन्दर रोग। (See-Bhagandare)

अर्शोदावानलो रसः–सं० पु० मरडूर को तेज अग्नि में तपा तपा कर त्रिफला के क्वाथ में कई बार बुझाएं फिर घीकुवार के रस में भावना देते हुये २१ पुट दें, फिर गन्धक और पारे को

कज्जली और उतनी ही लोह भस्म, त्रिकुटा, त्रिफला, भाँगरा, चीता और मोचरस मिलाकर गिलोय के क्वाथ की भावना दें तो यह सिद्ध होता है इसे ४ मासे जमीकन्द के चूर्ण और हींग के साथ खाने से अथवा भिलावे के तेल और शहद के साथ खाने से हर प्रकार के बवासीर नष्ट होते हैं। रस० यो० सा० २।

अर्शोयन्त्रम्-सं० क्ली० अर्शोयन्त्र (बवासीर का यन्त्र) गौ के स्तनों के सदृश ४ अंगुल लम्बा ५ अंगुल गोलाई में होता है स्त्रियों के लिये इसी यन्त्र की गोलाई छः अंगुल की होती है क्योंकि उनकी गुदा स्वाभाविक ही बड़ी होती है, व्याधि के देखने के लिये दोनों ओर दो छिद्र वाला यन्त्र होता है तथा शस्त्र और क्षारादि प्रयोग के निमित्त एक छिद्र वाला यन्त्र होता है इस यन्त्र के बीच का भाग तीन अंगुल और परिधि अंगूठे के समान होती है इस यन्त्र के ऊपर आध आध अंगुल ऊची एक कर्णिक होती है जिससे यन्त्र बहुत गहराई में नहीं जा सकता है अर्श के पीड़न के निमित्त एक और प्रकार का यन्त्र होता है उसे शमी कहते हैं। यह भी ऐसा ही होता है किन्तु छिद्र रहित होता है बा० सू० २५ अ० अत्रि० जयद० ५३ अ०।

अर्शोरमण्डूरम्-सं० पु० पुराने मण्डूर को लेकर गोमूत्र में पकावें जिससे वह चूर्ण सा हो जाए फिर इसमें त्रिकुटा त्रिफला और आधी मिश्री मिलाकर ३ दिन तक धरा रहने दें, पश्चात रोगी को दें तो गुदा द्वारा आने वाला रुधिर बन्द होता है।

पथ्य—दूध चावल, मसूर, एवं स्त्री प्रसंग निषिद्ध है। वृ० नि० र० अश०। चि०।

अर्शोवर्त्मन्-सं० क्ली० नेत्र वर्त्मगत रोग विशेष।

लक्षण—ककड़ी खीरा के बीजों के समान मन्द पीड़ा वाली चिकनी और कठोर फुन्सी जो नेत्रवर्त्म (नेत्र के पलक) में उत्पन्न हो उसे "अर्शोवर्त्म" कहते हैं यह सन्निपातज होती है मा० नि०।

अर्शोहररसः-सं० पु० यह रस अर्श के लिये हितकारक है योग इस प्रकार है—पारद, वैक्रान्त, शुद्ध अभ्रक भस्म, कान्त लौह भस्म गंधक शुद्ध, सबके तुल्य भांग को ले अनार स्वरस से भली प्रकार मर्दित कर रख छोड़े

मात्रा व गुण—इसमें से १ मासा खाने से अर्श नष्ट होता है।

अर्शोहर रसः-सं० पु० गन्धक, चाँदी और ताम्बा एक एक भाग लेकर बारीक पीस लें। फिर तीनो के बराबर अभ्रक भस्म और गन्धक से १/५ भाग लौह भस्म और १/१६ भाग बच्छनाग और गन्धक से द्विगुण पारद सबको मिला जम्भीर के रसमें घोटकर मिट्टी के बर्तन में रखकर त्रिफला के क्वाथ की भावना दें। फिर क्रमसे दशमूल और शतावरी के क्वाथ में पकाएं।

मात्रा—३ रत्ती गोली रूप में।

गुण—यह अर्श, गुदा रोग और शूल को नष्ट करता है। रस० यो० सा०।

अर्शोहरलेप-सं० क्ली० हाथी की लीद, घी, राल, पारा, हल्दी इन्हें थूहर के दूध में पीस कर लेप करने से अर्श नष्ट होता है। च० सं०।

अर्शोहितः-सं० पु० भल्लातक वृक्ष, भिलावाँ। (Semicarpus anacardium) त्रिका०।

अषणी-सं० स्त्री० (१) गति शील कीट विशेष। अथर्व। का० ६। १३। २२। (२) तीव्र पीड़ा जनक रोग। अथर्व० सू० ८। १३। का० ६।

अ़स़ह़-अ़० सहन, मैदान, दूरी, अन्तर, । असांत अरास (ब० क०)।

अ़स-अ़० (A bandicote rat) यर्बूअ (घूँस)।

अ़र्सफ-कमाफ़ीतूस, कुकरौंधा। (Blumea densiflora, D. C.)

अर्सम्-सं० क्ली० निर्बल। अथर्व० सू० ५६। ३। कां० ७।

असह-उ० (Solanum pubescens) Night shadedowny.-इं०। गा०।

अर्सह्-अ० नकुल नेवला Mongoose (Vivera mungo)

अर्सोतून- } -अ०
फ़रीस्मूस- } मैथुनेच्छा
आकूना- } बिना इन्द्री

का सदैव प्रहर्शित रहना। एक रोग है जिसमें इन्द्री (शिश्न) हर समय उत्तेजित रहती है किन्तु काम या मेथुनेच्छा नहीं होती। देखो—फरीस्मूस। प्रायापिज़्म (Priapism) इं०

अर्सानीक़न-अ० यू० हड़ताल, हरिताल Yellow orpiment (Arsenicum te rsulphuretum) स० फा० इं०।

अर्सेनाइट ऑफ़ कॉपर-इं० ताम्र मल्लेत् (Cuprii arsenis) देखो—संखिया।

अर्सेनातेगा-मयसू० कदम्ब। (Nauclea kadamba)

अर्सेनिआई आयोडाइडम्-ले० मल्लनैलिद (Arsenious lodide) देखो—संखिया।

अर्ह-हिं० [सं०] (१) पूज्य। (२) योग्य। उपयुक्त।

नोट—इस शब्दका प्रयोग अधिकतर योगिक शब्द बनाने में होता है। जैसे पूजार्ह।

अर्हम्-सं० क्ली० सुवर्ण, सोना। Gold Aurum) वै० निघ०।

अर्हा-सं० स्त्री० त्रायमाणलता, (Delphinium zalil, *Ailch*) वै० निघ०।

अर्हाअ-अ० (ब० व०), रहा (ए० व०) चक्की तिबकी परिभाषामें डाढ़े; क्योंकि आहार चर्वण में यहचक्की का काम देता है मोलर्ज (Molars) इं०।

अर्हियोल-इं० देखो सैण्टेलोल (Santalol)

अलम्- (कम्)-सं० क्ली० }
अल-हिं० संज्ञा० पु० }

(१) हरिताल, हड़ताल। Yellow orpiment (Arsenicum tersulphuretum) रा० नि० व० १३। सि० यो० कास० चि० मनःशिलादि घूम, पानवृन्द। "मनःशिलाले मरिच" इति। (२) वृश्चिक पुच्छ कण्टक, बिच्छू का डंक। हे० च०। (३) कङ्कोल, शीतलचीनी। (Cubeb) वै० निघ० २ भा० बा० व्या० प्रत्यष्ठीला० चि०। (४) भंगीयुक्त केश। (५) विष जहर।

अल-स० (१) सफेद मदार (Calotropis gigantea, the white var. of-) मह० (२) आदी अदरक Zingiver Officinalis, *Roxb* (Fresh root of Green ginger) सिं० (३) कन्द (Tuber) ता० (४) वट, बरगद। (Ficus Bengalensis]

अलकः-सं० पु० (१) क्षिप्त, कुक्कुर, पागल कुत्ता हिं०। पागल कुकुर वं० मेंड डाग (Mad dog) इं० (२) चूर्ण कुन्तल।

अ़लक़ह्-अ० (१) तग्सीकून या सिब्र (२) नुत्फा के बाद की अवस्था, खून की फटकी, जमा हुआ शोणित (Clotted blood)

अलक-अ० (ए० व०) उलूक (ब० व०), गोंद निर्यास (Gum or resin)

अ़लक़-अ० (१) जलायुका, जलौका, जोंक, Leech (Hirudo) स० फा० इं० म० ज० (२) जमा हुआ, बंधा हुआ या गाढ़ा रक्त।

अलक-हिं० संज्ञा पु० [सं] मस्तक के इधर उधर लटकते हुये मरोड़दार बाल बाल। केश। लटा। छल्लेदार बाल। घूंघर वाले बाल। यौ० अलकावलि।

अलकतरा-हिं० संज्ञा [अ] पत्थर के कोयले को आग पर गलाकर निकाला हुआ एक गाढ़ा पदार्थ कोयले को बिना पानी दिये भभके पर चढ़ाकर जब गैस निकाल लेते हैं। तब उसमें २ प्रकार के पदार्थ रह जाते हैं:—

एक पानी की तरह पतला, दूसरा गाढ़ा। वही गाढ़ाकाला पदार्थ अलकतरा है। जो रंगने के काम में आता है यह कृमिनाशक है। अतः इसमें रंगी हुई लकड़ी धुन और दीमक से बहुत

दिनों तक बची रहती है। इससे कृमिनाशक औषधियां जैसे—नेपथलीन, कारबोलिक एसिड, फिनायल आदि तैयार होती हैं। इससे कई प्रकार के रंग भी बनते हैं।

अलकप्रियः-सं० पु० (१) कृष्णभल्लातक काला भिलावां-हिं०। कालभेला-ब०। विवेला जटा-मह०। (Semecarpus anacardium) (२) बीजक वृक्ष, बिजयसार (Pterocarpus marsupium) मद० व० ५।

अलक बरादादी-फा० मस्तगी वृक्ष (Mastich tree) इं० हैं० गा०।

अलक़म्-अ० इन्द्रायन का फल। (Cintullus colocynthos, fruit of-)

अलकम्-अ० (१) कड़ुआ पौदा (A bitter plant)। (२) इन्द्रायन (Citrullus colocynthes, *Schrad*) (३) कसा उल हुम्मार, विन्दाल। (Ecbellium elatarium)

अलक़मह-अ० फ़रासियून। See-Farasiyuna

अलका-सं० स्त्री० हिं० संज्ञा, स्त्री० (१) वसा चर्बी। (Fat) वै० निघ०। (२) आठ और १० वर्ष के बीच की लड़की।

अलकावलि-हिं० संज्ञा, स्त्री० सं०] केशों का समूह बालों की लटें।

अलकाह्वयः-सं० पु० कटु, निम्ब (The bitter nimb tree) वै० निघ०।

अलकियह अ० वह वस्तु जिसमें चिपचिपापन के साथ किसी भांति कठोरता भी हो।

अलक़ो-एक प्रसिद्ध पौधा है। (An unknown plant)

अलकुर्मी-अ० मस्तगी। (Mastiche)

अलकुल् अम्बात-अ० बतम अथवा उसके समान एक वृक्ष का गोंद।

अलकुल जाफ-अ० रातीनज जाफ।

अलकुलब (बु)तम-अ० बतम का गोंद।

अलकुलयाबिस-अ० रातीनज भेद (A sort of resin)

अलकुशी-मी-बं० केवाँच, आदमगुसा (Mucuna pruriens, *D. C*) फा० इं० १ भा०।

अलकुस्सनोबर-अ० चीर की गोंद सरल निर्यास, सनोबर की गोंद, गंधा विरोजा। (Pinus longifolia, resin of-)

अलक़्लीस-यू० शहद, मधु Honey (Mel)

अलकेन्ना टिङ्क टोरिया-ले० रतनजोत-हिं०। अल्-ख़न्ना-अ०। (Alkanet) फा० इं० २ भा०।

अलकेयाबिस-अ० रातीनज भेद। (A kind of resin)

अलकेरूमी-अ०, रूमी मस्तगी, मस्तिकी-अ०, फा० धूनराज, गन्धिनी-स०। (Mastiche)

अलकोहॉल-इं० मद्यसार। देखो—एल्कोहाल्।

अलक्तः, कः-सं० पु०, क्ली०
अलक्त-हिं० संज्ञा पु०
अलक्तक-हिं० संज्ञा पु०

(१) लाक्षा, लाख, लाही जो पेड़ों में लगती है। चपड़ा, आलता, लाहा, जौ, गाला-बं०। अलिता-मह०। अलतगे-कं०। (Lac, the red animal dye socalled)

पर्याय—राक्षः, याव: द्रुमालयः, रक्षा, असृक्, जतुक, यावकः, अलक्तकः, रक्तः (शब्द र०), पलङ्कषा, क्रिमिः, वरवर्णिनी।

गुण—तिक्त, उष्ण, कफ वात रोग नाशक, रुचिकारक और व्रणघ्न; रा० नि० व० १। वर्ण्य, हिम, बल्य, स्निग्ध, लघु कषैला, उष्ण नहीं, कफ, रक्त, हिक्का, कास, ज्वरनाशक, व्रण, उरःक्षत, विसर्प, कृमि, कुष्ठनाशक। अलक्तक अर्थात् लाक्षा विशेष रूप से व्रणघ्न है। भा० पू० १ भा०। लाही रजोरोधक, रक्त पित्त तथा क्षय नाशक है और प्रदर तथा रक्तातिसार को शीघ्र लाभ पहुँचाती है। अत्रि०। विस्तार हेतु देखो—लाक्षा।

(२) लाह का बना हुआ रंग जिसे स्त्रियां पैर में लगाती हैं। महावर।

अलखन्ना-अ० रतनजोत, (Alkanet) फा० इं०।

अलकस-अ० जिसका ऊपरी पलक मोटा तथा कठिन हो।

अलगण:-सं० पु० नेत्र रोग विशेष। (Aneye disease) बै० निघ०

अलगर्द:-सं० पुं० सर्प विशेष, डेढ़हा। जल टोंड़ा, जल बोंड़ा-ब०। (A serpent)

अलगर्दा-सं० स्त्री० सविष जलौका, विषाक्त जोंक (A poisonous Leech) यह महापार्श्व रोमयुक्त और कृष्णमुखी होती है। सु० सू० १३ अ०। देखो—जलायुका।

अलगर्द:-सं० पु० अलगर्द, जल का साँप। (A serpent) अमर०।

अलगी-इं० चीनी घास, अगर-अगर। (Chinigrass)

अलगी-ते० मैदालकड़ी। Litsœa sebifera, *Pers*)

अलगुराब-फा० अकाशबेल।

अलगुधी-बं० अमरबेल, अकाशबेल, (Cuscuta Reflexa)

अलगौल-अ० खारेशुतुर खारेबुज़-फा० (Alliagi Camelorum, *Tich*) फा० इं० १ भा०।

अलङ्कार सुवर्णम्-सं० क्ली० शृङ्गीकनक, हारा०।

अलङ्गी-ता० अंकोल। (Alangium Decapetalum)

अलङ्गीन-इं० अंकोलीन, ढेरा सत्व। फा० इं० १ भा०।

अलज-अ० तरुलता, इश्कपेचा (Ipomœa quamoclit) -स० पक्षी। (A bird)

अलजान-अ० क़ज़ाह। See-Qazah

अलजी-सं० स्त्री०; हिं० संज्ञा स्त्री० (१) (Carbuncle) प्रमेह पिड़िका रोग। एक प्रकार की लाल वा काली फुन्सी जो बहुत पीड़ा देती है'

लक्षण—वह पिडिका जो लाल श्वेत बारीक फोड़ों से व्याप्त एवं भयंकर होती है उसे अलजी कहते हैं। सु० नि० प्रमेह चि० ६ अ०। मा० नि०। (२) शूक दोष विशेष।

लक्षण—जो अलजी प्रमेह पिड़काओं में वर्णन हो चुकी है यदि उसके लक्षणों से युक्त फुन्सी हो तो उसे अलजी जानना चाहिये। सु० नि० शू० रो० चि० १४ अ०। (३) नेत्र सन्धि रोग विशेष।

लक्षण—नेत्रों की सफेद और काली संधियों में जो पूर्वोक्त (प्रमेह पिड़िका के) लक्षणों वाली फुन्सी उत्पन्न हो जाती है उसे 'अलजी' कहते हैं। पर्वणी और अलजी में केवल इतना ही भेद है कि पर्वणी छोटी फुन्सी है और अलजी बड़ी है। मा० नि० अथर्व०। सू० ८। २०। कां० ८।

(४) वर्त्म के बाहर की ओर कनीनिका में एक कठोर और ऊँची गांठ होती है। उसका रंग तांबे के सदृश होता और पकने पर वह राध एवं रुधिर बहाने वाली होती है, उसे अलजी कहते हैं यह बार-बार फूल जाती है। वा० सं० अ० ८।

(५) कनीन के बीच में वेदना, तोद और दाहयुक्त जो सूजन होती है उसको 'अलजी' कहते हैं। वा० सं० अ० १०।

(६) वाग्भट्ट के अनुसार इसके निम्न लक्षण हैं—अलजी नाम की पिटिका उत्पन्न होते समय त्वचा में जलन पैदा करती है। ये अत्यन्त कष्ट देती और फैलती हुई चली जाती है। इनका वर्ण काला वा लाल होता है और इनमें तृषा, स्फोट दाह, मोह और ज्वर ये उपद्रव होते हैं। वा० नि० १० अ०।

अलञ्जु-अ० इसके स्वरूप में मतभेद है।

अलञ्जर:-सं० पु० बहु जलधर—मृण्मयपात्र। जाला-बं०। सुराही-हिं०। संस्कृत पर्याय—अलिञ्जरः, माणिक। अ० टी० भ०।

अलञ्जुर:-सं० पु० मिट्टी की सुराही। (Jar)

अलत्-अ० काली तुलसी (Ocimum gratissimum)

अलत-अ० जिसके दाँत कीड़ों ने खाये हों पर दन्तमूल अवशेष रह गये हों।

अलत माकुन-यु० जाबिन्नो। Maee (Myristica fragrans, *Houtt* Flower of)

अलता / आलता -हिं० पु०, बं० आलता, लाख का रंग,

महावर। (Cotton strongly impregnated witc the dye of lac ready to be used for dyeing etc)

अलताई का रस-हिं० / अलया को रस-जय० } महावर, अलता का रस

See-alata

अलतून-तु० शेर का नाम, सिंह। (A lion)

अलन्नता- / अलन्नदा- } हिं० स्त्री० नीमच्छद, इन्द्रवल्ली-सं०।

एक वृक्ष है जिसकी शाखाओं पर लघु श्यामवर्ण के कंटक लगे होते हैं। पत्र मोतिया पत्र सदृश किन्तु उनसे लघु तथा मृदु और फल फालसा के बराबर होते हैं। अपक्वावस्था में हरितवर्ण और अम्ल स्वादयुक्त, किन्तु पकने पर रक्ताभायुक्त श्यामवर्ण के और खटमिट्ठे हो जाते हैं। इनके भीतर त्रिकोणाकार बीज होते हैं, जड़ टेढ़ी होती है।

अलफ़-अ० अअ्लाफ़ (ब० ब०) चारा, पशुओं का चारा। (Fodder)

अलफ़क दाग-अ० फा० जुफरह। एक घास है। (A grass)

अलफ़क हिन्दी-अ० वाच (एक सुगन्धित तृण है। इसके सम्बन्ध में और बातें नहीं मालूम हो सकीं)।

अलफ़ गोरखर-अ० फ़ा० इज़ख़िर। रोहिष तृण। (Andropogon schæranthus)

अलफजन-हिं० धारो, उस्तो खुद्दूस (Lavenhula stoechas) इं० मे० मे०।

अलफ़ मुहलिक-अ० कुटकी, कटुकी। (Helleborus)

अलफ़ शीरदार-फ़ा० भेड़, मेष। (A sheep)

अलफ़ हिन्दी-यु० स्कूरदियून, जंगली लहसन। (Wild garlic)

अलफ्फ-अ० वह जो स्पष्ट भाषण न कर सके।

अलब-अ० एक जंगली कण्टकमय वृक्ष है यह निपाक्र होता है।

अलबतून-आर्वतनी, मरोड़फली, या मरोड़सींग। (Helicteres isora)

अलबदा-अण्ड० मेलोसिया वेल्युटीना। (Melochia velutina' *Beddome*) इसके तन्तु व्यवहार में आते हैं। मे० मो०।

अलबरून-यु० सुमाक, प्रसिद्ध है (Sumsc)

अलबाइ-यु० खित्मी' प्रसिद्ध है। See-Khitmi

अलबानीस-यु० चौलाई का साग। (Amaranth)

अलबोरस-मिश्र० कबूतरके बराबर श्वेत रङ्ग का एक पक्षी है जो मत्स्य का आहार करता है।

अलब्नी-यु० (१) नान्ख़ाह, अजबाइन (Ptychotis ajowan। (२) जङ्गली गाजर। (३) एक और बूटी है जो गाजर के समान होती है।

अलब्यूमेन-इं० अण्डश्वेतक, अण्डलाल। (The white of aneggg)

अलमक-तु० मज्जा वा भेजा (मख़) जो अस्थि या शिर में होता है।

अलमर-हिं० संज्ञा पु० [देश०] एक प्रकार का पौधा।

अलमरम्-ता०, कना० वट' बर्गद, बड़। (Ficus bengalensis) इं० मे० मे०।

अलमास-हिं० संज्ञा पु० [फा०] हीरा (Diamond)

अलमिराव- गोआ० / अलमिरास- ,, } पथरी बम्ब०। (Launæa Pinnatifida) इं० मे० मे०।

अलमीकह्-फ्रा० मस्तगी (Anisomeles Malabarica) इं० मे० मे०।

अलमुल फुवाद- / वजउल फुवाद- } अ० (१) हृच्छूल, हृद्वेदना हृदय की पीड़ा दर्द दिल, दिल का दर्द। (२) आमाशय द्वार शूल, कोढ़ी का दर्द, कार्डिऐल्जिया (Cardialgia)-इं०।

नोट—फुवाद का शाब्दिक अर्थ 'हृदय' है। इस कारण वजउल्फुवाद का अर्थ वजउल्क़ल्ब

या हर्देदिल अर्थात् हृच्छूल हुआ क्रम मिश्रदह् अर्थात् आमाशयिक द्वार को भी हृदय के समीप होने के कारण अलम् फुवाद कहते हैं।

बज्उल् कल्ब तथा बज्उल् फुवाद का भेद—बज्उल्क़ल्ब (हृच्छूल) में एकाएक हृदय में तीव्र वेदना का उदय होता है, जिसकी टीसें बाम बस्ति की ओर जाती है। रोगी का रङ्ग फक हो जाता है हाथ पाँव शीतल हो जाते हैं। कभी साथ ही वमन भी हो जाता है और रोगी को मृत्यु का भय होता है किसी किसी अर्वाचीन मिश्रदेशीय वैद्यक ग्रन्थों में बज्उलक़ल्ब को जुबहह् सदरियह् तथा किसी किसीने अलम् फुवादी लिखा है।

आंग्ल भाषा में बज्उल् कल्ब को अर्जाइना पेक्टोरिस (Argina pectoris) कहते हैं और जुबहह् सदरियह् इसका ठीक पर्याय वाची शब्द है।

बज्उल फुवाद—(आमाशयद्वारशूल)—तिब्बी ग्रन्थों यथा कानून व कबीर आजम प्रभृति में बज़्उल फुवाद के सम्बन्ध में लिखा है कि वह एक तीव्र वेदना है जो आमाशयिक द्वार पर प्रगट होती है इसमें रोगीको कठिन अस्थिरता व व्यग्रता होती है, हस्तपाद शीतल हो जाते हैं चैतन्यता का सर्वथा लोप होता है और बहुधा यह शीघ्र मृत्यु उपस्थित कर देती है, यह एक अत्यन्त कठोर व्याधि है।

डॉक्टरी ग्रन्थों में—उक्त रोग के निम्नोल्लिखित लक्षण लिखे हैं यथा—आमाशयिक द्वार पर रुक रुक कर शूल चला करता है। इस का दौरा प्रायः रात के समय हुआ करता है। साधारणतः खाली पेट में वेदना हुआ करती और आहार ग्रहण करने पर वह कम हो जाती है परन्तु कभी इसके विपरीत होता है। उदराध्मान आटोप तथा दाह होता है। डकारें आती हैं जी मचलता है और प्रायः वमन हो जाता है। अर्वाचीन मिश्रदेशीय चिकित्सक इस रोग को हर्कतुल् कल्ब लिखते हैं जिसका सही अंग्रेजी पर्याय हार्ट बर्न (Heartburn) है। और जिसको उर्दू में कलेजा जलना तथा हिन्दी में हृदाह कहते हैं। अंग्रेजी (आंग्ल भाषा) में इसे कार्डिएल्जिया (Cardialgia) भी कहते हैं। जो अपने अर्थ के अनुसार बज्उल फुवाद का बिलकुल सही पर्याय है।

बज्उलमिअ्दह् (आमाशय शूल)—

इसमें आमाशयिक स्थलपर कठिन वेदना होती है जिसकी टीसें वाम स्कन्ध पर्यन्त जाती है वेदनाधिक्य के कारण रोगी बेचैन हो जाता है और जलशून्य मत्स्यवत् लोटता है तथा आमाशय के स्थान पर दबाता है।

सूचना—तिब्बी ग्रन्थों में बज्उलफुवाद के जो लक्षण लिखे हैं वे वस्तुतः बज्उलक़ल्ब के लक्षण हैं किन्तु बज्उलमिअदह (आमाशयशूल) के लक्षण भी इसके बहुत समान होते हैं। इस लिये रोग विनिश्चय में दिक्कत होती है परन्तु बज्उलमिदह में तीव्रता अचेतता नहीं होती और न तात्कालिक प्राणनाश का भय होता है।

अलमूल—सं० गावजुवाँ बम्ब०।

अलमोस:—सं० पु० मत्स्य भेद (A sort of fish) बै० निघ०।

अलमोसा—हिं० अ (इ) मली। (Tamarindus Indicus)

अलम्—अव्य [सं०] यथेष्ट। पर्याप्त। पूर्ण। काफी (Enough sufficient)

अलम—फा० (१) अदरख, आदी, (Zingiber officinalis) देखो—आर्द्रक। (२) कंगुनी चीना। (Panicum verticillatum)

अलम्—रसा० हड़ताल, हरिताल। (Yellow orpiment)

अलम—मल० कुम्बी सं० वं० हिं० वकुम्भ ते०। (Careya arborea) इं० मे० मे०।

अलम्— } (ए० व०) आलाम (ब० व०)। रंज
अलम— } दुखः, कष्ट, वेदना, व्यथा, पीड़ा। पेन (Pain) एक (Ache) इं०।

हकीम जालीनूस के वचनानुसार मनुष्य का प्रकृतावस्था से अप्रकृतावस्था की ओर चला जाना

"अलम., कहलाता है फिर चाहे उसे उक्त अवस्था का बोध या ज्ञान हो अथवा न हो यथा—व्यथित व अचेत होना किन्तु शेख का वचन है कि विरुद्ध वस्तु का बोध होना ही अलम् कहलाता है यथा—किसी बुरे समाचार के सुनने से अथवा किसी तिक्त या स्वाद रहित वस्तु को चखने से कष्ट प्रतीत होता है अस्तु दोनों परिभाषाओं के पारिस्परिक भेद का परिणाम यह है कि जालीनूस अचेत व मूर्च्छित व्यक्ति को भी दुखान्वित "मुब्तलाए अलम्,, कहता है किन्तु शेख चूँकि 'अलम्" की परिभाषा में बोध व ज्ञान की सीमा निर्धारित करतेहैं। अतः अचेत व मूर्च्छित व्यक्ति को दुखान्वित नहीं कहते। वास्तवमें यदि ध्यान पूर्वक देखा जाए तो दुख वही है जिसका बोध हो। अस्तु शेख की उक्त परिभाषा अधिक सही और अनुमेय प्रतीत होती है।

नोट—प्राचीन फारसी व अरबी तिब्बी ग्रन्थों में व्यथा के लिये वज्अ शब्द व्यवहृत हुआ है किन्तु अर्वाचीन मिश्रदेशीय हकीम अब वज्अ (वेदना) के लिये प्रायः अलम् शब्द को व्यवहार में लाते हैं अस्तु निम्न शब्द उन्ही के ग्रन्थों से उद्धृत किये गये हैं।

अलम् और वज्अ का भेद—

उल्लामह् कुर्शी के वचनानुसार जिस दर्द का बोध विशेष स्पर्श शक्ति द्वारा हो उसे वज्अ और जिसका बोध सामान्य अर्थात् सार्वांगिक या सामूहिक बोध शक्ति द्वारा हो उसको अलम् नाम से अभिहित करते हैं। अस्तु वज्अ विशेष है और अलम् सामान्य।

अलम् अज्म—
वज्अ् अज्म— }
—अ० अस्थि वेदना, हड्डी का दर्द। ऑस्टिओडीनिया (Osteodynia)—इं०।

अलम् अजुद्—अ० बाजू की पीड़ा, भुज वेदना। ब्रैकिऐल्जिया (Brachialgia)—इं०

अलम् अन्फ़—अ० नासिका की वेदना, नाक का दर्द राइनैल्जिया (Rhinalgia)—इं०।

अलम् अम्आ अ्—अ० उदर, शूल आँत वेदना आँतों का दर्द, ऐण्टरेल्जिया (Enteralgia)—इं०।

अलम् अर्वतह्—अ० बंधनी वेदना, डेसमोडीनिया (Desmodynia)—इं०।

अलम् अस्नान—अ० दन्त पीड़ा, दन्त शूल, दाँत का दर्द। ओडोण्टैल्जिया (Odontalgia)—इं०।

अलम् अस्बी—अ० नाड़ी शूल, वात वेदना, वायु का दर्द (रेंही का दर्द) न्युरेल्जिया (Neuralgia)—इं०।

अलम् उज्न—अ० कर्णशूल कान, का दर्द ओटैल्जिया (Otalgia) इयरएक (Earache)—इं०।

अलम् उज्ली—अ० माँस पीड़ा, मांशपेशी शूल, माइऐल्जिया (Myalgia)—इं०।

अलम् उस् उस्—अ० चञ्चु पीड़ा, । काक्सियोडीनिया (Cocyo dynia)—इं०।

अलम्ऐन—अ० चक्षु पीड़ा, आँख का दर्द, नेत्रशूल, ऑफ्थैल्मैल्जिया (Ophthalmalgia) ऑफ्थैल्मोडीनिया (Ophthalmodynia)—इं०।

अलम् कज़ीव—अ० शिश्नशूल, लिंग की पीड़ा फलैल्जिया (Phallalgia)—इं०।

अलम् कज़ह्हिय्यह्—अ० आँख की अंगूरी पर्दा का दर्द आयरैल्जिया (Iralgia)—इं०।

अलम्क़ तून—अ० कटिशूल, कमर का दर्द। लम्बेगो (Lumagbo)—इं०।

अलम् कदम—अ० पादशूल, पाँव का दर्द, पोडैल्जिया (Podalgia)—इं०।

अलम् क़स्स्—अ० वक्षोऽस्थि वेदना, उरोऽस्थि शूल, सीने की हड्डी का दर्द। स्टर्नेल्जिया (Sternalgia)—इं०।

अलम् कविद—अ० यकृद्वेदना, कलेजे का दर्द। हिपैटैल्जिया (Hepatalgia)—इं०।

अलम् कुल्यह्—अ० वृक्कशूल, वृक्क वेदना, गुर्दा का दर्द। नैफ्रैल्जिया (Nephralgia)—इं०।

अलम्खुस्यह–अ० अण्डशूल, मुष्क वेदना, आँडी या खुसिया का दर्द। डिडिमैल्जिया (Dedymalgia) ऑर्किऐल्जिया (Orchialgia) ओर्किओडीनिया (Orchiodynia)–इं०।

अलम् गुज़रूफ़–अ० उपास्थि शूल, कुर्री का दर्द। कॉण्डड्रैल्जिया (Chondralgia)-इं०।

अलम्गुद्दी–अ० ग्रंथिशूल, ग्रंथिस्थ वेदना, गुदूद का दर्द।

एडीनैल्जिया (Adenalgia), एडीनोडीनिया (Adenodynia)–इं०।

अलम् जन्व–अ० पार्श्वशूल, पसली का दर्द। प्लुरोडीनिया (Pleurodynia), स्टिच (Stitch)–इं०।

अलम् ज़हर–अ० पृष्ठशूल, पीठ का दर्द, नूटैल्जिया (Nutalgia)–इं०।

अलम् जिल्द–अ० त्वक्शूल, चर्म वेदना, त्वचा का दर्द। डर्माटैल्जिया (Dermatalgia)–इं०।

अलम् जौ–अ० रश्मिशूल, प्रकाशमान् या चमकदार वस्तु के देखने का दर्द। फौटैल्जिया (Photalgia)-इं०।

अलम् नुखाअ्–अ० सुषुम्ना शूल, सौषुम्नस्थ वेदना माइऐल्जिया (Myalgia)-इं०।

अलम् फ़क़रात–अ० कशेल्का शूल; काशेरुकीय वेदना स्पॉण्डिऐल्जिया (spondialgia)-इं०।

अलम् वत्न–अ० उदरशूल, पेट का दर्द। सेलिऐल्जिया (Celialgia)-इं०।

अलम् बलूऊम–अ० कंठ शूल- हलक का दर्द। फेरिंगऐल्जिया (Pharyngalgia)-इं०।

अलम्ब मुष्कक:–सं० पु० मुष्कक वृक्ष। मोषा-हिं०। घंटापारुल-बं०। (Schrebera swietenioides)

अलम्बा–सं० स्त्री० तिक्तालाबु, स्थावर विषान्तर्गत पत्रविष तितलौकी। तित्लाड-बं०। सु० कल्प० २ अ०। देखो—पत्रविषम्।

अलम्बुजा–सं० स्त्री० गोरक्षमुण्डी, गोरख मुण्डी। (Phœranthus Indicus, *Linn*) बं० नि०।

अलम्बुदम–सं० क्ली० बालक, ह्रीबेर (Pavonia odorata)। बाला–बं०वै० निघ० क्षय० चि० शिवगुटी०।

अलम्बुष:–सं० पु० (१) वान्ति रोग, वमन, उलटी छर्दि के। (Vomiting) मे० पचतुष्क। (२) भूकदम्ब। कुकशिया गाछ-बं०। र० मा०। रत्ना०।

अलम्बुषा,–सा–सं० स्त्री० (१) लज्जालुका भेद। (A sort of sensitive plant)। फुल शोला-ब०। लज्जावती, छुईमुई, लजालू, पौधा।

पर्याय—खरत्वक्, मेद;- गला।

गुण—मधुर; लघु, कृमि तथा कफ पित्त नाश करने वाली है। भां० पू० १ भा० गु० व०। अलम्बुषा स्वरस को २ पल की मात्रा में पीने से अपची, गण्डमाला तथा कामला नष्ट होता है। (२) भूकदम्ब। कुकशिमे-व० See-bhukadamba (३) महा श्रावणी, गोरक्षमुण्डी गोरखमुंडी, मुण्डी। बड़ थुलकुड़ि-बं०। (Sphœranthus Indica) रा० नि० व० ५। वै० निघ० २ भा० वा० व्या० षड् शीति-गुग्गुल और व्यूषणादि लौह। (४) लौह मल, मण्डूर, (Ferri peroxidum) च० द० १ भा० आमवात अलम्बुषादि चूर्ण।

अलम्बुषादिचूर्णम्–सं० क्ली० हड़ १ भा०, बहेड़ा २ भा०, आमला ३ भा०; गोरखमुण्डी १ भा०, वरुणमूल १ भा०, गिलोय १ भा०, सोंठ १ भा० इनको लेकर चूर्ण करें।

गुण—आमवात को दूर करता है।

मात्रा—१ कर्ष (२ तोला), भा० म० ख० आ० वा० ०चि।

अलम्बुषाद्यचूर्णम्–सं० क्ली० (१) अलम्बुषा (पानी का लजालू) १ भाग, गोखरु २ भाग, त्रिफला ३ भाग, सोंठ ४ भाग, गिलोय ५ भाग, निसोथ सर्व तुल्य ग्रहण कर उत्तम चूर्ण प्रस्तुत करें।

मात्रा—४–१० मा०।

अनुपान—दही का पानी, तक्र, मद्य, काँजी, उष्ण जल।

गुण—आमवात, रक्तपित्त, त्रिकवेदना, जानुगत पित्त, उरुगत वात, सन्धिवात, ज्वर, अरोचक इसके सेवन से दूर होते हैं। वं० से० सं० आमवा० चि०।

(२) अलम्बुषा, गोखरू, गिलोय, बिधारा, पीपल, निसोथ, नागरमोथा, बरना की छाल, पुनर्नवा, त्रिफला, सोंठ तुल्य भाग, इनका चूर्ण कर सेवन करने से उक्त व्याधियाँ दूर होती हैं।

मात्रा—४-१० मा०। अनुपान—पूर्वोक्त। गुण—पूर्वोक्त बंग० से० सं० आमवात चि०।

अलम्बोद्धस्तनी–सं० त्रि० जिसके स्तन न लम्बे और न ऊर्ध्वमुखी अर्थात् ऊँचे हों। सु० शा० १० अ०।

अलम्बौष्ठी–सं०त्रि० जिसके ओष्ठ लम्बे न हों। सु० शा० १० अ०।

अलम् मज़री वौल–अ० मूत्रप्रणालीस्थ वेदना, मूत्र नाली का दर्द। दर्देनाइलह-फा०। यूरेथ्रैल्जिया (Urethralgia) इं०।

अलम् मफ़ासल–अ० संधिशूल, जोड़ का दर्द। आर्थ्रैल्जिया (Arthralgia) इं०।

अलम मबेज–अ० डिम्बाशयिक शूल, डिम्बाशय सम्बन्धी पीड़ा। ओवरैल्जिया (Ovaralgia) इं०।

अलम् मरी–अ० अन्नप्रणालीस्थ वेदना, आहार पथ का दर्द। ईसॉफैगैल्जिया (Œsophagalgia) इं०।

अलम् मसानह–अ० वस्ति शूल, मूत्राशयिक वेदना सिस्टैल्जिया (Cystalgia)-इं०।

अलम् मिअ ह्-अ० आमाशय शूल, आमाशयिक वेदना, मेदे का दर्द। गैस्ट्रैल्जिया (Gastralgia)-इं०।

अलम् रहिम–अ० जरायुस्थ पीड़ा, गर्भाशयिक वेदना। मेट्रैल्जिया (Metralgia), हिस्टिरैल्जिया (Hysteralgia)-इं०।

अलम् रास–अ० शिराशूल, शिरोव्यथा, शिर का दर्द। सेफेलैल्जिया (Cephalalgia), हेडेक (Headache)-इं०।

अलम् रुक्वह–अ० घुटने का दर्द। गोनैल्जिया (Gonalgia)-इं०।

अलम् लिस्सान–अ० जिह्वाशूल, जबान का दर्द। ग्लोसैल्जिया (Glossalgia)-इं०।

अलम् वजह–अ० मुखमंडलीय वेदना, चेहरे का दर्द। प्रोसोपैल्जिया (Prosopalgia) इं०।

अलम् वरिक–अ० नितम्ब शूल, चूतड़ का दर्द। इस्कऐल्जिया (Ischialgia) इं०।

अलम् शरासोफ–अ० आमाशयिक द्वार के आसपास की पीड़ा। एपिगैस्ट्रैल्जिया (Epigastralgia)-इं०।

अलम् शर्ज–अ० गुदशूल, गुदा की वेदना। रेक्टैल्जिया (Rectalgia)-इं०।

अलम् सदी–अ० चूचुक शूल। दर्दे पिस्तान चूचीका दर्द-उ०। मस्टैल्जिया (Mastalgia)-इं०।

अलम् हालिब–अ० गविन्यु शूल। दर्दे हालिब-फा० यूरेटरैल्जिया (Ureteralgia)-इं०।

अलयाऽ–यू०, रु० सिब्र मुसब्बर, कुमारीसारोऋवा, (Aloes)

अलयून–यु० शेर, सिंह। (Alion)

अलयूह–यू० जैतून। (Olive)

अलरा–ता०, मल० कबीर, कनेर, । (Nerium odorum)-इं० मे० मे०।

अलर्कः-सं० पु० अर्क, सफेद, मदार, मन्दार; श्वेत आकन्द-वं०। (Calotropis gigantea or procera, Aark of whiteflowers) भा० पू० १ भा०, मे० कत्रिक०। मन्दार हेमा० अलर्कादि व०। मन्दारार्क। रा० नि० व० १०। "अलर्को" मन्दारार्क, यस्य क्षीरं न विनश्यति" सु० सू० ३८ अ० अर्कादि, ड०। श्वेत पुष्पीय मन्दार। वा० सू० १५ अ० अर्कादिव, अरुणः। "अर्कालर्कौ नागदन्ती विशल्या।" योगोन्मादित कुक्कुर। मे० कत्रिक०। (२) कुक्कुर ज्वर। (Hydrophobia) हा० अत्रि० २ स्था० २ अ०। (३) पागल कुत्ता।

अलर्क–सं० सोलेनम् ट्रिलोबेटम् (Solanum trilobatum *Linn*) ले०। टूड बुहे-बा०। मूँ-डल-मुस्तह ऊचिन्त-कुर-ते०। मोट रिंगणी

मूल-मह०। नाभि-अङ्कुरी-उद्दि०। इं० मे० प्लां०।

वार्त्ताकी वर्ग

(*N. O. Solanaceæ*)

उत्पत्तिस्थान—पश्चिमी डेकन प्रायद्वीप कोंकण से दक्षिण की ओर।

प्रयोगांश—मूल, पुष्प, पत्र तथा फल (Berries) और कोमल अंकुर। यह एक प्रकार की बेल है।

प्रभाव तथा उपयोग—इसके पत्र तथा मूल स्वाद में कटु होते हैं और क्षय रोगियों में इन्हें अवलेह क्वाथ वा चूर्ण रूप में वर्तते हैं अवलेह चाय के चम्मच से १॥ चम्मच भर दिन में दो बार देते हैं। कास में पुष्प तथा फल (Berries) उपयुक्त होते हैं ऐन्सली।

यह क्षुद्र कण्टकारी की प्रतिनिधि रूप से प्रयुक्त होता है। डाइमाक।

अलर्नैन्थरा सिसीलिस-ले० मोकनु-वन्ना-सिंगा०।

अलल बछेड़ा-हिं० संज्ञा पु० [हिं० अल्हड़ बछेड़ा] घोड़े का जवान बच्चा।

अललें-मैसू०
अलले कायि-कना० } हड़, पीली हड़; हरीतकी। (Terminalia chebula, *Retz*) स० फा० इं०।

अललेपिन्द-कना० बाल हड़, जंगली हड़। (The young dried fruits of Terminalia chebula, *Retz*) स० फा० इं०।

अललें हुव्वु-कना० हड़ पुष्प, हड़े का फूल, हरीतकी पुष्पम्-सं०। (The gall-like excrescenses found on the leaves & young branches of T. Chebula)

अललाँ-हिं० संज्ञा पु० [?] घोड़ा-डिं०।

अलवणा-स० स्त्री० (१) ज्योतिष्मती। माल-कांगुनी-हिं०। लताफट्की-व०। (Cardiospermum halicacabum) "वर्त्तुल पक्वफलापोत तैला काकमर्दनिका" सु० सू० ३८ अर्कादिव० ड०। अलवणा अर्थात् माल-कांगुनी तीक्ष्ण, कफ, भेद तथा कृमि विनाशिनी है। अग्नि०। (२) हरीतकी हड़। (Terminalia, chebula *Retz*) मद० व० १।

अलवाँती-हिं० वि० स्त्री० [सं० बालवती] (स्त्री०) जिसे बच्चा हुआ हो, प्रसूता, जच्चा

अलवाई-हिं० वि० स्त्री० [सं० बालवती हिं० अलबाँती] (गाय वा भैंस) जिसको बच्चा जने एक वा दो महीने हुये हों। बाखरी का उलटा।

अलविन्द-सिन्ध० तेन्दु, तिन्दुस, तेनसी-उ० प० सू०। (Diospyros cordifolia)

अलश-पं० अमलतास (Cassia fistula)

अलशी यण्णे-कना० अलसी का तेल (Linseed oil) स० फा० इं०। देखो—अतसी।

अलशी-हिं०, गु० जावा, म० कों०। बं०, कना० अतसी। (Linseed)

अलशी विरई-ता० अतसी, अलसी, तीसी-हिं०। Linseed (Linum usitatissimum) इं० मे० मे०।

अलसः,-कः-सं० पु०
अलस-हिं० संज्ञा पु० } (१) पाद रोग विशेष

पाँव का एक रोग जिसमें पानी से भींगे रहने वा गन्दे कीचड़ में पड़े रहने के कारण उँगलियों के बीच का चमड़ा सड़ कर सफेद हो जाता है और उसमें खाज, दाह और चीम युक्त पीड़ा होती है। खरवात। क़ंदरो। खार। सु० नि० १३ अ०।

(२) विसूचिका की एक अवस्था है। अजीर्ण रोग का एक भेद। विषाजीर्ण, रसाजीर्ण और दोषाजीर्ण भेद से यह तीन प्रकार का होता है। शार्ङ्ग०। जो आहार ऊपर के मार्ग अर्थात् मुख द्वारा नहीं निकलता, अधोमार्ग (गुदा द्वारा भी नहीं निकलता और न पचता ही है। प्रत्युत केवल नाभि और स्तनों के मध्यवर्ती आमाशय नामक स्थान में अलसीभूत अर्थात् स्तब्ध भाव में रहता है उसे अलसक रोग कहते हैं। जैसे अनुद्यमशील मनुष्य आलसी कहलाता है। वा० सू० ८।

लक्षण—जिस रोग में कूख और पेट में अत्यन्त अफारा हो बेहोशी हो, पीड़ा युक्त शब्द करे और वायु चलने से रुक कर ऊर्द्ध गति हो, कोख के ऊपर कंठ आदि स्थानों में गमन करे, मल मूत्र और गुदा की पवन रुक जाए प्यास और डकारों से पीड़ित हो तो उसको "अलसक" कहते हैं। देखो—मन्दाग्नि क्ली० (३) क्षुद्र कुष्ट रोग भेद।

लक्षण—जिसमें अत्यन्त खुजली चले, लाली युक्त तथा छोटी फुन्सी अधिक हो उसको "अलसक" कुष्ट कहतेहैं। मा० नि०। (४) व्य लजाति ज्वर। गज वै०। (५) जिह्वा रोग। वै० निघ० (६) वृक्ष भेद। (A kind of tree)

अलस-अ० भेड़िया (A wolf)-फा० (१) गन्दुम मक्कह (मक्का का गेहूं, गेहूं के सदृश अनाज है)। (२) सुलत आत जौ, जौ विरहिना।

अलस-यु० ख़न्दरीली, कासनी भेद। (A kind of Kasani)

अलसकः-सं० पु०
अलसक-हि० संज्ञा पु० } अजीर्ण रोग का एक भेद, अजीर्ण जन्य रोग (Dyspeptic disease) देखो—अलसः।

अलसन-यु० एक वनस्पति है।

अलसनतुल् असाफ़ीर-अ० इन्द्रयव Wrightia Tinctoria' R. Br-(Seeds of)

अलसन्दह-हिं० मोठ। (Vetches, Lentils)

अलसन्दा-ते०
अलसन्दी-कना० } लोबिया। (Dolichos catiang D' sinensis) इं० मे० मे०

अलसफ़ाफ़न-(१) लिसानुल् अवल। (२) राज़ युल अवल। इसके लक्षण में मतभेद है।

अलसा-सं० स्त्री० हिं० संज्ञा स्त्री० (१) हंसपदी लता। गोधापदी (Vitis pedate) गोयाले लता-वं०। मे० सत्रिक (२) लज्जारलू लाल फूल की लज्जावन्ती।

अलसा-फा० (१) मरोड़फली, आवर्तकी। (Helicteres Isora)
(२) खित्मी (Sec-khitmi)
(३) नानूख़ाह, अजवाइन (Carum ptychotis Ajowan)

अलसी-सं० (हिं० संज्ञा) स्त्री० अतसी। तीसी हिं० वं०।

अलसी-अ० घृतकुमारी, ग्वारपाठा, घी कुवार (Aloeindica)

अलसी का तेल-हिं०, द०, तीसी का तेल। अलसी (न) तैलम्-सं०। तिसि तैल मोसिनार तैल वं०। दुह्नुल कत्तान-अ०। रोग़ने ज़गीर, रोग़ने कताँ-फा० लिन्सीड ऑइल (Linseed oil) इं० लिनिम युसिटेटिसिसम् Linum Usitatissimum Linn (oil of-) ले० अलिस बिरै-येण्णेय ता०। मदनगिञ्जल-नूने ते० चेरुचाण-वित्तिन्ते एण्णा मलया०। अलसी-यण्णे कना०। स० फा० इं०। देखो—अतसी।

अलसी विरई-ता० अलसी, तीसी, अतसी। Linseed (Linum Usitatissimum) इं० मे० मे०।

अलसेलुका-सं० स्त्री० रक्तलज्जालुका। फुल सोला वं० वै० निघ०।

अलस्तीन-यु० नमक, लवण Salt (Sodium chloride)

अलस्तून-रू० अफ्सन्तीन (Artemesia Indica, Willd)

अलहैरी-हिं० संज्ञा पु० [अ०] एक जाति का अरबी ऊंट जिसे एक ही कूबड़ होता है और जो चलने में बहुत तेज होता है।

अलाई-हिं० पु० [१] घोड़े की एक जाति।

अलाउठा-सं० क्षिप्त रोग। देखो-क्षिप्त। अथर्व। सू० ९। ३। का० ६।

अलाक़ह्-अ० (१) इच्छा लगाव। (२) वह तन्तु या सूत्र जो किसी अवयव को लटकाए या निज स्थान पर स्थिर रखे।

अलाक़तुल् बैजह्-अ० अण्डधारक रज्जु। स्पर्मेटिक कॉर्ड (Spermatic Cord)—इं०

अलाचारह्-असफहा० अक़्अक़ । See aaqaaq

अलाग़-तु० गदहा, गधा, गदभ । (Anaes)

अलाकलङ्ग-तु० तेलनी मक्खी (एक प्रसिद्ध परदारपक्षी है) (Cantheridis)

अलातम्-सं० क्ली०
अलात-हिं० संज्ञा पु० } अँगारा अङ्गारा (A, firedrand' embers) कयला-ब० । रत्ना० । (२) जलती हुई लकड़ी लुआटी ।

अलातन-यु० जावित्री । (Mace)

अलातरी-
अलाटरी- } अमरवेल अकाशवेल । (Cuscuta Reflexa)

अलाती-रू० एक वृक्ष है, जिसकी गोंद चीड़ की गोंद के समान होती है किसी २ के मतानुसार यह चीड़का एक भेद है ।

अलातीनी-रू० लबलाव इस्कपेचा, एक वेल है । (Ipomoea Quamoclit)

अलाद-यु० जैतून तेल । (Oliv oil)

अलानीतून-रू० रवासन, किसी २ के मत में एक दूसरी औषध है ।

अलावष्टर-इं० सफेद पत्थर, गोदन्ती (Calcium Sulphate) सञ्जिराहत सं० । इं० मे० मे० ।

अलाबाद-अण्ड०

अलाबु-सं० पु० यंत्र विशेष, वा० सू० अ० २६ ।

अलाबु-सं० क्ली०
अलाबुः-बू-स० स्त्री०
अलाबू-हिं० संज्ञा स्त्री० } (१) स्वनामाख्यात फल शाक लता, लौकी, मिठी तुम्बी, लौवा कद्दू हिं० । लाड गाछ वं० । दुध्यामोपला मह० । (Cucurbita lagenaria) अटी० । शब्दर० भा० पू० १ भा० द्रव्यगु० । राज० । (२) कटुतुम्बी, तितलौकी तित्लाड वं० Wild variety of legenaria vulgaris श० र० । (३) तूवाँ. (४) सर्प विष की थैली (Serpent venom sac) अथर्व० । सू० १९ । १ । का० ८ ।

अलाबुकः-सं० पु० अश्व मुखरोग इसमें मुख दुर्गन्ध तालुशोफ, तथा ग्रास ग्रहण में द्वेष प्रभृति लक्षण होते हैं (Mouthdise ase of the horse) ज० द० ।

अलाबुका-सं० स्त्री० कटु दुग्धयुक्त अलाबु तितलौकी कटुतुम्बी, भा० । See-Katu tumbi

अलाबुनी-सं० स्त्री० (१) कटु दुग्धालाबु कटुतुम्बी तितलौकी तित्लाड वं० Wild variety of legenaria vulgaris (२) मिष्ठ तुम्बीलता मीठी तुम्बी लौकी कद्दू-हिं० मिष्टलाड गाछ वं० Cucurbita lagenaria) मद० व० ७ ।

अलाबु-विधि-सं० पु० तुम्बी लगाने की विधि ।

=अलाबु सुंदृत्-सं० पु० अम्लवेतस । (Rumex vesicarius) वै० निघं० ।

अलाबू यन्त्रम् सं० क्ली० यन्त्र विशेष । तुंबी ।

लक्षण—तुम्बी यन्त्र १२ अंगुल मोटा होता है । इसका मुख गोलाकार तीन व चार अंगुल चौड़ा होता है । इसके बीच में जलती हुई बत्ती रखकर रोग की जगह लगा देने से दूषित श्लेष्मा और रक्त खिंच आता है । अत्रि० । वा० सू० अ० २३ ।

अलाम-अ० मेंहदी (हिना) Myrtus Communis.

अलामत-अ० (हिं० संज्ञा पु०) (ए० व०), अलामत (ब० व०) इसका शाब्दिक अर्थ लक्षण, चिन्ह, लिंग, आदि है (विस्तार के लिये देखो—लक्षण) । तिब की परिभाषा में वह वस्तु जिसके द्वारा किसी शारीरिक दशा अर्थात स्वास्थ्य वा रोग में किसी अवस्था पर दलील पकड़ी जाये अर्थात जिसके द्वारा स्वास्थ्य वा रोग लक्षित हो । सिम्प्टम् (Symptom) साइन, [Sign), इण्डिकेशन (Indication]-इं० ।

तिब्बी नोट-अलामत अर्थात् लक्षणसे कभी भूतकालीन (भूतकाल में उपस्थित हुई) दशा का पता चलता है, जैसे—नदावतुल् बदन (शरीर की तरी) तथा नाड़ी की निर्बलता एवं शिथि-

सता से वैद्य को इस बात का बोध होता है कि रोगी को इससे पूर्व स्वेद आ चुका है। ऐसी अलामत या लक्षण को अलामत नुज़क्किरह अर्थात् किसी गत घटना की द्योतक अलामत कहा जाता है। इससे वैद्य को बहुत लाभ होता है अर्थात उक्त अलामत के द्वारा रोगी के गत शारीरावस्था के बतलाने से उसकी श्रेष्ठ विद्वत्ता एवम् क्रिया कुशलता लक्षित होती है। (२) कभी अलामत से वर्तमान कालीन अवस्था का पता चलता है। जैसे—उष्ण स्पर्श द्वारा ज्वर की उपस्थिति का पता चलता है। ऐसे लक्षण को तिब में "दाल्ल" या 'अलामत दाल्लह्' कहते हैं। और चूंकि स्पर्शोष्मा रोगी की वर्तमान ज्वरावस्था का पता देकर उसका ध्यान चिकित्सा की ओर आकर्षित करती है, इसलिये ऐसे लक्षण से अधिकतर रोगी लाभ उठाता है। (३) और कभी अलामत भविष्यकालीन घटना की परिचायक होतीहै। उदाहरणतः—निम्न ओष्ठका स्पंदित होना इस बात का सूचक है कि वमन होगा ऐसे लक्षण को तिब में तक़द्दुमुल्मअ्-रफ़ह् या साबिकुल्इल्म अर्थात् पूर्वरूप के नाम से अभिहित करते हैं ऐसे लक्षण से चिकित्सक व रोगी दोनों को लाभ होता है। वैद्य का ऐसे लक्षण को देखकर भविष्य में आने वाली घटना से रोगों को सूचित करना उसके हृदय में वैद्यकी उच्चकोटि की योग्यता व चिकित्सा-कौशल्य स्थान पाता है। और स्वयं रोगी चूंकि वैद्य में आदेशानुसार उक्त रोग की चिकित्सा व उपाय से परिचित हो जाता है। इस कारण रोगी भी ऐसे लक्षण से लाभान्वित होता है।

अलामत और अज्ज का भेद—(देखो अ्ज़्ज़)

अलामत और दलील का भेद—अलामत अर्थात लक्षण कभी मालहुल् अलामत (जिसक यह लक्षण है) के साथ पाया जाता है और कभी नहीं इसके विरुद्ध दलील (लक्षण) अपने मदलूल (लक्ष्य) के साथ अवश्य हुआ करता है। इनमें से प्रथम का उदाहरण मेघ व वृष्टि है। यह बात स्पष्ट है कि मेघ कभी बिना वृष्टि के भी होता है। और द्वितीय का उदाहरण अग्नि व धूम है। क्योंकि धूम सदा अग्निके साथ पाया जाताहै। तिबके दृष्टिकोण से दलील तथा अलामत में मुख्यभेद यह है कि दलील केवल रोग के लक्षण के लिये प्रयोग में आता है और अलामत साधारण है जो रोग एवं स्वास्थ्य प्रति दो लक्षणों के लिये बोली जाती है।

डॉक्टरी नोट—सिम्प्टम् का शाब्दिक अर्थ "परस्पर घटित होना" है। डाक्टरी परिभाषा में उस परिवर्तनके लिये बोला जाता है जो रोग क्रम में उपस्थित होता है जिससे उक्त रोग के विद्यमान होने की सूचना मिलती है। इस विचार,से सिम्प्टम् अलामत का पर्याय है। परन्तु अर्वाचीन मिश्र देशीय वैद्य अलामत के स्थान में इसका पर्याय 'अ्ज़्ज़' निर्धारित करते हैं।

साइन उस अलामत का नाम है जो केवल रोग में प्रगट होता है और सिम्प्टम् रोग व स्वास्थ्य दोनों लक्षणों के लिये बोला जाता है। अस्तु, जो अन्तर दलील व अलामत में वर्णित हुआ वही भेद सिम्पटम व साइन में हैं। इण्डिकेशन भी साइन और दलील का पर्याय है।

अलामत अर्ज़िय्यह्—अ० वह लक्षण जो किसी अवयव के अवारिज अर्थात उसकी सुन्दरता व कुरूपता से सम्बन्ध रखता हो उसके शरीर जौहर या उसकी क्रिया से सम्बन्ध न रखता हो देखो अलामत जौहरिय्यह।

अलामत आमह्—
अलामत मिज़ाजिय्यह्—

—अ० सामान्य लक्षण, मिज़ाजी अलामत, वह लक्षण जिसका सम्बन्ध समग्र शरीर से हो या जो समग्र शरीर में प्रगट हो। जैसे ज्वर में सम्पूर्ण देह का गर्म हो जाना।

अलामत जौहरिय्यह्—अ० (१) वह लक्षण जो अवयव के शरीर व सत्ता से अर्थात उनकी सृष्टि व उत्पत्ति से सम्बन्ध रखता है। (२)

जो लक्षण अवयव के अवारिज़ (कुरूपता वा सौन्दर्य) से सम्बन्ध रखते हों उन्हें अलामात अर्ज़ियह कहते हैं और (३) उन लक्षणों को जो अवयवों के कार्य से सम्बन्ध रखते हों उन्हें अलामात तमामिय्यह" कहते हैं।

अलामत तमामियह–अ० वह लक्षण जो किसी अवयव क्रिया से सम्बन्ध रखता हो, उसके शरीर वा रूप से उसका कोई भी सम्बन्ध न हो देखो—अलामत जौहरिय्यह।

अलामत मक़ामिय्यह–अ० स्थानीय लक्षण, वह लक्षण जिसका सम्बन्ध शरीर के किसी विशेष भाग से हो जैसे—स्थानीय शोथ। लोकल सिम्प्टम् (Local Symptom)-इं०।

अलामत मबय्यिनह–
दलील–
इलालत–

अ० वह लक्षण जिससे वैद्य को रोग का पता लगे। उदाहरणतः नाड़ी व कारोरा (मूत्र) प्रभृति। इण्डिकेशन (Indication ,, साइन (*Sign*)-इं०।

अलामत मुख्तलितह–अलामत मुरक्कबह–अ०

अलामत मुख्तलितह–अलामत मुरक्कबह–अ०। संयुक्त या मिश्रित लक्षण। वह लक्षण जो अन्य लक्षणों से संयुक्त या मिश्रित होकर व्यक्त होता है अर्थात् एक रोग के विभिन्न लक्षणों का परस्पर मिलकर प्रगट होना।

उदाहरणतः—ज्वर में शिरःशूल, इन्द्रियों का टूटना व मतली प्रभृति का परस्पर मिलकर प्रदर्शित होना। कम्प्लेक्स सिम्प्टम् (Complex symptom), सिण्ड्रोम (Syndrome)–इं०।

अलामत मुज़क्किरह–अ० स्मरण कराने वाला लक्षण, स्मारक चिह्न, वह लक्षण जो किसी रोग द्वारा उपस्थित निर्बलता में व्यक्त होकर उस गत रोग को स्मरण कराए, परन्तु उस रोग से उसका कोई विशेष सम्बन्ध न हो। कन्सीक्युटिव सिम्प्टम (Consecutive symptom)-इं०

अलामत मुन्अकिसह–अ० परावर्तित लक्षण, वह लक्षण जो रोग से दूर किसी अवयव में प्रगट हो।

उदाहरण—वृक्कशूल में वमन होना या कतिपय मस्तिष्क रोगों और गर्भावस्था में वान्ति व उबकाई का आना। रिफ्लेक्स सिम्प्टम (Reflex symptom)

अलामत मुन्ज़िरह–अ० भयभीत करने वाला लक्षण पूर्वरूप, वह लक्षण जो किसी रोग से पूर्व उसके उत्पन्न होने का भय दिलाए।

उदाहरणतः—अपस्मार के दौरा से प्रथम देह के किसी भाग में सुरसुराहट प्रतीत होना भृगी होने का भय दिखाता है और वृद्धावस्था में शिर चकराना सिक्तह (Aqoplexy) के होने का भय उत्पन्न करता है। प्रोमौनिटरी सिम्प्टम (Premonitary symptom), प्रोड्रोम (Prodrome)इं०।

अलामत मुश्तर्कह–अ० सम्मिलित लक्षण, वह लक्षण जो कतिपय विभिन्न रोगों में सम्मिलित रूप से पाया जाए।

उदाहरण—वमन एक ऐसा लक्षण है जो आमाशय, मस्तिष्क वृक्क तथा गर्भाशय प्रभृति रोगों में सम्मिलित रूप से प्रगट होता है। इक्विवोकल सिम्प्टम (Equivocal symptom)-इं०।

अलामत मुश्तक़ीमह–अ० अजामत जातियह। जातीय लक्षण, वह लक्षण जो बिना किसी लगाव के स्वयं रोग से उत्पन्न हो। जैसे शोथ में वेदना एवं दाह। डाइरेक्ट सिम्प्टम (Direct symptom)इडिओपैथिक सिम्प्टम (Idiopathic symptom)–इं०।

अलामत शिर्किय्यह–अ० अलामत अर्ज़िय्यह, सानुषंगिक लक्षण, अंगीं अलामत जो विकारी अवयव के सिवा किसी अन्य अवयव में, केवल पारस्परिक सम्बन्ध के कारण प्रगट हो। जैसे हस्तपादस्थ क्षत प्रभृति में कक्ष या चट्ढे की ग्रन्थियों का शोथयुक्त हो जाना या वृक्क शोथ वा जरायु शोथ में वमन होना। सिम्पैथेटिक

सिम्प्टम (Sympathatic symptom)-इं०।

अलामत हालिय्यह्-अ० वह लक्षण जो अवयव की किसी विशेष अवस्था को प्रगट करे। स्टेटिक सिम्पटम् (Static sympt om), पैसिव सिम्पटम (Passive symptom)-इं०।

अलामलक-तिनकाविन व तवरिस्तानी अंगूर वृक्षके समान एक लता है जिसको 'फाशरा' या "शिवलिङ्गी" कहते हैं। (Bryonia)

अलामात-अ० (ब० व०) देखो अलामत (Symptoms)।

अलार-हिं० संज्ञा पु० [सं०] कपाट, किवाड़। [सं० अलात] अलाव। आग का ढेर। आँवाँ। भट्टी।

अलाव-हिं० संज्ञा पु० [सं० अलात=अंगार] आग का ढेर। धूनी। ज़खीरा। कौड़ा। बॉनफायर (Boufire)-इं०।

अलाबु-गु० आलू०। (Potato)

अलाबुद्दीन-अबुलहसन बिन हाजिमुल् मुल्कीयुल् क़र्शी। See-Qarsi

अलासः-सं० पु० जिह्वा स्फोट। जिह्वागत मुख रोग, एक रोग जिसमें जीभ के नीचे का भाग सूजकर पक जाता है और दांड़ तन जाती है।

लक्षण—जिह्वा के नीचे जो प्रगाढ़ शोथ हो तो उसे कफ और रक्त की मूर्ति अलास नामक जिह्वा रोग कहते हैं। यह रोग बढ़कर जिह्वा को स्तंभित कर देता है और जड़ में से जिह्वा पाक को प्राप्त हो जाती है। यह कफ दोष के कारण होता है, उक्त कंठक रोग से जिह्वा भारी, मोटी और सेमल के काँटों जैसे मांसांकुरों से व्याप्त होती है, सु० नि० १६ अ०।

अलासफ़ास-यु० लिसानुल् अवल, वृक्ष और घास के ऐक बीच बूटी हैं।

अलासि-बम्ब० अलसी, तीसी। Linseed (Linum usitatissimum)

अलिः-सं० पु०
अलि-हिं० संज्ञा पु० } [स्त्री० अलिनी] (१) भ्रमर, भँवरा। लार्ज ब्लैक बी (Large black bee)-इं०। रत्ना०। (२) मद्य, मदिरा। स्पिरिचुअस लाइकर (Spirtuous li quor)-इं०। मे० लद्विक। (३) वृश्चिक, बिच्छू। स्कॉर्पिअन (A scorpion)-इं०। हारा०। (४) काक, कौआ को (A crow) इ०। (५) कोकिल, कोयल। इण्डियन कुक्कू An andin cuckoo (Cuculus Indicus) श० र०। (६) सखी (A woman's female friend or companion)। (७) पंक्ति (A line, a row)। (८) कुत्ता (A dog)। (९) देखो—अली।

अलिआर-सं० जखमी, बन्दरी-बम्ब०। मद०। (Dodonaea viscosa) इं० मे० मे०।

अलिंजर-हिं० संज्ञा पु० देखो—अलिञ्जरम्।

अलिकः-सं० पु० क्ली०
अलिक-हिं० संज्ञा पु० } (१) कपोल, गण्डस्थल, गाल। चीक (Cheek)-इं०। रा० नि० व० १८। (२) ललाट, कपाल, मस्तक, पेशानी। फारहेड (Forehead)-इं०। रास्ना०। (३) देखो—अलि।

अलिक-अ० प्रत्येक गोंद जो चबाई जा सके। (Resin) देखो—अलक।

अलिका-सं० स्त्री० पाटली (Bignonia Suaveolens)

अलिक मत्स्यः-सं० पु० (१) अंगारा (Embers) (२) भिन्न तिल। (३) तैल भ्रष्ट मांस, तेल में भूना हुआ मांस। (४) पिष्टक विशेष।

अलिकुल् अम्बात-अ० बतम या उसके समान एक वृक्ष की गोंद है।

अलिकुल् प्रिया-सं० स्त्री० काष्ठ शेवती, काठ गुलाब काठ गोलाप-बं०। (Wild rose) बे० निघ०।

अलि (इल) कुल् बुतम-अ० बुतम का गोंद, इलकुल अम्बात। इसकी शुष्क गोंद को कलकून कहते हैं।

प्रकृति-कत्ता द्वितीय के अन्तमें उष्ण व रुक्ष।

स्वरूप—सुर्ख स्याह रंग का होता है।

हानिकारक—उष्ण प्रकृति व वात तन्तुओं को। दर्पघ्न—सिकञ्जबीन व शुद्ध शहद। प्रतिनिधि—मस्तगी, रातीनज उचित मात्रा में। मुख्य गुण—आमाशय को बलप्रद, मूत्रल व कासघ्न। बु० मु०।

गुण, वर्म, प्रयोग—दोषों को परिपक्व करता एवं उनके कवाम (चाशनी को) साम्यावस्था पर लाता, शोथ एवं वायु का लयकर्त्ता तथा कफज कास को लाभप्रद है। शुष्क एवं तर रुद्दू को लाभ पहुंचाता और प्रकृति को मृदु कर्त्ता है। निर्विषैला। म० मु०।

विलायक, द्रावक, पाचन शक्ति को बलप्रदान कर्त्ता, मूत्र प्रवर्त्तक व शोधक और समग्र यूनानी हकीमों के निवठ मस्तगी से श्रेष्ठतर है। इसका खाना मस्तिष्क की आर्द्रता एवं श्लेष्मा का अभिशोषक और आमाशय बलप्रद है। यदि ३॥ तो० इसकी गोंद को १ छटांक बकरी के गुर्दे की चर्बी के साथ पिघलाएँ और सबको तीन दिवस में खाएँ तो आर्द्र कास तथा मूर्च्छा के लिये अनुपम है। मधु के साथ आभ्यन्तरिक क्षतों और वसा में पिघलाया हुआ अर्बुदों की पीड़ा को दूर करने वाला है।

अलिकुल संज्ञा—सं० स्त्री० कंटक शेवती, कॉटा शेवती। कुब्जक वृक्ष, कोकन देशीय पुष्प वृक्ष, (Trapa bispinosa) रा० नि० व० १० भा० पू० १ भा० देखो—कुब्जकः।

अलिगद्—सं० पु० जलसर्प, (A naquatic serpent) श० र०।

अलिजरान—इं० नारङ्गी सुर्ख रंग का एक रुत्व जो मंजिष्ठा में पाया जाता है। (Anorange-red principle foand in 'Rubia cordifolia') इं० मे० मे०।

अलिजिह्वा, -ह्विका—सं० स्त्री० (Uvula) क्षुद्रजिह्विका, आलजिब, गले की घाँटी, गले के भीतर का कौवा, काक; कौव्वा, अलिजिह्व शुण्डक कोमल तालु के पिछले भाग में एक खूंटी सी दिखाई देने वाली चीज। श० र०।

अलिञ्जरम्—सं० क्ली० (१) फल विशेष। फुटी विशेष वं०। चिरफोटी-मह०।

गुण—अलिञ्जर रूक्ष शीतल तथा भेदक है और कसैला, मधुर, क्षारीय, तिक्त तथा पाक में कटु और रक्तदोष वातकारक तथा श्वास, कास और श्लेष्मा विनाशक है। वै० निघ० (२) बहुजलधर—मृण्मय पात्र विशेष। सुराही। पानी रखनेके लिये मिट्टी का बरतन। झज्झर। घड़ा।

अलिता—सं० स्त्री० अलक्तक आलता-बं०। (Lac, the red animal dye so called)

गुण—अलिता उष्ण, तिक्त कफ वात तथा व्रण नाशक है। व्यंग, अरुची, कंठ रोग और व्रणदोष नाशक हैं। पूर्व महर्षियों ने इसके अन्य गुण लाक्षा के सदृश वर्णन किये हैं। वै० निघ०।

अलिदुर्ब्बा—सं० स्त्री० मालादूर्ब्बा, माला दूब रा० नि० व० ८ See—Maladurvva

अलिन्थः—सं० पु० (Allantois) भ्रूण का वह आवरण जिसमें इसका मूत्र एकत्रित रहता है कीसतुल् बौल—अ०।

अलिन्द—हिं० संज्ञा पु० (१) (Auricle) (२) [सं० अलीन्द्र] भौंरा। (A wasp)

अलिपकः—सं० पु०
अलिपक—हिं० संज्ञा० पु० } (१) भ्रमर, भँवरा (A large black bee) (२) कोकिल, काला An Indian cuckoo (Cuculus Indicus) (३) कुक्कुर, कुत्ता (A dog) इवेन्त्र मे० कचतुष्क

अलिपत्रिका—सं० (हिं० संज्ञा) स्त्री० वृश्चिकाली बिछाती, बिछुआ घास (Fragiainvolucrata) रा० नि० व० ५।

अलिपर्णिका, -र्णी—सं० स्त्री० वृश्चिकाली। बिछाति बिछुटी-बं० (Fragia involucrata) रा० नि० व० ६।

अलिप्रियम्—सं० क्ली० (१) रक्तोत्पल, लाल कमल (Nelumbium speciosum) त्रिका०

पु० (२) धारा कदम्ब (Adira cordifolia) (३) आम्र, वृक्ष, आम। A mango tree (Mangifera Indica) श० र० (४) कदम्ब वृक्ष (Anthocephalus kadamba) भा० पू० १ भा०।

अलिप्रिया-सं० स्त्री० (१) पाटला। पारुल गाछ बं० (Bignonia suaveolens) प० मु० (२) भूजम्बू वृक्ष, काक जम्बू। (Ardisia solanacea) बै० निघ०।

अलिप्सा-सं० स्त्री० अनिच्छा (Indifference)

अलिफ़ान-अ० बाजू के अन्दर की दो रगें।

अलिबाफ़ोर डा बेञ्जोइन-फ्रां लुबान, ऊद भा बाजा० Gum benjamin tree (Styraxbenzoin, Dryander) फा० इं० २ भा०।

अलिमक:-सं० पु० (१) भेक (A frog) (२) कोकिल, कोयल (An Indian cuckoo) (३) भ्रमर भमरा (A large black bee) (४) पद्म केशर (See-padmakeshar) (५) मधूक वृक्ष, महुआ (Bassia latifolia) मे० चतुष्क

अलिमोदा-सं० स्त्री० गणिकारिका गणिरी-व० (Premna spinosa) रा० नि० व० ६ देखो-अरणी।

अलिमोहिनी-सं० स्त्री० केविकापुष्प वृक्ष, केवार रा० नि० व० १०। देखो केविका (Kevika)।

अलिम्पक:-म्बक:-सं० पु० (१) कोकिल, कोयल (An Indian cuckoo) (२) मधुमक्षिका मधु मक्खी, शहद की मक्खी (A bee) (३) कुक्कुर कुत्ता (A dog) (४) पद्म केशर। (See-padamkeshar) बै० निघ०।

अलिया-हिं० सज्ञा स्त्री० [सं० आलय] एक प्रकार की खारी।

अलिवल्लभा-सं० स्त्री० रक्त पाटला। (See-patala, भा० पू० १ भा०।

अलिवाहिनी-सं० स्त्री० कोकण देश प्रसिद्ध केविका वृक्ष केवेर-हिं० रा० नि० व० १० See-kevika

अलिविरई-ता०
अलिवेरी-बं० } चन्द्रसूर अहलीब। (Lepidium sativum)

अलिश-काश०
अलिशि विरई-ता० }
अलसी, तीसी, Linseed (Linum usitatissimum, *Linn*) फा० इं० १ भा० देखो—अतसी।

अलिसमाकुल:-सं० पु० पुष्प वृक्ष विशेष दवण सेवन्ती-मह० वै० निघ०।

अली (इन्)-सं० पु०
अली-हिं० सज्ञा पु० [सं० अलि] }
(१) वृश्चिक, बिच्छू (A scorpion), (२) भ्रमर भँवरा। (A large black bee) मे०। हिं० सज्ञा स्त्री० [सं० आली] (१) सखी, सहेली, सहचरी। (A female friend)। (२) श्रेणी, पंक्ति, कतार।

अली-प० अमलतास (Cassia Fistula)

अलीक:-सं० पु० एक प्रकार का सर्प। अथर्व०। सू० १३ ५। का० ५।

अलीक़-अ० लबलाब, इश्क पेचा (Ipomoea quamoclit)

अलीकम् सं० क्ली० ललाट, मस्तक, पेशानी (Forehead, हे० च०।

अलीक:-सं० पु० काकोली पुष्प, फल व पत्र।

अलीक मत्स्य:-सं० पु० अङ्गार पर पकाकर तिल तैल में भूनी हुई उड़द की पिट्ठी बड़े नागरबेल पान को उड़द की पिट्ठी में लपेट कर युक्ति से कढ़ाई में पकाएं फिर छोटे छोटे कतर के तेल में भून लें तो 'अलीक मत्स्य" तैयार होते हैं इनको बैंगन के भुरते के साथ अथवा बथुए के के साग से या रायते से भक्षण करें भा० पू० २ भा०।

अलीकाचक-हिं० तेलना मक्खी जरारीह-अ० (Caluthuridis)

अलीगडु-द० प्याज पलांडु (Allium cepa, *Linn*)

अलीनकम्-स० क्ली० वङ्ग (Tin) हे० च० ।

अलीफ़ील-फिर हाथी, हस्ति (An elephant)

अलीफून-द० नीलोफर, छोटा कमल । (Nymphæa edulis, *D. C.*) स० फा० इं० ।

अली बिन अब्बास-अली अब्बास मजूसी-अ० । Ali bin alabbas almmajusi. Alli Abbas यह प्रसिद्ध ईरानी हकीम गबर अर्थात् आतश परस्त (अग्निपूजक) था इसी कारण यह मजूसी अर्थात् आतशपरस्त (अग्निपूजक) की उपाधि से विभूषित है यह ईसवी सन् की दसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में अहवाज (ईरान देश) नामक स्थान में उत्पन्न हुआ और इसने अबी माहर मूसा बिन सय्यार से वैद्यक विद्या की शिक्षा प्राप्त की यह अपने समय का अत्यन्त महत्व पूर्ण और श्रेष्ठ हकीम हो चुका है यह सुल्तान अजदुद्दौला बिन बूयह देलमी का दरबारी चिकित्सक था प्रसिद्ध तिब्बी ग्रंथ "अलमलिकी" या "कामिलुस्सनाअह" जिसको अंगरेजी ग्रंथों में लिबर रेजिस Liber Regis' Kingly-book,.) अर्थात् राजकीय ग्रन्थ लिखा है, यह आपही के लिखे हुये ग्रन्थ रत्नों में से हैं इन्होंने यह ग्रन्थ उल्लिखित राजा के लिये लिखा था इस कारण इसे उसी के नाम से अभिहित किया। यह अपने काल का अनुपम ग्रन्थ तिब्ब देलमी व अमली दो भागों में विभाजित है और प्रत्येक भाग के कतिपय खण्ड है अमली अर्थात् प्रायोगिक भाग में व्यवच्छेद, इन्द्रिय व्यापार, सामान्य विकृति विज्ञान, गुह्येन्द्रिय संबधी रोग त्वक् विकार, व्रण तथा क्षत प्रभृति का वर्णन है और देलमी में स्वास्थ्य संरक्षण, आहार निघण्टु (औषध निर्माण) विशेष विकृति विज्ञान और चिकित्सा का सविस्तार वर्णन है। कानून शेख के प्रकाशित होने से पूर्व अरब व अजममें यह वैद्यक को एक अत्यन्त प्रशस्त व प्रमाणिक पुस्तक मानी जाती थी कई बार लेटिन भाषा में इसका अनुवाद किया गया। यह पुस्तक मिश्र के मुद्रणालय में अब भी मिलती है।

अलीबिन ईसा-अ० ईसा बिन अली (Ali bin Isa, Jesus Haly)

यह आराक अरब के प्रसिद्ध नेत्र चिकित्सक पांचमी शताब्दी हिजरी या ग्यारहवीं शताब्दि मसीही के पूर्वार्द्ध में हुये। यह नेत्र रोगों की चिकित्सा में अत्यन्त सिद्ध हस्त थे। यही नहीं प्रत्युत यह अपने काल के इमाम माने गये हैं। और समकालीन और पश्चात कालीन सम्पूर्ण चिकित्सकों ने इस विषय अर्थात् चक्षु रोग की चिकित्सा एवं रोग विनिश्चीकरण में अलीबिन ईसा का ही अनुकरण किया है।

अली बिन ईसा के ग्रन्थों में केवल एक ग्रंथ "तज़्किरातुल् कुह्हालीन" (Book of Memoranda for Eye Doctor) प्राप्त होता है। चक्षुरोगों के निदान व चिकित्सा पर इस ढङ्ग का अपने समय का यह एक अनुपम ग्रन्थ है। युनानी चिकित्सा में चक्षुरोगों में यह आज पर्यन्त भी एक उत्तम ग्रन्थ माना जाता है।

अली बिन रिज्वान-अ० (ali bin Rudhwan Roloam) अबुल् हसन अली बिन रिज्वान बिन अली बिन जाफ़र। इनकी उत्पत्ति मिश्र देश के जीज़ स्थान में हुई थी। किसी २ अंग्रेजी ग्रन्थ में लिखा है कि यह ख़लीफ़ह हाकिम के काल में सन् १०६८ ई० में मिश्र में एक उच्चकोटि के हकीम प्रसिद्ध थे। इनके पिता रिज्वान बिन अली तनूर बनाने वाले थे। अली बिन रिज्वान ने एक साधारण पेशावर की संतान के सदृश पालन पोषण व शिक्षा पाई और क्योंकि स्वभावत इनका ध्यान योग्यता व विद्या प्राप्ति की ओर था इसलिये किसी पेशा में तल्लीन होने की अपेक्षा उन्हें विद्या-विकास अधिक प्रिय व रुचिकर था ३२ वर्ष की अवस्था में वह एक उच्चकोटि के और नामवर तबीब प्रसिद्ध हो गए और ६०, ६५ वर्ष की अवस्था तक अत्यन्त

सफलतापूर्वक चिकित्सा कार्य करते रहे। परन्तु यह कुछ तुन्द प्रकृति के मशहूर थे। यह अपने समकालीन और कोई २ पूर्वकालीन चिकित्सकों यथा— शेखुर्रईश व जकरिया राज़ी प्रभृति के बचनों का खडन किया करते थे किस २ समय अनुचित बचन कह जाते थे।

अली बिन रिज्वान चिकित्सा में यह केवल उस्ताद खिर्द के शिष्य थे पुस्तकोंके सिवा इन्होंने यह विद्या किसी से नही पढ़ी। इनका बचन है कि विद्या जितनी अध्ययनसे बढ़ती है उतना पाठ पढ़ने से कदापि नहीं बढ़ सकती। सन् ४५३ ई० में खलीफा मुस्तनसर बिल्ला के काल में आपका स्वर्गवास हुआ। आपने एक सौ से अधिक ग्रन्थ लिखे हैं।

अली (ले) मड़ी-हिं० वरुण, । वरनावृक्ष। (Cratœva tapia)

अलील-हिं० वि० [अ०] बीमार, रुग्ण।

अलीबन-यु० शेर। (A lion)

अलीवह-यु० जैतून (Olive)

अली (ले) वा-रु० जंगली अन्जीर (wild fig)

अलीष्टः-सं० पु० तिलक वृक्ष, तिल, तिल्ली; तिल गाछ वं० (Sesamum Indicum) वै० निघ०।

अलीस-एक बड़ीमछली जिसका शिकार करना बहुत दुस्तर है।

अलुः-सं० पु० स्त्री० (१) गलन्तिका (See galantika)। (२) आलु (Potato), (३) तुलसी वृक्ष (Ocimumsanotum) क्ली० (४) मूल (Root) मे० कद्विकं०।

अलुई-बं० कालमेघ, यवतिक्त, किर्यात-हिं०। (Andrographis paniculata, *Nees*) फा० इं० ३ भा०।

अलुकम्-सं० क्ली० (१) आलुक साधारण आलू। An esculent root (Arum campanulatum) (२) आलूबोखारा (Prunns communis)। (३) आमिस, मांस (Flesh)

अलुच-म० आलूचा-हिं०। आलूक सं०।

अलुदेल-सिं० देल ! (Artocarpus nobilis) इसका बीज खाद्य है। मेमो०।

अलबियूम-मल० जुन्दबेदस्तर। (Castoreum) इं० मे० मे०।

अलुमीनम-हिं० संज्ञा पु० [अं० एलुमीनियम] Aluminium

अलुवह-फा० (१) ऊद पर्वर्दह् (२) उकाब। (An eagle)

अलूक-हिं० आलू। Potato (Arum campanulatum)

अलूक़-अ० पारद। Mercury (Hydrargyrum)

अलूक़ी-मुलेठी, यष्टिमधु (Glycyrrhizæ)

अलूचा-आलूचा।

अलूज-अ० मुख़ल्लसह् भेद। फारसी में काजरीसक कहते हैं।

अलूनी-वरब० लोफुज़ुअ्द नामक एक अप्रसिद्ध बूटी है।

अलूफ़न-यु० मद्यभेद जिसको मैफख़्तज (खटमिट्ठा) कहते हैं।

अलूफ़स-खुब्बाज़ी (Malva Sylvestris, *Linn*)

अलूयन-यु० एक बूटी है जो अराक में उत्पन्न होती है। एक गज के बराबर ऊंची होती हैं। छिलका मृदु और मूल चुकन्दर के समान होता है।

अलूयस-ले० सिब्र सकोतरी, सक़ोतरी एलुआ। (Aloe socotrire)

अलूया-फा० लोबिया। (Dolichos sinensis)

अलूसन- } यु० अब्रमून (कपास के पौधे के
अलूसून- }
समान एक पौधा है)।

अलूह-सिरि० एलुआ, सिब्र। (Alœs)

अलें-मह० अदरक, आदी। (Zingiber officinalis) इं० मे० मे०

अलेई-मह० (Dalbergia volubilis' *Roxb* फा० इं० १ भा० ।

अलेक्सीन-इं०

यह एक वर्णरहित, पीताभश्वेत स्फटकीय क्षारोद है जो कॉमन गोर्स (Commongorse) या फर्जी (Furze) या ह्विन (Whin) नामक वृक्ष से, जिसका वानस्पतिक नाम से अलेक्स युरोपियस (Ulex Europæus) है प्राप्त होता है। यह सायटिसस लेबर्नम् (Cytisus laburnum) द्वारा पाए जाने वाले सायटीसीन (Cytisine) नामक सत्व के समान होता है अधिक मात्रा में यह सबल श्वासोच्छ्वास विषयक विष यथा चेष्टावहा नाड़ियों को वातग्रस्त करने वाला है। इसमें निश्चित मूत्रल प्रभाव विद्यमान है तथा हृद्रोग जन्य जलोदर में इसका उपयोग होता है। इसको $\frac{1}{12}$ ग्रेन से अधिक मात्रा में नहीं प्रयुक्त करना चाहिए, जल में सुविलेय हायडोब्रोमाइड नामक लवण प्रयोजनीय है, इसको स्ट्रिक्नीन कुचलीन का अगद बतलाया जाता है। (ह्वि० मे० मे०)।

अलेथी-पं० कुकपाल कुड़ा-ते०।

अलेन-मह० सोंठ, शुंठि (Dry ginger)

अलैकः-सं० पु० काकोली पुष्प। See-kakoli pushpa

अलैग्जेण्ड्रियल लॉरेल-इं० सुल्तान चम्पा-हि०। पुन्नाग-सं०। Calophyllum Inophyllum, *Linn*) फा० इं० १ भा०

अलोणा- } हिं० वि० [सं० अलवण] स्त्री०
अलोना- }

अलोनी] अलुना; बिना नमक का, जिसमें नमक न पड़ा हो, स्वाद रहित। (Notsalt, fresh, saltiess, insipid)

अलोपा-हिं० संज्ञा पु० [सं० अलोप] एक पेड़ जो सदा हरा रहता है। इसके हीरका लाल और चिकनी लकड़ी बहुत मजबूत होती है, नाव और गाड़ी बनाने में काम आती है तथा घरों में लगती है। इसकी लकड़ी पानी में खराब नहीं होती।

अलोमशः-सं० पु० मत्स्य विशेष, मछली। (A kind of fish)

गुण- मत्स्य मांस बलकर, शुक्रवर्द्धक और पुष्टिकर है, रा० नि० व० १०।

अलोमशा-सं० स्त्री० वृक्ष विशेष। कांगझाड़-मह०। (A kind of tree) वै० निघ०।

अलोम्बे-बम्ब० मांसखेल-काश०। मोकशा, चम्बा, खुम्बह्।

अलोहितम्-सं० क्ली० (१) रक्त पद्म, लाल कमल (Red lotus)। ईषद्रक्त पद्म।

अलोहित-हिं० संज्ञा पु० श्वेत।

अलोहित सत्वम्-सं० क्ली० (White carpuscle) श्वेताणु।

अलौह शस्त्र-सं० पु० घनशस्त्र। वह शस्त्र जो लोहे द्वारा निर्मित न हो। वा० सू० अ० २६।

अल-अव्य० देखो—अलम्।

अलबुष-हिं० संज्ञा पु० [सं० अलम्बुषः]

अलंबुषा-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अलम्बुषा]

अल्अफ्स-अ० अफ्स अफ्सुल् बलूत। माजुफल, मायिका-हिं०। Galls (Galla) देखो—मायाफल।

अल्अबह्-अ० (ब० व०), लुआब, (ए० व०) Mucilage।

अल्अल्- } अ० (१) असिवत् उपास्थि जो
उल्उल } आमाशयिक द्वार या कौड़ी के स्थान
अल्आल }

पर होता है।

(२) शिश्न, शिथिलावस्था का शिश्न। (Flaccidpenis)

अल्आ-अ० अंगुली की अस्थियाँ।

अल्इत् रियून-यु० क़िस्साउल्हिमार, विन्दाल, देवदाली। (Ecbellium elaterium)

अल्ऊनह्-अ० ग़ाज़ह्, गुलाबी उब्टन।

अल्उश्वतुल हब्शियह्-अ० जदी०, कस्सू, कौसू उ०, फा०। Cusso (Kousso)

अल्कः-सं० पु० (१) वृक्ष विशेष। (A tree) (२) शरीरावयव। (Anorgan of the body) वै० निघ०।

अल्क़ह्-अ० वह कपड़ा जो बालक उत्पन्न होने के पश्चात् आरम्भ में उस पर लपेटा जाता है।

अल्क़म्-अ० इन्द्रायन का फल।

अल्क़म्-अ० हञ्ज़ल। इन्द्रायन-हिं०। (Citrullus colocynthes)। (२) कड़ुआ पौधा। (३) विन्दाल।

अल्क-अज्ञात।

अल्कत्तानुल् मुस्हिल-अ० कत्तान मुसहिल, सारक अतसी। Purging flax (Linum catharticum)

अल्कन्-अ० लुक्नतवाला, वह जो अटक अटक कर बोले। लिस्पर (Lisper)-इं०। (२) गुंग, गुंगा, गूंगा, डम्ब (Dumb)-इं०।

अल्क़म्-अ० इन्द्रायण। (Citrullus colocynthes)

अल्क़म्बीत-अ० फूलगोबी। (Brassica botrytis)-इं० हैं० गा०।

अल्काकनज-अ० राजपूतिका, वन पूतिका सं०। पपोटन-हिं०। Alkekengi (Solanum vesecareum) देखो—काकनज।

अल्कादुल्हिन्दी-अ० कृष्ण खदिरसार, कालाकत्था। Black catechu (Catechu nigrum)

अल्किल्सुल् माई-
अल्किल्सुल् मुतफ्फ़ा } अ० शांतचूर्ण, बुझायाहुआ चूना। आहक आबंदीदह्-फा०। Slaked lime (Calcii hydros)

अल्क़ी-कख़ज, नख़ज। हीथ (Heath)-इं०। Erica-ले०। (Portugal broom) इं० हैं० गा०।

अल्कीना-अ० कीना कीना। ज्वरहर त्वक्, सिन्कोना Cinchona Bark (Cinchonœ Cortex)

अल्कीनाउल् हुमरा-अ० लाल सिङ्कोना-हिं०। बर्क सुर्ख-फा०। Red Cinchona bark (Cinchonœ rubrae cortex)

अल्क़ुमिहुल् अस्वद-अ० शैलम। गन्दुम-दीवाना फा०। Ergot (Ergota) देखो—अर्गोटा।

अल्कुसा
अल्कुसी } -बं० (१) अकासबेल (Cuscuta reflexa) (२) केवाँच। (Mucuna pruriens)

अल्कुहाल
अल्कुहा(हो)ल मुत्लक़ } -अ० मद्यसार ऐलकोहल Alcohol (Alcohol absolutum)

अल्केनाइट
अल्केनेट } -इं० रतनजोत। (Ratanajota)

अल्केन्ना टिङ्कटोरिया-ले० रतनजोत। अल्ख़न्ना अ०। (Alkanet) फा० इं० २ भा०।

अल्केली-इं० क्षार।

अल्कैकनज-इं० काकनज, पपोटन। (Solanum vesecareum)

अल्कोहाल-इं० मद्यसार। देखो—ऐलकोहल।

अल्ख़न्ना-अ० रतनजोत (alkanet) फा० इं० २ भा०।

अल्खर्बकुल् अस्वद-अ० कुटकी, कटुकी। (Helleborus)

अल्खस्बुल् मुर्र-अ० चोब कासिया-फा०। Quassra wood (Quassiœ lignum)

अल्ख़स्सुज्ज़ह्म-अ० काहु का दरख्त, काहू वृक्ष। (Lactuca virosa)

अल्गुसी
अल्गुसी लता } -बं० अमरबेल, आकाशबेल। (Cuscuta reflexa) मेमो०

अल्गण्ड
अल्गण्डून् } -सं० कीट जिनके काटने से खाल पैदा हो। अथ०। सू० ३१। ३। कां० २।

अल्जज्जार—अ० अबु जाफ़र अहमद बिन इब्राहीमुज़ज़्ज़ार क़ैरवाँ का निवासी और हक़ीम इस्हाक़ बिन क़ुस्तार यहूदी के शिष्य थे। आपके लिखित ग्रन्थ हिदायतुल् गुर्बा और एक और वैद्यक ग्रंथ यूनानी व लेटिन तथा इब्रानी भाषाओं में अनूदित हुए हैं। मिश्र में आपने प्लेग के संबंध में अत्युत्तम अनुसंधान किये थे।

(१) अल्जिज्जारह् (Alizar)।

(२) अल्गज्जिरह् (Algrzirah)

अलजमरह—अ० (Anthrax) देखो-ऐन्थ्रैक्स।

अलजावी—अ० जावी। देवधूप, लोबान, राजराल। Benzoin (Benzoinum) म० अ० डाँ०

अल्जौज़ुल्मुक़ई—अ० अज़ाराकी, कातिलुल्कल्ब। कुचिला, विष मुष्टि-हिं० (Nux vomica)

अल्टकम्—ले० अजवाइन खुरासानी पारसीक यमानी (Hyocyamus niger) फा० इं० २ भा०।

अल्ट्रावायलेटरेज़—इ० प्रकाश जिसकी लहरें हमको दृष्टिगोचर नहीं होती इनके त्वचा पर असर पड़ने से हमारे शरीर में खाद्योज ४ बनता है। देखो खाद्योज।

अल्तमाकुन—यु० जावित्री। (Mace)

अल्तअ़—अ० जिसके दाँत गिरकर केवल जड़ें शेष रह गई हों।

अल्तुस्त—मीअहे साइलस् प्रसिद्ध सि (शि) लारस। (Styrax prœparatus)

अल्द—अ० (१) ग्रीवा की नाड़ी, ग्रैव बोध तन्तु (Cervical nerve)। (२) कठोरता सख्ती। (Hardness)

अल्नग़ल—एक बूटी जो विषखपरा के समान होती है

अल्नीयून—यु० रासन (Inula heleniun) इं० हैं० गा०।

अल्प—हिं० वि० [सं०] थोड़ा किञ्चित, कुछ कम न्यून, (Little, few)। (२) छोटा। (small, short)

अल्पम्—मल० (Bragantia wallichii)

अल्पकः / अल्पक— } बास क्षुप जवास का पौधा। दुरालभा (Alhagi maurorum) रा० वि० [सं०] थोड़ा, कम।

अल्पकेशिका— / अल्प केशी } सं० स्त्री० भूतकेशी, भूतकेश (Corydalis govoniana) चामर कषा-बं० प० मु० र० मा०। रत्ना०।

अल्पगन्धम्-सं० क्ली० / अल्पगन्ध-हिं० संज्ञा० पु० } (१) रक्त कमल। (The red lotus) बै० निघ० (२) रक्त कैरव रक्त कुमुदनी, लालकूँई।

अल्पगोधूमः—सं० पु० तृण गोधूम। प० मु०। मद० व० १०। (Trina godhuma)

अल्प घण्टिका—सं० क्ली० ह्रस्व शण पुष्पी, लघु शण वृक्ष। सन-हिं०। लघुताग-मह०। (Crotalaria juncea)

अल्पजीवा—हिं० वि० [सं० अल्पजीविन्] थोड़ा जीने वाला। जिसकी आयु कम हो। अल्पायु।

अल्प ज्वराङ्कुशोरसः—सं० पु० पारा, मीठा तेलिया गन्धक प्रत्येक १-१ भा०, धत्तूरबीज ३ भा०, त्रिकुटा १२ भा० सबका महीन चूर्ण कर रक्खें। जम्भीरी या अदरख के रस के साथ इसके सेवन करने से हर प्रकार के ज्वरों का नाश होता है। भै० र० ज्वरे।

अल्पचेष्टावन्त—सं० पु० (Amphirthrodial) वह जिसमें थोड़ी ही गति संभव हो।

अल्पतनुः—सं० त्रि० खर्व्व। अम०। कुब्जक।

अल्पतर पार्ष्टकी—सं० स्त्री० (Smaller occipital) पृष्ट की क्षुद्रतर पेशी।

अल्पदाहः—सं० पु० / अल्प दाहेष्ट— / अल्प दाहेष्ठा पथ— } खस' उशीर, (andropogonmuricatus)

अल्पयम प्रौथी—सं० स्त्री० (Glutecs minimus) नैतम्बिका लब्बी' नितम्बकी सबसे छोटी पेशी।

अल्प चेष्टावन्त संधि-सं० पु० (हिं० स्त्री०) (Partially movatle joint, amphiarthrosis) वह चल या चेष्टावन्त सधियाँ जिनमें थोड़ी ही गति संभव है जैसे ग्रीवेरु काओं के गात्रों की सधि, विटप संधि अक्षक और वक्षोऽस्थि की संधि आदि। मफ्सिल असिर, मफ्सिस इर्तकाकी अ०।

अल्पनायिका चूर्णम्-सं० क्ली० अहीं में प्रयुक्त एक रस विशेष। पञ्च लवण और त्रिकुटा प्रत्येक ३ ३ शाण गंधक ८ मा०, पारद ४ मा०, भंग १ पल ३ शाण। निर्माण—सर्व प्रथम गंधक और पारद की बज्जी कर फिर शेष औषधियों का चूर्ण डालकर भली प्रकार घोट कर रखें

मात्रा—१ शाण।

अनुपान—काँजी।

अल्पनिद्रता-सं० स्त्री० पित्त। जन्य निद्रालुपता रोग। (Biliary Insomnia) बै० नि०

अल्पनैतवी-सं० स्त्री० (Psoas minor) कटिलम्बिनी लघ्वी।

अल्प पत्रः-सं० पु० (१) क्षुद्रपत्र तुलसी क्षुप (Ocimum sanctum) र० मा०। क्ली० (२) रक्त पद्म, लाल कमल। (The redotus) र० मा०।

अल्प पत्रक-सं० पु० सिरिज मधूक वृक्ष; पव्वतीय महुआ का पेड़ पहाड़े मौल ग०नि०-बं०। Bassia latifolia (The wild var. of-) रत्ना०।

अल्प पात्रिका-सं० स्त्री० रक्त अपामार्ग क्षुप लाल चिर्चिट (Achyranthus aspera rubrum.) रा० नि० व० ४।

अल्प पत्री-सं० स्त्री० (१) मिश्रेया सोआ (Fœniculum orium) (२) मुषली-सं० हिं० ताल मूली-ब०। (Hypoxisorchioides) वै० निघ०।

अल्प पद्मम्-सं० क्ली० रक्त पद्म, रक्तोत्पल। (The redlotus) वै० निघ० द्रव्य गु०।

अल्प पर्णिका-
अल्प पर्णी-
} सं० स्त्री० मुद्गपर्णी वनमूंग। मुग-नी-बं० (Phaseolus trilobus) वै० निघ०।

अल्प पीना-सं० स्त्री० (Small saphenous) पिण्डली की छोटी शिरा।

अल्पपुष्पिका-सं० स्त्री० पीतकरवीर, पीले फूल का कनेर (Nerium odorum) (The yellow var. of-) वै० निघ०।

अल्प प्रभाव-हिं० पु० मामूली असर।

अल्प प्रमाणकः-सं० पु०
अल्प प्रमाणक-हिं० संज्ञा पु०
} लताफनस। र० मा०। चेलानक (१ खरबूजा। २ तरबूज)। चेलातरबुज, खरमुज ब०। वै० निघ०। (Cucurbita citrullus) देखो तरमुजम्।

अल्प मस्तकः-सं० पु० चित्रक क्षुप, चीता। (Plumbago zylanica) वै० निघ०।

अल्प मक्षिका-सं० स्त्री० मक्षिका विशेष, छोटी (मधु) मक्खी। (A little bee) वै० निघ०।

अल्प मानकः-सं० पु० विल्व गंध तुलसी। (A kind of Basil) र०।

अल्प मारिषः-सं० पु० क्षुद्र मारिष। अलप मरुषा तोटा मर्सा चौलाई-हिं० काँटा नटिया वा चाँपा नटिया-बं० थोर तांदुलजा-मह०। (Prickly amaranth) अम० इसके शाक के गुण यह लघु शीत वीर्य, रूक्ष पित्त नाशक, कफ नाशक, मलमूत्र निस्सारक, रुचिकारक और दीपन और विष नाशक है। भा० पू० १ भा०। देखो-तण्डुलीय (चौलाई)।

अल्पम्-मल० ब्रैगेन्टिया वैलिचिआई (Bragantia wallichii, R. Br.) ले०।

रुद्रजटा या ईश्वर मूल वर्ग

(*N. O. Aristolochiaceæ*)

उत्पत्ति-स्थान—डेकन प्रायद्वीप, पश्चिमी वन दक्षिण कोकणसे दक्षिण की ओर। प्रयोगांस पत्र।

उपयोग—इस वर्ग की बहुशः वनस्पतियों के समान इसकी पत्तियों का स्वरस विषैले सर्प दंश मुख्यतः कोबरा विष का अगद है। इस

वार्तोलोमियो (यात्रा पृ० ४१६) मालाबार की एक उक्त का वर्णन करता है। उसका कहना है कि ज्यों ही अल्पम् शरीर में प्रविष्ट होता है त्यों ही विष उसे छोड़कर पृथक हो जाता है। फा० इं०।

पश्चिमी किनारे पर यह सर्व श्रेष्ठ सशक्त औषधों में से है वैट०।

अल्परसा-सं० स्त्री० हैमवती रा० नि० व० २३ Cee-Hammabati

अल्पवयस्क-हिं० वि० [सं०] [स्त्री० अल्पवयस्का] छोटी अवस्था का। थोड़ी उम्र का। कमसिन।

अल्पवर्त्तक:-सं० पु० तित्तिर पक्षी, तीतर A partridge (Perdix francolinus) मद० व० १२।

अल्प-शाष्कुली-सं० स्त्री० (Helicis mionor)

अल्पपशुक्र-सं० वि० अल्प वीर्य।

अल्पशुक्रता-सं० स्त्री पित्त जन्य शुक्राल्पता रोग वीर्य की कमी। वै० निघ०।

अल्पवर्त्तुला-सं० स्त्री० (Teres minor) बेलना लघ्वी।

अल्पशोफ:-सं० पु० सर्वाक्षि, रोग। वै० निघ०।

अल्पस्फैची-सं० स्त्री० (small sciatic nerve)गृध्रस्या ह्रस्वा नाड़ी।

अल्पहार्दी-सं० स्त्री० हार्दीया ह्रस्वा। (Sinal cardiac)

अल्पक्षुपा-सं० स्त्री० ह्रस्व, लज्जालुका। वै० निघ० बड़ी लजालू। रा० नि०। बृहद्दला।

अल्पाख्या-सं० पु० नेत्र रोगान्तर्गत एक प्रकार का पिल्ल विशेष। वा० उ० अ० १६।

अल्पायु:-सं० पु०, त्रि०

अल्पायु-हिं० संज्ञा पु०

(१) छाग, छागल, बकरा (Goat)। -वि० [सं०]। थोड़ी आयुः वाला। जो थोड़े दिन जिये। जो छोटी अवस्था में मरे। अल्प जीवी, शीघ्र मृत्यु, शीघ्र मरने वाला। (Shortlived, young of a few years)

अल्पायुषी-सं० स्त्री० कट्फली, ताली। कोरिफा अम्ब्रेक्युलिफेरा (Corypha umbraculifera, *Linn*)-ले०। टाली-पाँट (Tali-pot) या फैन-पाम (fan-palm) -इं०। बजर-बट्टू-हिं०। ताली-बं०। कोंड-पाणी, शेद्लम्-ता०। श्री तलमु-ते०। बिने श्री ताली -कना०। कुट-पाम, ताली-पान मल०। तालट-मड्डी-कों०। ताल-सिं०। पेबेङ्ग वं।

ताल वग

(*N. O. Palmaceæ*)

उत्पत्ति-स्थान—दक्षिण भारत। प्रयोगांस—पत्र वा सागू।

उपयोग—उक्त वृक्ष के गूदे से एक भांतिका सागू प्राप्त होता है। लोग इसे ओखली में कूट कर आटा बनाते हैं और इसकी रोटी बनाकर फसल पकनेसे प्रथम् इसे अनाज के स्थानमें व्यवहार करते हैं। इसका स्वाद श्वेत रोटिका के समान होता है। साधारणतः इसे व्यक्ति व्यवहार में लाते हैं। इसकी काँजी भी तैयार की जाती है जो सागू, आरारूट यव वा जई के समान एवं लगभग उतनी ही पोषक होती है। इं० मे० मे०।

अल्पास्थि-सं० क्ली० परुषक फल, फ (फा) लसा (Grewia Asiatica) रा० नि० व० ११ भा० पू० १ भा०।

अल्पाहार-हिं० पु० थोड़ा खाना, लघुआहार (Moderation, Abstinence)

अल्पिका-सं० स्त्री० (१) वन मक्षिका जाति, डाँस (A lerge mosquito; a gadfly) हे० च० ४। (२) मुग्दपर्णी (Phaseolus trilobus) भा० पू० १ भा०।

अल्पौरसी-सं० स्त्री० (Pectoralis minor) उरश्छादनी लघ्वी।

अल्फ़-कट्फली, ताली-सं०। बजरबट्टू-हिं० (Co-

rypha umbraculifera) देखो—अल्पायुषी।

अल्फ़-अ० इ (अ) स्पस्त-फा०। See-i (a)s pastd (Ttifolium pratensis)

अल्फ़क़-अ० (१) बाँय हत्था, बाँये हाथ से काम करने वाला। (२) मूर्ख

अल्फ़ज़न-हिं०
अल्फ़ाज़मा-पुर्त्तग० } धारो हिं०।

उस्तुख़ुद्दूस-भा० बाजी०। Arabian or French lavender (Lavandula) stœchas, *Linn*) फा० इ० ३ भा०।

अल्फ़ा नेफ्थोल-
आर्थोनेफ्थोल- } -इं०

यह ब्रिटिश फार्माकोपिया में नॉट ऑफ़िशल है। देखो—नेफ्थाल (Naphthol) अर्थात् विलायती कपूर।

अल्फ़ियह-फा०, जकर आलहे तना० सुल-अ०। शिश्न लिंग उपस्थ (Penis)

अल्फ़िल् फ़ुलुल अस्वद-अ० श्याम मरिच, स्याह मिर्च, कालीया गोल मिर्च Black pepper (Piper nigrum)

अल्फ़ोज़ू-इं० तह एक सूक्ष्म रबावत् (स्फटिकीय) चूर्ण है जो सकसीनिक एसिड और हाइड्रोजन पर आक्साइड के पारस्परिक क्रिया व प्रतिक्रिया द्वारा प्राप्त होता है।

स्वाद—सूक्ष्माम्ल और तिक्त जिससे पश्चात् को धातुवत् स्वाद का बोध होता है।

घुलनशीलता—यह एक भाग ६० भाग जल में लय हो जाता है।

प्रभाव—इसको निर्विषैल कीटाणुहर रूपसे व्यवहार करते हैं

मात्रा—१ रत्ती (घोल रूप में)।

देखो—हाइड्रोजीनियाई पर ऑक्साइडाई लाइक्वारा।

अल्ब-अ० ज्वराधिक्य, उष्माधिक्य। तृषा। फोड़े फुन्सी का अच्छा होने लगना। (२) एक जंगली काँटादार वृक्ष है। यह विषैला होता है।

अल्बर्ज़ीन-इं० सिल्वर ग्ल्युटीन (Silver glutin) । इसमें १५ प्रतिशत चाँदी होती है। यह एक भाग २ भाग जल में घुल जाता है। इसके २ प्रतिशत का घोल सूजाक में और आधे से ३ प्रतिशत का घोल नेत्र रोगों में लाभदायक है।

अल्बान-अ० (ब० व०) लब्न (ए० व०), दुग्ध (Milk)

अल्बूतासुल काबी-अ० दाहक पोटाश। Caustic Potash (Potassa ca-ustica) देखो पोटाशियम्।

अल्बूतासुल् किल्सी-अ० वाइनानुलेपन। देखो—पोटाशियम्। Viena paste (Potassa cum calce)

अल्बूतास्यूम-अ० पांशुजम्। देखो—पोटाशियम्। (Potassium)

अ (ऐ) ल्ब्यूमेन-इं० अन्डलाल, अन्डश्वेतक। (White of egg)

अल्मक़्तरून-यु० कहरुवा, Suocinum (Amber)

अल्मग्नीसियाउल्ख़फ़ीफ़ह्-अ० हलका मग्नेशिया, सूक्ष्म भग्न। (Magnesia levis) मैग्नेसियम्—देखो।

अल्मग्नीसियाउ़स्स़क़ीलह्-अ० भारी मग्नेशिया। (Magnesia ponderosa) देखो—मैग्नेसिअम्।

अल्मनाज़ियहुस्स़क़ीलह-अ० भारी मग्नेशिया (Magnesia ponderosa) देखो—मैग्नेसिअम्।

अल्मनाज़ियहुल्मक़ल्लसह्-अ० हलका मग्नेशिया, सूक्ष्म भग्न। (Magnesia levis) देखो—मैग्नेसियम्।

अल्मस इन्टेग्रिफोलिआ-ले० पपरी, धाम्ना, कुञ्ज, करञ्जी-हि०। पपरी खुलेव, अर्जन-प०। अय-ता०। नग्ली-ते०। रसबीज-कना०। म्यौक सेइत-बर०।

प्रयोगांश—बीज व पत्र।

उपयोग—तैल, औषध, खाद्य, मेमो०।

अल्मस कैम्पेस्ट्रिस-युम्बोक-लेप्च० । ब्रान, ब्राह्मी काइ-पं०।

प्रयोगांश—त्वक् पत्र।

उपयोग—औषध, खाद्य, मेमो०।

अल्मस वालिचयाना-ले० कैन, ब्रेंन, अम्बाड, मराठी-पं०। मोरेद. पबुन-हिं०।

प्रयोगांश—त्वक्, तन्तु, पुष्प, डंडी, (पुष्प वृन्त) तन्तु और पत्र।

उपयोग—तन्तु और खाद्य, मेमो०।

अल्मामून-अ० जंगली पुदीना; पहाड़ी पुदीना, हाशा (Thymus Vulgaris)

अल्माम-अ० हीरक, वज्रम्-सं०। हीरा-हिं०। Diamond (Admas)

अल्मिराव-गो० पथरी-बं०। लॉंन्शिआ पाइनेटिफिडा (Launœa pinnatifida, *Cass*,-ले० सीलोआ, बनकाहू-सिन्ध०।

मिश्र वा तुलसी वर्ग

(*N. O. Compositœ*)

उत्पत्तिस्थान—भारतवर्ष के रेतीले किनारे, बंग देश से लंका पर्यन्त तथा मदरास से मालाबार पर्यन्त।

प्रयोगांश—पञ्चांग (सम्पूर्ण पौधा), स्वरस

वानस्पतिक विवरण—काण्ड (Filiform) तथा भूलुण्ठित होता है। इसमें इतस्ततः पत्र एवं मूल लगे होते हैं। पत्र-एकत्री मूल, शिखरयुक्त, खरड बहुकोणीय वा न्यून कोणाय, वृन्त (Peduncles) पत्र की अपेक्षा ह्रस्वतर होता है। इसके शिखर पर छिलकायुक्त रोमिक पत्र होते हैं जिनके किनारे चिह्नयुक्त होते हैं। मूल मांसल ६ से ८ इञ्च लम्बे, नवीन होने पर पीताभश्वेत होते हैं।

उपयोग—गोआ में अल्मिराव नाम से यह अरण्य कासनी (Taraxacum) की प्रतिनिधि रूप से अधिक व्यवहार मे आता है। बम्बई में पथरी नाम से भैंसो (महिषी) को दूध बढ़ाने के लिये दिया जाता है। मुर्रे उक्त पौधे को सिंध का बन काहू बतलाते हैं; किन्तु उक्त वर्णन उचित रूप में मसल वा बरथक (Launœa nudicaulis, *Less*) का है। उनका और भी कहना है कि बनकाहू स्वरस को खी-खोबा (सिंध में) कहते हैं तथा यह बालकों के लिये अर्द्ध माशा की मात्रा में निद्राजनक है और आम वात विषयक व्याधियों में करञ्ज तेल तथा वाइटेक्स ल्युकोक्सिलोन (Vitex leucoxylon) के स्वरस के साथ इसका बहिर प्रयोग होता है। डाइमाक।

अल्मिलहुल् इन्क़लीज़ी
अल्मिलहुलसुमुल् मुस्हिल } अ० नमक मुस्हिल

-फा०। मग्नेशिया-उ०। मग्नगन्धेत, विरेचक लवण। (Magnesii sulphas)

अल्मीअतुस्साइलह्-अ० मीअहे साइलह्-फा०। सिलहक, शिलारस। (Styrax præparatus)

अल्यह्-अ० (१) नितम्ब, चूतड़, चूतड़ का मांस, तल्लियह् अल्यतैन। (२) बड़े चूतड़ों वाली स्त्री। इसका बहुवचन "अलाया" है। नेट (Nate) वटक (Buttock)-इ०।

अल्य फ़-अ० (ब० व०), लैफ़ (ए० व०) तन्तु, रेशे, शरीर तन्तु। फाइबर्स (Fibers)-इं०।

अल्याफ़अज़्ज़यह्-अ० मांस तन्तु, मांस धातु। मस्क्युलर फाइबर्ज़ (Muscular fibers)-इं०।

अल्यास्मीनुल्ज़र्द-अ० स्वर्ण जाती पीली चमेली (Gelsemium nitidum)

अलयुमिनियम्-इं० फटिकम् देखो—एल्युमिनिअम

अल्ल-हिं० पु० विछुआ। (Girardinia heterophylla)

अल्लकः-सं० पु० (१) कक्कोल (कक्कोल) विशेष, शीतल चीनी। (The fruit of Coccul-us Indicus) कन्नड बं०, (२) वनिन्यक धनियाँ। (Coriander) धने बं०। वै० निघ०।

अल्लका–सं० स्त्री० धान्यक, धनियाँ, धने बं० । (Coriandrum sativum) वै० निघ० ।

अल्लबत्सलता–ते० पोल हिं० कुबती पूई-बं० (Basella cordifolia, *Lam*) मेमो०

अल्लम–ते० अदरख, आदी । (Zingiber officihalis) देखो—आर्द्रक ।

अल्लमण्डा केथार्टिका–ले० पीत करवीर, पीला कनेर-हिं० । मेमो० ।

अल्लाहलाह–अ० सूरिञ्जान । (Colchicum)

अल्ला–सं० स्त्री० (१) मातर कृमि । (२) धान्यक, धनियाँ धने-बं० । (Coriandrum sativum) !–पं० (३) कचेटा; अगलालगा, डिंगली-हिं० । (Mimosa rubicaulis *Lam*) मेमो० ।

अल्लाई–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अर=शब्द करना] चौपायों के गले की एक बीमारी । घँटियार ।

अल्लाप–गु० अयापना–हिं०, –बं०, मह० । (Eupatorium ayapana, *Vent*) फा० इं० २ भा० ।

अल्लामह –अ० महान विद्वान ।

अल्लियो–अ० प्राबम् । देखो—लिथिअम् (Lithium)

अल्ली–मह० मंगनवेर । बण्डी गर्ज़न-ते० रंगुदी-मल० (Dalbergia volubilis)

शिम्बी या बब्बूर वर्ग

(*N. O. Leguminosœ*)

उत्पत्ति-स्थान—हिमालय के निम्न भाग, कुमायूँ से पूरब, मध्य और दक्षिण भारत ।

प्रभाव तथा उपयोग—इसके पत्ते का रस कंठक्षत में गंडूष रूप से व्यवहार में आता है । सूजाक में इसकी जड़ का रस जीरा और शर्करा के साथ प्रयोग किया जाता है । इं० मे० मे० ।

अल्ली–ते० (१) अञ्जन, कर्पा, बम्ब० । कसाउ चेट्टी ता० (Memecylon edule, *Roxb*) प्रयोगांस—पुष्प, पत्र का फल उपयोग रंग औषधि और खाद्य । मेमो० (२) ता० नट्ट बिल्या-शीक्र-बर० । फ़ासुन्द, रूखा, चान्दल, काँकुड़ा, चार-बार-मादा-बम्ब० । एण्टिएरिस टॉक्सिकेरिया (Antiaris toxicaria *Leesch*) प्रयोगांश—त्वक्, तन्तु, बीज, उपयोग-निर्यास, तन्तु और औषध । मेमो० ।

अल्लीआन–हिं० कचूर (Cornus macrophylla) मेमो० ।

अल्लीकाड–ते० नीलोफर (Nymphœa lotus) इं० मे० मे० ।

अल्लीचेट्ट–ते० किड्गली–हिं० अञ्जनी सं० Ironwood tree (Memecylon edule) इं० मे० मे० ।

अल्लीचेट्टु–ते० अञ्जन, कोरण्डी–मह० (Memecylon edule, *Roxb*) फा० इं० २ भा० ।

अल्लीतामर–ते०
अल्लीतामरई–ता० } निलोफर ।

(Nymphæa lotus) इं० मे० मे० ।

अल्ली पल्ली–पं० साउन्सपाउर, सेन्सरपाल, सतवर० । ऐस्पैरेगस फिलिसिनस (Asparagus filicinus, *Ham*)-ले० ।

शतमूली वर्ग

(*N. O. Asparajaeeæ*)

उत्पत्ति-स्थान–पञ्जाब, हिमालय ३००० फी० से ८५०० फी० की उँचाई पर । प्रयोगांश—मूल ।

उपयोग—इसकी जड़, बल्य एवं स्तम्भक ख्याल की जाती है । कनावार में इसकी टहनी मसूरिका वा शीतला के रोगी के हाथ में रोग मुक्ति हेतु दी जाती है । स्टयुवट ।

अल्लीपा–गु० अयापना (Eupatorium ayapana) इं० मे० मे० ।

अल्लीफूल–द० निलोफर (Nymphæa lotus) इं० मे० मे० ।

अल्लीबीज–कना० खान दे० चन्द्रसुर । (Lepidium sativum) इं० मे० मे० ।

अल्लु–सं० क्ली० आलूक, अ लुबोखारा, (Prunus Communis) म० द० ब० ६ ।

अल्लुपु-ते० गञ्जनी हिं० गुच्छः-सं० (Androp-ógon nardus) इ० मे० मे०।

अल्वान-अ० (ब० व०), लौन (ए० व०), रंग, वर्ण (Colour)

अल्शी विरई-ता० अलसी, अतसी, तीसी Linseed (Linum usitatissimum)

अल्स-अ० उन्मत्त, पागल, दीवाना, खब्ती, बावला मजनून (Irsane, frantic)

अल्सग़-
अल्कन- } -अ० तोतला, तुतला कर बोलने वाला वह जो "श" को 'स' और 'र' को "ल" कहे। लिस्पर (Lisper)-इं०।

अल्शीनीज-
अल्शूनीज- } -अ० कालाजीरा, मंगरैल। (Nigella sativa, *Sibthorp*)

अल्सतून-रू० अफ्सन्तीन (Absinthium)

अल्सन-यु० एक वनस्पति है।

अल्सन्दा-ते० सेम-हिं० शिम्बी-सं० (Dolichos lablab, *Linn*)

अल्संघ-हिं० मोठ (Vetches lentils)

अल्सा-फा० (१) मरोड़फली, आवर्तनी (Heliteres isora) (२) खित्मी (Khitmi) (३) अजवाइन Carum Coptitum

अल्सी का तेल-हिं० पु० अलसी तैल, तीसी का तेल, अतसी तेल (Linseed oil)

अल्हम्मु-जुलू जावी-अ० तेजाब लुबान, लोबान का फूल, लोबानिकाम्ल। (Acidum benzoicum)

अल्हलो अल्मुर-अ० काकमाची-सं० मकोय-हिं० (Dulcamara)

अल्हाज-फा० य (ज) बासा-हिं०। दुराल्भा गिरिकर्णिका, यवास-सं० (Alhagi maurorum, *Desv*) मेमो०।

अल्हब्बा ल खज़रा-
अल्हब्बतिस्सौदा-
-अ० कालाजीरा, मंगरैल-हिं० बं०। कलौंजी-बम्ब० (Nigella Sativa, *Sibthorp*)

अववश-हिं० वि० [सं०] वंशहीन, निपूता, अपुत्र, निःसंतान।

अव-उप० [सं०] एक उपसर्ग है। यह जिस शब्द में लगता है उसमें निम्न लिखित अर्थों की योजना करता है—(१) निश्चय, जैसे—अवधारण। (२) अनादर, जैसे—अवज्ञा, अवसान। (३) ईषत्, न्यूनता वा कमी, जैसे—अवहुनन। अवघात। (४) निचाई वा गहराई, जैसे—अवतार अवक्षेप। (५) व्याप्ति, जैसे—अवकाश। अवगाहन।

अव्य० [सं० अपि, प्रा० अवि] और।

अवकरः-सं० पु० सम्मार्जनादिनिक्षिप्त धूलयादि।

पर्याय—सङ्कारः (अ०) अवस्करः, (अटी०) सङ्कारः (शब्द र०)।

अवकर्षण-हिं० संज्ञा पु० [सं०] उद्धार, निष्कर्षण बाहर खींचना। बलपूर्वक किसी पदार्थ को एक स्थान से दूसरे स्थान में लेजाना। खींच ले जाना।

अवकादन्-काई (Moss)। (२) फंगस। अथर्व०। सू० ३७। १०। का ४।

अवकाश-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) अवसर, समय, सुभीता। (opportunity), (२) विश्रामकाल, खाली वक्त, छुट्टी, फुर्सत, (Leisure)। (३) स्थान, जगह, (space)। (४) आकाश, अंतरिक्ष, शून्य स्थान। (५) दूरी, अंतर। फासिला।

अवकिरण-हिं० संज्ञा पु० [सं०] [वि० अवकीर्य अवकृष्ट] बिखेरना, फैलाना, छितराना।

अवकीर्ण-हिं० वि० [सं०] (१) फैलाया हुआ। छितराया हुआ। बिखेरा हुआ। (२) भ्रष्ट। नष्ट किया हुआ। नष्ट। (३) चूर्ण, चूर चूर किया हुआ।

संज्ञा पु० ब्रह्मचर्य का नाश। ब्रह्मचारी का स्त्री-संसर्ग द्वारा व्रतभंग।

अवकीर्ण-हिं० वि० [सं०] वह ब्रह्मचारी जिसका ब्रह्मचर्य व्रत भंग होगया हो। नष्ट-ब्रह्मचर्य।

अवकुञ्चन-हिं० संज्ञा पु० [सं०] समेटना, बटोरना, टेढ़ा करना।

अवकुण्ठन–हिं० पु० साहस परित्याग, भीरु होना।

अवकुन्थनम्–सं० क्ली० आर्त्तनाद।

अवकुशः–सं० पु० गोलाङ्गूल वानर। यह पर्णमृग की जाति से है। सु० सु० ४६ अ०।

अवकूलनम्–सं० क्ली० अग्नि द्वारा गरम करना, आग पर गरमाना। च० द० अतिसा-चि०। 'अङ्गारेषु कूलयेत्।" सु० अतिसा चि०।

अवकृष्ट–हिं० वि० [सं०] (१) दूर किया हुआ, (२) निगलित। नीचे उतारा हुआ।

अवकेशी–सं० स्त्रि० (१) अफल वृक्ष (Fruitless tree) हे० च०। (२) बाँझ, वन्ध्या (Sterile)

अवकृत–सं० पु० व्रण भेद। वा० उ० अ० २१

अवक्रः–सं० पु० सरल वृक्ष, चीड़, धूप, सरल। (Pinus longifolia) सरल गाछ–बं०।

अवक्रांति–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] (१) अधोगमन, उतार, गिराव। (२) झुकाव।

अवक्लिन्न–हिं० वि० [सं०] आर्द्र, गीला, तर, भीगा हुआ।

अवक्वाथ–हिं० पु० अजीर्ण क्वाथ अपक्व काथ।

अवक्षात–हिं० संज्ञा पु०, [सं०] गहरा गड्ढा।

अवगण्डः–सं० पु० गण्ड देशस्थ, व्रण। वयेस फोड़ा व०। पुटकुनी मड०। त्रिका०।

अवगथः–सं० पु० प्रातः स्नान। (Morning bath)

अवगाढ़–हिं० वि० [सं०] (१) निविड छिपा हुआ। (२) प्रविष्ट, छुपा हुआ, निमग्न।

अवगाढः–
अवगूढः–
–सं० पु० विच्छिन्न व्रण। वा० उ० अ० २६।

अवगाहः–सं० त्रि० पु०
अवगाह–हिं० वि० [सं० अवगाध] अथाह, बहुत गहरा, अत्यन्त गम्भीर।

संज्ञा पु० गहरा स्थान। स्नान गृह गुसलखाना स्नानागार।

संज्ञा पु० [सं०] (१) भीतर प्रवेश, डूबना। (२) जल में डूब कर स्नान करना। निमज्जन। (Bathing. ablution)

अवगाहनम्–सं० क्ली०
अवगाहन–हिं० संज्ञा पु० [वि० अवगाहित] स्नान करना, नहाना, पानी में डूबकर स्नान करना, मज्जन पूर्वक स्नान, निमज्जन, डुबकी लगाना।

संस्कृत पर्याय—अवगाहः, वगाहः, निमज्जनं शिरः स्नानम्, अम्भसि मज्जन (के०)। (Bathing. ablution) (२) मथन विलोडन; (३) प्रवेश, पैठ।

अवगाह(न)स्वेदः–सं० पु० अवगाहन द्वारा स्वेद कर्म करना।

विधि—द्रव स्वेदान्तर्गत कहे हुये द्रव्यों को एक कुण्ड में अथवा एक बड़े पात्र में भरकर रोगी को इसमें बैठावें। यह रोगी ऐसा हो जिसके सर्वांग में वात वेदना होती हो अथवा अर्श और मूत्रकृच्छादि रोगों में इस तरह किया जाता है। बर्तन कोई हो पर इतना बड़ा होना चाहिये जिसमें रोगी, वयठ तक बैठ जाय। खाट के नीचे एक गड्ढा खोदकर उसमें वात नाशक लकड़ी उपले भरकर आग लगाकर निर्धूम अंगार कर लिये जाएँ, फिर रोगी को उस खाट पर शयन कराया जाय। इसका नाम कूप स्वेद है। इसी तरह कुटी स्वेदादि के लक्षण अन्य ग्रन्थों से जानना चाहिये। वा० सू० १७ अ०।

अवगाहना–हिं० क्रि० अ० [सं० अवगाहन] (१) डूबकर नहाना। निमज्जन करना। (२) डूबना पैठना धँसना। मग्न होना।

अवगाहित–हिं० वि० [सं०] नहाया हुआ।

अवगीर्णः–सं० पु० अपान द्वारा निकला हुआ द्रव्य।

अवगुण्ठनम्–सं० क्ली०
अवगुंठन–हिं० संज्ञा पु० [वि० अवगुंठित] योषित शिरः प्रावरण, स्त्री मुखाच्छादन घूँघट, झुर्का (A veil)। (२) ढकना, छिपाना। (३) पर्दा।

अवगुंठितम्-सं० क्ली०
अवगुंठित-हिं० वि०
चूर्णित चूर्ण किया हुआ (Powdered) त्रिका० । (२) ढँका हुआ । छिपा हुआ ।

अवगुण-हिं० संज्ञा पु० [सं०] दोष । दूषण । ऐब ।

अवगुंठन-हिं० संज्ञा पु० देखो-अवगुण्ठनम् ।

अवगुंठनवती-हिं० वि० स्त्री० [सं०] घूँघट वाली ।

अवगुंठिका-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] (१) घूँघट; (२) जवनिका । पर्दा । (३) चिक ।

अवगुंठित-हिं० वि० [सं०] ढँका हुआ । छिपा हुआ । देखो—अवगुण्ठितम् ।

अवगुद-ते०
अवगुदे-कना०
अवगुदे हण्णु-
कना० रक्त० (लाल) इन्द्रायण महाकाल
-हिं० । Trichosanthespalmata *Roxb* । सं० फा० इं० ।

अवगुफन-हिं० संज्ञा पु० [सं०] गूँथन । गुहन । ग्रथन ।

अवगुंफित-हिं० वि० [सं०] गूथा हुआ । गुहा हुआ ।

अवगूहन-सं० पु० आलिंगन; आश्लेष, प्रेम से परस्पर अंग स्पर्श, करना । प्रेम से मिलना ।

अवग्रहः-सं० पु०
अवग्रह-हिं० संज्ञा पु०
(१) गज ललाट देश । हाथी का ललाट । हाथी का मस्तक । हस्ति मस्तक । हारा० (२) अनावृष्टि । वर्षा का अभाव (३) रुकावट । अटकाव । बाधा । (४) प्रकृति । स्वभाव । (५) गजसमूह । गज यूथ । अनुग्रह का उलटा

अवग्राहः-सं० पु० अवहारक, ग्राह ।

अवघातः-सं० पु०
अवघात-हिं० संज्ञा पु०
(१) आघात विशेष, अपघात, ताड़न, घन, प्रहार, चोट । (२) तण्डुलादि कण्डन (काँड़ना कूटना) । हे । (३) अपमृत्यु ।

अवचारः-सं० पु० प्रयोग, सहायता ।

अवचूर्णन-सं० क्ली० औषध के बारीक चूर्ण को क्षत आदि पर बुरकना । अवधूलन, धूड़ा (ला) करना ।

अवचूर्णम्-सं० क्ली० स्थूल चूर्ण, मोटा चूर्ण (Coarse powder) वह शुष्क बारीक पिसी हुई औषध जिसको क्षत आदि पर छिड़का जाय (Dusting powder) । जरूर, कबूस, नस्... र- अ० । धूड़ा-हिं०, उ० ।

अवचूर्णितः-सं० त्रि० चूर्णित चूर्ण किया हुआ । पाउडर्ड (Powdered) इं० ।

पर्याय- अवध्वंसः, अपध्वस्तः । अ० टी० ।

अवचूलकम्-सं० क्ली० चामर । (See-chamara) त्रि० ।

अवच्छद-हिं० संज्ञा पु० [सं०] ढकना । सरपोश ।

अवच्छिन्न-हिं० वि० [सं०] सीमाबद्ध । अवधि सहित । जिसका किसी अवच्छेदक पदार्थ से अवच्छेद किया गया हो । अलग किया हुआ । पृथक् ।

अवच्छेद-हिं० संज्ञा पु० [सं०] वि० अवच्छेद्य, अवच्छिन्न । (१) अलगाव । भेद । (२) सीमा । (३) परिच्छेद । विभाग ।

अवच्छेदक-हिं० वि० [सं०] (१) छेदक । भेदकारी । अलग करने वाला । (२) हद बाँधने वाला ।

अवच्छेदकता-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] (१) अवच्छेद करने का भाव । पृथक् करने का धर्म । अलग करने का धर्म । (२) हद वा सीमा बाँधने का भाव परिमिति ।

अवच्छेद्य-हिं० वि० [सं०] अलगाव के योग्य ।

अवछग-हिं० संज्ञा पु० देखो—उछंग ।

अवज-अ० वक्र या टेढ़ा होना । क्रुक्ड (Crooked) इं० ।

अवञ्चकः-सं० पु० भक्त रोगी, श्रद्धालु रोगी, वैद्य पर विश्वास रखने वाला रोगी, वै० निघ० ।

अवटना-हिं० क्रि० सं० [सं० आवर्त्तन, प्रा० आवट्टन] (१) मथना, आलोड़न करना, (२)

किसी द्रव पदार्थ को आग पर रखकर उबालकर गाढ़ा करना ।

अवटः-टी-सं० पु० (१) नाड़ी व्रण, नासूर । (Nadivrana-) (२) कूप कुआँ (Well) मे० । (३) छिद्र, (A hole a perforation)

अवट-हिं० संज्ञा० पु० (१) औटाकर, खौलाकर, (२) गर्त, गड्ढा । गड्ढा, कुंड, (३] गले के नीचे कंधे और छाती आदि का गड्ढा ।

अवटीटः-सं० त्रि०
अवटीट-हिं० वि० } नतनासिक, चिपटी नाकवाला खान्दा-व०, आम० ।

पर्याय—अवनाटः, अवभ्रटः अ० ।

अवटु:-सं० स्त्री० (१) ग्रीवा पश्च भाग, ग्रीवा के पीछे का भाग, गुद्दी मन्या. (Nape of the neck) रत्ना०, रा० नि० व० १०, पु० (१) वृक्ष विशेष (Atree), हे०, (२) रन्ध्र (Ahole)(४) कूप । (A well) हे० ।

अवटुका ग्रन्थि-सं० स्त्री० (Thyroid gland)चुल्लका ग्रन्थि ।

अवटः-सं० पु० मन्या पृष्ठ भाग, गर्दन के पीछे का भाग (Nape of the neck) वै० निघ०

अवतमसम्-सं० क्ली० अल्पान्धकार । (Slight darkness) अम० ।

अवतानम्-सं० क्ली० चन्द्रातप; चाँदनी (Moon light), (२) टखना । (Ankle)

अवतापः-सं० पु० अजावि ज्वर गज० वै० ।

अवतारणम्-सं० क्ली० भूतादि ग्रह । (२) वस्त्राञ्चल (The end or hem of a garment) मे० णत्रयकं । (३) उतरना, नीचे आना

अवतारणका-सं० स्त्री० नौका । (A boat)

अवतोका,-दा-सं० स्त्री० वह गाय जिसका गर्भस्राव (गर्भपात) हो चुका हो, हला० ।

अवतोकाम्-सं० क्ली० पतित गर्भवाली वह जिसका गर्भ गिर गया हो- अथर्व । सू० ६ । ६-का० ८ ।

अवतंसः-सं० पु० क्ली०
अवतंस-हिं० संज्ञा पु० } [वि० अवतंसित] कर्ण भूषण, कर्णालंकार, कर्णाभरण, कर्णफूल, कर्णपूर कर्णफूल (Anornamentof the are) (२) मुरकी, बाली (३) माला-हार (४) भूषण ।

अवदोली-मल० एक प्रकार के वृक्ष की छाल जो अनिश्चित है' फा० इं० ३ भा० ।

अवदन्तः-सं० पु० बालक सुगन्धवाला । बाला-सं० (Pavonia odorata) वै० निघ० ।

अवदलनम्-सं० क्ली० मर्दन क्रिया, गात्र मर्दन, देह का मलना । (Rubbing' massage) देखो मर्दन ।

अवदाघ-सं० गर्मी उष्णता । (Heat)

अवदात-सं० पु०
अवदात-हिं० वि० } (१) शुक्ल वर्ण का, गौर (White) (२) पीत वर्ण का, पीला (Yellow) अ० । (३) शुभ्र, उज्वल । श्वेत (३) शुद्ध, स्वच्छ । विमल । निर्मल

अवदानम्-सं० क्ली०
अवदान-हिं० संज्ञा पु० } (१) उशीर । खस । गँदरे की जड़, वीरण मूल । (Andropogon murieatus) अ० टी० । (२) खनित्र, अस्त्र विशेष कुदाल (A hoe or a kind of spade, a pick axe or mattock)(४) खंडन । तोड़ना । (५) शक्ति, बल ।

अवदान्तः-सं० पु० शिग्रु; सहिजन । (Hyperanthera moringa) वै० निघ० ।

अवदारक-हिं० वि० [सं०] विदारण करने वाला, विभाग करने वाला संज्ञा पु० [सं०] मिट्टी खोदने के लिये लोहे का एक डंडा । खंता, रंभा ।

अवदारणम्-सं० क्ली०
अवदारण-हिं० संज्ञा पु० } (१) मिट्टी खोदने का औजार । खनित्र कुदार । (ब), खंता, (A hoe or kind of spade)(२) विदारण करना, विभाग करना, तोड़ना, फोड़ना

अवदारित-हिं० वि० [सं०] विदारण किया हुआ विदीर्ण, टूटा हुआ ।

अवदाहेष्टकापथम्- **अवदाहेष्टम्-** } सं० क्ली० वीरणमूल, खस, (Andropogon muricatus) अ० टी० भ०।

अवदाह-घ्नम्- सं० क्ली० (१) लामज्जक तृण। (Andropogon lanuger) भा० पू० १ ब०. (२) वीरणमूल, उशीर, खस। गन्ध वेना-वंट खिला वाला-मह०। (Andropogno muricatus) वै० निघ०।

अवदीर्णम्- सं० त्रि० (१) द्रवीभूत घृतादि. (२) फटा हुआ विदारित।

अवदोहः- सं० पु० **अवदोह-** हिं० संज्ञा पु० } (१) दूध, दुग्ध, (Milk) त्रिक०, (२) दूध दुहना। दोहान

अवदंशः- सं० पु० **अवदंस-** हिं० संज्ञा पु० } सुरापान में रुचि जनक भक्ष्य द्रव्य, मद्यपान के समय जो चबाव बड़े आदि खाए जाते हैं, मजक, चाट, चटनी आदि उत्तेजक भक्ष्य, हलाव। (२) शिग्रु अर्थात् सहिंजन वृक्ष (Moringa pterygosperma) (३) कृष्ण शिग्रु (काला सहिंजन) काल सजिना गाछ बं० Moringa pterygosperma) The blackvar of-) वै० निघ०।

अवदंशत्वयः- सं० पु० काला सहिंजन, कृष्ण शिग्रु।

अवद्योतन्- सं० पु० प्रकाश। (Light)

अवध-धतूरा- हिं० द० अवध में उत्पन्न होने वाला प्रसिद्ध धतूरा।

अवधान- हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) मनका योग चित्त का लगाव। मनोयोग (२) चित्त की वृत्ति का निरोध करके उसे एक ओर लगाना, समाधि (३) ध्यान, सावधानी चौकसी।

संज्ञा पु० [सं० आधान] गर्भ गर्भाधान पेट।

अवधान तन्त्री- सं० स्त्री० (Auditory or acoustic nerve) श्रवण नाड़ी।

अवधारण- सं० पु० [वि० अवधारित अवधारणीय] निश्चय निर्णय विचार पूर्वक निर्धारण करना।

अवधि- हिं० पु० पर्यन्त, सीमा से तक लौं।

अवध्वंसः- सं० पु० **अवध्वंस-** हिं० संज्ञा पु० } [वि० अवध्वस्त] (१) अवचूर्णन, चूर्ण करना (To powder, powdering) मे०। (२) चूर्णन। चूर चूर करना। नाश। (३) परित्याग, छोड़ना। (४) देह को जलाकर नष्ट करने वाला। अथर्व० सू० २२। ३। का० ५।

अवध्वस्तः- सं० त्रि० अवचूर्णित, चूर्ण किया हुआ (Powdered),

अवनतकर्णीया- सं० स्त्री० (Obliquus auriculae)। शष्कुलीया असरला।

अवनतपादांगुष्ठाकर्षणी- सं० स्त्री० (Adductor phallucis obliquus) पादांगुष्ठ अंतरनायिनी असरला।

अवनम्- सं० क्ली० **अवनन-** हिं० संज्ञा पु० } (१) प्रीणन। तृप्तिकरण, प्रसन्न करना, (Satisfying) अ०। (२) प्रीति।

[सं० अवनि] ज़मीन, भूमि।

अवनत मान्द्रः- सं० पु० (Obliquepoplitteal),

अवनम्र- सं० झुका हुआ (Bent),

अवनत सूत्रम्- सं० क्ली० (Oblique cord), झुका हुआ या वक्र तन्तु।

अवनत कुट्टाकर्षणी- सं० स्त्री० (Adductorpollicis obliquus)।

अवनति- हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] झुकाव, झुकाना।

अवनत- हिं० वि० [सं०] (१) नीचा, झुका हुआ। (Oblique), (२) गिरा हुआ, पतित अधोगत।

अवनटः सं० त्रि० नतनासिका, झुकी नाक वाला, क्षुद्रनासा युक्त, अमर०।

अवनि- **अवनी-** } —हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] पृथ्वी, ज़मीन, अवनितल।

अवना- } —सं० स्त्री (१) त्रायमाणः See-T.
अवना- }
rayamana) रा० नि० व० ५।

अवनीसारा-सं० स्त्री० (Musa sapientum) कदली, केला, वै० निघ०।

अवनेजन-हिं० संज्ञा पु० [सं०] धोना, प्रक्षालन।

अवन्ति[न्ती) सोमम्-सं० क्ली० कांजी, काञ्जिक प० मु०, हारा० रा० नि० व० १५ (See-Kanjika)

अवपतन-सं० क्ली० ऊपर से आना, गिराव, नीचे गिरना, वा० सू० १२ अ०।

अवपाटिका-सं० स्त्री० क्षुद्र रोगान्तर्गत शूक रोग. लक्षण- लिंग के चर्म को बहुत मलने अथवा दब जाने या वीर्य का वेग रुक जाने आदि कारणों से यदि लिंग के ऊपर का चर्म फट जाय तो उसे "अवपाटिका" कहते हैं. यथा—'यस्यावपाट्यते चर्मतांविद्यादवपाटिकाम'। सु० नि० अ० १३। यह एक रोग है जो लघुछिद्र योनिवाली और रजस्वला-धर्म रहित स्त्री से मैथुन करने से, हस्त क्रिया से, लिंगेन्द्रिय के बन्द मुँह को बलात्कार खोलने से अथवा निकलते हुए वीर्य को रोकने से हो जाता है, इस रोग में लिंग को आच्छादित करने वाला चमड़ा प्रायः फट जाता है। मा० नि०।

अवपात-हिं० स० पु० [सं०] (१) गिराव। पतन। अधःपतन (२) गड्ढा। कुण्ड।

अवपीड- हिं० पु० } पाँच प्रकार के नस्य कर्मों में
अवपीडः-सं० पु० }
से एक, शोधन और स्तम्भन भेद से यह दो प्रकार का होता है, निचोड़ कर अर्थात् रस निकाल कर प्रयुक्त होने के कारण अथवा रोगी के नकुओं में टपकाए जाने के कारण इसको अवपीड कहते हैं यथा—"अवपीड्यतीयते यस्मात् अवपीडस्ततः स्मृतः अथवा अवपीड्यते यस्मात् स अवपीडः।" तीक्ष्ण औषधियों का कल्क कर उसे निचोड़ कर रस निकालें। इसे अवपीड कहते हैं, यह गले की बीमारियों में प्रशस्त है, प० प्र० ४ ख०। जो छींक लाने वाली औषध कल्कादि से बनाई जाती है परन्तु उसमें स्नेह नहीं मिलाया जाता है, उसे अवपीड वा शिरोविरेचन कहते हैं. यथा—"कल्काद्यैरवपीडस्तु तीक्ष्णैर्मूर्ध्नि विरेचनः" वा० सू० १९ अ०।

गले के रोग, सन्निपात, निद्रा विषम ज्वर, मनोविकार (मद, मूर्च्छा अपस्मार, सन्यास, उन्माद और भूतोन्माद आदि) और कृमि अर्थात् नाक में कीड़े पड़ जाने (वा कृमि जन्य रोगों) में अवपीडन नस्य का प्रयोग किया जाता है, वै० निघ० नस्य चि०। विशेष देखो—नस्य।

अवपीडन-हिं० पु० } अवपीड नामक नस्य
अवपीडनम्-सं० क्ली० }
विशेष।

अववाहुक-हिं० संज्ञा पु० } एक रोग जिससे
अववाहुकः सं० पु० }
हाथ की गति रुक जाती है। भुज स्तम्भ। देखो-अपबाहुकः (Apabahukah)

अवभासिका, नी-सं० स्त्री० सात त्वचाओं में से एक त्वचा विशेष। यह प्रथम अर्थात् सबसे ऊपर (शरीर के बाहर) की त्वचा है और समस्त वर्णों (कृष्णता, गौरतादि) को प्रकाश करती है, तथा वहीं पांच प्रकार की पाँच भौतिक छाया तथा चकार के ग्रहण से प्रभा को प्रकाश करती है यह त्वचा व्रीहि अर्थात् जौ के (जो बीस भाग है उनमें) अठारह भाउ के समान मोटी है यही सीप और पद्मकंटक नामक चर्म रोगों के होने का स्थान है अर्थात् सीप, पद्मकण्टक इसी ऊपर की त्वचा में होते हैं। सु० शा० ४ अ०।

अवभ्रटः-सं० त्रि० नतनासिका वाला, चिकिन। (Flat-nosed) अम०।

अवम्-हिं० वि० [सं०] (१) नीच, निंदित (Low, vile, inferior). (२) अधम, अंतिम। (३) रक्षक।

अवमन्थः-सं० पु० } एक रोग जिसमें लिंग
अवमन्थकः }
अवमन्थ-हिं० संज्ञा पु० }
में बड़ी बड़ी और घनी फुंसियां हो जाती हैं।

लक्षण—जिसमें बड़ी बड़ी बहुत सी फुंसियाँ बीच से फटी सी हो जाए उसे "अवमथ" कहते हैं। यह रोग कफ और रक्त के विकार से होता और वेदना तथा रोम हर्ष करने वाला होता है। सु० नि० १४ अ०।

(२) कर्णपाली रोग भेद। सु० सू० १६ अ०।

अवमनीय-हिं० वि० जो वामक न हो अथवा जो वमन को रोके।

अवमर्दनम्-सं० पु० क्ली०
अवमर्दन-हिं० संज्ञा पु० } पीड़न। वेदना। दुःख देना। दलन अम० (See-Pidanam, पीड़ा पहुचाना।

अवमोटनम्-सं० क्ली० आमोटन। मा० नि० वा० व्या०।

अवम्भिसोम-सं० काँजी, काञ्जिक। (See-Kanika)

अवयवः-सं० पु०
अवयव-हिं० संज्ञा पु० } शरीरावयव, अंग, देह, शरीर, हस्तपाद आदि भाग, शरीर का एक देश. (A limb, a member), (२) अंश। भाग। हिस्सा।

अवयव स्थानम्-सं० क्ली० शरीर (The body) वै० निघ०।

अवयवी-सं० पु० पक्षी। (A bird) वै० निघं०।

हिं० पु० (१) वह वस्तु जिसके बहुत से अवयव हों। (२) देह शरीर।

वि० [सं०] (१) जिसके और बहुत से अवयव हों, अंगी।

(२) कुल, सम्पूर्ण समष्टि, समूचा

अवरम्-सं० क्ली०
अवर-हिं० वि० } हाथी की जाँघ का पिछला भाग, अम०।

अवर-अ० काना होना, एक नेत्र से हीन होना। (To be Blind) काने मनुष्य को तिब (वैद्यक) में अअवर कहते हैं।

अवर गिला-कना० तरवड़-हिं०। (Cassia Auriculata, Linn) फा० इं० १ भा०।

अवरज-हिं० संज्ञा पु० [सं०] [स्त्री० अवरजा] कनिष्ठ भ्राता, अनुज, लहुरा भाई, छोटा भाई। (A younger brother) (२) नीच कुलोत्पन्न, नीच।

अवरजा-हिं० संज्ञा स्त्री० कनिष्ठा भगिनी, छोटी बहिन. (A younger sister)

अवरण-हिं० संज्ञा पु० (१) देखो—अवर्ण। (२) देखो—आवरण।

अवर दारुकम-सं० क्ली० तन्नामक स्थावर विषान्तर्गत पत्रविष, सु० कल्प० २ अ०। देखो—पत्रविषम्।

अवरव्रत-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) सूर्य। (२) आक, मदार।

अवराई-ता० तरवड़-हिं० संज्ञा स्त्री० (Cassia auriculata, Linn) इं० मे० मे०।

अवराम्-अ० (ब० व०), वर्म (ए० व०) आमास फा०। सूजन, शोथ, श्वयथु-हिं०। स्वेलिंग (Swelling)-इं०।

अवराम् मग़ाविन-अ० मग़ाविन अर्थात् बगल जंघासा और वक्षण का शोथ जो प्लेग के अतिरिक्त होता है। व्युबोज (Bubos)-इं०। देखो—खैर्ज़ील।

अवरिका-सं० स्त्री० धन्याक, धनियाँ। धनं-बं०। (Coriandrum sativum) रा० नि० व० ६।

अवरी-गु० (१) शिम्बी, सेम (The flat bean) फा० इ० १ भा०।

मल०, सिंगा० नीक-हिं०। (Indigofera Indica) इं० मे० मे०।

अवरीकी-कना० तरवड़-हिं०। (Cassia auriculata, Linn)

अवरुद्ध-हिं० वि० [सं०] रुँधा हुआ, रुका हुआ, अटकाया गया, रुका (Obstructed)। (२) आच्छादित, गुप्त, छिपा।

अवरुद्धा-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्त्री जिसे कोई रखले, उढ़री, रखुई, रखना।

अवरूढ़-हिं० वि० [सं०] ऊपर नीचे का या हुआ, उतरा हुआ, आरूढ़ का उलटा।

अवरोध-हिं० संज्ञा पु० [सं०] रुकावट, रोक, अटकाव, हिण्ड्रेन्स (Hindrance) आब्सट्रक्शन (Obstraction)-इं०। (२) निरोध, बन्दकरना।

अवरोध उद्घाटक-हिं० पु० देह के छिद्रों को खोलने वाली औषध, वह औषध जो अपनी उष्मा के कारण स्रोतावरोध को खोलें, और सुद्द अवरोध प्रभृति को दूर करे। मुफत्तिह, मुफत्तिहुस्सुदद, मुज़य्यिलुस्सुदद-अ०। अभिष्यन्द रोकने वाला। डीआब्स ट्रुएण्ट (Deobstruent)-इं०।

अवरोधक-हिं० वि० [सं०] देह के छिद्रों को रोकने वाली औषध, सुद्दा डालने वाली औषध वह औषध जो अपनी शुष्कता वा स्थूलता के कारण नालियों में रुक जाय और उनको बन्द करदे। मुसद्दिद (ए० व०), मुसद्दिदात (ब० व०)-अ०। आब्सट्रक्टएण्ट (Obstruent)-इं०।

(२) (Insulator) रोधक अपरिचालक।

अवरोधन-हिं० संज्ञा पु० [सं०] [वि० अवरोधक अवरोधित, अवरोधी, अवरोध, अवरुद्ध] रोका, छेकना।

अवरोधना-हिं० क्रि० स० [सं० अवरोधन] [वि० अवरोधक] रोकना।

अवरोधित-हिं० वि० [सं०] रोका हुआ, रुका।

अवरोधी-हिं० पु० [सं० अवरोध] [स्त्री० अवरोधिनी] अवरोध करने वाला। रोकने वाला।

अवरोपण-हिं० संज्ञा पु० [वि० अवरोपित, अवरोपणीय] उखाड़ना, उत्पाटन।

अवरोपणीय-हिं० वि० [सं०] उखाड़ने योग्य।

अवरोपित-हिं० वि० [सं०] उखाड़ा हुआ, उन्मूलित।

अवरोहः-सं० पु०
अवरोह-हिं० संज्ञा पु० } (१) बटादि वृक्ष का अधो विलम्ब-कारडाकार अवयव विशेष वरोह, बर की जटा, वटादि-रुह माल-बं०। (२) अवरुद्ध, द्रव्य ग०। (३) उतार, गिराव, अधःपतन।

अवरोहक:-सं० पु०
अवरोहक-हिं० पु० } अश्वगन्धा (Withania Somnifera) मद० व० १।

वि० [सं०] गिराने वाला।

अवरोहण-हिं० संज्ञा पु० [सं० [वि० अवरोहक अवरोहित, अवरोही] नीचे की ओर जाना, पतन उतार गिराव।

अवरोहना-हिं० क्रि० अ० [सं० अवरोहण] उतरना, नीचे आना।

क्रि० अ० [सं० आरोहण] चढ़ना, ऊपर जाना।

क्रि० स० [सं० अवरोधन, प्रा० अवरोहन] रोकना, रूँधना छेकना।

अवरोहशाखी-सं० पु० प्लक्ष वृक्ष, पाकर (-री)-हिं०। (Ficus infectoria) पाकुड़ गाछ-बं०। रा० नि० व० ११।

अवरोह सांग्विनः-सं० पु० वट बरगद (Ficus Bengalensis) फा० इं० ३ भा०।

अवरोहक-हिं० संज्ञा पु० (Antipode)

अवरोहि-सं० स्त्री० नीचे आना, उतरना। (Descending)

अवरोहिका-सं० स्त्री० अश्वगन्धा (Withania Somnifera) रा० नि०।

अवरोहि प्रेर्व-सं० स्त्री० (Ramus descendens)

अवरोहित-हिं० वि० [सं०] (१) गिरने वाला, (२) अवनत, हीन।

अवरोहित तालव्य-सं० स्त्री० (Descending palatine)

अवरोहिस्थूलान्त्र-सं० क्ली० (Descending colon) अधोगामी वृहदन्त्र।

अवरोही-इन्-सं० पु०; हिं० संज्ञा पु० वट वृक्ष, बरगद। बट गाछ-बं०। (Ficus Bengalensis) रा० नि० व० ११।

अवरोहावर्त्ता-सं० स्त्री० (Descending portion of Aorta) अधोगा महा धमनी।

अवर्ण-सं० पु० अक्षर, आकार, निन्दा, परिवाद। हिं० वि० [सं०] वर्ण रहित, बिना रंग का, (२) बदरंग, बुरे रंग का।

अवर्त-सं० पु०, हिं० संज्ञा पु० पानी का चक्कर, भँवर, नाँद (Whirlpool) (२) घुमाव चक्कर। [सं०] (३) स्फूर्तिशून्य पदार्थ। वह पदार्थ जिसके आर पार प्रकाश वा दृष्टि न जा सके (४) देखो—आवर्त्त।

अवर्त्तिः-सं० पु० बेचैनी, अथर्व०।

अवर्षण-हिं० संज्ञा पु० [सं०] वृष्टि का अभाव, वर्षा का अभाव, वर्षा का न होना, अवग्रह, अनावृष्टि।

अवलग्नः-सं० पु०
अवलग्न-हिं० संज्ञा० पु० } मध्य प्रदेश, शरीर का मध्य भाग, धड़, माझा हिं० वि [सं०] लगा हुआ, मिला हुआ सम्बन्ध रखने वाला।

अवलम्बनः कः-सं० पु० अवलंबन कफ। पाँच प्रकार के कफों में से एक। श्लेष्मा विशेष, स्थान हृदय, कर्म रस युक्त वीर्य हृदय के भाग का अवलम्बन और त्रिक (मस्तक और दोनों भुजाओं की संधि) को धारण करता है। भा० देखो-कफ

अवलम्बित-हिं० वि० (Suspended) मुअल्लिक।

अवलक्षः-सं० पु० (१) श्वेत वर्ण सफेद (White), (२) स्वामी। (Mercury)

अवला-सं० स्त्री० नारी, स्त्री (A women) रत्ना०, (२) प्रियंगु (Aglaiaroxburghiana.) प्रयोगा०-गलगण्ड। "मधुलोध्राव, लासर्ज" मह० (३) आमला, अँवरा, (Phyllanthus emblica. *Linn*) स० फा० इं०।

अवला गन्धक-मह० आमलासार गन्धक हिं०। आँवलासार गन्धक द०, (A sort of sulphur) स० फा० इं०। देखो—गंधक।

अवला-गु० (१) तरवड़ हिं०, (Cassia Auriculata. *Linn*) फा० इं० १ भा०। हिं० पु० (२) वरुण वृक्ष, वरना। (Crataeva tapia)

अवलिप्त-हिं० वि० [सं०] (१) लगा हुआ, पोता हुआ, (२) सना हुआ आसक्त।

अवली-लि-सं० स्त्री० हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० आवलि] पांती, लकीर पंक्ति (A line row) (२) समूह झुंड (३) वह अन्न की पाँठ जो नवान्न करने के लिये खेत से पहिले २ काटी जाती है।

(४) रोआँ व ऊन जो गँड़रिया एकबार भेड़ पर से काटता है।

अवली कन्द-माला कन्द कन्द लता, रा० नि०।

अवलीढ-हिं० वि० [सं०] (१) भक्षित। खाया हुआ, प्राशित (२) चाटा हुआ।

अवलुञ्जनम्-सं० क्ली०
अवलुञ्चन-हिं० संज्ञा पु० } (१) मुण्डन (Shaving) (२) शैथिल्य (Laxity, flaccidity) त्रुटन। सु० सू० २५ अ०। (३) छेदना, काटना, (४) उखाड़ना, नोचना

अवलुंचित-हिं० वि० [सं०] मुण्डित (१) दूरीकृत हटाया हुआ अपनीत, (२) खुला या खोला हुआ (३) कटा हुआ, छेदित (४) उखाड़ा हुआ, नोचा हुआ।

अवलुंठन-हिं० संज्ञा पु० [सं०] लोटना।

अवलेखना-हिं० क्रि० स० [सं० अवलेखन] (१) खोदना, खुरचना।

अवलेपः-सं० पु०
अवलेप-हिं० संज्ञा पु० } गर्व्व, घमण्ड (Vanity, pride) (२) उबटन, लेपन, लेप, मलहम, (Plaster ointment) (३) भूषण (Plastea ornament) मे० पचतुष्क।

अवलेपनम् सं० क्ली०
अवलेपन-हिं० संज्ञा पु० } (१) उबटन, लेपन, लेप वह वस्तु जो लगाई वा छोपी जाए (Plaster ointment)

(२) अक्षण तेल घृत आदि का लेपन या मर्दन तैलादि की मालिश, लगाना, पोतना छोपना (३) अहंकार (४) दूषण।

अवलेहः-
अवलेह-
अवलेहिका } सं० (हिं० संज्ञा) पु० स्त्री० [वि० अवलेह्य] (१) चटनी चटने वाली कोई वस्तु भोज्य विषय। कोई जो न अधिक गाढ़ा और न अधिक पतली हो और चाटी जाय (२) औषध जो चाटी जाए लेह्यौषध, प्राशः। जिह्वा द्वारा जिसका आस्वादन किया जाय उसे अवलेहिका कहते हैं च० द० ज्व० चि०, लऊक-अ०। लॉक Loch, लिक्टस Liactus' लिक्चर Lincture' इलेक्चुअरी Electuary इ०

नोट—यूनानी वैद्यक एवं डाक्टरी अवलेह निर्माण क्रमादि के विशेष विवरण के लिये क्रमश लऊक तथा लिक्टस शब्द के अन्तर्गत और आयुर्वेदीय वर्णन के लिए लेहः शब्द के अन्तर्गत देखें।

क्वाथ आदि अर्थात् स्वरस' फाण्ट एवं कल्क प्रभृति को छानकर पुनः इतना पकाँए कि वे गाढ़े हो जांय, इसे रस क्रिया कहते हैं और यही अवलेह वा लेह कहलाता है। इसकी मात्रा एक पल (४ तोले) की है, यथा—

क्वाथादीनां पुनः पाकाद्घनत्वंसा रसक्रिया।
सोऽवलेहश्चलेहः स्यात्तन्मात्रा स्यात्पलोन्मिताः॥

यदि अवलेह में शक्कर प्रभृति डालने का परिमाण न दिया हो तो औषधों के चूर्ण से चौगुनी मिश्री और गुड़ डालना हो तो चूर्णों से दूना डालें जल वा दूध आदि द्रव डालना हो तो चौगुना मिलाना चाहिये यथा—

सिता चतुर्गुणा कार्या चूर्णाञ्च द्विगुणोगुडः।
द्रवं चतुर्गुणं दद्यादिति सर्वत्र निश्चयः।

अवलेह सिद्ध होने की परीक्षा

दर्वीसे उठाने पर यदि वह तन्तु सयुक्त दिखाई दे जलमें डालने पर डूब जाय द्रव रहित अर्थात् खर हो दबाने पर उसमें उँगलियों के निशान पड़ जांय और वह सुगन्ध युक्त और सुरस हो तो उसे सुपक्व जानना चाहिये यथा.

सुपक्वे तन्तुमत्व स्यादवलेहोऽप्सु मज्जति।
खरत्वं पीड़ितं मुद्रा गन्धवर्णं रसोद्भवः॥

जहाँ पर अवलेह के अनुपान की व्यवस्था न दी गई हो वहां पर दोष और व्याधि के अनुसार दूध ईख का रस, पञ्चमूल के क्वाथ द्वारा सिद्ध किया हुआ यूष और अडूसे के क्वाथ में से किसी एक का यथा योग्य अनुपान देना हितकारी है।

दोषानुसार अनुपानों का मात्रा

कफ व्याधि में १ पल पित्त में २ पल और वात में ३ पल की मात्रा प्रयोग में लाएँ

मुख्य मुख्य आयुर्वेदोक्त अवलेह निम्न हैं:—

कण्टकार्यवलेह, च्यवनप्राशावलेह कूष्माण्डावलेह खण्डसूरणावलेह अगस्त्यहरीतक्यवलेह, कुटजावलेह कुटजाष्टकावलेह इत्यादि।

अवलेहनम्- सं० क्ली०
अवलेहन-हिं० संज्ञा पु० } लेहन प्राशन चाटन, जीभ की नोंक लगाकर खाना (Licking' tasting with the tongue) (२) चटनी।

अवलेह्य-हिं० वि० [सं०] प्राश्य चाटने योग्य।

अवलो-ते० घोर राई, काली राई, राई असल राई मकरा राई-हिं० राजिका-सं०। (Brassica nigra, Koch) मेमो०।

अवलोकन-हिं० संज्ञा पु० [सं०] [वि० अवलोकित, अवलोकनीय] दर्शन ईक्षण दृष्टि देना, देखना (Viewsight, the loking at any odject) (२) निरीक्षण

अवल्कः-सं० पु० मेषशृङ्गी, मेढा सिंगी (Pistacia Integerrima, *Stewart*) वै० निघ०।

अवल्गजा-सं० स्त्री० कृष्ण सोमराजी, बाकुची। Verronia anthelmintica (The black var of) हाकुच बं० भैष० भल्ला० गुड़।

अवल्गुजः-जा-सं० पु० स्त्री० (१) कृष्ण सोमराजी (The black var of Vernonia

anthelmintica) सु० चि० २५ अ०। (२) सोमराजी बकुची- हिं०। हाकुच-बं०। (Vernonia anthelmintica) भा० पू० १ भा० भैष० कुष्ठ० चि०।

अवल्गुज बीजम्-
अवल्गु जीजम्- }
स० क्ली० सोमराजी बीज, बकुची Vernonia anthelmintica (The seeds of-)

अवल्गुजादि लेपम्-स० क्ली० बकुची, कसौंदी, पमाड़, हल्दी, सैन्धव और मोथा इन्हें समान भाग लें काँजी में पीसकर लेप करने से उग्र कण्डू (खुजली) का नाश होता है। च० सं०।

अवश(स)कृथिका-सं० स्त्री० (१) ज़ानु देश, (२) पद बन्धन वस्त्र विशेष।

अवशिष्ट-हिं० वि० [सं०] बचा हुआ। बचाखुचा शेष बाकी। अच्छुष्ट। बचा बचाया। (Left remaining)

अवशेष-स० पु० हिं० संज्ञा पु० [वि० अवशेष, अवशिष्ट] (१) अन्त, समाप्ति। (२) बची हुई वस्तु। तलछट। (A residuea remnant)

वि० [सं०] बचा हुआ। शेष। बाकी।

अवशेषित-हिं० वि० [सं] बचा हुआ। शेष। बाकी।

अवश्यः-
अवश्या- } सं० पु०, स्त्री० तुषार, शीत, पाला हिम बर्फ। (Frost Coldice or snow) भा० म० ४ भा० शिरोरोग, अर्द्धाव भेदक 'प्राग्वातावश्याय मैथुनैः।" भल्ला० गुड़।

अवश्यायः-सं० पु०
अवश्याय-हिं० संज्ञा पु० }
शिशिर (Cold) च० द० पि० ज्व० मृद्वीकादि० "अवस्यायस्थित पाकम्" (२) तुषार, हिम, पाला (Frost cold) भा० म० ४ भा० नासारो०। "अवश्यायकमैथुनवाष्प सेकैः।" (३) झींसी। -झड़ी।

अवश्यन्-हिं० संज्ञा पु० [सं०] चूल्हे पर से पके हुये खाने को उतार कर नीचे रखना।

अवश्याया-स० स्त्री० कुज्झटिका। See-Kujjhatika

अवष्टम्भः-स० पु०
अवष्टम्भ-हिं० संज्ञा पु० }
[वि० अवष्टब्ध] स्वर्ण, सोना Gold (Aurum) मे० (२) आश्रय, सहारा।

अवष्टब्ध-हिं० वि० [सं०] जिसे सहारा मिला हो आश्रित।

अवष्वाणम्-सं० क्ली० भक्षण। (Eating) हे० च०।

अवसक्थिका-स० स्त्री० हिं० संज्ञा स्त्री० खटिया, खट्टिका खट्टा खाट। पर्याय—पर्य्यस्तिका, परिकरः पर्य्यङ्कः। हे०।

अवस्था-हिं० स्त्री० प्रकृतिकी हालत जैसे ठोस, तरल वा वायवीय। (State)

अवस्था परिवर्त्तन-हिं० पु० (Change of state) पदार्थ की एक अवस्था से दूसरी अवस्था में परिणति। इसका मुख्य कारण ताप है अस्तु जब हिम; मोम वा जमे हुये घी को उष्ण किया जाता है तब वेद्रवीभूत हो जाते हैं यदि उन्हें तपाना जारी रखें तो उनके वाष्प बनकर उड़ जाते हैं। और वाष्पों को यदि शीतल करें तो दे पुनः पूर्वावस्था को यथाक्रम प्राप्त हो सकते हैं आधुनिक रसायनशास्त्र के अनुसार इसे ही "अवस्था परिवर्तन" कहते हैं।

अवसन्न-हिं० वि० [सं०] (१) शान्त, क्लान्त, थका हुआ, उदास। (२) जड़ीभूत, स्वकार्य्याक्षम, सुन्न, स्पर्श शून्य, निःसंज्ञ।

अवसन्नता-हिं० संज्ञा स्त्री सुन्न हो जाना, निश्चेष्ट होना, काय सुप्तता, स्पर्शाज्ञता, त्वक् शून्यता त्वक्स्वाप, संज्ञानाश, कार्याक्षमता, जाड्य। यह स्पर्शशक्ति के विकार से पैदा होती है यदि कारण बलवान हो तो स्पर्श शक्ति सदा के लिये विदा हो जाती है, अन्यथा वह विकृत वा कम हो जाती है।

अनस्थेसिया (Anæsthesia), नार्कोटिज्म (Narcotism), नम्बनेस (Numbness)-इं० । खद्र, खद्दर; फक्दुल इह्सास, कलालुल हिस-अ० जवाल हिस-फा० । हिस का जाते रहना-उ० ।

नोट—नार्कोटिज्म अवसन्नता की उस कृत्रिम अवस्था को कहते हैं जो किसी अवसन्नताजनक औषध के प्रयोग से कृत्रिम रूप से उपस्थित हो जाती है।

अवसन्नता जनक-हिं० सुन्न करने वाली औषध, वह औषध जो अपने शैत्य, रूक्षता और स्तम्भक गुण के कारण शारीरिक धातुओं तथा आर्द्रता को सांद्रीभूत कर दे और आवयविक स्रोतों को अवरुद्ध कर प्राण वायु के आवागमन को रोके और इस प्रकार उक्त अंग को जड़ीभूत करदे। यथा—अहिफेन, कोकीन प्रभृति । संज्ञाहर, स्पर्श कारक, स्पर्शाज्ञताजनक, स्पर्शघ्न । हिं० ।

अनस्थेटिक (Anæsthetic) नार्कोटिक (Narcotic)-इं० । मुख़द्दिर, मुफ़ाब्बदुल इह्सास, ख़दिर-अ० ।

नोट—डॉक्टरी की परिभाषा में अनस्थेटिक्स उन औषधों को कहते हैं जो मस्तिष्क एवं सौषुम्न केन्द्रों पर प्रभाव कर अचेतता एवं निःसंज्ञता उत्पन्न करती हैं।

परन्तु यह शब्द अब साधारणतः सुगन्धित व अस्थिर पदार्थों यथा क्लोरोफार्म ईथर, मीथिलीन नाइट्रस आक्साइड गैस (हास्यजनक वायव्य) प्रभृति के लिये ही प्रयुक्त होता है इसमें ऐलकोहल (मद्यसार) तथा अहिफेन जैसी मादक (Narcotic) औषधें सम्मिलित नहीं, यद्यपि वे भी स्पर्शाज्ञताजनक हैं।

इनके दो भेद हैं—

(१) स्थानिक संज्ञाहर—इस प्रकार की औषध शरीर के जिस अंग पर लगाई जाती हैं, वह उस स्थल की बोध शक्ति को नष्ट कर देती है अर्थात् उक्त भाग को अवसन्न कर देती है।

लोकल अनस्थेटिक्स (Local anæsthetich)-इं० । मुक़ामी मुख़द्दिर, मुकामी मुफ़्फ़िब्बतुल् इह्सास-अ० । मुकामी हिस्स को जायल करने वाली या सुन्न करने वाली दवा-उ० ।

वे निम्न हैं—

डॉक्टरी—कार्बोलिक एसिड, युकीन, कोकीन वा त्वक्स्थ अन्तःक्षेप, ईथर (स्प्रे); वेराट्रीन, ईथल क्लोराइड, मीथल क्लोराइड (स्प्रे द्वारा) बाह्य शीत (बर्फ), आर्थोफार्म, आर्थोफार्म न्यु, आयडोफार्म, ईथर, मीथीलेटस, ईथर, मैथीलिक्स, ईथल ब्रोमाइडम ऐरोमैटिक आइल्ज (सुगन्धित तैल), ऐकोईन, एलीपीन, अनस्थेसीन (अवसन्नीन), अनस्थिल, थाइमोल (सत अजवाइन), ट्रोपाकोकीन, सबक्युटीन, स्टोवेइन, फेनोल, कैम्फर (फेनोल तथा कर्पूर), क्लोरेटोन, क्लोराइल, कोकीन हाइड्रो क्लोराइडम्, कोकीनी फेनीलास, कैलीन, ग्वाइको(कि)ल, मेथीलाल और मेन्थोल (सत पुदीना) एवं नर्ब्रसाईडीन, नर्बेनीन, नोवोकीन, हालोकीन, हाइड्रोक्लोराइड, युकीन, हाइड्रोक्लोराइडम; युग्युफार्म, युहिमबीन, स्टेनोकार्डीन।

आयुर्वेदीय तथा यूनानी

अहिफेन, तम्बाकू शूकरान, (कोनायम), धत्तूर फल अजवायन खुरासानी यव्रुजुग्सुनम् (बिलाडोना), बीख लुफाह, उक्त हवान (बाबूना भेद), पार्वतीय, अजवायन, भंग, केशर, हमामा, काकनज, बीख जर्ब, कुचिला, इस्वद श्वेत कटुकी काहू, तुलसी, गुलेलाला, पित्तपापड़ा, सोआ, कुन्दुर, लवंग, शाहसफ्रम, शक्रायक, बच्छनाग, विट्खदिर, वच, कोका हिंगु, मेषशृंगी (गुड़मार) काली कटुकी, जलब्राह्मी, निम्ब जटामांसी, कटुकी और अशोक।

(२) सावागिक संज्ञाहर—

जनरल अनस्थेटिक्स (General anæsthetics) इं० । मुख़द्दिरात कुल्ला-अ० । बेहोशी पैदा करने वाली दवा-उ० ।

ये औषधें इस प्रकार संज्ञाशून्यता उपस्थित कर देती हैं कि फिर किसी भाँति की वेदना का बोध नहीं होता अर्थात् सार्वदैहिक स्पर्शाज्ञता-

जनक औषधों के उपयोग से मनुष्य पर पूर्ण अचेतता व्याप्त हो जाती है। दुख एवं वेदना का सर्वथा लोप हो जाता है तथा परावर्तित चेष्टाएं विनिष्ट हो जाती हैं। यह औषध "विकास सिद्धांत, (इस नियम के अनुसार वात केन्द्रों पर औषध का प्रभाव उनके विकास क्रमके विरुद्ध होता है) तथा "पूर्वोत्तेजन एवं नैर्वल्योत्तर नियम" (इस नियम के अनुसार अल्प मात्रा में अथवा प्रारम्भ में औषध का उत्तेजक एवं अधिक मात्रा में अथवा पश्चात को उसका नैर्वल्यजनक प्रभाव होता है) के उत्तम उदाहरण हैं अस्तु इनके आघ्राण कराने अर्थात् सुँघाने से भावना शक्ति प्रबल हो जाती है। पुनः मस्तिष्क गत्युत्पादक केन्द्रों में गति होती है और रोगी चित्त वृत्ति की अस्थिरता एवं विभिन्न केन्द्रो की असाधारण तथा अनियमित गति के कारण अनाप शनाप मूर्खतापूर्ण बातें करने लगता है और हाथ पाँव मारता है। थोड़े काल पश्चात् मस्तिष्कीय शक्तियों में निर्बलता के लक्षण प्रगट हो जाते हैं बुद्धिभ्रंश होता तथा मस्तिष्क के उच्च केन्द्रो में और अधिक गति होती है अतएव हृदय स्पंदित होता श्वासोच्छ्वास तीव्र हो जाता और रक्तभार बढ़ जाता है क्षण भर बाद ये लक्षण भी अदृश्य हो जाते और रोगी पूर्णतः अचेत हो जाता है सम्पूर्ण शरीर की बोध शक्ति लुप्तप्राय हो जाती मांस पेशियां शिथिल हो जाती एवं किसी प्रकार की चेष्टा से भी ये गतिशील नहीं होती हैं नेत्र कनीनिका संकुचित हो जाती नाड़ी एवं श्वासोच्छ्वास की गति कम हो जाती है इत्यादि प्राय ऐसी ही दशा में शस्त्रकर्म सम्पादित होता है।

पर यदि जेनरल अनस्थेटिक्स (सार्वांगिक संज्ञाहर) का प्रयोग असावधानतापूर्वक किया जाए तो फिर भयानक लक्षण प्रगट होने लगते हैं। अस्तु, अनैच्छिक मांस पेशियों के वातग्रस्त होजाने से प्रायः मल-मूत्रका प्रवर्तन हो जाया करता है, श्वासोच्छ्वास एवं हार्दिक गतियां अत्यन्त निर्बल और अन्ततः अनियमित हो जाती हैं। प्रायः श्वासोच्छ्वास वा हृदय केन्द्र के वातग्रस्त हो जाने से मृत्यु उपस्थित होती है।

मूर्च्छा दूर होने के पश्चात् जब चैतन्यता का उदय होने लगता है तब जिस क्रम से मनुष्य की शारीरिक क्रियाएं अवसित हुई थीं ठीक उसके विपरीत उत्तरोत्तर वे उपस्थित होने लगती हैं। किन्तु औषधि का प्रभाव कई घंटे तक शेष रहता है और चैतन्यता लाभ करने के पश्चात् भी अधिक काल तक शारीरिक पेशियां भली प्रकार कार्य सम्पादन करने के अयोग्य रहती हैं।

पूर्ण अचैतन्यता प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष दोनों कारणों से उत्पन्न की जा सकती है। अस्तु अप्रत्यक्ष (Indirect) रूप से संज्ञाशून्यता उपस्थित करने की निम्नलिखित तीन विधियां हैं:—

(१) शिरोधीया धमनी (Carotids) या गरदन की रग को दबाकर या उन्हें बांधकर या दोनों पार्श्व के वेगस—नर्व तथा शिरोधिया धमनी को दबाकर और इस प्रकार मस्तिष्क रक्तसञ्चार को अवरुद्ध कर, जिससे वातसेलीय संवर्तन क्रिया-शून्य हो जाता है पूर्ण विसज्ञता उपस्थित की जा सकती है।

(२) रक्त की वेनासिटी (शिरा सम्बन्धी प्रतिक्रिया) को बढ़ा कर और इस प्रकार वातसेलों की ओपजनीकरण क्रिया को घटाकर भी बेहोशी उत्पन्न की जा सकती है।

(३) मस्तिष्क से शोणित को शरीर के अन्य भागों में पहुँचाकर जैसे पृथ्वी पर उत्तान लेटे हुये रोगी को सहसा उठाकर खड़ा कर देने से भी बेहोसी उत्पन्न की जा सकती है।

अवसन्नोन—हिं० पु० अनल्जीन अवसन्नीन।

अवसादक—हिं० संज्ञा पु० [सं०] वह औषधि जो बढ़े हुये दोषों की उष्मा एवं क्षोभ को शमन करे अथवा वह जो धात्वव्ययिक क्रिया को अवसित करे। उदाहरणतः—(१) वातकेन्द्रिक क्रिया यथा ताम्रकूट (तम्बाकू) लोबेलिया (अरण्य तम्बाकू) ब्रोमाइड आंफ पोटाशियम प्रभृति (२) रक्तसञ्चालन सांस्थानिक क्रिया

यथा वत्सनाभ वेराट्रम टार्टार एमेटिक; प्रूसिक एसिड प्रभृति (३) सोषुम्न काण्ड क्रिया यथा—कालाबार बीन, इत्यादि।

पर्याय—शामक, क्षोभहर, संशमन, निर्बलता, जनक-हिं० सिडेटिव्ह्ज Sedatives, डिप्रेसेण्ट्स Depressants-इं०। मुसक्किन, मुज़इफ़-अ०।

अवसादक औषधों को निम्नलिखित भागों में विभाजित किया जा सकता है। यथा—

(१) सार्वांगिक वा व्याप्त अवसादक-(General sedatives) मुसक्किनात उभूमी-अ०।

ये निम्न हैं—

पूर्ण मादक (Narcotics) तथा अवसन्नताजनक (Anæsthetics) औषधें यथा ओपियम (अहिफेन), मार्फिया अन्तः क्षेप द्वारा,) क्लोरल हायोसाइमस (अजवाइन खुरासानी,) जल तथा रक्त मोक्षण।

(२) स्थानिक अवसादक (Sedatives)-मुसक्किनात मुकामी-अ०।

ये निम्न हैं—

ओपिथम (अहिफेन) ऐट्रोपीन, एसिड कार्बोलिक, एसिडम हाइड्रोस्यानिकम डायल्युटम् बोरेक्स (टंकण), विलाडोना, प्लम्बाई, एसीटास प्लम्बाई, कार्बोनास, क्रियोजूम्, कोरल, लाइक्कार प्लम्बाई सबएसिटेटिस डायल्युटस, मॉर्फीन (अहिफेनीन) और अनस्थेटिक्स (अवसन्नताजनक औषध) तथा ऐनोडाइन्स (अङ्गमर्दप्रशमन)।

(३) मस्तिष्क अवसादक—(Cerebral Sedatives or depressrents) मुज़इफ़ात दिमाग़-अ०।

इसके उपयोग से मास्तिष्कीय रक्तसंक्रमण शिथिल हो जाता है एवं मस्तिष्कीय शक्तियाँ निर्बल हो जाती है अर्थात् उनकी क्रियाओंमें शिथिलता उपस्थित हो जाती हैं ऐसी ओषधों को निम्नलिखित चार श्रेणियोंमें विभाजित किया जा सकता है, यथा:—

(१) निद्राजनक (Hypnotics),
(२) मादक वा संज्ञाहर (Narcotics),
(३) सार्वांगिक अंगमर्द प्रशमन (General anodynes) और सार्वांगिक अवसन्नताजनक (General anœsthetics)।

नोट—इनके पूर्ण विवेचन के लिये यथा स्थान देखो।

(४) सोषुम्न अवसादक—(कसेरूकामज्जा अवसादक) Spinal sedatives or depressants) मुजयफात नुखाअ-अ०

ऐसी ओषधें सुषुम्ना कांडकएण्टेरी अर्कानुवा के व्यापार को शिथिल करतीं हैं अर्थात् उसकी तीव्रता (Activity) को घटातीं हैं इनका सरल प्रभाव होता है अथवा परावर्तित रूप से और इनका यह प्रभाव सौषुम्नोत्तेजक औषधोंके विपरीत होता है।

वह औषध जो सुषुम्णा की परावर्तित गति को शिथिल करती है।

(क) क्लोरल हाइड्रेट*, ब्रोमाइड्स, फाइसाष्टिग्मीन क्लोरोफार्म*, ईथर*, कैनाबिस इडिका (भंग)*, ओपियम् (अहिफेन)*, एपोमार्फीन*, वेरेट्रीन*, एमेटीन, ऐलकोहल (मद्यसार)*, अर्गट, (गेजे)लसीमियम् सेपोनीन, एमाइल नाइट्रेट, सोडियम् नाइट्रेट, कैम्फर (कर्पूर)*, मर्करी (पारद), ऐण्टिमनी (अञ्जन), सोडियम, पोटासियम्, लीथियम्, सिल्वर (रजत)*, आर्सेनिक (संखिया)*, जिंक (यशद), कार्बोलिक एसिड*, टर्पेनिटाइन (तारपीन का तेल), कॉल्चिकम् (सूरिञ्जान) और कावारूट।

नोट—जिन औषधों पर ये (*) चिह्न लगे हैं उनका पूर्व प्रभाव सूक्ष्मोत्तेजक और अवसादकोत्तर प्रभाव होता है।

उपयोग—क्लोरल हाइड्रेट, ब्रोमाइड्स, फाइसाष्टिग्मीन, केलेवार वीन, ओपियम कैनाबिस इडिका और क्लोरोफार्म या ईथर (आघ्राण द्वारा) टेटेनिस प्रभृति आक्षेप युक्त रोगों में सामान्यतः प्रयुक्त होते हैं।

(ख) वे औषधें जो सुषुम्ना की परावर्तित गति को पेचीदा रूप से शिथिल करती हैं।

ऐसी दवाएं सौषुम्नीय रक्त संक्रमण को अवरुद्ध कर स्वप्रभाव प्रदर्शित करती हैं। ये निम्न हैं एकोनाइट (वत्सनाभ), डिजिटेलिस और क्विनीन, अधिक परिमाण में इनका अत्यन्त प्रबल प्रभाव होता है।

(५) नासिकावसादक—(Nasalsedatives) मुसक्किनात अन्फ-अ० । वह औषध जो नासिका की श्लैष्मिक कला के क्षोभ को निवारण कर उस पर शामक प्रभाव करें। जैसे बिस्मथ साल्ट्स अकेले या मॉर्फीन एवं कोकीन प्रभृतिके साथ और अन्य व्याप्तावसन्नता जनक औषध जैसे इपीकेक्वाना कम्पाँजिटा तथा एकोनाइट (वत्सनाभ) प्रभृति।

(६) हृदयावसादक—(Cardiacsedatives ofdepressants) मुज्पफात कल्ब अ० वह औषध जो हृदय की गति को या उसकी शक्ति या उन दोनों को निर्बल करती है। निम्न लिखित औषधें हृदय की आकुंचन शक्ति को घटाती है। फलतः वह प्रसार की दशा में ही गति करने से रह जाता है। वे निम्न हैं—

डायल्यूट एसिड्स, मस्केरीन, एपोमॉर्फीन, पाइलोकार्पीन, सेपोनीन, क्लोरल, सैलासिलिक, एसिड, ऐलक्साइन साल्ट्स, डबल कॉपर साल्टस और डबल जिंक साल्ट्स अधिकमात्रा में प्रयुक्त करने से।

निम्नलिखित औषधें हृदय की गति एवं शक्ति दोनों को घटाती हैं—

एकोनाइट (वत्सनाभ) हाइड्रोस्यानिक, एसिड डाइल्यूट, ऐण्टिमनी साल्ट्स (अंजन के लवण), बेरेट्रोन, और अगट प्रभृति।

उपयोग—प्रादाहिक रोगों में मुख्यतः नाड़ी की गति को मन्द करने के लिये एकोनाइट का प्रयोग करते हैं। ऐण्टिमनी साल्ट्स फुफ्फुस एवं वायु प्रणाली के उग्र प्रदाह की दशा में हितकर होते हैं जब अजीर्ण के कारण पैल्पेटेशन ऑफ दी हार्ट (हृदय का धड़कना) विकार होता है। तब हाइड्रोस्यानिक एसिड के प्रयोग से विशेष लाभ होता है।

हृदयावसादक औषध—ओपियम (अहिफेन), एपोकाइनम् (अमरीकीय भग), एक्का लारोसेरेसाई, एमाइल, नाइट्रिम, ऐण्टिमोनियम् टार्टरेटम्, बेलाडोना, डिजिटेलिस, स्पिरिटस ईथरिम नाइट्रोसाई, स्ट्रोफेन्थस (धत्तूर), स्ट्रोफेन्थस (वन पलाण्डु), सोडियाई नाइट्रिम, कोनायम (शूकरान) नाइट्रोग्लीसिरीन, वेरेट्रम् वरीडी, हायोसाइमस (अजवाइन खुरासानी), उशीर, गुडूची, एसिड ऐसीटिकम् (सिरकाम्ल) एसिडम् साइट्रिकम् (जम्भीराम्ल) एसिडम् ऑक्जेलिकम् (चुक्राम्ल), एसिडम् टार्टारिकम् (अम्लिकाम्ल) लिमनिन सक्कस (निम्बुक स्वरस) एण्टिमोनियाई ऑक्साइडम् (अञ्जन ऊषिद वा भस्म) ऐण्टिमोनियम् सल्फ्युरेटम्, ऐण्टिमोमोनियाई क्लोरोडाई लाइक्वार, ऐण्टिमोनियम्, नाइट्रम, ऐण्टिमोनियम् प्योरिफिकेटम्; एकोनाइटीन, (वत्सनाभीन) सिमिसिफ्युगा रिजोमा, डिजिटेलिनम् लोबेलिया (अरण्य तम्बाकू) स्टेफीसेग्राई सेमिना टैवेसाई, फोलिया, विरेट्राई, विरिडिस रैडिक्स, विरेटम्, ऐल्बम्।

(७) फुफ्फुसीय वा श्वासोच्छ्वास अवसादक—(Pulmonary of respiratory sedatives) इसके निम्न लिखित कतिपय भेद हैं—

(क) अवसादक लखलखे (Sedativel akhalkhetions) लख्लखात मुसक्किनह् लख्लखहे मुसक्किन-अ०। इन औषधों के वाष्प वायुप्रणालीस्थ श्लैष्मिक कला के क्षोभ को समन करते हैं अर्थात् उस पर शामक प्रभाव करते हैं जैसे हाइड्रोस्यानिक एसिड डाइल्यूट, कोनायम (शूकरान) और क्लोरोफार्म प्रभृति।

(ख) नासावसादक—यथा स्थान देखो।

(ग) सरल श्वासोच्छ्वा सकेन्द्र अव-

सादक—वह औषध जो श्वासोच्छ्वास केन्द्र को स्पष्टतया शिथिल करती हैं। यथा—

ओपियम् (अहिफेन), कोडाइन (अहिफेन का एक सत्व), कनाइम (शूकरान), एकोनाइट (वत्सनाभ), वैरेट्रीन, गेलसीमीन. सेपोमीन. फाइसाष्टिग्मीन (जौहर लोबिया कालाबार), वर्जिनियन प्रून, हिरोइन, हाइड्रोस्यानिक एसिड डायल्यूट, क्लोरल, ऐण्टिमनी साल्टस (अञ्जन के लवण)*. एलकोहल (मद्यसार)*, ईथर* क्लोरोफार्म*, क्वीनीन*, केफीन*, इपीकेक्वाना*'।

इनमें से अन्तिम की सात औषधें जिनपर यह चिन्ह (*) लगा है श्वासोच्छ्वास केन्द्र को शिथिल करने से पूर्व उसे आंशिक उत्तेजना प्रदान करती हैं।

फाइसाष्टिग्मीनका अत्यन्त प्रबल प्रभाव होता है अर्थात् यह श्वासोच्छ्वास केन्द्र को अत्यन्त शिथिल कर देता है। किन्तु इस अभिप्राय हेतु इसका कदापि प्रयोग नहीं होता। ओपियम् कोडइन, हाइड्रोस्यानिक एसिड डायल्यूट और वर्जिनियन प्रून इस हेतु विशेष रूप से प्रयुक्त होते हैं।

उपयोग—फुप्फुस, आमाशय यकृत, प्लीहा, फुप्फुसावरककला, वायु प्रणाली, एवं प्रणालिकाओं स्वरयन्त्र, नासिका, कंठ और अन्न मार्ग के क्षोभ के कारण परावर्तित रूप से उत्पन्न हुई कास में ऐसी औषधें उपयोग में आती हैं। इस प्रकार की कास प्रायःशुष्क हुआ करती है अर्थात् इसमें अत्यल्प श्लेष्मस्राव हुआ करता है।

परावर्तित-अति अन्य कास चिकित्सा में इन औषधों के उपयोग से पूर्व रोग के मूल कारण का पता लगा उसके निवारण का यत्न करना चाहिये

(ब) सांवेदनिक वाततन्तुओं को शिथिल वा निर्बल करने वाली औषधें। ये श्वासोच्छ्वास केन्द्र अवसादक औषध हैं अतु वहां देखो—

(ड) अवसादकीय श्लेष्मा निस्सारक—देखो श्लेष्मानिस्सारक।

श्वासोच्छ्वासावसादक औषधें—ऑलियम् टेरीबिन्थीनी (तारपीन का तेल), ईथर एसाटिक्स, ईथिल आयोडाइडम्, एक्का लारो रेसाई, एमाइल नाइट्रप. ऐण्टिमोनियम् टार्टरेटम् बेलाडोना. पेरोनीन, टिङ्कचूराप्रूनी वर्जीनीएनी, जेलसीमियम् डायोनीन, स्ट्रोफेनियम् (धुस्तुर) सिरूपस प्रूनी वर्जिनिएनी, क्लोरल, क्लोरोफार्मम्, कोडाइन (कोडोन) कोडोनी सैलीसिलेट. कोडोनी फॉस्फास. कोडोनी. हाइड्रोक्लोरेइडम् कोनयम् (शूकरान) कोनाईन (शूकरानसार) कोनाइनी हाइड्रोब्रोमाइथम् कोनाइनी, हाइड्रोक्लोराइडम् लोबेलिया, (अरण्य ताम्रकूट) लैक्टयुकेरियम् (अफीम काहू), मॉर्फीन और उसके लवण, हायोसांइमस (अजवाइन खुरासानी,) हीरोईन, हीरोईन, हाइड्रोक्लोराइड कूठ, कचूर, आमला भूँई आमला. कर्कटशृङ्गी, कंटकारी, वृहती, हरीतकी, बहेड़ा, उन्नाब।

(८) यकृत अवसादक—(Hepetic depressants) मुज़्इफ़ कबिद अ०। देखो—पित्तस्राव अवरोधक।

(९) संवर्तनशक्त्यवसादक—(Metabolic depressants) मुज़्इफात कूवत मुगइरह् अ० वे औषध जो संवर्तन क्रिया को मन्द करती हैं। ऐसी औषधें या तो शीघ्र ऑक्सिडाइज (ऊष्मिद) हो जाती हैं या ऑक्सीहीमोग्लोबीन को एक ऐसा मजबूत यौगिक बना देती है जिसमें वह अपने ओषजन वायव्य को पृथक नहीं कर सकता। ये निम्न हैं—

कीनीन, फेनेजून, एसिट एनीलाइट, सैलीसीम ग्लीसिरीन, रीसार्सीन, इत्यादि।

(१०) आमाशयावसादक—(Gastricsedatives) मुसक्किनात मिअ्दह अ० देखो—आमाशय अवसादक।

(११) नाड्यावसादक (Nervine sedatives)। मुसक्किनात अअ्साब अ०। वे औषध जो वातवहानाड़ियों के क्षोभ को घटाकर उन्हें शांति प्रदान करे। वे निम्न हैं—

एसिडम् हाइड्रोब्रोमिकम्, एका लारोसेरेसाई, एम इल बेलेरिएनाम, एमोनियाई ब्रोमाइडम्, एमोनियाई वेलेरिएनास, ऐण्टिस्पैज्मीन, एण्टिमोनियम् टार्टरेटम्, पररा (पेरेरा), पोटासियाई ब्रोमाइडम्, ट्राथोनाल, जेलसीमियमे (पीत चमेली), ज़िन्साई ब्रोमाइडम्, सोडियाई ब्रोमाइडम्, सेलिक्स नाइग्रा, फाईसाटिग्मा, फेनेजूनम्, फेनेसेटीन, क्लोरेलोज, कैम्फर (कर्पूर), कैम्फोरामोनो ब्रोमेटा, गैलोब्रोमोल, लाइकार मैग्नेसियाई ब्रोमाइडम्, लीथियाई ब्रोमाइडम्, लैक्ट्युका, ल्युप्युलस, ल्युप्युलीन, मेन्थोल, वेलेरिएट निकोली ब्रोमाइडम्, न्युरोनाल, वाइबर्नम्, वेरोनाल, वेरेट्रम विरीडी।

आयुर्वेदीय तथा यूनानी अवसादन औषध—अपामार्ग, बड़ी इलायची, दारुहरिद्रा, अपराजिता, हरिद्रा, तुलसी, बनतुलसी, रामतुलसी, चन्दन श्वेत, चन्दन रक्त, उशीर, कमल, नीलोफर, अनीर, नीबू, शर्बती नीबू, अमरूद, मकोय, ग्वार की गुद्दी, सिरका, आमला, हरीतकी, गुलाबजल, बर्फ शीतल जल, नासपाती, ककड़ी के बीज, कद्दू के बीज, पालक के बीज, काहू, नारियल दरियाई, शैवाल अहिफेन, यवरूज, (बेलाडोना), सफेदा बत्तख का चर्बी कुक्कुटाण्ड श्वेतक (मुर्गे के अण्डे की सुफेदी), कतीरा, निशास्ता, धतूरा, शूकरान, खानिकुन्नब, अजवाइन खुरासानी, अलमास, धनियां, कासनी, रसवत, बदरी (बेर), ईषदूगोल, टेसू के फूल, अकाकिया, बीखअलबार, खुर्फा, तम्बाकू जंगली जद, आलूबोखारा, रजत भस्म, प्रवाल भस्म वा कच्चा, सीप भस्म, बिहीदाना, तुख्म खुब्बाजी, खित्मी, पारद, श्वेत कुष्माण्ड (पेठा), कोंकनज, कुन्दुर, इस्बन्द, बीख ज़र्ब, पित्तपापड़ा, लवंग, बत्सनाभ, गुडूची, मुलेठी, गम्भारी, बूरी (सारिबा), श्यामलता, सुगन्धबाला, पोटासियम् नाइट्रास, उशाब, वृहती, कटकारी, कर्कटशृंगी, भूम्यामलकी, कचूर, कूठ और विडंग

अवसादन हिं० संज्ञा पुं० } **अवसादनम्**–सं० क्ली० } नीचा करना, बिठाना, वैद्यक में व्रण चिकित्सा का एक भेद। मरहम पट्टी, जिनमें कोमल और उठा हुआ मांस हो, उन व्रणों को पूर्वोक्त कासीसादि द्रव्यों के चूर्ण को शहद में मिलाकर लगाने आदि से अवसादन कर्म करना (अर्थात् उनका मांस नीचा करना) चाहिये। यथा—

उत्सन्न मृदु मांसानां व्रणानामवसादनम्।
कुर्य्याद्द्रव्यैर्यथोद्दिष्टैश्चूर्णितैर्मधुनासह॥
सु० चि० १ अ०

अवसादनी–सं० स्त्री० महाकरञ्ज, (Pongamia glabra)

अवसान–हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) मरण। (२) सायंकाल। (३) समाप्ति, अन्त। (४) सीमा। (५) विराम, ठहराव।

अवसितम्–सं० क्ली० } **अवसित**–हिं० वि० } (१) मर्दित धान्य। (२) परिपक्व। (३) समाप्त।

अवसी–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अवसित, प्रा० अवसिअ=पका धान्य] वह धान्य वा शस्य जो कच्चा नहीं आदि के लिये काटा जाय, अवली, अवरन, गहर।

अवसृष्ट–हिं० वि० [सं०] [स्त्री० अवसृष्टा] (१) त्यागा हुआ, त्यक्त, (२) निकाला हुआ (३) दिया हुआ, दत्त।

अवसेकः–सं० पु० रक्तमोक्षण, रक्त निस्रावण, शोणित निकालना व्यधन, फ़स्द देकर रक्त निकालना, (Venesection, phlebotomy, Bloodletting)

अवसेकिमः–सं० पु० वटक, बड़ा। (See-vata kah) वै० निघ०।

अवसेचनम्–सं० क्ली० } **अवसेचन**–हिं० संज्ञा पु० } (१) जलसेचन, सींचना, पानी देना। सु०। (२) पसीजना, पसीना निकलना। (३) वह क्रिया जिसके द्वारा रोगी के शरीर से पसीना निकाला जाय। (४) जोंक, सींगी, तूंबी या फस्द देकर रक्त निकालना।

अवस्कन्दः–सं० पु० अवगाहन, स्नान, मज्जनपूर्वक स्नान करना, डुबकी लगाना। (Bathing, Ablution)

अवस्कयनी–सं० स्त्री० बहु दिनानन्तर प्रसूता गाय, अधिक समय में वा बड़ी उम्र की ब्याई गाय।

अवस्करः–सं० पु०
अवस्कर–हिं० संज्ञा पु० } (१) विष्ठा, मल, विट् (Excrement, Fœces)। (२) गुह्य देश (Privyparts, Pudendum) मे० चतुष्क। (३) सम्मार्जनादि-निक्षिप्त धूल्यादि, आवर्जना, झाड़ना, फूँकना। (४) मलमूत्र।

अवस्करकः–सं० पु० सम्मार्जनी, मार्जनी, झाड़ू।

अवस्कर–सं० क्ली० त्वचा के भीतर घुस जाने वाले वज्र आदि के कीड़े। अथर्व०। सू० ३१। १। कां० २।

अवस्था–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] (१) दशा, हालत। (State, condition) (२) समय। काल। (३) आयु। उम्र। (४) स्थिति। (५) वेदांत दर्शन के अनुसार मनुष्य की चार अवस्थाएँ होती हैं—जागृत, स्वप्न, सुषुप्ति और तुरीय। (६) स्मृति के अनुसार मनुष्य जीवन की आठ अवस्थाएँ हैं—कौमार, पोगंड, कैशोर, यौवन, बाल, तरुण, वृद्ध और वर्षीयान्। (७) कामशास्त्रानुसार १० अवस्थाएँ हैं—अभिलाषा, चिन्ता, स्मृति, गुणकथन, उद्वेग संलाप, उन्माद, व्याधि, जड़ता और मरण। (८) निरुक्त के अनुसार छः प्रकार की अवस्थाएँ जन्म, स्थिति, वर्धन, विपरिणमन, अपक्षय और और नाश।

(९) सांख्य के अनुसार पदार्थों की तीन अवस्थाएँ हैं—अनागतावस्था, व्यक्ताभिव्यक्तावस्था और तिरोभाव।

अवस्थान्तर–हिं० संज्ञा पु० [सं०] (Change of state) एक अवस्था से दूसरी अवस्था को पहुँचना। हालत का बदलना; दशा परिवर्तन।

अवस्थान–हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) स्थिति, सत्ता, (२) स्थान, जगह, वास।

अवस्थापन–हिं० संज्ञा पु० [सं०] निवेशन, रखना स्थापन करना।

अवस्थात्रय–हिं० पु० वेदांत दर्शन के अनुसार जागृत स्वप्न और सुषुप्ति ये तीन अवस्थाएँ हैं।

अवस्था विचार–सं० पु० दशा विचार, अवस्था का निश्चय करना।

अवस्यंदन–हिं० संज्ञा पु० [सं०] टपकना, चूना, गिरना।

अवह–हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) वह वायु जो आकाश के तृतीय स्कन्ध पर है। ईथर (Ether)। (२) वह दिशा जिसमें नदी नाले न हों।

अवहस्तः–सं० पु०
अवहस्त–हिं० संज्ञा पु० } हस्त पृष्ठ, हाथ का गदेली का पिछला (पृष्ठ) भाग, उलटा हाथ। (Back of hand) हे० च०।

अवहारः,-क–सं० पु०
अवहार,-कः–हिं० संज्ञा पु० } (१) ग्राहास्य जल तन्तु मगर। (Alligator) मे० चतुष्क। (२) जल हस्ति। सूंस।

अवहालिका–सं० स्त्री० प्राचीर, बाहर का कोट, प्राकार, चार दीवारी। (A wall, an enclosure)

अवहित–हिं० वि० [सं०] सावधान। एकाग्र चित्त।

अवही–हिं० संज्ञा पु० [अवह=बिना पानी का देश] एक प्रकार का बबूर जो कांगड़े के जिले में होता है। इसकी खपेट आठ फीट की होती है। यह मैदानों में पैदा होता है और इसकी लकड़ी खेतों के औजार बनाने तथा छतों के तख्तों में काम आती है। हिं० श० सा०।

अवहीरा–हिं० आस वृक्ष। See-asa

अवच्छिन्न–हिं० वि० [सं०] गिरा हुआ।

अवच्छिन्न सन्धि–सं० पु० सन्धि विशेष, कपिञ्जल

सन्धि च्युति, (Dislocation)। 'अवक्षिप्त' में सन्धि दूर हट जाती है और तीव्र वेदना होती है। सु० नि० १५ अ०।

अवक्षुत-हिं० वि० [सं०] जिस पर छींक पड़ गई हो।

अवक्षेपण-हिं० संज्ञा पु० [सं०] [वि० अवक्षिप्त] (१) गिराव। अधःपात। नीचे फेंकना। (२) आधुनिक विज्ञान के अनुसार प्रकाश, तेज या शब्द की गति में उसके किसी पदार्थ में होकर जाने से वक्रता का होना।

अवक्षेपः-सं० क्ली० (१) (Asterion)। (२) (Art of depressing)

अवक्षेपणी-सं० स्त्री० वल्गा, लगाम। हे० च०।

अवक्षेपित-हिं० वि० निम्नस्थित, तलस्थित, अधः क्षेपित। तलस्थाई, तहनशीं।

अवाँ-हिं० संज्ञा पु० दे० आवाँ।

अवः-हिं० विछुआ घास। (Girardiniahetero phylla)

अवाइद रदिय्यह्-अ० कुस्वभाव, खराब आदत। बैड हैबिट्स (Bad habits)-इं०।

अवाक्नो-अ० (ब० व०), ओक्रिय्यह् (ए० व०) देखो—औक्रियह्।

अवाक्-हिं० वि० [सं० अवाच्] (१) वाक्य रहित चुप, मौन, चुपचाप (Speechless) (२) स्तब्ध। जड़। स्तंभित चकित। विस्मित,

अवाक् पुष्पी-सं० (हिं० संज्ञा) स्त्री० (१) हेमपुष्पी। (Hemapushpi) र० मा०। (२) सौंफ। मधुरिका। (Madhurika) शतावा। रत्ना०। रा० नि० व० ४। (३) शतपुष्पी। सोया-हिं०। शुल्फा बं०। बड़ी शोंफ-मह०। (See-shatapushpa) रा० नि० व० ४। च० द० अर्श-चि० सुनिषण्ण-घृत। (४) छोर पुष्पी। वह पौधा जिसके फूल अधोमुख हों। (See-chorapushpi) रत्ना०।

अवाक पुष्पी घृतम्-
अवाक पुष्पादि घृतम्-
अवाक् पुष्पादि घृतम्-

-सं० क्ली० अवाक पुष्पी (सौंफ), मधुरी, बला-दारुहल्दी, पृष्टपर्णी, गोखरू, वर्गद, गूलर और पीपल वृक्ष की कोपल प्रत्येक २-२ पल, इनका काथ, पीपर, पीपरामूल, मिर्च, देवदारु, कुटज, सेमल का फूल; चंदन, ब्राह्मी, केशर, कायफल, चित्रक, नागरमोथा, फूलप्रियंगू, अतीस, शालपर्णी कमल केशर, मजीठ, अमलतास, वेलगिरी, मोचरस, खोनापाठा, प्रत्येक १-१ तो० इन्हें ४ प्रस्थ जल में क्वाथ करे जब १ प्रस्थ शेष रहे तो सुनिषण्णक (कुरट) और चांगेरी का रस २-२ प्रस्थ, गोघृत १ प्रस्थ मिश्रित कर पकाएँ।

गुण—इसके सेवन से सन्निपातातिसार, प्रवाहिका, गुदभ्रंश, आमजन्य रोग, शोथ, शूल, गुदारोग, मूत्रावरोध, मूत्रघात, मन्दाग्नि, तथा अरुचि का नाश होता है।

नोट—पहले कहे हुए आठों द्रव्यों का सोलह गुने पानी में क्वाथ करे। जब १ प्रस्थ शेष रहे जब उसे ग्रहण करना चाहिये। वंग से० सं० अर्श चि०। च० सं०।

अवाक् शीराः सू-स० पु० निम्न शिरस्क।

अवाक् सदेस-हिं० संज्ञा पु० [बंग देश०] एक प्रकार की बंगला मिठाई।

अवागी-हिं० वि० [सं० अवाग्विन्-अपटु] मौन। चुप।

अवाग्र-सं० पु० वक्र, (Oblique)

अवाङ् मुख-हिं० वि० [सं०] (१) अधोमुख, उलटा। नीचे मुंह का। मुंह लटकाए हुये। नत: (२) लज्जित।

अवाची-हिं० स्त्री० दक्षिण दिशा। (South)

अवाचीनः-सं० त्रि०
अवाचीन-हिं० वि०
(१) विपर्य्यस्त। विपरीत। (Reverse) मे० नचतुष्क। (२) दे०—अवाङ्मुख।

अवाच्यदेशः-सं० पु० योनि। (Vagina) त्रिका०।

अवाजिम-अ० (ब० व०), आज़ूमह् (ए० व०) दादें।

अवाजिम-अ० दृष्ट, दंत, दाँत। टीथ (Teeth) -इं०।

अवात-हिं० वि० [सं०] वातशून्य। जहाँ वायु न लगे, निर्वात।

अवातिब-अ० (ब० व०), वतव (ए० व०) दूध की शीशी। बच्चे को दूध पिलाने की शीशी।

अवान-अ० (१) वह स्त्री जिसके पती मौजूद हों। (Mistress)। (२) वृद्धावस्था। अधेड़ उमर।

अवानम्-सं० क्ली० शुष्क फल आदि। (Dry fruits,etc) श० र०।

अवानी बूटी-प० बूह फुटकण्डा, जण्डी, कण्डियारी, अरजन, ज्ञान। बैलोटा लिम्बेटा (Ballota limbata, *Benth*), ओटास्टेगिया लिम्बेटा (Otostegia limbata. *Benth*)-ले० इं० मे० प्लां०।

उत्पत्तिस्थान—पञ्जाब, झेलम से पश्चिम की पथरीली भूमि की निम्नस्थ पहाड़ियों से शाल्टरेञ्ज पर्यन्त।

प्रयोगांश—पौधा, पत्र, (औषध एवं चारा)।

उपयोग—इसकी पत्तियों के स्वरस को बालकों के मसूड़ों पर लगाते हैं। स्ट्यु वर्ट।

अवान्यम्-सं० क्ली० देखो—अमृध्रम्।

अवाप्त-हिं० वि० [सं०] प्राप्त। लब्ध

अवार-अ० दोष, कबाहत, बुराई।

अवारम्-सं० क्ली०
अवार-हिं० संज्ञा पु० } नदी आदि का पूर्वपार

नदी के इस पार का किनारा। सामने का किनारा पार का उलटा।

अवारण-हिं० वि० [सं०] (१) जिसका निषेध न हो सके। सुनिश्चित। (२) जिसकी रोक न हो सके। बेरोक, अनिवार्य।

अवारणीय-हिं० वि० [सं०] (१) जो रोका न जा सके। बे रोक, अनिवार्य। (२) जिसका अवरोध न हो सके। जो दूर न हो सके। (३) जो आराम न हो। असाध्य।

संज्ञा पु० [सं०] सुश्रुत के अनुसार रोग का वह भेद जो अच्छा न हो, असाध्य रोग। यह आठ प्रकार का है—वात, प्रमेह, कुष्ठ, अर्श, भगन्दर, अश्मरी, मूढ़गर्भ और उदर रोग।

अवारपार:-सं० पु०
अवारपार-हिं० संज्ञा पु० } समुद्र (A sea).

अवारिक-अ० भेदक दन्त विशेष। केनाइन (Canine)-इं०।

अवारिका-सं० (हिं० संज्ञा) स्त्री० धनियां। (Coriandrum sativum)

अवारिके-कना० तरवड़-हिं०। (Cassia auriculata' *Linn*) मेमो०।

अवारिज़-अ० (ब० व०) आरिज़ (ए० व०) दशा व कैफियत, वह दशा एवं कैफियत, जो किसी अन्य दशा के आधीन हो।

अवारिज नफ़्सा नियह्-अ० अम्राज या इन्फिआलात नफ़्सानी-अ०। मानसिक दशाएँ, मनोविकार कषाय। यह छः हैं—(१) दुःख (ग़म) (२) भ्रम (वहम) (३) भय (ख़ौफ़), (४) क्रोध (ग़ुस्सह), (५) आनन्द (ख़ुशी) और (६) लज्जा (शर्मिन्दगी)। पैशञ्ज (Passions) इं०

अबारी-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० बारण] बाग। लगाम।

हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अवार] (१) किनारा। मोड़। (२) मुख विवर। मुँह का छेद।

अवासिफ़-अ० पृथ्वी की मारक वायु।

नोट—सामुद्रीय विघातक वायु को "तवासिफ" कहते हैं।

अवासिल-अ० (व० व०) वासिलह् (ए० व०) माँगे हुए चोटी के बाल लगाने वाली स्त्री।

अवि:-सं० पु०
अवि-हिं० संज्ञा पु० } मेष, भेड़ (A ram) भा० पू०। (१) मूषिक। See Mushik.

ah (३) कम्बल (See kambalah) मे० (४) मत्स्य भेद (Asort of fish) (५) प्राचीर (An enclosure) । (६) वायु (Air) (७) सूर्य । (८) आक । मंदार । (९) छाग । बकरा । (१०) पर्वत । (११) समूर ।

सं० (हिं० संज्ञा) स्त्री० (१२) कुलत्थिका, कुलथी (Dolichos biflorus) अवि कुलाली, चत्तष्या, कुम्भकारी, कुलत्थिका" । रा० मा० (१३) मेषी । (See meshi) त्रिका० । (१४) ऋतुमती, रजःस्वला । (A woma nduring menstruation) अम० । (१५) लज्जा ।

अविकम्-सं० क्ली० (१) हीरक, हीरा । (Diamond) रा० नि० । (२) मेष । (A ram)

अविकमांसम्-सं० क्ली० मेष मांस । (Flesh of a ram) वै० निघ० ।

अविकल-हिं० वि० [सं०] (१) जो विकल न हो बिना उलट फेर को ज्यों का त्यों । (२) पूर्ण पूरा (३) निश्छद्म, अव्याकुल, शांत ।

अविकल्प-हिं० वि० [सं०] (१) जो विकल्प से न हो । निश्चित । (२) निःसंदेह, असदिग्ध ।

अविका:-सं० स्त्री० छोटी छोटी भेड़ें । अथर्व० । सू० १२६ । १६ । का० २० ।

अविकार-हिं० वि० [सं०] जिसमें बिकार न हो विकार रहित । निर्दोष ।

संज्ञा पु० [सं०] विकार का अभाव ।

अविकारी-हिं० वि० [सं० अविकारिन] [स्त्री० अविकारिणी] (१) जिसमें विकार न हो । विकार शून्य । निर्विकार ।

(२) जो किसी का बिकार न हो ।

अविकाशी-हिं० वि० [सं० अविकाशिन] [स्त्री० अविकाशिनी] जो बिकासी न हो । निकम्मा । निष्क्रय ।

अविकृत-हिं० वि० पु० [सं०] जो विकृत न हो जो बिकार को प्राप्त न हो । जो वि ... न हो

अविकृति-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] बिकार का अभाव ।

अविक्रांत-हिं० वि० [सं०] दुर्बल, कमजोर ।

अविक्रिय-हिं० वि० पु० [सं० [स्त्री० अविक्रिया] जिसमें विकार न हो । जिसमें बिगाड़ न हो । जो बिगाड़ा न हो ।

अविगंडु-कना० अरुई' आलुकी । (Arum colocasia) इं० मे० मे० ।

अविगन्धनी-
अविगन्धिका-
अविगन्धी- } सं० स्त्री० (१) अजगन्धा, बन यमानी, (२) तिलोड़ी बर्बरी । बबुई तुलसी । (Ocimum gratia simum) रा० नि० व० ४ ।

अविगन्धः-न्धः-सं० पु० (१) पानीयामलक, जल आँवरा (Flacourtia cataphracta) सा० सु० (२) करमर्द वृक्ष, करौंधा । (Capparis corundas) करमूचा गाछ-बं० करवंद-मह० । अम० ।

अविग्रह-हिं० वि० [सं०] जिसके शरीर न हो । निरवयव, निराकार ।

अविघात-हिं० संज्ञा पु० [सं०] विघात का अभाव

अविचल-हिं० वि० [सं०] जो बिचलित न हो अचल, स्थिर, अटल ।

अविच्छिन्न-हिं० वि० [सं०] अभिन्न, संलग्न भेद रहित युक्त अविरल (२) अविच्छेद अटूट । लगातार ।

अविच्छेद-हिं० वि० [सं०] जिसका विच्छेद न हो अटूट लगातार । विच्छेद रहित ।

अविजन-हिं० संज्ञा पु० [सं० अभिजन] कुल । वंश ।

अवितक्रम-सं० क्ली० मेषी तक्र, भेड़ का तक्र । (Buttermilk with a fourth-part water prepared fromsh-eep's milk)

गुण—भेड़ का तक्र, अपथ्य, अम्ल, दुर्गन्ध कारक, दीपन, कटुक (चरपरा) उष्ण लेखन, लघु तथा पित्तकारक है और रक्त दोषकारक तथा कफ वात विनाशक है । द्रव्य० गु० ।

अवितत्-हिं० वि० [सं०] विरुद्ध । उलटा
अवितत्करण-हिं० संज्ञा पु० [सं०] विरुद्धाचरण
अविता-सं० स्त्री० मेषी; भेड़ी । (Anewe)
अवितेश-अ०, २ तो० ३ मा० ६ रत्ती किसी किसी के मत से १ मा० १ र० का माप विशेष ।

अवित्यज:-सं० पु०
अवित्यज-हिं० संज्ञा पु० } पारद, पारा, । Mercury (Hydrargyrum) शब्द० कल्प० रा० नि० ० १३ । राजनिघण्टु में भी "अचिन्त्यज" ऐसा पाठ आया है ।

अविथाली-मल० काला नागकेशर । (Kala Nagkesara) फा० इं० ३ भा० ।

अविदग्ध : सं० त्रि०
अविदग्ध- हिं० वि० }
(१) अनम्ल, खट्टा नहीं । विजयर० अजीर्ण चि० [२] जो जलाया पका न हो, कच्चा ।

अविदग्धम्
अविदुग्धम् } सं० क्ली० मेषी दुग्ध भेड़ का दूध । (Sheep s milk) हला० देखो—आविक क्षीरम् ।

अविदु (दू) ष्यम्-सं० क्ली० मेषी दुग्ध भेड़ का दूध (Sheep's milk) हला० ।

अविद्धकर्णा सं० स्त्री० [१] पाठा । (Cissampelos hernendifolia) आकनादि वं० अटी सा०
को० । जातीफला वटी । (२) भृङ्गराज, भांगरा-हिं० । भीमराज-बं० । (Eclipta erecta) अटी० ।

अविद्धकर्णिका,र्णी-सं० (हिं० संज्ञा) स्त्री० (१) पाठा, पाढ़ा; नाम की लता । (issampelos) आकनादि-बं० । अटी० जातीफला वटी ।

अविद्धा-सं० स्त्री० दुष्ट शिरा व्यधन अर्थात् शिराओं का अनुचित रूप से वेध हो जाना । जो हीन शस्त्र के कारण बहुत छेद की गई हो वह "अपविद्धा" है । सु० शा० ८ अ० ।

अविद्वेष-हिं० संज्ञा पु० [सं०] विद्वेष का अभाव अनुराग, प्रेम ।

अविधवा-हिं० वि० [सं०] सधवा, सौभाग्यवती, सुहागिन ।

अविधेया-सं० स्त्री० (Involuntary muscle) अनैच्छिक वा स्वाधीन मांस पेशी ।

अविध्यदृष्टि-सं० स्त्री० जो रोगी शिरा वेध के योग्य नहीं है । जो दृष्टिरोग, पीनस और खांसी से पीड़ित है, जो अजीर्ण; भीरु, वमित तथा शिर, कान और आँख के शूल से पीड़ित है, उसके लिंगनाश को न वेधना चाहिए । वा० अ० १४ ।

अविनाश-हिं० संज्ञा पु० [सं०] विनाश का अभाव । अक्षय ।

अविनाशक-हिं० वि० पु० (Nonlethal) अघातक, अमारक, विनाशक मात्रा से कम

अविन्दन:-सं० पु० वडवानल । See-varavanalah

अविपक्ति(त्ति)कर चूर्णम्-
अविपत्यकरचूर्णम्- }
सं० क्ली० साठ, मिर्च पीपल, हड़, बहेड़ा आंमला नागरमोथा, वायविडंग के बीज, इलायची, तेजपात, तुल्य भाग, सर्व तुल्य लवंग ले चूर्ण करें । पुन: सबके द्विगुण निशोथ का चूर्ण फिर सर्व तुल्य मिश्री योजित कर इसे किसी स्निग्ध पात्र में स्थापित करें ।

मात्रा—२ से ८ मा० तक ।

गुण—इसे शीतल जल या नारिकेल के जल के साथ पान करने से अम्लपित्त, शूल, अर्श, २० प्रमेह, मूत्राघात और पथरी का नाश होता है ।

पथ्य—दूध भात । यह अगस्तमुनि कथित अविपत्यकर चूर्ण है । वङ्ग से० सं० अम्लपित्त चि० । र० सा० सं० । भैष० । प्रयोगा० । सां० कौ० । नोट—त्रिकटु आदि प्रत्येक १ तोला, लवंग चूर्ण ११ तो०, निशोथ की जड़ का चूर्ण ४४ तो० और शर्करा ६६ तो० लें ।

अविपट:-सं० पु० ऊर्णामय वस्त्र कम्बल आदि । (Blanket etc)

अविपन्न-हिं० वि० [सं०] स्वस्थ, नीरोग ।

अविपर्यय-हिं० संज्ञा पु० [सं०] विपर्यय या विकार का न होना।

अविपाल-अविपालक- } हिं० संज्ञा पु० [सं०] गडेरिया (A shepherd)

अविपाकः-सं० पु० अपरिपाक। अपकता।

अविपित्तक-हिं० संज्ञा पु० [सं०] एक चूर्ण जो अम्लपित्त के रोग में दिया जाता है। देखो-अविपत्तिकर (त्ति) कर चूर्णम्।

अविप्रियः-सं० पु० श्यामाक तृण। शामा घास वं० सावाँ हिं०। A kind of grain generally eaten by the Hindus (Panicum frumentaceum, P. colonum) रा० नि० व० १६।

अविप्रिया-सं० स्त्री० श्यामालता, कृष्ण शारिवा। (Ichnocarpus frutescens) रा० नि०। (२) श्वेतालता चुप (See--shveta) (३) कोमल-हिं०, सं०। बादियान कोही. अफ़, । फितर सालियून-भा० बाजा०, यु०। (Prangos pabularia, Lindl) फा० इं० २ भा०।

अविवत्तम-ता० सुगंधबाला, वालक। (Pavonis odorata) इं० मे० मे०।

अविभक्त-हिं० वि० [सं] (१) जो अलग न किया गया हो। मिला हुआ। (२) विभाग रहित। (३) अभित। एक।

अविमुक्-सं० पु० व्याघ्र। (A tiger) । लांङ्गा-मह० वै० निघ०।

अविमरीष(स)म्-सं० क्ली० आविक्षीर, भेड़ का दूध मेषी का दुग्ध (Sheep's milk)। इला० हे० च०।

अविमुक्त-हिं० संज्ञा पु० [सं०] कनपटी।

अविमुक्तकः-सं० पु० माधवी लता। (See--Madhavi lata) वै० निघ०।

अविमुक्तका-सं० स्त्री० (१) तिन्दुक वृक्ष। (Diospyros Cordifolia) तेंद-बं० तेन केंदु-हिं०। टेम्रुत्ती मह०। (२) काक तिन्दुक, तिन्दुक विशेष, तेंद। (Diospyros lom entosa) वै० निघ०।

अविमोचम्-सं० क्ली० आविक क्षीर, मेषी दुग्ध, भेड़ का दूध (Sheep's milk) रा० मा०।

अवियोग-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) वियोग का अभाव (२) संयोग। मिलाप वि० [सं०] (१) वियोग शून्य। जिसका वियोग न हो। (२) संयुक्त, सम्मिलित। एकीभूत।

अविरल-हिं० वि० [सं०] (१) जो विरल वा भिन्न न हो मिला हुआ। (Thick) (२) घन, सघन। अव्यवच्छिन्न।

अविरि-ते० नीलवृक्ष (Indigofera Indica)

अविरुहा-सं० स्त्री० मांसरोहिणी। (See-mansarohini)

अविलपोरी-मल० सरहटी हिं० पताल भेदी, सर्पाक्षी (See sarpakshi)

अविलम्बित-हिं० वि० प्रतिलम्बित, जो अस्त्र द्वारा काटने से अस्थि मात्र शेष रहे उसे "प्रतिलम्बित" कहते हैं।

अविला-सं० स्त्री० मेषी (See-meshi) हे० च०

अवि-लेय-हिं० वि० अनघुल। जो विलीन न हो। जो किसी प्रकार के तरल में न घुले। (Insoluble)

अविलेयता-हिं० संज्ञा स्त्री० (Inssolubility) विलीन होने का धर्म, अनुघुलन।

अविवृत्तः-सं० पु० मेष शृंगी, मेढा सिङ्गी See-Meshashringi

अविशिरम्-सं० क्ली० सूर्यावर्त फल, हुलहुल का फल, हुरहुर, हुड़हुड़ेर फल बं० (Cleome-Viscosa) वै० निघ०।

अविश्वासा-सं० स्त्री० चिर प्रसूता गाय, अधिक काल की ब्याई हुई गाय श० च०।

अविषः-सं० पु० (१) समुद्र (The sea) (२) आकाश (Sky)

अविष-सं० क्ली० निर्विष, विष रहित बिनाजहर का (Nonvenomous, not poisonous) अथर्व० सू० २। १६ का०।

अविषा-स० स्त्री० अतिविषा, अतीस। (Aconitum heterophyllum) रा० नि० ब० ६। (२) निर्विषी तृण; निर्विसी, निर्विषी घास। वै० नि०। (३) एक जड़ी। जद्बार। यह मोथे के समान होती है और प्रायः हिमालय के पहाड़ों पर मिलती है। इसका कंद अतीस के समान होता है और साँप बिच्छू आदि के विष को दूर करता है। (Curcumazedoaria)

अविसी-ते० अगस्त। अगस्तिया (Agati grandiflora)

अविसोढ़म्-सं० क्ली० अविक्षीर, भेड़ो का दूध।

अविस्रम्-सं० त्रि० पूति गंधरहित, दुर्गंधि रहित। (Avoid of ill-smelling) च० चि० २ अ०।

अवी-सं० (हिं० संज्ञा) स्त्री० (१) बन कुलत्थ बन कुलथी। Dolichos biflorus (The wild var of) र० मा०। (२) ऋतुमती स्त्री, रजस्वला स्त्री। (A woman-during menstruation) हे० च०।

अवीकम्-तु० फेफड़ा, फुफ्फुस (The lungs)

अवीक़ुस-अजुफ़ रुत्तीय नख। (See-nakha)

अवीघ्न-स० बुङ्का वृक्ष। See Bunka

अवीज धर्म्मी-सं० त्रि० जो बीज धर्मी न हो अर्थात् वह जिसमें बीज रूप होकर कोई पदार्थ न रहे। वह आत्मा है; क्योंकि बीजरूप होकर कोई पदार्थ जीवात्मा में नहीं रहते, किन्तु प्रकृति में रहते हैं इससे यह पुरुष (आत्मा) बीज धर्मी नहीं है। सु० शा० १ अ०।

अवीजा-सं० (हिं० सज्ञा) स्त्री० गोस्तनी के समान गुणवाली द्राक्षा, किशमिश वेदाना। Raisin currant (uvæ)। भा०। देखो-अगूर।

अवीदुग्धम्-सं० क्ली० मेषी दुग्ध, भेड़ी का दूध। च० द०।

अवीना-एक बूटी का निचोड़ है (बूटी के सम्बन्ध में मतभेद है)।

अवी(वे)ना ओरएण्टैलिस-ले० विलायती जौ, जई, खरताल।

अवी(वे)ना प्युवीसेन्स-ले० यह एक प्रकार की घास है जो चारा के काम आती है। मेमो०।

अवी(वे)नाप्रेटेन्सिस-ले०। एक प्रकार की घास है जो चारा के काम आती है।

अवी(वे)ना फैचुआ-ले० कुल्जुद, गन्दल, जेई-हिं०, गोजंग, कासम्म ऊप्बा पं०। प्रयोगांश पौधा। उपयोग—औषध व खाद्य (पशु)। मेमो०।

अवी(वे)ना सेटाइवा-ले० जौ विलायती जो-हिं०, एक प्रकार की घास है जो आहार व पशुओं के चारा काम में आती है। मेमो०।

अवी(वे)नीन-इं० अवीना बीज सत्व। देखो-जई। इं० मे० मे०।

अवी मूत्रम्-सं० क्ली० मेषी का मूत्र, भेड़ी का मूत्र, च० द०।

अवीरई-ता०
अवीरन-मल०
अवीरी-ता०
} तरवड़-हिं० द०। (Cassia ariculata *Linn*)-इं० मे० मे० फा० इं० १ भा०।

अवीरघ्नी-स० जो जीवन का नाश करे। अथर्व०।

अवीर्होआ एसिडा-ले० हरफ़ारेवड़ी।

अवार्होआ करम्बोला-ले० करमल-हिं०। कामरांगा बं०। कर्मुरङ्ग सं०। खमरक, करमरवम्ब०। खमूरक-द०। तामूरिया-ता०। करोमोंगा ते०। उपयोगांश—अपक्व फल, पत्र और मूल; उपयोग—रंग, औषध और खाद्य। मेमो०।

अवीर्होआ बाइलिम्बाई-ले० विलिम्बी-बं०, हिं० उपयोगांश—पुष्प व फल भक्ष्य है। मेमो०।

अवीबरन्-स० वरण या बरुण नामक वृक्ष वरना। (Cratæva tapia) अथर्व०। सू० ८५, १। का० ८।

अवीसम्-फ़ा० सातर, पुदीना कोही। साथर साथल-हिं०।

अवीसीनिया आँफ़िसिनेलिस-ले० वीना-व०। मड, नल्लमड-ते०। तीवर-सिंध। ओएपटा-मल० थमे०-बर०।

प्रयोगांश—रक्त, गिरी व भस्म ।
उपयोग—रक्त व भक्ष्य ।

अवीसीनिया टोमेण्टोसा—ले० व्यना-हिं० वं० । तिम्मर-सिंध । नल्ल-मड-ते० । (Avicennia. Downy leaved)
प्रयोगांश—मूल व बीज ।
उपयोग—औषध ।

अवीसीनिया डाउनी लीव्हड—इं० बू अली सीना, बू अली. वीना (Avicennia tomentosa) इं० हैं० गा० ।

अबुकः-सं० पु० छाग, बकरा । (A goat) श० र० ।

अबूरा-हिं० आमला, अँवरा । (Phyllanthus emblica),

अबृद्धः-सं० पु० पुष्प वृक्ष भेद पाषाण पुष्प । पत्थर फूल-मह० । वै० निघ० ।

अवेगी-सं० स्त्री० विधारा । वृद्धदारक रा० नि० ।

अवेद्यः-सं० पु०
अवेद्य-हिं० संज्ञ पु० } (१) गोवत्स; बछवा, बछड़ा । (A calf) श० र० । (२) नादान बच्चा ।

वि० पु० [सं०] (१) अज्ञेय । (२) अलभ्य ।

अवेद्या-हिं० वि०, स्त्री० [सं०] वह स्त्री जिससे विवाह नहीं कर सकते । अविवाह्य स्त्री ।

अवेना-ले० देखो—अवीना ।

अवेन्स-इं० वाटर अवेन्स (wateravens) ।

अवेर्रहोआ एसिडा—ले० हरफ रेवड़ी । देखो—अवोर्रहोआ एसिडा ।

अवेल-नारियल का तैल, नारिकेल तैल । (Cocoanut oil)

अवेलो-सं० स्त्री० पूग चर्वित चिकनी सुपारी । चिबन-शुपारि-व० ।

अवेश-हिं० संज्ञा पु० [सं० आवेश] (१) किसी विचार में इस प्रकार तन्मय हो जाना कि अपनी स्थिति भूल जाय । आवेश । जोश । मनोवेग । (२) भूताबेश । भूत चढ़ना । किसी भूत का शिर आना । भूत लगना ।

अवेक्षण-हिं० संज्ञा पु० [सं०] वि० अवेक्षित, अवेक्षणीय] (१) अवलोकन, देखना । (२) निरीक्षण । जाँच पड़ताल ।

अवैद्य-हिं० वि० [सं०] जो वैद्य न हो । जो वैद्यक शास्त्र को न जानता हो ।

अवाइस-हिं० अरुई, घुइयाँ । (Colocasia antiquorum) मेमो० ।

अवोदम्-सं० क्ली० आर्द्रक, आदी, अदरक । (Zingiber officinalis) जटा० ।

अवान्तर-हिं० वि० [सं० अंतर्गत मध्यवर्ती । बीच का ।

संज्ञा पु० [सं०] मध्य । भीतर । बीच ।

यो०—अवांतर दिशा—बीच की दिशा ; विदिशा ।

अवांतर भेद—अंतर्गत भेद । भाग का भाग,

अवाँसी-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अवासित] वह ऊख जो फसल में से पहले पहल काटी जाय । यह नवान्न के लिये काम में आता है । अखान । ददरी । कवल । अवली ।

अब्दः-सं० पु० (१) वत्सर, वर्ष (A year) (२) मुस्तक, मोथा (Cyperus rotundus) । (३) मेघ । See--Mesha (अ० टी० रा०) । क्ली० (४) अभ्र, अभ्रक । Talc (Mica)

अब्दसारः-सं० पु० कर्पूर भेद । (A sort of camphor)

अव्यक्त-हिं० वि० [सं०] (१) अदृश्य, अप्रकट, छिपा हुआ, अप्रकाशित, अप्रत्यक्ष (Indistinct, invisible) (२) अज्ञात (Imperceptible)

संज्ञा पु० [सं०] (१) कामदेव । (२) वेदांत शास्त्रानुसार अज्ञान । सूक्ष्म शरीर और सुषुप्ति अवस्था । (३) जीव । (४) परमेश्वर परमात्मा (The Supreme Being or Universal Spirit) । (५) प्रकृति । स्वभाव, टेम्परामेण्ट (Temperament)

अव्यक्तमूलप्रभव–हिं० संज्ञा पु० [सं०] संसार। जगत।

अव्यक्तम्–सं० क्ली० (१) पकृति, मैटर (matter)–इं०।
"अखिलस्य जगतः सम्भव हेतुरव्यक्तं नाम।" सु० शा० १ अ०। (२) आत्मा, सोल (Soul)–इ०।

अव्यक्तरागः–हिं० संज्ञा पु०
अव्यक्तराग–सं० पु० } ईषत् लोहित वर्ण, हलका लाल, अरुण।
पर्याय—अरुणः (अ), ताम्रः। (२) गौरः (ज)। गौर, श्वेत।

अव्यक्तलिंग–हिं० संज्ञा पु० [सं०] वह रोग जो पहचाना न जाए।

अव्यक्ता–सं० स्त्री० कृष्ण गोकर्णी कृष्णापराजिता, काल अपराजिता–बं०। काली गोकर्णी–मह० Clitorea ternatea (The bllack var of) बै० निघ०।

अव्यक्तानुकरण–हिं० संज्ञा पु० [सं०] शब्द का अस्फुट अनुकरण। जैसे मनुष्य मुर्गे की बोली ज्यों की त्यों नहीं बोल सकता पर उसकी नकल करके कुकुड़ूँकूँ बोलता है।

अव्यङ्ग–हिं० वि०
अव्यङ्गः–सं० त्रि०
अव्यङ्ग–हिं० वि० } (१) जो व्यंग वा टेढ़ा न हो सीधा, अविकलांग। (२) बराबर रहित, अनाकुल। स्त्री० शूकशिम्बी, केवाँच। आलाकुशी–बं०। (Mucana pruriens)

अव्यङ्गांग–हिं० वि० [सं०] [स्त्री० अव्यंगांगी] जिसका कोई अंग टेढ़ा न हो, सुडौल।

अव्यंगा–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] केवाँच, करैंच, कौंच (Mucuna pruriens)

अव्यंजन–हिं० वि० [सं०] दे०—अव्यञ्जनः।

अव्यञ्जनः–सं० त्रि०
अव्यञ्जन–हिं० वि० } (Hornless) शृंग-हीन, सींग रहित, बिना सींग का (पशु), ठूंठा। (२) चिन्ह शून्य। हलाo।

अव्यंडा–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० अव्यण्डा।

अव्यण्डः, -एडा–सं० पु० स्त्री०
अव्यण्डा–हिं० संज्ञा स्त्री० } (१) भूम्या-मलकी, भूँई आमला (Phyllanthus noruri) (२) कपिकच्छु, केवाँच, आला-कुशी–बं० (Corpopogon pruriens) च० चि० ३ अ०।

अव्यथा–सं० (हिं० संज्ञा) स्त्री० (१) स्थल कमलिनी, स्थलपद्म, पद्मचारिणी (Ionidium suffruticosum) भा० पू० १ भा०। रा० नि० व० ११। (२) हरीतकी, हर (Terminalia chebula) (३) महा श्रावणी, गोरखमुण्डी। (Sphœranthus hirtus) भा० पू० १ भा० गु० व०। (४) आमलकी, आमला (Phyllanthus emblica)। (५) लक्ष्मणा, लक्ष्मणा मूल (Lakshamana)। (६) सोंठ।

अव्यथिः, -थी–सं० पु० अश्व, घोड़ा (A horse) वा० सू० ४ अ० प्रजास्था०।

अव्यथिषः–सं० पु० (१) समुद्र (A sea)। (२) सूर्य्य (The sun) सि० कौ०।

अव्यथिषी–सं० स्त्री० (१) पृथिवी (Earth) (२) अर्द्ध रात्रि, मध्य निशा, आधी रात। (Midnight)

अव्यथ्या–सं० स्त्री० हरीतकी, हर। (Terminalia chebula) भा० पू० १ भा०।

अव्यभिचारी–हिं० वि० [सं० अव्यभिचारिन्] जो किसी प्रतिकूल कारण से हटे नहीं।

अव्यया–सं० स्त्री० गोरखमुण्डी, महा श्रावणी। गोरखमुण्डी–मह०। गोरख-चाकुलि–बं०। (Sphaeranthus Hirtus) बै० निघ०।

अव्यर्थ–हिं० वि० [सं०] (१) जो व्यर्थ न हो। सफल। (२) सार्थक। (३) असोच।

अव्याध्या–सं० स्त्री० दुष्ट शिरा वेधन। जो शिरा शस्त्रकर्म (छेदन, वेधन) से वर्जित है (उसका वेध होना) अव्याध्या कहाती है। यथा—'अशस्त्रकृत्या अव्याध्या"। सु० शा० ८ अ०।

अव्यापन्न–हिं० वि० [स०] जो मरा न हो, जीवित जिन्दा।

अव्रण शुक्रः–स० पु०
अव्रण शुक्र–हिं० संज्ञा पु० } नेत्र के काले भाग (काली पुतली) में होने वाला रोग विशेष। आँख का एक रोग जिसमें आँख की पुतली पर सफेद रंग की एक फूली सी पड़ जाती है और उसमें सुई चुभने के समान पीड़ा होती है।

लक्षण—अभिष्यन्द के कारण यदि नेत्र के कृष्ण भाग में श्वेत वर्ण की, चलायमान तथा अति पीड़ा और अश्रुओं से व्याप्त न हो एवं जैसे आकाश में बादल होते हैं इस प्रकार की फूली हो तो उसे अव्रण (व्रण रहित) शुक्र (फूली) कहते हैं और यह सरलतापूर्वक साध्य होती है (झट आराम हो जाती है)। और यदि यही फूली गम्भीर और गाढ़ी हो बहुत दिन की हो जाय तो उसे कष्टसाध्य कहते हैं। सु० उ० ५ अ०।

जो फूला अभिष्यन्दात्मक (आँखों के दुखने से उत्पन्न हुआ) कृष्ण भाग में स्थित हो और शोष (सिंगी, तुम्बी) आदि से चूसने के समान पीड़ा करे और शख, चन्द्रमा तथा कुन्द के फूलों के समान सफेद, आकाश के समान पतला और व्रण रहित हो उस शुक्र को सुखसाध्य कहते हैं। जो शुक्र (फूला) गहरा तथा मोटा हो और बहुत दिनों का हो उसको कष्टसाध्य कहते हैं।

असाध्यता—जिस फूले के बीज में गड्ढा सा पड़ जाय या उसके चारों ओर मांस बढ़कर उसको घेर ले, अचल न रहे अर्थात् एक जगह से दूसरी जगह में चला जाय, सूक्ष्म शिराओं से व्याप्त हो, दृष्टि का नाशक, दूसरे पटल में उत्पन्न और चारों ओर से लाल हो तथा बहुत दिनों का हो तो ऐसे शुक्र को वैद्य त्याग देवे। मा० नि०।

अव्रतः–स० पु० वह ज्वर जो बिना नियम के आता है। अथर्व० सू० ११ : २। कां० ७।

अव्वगुड़-
अव्वगूद पण्डु- } –ते० आमुख्य। महाकाल, लाल इन्द्रायन।

(Trichosanthes Palmata' *Roxb*) स० फा० इं०।

अव्वल–हिं० वि० पु० [अ०] (१) पहला, आदि का। प्रथम (२) उत्तम श्रेष्ठ। संज्ञा पु० आदि आरम्भ।

अव्वलिय्यतुल् विलादत–अ० बिक्रियतुल् विलादत प्रथम बार शिशु जनने वाली स्त्री, वह स्त्री० जो प्रथम बार शिशु प्रसव करे; प्रथम प्रसवा। प्राइमा पारा (Primapara) इं०।

अव्वलिय्यह–अ० पहला, प्रथम। (First)

अशक़ह–अ० देखो—इश्क़। (aishq)

अशकुन–हिं० संज्ञा पु० [सं०] कोई वस्तु वा व्यापार जिससे अमंगल की सूचना समझी जाय। बुरा शकुन, बुरा लक्षण।

अशकुम्भी–सं० स्त्री० पानीयोपरिज वृक्ष। जलकुम्भी (Pistia stratiotes) र० मा०।

अशक्त–हिं० वि० [सं०] [संज्ञा अशक्ति] (१) निर्बल, कमजोर, (२) अक्षम असमर्थ।

अशक्ति–हिं० संज्ञा स्त्री० [स०] [वि० अशक्त] निर्बलता कमजोरी।

अशङ्कर–कना० समाक़ सुमाक़-अ०, फा० तिमतिम तमतम–अ० (Rhus coriaria)

अशद्द–अ० बलवान, सशक्त, तीक्ष्ण स्वभाव, १८ वर्ष की अवस्था से लेकर ३० वर्षीय युवा।

अशनम्– सं० क्ली०
अशन–हिं० संज्ञा पु० } [वि० अशित, अशनीय] (१) भोजन, अन्न, आहार. (Food) (२) भोजन की क्रिया भक्षण, खाना, रा० नि० व० २० –सं० पु० (३) पीतशाल, असन वृक्ष। Asan tree (Terminaliaalata tomentosa) च० सू० ४ अ० ४३ दशक।

(४) चित्रक, चीता। (Plumbago zeylanica)। (५) भल्लातक वृक्ष भिलावाँ (Semecarpus anacardium) वै० निघ०।

अश(स)नकः-सं० पु० असन पुष्पाकार धान्य विशेष सु० सू० ४६ अ०।

अशनपर्णी-सं० पु० स्त्री० (१) विजयसार वृक्ष पटसन (Pterocarpus marsupium) मराठी-पश्चिम दे०।

पर्याय—वातकः शीतलः, शीतत्रवातकः, असनपर्णी सनपर्णी, शीतः और शीतकः। (२) गोकर्णीलता-सं०। अपराजिता-बं० (See-g okarnilata) अम०।

अशनपुष्पः-सं० पु०, अशन पुष्पाकार शालिधान्य, षष्टिक धान्य विशेष। सु० सू० ४६ अ०। (A kind of paddy).

अशन मल्लिका-सं० स्त्री० आस्फोता। हापरमाली-बं० (Clitoria ternaea) च० द०।

अशना, या-सं० स्त्री० (१) क्षुधा भूख। (Hunger) हला०। (२) शुक्र निष्पाव, श्वेत शिम्बी, सफेद सेम। (Phaseolus radiatus) रा० नि० व० ७।

अशनायुकः-सं० पु० भूखा, क्षुधित (Huugry)

अशनिः-सं० पु० स्त्री० हीरक, हीरा। हीरे-बं० (Diamond) वै० निघ०।

अशनि-हिं० संज्ञा पु० (१) विद्युत (२) वज्र, इन्द्र का शस्त्र। अथर्व०, सू० २७। ६। का० ३ (Lightening)

अशनीय-हिं० वि० [सं०] खाने योग्य।

अशमर्ह्-अ० बार्द्धक्य' वृद्धापन, बुढ़ाई वृद्धता, बुढ़ाई जरापन। सीनीलिटी (Senility) इं०।

अशम्भ-अ० बड़ी और ऊंची नाक वाला वह व्यक्ति जिसकी घ्राण शक्ति (कुव्वत शाम्मह्) अत्यन्त तीव्र हो।

अशरफी-हिं० संज्ञा स्त्री० [फा०] (१) एक प्रकार का पीले रंग का फूल गुल अशरफी (२) सोने का एक पुराना सिक्का जो सोलह से २१ रुपये तक का होता है। मोहर।

अशरास-अ० एक जड़ी है जिसकी पत्तियाँ मजबूत, पुष्प रक्तभायुक्त श्वेत वर्ण के तथा फल गोल होवेहैं

अशरीर-हिं० पु० शरीर रहित कन्दर्प, काम, मदन। Lust' Kamdev (The hindu cupid)

अशर्फी बूटी-रसा० अशरफी।

अशम्म-हिं० संज्ञा पु० [सं०] कष्ट दुख वि० (१) दुखी। (२) गृह रहित।

अशल्ल-अ० टुण्डा, अपाहिज, वह व्यक्ति जिसका हाथ शुष्क हो गया हो।

अशा-अ० अश्वान, अमी, लैची नक्तांध्य' रात्र्यंधता, रतौंधी, यह एक प्रकार का नेत्र रोग है जिसमें रात्रि में दिखाई नहीं देता हेमीरल ओपिया (Hemeralopia) इं०

अशाऽ-अ० निशा, रात्रि निशाहार रात का खाना। डिनर (Dinner) इं०।

अशाका खा-सं० क्ली० शूली तृण। शाखाशून्यलता रा० नि० व० ८। See shuli

अशान्तगन्धाऽऽख्या-सं० स्त्री० आम्रहरिद्रा। आम हलदी आम आदा-बं०। आंवेहलद-मह०। (Curcuma amada) वै० निघ०।

अशान्त चूण-हिं० वि० अनबुझा चूना। (Quick or unsla kedlime)

अशाम-अ० वाम ओर, बाईं ओर।

इसका बहुवचन अशाइम है (Left side)

अशितम्-सं० क्लीं० } भुक्त खायाहुआ, खादित, तृप्त
अशित-हिं० वि० } हे० च०

अशितम्भवः-सं० पु० अन्न। भात बं०।

अशितलता-सं० स्त्री० नीलदूर्वा, नीलीदूब (See-nila durvva) वै०-निघ०।

अशिरम्-सं० क्ली० } (१) हीरक हीरा (Diamond) रा० नि० व० १३। देखो—वज्रम
अशिर-हिं० संज्ञा० पु० } (२) अग्नि (Fire) (३) राक्षस (Ademon) (४) सूर्य। (Sun).

अशिरष्क–मस्तक रहित, कबन्ध। (A headless trunk)

अशिशिम्बी–सं० स्त्री० स्वनामाख्यात शिम्बी विशेष सफेद सेम, थोर श्वेत आवै–मह० श्वेत शिम्–वं० (The whiteflat bean)

गुण—मधुर, कषेली, श्लेष्मपित्तघ्नी, व्रण दोष नाशिनी, शीतल और रुचिकारी है। रा० नि० व० ७।

अशिश्विश्व-का–सं० स्त्री० अनपत्या; पुत्र कन्याहीन स्त्री' सन्तान रहित स्त्री (A childess woman) श० र०।

अशीता– } सं० स्त्री० भूमिकुष्मांण्ड, पताल कुम्हड़ा
अशुक्ला– }

(Ipomoea Digitata) वै० निघ०।

अशीरान–यु० खायहे संग फा०।

अशीरून-इन्दलु० हर्फुस्सतूह एक अप्रसिद्ध बूटी हैं।

अशक्लजा-सं० स्त्री० बोरोधान्य, बोरव धान (See Borodhana) पै० निघ०

अशुक्ला–सं० स्त्री० भूमिकुष्मांड, (Ipomoea Digitata) वै० निघ०

अशुङ्कार–कना० अशोक–हिं०, बं०। (Saraca indica)

अशुचिः–सं० त्रि० }
अशुचि–हिं० वि० [संज्ञा अशौच] }

(१) अशुद्ध, अपवित्र, अशौची। (२) गंदा, मैला। (Impure, foul, unclean) हिं० संज्ञा स्त्री० अपवित्रता, अशुद्धता (Impurity)

अशुतायर–अ० घोंसला, खोंथा,। नेस्ट (Nest) -इं०।

अशुद्ध–हिं० वि० [सं०] [संज्ञा अशुद्धता, अशुद्धि] (१) विना शोधा हुआ, बिना साफ किया हुआ, असंस्कृत जैसे—अशुद्ध पारां। (२) अपवित्र।

अशूक–नैपा० ल्हाला-भोट, लेप०। सुर्च, सुट्स, काला-विस्, त्सर्दकर, धुर्चुक, तर्वाचुक, चुमा-पं० हिप्पोफी सिलिसिफोलिया (Hippophae silicifolia, *Don*)–ले०।

(*N. O. Elœagnaceœ*)

उत्पत्ति-स्थान—शीतोष्ण हिमालय, जम्बू से सिक्किम पर्यन्त। प्रयोगांश—फल।

उपयोग—इसका फल फुफ्फुस रोगों में उपयोग किया जाता है (पञ्जाब में)। इं० मे० प्लां०।

अशूकजः,-कः-सं० पु० मुण्डशालि, निःशूक शालि धान्य। (See mundashali) रा० नि० व० १६।

अशुष्कतोयमलः–सं० पु० समुद्रफेन। Cuttle-fish bone (के० नि०)।

अशृत–सं० क्ली० अपक्व, कच्चा।

अशोकः–सं० पु० }
अशोक–हिं० संज्ञा पु० } अशोक, असोक,

अशोक बीरो, अशोगी–हिं०। सैरेका इण्डिका। (Saraca Indica, *Linn*) जोनेशिया अशोका (Jonesia asoka, *Roxb*)–ले० दी अशोका ट्री (The Asoka trce)–इं०, जोनिसिया अस्जोगम (Jonesia asjogam)–फ्रां०।

संस्कृत पर्याय—अङ्गनाप्रिया, वीतशोकः (शब्द० मा०). शोकनाशः, विशोकः, वंजुलद्रुमः वञ्जुलः, मधुपुष्पः, अपशोकः, कङ्केलिः, वेलिक, रक्तपल्लवः, चित्रः, विचित्रः कर्णपूरः, दोहली, ताम्रपल्लवः, रोगितरुः, हेमपुष्पः, वामाङ्घ्रिः यातनः, पिण्डीपुष्पः, नटः, रामा, पल्लवद्रुः, (रा), कान्ताङ्घ्रि दोहदः (त्रि), चक्रगुच्छः (श). कङ्केलिः, पिण्डपुष्पः, गधपुष्पः, रक्त पल्लवकः, वामांघ्रि यातनः, रागपल्लवः, केलिकः, सुभगः, दोहलीक, पल्लवद्रुम, राम, अशो (सो)क गाछ, अशोक फुलेर गाछ–वं०। असोक–हिं०, वं०, बम्ब०, उड़ि०, कना०, तै०। अशोक–मह० देशी पील फुलनो, आशुपालो, आशुपाल (ला) -गु०। आसोपालव आसापोल हि० होगास सि०। आसागम–मल०, ता०। असोकडा, वेङ्कलिमर–कना०। जासुदी–बम्ब०। थवगवो–बर० प्रसेव कटक, मह०। अशुङ्कर–गों०।

शिम्बी वर्ग

(N.O. Leguminosæ, -ceæ)

उत्पत्ति स्थान—अशोक हिन्दुओं का एक पवित्र वृक्ष है। यह पूर्वी बंगाल की, जो सम्भवतः इसका आदि निवासस्थान है, सड़कों के इधर उधर बाहुल्यता से पाया जाता है। दक्षिणभारत, अण्डमान और टेनसरिम में यह अधिकता के साथ उत्पन्न होता है। सयुक्तप्रांत में कुमायूँ के समीप २००० फीट उच्च इसके वृक्ष होते हैं। सुन्दर पुष्पों के लिये इसको बहुत से स्थानों में लगाते हैं।

वानस्पतिक वर्णन—अशोक प्रायः दो प्रकार का देखा जाता है। नीचे इनमें से प्रत्येक का पृथक् पृथक् वर्णन किया जाता है।

(१) यह एक इतस्ततः विस्तृत बहुशाखान्वित उत्तम छाया तरु है साधारण वृन्त के दोनों पार्श्व में ५–६ जोड़े पत्र होते हैं। पत्र रामफल के समान प्रायः १८–२० अंगुल लम्बे सामान्य चौड़े, तरुणावस्था में रञ्जित एवं लम्बित होते है। पत्रप्रांत अखंडित एवं किंचित् तरंगायित होता है। पुष्प गुच्छाकार, प्रथम कुछ नारंगी रंग के, फिर क्रमशः रक्त वर्ण के होते जाते हैं, वसन्तकाल अर्थात् फागुन (एप्रिल तथा मार्च) में पुष्पित अशोक वृक्ष अति ही नयनानन्ददायक होता है. इसमें चौड़ी फली लगती है जिसमें बड़े बड़े बीज होते हैं, वृक्ष त्वक् बाहर से शुभ्र धूसर तथा (Scabrous) होता है वृक्ष से सद्यः छेदित पदार्थ श्वेत, किंतु वायु में खुला रहने पर वह शीघ्र रक्त वर्ण में परिणत हो जाता है, स्वाद—मृदु कषाय और अम्ल।

(२) एक वृक्ष जिसके पत्र आम की तरह लम्बे, पत्रप्रांत लहरदार होते हैं. इसमें सफेद मंजरी (मौर) वसन्त ऋतु में लगती है जिसके झड़ जाने पर छोटे छोटे गोल फल लगते हैं जो पकने पर लाल होते हैं, पर खाए नहीं जाते। इसके वृक्ष अत्यन्त सुन्दर और हरेभरे होते हैं, इससे इसे बगीचों में लगाते हैं. शुभ अवसरों पर इसके पत्र की वंदनवारें बांधी जाती है।

रसायनिक संगठन—इसकी छाल की रसायनिक परीक्षा अभी तक यथेष्ट रूप से नहीं हो पाई, एब्बट Abbott (१८८७) के परीक्षानुसार इससे हीमेटॉक्सजीलीन (Hæmatoxylin) वर्तमान पाया गया, हूपर (Pharm Indca) ने इसमें यथेष्ट परिमाण में टैनीन (कषायीन) की विद्यमानता का वर्णन किया स्कूल ऑफ़ ट्रॉपिकल मेडिसिन के रसायनिक विभाग में विभिन्न विलायकों से इसके विचूर्णित शुष्क त्वक् के सत्व प्रस्तुत किए गए जिसका निष्कर्ष निम्न रहा—पेट्रोलियम ईथर एक्सट्रैक्ट ०,३०७ प्रतिशत, ईथर एक्सट्रैक्ट ०, २१५ प्रतिशत और ऐब्सोलूट ऐलकोहलिक एक्सट्रैक्ट १४, ३ प्रतिशत।

ऐलकोहलिक ऐक्सट्रैक्ट (मद्यसारीय सत्व) में, जो बहुतांश में उष्ण जल विलेय था' यथेष्ट परिमाण में कषायीन (टैनीन) और सम्भवतः एक सैन्द्रियक पदार्थ, जिसमें लौह विद्यमान था, पाए गए। ऐलकलाइड (क्षारोद) और उड़नशील वा सुगंधित तैल (Essential) के स्वभावका कोई क्रिया शील सत्व नहीं पाया गया इसकी पूर्ण परीक्षा की जा रही है। (आर० एन० चोपरा एम० ए०, एम० डी'इ० ड० इं० पृ० ३७७)

प्रयोगांश—त्वक्, बीज। मात्रा—२ तोला।

औषध निर्माण तथा मात्रा—अशोक घृत, अशोकारिष्ट, मात्रा—१ से ५ तोला; तरल सत्व, मात्रा—१५–६० मिनिम (बूंद)।

अशोक के गुणधर्म तथा उपयोग

आयुर्वेदीय मतानुसार—मधुर, हृद्य, सन्धानीय और सुगंधित है अशोक शीतल है तथा प्रयोग करने से यह अर्श, क्रिमी, अपची एवं सम्पूर्ण प्रकार के व्रणों को नाश करता है। (धन्वन्तरीय निघण्टु)

अशोक शीतल, हृद्य है एवं पित्त, दाह तथा भ्रम नाशक है और गुल्म, शूलोदर; आध्मान

(अफरा) तथा क्रिमिनाशक एवं रक्तस्थापक है, (रा० नि० व० १०) । अशोक शीतल, तिक्त ग्राही, वर्ण्य (वर्णकर्त्ता) और कषला है तथा वातादि दोष, अपची, तृषा दाह, कृमिरोग, शोथ विष और रक्त के विकार को दूर करता है। (भा० पू० १ भा०)

अशोक के वैद्यकीय व्यवहार

चक्रदत्त-असृग्दर-अर्थात् रक्तप्रदर में अशोक त्वक्-कुट्टित अशोक की छाल २ तो०, गो दुग्ध आध पाव, जल १॥ पाव । इसको दुग्धावशेष रहने तक क्वाथ प्रस्तुतकरें और शीतल होनेपर इसका सेवन करें । यथा—"अशोक वल्कल क्वाथ शृतं क्षीरं सुशीतलं । यथा बल पिबेत् प्रातस्तीव्रा सृग्दर नाशनम् ।" (असृग्दर-चि०) (२) मूत्राघात में अशोक बीज—अशोक बीज एक अदद लेकर शीतल जल में पीस कर पान कराएँ । यह मूत्राघात (प्रस्रावरोध) और अश्मरीनाशक है । यथा—"जलेन खदिरी बीजं मूत्राघातात्मरीहरम् " (मूत्राघातचि०) "खदिरी बीजमशोक बीजमित्याहुः" (शिवदासः)

वक्तव्य

चरक के चिकित्सा स्थान के ३० वें अध्याय एवं सुश्रुत शारीर स्थान के २ य अध्याय में प्रदर की चिकित्सा लिखी है, किन्तु वहां अशोक का नामोल्लेख नहीं है, राजनिघण्टुकारको भी अशोक प्रदर नाशक गुण स्वीकृत नहीं है। चरक के वेदनास्थापन तथा संज्ञा स्थापन वर्ग के अन्तर्गत अशोक का पाठ दिया है (सू० ४ ४०) । वेदनास्थापन का अर्थ यन्त्रणानिवारक है (देखो—अङ्गमर्द प्रशमन) टीकाकार चक्रपाणि लिखते हैं "वेदनायास्सम्भूतायां तां निहत्य शरीरम् प्रकृतौ स्थापयतीतिवेदनास्थापनम्" अर्थात् उपस्थितवेदना का निवारणकर शरीर को जो प्राकृतिक अवस्था में लाए उसको वेदना स्थापन कहते हैं। कविराज गण रक्त प्रदरमें अशोकको वेदनास्थापन रूप से नहीं अपितु रक्त रोधक कह कर व्यवहार में लाते हैं जिन सम्पूर्ण स्थलों में हठात् रक्तरोधकी आवश्यकता हो, उन उन स्थलोंमें प्रमादवश अशोक का व्यवहार कराने से प्रदर रोगी का रक्त स्राव कम होकर वेदना की वृद्धि होते हुये बहुशः रोगियों में प्रत्यक्ष देखा गया है। सकल वैद्यक ग्रन्थों की आलोचना करने पर ज्ञात होता है कि प्रदर में सर्व प्रथम अशोक का प्रयोग वृन्दकृत सिद्धयोग नामक पुस्तक में हुआ है अशोक घृत का व्यवहार किस समय से हो रहा है, इसे बतलाना कठिन है । चक्रदत्त, भाव प्रकाश, एवं शारंगधर में अशोक घृत का उल्लेख दिखाई नहीं देता "सारकौमुदी" नामक संग्रह ग्रन्थ प्रणेता वङ्गसेन संकलित चिकित्सासार संग्रह तथा भैषज्यरत्नावली नामक ग्रन्थ में अशोक घृत का उल्लेख है सुश्रुतोक्त वात व्याधि में प्रयुक्त कल्याणकघृत के उपादानों के मध्य अशोक का उल्लेख देखने में आता है (चि० ४ अ०)

नव्यमत

आयुर्वेदीय चिकित्सक गण संग्राही एवं गर्भाशयावसादक रूप से इसके वृक्ष त्वक् का प्रचुर प्रयोग करते हैं कि गर्भाशयान्तरिक मांस तन्तुओं (Endometrium) तथा विस्रवोद्भव तन्तुओं पर इसका उत्तेजक प्रभाव होता है। गर्भाशय विकार विशेषतः (Uterinefibroid) तथा अन्य कारण से उत्पन्न रक्त प्रदर में इसका बहुत प्रयोग होताहै इसकी छाल का दुग्ध में प्रस्तुत क्वाथ आज तक कविराजी चिकित्सक की एक उत्तम औषध है । अर्श तथा प्रवाहिका में भी इसका उपयोग किया जा चुका है । इं० ड्रू० इं०

इसमें शुद्ध संग्राही गुण प्रतीत होता है । (डीमक)

इसके पुष्प को जल में पीसकर रक्तामाश (Hæmorrhagic dysentery) में बर्तते हैं । (वैट)

इसकी छाल का जल में प्रस्तुत क्वाथ भी जल मिश्रित गन्धकाम्ल (Dilute sulphuricacid) के साथ व्यवहृत होता है । इं० मे० मे० ।

अभी हाल में ही इसकी छाल के तरल सत्व

की रक्त प्रदर में परीक्षा की गई और यह लाभप्रद प्रमाणित हुआ। (Indigenous drugs Report, madras)

नोट—थोड़े हेरफेर के साथ अशोक उपर्युक्त गुणों का उल्लेख प्रायः सभी प्राच्य व पाश्चात्य ग्रन्थों में हुआ है।

वर्तमान अन्वेषक श्री युत आर० एन० चोपरा महोदय स्वरचित ग्रंथ में अपने अशोक सम्बन्धी विचार इस प्रकार प्रकट करते हैं।

पृथक किये हुये जरायु पर अशोक त्वक् द्वारा वियोजित विभिन्न अंशों की परीक्षा की गई किंतु उसका कोई व्यक्ति प्रभाव नहीं हुआ रक्तप्रदर एवं अन्य गर्भाशय विकारों में यद्यपि बहुशः शस्त्रागत रोगी परीक्षक गण इसके लाभदायक होने की प्रशंसा करते हैं पर यह औषध प्रत्यक्ष प्रभाव प्रकट करती हुई नहीं प्रतीत होती। ई० डू० इं०

अशोकम्-सं० क्ली
अशोक-हिं० संज्ञा पु०

(१) पद्मद पारा। Mercury (Hydrargyrum)

पु० (२) आस पास अशोक (Saraca Indica)

अशोकघृतम्-सं० क्ली० प्रदर में प्रयुक्त होने वाला एक घृत विशेष।

योग तथा निर्माण विधि—अशोक की छाल ६४ तो० (१ प्रस्थ) को १२८ तो० जल में पकाएँ। जब चौथाई जल शेष रहे तो उसमें ६४ तो० घृतमिलाकर पकाएँ। पुनः चावलों का पानी, बकरी का दुग्ध घृत तुल्य भाग जीवक का स्वरस भाँगरे का स्वरस, जीवनीय गण की औषधियाँ शिरौंजी, फालसा, रसवत, मुलहठी, अशोक मूल त्वचा, मुनक्का, शतावर, चौलाई मूल प्रत्येक २-२ तो० ले कल्क बनाएं। पुनः मिश्री ३२ तो० मिलाकर कोमल अग्नि से शनैः शनैः पकाएँ।

गुण—इसके सेवन से हर प्रकार के प्रदर, शोक, कृमियुक्त, कटियुक्त, योनि शूल, शरीरव्यथा मन्दाग्नि अरुचि, पाण्डु, कार्श्य श्वास एवं कामला का नाश तथा आयु की पुष्टि होती है। वृ० से० सं० प्रदर चि० भैष० । सा० कौ०।

अशोक रोहिणी-स० स्त्री० (१) कटुतिक्ता, रोहिणी तिक्तरोहिणी' कटुकी। (Picrorrhiza kurroa) रा० नि० व० ६। च० सू० ४ अ० सज्ञास्थापन। देखो—कटुकी (२) जलाशोक यह अशोक दल सदृश दल है। रत्ना०।

अशोकवाटिका-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] (१) वह वगीचा जिसमें अशोक के पेड़ लगे हों (२) शोक को दूर करने वाला रम्य उद्यान।

अशोका-सं० (हिं० संज्ञा) स्त्री० कटुरोहिणी, कटुकी, कुटकी (Picrorrhiza kurroa) मे० । भा० पू० १ भा०।

अशोकारिः-सं० पु० कदम्ब वृक्ष। कदम्ब महा० कदम गाछ बं०। (Anthocephalus kadamba) श० च०।

अशोकारिष्ट-सं० पु० प्रदर रोग में व्यवहृत एक अरिष्ट विशेष।

योग व निर्माण विधि—अशोक की छाल १ तुला (५ सेर) को ४ द्रोण (६४ सेर) जल में पकाएं। जब चौथाई शेष रहे तो उसमें गुड़ पुराना, धौ का फूल ६४-६४ तो० सोंठ, जीरा, नागर मोंथा, दारुहलदी, आमला, हर बहेड़ा अडूसा, आम की गुठली, कमल का फूल चन्दन, जीरा, इन्हें ४-४ तो० चूर्ण कर उक्त क्वथित रसमें मिश्रित कर उत्तम पात्र में रखकर एकमास तकरख छोड़े जब सन्धानित होकर उत्तम रस तैयार हो तब छानकर बोतल में बन्द करे।

मात्रा—१-५ तो०।

गुण—इसके सेवन से रक्तपित्त, हर प्रकार के प्रदर, ज्वर, रक्ताश मन्दाग्नि, अरुचि, शोथ, प्रमेह और सम्पूर्ण स्त्री रोगों का नाश होता है भैष० र० प्रदर चि०। आ० वे० सं०।

अशोगम्-ता०
अशोगी-हिं० संज्ञा स्त्री० } अशोक (Saraca indica' *Linn*) फा० इ० १ भा०।

अशोथनेत्रपाकः-सं० पु० अशोफज अर्थात् शोथ (सूजन) रहित नेत्रपाक रोग।

लक्षण-नेत्रों में खुजली चले, चिपकें और आंसू बह तथा पके गूलर की समान लाल, सूजन युक्त और जो पके वह शोफज नेत्ररोग है इसके विपरीत जिसमें ये लक्षण न हों उसे 'अशोथनेत्र पाक,' रोग कहते हैं मा० नि०।

अश्अर-अ० सघन बालोंवाला, बहुलोमश अधिक रोमों वाला वह व्यक्ति जिसके बाल अधिक हों। हाइपर ट्रिकोसिक (Hypertrichosic) इ०

अश्क-फा० आँसू, अश्रु (A tear)

अ(इ)श्क पेचा-फा० कामलता, तरुलता। (Ipomoea quamoclit) इं० हैं० गा०। देखो—इश्कपेचा।

अश्क़र-अ० रक्तवर्ण जो पीत एवं श्याम आभा लिये हुये हो। रोग विज्ञान में उस मूत्र (कारोरा) को कहते हैं जिसका रंग ललाई लिए पीला हो। रेडिश येलो (Rediso-yellow)-इं०।

अश्क़ाकुल-अ० शकाकुल। एक प्रसिद्ध जड़ है। जिसको हिन्दी में "दूधाली" कहते हैं (Asparagus ascendens, *Roxb*)

अश्कानी-तिब्रि० चौलाई, तण्डुलाय। (Amarantus thus' spinosus)

अश्कील-ऊसज एक वृक्ष है। (A tree)

अश्कून-तु० रेबास, See-Raibasa

अश्केमरियम-फा० करञ्ज करजुआ। (Pongamia glabra)

अश्ख़ार-, शख़ार- } खरासा० भारतीय सज्जी, सर्जि, बैरिल्ला (Barilla)-इं०। देखो—सोडियाई कार्बोनास या सोडा।

अ(इ)श्ख़ीस-अ० अश्दुल्अर्ज़। अबाबा-बरब०। ख़ामालावन-यु०। वश्करायन-इल्दलु०। किसी किसी के मतानुसार बरबरी भाषा में इसे 'बहीद' और फारसी में 'मुश्तरू' कहते हैं। किसी किसी ने इसे माजरयून स्याह का एक भेद लिखा है तथा किसी ने इसे किर्मदाना का पेड़ लिखा है। किसी किसी के मतानुसार इसका हिन्दी नाम बङ्कम है और बंगाल में बहुत पैदा होता है। फलतः यह अनिश्चित वनस्पति की जड़ है जो अफ़रीका और आर्मीनिया में अधिकता के साथ उत्पन्न होती है तथा आज कल अप्रयुज्य है। देखो—माजरियून (Mazariyuna)

अश्जअ-अ० (ए० व०), अशाजिअ (ब० व०) (१) व्यवच्छेद शास्त्र की परिभाषा में अंगुली-मूल संधि। जौहरी का वचन है कि अंगुलियों की सन्धियाँ तीन हैं,—प्रथम जो सन्धि मूल में स्थित है, इसे अश्जअ कहते हैं, द्वितीय जो मध्य में स्थित है बुजु मह (Phalange) नाम से अभिहित होती है और त्रितीय जो ऊपर स्थित है अन्मिलह (Tip of the finger) कहलाती है। (२) उश्शक़; उश्शज (Anmoniacum)

अश्जार-अ० (ब० व०), शजर (ए० व०) वृक्ष, पेड़। (Trees) स० फा० इं०। लु० कि० देखो—वृक्ष।

अश्त-मह० प्लक्ष वृक्ष, पाकर, पाखर पकरी (Ficus rumphii, *Bl*) फा० इ० ३ भा०।

अश्तर-अ० फटे नेत्र वाला, दरीदा चश्म। यह सहज या प्रकृत रोग है।

अश्तबून, अश्तरान } -मि० अ० बसफाइज, खकाली-हिं०। (Polypodium)

अश्तला बूस-रू० कायफल (Myrica nagi, *Thunb*)

अश्ता-हिं० काञ्चनार, कचनार, मक्कुआ। (Bauhinia variegata)

अश्दक-अ० चौड़े मुँह वाला, बड़े मुँह वाला।

अश्दाक़-अ० (ब० व०), शिद्क (ए० व०) गोशहे दह्न, मुख कोण, मुख का कोना।

अश्नह्-फा० दरख्त, पूज़ह। Moss, common (Lycopodium clavatum) इं० हैं० गा०।

अश्नान–अ० स्वर्जिक्षार। दे०—उश्नान (Ushnana)। हिं० पु० स्नान, नहाना। (Bathing)

अश्फ़रान–अ० स्त्री की योनि के दोनों किनारे।

अश्फ़ी–अ० जिसके दोनों ओष्ठ परस्पर न मिलते हों।

अश्फ़ार–अ० (ब० व०), शफ़र (ए० व०) पलकों के किनारे अर्थात् पलकों के बाल उगने के स्थान। म० ज०। –कावु० सज्जी।

अश्बह–अ० इश्कपेचा के समान एक बूटी है। फूल चमेली के समान तथा सुगन्धयुक्त होता है।

अश्बाह्–अ० (ब० व०), शबह् (ए० व०) प्रतिबिम्ब, मूर्ति, तसवीर। (Reflection, an image, a picture)

अश्बाल–मत्स्याण्ड, मछली के अण्डे। (Eggs of fish)

अश्बुत्चेरान–अ० मार्जाराण्ड, जुन्दबेदस्तर (Castoreum) इं० मे० मे०।

अश्म–सं० क्लीं०; हिं० संज्ञा पु० [अश्मन्] (१) स्वर्ण माक्षिक। Iron pyrites (Ferri sulphuretum) वै० निघं०। (२) पत्थर (A stone), (३) पर्वत, पहाड़ (A mountain), (४) मेघ, बादल। (A cloud)

अश्मकदली–सं० स्त्री० कदली विशेष, केला, पर्व्वतीय केला, पहाड़े कला–बं०। लोखंड केल–मह०। Plantain (Musa sapientum) रा० नि० व० ११।

अश्मगन्धिक–सं० स्त्री० अश्वगन्ध (Withania somnifera)

अश्मगरम्–सं० क्लीं० स्वर्ण, सोना। Gold (Aurum) रत्ना०।

अश्मगूट–हिं० पु० (Petrous process)

अश्मगुच्छ हा–सं० स्त्री० वेञ्जन्तर वृक्ष, बीरतरु। वेबतूर–मह०। वै० निघ०।

अश्मकेतुः–सं० स्त्री० क्षुद्र पाषाणभेद क्षुप। पाथर कुर–बं०। रा० नि० व० ५। Coleus aromaticus (The smallyarof)

अश्मगर्भः–सं० पु०
अश्मगर्भ–हिं० संज्ञा पु० } हरिन्मणी, पन्ना, पाचा –बं०। ज़मुर्रद–अ०। Emerald (Smaragolus) भा० पू० १ भा०। क्लीं० (२) मरकत-मणि। हे० च०; देखो—पन्ना।

अश्मगर्भकः–सं० पु० तिनिश वृक्ष। (Lagerstroemia flosreginæ) मद० व० ५।

अश्मगर्भजम्–सं० क्लीं० मरकत-मणि, पन्ना। (Emerald) रा० नि० व० १३।

अश्मघ्नः–सं० पु० पाषाणभेद क्षुप। पाथरकुचा-बं०। (Coleus aromaticus) रा० नि० व० ५। भा० पू० १ भा०।

अश्मघ्न स्वेद–सं० पु० अश्मरी में प्रयुक्त स्वेद विशेष।

अश्मजम्–सं० क्लीं०
अश्मज–हिं० संज्ञा पु० } (१) मुण्डलौह, लोहा भेद। Iron(Ferrum) रा० नि० व० १३। च० द० पांडु-चि०। (२) शिलाजीत, शिलाजतु (Bitumen) मद० व० ४ · हेमा०। प० मु०। र० मा०। रा० नि० व० १३। (३) गेरू, गैरिक, हिंगलिजी, (See–Gairika)। (४) मोमियाई।

अश्मजतु-कम्–सं० क्लीं० शिलाजी(जि)त, शिलाजतु (Bitumen) च० द० पांडु चि०, योगराज रा० नि० व० १३। सि० यो० र० पि० चि० खण्डखाद्य। "शुभाश्मजतुकं त्वचम्"।

अश्मदारण–हिं० पु० पत्थर काटने वाला आरा।

अश्मन् सं० पु० प्रस्तर; पत्थर, पाषाण। (A stone)

अश्मन्तः,कः–सं० पु० पाषाण भेद, पाथर चूर। (Coleus aromaticus) च० सू० १ अ०, कोविदार वृक्ष सदृश अम्ल-पत्रोय अम्लोट, चांगेरी (Aspecies of ebony)। भा० मा० ४ भा० गर्भ–चि०। "अश्मन्तकस्तिक्षाः कृष्णाः" च० सू० ४ अ०। (३) उदालक वृक्ष, वहुआर-सं० वहुआर, लसोरा-हिं०। (Cordia latifolia) भा० पू० १ भा०। (४) कोविदार वृक्ष

कचनार भेद। (Bauhinia veriegata) भ० पू० २ भा०। (५) चुक, चांगेरी (Rumex vesicarium), र० मा०। (६) तृण विशेष। अम्लकुचाई-बं०। (A sort of grass) सु० चि० २५ अ०। (७) स्वनामाख्यात वृक्ष। आपटा-तृण। आवुटा-हिं०। अश्मर-मह०। पर्य्याय-इन्दुकः, कुवाली, अम्लपत्रः, रक्तदल त्वक्, नीलपत्रः, यमलपत्रकः। गुण—मधुर, कसैला, शीतल, पित्तनाशक और भूत निवारण करने वाला है। रा० नि० व० ९।

अश्मन्त(क) मू-सं० क्ली० (१) पाकार्थ अग्निस्थान चुल्लि (खी), चूल्ही। मे० नत्रिक०। (२) दीपाधारच्छादन, आंधारिया। मे०।

अश्मपुष्पम्-सं० क्ली० शैलज, शिलारस, (Styrax præparatus) अम०।

अश्मभाण्डम्-सं० क्ली० (१) लौह भाण्ड विशेष, हावन। हामामदिस्ता-बं०। श० च०। (२) खल्ल, खरल। Mertar

अश्मभित्-सं० पु० १) पाषाण भेद, पाथरचुर, (Coleus aromaticus) प० मु०। रत्ना०। (२) कवाठ वृक्ष वृक्ष-सं०। कराविया कवाट वेटु-ते०। वेयटुआ-हि०। र० मा०। कवाटचक्र। रत्ना०। देखो०—कवाटच(क्) क्रम्, (Kavatacha, va,-kram)।

अश्मभेदः,कः-सं० पु०
अश्मभेद-हिं० संज्ञा पु० } क्षुप विशेष। Coleus amboinicus, Syn, Coleus aromaticus)। पाखानभेद नाम की जड़ी जो मूत्रकृच्छ, आदि रोगों में दी जाती है, पाथरचुर-हिं० पाथर कुचा, हिमसागर, होता जो-बं०। सु० सू० ३८, ३९ अ०। पर्य्याय-अश्मभेदः अश्मभित् (र०); अश्मघ्नः, पाषाणभेदः, शिलाभेदः, अश्मभेदकः, श्वेता, उपलभेदी, उपलभित् शिलागर्भज, नगभित्, सशोधनः। वा० सू० १५, ३९ अ०। वल्लन्तरायणिक वृक वृक वृष्याऽश्मभेदः।

गुण—शीतल, कषैला, वस्तिशोधक दस्तावर तथा तिक्त है और प्रमेह, अर्श, मूत्रकृच्छ, तथा अश्मरी रोग नाशक है। मद० व० १। मधुर तिक्त, प्रमेह, प्यास, दाह, मूत्र कृच्छ तथा अश्मरीहर और शीतल है रा० नि० व० ९।

अश्मभेदनः-सं० पु० पाषाण भेद। मद०।

अश्मयोनिः,नी-स० पु०, स्त्री० (१) नील मणि। A gem of a blue colour (The sapphire) अ० टी०। (२) अश्मन्तक वृक्ष। आपटा-बं०। मद० व० १०। See-ashmantaka

अश्मर-हिं० वि० [सं०] पथरीला।

अश्मरी-(हिं० सज्ञा) स्त्री० मूत्र रोग विशेष। पथरी। कैलक्युलस Calculus (ऐ०व०), कैलक्युलाई Calculi (व० व०) ले०। स्ट्रोन Stone ग्रेवल Gravel-इं०। इसात अ०। संगरेज़ह फ़ा०। झिले, पाथुरी-बं०। मुतखड़ा-मह०।

अश्मरी संस्कृत अश्मन् शब्द से व्युत्पन्न स्त्री वाचक पद है। यहां पर इसका अल्पार्थक प्रयोग हुआ है अर्थात् पथरी वा कंकड़ी के अर्थमें आयुर्वेद के मतसे उस पथरीको कहते हैं जो, वस्तिमें प्रकुपित हुई वायु के वस्तिगत शुक्र के साथ मूत्रको अथवा पित्त के साथ कफ को सुखाने से क्रमशः गाय के पित्त में गोरोचन के समान उत्पन्न हो जाती है, आयुर्वेद में इसके वातज, पित्तज कफज और शुक्रज ये चार भेद माने गए हैं।

चरक, सुश्रुत, वाग्भट प्रभृति सभी प्राचीन आयुर्वेदीय ग्रन्थों में जहां भी अश्मरी का वर्णन हुआ हैं वहां उक्त शब्द का प्रयोग केवल वस्तिगत अश्मरी के लिये किया गया है। परन्तु अब यह शब्द इतने संकुचित अर्थों में नहीं लिया जाता है।

प्राचीन शास्त्रकारों को और स्थानों में बनने वाली अश्मरियों का ज्ञान था या नहीं अथवा पूर्व पुरुषों में और स्थानो में अश्मरियोंका निर्माण होता था वा नहीं? इसके संबंध में वहां कुछ विशेष न कह कर हम केवल इतना ही कहना अभेष्ट समझते हैं कि इस शब्द का प्रयोग अब

इतने संकुचित अर्थों में नहीं होता, वरन् किसी भी अंग्यवयव की प्रणाली वा मार्ग अथवा स्वयं उस ग्रन्थि में बनने वाली किसी प्रकार की पथरी को अब हम अश्मरी कह सकते हैं, यद्यपि इन सबके निदान, सम्प्राप्ति, लक्षण तथाचिकित्सा प्रभृति का, चिकित्सा प्रणालीत्रय के अनुसार अपने अपने स्थल पर सविस्तर वर्णन किया जावगा, तोभी उन सब भेदों का यहाँ संक्षिप्त, परिचय करा देना अप्रासङ्गिक न होगा।

नोट—डॉक्टरी शब्द कैल्क्युलस का अर्थ खटिका है। परंतु डॉक्टरीकी परिभाषा में अश्मरी को कहते हैं प्राचीन पाश्चात्य शास्त्रकार भी इसका प्रयोग केवल वृक्क एवं वस्तिगत अश्मरी के लिये ही करते थे। परन्तु अब इससे व्यापक अर्थ लिया जाता है।

अश्मरी के मुख्य भेद निम्न हैं—

(१) वसत्यश्मरी—आयुर्वेदिक शास्त्रों में इसका वर्णन अश्मरी शब्द के अन्तर्गत हुआ है, इसका एक भेद शुक्राश्मरी है, परन्तु यह आयुर्वेदोक्त "शुक्राश्मरी" वस्ति में नही हो सकती, वरन् इसका निर्माण वीजकोष में होता है।

पर्याय—सिस्टोलिथ (Cystolith), स्टोन इन दी ब्लैडर (Stone in the bladder)–इं०। हसातुल् मसानह्–अ०। मसाना की पथरी–उ०।

(२) शुक्राश्मरी (शुक्राशय स्थित अश्मरी (Calculus of vesiculus seminales)—

(३) शिश्नाग्र त्वगश्मरी—शिश्नाग्र त्वचा अर्थात् शिश्न की घूंघट में बनने वाली अश्मरी। (Calculus of prepuce),

(४) प्रोस्टेटग्रंथि–स्थित अश्मरी, अर्श्वीका गत अश्मरी—(Prostatic calculi) प्रोस्टेट ग्रन्थि वा प्रणाली में बनने वाली पथरी, हसातुल् गुद्दह कुदामियह–अ०।

(५) वृक्काश्मरी, वृक्क की पथरी—रेनल कैलक्युलाई (Renal calculi), स्टोन इन दी किडनी (Stone in the kidney), नेफ्रोलिथ (Nephrolith)–इं०। हसातुल् कुल्यह्, हुसात कुल्वियह् अ०। गुर्दा की पथरी–उ०।

वृक्काश्मरी के होने पर रोगी की पीठ की ओर दाहिनी वा बाईं तरफ वेदना रहती है, हिलने पर यह वेदना और तीव्र होती है। जब यह अश्मरी वृक्क में से निकलकर मूत्र-प्रणाली (गविनियु) में अड़ जाती है अथवा उनमें जब गति होती है तब वृक्कशूल (Renal colic) के उत्कट लक्षण पैदा हो जाते हैं। इनके मूत्र-प्रणाली में आकर फंस जाने ही को "मूत्राश्मरी" कहते हैं।

(६) मूत्राश्मरी—युरिनरी कैलक्युलाई Urinary calculi, युरोलिथ Urolith स्टोन इन दी युरिनरी पैसेज Stone in the urinary passage इं०। हसात बौलिय्यह –अ०। पेशाब का संगरेज़ह–उ०।

इसके दो भेद है, यथा—

(क) मूत्रप्रणालीस्थ अश्मरी, गविनियु-स्थित अश्मरी—(Calculus of ureter)

(ख) मूत्रमार्गस्थ अश्मरी—(Calculus of urethra)

(७) यकृदश्मरी—यकृत में बनने वाली पथरी। हेपैटोलिथ Hepatolith–इं०। हसातुल कबिद–अ०।

(८) अन्त्राश्मरी—इन्टेस्टाइनल कैलक्युलाई (Intestinal calculi)–इं०।

यह मनुष्य एवं मांसाहारी जीवों में तो क्वचित् परन्तु शाकाहारी जीवों में सामान्य रूप से होता है।

(९) पित्ताश्मरी—पित्ताशय वा पित्त प्रणाली में उत्पन्न होने वाली अश्मरी बिलियरी कैलक्युलाई Biliary calculi, गॉलस्टोन्स Gall-stones, कोलोलिथ Chololith, (Calculus of gall-bladder or duct)–इं०। हसात सफ़रावियह, हसात मरारियह–अ०। सफ़रावी पथरी, पित्ता की पथरी–उ०।

नोट—इसे वस्तिस्थ अश्मरी का भेद पित्तज अश्मरी न समझना चाहिये।

(१०) क्लोमग्रन्थिस्थ अश्मरी—अग्न्याशयिक अश्मरी—यह क्वचित् ही पाई जाती है और जब उत्पन्न होती है तब अधिक संख्या में मुख्य प्रणाली वा गौण प्रणाली में वर्तमान होती है। पैन्क्रिएटिक कैल्कयुलाई Pancreatic calculi–इं०।

(११) लालाग्रन्थिस्थ अश्मरी—लाला ग्रन्थि वा लाला अर्थात् लार में पाई जाने वाली अश्मरी।

यह बाहर से खुरदरी (कर्कश) एवं विषमाकार होती है और साधारणतः प्रणाली के मुख के समीप पाई जाती है। इससे प्रणाली का मुख अवरुद्ध हो जाता है। सैलिवरी कैलक्युलाई Salivary Calculi–इं०।

(१२) शिरास्थित अश्मरी—शिरा में बनने वाली पथरी।

फ्लेबोलिथ Phlebolith–इं०। हसातुल् अर्दिद्ह्–अ०। बरीदों की पथरी–उ०।

नोट=कभी कभी शिराओं के भीतर कठोर वा अश्मवत् अवरोध पाया जाता है। यह वस्तुतः रक्त के दृढ़ तथा अश्मरीभूत होने से उत्पन्न हो जाता है।

(१३) अश्रवश्मरी—अश्रुप्रणालीस्थ अश्मरी, आँसू की नालियों की पथरी।

डैक्रियोलिथ Dacryolith–इं०। हसात् दम्ह्रय्यह्–अ०।

अश्मरी कन्दनो रसः–सं० पु० ढाक, केला, तिल, करेला, जो, इमली, चिचिंटा और हल्दी इनके क्षारों को इकट्ठा करके अथवा १६ वाँ भाग पारा उतना ही गन्धक और इन दोनों के समान भाग उत्तम लोह भस्म मिलाकर सबका बारीक चूर्ण कर रक्खें।

मात्रा—१ तोला। इसे दही के साथ चाट कर ऊपर से वरुण वृक्ष की छाल का क्वाथ पिएँ। यह रस दुःसाध्य से भी दुःसाध्य पथरी को नष्ट करता है।

अश्मरीकृच्छ्रः–सं० पु० पथरी जन्य मूत्रकृच्छ्र, मूत्रकृच्छ्र भेद। वै० निघ०। (See Mutra krichchhra)

नोट—आयुर्वेद के अनुसार अश्मरीकृच्छ्र मूत्रकृच्छ्र का एक भेद है। परन्तु यह पथरी के निर्माण की अवस्था में ही होता है। अस्तु यह अश्मरी रोग का केवल एक लक्षण मात्र है।

अश्मरीघ्नः–सं० पु०
अश्मरीघ्न–हिं० संज्ञा पु० } वरुण वृक्ष, बरना का पेड़। बरुण गाछ–बं०। बायबरण–मह०। (Cratæva religiosa) त्रिका०। त्रि०, वि० अश्मरीहर, अश्मरीनाशक, पथरी को दूर करने वाला। (Lithontriptic)

अश्मरीछेदक–हिं० संज्ञा पु० (१) अश्मरी छेदक यन्त्र (Lithotrite)। (२) अश्मरी को फोड़कर चूर चूर करने वाली औषध। अश्मरी भेदक। (Lithotriptic) देखो—अश्मरीहर वि० अश्मरी को फोड़ने वाला, अश्मरी भेदक।

अश्मरी छेदक यन्त्र–हिं० संज्ञा पु० वस्ति में पथरी को फोड़ने का यन्त्र। अश्मरी भेदक यन्त्र। लिथोट्रिप्टर Lithotripter, लिथोट्राइट Lithotrite–इं०। आलिक़तुल् हुसात, मिफत्तितुल् हसात–अ०।

अश्मरी द्रावक–हिं० संज्ञा पु० पथरी को विलीन करने वाली वा घुलाने अर्थात् द्रव करने वाली औषध। वह औषध जो अश्मरी को घुलाकर पानी करदे। अश्मरी विलायक। (Lithodialytic) मुहल्लिलुल् हसात–अ०। देखो—अश्मरीहर।

–वि० अश्मरी को घुलाने वा द्रव करने वाला

अश्मरीद्रावण–हिं० संज्ञा पु० वस्तिस्थ पथरी को विलीन करना, पथरी को घुलाना। लिथोडायालिसिस Lithodialysis–इं०। तह्लीलुल् हसात, तज़्दीबुल् हसात–अ०।

नोट—लिथोडायालिसिस के दो अर्थ होते हैं (१) विलायक औषधों के द्वारा वस्ति में पथरी

का विलीन करना जिसके लिये उपर्युक्त हिन्दी एवं अरबी शब्द प्रयुक्त हुये हैं और (२) किसी यन्त्र के द्वारा बस्ति में ही अश्मरी का छेदन करना। इसके लिये अर्वाचीन आयुर्वेदीय चिकित्सक "अश्मरी भेदन" एवं मिश्र देशीय चिकित्सक "तफ़्तीतुल् हसात" शब्द का प्रयोग करते हैं।

अश्मरी प्रियः–सं० पु० महा शालिधान्य। प० मु० (Sec-mahashalih)

अश्मरी निर्माण–हिं० संज्ञा पु० पथरी बनना। (Lithiasis) तलब्बुनुल् हसात-अ०।

अश्मा भेदः–सं० पु० पाषाणभेद वृक्ष, पाथरचुर। (Coleus aromaticus) मद० व० १

अश्मरी भेदकः–सं० पु० (१) पाषाणभेद। केय० दे० नि०। सं [हिं० संज्ञा पु०] (२) देखो– अश्मरी छेदक।

अश्मरी भेदन–
अश्मरीभेदनः– } सं० हिं० संज्ञा पु० (१) अश्मरी भेदन क्रिया, पथरी तोड़ने का कर्म (Lithotrity) तफ़्तीतुल् हसात-अ०। (२) किसी औषध वा यन्त्र द्वारा बस्ति में ही अश्मरी को फोड़कर टुकड़े टुकड़े करना। (३) पाषाणभेद (Coleus aromaticus) वै० निघ०।

अश्मरी रिपुः–सं० पु० (१) वृक्षचणक, बड़ा चना रत्ना०। (२) क्षेत्रेक्षु। सं०। मकई भुट्टा, बड़ा ज्वार–हिं०। ज्वार–बं०। Maize (Zea mays)

अश्मरी विदारण–हिं० संज्ञा पु० शस्त्रक्रम द्वारा पथरी का निकालना (Lithotomy)

अश्मरीशर्करा–सं० स्त्री० तन्नामक रोग विशेष। (Renal sand, Urinary sand, urinarydeposits) रमल कुल्यह, रमल बौली, रसीब बौली-अ०। रेगे गुर्दह वा बौल फा०।

शर्करा (रेता) और सिकता प्रमेह तथा मूत्राघात रोग (मूत्र शुक्र रोग उत्तर तन्त्रोक्त) ये सब पथरी के ही विकार हैं और पथरी ही घुल कर शर्करा होती है, क्यों कि इनके लक्षण और वेदना समान हैं। (यूनानी हकीम भी पथरी और शर्करा को एक ही किस्म से बताते हैं। दे० तिब्बे अकबर)

यदि पथरी छोटी हो और वायु के अनुकूल हो जाय तब तो प्रायः निकल पड़ती है। और जो वायु द्वारा टुकड़े टुकड़े (नन्हें नन्हें दाने से) हो जाएँ तो उन्हें शर्करा कहते हैं।

अश्मरीजन्य मूत्रकृच्छ्र एवं शर्करा के लक्षण प्रायः एक से होते हैं, यथा—

लक्षण—जिस मनुष्य को शर्करा रोग होताहै उसके हृदय में पीड़ा; साथलों का थकना कूख में शूल और शोथ, तृषा और वायु का उर्द्धगमन कृष्णता (कालापन) और दुबलापन तथा देह का पीला पड़ना अरुचि, भोजन ठीक नहीं पचना आदि लक्षण होते हैं। और यह जब मूत्र के मार्ग में प्रवृत होकर और वहीं स्थित हो जाती है (इसे मूत्राश्मरी कहते हैं) तब ये उपद्रव होते हैं दुबलापन, थकावट, कृशता, कोख में शूल, अरुचि शरीर नेत्रादि पीले पड़ना तथा उष्णवात तृषा हृदय में पीड़ा और वमन (या जी मिचलाना,) इत्यादि। सु० नि० ३ अ० देखो— शर्करा।

अश्मरीहरः–सं० त्रि०
अश्मरीहर–हिं० वि० } पथरी को नष्ट करने वाला अश्मरीनाशक। अश्मरीघ्न। (Lithontriptic)

सं० पु० (१) अश्मरी नाशक योग विशेष यथा–शिलाजीत, वच्छनाग, दाख, दन्ती, पाषाण भेद हल्दी, हड़, प्रत्येक समान भाग लेकर बारीक चूर्ण बनाए।

मात्रा—१ मा० बच्चों को आध मा०।

अनुपान—तिलक्षार २ तो० एवं दूध के साथ खाने से पथरी नष्ट होती है।

(२) देवधान्य देधान वं० (३) वरुण वृक्ष, बरना, बायवरणा मह० (Crateeva Religiosa) र० मा०।

सं० (हिं० संज्ञा) पु० (४) पथरी को नष्ट करने वाली औषध प्रभाव भेद से यह तीन प्रकार की होती है, यथा—

(१) वह औषधें जो अश्मरी बननेको रोकती हैं अथवा मूत्रस्थ स्थूलभाग को मूत्रावयव में तलस्थाईहोनेसे बाज रखतीहैं और यदि कोई पथरी वा कंकड़ी बन गई हो तो उसको विलीन करती हैं।

ऐण्टिलिथिक्स (Antilithics)-इं० । मानिआत तकब्बुनेहसात-अ० ।

(२) पथरी को तोड़ने वाली या उसको टुकड़े २ करने वाली औषधें । वह औषध जो अपने प्रभाव एवं सूक्ष्म गुण के कारण बस्ति तथा वृक्कस्थ अश्मरी को टुकड़े टुकड़े करके करके वा उसको विलीन वा द्रवित करके मूत्र के साथ उत्सर्जितकरे अश्मरी भेदक । अश्मरी छेदक ।

लिथान्ट्रिप्टिक्स (Lithontriptics) लिथोट्रिप्टिक्स (Litotriptics) इं० । मुफत्तित् मुफ़त्तितुल् हसात-अ०

(३) वह औषध जो पथरी को विलीन करती है अश्मरी द्रावक । अश्मरी विलायक ।

नोट—जब पेशाब अधिक अम्लतायुक्त होती है तब उसमें से युरिक एसिड या कैल्शियम आक्सीलेट पृथक होकर शर्कराके रूपमें तलस्थाई हो जाते हैं जिससे पथरी व ककड़ी बन जाती है ऐसी दशा में ऐलकेलीज (क्षारीय औषधों) के देने से या पाइपरेजीन के देने से बहुत लाभ होता है क्योंकि यूरिक एसिड का बनना बन्द हो जाता है प्रभृति किन्तु जब मूत्र डीकम्पोज अर्थात् वियोजित या विकृत हो जाता है तब उसमें से फॉस्फेट के रवे तल स्थाई हो जाते हैं ऐसी दशा में मूत्र को अम्ल किया जाताहै और उसकी विकृति व संडाध को दूर किया जाता है अस्तु बेञ्जोइक एसिड या बेञ्जोएटस के प्रयोग से बहुत लाभ होता है।

(Gout) में पोटासियम् और लीथियम् के लवणों के उपयोग से यूरिक एसिड (जो व्याधि का कारण होता है) विलेय युरेट्स में अर्थात् पोटाशियम् युरेट और लीथियम् युरेट में परिणत हो जाता है एवं उनसे मूत्रस्थ अम्लताक्षारीय हो जाती है।

उपर्युक्त औषधों के सेवन काल में जल का अधिक उपयोग उनके प्रभाव का सहायक होता है इसके उपयोग विषयक पूर्ण विवेचन के लिये विभिन्न अश्मरियों की चिकित्सा के अन्तर्गत देखें

अश्मरीहर औषधें

आयुर्वेदीय—शिलाजीत, कुरण्टक (कटसरैया,) पलास, (क्षार). आक, वरुण वृक्ष, ताम्रगंधेत् (तूतिया),आमला, हरीतकी, विभीतकी, स्नुही, (सेहुण्ट), लौह गंधेत् (कसीस) हिंगु, जलब्राह्मी, निलोफर, कुस,कास, गजपिप्पली सैंधव, अर्जुन, गंधनाकुली (रास्ना), कदलीक्षार मूत्रशोधक द्रव्य मात्र (गोखुरू, तृण पंचमूल, कुष्माण्ड, पाषाण भेद, आदि) नागर मोथा, सुगन्ध वाला, अंगूर पञ्चागक्षार' कण्टक तण्डुलीय क्षार, यवक्षार, कुलथी, तुलसी, ककड़ी के बीज, खरबूजा के बीज, और तगर।

यूनानी—बिच्छू की राख हज्रुल् यहूद, संग सरमाही, बरञ्जासिफ़, असारून, समग़आलू, हंसराज, बादाम कड़ुआ, राजिय नज' (सौंफ) चना (स्याह) सकवीनज कुण्डल और पेन्टुल की जड़।

डॉक्टरी—एसिड फास्फोरिक, डायल्यूट, एसिड नाइट्रिक डायल्यूट पाइपरेज़ीन, पोटेशियाई, एसीटास, पोटेसियाई बाई कार्बोनास, पाडाफीलीन, पिल्युला हाइड्रर्जिराई (पारद वटी) डायोरेटिक्स (मूत्रल औषध), सिष्टेमीन, सोडियाई, बाई कार्बोनास, सोडिनाई बेञ्जोआस, सोडियाई, साइट्रो-टार्ट्रोसएफर्वेसैंस, सोडियम पोटेशियम, टार्ट्रेट (सोडाटार्ट्रेटा) सेपा ड्योरस सेलाइन, पर्गेटिह्व्ज़, लाइक्वार, मैग्नीसियाई कार्बोनेटस, लीथियम्साल्ट्स मिनरल, बाटर्स(खनिज जल, यथा सेल्टर्ज़ फ्रेडरिक शाल, बाल्ज, बिकी विलडञ्जन, तथा हन्याडीजूञ्ज मैग्नीसियाई कार्बोनास, मैग्नेशिया, योरोट्रोपीन, युरोल, युरिया, युरिसीन, जल, बोरेक्स (टंकण), पोटाश,

फास्फेट ऑफ सोडा और लाइम वाटर (चूर्णोदक)

अश्मरूप-वंग-हिं० पु० (Tin-stone) वंग भेद।

अश्मर्य्याहरणयन्त्रम्-सं० क्ली० अश्मरी निकालनेका यन्त्र अश्मरी निकालनेका ऐसा यन्त्र जिसका अग्र भागसर्प फणाकार हो। कश्चिदन्त्रि०।

अश्मलाक्षं-क्षा-सं० क्ली० स्त्री० शिलाजतु, शिलाजीत (Bitumen) रा० नि० व० १३।

अश्म शिराकुल्या-सं० (हिं० संज्ञा०) स्त्री शिरा-कुल्या विशेष।

अश्म सम्भवम्-सं० क्ली० शिलाजतु, शिलाजीत (Bitumen) र० सा० स०।

अश्मसारः-सं० पु० क्ली० / अश्मसार-हिं० संज्ञा पु० } (१) लौह, लोहा। (Iron) अम०। (२) लौहादि धातु (Metals) (३) सार लौह। इस्पात-बं०।

अश्मसारा-सं० स्त्री० काण्ड कदली, पहाड़ी केला पहाड़े कला बं० Wild plantain (Musa sapientum) बै० निघ०।

अश्मसुता-सं० स्त्री० पाठा। आकनादि वं०। पहाड़ मूल मह० (Cissampelos hernandifolia) वै० निघ०।

अश्म स्वेदः-सं० पु० प्रस्तर स्वेद विशेष सु०।

अश्महा,-हन्-सं० पु० पाषाण भेदक। पत्थर चूर हिं०। पाथरकुची बं०। (Coleus aromaticus)

अश्महृत्-सं० पु० क्ली० (१) कवाटवक्र वृक्ष कवाटिया See Kavatavakra) रत्ना० (२) शिलाजतु; शिलाजीत (Bitumeen)

अश्मीरः-सं० पु० मूत्रकृच्छ्र उषा०। (See-mutra-krichchhra)

अश्मूसा-नौचा भेद। इसमें अन्य भेदों की अपेक्षा कम गंध होती है।

अश्मोत्थम्-सं० क्ली० शिलाजतु, शिलाजित। (Bitumen) रा० नि० व० १३।

अश्मंत-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) जूलहा (२) खेत (३) मरण (४) अमंगल देखो—अश्मंत

अश्मंतकहिं० संज्ञा पु० [सं० अश्मन्तकम्] (१) मूंज की तरह का एक घास जिससे प्राचीन काल में ब्राह्मण लोग मेखला अर्थात् करधनी बनाते थे (२) आच्छादन। छाजन। ढकना। (३) दीपाधार। दीवट।

अश्य.फ़-अ० (व० व०)

नोट—शियाफ़ का बहुवचन अश्याफ़ और शियांफ़ बहुवचन है शाफ़ह् का। पिचुक्रिया, वर्तिका-हिं०। फ़तीले, वर्त्तियां-फ़ा०, उ०। (Suppositories)

अश्यामा-सं० स्त्री० श्वेत त्रिवृता, सफेद निशोथ। Iponœaturpethum (The white var of)

अश्रम्-सं० स्त्री० / अश्र-हि० संज्ञा पु० } (१) रुधिर, रक्त, शोणित। (Blood) अ० टी०। (२) नेत्रोदक, नेत्राम्बु, आँसू। (A tear)

अश्रअ-अ० (१) एक खाया (अण्ड) पुरुष अर्थात् वह मनुष्य जिसके एक खायह् (अण्ड) हो या (२) जिसका एक खाया (अण्ड) छोटा और दूसरा बड़ा हो। एक अँडिया आदमी एकाण्ड पुरुष।

अश्रज-अ० वह मनुष्य जिसका एक अण्ड बड़ा हो तथा दूसरा छोटा या वह मनुष्य जिसके केवल एक ही अण्ड हो।

अश्रद्धा-सं० स्त्री० अरोचक, अरुचि, श्रद्धा का अभाव (Disgustor Aversion)

अश्रम-अ० वह व्यक्ति जिसका नासाग्र कटा हुआ हो। वह जिसके दोनों ओष्ठों में चीरा हो।

अश्रस-अ० अधिक पलक झपकाने वाला मनुष्य। वह मनुष्य जो पलक अधिक झपकाए।

अश्रि-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] घर का कोना। शस्त्र की नोक।

अश्रिवह्-अ० (व० व०) शराब, शर्बत (ए० व०) पेया, पीने की वस्तु (Drinks' Syrups) देखो—पेया, मद्य।

अश्रिबह् इअतियादिय्यह्–अ० दैनिक व्यवहार या स्वभावतः पीने की वस्तु—जैसे पानी पीना। हैबिचुअल ड्रिङ्क्स (Habitual drinks) इं०।

अश्रिबह् मुम्बिह्हह्–अ० शक्तिदायक तथा उत्तेजक शर्बत। स्टिम्युलेण्ट ड्रिंक्स (Stimulant drinks)–इं०।

अश्रिबह् मुलत्तिफ़ह् मुग्रिज़य्यह्–अ० पोषण और लताफ़त (प्रमोद वा हर्ष) प्रदान करनेवाले शर्बत या द्रव, प्रफुल्लकारक, प्रमोद या आह्लादजनक पेया। रेफरीजरेण्ट ड्रिंक्स (Refregerant drinks) इं०।

अश्रु–सं० क्ली०
अश्रु–हिं० संज्ञा पु० } मन के किसी प्रकार के आवेग के कारण आँखों में आने वाला जल। नेत्र जल। नयन जल। नयनाम्बु। आँसू। (A tear) चक्षेर जल–बं०। अश्क-फ़ा०। अम०।

संस्कृत पर्याय–नेत्राम्बु, रोदनं, अश्रुं, अखं, अस्रु, वाष्पं (अ०), लोच (ज०)।

यह अश्रुग्रंथि में बननेवाला एक स्वच्छ जलीय रस है। इसका स्वाद लवण होता है। इसका काम पलकों और अक्षिगोलक के सम्मुख पृष्ठों को तर रखना है। अश्रु अधिक बनने की दशामें ये आँखो से टपकने लगते हैं। नासिकाका आँख से सम्बन्ध है इसलिए रोते समय अश्रु कभी कभी नासिका में चले जाते हैं और नासारन्ध्र में से टपकने लगते हैं।

अश्रु अङ्कुर–हिं० पु० अश्रुवांकुर (Papillal acrimalis)। नासिका की ओर वाले अपांग में दोनों पलकों के सम्मुख किनारों पर दो छोटे उभार होते हैं। इनमें से प्रत्येक को अश्रु अंकुर कहते हैं।

अश्रुकोष–हिं० पु० (Lacrimalsac) आँसूकी थैली। कीस दम् ई अ०।

अश्रुगोलम्–सं० क्ली०
अश्रुग्रंथि–हिं० स्त्री० } (Lacrimal gland) यह ग्रन्थि बादाम के बराबर होती है और अश्रुग्रंथि-खात में रहती है। गुदहे दम्इय्यह्–अ०।

अश्रुग्रंथि खात–हिं० पु० (Lacrimal gland cavity) नेत्र गुहा की छत (नेत्रच्छदि फलक) में कनपुटी की ओर एक गड़ा होता है।

अश्रुछिद्र–हिं० पु० (Punctum lacrimale) अश्रु अंकुर की शिखर पर एक छिद्र होता है जिसका नाम अश्रुछिद्र है, इस छिद्र में से ही होकर अश्रु आँखो से नासिका में जाया करते है,

अश्रुनलिका–हिं० स्त्री० (Lacrimal duct) अश्रुप्रणाली।

अश्रुनाली–सं० स्त्री० भगन्दर रोग। वै० निघ०। See--Bhagandara

अश्रुपातः–सं० पु०
अश्रुपात–हिं० संज्ञा पु० }
(१) घोड़े का एक अशुभ लक्षण विशेष। यह चिह्न (भँवरी, आवर्त्त) घोड़े की आँख के नीचे के स्थान में होता है। यह अत्यन्त भयावह तथा स्वामी के कुल का घातक है। जयद० ३ अ०। (२) आँसू गिराना। रुदन। रोना।

अश्रुप्रणाली–सं० पु० हि० स्त्री० (Naso lacrimal Duct) आँसुओं की नाली। कनात दम्इय्यह्–अ०।

अश्रुवाहिनी–सं० स्त्री० (Lacrimalcannal) अश्रुनलिका।

अश्रुश्रोत–हिं० पु० (Lacrimal Duct) अश्रुप्रणाली।

अश्रूश–अ० दरियाई खरगोश। (A sea rabbit)

अश्रुवस्थि–सं० हिं० स्त्री० यह नाली जैसी एक अस्थि है, आँख से अश्रु इसी अस्थि में रहने वाली एक थैली में होकर नासिका के भीतर पहुँचते हैं। अश्रुओं से सम्बन्ध रखने के कारण इस अस्थि का नाम अश्रुवस्थि पड़ा है। यह अस्थि कागज़ जैसी पतली और बहुत कोमल होती है। लैक्रिमल बोन (Lacrimal bone) इं०। अज़्मदम् ई-अ०। उस्तखाँने अश्की फ़ा०।

अश्लीनह्–हिं० मोरशिखा, मोरपंखी। (Actinopteris Dichotoma, *Bedd*)

अश्लाबूस–रू० कायफल, वट्फल । (Myrica sapida)

अश्लियह् क्यात्तुम–
अश्लियह् पातम– } फ्रि० चूका० चाङ्गेरी ! (Rumex vesicarius)

अश्लिष्ट–हिं० वि० [सं०] श्लेषशून्य । असंबद्ध । असङ्गत ।

अश्लेष–हिं० पु० श्लेष रहित, अप्रणय, असंख्य अप्रीति अश्लेषभिन्न, अपरिहास ।

अश्वः–सं० पु०
अश्व–हिं० संज्ञा पु० } घोटक, घोड़ा, हय, तुरंग, वाजि-हिं० । घोड़ा –ब०, हिं० । अस्प-फ्रा० A horse(Equus caballus,*Lin*)

गुण—घोड़े का मांस उष्ण, वातनाशक, बल कारक हलका तथा अधिक सेवन करनेसे पित्त तथा दाह जनक होता है । रा० नि० व० १७ । लवण रस युक्त, अग्निवर्द्धक, कफ तथा पित्त कारक, वातनाशक, वृंहण, बल्य, चक्षु के लिए हितकारक, हलका और मधुर है । भा० पू० । घोड़े की सवारी वातको प्रकुपित करता, अंगों को स्थिरता प्रदान करता, बल तथा अग्निवर्द्धक है ।

राज० । देखो–वाजि ।

अश्वकः–सं० पु० (A sparrow) कुलिङ्ग पक्षी चिड़ा । बै० निघ० । See--kulingah

अश्वकञ्चुकी रसः–सं० पु० घोड़ाचोली रस । योग तथा निर्माण–विधि—शुद्ध पारद, विष, गन्धक हरताल, सोहागा, सोंठ, मिर्च, पीपल, शुद्ध जमालगोटा के बीज, हड़; बहेड़ा, आंमला, प्रत्येक तुल्य भाग लें । इनको चूर्ण कर भांगरे के रसमें खरल कर उड़द प्रमाण गोलियां बनाएँ यह प्रत्येक रोगोंको दूर करता है जिस जिस रोग में जो जो अनुपान कहा है, उसीके साथ इसको देना चाहिये । यो० त० ज्वर० चि० ।

(२) हरिताल (रसमाणिक्य), पारा, गन्धक, यव, त्रिकुटा, बहेड़े की छाल, सोहागा, संखिया, गोखरू, वच्छनाग, जमालगोटा, हींग, कुष्ठ कड़वी, नकछिकनी, गजपीपल, हड़ को छाल प्रत्येक समान भाग को पृथक् पृथक् चूर्ण कर कपड़ छन करके भांगरे के रस में ४ दिन खरल करके मूंग प्रमाण गोलियां बनाएं । यह पृथक् पृथक् अनुपान से रोग मात्र को तथा अञ्जन से फूले को और लेप से श्वित्र को नष्ट करती है । रस० यो० सा० ।

अश्वकन्दकः–सं० पु० अश्वगन्धा, असगंध (Withania somnifera) रत्ना० ।

अश्वकन्दिका–सं० स्त्री० (१) ऐक वनस्पति विशेष (२) अश्वगन्धा असगंध । (Withania somnifera) र० मा० ।

अश्वकर्णः,-कः,-र्णिका–सं० पु० स्त्री० (१) शाल वृक्ष । (Shorea robusta) शाल गाछ -बं० । सु० सू० ३८ अ० । च० सू० ४ अ० । (२) सर्ज रस भेद, एक प्रकार का शाल वृक्ष । सर्जशाल विशेष । रा० नि० व० २३ शार्ङ्ग ।

संस्कृत पर्याय—जरणद्रुमः, तार्क्ष्य, प्रसवः, शस्यसम्वरणः, धन्यः, दीर्घपर्णः, कुशिकः, कौशिकः । भा० म० ४ भा० रेवती-चि० । 'धवाश्वकर्णककुभः ।'

गुण—कटु, तिक्त, स्निग्ध; रक्त पित्तघ्न, उरोरोग, विस्फोट और कण्डू (खाज) नाशक है । रा० नि० व० ६ । कफेला, व्रण, पसीना, कफ तथा कृमि नाशक और विद्रधि, बधिरता, योनि व कर्ण रोग नाशक है । भा० पू० १ भा० वटादि व० । मात्रा—२ मा० ।

(३) पलाश भेद । सु० सू० ३६ अ० शरीर (४) लताशाल । शियाड़िलता–ब० । प० मु० ।

अश्वकर्णम्–सं० क्ली० काण्डभग्न (बीच से अस्थिभंग) नामक अस्थिभंग विशेष । जो टूटी अस्थि घोड़े के कान की भांति ऊंची हो जाय उसे "अश्वकर्ण" कहते हैं । सु० नि० १५ अ० । देखो–भग्नम् ।

अश्वकांत(थ)रा,-रिका–
अश्वकाथरिवा– } सं० स्त्री० हयकातरा

घोड़ा काथरा–हिं०, बं० । घोड़े काथर–मह० ।

गुण—तिक्त, वातनाशिनी तथा दीपनी है। (काथराह्य पर्यायः काथरा वै प्रकीर्तिता) रा० नि०।

अश्वकात्रि-महo वाशिंग, वान्दर वाशिंग। कडिक पान, कडिक-पान-बम्बo। पोली पोडियम् क्रसिफोलियम् (Polypodium quercifolium, *Sp*)--ले०। फा० इं० ३ भा०। देखो—वाशिंग।

अश्वखुरः-संo पु० (१) नखी नामक गन्ध द्रव्य। (See--nakhi) रत्ना०। (२) घोटकखुर, घोड़े का खुर, सुम। (A hoof) रा० नि०।

अश्वखुरा, -री संo स्त्रीo श्वेतापराजिता, विष्णुकान्ता रा० नि० व० ३। (Clitorea ternatea) देखो—अपराजिता।

अश्वगन्दविची—बo पुनीर के बीज, हिन्दी काकनज के बीज--हिं०, द०। Withania (Puneeria) Coagulans, *Dunal*(Seeds of--)। स० फा० इं०। देखो—अश्वगन्धा।

अश्वगन्धा(न्धिका)-संo (हिं०) स्त्रीo एक सीधी झाड़ी जो गर्म प्रदेशों में होती है और जिसमें मको की तरह छोटे छोटे गोल फल लगते हैं; वाराही, गेठी, असगंध, पुनीर--हिं०।

संस्कृत पर्याय—जिस संस्कृत शब्द के अन्त में "गधा" और आदि में वाजि वाचक शब्द आए (अर्थात् समस्त अश्ववाचक शब्द), उन सबको असगंध का पर्याय समझना चाहिए, जैसे तुरंगगन्धा वा हयाह्वा प्रभृति। अश्वकन्दिका, काम्बूका, अश्वावरोहकः (र), अश्वारोहा (हे), हयगन्धा, वाजिगन्धा, अश्वगन्धिका, बल्या, तुर(ग, ङ्ग)गन्धा, कम्बुका, अश्वारोहिका, तुरंगी, वलजा, वाजिनी, अवरोहिका, वराहकर्णी, हया, पुष्ठिदा, बलदा, पुष्टिः, पीवरा, पलाशपर्णी, वातघ्नी, श्यामला, कामरूपिणी, कान्ता, प्रियकरी; गन्धपत्री, हरप्रिया, वाराहपत्री, वाराहकर्णी, तुरंगगन्धा, तुरंगा, वाजिना, वनजा, हयप्रिया, कम्बुकाष्ठा, अवरोहा, कुष्ठघातिनी, रसायनी और तिक्ता।

गुण प्रकाशिका संज्ञाएँ—"पुष्टिदा", 'बल्या', 'वातघ्नी', 'वाजीकरी'। हिन्दी काकनज—द०। अश्वगन्धा—ब०। काकनजे हिन्दी—अ० फ्रा०। वहमन वरी-फ्रा०। विथेनिया सोम्निफेरा (Withania somnifera; *Dunal*) फाइसेलिस फ्लक्सुओसा (Physalis fluxuosa), फाइसेलिस सोम्निफेरा (Physalis somnifera, *Dunal*)--ले०। विण्टर चेरी (Winter cherry)--इं०। मूरेङ्कप्पेन (Moorenkappen)--डच०। अङ्कूकाङ्ग-कालंग, अश्वगन्धी-ता०। पेन्नेरु-गड्डु, अश्वगन्धी, पिल्ली आंगा-ते०। पेवेट्टे, अमुकिरम् मल०। अंगबेरु, सोगडे-बेरु, हिरे-बेरू, हिरे-मद्दिन (बेरु)-कना०। आसकन्द, असन्ध, आसंन्ध, आसांदु, अंगुर, आसन्धिका, अश्वगन्धा, तुखा, कञ्चुकी, डोरंगुल-महo आरवसन्ध, आसोंध(घ) आसन-गु०। फतरफोदा-गो०। डोरगुल-दे०। असगन्ध-बम्ब०। वयमन,सिंध। अमुक्का--सिंहली।

बृहती वर्ग

(*N. O. Solanaceæ*)

उत्पत्ति-स्थान—भारत के शुष्क एवं अर्धोष्ण भाग यथा बम्बई, पश्चिम भारतवर्ष वा पश्चिमी घाट और कभी कभी बंग प्रदेश में मिल जाता है असगन्ध नागौर प्रदेश में बहुत होता है और वहाँ से सर्वत्र भेजा जाता है। इसी हेतु इसको नागौरी असगन्ध भी कहते हैं। नागौरी असगंध सर्वोत्तम होता है।

वानस्पतिक वर्णन—असगन्ध के क्षुप २-२॥ हाथ उच्च एवं शाखाबहुल होते हैं। पत्र युग्म (जोड़े जोड़े), अण्डाकार, अखण्ड, २ से ४ इञ्च दीर्घ, ह्रस्ववृन्त, लोमश तथा चौड़े होते हैं; पुष्प क्षुद्र, ह्रस्ववृन्त कक्षीय (पत्र वृन्तमूल से होकर प्रस्फुटित होते), शाखाग्र स्थित, दलबद्ध, दल (पुष्पाभ्यन्तर कोष) घण्टाकार पीताभ हरिद्वर्ण और अत्यन्त लघु होते हैं। फल छोटे, लाल, मसृण, मटराकार, एक झिल्लीवत् कुण्ड (Calyx) से आवरित और शिखर पर खुले हुये होते हैं। बीज असंख्य अतिक्षुद्र

लगभग १ इञ्च का $\frac{1}{16}$ वां भाग दीर्घ, पीताभ श्वेत, वृक्काकार, पार्श्वद्वय संकुचित, बीज बाह्यावरण (Testa) मधुमक्षिकागृहवत् होता है, समग्रचुप हस्व सशाख, सूक्ष्माग्र रोमों से आच्छादित होता है। मूल मूलकवत् शंक्वाकार, किन्तु ईषत् ऊपर से हलका धूसर परन्तु तोड़ने पर भीतर श्वेत होता हैं। कच्ची जड़ से अश्व मूत्रवत् (तीक्ष्ण अप्राह्य) गन्ध आती है, इसी कारण इसको अश्वगन्ध प्रभृति नामों से अभिहित करते हैं। शुष्कावस्था में गन्ध नहीं होती एवं यह अत्यन्त मृदु होती है। इसका स्वाद तिक्त होता है।

व्यापार में आनेवाली शुष्क जड़ ४ से ८ इञ्च लम्बी और शिखर से किञ्चित् अधःस्थ स्थूलतम भाग चौथाई से आध इंच चौड़ा (व्यास) होता है। यह मसृण, चिक्कण, शंक्वाकार, बाहर से हलका पीताभधूसर वर्ण का और भीतर से श्वेत एवं भंगुर होता है। टुकड़े लघु और श्वेतसार पूर्ण होते हैं। मूल विरला ही सशाख होता है। शिखर से संश्लिष्ट कतिपय कोमल काण्ड के अवशेष वर्तमान होते हैं। अंकुरीक्षण द्वारा परीक्षा करने पर जड़ में पाए जाने वाले पदार्थ प्रधानतः कोमल, अण्डाकार, कोषावृत श्वेतसार द्वारा निर्मित होते हैं। यह लुआबी एवं किञ्चित तिक्त स्वादयुक्त होता है। "मेटिरिया मेडिका ऑफ वेष्टर्न इंडिया" में यह क्षारीय मत प्रगट किया है कि व्यापारिक वस्तु उपयुक्त पौधे की जड़ नहीं हो सकती।

रासायनिक संगठन—इसमें सोम्निफेरीन (Somniferin) वा अश्वगंधीन नामक एक क्षारीयसत्व(क्षारोद)पाया जाताहै जो निद्राजनक है तथा राल, वसा और रञ्जक पदार्थ पाए जाते हैं

प्रयोगांश—मूल, बीज, तथा पत्र।

मात्रा—२ तोला।

औषध निर्माण—मूल चूर्ण मात्रा ४ आना से ८ आना पर्यन्त। क्षार, मात्रा २ आना से ४ आना तथा अश्वगंधाघृत और अश्वगंधाऽरिष्ट आदि।

अश्वगन्धा के गुण धर्म तथा उपयोग—

आयुर्वेदीय मतानुसार—अश्वगंधा तिक्त कषैली, उष्ण वीर्य तथा वात कफनाशक है और विष, व्रण व कफ को नष्ट करती एवं कांति, वीर्य व बल प्रदान करती है धन्वन्तरीय निघण्टु।

शुक्र वृद्धिकारक होने के कारण इसको शुक्लां कहते हैं तथा यह तिक्त कटु उष्णवीर्य एवं बलकारी है तथा कास, श्वास व्रण और बात को नष्ट करने वाली है। (रा० नि० व० ४)

असगंध बलकारक, रसायन, तिक्त, कषैला, गरम और अत्यन्त शुक्रल है एव इसके द्वारा वात श्लेम, श्वित्र (सफेद कोढ), सूजन, क्षय, आमवात, व्रण, खांसी और श्वास का नाश होता है (भा० पू० १ भा० । मद० व० १)

यह रसायन है और बात कफ, सूजन तथा श्वित्र (सफेद कोढ़) को नष्ट करता है। (भा० म० ख० १ भा०)

अश्वगंधा जरा (वृद्धता) व व्याधि नाशक और कषैली एव किञ्चित् कटुक (चरपरी) है तथा धातुवर्द्धक व बल्य है (बृहन्निघण्टु रत्नाकर)।

अश्वगंधा के पत्रका प्रलेष करने से ग्रंथि गलः गण्ड तथा अपची का नाश होता है। (शोढल निघण्टु)

तत्शोधनम् यथा प्रयोगाः—पञ्च पल्लव तोयेन गधनःक्षालनं तथा। शोधणञ्चापि संस्कारो विशेषश्चात्र वक्ष्यते॥

असगंध के वैद्यकीय व्यवहार—

चरक-श्वास—में अश्वगंधा मूल क्षार—श्वास रोगी को घृत तथा मधु के साथ अश्वगन्धा के अन्तर्धूमदग्ध क्षार का सेवन कराएँ यथा—

"क्षारञ्चाप्यश्वगन्धाया लेहयेत् क्षौद्र सर्पिषा।"

(चि० २१ अ०)

सुश्रुत—शोथ में अश्वगन्धा—कुट्टित अश्वगन्धा २ तो० को गव्य दुग्ध आध पाव तथा जल डेढ़ पाव के साथ दुग्ध मात्र अवशेष रहने तक क्वाथ प्रस्तुत करे और इसे वस्त्रपूत कर शोथ रोगी को पिलाए किम्बा क्षीर परिभाषानुसार प्रस्तुत असगन्ध के क्वाथ से मन्थन द्वारा निकाले

हुये नवनीत और इससे बने हुये घृत का पान करएँ । यथा—

'क्षीरं पिबेत्प्यद्वथ वाजिगन्धा विपक्वमेवं लभते च पुष्टिम् । तदुत्थितं क्षीरं घृतं सिताढ्यम् । प्रातः पिबेद्वाथ पयोऽनुपानम् ।" (उ० ४१ अ०)

मात्रा—आधा तो० से १ तो० तक ।

चक्रदत्त—वातव्याधि में अश्वगन्धा (१) असगंधका क्वाथ तथा कल्क और इससे चतुर्गुण घृत इन सबको गोदुग्ध के साथ यथा विधि पाककर सेवन करे यह घृत वातघ्न, वृष्य, एवं मासबद्धक है यथा—

अश्वगन्धा कषाये च कल्के क्षीरं चतुर्गुणम् ।
घृतं पक्वन्तु वातघ्नं वृष्यं मांस बिबर्द्धनम् ॥

(वातव्याधि० चि०)

(२) उदरोपद्रवभूत शोथ में अश्वगन्धा—उदर रोग में शोथ होने पर असगन्ध को गो मूत्र में पीसकर पान कराएँ यथा—

'गोमूत्र पिष्टामथवाश्वगन्धाम् ।"

(उदर० चि०)

(३) वन्ध्यात्व में अश्वगन्धा—क्षीर परिभाषानुसार प्रस्तुत असगन्ध के क्वाथ में किञ्चिद् गोमूत्र का प्रक्षेप देकर, ऋतुस्नान की हुई वन्ध्या बाला (नारि) इसका पान करे । यह गर्भप्रद है । यथा—

क्षीरेण हयगन्धायाः साधितं सघृतं पयः ।
ऋतुस्नातावला पीत्वा धत्ते गर्भं न संशयः ॥

(वन्ध्यास्त्रीचि०)

(४) बालक के काश्र्य रोग में अश्वगन्धा कृश शिशु के शरीर की पुष्टि हेतु दुग्ध, घृत, तिल तैल किम्वा ईषदुष्ण दुग्ध के साथ असगन्ध के चूर्ण का सेवन कराएँ । यथा—

पीताऽश्वगन्धा पयसार्द्धमात्रम् ।
घृतेन तैलेन सुखाम्बुना वा ॥
कृशस्य पुष्टिं वपुषो विधत्ते ।
बालस्य शार्यस्य यथाम्बुवृष्टिः ॥

(रसायनाधिकार)

मात्रा—अवस्थानुसार ।

भावप्रकाश—हृदयगत वायु रोग में अश्वगन्ध—वायु के हृदयगत होने पर असगन्ध को उष्ण जल के साथ पीसकर सेवन करएँ । यथा—पिबेदुष्णाम्भसा पिष्ट्वाऽश्वगन्धाम् ।

(म० ख० २ भा०)

वङ्गसेन—निद्रानाश रोग में अश्वगन्धा—अश्वगन्धा चूर्ण को गोघृत तथा चीनी के साथ चाटने से नष्ट निद्रा वाले को नींद आ जाता है । यह परीक्षा सिद्ध है । यथा—

चूर्णं हयगन्धायाः सितया सहितञ्च सर्पिषालीढम् ।
विदधाति नष्टनिद्रे निद्रामश्वेव सिद्धमिदम् ॥

(जलदोषादियोगाधिकार)

वक्तव्य

जिन द्रव्यों के आर्द्र रूप में प्रयुक्त करने की विधि है । "सदैवार्द्रा प्रयोक्तव्या" उनमें से असगन्ध भी एक है । असगन्ध बीज अर्थात् गीले रूप में ही व्यवहृत होता है । चरक की वातव्याधि की चिकित्सा के अन्तर्गत अश्वगन्धा के क्वाथ में तैल पाक कर व्यवहार करने का उपदेश है ("बलोऽयमश्वगन्धायाः"—चि० २८ अ०), पर सुश्रुत वातव्याधि चिकित्सा के अन्तर्गत अश्वगन्धा का नामोल्लेख भी नहीं । सुश्रुतोक्त वातव्याधि चिकित्सा के अन्तर्गत अश्वगन्धा का नामोल्लेख दृष्टिगोचर नहीं होता । चरक में अश्वगन्धा का वल्यवर्ग में पाठ आया है ।

यूनानी मतानुसार

प्रकृति—उष्ण व रूक्ष २ कक्षा में (किञ्चित् आर्द्रता के साथ) ।

हानिकर्त्ता—उष्ण प्रकृति को ।

दर्पघ्न—कतीरा आवश्यकतानुसार ।

प्रतिनिधि—समान भाग बहमन सफेद (वा मधुर कूट तथा सूरिञ्जान ।

मात्रा—४ से ६ मा० ।

प्रधान कर्म—कामशक्तिवर्द्धक तथा कटि शूल के लिये हितकारक है ।

गुण, धर्म, प्रयोग—काय श्वास तथा अवयवों के शोथ को लाभप्रद है । शरीर, काम, कटि और गर्भाशय को शक्तिप्रदान करता, श्लेष्मविकार

को शमन करता और आमवात (गठिया) के लिये कटु सूरिञ्जान की प्रतिनिधि है। (निविषैल) म० मु०।

नोट—यूनानी ग्रन्थों में असगन्ध के गुणधर्म प्रायः आयुर्वेदीय ग्रन्थों की नकल मात्र है।

नव्यमत

असगन्ध बल्य, रसायन एवं अवसादक है। असगन्ध की जड़ का चूर्ण दुग्ध किंवा घृत के साथ बालक को सेवन कराने से वह पुष्ट होता है, अश्वगन्धा का रसायन रूप से खण्डमोदकादि रूप में जराकृत दौर्बल्य तथा वात रोगों में व्यवहार करते हैं। वातज दौर्बल्य एवं प्रदर में एतद्देशीय रमणीगण अन्यान्य बहुपोषक द्रव्यों के साथ अश्वगन्धा का उपयोग करती हैं। अश्वगंधा के पत्र को एरण्ड तैल में सिक्त कर स्फोटकादि के ऊपर स्थापित करने से वह अंग सुप्त हो जाता है अर्थात् तत्स्थानीय त्वक् स्पर्श ज्ञान रहित हो जाता है। बधिरता में नारायण तैल (जिसका अश्वगन्धा एक उपादान है। का नस्य एवं पक्षाघात धनुस्तम्भ वात एवं कटिशूल में इसका अभ्यंग और आमरक्तातिसार (प्रवाहिका) विशेष एवं भगन्दर में इसका अनुवासनवस्ति (Enema) रूप से प्रयोग करते हैं, शिशु कार्श्य, जराजन्य दौर्बल्य, कुष्ठ वात व्याधि एवं वातरोगों में यह १५ से ६० बूंद की मात्रा में सेवनीय है। (मेटरिया मेडिका आफ इण्डिया, आर० एन० खोरा २ ख० पृ० ४५२)

"बम्बे फ्लोरा" नामक पुस्तक के रचयिता लिखते हैं कि इसके बीज पुनीर बीजवत् दुग्धके जमाने के काम आते हैं। मैंने भी प्रयोग कर इसकी परीक्षा की और वस्तुतः इसके बीज में किसी प्रकार उस्र शक्ति को विद्यमान पाया (फा० इं० २ भा० पृ० ५६७)

राजवर्ग लिखते हैं तैलिंग चिकित्सक इसको विषघ्न मानते हैं।

ऐन्सली लिखते हैं कि बाजार में मिलने वाली घड़ पाण्डु वर्ण की होती और उसका बाह्य स्वरूप जेसन की तरह होता है परन्तु इसमें किंचित अग्राह्य स्वाद एवं गन्ध होती है। यद्यपि तैमूल चिकित्सक अवरोधघटक और मूत्रल मानते हैं और इसका क्वाथ चाय की प्याली भर दिन में २ बार प्रयुक्त करते हैं पत्र को किञ्चित उष्ण एरंड तैल में सिक्त करावस्फोटक पर स्थापित करते हैं।

बीज मूत्रल और निद्राजनक प्रभाव करते हैं। (इर्विन)

फल मूत्रल है। पत्र अत्यन्त तिक्त होते हैं और ज्वर में इसका फाँट व्यवहार में आता है पञ्जाब में यह कटिशूल निवारणार्थ प्रयुक्त होता है और कामोद्दीपक माना जाता है। सिंध में गर्भपात हेतु इसका व्यवहार होता है राजपूत लोग इसकी जड़ को आमवात तथा अजीर्ण में लाभदायक मानते हैं। (इ० मे० प्लां०)

देशी असगंध (अकसन बूटा)

अश्वगन्धा स०, ब०, मह०, कों०। देशी असगन्ध, आकसन, अकरी, पुनीर हिं०। काकनजे हिन्दी-अ०, फा०। विथेनिया (पुनीरिया) कोंग्यूलेन्स Withania (Puneeria) Coagulans' *Dunal* ले० वेजिटिबल रेनेट Vlgetable rennet इं०। नाट की असगन्ध हिंदी काकनज-द०। अमुक्कुड़ा बिरै ता०। पेन्नेरुगड्डु वित्तु लु-ते०। अमुकीरे-शड्डे कना०। अमुकिरम् मल०। काकनज-बम्ब०। पनीर बन्द पनीर—जा फोटा सिं०। अमुक्कुर मह० खाम जड़िया, स्पिनवज्ज शापिअङ्ग, खूम ए जड़े, माखजूर, पनीर, कुटिलना पं०। स्पिनवज्ज अफ़०।

देशी असगंध के बीज

पुनीर के बीज-हिं० हिंदी काकनज के बीज, नाट की असगन्ध के बीज द०। हब्बुल् काकनजे हिन्दी अ०। तुख्मे काकनजे हिंदी फा०। विथेनिया (पुनीरिया) कोंग्यूलेंस Withania (Puneeria) Coagulans. *dunal* (Seeds of) ले०। अम्मुकुड़ा बिरै ता०। पेन्नेरुगड्डु वित्तुल ते०। अश्वगंद बिची ब०।

वृहती वर्ग

(*N. O, Salanaceae*)

उत्पत्ति स्थान—भारतीय उद्यान, वन, पर्वत तथा खेतों की बाड़ों में यह बूटी सामान्य रूप

से होती है। पंजाब, सिन्ध, सतलज की घाटी, अफगानिस्तान और बिलूचिस्तान।

वानस्पतिक वर्णन—एक लघु, दृढ़, धूसर, लगभग १ गज उच्च क्षुप है। पत्र श्लेष्मातक पत्रवत् किन्तु उससे किञ्चित लम्बोतरी शकल के, शाखा बहुल प्रत्येक शाखा पर अधिकता के साथ फल लगे होते हैं। समग्र फल लगभग $\frac{३}{८}$ इं० व्यास में, आधार पर चिपटा एक चर्मवत् कुगड द्वारा आवृत, जिसके शिखर पर एक पञ्च विभाग युक्त सूक्ष्म छिद्र होता है जिससे फल का एक सूक्ष्म अंश दृष्टिगोचर होता है। परिपक्व होने पर यह रक्त वर्ण का किंतु सुष्कावस्था में पीताभ एवं छिलकावत् हो जाता है। उसके भीतर चिपटे वृक्काकार बीजों का एक समूह होता है जो चिपचिपे धूसर मज्जा से सलिस्ट होता और जिसकी गंध हृल्लासजनक फलीय होती है। बीज अधिकाधिक १/८ इञ्च लम्बे होते हैं पत्र का स्वाद एवं गंध तिक्त होती है।

रासायनिक संगठन—बिथेनीन (Withanin) नामक एक प्रभावात्मक सत्व। यह एक प्रकार का अभिषव (Ferment) है जो उक्त पौधे के बीज द्वारा प्राप्त होता है और प्राणिज रेनेट (Animal rennet) से बहुत कुछ समानता रखता है एवं उसकी एक उत्तम प्रतिनिधि है।

क्वथित करने से यह नष्ट हो जाता है और मद्य सार से अधःक्षेपित होता है एवं इसका उसके जमाने वाले गुण पर कोई प्रभाव नहीं होता बीज से ग्लीसरीन वा साधारण लवण (सैंधव) के तीव्र घोल द्वारा इसका सत्व प्राप्त किया जाता है इन दोनों विधियों द्वारा प्रस्तुत सत्व अल्प मात्रा में भी तीव्र जमाने का प्रभाव रखता है।

प्रयोगांश—फल, मूल एवं पत्र।

औषध-निर्माण—घृत व तेल आदि।

प्रभाव—वामक, रसायन, मूत्रल और यह दुग्ध को जमा देता है।

प्रयोग—सिंध तथा उत्तर पश्चिम भारत एवं अफगानिस्तान में यह रेनेट के स्थान में दुग्ध जमाने के काम आता है देशी लोग इसके फल को थोड़े दुग्ध के साथ रगड़ कर इसको दुग्ध में उसे जमाने के लिये मिला देते हैं डाक्टर स्टाक्स (१८४९) के वर्णन से पूर्व ऐसा प्रतीत होता है कि इस ओर लोगों का कम ध्यान था।

(नवीन) फल वामक रूप से भी प्रयुक्त होता है और अल्प मात्रा (शुष्क) रूप में पुरातन यकृद्रोगजन्य अजीर्ण (तथा आनाह शूल) की औषधि है यह मूत्रल एवं रसायन है। बम्बई में इसको प्रायः काकनज (Physalis alkekengi, *Willb*) के साथ मिलाकर भ्रम कारक बना दिया जाता है काकनज का आयात फारस से होता है और अस्बी में उसको काकनज वा हब्बुल् काकनज कहते हैं। इब्नसीना ने इसको काकमाची (मको) वत् रसायन लिखा है। और तृण्रोगों के लिये विशेष रूप से लाभदायक लिखा है उक्त दोनों पौधे रक्त शोधक रूप से प्रख्यात हैं। अधुना क्यु (Kew) में किए गए हूकर (Sir. J. D. Hooker) के परीक्षणानुसार यह निश्चय किया गया है कि १ आउंस पुनीर के फल (Withania coagulans) का १ क्वार्ट (४० आउंस) खौलते हुये जल में क्वाथ कर, इसमें से एक (Tablespoonful) उक्त क्वाथ १ गैलन उष्ण दुग्ध को लगभग आध घन्टे में जमा देगा (फा० इ० २ भा० शुष्क फल में भी यह गुण है।

पक्व फल में अंगमर्दप्रशमन एवं अवसादक गुण होने का अनुमान किया जाता है (इं० मे० प्लां०)।

अश्वगंधा घृतम्—सं० क्ली० असगंध के कषाय वा कल्क में चौगुना दुग्ध मिला उसमें घृत मिला कर पकाएं। जब घृत सिद्ध हो जाय तब उतार एवं छान कर रखें।

गुण—इसके सेवन से वात रोग का नाश होता है और पुष्ट करते हुये मांस की वृद्धि करता है। वंग० से० स० वातरोग-चि०।

अश्वगन्धा तैलम्-सं० क्ली० वात व्याधि में प्रयुक्त तेल विशेष। च० द० । प्रयोग :।

अश्वगन्धादि नस्यम्-सं० क्ली० असगंध सेंधव नमक, मधुसार, मारच, पीपल, सोंठ और लहसुन इनको बकरे के मूत्र में पीस नस्य देने से नेत्र स्वच्छ होते हैं।

अश्वगन्धाद्य घृतम्-सं० क्ली० (१) अश्वगन्धा के कल्क ४ भा० दुग्ध १० भा०में पकाकर बालक को पिलाने से यह उनके बल की वृद्धि करता है। वं० म० कालरोग-चि०।

(२) असगन्ध मूल १ प्रस्थ, दुग्ध २ आढक (५१२ तो०) घृत १ प्रस्थ इनको कोमल अग्नि से पकाएँ। पुनः सोंठ मिर्च पीपल दालचीनी, इलायची, तेजपात नागकेसर, वायविडंग, जावित्री, खिरेटी, गंभारी, गोखरू, विधारा, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, वंगभस्म प्रत्येक ४-४ तो० मिश्री ३२ तो०. शुद्ध शहद ३२ तोला. काष्ट औषधों का चूर्ण कर उक्त सिद्ध घृत में मिश्रित कर उत्तम पात्र में रक्खें।

गुण—इसकी उचित मात्रा में सेवन करने से अर्दित, वात हनुस्तंभ, मन्यास्तंभ, कटिग्रह, शोष मन्धिगत वात, अस्थिभङ्ग, गृध्रसी, अग्नि दोष, चर्म दोष पादशोष, गर्भपरिस्राव, असमय गर्भपात, आमवात, पाण्डु, शुक्रदोष; नपुंसकता आदि रोग नष्ट होते हैं। वं० से० सं० बाजीकरण अ०।

(३) शुभ दिन शुभ देवज अश्वगंधामूल ४०० तो० ग्रहण कर १०२४ तो० जल में पकाए। जब चौथाई शेष रहे, वस्त्रसे छानकर पुनः छाग मांस ८०० तो०, गोघृत ६४ तो०, गोदुग्ध २५६ तो०, काकोली, ऋद्धि, मेदा, महामेदा, क्षीर काकोली, जीवक, कौंच बीज, अडूसा, कचोरा, मुलहठी, मुनक्का, धमासा, पीपल, जीवन्ती, खिरेटी, पीपर, विदारीकन्द, शतावरी इनका कल्क बना उक्त घृत में मदाग्नि से पकाए. पुनः शहद मिश्री १६-१६ तो० मिश्रित कर उत्तम पात्र में रक्खें।

गुण—इसके सेवन से क्षत, क्षय, दुर्बलता, बालोंका श्वेत होना, हृद्रोग, अस्थिगत रोग विवर्णता, स्त्री पुरुष एवं बालकों के रोग, नपुंसकता खांसी, श्वास वातव्याधि, स्त्रियों का वन्ध्यापन आदि अनेक व्याधियाँ दूर होती हैं। बंग० से० सं० क्षय-चि०।

अश्वगन्धाद्यचूर्णम्-सं० क्ली० यह स्वरभंग का नाश करता है। योग इस प्रकार है, यथा—असगंध, अजमोद, पाठा, त्रिवृत, सोंफ, पलाशपापड़ा, सेंधानमक, समान भाग, इनका १/२ भाग वच, इन सबको चूर्ण कर मधु और घृत में भली प्रकार मिला कर रख।

मात्रा—१० माशा (दुग्ध के साथ) सेवन करें।

नोट—ब्रह्मबीज (पलाश पापड़ा या पलाश के बीज) को सब चूर्ण का आधा लेना चाहिए रस० र०।

अश्वगन्धाद्य तैलम्-सं० क्ली० असगन्धमूल १०० तो० का १०२४ तो० जल में पकाए, जब चौथाई शेष रहे तब वस्त्र छान कर चौगुने गोदुग्ध मिला कर पकाए। पुनः कमल की डण्डी कमलकन्द, कमलतन्तु कमलकेशर, (कमलपञ्जांग), चमेली पुष्प, नेत्रबाला, मुलेठी, अनन्तमूल, कमलकेशर, मेदा, पुनर्नवा, दाख, मजीठ, दोनों कटेली, ऐलवा लुक, त्रिफला, मोंथा, चन्दन, इलायची, पद्मकाष्ठ, प्रत्येक १-१ तो० लेकर कल्क प्रस्तुत करें। पुनः १२८ तो० तिल तैल मिलाकर विधिवत् पकाए।

गुण—इसके सेवन से अस्थि, वातरक्त, प्रमेह, कृशता, वीर्य विकार, योनि विकार, श्वास शोथ, नपुंसकता, व्रण तथा क्षत दूर होते हैं। इसको मालिश (अभ्यंग) पान और अनुवासन बस्ति में भी देते हैं। वं० से० वातव्याधि चि०।

अश्वगन्धा पाकः-सं० पु० ६ सेर गाय के दूध में ३२ तो० अश्वगंध के चूर्ण को पकाए जब पकते पकते बड़ों से चिपटने लगे तो उसमें चातुर्जात, जायफल, केशर, बंशलोचन, मोचरस,

जटामांसी, चन्दन, अगर, जायित्री पीपल, पीपला मूल, लवंग, शीतलचीनी, चिलगोजा, अखरोट की गिरी; भिलावां की गिरी, घिघाड़ा और गोखुरू प्रत्येक १-१ तो० को चूर्ण कर डालें। और रससिन्दूर अभ्रक भस्म, सीसा, वंग और लौह भस्म, प्रत्येक ६ माशा डालें। फिर सबको सुखा कर (घी में सेककर) चासनी में डालें।

गुण—यह उचित मात्रा से सभी प्रमेहों, जीर्णज्वर, शोष, वातिक गुल्म को नष्ट करता है तथा वीर्य की वृद्धि और शरीर को पुष्ट करके मदाग्नि को प्रदीप्त करता है। रस० यो० सा०।

अश्वगन्धाभ्रकः-सं० पु० ८ सेर अश्वगंध का क्वाथ बनाकर छानें। फिर उसमें १६ तो० घी, ३२ तो० अभ्रक और सबके बराबर हल्दी का चूर्ण मिलाएँ। और केवाँच के बीजों का चूर्ण, त्रिफला, त्रिजात, नागरमोथा, पृथक् पृथक् ४-४ तो० मिलाकर पकाएँ पाक तैयार होने पर ठण्डा कर उसमें ३२ तो० शहद मिलाए।

मात्रा—बलानुसार देने से राजयक्ष्मा, उरःक्षत, क्षय, वातरोग और कृशता को दूर करके स्त्रियों में अत्यन्त हर्ष को उत्पन्न करता है। रस० यो० सा०।

अश्वगन्धारिष्टः—सं० पु० अश्वगंध आधा तुला, मुनक्का ८० तो०, मलीद हड़, हल्दी, दारुहल्दी, मुलहठी, रास्ना, विदारीकन्द, अर्जुनकी छाल, नागरमोथा, निशोथ अन्नता (तूब) श्यामलता, प्रत्येक ८० ८० तो०, श्वेत चन्दन, रक्त चन्दन, वच, चित्रक प्रत्येक ६४-६४ तो० इनको चूर्ण कर ८ द्रोण जल में पकाए। जब १ द्रोण क्वाथ शेष रहे तब शीतल हो जाने पर धवपुष्प १८ तो०, उत्तम शहद १५ सेर, सोंठ मिर्च, पीपल १६-१६ तो०, दालचीनी, इलायची, तेजपत्र ३२ तो०, चूर्ण कर उक्त क्वाथ में मिश्रित कर उत्तम पात्र में रख एक मास पर्यन्त रखने से यह अरिष्ट सिद्ध होता है।

मात्रा—१ से २ तो०।

गुण—इसके विधिवत् सेवनकरने से मूर्च्छा अपस्मृति, शोष, उन्माद, दुर्बलता, अर्श, मंदाग्नि और समस्त वात व्याधियों का नाश होता है। भैष० २० मूर्च्छा चि०।

अश्वगन्धावलेहः-सं० पु० असगन्ध चूर्ण ४० तो०, सोंठ चूर्ण २० तो०, पीपल चूर्ण १० तो० और काली मिर्च ४ तो०, दालचीनी, छोटी इलायची, तेजपत्र शोर नागकेसर चूर्ण प्रत्येक ४ तो०, गाय का दूध २०० तो० शहद ५० तो०, गाय का घी ७५ तो०, राब १०० तो०, सबको पृथक् पृथक् लेकर मिट्टी की कड़ाही में डालकर मंद अग्नि से पकाए। जब पकते पकते आधा दूध शेष रहे तब ऊपर बनाए हुए चूर्णों को उसमें मिला दें। जब दूध और घी घोटते २ पृथक् न मालूम पड़े तब उतार लें। फिर जीरा पीपलामूल तेजपत्र, लवंग, तगर, जायफल, खस, सुगंधवाला, नलद (बारीक खस) वेलगिरी, कमल के फूल, धनियां, धोके फूल, बंशलोचन, आमला, खैरसार, घनसार (कपूर) पुनर्नवा, अजगंध, चित्रक और शतावरी प्रत्येक आधा तो० और शुद्ध पारा २ तो० तथा रससिंदूर २ तो० लेकर बारीक चूर्ण करके मिलाए। फिर ठण्डा होने पर शहद मिलाकर चिकने पात्र में रखें।

मात्रा—२ तो०।

गुण—खांसी, श्वास, हिचकी, अजीर्ण, वातरक्त, प्लीहा, वातरोग, आमवात, सूजन, नवीन ज्वर, पांडु कामला, संग्रहणी, गुल्मरोग, वात कफ के विकार तथा मंदाग्नि को दूर करता और बालकों, स्त्रियों तथा अल्पवीर्य वाले पुरुषों की काम वृद्धि करता है। रस० यो० सा०।

अश्वगन्धिका-सं० स्त्री० अश्वगंधा, असगंध। Withania Somnifera रा०।

अश्वगृहम्-सं० क्ली० वाजिशाला, अस्तबल, तबेला घुड़साल। (Astabli.)

अश्वघः-सं० पु० श्वेत करवीर वृक्ष, सफेद कनेर का पेड़। श्वेतकरवी गण-वं०। Nerium odorum (The white var of) रा० नि० व० १०।

अश्वचक्र वि० संज्ञा पु० [सं०] (१) घोड़े के चिह्नों से शुभाशुभ का विचार। (२) घोड़ों का समूह।

अश्वजातक-सं० पु० चणक : चना-हिं० । छोला-बं० । Gram or chick pea (Cicer arietinum) वै० निघ० ।

अश्वतरः-सं० पु०
अश्वतर-हिं० संज्ञा पु० } [स्त्री अश्वतरी] (१)

अश्वखर, खच्चर, घोड़ी और गधे से उत्पन्न जीव खच्चर घोड़ा-बं० । (A mule or donkey) सु० अ० ४६ ।

गुण—इसका मांस वलय, बृंहण और कफ पित्त कारक है । मद० व० १२ ।

(२) एक प्रकार का सर्प, नाग राज ।

अश्वतृणम् सं० क्ली० पाषाण मूली, घड़ियाल-हिं० उरबुल-खोल-अ० । (Collinsonia) देखो पृ० ७८३ ।

अश्वत्थः-सं० पु०
अश्वत्थ-हिं० संज्ञा पु० } (च० सु०, सु० सू० ३८ अ० न्यग्रोधादिव०) पीपल पि (पी) पर-हिं०, मह०, गुज०; पं० बम्ब० । फाइकस रेलिजिओज़ा (Ficus religiosa, *Linn*) ले० दी सैक्रेड ट्री (The sacred tree) दी पीपुल ट्री (The peepul tree -इं० फिगोर ओ आर्ब्रे डेस पैगोडेस Figuier ou arbre des pagodes (Ou de Dieu ou Conseils) फ्रां० । रेलिजिओज़र फीगेनबाँम (Religioser Feigenbaum)-जर० ।

संस्कृत पर्याय—केशवालयः, चैत्यद्रुः (त्रि०) बोधिवरः कृष्णावासः (हे) चैत्यवृक्षः (र) नागबन्धुः, देवात्मा, महाद्रुमः (श), कर्पीनतः (मे), बोधिद्रुमः चलदलः पिप्पलः, कुञ्जराशनः (अ), अच्युतावासः, चलपत्रः, पवित्रकः, शुभदः, बोधिवृक्षः, याज्ञिकः, रञ्जरुहकः, क्षीमवृक्षीद्रुमः, विप्रः, मरुत्पतः, रुग्मलः, रुद्रुरुहः सेव्यः, सत्यः, शुचिद्रुमः, दुर्वृहः, गजभक्ष्यः, गजाशनः, क्षीरद्रुमः, बोधिद्रुः, धर्मवृक्षः, श्रीवृक्षः । कषाय गाछ, अशोथगाछ, अश्वत्थ, अस्वत्थ बं० । मुर्तअश-अ० । दरख्त जरज़ाँ, पीपल फा० । सुद्दा-उ० । अ.स अरश म.मू. अस्वथंम् ता० । राई (वि) चेट्टु वृलुजुडेचेट्टु राई रैग, राचि कुल्लावि, रागी-तै० । रगी, वस्त्रां, अरली, आले नेदपथ, रागी, अस्वत्त, अरशेनर, अरशथमरकन्० । पिंपल, पांपलां-मह०, गों० । अरली का० । पिम्पल, पिप्पो, पिपुर, पिपुल-बम्ब० । पीपरा, भोर-पं० । पिपुल गु० । हिसार, पीपर कोल० । हिसारु-मन्ता० । जाऊ-उड़ि० । वोरबुर कछ० । पिप्पली-नेपा० । आ(अ)ची-गो० । पेप्पी बोंकुं० । पीपल को पेड़-मारवा०, अरशमरम् द्राविं० ।

नोट—इसका एक छोटा भेद है जिसको पीपली कहते हैं इसके पत्र छोटे होते हैं ।

अश्वत्थ वा वटवर्ग
(*N. O. Urticaceae*)

उत्पत्ति-स्थान—सम्पूर्ण भारतवर्ष और (बंग प्रदेश, मध्य प्रदेश) हिमालय पाद ।

वनस्पतिक-वर्णन—अश्वत्थ एक अत्युत्तम छाया वृक्ष है । पीपल के पक्व फल को पक्षीगण खा कर जब बीट करते हैं तब उसमें से बीज निकलते हैं, इनमें जो उपयोगी बीज किसी वृक्ष वा दीवार पर गिर कर मिट्टी का सहारा पाकर अंकुरित हो जाते हैं । अस्तु, प्राचीन गृहों की दीवारों तथा वृक्षों पर भी पीपल के वृक्ष दृष्टिगोचर होते हैं । चैत्र में अश्वत्थ वृक्ष पत्रशून्य होता है और प्रायः ग्रीष्म ऋतु में नवीन पत्रों से सुशोभित होता है । इसके वृक्ष अत्यन्त विशाल एवं बहुशाखी होते हैं । पत्र गोल अंडाकार सिरे की ओर लहरदार हृद्याकार, पत्रवृन्त दीर्घ एवं क्षीण पत्राग्रभाग क्रमशः सूक्ष्म होता हुआ दन्तित, पत्र का १/३ लम्बा होता है । फलकोश (कुरड) कक्षीय, युग्म, वृन्त रहित, सकुचित, मटरवत् (वा उससे बृहत्), ग्रीष्मऋतु में फल लगते और प्रावृट में परिपक्व होते हैं । पक्वावस्था में बैंगनी रंग के होते हैं । पीपल के काटने और तोड़ने से उसमें से एक प्रकार का लेहसदृश श्वेत रस निर्गत होता है जिसे पीपल दूध कहते हैं, इसी कारण इसका एक नाम "क्षीर-

द्रुम" है और इसकी गणना वृक्षों में होती है। उक्त दूध में रबड़ या धूप होता है। इसके वृक्ष में लाख लगता है जो औषध कार्य में आता है। इसकी शाखों और पेड़ में से वट वृक्ष की तरह हवा में जड़ें फूटती हैं जिनका पीपल की दाढ़ी कहते हैं, परन्तु ये वट के बरोह इतने प्रशस्त नहीं होते और न इनसे वृक्ष ही तैयार होते हैं। उक्त दाढ़ी औषध कार्य में आती है। इसके कतिपय प्रकारों से एक प्रकार की श्यामवर्ण की गोंद भी निकलती है।

नाम—उन साधारण का यह विश्वास है कि वट, पीपल, गूलर, पाकर तथा कठूमर प्रभृति वृक्षों में फूल आते ही नहीं, परन्तु उनका यह विचार सर्वथा मिथ्या है और इससे उनकी उद्भिद्विद्या विषयक अज्ञता सूचित होती है। पीपल के फल और फूल की शकल में कोई विशेष अन्तर न रहने के कारण ऐसा हो जाना सम्भव है। शास्त्रों में इसके अस्पृष्ट रहने के कारण ही इसको गुह्यपुष्प कहा गया है। सर्वसाधारण जिसको पीपल का बच्चा फल कहते हैं वहीं इसका पुष्प है। इसका निश्चित ज्ञान वनस्पतिशास्त्र के अध्ययन द्वारा हो सकता है।

ज्ञात रहे कि प्रायः वृक्ष रात्रि के समय एक प्रकार का मनुष्य-स्वास्थ्य के लिये हानिकारक वायव्य छोड़ा करते हैं, परन्तु अर्वाचीन विज्ञान के अन्वेषणानुसार उसके विपरीत अश्वत्थ में यह बात नहीं पाई जाती। यही कारण है कि हिन्दू लोग इसको चिरकाल से देवता तुल्य मानते आए हैं एवं उनके यहाँ इसकी बड़ी प्रतिष्ठा है। देखो—अञ्जन।

रासायनिक संगठन—त्वक् में कषायीन (Tannin), कू(को)चुक (Caoutchouc) अर्थात् भारतीय रबर और, मोम (Wax) आदि पाये जाते हैं।

प्रयोगांश—पत्र, पत्रमुकुल, त्वक्, फल, बीज पीपल की दाढ़ी, दुग्ध, काष्ठ, मूल और निर्यास तथा लाक्षा।

औषध-निर्माण—क्वाथ, मात्रा अर्ध पाव।

पञ्चवल्कल कषाय (च० द०), पञ्चवल्कलादि तैलम् प्रभृति।

प्रभाव—पत्रमुकुल—रेचक, त्वक्—स्तम्भी, फल—काष्ठदुकर वा मृदुरेचक, बीज—शीतल, मृदुरेचक, शैत्यकारक और रसायन।

अश्वत्थ के गुणधर्म तथा उपयोग

आयुर्वेदीय मतानुसार—पीपल का पका फल मधुर, कषैला, शीतल, कफपित्त नाशक एवं रक्तदोष व दाह का शमन करने वाला और तत्क्षण योनिदोष हारक है। अरुच अश्वत्थ वृक्ष के पक्व फल अत्यन्त हृद्य एवं शीतल हैं और पित्त रक्त के रोग, विष व्याधि, दाह, वमन, शोथ तथा अरुचि दोष (अरोचक का) नाश करने वाला है। अश्वत्थिका (पीपली) मधुर, कषैली है तथा रक्तपित्त हर, विष एवं दाह प्रशामक और गर्भवती के लिये हितकारी है। रा० नि० व० १। दुर्जर और शीतल है; मद० व० ५।

दुर्जर, शीतल, भारी, कषैला, रूक्ष, वर्ण प्रकाशक, योनि शोधनकर्त्ता, पित्त, कफ, व्रण और रुधिर के विकार को दूर करता है। भा० पू० १ भा० वटादि व०।

अश्वत्थ के वैद्यकीय व्यवहार

चरक—(१) वातरक्त में अश्वत्थ त्वक्—पीपल की छाल के क्वाथ में मधु का प्रक्षेप देकर सेवन करने से दारुण रक्तपित्त प्रशमित होता है यथा—

बोधिद्रुम कषायन्तु पिबेत्तं मधुना सह।
वातरक्तं जयत्याशु त्रिदोषमपि दारुणम्॥
(चि० २९ अ०)

(२) व्रणच्छादनार्थ अश्वत्थ पत्र अश्वत्थ के पत्र से व्रण प्रच्छादन करें। यथा—

"पिप्पलस्य च। व्रणप्रच्छादने विद्वान्।"
(चि० १३ अ०)

(३) व्रण में अश्वत्थ त्वक्—अश्वत्थ चूर्ण के क्षत पर अवचूर्णन करने से वह शीघ्र पूरित होता है अर्थात् भर जाता है। यथा—

"ककुभोदुम्बराश्वत्थ—। त्वचमाश्वेव गृह्णन्ति त्वक् चूर्णैश्चूर्णिता व्रणाः ॥"
(चि० १३ अ०)

सुश्रुत—(१) नीलमेह में अश्वत्थ त्वक् नीलमेही को अश्वत्थ की छाल द्वारा प्रस्तुत क्वाथ पान कराएँ। यथा—

"नीलमेहिनमश्वत्थ कषायं वा पाययेत्"
(चि० ११ अ०)

(२) बाजीकरणार्थ अश्वत्थ फलादि—अश्वत्थ फल, मूल त्वक् एवं शुंग (पत्र मुकुल) इनका क्वाथ प्रस्तुत कर मधु एवं शर्करा का प्रक्षेप देकर पिलाने से चटकवत् मैथुन शक्ति की वृद्धि होती है। यथा—

"अश्वत्थ फल मूलत्वक् च्छुङ्गासिद्धं पयोनरः। पीत्वा स शर्करा क्षौद्रं कुलिङ्ग इव हृष्यति ॥", (चि० २६ अ०)

चक्रदत्त—(१) वमन में अश्वत्थ त्वक् अश्वत्थ वृक्ष की सूखी हुई छाल को जलाकर उक्त अंगार को जलमें डाल रक्खें। इस जलके पीने से वमन की निवृत्ति होती है यथा—"अश्वत्थ वल्कल शुष्कं दग्ध्वा निर्व्वापित जले। तत्तोयपानमात्रेण छर्दिञ्जयति दुस्तरम्।" (छर्दि चि०)

(२) अग्निदग्धव्रण में अश्वत्थ वल्कल-अश्वत्थ वृक्ष की सूखी छाल के बारीक चूर्ण को अग्नि से जल जाने के कारण उत्पन्न हुये व्रण पर छिड़कने से क्षत अच्छा हो जाता है यथा—"अश्वत्थस्य विशुष्कवल्कल कृत चूर्ण तथा गुण्डनात्।" (व्रण शोथ चि०)

(३) कर्णशूल में अश्वत्थपत्र-अश्वत्थपत्र द्वारा प्रस्तुत चोंगा को तैलाक्तकर उसे तप्त अंगारों से पूर्ण कर कर्ण के ऊपर (कुछ दूरी पर) रक्खें अँगारों द्वारा तप्त होकर जो तेल चोंगे से चुए उससे कर्णपूरण करने से तत्काल कर्णशूल की शांति होती है। यथा—

"अश्वत्थ पत्र खल्लवा विधाय बहुपत्रकम्।
तैलाक्त मंगार पूर्ण विदध्याच्छ्रवणोपरि।
यत्तैलं च्यवते तस्मात् खल्लदंगारतापितात्।
तत्प्राप्तं श्रवणस्रोतः सद्यो गृह्णाति वेदनाम्।
(कर्ण रोग चि०)

(४) शिशु के मुख पाक में अश्वत्थ त्वक् एवं पत्र बालक के मुख पकने पर अश्वत्थ की छाल तथा पत्र का मधुके साथ भली प्रकार पीस कर उस पर प्रलेप करें। यथा—

"अश्वत्थत्वग्दल क्षौद्र मुखपाके प्रलेपनम्।"
(बाल रोग—चि०)

वक्तव्य

अश्वत्थत्वक् "पञ्चवल्कल" के अवयवों में से एक है। योनि रोग में पञ्चवल्कल का क्वाथ एवं विसर्प में उसके प्रलेप का बहुशः प्रयोग करने से ये लाभप्रद सिद्ध हुये। चरक में अश्वत्थ का "मूत्रसंग्रह वर्ग" में पाठ आया है इसके अतिरिक्त अश्वत्थ त्वक् का सोम रोग में प्रयोग किया जा सकता है। सन्निपात ज्वर में अश्वत्थ पत्र स्वरस को विशेष औषधों के अनुपान रूप से व्यवहार किया जाता है सुश्रुत के न्यग्रोधादिगण में अश्वत्थ का पाठ आया है (सू० ३८ अ०) चरक सिद्धि स्थान में अतिसार में प्रयुक्त यवागू पाकार्थ द्रव्यान्तर के साथ अश्वत्थ शुंग व्यवहृत हुआ है—"मसूराश्वत्थशुंगैश्च यवागूः स्याज्जले शृता।" अविकसित पत्रमुकुल को शुंग कहते हैं। ("शुंग इत्यविकसित पत्र मुकुलम्"—चक्रसंग्रह टीकायां शिवदासः)।

यूनानी मतानुसार—प्रकृति—पत्र तथा त्वक् २ कक्षा में शीतल व रूक्ष किसी किसी के मत से उष्ण हैं।

हानिकर्त्ता—आमाशय तथा अत्रि को।

दर्पघ्न—लवण तथा घी।

प्रतिनिधि—विलायक रूप से वट पत्र।

मात्रा—छाल, १ मिस्काल तक (४॥ मा०)

प्रधान कर्म—व्रण एवं शोथ लयकर्ता।

गुण, कर्म प्रयोग—देखो पञ्चाङ्ग वर्णनान्तर्गत।

अश्वत्थपत्र तथा पत्रमुकुल

पीपल के पत्र और कोपल विरेचन रूप से प्रयोग में आते हैं (एन्सूली व वाइड)। त्वगों

में भी इनका उपयोग है (इं० मे० मे०)।

पीपल के कोमल पल्लव को दुग्ध में क्वथित और स्वाद हेतु उसमें यथेष्ट शर्करा योजित करें यह अत्यन्त पोषक एवं शीतल प्रातः कालीन पेया है। विपादिका में इसका स्वरस हितकर है इसके पत्ते पर रेशम के कीट रखे जाते हैं इसके पत्र क्वाथ चमड़ा सिझाने के काम आता है इं० मे० मे०।

इसके पत्र को गरम करके फोड़े से बाँधने से यह शोथ लय करता और व्रण पूरक है। स्वयं शुष्क होकर गिरे हुये पत्र को जलाकर गरमागरम पानी में डालकर उस पानी को पीने से वमन तथा हल्लास में लाभ होता है। म मु०। बु० मु०

पतझड़ के समय साधारणतः फागुन चैत में जब पुराने पत्र झड़ जाते हैं और पत्र मुकुल का आविष्कार होता है तब उन पत्र कालिकाओं को क्वथित कर जल फेंक देते हैं जिससे कषायपन और दुराग्राह अम्लता दूर हो जाता है फिर घृत लवण छिड़क कर थोड़े समय धूप में उसका जलांश सुखा लेते हैं और सर्षप तेल में डालकर अचार बनाते हैं।

गुण—सुस्वादु होने के सिवा यह विसूचिका एवं महामारी को नष्ट करता, विकृत दोषों को साम्यावस्था पर लाता और क्षुधा की वृद्धि करता है। ज्वर जन्य अरुचि को दूर कर शीघ्र आहार का पाचन करता और मुखका स्वाद ठीक करता है

अश्वत्थ की पुरानी पत्तियों को पानी में पीस कर क्षत पर प्रलेप करने से प्राचीन से प्राचीन क्षत दिनों में पूरित हो जाते हैं। पत्तियों को जलाकर पानी में डाल दें और वह जल स्वच्छ हो जाए तब वह स्वच्छ जल विसूचिका रोगी को पिलाना लाभप्रद है।

कुष्ठी को इसकी पत्तियों से क्वथित कोष्ण जल से दैनिक अवगाहन करना लाभप्रद है और छाल को पानी में डालकर पानी पीना तृषा एवं हल्लास को शमन करता है।

पीपल के पत्तों का क्वाथ बकरी के दूध के साथ अधोष्ण देने से पूय मेही को मनुष्य ना देता है और वर्षों की व्यथा मिनटों में जाती है।

बकरी को माड़चुन (फाड़े हुये दूध के पानी) के साथ इसके पत्ते खिलाकर दूध दुहें तो वह अधिकतर लाभदायक हो जाता है। पत्र वायु नाशक हैं इसको पत्तियों को पानी में पीसकर ललाट पर प्रलेप करने से खूब नींद आती है। आमाशय शोथ में उक्त स्थल पर पत्तियों का प्रलेप वा क्वाथ का उपयोग अत्यन्त लाभप्रद है।

पत्र भस्म को मधु के साथ मिलाकर चटाने से आर्द्रकास नष्ट होता है पत्र का क्वाथ वृक्क एवं मूत्राशयशमनाशक है। प्रकृति तीसरी कक्षा में रूक्ष एवं दूसरी में शीतल है।

छाया में शुष्क किये हुये पत्र १ तो०, बहुफली बूटी छाया में शुष्क की हुई १ तो०, कतीरा ६ मा०, सालमिश्री ६ मा० बनफ्शे कूट छान कर पीपल के दूध में गूथकर जंगली बेर के बराबर बटिकाएं प्रस्तुत करें चना भिगोएँ हुये पानी के साथ १ से ३ गोली तक दैनिक २१ दिवस पर्यन्त सेवन करे।

गुण—यह कामोन्माद, शुक्रमेह एवं पूय-मेह में असीम गुणकारी है।

इसके पत्र का तिल तेल से सिक्त कर गरम कर शोथ पर बाँधे तो यह उसे लयकर्ता है और यदि फोड़ा पकने योग्य हो तो उसे पकाकर विदारण कर देता है। किसी किसी के मतसे इसको राख में पीत हरिताल एवं मल्ल की भस्म प्रस्तुत होती है परन्तु यह परीक्षा में नहीं आया है।

पीपल के नवीन पत्र को गरम गरम पंजा से पिण्डली तक बांधने से वन्ध्यत्व दूर होता है।

इसके पत्ता का गरम करके साधी और बांधने से बद बैठ जाता है।

इसके और नीम के पत्तों को पीसकर लेप करने से अर्श मिटता है वा केवल पीपल के पत्ते को घोटकर बवासीर के मस्सों पर रखने से लाभ होता है।

पीपल के पत्तों का पानी निकाल कर तिगुनी मि में शर्बत तैयार करें। प्रति दिवस २ तो०

शर्बत अर्क गुलाब में पीने से हृदय दिल में लाभ होता है।

पीपल के पत्तों को सुहागे में शुष्क करके समभाग अरबी (बबूल निर्यास) सत मुलहठी और मिश्री इनको कूट छान इसकी चने के बराबर गोलियां बनाए। इसको मुख में रखकर चूसने से खांसी, गले की सूजन प्रभृति को लाभ होता है।

पीपल के ताजे पत्ते २ तो०, कालीमरिच ११ अदद, दोनों को पाव भर पानी में रगड़ और छान कर प्रातः सायंकाल पिलाने से कुष्ठ रोग नष्ट होता है।

पीपल के पत्र एवं पत्र स्वरस का येनकेन प्रकारेण व्यवहार अतिशय लाभप्रद है।

पीपल के पत्र का रस १ छ०, तिल तैल आध छटाँक इसको तैलावशेष रहने तक पकाए। फिर छान कर रखें। इसके लगाने से कन्ठमाला दूर होता है।

पीपल के कोमल पत्तों को जल से धोकर इसे घी में भूनकर और आवश्यकतानुसार काली मरिच और नमक का चूर्ण मिला सुबह शाम सेवन करने से बन्ध्यत्व दूर होता है। लगभग एक मास पर्यंत सेवन काफी है। अपथ्य—६ मास पर्यंत पुरुष समागम और रजोधर्म काल में हलदी का सेवन।

पीपल के पीले पत्तों का सत्व-निर्माण-विधि द्वारा सत्व प्रस्तुत कर २-३ रत्ती की मात्रा में इसको जल वा गोदुग्ध के साथ सेवन करने से कंठमाला को लाभ होता है। नोट—खरल करते समय चिकना करने के लिये इसमें किञ्चित गोघृत मिला लेना चाहिये।

पीपल के पत्तों को खूब धोकर वर्तिका बना रजोकाल में इसके योनि में रखने से आर्तव प्रवर्तन होता है।

अश्वत्थ पत्र का अर्क दो तो० की मात्रा में पीना दिलदिल के लिए लाभदायक है।

छाया में शुष्क किये हुए पीपल के पत्ते ६ मासा, पहाड़ी पुदीना ६ मा०, मस्तगी रूमी ६ मासा, इन तीनों औषधियों को कूट छानकर चने के बराबर गोलियां बाँधकर रख छोड़े। आवश्यकता होने पर १ गोली गर्म पानी या सौंफ के अर्क के साथ सेवन करने से यह मूत्रल है और वृक्क शूल के लिये हितकर है तथा कब्जियत एवं बादी को बहुत कुछ लाभ प्रदान करता है।

पीपल के पत्तों को काली मरिच के साथ पीस कर मरिच प्रमाण बटिकाए प्रस्तुत कर सेवन करने से भी उपर्युक्त लाभ होता है।

पादशोथ में इसके पत्तों की लुपदी बाँधना हितकर है।

२॥ अदद पीपल के पत्तों को खूब घोटकर छोटी इलायची और बतासा डालकर पाव भर पानी में मिलाकर प्रातः सायं पान करने से मूत्रदाह दूर होता है।

पीपल के नव पल्लव को लेकर बारीक बारीक चीर लें। फिर इनको उबाल लें। उबालने से जो पानी निकले उसमें शक्कर डालकर चाशनी बनाए और चाशनी में उबाली हुई कोपलें डाल कर मुरब्बा तैयार करलें। गुण—यह अत्यंत बल्य एवं वृष्य है।

पीपल के पत्तों का रस सन्निपात की औषधों का एक अनुपान है।

पीपल के पत्तों के क्वथ में सिद्ध किया हुआ कडुआ तेल हर प्रकार के कर्ण शूल के लिए लाभप्रद है। उत्कट उत्तर के उतरने के पश्चात की रूक्षता जन्य बधिरता में यह तेल और भी लाभदायक है।

छाया में शुष्क किए पीपल के पत्तों को कूट छान कर गुड़ के साथ इसकी चने प्रमाण गोलियां बनाकर सेवन करने से निम्न रोगों में लाभ होता है, यथा—उदरीय कृमि, उदरशूल आमशूल, प्लीहा, शोथ, अजीर्ण, और कोष्ठबद्धता इत्यादि। इन रोगों के होने पर १-१ गोली प्रातः सायं अर्क सौंफ के साथ सेवन करें।

इसके हरे पत्तों के गरमागरम क्वाथ द्वारा

सेक करने और पत्तों को रोग स्थल पर बाँधने से सुजाक में लाभ होता है।

पीपल के पत्ते ५, नीबू के पत्ते ५ और निर्गुण्डी पत्र ७ इन तीनों में १॥ सेर पानी डालकर खूब क्वथित करें। थोड़ा जल शेष रहने पर इसको उतार कर मोटे कपड़े से छान लें और इससे (क्वाथ से) दूना तिल तैल मिला कर तैलावशेष रहने तक पकाएँ।

गुण व प्रयोग—यह तैल कर्णशूल, कर्णक्षत एवं बधिरता के लिये हितकर है। कान से पूय स्राव होता हो तो प्रथम उसको निम्ब क्वाथ से प्रक्षालित कर फिर इस तेल के ४-५ बूंद रुई के फाहा पर डालकर इसको कान में रखें। इससे लाभ होगा।

अश्वत्थ त्वक्

अश्वत्थ त्वक् संग्राही है और पूयमेह में इसका उपयोग होता है। इसमें पोषक गुण भी है (ग्रेन्वली तथा वाइट)। आर्द्र कण्डू में इसकी छाल के फाण्ट का अन्तः प्रयोग होता है।

प्रादाहिक शोथों में इसके विचूर्णित त्वक् का कल्क आचोषक (Absorbent) रूपसे व्यवहार में आता है। (इमसन)

इसकी छाल को जलाकर उसे गरम गरम जल में डाल दें। कहा जाता है कि यह पानी हठीले कास में लाभदायक है। (डा० थ्रॉण्टन)

इसकी शुष्क छाल का चूर्ण भगदर में प्रयुक्त होता है। मैंने एक हकीम को इसका लाभपूर्ण उपयोग करते हुये पाया है। प्रयोग-विधि निम्न है—एक धातु (वा किसी अन्य पदार्थ) की नली में किञ्चित् अश्वत्थ चूर्ण को रखकर भगन्दर के क्षत के भीतर फूंक द्वारा प्रविष्ट करदें।

(वैट)

बालक के ओष्ठ, जिह्वा, तालु किम्वा मुख के भीतर दधि बिन्दुवत् शुभ्र क्षत होने पर वा साधारण मुख क्षतमें मधु के साथ अश्वत्थ चूर्ण का प्रलेप करें। श्वास रोग में अश्वत्थ चूर्ण मधु के साथ सेवनीय है। अश्वत्थ त्वक् साधित तैल श्वेत प्रदर तथा आमरक्तसार में अनुवासन वस्तिरूप से और इसका क्वाथ विकृत क्षतके धावनार्थ एवं लाला स्राव में कवलार्थ व्यवहार में आता है।

(मेटेरिया मेडिका ऑफ इण्डिया—आर० एन० खोरी २ य खण्ड, ५५६ पृ०)

अश्वत्थ त्वक् का क्वाथ तथा फाण्ट पिलाना पूयमेह, मूत्रकृच्छ्र एवं आर्द्र कण्डू में हितकारक है।

अश्वत्थ चूर्ण को अंकुरोत्पादन हेतु विकृत क्षतों पर छिड़कते हैं। छाल चमड़ा सिझाने के काम में आती है। (इ० मे० मे०)

इसकी छाल संग्राही है और विकृत क्षतों एवं कतिपय चर्म रोगों में इसका उपयोग होता है। (इ० ड्रू० इं०)

अश्वत्थ की शुष्क छाल के चूर्ण को अलसी तैल के साथ प्रयुक्त करने से यह व्रणपूरक है।

इसकी छाल को पानी में डालकर उस पानी के पीने से हृल्लास एवं तृषा तत्काल प्रशमित होती है। इसकी छाल (वा मूल त्वक्) का प्रलेप नाड़ीव्रण (नासूर) के लिए हितकर और शोथ लयकर्ता है।

इसकी छाल को पानी में पीसकर लिंगेन्द्रिय पर प्रलेप करें। सूख जाने पर उष्ण जल से धोकर स्त्री संग में प्रवृत्त होने से यह आश्चर्य जनक वीर्यस्तम्भन करता है। और मनुष्य को वेवश बना देता है।

पीपल वृक्ष की छाल को जल में घिसकर यदि आरम्भ में ही फुन्सियों पर प्रलेप करे तो यह उनको जला देता है और बढ़ने नहीं देता। किसी किसी समय वृद्धि की दशा में लगाने से फोड़े को अपनी जगह बिठा देता है।

नाड़ी-व्रण के क्षत के लिये इसकी छाल को घृतकुमारी के पीले रस में घिसकर वर्तिप्लुत कर नासूर में रखने और उसके चारों ओर प्रलेप करने से थोड़े ही दिवस में नासूर को अच्छा कर देता है।

पीपल वृक्ष की छाल को जौकुट करके एक घड़े में भरदें और मुख बन्द करके इसको एक गढ़े में

रक्खे। इस गढ़े के भीतर एक ओर छोटा सा गढ़ा खोदकर चीनी का प्याला रख दें और इसके ऊपर प्रागुक्त घड़ा रहे, जिसके पेंदे में छिद्र कर दिया गया हो। इसमें आग लगादें। जब शीतल हो जाए नीचे की कटोरी में एकत्रित हुये तैल को नागरवेल पान के साथ प्रतिदिन आधे बाल भर खाने से थोड़े दिवस के भीतर नपुंसकता दूर होती है।

पोड़ों के पकाने के लिये इसकी छाल की पुल्टिस बाँधते हैं।

पित्त शोथ को मिटाने के लिये इसकी छाल का ठंडा लेप करना चाहिये।

इसकी छाल को कोयले के पानी में घुमाए इस पानी को पिलाने से हिक्का, वमन तथा तृषा आदि प्रशमित होते हैं।

पीपल की छाल का बाड़ा शहद मिलाकर पीने से वात रक्त की खारी दूर होती है।

इसकी छाल के चूर्ण को अवचूर्णन करने से व्रणपूरण होता है।

मुख से अधिक लार का स्राव होता हो जैसा शिशुओं को प्रायः होता है तो पीपल के छाल के क्वथ का गण्डूष लाभदायक होता है।

पीपल की ताजी छाल २ तो० को आध सेर पानी में क्वथितकर पाव शेष रहने पर छानशीतल होने पर प्रातः और इसी प्रकार शाम पिलाएं। गुण कुष्ठघ्न है।

पीपल की ताजी छाल को छाया सुखा कर बारीक पीसकर कपड़छान करें और ६ मा० से १ तो० तक दिन में २-३ बार सेवन कराएँ।

गुण—कुष्ठघ्न है

पीपल के छिलके को पत्थरपर गोमूत्र या पानी में घिसकर दिन में दो तीन बार कुष्ठ के क्षतों पर लगाना चाहिये।

पीपल की ताजी छाल २० सेर छिलके के छोटे छोटे टुकड़े करके रात को २ मन पानी में भिगोए और प्रातः अग्नि पर पकाए जब पानी लगभग २० सेर शेष रह जाय तब उतार कर छान लें और दुबारा आग पर चढ़ाएं। जब शहद के समान गाढ़ा हो जाय तब अग्नि से उतार रखें। यह अश्वत्थ सत्व (एक्सट्रैक्ट) है मात्रा ४ र० से मासा पर्यन्त प्रातः सायंकाल ताजे पानी के साथ। गुण कुष्ठहर।

छाया में सुखाए हुये अश्वत्थ के ताजे छिलके ५ सेर को ३० सेर पानी में रात को भिगोए प्रातःकाल इसमें से २० बोतल अर्क खींच कर इस अर्क में २ से० पीपल की शुष्क छाल को फिर भिगोए और दो बार १० बोतल अर्क तयार करें

मात्रा—आध आध पाव अर्क दिन में तीन चार बार। गुण कुष्ठहर।

पीपल वृक्ष की कोमल छाल को छाया में सुखा कर बारीक पीस कपड़छान करें।

मात्रा व सेवन विधि—ज्वर आने से एक दिन पूर्व तथा बारी के दिन ६-६ मासे इस चूर्ण को प्रातः मध्याह्न और सायंकाल गर्म पानी से खिलाए।

गुण—ज्वर प्रतिषेधक है।

अश्वत्थ त्वक् द्वारा भस्म निर्माण क्रम

इसकी छाल का चूर्ण राँगा और सीसा प्रभृति धातुओं की भस्म करने का उत्तम साधन है।

(१) पीपल के दरमियानी आर्द्र त्वक् २ सेर को लेकर उसका कल्क बनाएं और बीच में ऽ- शुद्ध राँगा रखकर कपड़ मिट्टी कर मन भर उपलों की आँच दें तो अत्युत्तम भस्म प्राप्त होगी।

मात्रा—१ से ४ र०। अनुपान—मक्खन व बकरी के दूध की लस्सी। गुण तथा प्रयोग—यह प्रमेह स्वप्न दोष और सूजाक में अत्यन्त लाभप्रद है।

(२) २० तो० पीपल की छाल को २ सेर पानी में क्वथित करें जब ऽII सेर अर्थात् पाव शेष जल रह जाय तब उतार कर छान लें बाद को ५ तो० मासा को आग पर मिट्टी के बरतन में डालकर पिघलाएं और पीपल के क्वथ में डाल दें। इसी प्रकार कम से कम ७ बार करें। तदनन्तर इस शुद्ध सीसे को किसी मिट्टी के मर

बूंद और कोरे ठीकरे पर रख कर तीव्र अग्नि पर रखें और पीपल की शुष्क छाल को बारीक बीस कर सीसे पर डालकर पीपल की सूखी लकड़ी से भली प्रकार हिलाते हैं और जले हुये पीपल के छिलके को हवा देकर उड़ा दिया करें ऐसे। अवसर पर बांसकी नलीका उपयोग करना उत्तम है। दो तीन घन्टे की लगातार आँच से सीसे की रक्त वर्ण की भस्म प्रस्तुत होगी। यदि कुछ चमक शेष रहे तो घन्टे आध घन्टे और इसीप्रकार आँच दें। मात्रा—१ र० से २ र० तक २ तोला मलाई या मक्खन में प्रातः सायंकाल दोनों समय खिलाने से यह नपुंसकता को पुंस्त्व शक्ति प्रदान करता है एवं प्रचीन से प्राचीन कुरहा और प्रमेह का मूलोच्छेदन कर देती है।

राँगा की भस्म भी इसी प्रकार प्रस्तुत हो जाती है और पूर्वोक्त सभी रोगों में लाभदायक होती है।

नोट—सीसे को क्वाथ में डालते समय वह जोर से उछलता है। अस्तु यह कार्य अत्यन्त सावधानी से करना चाहिये।

(३) पीपल की सूखी छाल के २० तो० जौकुट चूर्ण में से थोड़ा चूर्ण एक बड़े उपले में गढ़ा बनाकर बिछाए। फिर उस पर २ तो० बंग और २ तो० पारद को रेजा रेजा करके रख कर ऊपर उसके पुनः उक्त अश्वत्थ त्वक चूर्ण को और बंग को तह ब तह रखकर दूसरे उपले को ऊपर देकर हर दो उपलों की सन्धियों को कपड़ मिट्टी द्वारा बन्दकर एक गड्ढे में रख ऐसे उपलों की अग्नि दें। स्वांगशीतल होने पर इसको निकाल लें। उत्तम श्वेत भस्म प्रस्तुत होगी

मात्रा—१ रत्ती अनुपान—मक्खन में रख कर प्रातः सायंकाल इसका उपयोग करे गुण-कामावसाय शीघ्र पतन शुक्र मेह तथा पूयमेह के लिए लाभप्रद है अर्श के लिये इसे हरड़ के मुरब्बा में ४ र० की मात्रा में प्रतिदिन सेवन करे यह प्रत्येक प्रकार के अर्श के लिये अमोघ है। आंत्रस्थ कद्दू दाने एवं केंचुये के लिये एक माषा इस भस्म को प्रतिदिन दाध में मिलाकर खिलाने से दो तीन दिन में यह सबको मृतप्राय कर उदर से विसर्जित कर देता है।

अश्वत्थ फल

पीपल का फल कोष्ठमृदुकर है (अस्तु इससे कोष्ठबद्धता दूर होती है) और यह पाचन शक्ति की सहायता करता है। (ऐन्सली। इ० मे० मे०)

बार्थलोमियों (Bartholomeo) के मतानुसार (पूर्वी भारत की यात्रामें) शुष्क फल के चूर्ण को पक्ष भर जल के साथ सेवन करने से श्वास रोग नष्ट होता है और इससे स्त्रियों का बन्ध्यत्व दूर होता है।

पशुओं के लिये यह अत्यन्त पोषक चारा है। (इं० मे० मे०)

इसके फल के चूर्ण को मधु के साथ हर सुबह को खिलाने से शरीर बलिष्ट होता है।

पीपल के फलों को सुखाकर बारीक पीस कपड़छान कर ६-६ मा० प्रातः सांय ताजे पानी के साथ कण्ठमाला के रोगी को खिलाने से लाभ होता है।

पीपल के फल को लेकर छाया में सुखा लें और चूर्ण बनाकर इसमें दूनी मिश्री मिलाकर रखें और प्रतिदिन १ तो० इस चूर्ण को दूध तथा पानी के साथ खाया करें।

प्रभाव तथा प्रयोग—स्वप्न दोष, वीर्यपात शुक्रमेह, निर्बलता और शिरःशूल प्रभृति के लिये लाभदायक है।

पीपल के फल को सुखकर सत्तू बना लें ४ तो० इस सत्तू को गुड़ के शर्बत के साथ सुबह का खाने से पुरुषों का प्रमेह, स्त्रियों का सोमरोग और स्वप्न दोष १०-१२ दिन के सेवन से दूर हो जाते हैं।

पीपल के परिपक्व फल के गूदे को छाया में सुखाकर फिर कूटकर चक्की में पीस कर आटा प्रस्तुत करें। इस आटे का हलुआ बनाकर खाने से शरीर बलवान हो जाता है। स्त्रियों के गर्भाशय सम्बन्धी रोग एवं कटिशूल में यह अत्यन्त हितकर है मुँह में छाले पड़ने बन्द हो जाते हैं। यदि हलुआ न बनाना हो तो एक तोला आटे

में १ तो० शक्कर मिलाकर फाँकने और ऊपर से दुग्ध पान करने से भी बहुत लाभ होता है। शहद के साथ चाटने से भी यह लाभप्रद है। यह एक ऐसी निरापद वस्तु है जिसको छोटे बच्चों और गर्भवती स्त्री को भी अन्दाज से खिला सकते हैं।

अश्वत्थ बीज

बीज को शीतल तथा रसायन बतलाते हैं। (ऐन्सली)

पीपल के बीजों को मधु के साथ चटाने से रुधिर शुद्ध होता है।

इसके बीजों को पीस कर पीने से अन्तर्दाह मिटती है।

पीपल की दाढ़ी (रीश)

पीपल की दाढ़ी ४ मा० गजर बीज ६ मा०, और लवंग ३ मा०, इनको ऽ॥ आध सेर पानी में क्वथित करें। तीन छटांक पानी शेष रहने पर मल छान कर मिश्री २ तो० मिलाकर पिएं। आर्तव प्रवर्तनार्थ ३-४ बार पान करें और निम्न पोटली योनि में रक्खें:—

चोक की लकड़ी १ तो०, बाकुची १ तो०, यवक्षार १ तो०, वत्सनाभ १ तो०, जंगली तोरई १ तो०, कटुकी ६ मा० कालादाना १ तो० इनको बारीक पीस वर्ति बना योनि में रखने से मासिक धर्म बिना कष्ट के जारी हो जायगा। यह आर्तव प्रवर्तक है।

पीपल की दाढ़ी २० तो० को कूटकर वस्त्रपूत करें और इसमें समान भाग मिश्री योजित कर लें। मासिक धर्म आरम्भ होने के दिवस से प्रति दिन २-२ तो० स्त्री पुरुष दोनों गोदुग्ध के साथ सेवन करें और मैथुन से बचे रहें। इसके ११ वें दिन स्त्री-संग करने से स्त्री गर्भिणी होगी।

पीपल की दाढ़ी को जौकुट करके चिलम पर रख कर तम्बाकू की तरह पिलाने से वृक्कशूल नष्ट होता है।

जिस स्त्री को गर्भधारण न होता हो उसको ऋतु-स्नान के पश्चात् २॥ तो० पीपल की दाढ़ी का क्वाथ कर उसमें आवश्यकतानुसार खांड मिलाकर पिलाने गर्भधारण होता है।

पीपल की दाढ़ी ४ तो०, बुरादा हाथी दाँत २ तो० इनका बारीक चूर्ण कर रखें। ऋतुस्नान के बाद इसमें से ६ मा० चूर्ण हर रात को दूध के साथ खाने से पक्ष के भीतर ही स्त्री अवश्य ही गर्भवती होती है।

पीपल की दाढ़ी २॥ तो०, तुलसी के फूल ६ मा०, इनको बारीक कर ६-६ मा० की पुड़िया बनाएं। ८ तोले गरम पानी में सवा तोले रोगन बादाम मिलाकर एक एक पुड़िया खिलाएँ फिर ऊपर से पानी पिलादे। इससे ततक्षण वृक्कशूल नष्ट होगा।

पीपल की दाढ़ी को बारीक पीस कर ऋतु स्नानोत्तर इसे प्रति दिन १ तोला की मात्रा में गरम दूध के साथ स्त्री को खिलाएं प्रति मास सप्ताह पर्यन्त इसके उपयोग से ३ से ६ मास के भीतर वन्ध्यत्व दूर हो जाता है।

नोट—पीपल के सेवन के दिनों में स्त्री को काफी गोदूध खिलाना चाहिये। अन्यथा परिणाम स्वरूप वह तपेदिक से आक्रान्त होकर काल कवलित हो जायगी।

पीपल का दूध तथा निर्यास

इसके गोंदसे विशेष विधि द्वारा चूड़ियाँ बनाई जाती हैं जिन्हें शुद्रा स्त्रियां पहनती हैं। स्वामी शरीअत में इसकी रचना इसको अपवित्र कर देती है जिससे मुसलमान स्त्रियों को पहिनना नाजायज है। परन्तु हिन्दू शास्त्रों में अश्वत्थ की बड़ी महिमा है और यह वैज्ञानिक नियमों पर आधारित है, जिसका स्थल स्थल पर निर्देश किया गया है।

वस्त्र के सफेद टुकड़े को सर्व प्रथम मधु में भली प्रकार भिगोएँ। तदनन्तर इसको दुग्ध में क्लेदित कर शुष्क करलें और जलाकर राख सुरक्षित रखें। शिश्न को प्रथम उष्ण जल से धोकर राख को सिरका में सिक्तकर गरम कर उस स्थल पर लगाएँ। यह वर्ण को शरीर के वर्ण की तरह कर देता है।

यदि दुग्ध को दद्रु पर लगाएं तो त्वचा को संकुचित कर खुश्की उत्पन्न कर देता है। उक्त खुश्की के पृथक् हो जाने पर त्वचा स्वच्छ हो जाती है और दद्रु के कोई चिह्न शेष नहीं रह जाते।

पीपल वृक्ष के ५ तो० दूध में कुटी एवं छानी हुई इमली की छिली हुई गिरी १० तो० मिला कर सुखाएं। चने का आटा २० तो० गोघृत १ पाव, खांड आध सेर इनका यथा विधिहलुआ बनाकर उतारने के पश्चात् दुग्ध द्वारा शोधित इमली का चूर्ण, छोटी इलायची के दाने, केशर १० माशा बारीक करके मिला दें।

गुणधर्म—कामोद्दीपक, वर्ण एवं मुखमंडल की कांति प्रदान करता एवं सुन्दर बनाता है।

मात्रा—२ तो० से ३ तो० तक।

यह पुरुषों के प्रमेह और स्त्रियों के सोमरोग की अपूर्व औषध है। प्रतिदिन प्रातः काल ६ से १२ बूंद तक पीपल का दूध एक छोटे बताशे में डालकर मुँह में रक्खें और ऊपर से गाय का व भैंस का आधसेर धारोष्ण दुग्ध पीलिया करें, रक्तप्रदोष के लिये यह अत्यन्त लाभदायक है। इस बारह दिन के सेवन से रोग निर्मूल हो जाता है।

पीपल का दूध लगाने से विपादिका (बिवाई) भर जाती है।

जिस स्त्री के बच्चा पैदा न होता हो और जो व्यथा से बेताब हो रही हो उसको तोला भर भैंस के गोबर को आध सेर पानी में पकाए, जब चतुर्थ जाश आ जाए तब छानकर ४ तो० मधु और ११ बूंद पीपल का दूध मिलाकर पिलाएँ, प्रसव होगा।

सफेद संखिया को ४ सप्ताह पीपल के दूध में खरल कर मूंग के दाने के बराबर वटिकाएँ प्रस्तुत करें। प्रति दिन एक गोली प्रातः और एक रात को सोते समय दूध के साथ खिलाएँ दूध गाय या भैंस का ½ हो और इसमें देशी खांड मिला लिया करे। २१ दिन के सेवन से हर प्रकार का रोग दूर होता है।

अपथ्य—मादक द्रव्य तथा खटाई।

शुष्क पोदीने का चूर्ण या धतूर की शुष्कपत्ती का चूर्ण १० मा० तक लें और इसमें पीपल का दूध १५–१६ बूंद सम्मिलित कर तम्बाकू की तरह चिलममें पिलाए तो वृक्कशूल को तत्काल लाभ होगा।

जिस स्त्री के बच्चे बालापस्मार से मर जाते हों वह यदि बच्चा पैदा होने के दिन से लेकर दो मास पर्यन्त प्रतिदिन पीपल का दूध १ बूंद गाय या बकरी के दूध में मिलाकर पी लिया करे तो उसके बालक स्वस्थ रहेंगे। दूध में आवश्यकतानुसार मिश्री मिला लेनी चाहिए।

उन्माद या अपस्मार के कारण अथवा हौल-दिल या किसी विष या मादक द्रव्य वा किसी भी प्रकार से हुई मूर्च्छा में पीपल के दूध के कुछ बूंद रोगी के कान में टपकाने तथा दूध को समान भाग शहद में मिलाकर मस्तक पर प्रलेप करने से रोगी होश में आ जाता है।

अश्वत्थ मूल

पीपल की जड़ का मंजन दंतशूल में उपयोगी है। इसकी जड़ की छाल के क्वाथ से विसर्प रोग मिटता है।

पीपल के छोटे वृक्ष जो पेड़ या दीवारों पर अंकुरित हो जाते हैं उनकी बारीक जड़ वा जड़ के एक मृदु बारीक अगले भाग को पीसकर फोड़ों पर प्रलेप करने से ये शीघ्र विदीर्ण हो जाते हैं।

अश्वत्थ मूल त्वक् को छाया में शुष्क करके बारीक पीसकर कपड़ छान करें और पीपल की जड़ के रस में चालीस दिन खरल करके शुष्क होने पर ६–६ माशा प्रातः सायं गौ के कोष्ण दुग्ध के साथ सेवन कराएँ।

गुण—पुरुष के वीर्य–दोष एवं निर्बलता में लाभ प्रद है।

इसकी जड़ का क्वाथ शुक्रसांद्रकर्त्ता, तथा कामोद्दीपक एवं कटिशूलहर है। बु० मु०। यह वीर्य स्तम्भक है। म० मु०।

पीपल की लकड़ी

पीपल की लकड़ी का कटोरा बनाकर उसमें

दूध डमकर स्त्रीको प्रति दिन प्रातःकाल पिलाने से बन्ध्यत्व दूर होकर गर्भस्थापन होता है।

जिस घर में साँप हो वहां पीपल की लकड़ी जलाकर धुँआ करने से साँप निकल कर भागता है।

जिस दिन ज्वर आने को हो उस दिन ज्वर आने से पहिले पीपल की दातान करना ज्वर को और दांतों से खून आने को रोकता है।

पीपल की लकड़ी का प्याला बनाकर उस प्याले में रात्रि का पानी भर रक्खे और सवेरे उस पानी को पिएँ। इससे मस्तिष्क शीतल रहता है, वीर्य गाढ़ा होता है और त्वचा के रोग दूर हो जाते हैं, उक्त प्याले में पानी रखने से उसके स्वाद में अन्तर आ जाता है। पानी में पीपल की लकड़ी का असर एवं स्वाद स्पष्ट मालूम पड़ता है। इसमें कुछ समय पर्यन्त दूध रखकर पीने से बहुत लाभ होता है।

बहुत से सर्प चिकित्सक इसकी कनिष्ठा अंगुली के इतनी मोटी लकड़ी के एक सिरे को गोल बना कर एवं घिसकर चिकनाकर ऐसी दो लकड़ियों को सर्पदष्ट रोगी के दोनों कानों में १-१ लकड़ी प्रविष्ट कर उससे तरह तरह की बातें पूछ कर विष दूर करने का ढोंग करते हैं। परमात्मा जाने इसका क्या प्रभाव होता है। (लेखक)

पीपल की सूखी लकड़ी और पत्र को जलाकर क्षार-निर्माण-विधि द्वारा इसका क्षार प्रस्तुत करें।

प्रयोग—आध पाव पानी में १ मा० इसक्षार को मिलाकर इससे दिन में दो बार कोढ़ के जख्मों को धोने से बहुत शीघ्र अच्छे हो जाते हैं। इसके निरन्तर प्रयोग से प्राचीन से प्राचीन कोढ़ एवं फुलवरी (श्वित्र) आदि रोग दूर हो जाते हैं। इससे उपदंश में भी लाभ होता है।

अश्वत्थकम्-सं० क्ली० मल्लिका पुष्पदल। मल्लिका फुलेर पापड़ी-बं०। (See Mallika pushpa) वै० निघ०।

अश्वत्थ पत्र योग-सं० पु० पीपल के पत्तों के अग्र-भाग का रस १ भाग, बोल ६ भाग, शहद १२ भाग मिलाकर पीने से रक्तस्राव और हृदयस्थ संचित रक्तविकार दूर होता है। वृ० नि० र० भा० ५ र० पित्त०।

अश्वत्थफलका,-ला-सं० स्त्री० हबुषा। हाऊ बे०-हिं०। हबुष वृक्ष-बं०। लघु शेरणी, मह०। (Juniperi fructus) भा० पू० १ भा०।

अश्वत्थभित्,-भेदः-सं० पु० नन्दी वृक्ष। वालिया पीपर, तून हिं०। भा० पू० १ भा० वटादिव०। (Cedrela toona)

अश्वत्थमर-कना० अश्वत्थ, पीपल का पेड़; (Ficus religiosa)

अश्वत्थ वल्कलादि योगः-सं० पु० पीपल की सूखी छाल जलाकर उससे पानी बुझाकर पीने से प्रबल वमन का नाश होता है। वृ० नि० र० छर्दि०।

अश्वत्थवल्कलादि लोह-सं० पु० पीपल वृक्ष की छाल, सोंठ, मिर्च, पीपल और मण्डूर इनके चूर्ण को गुड़ के साथ सेवन करने से क्षय रोग का नाश होता है। वृ० नि० र० क्षय० चि०।

अश्वत्थ सन्निभा-सं० स्त्री० देखो—अश्वत्थिका।

अश्वत्था,-थी-सं० स्त्री० (१) क्षुद्र अश्वत्थ वृक्ष, गया अश्वत्थ-बं०। रा० नि० व० १। (२) श्रीवल्ली वृक्ष। (See-shrivalli) रा० नि० व० ८। (३) सीकाकाई, शीतला।

अश्वत्थादि प्रक्षालनम्-सं० क्ली० पीपल, पिलखन, गूलर, बड़, और बेंत के क्वाथ से धोने से घाव सूजन और उपदंश का नाश होता है।

अश्वत्थिका,-थी-सं० स्त्री० क्षुद्रपत्र, अश्वत्थ वृक्ष, गया अश्वत्थ-बं०। पिप्ला-हिं०। अश्वत्थी मह० हेनरलि-का०।

संस्कृत पर्याय—लघुपत्री, पविन्ना, ह्रस्व पत्रिका, पिप्पलीका और वनस्था।

गुण—मधुर, कषैली, रक्तपित्त नाशक, विषघ्न दाहनाशक, तथा गर्भिणी स्त्रियों के लिये हितकारी है। रा० नि० व० ११।

अश्वतृणम्-सं० क्ली० पाषाणमूली, घोड़ा घास-हिं०। कालिनसोनिया (Collinsonia), कॉ०, कैनेडेन्सिस (C; Canadensis)-ले०। ष्टोन रूट (Stone root), [illegible]

(Horse-weed), नॉबरूट (Knob-root)--इ०।

उश्बुल् खैल ख़श्बुल् खैल, हशुल् जज़र अ०। संगबीख, ख्याहे अस्प--फा०। पत्थरजड़ी इ०।

तुलसी वर्ग

(*N. O. Labiatecœ*)

नॉट आफिशल (*Not Official*)

उत्पत्ति-स्थान—उत्तरी अमरीका।

वानस्पतिक विवरण—इस वनस्पति का काण्ड सीधा लगभग ४ इञ्च के लम्बा होता है जिस पर छोटी छोटी ग्रन्थिमय विषम शाखाएँ होती हैं। काण्ड पर बहुत से उपले चिह्न होते हैं। यह अत्यन्त कठिन होता है। इसका बहिः वर्ण धूसर श्वेत तथा अन्तः श्वेत या सफेदी मायल होता है। त्वचा बहुत पतली, जड़ें असंख्य होती जो सरलतापूर्वक टूट जाती हैं।

गन्ध—लगभग कुछ नहीं, स्वाद—कटु तथा मूर्च्छाजनक।

रासायनिक संगठन—इसमें राल (Resin), कषायिन (Tannin), श्वेतसार, लुआब और मोम होते हैं।

कार्य—अवसादक, आक्षेपशामक, संकोचक और बल्य।

मात्रा—१५ से ६० ग्रेन (७॥ से ३० रत्ती अर्थात् १ से ४ ग्राम)

औषध-निर्माण—टिंकचूरा; कोलिनसोनी (Tinctura collinsoncæ)--ले०। अश्वतृणासव-हिं०। तअफीन अश्बुल खैल-अ०।

निर्माण-विधि—कोलिनसोनिया की जड़ कुचली हुई एक भाग, मद्यसार (६० प्रतिशत) १० भाग मेसोरेशन की विधि से टिंचर बनालें।

मात्रा—३० से १२० बूंद (मिनिम) इसका ऐक फ्लुइड ऐक्सट्रैक्ट (तरल सत्व) भी होता है जिसकी मात्रा १५ से ६० मिनिम (बूंद) है।

प्रभाव तथा उपयोग—इसको उग्र बस्ति-प्रदाह (Acute cystitis), वृक्काश्मरी (Renal calculi), जलोदर (Dropsy) श्वेत प्रदर' आमवात, अजीर्ण, श्वास और किसी किसी हृद्रोग में वर्तते हैं।

यद्यपि सिवा इसके कि सूक्ष्म मात्रा में यह स्थानिक संकोचक तथा अधिक मात्रा में मृदु पित्तनिस्सारक विरेचन है, इसके इन्द्रिय व्यापारिक क्रिया के विषय में क्रियात्मक रूप से कुछ भी ज्ञात नहीं, तथापि अमरीका में इसका अनेक रोगों में उपयोग करते हैं।

हठीले पूयमेह, अश्मरी तथा बस्ति प्रदाह में मूत्र विषयक श्लैष्मिक कलाओं के लिये यह अवसादक है और अर्श वा गुदाक्षेप में मूल्यवान् सिद्ध हो चुका है। आक्षेपहर रूप से कुक्कुर कास (Chorea) तथा हृदय की धड़कन में इसका उपयोग किया जाता है।

अश्वदंष्ट्रकः-सं० पु० (१) गोखुर, गोखरू हिं०। (Tribulus terrestris *Linn*) वै० निघ०। (२) हिंस्र जन्तु विशेष। सु०।

अश्वदंष्ट्रा-सं० स्त्री० गोखुर, गोखरू। (Tribulus terrestris, *Linn*) भा० पू० १ भा०।

अश्वनाला-सं० स्त्री० ब्रह्मसर्प नामक सर्प विशेष। त्रि० (A serpentnamed Brahma)

अश्वनाशः,-कः,-नः-सं० पु० श्वेत करवीर, सफेद कनेर-हिं०। (Nerium odorum (The white var of) रा० नि० व० १०।

अश्वपर्णिका,-र्णी-सं० पु० भूतकेशीलता। भूतकेश हिं०। श्वेत दूर्व्वा-ब०। (Corydalis) govoniana)

अश्वपालः-सं० पु०
अश्वपाल-हिं० संज्ञा पु०
अश्व रक्षक, अश्वसेवक, साईस (A groom)

अश्वपुच्छ-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (Canada equina)

अश्वपुच्छकः-सं० पु० खंगलता। तरवोलेर खाप-बं०। श० च०।

अश्वपुच्छा-सं० स्त्री० (१) वृश्चिनपर्णी, पिठवन-हिं० वाकुलिया ब०। (Uraria lagopoides, D. C.) (२) माषपर्णी मासपर्णी-हिं० (Teramnus labialis) रा० नि० व० ४।

अश्वपुच्छिका,-च्छी-सं० स्त्री० मासपर्णी लता। माषानी बं०, (Teramnus labialis) रा० नि० व० ४।

अश्वपुट-भावना-सं० स्त्री० ३२ पल परिमाण द्रव्य की भावना। वै० निघ०।

अश्वपुत्री-सं० स्त्री० सल्लकी वृक्ष, सलई हिं०। (Boswellia serrata, Roxb) रत्ना०। (२) द्रवन्ती। (Anthericum tuberosum) त्रै० निघ०।

अश्वपुष्पः-सं० पु० पत्थर का फूल, छड़ीला। Stone fower (Parmelia Perlata, Ach.)

अश्वबला-सं० स्त्री० मेथिका। मेथी हिं० म०, Fenugreek (२) नारी शाक सं० हिं०, ब० करेम हिं०। गुण अश्वबला शाक रूक्ष है तथा मल मूत्र और वायु का वर्द्धक है सु०। See nari

अश्वबालः- सं० पु० } कासतृण। कासा
अश्वबाल- हिं० संज्ञा पु० } कास का पौधा। (Schærum spontaneum) त्रिका०।

अश्वभा-सं० स्त्री० सौदामन्या। विद्युत।

अश्वमार-हिं० संज्ञा पु० }
अश्वमारः-सं० पु० } श्वेत करवीर। सफेद
अश्वमारकः-सं० पु० } कनेर-हिं०। श्वेत करवी ब० Nerium odorum, Soland. (White var of)। (२) उपोदिका सं०। पोई-हिं०। (Basella Rubra or lucida) (३) पालङ्क शाक-सं०। पालकी हिं०। (Beta berga lensis) सु० चि० १ अ०। (४) करवीर सं०। कनेर हिं०। (Nerium odorum; सु० सू० ३८ अ० लाक्षादि० ब० भा० पू० १ भा०। (५) श्वेत करवीर मूल, सफेद कनेर की जड़। यह स्थावर विषान्तर्गत मूल विष है। (६) सुगन्ध रोहिष सु० कल्प० २ अ० देखो-मूलविषम्।

अश्वमारारुय-सं० पु० श्वेत करवीर वृक्ष। सफेद कनेर का पेड़। हि०। श्वेत करवी गाछ बं०। (Nerium odorum, *Aiton*) रा० नि० व० १०।

अश्वमालः-सं० पु० सर्प विशेष। (A snake) वै० नि०।

अश्वमुत्रा-सं० स्त्री० इन्दगू वृक्ष।

अश्वमूत्रम्-सं० क्ली० घोटक मूत्र, घोड़े का पेशाब। घोड़ार मूत-ब०। हॉर्स युरिन (Horse urine) इं०।

गुण—तिक्त, उष्ण, तीक्ष्ण विपघ्न, वातकोप शामक, पित्तकारक, और दीपन है। रा० नि० व० १५। मेद, कफ, दद्रु (दाद) और और कृमि नाशक है। मद० व० ८।

अश्वमूत्रिका,-त्री-सं० स्त्री० सल्ल की वृक्ष। सलाई हिं० (Boswellia serrata' *Roxb.*) जटा०।

अश्वमोहकः-सं० पु० श्वेत करवीर। सफेद कनेर हि० (Neriumodorum, *Aiton*) वै० नि०।

अश्वयानम्-सं० क्ली० असवारी, घुड़सवारी, अश्वारोहण घोड़े की सवारी, अश्व भ्रमण; घोड़ार-चड़ा बं०। (Riding on horse back)

गुण—घोटकारोहण (घोड़े की सवारी) वात पित्त, अग्नि तथा श्रमकारक है और मेद, वर्ष तथा कफ का नाश करने वाला और बलवान मनुष्यों के लिये अत्यन्त हितकारक है। दिनच०।

अश्वयुजः-सं० पु० आश्विन मास क्वार, The 6th hindu month (September-october)

अश्वरक्षकः-सं० पु० अश्वपाल, अश्वसेवक, साईस घोड़ार सहिस-ब०। (A groom)

अश्वरिपुः-सं० पु० (१) करवीर वृक्ष, कनेर-हिं० । (Nerium odorum) (२) महिष, भैंस । (A buffalo) भा० ।

अश्वरोधकः-सं० पु०
अश्वरोधक-हिं० संज्ञा पु० } श्वेत करवीर वृक्ष ।

सफेद कनेर-हिं० (Nerium odorum' *Aiton*) रा० नि० व० १० ।

अश्वरोहका
अश्वरोहा- } सं० स्त्री० अश्वगन्धा अरुगंध हिं०

(Withania somnifera)

अश्वलम्-सं० क्ली० क्षुद्र तृण विशेष । घोड़े सर बं० "अश्वलञ्च तृणं वल्य रुच्यं पशुहितावहम्,' वै० निघ० ।

अश्वलोमा-सं० पु० सर्प विशेष । (A snake) त्रिका० ।

अश्ववराहः-सं० पु० बाराही कन्द । An esculent root or a yam (Dioscorea) वै० नि० ।

अश्वष्ठका-सं० स्त्री० वृक्ष भेद (A sort of tree) हे० च० ।

अश्ववच्चः-स्-सं० क्ली० अश्वविष्ठा, घोड़ेकी लीद घोड़ार नाद बं० (The dung of horses)

अश्ववहः,-वाहः-सं० पु०
वश्ववार-हिं० संज्ञा० पु० } अश्वधाहक, घुड़सवार जटा० ।

अश्ववारः-सं० पु० (१) कनेर (Nerium odorum) । (२) घोड़े का बाल । (Hair of the horse) अथर्व० । सू० ४ । २ । का० १० ।

अश्ववारणः-सं० पु० गवय । हे० च० । See-Gavaya ।

अश्ववैद्यः-सं० पु० अश्वशास्त्र (शालिहोत्र आदि) के प्रणेता, अश्व चिकित्सक ।

अश्ववैद्यकम्-सं० क्ली० अश्व चिकित्साशास्त्र । इसके प्रणेता शालिहोत्र, नकुल, भोज और जयदत्त प्रभृति विद्वान् हुये हैं ।

अश्वशाला-सं० स्त्री० हिं० संज्ञा स्त्री० (१) मन्दुरा हला० । (२) वह स्थान जहाँ घोड़े रहें । तवेला घुड़साल, अस्तबल । स्टेबल (A stavle) इं० ।

अश्वसेन-हिं० संज्ञा पु० तक्षक का पुत्र नाग विशेष सनतकुमार ।

अश्वसेवक-हिं० संज्ञा पु० अश्वपाल, साईस । (A groom)

अश्वहनः-सं० पु० करवीर वृक्ष, कनेर (Nerium odorum) रत्ना० भैष० भग्न-चि० निशोथ तेल ।

अश्वहा-सं० पु० श्वेत करवीर वृक्ष, सफेद कनेर का पेड़ । (Nerium odorum *Aiton*) मद० ब० ।

अश्वक्षुरकः-सं० पु० कनेर, करवीर (Nernium odorum' अथर्व० ।

अश्वक्षुरा-
अश्वक्षुरिका
-अश्वक्षुरी- } स० स्त्री० श्वेत अपराजिता, विष्णु कान्ता (Clitoreaternatea) (२) कृष्ण अपराजिता । Clitorea ternatea (The black varof) वै० निघ० (३) नखी नामक गंध द्रव्य विशेष । See-nakhi

अश्वा-सं० स्त्री० (१) अजमोदा । Carum (Ptychotis) Roxburghianum, *Benth*) । (२) अश्वगंधा, असगंध (Withaniasomnifera) (३) अपामार्ग, चिर्चिटा (Achyranthes aspera) । (४) इन्द्रवारुणी-सं० । (Cumis melo) राखाल शशा-बं० । (५) घोटकी, घोड़ी । (A mare)

अश्वाकर्णा-सं० स्त्री० सुरङ्गमदी ।

अश्वागंधी-सं० स्त्री० डमाडोल-द० । एक बूटी है । कोई कोई असगंध तथा कोई किसी अन्य बूटी को कहते हैं ।

अश्वातक्रम्-सं० क्ली० घोटकीतक्र, घोड़ीतक्र घोड़ी के दूधद्वारा निर्मित छाछ । घोड़ार दुधेर घोल-बं० ।

गुण—घोड़ी का तक्र कसैला, किंचित् वातकारक, अग्निदीप्तिकर, रूक्ष, नेत्र को हितकारक तथा मूर्च्छा और कफ नाशक है। वं० निघ०।

अश्वादधि-सं०क्ली० घोड़ी का दही। वाडवं, आश्वम् स०। सुश्रुत सू० ४५ अ० दधि व०।

अश्वान्-अ० रतौंधता, रतौंधी, नक्तांधता। (Hemeralopia)

अश्वानु-सं० एक हिन्दी वृक्ष का फल है।

अश्वान्तकः-सं० पु० श्वेत करवीर, सफेद कनेर। (Nerium odorum, *Aiton*) रा० नि० व० १०। अथर्व०।

अश्वामूत्रा-सं० स्त्री इन्द्रगू वृक्ष।

अश्वारिः-सं० पु०
अश्वारि-हिं० संज्ञा पु०

(१) करवीर या कनेर वृक्ष। (Nerium odorum) भै० कुष्ठ-चि० मरिचाद्य तैल। (२) महिष, भैंसा। (A buffalo) जटा०।

अश्वारिपत्रः-सं० पु० तिलकन्द। तैलकन्द स्वरूप।

अश्वारूढ़-हिं० पु० असवार, घुड़चढ़ा; अश्वारोही। (Mountedon a horse, a horseman)

अश्वारोहः-कः सं० पु० अश्वगन्धा, असगंध। (Withaniasomnifera) रत्ना०।

अश्वारोहण-हिं० संज्ञा पु० [सं०] [वि० अश्वारोही] घोड़े की सवारी।

अश्वारोहा-सं० स्त्री० इन्द्रवारुणी। राजनिघण्टु वं० बड़ा इनारुन. इन्द्रायन (Cumis melo) (२) अश्वगन्धा, असगंध (Withania somnifera) मे०।

अश्वारोहा-हिं० वि [सं० अश्वारोहिन्] घोड़े का सवार।

अश्वालः-सं० पु० (१) उशीर, खस-हिं०। (Andropogon muricatus)। (२) क्षुद्र काशतृण। (Saccharum spontaneus) रा० नि० व० ८।

अश्वावरोहक-हिका सं० पु०, स्त्री० अश्वगन्धा, असगंध। (Withania somnifera) र० मा०।

अश्वावती-सं० स्त्री वाजीकरण। "अश्वावती सोमावती मुर्जयन्ती मुदोजसम्" वा० १२।

अश्वासना-सं० स्त्री० (१) ऋद्धि। See-Riddhi। (२) घोटकी, घोड़ी। (Amaro) वं० निघ०।

अश्वाह्वा-सं० स्त्री० अश्वगन्धा, असगंध। (Withania somnifera) वं० निघ० वा० व्या० शतावरी तैल, नारायण तैल।

अश्वह्वादिखुरा,-रो सं० स्त्री० श्वेत अपराजिता, विष्णुक्रान्ता। (Clitorea ternatea) वं० निघ० व० ३।

अश्वाह्वः-सं० पु० (१) देव सर्षप वृक्ष। (See-Deva sarshapa) अम० (२) वृक्ष भेद। (A sort of tree) रा० नि०।

अश्विजो-सं० पु० अश्विनीकुमार, स्वर्ग के वैद्य, देव वैद्य (See-Ashvinikumara)

अश्विनी-सं० स्त्री० (१) जटामांसी। (Valeriana jatamansi) वं० निघ०। (२) घोड़ी।

अश्विनीकुमार-हिं० संज्ञा पु० देव वैद्य, स्वर्ग के वैद्य। पर्या०—स्ववैद्य। दस्र। नासत्य। आश्विनेय। नासिक्य। गदागद। पुष्करस्रज।

अश्विनीकुमारा रसः-सं० पु० त्रिकुटा, त्रिफला, अफीम, मीठा तेलिया, पीपलामूल, लवंग, जमालगोटा हरताल, सुहागा, पारा, गन्धक प्रत्येक १-१ कर्ष लेकर यथा क्रम आधा आधा प्रस्थ गाय के दूध, गोमूत्र और भांगरे के रस में घोट कर गोलियां बनाएं।

मात्रा—मुद्गप्रमाण। इसे उचित अनुपान के साथ सेवन करने से अनेक रोग दूर होते हैं। अनु० त०।

अश्विनौ-सं० पु० दोनों अश्विनीकुमार। रत्ना०।

अश्वि भेषजम्-सं० क्ली० लघुमेष शृङ्गी। मेढ़ासिंगी हिं०। मेढ़ा. डे बं०। See-Ajashringi) वै० निघ०।

अश्वीघृतम्–सं० क्ली० घोड़ी के दुग्ध द्वारा निकाले हुए नवनीत से तैयार किया हुआ घृत, घोड़ी का घी।

गुण—कटु, मधुर, कसेला, ईषत् दीपन, भारी मूर्च्छानाशक और वात को कम करने वाला है। रा० नि० व० १५।

अश्वीदधि–सं० क्ली० घोड़ी के दुग्ध से उत्पन्न हुआ दधि घोड़ी का दही। घोड़ीर दई-बं०। घोड़ि चे दहि-मह०। कुदिरेय सोसरू-कं०।

–गुण—मधुर, कषैला, रूक्ष, कफ रोग तथा मूर्च्छानाशक और ईषद्वातल (थोड़ा वातकारक) दीपन तथा नेत्रदोषनाशक है। रा० नि० व० १५।

अश्वीनवनीतम्–सं० क्ली० घोटकी दुग्ध जात नवनीत घोड़ी के दुग्ध से निःसरित नवनीत घोड़ी का मक्खन (नैनू)। घोड़ार दुधेर ननी-बं०।

गुण—कषैला, वातनाशक, नेत्रको हितकारक, कटु, उष्ण और ईषद् वातकारक है। रा० नि० व० १५।

अश्वीयम्–सं० क्ली० (१) अश्व समूह, सम्पूर्ण अश्वजाति, अश्वमात्र। त्रि० (१) अश्वहेतु, अश्व के लिए। मे० यत्रिकं। (२) अश्व सम्बंधी। घोड़े का।

अश्वीक्षीरम्–सं० क्ली० घोटकी दुग्ध, घोड़ी का दूध।

गुण—उष्ण, रूक्ष, बलकारक, वात कफनाशक है। एक शफ (सुर) क्षीर मात्र लवणाम्ल नमकीन तथा खट्टा) लघु और स्वादिष्ट होते हैं। मद० व० ८।

अश्वेता–सं० स्त्री० (१) कृष्ण अपराजिता। Clitorea ternatea (The black var of)। (२) कृष्ण अतिविषा, काली अतीस। Aconitum heterophyllum (The black var. of) वै० निघ०। (३) गम्भारी वृक्ष। (Gmilina-arboria) (See-Gambhari) रा० नि०।

अश्वेल–मस्स्याण्ड, मछली का अंडा। (The egg of a fish)

अश्श–अ० दुबला, पतला होना, बारीक होना; निर्बल या तीक्ष्ण होना।

अश्शमउल् अबज–अ० सफेद मोम, श्वेतमधूच्छिष्ट, Whitebees-wax (Cera alba)

अश्शमउल् अस्फर–अ० मोम जर्द फा०। पीला मोम पीत मधूच्छिष्ट-हिं०। Yellow bees-wax (Cera flava)

अश्शूरा–(Lomonia pentaphylla; Roxb) इ० हैं० गा०।

अश्शैलमुल् मुक़रन–अ० शैलम। गन्दुम दीवाना फा०। देखो—अर्गोटा (Ergota)

अश्हब–अ० श्यामाभायुक्त, श्वेत रंग की वस्तु, कालापन लिये हुये सफेद रंग की चीज, धूसर, भूरा।

अश्हल–अ० वह मनुष्य जिसका नेत्र मेंड़ का सा बड़ा और कुरूप हो, मेष चक्षु, मेष चश्म-फा०।

अश्हयूस–रू० कायफल, कट्फल (Myrica sapida)

अश्हार–रू० तोदरी। See-Todari

अषाढ़–हिं० संज्ञा पु० [सं० आषाढ़] चौथा महीना वह महीना जिसमें पूर्णिमा पूर्वाषाढ़ में पड़े। असाढ़, आषाढ़ The Hinduthird solar month (June July, during which the sun is in Gemini and the full moon is near ashadha अषाढ़। more properly called Poorv-ashadha पूर्वाषाढ़ा or Uttarashadha उत्तराषाढ़ा a constellation Sagittrius)। (२) व्रत (Austerity)। (३) पलाश दण्ड।

अष्टंगी–हिं० वि० दे० अष्टांगी।

अष्ट–हिं० वि० [सं०] संख्या विशेष आठ। एट (Eight)-इ०।

अष्टक–हिं० संज्ञा पु० [सं०] अष्ट संख्या, आठ की पूर्ति, आठ की संख्या, आठ वस्तुओं का संग्रह, जैसे हिंग्वाष्टक।

अष्टकट्वर तैलम्–सं० क्ली० यह तैल वात रक्त तथा उरुस्तम्भ में हितकर है। योग निम्न है—

तैल ३२ पल (= २५६ तो०) दधि ३२ पल (= २५६ तो०), तक्र २५६ पल (२०४८ तो०), पिप्पली और सोंठ प्रत्येक ४-२ पल अर्थात् १६-१६ तो० (किसी किसी के मत से दोनों मिलकर २ पल या प्रत्येक १ पल) इसको तैल-पाक विधि अनुसार पकाएं। च० द० ऊ० स्त० चि०। अस्नेह दधि अर्थात् स्नेह रहित दधि या दही का तोड़ और घृत रहित अर्थात् घी निकाला हुआ तक्र ग्रहण करना चाहिये। रस० र०।

अष्टकमल–हिं० संज्ञा पु० [सं०] हठयोग के अनुसार मूलाधार से ललाट तक के आठ कमल जो भिन्न भिन्न स्थानों में माने गए हैं अर्थात् मूलाधार, विशुद्ध, मणिपूरक, स्वाधिष्ठान, अनाहत (अनहद), आज्ञाचक्र, सहस्रारचक्र और सुरति कमल।

अष्टकर्म–सं० क्ली० पारद के आठ संस्कार। पारद के अठारह कर्मों में से स्वेदनादि से दीपन पर्यन्त आठ प्रकार के संस्कार। वे निम्न हैं—

(१) स्वेदन, (२) मर्दन, (३) मूर्च्छन, (४) उत्थापन, (५) पातन, (६) बोधन, (७) नियामन और (८) दीपन। र० सा० सं०। इनकी विधि अपने अपने पर्यायों के सम्मुख देखें।

अष्टका–सं० स्त्री० वृक्ष भेद। (A sort of tree) हे० च०।

अष्टकुल–हिं० संज्ञा पु० [सं०] पुराणानुसार सर्पों के आठ कुल यथा—शेष, वासुकि, कर्कोटक, पद्म, महापद्म, शंख और कुलिक। किसी किसी के मत से–तक्षक, महापद्म, शंख, कुलिक, कर्कोटक, अश्वतर, धृतराष्ट्र और वलाहक हैं।

अष्टकुला–हिं० वि० [सं०] साँपों के आठ कुलों में से किसी में उत्पन्न।

अष्टकोण–हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) वह क्षेत्र जिसमें आठ कोण हों।

वि० [सं०] आठ कोने वाला। जिसमें आठ कोने हों।

अष्टगन्ध–हिं० संज्ञा पु० [सं०] आठ सुगन्धित द्रव्यों का समाहार। देखो—गन्धाष्टक।

अष्टगाधः–सं० पु० (१) ऊर्णनाभि। See -urna-nabhih, (२) शरभ See--sharabha

अष्टगुण मण्डः–सं० पु० जिस माँड़ में धनिया, सोंठ, मिर्च, पीपल, सेंधा नमक और छाछ डाल कर भूना जाय तथा भूनी हींग और तैल पड़ा हो उसे अष्टगुणमण्ड कहते हैं।

गुण—दीपन, प्राणदाता, बस्तिशोधक, रुधिर वर्द्धक, ज्वर नाशक और प्रत्येक रोगों को नष्ट करता है। यो० त०।

अष्टदल–हिं० संज्ञा पु० [सं०] आठ पत्ते का कमल।

वि० [सं०] (१) आठ दल का, (२) आठ कोने का, आठ पहल का।

अष्टधातः–सं० पु०
अष्टधातु–हिं० संज्ञा स्त्री०

आठ धातुएँ यथा—१–सुवर्ण, २–रूपा, ३–शीष (सीसक), ४–ताम्र ५–पित्तल, ६–रांग (राँगा), ७–कान्त लौह, और ८– मुण्डलौह, किसी ने पीत्तल के स्थान में तीक्ष्ण लौह लिखा है। र० सा० सं० टी०।

नोट—किसी किसी ने इसकी गणना इस प्रकार की है—१–सुवर्ण (Gold), २–रूपा-चाँदी (Silver), ३ ताँबा (Copper) ४–पीतल (Brass), ५–राँगा (Tin), ६–जस्ता (Bell-metal) ७–सीसा (Lead) और लौह (Iron)। किसी किसी ने पीतल के स्थान में पारद लिखा है। देखो—अष्टलोहक।

अष्टधात्री–
अष्टधाती–
-हिं० वि० [सं० अष्टधातु]

अष्ट धातुओं से बना हुआ। (A compound of eight metals)

अष्टपद–हिं० संज्ञा पु० देखो–अष्टपाद।

अष्टपदी–सं० स्त्री० बेल नाम से प्रसिद्ध एक पुष्प वृक्ष विशेष। बेल फुलेर–गाछ–बं०। (Aunbnamed Vela)

गुण—शीतल, लघु, कफ पित्त तथा विष नाशक। भव० ख० ३।

अष्टपलम्-सं० क्ली० शराव मान (=६४ तो० अर्थात् १ सेर ऽ१)। Sharava (A measure ment one seer)।

अष्टपलक घृतम्-स० क्ली० } -सं० क्ली०
अष्टपल घृतम्-सं० क्ली० }
ग्रहणी नाशक योग विशेष। यथा सोंठ, मिर्च, पीपल, हड़, बहेड़ा, आमला, प्रत्येक ४-४ तो० इनका कल्क बनाए और वेलिगिरी ४ तो०, गुड़ १ पल तथा घृत ३२ तो० को कल्क युक्त पकाएँ।

इसे उचित मात्रा में भक्षण करने से मन्दाग्नि रोग नष्ट होता है। वंग से० सं० ग्रहणी चि०। च० द०।

अष्टपात्,-दः-सं० पु० } (१) कश्मीर देशीय
अष्टपाद-हिं० सज्ञा पु० }
शरभ, शार्दूल। मद० ब० १२। (२) ऊर्णनाभि, लूता, मकड़ी। हे० च० ४ का०।

अष्टपादपः-सं० पु० वृक्ष भेद। (A sort of tree) वै० निघ०।

अष्टपादिका-सं० स्त्री० [१] शरद मल्लिका, काष्ठमल्लिका-बं०। रत्ना०। (२) आस्फोता, अपराजिता। (Clitorea ternatea) हापर माली-बं०। प० मु० ब० ११।

अष्टप्रहर-सं० पु० आठ पहर, आठ याम (Incess ant, the whole day and night)

अष्टवन्ध्या-सं० स्त्री० आठ प्रकार की वन्ध्याएँ, बाँझ या अपुत्रवती स्त्रियां। Eightsorts of bandhyas(childless women) वे निम्न हैं—(१) काकवन्ध्या, (२) कन्यापत्य (३) कमली, (४) गलद्गर्भा, (५) जन्मवन्ध्या, (६) त्रिपक्षी, (७) त्रिमुखी, (८) मूढ़गर्भा। इनके अतिरिक्त आठ प्रकार की और वन्ध्याओं का वर्णन वं० कल्पद्रु० के प्रणेता ने किया है जो निम्न है—

(१) मृत्यत्स्या, (२) रजोहीना, (३) ...की, (४) व्यक्तिनी, (५) व्याघ्रिणी, (६) शुभ्रती, (७) सज्जा और (८) स्रवद्गर्भा।

अष्टवसु-हिं० पु० आठ देव विशेष (The eight deities) यथा—आप, ध्रुव, सोम, धव, अनिल, अनल, प्रत्यूष और प्रभास।

अष्टभावः-सं० पु० स्तम्भ स्वेद, रोमांच, स्वरभंग, वैस्वर्य्य, कम्प, वैवर्ण्य और अश्रुपात ये आठ भाव हैं। वै० निघ०।

अष्टम-हिं० वि० [स०] आठवाँ। (The eigrth)

अष्ट मंगलः-सं० पु० (१) श्वेत मुख, पुच्छ, वक्ष तथा खुर वाला अश्व है। हे० च० जिसका समग्र पाद, पुच्छ, वक्ष तथा मुख सफेद हो उसे "अष्टमगल" जानना चाहिये। ज० द० ३ अ०। क्ली० आठ मंगल द्रव्य वा पदार्थ जैसे—१-ब्राह्मण, २-गौ, ३-अग्नि, ४-स्वर्ण, ५-घृत, ६-सूर्य, ७-अश्व, (कहीं कहीं जल लिखा है) तथा ८ नृप ये आठों अष्ट मंगल कहलाते हैं। वै० निघ०। किसी किसी के मत से १-सिंह; २-वृष, ३-नाग, ४-कलश, ५-पंखा, ६-वैजयन्ती, ७-भेरी और ८-दीपक वे आठ अष्टमंगल है।

अष्टमगल घृतम्-सं० क्ली० बाल रोग नाशक घृत विशेष। एक घृत जो आठ औषधियो से बनाया जाता है। औषधियाँ ये हैं—१-वच, २-कूट, ३-ब्राह्मी, ४-सर्षप, ५-सारिवा, ६-सेंधा नमक ७-पीपल, १-१ तो० और ८-घृत ८ तो०, उक्त औषधियों का कल्क बना घृत सिद्ध कर पीने से बालकों की स्मृति श्रुति और बुद्धि की वृद्धि होती है और पिशाच, राक्षस, दैत्य बाधा दूर होती है। च० तथा० वंग से० सं० बालरोग-चि० मा०। रस० र०।

अष्टमधु जातिः-सं० स्त्री० माक्षिक, भ्रामर, क्षौद्र, पौत्ति(त्रि)क, छात्रक, आर्घ्या, औद्दाल और दाल इत्यादि आठ प्रकार के मधु। विस्तार के लिये उन उन शब्दों के अन्तर्गत देखो।

अष्टम नकली पसली-सं० स्त्री० (Eigrth falserib) मांस और उपास्थि की पर्शुका।

अष्टमानम्-सं० क्ली०
अष्टमान-हिं० संज्ञा पु० } दो प्रसृति = ४ पल (=३२ तो०) अर्थात् अर्द्ध सेर (Half a seer) आठ मुट्ठी का एक परिमाण प० प्र० १ ख०।

अष्टमिका-सं० स्त्री०, हिं० संज्ञा स्त्री० तोल, चतुष्टय, परिमाण, ४ तो० का एक परिमाण। प० आधे पल वा दो कर्ष का परिमाण।

अष्टमी-सं० (हिं० संज्ञा) स्त्री० (१) क्षीर काकोली। (See-ksbirakakoli) वै० निघ०। (२) तिथि विशेष शुक्ल और कृष्णपक्ष के भेद से आठवीं तिथि, आठें। (The eighth day of the moon), (३) श्रवणी नाड़ियाँ (Acoustic nerves) त्रि०, वि० आठवीं।

अष्ट-मूत्रम्-सं० क्ली० आठ जानवरों का मूत्र (The urine of the eight animals), उनके नाम निम्न प्रकार हैं—

(१) गो, (२) बकरी, (३) भेड़ (४) भैंस, (५) घोड़ी, (६) हस्तिनी, (७) उष्ट्री और (८) गधी। वै० नि०।

अष्ट-मूर्ति रसः-सं० पु० सोना, चाँदी, तांबा, सीसा सोनामाखी, रूपामाखी, मैनसिल प्रत्येक समान भाग ले जम्बीरी के रस से भावित कर भूधरयन्त्र में १ पहर तक पुट दे फिर चूर्ण कर रक्खें।

मात्रा—१ रत्ती उचित अनुपान से क्षय, पाण्डु, विषमज्वर तथा रोग मात्र को समूल नष्ट करता है। र० यो० सा०।

अष्टमूलम्-सं० त्रि० त्वचा, मांस, शिरा, स्नायु, अस्थि, संधि, कोष्ठ तथा मर्म्म यह आठ मूल कहे जाते हैं। सु० चि० अ०।

अष्टमौक्तिक स्थानम्-सं० क्ली० मोती की उत्पत्ति के आठ स्थान, जैसे—शंख, हाथी, सर्प, मछली, मेंढक, वंश, (बांस), सूअर तथा सीप इन आठ प्राणियों में मोती होता है। वै० निघ० देखो मोती—।

अष्टयामिक वटी-सं० स्त्री० चांगेरी चूर्ण ६ मा०, पारा, हल्दी, सेंधानमक, प्रत्येक २ भाग इनको गाय के दही में मर्दन कर झाड़ी बेर प्रमाण गलियां बनाए। इसे ज्वर आने से तीन रोज बाद गरम पानी से लेने से आठ पहर के अन्दर नवीन ज्वर नष्ट होता है। रस० यो० सा०।

अष्टलोह(क)-हिं० संज्ञा पु०
अष्टलोह कम्-सं० क्ली० } अष्ट प्रकार धातु विशेष। स्वर्ण, रोप्य, ताम्र, रङ्ग, शीप (शीसक) कान्त लौह, मुण्ड लौह, और तीक्ष्ण लौह। पंच लौह समेत कांति, मुण्ड तथा तीक्ष्ण लौह। रा० नि० व० २२। देखो—अष्ट धातुः।

अष्टवर्गः-सं० पु०
अष्टवर्ग-हिं० संज्ञा पु० } (A class of eight principal medicensnts, Rishabhaka etc) आठ औषधियों का समाहार। मेदा प्रभृति आठ औषधियाँ यथा—१ मेदा, २ महामेदा, ३ जीवक, ४ ऋषभक, ५ ऋद्धि, ६ वृद्धि, ७ काकोली, ८ क्षीरकाकोली, प० मु०।

"जीवर्षभकौमेदे काकोल्या बृद्धि वृद्धिकौ
एकत्रमिलितैरेतैरष्टवर्गः प्रकीर्तितः"।

रा० नि० व० २२।

गुण—शीतल, अतिशुक्रल, वृंहण, दाह, रक्तपित्त तथा शोषनाशक और स्तन्यजनक एवं गर्भदायक है। मद० व० १। रक्तपित्त, व्रण, वायु और पित्तनाशक है। राज०। हिम, स्वादु, वृंहण, गुरु टूटे हुये स्थान को जोड़ने वाला, कामवर्द्धक, बलास (कफ) प्रगट करता एवं बलवर्द्धक है, तथा तृष्णा, दाह, ज्वर, प्रमेह और क्षय का नाश करने वाला है। भा० पू० १ भा०।

अष्टवर्ग प्रतिनिधिः-सं० पु० मेदा आदि औषधियों के अभाव में उनके समान गुण धर्म की औषधियों का ग्रहण करना, यथा—मेदा, महामेदाके अभाव में शतावरी, जीवक, ऋषभक के स्थान में भूमि कुष्माण्ड मूल (पताल कुम्हड़ा, विदारीकन्द),

काकोली, क्षीरकाकोली के अभाव में अश्वगन्धा मूल (असगन्ध) और ऋद्धि वृद्धि के स्थान में वाराहीकन्द। भा० पू० १ भा०। कोई कोई इसकी प्रतिनिधि इस प्रकार लिखते हैं। जैसे—जीवक, ऋषभक के अभाव में गुडूची वा वंशलोचन, मेदा के अभाव में अश्वगन्धा और महा मेदा के अभाव में शारिवा और ऋद्धि के अभाव में बला और वृद्धि के स्थान में महाबला लेते हैं। कोई कोई ऐसा लिखते हैं—

प्रतिनिधि—काकोली (मूसली श्याम), क्षीर काकोली (मूसली श्वेत); मेदा (सालब मिश्री छोटे दाने की), महामेदा (सकाकुल मिश्री), जीवक (लम्बे दाने के सालब), ऋषभक (वहमन श्वेत) ऋद्धि (चिड़िया कन्द) और वृद्धि (पंजा सालबमिश्री)।

अष्टविधान्नम्–सं० क्ली० आठ प्रकार के आहार द्रव्य, जैसे (१) चर्व्य, (२) चोष्य (३) लेह्य, (४) पेय, (५) खाद्य, (६) भोज्य, (७) भक्ष्य तथा (८) निष्पेष रूप भोजन द्रव्य।

अष्टक्षीरः–सं० पु० आठ दूध। आठ प्राणियों के दूध वे निम्न हैं।

(१) गो दुग्ध, (२) बकरी का दूध; (३) ऊँटनी का दूध, (४) भेड़ का दूध (५) भैंस का दूध और (६) घोड़ी का दूध, (७) स्त्री का दूध, (८) हाथी का दूध।

"गव्यमाजं तथा चौष्ट्रमाविकं माहिषं च यत्।
अश्वायाश्चैव नार्यश्च करेणूनां च यत्पयः॥"
सु० सू० अ० ४५।

अष्टांग–हिं० सं० पु०
अष्टाङ्गम्–सं० क्ली०
} [वि० अष्टांगी] (१)

आयुर्वेद के आठ विभाग।

(क) शल्य, शलाक्य, काय चिकित्सा, भूत विद्या, कौमारभृत्य, अगदतन्त्र, रसायनतन्त्र और वाजीकरण।

(ख) काय चिकित्सा, बाल चिकित्सा, ग्रह चिकित्सा, ऊर्ध्वांग चिकित्सा, शल्य चिकित्सा, दंष्ट्र चिकित्सा जरा चिकित्सा और वाजीकरण ये आयुर्वेद के आठ अंग हैं। चा० सू० १ अ०।

(ग) द्रव्याभिधान, गदनिश्चय, शल्य कार्य भूत निग्रह, विष निग्रह, रसायन और बालचिकित्सा। वैद्यकम्।

(२) शरीर के आठ अंग, जानु, पद, हाथ, उर शिर, वचन दृष्टि, बुद्धि जिनसे प्रमाण करने का विधान है।

वि० [सं०] (१) आठ अवयव वाला। (२) अठपहल।

अष्टांगघृतम्–सं० क्ली० यह एक बाजीकरण घृत है।

अष्टांगधूप–सं० पु० यह धूप ज्वरनाशक है।

योग—गुग्गुल, निम्ब पत्र, वचा, कुष्ठ, हरड़, यव, श्वेत सर्षप इनमें घृत मिलाकर धूप देने से ज्वर नष्ट होता है। च० द०।

अष्टांग मङ्गल घृतम्–सं० क्ली० वच, मण्डूकपर्णी, शंखपुष्पी, ब्राह्मी, हुरहुर, श्वेतगुंजा, शतावरी, गिलोय प्रत्येक ४-४ तो०, घृत ६४ तो०, दुग्ध २५६ तो० उक्त ओषधियों का कल्क बना घृत पकाकर सिद्ध करें।

गुण—इसके सेवन से धृति, स्मृति की वृद्धि होती है वृ० से० सं० रसा० अ०।

अष्टाङ्ग योगः–सं० पु० योग विशेष। यथा—कट्फल (कायफल) पौष्कर, शृंगी, व्योष (त्रिकटु) यास (जवासा) और कारवी समग्रः।

अष्टांग रस–सं० पु० अर्शोऽधिकारोक्त रस विशेष लोहकिट्ट (मण्डूर) और फलत्रय (त्रिफला) र० सा० सं०। देखो—अष्टांग रसः।

अष्टांग लवणम्–सं० क्ली० काला नमक १ भा० जीरा १ भा० वृक्षाम्ल (अमसूल) १ भा० अम्लवेत १ भा०, तेज आधा भा०, इलायची आधा भाग, मिर्च आधा भाग, मिश्री १ भा० ले चूर्ण प्रस्तुत करें।

गुण—यह अग्नि को दीपन करता और कफज मदात्यय रोग को दूर करता है। बंग से० सं० मदा० चि०। चर० मदात्यय-चि०। जीरा लाला जीरा, वृक्षाम्ल (अमसूल) और महार्द्रक (शूल बग आर्द्रक) र० सा० सं०।

सोवर्चल कृष्णजीरकाम्लवेतसाम्ल लोणिकानां । प्रत्येकमर्द्ध भागः । शर्कराया भागैक एकत्र मिश्रयेत । च० द० मदा० चि० ।

अष्टांग वैद्यकम्-सं० क्ली० शालक्य, काय, भूत अगद, बाल, विष, बाजीकरण और रसायन इन्हें अष्टांग वैद्यक कहते हैं ।

अष्टांग हृदयम्-सं० क्ली० वाग्भट्ट विरचित वैद्यक ग्रन्थ । अष्टांग आयुर्वेद के प्रत्येक अंग का सार ग्रहण करके रचा गया । अस्तु यह सब अंगों का सारभूत अष्टांग हृदय है । वा० सू० १ अ० ।

अष्टाङ्गावलेहः-हिं०-सं० पु० क्ली० सन्निपात ज्वर तथा हिक्का व श्वासादि में हितकर योग विशेष ।

योग तथा निर्माण-क्रम-कायफल, पोहकर मूल, काकड़ा सिंगी, अजवाइन, सौंफ, सोंठ, मिर्च और पीपल ये सब औषध समान भाग लेकर चूर्ण करले । इस चूर्ण को अदरख के रस तथा शहद में मिलाकर चाटें ।

गुण—कफ, ज्वर, खांसी, श्वास, अरुचि, वमन, हिचकी, कफ और वातनाशक है । भा० म० १ भा० । सा० कौ० । च० द० भैष० ।

अष्टांगी-हिं० वि० [सं०] आठ अंग वाला ।

अष्टांगोरसः-सं० पु० गन्धक पारा, लौह भस्म' मण्डूर भस्म, त्रिफला, त्रिकुटा, चित्रक, भाँगरा प्रत्येक समान भाग लेकर सेमल और गिलोय के क्वाथ से ३ पहर घोटकर छाया में सुखाएँ ,

मात्रा—४ मा०, उचित अनुपान के साथ सेवन करने से हर प्रकार के अर्श का नाश होता है । रस० यो० सा० ।

अष्टादश-अठारह (Eighteen)

अष्टादश धान्यम्-सं० क्ली० १८ प्रकार के धान्य विशेष जैसे—कलाय (मटर आदि) गोधूम, आढ़की यव, यावनाल (मक्का) चणक, मसूर, अतसी मूँग, तिल, कुलत्थी, श्यामाक (सांवा) माष राजमाष, वर्तुल, हरिक, कंगु और तेरणा । वै० निघ० ।

अष्टादश मूलम्-सं० क्ली० १८ प्रकार की जड़ें यथा बिल्व, अरणी, सोनापाठा, गाम्भारी, पाठा (निर्विषी) पुनर्नवा, वाट्यालक, माषपर्णी, जीवक, एरण्ड, ऋषभक, जीवन्ती शतावर, शर, इक्षु दर्भ, काश और शाल्यधान्य मूल । वै० निघ०

अष्टादश शतिक महाप्रसारणी तैलम्-सं० क्ली० गन्धाली पञ्चांग १२० तो०' शतावरी ४०० तो० केतकी मूल ४०० तो०, अश्वगन्ध ४०० तो०, दशमूल ४०० तो०, खिरेटी मूल ४०० तो०, कुरण्टा ४०० तो०, इनको १०२४ तो० जल में पकाएँ जब १०० वां भाग शेष रहे तब इस क्वाथ से दुगुना क्वाथ लें । बाँजी और दही का पानी २५६ तो० दुग्ध, शुक्र, ईख का रस, बकरे के मांस का रस प्रत्येक ४-४ सेर तिल तेल १०२४ तो० कल्कार्थ भिलावा, तगर, सोंठ, चित्रक, पीपल, कचूर, वच, स्फटिका, प्रसारिणी, पीपला मूल देवदारु, शतावर, छोटी इलायची, दाल, चीनी' नेत्रवाला, कूट, नखी, बालछड़, पुष्कर मूल, चन्दन, सारिवा, कस्तूरी, अगर, अजीठ, नख, शिलाजीत, केशर, कपूर, विरोजा, हल्दी, लवंग, रोहिषतृण, सेंधानभक, कंकोल, पालक, नागर मोथा, कमल, दारुहल्दी, तेजपत्र, कचूर, रेणुका बीज, लोबान श्रीवास, (धूप) केतकी, त्रिफला, रक्तधमासा, शतावरी' सरल, कमल केशर' मेंहदी, खस, बालछड़, जीवनीयगण, पुनर्नवा, दशमूल, असगन्ध, नाग केशर, रसवत, कुटकी, जावित्री, सुपारी, शलई का गोंद प्रत्येक १२-१२ तोला ले मन्दाग्नि से तेल पकाएं । सिद्ध होने पर मालिश करे तो सम्पूर्ण बात व्याधियाँ दूर हों । इसे नस्य पान और बस्ति कर्म में भी प्रयुक्त किया जाता है । विशेष गुण देखो—वंग से० सं० वात व्याधि चि० द० वा० व्या० चि० ।

अष्टादशांगः-सं० पु० सन्निपातज्वरोक्त कषाय विशेष यह चार प्रकार का है—(१) दशमूल्यादि (२) भूनिम्बादि (३) द्राक्षादि (४) और मूलकादि इनमें से प्रथम—दशमूली, कचूर, अंगी, पोहकर मूल, दुरालभा, भार्गी, इन्द्रयव, पटोल और कटुरोहिणी इन्हें अष्टादशांग कहते हैं

गुण—सन्निपात, ज्वरनाशक ।

द्वितीय—भूनिम्ब, दारुहरिद्रा, दशमूल, सोंठ, नागरमोंथा, तिक्त इन्द्रयव, धनियां, नागकेशर और पीपल का कषाय। गुण—तन्द्रा श्लेष्म, कास, अरुचि, दाह, मोह, श्वासादि सम्पूर्ण श्लेष्म-विकार और ज्वर को तत्काल शमन करता है।

तृतीय—द्राक्षा, गुडूची कचूर, शृंगी, नागरमोंथा, लाल चन्दन सोंठ, कुटकी, पाठा, भूनिम्ब दुरालभा, खस, पद्मकाष्ठ धनियां, सुगन्धबाला, कण्टकारी, पुष्कर और नीम। गुण—तुरन्त जीर्ण ज्वर को दूर करता है।

चतुर्थ—नागरमोथा, पित्तपापड़ा, उशीर, देवदारु, महौषध, त्रिफला, दुरालभा और यवासा नीली, कम्पिल्लक, निशोथ, चिरायता, पाठा, बला कटुकी, रोहिणी, मुलेठी, पीपरामूल आदि नागरमोंथा गण कहलाते हैं। च० द०, भैष०।

अष्टादशांग गुटिका-सं० स्त्री० चिरायता, कुटकी देवदारु, दारुहल्दी, नागरमोंथा, गिलोय, कडुआ परवर, धमासा, पित्तपापड़ा, निम्बछाल, सोंठ मिर्च, पीपल, त्रिफला, वायविडंग प्रत्येक १-१ भा०, लौह चूर्ण सर्व तुल्य, चूर्ण कर शहद और घृत से गोलियां बनाएँ।

गुण—इसे तक्र के साथ भक्षण करने से पांडु शोथ, प्रमेह, हलीमक हृदरोग, संग्रहणी, श्वास, खांसी, रक्तपित्त, अर्श, आमवात, व्रण, गुल्म, कफज विद्रधि, श्वेतकुष्ठ उरुस्तम्भ आदि रोग दूर होते हैं। वंग० से० सं० पांडुरो० चि०।

अष्टादशांग लौहम्-सं० क्ली० पाडु अधिकारोक्त लौह विशेष।

योग तथा निर्माण-क्रम—चिरायता, देवदारु, दारुहरिद्रा, नागरमोथा, गुडूची, कुटकी, पटोल, दुरालभा, पित्तपापड़ा, निम्ब, त्रिकटु, चांता त्रिफला, मयनफल, वायविडंग इन सबको समान भाग लेकर इन सबके बराबर लौहभस्म मिलाकर घृत और मधु के साथ वटिका निर्मित करें।

अनुपान—इसको तक्रके साथ उपयोगमेंलाएँ

गुण—पाण्डुघ्न। भा० म० २ भा०।

अष्टापदः-सं० पु०
अष्टापद-हिं० संज्ञा पु० (१) शरभ। See-sharabha (२) मर्कट। बानर-हिं०। (A monkey) देखो—मर्कटः। (३) महासिंह See Mahasinha (४) धुस्तुर, धतूरा-हिं०। (Datura fastuosa) रा० नि० व० १६। (५) शतरंज की चाल। वा० उ० अ० २२। "एकश्चेऽष्टापदवद्भिन्ने" क्ली० (६) सुवर्ण, सोना (Gold) रा० नि० व० १३। (दो) स्त्री० (७) मल्लिका भेद। चन्द्र मल्लिका।

अष्टापद-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) लूता, मकड़ी, (२) कृमि। देखो—अष्टापदः।

अष्टाम्लवर्ग-सं० पु० आठ खट्टे फल, यथा—(१) जम्बीर, (२) बीजपूर, (३) मातुलुंग, (४) चुक्रक, (५) चांगेरी, (६) तिन्तिडी (७) बदरी और (८) करमर्द।

अष्टावक्र-हिं० संज्ञा पु० [सं०] एक ऋषि।

अष्टावक्र रसः-सं० पु० रसायनाधिकारोक्त रस विशेष। यथा—पारद १ भा०, गन्धक २ भा० स्वर्ण भस्म १ भा०, चांदी भस्म ॥० भा०, शीसा भस्म ।० भा०, रांगा भस्म ।० भा०, ताम्रभस्म ।० भा० और खपरिया शुद्ध ।० भा०, इसको बटाकुर तथा घीकुआर के रस में १ प्रहर तक मर्दन कर रससिंदूर की तरह पकाएँ।

मात्रा—२ रत्ती।

अनुपान—पान का रस भैष०।

अष्टाश्रि
अष्टास्र }-हिं० वि० [सं०] आठ कोने वाला, अठकोना, अठकोण।

अष्टिः-ष्टिः-सं० स्त्री०
अष्टि-हिं० संज्ञा स्त्री० } (१) अष्ठी, आँटी -बं०। (२) मींगी (Nucleus) नुवात अ०। देखो—सेल।

अष्टौषधि-सं० स्त्री० ब्रह्मसुवर्चला, आदित्यपर्णी, नारीकाष्ठ, गोधा, सर्पा, पद्मा, अज और नीली ये आठ अष्टौषधि कहलाती हैं। च० चि० १ अ०।

अष्ठिला-
अष्ठीला-
अष्ठीलिका } सं० स्त्री०, हिं० संज्ञा स्त्री० (१) वायु रोग विशेष। एक रोग जिसमें मूत्राशय में अफरा होने से पेशाब नहीं होता और एक गाँठ पड़ जाती है जिससे मलावरोध होता है और वस्ति में पीड़ा होती है। इसके निम्न भेद हैं—

लक्षण—वह ग्रंथि जो ऊपर को उठी हुई तथा अष्ठीला के सदृश कठोर और आनाह के लक्षणों से युक्त होती है उसे अष्ठीला कहते हैं। वा० नि० ११ अ०। नाभि के नीचे उत्पन्न हुई इधर उधर चली हुई अथवा अचल जो एक ही स्थान में रहे ऐसी पत्थर की वटिया के समान कड़ी और ऊपर को कुछ लम्बी और आड़ा, कुछ ऊंची हो और अधोवायु मल, मूत्र इनको रोकने वाली गाँठों को वाताष्ठीला कहते हैं। जो अत्यन्त पीड़ायुक्त वायु, मूत्र, मल को रोकने वाली और जो तिरछी प्रगट हुई हो उसको प्रत्यष्ठीला कहते हैं। मा० नि० वा० व्या०। वाग्भट्ट के अनुसार तिरछी और ऊपर को उठी हुई ग्रंथि को प्रत्यष्ठीला कहते हैं। वा० नि० ११ अ०।

(२) शूकरोग भेद। लक्षण—जो कड़ी और भीतर से विषम ऐसी वायु के कोप से पिडिका हो वह अष्ठीलिका है। यह विषयुक्त शूकों से होती है। सु० नि० १४ अ०।

(३) उत्तरापथ प्रसिद्ध वर्त्तुलाकार पाषाण खण्ड (जे ज्वरः) वा पत्थर का गोली। लोहार की लोहे की दाँती अस्त्र विशेष, गयदास।

(४) प्रास्टेट ग्रंथि विशेष (Prostate gland)

अष्ठि(ष्ठा)वान्-सं० पु० (१) शूक रोग विशेष लक्षण—जो कड़ी और भीतर से विषम ऐसी वायु के कोप से पिडिका हो वह 'अष्ठीलिका' है। यह विषयुक्त शूकों से होती है। सु० नि० १४ अ०। देखो—अष्ठीलिका। (२) जानु। (knee) वा० नि० व० १८।

अष्ठिवान्,-त-सं० पु० घुटना, जानु (Knee) सु० श० ७। अथर्व० सू० ६। २१। का० १०।

अष्ठीला दाह-हिं० पु० प्रोस्टेट ग्रंथि प्रदाह (Prostitis)

अष्ठीलाविकार-हिं० पु० प्रोस्टेट ग्रंथि के रोग। (Diseases of the prostate)

अष्ठीला-वृद्धि-हिं० स्त्री० प्रोस्टेट ग्रंथि का बढ़ जाना वाताष्ठीला। (Prostatic enlargement)

अष्ठीलास्थित अश्मरी-हिं० स्त्री० प्रोस्टेट ग्रंथि स्थित अश्मरी। (Prostatic calculi) देखो—अश्मरी या प्रोस्टेट,

असंक्लिन्नः-स० त्रि० सम्यक् रूप से आर्द्र नहीं अर्थात् जो पूर्णतः क्लेदयुक्त (तर) न हो। यथा—"पिंडीकृतमसंक्लिन्नम्"। भा० पू० १ भा०।

असंयोग-हिं० पु० भिन्न, अनमेल।

असंलग्न-हिं० त्रि० जो मिला न हो, असंयुक्त, अमिल।

असकत-हिं० स्त्री० आलस्य, उघाँस। (Drowsiness slothfulness)

असकती-हिं० पु० आलसी, ढीला। (Drowsy, lazy)

असकुट-क्लेदक, फलज्ञ नं० की-पं० (चनाब नदी) मेमो०।

असखी-स० स्त्री० अयुग्म। (Azygos) फर्द अ०।

असगन्द-
असगन्ध- } हिं० संज्ञा पु० अश्वगंधा। (Physalis flexuosa)

असगंध चाछरी-(१) वट, बरगद, बड़े। (Ficus Bengalensis) असान्धु-मे०। (२) असगंध। (Withania somnifera)

असजद-अ० (१) सुवर्ण। सोना-हिं०। Gold (Aurum)। (२) जवाहिरात (जैसे-याकूत जबरजद आदि। (Gems)। (३) स्थूल वा मोटा ऊँट (A fatcamel)

असजर–अ० टिड्डी। (A locust),

असड़िया–हिं० संज्ञा पु० [सं० अषाढ] एक प्रकार का लम्बा सांप जिसकी पीठ पर कई प्रकार की चित्तियाँ होती है। इसमें विष बहुत कम होता है।

असथन–हिं० संज्ञा पु० [?] जायफल–हिं०।

असनः–सं० पु०
असन–हिं० संज्ञा पु० } (१) विजयसार, बीजक: । (Pterocarpus marsupium, *Roxb* । देखो—बिजयसार । भा० पू० १ भा० वटादि व० (२) छाग कर्णवत् पत्रशाल वृक्ष विशेष, पीतशाल, पीतशाल: । प० मु० । असन, असना, आसन, । र० मा० रत्ना० । पियाशाल–हिं० Terminalia tomentosa *Bedd* । –बं० । अइन् असणा, वढि लुरिया–मह० संस्कृत पर्याय—परमायुधः (श), महासर्ज: सौरिः, वधूक पुष्पः, प्रियकः, बीजवृक्षः बीजकः, प्रियसालकः, अंजकर्णः, वनेसर्जः । 'असनो बीजकः कट्वाख्यः स्वनामाख्यातः ।"

सु० सू० ३८ अ० । गुण—कटु, उष्ण, तिक्त वातनाशक, सारक तथा गलदोष नाशक है। रा० वि० व० ६ । २३ कुष्ठ विसर्प, श्वित्र (कुष्ठ भेद) प्रमेह गुह्यकृमि, कफ तथा रक्तपित्त नाशक है और स्वच्य, केश्य तथा रसायन है। भा० पू० १ भा० वटादि व०। सि० यो० ता० य० चि० एलादिमन्थ, वृन्द०। 'निम्बासन शाल शारान्" वा० सू० १५ अ० असनादि व०। "असनतिनिश भूर्ज" भा० म० ४ भा० योनिरोग चि० "स्वर्जिकोग्रसनं त्र्यहम् देखो आसन (३) जीवकद्रुम। मे० नत्रिक। (४) बक वृक्ष, अगस्तिया (Agatigrandiflora) (५) वीरुतरु आदि क्षी०। (६) क्वेपण मे० नत्रिकम्।

नोट—आयुर्वेदीय निघन्टुकार प्रायः आसन और विजयसार दोनो का वर्णन संस्कृत शब्द असन के ही अन्तर्गत किए हैं परन्तु परस्पर बहुत कुछ समानता रखते हुये भी ये पृथक २ द्रव्य हैं। अस्तु इनका वर्णन यथा स्थान किया जायगा। आयुर्वेद असन उपर्युक्त दोनों संज्ञाओं के पर्याय स्वरूप प्रयुक्त हुआ है, जिनमें से (१) आसन, असना–हिं०। आसान, पियाशाल बं०। (Tetminalia tomentosa *W. & A.* ले० और (२) वि (वि) जय (जे) सार, बीजक, बीजा हिं० पीतशा (सा) ल बं०। Pterocarpus marsupium; *D. C* (Indian kino tree) ले० है।

इसके निर्यास को हिन्दी में बिजयसार निर्यास वा हीरा दोखी तथा अरबी में दम्मुल्अख्वैन हिंदी और लैटिन में Pterocarpus marsupium *D. C* (Gum of Indian kino) कहते हैं।

काइनो के पर्याय—दम्मुल् अख्वैन अ० हिं० खूने सियावशान फा० kino (The drug-Draggons' blood)

असन–अ० जल का स्वाद तथा गन्ध बदल जाना।

असन–अ० पुरातन वसा (Old fat)

असनपर्णिका,–र्णी–सं० स्त्री० (१) अपराजिता सं० वं०।

(Clitorea ternatea) मराठी अ० टी० भ०। (२) पटसन, रसुनिया घास।

असनपुष्प–कः–सं० पु० षष्टिक धान्य जाति भेद। साठीभेद सु० सू० ४६ अ०।

असनमल्लिका–सं० स्त्री० रामसर–हिं०। डायर माजी बं०। (Eechites dichotoma) इं० मे० मे०। देखो–भद्रवल्ली।

असना–सु०
असन– } असगंध अश्वगंधा (Withania somnifera) इं० मे० मे०।

–हिं० संज्ञा पु० [सं० अशन] एक वृक्ष जो शाल की तरह का होता है। इसके हीरकी लकड़ी दृढ़ और मकान बनाने के काम आती है तथा भूरापन लिए हुये काले रंग की होती है। इस पेड़ की पत्तियाँ माघ फाल्गुन में झड़ जाती

है। पीतशाल वृक्ष। (Terminalia tomentosa' *Bedd*)

असनादिगणः-सं० पु० पीतशाल, तिनश, भोजपत्र पूतिकरञ्ज, खदिरसार, कदर(खैरसार की आकृति-वाला श्वेतसार) शिरिष, शीशम, मेषशृंगी, त्रिहिम (चन्दनत्रय अर्थात् श्वेत, रक्त व पीत चन्दन),ताड़, ढाक, अगर, वरदारु, शाल सुपारी धवपुष्प, इन्द्रयव, अजकर्णी और अश्वकर्णी।

गुण—ये श्वित्र कुष्ठ, कफ, कृमिरोग पाण्डु-रोग, प्रमेह तथा मेद सम्बन्धी दोषों को दूर करते हैं वा० सू० १५ अ०।

असताप-सं० त्रि० संताप या क्लेशरहित। अथर्व०।

असन्धानकर-हिं० वि० पुं० संधान निवारक।

असन्न-अ० कक्ष दुर्गन्धि। वह मनुष्य जिसके कक्ष से दुर्गन्धि आती हो।

असव-अ० (ए० व०) अअ् साव (व० ब०) पै० पुट्ठा-उ०। नाड़ी, बोध तन्तु, ज्ञानतन्तु-हिं०। नर्व (Nerve)-इं०। देखो नाड़ी।

असव इश्तियाकी-अ० असुब अश्फ़ाकी। यह मस्तिष्क की चतुर्थ नाड़ी है जो मस्तिष्क से आरम्भ होकर नेत्र में चक्षु के वक्रोर्ध्व पेशी में समाप्त होती है। पैथेटिक नर्व (Pathetic Nerve) इं०।

असव ज़ाजिअ्-अ० असबुर्रियह् बल्मिअ्दह्, असव मुतह्य्यरह् लौटने वाला पुट्ठा। आमाशय फुफ्फुसीया नाड़ी, अस्त व्यस्त बोधतन्तु। (Pnumogastric nerve, Vagusnerve)

असवजौकी-अ० असुब लिसानी व बलऊंनी, जिह्वाकण्टनाड़ी। (Glossopharyngeal nerve)

असबनुखाई इज़ाफ़ा-अ० सौषुम्न सहायक नाड़ी (Spinal accessory nerve)-इं०।

असव बस्री-अ० असबन्री, असव मुजब्बफ, असवह मुजफ्रह्। चाक्षुषीया नाड़ी, आलोक सम्बन्धी नाड़ी, देखने की नाड़ी, दृष्टिनाड़ी। (Optic nerve)

असबमुजब्बफ-अ० असबह् मुजब्बफ़ह्। (Optic nerve) देखो—असव बस्री।

असबवजिही-अ० मौखिकी नाड़ी। (Facial nerve)

असब वर्की कबीर-अ० अंस्वह् अरीजह् महा कटिनाड़ी। (Great sciatic nerve),

असबवर्की सगीर-अ० लघु कटि नाड़ी, (Small sciaticnerve)

असब शम्मी-अ० उस्वतुश्शम्म। घ्राण नाड़ी। (Olfactory nerve)।

असबशिर्की-अ० असब हमदर्दी। पिंगल नाड़ी। (Sympathetic nerve)

असब समई-अ० असबतुस्समअ्। श्रावणी नाड़ियां (Auditory nerve)

असब सुलासी बज़ही-अ० त्रिपार्श्विका नाड़ी। (Trifacial nerve)

असबह्-अ० नाड़ी बोधतन्तु। (Nerve)

असबहे ज़ाइक़ह्-अ० स्वाद नाड़ी, जिह्वाकण्ठ नाड़ी (Glossopharyngeal nerve)

असबहे नूरियह्-अ० चाक्षुषीया नाड़ी, दृष्टि नाड़ी, (Optic nerve)

असबहे वासिरह्-अ० चाक्षुषीया नाड़ी, दृष्टि नाड़ी (Optic nerve)

असबहे मुज़ब्बफ़ह्-अ० दृष्टि नाड़ी (Olfactory nerve)

असबहे शाम्मह्-अ० घ्राण नाड़ियां (Olfactory nerve)

असबहे सामिअह्-अ० श्रावणी नाड़ियां Auditory nerve)

असबर-अ० नर चीता (A tigher)

असब(व)रग- } हिं० संज्ञा पु०
असवग- }

[फ़ा०] स्पृक्का। (See--Sprikka) खुरासान की एक लम्बी घास जिसमें पीले वा सुनहले फूल लगते हैं। सुखाये हुये फूलों को अफ़ग़ान व्यापारी मुलतान में लाते हैं, जहां वे अकलबेर के साथ रेशम रंगने के काम में आते हैं।

असवा-लबलाव भेद।

असवान-अ० खर्जूर भेद। (A kind of date)

असवाव-अ० (ब० व०), सबब (ए० व०) कारण, हेतु, निदान।

असमदृष्टि-हिं० स्त्री० (Astigmatism) दृष्टि दोष। ख़ललुल् बसर, खललुन्नज़र-अ०। ख़राबियेनज़र-फ़ा०। नजर की खराबी-उ०।

यह एक प्रकार का दृष्टि विकार है जिसमें एक ओर की दृष्टि तो ठीक होती है, परन्तु दूसरी ओर की दृष्टि में निकट दृष्टि वा दूर दृष्टि के विकार होते हैं। प्राचीन हकीमों ने इसका पृथक वर्णन नहीं किया, प्रत्युत इसे एक प्रकार का दृष्टिनैर्बल्य माना है।

असमंत-हिं० संज्ञा पु० [सं० अश्मन्त] चूल्हा।

असम-हिं० वि० [सं०] जो समया तुल्य न हो, जो बराबर न हो, असदृश।

असमनेत्र-हिं० वि० [सं०] जिसके नेत्र सम न हों विषम हों।

(२) दृष्टि दोष, देखो—असमदृष्टि।

असमबाण-हिं० संज्ञा पु० [सं०] पंचबाण, कामदेव।

असमवायीकारण-हिं० संज्ञा पु० [सं०] समवायी कारण का आसन्न कारण।

असमर्थता-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] सामर्थ्यहीनता दुर्बलता, निर्बलता।

असमशर-हिं० संज्ञा पु० [सं०] कामदेव।

असमानध्रुव-हिं० पु० (Unlike Poles)

असम्-अ० हाथ पाँव घना जाना।

असम्म-अ० वह नासिका जिसका छिद्र संकुचित हो।

असम्म-अ० (ए० व०), सुम्म (ब० व०) बधिर बहरा। (A deaf)

असर-हिं० संज्ञा पु० [अ० असर] (१) प्रभाव (२) दिन का चौथा पहर।

असरबक्का-असारून, तगर। म० अ०, फा० इ० २ भा०।

असरा-हिं० संज्ञा पु० [हिं० असाढ़] आसाम देश के कछारों में उत्पन्न होने वाला एक प्रकार का चावल।

असरी-अ० शाक भेद। (A sort of vegeitable)

असरा-नैपा० भूतकेश, लान्दचात-बम्बे०। बेबिना।

असरुः-सं० पु० भूकदम्ब, भूई, कदम्ब। कुकुरशोंडा बं०। (See-bhukadamba) श० च० (२) कुकरौंधा A plant (Celsia)

असरेली-सिंध० फ़राश-बं०। छोटी माई, लाल झाऊ-हिं०। (Tamarix auriculata; *Valil*) इं० मे० प्लां०।

असल-हिं० वि० [अ०] शुद्ध बिना मिलावट का। संज्ञा पु० दे० अस्ल।

असल-अस्तम्बर्दी, दख, दीस, लख, नस्ज, सूम, हमार, वज्रा। Bullrush (इं० हैं० गा०)

अस्(स्)ल-अ० सरह। चेकोनदी-ते०। (Cadaba Farinosa, *Forsk*) फा० इं० १ भा०। इं० मे० मे०। देखो—कैडेबा फैरिनोसा।

असलम्-सं० क्ली० (१) लौह। Iron (Ferrum) (२) अस्त्र। (A weapon in general) वै० निघ०।

असला-हिं० संज्ञा स्त्री० सर्प भेद।

असलियह्-अ० सल्अह् लय्यिहनह्। नर्म रसौली का एक भेद है जो दबाने से दब जाती है, किन्तु पुनः उभर आती है। (Softfibroma) देखो—सल्अह लय्यिहनह।

असलिया-बम्ब०, गु० चन्द्रसूर, अहलीव। (Lepidium sativum) इं० मे० मे०।

असवः-सं० पु० प्राण, जीव, अथर्व०।

असह-हिं० संज्ञा पु० हृदय-डिं०।

असा-अ० बलह, कसूस।

असाअस-अ० साही, सेही-हि०। ख़ारपुश्त-फ़ा०। (A porcupine)

असाइफिल-इं० देखो—एटॉक्जिलेट।

असाउर्राई-अ० बीजकन्द, केसरी, हिं०। बतवात

(Polygonum auriculare, *Linn*) फा० इं० ३ भा०, म० अ०।

असाक़ल-
असक़ल- } अ० कुमात (खुम्बी) Agaricus

असक़ क़ रू० जुर्दालू। देखो—खूबानी।

असाग़ाह्-अ० आहार अर्थात् खाद्य एवं पेय का कण्ठ से नीचे उतरना।

असाग़ावह्-अ० औषध का अनुभव तथा निर्माण-क्रम।

असाढ़-हिं० संज्ञा पु० [सं०] आषाढ़ का महीना, वर्ष का चौथा महीना।

असाढ़ी-हिं० वि० [सं० आषाढ़] अषाढ़ का।
संज्ञा स्त्री० (१) वह फसल जो अषाढ़ में बोई जाए, खरीफ।

असातुन्नहल-अ० शहद, मधु। Honey(Mel)

असातून-अ० मद्यभेद। वह सुरा जो अंगूर के पानी शहद तथा कतिपय उष्ण औषधियों के योग द्वारा निर्मित होता है।

असात्म्यः-सं० त्रि०
असात्म्य-हिं० संज्ञा पु० } प्रकृत्यसुखावह, प्रकृति विरुद्ध पदार्थ, वह आहार विहार जो दुःखकारक और रोग उत्पन्न करने वाला हो।
-क्ली० सात्म्य विपरीत।

असाध्य-हिं० वि० [सं०] (१) आरोग्य होने के अयोग्य। जिसके अच्छे वा चंगे न होने की सम्भावना न हो। जैसे—यह रोग असाध्य है। (२) जिसका साधन न हो सके, न करने योग्य दुष्कर, कठिन।

असान-मह०, बम्ब० विजयसार(-क)। (Pterocarpus marsupium, *Roxb*) फा० इं० १ भा०।

असान-मह०, कना० खरका, खम्कना, खाज-हिं०। (Bricdelia Retosa, *Spreng*) फा० इं० ३ भा०।

असानो-बम्ब० खाजा-हिं०। कर्नानेलिया। (Briedelia montana)

असान्दु-मह०
असान्धु-मह० } अश्वगन्धा
असगन्ध। (Withania Somnifera)

असाफ़ीर-अ० रोदे, आँतें, अतड़ियाँ-उ०। आन्त्र-हिं०। (Intestines)
नोट—असाफ़ीर का शाब्दिक अर्थ पक्षी व चिड़ियां हैं। चूँकि उदर की अन्तड़ियों में जब क़राक़र आटोप) होता है तब ऐसा शब्द उत्पन्न होता है, जैसा कि पक्षियों का। इस कारण आन्त्र को उक्त नाम से अभिहित किया गया।

असाब-अ० हरिण। (Deer))

असाबअ
असाबीअ } -अ० (ब० व०), अ० स्वअ (ए० व०) अंगुश्तान, अंगुलियाँ। (Fingers)

असाबअ कन्यान-अ० फ़रञ्जमिश्क, रामतुलसी, अम्बज-हिं०। (Ocimum gratissimum)

असाबअ ग़ुदादी-अ० एक लम्बे प्रकार का अंगूर।

असाबअ फ़ऊन-अ० एक प्रकार का पाषाण है जो थमन अमान देश में पैदा होता है।

असाबअ हुमैस-अ० सुरिञ्जान पुष्प। Hermodactylus, (Flower of)

असाबइरसानी-अ० एक बूटी की जड़ है जिसका रंग हरित तथा श्वेत मिश्रित होता है।

असाबइल् उसूल-अ० तृण तथा वृक्ष के बीच की एक प्रकार की बूटी है। वह एक गज ऊँची तथा पुष्प व कलिकायुक्त होती है।

असाबइल फ़तियात-अ० तुख्म बालंग, क़रनफ़ले-बुस्तानी (अबुहनीफ़)। Calamintha clinopodium *Benth*, (The wild Basil) फा० इं० ३ भा०।

असाबइल् मलिक-अ० इक्लीलुल् मलिक। (Melilotus offrcinalis)

असावइस्सफर–अ० हंसपदी, गोधापदी। (Vitis pedate)

असाबीअ–अ० (व० व०), अस्बअ (ए० व०), अंगुलियाँ। (Fingers)

असाबीअ–अ० (व० व०) उस्बूअ (ए० व०) एक सप्ताह, सात दिवस, सात वार।

असामयिक–हि० वि० [सं०] जो समय पर न हो जो नियत समय से पहिले वा पीछे हो। विना समय का। वेवक्त का।

असामर्थ्य–हि० संज्ञा स्त्री० [सं०] (१) शक्ति का अभाव। अक्षमता। (२) निर्बलता। ना ताकती।

असामूसा–अ० लाल साग।

असारम्–सं० पु० क्ली०
असार–हिं० संज्ञा पु०

(१) कांष्ठ अगुरु चन्दन। (A kind of Agar) रा० नि० व० १२। (२) अगुरु, अगर (Aloe wood)। (३) जैपाल, जमालगोटा (Croton tiglium, *Linn*) (४) एरण्ड वृक्ष, (अरण्डी) रेंड़ी का पेड़। (Ricinus communis, *Linn*) श० च०।

असार–हिं० वि० [सं०], (१) सार रहित। निःसार। (२) शून्य। खाली। संज्ञा पु० दे० असारम्।

असार–
असारह–
} अ० भेड़िया। (A wolf)

असार राई–अक्षुवार। (Polygonum bistorta)

असार दधि–सं० क्ली० नवनीत अर्थात् मक्खन निकाले हुए दूध से जमाया हुआ दही।

गुण—असार दधि ग्राही, शीतल, वातकारक हलका, विष्टम्भी, दीपन, रुचिकारक तथा ग्रहणी रोगनाशक है। भा० पू० दधि व०।

असारवका, कालन–इं० असारून, तगर।

असारा–सं० स्त्री० कदली वृक्ष, केला। Plantain (Musa sapientum) वै० निघ०।

असारून–अ० सि० तगर भेद, पारसीक तगर। तुक्किर–हिं०। (Asarum Europæum)

हीवेर वा जटामांसी
(*N. O. Valerianeœ*)

उत्पत्ति-स्थान=फ़ारस, अफ़ग़ानिस्तान तथा भारतवर्ष। भारतवर्ष में इसका आयात अफ़ग़ानिस्तान से होता है।

नोट—तगर, हीवेर तथा जटामांसी प्रभृति एक ही वर्ग की औषधियाँ है और परस्पर इनमें बहुत कुछ समानता है। अतएव कतिपय ग्रन्थों में इसके निश्चीकरण में बहुत भ्रम किया गया है। इसके पूर्ण विवेचन के लिये देखो—तगर वा हीवेर।

वानस्पतिक-वर्णन—यह एक बूटी है जिसके पत्र लवलाव अर्थात् इश्क़पेचा के पत्र के समान होते हैं। भेद केवल यह है कि इसके पत्र क्षुद्रतर एवं अतिशय गोल होते हैं। इसके पुष्प नील वर्ण के, पत्तों के बीच में जड़ के समीप होते है। इसके बीज बहुसंख्यक और कुसुम्भ बीजवत् होते है। इसकी जड़े चीण, ग्रथियुक्त और सुगंधि युक्त होती है। (औषधों में यह जड़ही काम में आती हैं)।

प्रकृति—द्वितीय कक्षा के अन्त में उष्ण व रूक्ष है। किसी किसी ने तीसरी कक्षा में उष्ण एवं द्वितीय कक्षा में रूक्ष और किसी ने तीसरी कक्षा में में रूक्ष लिखा है। स्वरूप-पीताभ। स्वाद-तीक्ष्णतायुक्त वा बेस्वाद। हानिकर्त्ता—फुफ्फुस को। दर्पघ्न—ममेज़ मुनक्का। प्रतिनिधि-कुलिञ्जन एवं शुंठि। मात्रा-१ माशे। प्रधान कर्म—मस्तिष्क बलप्रद और शीत प्रकृति को उष्मा प्रदान करता है।

गुण, कर्म, प्रयोग—इसमें काफ़ी उष्मा होती है। अतएव यह यकृद्वरोधोद्घाटक है। यह प्लीहा काठिन्य को दूर करता है, क्योंकि अपने उष्णता के कारण यह उसकी सख़्ती के माद्दे को घुलाता है। इसी हेतु पुरातन कूल्हे के दर्द (बजूउल वरिक) एवं वात-तन्तुओं के शीत जन्य रोगों को लाभप्रद है। मूत्र एवं आर्त्तव का

प्रवर्त्तन करता है, क्योंकि इसमें द्रावक (तल्-तीफ़) एवं विलायन (तह्लील) की शक्ति पाई जाती है (नफी०)

यह तारल्यताजनक है एवं ऊष्मा को बढ़ाता है तथा शोथ एवं वायुको लयकर्त्ता, मस्तिष्क, आमाशय, यकृत, वाततन्तुओं, प्लीहा एव वृक्क को बल बदान करता है। पित्तज एवं श्लेष्मज माद्दा को मल द्वारा उत्सर्जित करता तथा जीर्णज्वर को दूर करता और मूत्र व आर्त्तव की प्रवृत्ति करता है। म० मु०।

उपयुक्त औषधों के साथ वा अकेले इसकी पीना अपस्मार, अदित; पक्षाघात, इस्तरखा (वातग्रस्तता), श्लेष्मज आक्षेप, अवसन्नता, मस्तिष्क एवं बोधक तन्तुओं की उष्णता एवं शक्ति के लिये हितकर है। गर्भाशय सम्बन्धी शिरःशूल एवं विस्मृति को लाभप्रद है। आन्तरिक शूल प्रशामक, जलोदर, अवरोध जन्य पांडु यकृत एवं प्लीहा शोथ के लिये उत्तम, गर्भाशय शोथक एव मूत्राशय वृक्काश्मरी तथा वस्त्य श्मरी को लाभप्रद है। आर्त्तव एवं मूत्ररोध, संधिवात, पार्श्वशूल, ग्रध्रसी, और निकरस को लाभप्रद है। बकरी वा ऊँट के दूध के साथशीत काम शक्ति का उद्दीपन कर्त्ताहै। मधुवारि (माउल् अस्ल) केसाथ एक मिस्काल (४॥ मा०) की मात्रा में रेचक है इसके तेल के सूंघने से विस्मृत रोग नष्ट होताहै। इसका अञ्जन कर्निया की बीमारियों को, इसका अवचूर्णन वृश्चिक दंश को और वंक्षण एवं पेडू पर इसका प्रलेप काम शक्ति के बढ़ाने में परीक्षित है। बु० मु०।

असारून अस्फर–सिरि० आस वर्री, जंगली हब्बुल आस का वृक्ष।

असारून कैण्डेन्सी–ले० रीशए. वालाफा०-फा०। असारून, सिरि०।

असारूनयुरोपियअम्–ले० असारून, तगर भेद।

असारूने हिन्दी–फा० तगर (पादिका)म्. सुम्बुल जिब्ली-अ० (Valeriane wallichii D. C.)

असारूम युरोपिअम्–ले० तुक्किर-हिं०। असारून अ०। मेमो०।

असालस–यू० फ़ासरा अ०। शिवलिंगी हिं० (Bryonia laciniosa)

असाला–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अशालिका] हालों चसुर।

असालिया–गु०' वम्ब० } चन्द्रसूर। (Lepedium sativom)
असालियो गु० }

असालीज–अ० बारीक शाखाएँ या वेलें जो वृक्षों पर लिपटती हैं।

असालूँ–जयपु० चन्द्रसूर। (Lepidium sativum)

असाल्यूँ–जय० चन्द्रसूर (Lepedium sativum)

असावरी–हिं० संज्ञा स्त्री० कबूतर, कपोत (A kind of pigeon)। (२) तूल (रूई) वस्त्र भेद। (A kind of cottoncloth)

असास–अ० बुनियाद, जड़, नीवँ उ०। फाउण्डेशन (Foundation) इं०।

असास–अ० भेड़िया (A wolf)

असासनू–कहज। (Straw-berry) इं०। (Fagaria Indica) ले०। इं० हैं० गा०।

असि–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] खग, तलवार, खांडा कटार (A sword' a scimitar)

असि–वर० (ऐ० व०) असिमियाआ–या संयुक्ताक्षरों में (जि. "ब० ब०', जिमियाआ) गुठली, अस्थि। (Nut stone) स० फा० इं०।

असिकम्–सं० क्ली० } चिबुक और ओष्ठ का
असिक–हिं० संज्ञा पु० } मध्यभाग। होंठ और ठुड्डी के बीच का भाग। हे० च०।

असिक्निः–सं० (१) गहरे कृष्ण रंग की गाय। (२) पृथ्वी। अथर्व० सू० १३०। २ का० २०

असिक्निका,कूनी-सं० स्त्री० अवरुद्धान्तः पुर सेवी, अन्तःपुर में रहने वाली वह दासी जो वृद्धा न हो मे० नत्रिक० दासी । जटा० ।

असिगण्डः-सं० पु० क्षुद्रोपाधान । जटा० ।

असितः-सं० पु०
असित-हिं० संज्ञा पु० } (१) धववृक्ष, धातकी धओया गाछ-बं० । (Woodfordia floribunda) र० मा० । रत्ना० । क्ली० (२) काष्ठ अगुरु (A kind of Agar) वै० निघ० । (३) पिंगला नाम की नाड़ी । (४) कालसर्प । अथर्व० । सू० ४ । १३ । का० १० (५) एक प्रकार का सर्प । अथर्व० सू० १३ । ५ । का० ५-त्रि, (हिं० वि०) जो सफेद न हो कृष्ण वर्ण । काला । (Black)

असितकमू-सं० क्ली० काष्ठगुरु । (see-kasht haguru) भा० म० २ भा० आ० वा० ।

त्रि० (हिं० वि०) जो सफेद न हो कृष्ण वर्ण काला । (Black)

असितका-सं० स्त्री० कृष्णअपराजिता नीलअपराजिता वं० काली गोकर्णी-मह० । वै० निघ० ।

असितकादि चूर्णम्-सं० क्ली० आमवातघ्न चूर्ण विशेष ।

असिताङ्ग भैरवो रस-सं० पु० पारा, गन्धक, हरताल प्रत्येक समान भाग लेकर धतूरे के रस से भावित करे । फिर पारेके बराबर वत्सनाग लेकर उसके क्वाथ से ३ भावना दे इसी तरह त्रिकुटा के क्वाथ और बिजौरे के रस की एक एक भावना दें ।

मात्रा—१ रत्ती ।

गुण—सन्निपात, नव ज्वर, दष्टविष, और विशेषकर वातज्वर में अदरख के रस के साथ दें रस० यो० सा० ।

असितज फलः-सं० पु० नारिकेल वृक्ष, नारियल । (Cocos nucifera) वै० निघ० ।

असित तिलः-सं० पु० कृष्ण तिल, काला तिल । (Sesamum nigrum) च० द० अर्श चि० ।

असितद्रुमः-सं० पु० कृष्ण ताल, काला ताड़ । (Borassus flabellformis) वै० निघ० ।

असित पल्लवा-सं० स्त्री० भूमि जम्बु, भुई जामुन, नदी जम्बू वृक्ष ।

असितफल-सं० पु० मधु नारिकेल । (A kind of cocoanuttree)

असितम्-सं० क्ली० वा० सं० १६ ८६ सफेद कोढ अथर्व० सू० २३ । ४ । का० १ ।

असितवल्ली-सं० स्त्री० नीलदूर्वा, नीली दूब । (Cynodon dactplon) वै० निघ० ।

असित वेत्रम्-सं० क्ली० श्यामालता, कृष्ण सारिवा (Ichnocarpus-frutescens) वा० र० अमृतादि कषाय ।

असित सारः कः-सं० पु० तिन्दुक वृक्ष, तेंद । (Diospyros cordifolia) वै० निघ०

असिता-सं० स्त्री० (१) ह्रस्वनीली वृक्ष (A small var of Indigo plant) रा० नि० व० ४ देखो—असिका (२) कालातिविषा काली निशोथ (Turpethumnigrum) त्रि० कृष्ण वर्ण काला, काले रङ्ग का । अथर्व० ।

असितांग-हिं० वि० [सं०] काले रंग का ।

असिताङ्गनी-सं० स्त्री० कृष्ण कपास काली कपास (Gossypium njgrum) रा० नि० व० ४, देखो—कालाङ्गनी ।

असितानन-सं० पु० कपि वानर (A monkey) हे० च० ।

असितावल मोटा-सं० स्त्री० कृष्ण जयन्ती, काली जयन्ती, काल जयन्त वं० Sesbania aculeatia (The black var of)

गुण—कृष्ण जयन्ती रसायनको करने वाली है । इसके अन्य गुण जयन्ती के गुण के समान हैं । वै० निघ० ।

असिताभ्रशेखरः-सं० पु० नीली वृक्ष, नील (Indigofera Indica) त्रिका० ।

असिताह्वया-सं० स्त्री० (१) नील दूर्वा, नीली दूब (Cynodon dactylon) (२) श्वा,

मलता (Ichnocarpusfrutescens) वै० निघ० ।

असितालु-सं० पु० नील आलु, नीले रंग का आलु रा० नि० व० ७ ।

असितोत्पलम्-सं० क्ली० नीलोत्पल (Nymphæa stelata) रा० नि० व० १० ।

असितः-सं० पु० वरुण, वेहतर, अरुणा ।

असिदंष्ट्रः,-कः-सं० पु० मकर (See makarah) त्रिका० ।

असिदन्तः-सं० पु० (१) मकर । (See makar) । (२) कुम्भीर, घड़ियाल । (The crocodile of the Ganges) वै० निघ० ।

असिद्धः-सं० त्रि०
असिद्ध-हिं० वि०

वेपका आम, अपक्व, कच्चा, रत्ना० ।

असिधेनुः,-कः-सं० स्त्री० (A knife) छुरिका । (See chhurikā) इ० रा० हे० च० ।

असिपत्रः-सं० पु०
असिपत्र-हिं० संज्ञा पु०

(१) सेहुण्ड वृक्ष, थूहर (Euphorbia nerrifolia) भ० द० व० १ । (२) इक्षु, ईख । Sugarcane (Saccharum officinarum) प० मु०, त्रिका० । (३) गुण्ड तृण विशेष, कसेरू, (Scirpus kysoor) See-Gundah रा० नि० व० ८ । (४) "क" श्वेत दर्भ । (See-shveta darbhah) रा० नि० व० १४ ।

असिपत्र तृणम्-सं० क्ली० गुण्डा तृण, तृण विशेष । गुण्डागवत-मह० । रा० वि० व० ८ ।

गुण—शीतल, मधुर, कफ वातनाशक, रक्त दोष, अतिसार तथा परम दाहनाशक है । यह दीर्घ व लघु भेद से दो प्रकार का होता है, इसमें दीर्घ गुण में अधिक है, वै० निघ० ।

असिपत्रिका-सं० स्त्री० केवड़ा, केतकी । (Pandanus odoratissimus)

असिपुच्छः-कः-सं० पु०
असिपुच्छ-हिं० संज्ञा पु०

(१) जलचर विशेष । मगर, शुशुक-बं० । (A kind of aquatic animal) (२) सकुची मछली जो पूंछ से मारती है । हारा० ।

असिप्ररोहः-सं० पु० (Xiphoid process) असिप्रवर्द्धन । नुतूअ खंजरी-अ० ।

असिम-अ० ।

असिमिनाट्रिलोबा-ले० पपीते के बीज । पपीता सीड इं० ।

असिमेदः-सं० पु० खदिर चुप, विट् खदिर, दुर्गन्ध खैर । गुयेबाबला-बं० । खैरा चे झाड़-मह० । (Acacia Farnesiana, *Willd*) श० र० ।

असिय्यु-अ० चिकित्सित, चिकित्सा किया हुआ, वह मनुष्य जिसकी चिकित्सा की गई हो ।

असिर-अ० कठोर, कठिन होना, दुःसाध्य । डिफिकल्ट (Difficult) इं० ।

असिरेकी-तै० आमला (Phyllanthus emblica)

असिशिम्बी-सं० स्त्री० गोजिया सेम, खड्गशिम्बी, रा० नि० ।

असी-वर० सेंगरी गोंद ।

असीउरः-अ० लाल साग, राजगिरि, रामदाना ।

असीतिका-सं० स्त्री० विष्णु क्रान्ता । केय दे० नि० ।

असीतिका-सं० स्त्री० कुकरौंधा (Blumea lacera)

असीद-अ० वक्र ग्रैव, टेढ़ी गर्दनवाला ।

असीदह-अ० एक प्रकार का हलुआ ।

असीनूब-फा० एक प्रसिद्ध वृक्ष है । (An unimportant tree)

असीफ़-अ० जो तनिक सी बात में दुखी हो जाए, वात प्रकृति का । नर्वस (Nervous) -इं० ।

असीफरह –
असीफीरह – } अ० एक पीत वस्तु है।

असीब–अ० खजूर भेद। (A kind of date)

असीम–अ० (१) स्वेद, मैल कुचैल। (२) निशान, प्रभाव।

असीम और अर्क का भेद—स्वेद को अर्क और जब वह शुष्क हो जाय तो उसे असीम कहते हैं।

असीर–अ० स्वरस, निचोड़, रस–हि०। Juice (Succus)

असीर कुप्पी–अ० कुप्पी स्वरस। (Succus acalypha)

असीर तरञ्जील–अ०

असीरबञ्ज–अ० पारसीक यमानी स्वरस (Succus hyocyami)

असीर मिअदी–अ० रतूबत मिअदी, आमाशयिकरस रतूबत मेदा। (Gastric juice)

असीर यबरूज–अ० बिलाडोना स्वरस। (Succus Belladona)

असीरलेमूँ–अ० नीबू का रस, निम्बुक स्वरस। (Succus limonis)

असीर शौकरान–अ० शौकरान या कोनाइम स्वरस (Succus conii)

असीर सित्रुल् असद–अ० जंगली कासनी का रस (Succus taraxaci)

असील–अ० हस्ति शिश्न, हाथी का लिंग। (Elephant penis)

असीली सक्रान–रू० पाषाणभेद। (Coleus aromaticus)

असीस–अ० लगन, तसला, वह बर्तन जिसमें वस्त्र धोकर डालते हैं या जिसमें वस्त्र को धोते हैं। (Tray)

असु:–सं० पु०
असु–हिं० संज्ञा पु० } (१) प्राण, प्राणवायु। (Life breath, the five vital breaths or airs of the body) अम०। –क्री० (२) चित्त। (Mind) उणा०।

असुखम्–सं० क्री० दुःख। (Pain, grief) हे० च०।

असुद–सं० पीपल, अश्वत्थ (Ficus religiosa) फा० इ० ३ भा०।

असुधारणम्–सं० क्री० जीवन, जीवन धारण।

असुन्धा–गु० असगन्ध, अश्वगन्धा। (Withania somnifera) इ० मे० मे०।

असुपाला–बम्ब०, गु० अशोक। (Saraca Indica, *Linn*) फा० इ० १ भा०।

असुरम्–सं० क्री० (१) समुद्र लवण। (Sea-salt) मद० व० २। पु० (२) देवदारु वृक्ष (Cedrus deodara)। वै० निघ० जीर्णज्वरे व्रणादि०।

असुर–हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) रात्रि, (२) पृथिवी, (३) सूर्य, (४) बादल, (५) वैद्यक शास्त्र के अनुसार एक प्रकार का उन्माद जिसमें पसीना नहीं होता और रोगी ब्राह्मण, गुरु, देवता आदि पर दोषारोपण किया करता है उन्हें बुरा भला कहने से नहीं डरता, किसी वस्तु से उसकी तृप्ति नहीं होती और वह कुमार्ग में प्रवृत्त होता है।

असुर–काश० राई, सर्षप। (Sinapis racemosa, *Roxb*) इ० मे० प्रा०।

असुर–सं० पु० "असुप्राणान् रक्षयति पालयति इति असुरो वैद्यः" अर्थात् जो प्राणों की रक्षा करे प्राणदाता। प्राणाः तं, वैद्य, अथर्व०।

असुरग्रहः–सं० पु० भूतग्रह विशेष। मा० नि०।

असुरसा–सं० स्त्री० बबरी, वन तुलसी। बासुई तुलसी–व०। (Ocimum basilicum) र० मा०।

असुरा–सं० स्त्री० (१) रजनी, रात्रि, रात (Night) (२) हरिद्रा। (Curcuma longa) मे० रत्निक।

असुरादि अञ्जन-सं० पु० काँसा के मैल का चूर्ण और कस्तूरी मधुयुक्त कर अञ्जन करने से सन्निपात को बेहोशी और तन्द्रा दूर होती है।

असुराह्वम्-ह्व-सं० क्ली० स्त्री० कांस्य, कांसा। (Bronze) हे च०।

असुराह्वपतङ्गः-सं० पु० तेलपायी, तैलपायिका। तेलापोका, आशोला-बं० "असुराह्व पतंगस्य विट् चूर्णं मधु संयुतम्,' वैद्यकम्।

असुराह्वविट्-सं० पु० कांस्यमल कांसे का मैल वै० निघ० २ भा० ज्वर अशुराद्यञ्जन।

असुरी-सं० स्त्री० राजिका, राई। राइ सरिषा-बं०। (Brassica Jumcea) अ० टी० भ०।

असुरु-नेपा० तगर। (Tadernaemontana coronaria)

असुव-अ० व्रण प्रभृति पर मलहम का फाहा रखना व्रण की चिकित्सा करना।

असुस्थः-सं० त्रि०
असुस्थ-हिं० वि० पु० } रोग ग्रस्त रोगी। (Sick)

असूई-हिं० स्त्री० अरुई। (Arum nymphacifolium) इं० है० गा०।

असूतिका-वह गंडमाला जिसमें पीप न पैदा हुई हो अथ०।

असूपा कारद-सं० फीकी।

असोई-हि० स्त्री० अरुई। (Arum nymphacifolium) इं० है० गा०।

असंकोचनीय-सं० पु० जो दबाने योग्य न हो जो न दबे (Incompressible) अथर्व०।

असृक-सं० क्ली०, हिं० संज्ञा पु० (१) स्पृक्का नामक गन्ध द्रव्य See-sprikka (२) कुंकुम, केशर। Saffron (Crocussativus) रा० नि० व० ११। (३) रक्त, रुधिर, शोणित (Blood) रा० नि० व० १८।

असृकरः-सं० पु० शरीरस्थ रस धातु, रस। (Chyle) हे० च०।

असृक्पः-पा-सं० पु० स्त्री० जलायुका जलौका, जोंक Leech (Airudo) अ० टी० भ०।

असृगुत्थः-सं० पु०, क्ली० केशर saffron (Crocus sativus)

असृग्गदः-सं० पु० कोष्ठ (Seekoshtham) वै० निघ०।

असृग्दरः-सं० पु० (Menorrhagia) रक्त प्रदर मा० नि०। सु० शा० २ अ०। देखो—प्रदर।

असृग्दर शैलेन्द्र रसः "सर्व्वाङ्ग सुन्दरः-सं० पु० रक्त प्रदरोक्त रस विशेष।

असृग्ध (ग्धा) रा-सं० स्त्री० चर्म, त्वचा। (Skin) अ० टी० भ०।

असृणम्-सं० क्ली० स्वर्णगैरिक; सोनगेरु हिं० सुवर्ण गिरि माटी बं० Red ochre (Ferrum haematite) वै० निघ०।

असृतम्-सं० त्रि०असिद्ध अपक्व रसा०।

असृपाटी-सं० स्त्री० रक्त धारा, अ० टी० सा०।

असेक-कुटज, अशोक (Saraca Indica)

असेन्दा-हिं० तिक्त, स्वाद

अ (ए) सेप्टोल-इं० कार्बे कार्म्ल वा गंधकाम्ल (sulpho-carbolic Acid) देखो—कार्बेलिकाम्ल (Acidum Carbolicum)

असेप्टोल-
अम्रस्टोल- } इं० यह धूसर वर्ण का एक चूर्ण जो कि जल और मद्यसार में सरलतापूर्वक लय हो जाता है देखो—नेफ्थोल।

असेरेकी-बे० आमला (Phyllanthus Emblica)

असेलू-नेपा० गोम्बी। मेमो०

असैङ्-बर० सैंसि, सेञ्जि हरित, हरा (Green) स० फा० इं०।

असोक-हिं०, बम्ब०, ते० (१) देवदारी मेमो०। हिं० संज्ञा पु०, कना०, (२) असोक आसापाल (Jonesia asoca' *Linn*) (३) शांति, शोकरहितता। (Easearanquility)

असोका-हिं- असोक (Saraca indica, *Linn*)

असोकदा-कना० असोक (Saraca indica, *Linn*) इं० मे० मे०

असोग-हिं० पु० (१) A tree (Uvaria longifolia) (२) शांति, शोकरहितता (Ease Tranuility)

असोज-हिं० संज्ञा पु० [सं० अश्वयुज्] अश्विन क्वार (The sixth solar month)

असोत्थापिकापेशी-हिं० संज्ञा स्त्री० (Levafer Scapulæ)कन्धेको उठाने वाली पेशी।

असोथी-ता० अशोक (Saraca indica *Linn* मेमो०

असौंध-हिं० संज्ञा पु० [अ=नहीं हिं० सौंध=दुर्गन्ध] दुर्गन्ध। बदबू।

असोरा-बालछड़। (Nardostachys Jatamansi)

असअस-
अस्आस-
असास- } अ० भेड़िया। (A wolf)

अस्ईरा-विन्दाल, वण्डाल, देवदाली (Ecbellium elatarium)

असक़ङ्कर-अ० देखो—सकंकु।

अस्कतान-अस्कत्युल्फर्ज-अ० (१) अस्कतान। गर्भाशय की दोनों ओर (२) इस्कतान अर्थात् भग के दोनों किनारे या भग की दोनों ओर

अस्कनह्-अ० मि स्कव, बरमा, रुखानी, छिद्र करने का यन्त्र गिमलेट Gimlet इं०

अस्क़न्न-मद्य: सुरा (Wine)

अस्कन्दरूस-रू० (१) प्याज(Onion)(२) लहसुन (Garlic)

अस्कलिया तीकूस-यू० गुलनार (Punica granatum, *Linn*)

अस्क़लानुर्रास-अ० अअ्लाए सर, चँदिया।

अस्कली नूस-अ० एक अप्रसिद्ध बूटी है जो रेतेली पर्वतीय भूमि पर उगती है।

अस्क़लीव्यूस-यू० (Asclepios) यह चिकित्सा कला का आविष्कर्ता एवं सर्व प्रथम प्रसिद्ध निपुण यूनानी चिकित्सक है।

अस्कामूतगम्-ता० अजमोद (Carum Roxburghianum' *Benth*) मेमो०।

अस्कुट-लेदक फलञ्ज; नगकी चनाव० राइबीज ऑरिएण्टेली (Ribesorientale' *Pir*) रा० बाइलोसम (R· Villosum' *Wall, Roxb*;) ले० ग्वालदोख, कघक, कघन-उ० ब० सु०· यगे (स्प्रिट)।

(*N' O' Saxifiageœ*)

उत्पत्ति स्थान—काशमीर, वत्तिसथाना।

प्रभाव तथाउपयोग—इसका फल (Berry)एक या दो संख्या में एक समय खाने से ग्रामीण लोगों के विचारानुसार यह उत्तम विरेचक है। इं० मे० प्लां०।

अस्क़ुल-
अ़साक़ुल- } अ० कुमात खुम्बी। (Agaric)

अस्क़ुलह्-अ० सफेद संगरेजा।

अस्खार-रु० तोदरी। (Lepidiumiberis, *Linn*)

अस्जद-अ० सुवर्ण, सोना। Gold (Aurum)

अस्टिलेगा मैडिस-ले०। कॉर्न स्मट (Corn smut) कॉर्न अर्गट (Corn Erogt)-इं० बन्ध्या मकाई, भुट्टा का कण्डो (लीढ़)-हिं०।

उत्पत्ति स्थान—भुट्टा (Zea mays) का पराश्रयी कीटाणु।

प्रयोगांश—तुषरहित फङ्गस।

रासायनिक-संगठन तथा लक्षण— ये विषम गोलाकार समूह रूप में जो कभी कभी छः इञ्च मोटे होते हैं, पाए जाते हैं। इन पर एक स्याही मायल झिल्ली होती है, जिसके भीतर असंख्य, श्याम धूसर वर्ण के गोलाकार लघु ग्रंथिवत् दाने (बीज) होते है।

गंध तथा स्वाद—अप्रिय। इसमें एक डड़न शील क्षार, एक स्थाई तैल और एक स्क्लोरोटिकाम्लवत् ऐन्द्रियकाम्ल इत्यादि होते हैं।

औषध-निर्माण—विचूर्णित कॉर्न अर्गट-१० से २० ग्रेन (=५-१० रत्ती), तरल सत्व—१० से २० मिनिम (बूंद)।

प्रयोग—अर्गट ऑफ राई के समान औष धीय गुण-धर्म में, जिसके यह बहुत समान है तथा जिसे बहुत से चिकित्सक तत्तुल्य लाभदायक और अर्गट ऑफ राई की अपेक्षा अपने प्रभाव में अधिकतर अनुरूप मानते हैं, यह उत्तम गर्भशातक एवं रक्तस्थापक गुणपूर्ण है इसके द्वारा उत्पन्न गर्भाशयिक आकुंचन सदा विरामसहित होता है तथा अर्गट के समान लगातार का बल्य नहीं होता। वैसिव रक्तस्राव में अर्गट की अपेक्षा यह श्रेष्ठतर ख्याल किया जाता है और शुक्रमेह, विसर्पिका (Psoriasis) आर्द्र कंडु (Eczema) तन्तुमय अर्बुद और तत्तुल्य व्याधियों में भी यह लाभदायक विचार किया जाता है। पी० वी० एम०।

अस्तम्-सं० क्ली०
अस्त-हिं० संज्ञा पु० } मृत्यु। (Death) हे० च०।—वि० हि० नष्ट। ध्वस्त।

अस्तन-हिं० संज्ञा पु० दे० स्तन।

अस्तबल-हिं० संज्ञा पु० [अं०] घुड़साल। तबेला, (A stable)

अस्तबूब-फ़ा० एक वृक्ष है।

अस्तमती-सं० स्त्री० शालपर्णी। (Hedysarum gangeticum) श० र०।

अस्तमन वेला-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] सायंकाल, सन्ध्या का समय।

अस्तमित-हिं० वि० [सं०] (१) नष्ट। मृत। (२) तिरोहित। छिपा हुआ।

अस्तर-हिं० संज्ञा पु० [फा०] सं० स्तृ=आच्छादन, तह] (१) नीचे की तह वा पल्ला। भितल्ला। उपल्ले के नीचे का पल्ला।

अस्तर-फा० खच्चर। (A mule)

अस्तुरक-फ़ा० सिलारस। (Common storax)-इं० । इं० हैं० मा०।

अस्तरखा-लाल हरताल (मैनसिल वा मनःशिला) (Realgar)

अस्तरङ्ग-फा०
अस्तरज-मुअ० } यम्रूज, बिलाडोना। Belladona (Mandragora officinalis) इं० हैं० मा०।

अस्तरा-हिं० पु० आप्टा। See-apta।

अस्तराई-तु० गोलमिर्च। (Black pepper)

अस्तरून-अ० गुलाब भेद, गुलेन खो। (Rosa rubiginosa) इं० हैं० गा०।

अस्तलस-यू० क़ुक़रुल यहूद। kind of stone

अस्तलोबान-हिं० संज्ञा पु० सिलारस। (Western frankincense) म० अ०। फा० इ० १ भा०।

अस्ताकीस-फ्रां० एक बालिश्त के बराबर (ऊँची) एक अप्रसिद्ध बूटी है।

अस्ताते सुब-फा० शीशक शर्करा, शीशक लवण-हिं० ख़ल्लातुर्रसास-अ०। (Plumbi acetas)

अस्ताफ़ायस-
अस्तून- } यु० गाजर, गज्जर The carrot (Daucus carrota)

अस्ताफ़ालियूस-यू० जंगली गाजर। (Wild carrot)

अस्ताफ़ियूस-यू० (१) मवेज, द्राक्षा, मुनक्का। Uvæ Syn Uvæ passæ (Raisins)

अस्ताफ़ियूस अगूरिया-यू० पहाड़ी मवेज, पर्वतीय द्राक्षा। (Wildraisins)

अस्ताम-फौलाद। (Steel)

अस्ति-सं०, व०, मल० अस्थि, हड्डी, Bones (Ossa) स० फा० इ०।

अस्ताकरि-मल० अस्थि अंगार, हड्डी का कोयला (Animal charcoal) से० फा० इं०।

अस्तूम-फ़ा० नस्ज, सूम। (Bullrush) इं० हैं० मा०।

अस्तूस-अ० वृक्षभेद। (A sort of tree)

अस्त्रम-सं० क्ली०
अस्त्र-हिं० संज्ञा पु० } आयुध, शस्त्र, हथियार। चाप, धनुष (A weapon in general A missile weapon) (२) करवीर

डाल। मे० रद्विक। (३) व्याघ्र नख (The tigers nail)। (४) वह हथियार जिससे चिकित्सक चीर फाड़ करते हैं।

अस्त्र चिकित्सक–सं० पु० अस्त्रवैद्य, अस्त्र द्वारा रोग दूर करने वाला, जर्राहू, मलहम पट्टी करने वाला। सर्जन (Surgeon)–इं०। सु०।

अस्त्र चिकित्सा–सं० (हिं० सज्ञा) स्त्री० (१) वैद्यक शास्त्र का वह अग जिसमें चीर फाड़ का विधान है। सर्जरी (Surgry)–इं०। इल्मुल् जराहत, फने जर्राही –अ०।

(२) चीर फाड़ करना। अस्त्र प्रयोग। अस्त्र द्वारा व्रण क्षत आदि की चिकित्सा करना। जर्राही। इसके आठ भेद हैः—(क) छेदन नश्तर लगाना। (ख) भेदन-फाड़ना। (ग) लेखन=खरोचना, छीलना। (घ) वेधन=सुई की नोक से छेद करना। (च) मेषण=धोना, साफ करना। (छ) आहरण=काठ कर अलग करना। (ज) विश्रावण=फ़स्द खोलना। (झ) सीना=सीना या टाँका लगाना। सु०।

अस्त्रजित्–सं० पु० कवाठव्रक वृक्ष। कवाठ वेदु, कराड़िया–हिं०। रत्ना०। See-kavata v-akram)

अस्त्रवेद–हिं० सज्ञा पु० [सं०] वव वेद जिसमें अस्त्र वनाने और प्रयोग करने का विधान हो। धनुर्वेद।

अस्त्रवैद्यः–सं० पु० अस्त्र चिकित्सक। (A surgeon) ब्रै० निघ०।

अस्त्रशाला–
अस्त्रागार– } हिं० संज्ञा पु० [सं०] यह स्थान जहाँ अस्त्र शस्त्र इकट्ठे रक्खे जाएँ।

अस्त्रसम्–सं० क्ली० एक धातु तत्व विशेष। (Strettium)

अस्त्राघात–सं० पु० अस्त्र प्रयोग, अस्त्र चलाना, हथियार से चोट पहुचाना। वै० निघ०।

अस्थायी–हिं० वि० [सं०] अस्थिर, नाशवान। (Temporary)

अस्थायी दाँत–हिं० पु० (Decidus or milk teeth) पतनशील वा दुग्ध दन्त। अस्नानुशब्द –अ०।

अस्थावर–हिं० वि० चर चल। (Moveable, moving)

सज्ञा पु० जंगम। जो स्थावर न हो अर्थात् चर वा चलने फिरने वाली प्राणी यथा–मनुष्य, पशु, पक्षी आदि।

अस्थि,-कम्–सं० क्ली०
अस्थि–हिं० सज्ञा स्त्री० }

हड्डी, धातु, (तन्तु) विशेष) Bone (Os) अज़्म–अ०। पूर्ण विवेचन हेतु देखो—हड्डी।

अस्थिकण्टिका–सं० स्त्री० एक वृक्ष विशेष।

अस्थिका–सं० स्त्री० लघु अस्थि।

अस्थिकृत्–सं० पु० वह जिससे अस्थि बने, अस्थि का बनाने वाला, मेद धातु, रस रक्तादि सात धातुओं में से चतुर्थ धातु विशेष। (Adeps) हे० च०। त्रि० अस्थि का (बना)

अस्थिकृत् अन्तःस्थकण–हिं० सज्ञा पु० (Osseo uslebyrinth) अस्थिमय गहनम्।

अस्थिगतज्वरः–सं० पु० तदाश्रित ज्वर, हड्डी में रहने वाला ज्वर, अस्थि के आश्रय से रहनेवाला ज्वर।

लक्षण—अस्थिभेद, कूजन अर्थात् घुरघुर शब्द का होना, श्वास, अतिसार, वमन, तथा शरीर का इधर उधर पटकना ये लक्षण अस्थिगत ज्वर में देख पड़ते हैं। वै० निघ०।

चिकित्सा—वमननाशक औषध, वस्तिकर्म, अभ्यंग और उद्वर्तन आदि द्वारा इसका प्रतीकार करें।

अस्थिग्रंथिः–सं० पु० स्त्री० ग्रन्थिरोग।

अस्थिच्छलितम्–सं० क्ली० उक्त नाम का काण्ड भग्न (बीच से अस्थिभग्न) अस्थि विशेष। यदि अस्थि एक तरफ नीची हो जाय और दूसरा टूटा हुआ भाग ऊँचा हो तो उसे "अस्थिच्छलित" कहते हैं। सु० नि० १५ अ०। देखो—भग्नम्।

अस्थिजः–सं० पु० मज्जा। (Bone marrow) रा० नि० व० १८।

अस्थिजननी–सं० स्त्री० वसा, मेद धातु (Adeps) वै० निघ०।

अस्थिस्थापक-हिं० वि० (Inelastic) जो स्थितिस्थापक न हो। जो लचीला न हो।

अस्थितुण्डः-सं० पु० एक पक्षी विशेष (A bird) श० मा०।

अस्थितोदः-सं० पु० (Ostalgia) अस्थि पीड़ा, अस्थि में सूचीभेदनवत् पीड़ा होना, हड्डफूटन, हड्डी का दर्द, वै० निघ०। अल्मुक, ऊज़्म-अ०

अस्थिधरकला-
अस्थिधरा-

सं० स्त्री० अस्थ्यावरच्छद। (Periosteum) सिमूहाक़ ज़रीह, ग़िशाअ ऊज़्मी-अ०।

अस्तिधातुः-सं० अस्थि तन्तु (Osseous tissue) नस्ज अज़्मी-अ०। देखो—हड्डी।

अस्थिपञ्जरः-सं० पु० कङ्काल, ठठरी, ढांचा। स्केलेटन (Skeleton)-इं०। रा० नि० व० १८।

अस्थिफलः-सं० पु० पनस वृक्ष, कटहल। (Artocarpus integrifolia)-इं०।

अस्थिभः-सं० पु० क्ली० (१) अस्थि विश्लेष, हड्डी का टूट जाना। इन्किसारुल् अज़्म, कस्र-अ० (Fracture) कांड भग्न तथा सन्धिमुक्ति (सन्धिच्युति, सन्धि भ्रंश) भेद से यह दो प्रकार का होता है। पुनः सन्धिमुक्त के ६ तथा काण्डभग्न के १२ भेद होते हैं। सु० चि० ३ अ०। विस्तार के लिये उन उन पर्यायों के आगे देखें। देखो—भग्नम्। (२) अस्थिसंहार, हरसकरी। (Vitis quadrangularis)

अस्थिभक्षक-हिं० संज्ञा पु (Osteoclast) अस्थिभक्षक।

अस्थिभक्षः-सं० पु० (१) कुक्कुर, कुत्ता (A dog) (२) शृगाल। (A jackal) हारा०;

अस्थि भक्षा-सं० स्त्री० पर्णबीज, औषधि विशेष, हेमसागर। घावमारी, घावपात-महo, जख्मेहयात फ़ा०। (Kalancha laciniata D. C.) वै० निघ०। देखो—जख्मे हयात।

अस्थिभेद-हिं० संज्ञा पु० अस्थि भंग हड्डी का टूटना (Fracturing breaking or wounding a bone)

अस्थिमज्जा-हिं० स्त्री० (Bonemarrow) अस्थिसार। देखो—मज्जा।

अस्थिमय गहनम्-सं० क्ली० अस्थिकृत अन्तःकर्ण। (Osseous labyrinth)

अस्थि मर्म्म-सं० क्ली० मर्म विशेष। ये संख्या में आठ है। यथा—कटि में तरुण नामक २, नितम्ब में २, अंसफलक में २ तथा दो दोनों शंखो (कनपटियो) में हैं। सु० शा० ६ अ०।

अस्थिर-हिं० वि० इसका शाब्दिक अर्थ चंचल, अस्थायी (Usteady Unstable) है, किन्तु वैद्यक की परिभाषा में इससे अभिप्राय उस संधि से है जिसमें गति हो सकती है अर्थात् चल या चेष्टावंत संधि। (Moveable joints) देखो—संधि

अस्थिर कठोरता-हिं० संज्ञा पु० (Temporary hardness) क्षणिक कठिनता। अस्थायी कठोरता।

अस्थिर वृक्क-हिं० संज्ञा पु० (Moveable kidney) गतिमान वृक्क विशेष।

अस्थिवत्-हिं० वि० अस्थि के समान, हड्डी जैसा। (Bony osseous)

अस्थिवल्क-हिं० संज्ञा० पु० (Cortex of bone) अस्थि का सबसे बाहर का (पृष्ठ के नीचे का भाग। यह बहुत ठोस, कठिन और मजबूत होता है। इसको ही अस्थिवल्क कहते हैं।

अस्थिविकाश-हिं० संज्ञा पु० (Ossification) अस्थि बनना। तअज्जुम्, -अ०।

अस्थि विकाश केन्द्र-हिं० संज्ञा पु० सेण्टर ऑफ ऑसिफिकेशन (Centre of ossification) इं०। मर्कज तअज्जुम अज़्म-अ०। वह स्थान जहां कार्टिलेज। (कुरी) के बीच सबसे पहले अस्थि बनती है, अस्थिविकाश केन्द्र कहलाता है।

अस्थिवेष्ट-हिं० संज्ञा पु० अस्थ्यावरक, अस्थियों के ऊपर लौहिक तन्तु से निर्मित चढ़ी हुई एक झिल्ली विशेष (Periosteum) सिम्शाक़-अ०।

अस्थिशोथ-हिं० संज्ञा पु० अस्थिथ्दाह। (Osteitis)।

अस्थिशोष-हिं० संज्ञा पु० शोष रोग, सूखा रोग, अस्थि नैर्बल्य। (Dryness & decay of the bones ricket)

अस्थिशृङ्खला,-लिका-सं० स्त्री० अस्थिसंहार। हड़जोड़, अस्थिशृङ्खल-हि०। हड़जोड़ा-बं०। गुण-वृष्य, श्लेष्माजनक, मधुर, रक्तपित्त और वायु-नाशक है। मद० व० ७।

अस्थिसङ्घातः-सं० पु० अस्थिमेलन स्थल, हड्डी के श्रृङ्गाटक। ये १८ इस प्रकार है, यथा तीन-तीन एक एक पांव में (एक गुल्फ, एक घुटना तथा एक जघामूल में) है और ३-३ एक एक हाथ में (१ पहुँचे, १ कुहनी और १ खोदे में) अर्थात् कुल १२ हुये। एक त्रिक स्थान में और एक शिर में ऐसे सब १४ हुए (किसी किसी के मत से वे अस्थिसंघात १८ होते हैं अर्थात् १४ प्राक्कथित और १ वक्ष में जिसे कोढ़ी कहते हैं तथा १ दोनों नितम्बों के बीचमें जिसे दूदी कहते हैं और दो दोनों अंसकूटों पर इस प्रकार कुल १४ हुए)। सु० शा० ५ अ०। देखो—सन्धिः।

अस्थि सन्धानकरः-सं० पु० रसोन लशुन, लसून। Garlic (Allium sativum) वै० निघ०।

अस्थिसन्धान जननी-सं० स्त्री० अस्थिसंहार। हड़ जोड़-हिं०। (Vitis quadrangularis) वै० निघ०।

अस्थि सन्धिः-सं० पु० (१) अस्थि सम्मेलन स्थान, हड्डियों का जोड़ (Articulation joint) (२) मर्म स्थान। देखो—संधिः।

अस्थि समुद्भवः-सं० पु० मज्जा। (Bone marrow) वै० निघ०।

अस्थिसंधि शोथ-हिं० संज्ञा० पु० (Osteo-arthritis) सन्धिस्थ अस्थिप्रदाह।

अस्थि सन्धिकः-सं० पु० अस्थिसंहार, हड़ जोड़। (Vitisquadrangularis) भैष०।

अस्थिसम्बन्धनः-सं० पु० राल, धूप धुनी-बं०। (Resin) वै० निघ०।

अस्थिसंभवः-सं० पु० क्ली० (१) मज्जा (Bone-marrow) (२) शुक्र धातु। (Semen virile) वै० निघ०।

अस्थि सम्भवः स्नेहः-
अस्थसारः-सं० पु०
} मज्जा (Bone marrow) वै० निघ०।

अस्थि संस्थान-हिं० पु० हड्डियाँ, अस्थि समुच्चय, अस्थिविभाग। (Osteology skeletal system) मज्ह मुल् इज़ाम अ०। चिकित्साशास्त्र का वह भाग जिसमें अस्थियों का वर्णन किया जाए।

अस्थिसंहतिः-सं० पु० अस्थिसंहार। (Vitis qaadrangularis) मद० व० ७।

अस्थि संहारः,-कास० पु० (१) हस्तिशुण्ड, हाथी सुण्डी। हाती शुंदे-बं०। (Heliotropium indicum *Linn*)

(२) हाड़ जोड़ (ड़ा) हड़जोड़ा, हर (ड़) सङ्करी, हड़ सङ्गारी, हड़जोड़ी, हरसङ्कारि, हड़-जुरी, नज्जेर-हिं०। नल्लेर-द०। वज्रवल्ली, ग्रन्थिमान्, कुलिशं, अभ्र, (र), शिराकः (श) अस्थि संहारी, वज्राङ्गी अस्थि शृङ्खला-सं०। हड़जोड़ा, हाड़िज, होड़जोड़ा, हाड़भांगा-बं०। वाइटिस क्वाड्रैङ्गुलेरिस, (Vitisquadrangularis *Wall*). सिस्सस क्वाड्रैङ्गुलेरिस *Cissus* quadrangularis डे० विन्नी एट रेजिन्स डी गंजम Vigne etraisins do Gal am फ्रां०। कोडिए पेरुण्डेइ-कोडिए, पिरण्डै-ता०। नल्लेरु-तोगे, नुल्लेरुतिगेट्ट, नाल्लेई-ते०। बेरण्टा, पिरण्ट इसुगड्गालम परेण्ड-मल०। मङ्गरूलि-कना०। चौधारि तरधारी हाड़सांकल, हाड़सा-

ङ्किला, हड़सङ्कर-गु० । शजाब्न-लेसे-वर० । हिरेस्स-सिं०, सिंहली । चौधारी, त्रिधारी, कांड वेल हाड़संधी मह० । हाड़ सांखल-दे० । तिधारी कांडवेल, हाड़जोड़ा-कों० । हड़ संकर, हाड़जोड़ा नल्ल; कांडवेल, चोधारी-वग्व ० ।

द्राक्षावर्ग

(*N. O. Ampelidæ*)

उत्पत्तिस्थान—भारतवर्ष के उष्ण प्रधान प्रदेश, पश्चिम हिमवती मूल से (जैसे कुमायूँ) लंका और मलक्का द्वीप पर्यन्त तथा अरब । दक्षिण भारत के जंगलों में वह अधिकता के साथ होता है ।

वानस्पतिक-वर्णन—अस्थिसंहार वृक्षाश्रयी वा भूलुण्ठित होता है जिसमें सूत्रवत् मूल होते हैं काण्ड (नवीन) गम्भीर या पांडु हरिद्वर्ण, मसृण शृङ्खल वा मालाकार, चतुष्कोण क्वचित् त्रिकोण पक्षाकार और सन्धियुक्त, होते हैं, प्रत्येक जोड़ विभिन्न लम्बाई का (२ से ४ इञ्च) होता है. यदि कांड से एक ग्रन्थि काटकर मृत्तिका से ढाँक दी जाए उससे एक मुदीर्घ लता उत्पन्न हो जाती है, इसीलिए इसका एक नाम काण्ड-वल्ली है ।

(Stipule) चन्द्राकार, अखड पत्र अत्यंत स्थूल एवं मांसल, विषमवर्ती, साधारणतः त्रिखण्डयुक्त, हृदण्डाकार, (Serrulated) वृन्त ह्रस्व, फूल, छत्राकार, लघु वृन्तक, श्वेत व ह्रस्व, पराग केशर ४, दल ४, प्रशस्त, फल मटरवत् वर्त्तुलाकार, अत्यन्तक चरपरा वा कटुक (यह उसमें पाए जाने वाले एक प्रकार के अम्ल के कारण होता है), एक कोष युक्त, एक बीज-युक्त, बीज एकान्तिक, अर्धांडाकार एक कृष्ण धूसर स्पञ्जवत् कोष से आवृत होता है, पुष्प ह्रस्व, श्वेत और वर्षा के अन्त में प्रकट होते हैं ।

नोट—*इसके कांड में यही स्वाद होता है, इसकी एवं द्राक्षा की अन्य ऊति के पौधे की उक्त चरपराहट खटिक काष्टेत (Calciumoxlate) के सूच्याकार स्फटिकों की विद्यमानता के कारण होती है । पौधे के शुष्क होने पर ये स्फटिक टूट जाते हैं एवं जल में क्वथित करने से वे दूर हो जाते हैं ।

प्रयोगांश—सर्वांग (काण्ड, पत्र आदि) ।

मात्रा—शुष्क चूर्ण, १८ रत्ती वा २मा० ।

प्रतिनिधि—पिपरमिण्ट और कृष्णजीरक ।

अस्थिसंहार के गुणधर्म तथा उपयोग

आयुर्वेदीय मत से—

वात कफ नाशक, टूटी हड्डी का जोड़नेवाला, गरम, दस्तावर, कृमिनाशक, बवासीर नाशक, नेत्रों को हितकारी, रूखा, स्वादु, हलका, बल-कारी, पाचक और पित्तकर्त्ता हैं । भा० पू० १ भा० ।

शीतल, वृष्य, वातनाशक और हड्डी को जोड़ने वाला है । मद० व० १ ।

वज्रवल्ली (हड़जोड़) दस्तावर, रूक्ष, स्वादु (मधुर) ऊष्णवीर्य, पाक में खट्टा, दीपन, वृष्य एवं बलप्रद है तथा क्रिमि और बवासीर को नष्ट करता है । अंश में विशेष रूप से हितकारक और अग्निदीपक है । चतुर्धारा कांडवल्ली (चौधारी हड़जोड़) अत्यन्त उष्ण और भूत बाधा तथा शूल नाशक है एवं आध्मान, वात तिमिर, वातरक्त, अपस्मार और वायु के रोगों को नष्ट करती है । (बृहन्निघण्टुरत्नाकर)

अस्थिसंहार के वैद्यकीय व्यवहार

चक्रदत्त—भग्नरोग में अस्थिसंहार—संधि-युक्त अस्थिभग्न में अस्थिसंहार के कांड को पीस-कर गोघृत तथा दुग्ध के साथ पान करे । यथा—"सघृतेनास्थिसंहार* । संधियुक्तेऽस्थिभग्ने च पिबेत् क्षीरेण मानवः । (भग्न चि०)

भावप्रकाश वायु प्रशमनार्थ—अस्थिसंहार मज्जा—अस्थिसंहार के डोटा की छालको छील कर उस लकड़ी का चूर्ण ४ मा० तथा छिलका रहित किसी कलाय की दाल (वातहर होने के कारण माष कलाय अर्थात् उड़द उत्तम है) आधा मासे ले दोनों को सिल पर बारीक पीस कर तिल के तेल में इसकी मगौरी बनाकर खाएँ ये मगौरी अत्यंत वात नाशक है । यथा—

"कांड त्वग्विरहितमस्थिशृङ्खलायामाषार्द्धं द्विदलमकुञ्चकं तदर्द्धमू । सम्पिष्टं तदनु ततस्तिलस्य तैले सम्पक्वं वटकमतीव वातहारि ॥" भा० । च० द० अ० पि०, अभ्र शुद्धौ ।

वक्तव्य

चरक राजनिघण्टु तथा धन्वन्तरीय निघण्टु में अस्थिसंहार का नामोल्लेख दृष्टिगोचर नहीं होता है । सुश्रुताक्त भग्नरोग चिकित्सा में अस्थिसंहार का पाठ नहीं है । चक्रदत्त के समान वृन्द ने भग्नाधिकार में इसका व्यवहार किया है । राजवल्लभ लिखते हैं—

"अस्थिभग्नेऽस्थिसंहारो हितोवल्योऽनिलापहः"

अर्थात् हड्डियों के टूट जाने में अस्थिसंहार हितकर है एवं यह वल्य और वातनाशक है ।

यूनानी मतानुसार—

प्रकृति—उष्ण व रूक्ष । स्वरूप—नवीन हरा और शुष्क भूरा । स्वाद—विकटा व किञ्चित् तिक्त एवं कषाय ।

हानिकर्ता—उष्ण प्रकृति को दर्पघ्न-घृत ।

प्रतिनिधि—लोक की पित्ती ।

प्रधान कर्म—सबल भग्नास्थिसन्धानक ।

मात्रा—२ मा० ।

गुण कर्म प्रयोग—प्राचीन यूनानी ग्रन्थों में हड़ जोड़ का उल्लेख नहीं पाया जाता । अर्वाचीन लेखकों ने अपने ग्रन्थों में जो इसके संक्षेप वर्णन दिए हैं वे केवल आयुर्वेदीय वर्णन का प्रतिलिप मात्र है । वनस्पति विषयक कतिपय उर्दू ग्रन्थों में लिखा है कि प्रायः गुणों में यह गुडूची के समान है" परन्तु यह परीक्षणीय है । इससे पारद की भस्म बनती है बु० मु० म० मु० ।

व्यमत

मोहीदीन-शरीफ इंद्रिय व्यापारिक कार्य—आमाशय बलप्रद (पाचक) तथा परिवर्तक (रसायन) । उपयोग—अजीर्ण में इसका लाभदायक प्रयोग होता है ।

औषधिनिर्माण मुरब्बा—नवीन तथा कोमल कांड के छोटे छोटे टुकड़े करें और प्रत्येक टुकड़े को कांचनी से कांच डालें (जिस प्रकार आमला का मुरब्बा बनाते समय आमलों को एक विशेष द्वारा कोंचते अर्थात् उसको चारों ओर गम्भीर छिद्र कर डालते हैं पुनः उन टुकड़ों को जल में कोमल होने तक क्वथित करें । इसके बाद पानी को फेंक दें और टुकड़ों को हलके हाथोंसे तिचाड़ लें फिर उनको चूर्णोदक वा १ ड्राम (३॥ मा०) ये ४ आउंस पर्यन्त कार्बोनेट आफ सोडा विलीन किए हुये जल में क्वथित करें और पूर्ववत तरल को फेंक दें इस क्रम को दो तीन बार और काम में लाएँ अथवा इस क्रम को तबतक दोहराते रहें जब तक कि वे किसी प्रकार के चपराट से शून्य एवं कोमल न हो जांय तदन्तर उनको स्वच्छ उष्ण जल से धोकर और कपड़ेसे पोंचकर शर्करा के साधारण शर्बत में डालकर सुरक्षित रक्खें । सप्ताह पश्चात् यह प्रयोग में लाने योग्य हो जायगा ।

मात्रा—२ से ४ ड्राम तक २४ घण्टे में २ ३ बार । डाक्टर महोदय लिखते हैं कि इस ग्रन्थ में उक्त पौधे के वर्णन देने का कारण यह है कि ट्रिब्लिकेन में एक आदमी जो कि चिरकारी एवं हठीले (Obstinate) अजीर्ण से चिरकाल पीड़ित था ४० दिवस तक उक्त मुरब्बा के सेवन के पश्चात् वह बिकुल रोग मुक्त हो गया । (मे० मे० मै०) ।

डीमक—इसके ताजे पत्र एवं काण्ड काण्ड का कभी कभी शाक रूप से व्यवहार होता है । पुरातन होने पर ये चरपरे हो जाते हैं तब इनमें औषधीय गुण धर्म होने का निश्चय किया जाता है । फा० इं० १ भा० ।

ऐन्सली लिखते हैं कि तामूल चिकित्सक अग्निमांद्य जन्य कतिपय आन्त्र रोगों में इसके शुष्क काण्ड के चूर्ण का व्यवहार करते हैं । ये सशक्त परिवर्तक माने जाते हैं और लगभग २ स्क्रप्स (२॥ मा०) की मात्रा में इसका चूर्ण किञ्चित तण्डुलोदक के साथ दो बार दैनिक व्यवहार में आ सकता है ।

फॉसंक्रहल (Forskahl) वर्णन करते

है कि मेरुदंड विकार से पीड़ित अरब लोग इसके कांड की शय्या बनाते हैं।

कर्णस्राव (पूति कर्ण) में इसके कांड स्वरस द्वारा कर्णपूरण करते हैं तथा नासार्श वा नासारक्तस्राव में इसे नासिका में टपकाते हैं अनियमित ऋतु दोष तथा स्कर्वी के लिये भी यह प्रख्यात है। प्रथम राग में २ तो० स्वरस (पौधे को उष्ण करके निकाला हुआ) २ तो० घृत और १-१ तो० गोपी चन्दन (श्वेत मृतिका विशेष) तथा शर्करा में मिलाकर दैनिक उपयोग में आता है फा० इं० १ भा०। मे० मे० आफ इं० आर० एन० खोरी०।

बैल्फर (Balfour) राजयक्ष्मा में इसके कांड का कल्क व्यवहृत होता है।

आर० एन खोरी—अस्थि संहार रसायन तथा उत्तेजक है। यह अजीर्ण अग्निमांद्य एवं स्कर्वी रोग में व्यवहृत होता है आर्द्र अस्थि संहार को पीसकर अस्थि विश्लेष अस्थिभग्न किम्वा क्षत पर प्रलेप करते हैं। (Materia-Medica of India- R N. khori P art 11 , P 136)

आर० एन० चोपरा एम० ए० एम० डी०—इसके पत्र एवं कांड दक्षिण भारत वर्ष में कढ़ी के साथ व्यवहार में आते हैं। मदरास में पौधे के नवांकुरों को अन्तर्धूमाग्नि द्वारा भस्म कर इसको अजीर्ण एवं अग्निमांद्य में बरतते हैं। (इं० ड्रू० इ० पू० ६०२)

अस्थिसंहारिका,-री-सं० स्त्री० अस्थिसंहार। (Vitis quadrangularis) भा० पू० १ भा०।

अस्थि संहृत-सं० पु० अस्थिसंहार। (Vitis quadrangularis) च० द०। भैष० भग्न चि०।

अस्थिसार:-सं० पु० मज्जा०(Bone-marrow) रा० नि० व० १८।

अस्थिसार स्थिता-सं० स्त्री० मज्जा, (Bo-nem arrow)

अस्थिस्नेह:-सं० पु० मज्जा, मज्जन, (Bono-marrow रा० नि० व० १८।

अस्थिस्नेह संज्ञ:-सं० पु० मज्जा, मगज-हिं०, (Marrow' Pith) रा० नि० व० ७।

अस्थिस्नेह सञ्चार:-सं० पु० मज्जा, मज्जन। (Marrow)

अस्थिस्रंस-सं० क्ली० हड्डियों को तोड़ने वाला। अथर्व०।

अस्थिक्षय-हिं० सं० पु० [सं०] अस्थिशोष, अस्थिनैर्बल्य। (Rickets)

अस्थीकरणम्-सं० क्ली० अस्थिविकास अस्थि बनना कुर्री का अस्थिबनना, (Ossification) तअज्जुम-अ०।

अस्थीयम्-सं० क्ली० (Ossein) अस्थि का।

अस्थूरि-दोष रहित, अथर्व०, सू० १३०।

अस्थ्यङ्गार:-सं० पु० हड्डी का कोयला (Animal charcoal Eone charcoal)

अस्थ्यन्तरीय-सं० त्रि० (Interosseous) हड्डी के भीतर का।

अस्थ्यान्तरिका पेशियाँ-सं० स्त्री० (Interossei) अस्थि के भीतरी तरफ की पेशी।

अस्थ्यावरक-, अस्थ्यावरण- } हिं० पु० अस्थिवेष्ट (Periosteum) सिम्हाक, जरीअ अ०, अस्थियोंके ऊपर सौत्रिक तन्तु से निर्मित एक झिल्ली चढ़ी रहती है इसको अस्थ्यावरक कहते हैं।

अस्द-अ० शेर सिंह। (A lion)

अस्दरान-, अस्दगान- } अ० वह रगें जो दोनों कनपुटियों के नीचे स्थित है कनपुटियों की रगें।

अस्दी-अ० (ब० व०) सदी (ए० व०) स्तन कुच स्त्री का हो अथवा पुरुष का। (Breasts)

अस्दुल अदस-अ० (१) शरट, गिर्गिट (Chemelion) (२) माजरियून। (Mazariyun) (३) एक अप्रसिद्ध बूटी है जिस बूटी के समीप यह होती है उस बूटी को वह नष्ट कर देती है।

अस्दुल अर्ज-अ० (१) गिर्गिट शरट (Chem- एक अप्रसिद्ध औषधि है जिस

के लक्षण के सम्बन्ध में मतभेद है कोई कोई इस्तीस को कहते हैं।

अस्नः-सं० पु० लालरस। अथर्व०।

अस्थ्यांतरिक बंधन-सं० स्त्री० (Interossecus ligament) अस्थि का भीतरी बन्धन।

अस्नहान-सं० देगी (कमल के समान एक पुष्प है)

अस्नाख-अ० (ब० व०), सन्ख (ए० व०) दन्तमूल। (Root of teeth)

अस्नान-अ० (ब० व०), सिन (ए० व०) (१) दन्त, दाँत (Teeth) (२) आयु, अवस्था (Age) देखो—सिन्न।

अस्नानुल्फ़ार-अ० शाब्दिक अर्थ मूषा दन्त, (चूहे का दाँत), पारिभाषिक अर्थ नख के वे बारीक तीक्ष्ण तन्तु जो नख के सिरे के समीप फट जाने से उसमें उत्पन्न हो जाते हैं या नख के मूल में होते हैं।

अस्नानुल् लुब्न-अ० अस्नान लुब्निय्यह्। दुग्ध दन्त, दूध के दाँत। दन्दाने शीर-फा०। (Milk teeth)

अस्नानुल्हु(हि)ल्म-अ० अस्नानुल् अक्ल, बुद्धि दन्त-हिं०। दन्दाने अक्ल, अक्ल दाढ़ें-फा० (Wisdom teeth)

अस्नाने क़बातिअ-अ० अग्रदन्त, छेदक दन्त, दन्दाने पेश-फा० (Incisors)

अस्नाने कबासिर-अ० भेदकदन्त, रदनक, दन्दाने नीश-फा०। (Canines Canine tooth)

अस्नाने तबाहुन्-अ० चर्वणक दन्त, दन्दाने आसिया, पीसने वाले दाँत-उ०। (Molars)

अस्नाने दाइमिह-अ० स्थायी दन्त, दन्दाने मुस्तक़िल मुदामी दाँत-उ०। (Permanent teeth)

अस्नाफ़-अ० (ब० व०), सिन्फ़ (ए० व०) भेद, प्रकार। (Kinds)

अस्निग्ध-सं० त्रि०, हिं० वि० पु० जो स्निग्ध नहीं रूक्ष, स्निग्धता का अभाव।

अस्निग्धदारु-कम्-सं० स्त्री०
अस्निग्ध दारुक-हिं० संज्ञा पु०

देवदारु, देवदार की जाति का एक पेड़। (Cedrus Deodara) रा० नि० व० १२।

अस्निग्ध लक्षणम्-सं० क्ली० अस्निग्ध अर्थात् रूक्ष के लक्षण। यथा—

गाँठदार पाखाना का होना, रूक्षता, वायुविकार, मृदुता, पका हुआ सा होना, खरत्व और शरीर की रूक्षता ये अस्निग्ध के लक्षण हैं।

"पुरीषं ग्रथितं रूक्षं वायुरप्रगुणो मृदुः।
पक्वाखरत्वं रौक्ष्यंच गात्रस्यास्निग्धलक्षणम्" ॥
(च० सू० १३ अ०)

अस्प-फा० अश्व, घोटक। (A horse)

अस्पगोल
अस्पग़ल } फा० ईसब गोल, ईषद्गोल, (Ispaghula)

अस्पञ्ज-अ० अस्पञ्ज, अभ्रमुर्दा, मुआबादल, स्पञ्ज, (Sponge)

अस्पताल-हिं० संज्ञा पु० [इं० हॉस्पिटल] औषधालय, चिकित्सालय, दवाखाना।

अस्पदन्दाँ-फा० [तिब्रि०, पारिभा०] खुश्कअबीन (एक प्रकार का मधु जो अत्यन्त शुष्क होता है)

अस्पदरियाई-फा० फर्सुलमाअ-अ०। दरियाई घोड़ा।

नोट—कहा जाता है कि यह जानवर मिश्र देश में नील नदी के भीतर होता है। इसके पाँव गोपाद सदृश होते हैं, पुच्छ वाराह पुच्छ सदृश और स्वरूप घोड़े का सा होता है। यह घड़ियाल आदि समुद्री जीवों का आहार करता है।

अस्पनाज-फा० पालक। (Spinacea oleracea)

अ(इ)स्पन्द-फा० राई। देखो—इस्पन्द। (Ispanda)

अस्परक़-फा० पीली जड़, त्रायमाणा। (Delphinium zalil, *Aitch*)

अस्प(र)र्क-हिं० तिरीर (इं० मे० प्लां०), जिरीर

ग्रां०), जिरीर (मेमो०)-फा० । वनपिरिंग-बं० । ट्रिफोलियम् ऑफिसिनेली (Trifolium officinale, *Willd*) मीलीलोटस ऑफिसिनेलिस (Melilotus officinalis) ले० । इक्लीलुलमलिक अ० ।

बब्बूर या शिम्बी वर्ग

(*N. O Legumtnosœ*)

उत्पत्ति स्थान—नुब्रा तथा लेदक ।

प्रयोगांश—क्षुप ।

उपयोग—यह क्षुप रक्तस्थापक है । क्षतों पर भी इसका उपयोग होता है । वैट ।

अस्पर्गम्—फा० रैहाँ । (Ocimum basilicum, *Linn*)

अ(इ) स्पजह्—फा० ईस्पगोल । ईसवगोल, ईषद्गोल हि० । (Ispaghula)

अस्पतम—कफरुल् बहूद । यह एक प्रकार का पाषाण है । See--qafrul-ya-huda

अस्पर्शा—सं० स्त्री० आकाश वेल, आकाश बल्ली । आलोकलता-बं० । (Cuscuta reflexa) रा० नि० व० ८ ।

अस्पस्त— } फा० नस्तरन, कत, कमीजह, तर्फील,
अस्फत— }

दमचह, (Trifolium pratensis) इं० हैं० गा० ।

अ(ऐ) स्पाइरीन—इं० देखो—ऐस्पाइन ।

अ(ऐ)स्पालन्थस इण्डिकस—ले० शिवनिम्ब मह० । (Indigofera aspalanthoides, *Vahl*)फा० इं० १ भा० ।

अस्पालोटा—जलपीपर, तूतबूटी, बुकन । नफी० २ भा० । देखो—जलपिप्पली ।

अस्पियूस—अ० इस्पगोल, इसवगोल, ईषद्गोल । (Ispaghula)

अस्पीडियम् फिलिक्स मैस—ले० मेलफर्न ।

अस्पीडो स्पर्मा—ले० एक पौधा है ।

अस्पीडो स्पर्मा क्युब्रेको ब्लैङ्को—ले० एक पौधा है ।

अस्परग—फा० अस्फ्रक-फा० । ज़रीर-अ० । त्रायमाण गुले जलील—बम्ब० । गाफ़िज़—पं० । (Delphinium zalil, *Aitch, et Hemsley*) फा० इं० १ भा० ।

अस्पेरजी—फ्रां० नागदौन—हिं० । (Artemisia vulgaris)

अस्फ—अ० अन्तिम श्वास, मरणावस्था, मरणासन्न, मुमूर्षु ।

पाइण्ट आफ डेथ (Point of death) —इं० ।

अस्फअ—अ० श्याम, काला । (Black)

अस्फङ्गारून—रू० } अभ्र, मुर्दा,
अस्फञ्ज—फा० }

मुआ बादल, स्पञ्ज, Sponge (Spongia officinalis)

अस्फञ्ज का जलाना अर्थात् सोख्तह् करना—

मुआ बादल के जलाने की विधि—अस्फञ्ज अर्थात् मुआ बादल को साबुन से धोकर भली भांति निचोड़ कर शुष्क करलें । पुनः इसे बारीक कतर कर मिट्टी के बर्तन में रखकर अग्नि पर इतना जलाएँ जिसमें यह पीसने योग्य हो जाए । परन्तु इतना न जलाएँ कि जलकर राख हो जाए । तत्पश्चात् योगों में प्रयुक्त करें । व्या० क० भा० ३ ।

अस्फञ्जमुह्रिक— } अ०, फा०
अस्फज सोख्तता— }

जलाया हुआ मुआ बादल ।

अस्फटिकीय—हिं० वि० वह जिसके स्फटिक अर्थात् रवे न हों । बे रवा । अमूर्त । स्फटिक रहित । (Amorphous)

अस्फन्द—फा० (१) सफेद राई (White mustard) । (२) दोलू, हुर्मुल । (३) अस्पन्द । (Ruta alluflora) इं० हैं० गा० ।

अस्फन्द–फा० (१) सफेद राई (White mustard). (२) दोलू हुर्मुल। (३) अस्पन्ह। (Ruta alfluflora) इं० हैं० गा०

अस्फन्दान–
अस्फन्दा सफेद–
} फा० सफेद राई (White mustardseed)

अस्फन्दान–फा० मद्य भेद (A kind of wine)

अस्फर–अ० जर्द फा० पीत, पीला पीली हिं०। (Yellow) इतिब्बा ने इसकी पांच कक्षाएँ स्थिर की हैं—(१) तम्बी, (२) उन्नजी, (३) अश्र (४) नारी और (५) अहमर नासिअ अस्तु उन उन पर्यायों के सामने देखो—

अस्फरक–फा० एक श्याम वर्ण का पक्षी है जो घरों में पाला जाता है इसकी चोंच पीली होती है इसे पढ़ाया जाता है तथा यह मनुष्य से प्रेम करता है।

अस्फ़र फाकिअ्–अ० घन पीत अत्यन्त पीला। गहरा पीला (Deep yellow)

अस्फराग़ोयूस–यू० विण्डाल हेबदानी। (Eebellium elatarium)

अस्फराज–इन्दुलि० नागदौन। देखो—अस्फार्गीन। (Artemisia Vulgaris)

अस्फरान–अ० जिह्व तथा हृदय। (Heart and tongue)

अस्फरे बर्री–फा० बादावर्द हिं० बव०। (Volutarella divaricata *Benth*) फा० इं० २ भा०।

अस्फह–अ० विशाल ललाट, विशाल मस्तिष्केय, चौड़े माथे वाला।

अस्फाक फा० त्रायमाण, बलभद्रा अभि० नि०।

अस्फाद–
अस्फाद सुफेद–
} फा० राई। (Sinapis remosa)

अस्फानाख–अ० पालक (Spinacea oleracea)

अस्फान ख रूमी व हिन्दी–फा० वास्तुक, वथुआ।

अस्फार्गीन–यू० एक बूटी है जिसकी शाखाएं सौंफ के समान आदि में मृदु किन्तु पश्चात को कठोर एवं हरी हो जाती है नागदौन। देखो—ऐसपैरेगीन (asparagin)

अस्फीक्सिया–अ० इख़्तिनाक, दम घुटना दम बन्द होना उ०, श्वासावरोध श्वास, का अवरुद्ध होना (asphyxia)

अस्फुट–हिं० वि० [सं०] (१) अर्द्ध स्वच्छ। जो स्पष्ट न हो जो साफ न हो (२) गूढ़, जटिल।

अस्फुट दर्शक–हिं० वि० अर्द्ध स्वच्छ अस्पष्ट दर्शक (Translucent)

अस्फोडेलस फिस्ट्युलोसस–ले० प्याजी, वोकाट पं० प्रयोगांश—पौधा व बीज। उपयोग—औषध तथा खाद्य। मेमो०।

अस्फोतः–सं० पु० काञ्चनार वृक्ष कचनार। (Bauhinia variegata) रा० निघ०।

अस्ब (बु) अ्–अ० (ए० व०) असाबिअ् असाबीअ (ब० व०) अंगुस्त, उगली उ० अगुली हि०। (Finger)

अस्मन्द–हिं० संज्ञा पु० [अ०] इस्बन्द। (Peganum harmala)

अस्बर–अ० नर० चीता (A maletiger)

अस्बर्ग–हिं० पुं० गाफिस (Delphinium saniculaefolium)

अस्बल–अ० लम्बी मूछोंवाला वह मनुष्य जिसकी मूछें बड़ी जड़ी हों।

अस्बाग–अ० (ब० व०) देखो—असब। (Tinctures)

अस्बान–अ० खजूर भेद (A kind of dato)

अस्बाब–अ० (ब० व०) सबब (ए० व०) वैद्यक की परिभाषा में यह वस्तु जो मनुष्य शरीर में रोगारोग या हालते सालसह (अवस्थान्तर) को उत्पन्न करे अथवा उसको सुरक्षित रखे चाहे वह वस्तु शारीरक या अशारीरिक तत्व हो या अर्ज कारण, निदान, हेतु (Causes) देखो—सबब।

अस्वाइब्तिदाइय्यह्-
अस्वाब अव्वलियह्-
अस्वाब अस्लियह्-

अ० किसी रोगके आदि कारण। इनका सामावेश वस्तुत अस्वाब सानिका (प्रारम्भिक कारण) हो में होता है। (Primary causes' Ultimatate causes)

अस्वाब कुल्लिय्यह्-अ० वे हेतु जिनके होने नवीन चीजों का होना अनिवार्य हो।

अस्वाब ख़ सूसिय्यह्-अ० वे मुख्य हेतु जो किसी प्रधान रोग को उत्पन्न करें जैसे प्लेग तथा विसूचिका विष जो उक्त रोगों को ही उत्पन्न करते हैं। (Speci ficcauses)

अस्वाब तमामिय्यह्-अ० वे कारण जिनसे शरीर अथवा शरीर की किसी अवस्था विशेष की पूर्ति होती है। (Complimental causes)

नोट—उक्त अरबी परिभाषा सामान्यत: इल्मे हिकमत में सबबे गाई अर्थात् किसी काम को गायत व गर्ज के लिए बोली जाती है।

अस्वाब फ़इलिय्यह्-अ० वे कारण जो रोगारोग अथवा हालते साबसा (अवस्थान्नव) में से किसी एक को शरीर में प्रकट करे या शारीरावस्था को सुरक्षित रक्खें पुन: चाहे वे प्राकृतिक हों या अप्राकृतिक।

अस्वाब बादिय्यह्-अ० अस्बाब खर्जियह्, अस्वाब मेखानिक्यह्, वाह्यकारण वे हेतु जो मनुष्य शरीर आक्रमण करके अपना प्रभाव स्थापित करे जैसे शैत्योष्णता आदि (External or Local causes)

अस्वाब मादिय्यह्-अ० वे हेतु जिनपर रोग रोग का आधार हो।

अस्वाब मुज़ाहह्-अ० अभिश्रित घातक कारण जो शरीर को हानि पहुँचाते एवं उसे नष्ट कर डालते हैं जैसे तलवार या गोली का घाव विषपान तथा जलमग्नता आदि।

अस्वाब मुतम्मिमह-अ० वे कारण जिनके शरीर पर प्रभाव करने के परचात् तत्काल रोग उत्पन्न हो जाय। सन्निकट कारण।

अस्वाब मुमर्रिज़ह्-अ० रोगोत्पादक कारण, रोग सजनक हेतु।

अस्वाब बासिलह्-
अस्वाबक़रीबह्-
अस्वाब सानोयह्-

अ० वे कारण जो शरीर में विद्यमान हों और बिना किसी अन्य कारण की अपेक्षा करते हुये शरीर में कोई अवस्था उत्पन्न करे जैसे-अफूनत (सड़ाँध) बिना किसी अन्य कारण के अफूनती (पचनीय, दूषित) ज्वर उत्पन्न करती है। (Immediate causes proximate causes)

अस्वाब सानिक़ह्-
अस्वाब मुइद्दह्-
अस्वाब बईदह्-

अ० वह कारण जो मनुष्य शरीर पर सहयोग द्वारा प्रभाव करे अर्थात् शरीर को किसी दूशा के लिए तैयार करें, किन्तु स्वत: उसको उत्पन्न न करें। जैसे—इम्तिलाऽ (शरीर का दोष पूर्ण होना) शरीर को दूषित ज्वरों के लिये उद्यत बनाता है, किन्तु बिना सहयोग के दोष उसको नहीं उत्पन्न कर सकते। प्रीडिसपोजिंग कॉज़ेज़ (Predisposing causes), रीमोट कॉज़ेज़ (Remote causes)-इं०।

अस्बाबसित्तह्
अस्बाबसित्तह् ज़रूरियह
अस्वाब ज़रूरियह्-
अस्बाब आमिय्यह्

-अ० वे ६ प्रसिद्ध कारण जो जीवन के लिये आवश्यक है, जैसे—(१) वायु; (२) खाना, (३) सोना जागना, (४) शारीरिक गति एवं विश्राम, (५) मानसिक चेष्टाएँ एवं शांति और (६) संशोधन एवं संग (अवरोध)।

अस्बाब सूरिय्यह्-अ० रचनात्मक वा प्राकृतिक बातें और जो उनसे सम्बन्धित हो।

अस्बितालिय्यह्-अ० यह हास्पिटल (अंगरेजी शब्द) से अरबीकृत शब्द है अर्थात् हास्पताल

शिफ़ाखानह । अस्पताल, चिकित्सालय–हिं० । (Hospital, infermary,

अस्तिताविष्यद्दनक़ाल्लह–अ० रणभूमि से आहत प्राणियों को ले जाने की डोलियाँ प्रभृति । (Ambulance)

अस्बूर–अ० स्पोर से अरबीकृत शब्द है जिसका अर्थ बीज या कीटाणु है । (Spore)

अस्म–अ० धूम्रवायु भक्षण, आहार आदि जिसमें धूम्रगन्ध आ गई हो ।

अस्मगंध वृक्षः–सं० पु० आम्रातक, अम्बाड़ा; अमड़ा, (Spondias mangifera) लु० क० ।

अस्मगंध कन्तू–सं० मोम । (Wax)

अस्मगंध फलम्–सं० क्ली० कटहल, पनस (Artocarpus integrifolia)

अस्मस्वेदन–सं० प्रस्तर स्वेद । सु० ।

अस्मङ्कलगण्डा–हिं० पु० नागसरगड़ (एक भारतीय बूटी है जो भूमि पर आच्छादित होती है । पत्ते कन्दूरी सदृश और मूल ककोड़े के समान तथा विषमतल होते हैं) । लु० क० ।

अस्मन्तम्–सं० क्ली० चुल्ली, चूल्ही (हा) । उनन, आंका–बं० । चुल्ल–मह० । (A fire-place) अ० टी० भ० ।

अस्मन्तिका–सं० स्त्री० आष्टा ।

अस्मर–अ० गन्दुमगूँ, गन्दुमी रंग, गेहूं का रंग, गोधूम वर्ण, धूसर वर्ण, भूरा–हिं० । (Brownish)

अस्मर्सा
अश्मर्शा } कनौचा भेद ।

अस्मानिया–पं० बूतशूर, बूदशूर, खस्ता, चेबा । (Ephedra gerardiana, *Wall*) मेमो० ।

अस्मानी गलगोता–गु० ५० जंगली लवेण्डर ।

अस्मालावन–गु० सौसन वर्ग (एक सुगन्धित पुष्प है जो सौसन के नाम से प्रसिद्ध है) । यह बागों भी होता है ।

अस्मितः–सं० त्रि० विकसित खिला हुआ । फुटन्त ब० । (Blown, opened) वै० निघ० ।

अस्मीलूम–यु० लोबान का सत, लोबानिकाम्ल । (Acidum benzoicum)

अस्मूनियून–यु० सफेदा, सुफेदा । (Plumbi carbonas) देखो—सीसक ।

अस्मूषा–यू० जंगली गाजर, वन्य गर्जर । (Wild-carrot)

अस्यूम–भू० अस्यूस, पत्थर भेद । (Akind of stone)

अस्रम्–सं० क्ली०
अस्र–हिं० संज्ञा पु० } (१) शोणित रक्त, रुधिर, ख़ून (Blood)–इं० । रा० नि० व० १८ । (२) केशर, कुंकुम । Saffron (Crocus sativus) च० द० । (३) नयनजल, अश्रु, आँसू, टियर (Tear)–इं० । रत्ना० । पु० (४) आस्राव · विज० ए० । (५) कोण कोना, कोनर (A corner) इं० । (६) केश, बाल, हेयर (Hair)–इं० मे० । (७) एक देश (A country) (८) जल ।

अस्र–अ० शुद्ध तैल । (Pure oil)

अस्र–अ० ठोकर खाना, मुँह के बल गिरना । (To trip. to tumble)

अस्र–अ० निचोड़ना, दबाकर निचोड़ना । (Expression)

अस्र कण्टकः–सं० पु० बाण । हे० । (Seevana)

अस्रखदिरः–सं० पु० रक्त खदिर वृक्ष, लाल खैर । रक्त खैर भ० । (The red Catechu tree) रा० नि० व० ८ ।

असघनः–सं० पु० तेज बल । (Excœcaria agallocha, *Linn*) वै० निघ० ।

अस्रघ्नी–सं० स्त्री० विशल्यकर्णी । निर्विषी । भै० र० ।

अस्रजम्–सं० क्ली० मांस । (Muscle, flesh) रा० नि० व० १७ ।

अस्रजित्–सं० पु० वनस्पति विशेष । कपाट बेदु –हिं० । (A plant) र० मा० ।

अस्रत–अ० नअज़िश । ठोकर एसा ठोकर जिससे मुँह के बल गिरे (Taipping, a beat of the foot, a stumble)

अस्रपः–सं० पु०
अस्रप–हिं० संज्ञा पु०
(१) जलौका, जौंक, जलायुका (Leech Hirudo) (२) मत्कुण, कीट भेद रा० नि० व० २३। (See-matkunah)
हिं० वि० रक्त पीने वाला।

अस्रपत्रः-कः–सं० पु० भेण्डा वृक्ष, भेड़ा वृक्ष। रा० नि० व० ४। See-bhera

अस्रपा–सं० (हिं० संज्ञा) स्त्री० जलायुका, जलौका, जौंक। (Leech, Hirudo) मे०।

अस्रफला,-ली–सं० स्त्री० शल्लकी वृक्ष, सलई, सलाई का पेड़। शालुई गाछ बं०। (Boswellia serrata) रा० नि० व० ११।

अस्रबिन्दुच्छदा–सं० स्त्री लक्ष्मणा See-lakshmana

अस्रमातृका–सं० स्त्री० रस धातु। (Chyle) रा० नि० व० १८।

अस्रयष्टिका–सं० स्त्री० मजीठ, मञ्जिष्ठा (Rubia cordifolia)

अस्ररेणुः–सं० पु० सिन्दूर। Redlead (Plumbi oxidum rubrum) मे०।

अस्ररोधिका,-नी–सं० स्त्री० लज्जालुका क्षुप, लज्जालू, लज्जावती। (Mimosa pudica) रा० नि० व० ५।

अस्रबिन्दुच्छदा–सं० स्त्री० (१) लक्ष्मणा कन्द, (लक्ष्मणा), (See-lakshmana) रा० नि० व० ५। (२) रक्तबिन्दुच्छदा। कैय० दे० नि०।

अस्रशिम्बी–सं० स्त्री० रक्तशिम्बी, लाल सेम, राङ्शिम्–व०। (The red flat bean) वै० निघ०।

अस्रसायिकः–सं० पु० नाराच अस्त्र, लोह का बाण, लोहार बाण–बं०।

अस्रस्रुती–सं० स्त्री० रक्तस्राव (स्रुति) शोणित स्राव रक्तक्षरण। वै० निघ०।

अस्रहरारिष्टः–सं० पु० अस्रघ्नी (विशल्यकर्णी, निर्विषा) और मृतसञ्जीवनीसुरा हर एक-एक पल लें। पुनः एक मिट्टी के पात्र में रख उसका मुख मिट्टी से अच्छी तरह बन्द कर ७ दिन तक रक्खें। पश्चात् गाढ़े वस्त्र से छान कर बोतल में यत्न से रक्खें।

मात्रा—५ से २० बूंद।

अनुपान—शीतल जल।

गुण—इसके सेवन से उरःक्षत, रक्तपित्त, कास, रक्तातिसार, रक्तप्रदर और राजयक्ष्मा नष्ट होता हैं, भै० र० यक्ष्मा चि०।

नोट—अस्रघ्नी के अभाव में अम्बष्ठा (निर्विषी) लेना उचित है।

अस्रार
असिरह
–अ० ललाट की रेखाएँ। क्रीज़ (Crease) फोल्ड (Fold)-इं०।

अस्रार–जरिष्क। (Berries of Berberis aristata, *D. C.*)

अस्रार–मग़० एक वृक्ष है जो हजाज और जिद्दा के समुद्री किनारों पर उगता है।

अस्रार्जकः–सं० पु०
अस्रार्जक–हिं० संज्ञा पु०
(१) रक्त तुलसी वृक्ष, लाल तुलसी, राङ्गा तुलसी-बं०। (Ocimum rubrum) (२) श्वेत तुलसी, सादा तुलसी-बं०। पाँडरी तुलसी–मह०। (Ocimum album, *Linn*) वै० निघ०।

अस्रावित भक्तम्–सं० क्ली० मण्ड (माँड़) संयुक्त भात।

गुण—यह भात भारी, शीतल, रुचिकारक, वृष्य, वीर्यवर्द्धक, मधुर, वातनाशक, कफनाशक, ग्राही, तृप्तिकारक और क्षय रोग का भी नाश करने वाला है। वृ० नि० र०।

अस्राश–अ० एक प्रकार का बारीक चूर्ण है जो कभी आन्त्र से और कभी खुनसाके बीज से बनाया जाता है।

अस्ताह:-सं० पु०, क्ली० कुंकुम, केशर। Saffron (Crocus sativus) मद० व० ३।

अस्सि-हिं० स्त्री० (Ten millions) १० लाख।

अस्सिब-
अस्सारिब-
} अ० (ब० ब०) सरब (ए० ब०), आन्त्रीय वसामयझिल्ली, आन्त्रच्छदाकला, आन्त्रावरण जठरावरण। (Omentum)

अस्सोली-हिं० स्त्री० ओम्बोली, निर्गिट सदृश एक जानवर है। यह लंबे रंग की होती तथा सर्प सदृश दुम मारती है।

अस्सु-सं० क्ली० नेत्रवारि, नयन जल, अश्रु, आँसू टियर (A tear)-इं० आँसू के रोकने से पीनस रोग उत्पन्न होता है। वा० सू० ४ अ०।

अस्सुक:-सं० पु० अक्षीर वृक्ष। आउच गाछ-बं०। रत्ना०।

अस्सुल जुदरी-अ० शीतला के चिन्ह, दाग। (Pit, Pock mark)

अस्सुल वुस्ह-अ० फुन्सी के चिन्ह या दाग। सिकट्रिक्स (Cicatrix)-इं०।

अस्सु वाहिनी-सं० स्त्री० अश्रुवाहक धमनीद्वय। (Lachrymal canal) सु० शा० ६ अ०।

अस्सूली-सिन्ध० छोटी माई। Tamarix orientalis, *Vahl* (Galls of Tamarix galls)

अस्सेण:-सं० त्रि० स्त्रियों से रहित। अथर्व०।

अस्सोज-अ० (१) एक कीट है जिसका शिर लाल और शेष शरीर श्वेत होता है। यह रेत और घास में उत्पन्न होता है या (२) ख़र्रातीन (केचुआ) (Earthworm)

अस्सोरह-अ० बालछड़ (Nardostachys Jatamansi)

अस्सोहो-रू० बनफ्शा। (Viola odorata)

अस्ल-अ०
असल-हिं०
} (ए० व०) उसूल (ब० ब०) मूल, जड़, बुनियाद, (Root or rhizome) सं० फा० इं०।

अस्ल-अ० तर्फा, झाऊ-हिं०। (Tamarix gallica, *Linn*) स० फा० इं०।

अस्ल-अ० मधु, शहद Honey (Mel) स० फा० इं०।

अस्ल-अ० समान मिश्र०। रूह कर्तह-फा०। कसरानी-हिं०। एक बूटी है जो जलीय भूमि पर उत्पन्न होती है। इससे बोरिया या चटाई बिने जाते हैं।

अस्ल-हड़ताल, हरिताल (Yellow orpiment)

अस्लअ-अ० वह मनुष्य जिसके चाँदिया पर के बाल गिर गये हों। बैल्ड (Bald)-इं०।

अस्ल अफ़्सन्तीन-अ० वह शहद जिसकी मक्खी अफ्सन्तीन पर बैठी हो।

अस्लक़-अ० फ़ल्ल गुश्त, निर्गुण्डी, सँभालू-हिं०। (Vitex negundo, *Linn*) स० फा० इं०।

अस्लक़े अस्वद-अ० नील निर्गुण्डी, काला सँभालू-हिं०। (Justicia gendarussa; *Linn*) स० फा० इं०।

अस्लक़े आबी-अ० जल निर्गुण्डी, पानी का सँभालू-हिं०। (Vitex trifolia, *Linn*) स० फा० इं०।

अस्लख-अ० पूर्ण बधिर मनुष्य, पूरा बहिरा (A Dumb)

अस्लज-अ० अर्तनीसा की जड़। Cyclamen persicum, *Miller* (Root of) देखो-बखुर मरियम्।

अस्लज्ज-अ० बखुर मरियम् का एक भेद, हब्बाजोदी। (A kind of sow bread)

अस्लत-अ० वह मनुष्य जिसकी नासिका आधे से अधिक कट गई हो।

अस्लतुज्जराअ-कलाई की हड्डी या पहुँचे की बारीक सिरा जो हथेली से लगा हुआ है।

अस्लम-अ० गोश बुरीदा-फ़ा०। सहज कर्ण हीनता

यह बुचा जो जन्म से कर्णहीन हो। जिसके कान जड़ से काट डाले गये हो। (Clipteared)

अस्लमुअदी–अ० मद्दहेछूत, छूत पैदा करने वाली वस्तु संक्रामक दोष। (Contagium)

अस्लराई–हिं० स्त्री० घोराई, राई। (Brasica nigra) मेमो०।

अस्लह–अ० नेज़ा, निश्तर, जवान वा कुहनी की नोंक।

अस्लह–अ० एक प्रकार का भयंकर सर्प जिसके पैर होते हैं। यह फारस देश में पैदा होता है।

अस्लान–अ० अन्सल, जंगली पियाज, काँदा, बनपलाण्डु (Scilla Indica)

अस्लियूस–यू० तज। (Laurus cassia)

अस्लुन्नह्ल–अ० मधु, शहद Honey (Mel) स० फा० इं०।

अस्लुन्न खाअ
रासुन्नुख अ
मब्दउन्नुख अ
–अ० सरे हराम मग्ज़–फ़ा०। सुषुम्ना शीर्षक–हिं०। (Medulla oblongata)

अस्लुरमिस–अ० (१) वह ओस जो रमिस पर पड़ता है। (२) शकर तेगाल।

अस्लुल् अह्मर–अ० लाल झाऊ। (Tamarix orientalis, *Vahl*) स० फा० इं०।

अस्लुल्क़सब–अ० इक्षु रस, ईख या गन्ने का पानी।

अस्लुल् क़सब–अ० एक प्रकार का मधु जो शुष्क खजूर से बनाया जाता हैं।

अ़स्लुल् क़ुल्त–अ० कुलथी की जड़। Dolichos biflorus (Root of--)

अस्लुल् खलाफ़–अ० वेदसादह् का दूध।

अस्लुल् फ़ार–अ० अज्ञात।

अ़स्लुल् बज़र–अ० भगांकुर मूल। (Crus clitoris)

अ़स्लु माकोल–अ० हलदी, हरिद्रा। (Curcuma longa)

अ़स्लुल् मुदव्वर–अ० (ए० व०), उ़सूलुल् मुदव्वर (ब० व०) कन्द–हिं० सं०। (Bulb or tuber) स० फा० इं०।

अ़स्लुल्लिसान–अ० कर्णमूल ग्रंथि। (Submaxillary gland)

अ़स्लुल्लुफ़ाहवर्री–अ० यव्रूज़स्सनम, बिलाडोना। (Mandrake)

अस्लुल्लुब्नी–अ० (१) मेअहे सायेलह्, सिलारस–हिं०। Liquid amber altingia, *Blume*) (Resin of Liquid storax) स० फा० इं०। म० अ० डाँ० (२) ह़सी लुवान, लोबान।

अ़स्लुल् ह्वा–अ० शीर खिश्त –फ़ा०। अकाश मधु–सं०, हिं०। (Manna) म० अ० डाँ०।

अस्लुल् हाज–अ० तुरञ्जबीन। Alhagi muarorum (Manna of)

अ़स्लुल् हिन्दबाउव्वरी–अ० जंगली कासनी की जड़। (Taraxaci radix) म० अ० डाँ०।

अस्लुस्समावी–अ० शीर खिश्त–फा०। आकाशमधु–सं०। (Manna) म० अ० डां०।

अ़स्लुस्सितत्र–अ० (ए० व०) उ़सूलुस्सितत्र (ब० व०), कन्द–सं०, हिं०। (Bulb or tuber) स० फा० इं०।

अ़स्लु़स्सीनी–अ० चोबचीनी–हिं०, द०, फा०। Radix chinensis (China root) स० फा० इं०।

अ़स्लुस्सूस–अ० यष्टिमधु–स०। मुलेठी, जेठीमध–हिं०। Glycyrrhizaeradix (Liquiceor root or liquorice) स० फा० इं०।

अ़स्लेखियार चम्बर–फा० अस्ले खियार शबर–अ० आरग्वध गूदिका–सं०। अमलतास का गूदा–हिं० Cassiapulpa (Cassiæ pulp) देखो—अमलतास।

अस्ले़ तर्बज़द–अ० कन्द या मिश्री का शीरा।

अस्लेतम्र–अ० दोशाव खुर्मा।

अस्लेदाऊद–अ० एक प्रकार के मधु का तैल।

अस्लेऩह्ल–अ० मधु, शहद। Honey (Mel)

अ़स्ले फ़रुन–अ० एक प्रकार का पत्थर जो यमन उम्मान देश में होता है।

अस्लेविलादुर–अ० एक प्रकार का श्याम जमदार द्रव है जो भिलावे से निकलता है।

अस्ले मा.ज़ी–अ० श्वेत खर्जूर, मधु।

अ.स्लेमु.स.फ्फा–अ० साफ किया हुआ या शुद्ध मधु। (Mel depuratum)

अ.स्लेमेसा–अ० मुलेठी, यष्टिमधु। (Liquorice)

अस्लेयाबिस–अ० खुश्कशवीन या पतला सुगंधित आहार।

अस्लेलुब्नी–अ० सिलारस। (Styrax)

अस्ले.हाशा–अ० वह शहद जिसको मक्खी हाशा (जंगली पुदीना) पर बैठी हो।

अस्व–हिं० संज्ञा पु० [सं० अश्व] (१) घोड़ा (A horse)। (२) असगंध, अश्वगंधा। (Withania somnifera)। (३) निर्धनी, कंगाल, दरिद्री।

अस्वह्–अ० बालों की लट, जुल्फ दराज।

अस्वकर्ण–हिं० पु० [सं०] साल, साखू। Sal tree (Shorea robusta, *Gartn*) फा० इं० १ भा०।

अस्वच्छ–हिं० संज्ञा पु० [सं०] अदर्शक, अपारदर्शक, ऐसी वस्तुएँ जिनमें से कुछ भी नहीं दीखता। अबैज हकीकी, असली सफेद–अ०। ओपेक (Opaque)–इं०।

अस्वद–अ० स्याह रंग, श्यामवर्ण, काला, कृष्ण। (Black)

अस्वद सालख–अ० श्याम सर्प। (A black serpent)

अस्वन्तः–सं० पु० चुल्ली। (A fireplace)

अस्वभाविक मृत्यु–हिं० संज्ञा स्त्री० वह मृत्यु जो स्वाभाविक न हो। अप्राकृतिक मृत्यु।

अस्वमारक–हिं० संज्ञा पु० [सं०] कनेर, करवीर, (Nerium odorum) फा० इं० २ भा०।

अस्वल–अ० वह मनुष्य जिसका पेडू आगे को निकला हुआ हो।

अस्वस्थ–हिं० वि० [सं०] (१) रोगी, बीमार। (२) अनमना।

अस्वात–अ० (ब० व०), सौत (ए० व०), शब्द ध्वनि। (Sound)

अस्वादुकटक–हिं० संज्ञा पु० [सं०] गोखरू। गोक्षुर।

अस्वास्थ्यम्–सं० क्ली०
अस्वास्थ्य–हिं० संज्ञा पु०
पीड़ा, रोग, अस्वस्थता, बीमारी।

अस्वेद्य रोगी–सं० पु० वह रोगी जिसे स्वेद (पसीना) न दिया जा सके। वह रोगी जो स्वेद कर्म करने के अयोग्य हो। यह जिसका स्वेद न किया जा सके। स्वेद के अयोग्य। स्वेद निषिद्ध। स्वेदावि-हित। च० सू० १४ अ०। वा० सू० १७ अ०। देखो—स्वेदः।

अस्स–अ० बुनियाद, जड़, हृदय। (Foundation)

अस्स्–अ० कुर्मतुलु वतर। शाब्दिक अर्थ जड़ किन्तु अर्वाचीन परिभाषा में कर्तित अवयव। (stump)

अस्सनतुल् अ.साफीर–अ० इन्द्रयव। (Wrightia tinctoria, *R. Br.*) देखो—कुटज।

अस्सफ़ाफ़न–अ० लिसानुल् ईल, राईबुल् ईल। इसके लक्षण में मत भेद हैं।

अस्समोगम्–
अस्ससोदगम्–
अस्समोदगुड़–
सं० अजवाइन। Carum (Ptychotis) Ajowan

अस्सरख्सुल् मुज्कर–अ० सरख श मुज्कर। चमाल फा०। Male fern (Filix mass) म० अ० डा०।

अस्सराजत–अज्ञात।

अस्साबूनुल्लिय्यिन–अ० हरा साबुन, नरम साबुन–हिं०। (Sapo mollis) म० अ० डा०।

अस्साबूनुस्.स.लिब–अ० कठोर साबुन, जैतून तैल का साबुन–हिं०। (Sapo durus) म० अ० डा०।

अस्सालिया–गु० चन्द्र सूर। (Lepidium sativum) फा० इं० १ भा०।

अस्सुउसन–पं० सुफेद राई–हिं० । सिद्धार्थक–सं० । (Eruca sativa) मेमो० ।

अस्सुलेमानियुल् अक्काल्–अ० सुलेमानी, दाराशिकना, दारचिकना–हि० । (Aydrargyri perchloridum)

अस्हव–अ० श्वेताभायुक्त रक्तवर्ण, प्याजी रंग, रोग विज्ञान में श्वेताभायुक्त रक्त वर्णीय कारोरह् (मूत्र) को कहते हैं ।

अह–सर्व० [सं०] मै । (I)

संज्ञा पु० [सं०] अहंकार; अभिमान ।

अहः–सं० क्ली०
अह–हिं० संज्ञा पु० } [सं०] अहन्

(१) दिवस, दिन । (Day) अम० । (२) सूर्य ।

अहङ्कार–
अहंकार– | सं० (हिं० संज्ञा) पु०

[वि० अहंकारी] (१) अभिमान, गर्व, घमंड क्षेत्रज्ञ पुरुष की चेतना । इन्द्रियादि सम्पूर्ण शरीर व्यापी अहं अर्थात् मैं और मेरा के भाव की विशेष प्रवृत्ति । ममत्व, वैकारिक, तेजस एवं भूत अर्थात सात्विक, राजस, तामस भेद से यह तीन प्रकार का होता है । सांख्य के समान आयुर्वेद शास्त्रियोंने इसकी उत्पत्ति महत्तत्वसे मानी है इनके अनुसार यह महत्तत्व से उत्पन्न एक द्रव्य अर्थात इसका एक विकार है । इसकी सात्विक अवस्था और तैजस की सहायता से पाँच ज्ञानेन्द्रियां, पांच कर्मेन्द्रियां तथा मन की उत्पत्ति होती है और तामस अवस्था तथा तेजस अर्थात् राजस की सहायता से पञ्चतन्मात्राओं की उत्पत्ति होती है, जिनसे क्रमशः आकाश, वायु, तेज, जल और पृथ्वी की उत्पत्ति होती है । यथा—

"तल्लिङ्गाच्च महत्तस्तल्लक्षण एवाहङ्कार उत्पद्यते, सतु त्रिविधो वैकारिकास्तैजसो भूतादिरिति, तत्र वैकारिकादहङ्कारात् तैजस सहायात्तल्लक्षणान्येवैकादशेन्द्रियाण्युत्पद्यते, भूतादेरपि तैजस सहायात्तल्लक्षणान्येव पञ्चतन्माणाण्युत्पद्यन्ते । सु० शा० १ अ० ।

अहतम्–सं० क्ली० नूतन वस्त्र । (Newcloth) हला० ।

अहत्ती–सि० कुम्बी, खुम्बी । (Careya arborea, *Roxb*) मेमो० ।

अहन्–हिं० संज्ञा पु० [सं०] दिन ।

अहन् पुष्प–हिं० संज्ञा पु० [सं०] दुपहरिया का फूल, गुल दुपहरिया ।

अहर–हिं० संज्ञा पु० डोवा, पोखरा, सरोवर (A reservair for collecting rain-water)

अहरङ्ग–मल० काष्ठ अंगार, लकड़ी का कोयला । Wood charcoal (Carboligne) इं० मे० मे० ।

अहरदृक्–सं० पु० गृध्र, गिद्ध पक्षी । शकुनी–बं० । बल्चर (A vulture) इं० । बै० निघ० ।

अहरण
अहरणी } –जय० अहरन, अर उन ।

अहरन–हिं० संज्ञा स्त्री०
अहरनि–हिं० संज्ञा स्त्री० } [सं० आ+धारण=रखना] निहाई ।

अहरह–हिं० क्रि० वि० प्रति दिन । (Everyday)

अहरा–हिं० संज्ञा पु० [सं० आहरण=इकट्ठा करना] (१) जाड़े में तापने का स्थान । कन्डों का ढेर जो जलाने के लिये इकट्ठा किया जाए । (२) वह आग जो इस प्रकार इकट्ठे किए हुए कन्डों से तैयार की जाए ।

अहराक़–अ० जलाना । लु० क० ।

अहरितः–सं० पु० पाण्डु रोग, हारिद्र रोग । अथर्व० सू० २२ । ३ । का० १ ।

अहर्गण–हिं० संज्ञा पु० [सं०] दिनों का समूह ।

अहर्जवः–सं० पु० सम्वत्सर, वर्ष । (A year) के० ।

अहर्पणः-सं० पु० मांस । (Muscle, Flesh) हारा० ।

अहर्बान्धवः
अहर्मणिः } -सं० पु० अर्क वृक्ष, आक, मदार, (Calotropis gigantea) हे० च० ।

अहर्मुखम्-सं० क्ली०
अहर्मुख-हिं० संज्ञा पु० } प्रातः काल, सवेरा, भोर (Early morning, day-break)

अहर्रे-अ० अधिक उष्ण; ज्यादा गरम ।

अहलद-कना० बटः; वर्गद । Banian (Ficus Bengalensis)

अहलना-हिं० क्रि० अ० [सं० आहलनम्] हिलना, काँपना, दहलना ।

अहलात-यु० अगर । (Aloe wood)

अहलु-सं० बम्बल, वहल ।

अहल्यः-सं० त्रि०
अहल्या-हिं० वि० [सं०] } अनाकृष्ट-भूमि । जो धरती जोती न जा सके ।

अ(ऐ)हल्ल-सिं० अमलतास । (Cassia fistula, *Linn*) फा० इं० १ भा० ।

अहस्करः-सं० पु० अर्क वृक्ष, आक, मदार । (Calotropis gigantea) हे० च० ।

अहस्पतिः-सं० पु० (१) अर्क वृक्ष, मदार, आक, (Calotropis gigantea) । (२) सूर्य । (The sun) अम० ।

अहरसु-अ० वह व्यक्ति जिसके सिर में कम बाल हों ।

अहः-सं० नाश करना अथर्व० ।

अहार-हिं० संज्ञा पु० [सं० आहार] (१) भोजन खाना (Aliment, food, victuals) (२) लेई, माँड़ी । (Starch glue, paste) ।

अहालिम-यू० अगर (Aquilaria agallocha)

अहालिवा-मह०, बम्ब० चन्द्रसूर, हालिम । (Lepidium Sativum, *Linn*) इं० मे० प्लां० फा० इं० १ भा० ।

अहिः-सं० पु०
अहि-हिं० } (१) शोषक, सोसक, सीसा Lead (Plumbum)

प्रयोग—वसन्तकुसुमाकर रस । रत्न० सा० सं० (२) सर्प, नाग, फणि, साँप । सर्पेण्ट (A serpent)-इं० । मद० व० २२ । (३) उदावर्त, नाभि । (Navel) हारा० । (४) वज्रीवृक्ष, मनशा-शिजु वं० । (See-vajri) हे० च० । (५) अफीम (Opium) (६) सूर्य (The sun)

अहिंस-हिं० वि० [सं०] अहिंसक ।

अहिंसा-सं० स्त्री० कण्टकपाली वृक्ष, काकदनी, हैंसा । काँटा गुड़ कोटली-वं० । (Capparis sepiaria) रत्ना० आमवात प्रलेप ।

गुण—विष शोथहर राज० ।

अहिकः, का-सं० पु० स्त्री०
अहिका-हिं० संज्ञा स्त्री० } (१) शल्मली वृक्ष, सेमल : शिमुलगाछ-वं० । सांवरी-मह० । (Bombix heptaphyllum) शब्द च० । (२) अन्धा सर्प (A blind snake)

अहिकान्तः-सं० पु० वायु, पवन । (Air, Atmosphere) हे० च० ।

अहिकुटी-सं० पु० भारद्वाज पक्षी । वैद्य निघ० ।

अहिक्षर-हिं० संज्ञा पु० तालमखाना । (Hygrophyli spinosa)

अहिगति-हिं० संज्ञा स्त्री० साँप की चाल, टेढ़ी चाल ।

अहिगन्ध फला-सं० स्त्री० शल्लकी वृक्ष (Boswellia serrata) रा० नि० व० ११ ।

अहिगन्धा-सं० स्त्री० (१) सर्पगन्धा, रास्ना विशेष गंधा, रास्ना विशेष वं० । सार्पगंध-मह० । (See

Sarpagandha) वै० निघ० । (२) इशरमूल, ईश्वरमूल (Iris root)

अहिच्छत्रः-सं० पु० मेषशृंगी, मेढ़ासिंगी । See-Ajashringi

अहिच्छत्रा-सं० स्त्री० (१) शताह्वा क्षुप, सौंफ मौरी शुल्फा, वं० (Pimpinell anisum) रा० नि० व० ४ ।

(२) शर्करा, चीनी, हि० चिनि बं० । Sugar (Saccharine) रा० नि० व० ४ ।

अहिछार-हिं० संज्ञा पु० सांप का विष, सर्प विष । (Snake poison' venom)

अहिजाहकः-स० पु० कृकलास (See-krikalasa) काँकलास बं० वै० निघ० ।

अहिजिह्वा-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] नागफनी ।

अहिजिह्विका-सं० स्त्री० महा शतावरी, वड़ शतमूली वं० (Sparagus racemosa वै० निघ० ।

अहित-हि० स० पु० बुराई, अकल्याण वि० [सं०] (१) शत्रु, वैरी विरोधी (२) अपथ्य अनुपकारी हानिकारक (adverse'inimical acting unkindly)

अहितकारी-हिं० पु० अहित करने वाला, शत्रु । (Inimical)

अहितद्रव्यम्-सं० क्ली० अपथ्य पदार्थ, अहित कारक द्रव्य ।

अहितपदार्थः-सं० पु० अहितकर अर्थात् हानिकारक पदार्थ ।

ये निम्न हैं जैसे—वृद्ध रमणी, पूति (दुर्गंधित) मांस, प्रभा निद्रा, मैथुन और दधि प्रभृति ।

अहिताहारः-सं० पु० अहितकर द्रव्य भक्षण, अहित भोजन, अहितकारी पदार्थ खाना ।

गुण—पीड़ाजनकत्व । वा० सू० ७ अ० ।

अहित्थः-स० पु० वनमेथिका, वनमेथी । Trigonella fœnum græcum (Wild variety) मद० व० २ ।

अहिद्विट-सं० पु० (१) नकुल, नेवला Mungoose (Viverra ichneumoa) (२) मयूर, मोर (A peacock)

अहिनिर्मोकः-सं० पु० सर्प निर्मोक सर्प कञ्चुक, साँप की केंचुली । भा० ।

अहिनी-सं० स्त्री० सर्पिणी, सांप की मादा, साँपिन । (A female snake)

अहिपति-सं० (हिं० संज्ञा) पु० साँपों का राजा, वासुकी ।

अहिपत्रकः-सं० पु० निर्विस सर्प विशेष (A kind of nonpoisonous sneke)

अहिपुत्रकः-सं० पु० तरालु, नौका विशेष हारा० ।

अहिपुष्पम्-स० क्ली० (१) नागकेसर पुष्प Mesua ferrea (Flower of-) च० द० (२) कुम्भी का तेल सु० चि० ३७ अ० ।

अहिपूतनः,-ना-स० पु० स्त्री० बाल रोग भेद । शिशु गुह्यक्षत, पूतना । यथा—मल मूत्र से सनी हुई बालक की गुदा को न धोने से या पसीना आने से अथवा स्नान न करने से रुधिर और कफ दूषित होकर खुजली को उत्पन्न करते हैं फिर खुजाने से तत्काल फुन्सियां हो जाती है और उनमें से चेप निकलता है फिर वह सब फुन्सियाँ एकत्रित हो कर छत्ता सी हो जाती हैं तब इस भयन्कर रोग को अहिपूतना कहते हैं मा० नि० क्षुद्ररो० ।

अहिप्पन-अफीम (Opium) इं० मे० मे० ।

अहिफलः-ला-सं० पु० स्त्री० दीर्घकर्कटिका, चिचिण्डा लम्बा काँकड़ वं० टर कांकड़ी मह० । (Trichosanthes anguina)

अहिफेनम्-कम्-सं० पु० क्ली० } (१) नागफेन,
अहिफेन-हिं० संज्ञा पु० } अफीम-हिं० स्वना माख्यात् सारजवर्गीयोपविष । आफिम्-वं० अफून अफूकड़री-मह० आफन माल । नलमुण्डु-तै० । Opium poppy(Papaver somniferum) देखो—अफीम । (२) सर्प के मुँह की लार वा फेन । (The saliva or venom of asnake)

अहिफेन वटिका–सं० स्त्री० अतिसारोक्त रस विशेष खर्ज्जूर, पिंड खर्ज्जूर। र० सा० सं०।

अहिफेनपाकः–सं० पु० १६ तो० शुद्ध अफीम को १६ सेर दूध और आध सेर घी में पकाएँ। ठंडा होने पर १॥ सेर शक्कर मिलाएँ फिर जायफल, लवङ्ग, जावित्री, नागकेशर, अकरकरा, समुद्रफेन, कपूर, चन्दन, त्रिकुटा, धत्तूर के बीज, मुसली, तगर, शुद्ध सफेद गुंजा, चव्य, बीजबन्द करन्ज, चित्रक, पीपलामूल, जीरा, अजवाइन, बला, गोखरू बबूल की गौंद और शिलाजीत प्रत्येक एक एक तो० चूर्णकर मिलाएँ। इसमें भंग चूर्ण १६ तो० वंग, ताम्बा, लोहा, अभ्रक, और पारा की भस्म प्रत्येक १-१ तो० मिलाकर घोटें और कस्तूरी तथा अगर से सुवासित करके रखलें इसे पाचन शक्ति के अनुसार खाए और ऊपर से भैंस का दूध पिए तो मनुष्य १०० स्त्रियों के साथ रमन कर सकता है इससे स्त्रियों का वन्ध्यापन पुरुषो की नपुंसकता, खाँसी, दमा शीत, अपस्मार, उरःक्षत उन्माद, पाण्डुरोग ८० प्रकार के वातरोग कफ रोग हिचकी, प्रमेह, आमवात, जुकाम और अतिसार नष्ट होते हैं।

अहिफेन बीजम्–सं० क्ली० खसखस, पोस्ते का बीज पुस्त थाक्मि वं० Poppy seeds (Seeds of Papaver somniferum।

अहिफेनासव–स० पु० यह आसव अतिसार तथा विसूचिका के लिए हितकर है।

योगतथा निर्माण विधि—मधूक मद्य (महुआ की सुरा) १०० पल अफीम ४ पल नागर मोंथा, जायफल, इन्द्रयव तथा एला प्रत्येक १-१ पल इन सबको बर्तन में बन्दकर एक मास तक रखे मात्रा—१० से ३० बूंद। भैष०।

अहिवेल–हिं० संज्ञा स्त्री० [सं० अहिवल्ली प्रा० अहिवेली] नागवेलि पान।

अहिभयदा–सं० स्त्री० भूम्यामलकी, भूँई आमला। (Phyllanthuseneruri) रा० नि० व० ५।

अहिभुक–सं० पु० (१) मयूर, (A peacock) रा० नि० व० १९। (२) तार्क्ष्य। (See-tarkshyam) मे०। (३) क्षुद्र० सापसंद नामक प्रसिद्ध वृक्ष (४) नाकुली नामक महाकंद शाक (Vanda Roxburghii) (५) गन्ध नाकुली। (Ophioxylon serpentinum रा० नि० व० ७ See–Nakuli

अहिमणि–हिं० स्त्री० सर्पमणि।

अहिमर्द्दनी–सं० स्त्री० गन्ध नाकुली रास्ना विशेष बं० (Ophioxylon serpentinum) अहिलता विशेष सापसंद पश्चि०। रा० नि० व० ७ देखो—नाकुली।

अहिमारः-कः–सं० पु० विट्खदिर, दुर्गन्धि खैर, अरिमेद गुये बाब्ला बं० गन्धी हिबर–मह०। (Acacia farnesiana *Willd*) रा० नि० व० ८।

अहिभेदः-क–सं० पु० विट्खदिर, अरिमेद (Acacia farnesiana, *Willd*) रा० नि० व० ८।

अहिय्यह्–अ० (व० ब०) हय्यु (ए० व०) सजीव, चैतन्य, जीवधारी, जीवित, जिन्दा, एलाइव (Alive) इं०।

अहिरावन–
महिरावन– } वम्ब० घयामारो। ज़ख़्मे हयात-फ़ा०। (Bryophyllum calycinum' *Salisb*) मेमो०।

अहिरिपुः-सं० पु० मयूर, मोरपक्षी। (A peacock) रत्ना०।

अहिलता–सं० (हिं० संज्ञा) स्त्री० (१) सापसंद। (Ophioxylon serpentinum) गन्धनाकुली। रा० नि० व० ७। देखो—नाकुली। (२) ताम्बूल, नागवल्ली, पानवृक्ष। पान गाछ-बं०। (Piper betlesyn chavica betle) रा० नि० व० ११।

अहिलेखन–हिं० संज्ञा पु० [सं०] अहिल्यकम्–स०। अगमकी–हिं०। (Mukia scabrella *Arn*) फा० इं० २ भा०।

अहिलोकिका-सं० स्त्री० भूम्यामलकी, भूँई आमला (Phyllanthusneruri) वै० निघ०।

अहिल्यकम्-सं० क्ली० अहिलेखन, घटाली, अगमकी -हिं०। (Mukia scabrella Arn) फा० इं० २ भा०।

अहिवधो रसः-सं० पु० मिट्टी का नया एक ऐसा घड़ा लें जिसमें ४ सेर पका पानी आसके। फिर शुद्ध गन्धक ६४ तो०, ताम्बे के पत्र में ३२ तो० और सीसे के पत्र ३२ तो० लेकर घड़े के नीचे गन्धक का चूर्ण और उस पर ताम्र पत्र तथा ऊपर से सीसे के पात्र, फिर उसके ऊपर गन्धक का चूर्ण, इस प्रकार घड़े में सबों की तह जमा कर ऊपर से १२ तोला पारे और गन्धक की कज्जली डालकर घड़े के मुख को कत्था गुड़ और चूना मिलाकर बन्द करके सुखाकर घड़े को चूल्हे पर रक्खें और नीचे से १२ पहर तेज आँच दें। जब स्वांग शीतल हो जाय तो निकाल कर बारीक पीस कर मोटे कपड़े से छान कर पृथक् रखलें।

फिर एक ऐसा घड़ा लें जिसमें पक्का ४८ सेर पानी आसके, फिर उसके भीतर गुड़ और चूने को पानी में पीस कर अच्छी तरह लेप करके सुखाले और एक जवान पुष्ट काला गेहूअन साँप को पकड़कर इस प्रकार मारे कि उसके बदन में चोट लगकर छिद्र न हो जाय (क्लोरोफार्म सुँघाने से साँप मर जाता है)। फिर उसके पेट में मुख द्वारा ३२ तो० पिसी हुई हरिताल डाल कर ४ तो० पिसा हुआ बच्छनाग डालकर फिर ऊपर से खूब बारीक पिसी हुई ३२ तो० हरताल डालकर उपर्युक्त घड़े में ४ तो० पिसा हुआ बच्छनाग और एक सेर बाकुची, भिलावाँ और इन्द्रजौ का चूर्ण डालकर ऊपर से उस साँप की गोल चक्री जैसी करके रखदें। ऊपर से आक की ठहनियाँ ६४ तो०, थूहर की ठहनियाँ १ सेर, बट जटा की अंकुरें १ सेर और घिकुवार १ सेर डाल कर घड़े के मुख को गुड़ चूने से अच्छी तरह बन्द करके ऊपरसे कपड़मिट्टी करके सुखालें। फिर उसे चूल्हे पर रख कर नीचे चावल पकने योग्य हलकी आग दें। पुनः ९६ (१९२) तो० घी लोहे की कढ़ाही में गरम करके घड़ेकी सभी चीज़ उसमें डालकर नीचे तेज आँच दे और बीच में ८ तो० भुनी फिटकरी ८ तो० सुहागा ले चूर्ण करके थोड़ा २ चुटकी से डालते रहे। जब कढ़ाही के ऊपर आग लगाकर सब घी जल जाए तब बसमें उपर्युक्त ताम्बा और सीसा का छाना हुआ चूर्ण मिलाकर बारीक पीस कर रखलें।

इसको १ रत्ती भर से प्रारम्भ करें। चार दिन बाद दूना, फिर चारदिन बाद तिगुना और ४ दिन बाद चौगुना, इस प्रकार जब ४ रत्ती पर मात्रा आजाए तब उतने ही लेते रहें। ७ दिन तक जौ का दलिया खाएँ। नमक बिलकुल त्याग दें। यदि नमक न छोड़ा जासके। तो किंचित् सेंधा नमक लिया करें। इस तरह करने से सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त कुष्ठ नष्ट हो जाता है। यह त्रिदोष जन्य रोगों और राजयक्ष्मा को नष्ट करता है। रस० योग सा०।

अहिल्या-सं० स्त्री० बन मेथिका। वन मेथी। (Crotalaria albida) वै० निघ०।

अहिवल्ली-सं० स्त्री० नागवल्ली। पान। (Piper betle, syn, chavica betle) भैष० ध्व० भ० चि०।

अहिवासन-हिं० संज्ञा पु० धनेश पक्षी। (Buceros)

अहिविषापहा-सं० स्त्री० अहिलता, सापसंद। (Ophioxylon serpentinum) वै० निघ०।

अहिश्तना-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] बच्चों का एक रोग जिसमें उनको पानी सा दस्त आता है, गुदा से सदा मल बहा करता है, गुदा लाल रहता है, धोने पोछने से खुजली उठती है और फोड़े निकलते हैं।

अहिसाव-हिं० संज्ञा पु० [सं० अहिशावक] साँप का बच्चा। पौआ। सँपोला।

अहिस्कंधः-सं० पु० गुल्फ, गट्ठा। पावेर, गुल्ली -बं०।

अही-सं० स्त्री० गवि, गाय, (A cow)

अहीक़-अ० लम्ब ग्रैव, लम्बी गर्दन वाला। (Long necked)

अहीन्द्रः-सं० पु० शारिवा, अनन्तमूल। (Hemidesmus Indicus) च० द० यक्ष्म० चि० लवङ्गादि चूर्ण।

अहीफ़-अ० पतले कमरवाला। (Thinloined)

अहीरणिः-सं० पु० द्विमुख सर्प, दुइ मुँहा या दो मुँहवाला सांप। शङ्खिनी। (Double mouthed snake; an erix) हारा०।

अहीरुह-सं० पु० शाक वृक्ष। शगुण-हिं०। (Tectona grandis, Teak tree)

अहुल-हिं० संज्ञा पु० ओदुल, पुवान, पुवेन; गह।

अहे-हिं० संज्ञा पु० [देश०] एक पेड़ जिसकी भूरी लकड़ी मकानों में लगती है तथा हल और गाड़ी आदि बनाने के काम में आती है।

अहेर-सिंध० चन्द्रसूर, अहलीव (Lepidium sativum, *Linn*) इं० मे० मे०।

अहेरु-सं० स्त्री० शतमूली शतावर। (Asparagus racemosus, *Willd*) अम०।

अहेरो-सिंध० चन्द्रसूर। (Lepidium sativum, *Linn*) इं० मे० प्लां०।

अहोन व्लैट्ट्राइजेर फ्लुजेल्सेमोन-जर० कर्णिकार-सं०। छोटा सोन्दाल-हिं० (Peterospermum aserifolium) इं० मे० मे०।

अहोरात्र-हिं० दिन रात, दिवानिशि, अहर्निशि। (Day & night)

अहौज़-अ० लम्बा मूर्ख आदमी।

अहौम-अ० विशाल शिरवाला। (Large-headed)

अहौर-अ० हुरियह् (जिसके नेत्र का श्वेत भाग अत्यन्त श्वेत एवं काला भाग अत्यन्त श्याम हो।

अ़हौल-अ० काज़, भेंगा जो एक चीज का दो देखे। (Squint)

अ़हौलिय्यत-अ० भेंगापन; स्ट्राबिज़मस (Strabismus)-इं०।

अ़हौस-अ० तंग चश्म-फा०। जिसके एक या दोनों नेत्र संकुचित (छोटे) हों।

अह्जाऽ-अ० पालन पोषण करना, खिलाना। (Bringing up)

अह्जज़-अ० सोना, सुलाना। (Sleep, cause to sleep)

अह्तम्-अ० जिसके अग्रिम दंत खण्डित हों।

अह्ताऽ-अ० कुब्ज, कुबड़ा-हिं०। कूज पुश्त-फा० (Hunch backed)

अह्दब-अ० कूज पुश्त-फा०। कुब्ज, कुबड़ा-हिं०। हञ्च वैक्ड (Hunch backed)-इं०।

नोट—कुबड़ी स्त्री को अरबी में हुद्बा कहते हैं।

अ़ह्दब और अक़्अस का भेद—जिसका पृष्ठ बाहर को निकला हो और वक्ष भीतर को दबा हुआ हो उसे अ़ह्दब और विरुद्ध इसके जिसका वक्ष बाहर को निकला हो तथा पृष्ठ भीतर को दबा हुआ हो उसे अक़्अस कहते हैं।

अह्दब-अ० वह मनुष्य जिसकी पलकें विशाल हों।

अह्दर-अ० शोफ उदरीय, वह मनुष्य जिसका उदर शोथयुक्त हो।

अ़ह्दल-अ० एकाण्ड, एक अण्डावाला, वह मनुष्य जिसके एक अण्ड हो।

अह्दाऽ-अ० कुथड़ा, शोथयुक्त एवं ढीले स्कन्ध वाला।

अह्दाकुल् बक़र-अ० काला अंगूर। (Black var of Vitis vinifera).

अह्दाक़ल मर्ज़ी-अ० उक़्हबान, बाबूना गाव। (Parthenium matricaria)

अह्दाब-अ० (ब० व०), हुद्ब (ए० व०) पलकें। (Eye-lids)

अ़हदिया व अ़हादिया-अ० अज़्दहा-फ़ा०। अजगर-हिं०। (Boaconstrictor)

अ.ह्.नफ़-अ० कुल्च, टेढ़े या छोटे पाँव वाला। क्लब-फूटेड (Club-footed)-इं०।

अ.ह्.मक़-अ० मूर्ख, निर्बुद्धि, बुद्धिहीन, बे समझ, सामान्य। ईडिअट (Idiot)-इं०।

अह्.मदाबादी मेवा-सं० खिरनी, खीर खजूर, खीरी, राजादनी-हिं०। काकादिया-गु०। राजन, केर्नी-मह०। रायन-गु०। पल्लु-त०। (Mimusops hexandia *Roxb, Cor*) फा० इं० २ भा०।

अ.ह्.मर-अ० सुर्ख, सुर्ख रंग-फ़ा०। रक्तवर्ण, लाल-हिं०। Red (Rubrum)। इतिब्बा ने इसकी चार कक्षाएँ निर्धारित की हैं, जैसे—(१) असहब अर्थात् सुर्ख सफेदी मायल (श्वेताभरक्त), (२) वर्दी अर्थात् अरुण वा गुलाबी, (३) कानी अर्थात् गम्भीर रक्त और (४) अक़्तम अर्थात् सुर्ख स्याहीमायल (श्यामाभरक्तवर्ण)।

नोट—अह्.मर का प्रयोग संकेत रूप से कठिन मृत्यु, मांस, मद्य, केशर तथा एक प्रकार के छुहारे के लिए भी होता है।

अ.ह्.मर अक़्तम-अ० श्यामाभरक्तवर्ण, अधिक कालापन लिए हुए लाल रंग।

अ.ह्.मर क़ानी-अ० गम्भीर रक्तवर्ण, लाल भभूका, अत्यन्त रक्तवर्ण।

अ.ह्.मर नासिअ-अ० हलका रक्तवर्ण, पिलोई लिये लाल रंग (पीताभ रक्त वर्ण) रोग-विज्ञान में हलके लाल या पिलोई लिए हुए लाल रंग के क़ारोरह् (मूत्र) को कहते हैं। यह नारी की अपेक्षा तीक्ष्ण होता है।

अ.ह्.मश-अ० जिसकी पिंडलियाँ पतली और बारीक होती हैं।

अह्लाटः-सं० पु० ओकड़ा। प० मु०।

अ.ह्.यून-यू० एक बूटी है जिसका शिर अजगर के शिर के समान होता है।

अ.ह्.रारुल् बुक़ूल-अ० वह तरकारियाँ जो कच्ची खाई जाती हैं। जैसे काहू आदि।

अह्लावदिया-सिरि० शबरम्, बाँस के समान एक बूटी है जो खेत और बगीचों में उगती है।

अ.ह्.लाम-अ० (व० व०), हुल्म (ए० व०) (१) स्वप्न, निद्रा। (Sleep, dream) (२) कुस्वप्न। (Bad dream) देखो—हुल्म।

अह्लुला-सं० स्त्री० भल्लातक, भिलावाँ, (Semecarpus anacardium) श० च०।

अह्वाल-अ० (व० व०) दशा, अवस्था, लक्षण। तिब (वैद्यक) की परिभाषा में मनुष्य शरीर की तीन अवस्थाएँ अर्थात् स्वास्थ्य, रोग, तीसरी अवस्था (हालते साबसा) जो रोगारोग के मध्य मानी जाती है, यथा—सहजाधिता आदि।

अह्.यह्-अ० (व० व०), हवा (ए० व०) वायु, हवा-हिं०। (Atmosphere)

अह्.शा-अ० (व० व०), हशा (ए० व०) वक्षोदरान्तरिकावयव, उदर एवं वक्ष के भीतर स्थित अवयव। विसरा Viscera (व० व०), विस्कस Viscus (ए० व०)-इं०। विस्कस (Pelvic viscer)-इं०।

नोट—(१) वक्षान्तरिक अवयव को अहशा सदरी एवं उदरान्तरिक अवयव को अह्.शा बत्नी और पेडू अर्थात् बस्तिगह्वरस्थ अवयव को अह्.शाउल् आनह कहते हैं।

(२) डाक्टरी में मस्तिष्क का भी अ.ह्.शा में ही समावेश होता है।

अह् शाउल् आनह्-अ० पेडू के जोफ़ में स्थित अवयव विशेष। जैसे—जरायु, वस्ति (मूत्राशय) आदि वस्ति गह्वरान्तर अवयव विशेष। पेल्विक विसरा (Pelvic viscera)-इं०।

अह्.शाउल् बत्न-अ० औदरीय अवयव, उदर के भीतर स्थित अवयव, उदराशयस्थ अवयव। जैसे—आमाशय, यकृत, प्लीहा तथा आन्त्र प्रभृति (Abdominal viscera)

अ.ह्.शाउस् सद्र-अ० वाक्षीयावयव, वक्ष के भीतर स्थित अवयव। जैसे—हृदय, फुप्फुस आदि। थोरेसिक विसरा (Thoracic viscera) -इं०।

अ.ह्.सो-अ० (ब० व०), हसा ह्.स्सह् (ए०

व०) हरीरा, दूधी, एक प्रकार का पतला आहार है जो साधारणतः सबूस (भूसी), शर्करा और बादाम तेल आदि के योग से निर्मित किया जाता है, देखो—हरीरा (Harira)

अक्ष-सं० पु०
अक्ष-हिं० संज्ञा पु० } [स्त्री० अक्षा]

(१) बिभीतकी। बहेड़ा। (Terminalia belerica) रा० नि० व० ६। भा० म० ४ भा० अञ्जन। "जग्ध्वाक्षकाष्ठैर्मलमायसन्तु।" पचमा० एलादि मन्थ वृन्द०। सि० यो० सिद्ध प्रयोग क्षु० काम० वृन्द०। वृन्द। (२) कर्ष परिमाण। कर्ष नामक तौल जो १६ माशे की होती है। प० प्र०। देखो—कर्षः। (३) रुद्राक्ष वृक्ष। भा० अने० व०। (४) इन्द्राक्ष, ऋषभक (५) सर्प, साँप (A serpent) मे०। (६) श्वास, दमा। (७) ऋषभक। (८) देव शिरीष। शिरीष विशेष। रा० नि० व० ६।

क्ली० (९) विषयेन्द्रिय। इन्द्रिय। रा० नि० व० १८। वा० शा० ३ अ०। (१०) सौवर्चल लवण, काला नोन। (Sochal salt) (११) तुत्थक, तूतिया। मे० पद्मिकं। (१२) बिभीतक फल। (१३) पद्मबीज। रा० नि० व० ११।

हिं० संज्ञा पु० (१४) धुरी किसी गोल वस्तु के बीचों बीच पिरोया हुआ वह छड़ वा दण्ड जिस पर वह वस्तु घूमती है। (१५) Pivot पहिये की धुरी। (१६) Axis वह कल्पित स्थिर रेखा जो पृथ्वी के भीतरी केन्द्र से होती हुई उसके आर पार दोनों ध्रुवों पर निकली है और जिस पर पृथ्वी घूमती हुई मानी गई है। (१७) तराजू की डाँड़ी। (१८) सोहागा टंकण (Borax)। (१९) आँख, नेत्र (An eye)। (२०) गरुड़। (२१) जन्मांध। (Born blind)

अक्षकः—सं० पु० (१) बिभीतकी, बहेड़ा। (Terminalia belerica) भा० पू० १ भा०। (२) तिनिश वृक्ष, तिरिच। (Lagerstræmia flos reginæ) र० मा०। "विश्वमक्षसमं पिबेत्।" व० द० ज्वरातिसार-चि०। (३) रुद्राक्ष वृक्ष। श० र० (४) इन्द्राक्ष वृक्ष। (५) सर्प। (६) २ तो० मान। मे० पद्मिकं।

अक्षकम्-सं० क्ली०
अक्षक-हिं० संज्ञा पु० } अक्षिकास्थि,

हँसली Collar bone (Calvicle) अज मुत्तर्कुवह, अत्तर्कुवह-अ०।

अक्षक सन्धिस्थालक-हिं० संज्ञा पु० (Facet for clavicle)

अक्षकङ्काल-हिं० संज्ञा पु० (Axial skeleton)

अक्षकाधर-हिं० वि०। (Subclavicular) हंसली के नीचे का।

अक्षकाधर शिक्यम्-सं० क्ली० (Ausa subclavia)

अक्षकाधरा हिं० संज्ञा स्त्री० अक्षकास्थि तथा पहिली पसली के बीच में रहने वाली एक पेशी विशेष। (Subclavius infraclavicular) अजलहे तहतुत्तर्कुवह-अ०।

अक्षकाधरा धमनी-सं० (हिं० संज्ञा) स्त्री० अक्षकाधोवर्तिनी धमनी। (Subclavian artery)

अक्षकाधो धमनी-हिं० संज्ञा स्त्री० हँसली के नीचे की धमनी। यह हँसली के नीचे के अंगों में शुद्ध रुधिर देती है। (Subclavian artery)

अक्षकाधो पेशी-हिं० संज्ञा स्त्री० हँसली के नीचे की पेशी। (Subclavious muscle)

अक्षकाधोवर्तिनी धमनी-सं० (हिं० संज्ञा) स्त्री० हँसली के नीचे की धमनी। (Subclavian artery) शिर्यान तह्तुत्तर्कुवह-अ०।

अक्षकाधोवर्त्ती शिरा-हिं० संज्ञा स्त्री० हँसली के नीचे की शिरा (Subclavian vein)

अक्षिकान्तरिच्छद्रम्-सं० क्ली० (Jugular notch)

अक्षकान्तरीय स्नायुः-सं० पु० (Intercla-vicular)

अक्षकारका-हिं० संज्ञा स्त्री० घृतकुमारी। (Aloe Indica) वै० निघ०।

अक्षकाष्ठम्-सं० क्ली० बिभीतक काष्ठ। Terminalia belerica (The root of) च० द० पाण्डु चि०।

अक्षकास्थि-हिं० सज्ञा स्त्री० अक्षक। हँसली की हड्डी (Clavicle)

अक्षकूट-हिं० संज्ञा पु० [सं०] आँख की पुतली।

अक्षकोत्तर-सं० (हिं० संज्ञा) स्त्री० (Supra clavicular)

अक्षगणः-सं० पु० श्रोत्रादि इन्द्रिय समूह। ज्ञानेन्द्रियाँ, विषयेन्द्रियाँ। (The organs of sence)

अक्षगन्धिनी-सं० स्त्री० अतिवला, कंघी, ककही (Sida rhombifolia) वै० निघ०।

अक्षणी-सं० स्त्री० चक्षु, नेत्र। अथर्व० । १० । २ । ६ ।

अक्षतः-सं० पु०
अक्षत-हिं० संज्ञा पु० } (१)

(Barley) यव, जौ। (२) (बहु०) आतप तण्डुल (चावल)। रा० नि० व० १६। (३) शस्य मात्र। धान्य आदि व्रीहि यवादि। अ० टी० भानुः। सं० क्ली० (४) लाजा। धानका लावा। मे०। यव। जौ। (Barley) प० मु०।

"लाजेषु क्षिप्तहिंसिते। यवेऽपिक्वचित्"।

मे० तन्त्रिक। कोई विना टूटे हुए चावल को कहते हैं; जो देवताओं की पूजा में चढ़ाया जाता है।

स० त्रि०, हिं० वि० (१) अव्रण। जिसमें क्षत या घाव न किया गया हो। (२) अहिंसित मे०।

(३) अखंडित। विना टूटा हुआ। सर्वांग पूर्ण। समूचा। शर०।

अक्षतण्डुला-सं० स्त्री० महा रास्ना। चुप। रा० नि० व० ४।

अक्षतयोनि-हिं० वि० [सं०] (कन्या) जिसका पुरुष से सम्बंध न हुआ हो। कुमारी। वर्जिन (Virgin), वर्जो इनटैक्टा (Virgo-intacta)-इं०। थकिरह, अज़रा, दोशीज़ह, नावाजिग़ह-अ०। दोशीजह,-फा०। कुँवारी, कुँवारी औरत-हिं०; उ०। हिं० संज्ञा स्त्री० (१) वह कन्या जिसका पुरुष से समागम न हुआ हो। (२) वह कन्या जिसका विवाह हो गया पर पति से समागम न हुआ हो।

अक्षतरोगः-सं० पु० उपनख रोग विशेष।

लक्षण—वात पित्त कुपित होकर नख के मांस को पका देते हैं जिससे वेदना और ज्वर पैदा हो जाते हैं। इसरोग को चिप्प, अक्षत वा उपनख रोग कहते हैं। यथा-"कुर्यात्पित्तानिलं पाकंनख मांसे सरुग्ज्वरम्, चिप्पमक्षत-रोगं च विद्यादुपनख च तम्!" वा० उ० ३१ अ०। आङ्गूल हाड़ा-बं०।

अक्षतवीर्य-हिं० वि० [सं०] जिसका वीर्य पात न हुआ हो। जिसने स्त्री संसर्ग न किया हो।

अक्षता-हिं० वि० [सं०] जिसका पुरुष से संयोग न हुआ हो।

संज्ञा स्त्री० (१) वह स्त्री जिसका पुरुष से संयोग न हुआ हो।

(२) धर्मशास्त्र के अनुसार वह पुनर्भू स्त्री जिसने पुनर्विवाह तक पुरुष संयोग न किया हो।

(३) कर्कटशृंगी, काकड़ासींगी। (Rhus acominata)

अक्षते-चे खोर-अक्षत। फा० इ०।

अक्षतैलम्-सं० क्ली० बहेड़ा का तेल, विभीतक तैल, बयड़ा बीजेर तैल-बं०। (Terminalia belerica (Oil of) वा० उ० १३ अ०।

अक्षदण्ड-

अक्षधरः-सं० पु० शाखोट वृक्ष। शेओड़ा गाछ-बं०, भूरि प्र०। (Trophis aspera),

अक्षधुर-हिं० सं० पु० [सं०] पहिए की धुरी।

अक्षधूर्त्तः, र्त्तिलः-सं० पु० वृषभ, बैल। षाँड़-बं०। (Abull an ox) हारा०।

अक्षन-हिं० संज्ञा पु० (Axom) सेब की जो

शाखा नाड़ी बन जाती है उसे अक्षन कहते हैं।

अक्षपाकः-सं० पु० संचल लवण। (Sochal salt) वै० निघ०।

अक्षपिंडः-सं० पु० शंखपुष्पी (Andronpogon aciculartum) वै० निघ०।

अक्षपीड़ः-सं० पु० (१) श्वेत बुह्ना। श्वेतबुह्नामूल रसेंद्र चि० ६ अ०। (२) दुरालभा, (Alhagi maurorum) सु० चि० ६ अ०।

अक्षपी(ड़का)ड़ा-सं० स्त्री० (१) कालमेघ। शंखिनी यवतिक्त। (Andropogon paniculata, *Vees*) रा० नि० व० ३। (२) श्वेत बुह्ना। सु०। प० मु०।

अक्षमः-सं० पु० (१) स्थूल

अक्षमः-सं० पु० स्थूल मूलक। (२) वन चटक जंगली गौरैया। (Wild-sparrow) वै० निघ०। (मा०) स्त्री० (१) अक्षान्त। ईर्ष्या (Envy) श० र०। (२) असमर्थ अशक्त।

अक्षम-हिं० वि० [सं०] [संज्ञा अक्षमता] (१) क्षमारहित। असहिष्णु। (२) असमर्थ। अशक्त लाचार।

अक्षमता-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] (१) क्षमा का अभाव। असहिष्णुता (२) असामर्थ्य।

अक्षमाला-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] रुद्राक्ष की माला।

अक्षय-
अक्षय्य- } हिं० वि० [सं०] जिसका क्षय न हो अविनाशी। अनश्वर। सदा रहने वाला।

अक्षरः-सं० पु०
अक्षर-हिं० संज्ञा पु० } (१) अपामार्ग, चिचड़ा (Achyranthesaspera) हे० च०। सं० क्ली० (२) जल (Water) (३) अपामार्ग जल (४) आकाश (५) अकारादि वर्ण हरफ। हिं० वि० अच्युत स्थिर; अविनाशी नित्य।

अक्षरुचकम्-सं० क्ली० मृत्तिका लवण। खारी मिट्टी सोरा व०। सोर मिट-मह० वै० निघ०।

अक्षरेखा-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] धुरी की रेखा। वह सीधी रेखा जो किसी गोल पदार्थ के भीतर केन्द्र से होती हुई दोनों पृष्ठों पर लंब रूप से गिरे।

अक्षल गुडः-सं० पु० (Axis cylinder)

अक्षवाट्-हिं० संज्ञा पु० [सं०] अखाड़ा कुश्ती लड़ने की जगह।

अक्षवीर्यवान्-सं० पु० श्वेत करवीर, श्वेत कनेर। Nerium odorum (White var of) वै० निघ०।

अक्षशिरोधिजा-सं० स्त्री० मन्यास्थ शिरा वै० निघ०

अक्षसमा-सं० स्त्री० (Axis vertebra second cervical vertebra;

अक्षसमापृष्ठकीया संधि-सं० क्ली० (Occipito-axial joint)

अक्षसस्यम्-सं० क्ली० कपित्थ फल कैथ कविठ-म० (Feronia elephantum) वै० निघ०

अक्षसूत्र-हिं० संज्ञा पु० [सं०] रुद्राक्ष की माला।

अक्षहीन-हिं० वि० [सं०] नेत्रहीन अन्धा।

अक्षांश-हिं० संज्ञा पु० [सं०] (१) भूगोल पर उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव से होती हुई एक रेखा मानकर उसके ३६० भाग किए गये हैं इन ३६० अंशों पर से होती हुई ३६० रेखाएं पूर्व पश्चिम भूमध्य रेखा के समानान्तर मानी गई है अक्षांश की गिनती विषुवत वा भूमध्य रेखा से की जाती है (२) वह कोण जहां पर क्षितिज का तल पृथ्वी के अक्ष से कटता है।

अक्षार लवण-हिं० संज्ञा पु० (१) वह लवण जिस में क्षार न हो वह नमक जो मिट्टी से निकला हो नोट—कोई कोई सेंधे और समुद्र लवण को अक्षार लवण मानते हैं (२) वह हविष्य भोजन जिसमें नमक न हो और जो अशौच और यज्ञ में काम आवे अकृत्रिम सेंधव आदि जैसे दूध, घी, चावल, तिक्त मूंग और जौ आदि। हारलता।

अक्षि-सं० क्ली० हिं० संज्ञा स्त्री० नेत्र, आंख, नयन। (Eye) रा० नि० व० १८।

अक्षिकः-सं० पु०
अक्षिक-हिं० संज्ञा पु० } (१) रञ्जन वृक्ष।

आउच गाछ वं० (Dalbergia oujeiniensis) रत्ना० । (२) आल का पेड़ । आच्छुक । (Morinda citrifola)

अक्षिकुंडः-सं० पु० (Orbit) अक्षिखात ।

अक्षिकुंडीय-सं० त्रि० (Orbital) अक्षिखात सम्बन्धी ।

अक्षिकूटः-क-सं० पु० (१) Eye ball ईषिका, नेत्रतारा, अक्षिगोलक । वा० सू० अ० (२) गजाक्षिपुटक, गजाक्षि गोलक । हे० च० ।

अक्षिकूणितम्-सं० क्ली० अपांग दृष्टि ।

अक्षिकृष्णम्-सं० क्ली० नेत्र का काला भाग । शतप० ।

अक्षिखात-हिं० सं० पु० अक्षिगुहा, नेत्रगुहा, आंख के रहने के गड्ढे की गुफा । (Orbits of eyes or Bitalcavity)

अक्षिगु(गू)हा-सं० हिं० (संज्ञा) स्त्री० आँख के गड्ढे आंख के रहने के गड्ढे की गुफा । (Orbit of eyes) प्र० शा० ।

अक्षिगोलः-सं० पु० नेत्र तारा । (The Ball or globe of the eye) बै० श० सि० ।

अक्षिगोलक-
अक्षिगोलम्- } सं० क्ली० आंख का ढेंडन । (Ballofthe-eye)

अक्षिचालनी-सं० स्त्री० (Oculo-motor)

अक्षिच्छादनम्-सं० क्ली० अक्षिपक्ष्म, अक्षिवर्त्मन । (Eye lash,cilia) रत्ना ।

अक्षिणी-सं० स्त्री० चक्षु नेत्र । अथ० । सू० २ । ३३ का० १ ।

अक्षितारा-हिं० संज्ञा स्त्री० [सं०] आँख की पुतली

अक्षिदण्ड-हिं० संज्ञा पु० (Axis) अक्ष ।

अक्षिपञ्चकम्-सं० क्ली० श्रोत्र, त्वचा, रसना, नेत्र और नासिका । रा० नि० व० १८ ।

अक्षिपटल-हिं० संज्ञा पु०
अक्षिपटलम्-सं० क्ली० } आंख का परदा, आंख के कोए पर की झिल्लीं । नेत्रपटल, पलक । (Eye lid, A coat of the eye)

अक्षिपक्ष्म-सं० क्ली० नेत्र लोम, अक्षिवर्त्म, बरौंधी । (EyelashCilia) सु० शा० ३ । १४ ।

अक्षिपाकात्ययः-सं० पु० अक्षि कृष्णगत रोग विशेष लक्षण—जिसकी आँखों से गरम गरम पानी गिरने से फुन्सी हो आए दोनों पटलों में शुक्ल फूला प्राप्त हो जाने से ये लवण होते हैं जिसमें मूँग के समान शुक्ल को यह असाध्य है और जो तीतर के पंख के समान (काले रंग का) हो उसको भी कोई कोई असाध्य कहते हैं । तीनों दोषों से जिसके नेत्र के काले भाग में चारों ओर से सफेदी छा जाती है उस नेत्रपाक को त्रिदोषज अक्षिपाकात्यय नामक नेत्र रोग वैद्यों को त्याग करने योग्य है । मा० नि० ।

अक्षिपीलुः-सं० पु० महानिम्ब । (Melia azed arach) वै० निघ० ।

अक्षिबुदबुदः-सं० पु० (Optic vesicle, Bulb of the eye)

अक्षिभेषजम्-सं० क्ली० (१) श्वेत लोध्र । सफेद लोध । मद० व० १ पट्टिका रोध्र, पठानी लोध । रा० नि० व० ६ । (२) नेत्रौषध, नेत्राञ्जन ।

अक्षिमण्डलम्-सं० क्ली० नेत्रमण्डल । शतप० ।

अक्षिरोगः-सं० पु० चक्षुरोग (An eye disease)

अक्षिलोम-सं० क्ली० नेत्ररोम, अक्षिपक्ष्म, बरौंधी । (Eyelash, Cilia)

अक्षिवः-सं० पु० (१) शोभाञ्जन वृक्ष सहिंजन । शजना वं० । (Guilandina or Hyperanthera morunga) (२) मरिच (peppir) रा० नि० व० ७ । क्ली० (३) समुद्र लवण । (Sea salt) अ० टी० भ० ।

अक्षिवर्त्म-सं० स्त्री० अक्षिपक्ष्म । (Eye lash)

अक्षिविचूर्णितम्-सं० क्ली० अपांग दृष्टि हे० च० ।

अक्षिवैराग्यम्-सं० क्ली० आँख का लाल होना, नेत्र विरक्तता । 'चकोरस्याक्षि वैराग्यम् ।' वा० सू० ७ अ० ।

अक्षिशूल-हिं० सं० पु० [सं०] नेत्र वेदना । आंख का दर्द ।

अक्षिशुक्लम्-सं० क्ली०, नेत्रका सफेद भाग। शतप०

अक्षिशोष-हिं० सं० पु० [सं] नेत्र शुष्कता।

अक्षिसेचनम्-सं० क्ली- नेत्रनिस्तोद वा आश्चोतन अर्थात् परिषेक। इसकी विधि निम्न है:—

विधि—रोगी को वात रहित स्थान में बैठाकर बाँए हाथ से आंख खोलकर सीपी प्रलंबा वा रुई के फाहे से २ अगुल ऊंचे से आंख के तारे पर दस बारह बूंद डाल दें। तत्पश्चात् कोमल वस्त्र से पोंछकर गुनगुने पानी में चेलवर्ति को भिगोकर धीरे धीरे आँखों में स्वेदन करें। यह आश्चोतन वात कफ में किया जाता है रक्तपित्त में नहीं। बा० सू० २३ अ०।

अक्षिहुण्डनम्-सं० क्ली० नेत्रव्युदास। मा० नि० विज० २०।

अक्षीक -सं० ५० वृक्ष विशेष आउच-व०। रत्ना०। (A tree)

अक्षीण-हिं० वि० [सं०] (१) जो न घटे। (२) अविनाशी।

अक्षीणनामारस-सं० पु० स्वेदन तथा पाचन किएहुए और संस्कार से बीजोत्पादित पारे में षोड़शांश सुवर्ण का जारण करे। इसके पश्चात् १६ गुना गन्धक जारण करे फिर पारे का चतुर्थांश सुवर्ण और १६ वाँ भाग गन्धक डालकर, जम्भीरी के रस अथवा किसी भी खटाईसे मर्दित करके टिकड़ी बनाए। फिर कच्छपयन्त्र में या सोमनाल यन्त्र में नीचे ऊपर पिट्ठी से दूना या तिगुना गन्धक देकर पिट्ठा को बीच में दबाएँ। फिर चूल्हे पर चढा कर ३ दिन तक मद मंद अग्नि दे। इस तरह करने से सुवर्ण के साथ पारे का भस्म होगी।

उपर्युक्त विधि से मारा हुआ पारा १ भा, कांतपाषाण या इससे निकाला हुआ लोहभस्म १ भा० मारा हुआ अभ्रक सत्व, ताम्रभस्म एवं गंधक दो दो भाग, इन सबको खरल में डालकर तीन दिन तक लगातार मर्दन करे। फिर इसकी टिकियां बना छाया में शुष्क कर भूधर यन्त्र में करीष की अग्नि दें। फिर इस को निकालकर शीशी में रखें

मात्रा।—१ मा० रस गुडूचीसत्व तथा योग्यता-नुसार मुलेठी और वंशलोचन व शहद मिलाकर चाटें तो चार महीने में पथ्य सेवी के क्षय को निर्मूल कर देता है।

पथ्य—चावल, गोघृत, तक्र, गेहूं और जौ। रस० यो० सा०।

अक्षीवः-सं० पु०
अक्षीव-हिं० संज्ञा पु० } (१) शोभाञ्जन, सहिजन का पेड़। (Morinag pterygosperma)मे० वन्निकं० च० सू० ४ अ० कृमिघ्न व० चि० ३ अ०।

(२) महानिम्ब। (Melia azedarach) भा० पू० १ भा० (३) वचिर, वक। क्ली० (५) सामुद्र लवण, समुद्री नमक। (Seesalt) पाठा—वट। भा० पू० १ भा० (५) मरिच। Black pepper (Pipernigrum) त्रि, हिं० वि० अमत्त। जो मतवाला न हो। चैतन्य। धीर। शांत।

अक्षुण्ण-हिं० वि० [सं०] (१) अभग्न। विना टूटा हुआ। अच्छिन्न। समूचा। (२) अकुशल। अनाड़ी।

अक्षेयः-सं० पु० रक्तार्क, लाल मदार। वै० निघ० Calotropis gigantea (The red var of) देखो—आक।

अक्षोटः-कः-की-सं० पु० क्ली० अखरोट, अकरोट। The walnut (Juglans regia). देखो—अखरोट।

अक्षोट तैलम्-सं० क्ली० अखरोट का तेल (Walnutoil) गुण मूलक (मूली) तैलवत्।

अक्षोड़-कः-सं० पु० अखरोट। Juglans regia (The walnut) र० मा०।

अक्षोभ-हिं० संज्ञा पु० [सं०] क्षोभ का आभाव। अनुद्वेग। दृढता। धीरता। स्थिरता।

वि० क्षोभ रहित। चचलता रहित। उद्वेग शून्य। स्थिर। गम्भीर। शांत।

अक्षोहारः-सं० पु० मधु खजूरी, मीठा खजूर का पेड़ । वै० निघ० ।

अक्ष्णा-सं० स्त्री० चक्षु, नेत्र, आंख । (Eye)

अक्ष्यम्-सं० क्ली० सौवर्चल लवण, सोंचर (ल) नमक (Sochar salt)

अक्ष्यस्थिः-सं० पु० अश्रु वस्थि (Lacrimalbone)

अज्ञातयक्ष्मा-सं० पु० अज्ञात स्वरूप संग दोष से लगनेवाले रोग । अथ० । सू० । ११ । २ । का० २ ।